

**THE BOOK WAS
DRENCHED**

UNIVERSAL
LIBRARY

OU_184211

UNIVERSAL
LIBRARY



दैवत-संहिता ।

(५)

अश्विनौ-देवता ।



सम्पादक

श्रीपाद दामोदर सातवलेकर

स्वाध्याय-मण्डल, औंध (जि० सातारा)



संवत् २०००, शक १८६५, सन १९४३



मुद्रक और प्रकाशक

वसंत श्रीपाद सातवलेकर, B. A.

स्वाध्याय-मण्डल, भारतमुद्रणालय, भौध (जि० सातारा)

“ अश्विनौ ” देवता का स्वरूप ।



वेदों में “ अश्विनौ ” देवता है । इस देवता का मन्त्र-संग्रह इस भूमिका के साथ पाठकों के सामने रखा जाता है । इस संग्रह में ६८९ मन्त्र हैं । इनमें ऋग्वेद के ६३३, वा० यजुर्वेद के ७, सामका १, अथर्व के ११ मन्त्र हैं । सब मिलकर ६५२ मंत्र हुए । शेष ३७ मंत्र अश्विनहचारी देवतागण के हैं । ये सब मिलकर ६८९ होते हैं । अन्य पुनरुक्त मंत्रों की गणना यहां की नहीं है । इन देवतामंत्रों के ऋषि ये हैं—

| | |
|-----------------------------|----|
| १ कक्षीवान् दैर्घतमसः | ८३ |
| २ वसिष्ठो मैत्रावरुणिः | ५६ |
| ३ अगस्त्यो मैत्रावरुणिः | ३९ |
| ४ ब्रह्मातिथिः काण्वः | ३७ |
| ५ घोषा काक्षीवती | २८ |
| ६ प्रस्कण्वः काण्वः | २५ |
| ७ कुरुस आंगिरसः | २५ |
| ८ श्यावाश्व आत्रेयः | २४ |
| ९ अथर्वा | २४ |
| १० सध्वंसः काण्वः | २३ |
| ११ शशकर्णः काण्वः | २१ |
| १२ प्रजापतिः [यजुः] | २१ |
| १३ पौर आत्रेयः | २० |
| १४ विमना वैयश्वः | १९ |
| १५ सोमरिः काण्वः | १८ |
| १६ गोपवन आत्रेयः | १८ |
| १७ पुरुमीळहाजमीळहौ सौहोत्रौ | १४ |
| १८ हिरण्यस्तूप आंगिरसः | १२ |
| १९ दीर्घतमा औचध्यः | १२ |
| २० गृत्समदः शौनकः | १२ |
| २१ भरद्वाजो बार्हस्पत्यः | ११ |
| २२ भूतानाः काश्यपः | ११ |
| २३ भौमोऽग्निः | ११ |
| २४ विश्वामित्रो गाथिनः | ९ |

| | |
|-----------------------------|---|
| २६ अबस्युरात्रेयः | ९ |
| २७ सप्तवधिरात्रेयः | ९ |
| २८ कृष्ण आंगिरसः | ९ |
| २९ प्रगाथः काण्वः | ६ |
| ३० कृष्णो शुम्नीको वासिष्ठः | ६ |
| ३१ अग्निः सांख्यः | ६ |
| ३२ मेधातिथिः काण्वः | ५ |
| ३३ कृष्णो विश्वको व० काण्वः | ५ |
| ३४ जमदग्निर्भार्गवः | ५ |
| ३५ मेध्यः काण्वः | ४ |
| ३६ मधुच्छंदा विश्वामित्रः | ३ |
| ३७ शुनःशेष आजीगर्तिः | ३ |
| ३८ गोतमो राहूगणः | ३ |
| ३९ परुच्छपो दैवोदासिः | ३ |
| ४० नाभाकः काण्वः | ३ |
| ४१ विमद ऐन्द्रः | ३ |
| ४२ विश्वामित्रः | ३ |
| ४३ सुहस्त्यो धौपेयः | २ |
| ४४ सुकीर्तिः काक्षीवतः | २ |
| ४५ हरिमिथिः काण्वः | १ |
| ४६ स्वष्टा प्राजापत्यः | १ |
| ४७ अश्विनौ धैवस्वतौ | १ |
| ४८ ब्रह्मा | १ |

इस तरह मन्त्रसंख्या ऋषियोंके द्वारा देखी मिलती है । अब अश्विनी देवता के विषय में ब्राह्मणग्रंथों में जो निर्वचन मिलता है, वह यहां देते हैं—

अश्विनौ देवता के विषय में ब्राह्मणवचन ।

अश्विनौ देवता के विषयमें ब्राह्मण-ग्रंथों में निम्नलिखित निर्वचन मिलते हैं, जो इस देवता-स्वरूप के बताने में सहायक हो सकते हैं—

इमे इ वै यावापृथिवी प्रत्यक्षं अश्विनौ, इमे हीदं सर्वं

पुष्करं आदित्योऽसुष्ये [दिवे] । [श० ब्रा० ४।१।५।१६]

ओम्ने अश्विनौ । [श० ब्रा० १२।१।१।१३]

नासिके अश्विनौ । [श० ब्रा० १२।१।१।१४]

तस्मै ह वा इमौ पुरुषाविवाक्ष्योः । एतावेवाश्विनौ ।

[श० ब्रा० १२।१।१।१२]

अश्विनावध्वर्यु । [ऐ० ब्रा० १।१८; श० ब्रा० १।१।२।१७;

३।१।४।३; तै० ब्रा० ३।२।२।१; गो० ब्रा० ४० २।६]

अश्विनौ वै देवानां भिषजौ ।

[ऐ० ब्रा० १।१८; कौ० ब्रा० १।८।१]

सुष्यौ वा अश्विनौ [यज्ञस्य] । [श० ब्रा० ४।१।५।१९]

श्येताविव हि अश्विनौ । श० ब्रा० ५।५।४।१]

स योनी वा अश्विनौ । [श० ब्रा० ५।१।१।८]

अश्विनाविव रूपेण [भूयासं] । मं० ब्रा० २।४।१४]

आश्विनं द्विकपालं पुरोडाशं निर्वपति ।

[श० ब्रा० ५।१।१।८]

आश्विनो द्विकपालः [पुरोडाशः] । तां० ब्रा० २।१।१०।२३]

वसन्तग्रीष्मावेवाभ्यां अश्विनाऽऽभ्यां [अवरुन्धे] ।

[श० ब्रा० १२।८।१।३४]

अश्विभ्यां धानाः । [तै० ब्रा० १।५।१।१३]

अथ यदेनं [अग्निं] द्वाभ्यां बाहुभ्यां द्वाभ्यामरणीभ्यां
मन्थन्ति, द्वौ वा अश्विनौ, तदस्याश्विनं रूपम् ।

[ऐ० ब्रा० ३।४]

देवस्य स्वा सविनुः प्रसवे । अश्विनोर्बाहुभ्याम् ।

[तै० ब्रा० २।६।५।२]

गर्दभरथेनाश्विना उदजयताम् । [ऐ० ब्रा० ४।९]

तदाश्विना उदजयतां रासमेन । [कौ० ब्रा० १।८।१]

इममेव लोकमाश्विनेन [अवरुन्धे] ।

[श० ब्रा० १२।८।२।३२]

अश्विनमन्वाह तदमुं लोकं [दिवं] आप्नोति ।

[कौ० ब्रा० १।१।२।१।८।२]

[१] सब का भक्षण करते हैं, इसलिये द्वावापृथिवी ये
दोनों लोक अश्विनौ हैं, [२] दोनों कान, [३] दोनों नाक,
[४] दोनों आंख अश्विनौ हैं, [५] दोनों अध्वर्यु अश्विनौ
हैं, [६] ये दोनों देवों के वैद्य हैं, [७] एक ही स्थानसे
ये दोनों उत्पन्न होते हैं, [८] गर्दभ के रथ से अश्विनी
देव आते हैं ।

उक्त वचनोंसे जो निर्वचन मिलते हैं, वे ये हैं । ' बहुत
खानेवाले, बहुत व्यापनेवाले ' ये ' अश् ' धातुके अर्थ हैं ।
येही यहां इन निर्वचनों में दीख रहे हैं । कान, नाक और
आंख अपनी शक्तिसे विश्व को व्यापते हैं, आंख तो अपनी
शक्ति से सब विश्व व्यापता है । इसलिये ये इंद्रिय अश्विनौ
हैं । मनुष्यशरीर में अश्विनौ के ये रूप हैं । वैद्य अपनी
चिकित्सा से बीमारी को घेरता और उसका नाश करता
है । अध्वर्यु यज्ञप्रक्रिया को व्यापते हैं । इस तरह इन
निर्वचनों का तात्पर्य है । इन निर्वचनों को देखने के बाद
अब निरुक्त के वचन देखिये—

अथातो शुस्थाना देवताः । तासामश्विनौ प्रथमागामिनौ
भवतः । अश्विनौ यद् व्यञ्जुवाते सर्वं, रसेनान्यो,
ज्योतिषान्यः । अश्विरश्विनाविष्यौर्णवाभः । तत् कावाश्वि-
नौ ? द्वावापृथिव्यावित्येके । अहोरात्रावित्येके । सूर्या-
चन्द्रमसावित्येके । राजानौ पुण्यकृतावित्येतिहासिकाः ।
तयोः काल ऊर्ध्वमर्धरात्रात् प्रकाशीभावस्यानुविष्टभमनु,
तमोभागो हि मध्यमः ज्योतिर्भाग आदित्यः ॥ १ ॥

तयोः समानकालयोः समानकर्मणोः संस्तुतप्राययोरसं-
स्तवेनैषोऽद्धर्चो भवति—वासात्यो अन्य उच्यते, उषः
पुत्रस्तवान्य इति ॥ २ ॥

इह चेह च जातौ संस्तूयते पापेनाकिप्यमानतया तन्वा
नामभिश्च स्वैः । जिष्णुर्वामन्यः सुमहतो बलस्येरयिता
मध्यमः, दिव्यो अन्यः सुभगः पुत्र ऊद्यत आदित्यः ॥३॥
प्रातर्युजा विबोधयाश्विनावेह गच्छताम् । [क्र. १।२२।१]
प्रातर्योगिनौ विबोधयश्विनाविहागच्छताम् ।

[निरुक्त अ. १३।१]

सृण्वेव जर्भरी तुर्फीरीतु नैतोशेव तुर्फीरी पर्फीरीका ।

उदन्यजेव जेमना मदेरु ता मे जराय्वजरं मरायु ॥

[क्र. १०।१०६।६]

सृण्वेवेति द्विविधा सृणिर्भवति भर्ता च हन्ता च, तथा
अश्विनौ चापि भर्तारौ, जर्भरी भर्तारावित्यर्थः, तुर्फीरीतु
हन्तारौ । नैतोशेव तुर्फीरी पर्फीरीका— नितोशस्यापत्यं
नैतोशं, नैतोशेव तुर्फीरी क्षिप्रहन्तारौ । उदन्यजेव जेमना
मदेरु— उदन्यजेवेषयुदकजे इव रस्ने सामुद्रे चान्द्रमसे
वा । जेमने जयमाने, जेमना मदेरु । ता मे जराय्वजरं

मरायु, एतज्जरायुजं शरीरं शरदं अजीर्णम् ॥ ५ ॥

[निरुक्त, १३।५]

अब शुक्रोक्त की देवताओं की व्याख्या करते हैं। इनमें अश्विदेव प्रथम आनेवाले होते हैं। ये सब व्यापते हैं, इनमें एक रस से व्यापता है और दूसरा प्रकाश से व्यापता है। और्णवाभ ऋषि का मत है कि, अश्विदेवोंके पास बहुत घोड़े थे, घोड़े पास रखने के कारण उनका नाम अश्विनौ हुआ। कौन भला ये अश्विनौ हैं? ‘शु और पृथिवी’ ऐसा कई मानते हैं, ‘दिन और रात्री’ ऐसा कई समझते हैं, ‘सूर्य और चन्द्र’ ऐसा कइयों का मत है, ऐतिहासिक लोग मानते हैं कि, ये पुण्यकर्म करनेवाले दो राजा हुए थे। इनका समय आधीरात व्यतीत होनेके पश्चात् का है, जब प्रकाश फटने लगता है, तब इनका उदय होता है। इस काल में जो अन्धकार का भाग है, वह मध्यम देवता है और जो ज्योति का भाग है, आदित्य का भाग है। इस तरह अन्धकार और प्रकाश इस समय इकट्ठे रहते हैं, येही अश्विनौ हैं।

ये दोनों देव एक ही काल में आते हैं, एक ही कर्म करते हैं। इनका वर्णन ‘वसातिपु स्म०’ आदि मन्त्र में किया है। इनमें से एक रात्री का और दूसरा उषा का पुत्र कहलाता है। अथवा इनमें से एक बड़े बल का प्रेरक है और दूसरा शुक्रोक्त का पुत्र आदित्य है। ये प्रातःकाल में आनेवाले हैं, ऐसा [प्रातर्युजा०] मन्त्र में कहा है।

[सृण्वेव०] जिस प्रकार दात्री पोषण करनेवाली और नाश करनेवाली अर्थात् दोनों प्रकार की होती है, वैसे ही अश्विनौ में से एक देव पोषक है और दूसरा नाशक है।

इस तरह निरुक्त का अश्विनौ देवताओंके विषय में स्पष्टीकरण है। ब्राह्मणग्रन्थों के कथनों के अनुसार ही निरुक्तकारने अपना मत दिया है। [१] छावा-पृथिवी, [२] सूर्य-चन्द्र, [३] अहो-रात्र, [४] पुण्यकर्म करनेवाले दो राजा, [५] अंधेरा-प्रकाश, तथा [६] पोषक-संहारक इतने स्वरूप बताने के कारण अश्विनौ के विषय में किसी तरह का निश्चय नहीं होता। इसलिये वेदके मंत्रों में अश्विनौ देवता के स्वरूप के विषय में अधिक खोज करना चाहिये। देखिये मंत्रों में क्या क्या वर्णन आया है—

अश्विनौ देवता और ‘तीन’ संख्या ।

अश्विनौ देवता के वर्णन में ‘तीन’ [३] इस संख्या का महत्त्व विशेष दीखता है देखिये—

त्रिश्चिखौ अथा भवतं नवेदसा । [१२; ऋ. १।३४।१]

आज तीन बार तुम हमारे बनो ।

त्रयः पवयो मधुवाहने रथे० । त्रयः स्कन्धासः० ।

त्रिर्नक्तं याथस्त्रिर्वश्विना दिवा ॥ [१३; ऋ. १।३४।२]

ऐ अश्विदेवो! तुम्हारे रथ के तीन चक्र हैं, तीन खंभे लगाये हैं। तुम दिन में तथा रात्रीमें तीन तीन बार जाते हो ।

समाने अहन् त्रिरवद्यगोहना त्रिरद्य यज्ञं मधुना मिमिक्ष-
तम् । त्रिर्वाजवतीरिपो अश्विना युवं दोषा अस्मभ्यं
उपसश्च पिन्वतम् । [१४; ऋ. १।३४।३]

आज एक ही दिन में तीन बार आओ और आज भी तीन बार आकर मधुसिंचन करो। आप दिनमें तथा रात्रीमें तीन तीन बार आकर पुष्टिकारक अन्न प्रदान करो।

त्रिर्वर्तिर्यातं त्रिरनुव्रते जने त्रिःसुप्रव्ये त्रेधेव शिक्षतम् ।
त्रिर्नान्यं वहतमश्विना युवं त्रिःपृक्षो अस्मे अक्षरेव
पिन्वतम् ॥ [१५; ऋ. १।३४।४]

तुम हमारे पास तीन बार आओ, अपने भक्त के पास तीन बार जाओ, सुरक्षाके लिये तीन बार जाओ, तीन बार शिक्षा दो। हमारे पास तीन बार आनन्द लाओ तथा तीन बार अन्न प्रदान करो ।

त्रिर्नो रथि वहतं अश्विना युवं त्रिर्देवताता त्रिरुतावतं
धियः । त्रिःसौभगत्वं त्रिरुत श्रवांसि तस्त्रिष्टं वां सूरैः
दुहिता रुद्रदथम् । [१६; ऋ. १।३४।५]

‘हमारे पास तीन बार संपत्ति ले आओ, इस देवकर्म में तीन बार हमारी रक्षा करो, तीन बार हमें सौभाग्य देओ, तीन बार अन्न दो, तुम्हारे तीन स्थानवाले रथ पर सूर्य की पुत्री आरूढ़ हुई है।

त्रिर्नो अश्विना दिव्यानि भेषजा त्रिःपार्थिवानि त्रिरु दत्त-
मज्जयः । त्रिधातु शर्म वहतं शुभस्पती । [१७; ऋ. १।३४।६]
हमें तीन बार दिव्य, पार्थिव और जलोद्भव औषधियाँ देते रहो; तथा तीनगुणा सुख हमें देते रहो ।

त्रिर्नो अश्विना यजता दिवेदिवे परि त्रिधातु पृथिवीम

शायतम् । त्रिस्तो नासत्या स्थ्या परावत० ।

[१८; ऋ. १।३४।७]

तीन बार प्रति दिन यज्ञ करते हैं । पृथ्वीके चारों ओर तुम तीन बार घूमते हो । रथसे तीन बार तुम दूर जाते हो ।

कत्री चक्रा त्रिवृतो रथस्य कत्रयो बन्धुरो ये सनीळाः ।

[ऋ. १।३४।९]

तुम्हारा त्रिकोणवाला रथ तीन चक्रोंवाला और तीन बैठने के स्थानों से युक्त है ।

आ नो नासत्या त्रिभिरेकादशैरिह देवेभिर्यातं मधुपेय-
मश्विना । प्रायस्तारिष्टं नी रपांसि मृक्षतं सेधतं द्वेपो
भवतं सचाभुवा । [२२; ऋ. १।३४।११]

हे अश्विदेवो ! ३३ देवों को साथ लेकर मधुर रस का पान करने के लिये यहां आओ । हमारी आयु बढ़ाओ, रोग दूर करो, शत्रु का नाश करो और हमारे सहायक बनो ।

त्रिबन्धुरेण त्रिवृता सुपेशसा रथेनायातमश्विना ।

[४०; ऋ. १।४७।२]

तीन बैठकोंवाले त्रिकोणी सुंदर रथसे हे अश्विदेवो ! आओ, अर्वाङ् त्रिचक्रो मधुवाहनो रथो० त्रिबन्धुरो० ।

[१६५; ऋ. १।१५७।३]

तं युञ्जाथो० त्रिबन्धुरो० यस्त्रिचक्रः ।

[२०२; ऋ. १।१८३।१]

अश्विदेवों का रथ त्रिकोणी है, तीन चक्रों से युक्त है, बैठने के तीन तीन स्थान उस में हैं ।

इस तरह अश्विदेवों के वर्णन में ' तीन ' संख्याका बड़ा महत्त्व है ।

अश्विदेव वैद्य हैं ।

युवं ह रथो भिषजा भेषजेभिः । [१६८; ऋ. १।१५७।६]

' आप के पास औषधियां हैं, इसलिये आप वैद्य हैं । ' इससे स्पष्ट हो जाता है कि, अश्विदेव बड़े वैद्य हैं, उनके पास बहुत औषध हैं और वे रोगियों की चिकित्सा करते हैं । इनके वैद्य होनेके विषय में हम कुछ और मन्त्र यहां रखते हैं, पाठक इनका विशेष विचार करें—

अश्विनौ देवताभौ का चिकित्सक होना सर्वत्र प्रसिद्ध है । इस विषय में निम्नलिखित मन्त्र देखनेयोग्य है—

वृद्ध को तरुण बनाया ।

अश्विदेवों ने अति जीर्ण च्यवनऋषि को तरुण बनाया था, यह कायाकल्प का प्रयोग अश्विदेवों ने किया था, यह बात जैसी पुराणों में वैसी वेदमंत्रों में भी दीखती है—

जुजुरुषो नासत्योत वशिं प्रामुञ्चतं द्रापिमिष च्यवानात् ।

प्रातिरतं जहितस्यायुर्दस्त्रादित् पतिमकृणुतं कनीनाम् ।

[८६; ऋ. १।११६।१०]

हे अश्विदेवो ! तुमने च्यवननामक एक वृद्ध के शरीर से कवच जैसी खाल उतार कर [बुढ़ापा दूर किया और] उस की आयु बढ़ायी और तरुण कन्याओंका पति बनाया ।

यहां कायाकल्प के प्रयोग का कुछ वर्णन है । [च्यवनात् जुजुरुषः वशिं द्रापिं इव प्रामुञ्चतं] वृद्ध च्यवन ऋषि के शरीर से कवच के समान संपूर्ण बुढ़ापा दूर किया । शरीर से जैसा कोट या कुडता निकाल देते हैं, उस प्रकार शरीर से खाल निकाल कर उसको तरुण बनाया । यहां [द्रापिं प्रामुञ्चतं] चोगा उतारने का स्पष्ट उल्लेख है । सांप-नाग- भी अपने शरीर से चोगा उतारता है और फिर तरुण बनता है । सब शरीर से चर्म ऊपर की पतली त्वचा सांप के समान निकालने से शरीर पुनः तरुण हो जाता है ऐसा यहां प्रतीत होता है । आर्यवैद्यक ग्रंथों में जो कायाकल्प वर्णन किये हैं, उनमें भी कुटिरप्रवेशविधिसे कायाकल्पों का सेवन करनेसे शरीर की चमड़ी उतर जाती है और नवीन चमड़ी आती है, इस आशय के विधान हैं । इस विषय में सत्य क्या है, इसका विचार उत्तम वैद्यों को करना उचित है ।

' च्यवनप्राश ' अवलेह का वर्णन वैद्यक ग्रंथों में है, जो च्यवन के पुनः तरुण बनने का स्मरण कराता है ।

इस मन्त्र में वृद्ध को ' दीर्घायु ' करने का भी उल्लेख है, तथा अनेक तरुणियों के साथ [कनीनां पति] विवाह च्यवनने किया, ऐसा भी कहा है । वृद्ध को तरुण बनाया, दीर्घायु बनाया और अनेक तरुणियों का पति भी बनाया गया था । यह अश्विदेवोंने अपने चिकित्सा के बलसे किया था । इस विषय में और मन्त्र देखिये—

युवं च्यवानं अश्विना जरन्तं पुनर्युवानं चक्रधुः

क्षचीभिः ॥

[११४; ऋ. १।११७।१६]

पुनश्च्यवानं चक्रथुः युवानम् ॥ [ऋ० १।११।८।६]

विभिश्च्यवानं अश्विना नियाथः ॥ [ऋ० ५।७।५]

प्र च्यवानाञ्जुजुरुषो वयिं अत्कं न मुञ्चथः ।

युवा यदी कृथः पुनरा कामं ऋषवे वध्वः ॥

[२७२; ऋ० ५।७।५]

उत स्यद्वां जुरते अश्विना भूच्यवानाय प्रतीत्यं हविर्दे ।

अधि षट्पं इत ऊती धत्थः । [ऋ० ७।६।६]

युवं च्यवानं जरसोऽमुमुक्तं । [ऋ० ७।७।५]

युनं च्यवानं सनयं यथा रथं पुनर्युवानं चरथाय तक्षथुः ।

[५८६; ऋ० १०।३९।४]

इन मन्त्रों का तात्पर्य यही है कि, अश्विदेव [च्यवानं नियाथः] च्यवन ऋषि के पास गये, उस वृद्ध ऋषि की चिकित्सा उन्होंने की, [वयिं अत्कं न मुञ्चथः] चोगे के समान सब खाल उतार दी, जिस से उस ऋषि का बुढ़ापा दूर हुआ, [पुनः युवानं चक्रथुः] फिर से उसको जवान बनाया, वार्धक्य से उस की मुक्तता की, जैसा पुराना रथ [यथा रथं] कारीगर दुरुस्त करके नया बनाते हैं, वैसा ही च्यवन ऋषि को फिर से तरुण बनाया, यह च्यवन ऋषि अश्विदेवों को हविर् अर्पण करता था । यह सब कार्य [शचीभिः] अपनी अद्भुत चिकित्सा की शक्तियों से अथवा औषधिविशेषों के प्रयोग से उन्होंने किया था । जो च्यवन चलनेफिरने में भी असमर्थ था, वही [चरथाय] अच्छी तरह घूमने लगा और [वध्वः कामं] स्त्रीसम्बन्ध का कामविकार उस में जाग्रत किया । अर्थात् यह ठीक तरह तरुण हुआ । इसी तरह वन्दनके विषयमें भी कहा है—

युवं वन्दनं निर्कृतं जरण्यया रथं न दत्ता करणा

समिन्वथः । [ऋ० १।११।७]

उद् वन्दनं प्रेरयतं स्वर्द्धो । [ऋ० १।११।५]

प्र दीर्घेण वन्दनस्तार्यायुषा । [ऋ० १।११।६]

हे अश्विदेवो ! तुमने वन्दन को निकृष्ट वृद्धावस्था को पहुँचे वन्दन को, उत्तम दृष्टि देकर, रथ दुरुस्त करने के समान तरुण अथवा हृष्टपुष्ट बनाया और [दीर्घेण आयुषा प्र तारि] दीर्घायु बनाया ।

रथ दुरुस्त करने के समान इसका शरीर तुमने नाना औषधों के प्रयोग से ठीक बनाया । प्रसूतिकर्म में अश्विदेवों की प्रवीणता थी, इस विषय में निम्नलिखित मन्त्र

में उल्लेख है—

क्षेत्रादा विप्रं जनयः ।

[ऋ० १।११।७]

क्षेत्र से [अर्थात् माता के गर्भाशय से] ब्राह्मणपुत्रको जन्म दिया । अर्थात् प्रसूतिकर्म की प्रवीणता से पुत्र को जन्म देकर माता की मुक्तता प्रसूतिवेदनाओं से की । इस मन्त्र में अश्विदेवों की प्रसूतिकर्म में प्रवीणता बतायी है ।

वायल को दुरुस्त किया ।

त्रिधा ह श्यावं सश्विना विकस्तं उज्जीवसे प्रेरयतं

सुदानू ॥

[ऋ० १।११।७।२४]

तीन स्थान पर कटे या जखमी हुए श्याव को पुनः जीवन देकर चलनेफिरनेयोग्य बना दिया ।

तीन स्थान पर जिस के करीब करीब टुकड़े हो चुके थे, ऐसे जखमी के टूटे भागों को पुनः जोड़ दिया और उस को अच्छी तरह चलनेफिरनेयोग्य बना दिया ।

च्यवनऋषि की कथा शतपथब्राह्मण में निम्नलिखित प्रकार आ गयी है और उसमें अश्विदेवों का यही सम्बन्ध वर्णन किया गया है, वह कथा देखो—

च्यवनो वा भार्गवः, च्यवनो वाङ्गिरसः, तदेव जीर्णिः कृत्यारूपो जहे ॥ १ ॥ शर्यातो ह वा इदं मानवो ग्रामेण चचार । स तदेव प्रतिवेशो निविविशे तस्य कुमाराः क्रीडन्त इमं जीर्णिं कृत्यारूपमनर्थं मन्यमाना लोष्टैर्विपिपिपुः ॥ २ ॥ स शर्यातेभ्यश्चुक्रोध । तेभ्योऽसंज्ञां चकार, पितैव पुत्रेण युयुधे, भ्राता भ्रात्रा ॥ ३ ॥ शर्यातो ह वा ईक्षां चक्रे । यत्किमकरं तस्मादिदमापदीति स गोपालांश्चाविपालांश्च संह्वयित्वा उवाच ॥ ४ ॥ स होवाच । को वो अघेह किंचिद्द्राक्षीदिति, ते होचुः, पुरुष एवायं जीर्णिः कृत्यारूपः शेते, तमनर्थं मन्यमानाः कुमारा लोष्टैर्व्याक्षिपन्निति, स विदांचकार स वै च्यवन इति ॥ ५ ॥ स रथं युक्त्वा । सुकन्यां शर्यातीमुपाधाय प्रसिष्यन्द, स आजगाम, यत्रर्षिरास तत् ॥ ६ ॥ स होवाच । ऋषे नमस्ते यन्नावेदिषं तेनाहिंसिषमियं सुकन्या तया तेऽपह्नुषे संजानीतां मे ग्राम इति, तस्य ह तत एव ग्रामः संजज्ञे स ह तत एव शर्यातो मानव उणुयुजे नेदपरं हिनसानीति ॥ ७ ॥ अश्विनौ ह वा इदं भिपज्यन्तौ चेरतुः । तौ सुकन्यामुपेयतुः, तस्यां मिथुनमीषाते, तन्न जज्ञौ ॥ ८ ॥ तौ होचतुः । सुकन्ये कमिमं जीर्णिं

कृप्यारूपमुपशेष आश्रममुपेहीति, सा होवाच, यस्मै मां पितादाश्रैवाहं तं जीवन्तं हास्यामीति, तद्ध्यायमु-
धिराजज्ञौ ॥ ९ ॥ स होवाच । सुकन्ये किं त्वेतद्वोचता-
मिति, तस्मा एतद्व्याचक्षते, स ह व्याख्यात उवाच,
यदि त्वैतत्पुनर्ब्रुवतः सा त्वं ब्रूतास्व वै सुसर्वाधिब स्थो,
न सुसमृद्धाविवाथ मे पतिं निन्दथ इति, तौ यदि
त्वाव्रवतः, केनावामसर्वौ स्वः, केनासमृद्धाविति, सा
त्वं ब्रूतास्पतिं नु मे पुनर्युवाणं कुरुतमथ वां वक्ष्यामीति,
तां पुनरुपेतुस्तां हैतद्वोचतुः ॥ १० ॥ तौ होचतुः ।
एतं हृदमभ्यवहर, स येन वयसा कमिष्यते तेनोदैष्य-
तीति, तं हृदमभ्यवजहार, स येन वयसा चकमे तेनो-
देयायेति ॥ १२ ॥ [श. ब्रा. ४।१।५।१-१२]

व्यवचनामक एक ऋषि था, जो ऋगुकुल का समझा
जाता है, अथवा आंगीरसकुल का भी माना जाता है ।
वह अति जीर्ण हो कर मरियलसा होकर एक स्थान पर पड़ा
था । उस स्थान पर मनुवंश का शर्यात राजा आया । उस
राजा के लडके वहां खेलने लगे । उन लडकों ने उस
अति जीर्ण ऋषिके मुर्दे जैसे शरीर पर पत्थर मारे । इससे
ऋषि को क्रोध आया, जिससे राजा के राज्य में सब प्रजा-
जनों की बुद्धि नष्ट हुई, वे आपस में लड़ने लगे । पिता
पुत्रसे और भाई भाईसे लड़ने लगा । राजा शर्यात सोचने
लगा कि, मैंने क्या ऐसा बुरा कर्म किया कि, जिसके
कारण यह ऐसी आपत्ति आ गयी । उसने गवालियों को
बुलाकर पूछा कि तुमने यहां कुछ देखा है ? वे बोले कि,
यह जो अतिजीर्ण मुर्दासा पड़ा है, वह मरा है, ऐसा मान
कर तुम्हारे कुमारोंने उस पर पत्थर मारे, वह व्यवन ऋषि
है, ऐसा सब राजाने जान लिया । पश्चात् अपनी कन्या को
रथ पर बिठलाकर वह उस ऋषिके पास पहुंचा और उससे
बोला कि ' हे ऋषि ! नमस्ते । मुझे तुम्हारा ज्ञान नहीं था,
इसलिये तुमको बहुत कष्ट पहुंचे । क्षमा करो । यह मेरी
पुत्री है, यह तुम्हारे लिये अर्पण करता हूं । इसको प्राप्त
करके सन्तुष्ट होओ । मेरे राज्य में जो बलवा उठा है, वह
शान्त होवे । ' तब ऋषि सन्तुष्ट हुआ और राजा का
बलवा शान्त हुआ । यह देखकर शर्यात राजाने प्रतिज्ञा की
कि, मैं अब इसके बाद किसी को कष्ट नहीं दूंगा । उस
ऋषि के आश्रम के पास अश्विदेव किसी की चिकित्सा करने

के लिये आये थे, उन्होंने सुकन्याको देखा और उस तरुणी
की इच्छा की । पर उस कन्याने उसके प्रस्ताव का स्वीकार
नहीं किया । तब वे उससे पूछने लगे कि, ' हे सुकन्ये ' तुम
इस मुर्दा बने जीर्ण के पास क्यों रहती है ? तू हमारा
स्वीकार कर । ' तब वह कन्या बोली कि- ' मेरे पिताने
जिसको मेरा दान किया है, जब तक वह जीवित है, तब
तक मैं उसे नहीं छोड़ूंगी । ' सुकन्या का यह भाषण ऋषिने
जान लिया, तब वह उस स्त्रीसे बोले कि, जिस समय ये
अश्विनी कुमार फिर से तुम्हें ऐसा भाषण करने लगेंगे, तब
तुम उनसे कहना कि- ' तुम मेरे पति की निंदा करते
हो, परन्तु तुम तो अपूर्ण और सौभाग्यहीन से हो । यदि
तुम मेरे पति को पुनः तरुण बनाओगे, तब सुपूर्ण तथा
भाग्यसंपन्न बनाने का उपाय बताऊंगी । ' सुकन्याने ऐसा
अश्विनीकुमारों से कहा, तब वे बोले कि यदि तुम्हारा पति
इस तालाब में गोता लगावे, तब जिस आयुका स्मरण
करके वह गोता लगावेगा, उसी आयु को ऊपर आनेके पूर्व
प्राप्त करेगा । ' वैसा किया गया और व्यवन ऋषि उस
तालाबमें गोता लगाते ही तरुण बन गये । तब अश्विदेवोंने
सौभाग्यसंपन्न बननेका मार्ग पूछा, तब उस ऋषिने यज्ञमें
हविर्भाग प्राप्त करने का उपाय बताया । अश्विनीकुमार
मानवों में जाते हैं, हर किसी की चिकित्सा करते हैं, इस-
लिये हमारी पंक्ति में बैठ कर हविर्भाग सेवन नहीं कर
सकेंगे, ऐसा इन्द्रने निषेध किया, पर ऋषि के सामर्थ्य से
इस समय से अश्विनी देवों को यज्ञ में हविर्भाग मिलने
लगा । '

संक्षेप से यह कथा शतपथ ब्राह्मण में है । यही कथा
पुराणों में अधिक विस्तृत रूपवाली हो गयी है । इस कथा
का संबंध वेद के पूर्वोक्त मंत्रों के साथ स्पष्ट है ।

अन्धे को आंख दिये ।

अश्विनी देवोंने अन्धे को आंख और पंगु को चलनेबोग्य
पांव दिये, यह चमत्कार निम्नलिखित मंत्र में है-

याभिः शचीभिः वृषणा परावृजं प्रान्धं श्रोणं चक्षस
एतवे कृथः ।

[५९; ऋ. १।१।२।८]

अनेक अपनी शक्तियों के द्वारा परावृज का अन्धत्व दूर
करके उत्तम दृष्टिसे युक्त तथा उसका लंगडेपन हटा के इस

को उत्तम चलनेफिरनेवाला बना दिया । ऐसा ही वर्णन इन्द्र के लिये भी आया है—

नीचा सन्तमुदनयः परावृजं प्रान्धं श्रोणं भवयन्
त्सास्युक्थयः । [ऋ. २।१३।१२]

अन्धे और लूले परावृज को नीच अवस्था से उख बना कर [उत्तम दृष्टि से संपन्न और चलनेफिरनेवाले बनाकर] कीर्तिमान, यशस्वी बना दिया ।

जैसी परावृजको दृष्टि दी, वैसी ही ऋज्राश्वको भी अश्वि-देवोंने दृष्टि दी, देखिये—

शतं मेषान् वृक्ये चक्षदानं ऋज्राश्वं तं पितान्धं चकार ।
तस्मा अक्षी नासत्या विचक्ष आधत्त दत्ता भिषजाव-
नर्वन् । [९१; ऋ. १।११६।१६]

शतं मेषान् वृक्ये 'मामहानं' तमः प्रणीतमश्विनेन
पित्रा । आक्षी ऋज्राश्वे अश्विनावधत्तं ज्योतिरन्धाय
चक्रथुर्विचक्षे ॥ १७ ॥

शुनमन्धाय भरमह्यत्सा वृकीरश्विना वृषणा नरेति ।
जारः कनीन इव चक्षदानं ऋज्राश्वः शतमेकं च मेषान् ॥
[११८-११९; ऋ० १।११७।१७-१८]

श्रुतं गायत्रं तक्वानस्य ... आक्षी शुभस्पती दन् ।
[ऋ० १।१२०।६]

ऋज्राश्वने एकसौ एक मेष भेडिये को खाने दिये, यह देख कर उसके पिताने उस ऋज्राश्व को अन्धा बना दिया । परन्तु अश्विदेवोंने इस ऋज्राश्व के आंख पुनः देखनेयोग्य बना दिये ।

कवि को आंख दिये ।

उतो कविं पुरुभुजा युवं ह कृपमाणमकृणुतं विचक्षे ।
[ऋ. १।११६।१४]

‘दृष्टि की इच्छा से प्रार्थना करनेवाले कवि को उत्तम आंख दिये ।’ संभवतः यह दृष्टि कविकी क्रान्तदृष्टि होगी । बहुत करके इस स्थान पर की दृष्टि काव्य की दृष्टि है । तथापि पाठकों को ऐसे मंत्रों का विशेष विचार करना चाहिए ।

मद्य के १०० घडे ।

शतं कुम्भां असिञ्चतं सुरायाः । [ऋ. १।११६।७]
शतं कुम्भां असिञ्चतं मधूनाम् । [ऋ. १।११७।६]

“सुरा के अथवा मधू के १०० घट तुमने भर दिये ।” यहां सुरा, आसव, मद्य, मधु, अरिष्ट आदि पद किस पदार्थ का बोध कराते हैं, इसका निर्णय वैद्यों को करना चाहिये । अश्विदेव वैद्य हैं, यह वेद में सुप्रसिद्ध है । वैद्यों के पास आसव के १०० घट भर कर रहे, तो कोई आश्चर्य की बात नहीं है । ‘मधु’ एक मीठा पेय है, यह मद्य नहीं है । ‘सुरा’ भाप से पुनः पानी बनाया जाता है, उसका नाम है (Distilled Water) शुंडांपत्रसे जो अर्क निकालते हैं, वह सुरा है । इसमें इस तरह जो मद्य बनता है, वह भी शामिल है, पर इसका केवल यही अर्थ है, यह बात नहीं है । वृष्टिउदक, भापसे बना जल आदि भी इसके अर्थ हैं । अतः वैद्यों को इस सुरा तथा मधुके विषय में अधिक खोज करके निर्णय करना उचित है ।

विशपला को लोहेकी टांग लगाई ।

विशपलानामक राजपुत्री की एक टांग युद्ध में कट गयी थी । वह काटकर उस स्थानपर अश्विदेवोंने लोहेकी टांग लगा दी और उस स्त्रीको चलनेफिरनेयोग्य बना दिया, यह बात निम्नलिखित मन्त्रों में है—

चरित्रं हि वेरिवाच्छेदि पर्णमाजा खलस्य परितक्म्यायाम् ।
सद्यो जंघामायसीं विशपलायै धने हिते सर्तवे प्रत्यधत्तम् ॥

[ऋ० १।११६।१५]

सं विशपलां नासत्यारिणीतम् । [ऋ० १।११७।११]

याभिर्विशपलां धनसामथस्यं सहस्रमीळह आजाद-
जिन्वतम् । [ऋ० १।११२।१०]

प्रति जंघां विशपलाया अधत्तम् [ऋ० १।११८।८]

धियंजिन्वा धिषण्या विशपलावस् । [१।१८२।१]

युवं सद्यो विशपलामेतवे कृथः । [१०।३९।८]

अथर्ववेदी कुल में उत्पन्न (खलस्य) खल राजा की पुत्री विशपला (धने हिते) युद्ध में गयी थी । उसकी एक टांग टूट गयी । अश्विदेवोंने इस को लोहे की टांग (आयसी जंघा) लगा दी । जिससे वह (सर्तवे) चलनेफिरनेयोग्य बनी । इसकी यह जखम भी अश्वि-देवोंने ठीक बना दी, इसलिये आश्विदेवों को (विशपला वस्) विशपला को निवासयोग्य बनानेवाले इस अर्थ का नाम प्राप्त हुआ ।

दधीची ऋषि को घोड़े का सिर ।

दधीची ऋषि को घोड़े का सिर लगाने के उल्लेख वेद-मंत्रों में अनेक बार आ गये हैं देखिये—

दध्यङ् ह यन्मध्वाथर्वणो वां अश्वस्य शीष्णां प्र यदी-
मुवाच । [ऋ. १।११६।१२]

‘आथर्वणायाश्विना दधीचेऽश्व्यं शिरः प्रत्यैरयतम् ।

[ऋ. १।११७।२२]

अथर्वकुल में दधीची ऋषि के लिये तुमने घोड़े का सिर लगाया । इस अश्व के मुख से उस ऋषिने तुम दोनों को मधुविद्या सिखायी ।

यहां अश्वका सिर ऋषि के मस्तक के स्थान पर लगा देने का उल्लेख है । मनुष्य के कण्ठ पर घोड़े का सिर लग नहीं सकता, इसलिये यह उल्लेख विशेष अलंकार का सूचक है । अध्यात्मविद्या के संबंध में यह खोज करनेयोग्य वर्णन है । मधुविद्या दधीची ऋषि के पास थी, इन्द्रने यह विद्या दधीची को सिखायी थी । दधीची से यह विद्या अश्व-देवोंको प्राप्त हुई । इस संबंध की कथा पुराणों में लंबी-चौड़ी है । यह सब वैदिक और पौराणिक सारस्वत एक-त्रित करके सब की मिलकर खोज करने का विचार है । स्वतंत्र लेखरूप से यह लेख प्रकाशित किया जायगा ।

रेभका वर्णन ।

रेभ के विषयमें अश्विदेवों की सहायता का वर्णन निम्न-लिखित मंत्रों में है—

याभी रेभं निवृतं सितं अद्भ्यः । [ऋ. १।११२।५]

विप्रुतं रेभं उदनि प्रवृक्तं उन्निन्यधुः ।

[ऋ. १।११६।२४]

अश्वं न गूळ्हं अश्विना दुरैवैः ऋषिं नरा वृषणा रेभमप्सु ।
सं तं रिणीथो विप्रुतं दंसोभिः न वां जूर्यन्ति पूर्यां
कृतानि ॥ [ऋ. १।११७।४]

रेभ ऋषिको दुष्टोंने जखमी करके जल में डुबाया था । उसको आपने ऊपर निकाला और उसके अवयव फिर से ठीक कर दिये । यह अश्विदेवों का कर्म बड़ा प्रशंसनीय है और यह वैद्यकक्रिया के साथ संबंध रखता है । टूटे-फूटे अवयवों को पुनः ठीक करना यह कर्म वैद्यों का ही है ।

बंध्या गौको दुधारू बनाया ।

अश्विदेवोंने बंध्या गौको दुधारू बनाया है, इसका वर्णन अब देखिये—

याभिर्धेनुं अस्वं पिन्वथो नरा । [ऋ. १।११२।३]

अधेनुं दस्त्रा स्तयं विषक्तां अपिन्वतं शयवे अश्विना गाम् ।

[ऋ. १।११७।२०]

युवं शयोरवसं पिप्यथुर्गवि । [ऋ. १।११९।६]

हे अश्विदेवो ! तुमने शयुके लिये बंध्या, कृश गौ को उपजाऊ और बहुत दूध देनेवाली बना दिया । यहां गौको पुष्ट करना, दुधारू बनाना और गर्भधारण के योग्य बनाने का उल्लेख है । औषधिप्रयोग से बंध्या को गर्भधारण-योग्य बनाना यह बड़ी भारी सफलताका चिन्ह है । तथा—

अश्विदेवोंने गाय में दूध उत्पन्न किया, इस विषय में निम्नलिखित मन्त्र देखनेयोग्य है—

युवं पय उन्नियायां अधत्तं पक्कं आमायां अव पूर्व्यं गोः ।

[ऋ. १।१८०।३]

‘आपने गौ में दूध धारण किया और अपक्क गौ में परि-पक्क दूध उत्पन्न किया ।’ अश्विदेवों के यत्न से गौ में उत्तम दूध बना है ।

स्त्री का दान किया ।

अश्विदेवोंने कइयोंको स्त्री देकर शादी कराई है देखिये—

याभिः पत्नीः विमदाय न्यूहथुः । [ऋ. १।१०२।१९]

यावर्भगाय विमदाय जायां सेनाजुवा न्यूहत् रथेन ।

[ऋ. १।११६।१]

युवं शचीभिः विमदाय जायां न्यूहथुः पुरुमित्रस्य
योषाम् ॥ [ऋ. १।११७।२०]

युवं इयावाय रशतीमदत्तं । [ऋ. १।११७।८]

विमद की शादी करने के लिये अश्विदेवोंने एक स्त्री उसको अर्पण की— तथा इयाव के लिये एक गौर वर्ण की सुन्दर स्त्री दी ।

इस तरह अश्विदेव शादी करानेवाले दीखते हैं ।

स्त्री को पति दिया ।

योषायै चित्पितृषदे दुरोणे पतिं जूर्यत्या अश्विनावदत्तम् ॥

[ऋ. १।११७।७]

घोषा नामक एक स्त्री अपने पिताके घरमें रहकर बढती जाती थी । इसके लिये एक उत्तम पति अश्विदेवोंने दिया और घोषा के लिये सुख दिया ।

इस तरह पति को स्त्री और स्त्रीके लिये पति अश्विदेवोंने दिया है ।

अश्विदेवों का रथ ।

अश्विदेवों का रथ पक्षियों के समान आकाशमें उड़ता था, यह बात निम्न लिखित मन्त्रमें लिखी है—

वच्यन्ते वां ककुहासो जूर्णायामधि विष्टपि ।

यद् वां रथो विभिष्यतात् ॥ [१६; ऋ० १।४६।३]

जब आप का रथ पक्षियों के समान आकाश में उड़ता था, तब आपके घोड़े अन्तरिक्ष में गमन करते हैं । इनके आकाशगामी रथ को पक्षी जोते जाते थे । इस विषय में निम्न लिखित मन्त्र देखने योग्य है—

आ वां श्येनासो अश्विना वहन्तु रथे युक्तास आशवः

पतंगाः । ये अप्तुरो दिव्यासो न गृध्रा अभि प्रयो नासत्या वहन्ति ॥ [१३०; ऋ० १।११८।४]

आपके रथ को (आकाशयान को, विमान को) शीघ्रगामी पक्षी (आशवः पतंगाः युक्तासः) जोते गये हैं, वे श्येन पक्षी आप को ध्वज ले आवे । वे त्वराशील शीघ्रगामी हैं ।

इस से अश्वियों का रथ विमान जैसा आकाशगामी है यह बात सिद्ध होती है । इन का भूमिपर चलनेवाला भी रथ है । पर इन मंत्रों में उन के विमान का वर्णन है ।

अश्विदेवों का रथ घोड़े जोतने का नहीं था, इसलिये उसको ‘ अनश्व रथ ’ कहा है, देखिये—

अनश्वं याभी रथमावतं जिषे । [६३; ऋ० १।११२।१२]
अश्विनोरसनं रथमनश्वं वाजिनीवतोः ॥

[१५७; ऋ० १।१२०।१०]

जिस को घोड़े जोते नहीं जाते, ऐसा अश्विदेवोंका अनश्वः रथः) अश्वरहित रथ है । इस से इस को पक्षी जोते जाते थे और वह आकाश में उड़ता था, यह बात स्पष्ट हो सकती है ।

रथ को जोड़े श्येन पक्षी ।

अश्विदेवों के रथों अर्थात् आकाशयानों को पक्षी जोते जाते थे, इस विषय में ये मन्त्र देखिये—

आ वां श्येनासो अश्विना वहन्तु रथे युक्तास आशवः पतंगाः । ये अप्तुरो दिव्यासो न गृध्रा अभि प्रयो नासत्या वहन्ति । [१३०; ऋ० १।११८।४]

वेगवान् और उड़नेवाले श्येन पक्षी तुम अश्विदेवों को वेग से यहां ले आवें । दिव्य गीधों के समान आकाश में उड़नेवाले आप को हविष्यान्न के पास शीघ्र ले आवें ।

यहां ‘ श्येनासः, पतंगाः, गृध्राः ’ ये पद निःसंदेह पक्षीवाचक हैं । तथा ‘ आशवः, अप्तुरः ’ ये पद विशेष गति के वाचक हैं । ‘ दिव्यासः ’ पद आकाशगमन का सूचक है । ‘ रथे युक्ताः ’ पदोंसे ये पक्षी आकाशयान में जोड़े जाते थे, यह स्पष्ट हो जाता है । अर्थात् अश्विदेवोंके विमानों, हवाई जहाजों को गृध्र श्येन आदि वेगवान् पक्षी जोते जाते थे, यह बात इससे सिद्ध होती है ।

इनके रथों को घोड़े, गधे जोते जाते थे, इसका भी वर्णन अन्यत्र है ।

उड़नेवाली नौका = हवाई जहाज ।

युवमेतं चक्रधुः सिन्धुषु एवं आत्मन्वन्तं पक्षिणं तौग्याय कम् । येन देवत्रा मनसा निरुहधुः सुपसनी पेतधुः क्षोदसो महः ॥ [१९८; ऋ० १।१८२।५]

आपने तुमपुत्रके लिये अपने सामर्थ्य से पंखयुक्त नौका महासागर में बनायी, वह पक्षीके समान थी । उस नौका से उत्तम प्रकार उड़नेवाले तुम दोनों सहजही से समुद्र से उड़कर ऊपर चले गये ।

यहां उड़नेवाली नौका अश्विदेवोंने बनायी थी, यह स्पष्ट वर्णन है । यह जलमें तो चलती ही थी, पर आकाश में पक्षी के समान भी उड़ती थी । यही आकाशयान अथवा हवाई जहाज है । इन का रथ आकाश में घूमता है, इस विषय में देखिये—

उरु वां रथः परि नक्षति छां । [२४८; ऋ० ४।४३।५]

आप का रथ आकाश में संचार करता है । अर्थात् यह हवाई जहाज है, इस में सन्देह नहीं है ।

भुज्यु की सहायता ।

तुम एक सन्नाट् था, उस का पुत्र भुज्यु बड़ा वीर था । वह एक बार मरु देश के किसी शत्रु से लड़ने के लिये अपनी सेना के साथ समुद्र मार्ग से नौकाओं के द्वारा गया था । वहां उस का पराभव हुआ । वहां से भुज्युने अश्वि-

देवोंको सन्देश भेजा, अश्विदेव अपने विमानोंसे आकाश-मार्ग से आये, भुज्युको तथा उस की सेना को अपने विमानोंमें उठाकर भुज्यु को घर पहुँचाया । इस तरह युद्धोंमें— दर्याई युद्धों में भी अश्विदेवोंने सहायता की है, इनके वर्णन देखिये—

वीलुपत्तमभिराशुहेमभिर्वा देवानां वा जूतिभिः शाश-
दाना । तद्रासभो नासत्या सहस्रमाजा यमस्य प्रधने
जिगाय ॥ [७८; ऋ० १।११६।२]

(वीलु-पत्तमभिः) बड़े वेग से उड़नेवाले, (आशु-हेमभिः) त्वरासे दौड़नेवाले, (देवानां जूतिभिः) दैवी शक्तियों से प्रेरित होनेवाले यानों से युक्त (नासत्या) अश्विदेव बड़े पराक्रम करनेवाले हैं । उनके वाहन से ही (आज्ञा) इस युद्धमें (सहस्रं) हजारों शत्रु सैनिक (यमस्य प्रधने) यमराज के युद्ध में, सर्वस्वनाशक युद्ध में मारे जाकर (जिगाय) विजय मिला है ।

इस मन्त्र में अश्विदेवों के वाहन बड़े प्रबल वेग से आकाश में उड़ते थे, ऐसा लिखा है ।

तुप्रो ह भुज्युं अश्विनोदमेवे रयिं न कश्चिन्ममृवां
अवाहाः । तमूहथुः नौभिरात्मन्वतीभिः अन्तरिक्ष-
पुद्गिरपोदकाभिः । [७९; ऋ. १।११६।३]

तुप्र नामक सम्राट्ने अपने भुज्युनामक पुत्रको [उदमेवे] समुद्र में— अर्थात् समुद्र के परतीरनिवासी शत्रु पर हमला करने के लिये— भेजा था । जैसा कोई [ममृवां] मरनेवाला [रयिं न] अपने धनकी आशा छोड़ता है, वैसेही तुप्रने अपने पुत्र की आशा छोड़ कर उसे शत्रु पर भेजा था । पश्चात् भुज्यु का पराभव हुआ और वह समुद्र में डूब मरने लगा । उस राजकुमारको [आत्मन्वतीभिः नौभिः] सामर्थ्य-वाली नौकाओंद्वारा [अन्तरिक्षपुद्गिः] जो नौकाएं आकाश में भी उड़ती थीं और [अप-उदकाभिः] जलमें से भी जाती थीं, अश्विदेवोंने उसके वर पहुँचाया ।

जो जहाज आकाश में उड़ते हैं, जल में जाते हैं और समय पर भूमि परसे भी जा सकते हैं, ऐसे जहाज अश्वि-देवों के थे ।

तिष्ठः क्षपः त्रिरहातिवजद्भिः नासत्या भुज्युं ऊहथुः पतंगैः ।
समुद्रस्य धन्वन्नाद्रस्य पारे त्रिभी रथैः शतपद्भिः षडशैः ।

[८०; ऋ. १।११६।४]

[तिष्ठः क्षपः] तीन रात्री और [त्रिः अहा] तीन दिव तक [अतिवजद्भिः पतंगैः] अतिवेगसे दौड़नेवाले पक्षि-सदृश यानोंसे भुज्यु को— अर्थात् उसके साथियों के साथ— [ऊहथुः] आकाशमार्गसे वहन किया । [नाद्रस्य समुद्रस्य धन्वन् पारे] जलमय समुद्र के परे रेतिले प्रदेश में रहनेवाले राजा पर आक्रमण करने के लिये भुज्यु गया था । वहाँ से उसको [त्रिभिः रथैः] तीन रथों से उसको घर पहुँचाया । जिन रथों को सैकड़ों चक्र लगे थे और छह घोड़े अर्थात् वहन-साधन लगे थे ।

तीन अहोरात्र चलनेवाले ये हवाई जहाज थे, ऐसा यहाँ कहा है । सैनिकों को लेकर ये वायुयान तीन दिन रात उड़ते हुए तुप्र के राज्य में पहुँचे ।

अनारम्भणे तदवीरयेथां अनास्थाने अग्रभणे समुद्रे ।

यदश्विना ऊहथुर्भुज्युमस्तं शतारित्रां नावमात-

स्थिवासम् ॥ [८१; ऋ० १।११६।५]

जिस समुद्र के (अनारम्भणे) आदि अन्त का पता नहीं लगता, (अनास्थाने) जिस समुद्र के मध्यमें ठहरने के लिए कोई स्थान नहीं है, और (अग्रभणे) जिस का ग्रहण भी नहीं हो सकता, ऐसे अथांग महासागरमें भुज्यु डूब रहा था । वहाँ अश्विदेव पहुँचे और उन्होंने अपने (शतारित्रां नाव) सौ बलियोंवाली नौकापर उस को (आतस्थिवासं) बिठलाकर उस को (अस्तं ऊहथुः) अपने घर पहुँचा दिया ।

यहाँ कहा है कि अथांग समुद्र में अश्विदेवों के जहाज जाते थे । वे आकाश में भी उड़ते थे और अनेक सैनिकों को बिठला सकते थे ।

युवं तुप्राय पूर्व्यभिरेवैः पुनर्मन्यावभवत्तं युवाना ।

युवं भुज्युं अर्णसो निः समुद्रात् विभिरूहथुः ऋज्रे-

भिरश्चैः ॥ [११५; ऋ० १।११७।१४]

हे अश्विदेवों ! आप (तुप्राय) राजा तुप्र के लिये (पूर्व्यभिः एवैः) पूर्व समय में की सहायताओं से प्रिय हो चुके थे ही, पर आप (पुनः) फिर भी (मन्यौ अभवत्) मान्य हो गये हैं, क्योंकि (भुज्युं) तुप्र के युवराज राजपुत्र भुज्युको (अर्णसः समुद्रात्) बड़े महासागर में से (ऋज्रेभिः अश्वैः) बड़े वेगवाले अपने (विभिः) पक्षि-सदृश वाहनोसे (ऊहथुः) ऊपर उठाया और घरको पहुँचाया ।

यहां बताया है कि, अश्विनों की पहले से ही मित्रता तुम्र के साथ थी । पर अब पुत्रको बचाने के कारण वह मित्रता सुदृढ़ हो गई है । पहले की अपेक्षा अब वह मित्रता अधिक बढ़ चुकी है ।

युवं भुज्यं भुरमाणं विभिर्गतं स्वयुक्तिभिर्निर्वहन्ता
पितृभ्य आ । यासिष्ठं वर्तिवृषणा विजेन्यम् ॥

[१४१; ऋ० १।१।१९४]

आपने (भुरमाणं भुज्यं) जलों में डूब मरनेवाले भुज्य नामक राजपुत्रको (विभिः गतं) उड़नेवाले पक्षियों जैसे यानोंसे उठाकर (स्वयुक्तिभिः) अपनी खास युक्तियों से (पितृभ्यः आ निर्वहन्ता) पिताके पास लाया । आप (वृषणा) बलवान् हैं और (विजेन्यं यासिष्ठं) अतिदूर देशतक आप पहुंचे थे और भुज्यको आपने वहांसे लाया था ।

ता भुज्यं विभिरद्भ्यः समुद्रात्तुम्रस्य सूनं ऊहथूरजोभिः ।
अरेणुभिर्योजनेभिर्भुजन्ता पतत्रिभिः अर्णसो निरूप-
स्थात् ॥ [३११; ऋ० ६।६२।६]

(तुम्रस्य सूनं भुज्यं) राजा तुम्र के पुत्र भुज्य को (निरूपस्थात् अर्णसः समुद्रात् अद्भ्यः) अर्थात् महासागर के बड़े जलों से (अरेणुभिः रजोभिः) जहां धूली नहीं है, ऐसे अन्तरिक्षसे- आकाशमार्गसे- (ऊहथुः) उठाकर (योजनेभिः) विविध प्रकारकी योजनाओंसे युक्त (विभिः) पक्षियों जैसे (पतत्रिभिः) पक्षिरूप यानों से तुमने उसके घर पहुंचाया ।

युवं भुज्यं अवविद्धं समुद्र ऊहथूरर्णसो अस्त्रिधानैः ।
पतत्रिभिरश्रमैरव्ययिभिर्दंसनाभिः अश्विना पारयन्ता ॥

[३५३; ऋ० ७।६९।७]

आपने [समुद्रे अवविद्धं भुज्यं] समुद्र में जलमी होकर पड़े हुए भुज्य को [अस्त्रिधानैः] जिनमें कुछ भी न्यूतता नहीं है, सब सुखसाधनों से जो परिपूर्ण हैं, [अश्रमैः] जिनमें बैठनेवालोंको बिल्कुल श्रम नहीं होते, [अव्ययि-

भिः] जिनमें किसी को व्यथा नहीं होती, ऐसे [पतत्रिभिः] पक्षि जैसे यानों से [अर्णसः उह ऊहथुः] समुद्र से ऊपर उठा कर अनेकानेक युक्तियों से [पारयन्ता] समुद्र के पार करके घर पहुंचा दिया ।

युवं भुज्यं समुद्र आ रजसः पार ईक्षितम् ।
यातमच्छा पतत्रिभिः नासत्या सातये कृतम् ।

[६३१; ऋ० १०।१४३।५]

उतयं भुज्यमाश्विना सखायो मध्ये जहृदुरेवासः समुद्रे ।
निरी पपंदरावा यो युवाकुः । [३४४; ऋ० ७।६८।७]

आपने डूबनेवाले भुज्यको समुद्र से उठा कर [रजसः] अन्तरिक्ष के मार्ग से पार पहुंचा दिया । आप [पतत्रिभिः] पक्षी जैसे आकाश-यानों से वेगसे वहां पहुंचे थे ।

आपने समुद्र के बीच में जो कठिन अवस्था में पड़ा था, उस भुज्य को मित्रभावसे उठा कर सुरक्षित घर पहुंचाया ।

इन मंत्रों से पता लगता है कि अश्विदेवों के पास पक्षियों के सदृश आकाश में उड़नेवाले आकाश-यान थे । वे तीन अहोरात्र अतिवेग से चलाये जाते थे और उनमें सैनिकों को बिठलाना और इष्ट स्थान पर पहुंचाने का कार्य किया जाता था ।

अश्विदेवों की यह विद्या मननपूर्वक आलोचना करने-योग्य है ।

इस तरह अश्विदेवों के कर्तृत्व का वर्णन वेद-मंत्रों में है । अश्विदेवता के सब मंत्रों का मननपूर्वक अध्ययन करने पर तथा इनका जो वर्णन पुराणों में है वह देखने के बाद, तथा दोनों की संगति लगाने के बाद अश्विदेवों के संबंध में ठीक ठीक पता लग सकता है ।

ये देवता उषाके पूर्व आकाश में तारकारूप से उगते हैं, ऐसा भी वर्णन है । ये दो साथ साथ रहते हैं । अस्तु । देवत-संहितातर्गत अश्विनौ देवताका अध्ययन होनेके लिये यह मंत्रसंग्रह सहायक होगा, ऐसी हमें आशा है ।

×

×

×

×

इस दैवत-संहिता के द्वितीय विभाग में आये सब देवताओं की उपमासूची, विशेषणसूची आदि अनेक उपयुक्त सूचियाँ श्री० पं० अनन्त दिनकर रास्ते, वार्ड (जि० सातारा) निवासीने बड़ी मेहनत से तथा विशेष प्रयत्नपूर्वक बनायी हैं, इसलिये स्वाध्याय-मण्डल उन के विषय में अपनी कृतज्ञता व्यक्त करता है ।

×

×

×

×

इस दैवत-संहिता के मुद्रण और प्रकाशन के व्यय के लिये मुंबई विश्वविद्यालय (University of Bombay) ने जो सहायता दी और जो उक्त विश्वविद्यालय से सम्पादक को मिली है, उस के लिये सम्पादक उक्त विश्वविद्यालय का बड़ा ऋणी है ।

स्वाध्याय-मण्डल, औध
ता० ७।६।४३

}

निवेदनकर्ता
श्रीपाद दामोदर सातवलेकर





दैवत-संहिता ।

(ऋग्यजुःसामाथर्वणां संहितानां सर्वान् मन्त्रान्, दैवतानुसारेण संगृह्य निर्मिता ।)

५ अश्विनौ देवता ।

॥१॥ (ऋ. १।३।१—३)

(१—३) मधुच्छन्दा वैश्वामित्रः । गायत्री ।

| | | | |
|--------------------|---|---|---|
| अश्विना यज्वरीरिषो | द्रवत्पाणी शुभस्पती । पुरुभुजा चनुस्यतम् | १ | |
| अश्विना पुरुदंससा | नरा शवीरया धिया । धिष्ण्या वनतं गिरः | २ | |
| दसा युवाकवः सुता | नासत्या वृक्तबर्हिषः । आ यातं रुद्रवर्तनी | ३ | ३ |

॥२॥ (ऋ. १।१५।११)

(४—८) मेधातिथिः काण्वः । (ऋतुसहितौ) । गायत्री ।

| | | | |
|-------------------|--|----|--|
| अश्विना पिबतं मधु | दीर्घग्री शुचिव्रता । ऋतुनां यज्ञवाहसा | ११ | |
|-------------------|--|----|--|

॥३॥ (ऋ. १।२१।१—४)

| | | | |
|-----------------------|--|---|---|
| प्रातर्युजा वि बोधया— | अश्विनावेह गच्छताम् । अस्य सोमस्य पीतये | १ | ५ |
| या सुरथा रथीतमो— | भा देवा दिविस्पृशा । अश्विना ता हवामहे | २ | |
| या वां कशा मधुमत्य— | श्विना सूनृतावती । तया यज्ञं मिमिक्षतम् | ३ | |
| नहि वामस्ति दूरके | यत्रा रथेन गच्छथः । अश्विना सोमिनो गृहम् | ४ | ८ |

॥४॥ (ऋ. १।३०।१७—१९)

(९—११) शुनःशेष आजीगर्तिः स कृत्रिमो वैश्वामित्रो देवरातः ।

| | | | |
|----------------------|--|----|----|
| आश्विनावश्वावत्ये— | षा यातं शवीरया । गोमद् दसा हिरण्यवत् | १७ | |
| समानयोजनो हि वां | रथो दसावमर्त्यः । समुद्रे अश्विनेयते | १८ | |
| न्यः धन्यस्य मूर्धनि | चक्रं रथस्य येमथुः । परि द्यामन्यदीयते | १९ | ११ |

॥५॥ (ऋ. १।३४।१—१२)

(१२—१३) हिरण्यस्तूप आङ्गिरसः । जगती; ९, १२ त्रिष्टुप् ।

| | |
|--|-------|
| त्रि॒श्विन् नो अ॒द्या भव॑तं नवेदसा वि॒भ्रुवां याम॑ उ॒त रा॒तिर॑श्विना । | |
| युवो॑र्हि य॒न्त्रं हि॒म्येव॑ वास॑सो ऽभ्याय॑सेन्या भव॑तं मनी॑षिभिः | १ |
| त्रयः॑ प॒वयो॑ मधु॒वाह॑ने रथे सोम॑स्य वे॒नामनु॑ विश्व इद् वि॒दुः । | |
| त्रयः॑ स्क॒म्भासः॑ स्क॒भिता॑स आ॒रभे॑ त्रि॒र्नक्तं॑ याथस्त्रि॒र्वश्वि॑ना दि॒वा | २ |
| स॒माने॑ अ॒हन् त्रि॑रव॒द्यगो॑हना त्रि॒रद्य॑ य॒ज्ञं मधु॑ना मिमिक्षतम् । | |
| त्रि॒र्वाज॑वतीरिषो अश्विना यु॒वं दोषा॑ अ॒स्मभ्य॑मुष॑सश्च पि॒न्वत॑म् | ३ |
| त्रि॒र्वर्ति॑र्यातं त्रि॒रनु॑व्रते जने त्रिः सु॒ग्राव्ये॑ त्रेधे॒व शि॑क्षतम् । | |
| त्रि॒र्नान्द्यं॑ वह॒तम॑श्विना यु॒वं त्रिः॑ पृ॒क्षो अ॒स्मे अ॒क्षरे॑व पि॒न्वत॑म् | ४ १५ |
| त्रि॒र्नो र॒यिं वह॑तमश्विना यु॒वं त्रि॒दे॒वता॑ता त्रि॒रुता॑वतं धियः । | |
| त्रिः सौ॒भग॑त्वं त्रि॒रुत॑ श्रवा॑सि न—स्त्रि॒ष्टं वां स॒रे दु॑हिता रु॒हद् रथ॑म् | ५ |
| त्रि॒र्नो अ॑श्विना दि॒व्यानि॑ भेष॒जा त्रिः॑ पा॒र्थि॒वानि॑ त्रि॒रु द॑त्तमद्भ्यः । | |
| ओ॒मानं॑ श॒योर्मे॑म॒काय॑ सु॒नवे॑ त्रि॒धातु॑ श॒र्म वह॑तं शु॒भस्प॑ती | ६ |
| त्रि॒र्नो अ॑श्विना य॒जता॑ दि॒वेदि॑वे परि॒ त्रि॒धातु॑ पृथि॒वीम॑शायतम् । | |
| ति॒स्रो ना॑सत्या रथ्या प॒राव॑त आ॒त्मेव॑ वा॒तः स्व॑स॒राणि॑ गच्छतम् | ७ |
| त्रि॒रश्वि॑ना सि॒न्धुभिः॑ स॒प्तमा॑तृभिः—स्त्रय॑ आ॒हावा॑स्त्रेधा ह॒विष्कृ॑तम् । | |
| ति॒स्रः पृथि॑वीरुपरि॒ प्रवा॑ दि॒वो ना॑कं रक्षेथे द्युभि॑र॒क्तुभि॑र्हितम् | ८ |
| क्व॑ त्री च॒क्रा त्रि॑वृ॒तो रथ॑स्य क्व॑ त्रयो॑ व॒न्धुरो॑ ये सनी॑लाः । | |
| क्व॑दा योगो॑ वा॒जिनो॑ रास॑मस्य येन॑ य॒ज्ञं ना॑सत्योपयाथः | ९ २० |
| आ ना॑सत्या गच्छ॑तं ह॒यते॑ ह॒वि—र्मध्वः॑ पि॒वतं॑ मधु॒पेभि॑रा॒सभिः॑ । | |
| युवो॑र्हि पूर्वे स॒वितो॑षसो रथ—मृ॒ताय॑ चि॒त्रं घृ॑तव॒न्तमि॑ष्यति | १० |
| आ ना॑सत्या त्रि॒भिरे॑कादु॒शैरि॑ह दे॒वेभि॑र्यातं मधु॒पेय॑मश्विना । | |
| प्रा॒युस्ता॑रि॒ष्टं नी॑ रपा॑सि मृक्ष॑तं से॒धतं॑ द्वेषो भव॑तं स॒चाभ्र॑वा | ११ |
| आ नो॑ अश्विना त्रि॒वृता॑ रथे॒ना—ऽर्वा॑श्च र॒यिं वह॑तं सु॒वीर॑म् । | |
| शृ॒ण्वन्ता॑ वा॒मव॑से जोह॒वीमि॑ वृ॒धे च॑ नो भव॑तं वा॒जसा॑तौ | १२ २३ |

॥६॥ (ऋ. १।४६।१—१५)

(१४—४८) प्रस्कण्वः काण्वः । गायत्री ।

| | | |
|--|----|----|
| पूषो उषा अपूर्व्या व्युच्छति प्रिया दिवः । स्तुषे वामश्विना बृहत् | १ | |
| या दुस्त्रा सिन्धुमातरा मनोतरा रथीणाम् । धिया देवा वसुविदा | २ | २५ |
| वच्यन्ते वां ककुहासो जूर्णायामधि विष्टपि । यद् वां रथो विभिष्पतात् | ३ | |
| हविषा जारो अपां पिपर्ति पपुर्निरा । पिता कुटंस्य चर्षणिः | ४ | |
| आदारो वां मतीनां नासत्या मतवचसा । पातं सोमस्य धृष्णुया | ५ | |
| या नः पीपरदाश्विना ज्योतिष्मती तमस्तिरः । तामस्मे रासाथामिषम् | ६ | |
| आ नो नावा मतीनां यातं पाराय गन्तवे । युञ्जाथामश्विना रथम् | ७ | ३० |
| अरित्रं वां दिवस्पृथु तीर्थे सिन्धूनां रथः । धिया युयुज्ज इन्दवः | ८ | |
| दिवस्कण्वास इन्दवो वसु सिन्धूनां पदे । स्वं वृत्रि कुह धित्सथः | ९ | |
| अभूदु भा उ अंशवे हिरण्यं प्रति सूर्यः । व्यख्यजिह्वासातः | १० | |
| अभूदु पारमेतवे पन्था क्रतस्य साधुया । अदर्शि वि सुतिर्दिवः | ११ | |
| तत् तदिदश्विनोरवो जरिता प्रति भूषति । मदे सोमस्य पिप्रतोः | १२ | ३५ |
| वावसाना विवस्वति सोमस्य पीत्या गिरा । मनुष्वच्छंभू आ गतम् | १३ | |
| युवोरुषा अनु श्रियं परिज्मनोरुपाचरत् । क्रता वनथो अक्तुभिः | १४ | |
| उमा पिबतमश्विनो भा नः शर्म यच्छतम् । अविद्रियाभिरूतिभिः | १५ | |

॥७॥ (ऋ. १।४७।१—१०)

प्रगाथः = (विषमा) बृहती, (समा) सतो बृहती ।

| | | |
|--|---|----|
| अयं वां मधुमत्तमः सुतः सोम क्रतावृधा । | | |
| तमश्विना पिबतं तिरोअह्वं धत्तं रत्नानि दाशुषे | १ | |
| त्रिवन्धुरेण त्रिवृता सुपेशसा रथेना यातमश्विना । | | |
| कण्वासो वां ब्रह्म कण्वन्त्यध्वरे तेषां सु शृणुतं हवम् | २ | ४० |
| अश्विना मधुमत्तमं पातं सोममृतावृधा । | | |
| अथाद्य दस्त्रा वसु बिभ्रता रथे दाश्वांसमुप गच्छतम् | ३ | |
| त्रिषधस्थे बर्हिषे विश्ववेदसा मध्वा यज्ञं मिमिक्षतम् । | | |
| कण्वासो वां सुतसोमा अभिद्यवो युवां हवन्ते अश्विना | ४ | ४२ |

| | |
|---|-------|
| याभिः कण्वमभिष्टिभिः प्रावतं युवमश्विना । | |
| ताभिः ष्वस्माँ अवतं शुभस्पती पातं सोममृतावृधा | ५ |
| सुदासे दत्ता वसु विभ्रता रथे पृक्षो वहतमश्विना । | |
| रयिं समुद्रादुत वा दिवस्पर्य—से धत्तं पुरुस्पृहम् | ६ |
| यन्मासत्या परावति यद् वा स्थो अधि तुर्वशे । | |
| अतो रथेन सुवृता न आ गतं साकं सूर्यस्य रश्मिभिः | ७ ४५ |
| अर्वाश्वा वां सप्तयोऽध्वरश्रियो वहन्तु सवनेदुप । | |
| इषं पृश्नन्तां सुकृते सुदानव आ बर्हिः सीदतं नरा | ८ |
| तेन नासत्या गतं रथेन सूर्यत्वचा । | |
| येन शश्वदूहथुर्दाशुषे वसु मध्वः सोमस्य पीतये | ९ |
| उक्थेभिर्वागवसे पुरुवस्त्र अकैश्च नि ह्वयामहे । | |
| शश्वत् कण्वानां सदासि प्रिये हि कं सोमं पपथुरश्विना | १० ४८ |

॥८॥ (ऋ. १।९२।१६—१८)

(४९—५१) गोतमो राहूगणः । उष्णिक् ।

| | |
|--|--|
| अश्विना वर्तिरसदा गोमद् दत्ता हिरण्यवत् । अर्वाग्रथं समनसा नि यच्छतम् १६ | |
| यावित्था श्लोकमा दिवो ज्योतिर्जनाय चक्रथुः । आ न ऊर्जे वहतमश्विना युवम् १७ | |
| एह देवा मयोभुवा दत्ता हिरण्यवर्तनी । उषर्बुधो वहन्तु सोमपीतये १८ ५१ | |

॥९॥ (ऋ. १।११२।१—२५)

(५२—७६) कुत्स आङ्गिरसः । १ (आद्यपादस्य) द्यावापृथिव्यौ, १ (द्वितीयपादस्य) अग्निः,

१ (उत्तरार्धस्य) अश्विनौ; २—२५ अश्विनौ । जगती; २४—२५ त्रिष्टुप् ।

| | |
|--|------|
| ईळे द्यावापृथिवी पूर्वचित्तये ऽग्निं घर्मं सुरुचं यामन्निष्टये । | |
| याभिर्भरे कारमंशाय जिन्वथ—स्ताभिर्ब्रु पु ऊतिभिरश्विना गतम् | १ |
| युवोर्दानाय सुभरा असश्चतो रथमा तस्थुर्वचसं न मन्तवे । | |
| याभिर्धियोऽवथः कर्मन्निष्टये ताभिर्ब्रु पु ऊतिभिरश्विना गतम् | २ |
| युवं तासां दिव्यस्य प्रशासने विशां क्षयथो अमृतस्य मज्मना । | |
| याभिर्धेनुमस्वं पिन्वथो नरा ताभिर्ब्रु पु ऊतिभिरश्विना गतम् | ३ |
| याभिः परिज्मा तनयस्य मज्मना द्विमाता तूष्णं तुरणिर्विभूषति । | |
| याभिस्त्रिमन्तुरभवद् विचक्षण—स्ताभिर्ब्रु पु ऊतिभिरश्विना गतम् | ४ ५५ |

| | |
|--|-------|
| याभी रेभं निर्वृतं सितमद्भ्य उद् वन्दनमैरयतं स्वर्दशे । | |
| याभिः कण्वं प्र सिषासन्तमावतं तामिरू पु ऊतिभिरश्विना गतम् | ५ |
| याभिरन्तकं जसमानमारणे भुज्युं याभिरव्यथिभिर्जिजिन्वथुः । | |
| याभिः कर्कन्धुं वय्यं च जिन्वथुस्तामिरू पु ऊतिभिरश्विना गतम् | ६ |
| याभिः शुचन्ति धनसां सुषंसदं तप्तं घर्ममोम्यावन्तमत्रये । | |
| याभिः पृथ्निगुं पुरुकुत्समावतं तामिरू पु ऊतिभिरश्विना गतम् | ७ |
| याभिः शचीभिर्वृषणा परावृजं प्रान्धं श्रोणं चक्षस एतवे कथः । | |
| याभिर्वर्तिकां ग्रसिताममृञ्चतं तामिरू पु ऊतिभिरश्विना गतम् | ८ |
| याभिः सिन्धुं मधुमन्तमसञ्चतं वसिष्ठं याभिरजरावर्जिन्वतम् । | |
| याभिः कुत्सं श्रुतयं नर्यमावतं तामिरू पु ऊतिभिरश्विना गतम् | ९ ६० |
| याभिर्विष्पलां धनसामथर्व्यं सहस्रमीळ्ह आजावर्जिन्वतम् । | |
| याभिर्वशमश्व्यं प्रेणिमावतं तामिरू पु ऊतिभिरश्विना गतम् | १० |
| याभिः सुदानू औशिजाय वणिजे दीर्घश्रवसे मधु कोशो अक्षरत् । | |
| कक्षीवन्तं स्तोतारं याभिरावतं तामिरू पु ऊतिभिरश्विना गतम् | ११ |
| याभी रसां क्षोदंसोदः पिपिन्वथुं रनश्चं याभी रथमावतं जिषे । | |
| याभिस्त्रिशोकं उस्त्रिया उदाजतं तामिरू पु ऊतिभिरश्विना गतम् | १२ |
| याभिः सूर्यं परियाथः परावर्ति मन्धातारं क्षैत्रपत्येष्वावतम् । | |
| याभिर्विप्रं प्र भरद्वाजमावतं तामिरू पु ऊतिभिरश्विना गतम् | १३ |
| याभिर्महामतिथिग्वं कशोजुवं दिवोदासं शम्बरहत्य आवतम् । | |
| याभिः पूभिद्यै त्रसदस्युमावतं तामिरू पु ऊतिभिरश्विना गतम् | १४ ६५ |
| याभिर्वम्रं विपिपानमुपस्तुतं कलिं याभिर्वित्तजानिं दुवस्यथः । | |
| याभिर्व्यश्वमुत पृथिमावतं तामिरू पु ऊतिभिरश्विना गतम् | १५ |
| याभिर्नरा शयवे याभिरत्रये याभिः पुरा मनवे गातुमीषथुः । | |
| याभिः शरीराजतं स्यूमरश्मये तामिरू पु ऊतिभिरश्विना गतम् | १६ |
| याभिः पठर्वा जठरस्य मज्मनाग्निर्नादीदेक्षित इद्धो अज्मन्ना । | |
| याभिः शर्यातमवथो महाधने तामिरू पु ऊतिभिरश्विना गतम् | १७ |
| याभिरङ्गिरो मनसा निरण्यथोऽग्रं गच्छथो विवरे गोअर्णसः । | |
| याभिर्मनुं शरमिषा समावतं तामिरू पु ऊतिभिरश्विना गतम् | १८ ६९ |

| | |
|---|-------|
| याभिः पत्नीर्विमदाय न्युहथु—रा घ वा याभिररुणीरशिक्षतम् । | |
| याभिः सुदास ऊहथुः सुदेव्यं ताभिरू पु ऊतिभिरश्विना गतम् | १९ ७० |
| याभिः शंतांती भवथो ददाशुषे भुज्युं याभिरवथो याभिरधिगुम् । | |
| ओम्यावतीं सुभरामतस्तुभं ताभिरू पु ऊतिभिरश्विना गतम् | २० |
| याभिः कृशानुमसर्ने दुवस्यथो जवे याभिर्यूनो अर्वन्तमावतम् । | |
| मधु प्रियं भरथो यत् सरड्म्य—स्ताभिरू पु ऊतिभिरश्विना गतम् | २१ |
| याभिर्नरं गोषुयुधं नृषाह्ये क्षेत्रस्य साता तनयस्य जिन्वथः । | |
| याभी रथाँ अवथो याभिरवत—स्ताभिरू पु ऊतिभिरश्विना गतम् | २२ |
| याभिः कुत्समार्जुनेयं शतक्रतु प्र तुर्वीति प्र च दुभीतिमावतम् । | |
| याभिर्ध्वसन्ति पुरुषन्तिमावतं ताभिरू पु ऊतिभिरश्विना गतम् | २३ |
| अम्रस्वतीमश्विना वाचमस्मे कृतं नो दत्ता वृषणा मनीषाम् । | |
| अद्यत्येऽवसे नि ह्वये वां वृधे च नो भवतं वाजसातौ | २४ |
| द्युभिरक्तुभिः परि पातमस्मान्नरिष्टेभिरश्विना सौभगेभिः । | |
| तन्नो मित्रो वरुणो मामहन्ता—मदितिः सिन्धुः पृथिवी उत द्यौः | २५ ७६ |

॥१०॥ (ऋ. १।११६।१—२५)

(७७—१५९) कक्षीवान् दैर्घतमस औशिजः । त्रिष्टुप् ।

| | |
|--|------|
| नासत्याभ्यां बर्हिर्वि प्र वृज्जे स्तोमौ इयम्यभ्रियेव वातः । | |
| यावर्भगाय विमदाय जायां सेनाजुवां न्युहतू रथेन | १ |
| वीळपत्माभिराशुहेमभिर्वा देवानां वा जूतिभिः शाशदाना । | |
| तद् रासभो नासत्या सहस्र—माजा यमस्य प्रधने जिगाय | २ |
| तुग्रो ह भुज्युमश्विनोदमेधे रथि न कश्चिन्ममृवाँ अवाहाः । | |
| तमूहथुनौभिरात्मन्वतीभि—रन्तरिक्षप्रुद्धिरपोदकाभिः | ३ |
| तिस्रः क्षपस्त्रिहातिव्रज्जि—र्नासत्या भुज्युमूहथुः पतङ्गैः । | |
| समुद्रस्य धन्वन्त्रार्द्रस्य पारे त्रिभी रथैः शतपङ्क्तिः षळश्चैः | ४ ८० |
| अनारम्भणे तदवीरयेथा—मनास्थाने अग्रभूणे समुद्रे । | |
| यदश्विना ऊहथुर्भुज्युमस्तं शतारित्रां नावमातस्थिवांसम् | ५ |
| यमश्विना ददथुः श्वेतमश्व—मघाश्वाय शश्वदित् स्वस्ति । | |
| तद् वां दानं महि कीर्तेन्यं भूत् पैद्वो वाजी सदमिद्वय्यो अर्थः | ६ ८१ |

| | |
|--|-------|
| युवं नरा स्तुवते पञ्जियाय कक्षीवते अरदतं पुरंधिम् । | |
| कारोतराच्छपादश्चस्य वृष्णः शतं कुम्भां असिञ्चतं सुरायाः | ७ |
| हिमेनाग्निं घ्नंसमवारयेथां पितुमतीमूर्जमस्मा अधत्तम् । | |
| ऋषीसे अत्रिमश्विनावनीतमुन्निन्यथुः सर्वगणं स्वस्ति | ८ |
| परावतं नासत्यानुदेथा—मुच्चाबुधं चक्रथुर्जिह्वावरम् । | |
| क्षरन्नापो न पायनाय राये सहस्राय तृष्यते गोतमस्य | ९ ८५ |
| जुजुरुषो नासत्योत वत्रि प्रामुञ्चतं द्रापिमिव च्यवानात् । | |
| प्रातिरतं जहितस्यायुर्दस्त्रा—दित् पतिमकृणुतं कनीनाम् | १० |
| तद् वां नरा शंस्यं राध्यं चा—भिष्टिमन्नासत्या वरूथम् । | |
| यद् विद्वांसा निधिमिवापगूळह—मुद् दर्शतादूपथुर्वन्दनाय | ११ |
| तद् वां नरा सनये दंसं उग्र—माविष्कृणोमि तन्यतुर्न वृष्टिम् । | |
| दुध्यङ् ह यन्मध्वाथर्वणो वा—मश्वस्य शीर्ष्णा प्र यदीमुवाच | १२ |
| अजोहवीन्नासत्या करा वां महे यामन् पुरुभुजा पुरंधिः । | |
| श्रुतं तच्छासुरिव वध्रिमत्या हिरण्यहस्तमश्विनावदत्तम् | १३ |
| आस्नो वृकस्य वर्तिकामभीके युवं नरा नासत्यामुमुक्तम् । | |
| उतो कविं पुरुभुजा युवं ह कृपमाणमकृणुतं विचक्षे | १४ ९० |
| चरित्रं हि वेरिवाच्छेदि पर्ण—माजा खेलस्य परितक्म्यायाम् । | |
| सद्यो जङ्घामायसीं विश्पलायै धने हिते सतीवे प्रत्यधत्तम् | १५ |
| शतं मेषान् वृक्ये चक्षदान—मुज्राश्वं तं पितान्धं चकार । | |
| तस्मा अक्षी नासत्या विचक्ष आधत्तं दस्त्रा भिषजावनर्वन् | १६ |
| आ वां रथं दुहिता सूर्यस्य कार्ष्मेवातिष्ठदर्वता जयन्ती । | |
| विश्वे देवा अन्वमन्यन्त हृद्भिः समु श्रिया नासत्या सचेथे | १७ |
| यदयातं दिवोदासाय वर्ति—भरद्वाजायाश्विना हर्यन्ता । | |
| रेवदुवाह सचनो रथो वां वृषभश्च शिशुमारश्च युक्ता | १८ |
| रयिं सुक्षत्रं स्वपत्यमायुः सुवीर्यं नासत्या वहन्ता । | |
| आ जह्वावीं समनसोप वाजै—स्त्रिरहो भागं दधतीमयातम् | १९ |
| परिविष्टं जाहुषं विश्वतः सीं सुगेभिर्नक्तमूहथू रजोभिः । | |
| विभिन्दुना नासत्या रथेन वि पर्वतां अजरयू अयातम् | २० ९६ |

| | |
|---|--------|
| एकस्या वस्तोरावतं रणांय वशमश्विना सनये सहस्रा । | |
| निरहतं दुच्छुना इन्द्रवन्ता पृथुश्रवसो वृषणावरातीः | २१ |
| शरस्य चिदार्चत् कस्यावतादा नीचादुच्चा चक्रथुः पातवे वाः । | |
| शयवे चिन्नासत्या शचीभिर्जसुरये स्तथे पिप्यथुर्गाम् | २२ |
| अवस्यते स्तुवते कृष्ण्याय ऋजूयते नासत्या शचीभिः । | |
| पशुं न नष्टमिव दर्शनाय विष्णाप्वै ददथुर्विश्वकाय | २३ |
| दश रात्रीरश्विना नव द्यू नवनदं श्रथितमप्स्वन्तः । | |
| विप्रुतं रेभमुदनि प्रवृक्तमुन्निन्यथुः सोममिव सुवेण | २४ १०० |
| प्र वां दंसांस्यश्विनाववोचमस्य पतिः स्यां सुगवः सुवीरः । | |
| उत पश्यन्नश्रुवन् दीर्घमायुरस्तमिवेज्जरिमाणं जगम्याम् | २५ |

॥११॥ (ऋ. १।११।७।१-२५)

| | |
|--|-------|
| मध्वः सोमस्याश्विना मदाय प्रतो होता विवासते वाम् । | |
| बर्हिष्मती रातिर्विश्रिता गीरिषा यातं नासत्योप वाजैः | १ |
| यो वामश्विना मनसो जवीयान् रथः स्वश्चो विश आजिगाति । | |
| येन गच्छथः सुकृतो दुरोणं तेन नरा वर्तिरस्मभ्यं यातम् | २ |
| ऋषिं नरावंहसः पाञ्चजन्यमुवीसादत्रिं मुञ्चथो गुणेन । | |
| मिनन्ता दस्योरशिवस्य माया अनुपूर्वं वृषणा चोदयन्ता | ३ |
| अश्वं न गूळहमश्विना दुरेवैर्ऋषिं नरा वृषणा रेभमप्सु । | |
| सं तं रिणीथो विप्रुतं दंसांभिर्न वां जूर्यन्ति पुर्व्या कृतानि | ४ १०५ |
| सुषुप्त्वासं न निर्ऋतेरुपस्थे सूर्यं न दंसा तमसि क्षियन्तम् । | |
| शुभे रुक्मं न दर्शतं निखातमुदपथुराश्विना वन्दनाय | ५ |
| तद् वां नरा शंस्यं पज्रियेण कक्षीवता नासत्या परिज्मन् । | |
| शफादश्वस्य वाजिनो जनाय शतं कुम्भां असिश्चतं मधूनाम् | ६ |
| युवं नरा स्तुवते कृष्ण्याय विष्णाप्वै ददथुर्विश्वकाय । | |
| घोषायै चित् पितृषदे दुरोणे पतिं जूर्यन्त्या अश्विनावदत्तम् | ७ |
| युवं श्यावाय रुशतीमदत्तं महः क्षोणस्याश्विना कण्वाय । | |
| प्रवाच्यं तद् वृषणा कृतं वां यन्नार्षदाय श्रवो अध्यधत्तम् | ८ १०९ |

| | |
|--|--------|
| पुरु वर्षीस्यश्विना दधाना नि पेदव ऊहथुराशुमश्वम् । | |
| सहस्रसां वाजिनमप्रतीतमहिहने श्रवस्यं तरुत्रम् | ९ ११० |
| एतानि वां श्रवस्या सुदानु ब्रह्माङ्गुषं सदेने रोदस्योः । | |
| यद् वां पुञ्जासौ अश्विना हवन्ते यातमिषा च विदुषे च वाजम् | १० |
| सूनोर्मर्निनाश्विना गृणाना वाजं विप्राय भुरणा रदन्ता । | |
| अगस्त्ये ब्रह्मणा वावृधाना सं विष्पलां नासत्यारिणीतम् | ११ |
| कुह यान्तां सुष्टुतिं काव्यस्य दिवो नपाता वृषणा शयुत्रा । | |
| हिरण्यस्येव कलशं निखातमुदूपथुर्दशमे अश्विनाहन् | १२ |
| युवं च्यवानमश्विना जरन्तं पुनर्युवानं चक्रथुः शचीभिः । | |
| युवो रथं दुहिता सूर्यस्य सह श्रिया नासत्यावृणीत | १३ |
| युवं तुग्राय पूर्येभिरेवैः पुनर्मन्यावभवतं युवाना । | |
| युवं भुज्युमर्णसो निः समुद्राद् विभिरूहधुर्ऋजोभिरश्वैः | १४ ११५ |
| अजोहवीदश्विना तौग्र्यो वां प्रोळ्हः समुद्रमव्यथिर्जगन्वान् । | |
| निष्टमूहथुः सुयुजा रथेन मनोजवसा वृषणा स्वस्ति | १५ |
| अजोहवीदश्विना वर्तिका वा मास्नो यत् सीममुञ्चतं वृकस्य । | |
| वि जयुषा ययथुः सान्वद्रेर्जातं विष्वाचो अहतं विषेण | १६ |
| शतं मेषान् वृक्ये मामहानं तमः प्रणीतमश्विनेन पित्रा । | |
| आक्षी ऋज्राश्वे अश्विनावधत्तं ज्योतिरन्धाय चक्रथुर्विचक्षे | १७ |
| शूनमन्धाय भरमहयत् सा वृकीरश्विना वृषणा नरेति । | |
| जारः कनीन इव चक्षदान ऋज्राश्वः शतमेकं च मेषान् | १८ |
| मही वामूतिरश्विना मयोभूरुत सामं धिष्ण्या सं रिणीथः । | |
| अथा युवामिदहयत् पुरंधि रागच्छतं सीं वृषणाववोभिः | १९ १२० |
| अध्वेनुं दस्त्रा स्तर्यं विषक्तामपिन्वतं शयवै अश्विना गाम् । | |
| युवं शचीभिर्विमदाय जायां न्यूहथुः पुरुमित्रस्य योषाम् | २० |
| यवं वृकेणाश्विना वपन्ते षं दुहन्ता मनुषाय दस्त्रा । | |
| अभि दस्युं बकुरेणा धर्मन्तोरु ज्योतिश्चक्रथुरार्याय | २१ |
| आथर्वणायाश्विना दधीचे ऽश्न्यं शिरः प्रत्यैरयतम् । | |
| स वां मधु प्र वोचदत्तायन् त्वाष्ट्रं यद् दस्त्रावपिकृक्ष्यं वाम् | २२ १२३ |

सदा कवी सुमतिमा चके वां विश्वा धियो अश्विना प्रावतं मे ।

अस्मे रयिं नासत्या बृहन्तं—मपत्यसाचं श्रुत्यै रराथाम् २३

हिरण्यहस्तमश्विना रराणा पुत्रं नरा वधिमत्या अदत्तम् ।

त्रिधा ह श्यावमश्विना विकस्तं—मुज्जीवसं ऐरयतं सुदान् २४ १२५

एतानि वामश्विना वीर्याणि प्र पूर्याण्यायवोऽवोचन् ।

ब्रह्म कृण्वन्तो वृषणा युवभ्यां सुवीरांसो विदथमा वंदेम २५

॥१२॥ (ऋ.१।११८।१—११)

आ वां रथो अश्विना श्येनपत्वा सुमृळीकः स्ववां यात्वर्वाङ् ।

यो मर्त्यस्य मनसो जवीयान् त्रिवन्धुरो वृषणा वातरंहाः १

त्रिवन्धुरेण त्रिवृता रथेन त्रिचक्रेण सुवृता यातमर्वाक् ।

पिन्वतं गा जिन्वतमर्वातो नो वर्धयतमश्विना वीरमस्मे २

प्रवद्यामना सुवृता रथेन दत्ताविमं शृणुतं श्लोकमद्रैः ।

किमङ्ग वां प्रत्यवर्तिं गर्मिष्ठा—हुर्विप्रांसो अश्विना पुराजाः ३

आ वां श्येनासो अश्विना वहन्तु रथे युक्तासं आशवः पतङ्गाः ।

ये अप्तुरो दिव्यासो न गृध्रा अभि प्रयो नासत्या वहन्ति ४ १२०

आ वां रथं युवतिस्तिष्ठदत्र जुष्टी नरा दुहिता सूर्यस्य ।

परि वामश्वा वपुषः पतङ्गा वयो वहन्त्वरुषा अभीके ५

उद् वन्दनमैरतं दंसनाभि—रुद्रेभं दत्ता वृषणा शचीभिः ।

निष्ठौग्न्यं पारयथः समुद्रात् पुनश्च्यवानं चक्रथुर्युवानम् ६

युवमत्रयेऽवनीताय तप्त—मूर्जमोमानमश्विनावधत्तम् ।

युवं कण्वायापरिस्ताय चक्षुः प्रत्यधत्तं सुष्टुतिं जुजुषाणा ७

युवं धेनुं शयवे नाधिताया—पिन्वतमश्विना पूर्याय ।

अमुञ्चतं वर्तिकामहंसो निः प्रति जङ्घां विश्पलाया अधत्तम् ८

युवं श्वेतं पेदव इन्द्रजित—महिहर्नमश्विनादत्तमश्वम् ।

जोहूत्रमर्यो अभिभूतिमुग्रं सहस्रसां वृषणं वीङ्मङ्गम् ९

ता वां नरा स्ववसे सुजाता हवामहे अश्विना नाधमानाः ।

आ न उप वसुमता रथेन गिरो जुषाणा सुविताय यातम् १० १२६

आ इयेनस्य जर्वसा नूतनेनास्मे यातं नासत्या सजोषाः ।

हवे हि वामश्विना रातहव्यः शश्वत्तमाया उषसो व्युष्टौ ११

॥१३॥ (ऋ. १।११९।१—१०) जगती ।

आ वां रथं पुरुमायं मनोजुवं जीराश्वं यज्ञियं जीवसे हुवे ।

सहस्रकेतुं वनिनं शतद्वसुं श्रुष्टीवानं वरिवोधामभि प्रयः १

ऊर्ध्वा धीतिः प्रत्यस्य प्रयाम् न्यधायि शस्मन्त्समयन्त आ दिशः ।

स्वदामि घर्मं प्रति यन्त्युतय आ वामूर्जानी रथमश्विनारुहत् २

सं यन्मिथः पस्पृधानासो अगमत शुभे मखा अमिता जायवो रणे ।

युवोरहं प्रवणे चैकिते रथो यदश्विना वहथः सूरिमा वरम् ३ १४०

युवं भुज्युं भुरमाणं विभिर्गतं स्वयुक्तिभिर्निवहन्ता पितृभ्य आ ।

यासिष्टं वर्तिवृषणा विजेन्यं दिवोदासाय महि चेति वामवः ४

युवोरश्विना वपुषे युवायुजं रथं वाणीं येमतुरस्य शर्ध्यम् ।

आ वां पतित्वं सख्याय जग्मुषी योषावृणीत जेन्या युवां पती ५

युवं रेभं परिषूतेरुह्यथो हिमेन घर्मं परितप्तमत्रये ।

युवं शयोरवसं पिप्यथुर्गवि दीर्घेण वन्दनस्तार्यायुषा ६

युवं वन्दनं निरुतं जरण्यया रथं न दस्त्रा करणा समिन्वथः ।

क्षेत्रादा विप्रं जनथो विपन्यया प्र वामत्र विधत्ते दुंसना भुवत् ७

अगच्छतं कृपमाणं परावति पितुः स्वस्य त्यजसा निवाधितम् ।

स्वर्वतीरित ऊतीर्युवोरहं चित्रा अभीके अभवन्नभिष्टयः ८ १४५

उत स्या वां मधुमन्मक्षिकारपन्मदे सोमस्यौशिजो हुवन्यति ।

युवं दधीचो मन आ विवासथो ऽथा शिरः प्रति वामश्व्यं वदत् ९

युवं पेदवे पुरुवारमश्विना स्पृधां श्वेतं तरुतारं दुवस्यथः ।

शरैरभिद्युं पृतनासु दुष्टरं चर्कृत्यमिन्द्रमिव चर्षणीसहम् १०

॥१४॥ (ऋ. १।१२०।१—१२)

(११ दुःस्वप्ननाशनम्) । १ गायत्री, २ ककुप्, ३ का-विराट्,

४ नष्टरूपी, ५ तनुशिरा, ६ उष्णिक्, ७ विष्टार-बृहती,

८ कृतिः, ९ विराट्, १०—१२ गायत्री ।

का राधुद्धोत्राश्विना वां को वां जोष उभयोः । कथा विधात्यप्रचेताः १

विद्वासाविद् दुरः पृच्छेदविद्वान्नितापरो अचेताः । न चिन्नु सते अक्रौ २ १४९

ता विद्वांसां हवामहे वां ता नो विद्वांसा मन्म वोचेतमद्य । प्राचेद् दयमानो युवाकुः ३ १५०
वि पृच्छामि पाक्याइ न देवान् वर्षट्कृतस्याद्भुतस्य दस्त्रा । पातं च सद्यसो युवं च रभ्यसो नः ४
प्र या घोषे भृगवाणे न शोभे यया वाचा यजति पज्जियो वाम् । प्रैष्युर्न विद्वान् ५
श्रुतं गायत्रं तर्कवानस्या—हं चिद्धि रिरेभाश्विना वाम् । आक्षी शुभस्पती दन् ६
युवं ह्यास्तं महो रन् युवं वा यन्निरतंतसतम् । ता नो वस्त्र सुगोपा स्यातं पातं नो वृकादघायोः ७
मा कसै धातमभ्यमित्रिणे नो माकुत्रा नो गृहेभ्यो धेनवो गुः । स्तनाभ्युजो अश्विश्चीः ८ १५५
दुह्यन् मित्रधितये युवाकु राये च नो मिमीतं वाजवत्यै । इषे च नो मिमीतं धेनुमत्यै ९
अश्विनोरसनं रथं—मनश्च वाजिनीवतोः । तेनाहं भूरि चाकन १०
अयं समह मा तनु—ह्याते जनां अनु । सोमपेयं सुखो रथः ११
अध स्वप्नस्य निर्विदे ऽभुञ्जतश्च रेवतः । उभा ता बालि नश्यतः १२ १५९

॥१५॥ (ऋ. १।१३९।३-५)

(१६०-१६२) परुच्छेपो दैवोदासिः । अत्यष्टिः, ५ बृहती ।

युवां स्तोभेभिर्देवयन्तो अश्विना ऽऽश्रावयन्त इव श्लोकमायवौ युवां हव्याभ्याश्चयवः ।
युवोर्विश्वा अधि भ्रियः पृक्षश्च विश्ववेदसा ।
प्रुषायन्ते वां पवयो हिरण्यये रथे दस्त्रा हिरण्यये ३ १६०
अचेति दस्त्रा व्युनाकमृण्वथो युञ्जते वां रथयुजो दिविष्टि—ध्वध्वसानो दिविष्टिषु ।
अधि वां स्थाम वन्धुरे रथे दस्त्रा हिरण्यये ।
पथेव यन्तावनुशासता रजो ऽञ्जसा शासता रजः ४
शचीर्भिर्नः शचीवसु दिवा नक्तं दशस्यतम् ।
मा वां रातिरुप दसत् कदा चना—सद् रातिः कदा चन ५ १६२

॥१६॥ (ऋ. १।१५७।१-६)

(१६३-१७४) दीर्घतमा औचथ्यः । जगती, ५-६ त्रिष्टुप् ।

अबोध्यग्निर्ज्म उदैति सूर्यो व्युषाश्चन्द्रा मद्यावो अर्चिषा ।
आयुक्षातामश्विना यातवे रथं प्रासावीद् देवः संविता जगत् पृथक् १
यद् युञ्जाथे वृषणमश्विना रथं घृतेन नो मधुना क्षत्रमुक्षतम् ।
अस्माकं ब्रह्म पृतनासु जिन्वतं वयं धना शूरसाता भजेमहि २
अर्वाङ् त्रिचक्रो मधुवाहनो रथो जीराश्वो अश्विनोर्यातु सुष्टुतः ।
त्रिवन्धुरो मधवा विश्वसौभगः शं न आ वक्षद् द्विपदे चतुष्पदे ३ १६५

आ न ऊर्जि वहतमश्विना युवं मधुमत्या नः कशया मिमिक्षतम् ।
 प्रायुस्तारिष्टं नी रपांसि मृक्षतं सेधतं डेषो भवतं सचाधुवा ४
 युवं ह गर्भं जगतीषु धत्थो युवं विश्वेषु भुवनेष्वन्तः ।
 युवमग्निं च वृषणावपश्च वनस्पतीराश्विनावैरयेथाम् ५
 युवं ह स्थो भिषजा भेषजेभि रथो ह स्थो रथ्याः राथ्येभिः ।
 अथो ह क्षत्रमग्निं धत्थ उग्रा यो वां हविष्मान् मनसा द्वादश ६

॥१७॥ (ऋ. १।१५८।१-६) त्रिष्टुप्, ६ अनुष्टुप् ।

वस्त्रं रुद्रा पुरुमन्तू वृधन्ता दशस्यतं नो वृषणावभिष्टौ ।
 दत्ता ह यद् रेक्ण औचथ्यो वां प्र यत् सस्ताथे अक्वाभिरुती १
 को वां दाशत् सुमतये चिदुस्यै वसू यद् धेथे नमसा पदे गोः ।
 जिगृतमस्मे रेवतीः पुरंधीः कामप्रेणैव मनसा चरन्ता २ १७०
 युक्तो ह यद् वां तौग्याय पेरुर्वि मध्ये अर्णसो धार्यि पजः ।
 उप वामवः शरणं गमेयं शूरो नाज्म पतयद्भिरेवैः ३
 उपस्तुतिरौच्यमुरुष्येन्मा मामिमे पतत्रिणी वि दुग्धाम् ।
 मा मामेधो दशतयश्चितो धाक् प्र यद् वां बद्धस्मनि खादति क्षाम् ४
 न मां गरन् नद्यो मातृत्मा दासा यदीं सुसमुब्धमवाधुः ।
 शिरो यदस्य त्रैतनो वितक्षत् स्वयं दास उरो असावपि ग्ध ५
 दीर्घतमा मामतेयो जुजुर्वान् दशमे युगे ।
 अपामर्थं यतीनां ब्रह्मा भवति सारथिः ६ १७४

॥१८॥ (ऋ. १।१८०।१-१०)

(१७५-२१३) अगस्त्यो मैत्रावरुणिः । त्रिष्टुप् ।

शुवो रजांसि सुयमांसो अश्वा रथो यद् वां पर्यर्णीसि दीयत् ।
 हिरण्यया वां पवयः प्रुषायन् मध्वः पिबन्ता उपसः सचेथे १ १७५
 युवमत्यस्याव नक्षथो यद् विपत्मनो नर्यस्य प्रयज्योः ।
 स्वसा यद् वां विश्वगूर्ती भराति वाजायेड् मधुपाविषे च २
 युवं पर्य उस्त्रियायामधत्तं पक्कमामायामव पूव्य गोः ।
 अन्तर्यद् वनिनो वामृतप्स्व ह्यारो न शुचिर्यजते हविष्मान् ३ १७७

| | | |
|-----------------------------------|-----------------------------------|-------|
| युवं हं घर्मं मधुमन्तमत्रये | ऽपो न क्षोदोऽवृणीतमेवे । | |
| तद् वां नरावश्विना पश्वइष्टी | रथ्येव चक्रा प्रति यन्ति मध्वः | ४ |
| आ वां दानाय ववृतीय दस्त्रा | गोरोह्येण तौग्न्यो न जित्रिः । | |
| अपः क्षोणी संचते माहिना वां | जूर्णो वामक्षुरंहसो यजत्रा | ५ |
| नि यद् युवेथे नियुतः सुदानु | उप स्वधार्भिः सृजथः पुरंधिम् । | |
| प्रेषद् वेषद् वातो न सूरिन् रा | महे दंदे सुव्रतो न वाजम् | ६ १८० |
| वयं चिद्धि वां जरितारः सत्या | विपन्यामहे वि पणिर्हितावान् । | |
| अघा चिद्धि ष्माश्विनावनिन्धा | पाथो हि ष्मा वृषणावन्तिदेवम् | ७ |
| युवां चिद्धि ष्माश्विनावनु द्यून् | विरुद्रस्य प्रस्रवणस्य सातौ । | |
| अगस्त्यो नरां नृषु प्रशस्तः | काराधुनीव चितयद् सहस्रैः | ८ |
| प्र यद् वह्ये महिना रथस्य | प्र स्पन्द्रा याथो मनुषो न होता । | |
| धत्तं सूरिभ्य उत वा स्वद्वयं | नासत्या रयिषाचः स्याम | ९ |
| तं वां रथं वयमद्या हुवेम | स्तोमैरश्विना सुविताय नव्यम् । | |
| अरिष्टनेमिं परि धार्मियानं | विद्यामेषं वृजनं जीरदानुम् | १० |

॥१९॥ (क्र. १।१८१।१—९)

| | | |
|-----------------------------------|----------------------------------|-------|
| कदु प्रेष्ठाविषां रयीणा | मध्वर्यन्ता यदुन्निनीथो अपाम् । | |
| अयं वां यज्ञो अकृत प्रशस्ति | वसुधितो अवितारा जनानाम् | १ १८५ |
| आ वामश्वासः शुचयः पयस्पा | वातरंहसो दिव्यासो अत्याः । | |
| मनोजुवो वृषणो वीतपृष्ठा | एह स्वराजो अश्विना वहन्तु | २ |
| आ वां रथोऽवनिर्न प्रवत्वा | न्तसृप्रवन्धुरः सुविताय गम्याः । | |
| वृष्णः स्थातारा मनसो जवीया | नहंपूर्वो यजतो धिष्या यः | ३ |
| इहेह जाता समवावशीता | मरेपसां तन्वाः नामभिः स्वैः । | |
| जिष्णुर्वामन्यः सुमखस्य सूरि | र्दिवो अन्यः सुभगः पुत्र ऊहे | ४ |
| प्र वां निचेरुः कंकुहो वशां अनु | पिशङ्गरूपः सदनानि गम्याः । | |
| हरीं अन्यस्य पीपयन्त वाजै | र्मथा रजांस्यश्विना वि घोषैः | ५ |
| प्र वां शरद्वान् वृषभो न निष्पाट् | पूर्वारिषश्चरति मध्वं इष्णन् । | |
| एवैरन्यस्य पीपयन्त वाजै | र्वेपन्तीरुध्वा नद्यो न आगुः | ६ १९० |

असर्जिं वां स्थविरा वेधसा गी—र्बाळहे अश्विना त्रेधा क्षरन्ती ।
 छर्पस्तुताववतं नार्धमानं यामन्नयामञ्जृणुतं हवै मे ७
 उत स्या वां रुशतो वप्ससो गी—स्त्रिवर्हिषि सदसि पिन्वते नृन् ।
 वृषा वां मेघो वृषणा पीषाय गोर्न सेके मनुषो दशस्यन् ८
 युवां पूषेवाश्विना पुरंधि—रग्निमुषां न जरते हविष्मान्
 हुषे यद् वां वरिवस्या गृणानो विद्यामेषं वृजनं जीरदानुम् ९

॥२०॥ (ऋ. १।१८२।१—८) जगती; ६, ८ त्रिष्टुप् ।

अभूदिदं वयुनमो पु भूषता रथो वृषण्वान् मदता मनीषिणः ।
 धियंजिन्वा धिष्ण्या विष्पलावस्त्र दिवो नपाता सुकृते शुचित्रता १
 इन्द्रतमा हि धिष्ण्या मरुत्तमा दत्ता दंसिष्ठा रथ्या रथीतमा ।
 पूर्णं रथं वहेथे मध्व आचितं तेन दाश्वासमुप याथो अश्विना २ १९५
 किमत्र दत्ता कृणुथः किमासाथे जनो यः कश्चिदहविर्महीयते ।
 अति क्रमिष्टं जुरतं पुणेरसुं ज्योतिर्विप्राय कृणुतं वचस्यवे ३
 जम्भयतममितो रायतः शुनो हतं मृधो विदथुस्तान्यश्विना ।
 वाचंवाचं जरितू रत्निनी कृत—मुभा शंसं नासत्यावतं मम ४
 युवमेतं चक्रथुः सिन्धुषु प्लव—मात्मन्वन्तं पक्षिणं तौग्न्याय कम् ।
 येन देवत्रा मनसा निरुहथुः सुपत्नी पेतथुः क्षोदसो महः ५
 अवविद्धं तौग्न्यमप्स्वन्त—रनारम्भणे तमसि प्रविद्धम् ।
 चतस्रो नावो जठलस्य जुष्टा उदश्विभ्यामिषिताः पारयन्ति ६
 कः स्विद् वृक्षो निष्ठितो मध्ये अर्णसो यं तौग्न्यो नाधितः पर्यषस्वजत् ।
 पूर्णा मृगस्य पतरोरिवारभ उदश्विना ऊहथुः श्रोमताय कम् ७ २००
 तद् वां नरा नासत्यावतु ष्याद् यद् वां मानास उचथमवोचन् ।
 असाद्य सदर्सः सोम्यादा विद्यामेषं वृजनं जीरदानुम् ८

॥२१॥ (ऋ. १।१८३।१—६)

तं युञ्जाथां मनसो यो जवीयान् त्रिवन्धुरो वृषणा यस्त्रिचक्रः ।
 येनोपयाथः सुकृतो दुरोणं त्रिधातुना पतथो विर्न पूर्णः १
 सुवृद् रथो वर्तते यन्नभि क्षां यत् तिष्ठथः क्रतुमन्तानु पृक्षे ।
 वर्षुर्वपुष्या संचतामियं गी—दिवो दुहित्रोषसा सचेथे २ २०३

आ तिष्ठतं सुवृतं यो रथो वा—मनु व्रतानि वर्तते हविष्मान् ।
येन नरा नासत्येष्यध्वै वर्तिर्यथस्तनयाय त्मने च ३
मा वां वृको मा वृकीरा दधर्षी—न्मा परि वर्क्तमुत माति धक्तम् ।
अयं वां भागो निहित इयं गी—र्दस्त्राविमे वां निधयो मधूनाम् ४ २०५
युवां गोतमः पुरुमीळ्हो अत्रि—र्दस्त्रा हवतेऽवसे हविष्मान् ।
दिशं न दिष्टामृज्येव यन्ता मे हव नासत्योप यातम् ५
अतारिष्म तमसस्पारमस्य प्रति वां स्तोमो अश्विनावधायि ।
एह यातं पथिभिर्देवयानै—र्विद्यामेषं वृजनं जीरदानुम् ६

॥२२॥ (ऋ. १।१८४।१—६)

ता वामद्य तावपरं हुवेमो—च्छन्त्यामुषसि वह्निरुक्थैः ।
नासत्या कुहं चित् सन्तावर्यो दिवो नपाता सुदास्तराय १
अस्मे ऊ पु वृषणा मादयेथा—मुत् पर्णाहितमूर्स्या मदन्ता ।
श्रुतं मे अच्छोक्तिभिर्मतीना—मेषां नरा निचेतारा च कर्णैः २
श्रिये पूषन्निपुक्रुतेव देवा नासत्या वहतुं सूर्यायाः ।
वच्यन्ते वां ककुहा अप्सु जाता युगा जुर्णेव वरुणस्य भूरैः ३ २१०
अस्मे सा वां माध्वी रातिरस्तु स्तोमं हिनोतं मान्यस्य कारोः ।
अनु यद् वां श्रवस्या सुदानू सुवीर्याय चर्षणयो मदन्ति ४
एष वां स्तोमो अश्विनावकारि मानैर्भिर्मघवाना सुवृक्ति ।
यातं वर्तिस्तनयाय त्मने चा—गस्त्ये नासत्या मदन्ता ५
अतारिष्म तमसस्पारमस्य प्रति वां स्तोमो अश्विनावधायि ।
एह यातं पथिभिर्देवयानै—र्विद्यामेषं वृजनं जीरदानुम् ६ २१३

॥२३॥ (ऋ. २।३७।५)

(२१४—२२५) गृत्समदः (आङ्गिरसः शौनहोत्रः पश्चाद्) भार्गवः शौनकः । (ऋतुसहितौ) । जगती ।

अर्वाञ्चमद्य यय्यं नुवाहणं रथं युञ्जाथामिह वां विमोचनम् ।
पृङ्क्तं हवींषि मधुना हि कै गत—मथा सोमं पिबतं वाजिनीवस्र ५

॥२४॥ (ऋ. २।३९।१—८) त्रिष्टुप् ।

ग्रावाणिव तदिदर्थं जरेथे गृध्रेव वृक्षं निधिमन्तमच्छ ।
ब्रह्माणेव विदथ उक्थशासा दुतेव हव्या जन्या पुरुत्रा १ २१५

| | |
|--|-------|
| प्रातर्यावाणा रथ्येव वीरा ऽजेत्र यमा वरमा संचेथे । | |
| मेने इव तन्वाइ शुभमाने दम्पतीव ऋतुविदा जनेषु | २ |
| शृङ्गेव नः प्रथमा गन्तमर्वाक् छुफाविव जर्भुराणा तरोभिः । | |
| चक्रवाकेव प्रति वस्तोरुस्त्रा ऽर्वाश्वा यातं रथ्येव शक्रा | ३ |
| नावेव नः पारयतं युगेव नभ्येव न उपधीव प्रधीव । | |
| श्रानेव नो अरिषण्या तनूनां खृगलेव विस्रसः पातमस्मान् | ४ |
| वर्तेवाजुर्या नद्येव रीति रक्षी इव चक्षुषा यातमर्वाक् । | |
| हस्ताविव तन्वेइ शंभविष्ठा पादेव नो नयतं वस्यो अच्छ | ५ |
| ओष्ठाविव मध्वास्ने वदन्ता स्तनाविव दिप्यतं जीवसे नः । | |
| नासेव नस्तन्वो रक्षितारा कर्णाविव सुश्रुता भूतमस्ने | ६ २२० |
| हस्तेव शक्तिमभि सैदुदी नः क्षामेव नः समजतं रजांसि । | |
| इमा गिरो अश्विना युष्मयन्तीः क्ष्णोत्रेणेव स्वधितिं सं शिशीतम् | ७ |
| एतानि वामश्विना वर्धनानि ब्रह्म स्तोमं ऋत्समुदासो अक्रन् । | |
| तानि नरा जुजुषाणोप यातं बृहद् वदेम विदथे सुवीराः | ८ |

॥२५॥ (ऋ. २।४१।७-९) गायत्री ।

| | |
|---|-------|
| गोमदू षु नासत्या ऽश्वावद् यातमश्विना । वर्ती रुद्रा नृपाय्यम् | ७ |
| न यत् परो नान्तर आदुधर्षद् वृषण्वस्र । दुःशंसो मर्त्यो रिपुः | ८ |
| ता न आ वोळ्हमश्विना रयिं पिशङ्गसंदशम् । धिण्या वरिवोविदम् | ९ २२५ |

॥२६॥ (ऋ. ३।५८।१-९)

(२२६—२३४) गाथिनो विश्वामित्रः । त्रिष्टुप् ।

| | |
|---|-------|
| धेनुः प्रत्नस्य काम्यं दुहाना ऽन्तः पुत्रश्चरति दक्षिणायाः । | |
| आ द्योतनि वहति शुभ्रयामो षसः स्तोमो अश्विनावजीगः | १ |
| सुयुग् वहन्ति प्रति वामृतेनो ध्वा भवन्ति पितरेव मेधाः । | |
| जरेथामसद् वि पणेर्मेनीषां युवोरवश्चक्रुमा यातमर्वाक् | २ |
| सुयुग्निरश्वैः सुवृता रथेन दस्त्राविमं शृणुतं श्लोकमद्रेः । | |
| किमङ्ग वां प्रत्यवर्ति गर्मिष्ठा ऽऽहुर्विप्रासो अश्विना पुराजाः | ३ |
| आ मन्येथामा गतं कश्चिदेवैर्विश्वे जनासो अश्विना हवन्ते । | |
| इमा हि वां गोक्रजीका मधूनि प्र मित्रासो न दुदुरुसो अग्ने | ४ २२९ |

| | |
|---|-------|
| तिरः पुरू चिदश्विना रजाँ—स्याङ्गुषा वाँ मघवाना जनेषु । | |
| एह यातं पृथिभिर्देवयानै—र्दसाविमे वाँ निधयो मधूनाम् | ५ २३० |
| पुराणमोकः सख्यं शिवं वाँ युवोर्नैरा द्रविणं जह्वाव्याम् । | |
| पुनः कृष्णानाः सख्या शिवानि मध्वा मदेम सह नू समानाः | ६ |
| अश्विना वायुना युवं सुदक्षा नियुज्जिश्च सजोषसा युवाना । | |
| नासत्या तिरोअह्वयं जुषाणा सोमं पिबतमस्त्रिधा सुदानू | ७ |
| अश्विना परि वामिषः पुरूची—रीयुगीर्भिर्यतमाना अमृध्राः । | |
| रथो ह वामृतजा अद्रिजतः परि द्यावापृथिवी याति सद्यः | ८ |
| अश्विना मधुपुत्तमो युवाकुः सोमस्तं पातुमा गतं दुरोणे । | |
| रथो ह वाँ भूरि वर्षः करिंक्रत् सुतावतो निष्कृतमागमिष्ठः | ९ २३४ |

॥२७॥ (ऋ. ४।१५।९—१०)

(२३५—२४३) वामदेवो गौतमः । गायत्री ।

| | |
|---|-------|
| एष वाँ देवावश्विना कुमारः साहदेव्यः । दीर्घायुरस्तु सोमकः | ९ २३५ |
| तं युवं देवावश्विना कुमारं साहदेव्यम् । दीर्घायुषं कृणोतन | १० |

॥२८॥ (ऋ. ४।४५।१—७) जगती, ७ त्रिष्टुप् ।

| | |
|--|-------|
| एष स्य भानुरुदियति युज्यते रथः परिज्मा दिवो अस्य सानवि । | |
| पृक्षासो अस्मिन् मिथुना अधि त्रयो दतिस्तुरीयो मधुनो वि रंक्षते | १ |
| उद् वाँ पृक्षासो मधुमन्त ईरते रथा अश्वास उषसो व्युष्टिषु । | |
| अपोर्णुवन्तस्तम आ परीवृतं स्वर्णं शुक्रं तन्वन्त आ रजः | २ |
| मध्वः पिबतं मधुपेभिरासभि—रुत प्रियं मधुने युज्जाथां रथम् । | |
| आ वर्तन्ति मधुना जिन्वथस्पथो दतिं वहेथे मधुमन्तमश्विना | ३ |
| हंसासो ये वाँ मधुमन्तो अस्त्रिधो हिरण्यपर्णा उहुव उषर्बुधः । | |
| उदुप्रुतो मन्दिनो मन्दिनिस्पृशो मध्वो न मक्षः सर्वनानि गच्छथः | ४ २४० |
| स्वध्वरासो मधुमन्तो अग्रय उसा जरन्ते प्रति वस्तोरश्विना । | |
| यश्चित्तहस्तस्तरणिर्विचक्षणः सोमं सुषाव मधुमन्तमाद्रिभिः | ५ |
| आकेनिपासो अहंभिर्देविध्वतः स्वर्णं शुक्रं तन्वन्त आ रजः । | |
| स्त्रश्चिदश्वान् युयुजान ईयते विश्वाँ अनु स्वधया चेतथस्पथः | ६ २४२ |

प्र वामवोचमश्विना धियंधा रथः स्वश्वौ अजरो यो अस्ति ।
येन सद्यः परि रजांसि याथो हविर्मन्तं तरणिं भोजमच्छ

७ २४३

॥२९॥ (ऋ. ४।४३।१-७)

(२४४-२५७) पुरुमीलहाजमीलहौ सौहोजौ । डिण्डुप् ।

क उ श्रवत् कतमो यज्ञियानां वन्दारु देवः कतमो जुषाते ।
कस्येमां देवीममृतेषु प्रेष्ठां हृदि श्रेषाम सुष्टुतिं सुहव्याम् १
को मृळाति कतम आगमिष्ठो देवानां कतमः शंभविष्ठः ।
रथं कर्माहुर्द्रवदश्वमाशुं यं सूर्यस्य दुहितावृणीत २ २४५
मक्षू हि ष्मा गच्छथ ईवतो द्यूनिन्द्रो न शक्तिं परितक्म्यायाम् ।
दिव आजता दिव्या सुपर्णा कया शर्चीनां भवथः शर्चिष्ठा ३
का वां भूदुपमातिः कया न आश्विना गमथो ह्युमाना ।
को वां महश्चित् त्यजसो अभीकं उरुष्यतं माध्वी दत्ता न ऊती ४
उरु वां रथः परि नक्षति द्यामा यत् समुद्रादभि वर्तते वाम् ।
मध्वा माध्वी मधु वां प्रुषायन् यत् सीं वां पृक्षो भुरजन्त पकाः ५
सिन्धुर्ह वां रसया सिञ्चदश्वान् घृणा वयोऽरुषासः परि गमन् ।
तदू पु वामजिरं चेति यानं येन पती भवथः सूर्यायाः ६
इहेह यद् वां समना पपुक्षे सेयमस्मे सुमतिर्वीजरत्ना ।
उरुष्यतं जरितारं युवं ह श्रितः कामो नासत्या युवद्रिक् ७ २५०

॥३०॥ (ऋ. ४।४४।१-७)

ते वां रथं वयमद्या हुवेम पृथुजयमश्विना संगतिं गोः ।
यः सूर्या वहति बन्धुरायुर्गिर्वाहसं पुरुतमं वसूयुम् १
युवं श्रियमश्विना देवता तां दिवो नपाता वनथः शर्चीभिः ।
युवोर्वपुर्भि पृक्षः सचन्ते वहन्ति यत् ककुहासो रथे वाम् २
को वामद्या करते रातहव्य ऊतये वा सुतपेयाय वाकैः ।
अतस्य वा वनुषे पून्याय नमो येमानो अश्विना ववर्तत् ३
हिरण्ययेन पुरुभू रथेनेमं यज्ञं नासत्योप यातम् ।
पिबाथ इन्मधुनः सोम्यस्य दधथो रत्नं विधते जनाय ४ २५४

आ नो यातं दिवो अच्छा पृथिव्या हिरण्ययेन सुवृता रथेन ।
 मा वामन्ये नि यमन् देवयन्तः सं यद् ददे नाभिः पूर्या वाम् ५ २५५
 नू नो रयिं पुरुवीरं बृहन्तं दत्ता मिमाथामुभयेष्वस्मे ।
 नरो यद् वामश्विना स्तोममावन्तसधस्तुतिमाजमीळहासो अगमन् ६
 इहेह यद् वां समना पपृक्षे सेयमस्मे सुमतिर्वाजरत्ना ।
 उरुष्यतं जरितारं युवं ह श्रितः कामो नासत्या युवद्विक् ७ २५७

॥३१॥ (ऋ. ५।७३।१—१०)

(२५८—२७७) पौर आश्रेयः । अनुष्टुप् ।

यदद्य स्थः परावति यदत्रावत्यश्विना । यद् वां पुरु पुरुभुजा यदन्तरिक्ष आ गतम् १
 इह त्या पुरुभूतमा पुरु दंसांसि बिभ्रता । वरस्या याम्यध्रिगू हुवे तुविष्टमा भुजे २
 ईर्मान्यद् वपुषे वपुश्चक्रं रथस्य येमथुः । पर्यन्या नाहुषा युगा म्हा रजांसि दीयथः ३ २६०
 तद् वु वामेना कृतं विश्वा यद् वामनु ध्वे । नानां जातावरेपमा समस्मे बन्धुमेयथुः ४
 आ यद् वां सूर्या रथं तिष्ठद् रघुष्यदं सदा । परि वामरुषा वयो घृणा वरन्त आतपः ५
 युवोरत्रिश्चितति नरा सुम्नेन चेतसा । धर्मं यद् वामरेपसं नासत्यास्ता भुरण्यति ६
 उग्रो वां ककुहो ययिः शृण्वे यामेषु संतनिः । यद् वां दंसांभिरश्विना ऽत्रिर्नराववर्तति ७
 मध्व ऊषु मधूयुवा रुद्रा सिषक्ति पिप्युषी । यत् समुद्राति पर्वथः पक्काः पृक्षो भरन्त वाम् ८ २६५
 सत्यमिद् वा उ अश्विना युवामाहुर्मयोभुवा । ता यामन् यामहूतमा यामन्ना मृळयत्तमा ९
 इमा ब्रह्माणि वर्धना ऽश्विभ्यां सन्तु शंतमा । या तक्षाम रथा इवा ऽवोचाम बृहन्नमः १०

॥३२॥ (ऋ. ५।७४।१—१०) अनुष्टुप्, ८ निचृत् ।

कृष्टो देवावश्विना ऽद्या दिवो मनावसू । तच्छ्वथो वृषण्वसू अत्रिर्वामा विवासति १
 कुह त्या कुह नु श्रुता दिवि देवा नासत्या । कस्मिन्ना यंतथो जने को वां नदीनां सचा २
 कं याथः कं ह गच्छथः कमच्छा युञ्जाथे रथम् । कस्य ब्रह्माणि रण्यथो वयं वामुदमसीष्टये ३ २७०
 पौरं चिद्व्युदप्रुतं पौरं पौराय जिन्वथः । यदीं गृभीततांतये सिंहमिव द्रुहस्पदे ४
 प्र च्यवानाञ्जुजुरुषो वविमत्कं न मुञ्चथः । युवा यदीं कुथः पुनरा कर्ममृण्वे वध्वः ५
 अस्ति हि वामिह स्तोता सासि वां संहृशि श्रिये । नू श्रुतं म आ गतमवोभिर्वाजिनीवस्र ६
 को वामद्य पुरुणा मा वन्ने मर्त्यानाम् । को विप्रो विप्रवाहसा को यज्ञैर्वाजिनीवस्र ७
 आ वां रथो रथानां येषो यात्वश्विना । पुरु चिदस्मयुस्तिर आज्जुषो मर्त्येष्व ८ २७५

शम् पु वां मधूयुवा ऽसाकमस्तु चर्कृतिः । अर्वाचीना विचेतसा विभिः श्येनेव दीयतम् ९
अश्विना यद् कर्हि चिच्छ्रुयातमिमं हवम् । वस्वीरू पु वां भुजः पृथन्ति सु वां पृथः १० २७७

॥३३॥ (ऋ. ५।७५।१—२)

(२७८-२८६) अवस्युरात्रेयः । पङ्क्तिः ।

- प्रति प्रियतमं रथं वृषणं वसुवाहनम् ।
स्तोता वामश्विनावृषिः स्तोमेन प्रति भूषति माध्वी मम श्रुतं हवम् १
अत्यायातमश्विना तिरो विश्वा अहं सना ।
दत्ता हिरण्यवर्तनी सुषुम्ना सिन्धुवाहसा माध्वी मम श्रुतं हवम् २
आ नो रत्नानि बिभ्रता वश्विना गच्छतं युवम् ।
रुद्रा हिरण्यवर्तनी जुषाणा वाजिनीवसू माध्वी मम श्रुतं हवम् ३ २८०
सुष्टुभो वां वृषण्वसू रथे वाणीच्याहिता ।
उत वां ककुहो मृगः पृथः कृणोति वापुषो माध्वी मम श्रुतं हवम् ४
बोधिन्मनसा रथे विरा हवन्श्रुता ।
विभिश्चयवानमश्विना नि याथो अद्वयाविनं माध्वी मम श्रुतं हवम् ५
आ वां नरा मनोयुजो ऽश्वासः प्रुषितप्सवः ।
वयो वहन्तु पीतये सह सुमेभिरश्विना माध्वी मम श्रुतं हवम् ६
अश्विनावेह गच्छतं नासत्या मा वि वैनतम् ।
तिरश्चिदर्यया परिं वर्तिर्यातमदाभ्या माध्वी मम श्रुतं हवम् ७
अस्मिन् यज्ञे अदाभ्या जरितारं शुभस्पती ।
अवस्युमश्विना युवं गृणन्तमुप भूषथो माध्वी मम श्रुतं हवम् ८
अभूदुषा रुशत् पशु—राग्निरघाययृत्वियः ।
अयोजि वां वृषण्वसू रथो दत्तावमर्त्यो माध्वी मम श्रुतं हवम् ९ २८३

॥३४॥ (ऋ. ५।७६।१—५)

(२८७-२९६) भौमोऽग्निः । त्रिष्टुप् ।

- आ भात्यग्निरुषसामनीक—मुद् विप्राणां देव्या वाचो अस्थुः ।
अर्वाश्वा नूनं रथेह यातं पीपिवांसमश्विना घर्ममच्छ १
न संस्कृतं प्र मिमीतो गमिष्ठा ऽन्ति नूनमश्विनोपस्तुतेह ।
दिवाभिपित्वेऽवसागमिष्ठा प्रत्यवर्ति दाशुषे शंभविष्ठा २ २८८

उ॒ता या॑तं संग॒वे प्रा॒तरह्णो॑ म॒घ्यंदि॒न उ॒दिता॑ सूर्य॒स्य ।
 दि॒वा न॒क्तम॑र्व॒सा श॑तंमे॒न ने॒दानीं॑ पी॒तिर॒श्विना॑ त॒तान ३
 इ॒दं हि वा॑ं प्र॒दिवि॑ स्था॒नमो॑कं इ॒मे गु॒हा अ॒श्विने॑दं दु॒रोण॑म् ।
 आ नो॑ दि॒वो बृ॒हतः॑ पर्व॒तादा॑ ऽऽ॒श्वो या॑त॒मिष॑मूर्जं वह॒न्ता ४ २९०
 स॒म॒श्विनो॑रव॒सा नू॒तने॑न म॒योभु॑वा सु॒प्रणी॑ती गमे॒म ।
 आ नो॑ र॒यिं बृ॒हत॑मो॒त वी॒रा—ना॑ वि॒श्वान्य॑मृ॒ता सौ॒भगा॑नि ५

॥३५॥ (ऋ. ५।७।१-५)

प्रा॒तर्या॑वा॒णा प्र॒थमा॑ य॒जध्वं॑ पु॒रा गृ॒ध्राद॑ररुषः पि॒बातः॑ ।
 प्रा॒तर्हि॑ य॒ज्ञम॒श्विना॑ दु॒धाते॑ प्र शंस॑न्ति क॒वयः॑ पूर्व॒भाजः॑ १
 प्रा॒तर्य॑जध्वम॒श्विना॑ हि॒नोत॑ न सा॒यम॑स्ति दे॒वया॑ अ॒जुष्ट॑म् ।
 उ॒तान्यो॑ अ॒स्मद् य॑ज॒ते वि॒ चावः॑ पूर्वेः॒पूर्वो॑ य॒जमा॑नो वनी॒यान् २
 हि॒र॒ण्य॒त्व॒ङ्मधु॑व॒र्णो घृ॑त॒स्नुः पृ॒क्षो व॒हन्ना॑ रथो॑ वर्त॒ते वा॑म् ।
 म॒नो॒ज॒वा अ॒श्विना॑ वा॒तर॑ह्ण॒ येना॑ति॒याथो॑ दु॒रितानि॑ वि॒श्वानि॑ ३
 वो भू॒र्यिष्टं॑ ना॒सत्या॑भ्यां वि॒वेष॑ च॒र्निष्टं॑ पि॒त्वो र॑र॒ते वि॒भागे॑ ।
 स तो॒कर्म॑स्य पी॒पर॑च्छमी॒भि—र॑नूर्ध्व॒भासः॑ स॒दुमि॑त् तु॒तुर्या॑त् ४
 स॒म॒श्विनो॑रव॒सा नू॒तने॑न म॒योभु॑वा सु॒प्रणी॑ती गमे॒म ।
 आ नो॑ र॒यिं बृ॒हत॑मो॒त वी॒रा—ना॑ वि॒श्वान्य॑मृ॒ता सौ॒भगा॑नि ५ २९६

॥३६॥ (ऋ. ५।७।१-६)

(२९७-३०५) सप्तवधिरात्रेयः । (५-९ गर्भस्त्राविण्युपनिषद्) । अनुष्टुप्,

१-३ उष्णिक्, ४ त्रिष्टुप् ।

अ॒श्विना॑वे॒ह ग॑च्छ॒तं ना॑स॒त्या मा॒ वि वे॑न॒तम् । हं॒सावि॑व प॒त॒त॒मा सु॒ताँ उप॑ १
 अ॒श्विना॑ ह॒रिणा॑वि॒व गौ॑रा॒विवा॑न् यु॒वस॑म् । हं॒सावि॑व प॒त॒त॒मा सु॒ताँ उप॑ २
 अ॒श्विना॑ वा॒जिनी॑व॒स्र जु॒षेथो॑ य॒ज्ञमि॑ष्टये । हं॒सावि॑व प॒त॒त॒मा सु॒ताँ उप॑ ३
 अ॒त्रिर्य॑द् वा॒मव॑रोह॒न्मृ॒बीसु॑—म॒जो॒हवी॑न्नाध॒माने॑न् योषा॑ ।

इ॒मेन॑स्य चि॒ज्वसा॑ नू॒तने॑ना ऽऽग॑च्छ॒तम॒श्विना॑ श॑तंमे॒न ४ ३००

वि जि॒हीष्व॑ व॒नस्प॑ते यो॒निः स्र॑ष्यन्त्या इ॒व । श्रु॑तं मे॒ अ॒श्विना॑ ह॒वं स॒प्तव॑धिं च मु॒ञ्चत॑म् ५
 भी॒ताः न॑ध॒माना॑ य॒ ऋष॑ये स॒प्तव॑धये । मा॒याभि॑र॒श्विना॑ यु॒वं वृ॒क्षं सं च॒ वि चा॑वथः ६ ३०१

यथा वातः पुष्करिणीं समिङ्गयति सर्वतः । एवा ते गर्भे एजतु निरैतु दशमास्यः ७
 यथा वातो यथा वनं यथा समुद्र एजति । एवा त्वं दशमास्य सहावैहि जरायुणा ८
 दश मासाञ्छश्यानः कुमारो अधि मातरि । निरैतु जीवो अक्षतो जीवो जीवन्त्या अधि ९३०५

॥३७॥ (ऋ. ६।६२।१-११)

(३०६—३१७) बार्हस्पत्यो भरद्वाजः । त्रिष्टुप् ।

स्तुषे नरां दिवो अस्य प्रसन्ता ऽश्विनां हुवे जरमाणो अकैः ।
 या सद्य उस्ना व्युषि ज्मो अन्तान् युयूषतः पर्युरू वरांसि १
 ता यज्ञमा शुचिभिश्चक्रमाणा रथस्य भानुं रुरुचू रजोभिः ।
 पुरू वरांस्यमिता मिमाना ऽपो घन्वान्यति याथो अजान् २
 ता ह त्यद् वृत्तिर्यदरध्रमुग्रे—तथा धिय ऊहथुः शश्वदश्वैः ।
 मनोजवेभिरिषिरैः शयध्यै परि व्यथिर्दाशुषो मर्त्यस्य ३
 ता नव्यसो जरमाणस्य मन्मो—प भूषतो युयुजानसप्ती ।
 शुभं पृक्षमिषमूर्जं वहन्ता होता यक्षत् प्रतो अधुग् युवाना ४
 ता वल्गू दुसा पुरुशकतमा प्रता नव्यसा वचसा विवासे ।
 या शंसते स्तुवते शम्भविष्ठा बभुवतुर्गुणते चित्रराती ५ ३१०
 ता भुज्युं विभिरद्भ्यः समुद्रात् तुग्रस्य सुनुमूहथू रजोभिः ।
 अरेणुभिर्योजनेभिर्भुजन्ता पतत्रिभिरर्णसो निरुपस्थात् ६
 वि जयुषा रथ्या यातमद्रिं श्रुतं हवै वृषणा वधिमत्याः ।
 दुशस्यन्ता शयवै पिप्यथुर्गामिति व्यवाना सुमतिं भुरण्यू ७
 यद् रोदसी प्रदिवो अस्ति भूमा हेळो देवानामुत मर्त्यत्रा ।
 तदादित्या वसवो रुद्रियासो रक्षोयुजे तपुर्ध्वं दधात ८
 य ई राजानावृतुथा विदधद् रजसो मित्रो वरुणश्चिकेतत् ।
 गम्भीराय रक्षसे हेतिमस्य द्रोघाय चिद् वचस आनवाय ९
 अन्तरैश्चक्रैस्तनयाय वृति—द्युमता यातं नवता रथेन ।
 सनुत्येन त्यजसा मर्त्यस्य वनुष्यतामपि शीर्षा ववृक्तम् १०
 आ परमाभिरुत मध्यमाभि—नियुद्धिर्यातमवमाभिरर्वाक् ।
 हुळहस्य चिद् गोमतो वि व्रजस्य दुरो वर्त गृणते चित्रराती ११ ३१५

॥३८॥ (ऋ. ६।६३।१—११) त्रिष्टुप्, १ विराट्, ११ एकपदा त्रिष्टुप् ।

| | |
|--|--------|
| क१ त्या वल्गू पुरुहुताद्य दूतो न स्तोमोऽविदुश्मस्वान् । | |
| आ यो अर्वाङ् नासत्या वर्तते प्रेष्ठा ह्यसंथो अस्य मन्मन् | १ |
| अरं मे गन्तं हवनायास्मै गृणाना यथा पिबथो अन्धः । | |
| परि ह त्यद् वर्तिर्यथो रिषो न यत् परो नान्तरस्तुतुर्यात् | २ |
| अकारि वामन्वसो वरीम—अस्तारि बर्हिः सुप्रायणतमम् । | |
| उत्तानहस्तो युवयुर्वेवन्दा ऽऽ वां नक्षन्तो अद्रय आजन् | ३ |
| ऊर्ध्वो वामभिरध्वरेष्वस्थात् प्र रातिरेति जुणिनी घृताची । | |
| प्र होता गूर्तमना उराणो ऽयुक्त यो नासत्या हवीमन् | ४ ३२० |
| अधि श्रिये दुहिता सूर्यस्य रथं तस्थौ पुरुभुजा शतोर्तिम् । | |
| प्र मायाभिर्मायिना भूतमत्र नरा नृतू जनिमन् यज्ञियानाम् | ५ |
| युवं श्रीभिर्दर्शिताभिराभिः शुभे पुष्टिमूहयुः सूर्यायाः । | |
| प्र वां वयो वपुषेऽनु पप्तन् नक्षद् वाणी सुष्टुता धिष्या वाम् | ६ |
| आ वां वयोऽश्वासो बर्हिष्ठा अभि प्रयो नासत्या वहन्तु । | |
| प्र वां रथो मनोजवा असर्जी—षः पृक्ष इषिधो अनु पूर्वीः | ७ |
| पुरु हि वां पुरुभुजा देष्णं धेनुं न इषं पिन्वतमसक्राम् । | |
| स्तुतश्च वां माध्वी सुष्टुतिश्च रसाश्च ये वामनु रातिमगमन् | ८ |
| उत म क्रजे पुरयस्य रध्वी सुमीळहे शतं पैरुके च पक्का । | |
| शाण्डो दाद्विरणिनः स्मदिष्टीन् दश वशासो अभिषाचं क्रुष्वान् | ९ ३२५ |
| सं वां शता नासत्या सहस्रा ऽश्वानां पुरुषन्था गिरे दात् । | |
| भरद्वाजाय वीर नू गिरे दा—द्रुता रक्षांसि पुरुदंससा स्युः | १० |
| आ वां सुमे वरिमन्तसूरिभिः व्याम् | ११ ३२७ |

॥३९॥ (ऋ. ७।६७।१—१०) त्रिष्टुप् ।

(३२८—३८३) मैत्रावरुणिर्वसिष्ठः । त्रिष्टुप् ।

| | |
|---|-------|
| प्रति वां रथं नृपती जरध्र्यै हविष्मता मनसा यज्ञियेन । | |
| यो वां दूतो न धिष्यावजीग—रच्छां सुनुर्न पितरा विवक्षि | १ |
| अशोच्यभिः संमिधानो अस्मे उपो अदधन् तमसश्चिदन्ताः । | |
| अचेति केतुरुषसः पुरस्ता—च्छ्रये दिवो दुहितुर्जायमानः | २ ३२९ |

| | | |
|---------------------------------|------------------------------------|-------|
| अभि वां नूनमश्विना सुहोता | स्तोमैः सिषक्ति नासत्या विवृकान् । | |
| पूर्वीभिर्यातं पथ्याभिरर्वाक् | स्वर्विंदा वसुमता रथेन | ३ ३३० |
| अवोर्वा नूनमश्विना युवाकुं | हुवे यद् वां सुते माध्वी वसुयुः । | |
| आ वां वहन्तु स्थविरासो अश्वाः | पिबाथो अस्मे सुषुता मधूनि | ४ |
| प्राचींषु देवाश्विना धियं मे | ऽमृधां सातये कृतं वसूयुम् । | |
| विश्वा अविष्टं वाज आ पुरंधी | स्ता नः शक्तं शचीपती शचीभिः | ५ |
| अविष्टं धीर्ष्वश्विना न आसु | प्रजावद् रेतो अहयं नो अस्तु । | |
| आ वां तोके तनये तूतुजानाः | सुरत्नासो देववीतिं गमेम | ६ |
| एष स्य वां पूर्वगत्वेव सख्ये | निधिर्हितो माध्वी रातो अस्मे । | |
| अहेळता मनसा यातमर्वा | गश्नन्ता हव्यं मानुषीषु विक्षु | ७ |
| एकस्मिन् योगे भुरणा समाने | परि वां सप्त स्रवतो रथो गात् । | |
| न वायन्ति सुभ्वो देवयुक्ता | ये वां धूर्षु तरणयो वहन्ति | ८ ३३५ |
| असश्चता मघवद्भ्यो हि भूतं | ये राया मघदेयं जुनन्ति । | |
| प्र ये बन्धुं सुनृताभिस्तिरन्ते | गव्या पृश्नन्तो अश्या मृधानि | ९ |
| नू मे हवमा शृणुतं युवाना | यासिष्टं वृतिरश्विनाविरावत् । | |
| धत्तं रत्नानि जरतं च सूरीन् | यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः | १० |

॥४०॥ (ऋ. ७।६८।१-९) विराट्; ८-९ त्रिष्टुप् ।

| | | |
|--------------------------------|------------------------------------|-------|
| आ शुभ्रा यातमश्विना स्वश्वा | गिरो दत्ता जुजुषाणा युवाकोः । | |
| हव्यानि च प्रतिभृता वीतं नः | | १ |
| प्र वामन्धांसि मद्यान्यस्थु | ररं गन्तं हविषो वीतये मे । | |
| तिरो अयो हव्नानानि श्रुतं नः | | २ |
| प्र वां रथो मनोजवा इयति | तिरो रजांस्यश्विना शतोतिः । | |
| अस्मभ्यं सूर्यावसू इयानः | | ३ ३४० |
| अयं ह यद् वां देवया उ अद्रि | रूध्वो विवक्ति सोमसुद् युवभ्याम् । | |
| आ वल्गू विप्रो ववृतीत हव्यैः | | ४ |
| चित्रं ह यद् वां भोजनं न्वस्ति | न्यत्रये महिष्वन्तं युयोतम् । | |
| यो वामोमानं दधते प्रियः सन् | | ५ ३४२ |

उत त्यद् वाँ जुरते अश्विना भू-च्छ्यवानाय प्रतीत्यं हविर्दे ।

अधि यद् वर्षं इत ऊति धत्थः

६

उत त्वं भुज्युमश्विना सखायो मध्ये जहुर्दुरेवासः समुद्रे ।

निरीं पर्षदरावा यो युवाकुः

७

वृकाय चिञ्जसमानाय शक्त-मुत श्रुतं शयवे हयमाना ।

यावद्व्यामपिन्वतमपो न स्तुर्थं चिच्छक्त्यश्विना शचीभिः

८ ३४५

एष स्य कारुर्जरते सूक्तै-रग्रे बुधान उपसां सुमन्मा ।

इषा तं वर्धद्व्या पयोभि-र्युयं पात स्वस्तिभिः सदा नः

९

॥४१॥ (ऋ. ७।६९।१—८) त्रिष्टुप् ।

आ वाँ रथो रोदसी बद्धधानो हिरण्ययो वृषभिर्यात्वश्वैः ।

घृतवर्तनिः पविर्भी रुचान इषां वोळहा नृपतिर्वाजिनीवान्

१

स पप्रथानो अभि पञ्च भूमा त्रिवन्धुरो मनसा यातु युक्तः ।

विशो येन गच्छथो देवयन्तीः कुत्रा चिद् याममश्विना दधाना

२

स्वश्वा यशसा यातमर्वाग् दसा निधिं मधुमन्तं पिबाथः ।

वि वाँ रथो वध्वाइयादमानो ऽन्तान् दिवो बाधते वर्तनिभ्याम्

३

युवोः श्रियं परि योषावृणीत् सूरौ दुहिता परितक्म्यायाम् ।

यद् देवयन्तमवथः शचीभिः परिं ग्रंसमोमना वाँ वयो गात्

४ ३५०

यो ह स्य वाँ रथिरा वस्ते उस्ता रथौ युजानः परियाति वर्तिः ।

तेन नः शं योरुषसो व्युष्टौ न्यश्विना वहतं यज्ञे अस्मिन्

५

नरा गौरेव विद्युतं तृषाणा ऽस्माकमद्य सवनोप यातम् ।

पुरुत्रा हि वाँ मतिभिर्हवन्ते मा वामन्ये नि यमन् देवयन्तः

६

युवं भुज्युमवविद्धं समुद्र उद्दहथुरर्णसो अस्त्रिधानैः ।

पतत्रिभिश्चमैरेव्यथिभिर्दसनाभिरश्विना पारयन्ता

७

नू मे हवमा शृणुतं युवाना यासिष्टं वर्तिरश्विनाविरावत् ।

धत्तं रत्नानि जरतं च सूरिन् युयं पात स्वस्तिभिः सदा नः

८

॥४२॥ (ऋ. ७।७०।१—७)

आ विश्ववाराश्विना गतं नः प्र तत् स्थानमवाचि वाँ पृथिव्याम् ।

अश्वो न वाजी शुनपृष्ठो अस्था-दा यत् सेदथुर्ध्रुवसे न योनिम्

१ ३५५

| | | |
|--------------------------------|----------------------------------|-------|
| सिर्षक्ति सा वा सुमतिश्चनिष्ठा | ऽतापि घर्मो मनुषो दुरोणे । | |
| यो वा समुद्रान्तसरितः पिपत्ये | तग्वा चिन्न सुयुजा युजानः | २ |
| यानि स्थानान्यश्विना दधार्थे | दिवो यद्द्वीष्वोषधीषु विश्वु । | |
| नि पर्वतस्य मूर्धनि सदन्ते | षं जनाय द्वाशुषे वहन्ता | ३ |
| चनिष्ठं देवा ओषधीष्वप्सु | यद् योग्या अश्रवैथे ऋषीणाम् । | |
| पुरुणि रत्ना दधत्तौ न्यस्मे | अनु पूर्वाणि चख्यथुर्युगानि | ४ |
| शुश्रुवांसां चिदश्विना पुरुष्य | भि ब्रह्माणि चक्षार्थे ऋषीणाम् । | |
| प्रति प्र यातं वरमा जनाया | ऽस्मे वामस्तु सुमतिश्चनिष्ठा | ५ |
| यो वा यज्ञो नासत्या हविष्मान् | कृतब्रह्मा समयोऽि भवाति । | |
| उप प्र यातं वरमा वसिष्ठ | मिमा ब्रह्माण्यच्यन्ते युवभ्याम् | ६ ३६० |
| इयं मनीषा इयमश्विना गी | रिमां सुवृक्तिं वृषणा जुषेथाम् । | |
| इमा ब्रह्माणि युवयून्यग्मन् | यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः | ७ |

॥४३॥ (ऋ. ७।७।१-६)

| | | |
|------------------------------|----------------------------------|-------|
| अप स्वसुरुषसो नजिहीते | रिणक्ति कृष्णीरुरुषाय पन्थाम् । | |
| अश्वामघा गोमघा वां हुवेम | दिवा नक्तं शरुमस्मद् युयोतम् | १ |
| उपायातं द्वाशुषे मर्त्याय | रथेन वाममश्विना वहन्ता । | |
| युयुतमस्मदनिराममीवां | दिवा नक्तं माध्वी त्रासीथां नः | २ |
| आ वां रथमवमस्यां व्युष्टौ | सुस्रायत्रो वृषणो वर्तयन्तु । | |
| स्युमंगभस्तिमृतयुग्भिरश्वै | राश्विना वसुमन्तं वहेथाम् | ३ |
| यो वां रथो नृपती अस्ति वोळहा | त्रिवन्धुरो वसुमाँ उत्तयामा । | |
| आ न एना नासत्योषं यात | मभि यद् वां विश्वप्स्यो जिगाति | ४ ३६५ |
| युवं च्यवानं जरसोऽमुमुक्तं | नि पेदव ऊहथुराशुमश्वम् । | |
| निरंहसस्तमसः स्पर्तमत्रि | नि जाहुषं शिथिरे धातमन्तः | ५ |
| इयं मनीषा इयमश्विना गी | रिमां सुवृक्तिं वृषणा जुषेथाम् । | |
| इमा ब्रह्माणि युवयून्यग्मन् | यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः | ६ |

॥४४॥ (ऋ. ७।७।१-५)

| | | |
|------------------------------|---------------------------------|-------|
| आ गोमता नासत्या रथेना | ऽश्वावता पुरुश्वन्द्रेण यातम् । | |
| अभि वां विश्वा नियुतः सचन्ते | स्पाह्या श्रिया तन्वा शुभाना | १ ३६८ |

| | |
|--|-------|
| आ नो देवेभिरुप यातमर्वाक् सजोषसा नासत्या रथेन । | |
| युवोहि नः सख्या पित्र्याणि समानो बन्धुरुत तस्य वित्तम् | २ |
| उदु स्तोमासो अश्विनोरबुध—जामि ब्रह्माण्युषसश्च देवीः । | |
| आविवांसन् रोदसी धिष्ण्येमे अच्छा विप्रो नासत्या विवक्ति | ३ ३७० |
| वि चेदुच्छन्त्यश्विना उपासः प्र वां ब्रह्माणि कारवो भरन्ते । | |
| ऊर्ध्व भानुं सविता देवो अश्रेद् बृहदग्रयः समिधा जरन्ते | ४ |
| आ पश्चातान्नासत्या पुरस्ता—दाश्विना यातमधरादुदक्तात् । | |
| आ विश्वतः पाञ्चजन्येन राया यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः | ५ |

॥४५॥ (ऋ. ७।७३।१-५)

| | |
|---|-------|
| अतारिष्म तमसस्परमस्य प्रति स्तोमं देवयन्तो दधानाः । | |
| पुरुदंसा पुरुतमा पुराजा ऽमर्त्या हवते अश्विना गीः | १ |
| न्यु प्रियो मनुषः सादि होता नासत्या यो यजते वन्दते च । | |
| अश्रीतिं मध्वो अश्विना उपाक आ वो वोचे विदथेषु प्रयस्वान् | २ |
| अहेम यज्ञं पथामुराणा इमां सुवृक्तिं वृषणा जुषेथाम् । | |
| श्रुष्टीवेव प्रेषितो वामबोधि प्रति स्तोमैर्जरमाणो वसिष्ठः | ३ ३७५ |
| उप त्या वह्नीं गमतो विशं नो रक्षोहणा संभृता वीळपाणी । | |
| समन्धास्यग्मत मत्सराणि मा नो मर्धिष्टमा गतं शिवेन | ४ |
| आ पश्चातान्नासत्या पुरस्ता—दाश्विना यातमधरादुदक्तात् । | |
| आ विश्वतः पाञ्चजन्येन राया यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः | ५ |

॥४६॥ (ऋ. ७।७४।१-६) प्रगाथः = (विषमा बृहती, समा सतोबृहती)

| | |
|--|-------|
| इमा उ वां दिविष्टय उस्त्रा हवन्ते अश्विना । | |
| अयं वामहे ऽवसे शचीवसू विशंविशं हि गच्छथः | १ |
| युवं चित्रं ददथुर्भोजनं नरा चोदथां सुनृतावते । | |
| अर्वाग् रथं समनसा नि यच्छतं पिबतं सोम्यं मधु | २ |
| आ यातमुप भूषतं मध्वः पिबतमश्विना । | |
| दुग्धं पयो वृषणा जेन्यावसू मा नो मर्धिष्टमा गतम् | ३ |
| अश्वासो ये वामुप दाशुषो गृहं युवां दीर्यन्ति बिभ्रतः । | |
| मक्षयुर्भिर्नरा हयैभिरश्विना ऽऽदेवा यातमस्मयू | ४ ३८१ |

अधा ह यन्तो अश्विना पृक्षः सचन्त सूर्यः ।

ता यंसतो मघवद्भ्यो ध्रुवं यश—इहृर्दिस्मभ्यं नासत्या

५

प्र ये युयुवकासो रथा इव नृपातारो जनानाम् ।

उत स्वेन शर्वसा शूशुवुर्नर उत क्षियन्ति सुक्षितिम्

६

३८३

॥४७॥ (ऋ. ८।५।१-३७)

(३८४—४२०) ब्रह्मातिथिः काण्वः । (३७ पूर्वार्धः) । गायत्री; ३७ बृहती ।

दूरादिहेव यत् स—त्यरुणप्सुरशिश्वितत् । वि भानुं विश्वधातनत् १

नृवद् दस्त्रा मनोयुजा रथेन पृथुपार्जसा । सचैथे अश्विनोषसम् २ ३८५

युवाभ्यां वाजिनीवसू प्रति स्तोमा अदक्षत । वाचं दूतो यथोहिषे ३

पुरुप्रिया ण ऊतये पुरुमन्द्रा पुरुवसू । स्तुषे कणासो अश्विना ४

महिष्ठा वाजसातमे—षयन्ता शुभस्पती । गन्तारा दाशुषो गृहम् ५

ता सुदेवाय दाशुषे सुमेधामवितारिणीम् । घृतैर्गव्यूतिमुक्षतम् ६

आ नः स्तोममृषं द्रवत् तूयं ज्येनेभिराशुभिः । यातमश्वेभिरश्विना ७ ३९०

येभिस्तिस्त्रः परावतो दिवो विश्वानि रोचना । त्रीरिक्तनू परिदीयथः ८

उत नो गोमतीरिष उत सातीरहर्विदा । वि पथः सातये सितम् ९

आ नो गोमन्तमश्विना सुवीरं सुरथं रयिम् । वोळ्हमश्वावतीरिषः १०

वावृधाना शुभस्पती दस्त्रा हिरण्यवर्तनी । पिबतं मोम्यं मधुं ११

अस्मभ्यं वाजिनीवसू मघवद्भ्यश्च सप्रथः । छर्दियन्तमदाभ्यम् १२ ३९५

नि षु ब्रह्म जनानां याविष्टं तूयमा गतम् । मो ष्वान्यां उपारतम् १३

अस्य पिबतमश्विना युवं मदस्य चारुणः । मध्वो रातस्य घिण्या १४

अस्मे आ वहतं रयिं शतवन्तं सदस्त्रिणम् । पुरुक्षुं विश्वधायसम् १५

पुरुत्रा चिद्धि वां नरा विह्वयन्ते मनीषिणः । वाघद्भिरश्विना गतम् १६

जनासो वृक्तबर्हिषो हविष्मन्तो अरंकृतः । युवां हवन्ते अश्विना १७ ४००

अस्माकमघ वामयं स्तोमो वाहिष्ठो अन्तमः । युवाभ्यां भूत्वश्विना १८

यो ह वां मधुनो दति—राहितो रथचर्षणे । ततः पिबतमश्विना १९

तेन नो वाजिनीवसू पश्वे तोकाय शं गवे । वहतं पीवरीरिषः २०

उत नो दिव्या इष उत सिन्धूरहर्विदा । अप द्वारेव वर्षथः २१ ४०४

| | | |
|--|----|-----|
| कदा वां तौग्र्यो विधत् समुद्रे जहितो नरा । यद् वां रथो विभिष्पतात् | २२ | ४०५ |
| युवं कण्वाय नासत्या ऽपिरिप्ताय हर्म्ये । शश्वद्दूतीदशस्यथः | २३ | |
| तामिरा यातमूतिभिर्नर्व्यसीभिः सुशस्तिभिः । यद् वां वृषण्वसू हुवे | २४ | |
| यथा चित् कण्वमावतं प्रियमैधमुपस्तुतम् । अत्रिं शिञ्जारमश्विना | २५ | |
| यथोत कृत्वये धने ऽशुं गोष्वगस्त्यम् । यथा वाजेषु सोमरिम् | २६ | |
| एतावद् वां वृषण्वसू अतो वा भूयो अश्विना । गुणन्तः सुममीमहे | २७ | ४१० |
| रथं हिरण्यवन्धुरं हिरण्याभीशुमश्विना । आ हि स्थार्थो दिविस्पृशम् | २८ | |
| हिरण्ययीं वां रभिरीषा अक्षो हिरण्ययः । उभा चक्रा हिरण्यया | २९ | |
| तेन नो वाजिनीवसू परावतश्चिदा गतम् । उपेमां सुष्टुतिं मम | ३० | |
| आ वह्ने पराकात् पूर्वोरश्वन्तावश्विना । इषो दासीरमर्त्या | ३१ | |
| आ नो द्युमैरा श्रवाभिरीषा राया यातमश्विना । पुरुश्चन्द्रा नासत्या | ३२ | ४१५ |
| एह वां प्रुषितप्सवो वयो वहन्तु पणिनः । अच्छा स्वध्वरं जनम् | ३३ | |
| रथं वामनुगायसं य इषा वर्तते सह । न चक्रमभि बाधते | ३४ | |
| हिरण्ययेन रथेन द्रवत्पाणिभिरश्वैः । धीजवना नासत्या | ३५ | |
| युवं मृगं जागृवांसं स्वदथो वा वृषण्वसू । ता नः पृङ्क्तमिषा रयिम् | ३६ | |
| ता मे अश्विना सनीनां विद्यातं नवानाम् । (पूर्वार्धः) | ३७ | ४२० |

॥४८॥ (ऋ. ८।८।१-२३)

(४२१-४४३) सध्वंसः काण्वः । अनुष्टुप् ।

| | |
|---|-------|
| आ नो विश्वाभिरूतिभिर्रश्विना गच्छतं युवम् । | |
| दत्ता हिरण्यवर्तनी पिवतं सोम्यं मधु | १ |
| आ नूनं यातमश्विना रथेन सूर्यत्वचा । | |
| भुजि हिरण्यपेशसा ऋवी गम्भीरचेतसा | २ |
| आ यातं नहुषस्पर्या ऽन्तरिक्षात् सुवृक्तिभिः । | |
| पिबाथो अश्विना मधु कण्वानां सवने सुतम् | ३ |
| आ नो यातं दिवस्पर्या ऽन्तरिक्षादधप्रिया । | |
| पुत्रः कण्वस्य वामिह सुषाव सोम्यं मधु | ४ |
| आ नो यातमुपश्रुत्यश्विना सोमपीतये । | |
| स्वाहा स्तोमस्य वर्धना प्र कवी धीतिर्भिरा | ५ ४२५ |

| | |
|---|--------|
| यश्चिद्धि वां पुर ऋषयो जुहुरेऽवसे नरा । | |
| आ यातमश्विना गतमुपेमां सुष्टुतिं मम | ६ |
| दिवश्चिद् रोचनादध्या नो गन्तं स्वर्विदा । | |
| धीभिर्वत्सप्रचेतसा स्तोमेभिर्वनश्रुता | ७ |
| किमन्ये परीसते ऽस्मत् स्तोमेभिरश्विना । | |
| पुत्रः कर्णस्य वामृषिर्गीर्भिर्वत्सो अवीवृधत् | ८ |
| आ वां विप्र इहावसे ऽह्वत् स्तोमेभिरश्विना । | |
| अरिं प्रा वृत्रहन्तमा ता नो भूतं मयोभुवा | ९ |
| आ यद् वां योषणा रथमतिष्ठद् वाजिनीवस्त्र । | |
| विश्वान्यश्विना युवं प्र धीतान्यगच्छतम् | १० ४३० |
| अतः सहस्रनिर्णिजा रथेना यातमश्विना । | |
| वत्सो वां मधुमद् वचो ऽशंसीत् काव्यः कविः | ११ |
| पुरुमन्द्रा पुरुवस्त्र मनोतरा रयीणाम् । | |
| स्तोमे मे अश्विनाविममभि वहीं अनूपाताम् | १२ |
| आ नो विश्वान्यश्विना धत्तं राधांस्यह्या । | |
| कृतं न ऋत्वियावतो मा नो रीरघतं निदे | १३ |
| यन्नासत्या परावति यद् वा स्थो अध्यम्बरे । | |
| अतः सहस्रनिर्णिजा रथेना यातमश्विना | १४ |
| यो वां नासत्यावृषिर्गीर्भिर्वत्सो अवीवृधत् । | |
| तस्मै सहस्रनिर्णिजमिषं धत्तं घृतश्रुतम् | १५ ४३५ |
| प्रास्मा ऊर्जं घृतश्रुतमश्विना यच्छतं युवम् । | |
| यो वां सुम्राय तुष्टवद् वसूयाद् दानुनस्पती | १६ |
| आ नो गन्तं रिशादसेमं स्तोमे पुरुश्रुजा । | |
| कृतं नः सुश्रियो नरेमा दातमभिष्टये | १७ |
| आ वां विश्वाभिरूतिभिः प्रियमेधा अहूषत । | |
| राजन्तावध्वराणामश्विना यामहूतिषु | १८ |
| आ नो गन्तं मयोभुवा ऽश्विना शंभुवा युवम् । | |

| | | |
|---------------------------|-------------------------|--------|
| याभिः कण्वं मेधातिथिं | याभिर्वशं दशव्रजम् । | |
| याभिर्गोशर्यमावतं | ताभिर्नोऽवतं नरा | २० ४४० |
| याभिर्नरा त्रसदस्यु- | मावतं कृत्वये धने । | |
| ताभिः प्वस्माँ अश्विना | प्रावतं वाजसातये | २१ |
| प्र वां स्तोमाः सुवृक्तयो | गिरो वर्धन्त्वश्विना । | |
| पुरुत्रा वृत्रहन्तमा | ता नो भूतं पुरुस्पृहा | २२ |
| त्रीणि पदान्यश्विनो- | राविः सान्ति गुहा परः । | |
| कवी ऋतस्य पत्नमभि- | रवाग् जीवेभ्यस्परि | २३ ४४३ |

॥४९॥ (ऋ. ८।९।१-२१)

(४४४—४६४) शशकर्णः काण्वः । अनुष्टुप्; १,४,६,१४-१५, बृहती; २-३,२०-२१ गायत्री;

५ ककुप्; १० त्रिष्टुप्; ११ विराट्; १२ जगती ।

| | | |
|------------------------|---|-------|
| आ नूनमश्विना युवं | वत्सस्य गन्तमवसे । | |
| प्रास्मै यच्छतमवृकं | पृथु च्छर्दि-युयुतं या अरातयः | १ |
| यदन्तरिक्षे यद् दिवि | यत् पञ्च मानुषाँ अनु । नृम्णं तद् धत्तमश्विना | २ ४४५ |
| ये वां दंसांस्यश्विना | विप्रांसः परिमामृशुः । एवेत् काण्वस्य बोधतम् | ३ |
| अयं वाँ घर्मो अश्विना | स्तोमैर्न परि पिच्यते । | |
| अयं सोमो मधुमान् | वाजिनीवसू येन वृत्रं चिकेतथः | ४ |
| यदप्सु यद् वनस्पतौ | यदोषधीषु पुरुदंससा कृतम् । | |
| तेन माविष्टमश्विना | | ५ |
| यन्नासत्या भुरण्यथो | यद् वाँ देव भिषज्यथः । | |
| अयं वाँ वत्सो मतिभिर्न | विन्धते हविष्मन्तं हि गच्छथः | ६ |
| आ नूनमश्विनोऽर्क्षिः | स्तोमैर्न चिकेत वामया । | |
| आ सोमं मधुमत्तमं | घर्मं सिञ्चादथर्वणि | ७ ४५० |
| आ नूनं रघुवर्तनि | रथं तिष्ठथो अश्विना । | |
| आ वां स्तोमा इमे मम | नभो न चुच्यवीरत | ८ |
| यदद्य वाँ नासत्यो- | कथैराचुच्युवीमहि । | |
| यद् वा वाणीभिरश्विने- | वंत् काण्वस्य बोधतम् | ९ ४५२ |

| | |
|---|--------|
| यद् वाँ कक्षीवाँ उत यद् व्यश्च ऋषिर्यद् वाँ दीर्घतमा जुहाव । | |
| पृथी यद् वाँ वैन्यः सार्दनेष्वे—वेदतो अश्विना चेतयेथाम् | १० |
| यातं छर्दिष्पा उत नः परस्पा भूतं जगत्पा उत नस्तनूपा । | |
| वर्तिस्तोकाय तनयाय यातम् | ११ |
| यदिन्द्रेण सरथं याथो अश्विना यद् वाँ वायुना भवथः समोकसा । | |
| यदादित्येभिर्ऋभुभिः सजोषसा यद् वाँ विष्णोर्विक्रमणेषु तिष्ठथः | १२ ४५५ |
| यदुद्याश्विनावहं हुवेय वार्जसातये । | |
| यत् पृत्सु तुर्वणे सह—स्तच्छ्रेष्ठमश्विनोरवः | १३ |
| आ नूनं यातमश्विने—मा हव्यानि वाँ हिता । | |
| इमे सोमांसो अधि तुर्वशे यदा—विमे कण्वेषु वामथ | १४ |
| यन्नासत्या पराके अर्वाके अस्ति भेषजम् । | |
| तेन नूनं विमदाय प्रचेतसा छर्दिर्वत्साय यच्छतम् | १५ |
| अभुत्स्यु प्र देव्या साकं वाचाहमश्विनोः । | |
| व्यावर्देव्या मतिं वि रातिं मर्त्येभ्यः | १६ |
| प्र बोधयोषो अश्विना प्र देवि स्रुते महि । | |
| प्र यज्ञहोतरानुषक् प्र मदाय श्रवो बृहत् | १७ ४६० |
| यदुषो यासि भानुना सं सूर्येण रोचसे । | |
| आ हायमश्विनो रथो वर्तिर्याति नृपाय्यम् | १८ |
| यदापीतासो अंशवो गावो न दुह ऊर्धभिः । | |
| यद् वाँ वाणीरनूषत् प्र देवयन्तो अश्विना | १९ |
| प्र द्युम्नाय प्र शर्वसे प्र नृपाह्याय शर्मणे । प्र दक्षाय प्रचेतसा | २० |
| यस्मूनं धीभिरश्विना पितुर्योना निषीदथः । यद् वाँ सुम्नेभिरुक्थ्या | २१ ४६४ |

॥५०॥ (ऋ. ८।१०।१-६)

(४६५-४७०) प्रगाथो (घोरः) काण्वः । १ बृहती, २ मध्येज्योतिः, ३ अनुष्टुप्, (पिंगलमतेन-शंकुमती)

४ आस्तारपङ्क्तिः, ५-६ प्रगाथः = (५ बृहती+ ६ सतोबृहती)

यत् स्थो दीर्घप्रसन्नानि यद् वादो रौचने दिवः ।

यद् वाँ समुद्रे अघ्याकृते गृहे ऽत आ यातमश्विना

१ ४६५

६० [अश्विनौ] ५

| | |
|--|-------|
| यद् वा यज्ञं मनवे संमिक्षथु—रेवेत् काण्वस्य बोधतम् । | |
| बृहस्पतिं विश्वान् देवाँ अहं हुव इन्द्राविष्णूँ अश्विनावाशुहेषसा | २ |
| त्या न्वपश्विना हुवे सुदंससा गृभे कृता । | |
| ययोरस्ति प्र णः सख्यं देवेष्वध्याप्यम् | ३ |
| ययोरधि प्र यज्ञा असूरे सन्ति सूरयः । | |
| ता यज्ञस्याध्वरस्य प्रचेतसा स्वधाभिर्या पिबतः सोम्यं मधु | ४ |
| यदद्याश्विनावपाग् यत् प्राक् स्थो वाजिनीवस्र । | |
| यद् द्रुह्यव्यनवि तुर्वशे यदौ हुवे वामथ मा गतम् | ५ |
| यदुन्तरिक्षे पतथः पुरुभुजा यद् वेमे रोदसी अनु । | |
| यद् वा स्वधाभिरधितिष्ठथो रथ—मत आ यातमश्विना | ६ ४७० |

॥५१॥ (ऋ. ८।१८।८)

(४७१) इरिम्बिठिः काण्वः । उष्णिक् ।

उत त्या दैव्या भिषजा शं नः करतो अश्विना । युयुयातामितो रपो अप सिधः ८ ४७१

॥५२॥ (ऋ. ८।२२।१—१८)

(४७२-४८९) सोभरिः काण्वः । १—६ प्रगाथः = (विषमा बृहती+समा सतोबृहती),

७ बृहती, ८ अनुष्टुप्, ११ ककुप्, १२ मध्येज्योतिः, प्रगाथः =

(९, १३, १५, १७, ककुप्; १०, १४, १६, १८ सतोबृहती)

| | |
|--|-------|
| ओ त्यमह आ रथ—मद्या दंसिष्ठमृतये । | |
| यमश्विना सुहवा रुद्रवर्तनी आ सूर्यायै तस्थथुः | १ |
| पूर्वापुषं सुहवं पुरुस्पृहं भुज्युं वाजेषु पूर्यम् । | |
| सचनावन्तं सुमतिभिः सोमरे विद्वेषसमनेहसम् | २ |
| इह त्या पुरुभूतमा देवा नमोभिरश्विना । | |
| अर्वाचीना स्ववंसे करामहे गन्तारा दाशुषो गृहम् | ३ |
| युवो रथस्य परि चक्रमीयत ईर्मान्यद् वामिषण्यति । | |
| अस्माँ अच्छा सुमतिवी शुभस्पती आ धेनुरिव धावतु | ४ |
| रथो यो वा त्रिवन्धुरो हिरण्याभीशुरश्विना । | |
| परि द्यावापृथिवी भूषति श्रुत—स्तेन नासत्या गतम् | ५ ४७६ |

| | |
|---|--------|
| दशस्यन्ता मनवे पुच्यं दिवि यवं वृकैण कर्पथः । | |
| ता वामद्य सुमतिभिः शुभस्पती अश्विना प्र स्तुवीमहि | ६ |
| उप नो वाजिनीवसू यातमृतस्य पथिभिः । | |
| येभिस्तृक्षि वृषणा त्रासदस्यवं महे क्षत्राय जिन्वथः | ७ |
| अयं वामद्विभिः सुतः सोमो नरा वृषण्वसू । | |
| आ यातं सोमपीतये पिबतं दाशुषो गृहे | ८ |
| आ हि रुहतमश्विना रथे कोशे हिरण्यये वृषण्वसू । युञ्जाथां पीवरीरिषः | ९ ४८० |
| याभिः पक्थमवथो याभिरध्रिगुं याभिर्बभ्रुं विजोषसम् । | |
| ताभिर्नो मक्षू तूयमश्विना गतं भिषज्यतं यदातुरम् | १० |
| यदध्रिगावो अध्रिगू इदा चिदहो अश्विना हवामहे । वयं गीभिर्विपन्यवः | ११ |
| ताभिरा यातं वृषणोप मे हवं विश्वप्सुं विश्ववार्यम् । | |
| इषा माहिष्ठा पुरुभूतमा नरा याभिः क्रिविं वावृधुस्ताभिरा गतम् | १२ |
| ताविदा चिदहानां तावश्विना वन्दमान उप ब्रुवे । ता ऊ नमोभिरीमहे | १३ |
| ताविद् दोषा ता उषसि शुभस्पती ता यामन् रुद्रवर्तनी । | |
| मा नो मर्तीय रिषवे वाजिनीवसू परो रुद्रावति रुयतम् | १४ ४८५ |
| आ सुगम्याय सुगम्यं प्राता रथेनाश्विना वा सक्षणी । हुवे पितेव सोमरी | १५ |
| मनोजवसा वृषणा मदच्युता मक्षुंगमाभिरूतिभिः । | |
| आरात्ताच्चिद् भूतमस्मे अवसे पूर्वाभिः पुरुभोजसा | १६ |
| आ नो अश्वावदश्विना वर्तिर्यासिष्टं मधुपातमा नरा । गोमद् दत्ता हिरण्यवत् | १७ |
| सुग्रावर्गं सुवीर्यं सुष्टु वार्य—मनाधृष्टं रक्षस्विना । | |
| अस्मिन्ना वामायाने वाजिनीवसू विश्वा वामानि धीमहि | १८ ४८९ |

॥५३॥ (क्र. ८।२६।१—१९)

(४९०-५०८) विश्वमना वैश्वः, व्यश्वो वाहिरसः । उणिक्: १६—१९, गायत्री ।

| | | |
|---|------------------------------|-------|
| युवोरु पू रथं हुवे सधस्तुत्याय सूरिषु | । अतूर्तदक्षा वृषणा वृषण्वसू | १ ४९० |
| युवं वरो सुषाम्णे महे तने नासत्या | । अवोभिर्याथो वृषणा वृषण्वसू | २ |
| ता वामद्य हवामहे हव्येभिर्वाजिनीवसू | । पूर्वारिष इषयन्तावति क्षपः | ३ |
| आ वां वाहिष्ठो अश्विना रथो यातु श्रुतो नरा । उप स्तोमान् तुरस्य दर्शथः श्रिये | | ४ ४९३ |

| | | | |
|--------------------------|-----------------------|--------------------------------------|-----|
| जुहुराणा चिदश्विना | ऽऽमन्येथां वृषण्वसू | । युवं हि रुद्रा पर्षथो अति द्विषः ५ | |
| दुस्त्रा हि विश्वमानुषङ् | मक्षूभिः परिदीयथः | । धियंजिन्वा मधुवर्णा शुभस्पती ६ | ४९५ |
| उप नो यातमश्विना | राया विश्वपुषा सह | । मघवाना सुवीरावनपच्युता ७ | |
| आ मे अस्य प्रतीव्यः | —मिन्द्रनासत्या गतम् | । देवा देवेभिरेद्य सचनस्तमा ८ | |
| वयं हि वां हवामह | उक्षण्यन्तो व्यश्ववत् | । सुमतिभिरुप विप्राविहा गतम् ९ | |
| अश्विना स्वृषे स्तुहि | कुवित् ते श्रवतो हवम् | । नेदीयसः कूळयातः पर्णीरुत १० | |
| वैयश्वस्य श्रुतं नरो | तो मे अस्य वेदथः | । सजोषसा वरुणो मित्रो अर्यमा ११ | ५०० |
| युवादत्तस्य धिण्या | युवानीतस्य सुरिभिः | । अहरहर्वृषणा मयै शिक्षतम् १२ | |
| यो वां यज्ञेभिरावृतो | ऽधिवस्त्रा वधूरिव | । सपर्यन्ता शुभे चक्राते अश्विना १३ | |
| यो वामुरुच्यचस्तमं | चिकेतति नृपाय्यम् | । वर्तिरश्विना परि यातमस्मयू १४ | |
| अस्मभ्यं सु वृषण्वसू | यातं वर्तिनृपाय्यम् | । विपुद्रुहेव यज्ञमूहथुर्गिरा १५ | |
| वाहिष्ठो वां हवानां | स्तोमो दूतो हुवन्नरा | । युवाभ्यां भूत्वश्विना १६ | ५०५ |
| यदुदो दिवो अर्णव | इषो वा मदथो गृहे | । श्रुतमिन्मे अमर्त्या १७ | |
| उत स्या श्वेतयावरी | वाहिष्ठा वां नदीनाम् | । सिन्धुर्हिरण्यवर्तनिः १८ | |
| स्मदेतया सुक्रीत्या | ऽश्विना श्वेतया धिया | । वहेथे शुभ्रयावाना १९ | ५०८ |

॥५४॥ (क. टा. ३५१—२४)

(५०९—५३९) इयावाश्व आत्रेयः । उपरिष्टाज्ज्योतिः (त्रिष्टुप्), २२, २४ पङ्क्तिः, २३ महावृहती ।

| | | |
|--------------------------------|------------------------------------|-------|
| अग्निनेन्द्रेण वरुणेन विष्णुना | ऽऽदित्यै रुद्रैर्वसुभिः सचाभुवा । | |
| सजोषसा उषसा सूर्येण च | सोमं पिबतमश्विना | १ |
| विश्वाभिर्धाभिर्भुवनेन वाजिना | दिवा पृथिव्याद्रिभिः सचाभुवा । | |
| सजोषसा उषसा सूर्येण च | सोमं पिबतमश्विना | २ ५१० |
| विश्वेदेवैस्त्रिभिरेकादशैरिहा | —ऽद्भिर्मरुद्भिर्भृगुभिः सचाभुवा । | |
| सजोषसा उषसा सूर्येण च | सोमं पिबतमश्विना | ३ |
| जुषेथां यज्ञं बोधतं हवस्य मे | विश्वेह देवौ सवनावं गच्छतम् । | |
| सजोषसा उषसा सूर्येण च | पं नो वोळ्हमश्विना | ४ |
| स्तोमं जुषेथां युवशेव कन्यनां | विश्वेह देवौ सवनावं गच्छतम् । | |
| सजोषसा उषसा सूर्येण च | पं नो वोळ्हमश्विना | ५ ५१३ |

| | |
|---|--------|
| गिरो जुषेथामध्वरं जुषेथां विश्वेह देवौ सवनावं गच्छतम् । | |
| सजोषसा उषसा सूर्येण च—पं नो वोळ्हमश्विना | ६ |
| हारिद्रवेवं पतथो वनेदुप सोमं सुतं महिषेवावं गच्छथः । | |
| सजोषसा उषसा सूर्येण च त्रिर्वर्तिर्यातमश्विना | ७ ५१५ |
| हंसारिव पतथो अध्वगाविव सोमं सुतं महिषेवावं गच्छथः । | |
| सजोषसा उषसा सूर्येण च त्रिर्वर्तिर्यातमश्विना | ८ |
| इयेनाविव पतथो हव्यदातये सोमं सुतं महिषेवावं गच्छथः । | |
| सजोषसा उषसा सूर्येण च त्रिर्वर्तिर्यातमश्विना | ९ |
| पिबतं च तृष्णुतं चा चं गच्छतं प्रजां च धत्तं द्रविणं च धत्तम् । | |
| सजोषसा उषसा सूर्येण चो—र्जं नो धत्तमश्विना | १० |
| जयतं च प्र स्तुतं च प्र चावतं प्रजां च धत्तं द्रविणं च धत्तम् । | |
| सजोषसा उषसा सूर्येण चो—र्जं नो धत्तमश्विना | ११ |
| हतं च शत्रून् यततं च मित्रिणः प्रजां च धत्तं द्रविणं च धत्तम् । | |
| सजोषसा उषसा सूर्येण चो—र्जं नो धत्तमश्विना | १२ ५२० |
| मित्रावरुणवन्ता उत धर्मवन्ता मरुत्वन्ता जरितुर्गच्छथो हवम् । | |
| सजोषसा उषसा सूर्येण चा—ऽऽदित्यैर्यातमश्विना | १३ |
| अङ्गिरस्वन्ता उत विष्णुवन्ता मरुत्वन्ता जरितुर्गच्छथो हवम् । | |
| सजोषसा उषसा सूर्येण चा—ऽऽदित्यैर्यातमश्विना | १४ |
| ऋभुमन्ता वृषणा वाजवन्ता मरुत्वन्ता जरितुर्गच्छथो हवम् । | |
| सजोषसा उषसा सूर्येण चा—ऽऽदित्यैर्यातमश्विना | १५ |
| ब्रह्म जिन्वतमुत जिन्वतं धियो हतं रक्षांसि सेधतममीवाः | |
| सजोषसा उषसा सूर्येण च सोमं सुन्वतो अश्विना | १६ |
| क्षत्रं जिन्वतमुत जिन्वतं नृन् हतं रक्षांसि सेधतममीवाः । | |
| सजोषसा उषसा सूर्येण च सोमं सुन्वतो अश्विना | १७ ५२५ |
| धेनूर्जिन्वतमुत जिन्वतं विशो हतं रक्षांसि सेधतममीवाः । | |
| सजोषसा उषसा सूर्येण च सोमं सुन्वतो अश्विना | १८ |
| अत्रैरिव शृणुतं पूर्व्यस्तुतिं इयावाश्वस्य सुन्वतो मदच्युता । | |
| सजोषसा उषसा सूर्येण चा—ऽश्विना तिरोअह्वयम् | १९ ५२७ |

| | |
|---|--------|
| सर्गा इव सृजतं सुष्टुतीरुषं श्यावाश्वस्य सुन्वतो मदच्युता । | |
| सजोषसा उषसा सूर्येण चा—ऽश्विना तिरोअह्वयम् | २० |
| रश्मीरिव यच्छतमध्वराँ उप श्यावाश्वस्य सुन्वतो मदच्युता । | |
| सजोषसा उषसा सूर्येण चा—ऽश्विना तिरोअह्वयम् | २१ |
| अर्वाग् रथं नि यच्छतं पिबतं सोम्यं मधु । | |
| आ यातमश्विना गत—मवस्युर्वामहं हुवे धत्तं रत्नानि दाशुषे | २२ ५३० |
| नमोवाके प्रस्थिते अध्वरे नरा विवर्क्षणस्य पीतये । | |
| आ यातमश्विना गत—मवस्युर्वामहं हुवे धत्तं रत्नानि दाशुषे | २३ |
| स्वाहाकृतस्य तृप्तं सुतस्य देवावन्धसः । | |
| आ यातमश्विना गत—मवस्युर्वामहं हुवे धत्तं रत्नानि दाशुषे | २४ ५३२ |

॥५५॥ (क. ८१४२४—६)

(५३३—५३५) नाभाकः काण्वः, अर्चनाना आश्रेयो वा । अनुष्टुप् ।

| | |
|---|-------|
| आ वां ग्रावाणो अश्विना धीभिर्विप्रा अचुच्यवुः । | |
| नासत्या सोमपीतये नभन्तामन्यके समे | ४ |
| यथा वामत्रिरश्विना गीभिर्विप्रो अजोहवीत् । | |
| नासत्या सोमपीतये नभन्तामन्यके समे | ५ |
| एवा वामह उतये यथाहुवन्त मेधिराः । | |
| नासत्या सोमपीतये नभन्तामन्यके समे | ६ ५३५ |

॥५६॥ (क. ८१५७ । [९ बाल०] १-४)

(५३६—५३७) मेध्यः काण्वः । त्रिष्टुप् ।

| | |
|--|-------|
| युवं देवा क्रतुना पूर्येण युक्ता रथेन तविषं यजत्रा । | |
| आगच्छतं नासत्या शचीभि—रिदं तृतीयं सर्वनं पिबाथः | १ |
| युवां देवास्त्रय एकादुशासः सत्याः सत्यस्य ददशे पुरस्तात् । | |
| अस्माकं यज्ञं सर्वनं जुषाणा पातं सोममश्विना दीद्यग्नी | २ |
| पनाय्यं तदश्विना कृतं वां वृषभो दिवो रजसः पृथिव्याः । | |
| सहस्रं शंसा उत ये गर्विष्टौ सर्वाँ इत् ताँ उप याता पिबध्वै | ३ |
| अयं वां भागो निहितो यजत्रे—मा गिरो नासत्योप यातम् । | |
| पिबतुं सोमं मधुमन्तमग्ने प्र दाश्वाममवतं शचीभिः | ४ ५३९ |

॥५७॥ (ऋ. ८।७३।१-१८)

(५४०-५५७) गोपवन आत्रेयः सप्तवध्निर्वा । गायत्री ।

| | | | | |
|------------------------|----------------------|-----------------------|----|-----|
| उदीराथामृतायते | युञ्जाथामश्विना रथम् | । अन्ति पद्भूतु वामवः | १ | ५४० |
| निमिषाश्चिज्जवीयसा | रथेना यातमश्विना | । अन्ति पद्भूतु वामवः | २ | |
| उप स्तृणीतमत्रये | हिमेन घर्ममश्विना | । अन्ति पद्भूतु वामवः | ३ | |
| कुहं स्थः कुहं जग्मथुः | कुहं श्येनेव पेतथुः | । अन्ति पद्भूतु वामवः | ४ | |
| यदुद्य कर्हि कर्हि चि | च्छ्रुयातमिमं हवम् | । अन्ति पद्भूतु वामवः | ५ | |
| अश्विना यामहूतमा | नेदिष्ठं याम्याप्यम् | । अन्ति पद्भूतु वामवः | ६ | ५४५ |
| अवन्तमत्रये गृहं | कृणुतं युवमश्विना | । अन्ति पद्भूतु वामवः | ७ | |
| वरेथे अग्निमातपो | वदते वल्गवत्रये | । अन्ति पद्भूतु वामवः | ८ | |
| प्र सप्तवधिराशसा | धाराग्नेरशायत | । अन्ति पद्भूतु वामवः | ९ | |
| इहा गतं वृषण्वसू | शृणुतं मे इमं हवम् | । अन्ति पद्भूतु वामवः | १० | |
| किमिदं वा पुराणव | जरतोरिव शस्यते | । अन्ति पद्भूतु वामवः | ११ | ५५० |
| समानं वा सजात्यं | समानो बन्धुरश्विना | । अन्ति पद्भूतु वामवः | १२ | |
| यो वा रजांस्यश्विना | रथो वियाति रोदसी | । अन्ति पद्भूतु वामवः | १३ | |
| आ नो गव्येभिरश्वैः | सहस्रैरुप गच्छतम् | । अन्ति पद्भूतु वामवः | १४ | |
| मा नो गव्येभिरश्वैः | सहस्रैभिरति ख्यतम् | । अन्ति पद्भूतु वामवः | १५ | |
| अरुणप्सुरुषा अभू | दकज्योतिर्ऋतावरी | । अन्ति पद्भूतु वामवः | १६ | ५५५ |
| अश्विना सु विचाकशद् | वृक्षं परशुमां इव | । अन्ति पद्भूतु वामवः | १७ | |
| पुरं न धृष्णवा रुज | कृष्ण्या वाधितो विशा | । अन्ति पद्भूतु वामवः | १८ | ५५७ |

॥५८॥ (ऋ. ८।८५।१-९)

(५५८-५६६) कृष्ण आङ्गिरसः । गायत्री ।

| | | | | |
|------------------------|------------------------|----------------------|---|-----|
| आ मे हव नासत्या | ऽश्विना गच्छतं युवम् | । मध्वः सोमस्य पीतये | १ | |
| इमं मे स्तोममश्विने | मं मे शृणुतं हवम् | । मध्वः सोमस्य पीतये | २ | |
| अयं वां कृष्णो अश्विना | हवते वाजिनीवसू | । मध्वः सोमस्य पीतये | ३ | ५६० |
| शृणुतं जरितुर्हवं | कृष्णस्य स्तुवतो नरा | । मध्वः सोमस्य पीतये | ४ | |
| छर्दिर्यन्तमदाम्यं | विप्राय स्तुवते नरा | । मध्वः सोमस्य पीतये | ५ | |
| गच्छतं दाशुषो गृह | मित्था स्तुवतो अश्विना | । मध्वः सोमस्य पीतये | ६ | ५६३ |

| | |
|---|-------|
| युञ्जाथां रासंभं रथे वीङ्गङ्गे वृषण्वसू । मध्वः सोमस्य पीतये | ७ |
| त्रिवन्धुरेण त्रिवृता रथेना यातमश्विना । मध्वः सोमस्य पीतये | ८ |
| नू मे गिरो नासत्या ऽश्विना प्रावतं युवम् । मध्वः सोमस्य पीतये | ९ ५६६ |

॥५९॥ (क. ८।८६।१—५)

(५६७—५७१) कृष्ण आङ्गिरसः, विश्वको वा कार्ष्णिः । जगती ।

| | |
|---|-------|
| उभा हि दुस्त्रा भिषजा मयोभुवो—भा दक्षस्य वचसो बभूवथुः । | |
| ता वां विश्वको हवते तनूकृथे मा नो वि यौष्टं सख्या मुमोचतम् | १ |
| कथा नूनं वां विमना उप स्तव—द्युवं धियं ददथुर्वस्येष्टये । | |
| ता वां विश्वको हवते तनूकृथे मा नो वि यौष्टं सख्या मुमोचतम् | २ |
| युवं हि ष्मा पुरुषजेममेधतुं विष्णावे ददथुर्वस्येष्टये । | |
| ता वां विश्वको हवते तनूकृथे मा नो वि यौष्टं सख्या मुमोचतम् | ३ |
| उत त्वं वीरं धनसामृजीषिणं दूरे चित् सन्तमवसे हवामहे । | |
| यस्य स्वादिष्ठा सुमतिः पितुर्यथा मा नो वि यौष्टं सख्या मुमोचतम् | ४ |
| ऋतेन देवः सविता शमायत ऋतस्य शृङ्गमुर्विया वि पप्रथे । | |
| ऋतं सासाह महि चित् पृतन्यतो मा नो वि यौष्टं सख्या मुमोचतम् | ५ ५७१ |

॥६०॥ (क. ८।८७।१—६)

(५७१—५७७) कृष्ण आङ्गिरसो वासिष्ठो वा द्युम्निकः, प्रियमेध आङ्गिरसो वा ।

प्रगाथः = (विषमा बृहती+समा सतोबृहती)

| | |
|--|-------|
| द्युम्नी वां स्तोमो अश्विना क्रिविर्न सेक आ गतम् । | |
| मध्वः सुतस्य स दिवि प्रियो नरा पातं गौराविवेरिणे | १ |
| पिबतं धर्मं मधुमन्तमश्विना ऽऽ बर्हिः सीदतं नरा । | |
| ता मन्दसाना मनुषो दुरोण आ नि पातं वेदसा वयः | २ |
| आ वां विश्वाभिरूतिभिः प्रियमेधा अहूषत । | |
| ता वर्तिर्यातृषुप वृक्तबर्हिषो जुष्टं यज्ञं दिविष्टिषु | ३ |
| पिबतं सोमं मधुमन्तमश्विना ऽऽ बर्हिः सीदतं सुमत् । | |
| ता वावृधाना उप सुष्टुतिं दिवो गन्तं गौराविवेरिणम् | ४ |
| आ नूनं यातमश्विना ऽश्वेभिः प्रुषितप्सुभिः । | |
| दस्त्रा हिरण्यवर्तनी शुभस्पती पातं सोममृतावृधा | ५ ५७६ |

वयं हि वां हवामहे विपुन्यवो विप्रांसो वाजसातये ।
ता वल्गू दुस्त्रा पुरुदंससा धिया ऽश्विना श्रुष्ट्या गतम्

६ ५७७

॥६१॥ (ऋ. ८।१०१।७-८)

(५७८-५७९) जमदग्निर्भर्गवः । प्रगाथः = (विषमा बृहती, समा सतोबृहती) ।

आ मे वचांस्युद्यता द्युमत्तमानि कर्त्वा ।
उभा यातं नासत्या सजोषसा प्रति हव्यानि वीतये
रातिं यद् वामरक्षसं हवामहे युवाभ्यां वाजिनीवस्र ।
प्राचीं होत्रां प्रतिरन्तावितं नरा गृणाना जमदग्निना

७

८ ५७९

॥६२॥ (ऋ. १०।२४।४-६)

(५८०-५८२) ऐन्द्रो विमदः, प्राजापत्यो वा, वासुक्रो वसुकृद्वा । अनुष्टुप् ।

युवं शक्रा मायाविना समीची निर्मन्थतम् ।
विमदेन यदीळिता नासत्या निर्मन्थतम्
विश्वे देवा अकृपन्त समीच्योर्निष्पतन्त्योः ।
नासत्यावब्रुवन् देवाः पुनरा ब्रह्मतादिति
मधुमन्मे परायणं मधुमत् पुनरायनम् ।
ता नो देवा देवतया युवं मधुमतस्कृतम्

४

५

६ ५८२

॥६३॥ (ऋ. १०।३९।१-१४)

(५८३-६१०) काक्षीवती घोषा । जगती, १४ त्रिष्टुप् ।

यो वां परिज्मा सुवृदश्विना रथो दोषामुषासो हव्यो हविष्मता ।
शश्वत्तमासस्तमु वामिदं वयं पितुर्न नाम सुहवं हवामहे
चोदयतं सूनृताः पिन्वतं धिय उत् पुरंधीरीरयतं तदुश्मसि ।
यशसं भागं कृणुतं नो अश्विना सोमं न चारुं मघवत्सु नस्कृतम्
अमाजुरश्विद् भवथो युवं भगो ऽनाशोश्चिदवितारापमस्य चित् ।
अन्धस्य चिन्नासत्या कृशस्य चिद् युवामिदाहुर्भिषजा रुतस्य चित्
युवं च्यवानं सनयं यथा रथं पुनर्युवानं चरथाय तक्षथुः ।
निष्टौग्र्यमूहथुरद्भ्यस्परि विश्वेत् ता वां सर्वनेषु प्रवाच्या
पुराणा वां वीर्यां प्र ब्रवा जने ऽथो हासथुर्भिषजा मयोभुवा ।
ता वां नु नव्याववसे करामहे ऽयं नासत्या श्रदरिर्यथा दधत्

१

२

३ ५८५

४

५ ५८७

| | |
|--|--------|
| इयं वामहे शृणुतं मे अश्विना पुत्रायैव पितरा मह्यं शिक्षतम् । | |
| अनापिरज्ञा असजात्यामतिः पुरा तस्या अभिशस्तेरव स्पृतम् | ६ |
| युवं रथेन विमदाय शुन्ध्युवं न्यूहथुः पुरुमित्रस्य योषणाम् । | |
| युवं हवँ वधिमत्या अगच्छतं युवं सुषुतिं चक्रथुः पुरंधये | ७ |
| युवं विप्रस्य जरणामुपेयुषः पुनः कलेरकृणुतं युवद् वयः । | |
| युवं वन्दनमृश्यदादुदूपथु—र्युवं सद्यो विश्पलामेतवे कथः | ८ ५९० |
| युवं ह रेभं वृषणा गुहा हित—सुदैरयतं ममृवांसमश्विना । | |
| युवमृवीसमुत तप्तमत्रय ओमन्वन्तं चक्रथुः सप्तवध्रये | ९ |
| युवं श्वेतं पेदवेऽश्विनाश्वं नवभिर्वाजैर्नवती च वाजिनम् । | |
| चक्रत्यं ददथुर्द्रावयत्सखं भगं न नृभ्यो हव्यं मयोभुवम् | १० |
| न तं राजानावदिते कुतश्चन नाहो अश्रोति दुरितं नकिर्भयम् । | |
| यमश्विना सुहवा रुद्रवर्तनी पुरोरथं कृणुथः पत्न्या सह | ११ |
| आ तेन यातं मनसो जवीयसा रथं ये वामृभवश्चक्रुरश्विना । | |
| यस्य योगे दुहिता जायते दिव उभे अहनी सुदिने विवस्वतः | १२ |
| ता वर्तिर्यातं जयुषा वि पर्वत—मर्पिन्वतं शयवे धेनुमश्विना । | |
| वृकस्य चिद् वर्तिकामन्तरास्याद् युवं शचीभिर्गसिताममुञ्चतम् | १३ ५९५ |
| एतं वां स्तोममश्विनावकर्मा—तक्षाम भृगो न रथम् । | |
| न्यमृक्षाम योषणां न मर्ये नित्यं न सूनुं तनयं दधानाः | १४ |

॥६४॥ (ऋ. १०।४०।१--१४)

| | |
|--|-------|
| रथं यान्तं कुह को ह वां नरा प्रति द्युमन्तं सुविताय भूषति । | |
| प्रातर्यावाणं विभ्वं विशेविशे वस्तोर्वस्तोर्वहमानं धिया शर्मि | १ |
| कुहं स्विद् दोषा कुह वस्तोरश्विना कुहाभिपित्वं करतः कुहोषतुः । | |
| को वां शयुत्रा विधवेव देवरं मर्यं न योषा कृणुते सधस्थ आ | २ |
| प्रातर्जरेथे जरणेव कार्पया वस्तोर्वस्तोर्यजता गच्छथो गृहम् । | |
| कस्य ध्वस्ता भवथः कस्य वा नरा राजपुत्रेव सवनाव गच्छथः | ३ |
| युवां मृगेव वारणा मृगण्यवो दोषा वस्तोर्विषा नि ह्वयामहे । | |
| युवं होत्रामृतुथा जुह्वते नरे—षं जनाय वहथः शुभस्पती | ४ ६०० |

| | | |
|---------------------------------|--------------------------------------|--------|
| युवां ह घोषा पर्यश्विना यती | राज्ञ ऊचे दुहिता पृच्छे वां नरा । | |
| भूतं मे अहं उत भूतमक्तवे | ऽश्वावते रथिने शक्तमर्वते | ५ |
| युवं कवी ह्यः पर्यश्विना रथं | विशो न कुत्सो जरितुर्नशायथः । | |
| युवोर्ह मक्षा पर्यश्विना मध्वा | सा भरत निष्कृतं न योषणा | ६ |
| युवं ह भुज्युं युवमश्विना वशं | युवं शिञ्जारमुशनामुपारथुः । | |
| युवो ररावा परि सख्यमासते | युवोरहमवसा सुस्रमा चके | ७ |
| युवं ह कृशं युवमश्विना शयुं | युवं विधन्तं विधवागुरुष्यथः । | |
| युवं सनिभ्यः स्तनयन्तमश्विना | ऽपं व्रजमूर्ण्यथः सप्तास्यम् | ८ |
| जनिष्ट योषा पतयत् कनीनको | वि चारुहन् वीरुधो दंसना अनु । | |
| आस्मै रीयन्ते निवनेव सिन्धवो | ऽस्मा अहं भवति तत् पतित्वनम् | ९ ६०५ |
| जीवं रुदन्ति वि मयन्ते अध्वरे | दीर्घामनु प्रसिति दीधियुनरः । | |
| धामं पितृभ्यो य इदं संमेरिरे | मयः पतिभ्यो जनयः परिष्वजे | १० |
| न तस्य विद्म तदु पु प्र वोचत | युवां ह यद् युवत्याः क्षेति योनिषु । | |
| प्रियोस्त्रियस्य वृषभस्य रेतिनो | गृहं गमेमाश्विना तदुश्मसि | ११ |
| आ वामगन्त्सुमतिर्वीजिनीवसू | न्यश्विना हत्सु कामा अयंसत । | |
| अभूतं गोपा मिथुना शुभस्पती | प्रिया अर्यम्णो दुर्यो अशीमहि | १२ |
| ता मन्दसाना मनुषो दुरोण आ | धत्तं रथि सहवीरं वचस्यवे । | |
| कृतं तीर्थं सुप्रपाणं शुभस्पती | स्थाणुं पथेष्ठामपं दुर्मतिं हतम् | १३ |
| कं स्विदद्य कतमास्वश्विना | विभु दस्ता मादयेते शुभस्पती । | |
| क इ नि येमे कतमस्य जग्मतु | विप्रस्य वा यजमानस्य वा गृहम् | १४ ६१० |

॥६५॥ (ऋ. १०.४१।१-३)

(६११-६१३) सुहस्त्यो घौषेयः । जगती ।

| | | |
|------------------------------------|---------------------------------|-------|
| समानमु त्यं पुरुहूतमुक्थ्यं | रथं त्रिचक्रं सर्वना गनिगमतम् । | |
| परिजमानं विदुष्यं सुवृक्तिभिर्व्यं | व्युष्टा उषसो हवामहे | १ |
| प्रातर्युजं नासत्याधि तिष्ठथः | प्रातर्यावाणं मधुवाहनं रथम् । | |
| विशो येन गच्छथो यज्वरीनरा | कीरेष्विद् यज्ञं होतमन्तमश्विना | २ |
| अध्वर्यु वा मधुपाणिं सुहस्त्यं | मग्निधे वा धृतदक्षं दमूनसम् । | |
| विप्रस्य वा यत् सर्वनानि गच्छथो | ऽत आ यातं मधुपेयमश्विना | ३ ६१३ |

॥६६॥ (ऋ. १०।१०६।१-११)

(६१४-६२४) भूतांशः काश्यपः । त्रिष्टुप् ।

| | |
|---|--------|
| उभा उ नूनं तदिदर्थयेथे वि तन्वाथे धियो वस्त्रापसैव । | |
| सध्रीचीना यातवे प्रेमजीगः सुदिनेव पृक्ष आ तंसयेथे | १ |
| उष्टारेव फर्वरेषु श्रयेथे प्रायोगेव श्वाच्या शासुरेथः । | |
| दूतेव हि ष्ठो यशसा जनेषु मापं स्यातं महिषेवावपानात् | २ ६१५ |
| साकंयुजा शकुनस्यैव पक्षा पश्वेव चित्रा यजुरा गमिष्टम् । | |
| अग्निरिव देवयोर्दीदिवांसा परिजमानेव यजथः पुरुत्रा | ३ |
| आपी वो अस्मे पितरेव पुत्रो—ग्रेव रुचा नृपतीव तुर्यै । | |
| इर्यैव पुष्ट्यै किरणैव भुज्यै श्रुष्टीवानेव हवमा गमिष्टम् | ४ |
| वंसंगेव पूष्यी शिम्बाता मित्रेव क्रता शतरा शातपन्ता । | |
| वाजैवोच्चा वयसा घर्म्येष्ठा मेघेवेषा संपर्याङ्गं पुरीषा | ५ |
| सृण्यैव जर्भरी तुर्फरीतू नैतोशेव तुर्फरी पर्फरीका । | |
| उदुन्यजेव जेमना मदेरू ता मे जराय्वजरं मरायु | ६ |
| पञ्जेव चर्चरं जारं मरायु क्षत्रेवार्थेषु तर्तरीथ उग्रा । | |
| क्रभू नापत् खरमज्रा खरज्जु—व्यायुर्न पर्फरत् क्षयद् रयीणाम् | ७ ६२० |
| घर्मेव मधु जठरं सनेरू भगेविता तुर्फरी फारिवारम् । | |
| पतरेव चचरा चन्द्रनिर्णिङ् मनःक्रङ्गा मनन्याङ्गं न जग्मी | ८ |
| बृहन्तेव गम्भरेषु प्रतिष्ठां पादेव गाधं तरते विदाथः । | |
| कर्णेव शासुरनु हि स्मराथो—ऽशैव नो भजतं चित्रमम्रः | ९ |
| आरङ्गरेव मध्वरेयेथे सारधेव गर्वि नीचीनवारे । | |
| कीनारेव स्वेदमासिष्विद्वाना क्षामेवोर्जा स्रयवसात् संचेथे | १० |
| क्रध्याम स्तोमं सनुयाम वाज—मा नो मन्त्रं सरथेहोपं यातम् । | |
| यशो न पक्कं मधु गोष्वन्त—रा भूतांशो अश्विनोः काममप्राः | ११ ६२४ |

॥६७॥ (ऋ. १०।१३१।४—५)

(६२५-६२६) सुकीर्तिः काक्षीवतः । ४ अनुष्टुप्, ५ त्रिष्टुप् ।

युवं सुराममश्विना नमुचावासूरे सचा । विपिपाना शुभस्पती इन्द्रं कर्मस्वावतम् ६२५

पुत्रमिव पितरावश्विनोभेन्द्रावधुः काव्यैर्दसनाभिः ।
यत् सुरामं व्यपिबः शचीभिः सरस्वती त्वा मघवन्नभिष्णक्

५ ६१६

॥६८॥ (ऋ. १०।१४३।१-६)

(६२७-६३२) अत्रिः सांख्यः । अनुष्टुप् ।

त्यं चिदत्रिमृतजुरमर्थमश्वं न यातवे ।
कक्षीवन्तं यदी पुना रथं न कृणुथो नवम्
त्यं चिदश्वं न वाजिनमरेणवो यमत्तत ।
दृळ्हं ग्रन्थि न विष्यतमत्रि यविष्ठमा रजः
नरा दंसिष्ठावत्रये शुभ्रा सिषासतं धियः ।
अथा हि वां दिवो नरा पुनः स्तोमो न विशसे
चिते तद् वां सुराधसा रातिः सुमतिरश्विना ।
आ यन्नः सदेने पृथौ समने पर्षथो नरा
युवं भुज्युं समुद्र आ रजसः पार ईक्षितम् ।
यातमच्छा पतत्रिभिर्नासत्या सातये कृतम्
आ वां सुमैः शंयू इव मंहिष्ठा विश्ववेदसा ।
समस्मे भूषतं नरोत्सं न पिप्युषीरिषः

१

२

३

४ ६३०

५

६ ६३२

॥६९॥ (ऋ. १०।१८४।३)

(६३३) त्वष्टा गर्भकर्ता, विष्णुर्वा प्राजापत्यः । अनुष्टुप् ।

हिरण्ययी अरणी यं निर्मन्थतो अश्विना ।
तं ते गर्भं हवामहे दशमे मासि स्रतवे

३ ६३३

॥७०॥ (६३४-६३८) (वा. य. १४।१-५)

ध्रुवक्षितिध्रुवयोनिध्रुवासि ध्रुवं योनिमासीद साधुया ।
उख्यस्य केतुं प्रथमं जुषाणाश्विनाध्वर्यु सादयतामिह त्वा
कुलायिनीं घृतवती पुरन्धिः स्योने सीद सदेने पृथिव्याः ।
अभि त्वा रुद्रा वसवो गृणान्तिवमा ब्रह्म पीपिहि सौमगायाश्विनाध्वर्यु
सादयतामिह त्वा

१

२ ६३५

स्वैर्दक्षैर्दक्षपितेह सीद देवानां सुमे बृहते रणाय ।

पितेवैधि सूनवऽआ सुशेवा स्वावेशा तन्वा संविशस्वाश्विनां ध्वर्यू सादयतामिह त्वा ३

पृथिव्याः पुरीषमस्यप्सो नाम तां त्वा विश्वेऽअभिगृणन्तु देवाः ।

स्तोमपृष्ठा घृतवतीह सीद प्रजावदस्मे द्रविणायजस्वाश्विनां ध्वर्यू सादयातामिह त्वा ४

अदित्यास्त्वा पृष्ठे सादयाम्यन्तरिक्षस्य धर्त्रीं विष्टम्भनीं दिशामधिपत्नीं भुवनानाम् ।

ऊर्मिर्द्रप्सोऽअपामसि विश्वकर्मा तऽऋषिरश्विनां ध्वर्यू सादयतामिह त्वा ५ ६३८

॥७१॥ (६३९--६४०) (वा. य. ३८।१०, १३)

विश्वाऽआशा दक्षिणसद् विश्वान् देवानयाडिह ।

स्वाहाकृतस्य घर्मस्य मर्धोः पिबतमश्विना १०

अपातामश्विनां घर्ममनु द्यावापृथिवीऽअमसाताम् ।

इहैव रातयः सन्तु १३ ६४०

॥७२॥ (साम० ३०५)

(६४१) अश्विनौ वैवस्यतौ । बृहती ।

कुष्ठः को वामश्विना तपानो देवा मर्त्यः ।

मता वामश्मया क्षयमाणोऽशुनेत्थमु आद्रन्यथा ३ ६४१

॥७३॥ (अथर्व० २।२९।६)

(६४२—६४५) अथर्वा । त्रिष्टुप् ।

शिवाभिष्टे हृदयं तर्पयाम्यनमीवो मोदिषीष्ठाः सुवर्चाः ।

सवासिनौ पिबतां मन्थमेतमश्विनौ रूपं परिधाय मायाम् ६

॥७४॥ (अथर्व० ६।५०।१-३)

अथर्वा (अभयकामः) । १ विराड् जगती, २-३ पथ्यापङ्क्तिः ।

हतं तर्द समङ्कमाखुमश्विना छिन्तं शिरो अपि पृष्ठीः शृणीतम् ।

यवाच्चेदुदानपि नह्यतं मुखमथार्भयं कणुतं धान्यायि १

तर्द है पतङ्ग है जभ्य हा उपक्वस ।

ब्रह्मेवासंस्थितं हविरनन्दन्त इमान्यवानहिंसन्तो अपोदित २ ६४४

तर्दीपते वर्धापते तृष्टजम्भा आ शृणोत मे ।

य आरण्या व्यद्विरा ये के च स्थ व्यद्विरास्तान्त्सर्वान् जम्भयामसि

३ ६४५

॥७५॥ (अथर्व० २।३०।२)

(६४६) प्रजापतिः । अनुष्टुप् ।

सं चेन्नयाथो अश्विना कामिना सं च वर्क्षथः ।

सं वां भगांसो अगमत सं चित्तानि समु व्रता

२ ६४६

॥७६॥ (अथर्व० ६।१०२।१-३)

(६४७—६४९) जमदग्निः । अनुष्टुप् ।

यथायं वाहो अश्विना समैति सं च वर्तते । एवा मामभि ते मनः समैतु सं च वर्तताम् १
आहं खिदामि ते मनो राजाश्वः पृष्टयामिव । रेण्मच्छिन्नं यथा तृणं मयि ते वेष्टतां मनः २
आञ्जनस्य मुदुघस्य कुष्ठस्य नलदस्य च । तुरो भगस्य हस्ताभ्यामनुरोधनमुद्धरे ३

६४९

॥७७॥ (अथर्व० ६।१४१।१-३)

(६५०—६५२) विश्वामित्रः । अनुष्टुप् ।

वायुरेनाः समाकर्तु त्वष्टा पोषाय प्रियताम् । इन्द्र आभ्यो अधि ब्रवद् रुद्रो भूमे चिकित्सतु १
लोहितेन स्वधितिना मिथुनं कर्णयोः कृधि । अकर्तामश्विना लक्ष्म तदस्तु प्रजया बहु २
यथा चक्रुर्देवासुरा यथा मनुष्या उत । एवा सहस्रपोषाय कृणुतं लक्ष्माश्विना ३

६५२

अश्विसहचारी-देवगणः ।

(१) अश्विसरस्वतीन्द्राः ।

+॥७८॥ (६५३—६६९) (वा. य. १९।३३-३५)

यस्ते रसः सम्भृतऽओषधीषु सोमस्य शुष्मः सुरया सुतस्य ।

तेन जित्व यजमानं मदेन सरस्वतीमश्विनाविन्द्रमग्निम्

३३

यमश्विना नमुचेरासुरादधि सरस्वत्यसुनोदिन्द्रियाय ।

इमं तं शुक्रं मधुमन्तमिन्दुं सोमं राजानमिह भक्षयामि

३४

यदत्र रिप्तं रसिनः सुतस्य यदिन्द्रोऽअर्पिवच्छचीभिः ।

अहं तदस्य मनसा शिवेन सोमं राजानमिह भक्षयामि

३५ ६५५

+वा० य० २०।५५-६६; २१।२९-४० । दै०[अग्निः] २०२५—२०३६; २०४८—२०५९

„ „ १९।३२,८०—५९; २०।७३—७७,८०,९० । दै०[इन्द्रः] २९३७—२९५३; २९५७—२९६३ ।

॥७९॥ (वा. य. २०।६७-६९)

अश्विना हविरिन्द्रियं नमुचेर्धिया सरस्वती ।

आ शुक्रमासुरादसु मधमिन्द्राय जग्निरे

६७

यमश्विना सरस्वती हविषेन्द्रमवर्धयन् ।

स विभेद वलं मधं नमुचावासुरे सचा

६८

तमिन्द्रं पशवः सचाश्विनोभा सरस्वती ।

दधानाऽअभ्युनूषत हविषा यज्ञऽइन्द्रियैः

६९

॥८०॥ (वा. य. २१।४८-५८)

देवं बर्हिः सरस्वती सुदेवमिन्द्रेऽअश्विना ।

तेजो न चक्षुरक्ष्योर्बर्हिषा दधुरिन्द्रियं वसुवने वसुधेयस्य व्यन्तु यजं

४८

देवीद्वारोऽअश्विना भिषजेन्द्रे सरस्वती ।

प्राणं न वीर्यं नसि द्वारो दधुरिन्द्रियं वसुवने वसुधेयस्य व्यन्तु यजं

४९

६६०

देवीऽउषासावश्विना सुत्रामेन्द्रे सरस्वती ।

बलं न वाचमास्य ऽउषाभ्यां दधुरिन्द्रियं वसुवने वसुधेयस्य व्यन्तु यजं

५०

देवी जोष्टी सरस्वत्यश्विनेन्द्रमवर्धयन् ।

श्रोत्रं न कर्णयोर्यशो जोष्टीभ्यां दधुरिन्द्रियं वसुवने वसुधेयस्य व्यन्तु यजं

५१

देवीऽऊर्जाहुती दुधे सुदुधेन्द्रे सरस्वत्यश्विना भिषजावतः ।

शुक्रं न ज्योति स्तनयोराहुती धत्तऽइन्द्रियं वसुवने वसुधेयस्य व्यन्तु यजं

५२

देवा देवानां भिषजा होताराविन्द्रमश्विना ।

वषट्कारैः सरस्वती त्विषिं न हृदये मतिः होतृभ्यां दधुरिन्द्रियं

वसुवने वसुधेयस्य व्यन्तु यजं

५३

देवीस्तिस्तिस्तिस्त्रो देवीरश्विनेडा सरस्वती ।

शूषं न मध्ये नाभ्यामिन्द्राय दधुरिन्द्रियं वसुवने वसुधेयस्य व्यन्तु यजं

५४

६६५

देवऽइन्द्रो नराशंसस्त्रिवरूथः सरस्वत्यश्विभ्यामीयते रथः ।

रेतो न रूपममृतं जनित्रमिन्द्राय त्वष्टा दधदिन्द्रियाणि वसुवने वसुधेयस्य व्यन्तु यजं

५५

देवो देवैर्वनस्पतिर्हिरण्यपर्णो ऽअश्विभ्यां सरस्वत्या सुपिप्पलऽइन्द्राय पच्यते मधु ।

ओजो न जूतिर्ऋषभो न भामं वनस्पतिर्नो दधदिन्द्रियाणि

वसुवने वसुधेयस्य व्यन्तु यजं

५६

६६७

देवं बर्हिर्वारितीनामध्वरे स्तीर्णमश्विभ्यामूर्णप्रदाः सरस्वत्या स्योनमिन्द्र ते सदैः ।
 ईशायै मन्युः राजानं बर्हिषा दधुरिन्द्रियं वसुवने वसुधेयस्य व्यन्तु यज ५७
 देवोऽग्निः स्विष्टकृद् देवान् यक्षद् यथायथः होताराविन्द्रमश्विनो वाचा वाचः सरस्वती-
 मग्निः सोमः स्विष्टकृत् स्विष्टऽइन्द्रः सुत्रामा सविता वरुणो भिषगिष्ठो देवो वनस्पतिः स्विष्टा
 देवाऽआज्यपाः स्विष्टोऽग्निरग्निना होता होत्रे स्विष्टकृद् यज्ञो न दधदिन्द्रियमूर्जमपचितिः
 स्वधां वसुवने वसुधेयस्य व्यन्तु यज ५८ ६६९

(२) अश्विसूर्यादयः ।

॥८१॥ (वा० य० ३८।१२)

अश्विना घर्म पातः हार्द्वानुमहर्दिवाभिरूतिभिः ।
 तन्त्रायिणे नमो द्यावापृथिवीभ्याम्

१२ ६७०

(३) अश्विनौ, बृहस्पतिः ।

॥८२॥ (अथर्व० ५।२६।१२)

(६७१) ब्रह्मा । परानिशक्वरी चतुष्पदा गायत्री ।

अश्विना ब्रह्मणा यातमर्वाश्चौ वषट्कारेण यज्ञं वर्धयन्तौ ।
 बृहस्पते ब्रह्मणा याह्यर्वाङ् यज्ञो अयं स्वर्दिदं यजमानाय स्वाहा

१२ ६७१

(४) श्येनः, अश्विनौ ।

॥८३॥ (अथर्व० ३।३।४)

(६७२—६८८) अथर्वा । त्रिष्टुप् ।

श्येनो हव्यं मेयत्वा परस्मादन्यक्षेत्रे अपरुद्धं चरन्तम् ।
 अश्विना पन्थां कणुतां सुगं त इमं संजाता अभिसंविशध्वम्

४

(५) अश्विनौ, द्यौष्पिता ।

॥८४॥ (अथर्व० ६।४।३) त्रिष्टुप् विराङ् गायत्री ।

द्यौये समश्विना प्रावतं न उरुष्या ण उरुज्मन्नप्रयुच्छन् ।
 द्यौःपितर्यावय दुच्छुना या

५ ६७३

(६) बृहस्पतिः, अश्विनौ ।

॥८५॥ (अथर्व० ६।६९।१-३) अनुष्टुप् ।

गिरावरगंराटेषु हिरण्ये गोषु यद्यशः । सुरायां सिच्यमानायां कीलाले मधु तन्मयि १
 अश्विना सारधेर्ण मा मधुनाङ्क्तं शुभस्पती । यथा भर्गस्वतीं वाचमावदानि जनां अनु ६७५
 मयि वर्चो अथो यशोऽथो यज्ञस्य यत् पर्यः । तन्मयि प्रजापतिर्दिवि द्यामिव दंहतु ३

(७) सांमनस्यं, अश्विनौ ।

॥८६॥ (अथर्व० ७।५२।१-२) १ ककुम्मत्यनुष्टुप्, २ जगती ।

संज्ञानं नः स्वेभिः संज्ञानमरणेभिः ।
 संज्ञानमश्विना युवमिहास्मासु नि यच्छतम् १
 सं जानामहै मनसा सं चिकित्वा मा युष्महि मनसा दैव्येन ।
 मा घोषा उत्स्थुर्बहुले विनिर्हते मेघुः पशुदिन्द्रस्याहन्यागते २

(८) घर्मः, अश्विनौ ।

॥८७॥ (अथर्व० ७।७३।१-५, ८) १, ४ जगती, २ पथ्याबृहती, ३, ५, ८ त्रिष्टुप् ।

समिद्धो अग्निर्वृषणा रथी दिवस्तप्तो घर्मो दुह्यते वामिषे मधु ।
 वयं हि वां पुरुदमासो अश्विना हवामहे सधमादेषु कारवः १
 समिद्धो अग्निरश्विना तप्तो वां घर्म आ गतम् ।
 दुह्यन्ते नूनं वृषणेह धेनवो दत्ता मदन्ति वेधसः २ ६८०
 स्वाहाकृतः शुचिर्देवेषु यज्ञो यो अश्विनोश्चमसो देवपानः ।
 तसु विश्वे अमृतासो जुषाणा गन्धर्वस्य प्रत्यास्ना रिहन्ति ३
 यदुस्त्रियास्वाहुतं घृतं पयोऽयं स वामश्विना भाग आ गतम् ।
 माध्वीं धर्तारा विदथस्य सत्पती तप्तं घर्मं पिबतं रोचने दिवः ४
 तप्तो वां घर्मो नक्षतु स्वहोता प्र वामध्वर्युश्चरतु पर्यस्वान् ।
 मधोर्दुग्धस्याश्विना तनायां बीतं पातं पर्यस उस्त्रियायाः ५
 द्विङ्कुण्वती वसुपत्नी वधूनां वत्समिच्छन्ती मनसा न्यागन् ।
 दुहामश्विभ्यां पयो अह्येयं सा वर्धतां महते सौभगाय ८ ६८४

(९) मधु, अश्विनौ ।

॥८८॥ (अथर्व० ९।१।११, १६-१७, १९) अनुष्टुप्, १७ उपरिष्ठाद्विराड् बृहती ।

यथा सोमः प्रातःसवने अश्विनोर्भवति प्रियः ।

एवा मे अश्विना वर्च आत्मनि प्रियताम् ११ ६८५

यथा मधु मधुकृतः संभरन्ति मधावधि ।

एवा मे अश्विना वर्च आत्मनि प्रियताम् १६

यथा मक्षा इदं मधु न्यञ्जन्ति मधावधि ।

एवा मे अश्विना वर्चस्तेजो बलमोजश्च प्रियताम् १७

अश्विना सारघेण मा मधुनाङ्क्तं शुभस्पती ।

यथा वर्चस्वतीं वाचमावदानि जनां अनु १९ ६८८

(१०) सिनीवालीसरस्वत्यश्विनः ।

॥८९॥ (ऋ. १०।१८४।२)

(६८९) त्वष्टा गर्भकर्ता, विष्णुर्वा प्राजापत्यः । अनुष्टुप् ।

गर्भे धेहि सिनीवालि गर्भे धेहि सरस्वति ।

गर्भे ते अश्विनौ देवा—वा धत्तां पुष्करस्रजा २ ६८९



अश्विनौ-देवता-पुनरुक्त-मन्त्रभागाः ।

ऋग्वेदस्य प्रथमं मण्डलम् ।

- [५] १।२२।१ (मेधातिथिः काण्वः । अश्विनौ)
अश्विनावेह गच्छताम् ।
अस्य सोमस्य पीतये ।
(२८४) ५।७५।७ (अवस्युरात्रेयः । अश्विनौ)
अश्विनावेह गच्छतं ।
(२९७) ५।७८।१ (सप्तवधिरात्रेयः । अश्विनौ)
(इन्द्रः ३२१३) १।२३।२ (मेधातिथिः काण्वः । इन्द्रवायू)
—हवामहे ।
अस्य सोमस्य पीतये ।
(इन्द्रः ३३२१) ४।४९।५ (वामदेवो गौतमः । इन्द्रावृहस्पती)
५।७१।३ (बाहुवृक्त आत्रेयः । मित्रावरुणा)
अस्य... ।
(इन्द्रः ३०५५) ६।५९।१० (भरद्वाजो बार्हस्पत्यः । इन्द्राग्नी)
अस्य... ।
(इन्द्रः ६३३) ८।७६।६ (कुरुमुतिः काण्वः । इन्द्रः)
अस्य... ।
(मरुतः ४०४-६) ८।९४।१०-१२ (बिन्दुः पूतदक्षो
वा आङ्गिरसः । मरुतः)
[६] १।२२।२ (मेधातिथिः काण्वः । अश्विनौ)
उभा देवा दिविस्पृशा । ...हवामहे ।
(इन्द्रः ३२१३) १।२३।२ (मेधातिथिः काण्वः । इन्द्रवायू)
उभा देवा दिविस्पृशेन्द्रवायू हवामहे ।
[७] १।२२।३ तथा यज्ञं मिमिक्षतम् ।
(४२) १।४७।४ मन्वा यज्ञं मिमिक्षतम् ।
[१०] १।३०।१८ (शुनःशेष आजीगर्तिः । अश्विनौ)
समानयोजनो हि वां रथो दस्त्रावमर्त्यः ।
(२८६) ५।७५।९ (अवस्युरात्रेयः । अश्विनौ)
अयोजि वां वृषण्वसू रथो दस्त्रावमर्त्यः ।
[११] १।३०।१९ (शुनःशेष आजीगर्तिः । अश्विनौ)
चक्रं रथस्य येमथुः। परि दामन्यदीयते ।
(२६०) ५।७३।३ (पीर आत्रेयः । अश्विनौ)
ईर्मन्यद् वपुषे वपुश्चक्रं रथस्य येमथुः ।
पर्यन्या... दीयथः ।

- [११] १।३४।१० (हिरण्यस्तूप आङ्गिरसः । अश्विनौ)
मध्वः पिवतं मधुपेभिरासभिः ।
...रथम् ।
(२३९) ४।४५।३ (वामदेवो गौतमः । अश्विनौ)
.....आ रजः । —रथम् ।
[१२] १।३४।११ आ नासत्या त्रिभिरेकादशैः ।
(५११) ८।३५।३ (श्यावाश्व आत्रेयः । अश्विनौ)
विश्वेदेवैस्त्रिभिरेकादशैः ।
[१३] १।३४।११ (हिरण्यस्तूप आङ्गिरसः । अश्विनौ)
प्रायुस्तारिष्टं नी रपांसि मृक्षतं सेधतं द्वेषो
भवतं सचाभुवा ।
(१६६) १।१५।७।४ (दीर्घतमा औचथ्यः । अश्विनौ)
[१३] १।३४।१२ (हिरण्यस्तूप आङ्गिरसः । अश्विनौ)
वामवसे जोहवीमि वृधे च नो भवतं वाजसातौ ।
(७५) १।१२।२४ (कुत्स आङ्गिरसः । अश्विनौ)
अवसे नि ह्ये वां वृधे च नो भवतं वाजसातौ ।
[१५] १।४६।२ (प्रस्कण्वः काण्वः । अश्विनौ)
मनोतरा रथीणाम् ।
(४३२) ८।८।१२ (सध्वंसः काण्वः । अश्विनौ)
[१६] १।४६।३ (प्रस्कण्वः काण्वः । अश्विनौ)
यद् वां रथो विभिष्पतात् ।
(४०५) ८।५।२२ (ब्रह्मातिथिः काण्वः । अश्विनौ)
[३०] १।४६।७ (प्रस्कण्वः काण्वः । अश्विनौ)
युञ्ज्वाथामश्विना रथम् ।
(५४०) ८।७३।१ (गोपवन आत्रेयः सप्तवधिरा । अश्विनौ)
[३९] १।४७।१ (प्रस्कण्वः काण्वः । अश्विनौ)
अयं वां मधुमत्तमः सुतः सोम ऋतावृधा ।
२।४१।४ (गुत्समदः शौनकः । मित्रावरुणा)
अयं वां मित्रावरुणा सुतः सोम ऋतावृधा ।
[४०] १।४७।२ (प्रस्कण्वः काण्वः । अश्विनौ)
रथेना यातमश्विना ।
(४३१) ८।८।११ (सध्वंसः काण्वः । अश्विनौ)
अतः सहस्रनिर्णिजा रथेना यातमश्विना ।

(४३४) ८।८।१४ (सध्वंसः काण्वः । अश्विनौ)
अतः— ।

[४१] १।४७।३ (प्रस्कण्वः काण्वः । अश्विनौ)

पातं सोममृतावृषा ।

—दाध्वांसमुप गच्छतम् ।

(४३) १।४७।५ (प्रस्कण्वः काण्वः । अश्विनौ)

पातं— ।

३।६२।१८ (विश्वामित्रो गाथिनः, जमदग्निर्वा । मित्रावरुणौ)

पातं— ।

७।६६।१९ (वसिष्ठो मैत्रावरुणिः । मित्रावरुणौ)

पातं— ।

(५७६) ८।८७।५ (कृष्ण आङ्गिरसो युन्नीको वा वासिष्ठः,

प्रियमेध आङ्गिरसो वा । अश्विनौ)

पातं— ।

(इन्द्रः ३२२४) ४।४६।५ (वामदेवो गौतमः । इन्द्रवाय)

दाध्वांसमुप गच्छतम् ।

[४१:४४] १।४७।३,६ (प्रस्कण्वः काण्वः । अश्विनौ)

अथाय (६ सुदासे) दस्त्रा वसु विभ्रता ।

[४२] १।४७।४ मध्वा यज्ञं मिमिक्षतम् ।

(७) १।२२।३ तथा यज्ञं— ।

[,,] १।४७।४ (प्रस्कण्वः काण्वः । अश्विनौ)

युवां हवन्ते अश्विना ।

(४००) ८।५।१७ (ब्रह्मातिथिः काण्वः । अश्विनौ)

[४३] १।४७।५ ताभिः प्वश्मिमा अवतं शुभस्पती ।

(इन्द्रः ३२०४) ८।५९ (वाल० ११) । ३

(सुपर्णः काण्वः । इन्द्रावरुणौ)

ताभिर्दाध्वांसमवतं शुभस्पती ।

[४५] १।४७।७ (प्रस्कण्वः काण्वः । अश्विनौ)

यन्नासत्या परावति यद् वा स्थो अधि तुर्वशे ।

अतो रथेन सुवृता न आ गतं साकं सूर्यस्य

रश्मिभिः ॥

(४३४) ८।८।१४ (सध्वंसः काण्वः । अश्विनौ)

यन्नासत्या परावति यद् वा स्थो अध्यम्बरे ।

अतः सहस्रनिर्णिजा रथेना यातमश्विनौ ।

१।१३७।२ (परुच्छेपो दैवोदासिः । मित्रावरुणौ)

साकं सूर्यस्य रश्मिभिः ।

५।७९।८ (सत्यध्रवा आत्रेयः । उषाः)

साकं सूर्यस्य रश्मिभिः ।

८।१०१।२ (जमदग्निर्भार्गवः । मित्रावरुणौ)

साकं सूर्यस्य रश्मिभिः ।

[४६] १।४७।८ (प्रस्कण्वः काण्वः । अश्विनौ)

अर्वाङ्घ्रिवा वां सप्तयोऽध्वरश्रियो वहन्तु
सवनेदुप ।

इयं पृथ्वन्ता सुकृते सुदानव आ बर्हिः सीदतं नरा ॥

(इन्द्रः २४२) ८।४।१४ (देवातिथिः काण्वः । इन्द्रः)

अर्वाङ्घ्रिं त्वा सप्तयोऽध्वरश्रियो— ।

१।९२।३ (गोतमो राहूगणः । उषाः)

इयं वहन्तीः सुकृते सुदानवे ।

(५७३) ८।८७।२ (कृष्ण आङ्गिरसो युन्नीको वा वासिष्ठः,

प्रियमेध आङ्गिरसो वा । अश्विनौ)

आ बर्हिः सीदतं नरा ।

(५७५) ८।८७।४ (कृष्ण आङ्गिरसो... । अश्विनौ)

आ बर्हिः सीदतं सुमत् ।

[४७] १।४७।९ (प्रस्कण्वः काण्वः । अश्विनौ)

तेन नासत्या गतं रथेन सूर्यत्वचा ।

(४७६) ८।२२।५ (सोमरिः काण्वः । अश्विनौ)

...तेन नासत्या गतम् ।

(४२२) ८।८।२ (सध्वंसः काण्वः । अश्विनौ)

रथेन सूर्यत्वचा ।

[,,] १।४७।९ मध्वः सोमस्य पीतये ।

(५५८-५६३) ८।८५।१-९ (कृष्ण आङ्गिरसः । अश्विनौ)

[४९] १।९२।१६ (गोतमो राहूगणः । अश्विनौ)

अर्वाङ्ग रथं समनसा नि यच्छतम् ।

(३७९) ७।७४।२ (वसिष्ठो मैत्रावरुणिः । अश्विनौ)

(५३०) ८।३५।२२ (श्यावाश्व आत्रेयः । अश्विनौ)

अर्वाङ्ग रथं नि यच्छतं ।

[५०] १।९२।१७ (गोतमो राहूगणः । अश्विनौ)

आ न ऊर्जं वहतमश्विना युवम् ।

(२६६) १।१५७।४ (दीर्घतमा औचथ्यः । अश्विनौ)

[५१] १।९२।१८ (गोतमो राहूगणः । अश्विनौ)

दस्त्रा हिरण्यवर्तनी ।

(२७९) ५।७५।२ (अवस्युरात्रेयः । अश्विनौ)

(३९४) ८।५।११ (ब्रह्मातिथिः काण्वः । अश्विनौ)

(४२१) ८।८।१ (सध्वंसः काण्वः । अश्विनौ)

(५७६) ८।८७।५ (कृष्ण आङ्गिरसो युन्नीको वा वासिष्ठः,

प्रियमेध आङ्गिरसो वा । अश्विनौ)

[,,] १।९२।१८ उपवृथो वहन्तु सोमपीतये ।

(इन्द्रः ११०) ८।१२।४ (मेधातिथि-मेघातिथी

काण्वौ । इन्द्रः)

- [५२-७४] १।११२।१-२३ (कुत्स आङ्गिरसः । अश्विनौ)
ताभिरु षु ऊतिभिरश्विना गतम् ।
- [५६] १।११२।५ (कुत्स आङ्गिरसः । अश्विनौ)
यामी रेभं निवृतं सितमद्भ्य उद्वन्दनमैरयतं स्वर्हशे ।
(१३२) १।११८।६ (कक्षीवान् औशिजो दैर्घतमसः ।
अश्विनौ)
उद्वन्दनमैरयतं दंसानाभिरु रेभं ।
- [५९] १।११२।८ याभिर्वर्तिकां ग्रसिताममुञ्चतं ।
(५९५) १०।३९।१३ (काक्षीवती घोषा । अश्विनौ)
वर्तिकां...युवं शचीभिर्ग्रसिताममुञ्चतम् ।
- [७१] १।११२।२० (कुत्स आङ्गिरसः । अश्विनौ)
भुज्युं याभिरवथो याभिरधिगुम् ।
(४८१) ८।२२।१० (सोमः । काण्वः । अश्विनौ)
याभिः पक्थमवथो याभिरधिगुम् ।
- [७५] १।११२।२४=(२३) १।३४।१२ (हिरण्यस्तूप आङ्गिरसः ।
अश्विनौ)
वृधे च नो भवतं वाजसातौ ।
- [७६] १।११२।२५ तन्नो मित्रो वरुणो मामहन्ताम-
दितिः सिन्धुः पृथिवी उत द्यौः ।
=(अग्निः २७१) १।९४।१६; (१८७८) १।९५।११;
(१८७८) १।९६।९; (१७२६) १।९८।३
=(इन्द्रः ९७५) १।१००।१९; (८२७) १।१०१।११;
(८३८) १।१०२।११; (८४६) १।१०३।८; (३०२०)
१।१०८।१३; (३०२८) १।१०९।८
१।१०५।१९ (त्रित आत्यः कुत्स आङ्गिरसो वा । विश्वे देवाः)
=१।१०६।७=१।१०७।३ (कुत्स आङ्गिरसः । विश्वे देवाः)
=१।११०।२=१।१११।५ (कुत्स आङ्गिरसः । ऋभवः)
=१।११३।२० (कुत्स आङ्गिरसः । उषाः)
=१।११४।११ (कुत्स आङ्गिरसः । रुद्रः)
=१।११५।६ (कुत्स आङ्गिरसः । मरुतः)
(सोमः ९१४) ९।९७।५८ („ „ । सोमः)
- [८३] १।११६।७ (कक्षीवान् औशिजो दैर्घतमसः । अश्विनौ)
युवं नरा स्तुवते पञ्जियाय कक्षीवते ।
कारोतराच्छपादश्वस्य वृष्णः शतं कुम्भाँ असि-
ञ्चतं सुरायाः ।
(१०८) १।११७।७ (कक्षीवान् औशिजो दैर्घतमसः । अश्विनौ)
युवं नरा स्तुवते कृष्णियाय ।
(१०७) १।११७।६ (कक्षीवान् औशिजो दैर्घतमसः । अश्विनौ)
तद् वां नरा शंस्यं पञ्जियेण कक्षीवता... ।
शपादश्वस्य पाजिनो जनाय शतं कुम्भाँ ।

- असिञ्चतं मधूनाम् ।
- [९२] १।११६।१६ (कक्षीवान् औशिजो दैर्घतमसः । अश्विनौ)
शतं मेषान् वृक्ये चक्षदानमृज्जाश्वं तं
पितान्धं चकार ।
तस्मा अक्षी नासत्या विचक्ष आधत्तं ।
(११८) १।११७।१७ (कक्षीवान् औशिजो दैर्घतमसः ।
अश्विनौ)
शतं मेषान् वृक्ये मामहानं तमः...पित्रा ।
आक्षी ऋज्जाश्वे अश्विनावधत्तं...विचक्षे ।
(११९) १।११७।१८ चक्षदान ऋज्जाश्वः शतमेकं
च मेषान्
- [१०३] १।११७।२ (कक्षीवान् औशिजो दैर्घतमसः । अश्विनौ)
यो वामश्विना मनसो जवीयान् ।
येन गच्छथः सुकृतो दुरोणं ।
(२०२) १।१८३।१ (अगस्त्यो मैत्रावरुणिः । अश्विनौ)
मनसो यो जवीयान् ।
येनोपयाथः सुकृतो दुरोणं ।
- [१०७] १।११७।६=(८३) १।११६।७ (कक्षीवान् औशिजो
दैर्घतमसः । अश्विनौ)
शतं कुम्भाँ असिञ्चतं मधूनाम् (७सुरायाः) ।
- [१०८] १।११७।७=(८३) १।११६।७ युवं नरा स्तुवते
कृष्णियाय (७ पञ्जियाय) ।
- [११०] १।११७।९ (कक्षीवान् औशिजो दैर्घतमसः । अश्विनौ)
पेद्व ऊहयुराशुमश्वम् ।
(३६६) ७।७१।५ (वसिष्ठो मैत्रावरुणिः । अश्विनौ)
- [११८] १।११७।१७=(९२) १।११६।१६ शतं मेषान्
वृक्ये मामहानं (१६ चक्षदानम्) ।
- [१२१] १।११७।२० (कक्षीवान् औशिजो दैर्घतमसः । अश्विनौ)
युवं शचीभिर्विमदाय जायां न्यूहथुः पुरु-
मित्रस्य योषाम् ।
(५८९) १०।३९।७ (कक्षीवती घोषा । अश्विनौ)
युवं रथेन विमदाय शुन्ध्युवं न्यूहथुः पुरु-
मित्रस्य योषणाम् ।
- [१२२] १।११७।२१ (कक्षीवान् औशिजो दैर्घतमसः । अश्विनौ)
अभि दस्युं बकुरेणा धमन्तो रु ज्योतिश्चक्रु-
रार्याय ।
(अग्निः १७९९) ७।५।६ (वसिष्ठो मैत्रावरुणिः । वैश्व-
नरोऽग्निः)
त्वं दस्यूरोकमो अग्न आज उरु ज्योतिर्जनय-
न्त्यार्याय ।

[१२४] १।११७।२३ (कक्षीवान् औशिजो दैर्घतमसः । अश्विनौ)
अपत्यसाचं धृत्यं रराथाम् ।

(इन्द्रः ३२७५) ६।७२।५ (बार्हस्पत्यो भरद्वाजः । इन्द्रासोमौ)
—धृत्यं रराथे ।

[१२६] १।११७।२५ (कक्षीवान् औशिजो दैर्घतमसः । अश्विनौ)
एतानि वामश्विना वीर्याणि... ।

ब्रह्म कृण्वन्तो... सुवीरासो विदथमा वदेम ।
(२२२) २।३९।८ (गुत्समदः शौनकः । अश्विनौ)

एतानि वामश्विना वर्धनानि ब्रह्म... अकन ।
.....वदेम विदथे सुवीराः ।

(इन्द्रः ११३६) २।१२।१५ (गुत्समदः शौनकः । इन्द्रः)
सुवीरासो विदथमा वदेम ।

(सोमः ११४८) ८।४८।१४ (प्रगाथो धौरः काण्वः । सोमः)
सुवीरासो विदथमा वदेम ।

[१२७] १।११८।१=१।३५।१० (हिरण्यस्तूप आङ्गिरसः । सविता)
सुमृत्कीकः स्ववां यात्वर्वाङ् ।

[,,] १।११८।१ (कक्षीवान् औशिजो दैर्घतमसः । अश्विनौ)
यो मर्त्यस्य मनसो जवीयान् त्रिवन्धुरो
वृषणा वातरंहाः ।

(२०२) १।१८३।१ (अगस्त्यो मैत्रावरुणिः । अश्विनौ)
मनसो यो जवीयान् त्रिवन्धुरो वृषणा
यस्त्रिचक्रः ।

[१२९] १।११८।३ (कक्षीवान् औशिजो दैर्घतमसः । अश्विनौ)
प्रवद्यामना सुवृता रथेन दस्त्राविमं शृणुतं
श्लोकमद्रेः ।

किमङ्ग वां प्रत्यवर्ति गमिष्ठाहुर्विप्रासो
अश्विना पुराजाः ॥

(२२८) ३।५८।३ (विश्वामित्रो गाथिनः । अश्विनौ)
सुगुम्भिरश्वैः सुवृता रथेन... ।

किमङ्ग वां प्रत्यवर्ति... अश्विना हवन्ते ॥

[१३०] १।११८।४ (कक्षीवान् औशिजो दैर्घतमसः । अश्विनौ)
आ वां श्वेनासो अश्विना वहन्तु... ।

...अभि प्रयो नासत्या वहन्ति ॥

(३२३) ६।६३।७ (बार्हस्पत्यो भरद्वाजः । अश्विनौ)
आ वां वयोऽश्वसो वहिष्ठा अभि प्रयो
नासत्या वहन्तु ।

[१३२] १।११८।६=(५६) १।११२।५ उद् वन्दनमैरतं
दंसनाभिः (५ स्वर्हो) ।

[१३५] १।११८।९ (कक्षीवान् औशिजो दैर्घतमसः । अश्विनौ)
युषं श्वेतं पेद्व इन्द्रजुतमहिह्नमश्विना-

दत्तमश्वम् ।

जोहृत्रमर्थो... ।

(५९२) १०।३९।१० (काक्षावर्ता घोषा । अश्विनौ)

युषं श्वेतं पेद्वेऽश्विनाश्वं ।

चर्कृत्यं ददथुः ।

[१६०] १।१३९।३ युवोर्विश्वा अधि श्रियः ।

(इन्द्रः २४१६) ८।९२।१० (श्रुतकक्षः सुकक्षो
वा आङ्गिरसः । इन्द्रः)

यस्मिन् विश्वा अधि श्रियः ।

[१६३] १।१५७।१ (दाघतमा औचथ्यः । अश्विनौ)

आयुक्षातामश्विना यातवे रथं ।

१०।३५।६ (लुशो धानाकः । विश्वे देवाः)

आयुक्षातामश्विना तृत्तुजि रथं ।

[१६६] १।१५७।४=(५०) १।९२।१७

आ न ऊर्जं वहतमश्विना युवम् ।

[,,] १।१५७।५=(२२) १।३४।११

प्रायुस्तारिष्टं नी रपांसि मृक्षतं सेधतं

द्वेपो भवतं सचाभुवा ।

[१८४] १।१८०।१० (अगस्त्यो मैत्रावरुणिः । अश्विनौ)

तं वां रथं वयमद्या हुवेम ।

(२५१) ४।४४।१ (पुरुमाळहाजमीळहौ सौहोत्रौ । अश्विनौ)

[१९९] १।१८२।६ (अगस्त्यो मैत्रावरुणिः । अश्विनौ)

अनारम्भणे तमसि प्रविद्धम् ।

(इन्द्रः ३२८०) ७।१०४।३ (वसिष्ठो मैत्रावरुणिः [राक्षोमं]
इन्द्रासोमौ)

—प्र विध्यतम् ।

[२०२] १।१८३।१=(१२७) १।११८।१

त्रिवन्धुरो वृषणा यस्त्रिचक्रः (१ वातरंहाः) ।

[२०४] १।१८३।३ (अगस्त्यो मैत्रावरुणिः । अश्विनौ)

‘यो रथो... ।

येन नरा नासत्येव्यध्यै वर्तिर्याथस्तन-
याय त्मने च ।

(२१२) १।१८४।५ (अगस्त्यो मैत्रावरुणिः । अश्विनौ)
यातं वर्तिस्तनयाय त्मने च ।

६।४९।५ (ऊजिश्वा भारद्वाजः । विश्वे देवाः)

...यो रथो...

येन नरा— ।

[२०५] १।१८३।४ (अगस्त्यो मैत्रावरुणिः । अश्विनौ)

अयं वां भागो निहित इयं गीर्दस्त्राविमे
वां निधयो मधूनाम् ।

- (५३९) ८।५७ (वाल ५९)।४ (मेध्यः काण्वः । अश्विनौ)
अयं वां भागो निहितो यजत्रा ।
(२३०) ३।५८।५ (विश्वामित्रो गाथिनः । अश्विनौ)
दस्त्राविमे वां निधयो मधूनाम् ।
[२०६] १।१८३।५ (अगस्त्यो मैत्रावरुणिः । अश्विनौ)
मे हवं नासत्योप यातम् ।
(५५८) ८।८५।१ (कृष्ण आङ्गिरसः । अश्विनौ)
आ मे हवं नासत्या ।
[२०७] १।१८३।६ = (२१३) १।१८४।६ = (३७३) ७।७३।१
अतारिष्म तमसस्पाारमस्य ।
१।९२।६ (गोतमो राहृगणः । उषाः)
अतारिष्म तमसस्पाारमस्य ।
[,] १।१८३।६ = (२१३) १।१८४।६ (अगस्त्यो मैत्रावरुणिः । अश्विनौ)

- अतारिष्म तमसस्पाारमस्य प्रति वां
स्तोमो अश्विनावधायि ।
एह यातं पथिभिर्देवयानैर्विद्यामेघं वृजनं
जीरदानुम् ॥
(२३०) ३।५८।५ (विश्वामित्रो गाथिनः । अश्विनौ)
एह यातं पथिभिर्देवयानैः ।
[२०९] १।१८४।२ अस्मे ऊ पु वृषणा मादयेथाम् ।
(अग्निः ७४८) ४।१४।४ अस्मिन् यज्ञे वृषणा ।
[२१२] १।१८४।५ = (२०४) १।१८३।३
यातं वर्तिस्तनयाय त्मने च ।
६।४९।५ (ऋजिश्वा भारद्वाजः । विश्वे देवाः)
येन नरा...वर्तिर्यथस्तनयाय... ।
[२१३] १।१८४।६ = (२०७) १।१८३।६

ऋग्वेदस्य द्वितीयं मण्डलम् ।

- [२२२] २।३९।८-(१२६) १।११७।२५
एतानि वामश्विना वर्धनानि (२५वोर्याणि) ।
[२२४] २।४१।८ (युत्समदः शौनकः । अश्विनौ)
न यत् परो नान्तर... ।
दुःशंसो मर्त्यो रिपुः ।

- (३१८) ६।६३।२ (भरद्वाजो बार्हस्पत्यः । अश्विनौ)
न यत् परो नान्तरस्तुतुर्थात् ।
८।१८।१४ (इरिम्बिष्ठिः काण्वः । आदित्याः)
दुःशंसं मर्त्यं रिपुम् ।

ऋग्वेदस्य तृतीयं मण्डलम् ।

- [२२८] ३।५८।३=(१२९) १।११८।३
[२३०] ३।५८।५=(२०७) १।१८३।६=(२१३) १।१८४।६
(अगस्त्यो मैत्रावरुणिः । अश्विनौ)
[,] ३।५८।५=(२०५) १।१८३।४

- [२३३] ३।५८।८ (गाथिनो विश्वामित्रः । अश्विनौ)
परि द्यावापृथिवी याति सद्यः ।
१।११।३ (कुत्स आङ्गिरसः । सूर्यः)
परि द्यावापृथिवी यान्ति सद्यः ।

ऋग्वेदस्य चतुर्थं मण्डलम् ।

- [२५०] ४।४३।७=(२५७) ४।४४।७
(पुरुमीळ्हाजमीळ्हा सौहोत्रौ । अश्विनौ)
इहेह यद् वां समना पपृक्षे सेयमस्मे
सुमतिर्वाजरत्ना ।
उरुध्यतं जरितारं युवं ह श्रितः कामो
नासत्या युवद्विक् ॥
[२५१] ४।४४।१=(१८४) १।१८०।१०
तं वां रथं वयमद्या हुवेम ।
[२५४] ४।४४।४ (पुरुमीळ्हाजमीळ्हा सौहोत्रौ । अश्विनौ)
नभश्चो गन्तं विधत्ते जनाय ।

- ७।७५।६ (वसिष्ठो मैत्रावरुणिः । उषाः)
दधाति रत्नं विधत्ते जनाय ।
[२५५] ४।४४।५ हिरण्येन सुवृता रथेन ।
१।३५।२ (हिरण्यस्तूप आङ्गिरसः । सविता)
[,] ४।४४।५ (पुरुमीळ्हाजमीळ्हा सौहोत्रौ । अश्विनौ)
—यातं— ।
मा वामन्ये नि यमन् देवयन्तः ।
(३५२) ७।६९।६ (वसिष्ठो मैत्रावरुणिः । अश्विनौ)
...यातम् ।
मा वामन्ये नि यमन् देवयन्तः ।

- [१५६] ४।४४।६ नू नो रयिं पुरुषीरं बृहन्तं ।
(अग्निः ९९२) ६।६।७ (बार्हस्पत्यो भरद्वाजः । वैश्वानरोऽग्निः)
चन्द्रं रयिं — ।
[१५७] ४।४४।७ = (२५०) ४।४३।७
[१३८] ४।४५।२ (वामदेवो गौतमः । अश्विनौ)
उद् वां पृक्षासो मधुमन्त ईरते ।
७।६०।४ (वसिष्ठा मित्रावरुणिः । मित्रावरुणौ)
— मधुमन्तो अस्थुः ।
[,] ४।४५।२ (वामदेवो गौतमः । अश्विनौ)

- रथा अश्वास उषसो व्युष्टिषु ।
(अग्निः ७४८) ४।१४।४ (वामदेवो गौतमः । अग्निः)
— उषसो व्युष्टौ ।
[२३८] ४।४५।२ = (२४२) ४।४५।६
स्वर्णं शुक्रं तन्वन्त आ रजः ।
[२३९] ४।४५।३ = (२१) १।३४।१०
मध्वः पिबतं मधुपेभिरासभिः ।
[२४१] ४।४५।५ सोमं सुषाव मधुमन्तमद्रिभिः ।
(सोमः १०००) ९।१०७।१ सुषाव सोममाद्रिभिः ।

ऋग्वेदस्य पञ्चमं मण्डलम् ।

- [१५८] ५।७३।१ (पौर आत्रेयः । अश्विनौ)
यदन्तरिक्ष आ गतम् ।
(इन्द्रः ९८०) ८।९७।५ (रेमः काश्यपः । इन्द्रः)
— आ गहि ।
[१५९] ५।७३।२ (पौर आत्रेयः । अश्विनौ)
इह त्या पुरुभूतमा ।
(४७४) ८।२२।३ (सोमार्ः काण्वः । अश्विनौ)
[१६०] ५।७३।३ = (११) १।३०।१९ चक्रं रथस्य येमथुः ।
[१६१] ५।७३।५ (पौर आत्रेयः । अश्विनौ)
आ यद् वां सूर्या रथं तिष्ठत् ।
(४३०) ८।८।१० (सध्वंसः काण्वः । अश्विनौ)
आ यद् वां योषणा रथमतिष्ठत् ।
[१६७] ५।७३।१० इमा ब्रह्माणि वर्धना ।
(इन्द्रः ५६९) ८।६२।४ (प्रगाथो घौरः काण्वः । इन्द्रः)
इन्द्र ब्रह्माणि वर्धना ।
[१७७] ५।७४।१० (पौर आत्रेयः । अश्विनौ)
अश्विना यद्ध कर्हि विच्छुभ्रूयातमिमं हवम् ।
(५४४) ८।७३।५ (गोपवन आत्रेयः सप्तवध्रिर्वा ।
अश्विनौ)
यद्य कर्हि कर्हि विच्छुभ्रूयातमिमं हवम् ।
[१७८-८६] ५।७५।१-९ (अवस्युरात्रेयः । अश्विनौ)
माध्वी मम श्रुतं हवम् ।
[१७९] ५।७५।२ = (५१) १।९२।१८ = (४२१) ८।८।१
दस्त्रा हिरण्यवर्तनी ।
[१८०] ५।७५।३ (अवस्युरात्रेयः । अश्विनौ)
आ नो...अश्विना गच्छतं युवम् ।

- रुद्रा हिरण्यवर्तनी ।
(४२१) ८।८।१ (सध्वंसः काण्वः । अश्विनौ)
आ नो...अश्विना गच्छतं युवम् ।
दस्त्रा हिरण्यवर्तनी ।
(५५८) ८।८५।१ (कृष्ण आङ्गिरसः । अश्विनौ)
आ मे...अश्विना गच्छतं युवम् ।
[२८४] ५।७५।७ = (५) १।२२।१ = (२९७) ५।७८।१
अश्विनावेह गच्छतं (१।२२।१ गच्छताम्) ।
[,] ५।७५।७ (अवस्युरात्रेयः । अश्विनौ)
नासत्या मा वि वेनतम् ।
(२९७) ५।७८।१ (सप्तवध्रिरात्रेयः । अश्विनौ)
[२८६] ५।७५।९ = (१०) १।३०।१८ रथो दस्त्रावमर्थः ।
[२८९] ५।७६।३ मध्यंदिनं उदिता सूर्यस्य ।
५।६९।३ (उरुचक्रिरात्रेयः । मित्रावरुणौ)
[२९०] ५।७६।४ आ नो दिवो बृहतः पर्वतादा ।
५।४३।११ (भौमोऽत्रिः । विश्वे देवाः)
[२९१] ५।७६।५ = ५।४२।१८ = ५।४३।१७
(भौमोऽत्रिः । विश्वे देवाः)
[२९६] ५।७७।५ = ५।४२।१८ = (२९१) ५।७६।५
[२९७] ५।७८।१ = (५) १।२२।१ = (२८४) ५।७५।७
[, - २९९] ५।७८।१-३ हंसाविव पततमा सुतां उप ।
[२९९] ५।७८।३ जुषेयां यज्ञमिष्टये ।
५।७२।३ (बाहुवृक्त आत्रेयः । मित्रावरुणौ)
[३०४] ५।७८।८ यथा वातो यथा वनम् ।
१०।२३।४ धूनीति वातो यथा वनम् ।

ऋग्वेदस्य षष्ठं मण्डलम् ।

- [३०८] दाद३।३ (बार्हस्पत्यो भरद्वाजः । अश्विनौ)
ता ह त्यद् वर्तिर्यद्वरध..... ।
.....परि... ।
(३१८) दाद३।२ परि ह त्यद् वर्तिर्यथा...यम्... ।
[३१०] दाद३।५ वभूवतुर्गुणते चित्रराती ।
(३१६) दाद३।११ दुरो वर्त गृणते चित्रराती ।
[३१८] दाद३।२ = (२२४) २।४१।८ न यत् परो नान्तरः ।
[३२०] दाद३।४ (बार्हस्पत्यो भरद्वाजः । अश्विनौ)

- प्र रातिरेति जूणिनी घृताची ।
(अग्निः ६८४) ४।६।३ (वामदेवो गौतमः । अग्निः)
यता सुजूर्णि रातिनी घृताची ।
[३२३] दाद३।७ = (१३०) १।११८।४
अभि प्रयो नासत्या वहन्तु (४ वहन्ति) ।
[,] दाद३।७ (बार्हस्पत्यो भरद्वाजः । अश्विनौ)
—प्र वां रथो मनोजवा असर्जि ।
(३४०) ७।६८।३ (वसिष्ठो मैत्रावरुणिः । अश्विनौ)
...मनोजवा इत्यति ।

ऋग्वेदस्य सप्तमं मण्डलम् ।

- [३३३] ७।६७।६ (वसिष्ठो मैत्रावरुणिः । अश्विनौ)
आ वां तोकं तनये तूतुजानाः सुरत्नासो
देववीति गमेम ।
(इन्द्रः ३१९६) ७।८४।५ = (इन्द्रः ३२०१) ७।८५।५
(वसिष्ठो मैत्रावरुणिः । इन्द्रावरुणौ)
प्रावत् तोकं तनये तूतुजाना ।
सुरत्नासो देववीति गमेम ।
[३३७] ७।६७।१० = (३५४) ७।६९।८ (वसिष्ठो मैत्रावरुणिः ।
अश्विनौ)
नू मे हवमा शृणुतं युवाना यासिष्टं वर्तिरश्विना-
विरावत् ।
धत्तं रत्नानि जरतं च सूरीन् यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः॥
[३४०] ७।६८।३ = (३२३) दाद३।७
[३४८] ७।६९।२ (वसिष्ठो मैत्रावरुणिः । अश्विनौ)
विशो येन गच्छथो देवयन्ताः ।
(६१२) १०।४१।२ (सुहस्त्यो घौषेयः । अश्विनौ)
—गच्छथो यज्वरीनरा ।
[३५२] ७।६९।६ = (२५५) ४।४४।५
मा वामन्ये नि यमन् देवयन्तः ।
[३५४] ७।६९।८ = (३३७) ७।६७।१० = (३४६) ७।६८।९
= (३६१) ७।७०।७ = (३६७) ७।७१।६ = (३७२, ३७७)
७।७२-७३।५ यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ।
(अग्निः १११९) ७।१।२०, २५; (११३३)
७।३-४।१०; (११४८) ७।७-८।७; (११६०) ७।९।६;
(११७०) ७।११।५; (११७३) ७।१२-१३।३; (११७६)
७।१४।३; (१६८२) १०।१२२।८ ।
(इन्द्रः २१५०) ७।१९।११; (२१६०) २०।१०;

- (२१७०) २१।१०; (२१७९) २२।९; (२१८५)
२३।६; (२१९१) २४।६; (२१९७) २५।६
(२२०२) २६।५; (२२०७) २७।५; (२२१२) २८।५;
(२२१७) २९।५; (२२२२) ३०।५; (३०७८)
३३।८; (३१९६) ८४।५; (३२०१) ८५।५; (३२३५)
९०।७; (३२४०) ९१।७; (३३२५) ९७-९८।१०, ७।
(सोमः ८०५) ९।९०।६; (८५२, ८६२) ९७।३, ६।
(मरुतः ३६९) ७।५६।२५; (३७६) ५।७; (३८२)
५८।६। (विश्वे देवाः) ७, ३४, २५; ३५, १५; ३६, ९;
३७, ८; ३९-४१, ७; ४२, ६; ४३, ५; ४८, ४;
१०, ६५-६६, १५ । (सविता) ७।४५।४ । (रुद्रः)
७।४६।४। (आपः) ७।४७।४। (आदित्याः) ७।५१।३।
(यावापृथिवी) ७।५३।३। (वास्तोष्पतिः) ७।५४।३।
(मित्रावरुणौ) ७।६०।१२; ६१, ७; ६२-६३, ६;
६४-६५, ५। (उषाः) ७।७५।८; ७६, ७; ७७, ६;
७८-७९।५, ८०, ३। (वरुणः) ७।८६।८; ८७-८८,
७। (वायुः) ७।९१।५। (सरस्वती) ७।९५।६।
(विष्णुः) ७।९९-१००।७। (पर्जन्यः) ७।१०१।६
[३५९] ७।७०।५ प्रति प्र यातं वरमा जनाय ।
७।६५।४ (मैत्रावरुणिर्वसिष्ठः । मित्रावरुणौ)
प्रति वामत्र वरमा जनाय ।
[,] ७।७०।५ अस्मे वामस्तु सुमतिश्च निष्ठा ।
(मरुतः ३७३) ७।५७।४ (वसिष्ठो मैत्रावरुणौ । मरुतः)
[३६१] ७।७०।७ = (३६७) ७।७१।६
(वसिष्ठो मैत्रावरुणिः । अश्विनौ)
हयं मनीषा हयमश्विना गीरिमां सुवृत्तिं वृषणा जुषेथाम् ।
इमा ब्रह्माणि युवयून्मग्मन् यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः॥

(३७५) ७।७३।३ इमां सुवर्किं वृषणा जुवेधाम् ।
[३६६] ७।७१।५ = (११०) १।११।७।९

नि पेदव ऊहथुराशुमश्वम् ।

[३६७] ७।७१।६ = (३६१) ७।७०।७

[३७१] ७।७२।४ ऊर्ध्वं भानुं सविता देवो अश्रेद् ।

(अग्निः ६८३) ४।६।२ ऊर्ध्वं भानुं सवितेवाश्रेद् ।

(" ७४१) ४।१३।२ (वामदेवो गौतमः । अग्निः)

(" ७४६) ४।१४।२ ऊर्ध्वं केतुं सविता देवो अश्रेद् ।

[३७२] ७।७२।५ = (३७७) ७।७३।५

(वसिष्ठो मैत्रावरुणिः । अश्विनौ)

आ पश्चाताज्ञासत्या पुरस्तादाश्विना यातमधरादुदक्तात् ।

आ विश्वतः पाञ्चजन्येन राया यूयं पात स्वस्तिभिः

सदा नः ।

[३७३] ७।७३।१ = १।९२।६ = (२०७) १।१८३।६
= (२१३) १।१८४।६

[३७५] ७।७३।३ = (३६१) ७।७०।७

[३७६] ७।७३।४ (वसिष्ठो मैत्रावरुणिः । अश्विनौ)

मा नो मर्धिष्टमा गतं शिवेन ।

(३८०) ७।७४।३ मा नो मर्धिष्टमा गतम् ।

[३७७] ७।७३।५ = (३७२) ७।७२।५

[३७९] ७।७४।२ = (४९) १।९२।१६

अवाङ् रथं समनसा नि यच्छतम् ।

[,] ७।७४।२ = (४२१) ८।८।१ पिबतं सोम्यं मधु ।

(इन्द्रः ३०७०) ६।६०।१५

(बार्हस्पत्यो भरद्वाजः । इन्द्राग्नी)

[३८०] ७।७४।३ = (३७६) ७।७३।४

ऋग्वेदस्याष्टमं मण्डलम् ।

[३८५] ८।५।२ = (इन्द्रः ३२२४) ४।४६।५

(वामदेवो गौतमः । इन्द्रवायू)

[३८७] ८।५।४ (ब्रह्मातिथिः काण्वः । अश्विनौ)

पुरुमन्द्रा पुरुवसु ।

(४३२) ८।८।१२ (सध्वंसः काण्वः । अश्विनौ)

[३८८] ८।५।५ (ब्रह्मातिथिः काण्वः । अश्विनौ)

गन्तारा दाशुषो गृहम् ।

(इन्द्रः ३३०) ८।१३।१० (नारदः काण्वः । इन्द्रः)

— गृहं नमस्विनः ।

(४७४) ८।२।३ (सोभारिः काण्वः । अश्विनौ)

[३८९] ८।५।६ घृतैर्गव्युत्तिमुक्षतम् ।

३।६२।२६ (गाथिनो विश्वामित्रः, जमदग्निर्वा । मित्रावरुणौ)

[३९०] ८।५।७ (ब्रह्मातिथिः काण्वः । अश्विनौ)

आ नः स्तोममुप द्रवत् ।

(३९०) ८।४९ (वाल०१) । ५ (प्रस्कण्वः काण्वः । इन्द्रः)

[३९२] ८।५।९ उत नो गोमतीरिषः ।

(सोमः ४४१) ९।६२।२४ (जमदग्निर्भार्गवः ।

पवमानः सोमः)

५।७९।८ (सत्यश्रवा आत्रेयः । उषाः)

[३९४] ८।५।११ = (५१) १।९२।१८ दक्षा हिरण्यवर्तनी ।

[,] ८।५।११ पिबतं सोम्यं मधु ।

(इन्द्रः ३०७०) ६।६०।१५

(बार्हस्पत्यो भरद्वाजः । इन्द्राग्नी)

[३९५] ८।५।१२ (ब्रह्मातिथिः काण्वः । अश्विनौ)

छर्दिर्यन्तमदाभ्यम् ।

(५६२) ८।८।५।५ (कृष्ण आङ्गिरमः । अश्विनौ)

[३९८] ८।५।१५ (ब्रह्मातिथिः काण्वः । अश्विनौ)

अस्मे आ वहतं रथिं

पुरुक्षुं विश्वधायसम् ।

(मरुतः ५८) ८।७।१३ (पुनर्वसुः काण्वः । मरुतः)

आ नो रथिं मदन्त्युतं पुरुक्षुं विश्वधायसम् ।

[४००] ८।५।१७ = ३।५९।९ (गाथिनो विश्वामित्रः । मित्रः)

[,] ८।५।१७ हविषमन्तो अरंकृतः ।

१।१४।५ (मेघातिथिः काण्वः । विश्वे देवाः)

[,] ८।५।१७ = (४२) १।४७।४ युवां हवन्ते अश्विना ।

[४०१] ८।५।१८ = (इन्द्रः २०८९) ६।४५।३०

स्तोमो वाहिण्डो अन्तमः ।

[,] ८।५।१८ (ब्रह्मातिथिः काण्वः । अश्विनौ)

स्तोमो वाहिण्डो.....।

युवाभ्यां भूवश्विना ।

(५०५) ८।२६।१६ (विश्वमना वैयश्वः

व्यश्वो वाङ्मन्यः । अश्विनौ)

वाहिण्डो.....स्तोमो ।

युवाभ्यां भूवश्विना ।

[४०३] ८।५।२० = (४२३) ८।५।३० तेन नो वाजिनीवसु ।

[४०५] ८।५।२२ = (२६) १।४६।३

यद् वां रथो विभिष्यतात् ।

[४११] ८।५।२८ = (इन्द्रः ३२२३) ४।४६।४
 (वामदेवो गौतमः । इन्द्रवायू)
 ["] ८।५।२८ (ब्रह्मातिथिः काण्वः । अश्विनौ)
 रथं हिरण्यवन्धुरं हिरण्याभीष्टुरश्विना ।
 आ हि स्थाथो दिविस्पृशम् ।
 (४७६) ८।२२।५ (सोमरिः काण्वः । अश्विनौ)
 रथो...त्रिवन्धुरो हिरण्याभीष्टुरश्विना ।
 ...चावापृथिवी... ।
 (इन्द्रः ३२२३) ४।४६।४ रथं हिरण्यवन्धुरम्...।
 आ हि स्थाथो दिविस्पृशम् ।

[४१३] ८।५।३० (ब्रह्मातिथिः काण्वः । अश्विनौ)
 उपेमां सुष्टुतिं मम ।
 (४२६) ८।८।६ (सध्वंसः काण्वः । अश्विनौ)
 [४१८] ८।५।३५ हिरण्ययेन रथेन ।
 १।३५।२ (हिरण्यस्तूप आङ्गिरसः । मविता)
 हिरण्ययेन...रथेना ।

[४२१] ८।८।१ आ नो विश्वाभिरुतिभिः ।
 (इन्द्रः २१८९) ७।२४।४ (मैत्रावरुणिर्वसिष्ठः । इन्द्रः)
 (४३८) ८।८।१८ = (५७४) ८।८।३
 आ वां विश्वाभिरुतिभिः ।

["] ८।८।१ = (२८०) ५।७।५।३ (अवस्युरात्रेयः । अश्विनौ)
 ["] ८।८।१ = (५१) १।९।२।१८
 (गौतमो राहूगणः । अश्विनौ)

["] ८।८।१ = (इन्द्रः ३०७०) ६।६०।१५
 (बार्हस्पत्यो भरद्वाजः । इन्द्राग्नी)

[४२२] ८।८।२ (सध्वंसः काण्वः । अश्विनौ)
 आ नूनं यातमश्विना ।
 (४५७) ८।९।१४ (शशकर्णः काण्वः । अश्विनौ)
 (५७६) ८।८।५ (कृष्ण आङ्गिरसो धुम्नीको वा वासिष्ठः,
 प्रियमेध आङ्गिरसो वा । अश्विनौ)

["] ८।८।२ = (४७) १।४७।९
 [४२४] ८।८।४ = (४२८) ८।८।८
 पुत्रः कण्वस्य वामिह (८ वामृषिः) ।

[४२५] ८।८।५ (सध्वंसः काण्वः । अश्विनौ)
 आ नो यातमुपश्रुति ।
 (इन्द्रः ४३५) ८।३४।११ (नीपातिथिः काण्वः । इन्द्रः)
 आ नो यातुपश्रुति ।

["] ८।८।५ अश्विना सोमपीतये ।
 (५३५) ८।४१।६ नासत्या सोमपीतये ।
 (इन्द्रः ३०९७-३०९९) ८।३८।७-९

(शावाश्व आत्रेयः । इन्द्राग्नी)
 इन्द्राग्नी सोमपीतये ।
 [४२६] ८।८।६ जुहुरेऽवसे नरा ।
 १।४८।१४ (प्रस्कण्वः काण्वः । उषाः)
 जुहुरेऽवसे महि ।
 ["] ८।८।६ = (५३०-५३२) ८।३५।२२-२४
 आ यातमश्विना गतम् ।
 ["] ८।८।६ = (४१३) ८।५।३० उपेमां सुष्टुतिं मम ।
 [४२७] ८।८।७ दिवश्चिद् रोचनादधि ।
 १।४९।१ (प्रस्कण्वः काण्वः । उषाः)
 ["] ८।८।७ स्तोमेभिर्हवनश्रुता ।
 (इन्द्रः ३०५५) ६।५९।१०
 (बार्हस्पत्यो भरद्वाजः । इन्द्राग्नी)
 [४२८] ८।८।८ = (४३५) ८।८।१५ = (४३९) ८।८।१९
 गीर्भिर्वसो अबीवृधत् ।
 [४३०] ८।८।१० = (२६२) ५।७३।५
 आ यद् वां योषणा (५ सूर्या) रथमतिष्ठत् ।
 [४३१] ८।८।११ = (४०) १।४७।२ रथेना यातमश्विना ।
 [४३२] ८।८।१२ = (३८७) ८।५।४ पुरुमन्दा पुरुवस्व ।
 ["] ८।८।१२ = (२५) १।४६।२ मनोतरा रथीणाम् ।
 [४३३] ८।८।१३ = ७।९४।३ मा नो रीरधत्तं निदे ।
 (इन्द्रः ३०८१) ७।९४।३ (मैत्रावरुणिर्वसिष्ठः । इन्द्राग्नी)
 [४३४] ८।८।१४ = (४५) १।४७।७
 (प्रस्कण्वः काण्वः । अश्विनौ)
 ["] ८।८।१४ = (४०) १।४७।२
 [४३६] ८।८।१६ (सध्वंसः काण्वः । अश्विनौ)
 वसूयाद् दानुनस्पती ।
 १।१३६।३ (परुच्छेपो दैवोदामिः । मित्रावरुणौ)
 आदित्या दानुनस्पती ।
 १।४१।६ (गृत्समदः शौनकः । मित्रावरुणौ)
 आदित्या..... ।
 [४३७] ८।८।१७ आ नो गन्तं रिशादसा ।
 ५।७१।१ (बाहुवृक्त आत्रेयः । मित्रावरुणौ)
 [४३८] ८।८।१८ = (५७४) ८।८।३ =
 (४२१) ८।८।१ = (इन्द्रः २१८९) ७।२४।४
 (वसिष्ठो मैत्रावरुणिः । इन्द्रः)
 आ वां (८।८।१, ७।२४।४ नो) विश्वाभिरुतिभिः ।
 ["] ८।८।१८ = (५७४) ८।८।३ =
 (अग्निः १०३) १।४५।४ (प्रस्कण्वः काण्वः । अग्निः)
 प्रियमेधा बहुवत् ।

[४३८] ८।८।१८ राजन्तावध्वराणाम् ।

(अग्निः ८; १०३) १।१।८; १।४।४ राजन्तमध्वराणाम् ।

(अग्निः ३८) १।२७।१ सम्राजन्तमध्वराणाम् ।

[४४४] ८।९।१ मास्मै यच्छतादवृकं पृथु च्छर्दिः ।

१।४।८।१५ (प्रस्कण्वः काण्वः । उपाः)

प्र नो यच्छतादवृकं पृथु च्छर्दिः ।

[४४६] ८।९।३ = (४५२) ८।९।९ (शशकर्णः काण्वः । अश्विनौ ।)

एवेत् काण्वस्य बोधतम् ।

(४६६) ८।१०।२ (प्रगाथो घोरः काण्वः । अश्विनौ)

[४५६] ८।९।३ हुवेय वाजसातये ।

(इन्द्रः २७९) ८।३।३७; (इन्द्रः ४२८) ८।३४।४;

(इन्द्रः १७४१) ५।३५।६ हवन्ते वाजसातये ।

(इन्द्रः ३३३०) ६।५७।१ (बार्हस्पत्यो भरद्वाजः ।

इन्द्राप्रषणौ)

हुवेम वाजसातये ।

(५७७) ८।८७।६ विप्रासो वाजसातये ।

[४५७] ८।९।१४ = (४२२) ८।८।२ = (५७६) ८।८७।५

आ नूनं यातमधिता ।

[४६१] ८।९।१८ (शशकर्णः काण्वः । अश्विनौ)

सं सूर्येण रोचसे ।

(सोमः १६) ९।१।६ (मेधातिथिः काण्वः । पवमानः सोमः)

..... रोचते ।

[४६६] ८।१०।२ = (४४६) ८।९।३ = (४५२) ८।९।९

[४६७] ८।१०।३ देवेष्वाप्यम् ।

१।१०५।१३ (वित आप्त्यः कुत्स आदिरसो वा । विश्वे देवाः)

देवेष्वाप्यम् ।

[४७२] ८।२२।१ (सोमरिः काण्वः । अश्विनौ)

यमद्विना सुहवा रुद्रवर्तनी ।

(५९३) १०।३९।११ (काक्षीवती घोषा । अश्विनौ)

[४७३] ८।२२।२ (सोमरिः काण्वः । अश्विनौ)

भुज्यु वाजेषु पूर्व्यम् ।

(इन्द्रः १८३६) ८।४६।२० (वशोऽद्वयः । इन्द्रः)

[४७४] ८।२२।३ = (२५९) ५।७३।२ इह त्या पुरुभूतमा ।

["] ८।२२।३ अर्वाचीना स्ववसे करामहे ।

(इन्द्रः २५४४) १०।३८।४ (मुष्कवानिन्द्रः । इन्द्रः)

अर्वाञ्जमिन्द्रमवसे करामहे ।

["] ८।२२।३ = (३८८) ८।५।५ = (इन्द्रः ३३०) ८।१३।१०

गन्तारा दाशुषो गृहम् ।

[४७६] ८।२२।५ = (४११) ८।५।२८

(सप्तसः काण्वः । अश्विनौ ।)

[४७६] ८।२२।५ = (४७) १।४७।९ तेन नासत्या गतम् ।

[४७९] ८।२२।८ आ यातं सोमपीतये ।

(इन्द्रः ३२२८) ४।४७।३ (वामदेवो गौतमः । इन्द्रवायू)

["] ८।२२।८ पिबतं दाशुषो गृहे ।

(इन्द्रः ३२२५) ४।४६।६ (वामदेवो गौतमः । इन्द्रवायू)

[४८०] ८।२२।९ रथे कोशे हिरण्यये

(मरुतः ८९) ८।२०।८ (सोमरिः काण्वः । मरुतः)

[४८१] ८।२२।१० = (७१) १।११।२०

(कुत्स आदिरसः । अश्विनौ)

[४८५] ८।२२।१४ (सोमरिः काण्वः । अश्विनौ)

मा नो मर्ताय रिपवे वाजिनीवस् ।

(अग्निः १३९६) ८।६०।८ (अर्गः प्रागाथः । अग्निः)

... रिपवे रक्षस्विने ।

[४८९] ८।२२।१८ विद्वा वामानि धीमहि ।

५।८२।६ (इयावाश्च आत्रेयः । सविता)

(अग्निः १२६१) ८।१०३।५ (सोमरिः काण्वः । अग्निः)

[४९८] ८।२६।९ (विश्वमना वैयश्वः व्यश्वो वादिरसः । अश्विनौ)

वयं हि वां हवामहे ।

(५७७) ८।८७।६ (कृष्ण आदिरसो युष्मिको वा

वासिष्ठः, प्रियमेध आदिरसो वा । अश्विनौ)

[५००] ८।२६।११ सजोषसा वरुणो मित्रो अर्यमा ।

१।४०।५ (कण्वो घोरः । ब्रह्मणस्पतिः)

यस्मिन्निन्द्रो वरुणो मित्रो अर्यमा ।

७।६६।१२ (वसिष्ठो मैत्रावरुणिः । आदित्यः)

यदोहते वरुणो मित्रो अर्यमा ।

(इन्द्रः ३१८१; ३१९१) ७।८२।१०; ८३।१०

(वसिष्ठो मैत्रावरुणिः । इन्द्रावरुणौ)

अस्मे इन्द्रो वरुणो मित्रो अर्यमा ।

(अग्निः १२३९) येन चष्टे वरुणो मित्रो अर्यमा ।

१०।३६।१ (लुशो धानाकः । विश्वे देवाः)

यावाश्चामा वरुणो मित्रो अर्यमा ।

१०।६५।१,९ (वसुकर्णो वासुकः । विश्वे देवाः)

अग्निरिन्द्रो (९ इन्द्रवायू) वरुणो मित्रो अर्यमा ।

१०।९१।६ (शार्यातो मानवः । विश्वे देवाः)

तेमिथष्टे वरुणो मित्रो अर्यमा ।

[५०५] ८।२६।१६ = (४०१) ८।५।१८

युवाभ्यां भूस्वद्विना ।

[५०९] ८।३५।१ आदित्यै रुद्रेर्वसुभिः सचाभुवा ।

२।३१।१ (गृत्समदः शौनकः । विश्वे देवाः ।)

[५०९-२९] ८।३५।१-२१ सजोषसा षषसा सूर्येण च ।

[५०९-११] ८।३५।१-३ सोमं पिबतमश्विना ।
 [५११] ८।३५।३ = (२२) १।३४।११
 (हिरण्यस्तूप आश्रितसः । अश्विनौ)
 [५१२-१४] ८।३५।४-६ विश्वेह देवो सवनाव गच्छतम् ।
 [„] ८।३५।४-६ इषं नो वोळ्ङ्मश्विना ।
 [५१५-१७] ८।३५।७-९ सोमं सुतं महिषेवाव गच्छथः ।
 [„] ८।३५।७-९ त्रिर्वर्तिर्यातमश्विना ।
 [५१८-२०] ८।३५।१०-१२ प्रजां च धत्तं द्रविणं च धत्तम् ।
 [„] ८।३५।१०-१२ ऊर्जे नो धत्तमश्विना ।
 [५२१-२३] ८।३५।१३-१५ मरुत्वन्ता जरितुर्गच्छथो हवम् ।
 [„] ८।३५।१३-१५ आदित्यैर्यातमश्विना ।
 [५२४-२६] ८।३५।१६-१८ हतं रक्षांसि सेधतममीवाः ।
 [„] ८।३५।१६-१८ सोमं सुन्वतो अश्विना ।
 [५२७-२९] ८।३५।१९-२१ श्यावाश्वस्य सुन्वतो मदच्युता ।
 [„] ८।३५।१९-२१ अश्विना तिरोभङ्ग्यम् ।
 [५३०] ८।३५।२२ = (४९) १।९२।१६ = (३७९) ७।७४।२
 भर्वाग् रथं (१।९२।१६; ७।७४।२ समनसा) नि यच्छतम् ।
 [„] ८।३५।२२ = (३७९) ७।७४।२ = (३९४) ८।५।११
 = (४२१) ८।८।१ पिबतं सोम्यं मधु ।
 (इन्द्रः ३०७०) ६।६०।१५ (बार्हस्पत्यो भरद्वाजः । इन्द्राग्नी)
 (उन्द्रः १८०२) ८।२४।१३ (विश्वमना वैयश्वः । उन्द्रः)
 पिबाति सोम्यं मधु ।
 [५३०-३२] ८।३५।२२-२४ = (४२६) ८।८।६
 = (३९) १।४७।१ आ यातमश्विना
 गतमवस्युर्वामहं हुवे धत्तं रत्नानि दाशुषे ।
 [५३३] ८।३५।२३ विवक्षणस्य पीतये ।
 (इन्द्रः ११) ८।१।२५ (मेधातिथि-मेध्यातिथी काण्वौ । इन्द्रः)
 [५३३-३५] ८।४२।४-६ = (४२५) ८।८।५
 नासत्या (८।८।५ अश्विना) सोमपीतये ।
 (इन्द्रः ३०९७-९९) ८।३८।७-९ इन्द्राग्नी सोमपीतये ।
 [५३५] ८।४२।६ (नाभाकः काण्वः, अर्चनाना आत्रेयो वा ।
 अश्विनौ)
 एवा वामह ऊतये यथाहुवन्त मेधिराः ।
 नासत्या सोमपीतये ॥
 (इन्द्रः ३०९९) (श्यावाश्व आत्रेयः । इन्द्राग्नी)
 एवा वामह ऊतये यथाहुवन्त मेधिराः ।
 इन्द्राग्नी सोमपीतये ॥
 [५३७] ८।५७ (वाल० ९) २ युवां देवास्त्रय एकादशासः ।
 (सोमः ८१५) ९।९२।४ (कश्यपो मारीचः । सोमः)
 विदेवे देवास्त्रय एकादशासः ।

[५३९] ८।५७ (वाल० ९) ४ अयं वां भागो निहितो यजत्रा ।
 (२०५) १।१८३।४ अयं वां भागो निहित इयं गीः ।
 [५४०] ८।७३।१ = (३०) १।४६।७ युजाथामश्विना रथम् ।
 [५४०-५७] ८।७३।१-१८ अन्ति षड्रतु वामवः ।
 [५४४] ८।७३।५ = (२७७) ५।७४।२० (पौर आत्रेयः । अश्विनौ)
 [५४९] ८।७३।१० शृणुतं म इमं हवम् ।
 २।४१।१३ (गृत्समदः शौनकः । विदेवे देवाः)
 = ६।५२।७ (ऋजिश्वा भारद्वाजः । विदेवे देवाः)
 शृणुता म इमं हवम् ।
 (५५९) ८।८।५।२ इमं मे शृणुतं हवम् ।
 (इन्द्रः ३०७०) ६।६०।१५ इन्द्राग्नी शृणुतं हवम् ।
 [५५३] ८।७३।१४ = (इन्द्रः ३०६९) ६।६०।१४
 आ नो गव्येभिरश्वैः ।
 [५५७] ८।७३।१८ पुरं न धृष्णवा रुज ।
 (सोमः १०३१) ९।१०८।६ वर्माव धृष्णवा रुज ।
 [५५८] ८।८।५।१ = (२०६) १।१८३।५
 आ मे हवं नासत्योप यातम् ।
 [„] ८।८।५।१ = (२८०) ५।७५।३ = (४२१) ८।८।१
 अश्विना गच्छतं युवम् ।
 [५५८-६६] ८।८।५।१-२ = (४७) १।४७।९
 मध्वः सोमस्य पीतये ।
 [५५९] ८।८।५।२ = (५४२) ८।७३।१० =
 (विश्वे देवाः) २।४१।१३ = (विदेवे देवाः) ६।५२।७
 [५६१] ८।८।५।४ शृणुतं जरितुर्हवम् ।
 (इन्द्रः ३२७) ८।१३।७ शृणुधी-।
 (इन्द्रः ३०८०) ७।९४।२ (वसिष्ठो मैत्रावरुणिः । इन्द्राग्नी)
 [५६२] ८।८।५।५ = (३९५) ८।५।१२ छर्दिर्यन्तमदाभ्यम् ।
 [५६३] ८।८।५।६ = (३८८) ८।५।५ = (४७४) ८।२२।३
 [५६७-६९] ८।८६।१-३ ता वां विदेवको हवते तनूकृथे ।
 [५६७-७१] ८।८६।१-५ मा नो वि यौष्टं सख्या मुमोचतम् ।
 [५७३] ८।८७।२ (ऋण आश्रितसो शुम्नीको वा वासिष्ठः प्रियमेध
 आश्रितसो वा । अश्विनौ)
 पिबतं घमं मधुमन्तमश्विना बर्हिः सीदतं नरा ।
 ता मन्दसाना मनुषो दुरोण आ ।
 (५७५) ८।८७।४ पिबतं सोमं... सीदतं सुमत ।
 (६०९) १०।४०।१३ (काक्षीवती घोषा । अश्विनौ)
 ता मन्दसाना मनुषो दुरोण आ ।
 [„] ८।८७।२ = (४६) १।४७।८ आ बर्हिः सीदतं नरा ।
 [५७४] ८।८७।३ = (इन्द्रः २१८९) ७।९४।४
 = (४२१) ८।८।१ = (४३८) ८।८।१८

- [५७४] ८८७३ = (अग्निः १०३) १४५४ =
(४३८) ८८१८ प्रियमेधा अहूषत ।
[५७५] ८८७४ = (४६) १४७८ = (५७३) ८८७२
= (अग्निः १९२४) ११४२७
[५७६] ८८७५ = (४२२) ८८८२ = (४५७) ८९१४
आ नूनं यातमश्विना ।
[,] ८८७५ = (इन्द्रः ३३१) ८१३११
अश्वेभिः प्रुषितसुभिः ।
[,] ८८७५ = (५१) ११९११८ = (२७९) ५१७५२
= (३९४) ८५१११ = (४२१) ८८८१
[,] ८८७५ = (४१) १४७३ =

- (मित्रावरुणौ) ३१६११८ = (मित्रावरुणौ) ७६६१९
[५७७] ८८७६ = (५२८) ८१६१९ वयं हि वां हवामहे ।
[५७८] ८१०१७ प्रति हव्यानि वीतये ।
८१०११० (जमदग्निर्भार्गवः । वायुः)
[५७९] ८१०१८ गृणाना जमदग्निना ।
३१६११८ (विश्वामित्रो गाथिनः, जमदग्निर्वा । मित्रावरुणौ)
७९६३ (वसिष्ठो मित्रावरुणः । सरस्वती)
गृणाना जमदग्निवत् ।
(सोमः ४४१) ९१६१२४ गृणानो जमदग्निना ।
(सोमः ५३२) ९१६५२५ भृगुर्वारुणिर्जमदग्निर्भार्गवो
वा । पवमानः सोमः)

ऋग्वेदस्य दशमं मण्डलम् ।

- [५८६] १०३९४ = (इन्द्रः ७५७) १५११३
= (इन्द्रः ९९६) ८१००६
विश्वेत् ता वां (ते) सवनेषु प्रवाच्या ।
[५८९] १०३९७ = (१२१) १११७२०
न्यूहथुः पुरुमित्रस्य योषणाम् (२० योषाम्) ।
[५९१] १०३९१० = (१३५) १११८९
(कक्षीवान् औशिजो दैर्घतमसः । अश्विनौ)
[५९३] १०३९११ = (४७२) ८१२२१
यमश्विना सुहवा रुद्रवर्तनी ।

- [५९५] १०३९१३ = (५९) १११२८
(कुत्स आङ्गिरसः । अश्विनौ)
[५९६] १०३९१४ अतक्षाम भृगवो न रथम् ।
(इन्द्रः १४८६) ४१६१२० (वामदेवो गांतमः । इन्द्रः)
ब्रह्मकर्मा भृगवो न रथम् ।
[६०९] १०४०१३ = (५७३) ८८७१२
ता मन्दसाना मनुषो दुरोण आ ।
[६१२] १०४१२ विशो येन गच्छथो यज्वरानरा ।
(३४८) ७६९१२ विशो येन गच्छतो देवयन्ताः ।

“ अश्विनौ-देवता-”

मन्त्रान्तर्गतानां उपमानां सूची ।



अंशा इव १०,१०६,९; ६२२ नः भजतं चित्रमग्नः ।
 अक्षरा इव १,३४,४; १५ त्रिः पृक्षो अस्मे पिन्वतम् ।
 अक्षी इव २,३९,५; २१९ चक्षुषा यातमर्वाक् ।
 अग्निरनं चित इव १,११२,१७; ६८ जठरस्य मज्जना पठ्वा ।
 अग्निरिव देवयोः १०,१०६,३; ६१६ दीदिवांसा ।
 अग्निम् उषाम् न १,१८१,९; १९३ जरते हविष्मान् ।
 अजा इव २,३९,२; २१६ यमा परमा सचेथे ।
 अत्कम् न ५,७४,५; २७२ वस्त्रिं प्र मुञ्चथः ।
 (यथा) अत्रिः ८,४२,५; ५३४ विप्रः अजोहवीत् ।
 अत्रेः इव ८,३५,१९; ५२७ पूर्यस्तुतिं शृणुतम् ।
 अध्वगौ इव ८,३५,८; ५१६ सुतं सोमं पतथः ।
 अपः न १,१८०,४; १७८ क्षोदोऽवृणीतमेधे ।
 अपः न स्तयम् ७,६८,८; ३४५ अध्व्याम् अपिन्वतम् ।
 अपसा इव वस्त्रा १०,१०६,१; ६१४ धियः वि तन्वाथे ।
 अत्रिया इव वातः १,११६,१; ७७ सोमान् ह्यग्निं ।
 अवनिः न १,१८१,३; १८७ प्रवत्वान् सुविताय गम्याः ।
 अश्वम् न १,११७,४; १०५ गूढम् रेभं सं रिणीथः ।
 अश्वम् न १०,१४३,१; ६२७ अग्निं अर्थं यातवे कृणुथः ।
 अश्वम् न वाजिनम् १०,१४३,२; ६२८ अरेणवो यमन्तत ।
 अस्तम् इव १,११६,२५; १०१ जरिमाणं जगम्याम् ।
 आत्मा इव वातः १,३४,७; १८ तिस्रः [वेदीः] गच्छतम् ।
 आरुणा इव १०,१०६,१०; ६२३ मधु पूरयेथे ।
 दूर्या इव १०,१०६,४; ६१७ पुष्ट्यै ।
 इन्द्रो न शक्तिम् ४,४३,३; २४६ ईवतो यून् ।
 इन्द्रमिव चर्षणीसहम् १,११९,१०; १४७ शरैरभिधुं चर्कृत्यम् ।
 तुम्बा इव रुचा १०,१०६,४; ६१७ हवम् आ गमिष्टम् ।
 खलं न १०,१४३,६; ६३२ समस्मे भूषतम् ।
 उदन्यजा इव १०,१०६,६; ६१९ जेमना मदेरु ।
 उपधी इव २,३९,४ २१८ नः पारयतम् ।
 उष्टारा इव १०,१०६,२; ६१५ फर्वरेषु श्रयेथे ।
 भू न १०,१०६,७; ६२० खरमज्रा ।

एतग्वा चित् न ७,७०,२; ३५६ समुदान् सरितः पिपार्ति ।
 ओष्ठौ इव २,३९,६; २२० आस्ने मधु वदन्ता ।
 कनीन इव जारः १,११७,१८; ११९ चक्षदानः शतमेकं च ।
 कर्णौ इव १०,१०६,९; ६२२ शासुः अनु हि स्मराथः ।
 कर्णौ इव २,३९,६; २२० सुश्रुता भूतमस्मे ।
 काराधुनी इव १,१८०,८; १८२ प्रशस्तः चितयत्सहस्रैः ।
 कार्म इव १,११६,१७; ९३ अतिष्ठद्वता जयन्ती ।
 किरणा इव १०,१०६,४; ६१७ भुज्यै (भवथः ।)
 कीनारा इव १०,१०६,१०; ६२३ स्वेदं आसिष्वदाना ।
 कुसः न १०,४०,६; ६०२ जरितुर्नाशयथः ।
 क्रिविः न सेके ८,८७,१; ५७२ स्तोमः आ गतम् ।
 क्षम इव १०,१०६,७; ६२० मरायु अर्थेषु तर्तरीथः ।
 क्षामा इव २,३९,७; २२१ नः रजांसि समजतम् ।
 क्षामा इव सूयवसात् १०,१०६,१०; ६२३ ऊर्जा सचेथे ।
 क्षोत्रेण इव २,३९,७; २२१ गिरः स्वधितिं सं शिशीतम् ।
 खगला इव २,३९,४; २१८ विस्सः अस्मान् पातम् ।
 गावः न ऊधभिः ८,९,१९; ४६२ अंशवः (ऊधभिः) दुष्टे ।
 गृध्रा इव वृक्षम् २,३९,१; २१५ निधिमन्तम् अच्छ ।
 गोः न सेके १,१८१,८; १९२ पीपाय मनुषो दशस्यन् ।
 गौरा इव विष्टुतम् ७,६९,६; ३५२ तृषाणा सवनोप यातम् ।
 (यवसम् अनु) गौरौ इव ५,७८,२; २९८ आगच्छतम् ।
 गौरौ इव ईरिणे ८,८७,१; ५७२ मध्वः सुतस्य पातम् ।
 गौरौ इव ईरिणम् ८,८७,४; ५७५ सुष्टुतिम् वप गन्तम् ।
 (दृक्) ग्रन्थिम् न १०,१४३,२; ६२८ अत्रिम् वि व्यतम् ।
 प्रावाणा इव २,३९,१; २१५ तत् अर्थं जरयेथे ।
 घर्मा इव १०,१०६,८; ६२१ जठरे मधु सनेरु ।
 चक्रवाका इव २,३९,३; २१७ वस्तोः प्रति अर्वाञ्चा यातम् ।
 (कांपया) जरणा इव १०,४०,३; ५९९ वस्तोः वस्तोः प्रातः ।
 जरतोः इव पुराणवत् ८,७३,११; ५५० अन्ति पञ्चतु ।
 (युगा) जूर्णा इव १,१८४,३; २१० वच्यन्ते वां ककुहा ।
 तन्यतुः न वृष्टिम् १,११६,१२; ८८ सनये दंस उग्रम् ।

(रेवमच्छिन्नं यथा) तृणम् अथ० ६, १०२, २; ६४८ मनः मयि ।
 दुम्पवी इव २, ३९, २; २१६ ऋतुविदा जनशु ।
 दिव्यासः न गृध्राः १, ११८, ४; १३० अप्तुरः अभि प्रयः ।
 दिशं न दिष्टाम् ऋजूयेव १, १८३, ५; २०६ मे हवं उपयातम् ।
 कृतः न ६, ६३, १; ३१७ स्तोमोऽविदक्षमस्वान् ।
 कृतः न ७, ६७, १; ३२८ रथः अजीगः ।
 (यथा) कृतः ८, ५, ३; ३८६ तथा वाचम् ऊहिषे ।
 कृता इव २, ३९, १; २१५ हव्या जन्वा पुरुषा ।
 कृता इव १०, १०६, २; ६१५ जनेषु यशसा स्थः ।
 (यथा चक्रुः) देवापुराः अथ० ६, १४१, ३; ६५२ सहस्रपोषाया ।
 (दिवि) घाम् इव अथ० ६, ६९, ३; ६७६ तत् (वर्चः) मयि ।
 द्रापिम् इव १, ११६, १०; ८६ वसिं प्रासुञ्जतं वयवानात् ।
 द्वारा इव ८, ५, २१; ४०४ अप वर्षथः ।
 धेनुः इव ८, २२, ४; ४७५ सुमतिः अस्मान् अष्ट ।
 ध्रुवसे न योनिम् ७, ७०, १; ३५५ यत् (अश्वं) आ सेदधुः ।
 नृणा इव २, ३९, ५; २१९ युवां रीतिः ।
 नभः न ८, ९, ८; ४५१ स्तोमाः वां आ चुच्यवीरत ।
 नभ्या इव २, ३९, ४; २१८ नः पारयतम् ।
 नावा इव २, ३९, ४; २१८ नः पारयतम् ।
 नासा इव २, ३९, ६; २२० नः तन्वो रक्षितारा भूतम् ।
 निर्यं न सूनुम् १०, ३९, १४; ५९६ वां स्तां न्यसृक्षाम ।
 निधिम् इव अपगूळहम् १, ११६, ११; ८७ उद् दर्शत वृषथुः ।
 निवना इव सिन्धवः १०, ४०, ९; ६०५ आसै रीयन्ते ।
 निष्कृतम् न योषणा १०, ४०, ६; ६०२ मधु आसा भरत ।
 नृपती इव १० १०६ ४; ६१७ तुयै ।
 नैतोशा इव १० १०६, ६; ६१९ तुर्फी पर्फरीका ।
 पञ्चा इव १०, १०६, ७; ६२० चचैरम् ।
 पतरा इव १०, १०६, ८; ६२१ चचरा ।
 (वृक्षं) पशुमान् इव ८, ७३, १७; ५५६ अश्विना... ।
 परिष्माना इव १०, १०६, ३; ६१६ पुरुषा यजथः ।
 पर्णा मृगस्य पतरोः इव १ १८२, ७; २०० श्रोमताय कम् ।
 पशुं न नष्टमिव १, ११६, २३; ९९ दर्शनाय विष्णापत्वं दधुः ।
 पश्वा इव १०, १०६, ३; ६१६ चित्रा यजुः आ गमिष्टम् ।
 पादा इव २, ३९, ५; २१९ तन्वे शम्भविष्टा ।
 पादा इव १०, १०६, ९; ६२२ गाधं तरते ।
 पिता इव ८, २२, १५; ४८६ हुवे ।
 पितरा इव ३, ५८, २; २२७ मेघाः ऊर्ध्वा भवन्ति ।
 पितरा इव पुत्रा १०, १०६, ४; ६१७ आपी वो अस्मे ।
 (यथा) पितुः ८, ८६, ४; ५७० सुमतिः स्वादिष्टा ।
 पितुः न नाम १०, ३९, १; ५८३ सुहवं हवामहे ।

दै०[अश्विनौ] ९

पुत्रम् इव पितरो १०, १३१, ५; ६२६ अवधुः काव्यैः ।
 पुत्राय पितरा इव १०, ३९, ६; ५८८ मङ्गं शिक्षतम् ।
 पु'म् न ८, ७३, १८; ५५७ आ रुज ।
 पूर्वगत्वा इव सख्ये ७, ६७, ७; ३३४ निधिः माध्वी ।
 पूषा इव १, १८१, ९; १९३ पुरन्धिः हविष्मान् जरते ।
 प्रधी इव २, ३९, ४; २१८ नः पारयतम् ।
 प्रवृक्तम् १, ११६ २४; १०० विप्रुतं रेभं उदनि उक्षिन्त्यथुः ।
 प्रायोगा इव १०, १०६, २; ६१५ श्वाभ्या शासुः आ ह्यः ।
 बर्हिः इव १, ११६, १; ७७ प्र वृज्जे स्तोमान् ।
 बृहन्ता इव १० १०६ ९; ६२२ गम्भेषु प्रतिष्ठाम् ।
 ब्रह्मा इव अथ० ६, ५०, २; ६४४ स्थितं हविः ।
 ब्रह्माणा इव २, ३९, १; २१५ (युवां) विदधे उक्थशासा ।
 भृगवः न १०, ३९, १४; ५९६ रथम् अतक्षाम ।
 मञ्जः मध्वः न ४, ४५, ४; २४० सवनानि गच्छथः ।
 (यथा) मक्षा इव अथ० ९ १ १७; ६८७ वर्चः तेजः ।
 (यथा) मधु मधुकृतः अथ० ९ १, १६; ६८६ वर्चः ।
 मनन्या न १०, १०६, ८; ६२१ मनःशङ्का जग्मी ।
 मनुषः न होता १, १८०, ९; १८३ प्र स्पन्द्रा याथः ।
 मनुष्यत् १, ४६, १३; ३६ शम्भू आ गतम् ।
 (यथा चक्रुः) पनुष्याः अथ० ६, १४१, ३; ६५२ सहस्रपोषाया ।
 मयं न योषा १०, ४०, २; ५९८ कृणुते सधस्थ आ ।
 महिषा इव ८, ३५, ७-९; ५१५-५१७ सुनं मोमं अव गच्छथः ।
 महिषा इव अवपानात् १० १०६ २; ६१५ पानात् मा ।
 मित्रा इव ऋता १० १०६ ५ ६१८ शतरा शातपन्ता ।
 मित्रासः न ३, ५८, ४; २२९ प्र दतुः उस्त्रो अग्रे ।
 मृगा इव वारणा १०, ४०, ४; ६०० दोषा वस्तोर्हविषा ।
 (यथा) मेधिराः आहुवन्त ८, ४२, ६; ५३५ एवा वामह्ने ।
 मेने इव २, ३९, २; २१६ तन्वा शुम्भमाने ।
 मेघा इव १०, १०६, ५; ६१८ इषा सपर्या पुगीषा ।
 युगा इव २, ३९, ४; २१८ नः पारयतम् ।
 युवशा इव कन्यनाम् ८, ३५, ५; ५१३ इह स्तोमं जुषेधाम् ।
 योनिः सूष्यन्त्याः इव ५, ७८, ५; ३०१ इव जिहीष्व वनस्पते ।
 (नाधमाना इव) योषा ५, ७८, ४; ३०० अत्रिर्यद् वाम० ।
 योषणां न मयं १०, ३९, १४; ५९६ न्यसृक्षाम स्तोमं वाम् ।
 रथाः इव ७, ७४, ६; ३८३ प्र ये ययुः अवृक्षामः ।
 रथम् न १, ११९, ७; १४४ वन्दनं निर्कतं जरण्यया ।
 रथम् न १०, १४३ १; ६२७ अग्निं नवं कृणुयः ।
 रथान् इव ५, ७३, १०; २६७ ब्रह्माणि तक्षाम ।
 रथ्या इव २, ३९, २; २१६ वीरा वरं आ सचेधे ।
 रथ्या इव २, ३९, ३; २१७ वाक्का अवाक्का यातम् ।

अश्विनौ-देवताया गुणबोधक-पदसूची ।

['अश्विना-नौ' इति द्विवचनामन्तं पदम्, अतस्तद्वोधकपदान्यपि द्विवचनान्तानि वर्तन्ते ।]

अङ्गिरस्वन्ता ८,३५,१४; ५२२
अजरौ १,११२,९; ६०
अर्तुर्दक्षा ८,२६,१; ४९०
अदाभ्या ५,७५,७-८; २८४-२८५
अधप्रिया ८,८४; ४२४
अग्निगू ५,७३,२; २५९ । ८,२२,११; ४८२
अध्वर्यन्ता १,१८१,१; १८५
अनपच्युता ८,२६,७; ४९६
अनिन्द्या १,१८०,७; १८१
अनुशासिता १,१३९,४; १६१
अभ्यायसेन्या १,३४,१; १२
अमर्त्या ८,२६,१७; ५०६
अरिप्रा ८,८,९; ४२९
अरेपसा १,१८१,४; १८८ । ५,७३,४; २६१
अर्वाचीना ५,७४,९; २७६ । ८,२२,३; ४७४
अवद्यगोहना १,३४,३; १४
अवितारा जनानाम् १,१८१,१; १८५
अश्रन्तौ ८,५,३१; ४१४
अश्वामघा ७,७१,१; ३६२
अस्मयू ७,७४,४; ३८१ । ८,२६,१४; ५०३
अस्त्रिधा ३,५८,७; २३२
अहर्विदा ८,५,९,२१; ३९२, ४०४
आजाता दिवः ४,४३,३; २४६
आशुहेषसा ८,१०,२; ४६६
इन्द्रतमा १,१८२,२; १९५
इषयन्ता ८,५,५,२६,३; ३८८, ४९२
ईळिता विमदेन १०,२४,४; ५८०
उग्रा १,१५७,६; १६८ । ६,६२,३; ३०८ ।
१०,१०६,७; ६२०
उपस्तुता १,१८१,७; १९१
उभा १,४६,१५; १२०,१२, ३८,१५९ । ८,८६,१;
१०१,७; १३१,५; ५६७,५७८, ६२६
उक्ता २,३९,३; २१७
ऋतासू १,१८०,३; १७७
ऋतावृषा १,४७,१,३,५; ३९४१,४३ । ८,८७,५; ५७६
ऋमुमन्ता ८,३५,१५; ५२३

कवी १,११७,२३; १२४ । ८,८,२,५,२३; ४२२, ४२५,
४४३ । १०,४०६; ६०२
कतुमन्ता १,१८३,२; २०३
कतुविदा २,३९,२; २१६
गन्तारा दाशुषो गृहम् ८,५,६; २२,३; ३८८, ४७४
गम्भीरचेतसा ८,८,२; ४२२
गृणाना जमदग्निना ८,१०१,८; ५७९
गोपा १०,४०,१२; ६०८
गोमघा ७,७१,१; ३६२
चक्रमाणा यज्ञम् आ ६,६२,७; ३०७
चरन्ता कामप्रेणेव मनसा १,१५८,२; १७०
चित्रराती ६,६२,५,११; ३१०, ३१६
च्यवाना ६,६२,७; ३१२
छर्विष्णौ ८,९,११; ४५४
जगत्पौ ८,९,११; ४५४
जर्भुराणा २,३९,३; २१७
जाता अप्सु १,१८४,३; २१०
,, इहेह १,१८१,४; १८८
जुषुषाणा गिरः ७,६८,१; ३३८
,, ब्रह्म स्तोमम् २,३९,८; २२२
जुषाणा ५,७५,३; २८०
,, उख्यस्य केतुं प्रथमम् वा० य० १४,१; ६३४
,, गिरः १,१८,१०; १३६
,, तिरोअह्वयम् ३,५८,७; २३२
,, सुष्टुतिम् १,११८,७; १३३
जुहुराणा आ ८,२६,५; ४९४
जेन्यावसू ७,७४,३; ३८०
तनूपा ८,९,११; ४४९
तिरोअह्वयं जुषाणा ३,५८,७; २३२
तृषाणा विद्युतम् ७,६२,६; ३५२
दंसिष्ठा १,१८२,२; १९५ । १०,१४३,३; ६२९
दक्षपिता वा० य० १४,३; ६३६
दधाना यामम् ७,६९,२; ३४८
दशस्यन्ता ६,६२,७; ३१२ । ८,२२,६; ४७७
दक्षा १,३,३; ३ । ३०,१७-१८, २-२०। ४६,२; २५। ४७.
३,६; ४१,४४। ९२,१८; ५१। ११६,१०,१६; ८६,९२।

१, ११७, ५, २०-२२; १०६, १२१-१२३ । ११८, ३, ६;
१२९, १३२ । ११९, ७; १४४ । १२०, ४; १५१ ।
१३९, ३-४; १६०-१६१ । १५८, १; १६९ ।
१८२, २-३; १९५-१९६ । १८३, ४-५; २०५-२०६ ।
३, ५८, ३, ५; २२८, २३० । ४, ४३, ४; २४७ । ४४, ६;
२५६ । ५, ७५, २, ९; २७९, २८६ । ६, ६२, ५; ३१० ।
७, ६८, १; ३३८ । ६९, ३; ३४९ । ८, ५, २, ११; ३८५,
३९४ । ८, १; ४२१ । २२, १७; ४८८ । २६, ८; ४९७ ।
८६, १; ५६७ । ८७, ५-६; ५७६-५७७ । १०, ४४,
१४; ६१०

दातुनस्पती ८, ८, १६; ४३६

दिवः आज्ञाता ४, ४३, ३; २४६

दिवि स्पृशा १, २२, २; ६

दिवो नपाता १, ११७, १२; ११३ । १८२, १; १९४ । १८४,
१; २०८ । ४, ४४, २; २५२

दिवो नरा १०, १४३, ३; ६२९

दिव्या ४, ४३, ३; २४६

दीर्घा १, १५, ११; ४ । ८, ५७, २; ५३७

देव ८, ९, ६; ४४९ । (छान्दसः ह्रस्वः)

देवा-नौ १, २२, २; ६ । २४, २; २५ । १८४, ३; २१० । ४,
१५, ९-१०; २३५-२३६ । ५, ७४, १-२; २६८-२६९ ।
७, ६७, ५; ३३२ । ७४, ४; ३८१ । ८, २२, ३; ४७४ ।
५७, १; ५३६ । १०, २४, ६; ५८२ । साम० ३०५;
६४१ । वा० य० २१, ५३; ६६४

देवौ १०, १८४, २; ६८७ । ८, ३५, ४-६; ५१२-५१४

द्रवत्पाणी १, ३, १; १

धर्तारो विदथस्य अथर्व ७, ७३, ४; ६८२

धर्मवन्ता ८, ३५, १३; ५२१

धियंजिन्वा १, १८२, १; १२४ । ८, २६, ६; ४९५

धिष्ण्या १, ३, २; २ । १८२, १-२; १९४-१९५ । २, ४१, ९;
२२५ । ५, ६३, ६; ३२२ । ७, ६७, १; ३२८ । ७२, ३;
३७० । ८, ५, १४; ३९७ । २६, १२; ५०१

धीज्वना ८, ५, ३५; ४१८

नपाता दिवः ४, ४, २; २५२

नरा १, ३, २; २ । ४६, ४; २७ । ४७, ८; ४६ । ११२, ३,
१६; ५४, ६७ । ११६, ७, ११-१२; ८३, ८७-८८ । ११७,
३-४, ६-७, १८, २४; १०४-१०५, १०७-१०८, ११९, १२५ ।
११८, ५, १०; १३१, १३६ । १८२, ८; २०१ । १८३,
३; २०४ । १८४, २; २०९ । २, ३९, ६; २२२ । ३, ५८,
६; २३१ । ५, ७३, ६-७; २६३-२६४ । ५, ७५, ६; २८३ ।

६, ६२, १; ३०६ । ६३, ५; ३२१ । ६९, ६; ३५२ ।
७४, २, ४; ३७९, ३८१ । ८, ५, १६, २२; ३९९, ४०५ ।
८, ८, ५-६, १७, २०-२१; ४२५-४२६, ४३७, ४४०-
४४१ । २२, ८, १२, १७; ४७९, ४८३, ४८८ । २६, ४, ११,
१६; ४९३, ५००, ५०५ । ३५, २३; ५३१ । ८५, ४-५;
५६१-५६२ । ८७, १-२; ५७२-५७३ । १०१, ८; ५७२ ।
१०, ४०, १, ३-५; ५९७, ५९९-६०१ । ४१, २; ६१२ ।
१४३, ३-४, ६; ६२९-६३०, ६३२

नवेदसा १, ३४, १; १२

नव्यौ १०, ३९, ५; ५८७

नाना जातौ ५, ७३, ४; २६१

नासत्या १, ३, ३; ३ । ३४, ७, ९-१०; १८, २०-२१ ।
४६, ५; २८ । ४७, ७, ९; ४५, ४७ । ११६, १-२, ४, ९-१०,
१३, १६-१७, १९-२०, २२, २३; ७७-७८, ८०, ८५, ८६,
८९, ९२-९३, ९५-९६, ९८-९९ । ११७, १, १३, २३;
१०२, ११४, १२४ । १, ८, ४, ११; १३०, १३७ । १८०,
९; १८३ । १८२, ८; २०१ । १८३, ३, ५; २०४,
२०६ । १८४, १, ३, ५; २०८, २१०, २१२ । २, ४१, ७;
३२३ । ३, ५८, ७; २३२ । ४, ४३, ७; २५० । ४४,
४, ७; २५४, २५७ । ५, ७३, ६-७; २६३-२६४ ।
७५, ६; २८३ । ६, ६२, १; ३०६ । ६३, ५; ३२१ ।
७, ६९, ६; ३५२ । ७४, २, ४; ३७९, ३८१ । ८, ५, १६,
२२; ३९९, ४०५ । ८, ५, ६, १७, २०-२१; ४२५-४२६,
४३७, ४४०-४४१ । २२, ८, १२, १७; ४७९, ४८३,
४८८ । २६, ४, ११, १६; ४९३, ५००, ५०५ । ३५, २३;
५३१ ।

नासत्या- ल्यौ ५, ७४, २; २६९ । ७५, ७; २८४ । ७८, १;
२९७ । ६, ६३, १, ४, ७, १०; ३१७, ३२०, ३२३, ३२६ ।
७, ६७, ३; ३३० । ७०, ६; ३६० । ७१, ४; ३६५ । ७२,
२-३, ५; ३६९-३७०, ३७२ । ७३, २, ५; ३७४, ३७७ ।
७४, ५; ३८२ । ८, ५, २३, ३२, ३५; ४०६, ४१५, ४१८ ।
८, १४-१५; ४३४-४३५ । ९, ६, ६, १५; ४४९, ४५२,
४५८ । २२, ५; ४७६ । २६, २, ८; ४९१, ४९७ । ४२,
४-६; ५३३-५३५ । ५७, १, ४; ५३६, ५३९ । ८५, १,
९; ५५८, ५६६ । १०१, ७; ५७८ । १०, २४, ४-५; ५८०-
५८१ । ३९, ३, ५; ५८५, ५८७ । १४३, ५; ६३१

निचेतारा १, १८४, २; २०९

नृपती ७, ६७, १; ३२८ । ७१, ४; ३६५

परस्या ८, ९, ११; ४५४

परिज्मानौ १, ४६, १४; ३७

पिपती मदे सोमस्य १,४६,१२; ३५
 पुनर्मन्यौ १,११७,१४; ११५
 पुराजा ७,७३,१; ३७३
 पुरुतमा ७,७३,१; ३७३
 पुरुत्रा २,३९,१; २१५ । ७,६९,६; ३५२ । ८,५,१६;
 ३९९ । ८,२२; ४४२
 पुरुदंसा १,३,२; २ । ६,६३,१०; ३२६ । ८,९,५;
 ४४८ । ८७,६; ५७७
 पुरुदंसा ७,७३,१; ३७३
 पुरुपन्था ६,६३,१०; ३२६
 पुरुप्रिया ८,५,४; ३८७
 पुरुभुजा १,३,१,१ । ५,७३,१; २५८ । ६,६३,५,८; ३२१,
 ३२४ । ८,८,१७; ४३७ । १०,६; ४७० । ८६,३; ५६२
 पुरुभू ४,४४,४; २५४
 पुरुभोजसा ८,२२,१६; ४८७
 पुरुमन्त १,१५८,१; १६९
 पुरुमन्त्रा ८,५,४; ३८७ । ८,१२; ४३२
 पुरुशाकतमा ६,६२,५; ३१०
 पुरुश्वन्त्रा ८,५,३२; ४१५
 पुरुस्पृहा ८,८,२२; ४४२
 पुरुहृता ६,६३,१; ३१७
 पुरु ५,७३,१; २५८ । ६,६२,२; ३०७
 पुरुवसू १,४७,१०; ४८ । ८,५,४; ३८७ । ८,१२, ४३२
 पौर [एकवचनम्] ५,७४,४; २७१
 प्रचेतसा यज्ञस्य अध्वरस्य ८,१०,४; ४६८
 प्रत्ना ६,६२,५; ३१०
 प्रथमा २,३९,३; २१७ । ५,७७,१; २९२
 प्रातर्यावाणा २,३९,२; २१६ । ५,७७,१ २९२
 प्रातर्युजा १,२२,१; ५
 प्रिया अर्यम्णः १०,४०,१२; ६०८
 प्रियमेधा ८,८,१८; ४३८
 प्रेष्ठा ६,६३,१; ३१७
 प्रेष्ठौ १,१८१,१; १८५
 बिभ्रता पुरु दंसांसि ५,७३,२; २५९,
 बिभ्रतौ रत्नानि ५,७५,३; २८०
 भिषजा १,११६,१६; ९२ । १५७,६; १६८ । ८,८६,१;
 ५६७ । १०,३९,३,५; ५८५,५८७ । वा० य० २१,५२;
 ६६३
 भिषजा देवानाम् वा० य० २१,५३; ६६४
 ॥ देव्या ८,१८,८; ४७१

भुजी ८८,२; ४२२
 भुरणा ७,६७,८; ३३५
 भुरण्यू ६,६२,७; ३१२
 महिष्ठा ८,५,५; ३८८ । २२,१२; ४८३ । १०,१४३ ६; ६३२
 मघवानः १,१८४,५; २१२ । ३,५८ ५; २३० । ८,२६,७; ४९६
 मदव्युता ८,२२,१६; ४८७ । ३५,१९-२१; ५२७-५२९
 मदन्ता १,१८४,२,५; २०९,२१२
 मधुपौ १,१८०,२; १७६
 मधुपातमा ८,२२,१७; ४८८ । ३५,२०-२१; ५२८-५२९
 मधुमत् १,११९,९; १४६
 मधुवर्णा ८,२६,६; ४९२
 मधूयुवा ५,७३,८; २६५ । ७४ ९; २७६
 मनावसू ५,७४,१; २६८
 मनोजवसा १,११७,१५; ११६ । ८,२२,१६; ४८७
 मनोतरा रयीणाम् १,४६,२; २५ । ८,८,१२; ४३२
 मन्दसाना ८,८७,२; ५७३ । १०,४०,१३; ६०९
 मयोजुवा १,२२,१८; ५१ । ५,७३,९; २६६ । ८,८ ९,१९;
 ४२९,४३९ । ८६,१; ५६७ । १०,३९,५; ५८७
 मरुत्तमा १,१८२,२; १९५
 मरुत्वन्ता ८,३५,१३-१५; ५२१-५२३
 मर्त्यत्रा ६,६२,८; ३१३
 मायाविना १० २४,४; ५८०
 मायिना ६,६३,५; ३२१
 मित्रावरुणवन्ता ८ ३५,१३; ५२१
 मिथुना १०,४०,१२; ६०८
 मिमाना पुरु वरांसि अमिता ६,६२,२; ३०७
 यजत्रा १,१८०,५; १७९ । ८,५७,१ ४; ५३६,५३९
 यज्ञवाहसा १,१५,११; ४
 यन्तौ पथा इव रजः १,१३२,४; १६१
 यमा २,३९,२; २१६
 यामहूतमा ८,७३,६; ५४५
 यावाणा प्रातः २,३९ २; २१६ । ५,७७ १; २९२
 युयुजानसमी ६,६२,४; ३०९
 युवाना १,११७ १४; ११५ । ३ ५८,७; २३२ । ६,६२,४;
 ३०९ । ७ ६७,१०; ३३७ । ६९,८; ३५४
 रक्षितारा २,३९,६; २२०
 रक्षोहणा ७ ७३,४; ३७६
 रत्नानि बिभ्रतौ ५,७५,३; २८०
 रथी अथर्व० ७ ७१,१; ६७२
 रथीतमा १,२२,२; ६ । १८२,२; १९५

रथ्या १,३४,७; १८। १५७,६; १६८। १८२,२; १९५
 ५,७५,५; २८२। ६,६२,७; ३१२
 रथिरा ७,६९,५; ३५१
 रराणा १,११७,२४ १२५
 राजन्तौ अध्वराणां ८,८ १८; ४३८
 राजानौ ६,६२,९; ३१४। १०,३९,११, ५९३
 रिणादसा ८,८,१७; ४३७
 रुद्रवर्तनी १,३,३; ३। ८,२२,१,१४; ४७२,४८५। १०,
 ३९,११, ५९३
 रुद्रा १,१५८,१; १६९। २,४१,७; २२३। ५,७३,८;
 २६५। ७५,३; २८१। ८,२६,५; ४९४
 सत्सप्रचेतसा ८,८,७; ४२७
 सधना ८,८,५; ४२५
 सल्लू ६,६२,५; ३१०। ६३,१; ३१७। ७,६८,४; ३४१
 ८,८७,६; ५७७
 समुधितौ १,१८१,१; १८५
 समुविदा धिया १,४६,२; २५
 समू १,१५८,१-२; १६९-१७०
 समी ८८,१२; ४३२
 साजयन्ता ८,३५,१५; ५२३
 साजसातमा ८५,५; ३८८
 साजिनीवन्तौ १,१२०,१०; १५७
 साजिनीवसू २,३७,५; २१४। ५७४,६-७; २७३-२७४।
 ७५,३; २८०। ७८,३; २९९। ८,५,३,१२,२०,३०;
 ३८६,३९५,४०३,४१३। ८,१०, ४३०। ९,४; ४४७
 १०,५; ४६९। २२,७,१४,१८, ४७८,४८५,४८९।
 २६,३; ४९२। ८५,३; ५६०। १०७,८; ५७९। १०,
 ४०,१२; ६०८
 वावसाना विवस्वति १,४६ १३; ३६
 वावृधाना ८,५,११; ३९४। ८७,४; ५७९
 विचेतसा ५,७४,९; २७६
 विद्वांसा सौ १,११६,११; ८७। १२०,२-३; १४९-१५०
 विपन्यू ८,८,१९; ४३९
 विप्रौ ८,२६,९; ४९८
 विप्रवाहसा ५,७४,७; २७४
 विपियाना १०,१३१,४; ६२५
 विस्पलावसू १,१८२,१; १९४
 विश्वगूर्तौ १ १८० २; १७६
 विश्ववारा ७,७०,१; ३५५
 विश्ववेदसा १,४७,४; ४२। १३९,३; १६०। १०,१४३,
 ६; ६३२

विश्वा ५,७३,४; २६१
 विष्णुवन्ता ८,३५,१४; ५२२
 वीरा २,३९,२; २१६
 वीळुपाणी ७ ७३,४; ३७६
 वृत्रहन्तमा ८,८ ९ २२; ४२९,४४२
 वृधन्ता १,१५८,१; १६९
 वृषणा- णौ १,११२,८,२३; ५२,७४। ११६,२१; ९७।
 ११७,३-४ ८,१२,१५,१८-१९; १०४-१०५,१०९,
 ११३,११६ ११९-१२०। ११८,६; १३२। ११९,४;
 १४१। १५७,५; १६७। १५८,१; १६९। १८० ७;
 १८१। १८१,८; १२२। १८३,१; २०२। १८४,२;
 २०९। ६,६२,७; ३१२। ७,७०,७; ३६१। ७१,६;
 ३६७। ७३,३; ३७५। ७४,३; ३८०। ८,२२,७,१२,
 १६; ४७८,४८३,४८७। २६ १-२,१२; ४९०-४९१,
 ५०१। ३५,१५, ५२३। १०,३९,९; ५२१। अथर्व०
 ७,७३,१; ६७९
 वृषण्वसू २,४१,८; २२४। ५ ७४,१; २६८। ७५,४ ९;
 २८१,२८६। ८,५,२४,२७,३६; ४०७,४१०,४१९।
 २२ ८-९; ४७९-४८०। २६,१-२,५,१५; ४९०-
 ४९१,४९४,५०४। ७३,१०; ५४९। ८५,७; ५६४
 शक्रा २,३९,३; २१७। १०,२७,४; ५८०।
 शशिष्ठा ४ ४३,३; २४६।
 शचीपती ७,६७,५,३३२
 शचीवसुः १,१३९,५; १६२। ७,७४,१; ३७८
 शतक्रतू १,११२,२३; ७४
 शम्भविष्ठा २,३९,५; २१९। ५,७६,२; २८८। ६,६२,५;
 ३१०
 शम्भुवा ८८,१९; ४३९
 शम्भू १ ४६,१३; ३६
 शयुत्रा १,११७,१२; ११३। १०,४०,२; ५९८
 शासता अञ्जसा रजः १,१३९,४; १६१
 शुचित्रता १,१५,११; ४। १८२,१; १९४।
 शुभस्पती १,३,१; १। ३४,६; १७। ४७,५; ४३। १२०,
 ६; १५३। ५,७५,८; २८५। ८,५,५,११; ३८८,३९४।
 २२,४,६,१४; ४७५,४७७,४८५। २६,६; ४९५।
 ८७,५; ५७६। १०,४०,४,१२-१४; ६००,६०८-६,१०।
 १३१,४; ६२५
 शुभाना स्पर्हया प्रिया ७,७१,१; ३६८
 शुभ्रा ७,६८,१; ३३८

शुभ्रयावाना ८, २६, १९; ५०८
 शुम्भमाने तन्वा २, ३९, २; २१६
 शुश्रुवांसा पुरुणि ब्रह्माणि ७, ७०, ४; ३५८
 शरसाता १, १५७, २; १६४
 शृण्वन्ता स्तुतिम् १, ३४, १२; २३
 स्वक्षणी ८, २२, १५; ४८६
 सचनस्तमा ८, २६, ८; ४९७
 सचाभुवा १, ३४, ११; २२ । १५७, ४; १६६
 सजोषसा ३, ५८, ७; २३२ । ७, ७२, २; ३३९ । ८, ९, १२;
 ४५५ । १०७, ७; ५७८
 सत्पती विदथस्य अथर्व० ७ ७३, ४; ६८२
 सत्या १, १८०, ७; १८१
 सध्रीचीना यातवे १०, १०६, १; ६१४
 सन्तौ १, १८४, १; २०८
 सपर्यन्ता ८, २६, १३; ५०२
 समनसा १, ९२, १६; ४७ । ७, ७४, २; ३७९
 सम्भृता ७ ७३, ४; ३७६
 सवासिनौ अथर्व० २, २९, ६; ६४२
 सिन्धुमातरा १, ४६, २; २५
 सुगोषा १, १२०, ७; १५४
 सुजाता १, ११८, १०; १३६

सुदंससा ८, १०, ३; ४६७
 सुदक्षा ३, ५८, ७; २३२
 सुदानू १, ११२, ११; ६२ । ११७, २०, २४; १२१, १२५ ।
 १८०, ६; १८० । १८४, ४; २११ । ३, ५८, ७; २३२
 सुपर्णा ४, ४३, ३; २४६
 सुयुजा ७, ७०, २; ३५६
 सुरथा १ २२, २; ६
 सुवीरा ८ २६, ७; ४९६
 सुश्रुता २, ३९, ६; २२०
 सुष्टुता ६, ६३, ६; ३२२
 सुहवा ८, २२, १; ४७२ । १०, ३९, ११; ५९३
 सूर्यावसू ७, ६८, ३; ३४०
 स्थविरा १, १८१, ७; १९१
 स्थातारा १, १८१, ३; १८७
 स्वविंदा ८, ८, ७; ४२७
 स्वश्वा ७, ६८, १; ३३८ । ६९, ३; ३४९
 हवनश्रुता ५, ७५, ५; २८२ । ८, ८, ७; ४२७
 हिरण्यपेशसा ८, ८, २; ४२२
 हिरण्यवर्तनी १, ९२, १८; ५१ । ५, ७५, २-३; २७९-२८० ।
 ८, ५, ११; ३९४ । ८, १; ४२१ । ८७, ५; ५७६
 होतारा देवानाम् वा० य० २१, ५३; ६६४

(१) सुरथा अश्विनौ । [अश्विनोः रथः ।]

अक्षः हिरण्ययः यस्य ८, ५, २९; ४१२
 अजरः ४, ४५, ७; २४३
 अत्यः १, १८०, २; १७६
 अद्रिजूतः ३, ३९, ८; २३३
 अनश्वः १, १२०, १०; १५७
 अनुगायस् ८, ५, ३४; ४१७
 अनेहस् ८, २२, २; ४७३
 अमर्त्यः ५, ७५, २; २८६
 अरिष्टनेमिः १, १८०, १०; १८४
 अश्वः ७, ७०, १; ३५५
 अश्वासाः ४ ४५, २; २३८
 अश्ववत् ७, ७२, १; ३६८
 असनः १, १२०, १०; १५७
 अहंपूर्वः १, १८१, ३; १८७
 आचितः १, १८१, २; १९५
 आशुः ४, ४३, २; २४५

इयानः अस्मभ्यम् ७, ६८, ३; ३४०
 इयानः याम् १, १८०, १०; १८४
 इषा वर्तते सह ८, ५, ३४; ४१७
 इषां वोळ्हा ७ ६९, १; ३४७
 ईषा हिरण्ययी राभिः ८, ५, २९; ४१२
 उक्थ्यः १०, १४१, १; ६११
 उग्रः ५, ७३, ७; २६४
 उल्लयामः ७, ७१, ४; ३६५
 उक्षाः वस्ते ७, ६९, ५; ३५१
 ऋतः २, ५८, २; २२७
 ऋतजाः ३, ३९, ८; २३३
 ककुहः १, १८१, ५; १८९ । ५, ७३, ७; २६४
 करिकत् भूरि वर्षः ३, ५८, ९; २३४
 क्षाम् अभियन् १, १८३, २; २०३
 निर्वाहस् ४, ४४, १; २५१
 गोमान् ७, ७२, १; ३६८

गोः संगतिः ४, ४४, १; २५१
 घृतवर्तनिः ७, ६९, १; ३४७
 घृतस्तुः ५, ७७, ३; २७४
 चक्रा उभा हिरण्यया ८, ५, २९; ४१२
 चक्रा त्री रथस्य १, ३४, ९; २०
 चक्रैः अन्तरैः युक्तः ६, ६२, १०; ३१५
 जयुस् १, ११७, १६; ११७ । १०, ३९, १३; ५९५
 जवीयान् निमिषाश्वत् ८, ७३, २; ५४१
 जवीयान् मनसः १, ११७, २; १०३ । १०, ३९, १२; ५९४
 जीराश्वः १, ११९, १; १३८ । १५७, ३; १६५
 तमः अपोर्णवन् ४, ४५, २; २३८
 त्रिचक्रः १, ११८, २; १२८ । १८३, १; २०२ । १०, ४१, १;
 ६११
 त्रिधातुः १, १८३, १; २०२
 त्रिवन्धुरः १, ४७, २; ४० । ११८, १-२; १२७-१२८ । १८३,
 १; २०२ । ७, ६९, २; ३४८ । ७१, ४; ३६५ । ८, २२,
 ५; ४७६ । ८५, ८; ५६५
 त्रिहृत् १, ३४, ९, १२; २०, २३ । ४७, २; ४० । ११८, २;
 १२८ । ८, ८५, ८; ५६५
 त्रिष्ठः १, २४, ५; १६
 द्वंसिष्ठः ८, २२, १; ४७२
 दिविस्पृक् ८, ५, ३५; ४१८
 दक्षिः तुरीयः मधुनः ४, ४५, १; २३७
 क्षुमान् ६, ६२, १०; ३१५ । १०, ४०, १; ५९७
 द्रवत्पाणि ८, ५, ३५; ४१८
 द्रवदश्वः ४, ४३, २; २४५
 नर्यः १, १८०, २; १७६
 नव्यः १, १८०, १०; १८४
 निचेरुः १, १८१, ५; १८९
 निष्पाट् १, १८१, ६; १९०
 नूतनः ५, ७८, ४; ३०२
 नृपतिः ७, ६९, १; ३४७
 नृवान् ६, ६२, १०; ३१५
 नृवाहणः २, ३७, ५; २१४
 पप्रथानः पञ्च भूम ७, ६९, २; ३४८
 परिजमन् १०, ३९, १; ५८३ । ४१, १; ६११
 पवयः त्रयः तस्य १, ३४, २; १३ । १५७, ३; १६५ । १०,
 ४१, २; ६१२
 पवयः प्रुषायन्ते १, १३९, ३; १६०
 पविभिः रुचानः ७, ६९, १; ३४७

पिशाः रूपः १, १८१, ५; १८९
 पुरुतमः ४, ४४, १; २५१
 पुरुमुष्-ट् ८, २२, २; ४७७
 पुरुमायः १, ११९, १; १३८
 पुरुश्चन्द्रः ७, ७२, १; ३६८
 पुरुस्तृहः ८, २२, २; ४७३
 पुरुहूतः १०, ४१, २; ६११
 पूर्वापुष् ८, २२, २; ४७३
 पूर्व्यः वाजेषु ८, २२, २; ४७३
 पृक्षः वहन् ५, ७७, ३; २९४
 पृक्षासः ४, ४५, २; २३८
 पृक्षासः अस्मिन् मिथुना अधि त्रयः ४, ४५, १; २३७
 पृथुज्जयः ४, ४४, १; २५१
 पृथुपाजस् ८, ५, २; ३८५
 प्रयज्युः १, १८०, २; १७६
 प्रवत्वात् १, १८१, ३; १८७
 प्रवद्यामन् १, ११८, ३; १२९
 प्रातर्यावान् १०, ४०, १; ५९७ । ४१, २; ६१२
 प्रातर्युज् १०, ४१, २; ६१२
 प्रियतमः ५, ७५, १; २७८
 बद्धधानः रोदसी ७, ६९, १; ३४७
 बाधते न चक्रमभि ८, ५, ३४, ४१७
 भुज्युः ८, २२, २; ४७३
 मघवान् १, १५७, ३; १६५
 मधुमन्तः ४, ४५, २; २३८
 मधुवर्णः ५, ७७, ३; २९४
 मधुवाहनः १, ३४, २; १३ । १५७, ३; १६५ । १०, ४१, २; ६१२
 मध्वः पूर्णः १, १८२, २; १९५
 मनसः जवीयान् १, ११७, २; १०३ । १८३, १; २०२ ।
 १०, ३९, १२; ५९४
 " " मर्त्यस्य १, ११८, १; १२७
 " " वृष्णः १, १८१, ३; १८७
 मनसा युक्तः ७, ६९, २; ३४८
 मनोजवाः १, ११७, १५; ११६ । ५, ७७, ३; २९४ । ६, ६३,
 ७; ३२३ । ७, ६८, ३; ३४०
 मनोजः १, ११९, १; १३८
 मनोयुज्-क् ८, ५, २; ३८५
 यक्षियः १, ११९, १; १३८
 ययिः ५, ७३, ७; २६४
 यय्यः २, ३७, ५; २१०

यात् १०४०,१; ५९७
यामः १,३४,१; १२
युक्तः मनसा ७,६९,२; ३४८
युजानः ७,६९,५; ३५१
युषायुजम् (द्वितीया) १,११९,५; १४२
रघुवर्तनिः ८,९,८; ४५१
रघुस्य-घ्य-द् ५ ७३,५; २६२
रजः शुक्रं तन्वन्तः ४ ४५,२; २३८
रथानां येष्टः ५,७४,८; २७५
रातिः १,३४,१; १२
घनिन् (नी) १,११९,१; १३८
वन्धुरायुः ४,४४,१; २५१
वर्षः करिक्त भूरि ३,५८,९; २३४
वसुमान् १,११८,१०; १३६ । ७,६७,३; ३३० । ७१,३-४,
३६४-३६५
वसुवाहनः ५,७५,१; २७८
वसूयुः ४,४४,१; २५१
वस्ते उस्त्राः ७,६९,५; ३५१
वहमानः विशेषे विशेषे वस्तोः वस्तोः १०,४०,१; ५९७
वाजिनीवान् ७,६९,१; ३४७
वाजी ७,७०,१; ३५५
वाजेषु पूर्व्यः ८,२२,२; ४७३
वातरंहाः १,११८,१; १२७ । ५,७७,३; २९४
वाहिष्ठः ८,२६,४; ४९३
विद्वथ्यः १०,४१,१; ६११
विद्वेषसः ८,२२,२; ४७३
विपत्सन् १,१८०,२; १७६
विभिन्दुना (तृतीया) १,११६,२०; ९६
विभुः १,३४,१; १२
विभ्वः १०४०,१; ५९७
विमोचनः वाम् २,३७,५; २१४
विश्वस्न्यः ७,७१,४; ३६५
विश्वसौभगः १,१५७,३; १६५
वीड्वङ्गः ८,८५,७; ५६४
वृक्षः निष्ठितः १,१८२,७; २००
वृषणः-णम् १,१५७,२; १६४ । ५,७५,१; २७८
वृषण्वान् १,१८२,१; १२४
वृषभिः अश्वैः युक्तः ७,६९,१; ३४७
वोळ्हा ७,७१,४; ३६५
वोळ्हा इषाम् ७,६९,१; ३४७
व्रतानि अनु वर्तते यः १,१८३,३; २०४

दे०[अश्विनो] १०

शतद्वसुः १,११९,१; १३८
शतोतिः ६,६३,५; ३२ । ७,६८,३; ३४०
शन्तमः ५,७८,४; ३००
शरद्वान् १ १८१,६; १९०
शुनपृष्ठः ७ ७०,१; ३५५
श्येनपत्वा १ ११८,१; १२७
श्येनस्य चित् जवसा (रथेन) ५,७८,४; ३००
श्रुतः ८ २२,५; ४७६ । २६,४; ४९३
श्रुष्टीवान् १,११९,१; १३८
सचनः १,११६ १८; ९४
सचनावान् सुमतिभिः ८,२२,२; ४७३
सन्तनिः ५,७३,७; २६४
समानः १०,४१,१; ६११
समानयोजनः १,३०,१८; १०
सहस्रक्रेतुः १,११९,१; १३८
सहस्रनिर्णिक् ८,८,११,१४; ४३१,४३४
सुखः १,१२०,११; १५८
सुपेशस् (शाः) १,४७,२; ४०
सुमतिभिः सचनावान् ८,२२,२; ४७३
सुमृळीकः १,११८,१; १२७
सुयुज् १,११७,१५; ११६
सुवृत् १ ४७ ७; ४५ । ११८,२-३; १२८-१२९ । १८३;
२-३; २०३-२०४ । ३,५८,३, २२८ । ४,४४,५;
२५५ । १०,३९,१; ५८३
सुवृत्तः १,१५७,३; १६५
सुहवः ८,२२,२; ४७३
सूर्यत्वक् १,४७,९; ४७ । ८,८,२; ४२२
सूर्या यः वहति ४,४४,१; २५१
सुप्रवन्धुरः १,१८१,३; १८७
सेनाजः [जुवा-तृतीया] १,११६,१; ७७
स्कम्भासः (यस्य) त्रयः स्कभितासः १,३४,२; १३
स्यूमगभस्तिः ७,७१,३; ३६४
स्वर्विद् ७,६७,३; ३३०
स्ववान् १,११८,१; १२७
स्वश्वः १,११७,२; १०३ । ४,४५,७; २४३
हविष्मान् १,१८३,३; २०४
हिरण्यत्वक् ५ ७७,३; २९४
हिरण्ययः १,१३९,३-४; १६०-१६१ । ४,४४,४-५; २५४-
२५५ । ७,६९,१; ३४७ । ८,५,३५; ४१८ । ८,२२,९; ४८०
हिरण्यवन्धुर ८,५,२८; ४११
हिरण्यामीशुः ८,५,२८; ४११ । २२,५; ४७६

(२) स्वश्वौ अश्विनौ । [अश्विनोः अश्वाः ।]

अज्राः ६, ६२, २; ३०७
 अत्याः १, १८१, २; १८६
 अध्वरथियः १, ४७, ८; ४६
 अप्तुरः १, ११८, ४; १३०
 अरुषाः-पासः १, ११८, ५; १३१ । ४, ४३, ६; २४९
 अवमाभिः (तृतीया) ६, ६२, ११; ३१६
 अध्याः-धासः १, ११८, ५; १३१ । ६, ६३, ७; ३२३ । ८, ५, ७
 ३९०
 अलिधः ४, ४५, ४; २४०
 अहभिः दविश्वतः ४, ४५, ६; २४२
 आकेनिपासः ४, ४५, ६; २४२
 आशवः १, ११८, ४; १३० । ८, ५, ७; ३९०
 आशुहेमानः १, ११६, २; ७८
 इषिराः ६, ६२, ३; ३०८
 उदमुतः ४, ४५, ४; २४०
 उषर्बुधः १, ९२, १८; ५१ । ४, ४५, ४; २४०
 उहुवः ४, ४५, ४; २४०
 ऋतयुजः ७, ७१, ३; ३६४
 एवाः १, १८१, ६; १९०
 ककुहासः ४, ४४, २; २५२
 तरणयः ७, ६७, ८; ३३५
 दिव्यासः १, १८१, २; १८६
 दिव्यासो न गृध्राः १, ११८, ४; १३०
 देवयुक्ताः ७, ६७, ८; ३३५
 द्रवत्पाणयः ८, ५, ३५; ४१८
 नियुतः ६, ६२, ११; ३१६
 पतङ्गाः १, ११८, ४-५; १३०-१३१
 पयस्याः १, १८१, २; १८६
 परमाभिः (तृतीया) ६, ६२, ११; ३१६
 पर्णिनः ८, ५, ३३; ४१६
 मुषितप्सवः ८, ५, ३३; ४१६ । ८७, ५; ५७६
 मक्षयवः ७, ७४, ४; ३८१

मधुमनाः ४, ४५, ४; २४०
 मध्यमाभिः (तृतीया) ६, ६२, ११; ३१६
 मनोजवसः ६, ६२, ३; ३०८
 मनोजुवः १, १८१, २; १८६
 मन्दिनः ४, ४५, ४; २४०
 मन्दिनिस्पृशः ४, ४५, ४; २४०
 युक्ता वृषभश्च शिशुमारश्च १, ११६, १८; ९४
 युक्तासः रथे १, ११८, ४; १३०
 रजः शुक्रं आतन्वन्तः ४, ४५, ६; २४२
 रजांसि सुयमासः १, १८०, १; १७५
 रासभः १, ११६, २; ७८ । ८, ८५, ७; ५६४
 वपुषः १, ११८, ५; १३१
 वयः १, ११८, ५; १३१ । ४, ४३, ६; २४९ । ६, ६३, ७-७;
 ३२२-३२३ । ८, ५, ३३; ४१६
 वहिष्ठाः ६, ६३, ७; ३२३
 वाजाः १, १८१, ६; १९०
 वातरंहसः १, १८१, २; १८६
 वीतपृष्ठाः १, १८१, २; १८६
 वील्युपत्मानः १, ११६, २; ७८
 वृषणः १, १८१, २; १८६ । ७, ६९, १; ३४७ । ७१, ३; ३६४
 शुचयः १, १८१, २; १८६
 श्येनासः १, ११८, ४; १३० । ८, ५, ७; ३९०
 सप्तयः १, ४७, ८; ४६
 सुभ्वः ७, ६७, ८; ३३५
 सुन्नायवः ७, ७१, ३; ३६४
 सुयमासः रजांसि १, १८०, १; १७५
 सुयुजः ३, ५८, २-३; २२७-२२८
 स्थविरासः ७, ६७, ४; ३३१
 स्वराजः १, १८१, २; १८६
 हंसासः ४, ४५, ४; २४०
 हयाः ७, ७४, ४; ३८१
 हरी १, १८१, ५; १८९
 हिरण्यपर्णाः ४, ४५, ४; २४०

(३) अश्विनोः सञ्चारः ।

(१) पृथिव्याम् ।

४,४५,७; २४३ येन (रथेन) सद्यः परि रजांसि याथः ।
५,७३,३; २६० ईर्मान् यद् वपुषे वपुः चक्रं रथस्य येमथुः ।
पर्यन्या नाहुषा युगा मद्वा रजांसि दीयथः ॥
७,६९,२; ३४८ स [रथः] पप्रथानः अधि पञ्च भूमा ।

(२) दिवि ।

१,११९,३; १४० युवोरह प्रवणे चेकिते रथः ।
१,१३९,४; १६१ अचेति दत्ता व्युनाकमृण्वथः युजते वां
रथयुजो दिविष्टिषु पथेव यन्ता... रजः ।
१,१८०,१०; १८४ तं वा रथं वयमद्या हुवेम ... धामियानम् ।
८,९,११; ४६४ यन्नूनं धीभिरश्विना पितुर्याना निषीदथः ॥
८,२९,४; ४७५ युवो रथस्य परि चक्रमीयते ईर्मान् यद्वा
इष्यति ।
८,८३,७; ४२७ दिवाश्विद्रोचनादाधि आ नो गन्तं स्वर्विदा ।
१,१८३,६; २०७ एह यातं पथिभिर्देवयानैः ।
१,१८४,६; २१३
३,५८,५; २३०
७,७०,३; ३५७ यानि स्थानानि अश्विना दधाथे दिवो यद्वा-
ण्वोषधीषु विश्व । नि पर्वतस्य मूर्धनि सदन्त ॥

(३) द्यावापृथिव्योः ।

१,३४,८; १९ तिस्रः पृथिवीरुपरि प्र वा दिवो नाकं रक्षेथ
शुभिरक्तुभिर्हितम् ।
३,५८,८; २३३ रथो ह वां ऋतजा अद्रिजृतः परि द्यावा-
पृथिवी याति सद्यः ।
४,४४,५; २५५ आ नो यातं दिवो अच्छा पृथिव्या हिरण्य-
येन सुयुता रथेन ।
८,१०,६; ४७० यदन्तरिक्षे पतथः पुरुभुजो यद्वेमे रोदसी
अनु । यद्वा स्वधाभिरधितिष्ठथो रथे...
अत आयातमश्विना ॥
८,२२,५; ४७६ [वां रथः] परि द्यावापृथिवी भूपति श्रुतः ।
८,७३,१३; ५५२ यो वां रजांस्यश्विना रथो वि याति रोदसी ।
८,८३,३; ४२३ आ यातं नहुषस्परि आन्तरिक्षात् सुवृक्तिभिः ।
८,८३,४; ४२४ आ नो यातं दिवस्परि अन्तरिक्षादध प्रिया ।

(४) परावति ।

१,३४,७; १८ परि त्रिधातु पृथिवीमशायतम् । तिस्रो
नासत्या रथ्या परावत आत्मेव वातः
स्वसराणि गच्छतम् ॥

१,४७,७; ४५ यज्ञासत्या परावति यद्वा स्थो अधि तुर्वशे ।
अतो रथेन सुयुता न आ गतं साकं सूर्यस्य
रश्मिभिः ॥
५,७३,१; २५८ यदद्य स्थः परावति यदवावति अश्विना ।
यद्वा पुरु पुरुभुजा यदन्तरिक्ष आ गतम् ॥
८,५,८; ३९१ येभिस्तिष्ठः परावतो दिवो विश्वानि रोचना ।
त्रौरक्तून् परि दीयथः ॥
८,८,१४; ४३४ यज्ञासत्या परावति यद्वा स्थो अश्वम्बरे ।

(५) जले ।

१,३०,१८; १० समानयोजनो हि वां रथः ... समुद्रे अश्विने-
यते ।
५,७३,८; २६५ यत् समुद्राति पर्यथः ।
६,६२,२; ३०७ पुरु वरांसि अमिता मिमाना अपो धन्वा-
न्यति याथो अजान् ।
७,६७,८; ३३५ परि वां सप्त स्रवतो रथो गात ।
४,४३,६; २४९ सिन्धुर्ह वां रसया सिमदध्वान् वृणा वयो-
ऽरुपासः परि गमन् ।

(६) दिवि जले च ।

१,४६,८; ३१ अरित्रं वा दिवस्पृथु तीर्थं सिन्धूनां रथः ।
१,१८०,१; १७५ युवो रजांसि सुयमासो अश्वा रथो यद्वां
परि अर्णांसि दीयन् ।
४,४३,५; २४८ उरु वां रथः परि नक्षति द्यामा यत् समुद्रा-
दभि वर्तते वाम् ।
५,७६,४; २९० आ नो दिवो बृहतः पर्वतान् आ अद्भयः
यातम् ।
८,२६,१७; ५०६ यददो दिवो अर्णव इषो वा मदथो गृहे ।
८,१०,१; ४६५ यत् स्थो दीर्घप्रसन्ननि यद्वादो रोचने दिवः ।
यद्वा समुद्रे अध्याकृते गृहेऽत आ यात-
मश्विना ॥

(७) सर्वदिक्षु ।

७,७२,५; ३७२ } आ पश्चात्ताज्ञासत्या पुरस्तान् अश्विना
७,७३,५; ३७७ } यातमधरादुदक्तान् ।
८,१०,५; ४६९ यदद्याश्विनावपाग् यत् प्राक् स्थो वाजि-
नीवसू । यद् दुष्यवि अनवि तुर्वशे यदो हुवे
वामथ मा गतम् ॥

(८) अन्यदेवैः सह ।

८,९,१३; ४५५ यदिन्द्रेण सरथं याथो अश्विना
यद्वा वायुना भवथः समोकसा ।
यदादित्येभिर्ऋभुभिः सजोषसा
यद्वा विष्णोर्विक्रमणेषु तिष्ठथः ॥

(९) आशातः ।

१,२२,४; २८ न हि वामास्ति दूरके यत्रा रथेन गच्छथः ।

५,७५,७; २८४ तिरश्चिर्दर्यया परि वर्तिर्यातमदाभ्या ।
५,७४,१; २६८ कूष्ठो देवावश्विनाऽद्या दिवो मनावसू ?
५,७४,२; २६९ कुह त्या कुह नु श्रुता दिवि देवा नासत्या ?
८,७३,४; ५४३ कुह स्थः ? कुह जग्मथुः ? कुह श्येनेव पेतथुः ?
८,७३,५; ५४४ यदय कर्हि कर्हिवित् शुश्रूयातमिमं हवम् ।
१०,४०,२; ५९८ कुह स्विद् दोषा ? कुह वस्तोरश्विना ?
कुहाभिपित्वं करतः ? कुहोषतुः ? ।

(४) अश्विनोः आवाहनकालः ।

१,११८,११; १३७ हवे हि वामश्विना रातहव्यः शश्वत्तमाया
उषसो व्युष्टौ ।
७,६८,२; ३४६ अग्रे बुधानः उषसां सुमन्मा ।
७,६९,५; ३५१ तेन नः शंयोरुषसो व्युष्टौ न्यश्विना वहतं
यज्ञेऽस्मिन् ।
७,७१,३; ३६४ आ वां रथमवमस्यां व्युष्टौ...वर्तयन्तु ।
७,७१,४; ३६५ यो वां रथः... उच्यामा ।
७,७२,४; ३७१ विचेदुच्छन्ति उषासः प्र वां ब्रह्माणि कारवो
भरन्ते ।
१०,४१,१; ६११ वयं व्युष्टौ उषसो हवामहे ।
५,७६,१; २८७ आ भात्यमिरुषसामनीकं अर्वाद्या ... नूनं
रथेह यातम् ।
५,७६,२; २८८ दिवाभिपित्वेऽवसागमिष्ठा ।
१,११२,२४; ७५ अयूत्येऽवसे नि ह्वये वाम् ।
२,३९,२; २१६ प्रातर्यावाणा ।
५,७७,१; २९२ , , , ।
" " प्रातर्हि यज्ञमश्विना दधाते ।
५,७७,२; २९३ प्रातर्यजध्वमश्विना ।
८,२२,१५; ४८६ आ सुगम्याय...प्राता रथेनाश्विना हुवे ।
१०,४०,१; ५९७ प्रातर्यावाणं रथम् ।
१०,४०,३; ५९९ प्रातर्जरेथे जरणेव कापया ।
१०,४१,२; ६१२ प्रातर्युजं नामत्याधि तिष्ठथः प्रातर्यावाणं...

रथम् ।
८,२२,११; ४८२ इदा चिदहो हवामहे ।
८,२२,१३; ४८४ ताविदा चिददानाम्...वन्दमान उप ह्वे ।
८,२२,१४; ४८५ तावित् दोषा ता उषसि शुभस्पती ता
यामन् [हवामहे] ।
१०,३९,१; ५८३ यो वां रथो दोषामुषासो हव्यः...तमु
वामिदं वयं सुहवं हवामहे ।
१०,४०,४; ६०० दोषा वस्तोर्हविषा नि ह्वयामहे ।
७,७१,२; ३६३ उपायातं दाशुषे... ।
दिवा नक्तं माध्वी त्रासीथां नः ॥
१,११२,२५; ७६ युभिः अक्तुभिः पारे पातमस्मान् ।
१,३४,१; १२ त्रिश्विन्नो अद्या अवतम् ।
१,३४,३; १४ समाने अह । त्रिरवयगोहना त्रिरथ यज्ञं
मधुना मिमिक्षतम् ।
१,३४,४; १५ त्रिर्वर्तिर्यातम् ।
८,३५,७-९; ५१५-५१७ , , ,
८,२६,३; ४९२ ता वामय हवामहे... अति क्षयः ।
८,७३,६; ५४५ अश्विना यामहूतमा नेदिष्ठं याम्याप्यम् ।
१,४६,१४; ३७ ऋता वनथो अक्तुभिः ।
५,७६,३; २८९ उता यातं संगवे प्रातरहो मध्यन्दिन उदिता
सूर्यस्य । दिवा नक्तमवसा शंतमेन ॥

(५) अश्विनोः भिषक्कर्म ।

(१) भिषजा ।

भिषजा १,११६,१६; ९२ । १५७,६; १६८ । ८,८६,१;
५६७ । १०,३९,५; ५८७ । वा० य० २१,५२; ६६३
भिषजा स्तस्य चित् १०,३९,३; ५८५ अन्धस्य चित् ...
कुशस्य चित्... ।

भिषजा देवानाम् वा० य० २१,५३; ६६४

भिषजा दैव्या ८,१८,८; ४७१

(२) भिषक्कर्म ।

१,३४,६; १७ त्रिर्नो अश्विना दिव्यानि भेषजा त्रिः पार्थि-
वानि त्रिरुदत्तमद्भ्यः ।

१.१५७,६; १६८ युवं ह स्थः भिषजा भैषजेभिः ।
 ८,९,६; ४४२ यज्ञासत्या भुरण्यथः यद् वा देव भिषज्यथः ।
 ८,९,१५, ४५८ यज्ञासत्या पराके अर्वाके अस्ति भैषजम् ।
 तेन नूनं विमदाय प्रचेतरा छर्दिर्वत्साय
 यच्छतम् ।
 ८,२२,१०; ४८१ तामिनो मक्षू तूयमश्विना गतं भिषज्यतं
 यदातुरम् ॥

८,३५,१६-१८; ५२४-५२६ सेधतममीवाः ।
 ७,७०,३; ३५७ यानि स्थानानि अश्विना दधाथे दिवो यद्वीषु
 ओषधीषु विक्षु ।
 ७,७०,४; ३५८ चनिष्टं देवा ओषधीष्वप्सु
 १,१५७,५; १६७ युवं ह गर्भं जगतीषु धत्थः युवं विश्वेषु
 भुवनेषु अन्तः । युवमग्निं च वृषणावपश्च
 वनस्पतीरश्विना वैरयेथाम् ॥
 ७,७१,२; ३६३ युयुतमम्मदनिराममीवान् ।

(६) अश्विनोः सूर्याग्न्युषसां च सम्बन्धः ।

१.४६,१; २४ ण्षो उषा अपूर्व्या व्युच्छति प्रिया दिवः ।
 स्तुषे वामश्विना बृहत् ॥
 १.४६,१०; ३३ अभूद् भा उ अंशवे हिरण्यं प्रति सूर्यः ।
 व्यख्यज्जिह्वासित ॥ (तत्तदिदश्विनोरवः)
 १.४६,१४; ३७ युवोरुषा अनु श्रियं परिज्मनोरुपाचरत् ।
 १,१५७,१; १६३ अबोध्यमिज्म उदेति सूर्यः व्युषाश्चन्द्रा
 मह्यावो अर्चिषा । आयुक्षातामश्विना यातवे
 रथं वासावीद् देवः सविता जगत् पृथक् ॥
 १,१८०,१; १७५ मन्वः पिषन्ता उषसः सचेथे ।
 १. ८३,२; २३ दिवो दुहित्रा उषसा सचेथे ॥
 ३,५८,१; २२६ धेनु प्रत्नस्य काम्यं दुहान ऽन्तः पुत्रश्चरति
 दक्षिणायाः । आ द्योतनिं वहति शुभ्रयामा
 उषसः स्तोमो अश्विनावजीगः ॥
 ३,५८,४; २२९ इमा हि वां गोऋजीका मधूनि प्र मित्रासो
 न ददुरुमो अग्रे ।
 ४,४५,१-२; २३७-२३८ एष स्य भानुरुदियति युज्यते रथः
 परिज्मा दिवो अस्य सानवि । पृक्षासो
 अस्मिन् मिथुना अधि त्रयो हतिस्तुरीयो
 मधुनो वि रप्शते ॥
 उद्रां पृक्षासो मधुमन्त ईरते रथा अश्वास
 उषसो व्युष्टिषु । अपोर्ण्वन्तस्तम आ परी-
 वृतं स्वर्णं शुक्रं तन्वन्त आ रजः ॥
 १,९२,१८; ५१ (अश्विनोः अश्वासः) उषर्वुधः ।
 ४.४५,४; २४० अभूदुषा रुशत् पशुरामिरधायृतृवियः ।
 ५,७५,९; २८६ अयोजि वां वृषण्वसू रथः ।

५,७६,१; २८७ आ भात्यग्निरुषसामनीकम् उद् विप्राणां
 देवया वाचो अस्थुः । अर्वात्रा नूनं रथेह
 यातम् ।
 ६,६२,१; ३०६ या सद्य उषा व्युषि ज्मो अन्तान् युयूषतः
 पर्युक्तं वरांसि ॥
 ६,६३,६; ३२२ युवं श्रीभिर्दशताभिराभिः शुभे पुष्टिमृहथुः
 सूर्यायाः ।
 ७,६७,२-३; ३२९-३३० अशोच्यमिः समिधानो अस्मे उपो अहध्रन्
 तमसश्चिदन्ताः । अचेति केतुरुषसः पुर-
 स्तात् श्रिये दिवो दुहितुर्जायमानः ॥
 अभि वां नूनमश्विना सुहोता स्तोमैः सिषक्ति
 नासत्या विवक्तान् ।
 ७,७२,३; ३७० जामि ब्रह्माणि उषसश्च देवीः ।
 ७,७२,४; ३७१ वि चेदुच्छन्त्यश्विना उषासः प्र वां ब्रह्माणि
 कारवो भरन्ते । ऊर्ध्वं भानुं सविता देवो
 अश्रेत् बृहदमयः समिधा जरन्ते ॥
 ८,५,२; ३८५ रथेन पृथुपाजसा । सचेथे अश्विनोषसम् ।
 ८,८,२ ४२२ आ नूनं यातमश्विना रथेन सूर्यत्वचा ॥
 ८,९,१६-१८ ४५९-४६१ अभुत्स्यु प्र देव्या साकं वाचाहमश्विनोः ।
 व्यावर्देव्या मतिं वि रातिं मर्त्येभ्यः ॥
 प्र बोधयोषो अश्विना प्र देवि सूनूते महि ।
 प्र यज्ञहोतरानुषक् प्र मदाय श्रवो बृहत् ॥
 यदुषो यासि भानुना सं सूर्येण रोचसे ।
 आ हायमश्विनो रथो वर्तिर्यानि नृपाय्यम् ॥

८,३५,१-३; ५०९-५११ सृजोषसा उषसा सूर्येण च सोमं
पिबतमश्विना ॥
४-६; ५१२-५१५ ,, इषं नो वोळ्हमश्विना ॥
७-९; ५१५-५१७ ,, त्रिर्वित्यार्तमश्विना ॥
१०-१२; ५१८-५२० ,, ऊर्जं नो धत्तमश्विना ॥
१३-१५; ५२१-५२३ ,, आदित्यैर्यातमश्विना ॥
१६-१८; ५२४-५२६ ,, सोमं सुन्वतो अश्विना ॥

८,३५,१९-२१; ५२७-५२९ ,, अश्विना तिरोअहयम् ॥
८,७३,१६-१७; ५५५-५५६ अरुणसुरुषा अभूदकज्योतिर्ऋतावरी ।
अन्ति षम्भूतु वामवः ॥
अश्विना सुविचाकशात् वृक्षं परशुमौ इव ।
अन्ति षम्भूतु वामवः ॥
१०,३९,१२; ५९४ यस्य [रथस्य] योगे दुहिता जायते दिवः
उभे अहनी सुदिने विवस्वतः ॥

अश्विनोः मन्त्रेषु व्यक्तिनामानि ।

अंशुः स्तोता । ८,५,२६; ४०९
अगस्त्यः स्तोता । १,१८०,८; १८२ । १८४,५; २१२ ।
८,५,२६; ४०९
अघाश्वः अवितः । (पेदुनामा राजर्षिः) १,११६,६; ८२
अङ्गिराः स्तोता । १,११२,१८; ६९
अत्रिः द्रष्टा । ५,५३,६-७; २६३-२६४ । ७४,१; २६८ ।
१०,१४३,१-३; ६२७-६२९ । (अवितः) १,११२,७,१६;
५८,६७ । ११६,८; ८४ । ११७,३; १०४ । ११८,७;
१३३ । ११९,६; १४३ । १८०,४; १७८ । १८३,
५; २०६ । ७,६८,५; ३४२ । ७१,५; ३६६ । ८,५,
२५; ४०८ । ३५,१९; ५२७ । (स्तोता) ८,४२,५;
५३४ । ७३,३,७-८; ५४२,५४६-५४७ । १०,३९,९;
५९१ । ५,७८,४; ३००
अग्निगुः राजा । १,११२,२०; ७१ । ८,२२,१०; ४८१
अनुः स्तोता । ८,१०,५; ४६९
अन्तकः राजर्षिः अवितः । १,११२,६; ५७
अवस्युः द्रष्टा । ५,७५,८; २८५
आजमीढाहासः द्रष्टारः । ४,४४,६; २५६
आर्चत्कः शरः अवितः । १,११६,२२; ९८
आर्जुनेयः कुत्सः अवितः । १,११२,२३; ७४
उपस्तुतः अवितः । १,११२,१५; ६६ । ८,५,२५; ४०८
ऋज्राश्वः १,११६,१६; ९२ । ११७,१७-१८; ११८-११९ ।
१२०,६; १५३
ऋतस्तुम् १,११२,२०; ७१
औचथ्यः मन्त्र-द्रष्टा । १,१५८,१,४; १६९,१७२
औशिजः द्रष्टा । १,११९,९; १४६
औशिजः कक्षीवान् (दीर्घतमसः पत्नी उशिक् तस्याः पुत्रः
दीर्घश्रवाः) अवितः । १,११२,११; ६२
कक्षीवान् १,११२,११; ६२ । ११६,७; ८३ । ११७,६;
१०७ । १२०,५; १५२ । (स्तोता) ८,९,१०; ४५३
कण्वः, कण्वस्य पुत्रः, कण्वागः वा द्रष्टारः । १,४६,९; ३२।

४७,२,४-५,१०; ४०,४२-४३,४८ । ८,५,४-५,२३,
२५; ३८७-३८८,४०६,४०८ । ८,३; ४२३ । ९,२४;
४५७ । १०,२; ४६६
कण्वः अवितः । १,११२,५; ५६ । ११७,८; १०९ । ११८,
७; १३३ । ८,८,२०; ४४०
कर्कन्धुः अवितः । १,११२,६; ५७
कलिः अवितः । १,११२,१५; ६६ । १०,३९,८; ५९०
कविः अवितः । १,११६,१४; ९१ । ११९,७; १४४
काण्वः द्रष्टा । ८,९,३,९; ४४६,४५२
काव्यः स्तोता । १,११७,१२; ११३
कुत्सः अवितः । १,११२,९; ६० । ११२,२३; ७४ । १०,
४०,६; ६०२
कुशः अवितः । १०,४०,८,६०४
कुशानुः अवितः । १,११२,२१; ७२
कृष्णः द्रष्टा । ८,८५,३-४; ५६०-५६१
कृष्णियः विश्वकः अवितः । १,११६,२३; ९९
गृत्समदासः द्रष्टारः । २,३९,८; २२२
गोतमः अवितः । १,११६,२; ८५ । (स्तोता) १,१८३,५; २०६
घोषः स्तोता । १,१२०,५; १५२
घोषा अविता । १,११७,७; १०८
घोषा द्रष्टा । १०,४०,५; ६०१
च्यवानः अवितः । १,११६,१०,८६ । ११७,१३; ११४ ।
११८,६; १३२ । ५,७४,५; २७२ । ७५,५; २८२ । ७,
६८,६; ३४३ । ७२,५; ३६६ । १०,३९,४; ५८६
जमदग्निः द्रष्टा । ८,१०१,८; ५७९
जहावी अवितः । १,११६,१९; ९५ । ३,५८,६; २३१
जाहुषः अवितः । १,११६,२०, ९६ । ७,७१,५; ३६६
तुमः अवितः । १,११७,१४, ११५
तुमस्य सनुः तौमन्यः भुज्युः अवितः । १,११२,६; ५७ ।
११२,२०; ७१ । ११६,३-५; ७९-८१ । ११७,१४-१५,
११५-११६ । ११८,६; १३२ । ११९,४,८; १४१,१४५।

१,१५८, ३; १७१ । १८०, ५; १७९ । १८२, ५-७;
१९८-२०० । ६, ६२, ६; ३११ । ७, ६८, ७; ३४४ ।
६९, ७; ३५२ । १०, ३९, ४; ५८५ । ४०, ७; ६०३ ।
१४३, ५; ६३१
तुर्वशः स्तोता । ८, ९, १४; ४५७ । १०, ५; ४६९
तुर्वीतिः अवितः । १, ११२, २३; ७४
तृक्षिः त्रासदस्यवाः स्तोता । ८, २२, ७; ४७८
त्रसदस्युः अवितः । १, ११२, १४; ६५; ८, ८, २१; ४४१
त्रिमन्तुः (कक्षीवान्) अवितः । १, ११२, ४; ५५
त्रिशोकः अवितः । १, ११२, १२; ६३
त्रैतनः (दासः) १, १५८, ५; १७३
दधीचिः अवितः । १, ११६, १२; ८८ । ११७, २२; १२३ ।
११९, ९; १४६
दर्भीतिः अवितः । १, ११२, २३; ७४
दशव्रजः अवितः । ८, ८, २०; ४४०
दिवोदासः अवितः । १, ११२, १४; ६५ । ११६, १८; ९४ ।
११९, ४; १४१
दीर्घतमाः स्तोता । ८, ९, १०; ४५३
,, मामतेयः द्रष्टा । १, १५८, ६; १७४
दीर्घश्रवाः (औशिजः) अवितः । १, ११२, ११; ६२
द्रुष्टुः स्तोता । ८, १०, ५; ४६९
ध्यसन्तिः अवितः । १, ११२, २३; ७४
नर्यः अवितः । १, ११२, ९; ६०
नार्षदः अवितः । १, ११७, ८; १०९
पक्थः अवितः । ८, २२, १०; ४८१
पञ्जासः स्तोता । १, ११७, १०; १११
पञ्जियः स्तोता । १, १२०, ५; १५२
पठर्वा अवितः । १, ११२, १७; ६८
परावृज् अवितः । १, ११२, ८; ५९ । [(इन्द्रः) २, १३, १२;
११४८ । २, १५, ७; ११६८]
पुरयः दाता । ६, ६३, ९; ३२५
पुरुकुत्सः अवितः । १, ११२, ७; ५८
पुरुपन्थाः दाता । ६, ६३, १०; ३२६
पुरुमित्रः १०, ३९, ७; ५८९
पुरुमीहः स्तोता । १, १८३, ५; २०६
पुरुषन्तिः अवितः । १, ११२, २३; ७४
पृथिः अवितः । १, ११२, १५; ६६
पृथी (वैन्यः) स्तोता । ८, ९, १०; ४५३
पृथुश्रवाः अवितः । १, ११६, २१; ९७
पृथ्रियुः अवितः । १, ११२, ७; ५८

पेदुः अवितः । १, ११६, ६; ८२ । ११७, ९; ११० । ११८,
९; १३५ । ११९, १०; १४७ । ७, ७१, ५; ३६६ । १०,
३९, १०; ५९२
पेरुकः दाता । ६, ६३, ९; १२५
पौरः स्तोता । ५, ७४, ४; २७१
प्रियमेधः अवितः । ८, ५, २५; ४०८ । स्तोता ८, ८७, ३; ५७४
वम्हः अवितः । ८, २२, १०; ४८१
भरद्वाजः अवितः । १, ११२, १३; ६४ । द्रष्टा ६, ६३, १०; ३२६
भुज्युः द्रष्टव्यं- 'तुग्रस्य सूनूः तौग्न्यः' ।
भृगवाणः स्तोता । १, १२०, ५; १५२
मनुः अवितः । १, ११२, १६, १८; ६७, ६९ । ८, २२, ६; ४७७
,, स्तोता । ८, १०, २; ४६६
मन्धाता अवितः । १, ११२, १३; ६४
मेधातिथिः अवितः । ८, ८, २० ४४०
यदुः स्तोता । ८, ९, १४; ४५८ । १०, ५; ४६९
रेभः अवितः । १, ११२, ५; ५६ । ११६, २४; १०० ।
११७, ४, १२; १०५, ११३ । ११८, ६; १३२ । ११९, ६;
१४३ । १०, ३९, ९; ५९१
वत्सः स्तोता । ८, ८, १५, १९; ४३५, ४३९ । ९, १, ६, १५;
४४४, ४४९, ४५८
वग्निमती अविता । १, ११६, १३; ८९ । ११७, २४; १२५ ।
६, ६२, ७; ३१२ । १०, ३९, ७; ५८९
वन्दनः अवितः । १, ११२, ५; ५६ । ११६, ११; ८७ ।
११७, ५; १०६ । ११८, ६; १३२ । ११९, ६-७; १४३-
१४४ । १०, ३९, ८; ५९०
वम्रः अवितः । १, ११२, १५; ६६
वय्यः अवितः । १, ११२, ६; ५७ । [(इन्द्रः) १, ५४, ६;
७९१ । २, १३, १२, ११४८ । ४, १९, ६; १५२७]
वरुः ८, २६, २; ४९१
वशः अवितः । १, ११२, १०; ६१
वसिष्ठः अवितः । १, ११२, ९; ६० । स्तोता ७, ७०, ६;
३६० । ७३, ३; ३७५
विधवा (वग्निमती) अविता । १०, ४०, ८; ६०४
विमदः अवितः । १, ११२, १९; ७० । ११६, १; ७७ ।
११७, २०; २१ । ८, ९, १५; ४५८ । १०, ३९, ७; ५८९
द्रष्टा । १०, २४, ४; ५८०
विमनाः स्तोता । ८, ८६, २; ५६८
विश्वला अविता । १, ११२, १०; ६१ । ११६, १५; ९१ ।
११७, ११; ११२ । ११८, ८; १३४ । १८२, १; १९४ ।
१०, ३९, ८; ५९०

विश्वकः द्रष्टा । ८, ८६, १-३; ५६७-५६९
 विष्णवावः अवितः । ८, ८६, ३; ५६९
 विष्वावः (षष्ठी)-प्वक् असुरः १, ११७, १६; ११७
 वैन्यः (पृथी) अवितः । ८, ९, १०; ४५३
 वैयश्वः द्रष्टा । ८, २६, ११; ५००
 व्यश्वः अवितः । १, ११२, १५; ६६ । स्तोता ८, ९, १०;
 ४५३ । २६, ९; ४९८
 शंयुः १, ३४, ६; १७
 शयुः अवितः । १, ११२, ३, १६; ५४, ६७ । ११६, २२;
 ९८ । ११७, १२, २०; ११३, १२१ । ११८, ८; १३४ ।
 ११९, ६; १४३ । ६, ६२, ७; ३१२ । ७, ६८, ८; ३४५ ।
 १०, ३९, १३; ५९५ । ४०, ८; ६०४
 शरः (आर्चकः) अवितः । १, ११६, २२; ९८
 शर्यातः अवितः । १, ११२, १७; ६८
 शाण्डः दाता । ६, ६३, ९; ३२५
 शुचन्तिः अवितः । १, ११२, ७; ५८
 शुन्ध्युः अविता । १०, ३९, ७; ५८९

श्यावः अवितः । १, ११७ ८, २४; १०९, १२५
 श्यावाग्वः द्रष्टा । ८, ३५, १९-२१; ५२७-५२९
 श्रुतर्यः अवितः । १, ११२, ९; ६०
 सप्तवाग्निः द्रष्टा । ५, ७८, ५-६; ३०१-३०२
 ,, अवितः । ८, ७३, ९; ५४८ । १०, ३९, ९; ५२१
 साहदेव्यः द्रष्टा । ४, १५, १०; २३६
 साहदेव्यः सोमकः द्रष्टा । ४, १५, ९; २३५
 गुदाः अवितः । १, ४७, ६; ४४ । ११२, १९; ७०
 सुमीळहः दाता । ६, ६३, ९; ३२५
 सुषामा अवितः । ८, २६, २; ४९१
 सुहस्त्यः द्रष्टा । १०, ४१, ३; ६१३
 सोभरिः स्तोता । ८, ५, २६; ४०९ । द्रष्टा ८, २२, २, १५;
 ४७३, ४८६
 सोमकः साहदेव्यः द्रष्टा । ४, १५, ९; २३५
 स्यूमरदिमः अवितः । १, ११२, १६; ६७
 हिरण्यहस्तः अवितः । १, ११७, २४; १२५

अश्विनौ-देवता-मन्त्रेषु अन्याः-देवताः ।

अग्निः १, ११२, १ (द्वितीयः पादः); ५२ । ५, ७५, ९; २८६ ।
 ७६, १; २८७ । ७, ६७, २; ३२९, १ । ७२, ४; ३७१ ।
 ८, ३५, १; ५०९
 अङ्गिराः ८, ३५, १३; ५२१
 अदितिः १, ११२, २५; ७६
 अद्रिः ८, ३५, २; ५१०
 अर्यमा ८, २६, ११; ५००
 अश्वः (अश्विनौ) १, १८१, २; १८६
 अश्विरथः १, ११९, १-३; १३८-१४० । १२०, १०-११;
 १५७-१५८ । १५७, ३; १६५ । १८०, १०; १८४ ।
 १८१, ३; १८७ । ४, ४३, २; २४५ । १०, ४१, १; ६११
 आदित्यः १, ४६, ४; २७
 आदित्याः ६, ६२, ८; ३१३ । ८, ३५, १; ५०९
 आपः ८, ३५, ३; ५११
 इन्द्रः ८, ३५, १; ५०९
 इन्द्राविष्णू ८, १०, २; ४६६
 इष्टका वा० य० १४, १-५; ६३४-६३८
 ऋतु- (सहितौ) १, १५, ११; ४
 उषाः १, ४६, १, १४; २४, ३७ । ५, ७५, ९; २८६ । ७६, १;
 २८७ । ७, ७२, ३-४; ३००-३०१ । ८, ५, १; ३८४ ।

९, १६-१८; ४५९-४६१ । ७३, १६; ५५५
 उषःसूर्यसहितौ अश्विनौ ८, ३५, १-२१; ५०९-५२९
 ऋभवः ८, ३५, १५; ५२३
 कः ४, ४३, १; २४४
 चन्द्रादित्यौ १, १८१, ४; १८८
 तपाः २, ३७, ५; २१४
 दीर्घतमाः १, १५८, ६; १७४
 देवाः (त्रयस्त्रिंशत्) १, ३४, ११; २२
 योः १, ११२, २५; ७६ । ८, ३५, २; ५१०
 यावापृथिव्यौ १, ११२, १ (प्रथमः पादः); ५२ । ६, ६२, ८;
 ३१३ । ७, ७२, ३; ३७०
 धर्मः ८, ३५, १३; ५२१
 धियः विद्वाः ८, ३५, २; ५१०
 पतयः १०, ४०, १०; ६०९
 पृथिवी १, ११२, २५; ७६ । ८, ३५, २; ५१०
 प्रजापतिः वा० य० २०, ६७-६९; ६५६ ६५८ । २१, ४८-५८;
 ६५९-६६९
 बृहस्पतिः ८, १०, २; ४६६
 भुवनम् ८, ३५, २; ५१०
 मृगवः ८, ३५, ३; ५११

मरुतः ६, ६२, ८; ३१३ । ८, ३५, ३, १३-१५; ५११, ५२१-५२३
मित्रः १, ११२, २५; ७६ । ६, ६२, ९; ३१४ । ८, २६, ११; ५००
मित्रावरुणौ ८, ३५, १३; ५२१
रथः अश्विनोः- द्रष्टव्यम् 'अश्विरथः'
रुद्राः ८, ३५, १; ५०९
रुद्रियाः ६, ६२, ८; ३१३
रोदसी ६, ६२, ८; ३१३
वरुणः १, ११२, २५; ७६ । ६, ६२, ९; ३१४ । ८, २६, ११; ५०० । ३५, १; ५०९
वसवः ६, ६२, ८; ३१३ । ८, ३५, १; ५०९

विश्वः धियः ८, ३५, २; ५१० ।
विश्वे देवाः ८, १०, २; ४६६ । ३५, ३; ५११
विष्णुः ८, ३५, १, १३; ५०९, ५२१
सप्तवह्निः ८, ७३, १८; ५५७
सरस्वती वा० य० २०, ६७-६९; ६५६-६५८ । २१, ४८-५८; ६५९-६६९
सिन्धुः १, ११२, २५; ७६
सविता १, १५७, १; १६३ । ७, ७२, ५; ३०१
सूर्यः ७, ६७, २; ३२९
सूर्यसहितौ उपसा च ८, ३५, १-२१; ५०९-५२९
सोमः वा० य० १९, ३४; ६५४
सोमरसः वा० य० १९, ३५; ६५५

(१) निर्विशेषितत्वेन* वर्णितं अश्विनोः भवनकर्म ।

अग्निः ८, ५, २५; ४०८ । [द्रष्टव्यम् '(५) परकृतविविधा-पञ्चयः भवनम् ।']
अग्निगुः १, ११२, २०; ७१ । ८, २२, १०; ४८१
उपस्तुतः १, ११२, १५; ६६ । ८, ५, २५; ४०८
कक्षीवान् (स्तोता) १, ११२, ११; ६२
कण्वः (प्रसिषासन्) ८, ५, २५; ४०८ । ८, २०; ४४० ।
[द्रष्टव्यम् '(५) परकृतविविधापञ्चयः भवनम् ।']
कर्कन्धुः १, ११२, ६; ५७
कलिः (वित्तजानिः) १, ११२, १५; ६६ । [द्रष्टव्यम् '(६) भिषक्कर्मणा भवनम् ।']
कुत्सः १, ११२, ९; ६०
कुत्सः आर्जुनेयः १, ११२, २३; ७४
कुशः १०, ४०, ८; ६०४
गोशर्यः ८, ८, २०; ४४०
तुर्वीतिः १, ११२, २३; ७४ ×
दर्भातिः १, ११२, २३; ७४
ध्वसन्तिः १, ११२, २३; ७४
नर्यः १, ११२, ९, ६० ×
पक्कः ८, २२, १०; ४८१
पुरुकुत्सः १, ११२, ७; ५८
पुरुषन्तिः १, ११२, २३; ७४

पृथिः १, ११२, १५; ६६
पृथियुः १, ११२, ७; ५८
प्रियमेधः ८, ५, २५; ४०८
वम्हः (विजोपस्) ८, २२, १०; ४८१
भरद्वाजः (विप्रः) १, ११२, १३; ६४
भुज्युः १०, ४०, ७; ६०३ । [द्रष्टव्यम् '(५) परकृतविविधा-पञ्चयः भवनम् ।']
मेधातिथिः ८, ८, २०; ४४०
वम्रः (विपिपानः) १, ११२, १५; ६६
वय्यः १, ११२, ६; ५७ ×
वशः अश्व्यः (प्रेणिः) १, ११२, १०; ६१
वशः दशमजः ८, ८, २०; ४४०
वशः १०, ४०, ७; ६०३
वसिष्ठः १, ११२, ९; ६०
विधवा १०, ४०, ८; ६०४
व्यश्वः १, ११२, १५; ६६
शयुः १०, ४०, ८; ६०४ । [द्रष्टव्यम् '(७) अन्येषां प्राणिनां भवनम् ।']
शिजारः ८, ५, २५; ४०८+ । १०, ४०, ७; ६०३
श्रुतयः १, ११२, ९; ६०

* 'यथा चित्कण्वमावतम्' 'यामिर्त्यश्मसुत पृथिमावतम्' इति एतादृशमन्त्रैः वर्णितम् ।

× द्रष्टव्यम् 'त्वमाविथ नर्यं तुर्वीशं यहुं त्वं तुर्वीति वय्यं शतक्रतो ।' (इन्द्रः०) १, ५४, ६; ७९१ 'अरमयः सरपसस्ताराय कं तुर्वीतये च वययाय च स्तुतिम् ।' (इन्द्रः०) २, १३, १२; ११४८ 'त्वं महीमवनिं विश्वधेनां तुर्वीतये वययाय क्षरन्तीम् । अरमयो नमसैजवर्णः सुतरणौ अकृणोरिन्द्र सिन्धून् ।' (इन्द्रः०) ऋ० ४.१९, ६; १५२७ ।

+ अत्र सायनाचार्याः 'शिआरः' इति शब्दस्य शब्दयन्, स्तुवन् इत्यर्थं दत्त्वा अयं शब्दः अत्रेर्विशेषणं इति मन्यन्ते ।

६०[अश्विनौ] ११

(२) इष्टवस्तुप्रदानेन अवनम् ।

धनम् ।

| | | |
|------------------------|--------------|---|
| अंशुः | ८,५,२६; ४०९ | यथोक्त कृत्व्ये धने अंशुम् (आवतम्) । |
| त्रासदस्युः | ८,८,२१; ४४१ | याभिर्नरा त्रासदस्युं आवतं कृत्व्ये धने । |
| त्रासदस्यवः तृक्षिः | ८,२२,७; ४७८ | येभिः (ऋतस्य पथिभिः) तृक्षि वृषणा त्रासदस्यवं महे क्षत्राय जिन्वथः । |
| दिवोदासः | १,११६,१८; ९४ | यदयातं दिवोदासाय वर्तिः भरद्वाजायाश्चिना ह्यन्ता । रेवदुवाह सचनो रथो वां वृषभथ शिशुमारश्च युक्ता॥ कथानूनं वां विमना उप स्तवद् युवं धियं ददथुः वस्य इष्टये । |
| विमनाः | ८,८६,२; ५६८ | युवं हि ध्मा पुरुभुजा इमं एधतुं विष्णावे ददथुः वस्य इष्टये । |
| विष्णापूः | ८,८६,३; ५६९ | याभिः सुदासे ऊहथुः सुदेव्यम् । |
| सुदाः | १,११२,१९; ७० | युवं वरो सुषाम्णे महे तने नासत्या । |
| सुषामा | ८,२६,२; ४९१ | याभिर्वशमश्च्यं प्रेणिं आवतम् । |
| वशः | १,११२,१०; ६१ | एकस्या वस्तोः आवतं रणाय वशमश्चिना सनये सहस्रा । |
| | १,११६,२१; ९७ | याभिः वशं दशत्रजं ... आवतं कृत्व्ये धने । |
| | ८,८,२०; ४४० | युवमश्चिना वशं... उपारथुः । |
| जह्वावी | १० ४०,७; ६०३ | युवोर्नरा द्रविणं जह्वाव्याम् । |
| | ३,५८,६; २३१ | रथि सुक्षत्रं स्वपत्यं आयुः सुवीर्यं नासत्या वहन्ता । |
| | १,११६,१९; ९५ | आ जह्वावीं समनसोप वाजैः त्रिरहो भागं दधतीमयातम् । |

अक्षम् ।

| | | |
|------|--------------|-------------------------|
| मनुः | १,११२,१६; ६७ | मनवे पुरा गातुमीषथुः । |
| | १,११२,१८; ६९ | मनुं शूरं इषा समावतम् । |

| | |
|--|---|
| १,११७,२१; १२२ | इषं दुहन्ता मनुषाय दत्ता । |
| ८,२२,६; ४७७ | यवं वृकेणाश्विना वपन्ता । |
| ८,१०,२; ४६६ | दशस्यन्ता मनवे पूर्व्यं दिवि यवं वृकेण कर्षथः । |
| १,११७,११; ११२ | यद् वा यज्ञं मनवे संमिभि-क्षथुः । |
| सूतोर्मानेन अश्विना गृणाना वाजं विप्राय भुरणा रदन्ता । | |
| ८,५,२६; ४०९ | यथा वाजेषु सोभरिम् (आवतम्) । |

सदः ।

| | | |
|--------------------|--------------|--|
| शुचन्तिः | १,११२,७; ५८ | याभिः शुचन्ति धनसां सुषंसदम् । |
| क्षेत्रपतित्वादि । | | |
| मन्धाता | १,११२,१३; ६४ | मन्धातारं क्षेत्रपत्येषु आव-तम् । |
| जाहुषः | ७,७१,५; ३६६ | नि जाहुषं शिथिरं धातमन्तः । |
| | १,११६,२०; ९६ | परिविष्टं जाहुषं विश्वतःसीं सुगोभिर्नक्तमूहथू रजोभिः । |

स्त्री ।

| | | |
|--------|---------------|---|
| कलिः | १,११२,१५; ६६ | याभिः कलिं वित्तजानिं दुवस्यथः । |
| | १०,३९,८; ५९० | युवं विप्रस्य जरणामुपेयुषः पुनः कलेरकृणुतं युवद् वयः । |
| श्यावः | १,११७,८; १०९ | युवं श्यावाय रुशतीं अदत्तम् । |
| | १,११७,२४; १२५ | त्रिधा ह श्यावमश्चिना वि-कस्तमुजीवस ऐरयतं सुदानू । |
| विमदः | १,११२,१९; ७० | याभिः पत्नीर्विमदाय न्यूहथुः । |
| | १,११६,१; ७७ | यावर्भगाय विमदाय जायां सेनाजुवा न्यूहथू रथेन । |
| | १,११७,२०; १२१ | युवं शचीभिर्विमदाय जायां न्यूहथुः पुरुमित्रस्य योषाम् । |
| | १०,३९,७; ५८९ | युवं रथेन विमदाय शुन्ध्युवं न्यूहथुः पुरुमित्रस्य योषणाम् । |
| | ८,९,१५; ४५८ | यन्नासत्या पराके अर्वाके अस्ति भेषजम् । तेन नूनं विमदाय प्रचेतसा छर्दिर्व-त्साथ यच्छतम् ॥ |

विमदः (मन्त्रद्रष्टा) १०, २४, ४; ५८० युवं शक्रा मायाविना समीची
निरमन्थतम् । विमदेन
यदीकृता नासत्या निरम-
न्थतम् ॥

पतिः ।

बोषा १, ११७, ७; १०८ घोषायै चित् पितृष्वे दुरोगे
पतिं जूर्यन्त्या अश्विनावदत्तमा
१०, ४०, ९ ६०५ जनिष्ठ योषा पतयन् कनी-
नको वि चारुहन् वीरुधो
दंसना अनु । आस्मै रीयन्ते
निवनेव सिन्धवोऽस्मा अह्ने
भवति तत् पतित्वनम् ॥

पुत्रः ।

कृष्णियः १, ११६, २३; ९९ अवस्यते स्तुवते कृष्णियाय
ऋजूयते नासत्या शचीभिः ।
पशुं न नष्टमिव दर्शनाय
विष्णाप्यं ददथु विश्वकाय ॥
१, ११७, ७; १०८ युवं नरा स्तुवते कृष्णियाय
विष्णाप्यं ददथु विश्वकाय ।
वधिमती १, ११६, १३; ८९ अजोहवीन्नासत्या करा वां
महे यामन् पुरुभुजा पुरन्धिः ।
श्रुतं तत् शासुरिब वधिमत्या
हिरण्यहस्तमश्विनावदत्तम् ॥
१, ११७, २४; १२५ हिरण्यहस्तमश्विना रराणा
पुत्रं नरा वधिमत्या अदत्तम् ।
६, ६२, ७; ३१२ श्रुतं हवं वृषणा वधिमत्याः ।
१०, ३९, ७; ५८९ युवं हवं वधिमत्या अगच्छतं
युवं सुषुतिं चक्रथु पुरन्धये ।

गावः ।

अगस्त्यः ८, ५, २६; ४०९ यथा गोषु अगस्त्यम्
(आवतम् ।)
त्रिशोकः १, ११२, १२; ६३ याभिः त्रिशोकः उस्त्रिया
उदाजत ।

अश्वः ।

पेदुः १, ११६, ६; ८२ यदश्विना ददथुः श्वेतमश्वं
अघाश्वाय शश्वदित् स्वस्ति ।
तद् बां दात्रं महि कीर्तेन्यं भूत
पैदो वाजी सदमिद्व्यो अर्यः ॥
१, ११७, ९; ११० पुरु वपास्यश्विना दधाना
नि पेदव ऊहथुराशुमश्वम् ।
सहस्रसां वाजिनमप्रतीत-
महिहनं श्रवस्यं तरुत्रम् ॥
१, ११८, ९; १३५ युवं श्वेतं पेदव इन्द्रजुत-
महिहनमश्विनादत्तमश्वम् ।
जोहूत्रमयो अभिभूतिमुग्रं
सहस्रसां वृषणं वीड्वज्रम् ॥
१, ११९, १०; १४७ युवं पेदवे पुरुवारमश्विना
स्पृथां श्वेतं तरुतारं दुव-
स्यथः । शयंरभिष्टुं पृतनासु
दुष्टं चर्कृत्यमिन्द्रमिव चर्ष-
णीमहम् ॥
७, ७१, ५; ३६६ नि पेदव ऊहथुराशुमश्वम् ।
१०, ३९, १०; ५९२ युवं श्वेतं पेदवेऽश्विनाश्वं
नवभिर्वाजैर्नवती च वाजिनम् ।
चर्कृत्यं ददथुर्द्रवियत्सखं भगं
न नृभ्यो हव्यं मयोभुवम् ॥

(३) क्षुद्र-पीडानिवारणम् ।

अन्तकः १, ११२, ६; ५७ याभिः अन्तकं जसमानं
आऽरणे... जिजिन्वधुः ।
वधः १, ११२, १५; ६६ याभिः वधं विपिपानं ...
दुवस्यथः ।
क्षरः १, ११६, २२; ९८ क्षरस्य चिद् आर्चकस्याव-
तादा नीचादुच्चा चक्रथुः
पातवे वाः ।
अंशः १, ११२, १; ५२ याभिः भरे कारं अंशाय
जिन्वथः ।

ऋतस्तुम् १, ११२, २०; ७१ ओम्यावतीं सुतरां ऋत-
स्तुम् ।
ददाशुः १, ११२, २०; ७१ याभिः शन्ताती भवथः
ददाशुषे ।
धीः-प्रवृत्तिः १, ११२, २; ५३ याभिः धियः अवथः कर्म-
क्षिप्रये ।
त्रिमन्तुः १, ११२, ४; ५५ याभिः त्रिमन्तुः अभवत्
विचक्षणः ।

(४) संग्रामे शत्रुहननेन रक्षणम् ।

| | | | | | |
|------------|---------------|--|------------|---------------|--|
| आर्यः | १,११७,२१; १२२ | अभि दस्युं बकुरेणा धमन्ता उरु ज्योतिश्चक्रुः आर्याय । | पठर्वा | १,११२,१७; ६८ | याभिः पठर्वा जठरस्य मज्जनाभिर्नादीदेक्षित इद्धो अज्मन्ता । |
| कृशानुः | १,११२,२१; ७२ | याभिः कृशानुं असने दुवस्यथः । | पृथुश्रवाः | १,११६,२१; ९७ | निरहतं दुच्छुना इन्द्रवन्ता पृथुश्रवसो वृषणावरातीः । |
| त्रसदस्युः | १,११२,१४; ६५ | याभिः पूर्वमेव त्रसदस्युं आवतम् । [धनप्रदानं-द्रष्टव्यं । ८,८,२१; ४४१] | शर्यातः | १,११२,१७; ६८ | याभिः शर्यातं अवधः महाधने । |
| दिवोदासः | १,११२,१४; ६५ | याभिः दिवोदासं शम्बरहत्य आवतम् । | स्यूररिमः | १,११२,१६; ६७ | याभिः शारीः आजतं स्यूररि-श्मये । |
| मरः | १,११२,२२; ७३ | याभिः नरं गोपुयुधं नृपाद्ये क्षेत्रस्य साता तनयस्य जिन्वथः । | | १,११६,२; ७८ | वील्लपत्मभिः आशुहेमभिर्वा देवानां वा जूतिभिः शाशदाना । |
| | | याभी रथान् अवधुः याभिः अर्वतः । | | १,११७,१६; ११७ | जातं विष्वाचो अहतं विषेण । |
| | | | | १,११२,१२; ६३ | अनश्नं याभी रथमावतं जिषे । |

(५) परकृतविविधापद्मयः अवनम् ।

| | | | | | |
|--------|--------------|--|-----------|--------------|--|
| आत्रिः | १,११२,७; ५८ | याभिः...तप्तं घर्ममोम्यावन्तमत्रये...आवतम् । | | ५,७३,६; २६३ | युवोरत्रिश्चिकेतति नरा सुव्रेन चेतसा । घर्म यद् वामरेपसं नासत्यान्ना भुरण्यति । |
| | १,११२,१६; ६७ | याभिर्नरा...अत्रये... गातुमीपथुः । | | ५,७३,७; २६४ | उग्रो ह वां ककुहो ययिः शृण्वे यामेषु सन्तनिः । यद् वां दंसोभिरश्विनाऽत्रिर्नरावर्तति ॥ |
| | १,११६,८; ८४ | हिमेनाग्निं प्रंसमवारयेथां पितुमतीमूर्जमस्मा अधत्तम् । ऋत्रीसे अत्रिमश्विनावनीत-मुभिन्यथुः सर्वगणं स्वस्ति ॥ | | ५,७४,१; २६८ | अत्रिर्वामा विवासति । |
| | १,११७,३; १०४ | ऋषिं नरावंहसः पाञ्चजन्य-शृवीसादत्रिं मुखथो गणेन । मिनन्ता दस्योरशिवस्य माया अनुपूर्वं वृषणा चोदयन्ता ॥ | | ७,६८,५; ३४२ | चित्रं ह यद्वां भोजनं न्वास्ति न्यत्रये महिष्वन्तं युयोतम् । यो वामोमानं दधते प्रियः सन् ॥ |
| | १,११८,७; १३३ | युवमत्रयेऽवनीताय तप्तमूर्ज-सोमानमश्विनावधत्तम् । | | ७,७१,५; ३६६ | निरंहसस्तमसः स्पर्तमत्रिम् । |
| | १,११९,६; १४३ | युवं ... उरुप्यथः हिमेन घर्म परितप्तमत्रये । | | ८,५,२५; ४०८ | यथा चित्कण्वमावतं प्रियमेध-मुपस्तुतम् । अत्रिं शिञ्जर-मश्विना ॥ |
| | १,१८०,४; १७८ | युवं ह घर्म मधुमन्तमत्रये-ऽपो न क्षोदोऽवृणीतमेधे । | श्यावाश्च | ८,३५,१९; ५२७ | अत्रेरिव शृणुतं पूर्वस्तुतिं श्यावाश्वस्य मुन्वतो मद-च्युता । |
| | १,१८३,५; २०६ | युवां गोतमः पुरुमीळ्हो अत्रिर्दसा हवतेज्वसे हवि-ष्मान् । | (आत्रेयः) | | |
| | | | अर्चनाना | ८,४२,५; ५३४ | यथा वामत्रिरश्विना गर्भि-र्विप्रा अजोहवीत् । |
| | | | (आत्रेयः) | | |

| | | | | | |
|------------------------------|--|---|---------------------|---------------|--|
| गोपवन (आत्रेयः) | ८,७३,३; ५४२ | उप स्तृणीतमत्रये हिमेन धर्ममश्विना । अन्ति पङ्क्तु वामवः ॥ | दीर्घतमा (औच्यः) | १,१५८,४; १७२ | उपस्तु तिरौच्यसुरुष्येत् मा मामिमे पतत्रिणी वि दुग्धाम् । मा मामेधो दशतयश्चितो धाक् प्र यद् वां बद्धस्मनि खादति क्षाम् ॥ |
| | ८,७३,७; ५४६ | अवन्तमत्रये गृहं कृणुतं युवमश्विना । अन्ति पङ्क्तु वामवः ॥ | | १,१५८,५; १७३ | न मा गरन् नयो मातृतमा दासा यदीं सुसमुब्धमवाधु । शिरो यदस्य त्रैतनो वितक्षत् स्वयं दास उरो अंसावपि ग्ध ॥ |
| | ८,७३,८; ५४७ | वरेथे अग्निमातपो वदते वल्बवत्रये । अन्ति० ...॥ | | | |
| | ५,७८,४; ३०० | अत्रिर्यद् वामवरोहन्वृषीस- मजोहवीजाधमानेव योपा । इयेनस्य चिज्जवसा नूतनेना- ऽऽगच्छतमश्विना शन्तमेन॥ | रेभः | १,११२,५; ५६ | याभी रेभं निवृत्तं सित- मङ्गयः ... । ताभिरूषु ऊतिभिरश्विना गतम् । |
| | १०,३९,९; ५९१ | युवमृषींसमुत तप्तमत्रय ओमन्वन्तं चक्रथुः सप्त वध्रये । | | १,११६,२४; १०० | दश रात्रीराशिबेना नव धून- वनद्धं श्रथितमप्स्वन्तः । विमुतं रेभमुदनि प्रवृक्त- मुभिन्यथुः सोममिव स्त्रुवेण॥ |
| अत्रिः सांख्यः १०,१४३,१; ६२७ | त्यं चिदत्रिमृतजुरमर्थमध्वं न यातवे । | | | १,११७,४; १०५ | अध्वं न गूळहमश्विना दुरैवै- र्ऋषिं नरा वृषणा रेभमप्सु । सं तं रिणीथो विमुतं दंसोभिर्न ... ॥ |
| | १०,१४३,२; ६२८ | त्यं चिदध्वं न वाजिनमेरे- णवो यमत्नत । दृळ्हं ग्रन्थि न विष्यतमत्रिं यविष्ठमा रजः ॥ | | १,११७,१२; ११३ | हिरण्यस्येव कलशं निखात- मुदूपथुर्दशमे अधिनाहन् ॥ |
| | १०,१४३,३; ६२९ | नरा दंसिष्टावत्रये शुभ्रा सिपासतं धियः । | | १,११८,६; १३२ | उद् रेभं दम्बा वृषणा शचीभिः । |
| कण्वः | १,४७,५; ४३ | याभिः कण्वमभिष्टिभिः प्रावतं युवमश्विना । | | १,११९,६; १४३ | युवं रेभं परिपूतेरुष्यथः । |
| | १,११२,५; ५६ | याभिः कण्वं प्र सिपासन्त- मावतम् । | | १०,३९,९; ५९१ | युवं ह रेभं वृषणा गुहा- हितमुदैरयतं ममृवांसम- श्विना ॥ |
| | १,११७,८; १०९ | युवं ... अदत्तं महः धोण- स्याश्विना कण्वाय । | वन्दनः | १,११२,५; ५६ | याभिः [ऊतिभिः] उद् वन्दनमैरयतं स्वर्हशे । |
| | १,११८,७; १३३ | युवं कण्वायापिरिप्ताय चक्षुः प्रत्यधत्तं सुष्टुतिं जुजुपाणा । | | १,११६,११; ८७ | तद् वां नरा शंस्यं राध्यं चाभिष्टिमन्नासत्या वरूथम् । यद् विद्वांसा निधिमिवापगू- ळमुद् दर्शतादूपथुर्वन्दनाय॥ |
| | ८,५,२३; ४०६ | युवं कण्वाय नासत्याऽपिरि- प्ताय हर्म्ये । शद्वद्वतीर्दे- शस्यथः ॥ | | १,११७,५; १०६ | सुषुप्वांसं न निर्ऋतेरुपस्थे सूर्यं न दम्बा तमसि क्षियन्तम् । शुभे रुक्मं न दर्शतं निखा- तमुदूपथुरश्विना वन्दनाय ॥ |
| | ८,५,२५; ४०८ | यथा चित् कण्वमावतम् । | | १,११८,६; १३२ | उद् वन्दनमैरतं दंसनाभिः॥ |
| | ८,८,२०; ४४० | याभिः कण्वं मेधातिथि ... आवतम् । | | | |
| जाहुषः | १,११६,२०; ९६ | परिविष्टं जाहुषं विश्वतः सी सुगेभिर्नक्तं ऊहथुः रजोभिः॥ | | | |
| | ७,७१,५; ३६६ | नि जाहुषं शिथिरे धातमन्तः॥ | | | |

१,११९,६; १४३ प्र दीर्घेण वन्दनस्तार्यायुषा॥
 १,११९,७; १४४ युवं वन्दनं निर्ऋतं जरण्यया
 रथं न दत्ता करणा समिन्वथः ॥
 १०,३९,८; ५९० युवं वन्दनमृदयदादुदपथुः ।
 भुज्युः तौग्यः १,११२,६; ५७ भुज्युं याभिः [ऊतिभिः]
 अव्यथिभिर्जिजिन्वथुः ।
 १,११२,२०; ७१ भुज्युं याभिः (ऊतिभिः)
 अवथः ।
 १,११६,३-५; ७९-८१ तुग्रो ह भुज्युमश्विनोदमेधे
 रथिं न कश्चिन्ममृवाँ अवाहाः ।
 तमूहयुनोभिरात्मन्वतीभि-
 रन्तरिक्षमुद्गिरपोदकाभिः ॥
 तिस्रः क्षपस्त्रिरहातिव्रजद्वि-
 र्नासत्या भुज्युमूहयुः पतङ्गः ।
 समुद्रस्य धन्वन्नाद्रस्य पारे
 त्रिभी रथैः शतपद्भिः पळ-
 श्वैः ॥ अनारम्भणे तदवी-
 रयेथामनास्थाने अग्रभणे
 समुद्रे । यदश्विना ऊहयुर्भुज्यु-
 मस्तं शतारित्रां नावमात-
 स्थिवांसम् ॥
 १,११७,१४; ११५ युवं भुज्युमर्णसो निः समुद्राद्
 विभिरूहयुर्ऋग्नेभिरश्वैः ॥
 १,११७,१५; ११६ अजोहवीदश्विना तौग्यो वां
 प्रोळ्हः समुद्रमव्यथिर्जग-
 न्वान् ।
 निष्टमूहयुः सुयुजा रथेन
 मनोजवसा वृषणा स्वस्ति ॥
 १,११८,६; १३२ निष्टौग्यं पारयथः समुद्रात् ।
 १,११९,४; १४१ युवं भुज्युं भुरमाणं विभिर्गतं
 स्वयुक्तिभिर्निवहन्ता पितृभ्य
 आ । यामिष्टं वर्तिवृषणा
 विजेन्यम् ... ।
 १,११९,८; १४५ अगच्छतं कृपमाणं परावति
 पितुः स्वस्य त्यजसा निबा-
 धितम् ।
 १,१५८,३; १७१ युक्तो ह यद् वां तौग्याय
 पेरुर्वि मध्ये अर्णसो धायि पद्मः ।
 १,१८०,५; १७९ आ वां दानाय ववृतीय दत्ता
 गोरोहेण तौग्यो न जित्रिः ।

१,१८२,५-७; १९८-२०० युवमेतं चक्रथुः सिन्धुषु
 ह्रस्वमात्मन्वतं पक्षिणं तौ-
 ग्याय कम् । येन देवत्रा
 मनसा निरूहयुः सुपसनी
 पेतथुः क्षोदसो महः ॥ अव-
 विद्धं तौग्यमप्स्वन्तरनार-
 म्भणे तमसि प्रविद्धम् ।
 चतस्रो नावो जठलस्य जुष्टा
 उदधिभ्यामिषिताः पारय-
 न्ति ॥ कः स्विद् वृक्षो
 निष्ठितो मध्ये अर्णसो यं
 तौग्यो नाधितः पर्यषस्व-
 जत् । पर्णा मृगस्य पतरो-
 रिवारभ उदधिना ऊहयुः
 श्रोमताय कम् ॥
 ६,६२,६; ३११ ता भुज्युं विभिरद्भ्यः समु-
 द्रात्तुग्रस्य सूनूमूहयु रजो-
 भिः । अरेणुभिर्योजनेभिर्भु-
 जन्ता पतत्रिभिरर्णसो निरु-
 पस्थात् ॥
 ७,६८,७; ३४४ उत त्वं भुज्युमश्विना सखायो
 मध्ये जहुर्दुरेवासः समुद्रे ।
 निरीं पर्वदरावा यो युवाकुः ॥
 ७,६९,७; ३५३ युवं भुज्युमवविद्धं समुद्र
 उदहयुर्णसो अस्त्रिधानैः ।
 पतत्रिभिरश्रमैरव्यथिभिर्दस-
 नाभिरश्विना पारयन्ता ॥
 ८,५,२२; ४०५ कदा वां तौग्यो विधत्
 समुद्रे जहितो नरा । यद्
 वां रथो विभिष्यतात् ॥
 १०,३९,४; ५८६ निष्टौग्यमूहयुर्ऋग्नेभिरश्वैः ।
 १०,४०,७; ६०३ युवं ह भुज्युं... उपारथुः ।
 १०,१४३,५ ६३१ युवं भुज्युं समुद्र आ रजसः
 पार ईङ्खितम् । यातम-
 च्छापतत्रिभिर्नासत्या सातये
 कृतम् ॥
 सप्तवध्रिः ५,७८,५; ३०१ वि जिहीष्व वनस्पते योनिः
 सूष्यन्त्या इव । श्रुतं मे
 अश्विना हवं सप्तवध्रिं च
 मुष्यतम् ॥

५,७८,६; ३०२ भीताय नाधमानाय ऋषये
सप्तवधये । मायाभिरश्विना
युवं वृक्षं सं च वि चाचथः॥
८,७३,९; ५४८ प्र सप्तवधिराशसा धाराममे-

रशायत ।

१०,३९,९; ५९१ ओमन्वन्तं चक्रयुः सप्तवधये।
८,२२,१२; ४८३ 'याभिः क्विं वावृधुः'
[वन्दनपीडानिवारणार्थं एतत् कर्म इति केचित्]

(६) भिषक्कर्मणा अवनम् ।

स्त्रामः १,११७,१९; १२० मही वामूतिरश्विना मयोभूः
उत स्त्रामं धिष्ण्या सं रिणीथः॥
नार्षदः १,११७,८; १०९ प्रवाच्यं तद् वृषणा कृतं वां
यन्नार्षदाय श्रवो अध्यधत्तम् ।
परावृज् १,११२,८; ५९ याभिः शचीभिः वृषणा परा-
वृजं प्रान्धं श्रोणं चक्षस
एतवे कृथः । ×
कविः १,११६,१४; ९० उतो कविं पुरुभुजा युवं ह
कृपमाणं अकृणुतं विचक्षे ।
ऋज्राश्वः १,११६,१६; ९२ शतं मेषान् वृक्ये चक्षदान-
मृज्राश्वं तं पितान्धं चकार ।
तस्मा अक्षी नासत्या विचक्ष
आधत्तं दस्त्रा भिषजावनर्वन् ।
१,११७,१७; ११८ शतं मेषान् वृक्ये मामहानं
तमः प्रणीतमशिवेन पित्रा ।
आक्षी ऋज्राश्वे अश्विना-
वधत्तं ज्योतिरन्धाय चक्र-
शुर्विचक्षे ॥
१,११७,१८; ११९ शुनमन्धाय भरमह्वयत् सा
वृकीरश्विना वृषणा नरेति ।
जारः कनीन इव चक्षदान
ऋज्राश्वः शतमेकं च मेषान् ॥
१,१२०,६; १५३ श्रुतं गायत्रं तकवानस्याहं
चिद्धि रिरेभाश्विना वाम् ।
आक्षी शुभस्पती दन् ॥
विश्वला १,११२,१०; ६१ याभिर्विश्वलां धनसामथर्व्यं
सहस्रमीळह आजावजिन्व-
तम् ।
१,११६,१५; ९१ चरित्रं हि वेरिवाच्छेदि पर्ण-
माजा खेलस्य परितकम्या-
याम् । सद्यो जङ्घामायसीं
विश्वलायै धने हिते सतवे

प्रत्यधत्तम् ।
१,११७,११; ११२ सं विश्वलां नासत्यारिणी-
तम् ।
१,११८,८; १३४ प्रति जङ्घां विश्वलाया अध-
त्तम् ।
१,१८२,१; १९४ विश्वलावस् दिवो नपाता ।
१०,३९,८; ५९० युवं सद्यो विश्वलामेतवे कृथः॥
१,११६,१२; ८८ तद् वां नरा सनये दंस उग्रं
आविष्कृणोमि तन्यतुर्न वृष्टिम् ।
दध्यङ् ह यन्मध्वाथर्वणो
वामश्वस्य शीर्ष्णा प्र यदी-
मुवाच ॥
१,११७,२२; १२३ आथर्वणायाश्विना दधीचेऽ-
श्व्यं शिरः प्रत्यैरयतम् । स
वां मधु प्र वोचदृतायन् त्वाष्ट्रं
यद् दस्त्रावपिकक्ष्यं वाम् ।
१,११९,९; १४६ युवं दधीचो मन आ विवा-
सथोऽथा शिरः प्रति वामश्व्यं
वदत् ।
च्यवनः १,११६,१०; ८६ जुजुरुषो नासत्योतं वत्रिं
प्रामुख्यतं द्रापिमिव च्यवानात् ।
प्रातिरतं जरितस्यायुर्वस्त्रा-
दित् पतिमकृणुतं कनीनाम् ॥
१,११७,१३; ११४ युवं च्यवानमश्विना जरन्तं
पुनर्युवानं चक्रयुः शचीभिः॥
१,११८,६; १३२ पुनश्च्यवानं चक्रयुर्वानम् ॥
५,७४,५; २७२ प्र च्यवानाज्जुजुरुषो वत्रि-
मत्कं न मुखयः । युवा यदी
कृथः पुनरा काममृष्वे वध्वः ॥
५,७५,५; २८२ विभिश्च्यवानमश्विना नि
याथो अद्वयाविनं माप्सी
मम श्रुतं हवम् ॥

× द्रष्टव्यम्—'नीचा सन्तमुदनयः परावृजं प्रान्धं श्रोणं श्रवयन्सस्युकथ्यः (इन्द्रः) २,१३,१२; ११४८ । स विद्धां अपगोहं
कनीनामात्रिमवन्नुदतिष्ठत् परावृज् । प्रति श्रोणः स्थाद् व्यनगचष्ट सोमस्य ता मद इन्द्रश्चकार ।' (इन्द्रः) २,१५,७; ११६८ ।

| | | | |
|-------------------|---|--------------------------|---|
| ७,६८,६; ३४३ | उत त्यद् वां जुरते अश्विना भूच्यवानाय प्रतीत्यं हविर्दे। अभि यद् वर्ष इत ऊति धत्थः॥ | १,११२,१५; ६६ | याभिः कलिं वित्तजानि दुवस्यथः। |
| ७,७१,५; ३६६ | युवं च्यवानं जरसोऽमुमुक्तम्। | श्यावाश्वः १,११७,२४; १२५ | त्रिधा ह श्यावं अश्विना विकस्तं उज्जीवस ऐरयतं सुदान्। |
| १०,३९,४; ५८६ | युवं च्यवानं सनयं यथा रथं पुनर्युवानं चरथाय तक्षथुः। | १,११७,८; १०९ | युवं श्यावाय रुशतीं अदत्तम्। |
| कलिः १०,३९,८; ५९० | युवं विप्रस्य जरणां उपेयुषः पुनः कलेरकृणुतं युवद् वयः। | विप्रः- १,११९,७; १४४ | क्षेत्राद् आ विप्रं जनयो विपन्यया। |

(७) अन्येषां प्राणिनामवनम् ।

| | | | |
|-------|---------------|---|--|
| अर्वा | १,११२,२१; ७२ | जवे याभिः यूनः अर्वन्तं आवतम् । | यावध्यामपिन्वतमपो न स्तर्त्यं चिच्छक्त्यश्विना शचीभिः । |
| गावः | १,११२,१९; ७० | आ घ वा याभिः अरुणीः आशिक्षतम् । | १०,३९,१३; ५९५ अपिन्वतं शयवे धेनुमश्विना । |
| | १,११२,१८; ६९ | अग्रं गच्छथः विवरे गो- अर्णसः । | १०,४०,८; ६०४ युवमश्विना शयुं युवं ... उरुष्यथः । |
| | १,११२,३; ५४ | याभिः [ऊतिभिः] धेनुं अस्वं पिन्वथो नरा । | मक्षिका १,११२,२१, ७२ मधु प्रियं भरथः यत् सरङ्भ्यः । |
| शयुः | १,११२,१६; ६७ | याभिः [ऊतिभिः] नरा शयवे...गातुमीषथुः । | १,११९,९; १४६ उत स्या वां मधुमन्मक्षि- कारपत् । |
| | १,११६,२२; ९८ | शयवे चिन्नासत्या शचीभि- र्जसुरये स्तर्त्यं पिप्यथुर्गाम् । | वर्तिका १,११२,८; ५९ याभिर्वर्तिकां प्रसिताम- मुञ्चतम् । |
| | १,११७,२०; १२१ | अधेनुं दद्या स्तर्त्यं विषक्ताम- पिन्वतं शयवे अश्विना गाम् । | १,११६,१४; ९० आस्नो वृकस्य वर्तिकामभीके युवं नरा नासत्यामुमुक्तम् । |
| | १,११७,१२; ११३ | दिवो नपाता वृषणा शयुत्रा। | १,११७,१६; ११७ अजोहवीदश्विना वर्तिका वा- माहो यत् सीममुञ्चतं वृकस्य। |
| | १,११८,८; १३४ | युवं धेनुं शयवे नाधिताया- पिन्वतमश्विना पूर्याय । | १,११८,८; १३४ अमुञ्चतं वर्तिकामंहसो निः। |
| | १,११९,६; १४३ | युवं शयोरवसं पिप्यथुर्गाम् । | १०,३९,१३; ५९५ वृकस्य चिद् वर्तिकामन्तरा- स्याद् युवं शचीभिर्प्रसिताम- मुञ्चतम् । |
| | ६,६२,७; ३१२ | दशस्यन्ता शयवे पिप्यथुर्गाम् | |
| | ७,६८,८; ३४५ | उत श्रुतं शयवे हूयमाना । | |

(८) अतिमानुषाणि कर्माणि ।

| | | | |
|---------------|---|--|---|
| १,११६,२०; ९६ | विभिन्दुना नासत्या रथेन वि पर्वतां अजरयू अया- तम् । | क्षरणापो न पायनाय राये सहस्राय तृष्यते गोत- मस्य । | |
| १,११७,१६; ११७ | वि जयुषा ययथुः सान्वद्रेः । | १,११६,७; ८३ | कारोतराच्छफादश्वस्य वृष्णः शतं कुम्भां असिञ्चतं सुरा- याः । |
| १,११६,९; ८५ | परावतं नासत्यानुदेथाम् । उच्चाबुधं चक्रथुर्जिह्वाभारम् । | | |

| | |
|----------------------------|---|
| १,११७,६; १०७ | शफादश्वस्य वाजिनो जनाय शतं कुम्भान् आसिञ्चतं मधूनाम् ॥ |
| १,११२,१२; ६३ | याभी रसां क्षोदसोद्गः पिपि- न्धुः । |
| १,११२,९; ६० | याभिः सिन्धुं मधुमत्तम- सश्चतम् । |
| १,११२,११; ६२ | याभिः सुदान् औशिजाय वाणिजे दीर्घश्रवसे मधु कोशो अक्षरत् । |
| १,११२,४; ५५ | याभिः परिज्मा तनयस्य मज्जमना द्विमाता तूर्धु तरणि- र्विभूषति । |
| १,११२,१३; ६४ | याभिः सूर्यं परियाथः परा- वति । |
| सूर्यस्य दुहिता १,३४,५; १६ | त्रिष्ठं वां सूर्ये दुहिता रुहद् रथम् । |
| १,११६,१७; ९३ | आ वां रथं दुहिता सूर्यस्य कार्पमेवातिष्ठद्वता जयन्ती । विश्वे देवा अन्वमन्यन्त हृद्भिः समु श्रिया नासत्या सचेथे ॥ |
| १,११७,१३; ११४ | युवो रथं दुहिता सूर्यस्य सह श्रिया नासत्यावृणीत ॥ |
| १,११८,५; १३१ | आ वां रथं युवतिस्तिष्ठदत्र जुष्टवी नरा दुहिता सूर्यस्या |
| १,११९,२; १३९ | आ वामूर्जानी रथमदिवना- |

| | |
|--------------|--|
| १,११९,५; १४२ | रुहत् ॥ युवोरश्विना वपुषे युवायुजं रथं वाणी येमतुरस्य शार्थ्यम् । आ वां पतित्वं सख्याय जम्मुषी योषावृणीत जैन्या युवां पती ॥ |
| १,१८४,३; २१० | श्रिये पूषन्निषुकृतेषु देवा नासत्या बहत्तुं सूर्यायाः । वच्यन्ते वां ककुहा अप्सु जाता युगा जूर्णेव वरुणस्य भूरः ॥ |
| ५,७३,५; २६२ | आ यद् वां सूर्या रथं तिष्ठद् रघुच्यदं सदा । परि वामरुषा वयो घृणा वरन्त आतपः ॥ |
| ६,६३,५; ३२१ | अधि श्रिये दुहिता सूर्यस्य रथं तस्थौ पुरुमुजा शतो- तिम् । |
| ७,६९,३; ३४९ | वि वां रथो बध्वा याद- मानोऽन्तान् दिवो बाधते वर्तनिभ्याम् । |
| ७,६९,४; ३५० | युवोः श्रियं परि योषावृणीत सूरो दुहिता परितक्म्यायाम् । आ यद् वां योषणा रथ- मतिष्ठद् वाजिनीवम् । विश्वान्यदिवना युवं प्र धीता- न्यगच्छतम् ॥ |
| ८,८,१०; ४३० | |

अश्विनौ-देवताया गुणबोधक-सामासिक-पदानां उत्तरपद-सूची ।

| |
|------------------------------|
| दीदि - अग्नी १,१५,११; ४ |
| रिश - अदसा ८,८,१७; ४३७ |
| अन् - अपच्युता ८,२७,६; ४२६ |
| न - असत्या १,३,३; ३ |
| सु - अश्वा ७,६८,१; ३३८ |
| शत - क्रतू १,११२,२३; ७४ |
| स - क्षणी ८,२२,१५; ४८६ |
| अग्नि - गू ५,७३,२; २५९ |
| विश्व - गूर्तां १,१८०,२; १७६ |
| सु - गोपा १,१२०,७; १५४ |
| ११ * |

| |
|----------------------------------|
| अवथ - गोहना १,३४,३; १४ |
| पुद् (श्र) - चन्द्रा ८,५,३२; ४१५ |
| गम्भीर - चेतसा ८,८,२; ४२२ |
| वत्स-प्र - चेतसा ८,८,७; ४२७ |
| वि - चेतसा ५,७४,९; २७६ |
| मद - च्युता ८,२२,१६; ४८७ |
| अ - जरी १,११२,९; ६० |
| धी - जवना ८,५,३५; ४१८ |
| मनो - जवसा १,११७,१५; ११६ |
| पुरा - जा ७,७३,१; ३७३ |

सु - जाता १,११८,१०; १३६
 धियं - जिन्वा १,१८२,१; १९४
 स - जोषसा ३,५८,७; २३२
 सचनस् - तमा ८,२६,८; ४९७
 मनस् (नो) - तरा १,४६,२; २५
 अ - तूर्तदक्षा ८,२६,१; ४९०
 पुरु - त्रा २,३९,१; २१५
 मर्त्य - त्रा ६,६२,८; ३१३
 शयु - त्रा १,११७,१२; ११३
 पुरु - दंसा ७,७३,१; ३७३
 पुरु - दंससा १,३,२; २
 सु - दंससा ८,१०,३; ४६७
 अतूर्त - दक्षा ८,२६,१; ४९०
 सु - दक्षा ३,५८,७; २३२
 सु - दानू १,११२,११; ६२
 अ - दाभ्या ५,७५,७; २८४
 वसु - धिती १,१८१,१; १८५
 दिवो (वः) - नपाता १,११७,१२; ११३
 दिवो (वः) - नरा १०,१४३,३; ६२९
 अ - निन्वा १,१८०,७; १८१
 दानुनः (स) - पती ८,८,१६; ४३६
 वृ - पती ७,६७,१; ३२८
 शची - पती ७,६५,५; ३३२
 शुभ (स्) - पती १,३,१; १
 सन् - पती अथर्व० ७,७३,४; ३७६
 पुरु - पन्था ६,६३,१०; ३२६
 सु - पर्णा ४४३,३; २४६
 तनू - पा ८,९,११; ४४९
 पर (स्) - पा ८,९,११; ४४९
 सु-गो - पा १,१२०,७; १५४
 छदिम् - पौ ८,९,११; ४४९
 जगत् - पौ ८,९,११; ४४९
 मधु - पौ १,१८०,२; १७६
 द्रवन् - पाणी १,३,१; १
 वीछ - पाणी ७,७३,४; ३७६
 मधु - पातमा ८,२२,१७; ४८८
 दक्ष - पिता वा० य० १४,३; ६३६
 हिरण्य - पेदासा ८,८,२; ४२२
 वत्स - प्रचेतसा ८,८,७; ४२७
 अरि - प्रा ८,८,९; ४२९

अध - प्रिया ८,८,४; ४२४
 पुरु - प्रिया ८,५,४; ३८७
 कृत - प्सू १,१८०,३; १७७
 पुरु - भुजा १,३,१; १
 पुरु - भू ४,४४,४; २५४
 मयन् (यो) - भुवा १,९२,१८; ५१
 शम् - भू १,४६,१३; ३६
 शम् - भुवा ८,८,१९; ४३९
 शम् - भाविष्ठा २,३९,५; २१९
 सचा - भुवा १,३४,११; २२
 पुरु - भोजसा ८,२२,१६; ४८७
 अश्व (श्वा) - मघा ७,७१,१; ३६२
 गो - मघा ७,७१,१; ३६२
 पुरु - मन्त् १,१५८,१; १६९
 पुरु - मन्द्रा ८,५,४; ३८७
 पुनर् - मन्थी १,११७,१४; ११५
 अ - मर्त्या ८,२६,१७; ५०६
 सिन्धु - मातरा १,४६,२; २५
 प्रिय - मेधा ८,८,१८; ४३८
 प्रातर - यावाणा २,३९,२; २१६
 शुभ्र - यावाना ८,२६,१९; ५०८
 प्रातर - युजा १,२२,१; ५
 सु - युजा ७,७०,२; ३५६
 गन्धु (ध्रु) - युवा ५,७३,८; २६५
 सु - रथा १,२२,२; ६
 चित्र - राती ६,६२,५; ३१०
 अ - रेपसा १,१८१,४; १८८
 मधु - वर्णा ८,२६,६; ४९२
 रुद्र - वर्तनी १,३,३; ३
 हिरण्य - वर्तनी १,९२,१; ५१
 जिन्या - वसू ७,७४,३; ३८०
 पुरु - वसू १,४७,१०; ४८
 मना - वसू ५,७४,१; २६८
 वाजिनी - वसू २,३७,५; २१४
 विशपला - वसू १,१८२,१; १९४
 वृषन् (ण) - वसू २,४१,८; २२४
 शची - वसू १,६७,५; ३३२
 सूर्या - वसू ७,६८,३; ३४०
 विश्व - वारा ७,७०,१; ३५५
 यज्ञ - वाहसा १,१५,११; ४
 विप्र - वाहसा ५,७४,७; २७४

| | |
|------------------|---------------|
| अहर् - विदा | ८, ५, ९; ३९२ |
| कतु - विदा | २, ३९, २; २१६ |
| वसु - विदा | १, ४६, २; २५ |
| स्वर् - विदा | ८, ८, ७; ४२७ |
| सु - वीरा | ८, २६, ७; ४९६ |
| ऋत (ता) - वृधा | १, ४७, १; ३९ |
| न - वेदसा | १, ३४, १; १२ |
| विश्व - वेदसा | १, ४७, ४; ४२ |
| शुचि - व्रता | १, १५, ११; ४ |
| पुरु - शाकतमा | ६, ६२, ५; ३१० |
| सु - भुता | २, ३९, ६; २२० |
| हवन - भुता | ५, ७५, ५; २८२ |
| न - अ-सत्या | १, ३, ३; ३ |

| | |
|------------------------------|----------------|
| युयुजान -- सती | ६, ६२, ४; ३०९ |
| वाज -- सातमा | ८, ५, ५; ३८८ |
| शूर -- साता | १, १५७, २; १६४ |
| सु -- स्तु [ष्टु] ता | ६, ६३, ६; ३२२ |
| दिवि -- स्पृशा | १, २२, २; ६ |
| पुरु -- स्पृहा | ८, ८, २२; ४४२ |
| अ -- लिधा | ३, ५८, ७; २३२ |
| रक्षः (क्षो) -- हना (णा) | ७, ७३, ४; ३७३ |
| वृत्र -- हन्तमा | ८, ८, ९; ४२२ |
| सु -- हवा | ८, २२, १; ४७२ |
| पुरु -- हुता | ६, ६३, १; ३१७ |
| याम -- हुतमा | ८, ७३, ६; ५४५ |
| आशु -- हेषसा | ८, १०, २; ४६६ |

अश्विनौ-देवतामन्त्राणां वर्णानुक्रमसूची ।

| | | | | | |
|------------------------------|---------------|---------------------------|-----|------------------------|-----|
| अकारि वामन्धसो | ३१९ | अन्तरैश्वरैस्तनयाय | ३१५ | अरित्रं वा दिवस्पृथु | ३१ |
| अगच्छतं कृपमाणं | १४५ | अप स्वसुरुषसो | ३६२ | अरुणप्सुरुषा अभूद् | ५५५ |
| अग्निनेन्द्रेण वरुणेन | ५०९ | अपातामश्विना धर्मम् | ६४० | अर्वाग् रथं नि यच्छतं | ५३० |
| अज्जिरस्वन्ता उत | ५२२ | अप्रस्वतीमश्विना | ७५ | अर्वाङ् त्रिचक्रो मपु० | १६५ |
| अचेति दक्षा व्युनाकम् | १६१ | अबोध्यमिजर्म उदेति | १६३ | अर्वाक्षमय यद्यं | २१४ |
| अजोहवीदश्विना तौम्यो | ११६ | अभि वा नूनमश्विना | ३३० | अर्वाक्षा वां सप्तयो | ४६ |
| अजोहवीदश्विना वर्तिका | ११७ | अमुत्स्यु प्र देव्या साकं | ४५९ | अवन्तमत्रये गृहं | ५४६ |
| अजोहवीक्षासत्या | ८९ | अभूदिदं वयुनमो | १९४ | अवविद्धं तौम्यम् | १९९ |
| अतः सहस्रनिर्णिजा | ४३१ | अभूदु पारमेतवे | ३४ | अवस्यते स्तुवते | ९९ |
| अतारिष्म तमसः | २०७; २१३; ३७३ | अभूदु भा उ अंशवे | ३३ | अविष्टं धीश्वश्विना | ३३३ |
| अत्यायातमश्विना | २७९ | अभूदुषा रुशत् पशुः | २८६ | अर्वावां नूनमश्विना | ३३१ |
| अत्रिर्यद् वामवरोहन् | ३०० | अमाजुरश्विद् भवथो | ५८५ | अशोच्यमिः समिधानो | ३२९ |
| अत्रेरिव शृणुतं | ५२७ | अयं वां कृष्णो अश्विना | ५६० | अश्वं न गृह्णमश्विना | १०५ |
| अदित्यास्तवा पृष्ठे सादयामि | ६३८ | अयं वां घर्मो अश्विना | ४४७ | अश्वो यो वे वामुप | ३८१ |
| अथ स्वप्नस्य निर्विदे | १५९ | अयं वामश्विभिः सुतः | ४७९ | अश्विना घर्म पातः | ६७० |
| अथा ह यन्तो अश्विना | ३८२ | अयं वां भागो निहितो | ५३९ | अश्विना परि वामिषः | २३३ |
| अधि श्रिये दुहिता | ३२१ | अयं वां मधुमत्तमः | ३९ | अश्विना पिबतं मधु | ४ |
| अधेनुं दक्षा स्तर्यं विषक्तं | १२१ | अयं समह मा तनूहि | १५८ | अश्विना पुरुदंससा | २ |
| अध्वर्यु वा मधुपाणिं | ६१३ | अयं ह यद् वां देवया | ३४१ | अश्विना ब्रह्मणा यातम् | ६७१ |
| अनारम्भणे तदवीरयेषाम् | ८१ | अरं मे गन्तं हवनाय | ३१८ | अश्विना मधुमत्तमं | ४१ |

| | | | | | |
|---------------------------------|----------|------------------------|----------|------------------------|----------|
| अश्विना मधुपुत्तमो | २३४ | आ नूनमश्विना युवं | ४४४ | आ वां वाहिष्ठो अश्विना | ४९३ |
| अश्विना यज्वरीरिषो | १ | आ नूनमश्विनोऋषिः | ४५० | आ वां विप्र इहावसे | ४९९ |
| अश्विना यद्ध कर्हि | २७७ | आ नो अश्विना त्रिवृता | ४८८ | आ वां विश्वाभिरुतिभिः | ४३८; ५७४ |
| अश्विना यामहूतमा | ५४५ | आ नो अश्विना त्रिवृता | २३ | आ वां श्येनासो अश्विना | १३० |
| अश्विना वर्तिरस्मदा | ४९ | आ नो गन्तं मयोभुषा | ४३९ | आ वां सुत्रे वरिमन् | ३२७ |
| अश्विना वाजिनीवसू | २९९ | आ नो गन्तं रिशादसा | ४३७ | आ वां सुत्रैः शंयू इव | ६३२ |
| अश्विना वायुना युधं | २३२ | आ नो गव्येभिरदभ्यैः | ५५३ | आ वां प्रावाणो अश्विना | ५३३ |
| अश्विनावेह गच्छतं | २८४; २९७ | आ नो गोमन्तमश्विना | ३९३ | आ वां दानाय वृत्तीय | १७९ |
| अश्विना सारधेण मा | ६७५; ६८८ | आ नो देवेभिरुप | ३६९ | आ वां नरा मनोयुजो | २८३ |
| अश्विना सु विचाकशद् | ५५६ | आ नो शुभ्रैरा श्रवोभिः | ४१५ | आ वामगन्तुमतिः | ६०८ |
| अश्विना स्थपे स्तुहि | ४९९ | आ नो नावा मतीनां | ३० | आ वामश्वासः क्षुचयः | १८६ |
| अश्विना हरिणाविष | २९८ | आ नो यातं दिवस्पर्था | ४२४ | आ विश्ववाराश्विना गतं | ३५५ |
| अश्विना हविरिन्द्रियं | ६५६ | आ नो यातं दिवो अच्छा | २५५ | आ शुभ्रा यातमश्विना | ३३८ |
| अश्विनोरसनं रथम् | १५७ | आ नो यातमुपश्रुति | ४२५ | आ श्येनस्य जवसा | १३७ |
| असजिं वां स्थविरा | १९१ | आ नो रत्नानि बिभ्रतौ | २८० | आश्विनाषवषावती | ९ |
| असथता मधवद्भयो | ३३६ | आ नो विश्वान्यश्विना | ४३३ | आ सुगम्याय सुगम्यं | ४८६ |
| अस्ति हि वामिह स्तोता | २७३ | आ नो विश्वाभिरुतिभिः | ४२१ | आस्नो वृकस्य वर्तिका० | ९० |
| अस्मभ्यं वाजिनीवसू | ३९५ | आ परमाभिरुत | ३१६ | आहं खिदामि ते मनो | ६४८ |
| अस्मभ्यं सु वृषण्वसू | ५०४ | आ पश्चातावासरया | ३७२; ३७७ | आ हि रहतमश्विना | ४८० |
| अस्माकमय वामयं | ४०१ | आपी षो अस्मे पितरेष | ६१७ | हृदं हि वां प्रदिवि | २९० |
| अस्मिन् यज्ञे अदाभ्या | २८५ | आ भात्यभिरुषसाम् | २८७ | इन्द्रता हि धिष्ण्या | १९५ |
| अस्मे आ वहतं रथि | ३९८ | आ मन्येथामा गतं | २२९ | इमं मे स्तोममश्विना | ५५९ |
| अस्मे ऊ शु वृषणा | २०९ | आ मे अस्य प्रतीव्यम् | ४९७ | इमा उ वां दिविष्टय | ३७८ |
| अस्मे सा वां माध्वी रातिः | २११ | आ मे वचांस्युद्यता | ५७८ | इमा ब्रह्माणि वर्धना | २६७ |
| अस्य पिबतमश्विना | ३९७ | आ मे हवं नासत्या | ५५८ | इयं मनीषा इयमश्विना | ३६१; ३६७ |
| अहेम यज्ञं पथा० | ३७५ | आ यद् वां योषणा | ४३० | इयं वामहे शृणुतं | ५८८ |
| आकेनिपासो अहभिः | २४२ | आ यद् वां सूर्या रथं | २६२ | इह त्या पुरुभूतमा | २५९; ४७४ |
| आ गोमता नासत्या | ३६८ | आ यातं नहुषस्पर्था | ४२३ | इहा गतं वृषण्वसू | ५४९ |
| आञ्जनस्य मधुघस्य | ६४९ | आ यात सुप भूषतं | ३८० | इहेह जाता समवाष० | १८८ |
| आ तिष्ठतं सुवृत्तं | २०४ | आरज्जरेव मध्वरेयेथे | ६२३ | इहेह यद् वां समना | २५०; २५७ |
| आ तेन यातं मनसो | ५९४ | आ वहेथे पराकात् | ४१४ | ईळे खावापृथिवी | ५२ |
| आथर्वणायाश्विना | १२३ | आ वां रथं युवतिः | १३१ | ईर्मान्यद् वपुषे वपुः | २६० |
| आदारो वां मतीनां | २८ | आ वां रथं दुहिता | ९३ | इक्ष्वेभिरर्वागषसे | ४८ |
| आ न ऊर्जं वहतम् | १६६ | आ वां रथमवमस्यां | ३६४ | उग्रो वां ककुहो ययिः | २६४ |
| आ नः स्तोममुप द्रवत् | ३९० | आ वां रथं पुरुमायं | १३८ | उत त्वं वीरं धनसाम् | ५७० |
| आ नासत्या गच्छतं | २१ | आ वां रथो अश्विना | १२७ | उत त्वद् वां जुरते | ३४३ |
| आ नासत्या त्रिभिरेकादशैः | २२ | आ वां रथो रथानां | २७५ | उत त्वं भुज्युमश्विना | ३४४ |
| आ नूनं यातमश्विना ४२९; ४५७; ५७६ | | आ वां रथो रोदसी | ३४७ | उत त्या दैव्या भिषजा | ४७१ |
| आ नूनं रघुवर्तनिं | ४५१ | आ वां रथोऽवनिर्न | १८७ | उत नो गोमतीरिष | ३९२ |
| | | आ वां वयोऽश्वासो | ३२३ | | |

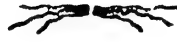
| | | | | | |
|---------------------------|----------|---------------------------|-----|-------------------------|----------|
| उत नो दिव्या इष | ४०४ | एषो उषा अपूर्व्या | १४ | चरित्रं हि वेरिवाच्छेदि | ९१ |
| उत म ऋज्रे पुरयस्य | ३२५ | एह देवा मयोभुवा | ५१ | चित्ते तद् वां सुराधसा | ६३० |
| उत स्या वां मधुमत् | १४६ | एह वां शुषितप्सवो | ४१६ | चित्रं ह यद् वां भोजनं | ३४२ |
| उत स्वा वां रुशतो | १९२ | ओ त्यमह आ रथम् | ४७१ | चोदयतं सूनुताः | ५८४ |
| उत स्वा श्वेतयावरी | ५०७ | ओष्ठाविष मध्वाज्ञे | २२० | छर्दिर्यन्तमदाभ्यं | ५३२ |
| उता मातं संगवे | २८९ | क उ श्रवत् कतमो | २४४ | जनासो वृकबर्हिषो | ४०० |
| उदीराधामृतायते | ५४० | कं याथः कं ह गच्छथः | २७० | जनिष्ट योषा पतयत् | ६०५ |
| उदु स्तोमासो अश्विनोः | ३७० | कः स्विद् वृक्षो निष्ठितो | २०० | जम्भयतमभितो | १९७ |
| उद् वन्दनमैरतं | १३२ | कथा नूनं वां विमना | ५६८ | जयतं च प्र स्तुतं च | ५१९ |
| उद् वां पृक्षासो मधुमन्तः | २३८ | कदा वां तौग्न्यो विधत् | ४०५ | जीवं रुदन्ति वि मयन्ते | ६०६ |
| उप स्या वर्ह्यं गमतो | ३७६ | कदु प्रेष्ठाविषां रयीणाम् | १८५ | जुजुरुषो नासत्योत | ८६ |
| उप नो यातमश्विना | ४९६ | का राधदोत्र श्विना | १४८ | जुषेथां यज्ञं बोधतं | ५१२ |
| उप नो वाजिनीवस् | ४७८ | का वां भूदुपमातः | २४७ | जुहुराणां चिदश्विना | ४९४ |
| उपस्तुतिरौचध्यम् | १७२ | किमत्र दस्त्रा ऋणुथः | १९६ | तं युजाथां मनसो | २०२ |
| उप स्तृणीतमत्रये | ५४२ | किमन्ये पर्यासत | ४२८ | तं युवं देवावश्विना | २३६ |
| उपायातं दाशुषे मर्त्याय | ३६३ | किमिदं वां प्राणवत् | ५५० | तं वां रथं वयमया | १८४; २५१ |
| उभा उ नूनं तदिदर्थ० | ६१४ | कुलायिना घतवती | ६३५ | तत् तदिदश्विनोरवो | ३५ |
| उभा पिबतमश्विना | ३८ | कृष्टः को वामश्विना | ६४१ | तद् पु वामेना कृतं | २६१ |
| उभा हि दस्त्रा भिषजा | ५६७ | कुह त्या कुह नु भुता | २६९ | तद् वां नरा नासत्यावनु | २०१ |
| उरु वां रथः परि | २४८ | कुह यान्ता मुष्टुतिं | ११३ | तद् वां नरा शंस्यं | ८७; १०७ |
| उष्टरेव फर्वरेषु | ६१५ | कुह स्थः कुह जग्मथुः | ५४३ | तद् वां नरा सनेये | ८८ |
| ऊर्ध्वा धीतिः प्रत्यस्य | १३९ | कुह स्विद् दाषा कुह | ५९८ | ततो वां षमो नक्षत्रु | ६८३ |
| ऊर्ध्वा वामगिरध्वरेषु | ३२० | कृष्टो देवावाश्विना | २६८ | तमिन्द्रं पशवः सचा | ६५८ |
| ऋतेन देवः सविता | ५७१ | को मृळातं कतम | २४५ | तर्द है पतज्ञ है | ६४४ |
| ऋध्याम स्तोमं सनुयाम | ६२४ | को वां दाशत् गुमतये | १७० | तर्दापते वघापते | ६४५ |
| ऋभुमन्ता वृषणा | ५२३ | को वामय पुरुणाम् | २७४ | ता न आ वोळ्हमाश्विना | २२५ |
| ऋषिं नरावंहसः | १०४ | को वामथा करते | २५३ | ता नव्यसो जरमाणस्य | ३०९ |
| एकस्मिन् योगे भुरणा | ३३५ | क त्या वन्गू पुरुहूताथ | ३१७ | ताभिरा यातमूर्तिभिः | ४०७ |
| एकस्या वस्तोरावतं | ९७ | क त्री चक्रा त्रिवृतो | २० | ताभिरा यातं वृषणा | ४८३ |
| एतं वां स्तोममश्विनौ | ५९६ | क स्विदथ कतमाशु | ६१० | ता भुज्युं विभिरङ्गथः | ३११ |
| एतानि वां श्रवस्या | १११ | क्षत्रं जिन्वतमुत् | ५२५ | ता मन्दसाना मनुषो | ६०९ |
| एतानि वामश्विना | १२६; २२२ | गच्छतं दाशुषो गृहम् | ५६३ | ता मे अश्विना सनीनां | ४२० |
| एतावद् वां वृषध्वस् | ४१० | गर्भं धेहि सिनीवालि | ६८९ | ता यज्ञमा शुचिभिः | ३०७ |
| एवा वामह ऊतये | ५३५ | गिरावरगराटपु | ६७४ | ता वर्तिर्यातं जयुषा | ५९५ |
| एष वां देवावश्विना | २३५ | गिरो जुषेयामध्वरं | ५१४ | ता वल्गू दस्त्रा पुरु० | ३१० |
| एष वां स्तोमो अश्विनौ | २१२ | गोमदू पु नासत्या | २२३ | ता वां नरा खवरो | १३६ |
| एष स्य कारुर्जरते | ३४६ | प्रावाणेव तदिदर्थ | २१५ | ता वामय तावपरं | २०८ |
| एष स्य भानुरुदियर्ति | २३७ | घमंघ मधु जठरे | ६२१ | ता वामय हवामहे | ४९२ |
| एष स्य वां पूर्वगत्वेव | ३३४ | चनिष्ठ देवा ओषधीषु | ३५८ | ताविदां चिदहानां | ४८४ |

| | | | | | |
|--------------------------------|--------------|----------------------------|----------|-----------------------------|-----|
| ताविद् दोषा ता उपसि | ४८५ | देवीद्वारो अश्विना | ६६० | पुराणमोकः सख्यं | २३१ |
| ता विद्वांसा हवामहे | १५० | देवीस्तिस्तिस्तिस्ति देवीः | ६६५ | पुराणा वां वीर्या प्र | ५८७ |
| ता सुदेवाय दाक्षुषे | ३८९ | देवो अग्निः स्विष्टकृद् | ६६९ | पुरुत्रा चिद्धि वां नरा | ३९९ |
| ता ह त्यद् वृत्तिर्यद् | ३०८ | देवो देवैर्वनस्पतिः | ६६७ | पुरुप्रिया ण ऊतये | ३८७ |
| तिरः पुरु चिदश्विना | २३० | शुभिरक्तुभिः पारि | ७६ | पुरुमन्त्रा पुरुवसू | ४३२ |
| तिष्ठः क्षपस्त्रिरहाति | ८० | शुभ्री वां स्तोमो अश्विना | ५७२ | पुरु हि वां पुरुभुजा | ३२४ |
| तुमो ह भुज्युमश्विनो | ७९ | धिये समदिवना प्रावतं | ६७३ | पुरु वर्षास्यदिवना | ११० |
| नेन नासत्या गतं | ४७ | धेनुः प्रत्नस्य कामं | २२६ | पूर्वापुषं सुहवं | ४७३ |
| तेन नो वाजिनीवसू | ४०३; ४१३ | धेनूर्जिन्वतमुत | ५२६ | पृथिव्याः पुरीषमस्यप्सो | ६३७ |
| त्यं चिदत्रिमृतजुरम् | ६२७ | ध्रुवदितिर्ध्रुवयोनिः | ६३४ | पौरं चिद्व्युदमुतं | २७१ |
| त्यं चिद्वं न वाजिनम् | ६२८ | न तं राजानावदिते | ५९३ | प्र च्यवानाञ्जुजुषो | २७२ |
| त्या न्वश्विना हुषे | ४६७ | न तस्य विद्य तद् | ६०७ | प्रति प्रियतमं रथं | २७८ |
| त्रयः पश्यो मधुवाहने | १३ | न मा गरन् नयो | १७३ | प्रति वां रथं नृपती | ३२८ |
| त्रिरश्विना सिन्धुभिः | १९ | नमोवाके प्रस्थिते | ५३१ | प्र शुभ्राय प्र शक्से | ४६३ |
| त्रिर्नो अश्विना दिव्यानि | १७ | न यत् परो नान्तर | २२४ | प्र बोधयोषो अश्विना | ४६० |
| त्रिर्नो अश्विना यजता | १८ | नरा गौरिष विष्टुतं | ३५२ | प्र यद् वहेथे महिना | १८३ |
| त्रिर्नो रथि बहतम् | १६ | नरा दंसिष्ठावत्रथे | ६२९ | प्र या घोषे भृगवाणे | १५२ |
| त्रिर्वर्तिर्यातं त्रिरनुव्रते | १५ | न संस्कृतं प्र मिमोतो | २८८ | प्र ये ययुरवृकासो | ३८३ |
| त्रिवन्धुरेण त्रिष्टता | ४०: १२८; ५६५ | नहि वामस्ति वरके | ८ | प्रवद्यामना सुवृता | १२९ |
| त्रिश्चिन् नो अया भवतं | १२ | नावेव नः पारयतं | २१८ | प्र वां रथो मनोजवा | ३४० |
| त्रिष्यस्ते बर्हिषि | ४२ | नासत्याभ्यां बर्हिरिष | ७७ | प्र वां शरद्वान् वृषभो | १९० |
| त्राणि पदान्यश्विनोः | ४४३ | निमिषश्चिज्जयोयसा | ५४१ | प्र वां स्तोमाः सुवृक्तयो | ४४२ |
| दश मासाञ्छशयानः | ३०५ | नि यद् युवेथे नियुतः | १८० | प्र वां दंसांस्तदिवनावबोचम् | १०१ |
| दश रात्रीरश्विना | १०० | नि पु ब्रह्मा जनानां | ३९६ | प्र वां निचिरुः ककुहो | १८९ |
| दशस्यन्ता मनवे | ४७७ | नू नो रथि पुरुवीरं | २५६ | प्र वामन्धांसि मथान्यरथुः | ३३९ |
| दक्षा युवाकवः सुता | ३ | नू मे गिरो नासत्या | ५६६ | प्र वामवोचमदिवना | २४३ |
| दक्षा हि विश्वमानुषः | ४९५ | नू मे हवमा शृणुतं | ३३७; ३५४ | प्र सप्तवधिराशसा | ५४८ |
| दिवश्चिद् रोचनादध्या | ४९७ | नृवद् दक्षा मनोयुजा | ३८५ | प्राचीमु देवादिवना | ३३२ |
| दिवस्कृष्वा इन्द्रो | ३२ | न्यध्न्यभ्य मूर्धनि चक्रं | ११ | प्रातर्जरेथे जरणेव | ५२९ |
| दीर्घतमा मामतेयो | १७४ | न्यु प्रियो मनुषः सादि | ३७४ | प्रातर्ध्वमश्विना | २९३ |
| दुहीयन् मित्राधितये | १५६ | पनाय्यं तददिवना | ५३८ | प्रातर्थावाणा प्रथमा | २९२ |
| दूरादिहेव यत् | ३८४ | पत्रेव चर्चरं जारं | ६२० | प्रातर्थावाणा रथ्येव | २१६ |
| देव इन्द्रो नराशः राः | ६६६ | परायतं नासत्यान् | ८५ | प्रातर्जुजं नासत्याधि | ६१२ |
| देवं बर्हिर्वारीतीनां | ६६८ | परिविष्टं जाहुषं | ९६ | प्रातर्जुजा वि बोधय | ५ |
| देवं बर्हिः सरस्वती | ६५९ | पिबतं सोमं मधुमन्तं | ५७५ | प्रास्मा ऊर्जं घृतदत्तुतम् | ४३६ |
| देवा देवानां भिपजा | ६६४ | पिबतं घर्मं मधुमन्तं | ५७३ | बृहन्तेव गम्भरेषु | ६२२ |
| देवी उपासावश्विना | ६६१ | पिबतं च तृणुतं चा | ५१८ | बोधिन्मनसा रथ्येषिरा | २८२ |
| देवी ऊर्जाहुती दुषे | ६६३ | पुत्रमिव पितरौ | ६२६ | ब्रह्म जिन्वतमुत | ५२४ |
| देवी जेष्टी सरस्वती | ६६२ | पुरं न वृष्णा दज | ५५७ | भीताय नाधमानाय | ३०२ |

| | | | | | |
|--------------------------|-----|--------------------------|----------|---------------------------|----------|
| मक्ष्म हि ष्मा गच्छथ | २४६ | यदिन्नेण रारथं | ४५५ | याभिर्नरा शयवे | ६७ |
| मधुमन्ने परायणं | ५८२ | यदुषो यासि भानुना | ४६१ | याभिर्महामतिथिष्वं | ६५ |
| मध्व ऊ पु मधूयुवा | २६५ | यदुक्षियास्त्राहुतं घृतं | ६८२ | याभिर्वर्चं विपिपानम् | ६६ |
| मध्वः पिबतं मधुपेभिः | २३९ | यद् युञ्जाथे वृषणम् | १६४ | याभिर्विदपलां धनसा | ६१ |
| मध्वः सोमस्याश्विना | १०२ | यद् रोदसी प्रदिषो | ३१३ | याभी रसां क्षोदसोद्गः | ६३ |
| मनोजवसा वृषणा | ४८७ | यद् वां कक्षीवां उत | ४५३ | याभी रेभं निश्रुतं | ५६ |
| मयि वचो अथो यशो | ६७६ | यद् वा यशं मनवे | ४६६ | या वां कशा मधुमती | ७ |
| मंहिष्ठा वाजसातमा | ३८८ | यज्ञासत्या पराके | ४५८ | याविस्था श्लोकमा दिवो | ५० |
| मही वामूतिरश्विना | १२० | यज्ञासत्या परावति | ४५९; ४३४ | या सुरथा रथीतमा | ६ |
| मा कस्मे धातमभ्यमिश्रिणे | १५५ | यज्ञासत्या भुरण्यथो | ४४९ | युक्तोह यद् वां तौग्याय | १७१ |
| मा नो गव्येभिरद्वयैः | ५५४ | यन्नूनं धीभिरश्विना | ४६४ | युञ्जाथा रासभं रथे | ५६४ |
| मा वां वृको मा वृकोरा | २०५ | यमश्विना ददथुः | ८२ | युवं रथेन विमदाय | ५८९ |
| मित्रावृषणवन्ता उत | ५२१ | यमाश्विना नमुचेरासुरादधि | ६५४ | युवं रेभं परिपूते | १४३ |
| य ई राजानावृथुथा | ३१४ | यमश्विना सरस्वती | १५७ | युवं वन्दनं निरुतं | १४४ |
| यच्चिद्धि वां पुर ऋषयो | ४२६ | ययोरधि प्र यज्ञा | ४६८ | युवं वरो सुषाम्णे | ४९१ |
| यत् स्थो दीर्घप्रसन्नानि | ४६५ | यवं वृकेणाश्विना | १२२ | युवं विप्रस्य जरणाम् | ५९० |
| यथा चकुर्देवासुरा | ६५२ | यस्ते रसः सम्भृत | ६५३ | युवं शका मायाविना | ५८० |
| यथा चित् कण्वमावतं | ४०८ | यातं छर्दिष्या उत नः | ४५४ | युवं दयावाय रुशतीम् | १०९ |
| यथा मक्षा इदं मधु | ६८७ | या दद्या सिन्धुमातरा | २५ | युवं श्रियमाश्विना | २५२ |
| यथा मधु मधुकृतः | ६८६ | या नः पापरदश्विना | २९ | युवं श्रीभिर्दर्शिताभिः | ३२२ |
| यथायं वाहो अश्विना | ६४७ | यानि स्थानान्यश्विना | ३५७ | युवं देवतं पेदवे | १३५; ५९२ |
| यथा वातः पुष्करिणीं | ३०३ | याभिः कण्वमभिष्टिभिः | ४३ | युवं सुराममश्विना | ६२५ |
| यथा वातो यथा वनं | ३०४ | याभिः कण्वं मेधातिथि | ४४० | युवं ह कृशं युवमश्विना | ६०४ |
| यथा वामत्रिरश्विना | ५३४ | याभिः कुत्समार्जुनयं | ७४ | युवं ह गर्भं जगतीपु | १६७ |
| यथा सोमः प्रातःसवने | ६८५ | याभिः कृशालुमसने | ७२ | युवं ह घर्मं मधुमन्तं | १७८ |
| यथोत कृत्वे धनंशुं | ४०९ | याभिः पक्थमवधो | ४८१ | युवं ह भुज्युं युवमश्विना | ६०३ |
| यदत्र रिप्तं रसिनः | ६५५ | याभिः पठ्वा जठररय | ६८ | युवं ह रेभं वृषणा | ५९१ |
| यददो दिवो अर्णवः | ५०६ | याभिः पत्नोर्विमदाय | ७० | युवं ह स्थो भिपजा | १६८ |
| यदद्य कर्हि कर्हि चित् | ५४४ | याभिः पारिजमा तनयस्य | ५५ | युवं हि ष्मा पुरुभुजा | ५६९ |
| यदद्य वां नासत्या | ४५२ | याभिः शचीभिर्वृषणा | ५९ | युवं ह्यास्तं महो रज् | १५४ |
| यदद्य स्थः परावति | २५८ | याभिः शन्ताती भवथो | ७१ | युवं कण्वाय नासत्या | ४०६ |
| यदद्याश्विनावपाग् | ४६९ | याभिः शुचन्ति धनसां | ५८ | युवं कवी पठः पर्यश्विना | ६०२ |
| यदद्याश्विनावहं | ४५६ | याभिः सिन्धुं मधुमन्तम् | ६० | युवं चित्रं ददथुः | ३७९ |
| यदध्रिगावो अध्रिगू | ४८२ | याभिः सुदानू औशिजाय | ६२ | युवं च्यवानं सनयं | ५८६ |
| यदन्तरिक्षे पतथः | ४७० | याभिः सूर्यं परियायः | ६४ | युवं च्यवानं जरसो | ३६६ |
| यदन्तरिक्षे यद् दिवि | ४४५ | याभिरङ्गिरो मनसा | ६९ | युवं च्यवानमश्विना | ११४ |
| यदप्सु यद् वनस्पतौ | ४४८ | याभिरन्तकं जसमानं | ५७ | युवं तासां दिव्यस्य | ५४ |
| यदयातं दिवोदासाय | ९४ | याभिर्नरं गोशुयुधं | ७३ | युवं तुषाय पूर्वभिः | ११५ |
| यदापीतासो अंवावो | ४६२ | याभिर्नरा त्रसदस्युं | ४४१ | युवं देवा क्रतुना | ५३६ |

| | | | | | |
|--------------------------|---------|---------------------------|----------|--------------------------|----------|
| युवं धेनुं शयवे | १३४ | यो ह वां मधुनो वृति० | ४०२ | शुनमन्धाय भरमङ्गयत् | ११९ |
| युवं नरा स्तुषते | ८३; १०८ | यो ह स्य वां रथिरा | ३५१ | शुश्रुवांसा चिदम्बिना | ३५९ |
| युवमत्यस्याव नक्षत्रो | १७६ | रथं यान्तं कुह को ह | ५९७ | शृङ्गेव नः प्रथमा | २१७ |
| युवमत्रयेऽवनीताय | १३३ | रथं वामनुगायसं | ४१७ | शृणुतं जरितुर्हवं | ५६१ |
| युवमेतं चक्रथुः | १९८ | रथं हिरण्यबन्धुरं | ४११ | श्येनाविष पतधो | ५१७ |
| युवं पय उल्लियायाम् | १७७ | रथो यो वां त्रिवन्धुरो | ४७६ | श्येनो हृष्यं नयत्वा | ६७२ |
| युवं पेदेवे पुरुवार० | १४७ | रथिं सुक्षत्रं स्वपत्य० | ९५ | श्रिये पूषन्निषुकृतेव | ११० |
| युवं भुज्युं समुद्र आ | ६३१ | रश्मीरिव यच्छतम् | ५२९ | श्रुतं गायत्रं तकवानस्य | १५३ |
| युवं भुज्युमवविद्धं | ३५३ | रातिं यद् वामरक्षसं | ५७९ | सं यन्मिथः पस्पृधानासो | १४० |
| युव भुज्युं भुरमाणं | १४१ | लोहितेन स्वधितिना | ६५१ | सं वां शता नासत्या | ३२६ |
| युवं मृगं जागृवांसं | ४१९ | वंसगेव पृषया | ६१८ | सं चेन्नयाथो अश्विना | ६४६ |
| युवां स्तोमेभिर्देवयन्तो | १६० | वच्यन्ते वां फकुहासो | २६ | सं जानामहे मनसा | ६७८ |
| युवां ह घोषा पर्याश्विना | ६०१ | वयं हि वां हवामहे | ४९८; ५७७ | संज्ञानं नः स्वेभिः | ६७७ |
| युवां गोतमः पुरुमीळ्हो | २०६ | वयं चिद्धि वां जरितारः | १८१ | सत्यमिद् वा उ अश्विना | १६६ |
| युवां चिद्धि ध्माश्विनौ | १८२ | वरेथे अग्निमातपो | ५४७ | सदा कवी सुमतिमा | १२४ |
| युवादत्तस्य धिष्ण्या | ५०१ | वस् रुद्रा पुरुमन्तू | १६९ | स पप्रथानो अभि | ३४८ |
| युवां देवास्त्रय एका० | ५३७ | वातेवाजुर्या नयेव | २१९ | समश्विनोरवसा | २९१; २९६ |
| युवाभ्यां वाजिनीवस् | ३८६ | वायुरेनाः समाकरत् | ६५० | समानं वां सजात्यं | ५५१ |
| युवां पूषेवाश्विना | १९३ | वावसाना विवस्वति | ३६ | समानमु त्वं पुरुहूतम् | ६११ |
| युवां मृगेव वारणा | ६०० | वावधाना नुमस्पती | ३९४ | समानयोजनो हि वां | १० |
| युवोः श्रियं परि योषा० | ३५० | वाहिष्ठो वां हवानां | ५०५ | समाने अहन् त्रिरवय० | १४ |
| युवो रजांसि सुयमासो | १७५ | वि चेदुच्छन्त्यश्विना | ३७१ | समिद्धो अग्निराश्विना | ६८० |
| युवोरत्रिश्चिकेति | २६३ | वि जयुषा रथ्या यात० | ३१२ | समिद्धो अग्निर्वृषणा | ६७९ |
| युवो रथस्य परि | ४७५ | वि जिहीष्व वनस्पते | ३०१ | सर्गा इव सृजतं | ५२८ |
| युवोरश्विना वपुषे | १४२ | विद्वांसाविद् दुरः | १४९ | साकंयुजा शकुनस्य | ६१६ |
| युवोरुषा अनु श्रियं | ३७ | वि पृच्छामि पाक्या | १५१ | सिन्धुर्ह वां रसया | २४९ |
| युवोरु पू रथं हुवे | ४९० | विदवा आशा दक्षिणसद् | ६३९ | सिषक्ति सा वां सुमतिः | ३५६ |
| युवोर्दानाय सुभरा | ५३ | विदवाभिर्धोभिर्भुवनेन | ५१० | सुदासे दद्या वसु | ४४ |
| येभिस्त्रिः परावतो | ३९१ | विद्वे देवा अरुपन्त | ५८१ | सुप्रावर्ग सुवीर्य | ४८९ |
| ये वां दंसांश्विना | ४४६ | विद्वैर्देवैस्त्रिभिरेका० | ५११ | सुयुग्भिर्द्वैः सुवृता | १२८ |
| यो भूयिष्ठं नासत्याभ्यां | २९५ | वीळ्यप्ताभिराशुहेमाभिः | ७८ | सुयुग् वहन्ति प्रति | २२७ |
| यो वां यज्ञेभिरावृत्तो | ५०२ | वृकाय चिज्जसमानाय | ३४५ | सुवृद् रथो वर्तते | २०३ |
| यो वां यज्ञो नासत्या | ३६० | वैयश्वस्य श्रुतं नरोतो | ५०० | सुषुप्तां न निर्ऋतेः | १०६ |
| यो वां रजांश्विना | ५५२ | शचीभिर्नः शचीवसू | १६२ | सुष्टुभो वां वृषण्वसू | २८१ |
| यो वां रथो नृपतो | ३६५ | शतं मेषान् वृक्ये | ९२; ११८ | सुनोर्मानेनाश्विना | ११२ |
| यो वां नासत्यावृषिः | ४३५ | शमू घु वां मधूयुवा | २७६ | सुप्येव जर्भरी तुर्करीत् | ६१९ |
| यो वामश्विना मनसो | १०३ | शरस्य चिदाच्यत्कस्य | ९८ | स्तुषे नरा दिवो अस्य | ३०६ |
| यो वामुरुच्यचस्तमं | ५०३ | शियाभिष्टे हृदयं | ६४२ | स्तोमं जुषेथा युवशेष | ५१३ |
| यो वां परित्रमा सुवृद् | ५८३ | | | स्मरेतया सुकीर्त्या | ५८८ |

| | | | | | |
|-------------------------|-----|----------------------|-----|----------------------|-----|
| स्व घरासो मधुमन्तो | २४१ | हतं च शत्रून् यततं | ५२० | हिरण्यत्वङ्मधुवर्णो | २९४ |
| स्वखा यशसा यातम् | ३४९ | हतं तर्द समङ्कमाखुं | ६४३ | हिरण्ययी अरणी यं | ६३३ |
| स्वाहाकृतः शुचिर्देवेषु | ६८१ | हविषा जारो अपां | २७ | हिरण्ययी वां रभिरीषा | ४१९ |
| स्वाहाकृतस्य तृम्पतं | ५३२ | हस्तेव शक्तिमभि | २२१ | हिरण्ययेन पुरुभू | २५४ |
| स्वैर्दक्षैर्दक्षपितेह | ६३६ | हारिद्रवेव पतथो | ५१५ | हिरण्ययेन रथेन | ४१८ |
| हंसाविप पतथो | ५१६ | हिङ्कृण्वती वसुपत्नी | ६८४ | हिरण्यहस्तमदिवना | १२५ |
| हंसासो ये वां मधुमन्तो | २४० | हिमेनाग्निं ग्रसम० | ८४ | | |



शुद्धिपत्रम् ।

| पृष्ठम् । | मन्त्राङ्कः । | अशुद्धम् । | शुद्धम् । |
|-----------|------------------|----------------------|---------------------|
| ८ | १,११६,२२ [९८] | चिदार्चत् कस्यावतादा | चिदार्चत्कस्यावतादा |
| ११ | १,११९,६ [१४३] | वृर्घेण | प्र वृर्घेण |
| २६ | ७,६८,८ [३४५] | हयमाना | ह्रयमाना |
| २९ | ८,५,५ [३८८] | महिष्ठा | महिष्ठा |
| ३१ | ८,८,१३ [४३३] | रीरघतं | रीरघतं |
| ८७ | अन्त्या पङ्क्तिः | ०विर्मव० | ०विर्मव० |







दैवत-संहिता

(६)

आयुर्वेद-प्रकरण

संपादक

श्रीपाद दामोदर सातवळेकर,

स्वाध्याय-मण्डळ, औरंगाबाद (जि. सातारा)

संवत् २०००, शक १८६५; सन् १९४३

मुद्रक और प्रकाशक

वसंत श्री. सातवलेकर, B. A.

भारत मुद्रणालय, भोंध (जि. सातारा)

आयुर्वेद-प्रकरण

चारों वेदोंमें आयुर्वेद-विषयक मन्त्र इधर उधर बिखरे हैं। उन सब को इस प्रकरण में इकट्ठा किया है। इन में करीब ७५ ऋषियों के देखे मन्त्र हैं और ये मन्त्र करीब ८२ शीर्षकों में विभक्त हुए हैं। इनका ब्यौरा देखिये-

आयुर्वेद-प्रकरण के ऋषि क्रमानुसार मन्त्र

| ऋषि | सूक्तसंख्या | मन्त्रसंख्या | | |
|------------------------------|-------------|--------------|--------------------------------|---|
| १ अथर्वा | ५८ | ५९८ | २३ कवष (ऐलुषः) | १ |
| २ ब्रह्मा | ४२ | २७२ | २४ ऋभुः | २ |
| ३ यमः | १३ | १६७ | २५ भरद्वाजो (बाह्वस्पत्यः) | १ |
| ४ ऋगुः | १० | १४७ | २६ सविता | १ |
| ५ ऋग्वंगिराः | १९ | ११८ | २७ अंगिराः (प्रचेताः) | ४ |
| ६ शुक्रः | ७ | ७५ | २८ शंखो (यामायनः) | १ |
| (यजुः) | ३१ | ६२ | २९ सर्पः (काद्रवेय आर्बुदिः) | १ |
| ७ गरुमान् | ७ | ५९ | ३० यमो यमी च | १ |
| ८ शन्तातिः | १२ | ५९ | ३१ विवृहा (काश्यपः) | २ |
| ९ चातनः | ७ | ४४ | ३२ बादरायणिः | २ |
| १० मृगारः | ६ | ४२ | ३३ शौनकः | ४ |
| ११ विश्वामित्रः (गाथिनः) | ६ | ४१ | ३४ शुनःशेषः | ३ |
| १२ वसिष्ठः (मैत्रावरुणिः) | १० | ४१ | ३५ अत्रिः (भीमः) | १ |
| १३ बृहस्पतिः | १ | ३५ | ३६ सप्तवध्रिः (आत्रेयः) | १ |
| १४ मातृणामा | २ | ३५ | ३७ भिक्षुः (आंगिरसः) | १ |
| १५ प्रस्कण्वः (काण्वः) | ८ | ३३ | ३८ मेधातिथिः (काण्वः) | १ |
| १६ प्रत्यङ्गिराः | १ | ३२ | ३९ संकुसुको (यामायनः) | १ |
| १७ अथर्वाङ्गिराः | ६ | २७ | ४० सर्प (ऐरावतो जारत्कर्णः) | १ |
| १८ अगस्त्यो (मैत्रावरुणिः) | २ | २७ | ४१ भगः | २ |
| १९ भिवर्ग (आथर्वणः) | १ | २३ | ४२ वामदेवः | २ |
| २० देवश्रवाः (यामायनः) | ३ | २२ | ४३ कुमारो (यामायनः) | १ |
| (मथितश्च) | | | ४४ प्रजापतिः | १ |
| २१ त्रिशिराः (त्वाष्ट्रः) | | | ४५ रक्षोहा | १ |
| सिन्धुद्वीप (आंबरीषः) | ५ | २० | ४६ अंगिराः | १ |
| २२ उन्मोचनः | २ | २० | ४७ वीतहृद्यः | २ |
| | | | ४८ हविर्धान (आंगिः) | १ |
| | | | ४९ यक्ष्मनाशनः | १ |
| | | | ५० शंभुः | १ |
| | | | ५१ ऋषभो (वैराजः) | १ |
| | | | ५२ सूर्या (सावित्री) | २ |
| | | | ५३ द्रविणोदाः | १ |
| | | | ५४ मनुः (वैवस्वतः) | १ |
| | | | ५५ ऊर्ध्वश्रवा (आर्बुदिः) | १ |
| | | | ५६ गृत्समद (आंगिरसः) | २ |

| | | |
|-------------------------------|---|---|
| ५७ कबंधः | १ | ४ |
| ५८ भागलिः | १ | ३ |
| ५९ जाटिकायनः | १ | ३ |
| ६० बभ्रुपिंगलः | १ | ३ |
| ६१ वरुणः | १ | ३ |
| ६२ कौशिकः | १ | ३ |
| ६३ गोतमो (राहूगणः) | ३ | ३ |
| ६४ मधुच्छंदा (वैश्वामित्रः) | १ | ३ |
| ६५ उपरिबभ्रवः | १ | ३ |
| ६६ शिरिबिठिः | १ | २ |
| ६७ इन्द्राणी | १ | २ |
| ६८ प्रजावान् (प्राजापत्यः) | १ | २ |
| ६९ कौरुपथिः | १ | २ |
| ७० कक्षीवान् (दैर्घतमसः) | २ | २ |
| ७१ कण्वो (घौरः) | १ | २ |
| ७२ कूर्मो (गार्ग्यमदः) | १ | १ |
| ७३ वसुक्रः (ऐंद्रः) | १ | १ |
| ७४ दीर्घतमा (औचध्यः) | १ | १ |
| ७५ गार्ग्यः | १ | १ |

आयुर्वेद-प्रकरण के मंत्रों की विषयानुसार गणना

आयुर्वेद-प्रकरण में नागविषयों के शीर्षकों के नीचे जो मंत्र इकट्ठे किये गये हैं उनकी विषयानुसार गणना इस प्रकार है—

| | मंत्र-संख्या |
|----------------------------|--------------|
| १ दीर्घ-आयुष्य की प्राप्ति | १६० |
| अरिष्टानि अंगानि | २ |
| सुमंगलौ दन्तौ | ३ |
| २ यक्ष्मनाशन | १५० |
| ३ ओषधिवनस्पतयः | ७७ |
| अन्न | ३ |
| सोम | ४ |
| वनस्पतिसूर्यगावः | ३ |
| वनस्पतयः | २ |

| | मंत्र-संख्या |
|--------------------------------|--------------|
| अपामार्ग | २७ |
| अरुंधती | ३ |
| कुष्ठ औषधि | ३ |
| कुष्ठनाशनी | २० |
| पिप्पली | ३ |
| पृथ्निपणों | ८ |
| रोहिणी | ८ |
| लक्षा | ९ |
| केशवर्धनी | ९ |
| अक्षिरोगनाशनी | ४ |
| मधुवनस्पति | ५ |
| रामायणी | १ |
| अजशृंगी | १२ |
| ४ पापनाशनं | १२८ |
| आस्त्रावभेषजं | ६ |
| रक्तस्त्रावनिवृत्तये धमनीबंधनं | ४ |
| निर्ऋतिनाशनं | ४ |
| हृद्रोग-कामिला-नाशनं | ४ |
| कासनाशनं (बलासनाशनं) | ६ |
| ह्लीबस्त्रनाशनं | ५ |
| सौभाग्यवर्धनं | ५ |
| सपत्नीबाधनं | ७ |
| ज्वरनाशनं (तक्मनाशनं) | १८ |
| गण्डमाला-चिकित्सा | १० |
| श्वेतकुष्ठनाशनं | ८ |
| रोगात् उन्मोचनं | ३ |
| रोगनिवारणं | २५ |
| स्वापनं | ७ |
| मूत्रमोचनं | ९ |
| सूर्यः | ३ |
| ५ इषुनिष्कासनं | ३ |
| ६ अञ्जनं | ३३ |
| ईर्ष्याविनाशनं | ४ |
| उन्मत्ततामोचनं | ४ |
| ७ विषनाशनं | ८६ |

| | |
|---|--|
| ८ क्रिमिनाशनं (यातुधा, रक्ष, पिशाच, असुर आदीनां नाशनं) | ८३ |
| ९ कृत्यादूषणं दस्युनाशनं बंधमोचनं मन्याविनाशनं शापमोचनं अरातिनाशनं अरिष्टनाशनं दुःखमोचनं अलक्ष्मीनाशनं | ५७ ६ २ ३ ६ १० १२ ३४ ६ |
| १० दुष्पन्ननाशनं सुखप्राप्तिः मन्युशमनं वृषरोगशमनं | ९८ १ ३ ११ |
| ११ जलचिकित्सा | २४८ |
| १२ मणिधारणं | १५५ |
| १३ अन्नं | २२४ |
| १४ वाजीकरणं गर्भाधानं गर्भहृणं गर्भरोगनिवारणं गर्भसंस्त्रावः सुखप्रसूतिः मेधाजननं | १४ १६ ४ २६ २५ ११ १२ |
| १५ धर्मः यज्ञः दर्भः नवशालायां घृतहोमः पितृमेधः यज्ञः यजमानः वेदी यूपः हविर्धानं ऊलखलमुसले प्रावाणः अन्नदानं | ५ ५ १० २९४ १७ १७ ५ ४ २६ ९ |

गोष्ठः

अग्निः

१

आयुर्वेद-प्रकरण के २३३५ मन्त्रों यह व्यौरा है । यहां यज्ञ-प्रकरण के अत्यावश्यक मन्त्र ही लिये हैं । यज्ञके विषय में कहा है—

ऋतुसंधिषु वै व्याधिर्जायते ।

ऋतुसंधिषु यज्ञाः क्रियन्ते ॥

(गो. ब्रा. उ. १।१९; कौ. ब्रा. ५।१)

अर्थात् ऋतु के संधिकाल में व्याधियां उत्पन्न होती हैं, अतः उनके शमन के लिये यज्ञ किये जाते हैं । यह प्रक्रिया वैदिक ग्रन्थों में दीखती है । इस प्रक्रिया के अनुसार यज्ञ-विषयक जितने मन्त्र लेनेकी आवश्यकता थी, उतने ही मन्त्र यहां लिये हैं । यज्ञ-प्रकरण के अन्य मन्त्र और अन्य यज्ञविधि का मन्त्र-संग्रह अन्यत्र किया जायगा ।

दीर्घ आयु की प्राप्तिके मन्त्र यहां सबसे प्रथम दिये हैं । क्योंकि आयुर्वेद की उत्पत्ति इसी इच्छा से ही हुई है । दीर्घ आयु का उपभोग करने की प्रबल इच्छा प्रत्येक मानव में रहती है और यही इच्छा आयुर्वेद की उत्पत्ति और उन्नति करती रहती है ।

दीर्घ आयु की इच्छा का घात करनेवाला यक्ष्म है । यक्ष्म का अर्थ नाना प्रकार के क्षयरोग हैं । मुख्य यक्ष्म का नाम क्षयरोग है, परन्तु सभी रोग क्षय उत्पन्न करते हैं, इसलिये गौण दृष्टि से सभी रोग यक्ष्म ही कहलाते हैं । दीर्घ आयु चाहिये, तो यक्ष्म का दूर करना अत्यावश्यक ही है ।

इसी कार्य के लिये नाना प्रकार की औषधियों की खोज हो गयी । वेद में जो औषधियां मिलती हैं, वे सोम, अपा-मार्ग, अरुंधती, कुष्ठ, पिप्पली, पृश्निपर्णी, रोहिणी, लाक्षा, केशवर्धनी, मधुला, रामायणी, अजश्रेणी इत्यादि हैं । इनके अतिरिक्त यज्ञप्रकरण में ऋषभ, तारके, वचः आदि भी औषधियां मिलती हैं । इन औषधियों के वर्णन पाठक इन सूक्तों में देख सकते हैं । ये वर्णन पढ़ने से निश्चयपूर्वक हम कह सकते हैं कि इन औषधियों का अनुभव इस समय हो चुका था ।

औषधिवनस्पतियोंके विषयमें ब्राह्मण ग्रन्थों में निम्न लिखित प्रकार वर्णन मिलते हैं—

ब्राह्मणग्रंथोर्भे औषधिवनस्पतियाँ ।

१ ओषं धयेति तत ओषधयः समभवंस्तस्मा-
दोषधयो नाम । (श. ब्रा. २।२।४।५)

२ प्रजापतेर्विस्त्रस्तस्य यानि लोमानि अशी-
यन्त, ता इमा ओषधयोऽभवन् ।

(श. ७।४।२।११)

३ द्वयो वा ओषधयः पुष्पेभ्यो अन्याः फलं
गृह्णन्ति । मूलेभ्योऽन्याः ॥ (तै. ब्रा. ३।८।१।७।४)

४ उभयो (ओषधयो) ऽस्मै स्वादिताः पच्य-
न्तेऽकृष्टपच्याश्च कृष्टपच्याश्च । (तां. ब्रा. ६।१।९)

५ ततोऽसुरा उभयीरोषधीर्याश्च मनुष्या उप-
जीवन्ति, याश्च पशवः...ने (देवा) होचुर्ह-
न्तेदमासां (ओषधीनां) अपजिघांसामेति केनेति
यज्ञेनैवेति । (श. २।४।३।२-३)

६ एतद्वेतासां (ओषधीनां) समृद्धं रूपं
यत्पुष्पवत्यः सुपिप्पलाः । (श. ब्रा. ६।४।४।१७)

७ पशूनां ओषधयः, ओषधीनां आपः ।

(जै. उ. १।५।९।१४)

८ आपो ह वा ओषधीनां रसः । (श. ३।६।१।७)

९ अपां ओषधः, ओषधीनां पुष्पाणि, पुष्पाणां
फलानि (रसः) । (श. १।४।१।४।१)

१० तस्मादोषधयः केवल्यः स्वादिता न
धिन्वन्ति, ओषधय उ हपां रसः ।

(श. ३।६।१।७)

११ एष ह वै सर्वासामोषधीनां रसो यत्पयः ।

(कौ. ब्रा. २।१)

१२ तस्मादक्षिणतो अग्र ओषधयः पच्यमाना
आयन्ति, आग्नेय्यो ह्यौषधयः । (ऐ. ब्रा. १।७)

१३ अग्नेर्वा एषा तनूः, यदोषधयः ।

(तै. ब्रा. ३।२।५।७)

१४ यदुग्रो देव ओषधयो वनस्पतयः ।

(कौ. ब्रा. ६।५)

१५ ओषधयो वै पशुपतिः, तस्माद्यदा पशवं
ओषधीर्लभन्तेऽथ पतीर्यन्ति । (श. ६।१।३।१२)

१६ ओषधयो वै मदः । ओषधीर्मिर्हीदं सर्वं

मोदते ।

(श. ९।४।१।७)

१७ ओषधयः खलु वाजः । (तै. ब्रा. १।३।७।१)

१८ ओषधयो मधुमतीः । (तै. ३।२।८।२)

१९ रसो वा एष ओषधिवनस्पतिषु यन्मधु ।

(श. १।५।४।१८)

२० सौम्या ओषधयः । (श. १२।१।१।२)

२१ सोम ओषधीनामधिराजः ।

(गो. ब्रा. उ. १।१७)

२२ सोमो वै राजांषधीनाम् ।

(कौ. ४।१२; तै. ३।९।१।७।१)

२३ या ओषधीः सोमराज्ञीः । (मं. ब्रा. २।८।३.४)

२४ औषधो हि सोमो राजो । (ऐ. ब्रा. ३।४०)

२५ विष्णोरध्योषधीरसृज्यत । (तै. २।३।२।४)

२६ ओषधिलोको वै पितरः । (श. १।३।८।१।२०)

२७ जगत्य ओषधयः । (श. १।२।२।३)

२८ सप्त ग्राम्या ओषधयः सप्तरण्याः ।

(तै. १।३।८।१)

२९ वर्षवृद्धा वा ओषधयः ।

(तै. ३।२।२।५; ३।२।५।१०)

३० ओषधयो वै देवानां पत्न्यः ।

(श. ६।५।४।४)

३१ तस्मात् शरदं ओषधयोऽभिपिच्यन्ते ।

(तां. ब्रा. २।१।५।३)

३२ शरदि हि खलु वै भूयिष्ठा ओषधयः
पच्यन्ते । (जै. उ. १।३।५।५)

३३ सेनान्यं वा एतदोषधीनां यद्यवाः ।

(ऐ. ८।२६)

३४ साम्राज्यं वा एतदोषधीनां यन्महा-
वीर्यः । (ऐ. ८।१६)

३५ ओषधिवनस्पतयो मे लोमसु श्रिताः ।

(तै. ३।१०।८।७)

३६ वनस्पतयो वै द्रु । (तै. ब्रा. १।३।९।१)

३७ भौज्यं वा एतद्वनस्पतीनां (यदुदुम्बरः) ।

(ऐ. ब्रा. ७।३२; ८।१६)

३८ अथो सर्व एते वनस्पतयो यदुदुम्बरः ।

(श. ७।५।१।१५)

३९ तेजो ह वा एतद्वनस्पतीनां यद्वाह्या शकलः,
तस्माद्यदा बाह्याशकलमपतक्ष्णुवन्त्यथ शुष्यन्ति ।
(श. ३।७।१।८)

४० वनस्पतयो हि यक्षिया, न हि मनुष्या
यजेरन् यद्वनस्पतयो न स्युः । (श. ३।२।२।९)

४१ अग्निर्वै वनस्पतिः (कौ. ब्रा. १।०।६)

४२ प्राणो वनस्पतिः । (कौ. १।२।७)

४३ स (वनस्पतिः) उ वै पयोभाजनः ।
(कौ. १।०।६)

४३ यद् भेषजं तदमृतम् । (गो. पू. ३।४)

४४ शान्तिर्वै भेषजमापः ।
(कौ. ३।६, ७, ८, ९ । गो. उ. १।२५)

ये औषधिवनस्पतयोर्के सम्बन्ध में ब्राह्मणग्रंथोंके वचन हैं, अब इस आयुर्वेद-प्रकरण में आयुके सम्बन्ध के ब्राह्मण-वचन देखने योग्य हैं, वे ये हैं --

१ वरुण एव आयुः । (श. ४।१।४।१०)

२ अग्निर्वा आयुः । (श. ६।७।३।७; ७।२।१।१५)

३ अग्निर्वा आयुष्मानायुप ईष्टे । (श. १३।८।४।८)

४ संवत्सर आयुः । (श. ४।१।४।१०; ४।२।४।४)

५ यशो वा आयुः । (तां. ६।४।४)

६ असौ लोकः (= बुलोकः) आयुः । (ऐ. ४।१५)

७ असावुत्तमः (लोकः) आयुः । (तां. ४।१।७)

८ अन्नम् वा आयुः । (श. ९।२।३।१६)

९ आयुर्वा उद्गाता । आयुः क्षत्तसंगृहीतारः ।
(तै. ३।८।५।४)

१० प्राणो वा आयुः । (ऐ. २।३।८)

११ यो वै प्राणः स आयुः । (श. ५।२।४।१०)

१२ आयुर्वा उष्णिक् । (ऐ. १।५)

१३ स यो हैवं विद्वान् सायंप्रातराशी भवति,
सर्वं हैवायुरेति । (श. २।४।२।६)

१४ य एवं विद्वान्, स्यात् न मृणमये भुञ्जीत ।
तथा हास्य आयुर्न रिष्येत तेजश्च । (आप्येय ब्रा. १।१)

१५ आयुर्वै दीर्घम् । (तां. १३।१।१।२)

आयु के सम्बन्ध में ये वचन ब्राह्मण ग्रंथोंमें हैं । अब औषधियोंके नामनिर्देश से जो वचन ब्राह्मण ग्रंथों में आते हैं, उन्हें देखिये—

अपामार्ग औषधि ।

१ अपामार्गैरपमृज्यते । (श. १३।८।४।४)

२ अपामार्गहोमं जुहोति । अपामार्गैर्वै देवा
दिशु नाप्रा रक्षांसि अपामृजत, ते व्यजयन्त ।
(श. ५।२।४।१४)

३ यदपामार्गं होमो भवति, रक्षसामपहत्यै ।
(तै. १।७।१।८)

४ प्राचीनफलो वा अपामार्गः ।
(श. ५।२।४।२)

रोहिणी ।

१ तत ऊर्ध्वाऽरोहत् । सा रोहिण्यभवत् ।
तद्रोहिण्यै रोहिणित्वम् । (तै. १।१।१।०।६)

२ ततौ वै ते सर्वान्रोहानरोहन् तद्रोहिण्यै
रोहिणित्वम् । (तै. १।१।२।२)

इस आयुर्वेद-प्रकरण के कुछ विषयों के विषय में ब्राह्मण वचन ये हैं । ये आयुर्वेद-प्रकरण की बातें विशेषसी खोलते नहीं हैं । इनका आशय प्रायः स्पष्ट है, अतः इन सब का अर्थ यहां देनेकी आवश्यकता नहीं है । अब आयुर्वेद-प्रकरण में आण अनेक विषयों के सम्बन्ध में थोड़ासा वर्णन करके परिचय कराना आवश्यक प्रतीत होता है—

दीर्घ आयुष्य ।

सब से प्रथम ' दीर्घायुष्य ' का प्रकरण है, इसमें करीब १६० मन्त्र हैं । इनमें दीर्घायुष्य की कामना मुख्य विषय है । पहिले ही सूक्त में ' मन्त्यु ' अर्थात् क्रोध आदि मनो-विकार आयु की क्षीणता करते हैं, उन से बचने की सूचना मुख्य है । द्वितीय सूक्त में बोधप्रतिबोध (ज्ञान-विज्ञान), निद्रा और जाग्रति, ये सब मनुष्य को सुरक्षित रखें ऐसा कहा है, वह बड़े महत्त्व का विषय है । क्योंकि मनुष्य का ज्ञान ही उस को ऐसे फंदे में फंसाता है कि जो उसकी आयु क्षीण करता है । अतः मानव का ज्ञान तथा व्यवसाय उस की आयु क्षीण न करें । यह सूचना बड़ी महत्त्वपूर्ण है ।

पञ्चम सूक्त में ' दाक्षायण सुवर्ण ' आयुष्य बढ़ाने-वाला है, ऐसा कहा है । इस सुवर्ण की सिद्धता किस तरह करना चाहिये, यह एक बड़ा महत्त्वपूर्ण खोज का विषय है । आर्य वैद्यक में सुवर्ण विषम है और हृदय का बल बढ़ाता

है ऐसा कहा है। इस से सुवर्ण दीर्घायु देनेवाला है, ऐसा हम अनुमान कर सकते हैं। निःसंदेह दीर्घायु देनेवाले धातुओं में सुवर्ण की प्रमुखता से गणना हो सकती है।

सप्तम सूक्त में जंगिडमणि के धारण से दीर्घायु की प्राप्ति होने का वर्णन है। यह अरण्य से लाया और कृषिके रसों से बना मणि है (मं. ५)। इस का विचार करके इस का प्रयोग सिद्ध करना चाहिये।

अष्टम सूक्त में हवन से दीर्घ जीवन का विषय पाठक देख सकते हैं। हवन से राजयक्ष्मा, ज्वर तथा अन्यान्य रोग दूर हो जाते हैं। घृतके हवन से वायुकी शुद्धता होती और वहां के रोगबीज दूर होते हैं। नाना प्रकार की ओषधियों के हवन करने से उन के सूक्ष्म अणु नासिका मुख आदि स्थान से शरीर में जाते, और वहां बड़ा प्रभाव करते तथा मानव की नीरोगता सिद्ध करते हैं। हवन से जैसे रोग दूर होते हैं वैसे बुरे पदार्थों के हवन से रोग उत्पन्न भी होते हैं। चरक ग्रन्थ में अतिसार-चिकित्सा में कहा है कि गौका मेध करने की प्रथा पृषधरा राजाने अपनी इच्छा से शुरू की, पहिले नहीं थी। उस यज्ञ से 'अतिसार' की उत्पत्ति हुई। वह अतिसार रोग अब तक जनता को सता रहा है। पृषधरा राजा के पूर्व गोमेध नहीं था, अतः अतिसार भी नहीं था। यह उस कथा का तात्पर्य है। बुरे यज्ञों का यह कुप्रभाव है। शत्रु के राज्यों में ऐसे कुयज्ञ करके नाना प्रकार के रोगों का फैलाव शत्रु देशों में करने के भी विधान कई ग्रन्थों में हैं। ये बुरे यज्ञ हैं। इसी तरह अच्छे यज्ञ करने से जनता को आरोग्य प्राप्त होकर उनकी दीर्घायुता भी सिद्ध हो सकती है। यह बड़ा शास्त्र है और खोज करने योग्य यह विषय है।

नवम सूक्त में 'दशवृक्ष' का वर्णन है। ये दशवृक्ष नाम से दस वनस्पतियां हैं; जो दीर्घकालीन रोग को दूर करती हैं और मानव को दीर्घजीवी बना देती हैं।

तेरहवें सूक्त में अंगस्थ ज्वरों का वर्णन है। इस सूक्त में विशेषतः रोगी मनुष्य के मनको विश्वास दिलाकर आरोग्य-प्राप्ति में सहायता करने का विधान है। 'हे रोगी मानव! ज्ञान विज्ञान तथा निद्रा और जाग्रति ये सब तेरे प्राणों की रक्षा कर रहे हैं। यह अग्नि (यहां हवन कुण्ड में) जल रहा है, यह सूर्य उदय को प्राप्त हो रहा है। ये तेरी रक्षा

करें, इनकी सहायता से तू गंभीर मृत्यु से अब ऊपर उठा है, (अब तेरी मृत्यु नहीं होगी;) (मन्त्र १०-११) ' इस तरह रोगी को विश्वास दिलाया जाता है। इस मन्त्रपर दृढ़ विश्वास रखनेवाला रोगी इस से लाभ उठा सकता है।

पंद्रहवें सूक्त में 'सौ वर्षों से भी अधिक जीवन' की इच्छा धारण करने की सूचना है। इस पृथ्वीपर मनुष्य सौ वर्षों से भी अधिक जीवित रहे, यह वैदिक विचारधारा थी। आगे पच्चीसवें सूक्त तक सूक्तों में दीर्घायुप्राप्ति के प्रार्थना समेत अनेक उपयोगी निर्देश हैं। विशेषकर चौबीसवें सूक्त में उत्तम अवयवों की धारण और पच्चीसवें सूक्त में उत्तम स्वच्छ दांतों का होना दीर्घायु के लिये अत्यंत आवश्यक है ऐसा जो कहा है, वह विशेष रीतिसे द्रष्टव्य है। दांत बिगड़नेसे शरीर का स्वास्थ्य बिगड़ता है और उसके बिगड़नेसे आयुष्य का नाश होता है। इस तरह इन सूक्तों में जो उप-युक्त निर्देश हैं, उन का विचार पाठकों को करना चाहिये।

यक्ष्म-नाशन ।

यक्ष्म-नाशन इस आयुर्वेद-प्रकरण का दूसरा विभाग है। इस में करीब करीब डेढ़ सौ मन्त्र हैं। छब्बीसवें सूक्तसे इस प्रकरण का प्रारंभ होता है। छब्बीसवें सूक्त में शरीर के नाना अवयवों का उल्लेख करके प्रत्येक अवयव से यक्ष्मरोग दूर करने का विषय है। मानस-चिकित्सा का यह सूक्त दीखता है। चिकित्सक रोगी को विश्वास दिलाता है कि, इस प्रयोग से तेरा यक्ष्मरोग निःसन्देह दूर होगा और तू निर्दोष होगा। इस सूक्त से यह बात सिद्धसी दीखती है कि यक्ष्मरोग शरीरके प्रत्येक अवयवमें हो सकता है और उसको वहां से हटाना चाहिये। इस सूक्त का 'अङ्गादङ्गा-ल्लोम्नो लोम्नो०' यह मन्त्र अंतिम है, वह मन्त्र प्राचीन काल से मृत्तिकास्नान के समय बोलने की परिपाटी महाराष्ट्र में तथा दक्षिण भारत में श्रावणी पर्व के समय है। अच्छी स्वच्छ मिट्टी जिस में खाद आदि कुछ भी मिला नहीं, ऐसी शुद्ध मृत्तिका जल में मिलाकर शरीरपर लगायी जाती है और शरीरपर लेप देकर कुछ देरके बाद स्वच्छ जल से स्नान किया जाता है। इस मिट्टी में खाद मूल अथवा कंकर आदि कुछ भी नहीं रहना चाहिये। यह मिट्टी स्वच्छ शुद्ध मलरहित मक्खन जैसी मृदु रहनी चाहिये। खादवाली मिट्टी हानिकारक होती है। खेत की मिट्टी लेनी

हो तो, एक हाथ के] नीचे की लेनी उचित है। अन्यथा जहां खेती नहीं होती, वहां से शुद्ध मिट्टी ली जाय तो वह इस प्रयोग के लिये अच्छी है। मिट्टी के प्रयोग से नाना रोगबीज शरीरसे दूर हो जाते हैं। अन्तिम मन्त्रका उपयोग मिट्टी शरीरपर मलने के लिये करते हैं। इस से हम अनुमान कर रहे हैं कि यह सब सूक्त मृत्तिका से यक्ष्म-दोष हटाने के लिये होना संभव है। पाठक इस का अधिक विचार करें।

आगे का सताईसवां सूक्त भी इसी दृष्टि से विचार करने योग्य है। इस सूक्त का अन्तिम ग्यारहवां मन्त्र पर्जन्य की वृष्टि से प्राप्त जल का उपयोग करके अ-मृत अर्थात् नीरोग बनने के कार्य के लिये स्पष्ट है। सब पाप, सब यक्ष्म और सब प्रकार के मरणकारक रोग-बीज वृष्टिजल के प्रयोग से दूर होते हैं। पर्जन्य के पहिले नक्षत्रों की वृष्टि होनेके पश्चात्, उस वृष्टि से वायु पवित्र होनेके पश्चात् की वृष्टि का जल लेना उचित है। प्रायः हस्त, चित्रा, स्वाती नक्षत्रों की वृष्टि का जल लेकर घड़े भरकर घरमें अच्छी तरह बंद करके रख देनेसे, यह वृष्टि-जल सालभर इस प्रयोग के लिये मिलता रहता है। ख्याल इस बात का रखना चाहिये कि प्रथम वृष्टि होकर शुद्ध वायु में जो वृष्टि होगी, उसी का जल लेना चाहिये। नहीं तो वायु के दोष जल में आवेंगे और वैसे जल का परिणाम ठीक नहीं निकलेगा। यह जल पीनेसे भी अंदर की शुद्धता होती है। उपवास या लंघन में यह वृष्टि-जल पीनेसे बहुत ही लाभ होते हैं। वृष्टि का जल घड़ों में भर कर रख देना और सालभर पीनेके लिये बर्तना, इससे लाभ होगा, परन्तु अच्छी युक्ति से जल लेना चाहिये।

अठाईसवें सूक्त में तक्मा नामक ज्वर का उल्लेख है। जिस ज्वर में बड़ी रूक्षता होती है, वह तक्मा ज्वर है। इस ज्वर से कामिला (हरिमा) होती है, पण्डुरोग का यह एक प्रकार है। इस रोग के निवारण के लिये कई औषधियाँ हो सकती हैं। रक्त की क्षीणता करनेवाला यह ज्वर है। यह ज्वर (अ-व्रत) नियमरहित व्यवहार करनेवाले को अधिक कष्ट देता है। पाठक इस सूचना का विचार अवश्य करें।

उनत्तीसवें सूक्त में 'वृत्र' नाम आता है। पसीना न छोड़नेवाला यह ज्वर है। जिसमें ज्वर आता है, पर पसीना

नहीं आता, इस तरह के ज्वर को दूर करने के लिये अग्नि का ही प्रयोग कहा है। (वृत्रः आपः तस्त्वम्) वृत्र जल-प्रवाह को रोकता है, वैसे यह ज्वर पसीने को रोकता है, इस कारण रोगी ज्वरमुक्त नहीं होता। इस यक्ष्म को दूर करने के लिये (वैश्वानरेण अग्निना वारये) वैश्वानर अग्नि का प्रयोग कहा है। इस प्रयोग का पता हमें अभी तक लगा नहीं, परन्तु भांप से शरीर को सेक देकर पसीना निकालने का यह प्रयोग होगा। द्वितीय मन्त्र में (वाचा यक्ष्मं वारयामहे) मन्त्र-प्रयोग से रोग दूर करने का भी विधान है।

आगे के तीसवें सूक्तमें रक्तयुक्त कफमिश्रित खांसी अर्थात् कफक्षय-नामक रोगों का उल्लेख है। इसमें (पिशितं) रक्त-दोष, (हृदयामय) हृदय का रोग इसी तरह अन्यान्य रोगों का उल्लेख है। (वेदाहं तस्य भेषजं) उन रोगों की दवा मैं जानता हूं, ऐसा भी यहां कहा है। मन्त्रों का विचार करके विशेष खोजपूर्वक इस सूक्त के प्रत्येक पद का विचार करना उचित है। तब रोगनिवृत्ति के उपाय का पता लगना संभव है।

इक्तीसवें सूक्त में हवन-चिकित्सा दीखती है। बत्तीमवें सूक्त में हरिण के सिर में उगनेवाले सींगसे रोगविशेष की चिकित्सा लिखी है। आजकल सिर की गर्मी हटानेके लिये सिर पर हरिण के सींग को पत्थर पर बिसकर उससे उत्पन्न विलेपन का लेप करते हैं। इससे सिर की गर्मी हटती है, मस्तक शान्त होता है। चतुर्थ मन्त्र में 'तारके' नामकी दो औषधियाँ कहीं हैं।

'तारके' नामक दो औषधियाँ इकट्ठी सेवन की जाती हैं। इस के नंतर जल को सब रोग निवारण करनेवाला बताया है। क्षेत्रिय रोग अर्थात् वंशपरंपरासे प्राप्त रोग और इसी शरीर में उत्पन्न ऐसे दोनों प्रकार के रोगों को हटाने के लिये जल उपयोगी है। इस तरह जल-चिकित्सा का वर्णन यहां है। अगले (३३ वें) सूक्त में भी जल का वर्णन बड़े प्रभावी शब्दों से किया है।

तैंतीसवें सूक्त में अष्टायोग और षड्योग से उत्पन्न ज्वर का उपयोग लिखा है। अष्टायोग और षड्योग का आज समझा जानेवाला अर्थ आठ बैल जोतने योग्य और छः बैल जोतने योग्य हल से उत्पन्न ज्वर। परन्तु यदि वैद्यकीय

परिभाषा ली जाय, तो आठ अथवा छः वनस्पतियों के योग से सिद्ध किया औषध । इस विषय में निश्चय वैद्यों को विचारपूर्वक करना चाहिये ।

चात्तीसवें सूक्त में सुगंधवाली गुल्गुल औषधिका वर्णन है । अरुंधति, गुल्गुल आदि औषधियों के प्रयोगसे चिकित्सा होती है । अरिष्टताति अर्थात् नीरोगता की वृद्धि करने के ये उपाय इस सूक्तमें हैं ।

पैंतीसवें सूक्त में हवन-चिकित्सा से यक्ष्म, राजयक्ष्म, पुराना रोग आदि सब दूर होते हैं, ऐसा कहा है । मृत्युके पाश से मुक्त करके रोगी को शतायुषी करता हूं, ऐसा निश्चयपूर्वक यहां कहा है । हवन-चिकित्साका विचार करने के समय यह सूक्त अधिक विचार करने योग्य है । पुनः नवीन शरीर देने का अर्थात् मृत्यु से पुनरुत्थान होने का यहां का वर्णन देखने योग्य है ।

छत्तीसवें सूक्त में शरीर के प्रत्येक अंगसे रोग को दूर करने का उल्लेख है । छब्बीसवें सूक्तके साथ इस छत्तीसवें सूक्त का विचार करना योग्य है । ये दोनों सूक्त कुछ पाठभेद के साथ एक जैसे ही हैं । एक ऋग्वेद का है, दूसरा अथर्व का है । अथर्ववेद के सूक्त में एक मन्त्र अधिक है और पदोंके क्रम में पर्याप्त भिन्नता है । अतः पाठक इन दो सूक्तों का विचार इकट्ठा करें । आगे उनचालीसवां सूक्त भी यहीं से पुनरुक्त हुआ है । केवल ऋषि की और देवताकी भिन्नता है । इस सूक्त की चन्द्रमा देवता सर्वानुक्रमणीकार देते हैं । मन्त्रों से वह देवता हमें प्रतीत नहीं होती । तथापि भिन्न देवता और भिन्न ऋषि होने से ही केवल यह सूक्त यहां पुनः लिया है । हमारे विचार से इस का देवता केवल यक्ष्मनाशन ही है । चन्द्रमा का कोई सम्बन्ध हमें यहां प्रतीत नहीं होता । परन्तु अथर्ववेद की बृहत्सर्वानुक्रमणी में जहां तहां 'चन्द्रमा' देवता लिखी मिलती है । कदाचित् कोई अपूर्वता उम में हो, ऐसी कल्पना करके यहां देवताभेद के कारण यह सूक्त पुनः लिया है । वास्तव में इसके यहां पुनः लेनेकी कोई आवश्यकता नहीं है । विद्वान् पाठक इस का विचार करें ।

पैंतीस और अठ्तीस ये दो सूक्त नाना प्रकार के शरीरस्थ रोग दूर करने के दिये हैं । मृत्यु से पुनर्जीवन प्राप्त होनेतक वर्णन यहां पाठक देख सकते हैं । अठ्तीसवें सूक्त

में सिरकी पीडा का विशेष वर्णन देखने योग्य है ।

इस तरह यह यक्ष्मनाशन विभाग यहां समाप्त होता है । शरीरसे यक्ष्म दूर होने से दीर्घ जीवन मिलता है, यह इस प्रकरण का पूर्व प्रकरण से सम्बन्ध है । अब रोग दूर करने के लिये औषधियों का उपयोग करने के विषय में तीसरा विभाग है, उसे अब देखिये—

औषधि वनस्पतियाँ

चालीसवें सूक्तसे करीब दो सौ मन्त्र औषधिवनस्पतियों के हैं । चालीसवां और इक्क्यालीसवां दोनों सूक्त सामान्यतः सर्वसाधारण औषधियों का वर्णन करने के लिये हैं । पहिला सूक्त ऋग्वेद का है और दूसरा अथर्ववेद का है । जिनके पास औषधियाँ सिद्ध रहती हैं उसको भिषक् कहते हैं (मं. ६), वह वैद्य रोजबीजरूप राक्षसों का नाश करता है और आमसे उत्पन्न सब रोगोंको दूर करता है । इस मंत्र में 'रक्षः' पद रोगक्रिमियों का वाचक है । रक्षः, राक्षस ये पद रोगजन्तुओं के लिये वेद में आते हैं । मन्त्र २२ में औषधियों की प्रतिज्ञा लिखी है, वह यह है कि जिस रोगी को औषधियाँ दी जाती हैं, वह रोगमुक्त हो जाता है, निःसन्देह आरोग्य प्राप्त करता है ।

इक्क्यालीसवें सूक्त में अंशुमती, जीवला, काण्डिनी आदिकोंका उल्लेख है । गौओं के तथा मनुष्यों के रोग औषधियों से दूर होते हैं, ऐसा भी १५ वें मन्त्र में कहा है । पशुचिकित्सा का इस तरह यहां मूल है । यमके पाश से रोगी को मुक्त करने की प्रतिज्ञा औषधियाँ करती हैं, यह विषय इस सूक्त के अन्त में पाठक देख सकते हैं ।

छियालीसवें सूक्त में अन्न का विषय है । अन्नसे बल और बलवीर्य से वीर संतान उत्पन्न होनेका विषय इस सूक्त में देखनेयोग्य है । आगे सूक्त ५५ तक वनस्पतियों का ही सर्व सामान्य वर्णन है । किसी विशेष वनस्पति का वर्णन नहीं है, तथापि सर्वसाधारणतः वनस्पतियों के प्रभाव का वर्णन यहां है ।

छप्पन्नवें सूक्तसे उनसाठ सूक्त तकके चार सूक्तोंमें अपामार्ग वनस्पति का वर्णन है । इस को औषधियों में मुख्य कहा है । हजारहां दवाइयां इस से बनती हैं । अनेक रोगोंपर उन का उपयोग होता है । क्षुधा की न्यूनता, तृष्णाके कष्ट,

पुत्र न होना इन सब दोषोंपर इस औषधि का प्रयोग किया जाता है। कृत्या नामक मारक पयोग के हटाने के लिये, गौके रोग दूर करने के लिये, इस औषधिका उपयोग होता है।

आगे के सूक्तों में अरुन्धती, पिपली, पृश्नीपर्णी, रोहिणी, लक्षा, कुष्ठ, कुष्ठनाशनी, यक्ष्मनाशिनी, केशवर्धनी, नितम्बी, अक्षिरोगनाशनी, शमी, सोम, मधु इन वनस्पतियों का क्रमशः वर्णन है। यहां यह औषधि-प्रकरण समाप्त होता है। दश वृक्ष, तारके आदि अनेक औषधियोंके प्रयोग छोड़ दिये जायें, तो शेष सब प्रयोग एक एक औषधिके ही हैं। इसके पश्चात् रोग-चिकित्सा-विभाग शुरू होता है—

रोगोंकी चिकित्सा

नाना प्रकार के रोगों का नाम लेकर उनकी चिकित्सा कई सूक्तों में कही है। ये सूक्त इस विभाग में संग्रहित हुए हैं, करीब करीब २१० मन्त्र इस विभागमें संग्रहित हुए हैं।

सत्तरवां सूक्त इस प्रकरण का प्रथम सूक्त है। कफ, बलगम, कास श्वास का यहां प्रथम स्थान है। उनासीवें सूक्त में हृद्दोग, हृदय का रोग और कामिलाका विचार हुआ है। आनुवंशिक क्षेत्रिय रोग को दूर करने का विचार अस्मीवें सूक्त में हुआ है। आगे एकादशीवें सूक्तसे क्रमपूर्वक क्षेत्रिय रोग, क्लीबन्ध, गण्डमाला, श्वेतकुष्ठ, ज्वर, रुधिरस्त्राव, स्त्राव, मूत्र-प्रतिबन्ध आदि रोगों की चिकित्सा ९६ सूक्त तक है। बीच में ८४ वे सूक्त में रोहिणी, रामायणी आदि औषधियों का भी वर्णन है।

इसके नंतर १०२ सूक्त तक 'अंजन' का विषय है। नेत्र का सुधार, दृष्टिके दोष को दूर करना आदि अंजन का विषय सुप्रसिद्ध है। साथ साथ अंजन के अन्यान्य गुण भी इन सूक्तों में देखने योग्य हैं।

सूक्त १०३ में निद्रानाश को दूर करके उत्तम निद्रा-प्राप्ति होने के लिये मन्त्रयोग हैं। १०४ सूक्त में शरीर से बाण को निकालने का विषय है, आगे ७ सूक्तोंमें दुष्ट स्वप्न न होनेके लिये मन्त्रयोग लिखा है। ११३ वें सूक्त में क्रोध का शमन करने का विषय है। क्रोध का शमन भी आरोग्य-दायी है।

११४ वें सूक्त में बल के रोग का शमन है। आगे के सूक्त में मधुला वनस्पति का वर्णन है। ११९ वें सूक्त में

सौभाग्यवर्धन का विषय है। १२० वें सूक्त में ईर्ष्याविनाशन और १२२ वें सूक्त में उन्मत्तता-निवारण है। इस तरह यह विभाग इस सूक्त के साथ समाप्त होता है।

रोगक्रिमी का नाश

इस विभाग में रोग उत्पन्न करनेवाले क्रिमियों का नाश करने के विषय का विवेचन है। इस विवेचनके लिये श्रीर ८० मन्त्र हैं। रक्षः, राक्षस, यातुधान, पिशाच, गन्धर्व, अप्सरस, आदि अनेक नाम रोगक्रिमियोंके यहां दिये हैं। प्रत्येक नाम का अर्थ रोगक्रिमि का विशेष लक्षण बताया है। अतः यह विषय बड़ा महत्वपूर्ण है।

ये रोग के कृमी (अ-दृष्ट) न दीखनेवाले होते हैं और कई दीखनेवाले (दृष्ट) भी होते हैं, इन का नाश दूर करना चाहिये। ये रोग आँतों में, भ्रिमें, फेफड़ों में, पीठ की रीढ़में, हड्डीमें होते हैं। ये कीड़े पर्याप्त, रोगों, औषधियों, पशुओं, तथा हमारे शरीरों में भी होते हैं। इन सब को दूर करना चाहिये और आरोग्य ही प्राप्त करनी चाहिये (सूक्त १२३)।

ये कृमी आंखों, नाकों, दांतों में रहकर कष्ट देते हैं, अतः इनका नाश करना आवश्यक है। ये कृमी नाना प्रकार के रंगरूप और आकारोंके होते हैं। सूर्य के प्रकाश से इन का नाश होता है (सूक्त १२४)।

ये कृमि सूर्य-किरण से नष्ट होते हैं। अन्य प्रकारों में भी वृद्धि होती है, इसलिये सूर्य उदय से कृमियों का नाश होता है (सू० १२५)।

अजशृंगी औषधि इन राक्षसों अर्थात् रोगकृमियों का नाश करती है। राक्षस, पिशाच, गन्धर्व, अप्सरस इन सब कृमियों का नाश इस वनस्पति से होता है। अश्वत्थ, मृगश्रोत्र (वट) ये वृक्ष भी इन रोगकृमियों का नाश करते हैं। जिन से क्षीणता होती है, वे रक्षस हैं, जो मूल खाते हैं उन को पिशाच कहा है, जो जल के आश्रय से रहते हैं उनको अप्सरस कहते हैं, तथा जो मिट्टी में बहते हैं, वे गन्धर्व हैं। ये सब मनुष्य के आरोग्य को दूर करते हैं, इसलिये इन का नाश करना चाहिये (सू० १२६)।

अग्नि भी इन कृमियों का नाश करता है, अग्निमें प्रक्षिप्त द्रव्यों का हवन करने से और अधिक लाभ होता है। घृत के हवन से सब रोगबीज नष्ट हो जाते हैं। अग्नि में नाना

ओषधियाँ, घृत आदि के हवन से, सूर्य प्रकाश से, केवल अग्नि से भी ये रोग-कृमि नष्ट होते हैं ।

विष को दूर करना

आगे करीब करीब ८० मन्त्र विषनाशन के हैं । १३६ वां सूक्त सर्पविष दूर करने के लिये है । मन्त्र के जाप से विष दूर होता है, ऐसा इस का वर्णन है, परन्तु इस के लिये जाप करके सिद्धि प्राप्त करना चाहिये । इक्कीस मोरनियाँ सर्पका विष दूर करती हैं, ऐसा यहां (मं० १४ में) कहा है । इस विषय में महाराष्ट्र में अनुभव यह है कि नाग सर्प का जहां दंश होता है, उस स्थान पर जीवित मुर्गी को पकड़कर उस का गुद्द्वार लगाया जाता है । मुर्गी विष खींचती है और मर जाती है । इस तरह लगातार एक के पीछे दूसरी ऐसी लगाते जाना चाहिये । विष के प्रमाण के अनुसार मुर्गियां मरती हैं । जब मुर्गी की गुदां वहां लगानेपर मुर्गी न मरेगी, तो समझना चाहिये कि वहां विष रहा नहीं है और रोगी ठीक नीरोग हुआ है । इस मन्त्र में २१ मोरनियां विष दूर करती हैं, ऐसा कहा है । सम्भव है मुर्गियां न्यून वा अधिक लगती हों । यह प्रयोग करके देखना चाहिये । महाराष्ट्र में सर्वत्र यह कहते हैं कि मुर्गी के योग से विष हटता है । बिच्छू के विष के विषयमें इसी सूक्त में कुछ कहा है (सू० १३६) । सर्प के विषय में निम्नलिखित मन्त्र बड़ा देखने योग्य है—

यथा नकुलो विच्छिद्य संदधात्यहिं पुनः ।

(अथर्व. ६।१३९।५)

‘ नेवला सांपको काटता है और फिर से उसको जोड़ता है । ’ यह अथर्ववेदका मन्त्र है । क्या यह सत्य हो सकता है ? महाराष्ट्र के पिण्ड पिण्ड में यह विश्वास है, परन्तु इसपर हमारा विश्वास नहीं बैठता । निःसन्देह यह खोजका विषय है । नेवला सांप को पकड़ता और काटता है, परन्तु फिर जोड़ देता है, यह मानना कठिन है ।

जलचिकित्सा

इसके पश्चात् करीब अठारह सौ मन्त्र जलका वर्णन करने वाले हैं । इन में कुछ जल-चिकित्सा के भी हैं । जल में अनेक औषधिगुण हैं । जलप्रयोग से बहुत से रोग दूर हो जाते हैं । जलप्रयोगसे रोग-बीज शरीरसे बह जाते हैं ।

जल वृष्टि से मिलता है, कूबा खोदकर जल प्राप्त होता है, स्वयं निर्झर से जल मिलता है, नदीका भी जल प्रसिद्ध है, जल सुख देनेवाला और दोष दूर करनेवाला है ।

आवर्तन, निवर्तन, न्ययन, परायण, अभिषिचन, प्रसिचन, उपासिचन आदि जल के प्रयोग हैं, जिन से जल-चिकित्सा होती है ।

हिमालयपर्वत से जो जल आता है, वह बर्फ का जल होनेसे वह बड़ा ही शुद्ध रहता है । गंगानदी का जल इसी कारण अतिपवित्र है । इसी तरह हिमालय से चलनेवाली सब नदियों का जल उत्तम है ।

सूर्य के किरणों से जल की भांप बनकर वह ऊपर जाती है । उसके मेघ बनते हैं । मेघों से वृष्टि होती है । वृष्टिका जल दिव्य जल कहा जाता है । सचमुच यह दिव्य आरोग्य देनेवाला जल है । इस कारण पर्जन्य को पिता कहते हैं, क्योंकि वही सब प्राणी और वृक्षवनस्पतियों का पालन करता है ।

सब नदियां वृष्टि से ही भरती और चलती हैं । वृष्टि न हुई तो नदी चलेगी नहीं । केवल हिमालय से चलनेवाली नदियां गर्मी से बर्फ पिघल कर चलती हैं । इसलिये इन नदियों को महापूर गर्मी के दिनों में आता है ।

अन्न

इसके आगे करीब सवा दो सौ मन्त्र अन्न के वर्णन के लिये हैं । अन्न सब विश्वरूप में हमारे सम्मुख है । सभी अन्न है और सभी अन्न खानेवाले हैं । ओदन सूक्त (२०७—२१४ तक) पाठक देख सकते हैं । अन्न का महत्त्व जितना इन सूक्तों में बताया है, उतना सबका सब मननके योग्य है ।

वाजीकरण तथा गर्भाधान ।

आगे ये विषय हैं— गर्भधारणा होने के पश्चात् ‘ गर्भदोष-निवारण ’ सूक्त २२३ में है । ‘ गर्भस्त्राव ’ का उपाय सू० २२३ में पाठक देख सकते हैं । ‘ सुख-प्रसूति ’ का विषय सू० २२६ में है । आगे के ४ सूक्तों में ‘ मेधाजनन ’ का महत्त्वपूर्ण विषय है, जो बालक के हित होने के लिये अत्यंत आवश्यक है ।

मणिधारण

आगे दस सूक्तों में ‘ मणिधारण ’ का विषय है । प्रतिसर,

वरण, काल, दर्भ, औदुम्बर, जंगिड, शतवार, अस्तृत ये मणि यहां वर्णन किये हैं। जैसे ताबीज बांधते हैं, वैसे ही ये मणि हैं। इनके वर्णन में अन्यान्य विषय भी बड़े मनोरंजक हैं। किस को किसने यह मणि बांधा था, यह भी यहां इन सूक्तों में बताया है। किसी किसी मणि में सेंकड़ों सामर्थ्य हैं, ऐसा भी वर्णन है। ये मणि कैसे बनाये और धारण किये जाते हैं, यह बड़ी खोज का विषय है। इस कार्य के लिये अथर्ववेदके वेदाङ्ग ग्रन्थों का तथा तदंगभूत विविध ग्रन्थों की खोज करनी चाहिये। भाष्य में जो इस समय लिखा मिलता है, उस से हमारे हाथ में कुछ भी विशेष बात नहीं पड़ती।

इसके पश्चात् अरिष्टनिवारण, पापनाशन, कृत्याद्रीकरण, यज्ञादि विषय के मन्त्र हैं। इससे इस प्रकरण की समाप्ति होती है। इस आयुर्वेद-प्रकरण के कुल मन्त्र २३४५ हैं। करीब करीब सवा दो हजार हैं। आयुर्वेद का यह वैदिक

मूल है। इस मूलका विस्तार आयुर्वेद है, जो चरक सुश्रुत के रूप में आज हमें उपलब्ध है।

इस सवा दो हजार के मन्त्रसंग्रह में आयुर्वेद के अनेक विषय हैं। इस का विचार करते समय पद पद का सूक्ष्म और खोजपूर्ण विचार करना चाहिये और आयुर्वेदके ग्रन्थों के साथ इन वेदमन्त्रों का मिलान करना चाहिये। तब जाकर इस विषय का समझने योग्य विवरण हो सकता है।

इस भूमिका में इस आयुर्वेद-प्रकरण के साथ पाठकों का केवल परिचय ही कराना था। वह इतने लेख से किया है। आशा है कि पाठक आयुर्वेद के इस मूल का कहां कैसा विस्तार हो गया है, इसका विचार करेंगे और लाभ उठावेंगे।

औध (जि. सातारा)

१ पौष

संवत् २०००

निवेदनकर्ता

श्री. दा. सातवलेकर

अध्यक्ष, स्वाध्याय-मण्डल



आयुर्वेद-प्रकरण की विषयसूची

| | सूक्त | मन्त्र | पृष्ठ | | सूक्त | मन्त्र | पृष्ठ |
|------------------|--------|---------|-------|-------------------|--------|---------|-------|
| दीर्घायुष्यं | १-२४ | १-१५८ | १-१३ | यक्ष्मनाशनं | ८० | ४९३-४९७ | ॥ |
| सुमंगलौ दन्तौ | २५ | १५९-१६१ | १३ | क्षेत्रिय | ॥ | ॥ ॥ | ॥ |
| यक्ष्मनाशनं | २६-३९ | १६२-३०० | १३-२३ | कृत्स्नत्व | ८१ | ४९८-५०२ | ॥ |
| ओषधि- | | | | गण्डमालाचिकित्सा | ८२-८३ | ५०३-१२ | ७३-८३ |
| वनस्पतयः | ४०-७६ | ३०१-४०२ | २३-३६ | रोहिणी | ८४ | ५१३-१६ | ३८ |
| ओषधयः | ४०-४५ | ३०१-३५८ | २३-२७ | रामायणी | ॥ | ॥ ॥ | ॥ |
| अन्नं | ४६ | ३५८-३६१ | २७ | आसिक्निः | ८५ | ५१७-२० | ३८-३९ |
| वातसिन्धो- | | | | श्वेतकुष्ठनाशनं | ८५-८६ | ५१७-२४ | ॥ ॥ |
| पथयः | ४७ | ३६२ | ॥ | आसुरी | ८६ | ५२१-२४ | ३९ |
| सूर्यभरीचयः | ४८ | ३६३ | ॥ | ज्वरनाशनं | ८७-८८ | ५२५-३१ | ॥ |
| वनस्पतिः | ४९-५५ | ३६४-३८९ | २७-२९ | यक्ष्मनाशनोऽग्निः | ८७ | ५२५-२८ | ॥ |
| अपामार्गः | ५६-५९ | ३८०-४०६ | २९-३० | तक्मनाशनं | ८९ | ५३१-४४ | ३९-४० |
| अरुंधती | ६० | ४०७-४०९ | ३१ | रोगघ्नं | ९० | ५४५-४७ | ४० |
| कुष्ठः | ६१ | ४१०-४१२ | ॥ | रोगनिवारणं | ९१ | ५४८-५४ | ४१ |
| पिप्पली | ६२ | ४१३-४१५ | ॥ | भ्रमनीबन्धनं | ९२ | ५५५-५८ | ॥ |
| पृश्निपर्णी | ६३ | ४१६-४२० | ॥ | रोगनाशनं | ९३ | ५५९-६१ | ॥ |
| रोहिणी | ६४ | ४२१-४२७ | ३१-३२ | सूर्यगोभेषजं | ९४ | ५६२-६४ | ४२ |
| लाक्षा | ६५ | ४२८-४३६ | ३२ | आस्त्रावभेषजं | ९५ | ५६५-७० | ॥ |
| कुष्ठः | ६६-६७ | ४३७-४५६ | ३३-३४ | मूत्रमोचनं | ९६ | ५७१-७९ | ४२-४३ |
| केशवर्धिनी | ६८ | ४५७-४५९ | ३४ | त्रैकाकुटमाञ्जनं | ९७ | ५८०-८२ | ४३ |
| नितगनी | ६९ | ४६०-४६२ | ॥ | अञ्जनं | ९८-१०२ | ५९०-६१२ | ४४-४५ |
| केशदंष्ट्रं | ॥ | ॥ ॥ | ॥ | स्वापनं | १०३ | ६१३-१९ | ४५ |
| केशवर्धनं | ७० | ४६३-४६५ | ३५ | इषुनिष्कासनं | १०४ | ६२०-२२ | ४६ |
| अक्षिरोगभेषज्यं | ७१ | ४६६-४६९ | ॥ | दुष्पणनाशनं | १०५-११ | ६२३-३७ | ४६-४७ |
| शमी | ७२ | ४७०-४७२ | ॥ | सुखं | ११२ | ६३८ | ४७ |
| वनस्पतिसूर्यगावः | ७३ | ४७३ | ॥ | मन्युशमनं | ११३ | ६३९-४१ | ॥ |
| सोमः | ७४-७५ | ४७४-७७ | ३५-३६ | वृषरोगशमनं | ११४ | ६४२-५२ | ४८ |
| मधुवनस्पतिः | ७६ | ४७८-८२ | ३६ | मधुला | ११५ | ६५३-६३ | ॥ |
| रोगचिकित्सा | ७७-१२२ | ४८३-६९० | ३६-५० | शरः | ११६ | ६६४-७७ | ४८-४९ |
| बलासनाशनं | ७७ | ४८३-४८५ | ॥ | शापमोचनं | ११७ | ६६८-७२ | ४९ |
| कासा | ७८ | ४८६-४८८ | ॥ | अलक्ष्मीनाशनं | ११८ | ६७३-७६ | ॥ |
| हृद्रोगकामिला- | | | | सौभाग्यवर्धनं | ११९ | ६७७-८१ | ४९-५० |
| नाशनं | ७९ | ४८९-४९२ | ३७ | ईर्ष्याविनाशनं | १२० | ६८२-८४ | ५० |

| सूक्त | मन्त्र | पृष्ठ | सूक्त | मन्त्र | पृष्ठ | | |
|------------------|---------|-----------|--------|----------------|---------|-----------|---------|
| ईर्ष्याऽपनयनं | १२१ | ६८५-८६ | ५० | स्वर्गादिनः | २१४ | १२७२-१३३१ | ९७-१०१ |
| उन्मत्ततामोचनं | १२२ | ६८७-९० | ,, | वाजीकरणं | २१५-१७ | १३३२-४५ | १०१-२ |
| क्रिमिनाशनं | १२३-३५ | ६९१-७७३ | ५०-५६ | गर्भाधानं | २१८-३९ | १३४६-१४२९ | १०२-८ |
| क्रिमिजम्भनं | १२३ | ६९१-९५ | ५०-५१ | योनिगर्भः | २१८ | १३४६-५८ | १०२-१०३ |
| क्रिमिघ्नं | १२४-१२५ | ६९५-७१४ | ५१-५२ | गर्भाधानं | २१९ | १३५९-६० | १०३ |
| अजशृङ्गी | १२६ | ७१५-२६ | ५२-५३ | गर्भहृणं | २२० | १३६१-१३६५ | ,, |
| यातुधानानाशनं | १२७-२८ | ७२७-३३ | ५३ | आत्मा | २२१ | १३६६ | ,, |
| रक्षोघ्नं | १२५-३१ | ७३४-५३ | ५३-५५ | गर्भदोषनिवारणं | २२२ | १३६७-१३९२ | १०४-१०५ |
| पिशाचक्षयणं | १३२ | ७५४-६२ | ५५ | ,, संस्नावः | २२३ | १३९३-१३९८ | १०५-१०६ |
| असुर ,, | १३३-३४ | ७६३-६६ | ५६ | ,, स्वाविणी | २२४ | १३९९-१४०२ | १०६ |
| यातुधानानाशनं | १३५ | ७६७-७३ | ,, | ,, धारणं | २२५ | १४०३ | ,, |
| विषनाशनं | १३६-४५ | ७७४-८५९ | ५७-६२ | सुखप्रसूतिः | २२६ | १४०५-१४१० | १०६-१०७ |
| विषघ्नं | १३६-३७ | ७७४-९७ | ५७-५८ | मेधा | २२७ | १४११-१४१४ | १०७ |
| ,, नाशनं | १३८ | ७९८-८०४ | ५८-५९ | ,, जननं | २२८ | १४१५-१४१८ | ,, |
| ,, नृषणं | १३९ | ८०५-७ | ५९ | ,, वर्धनं | २२९ | १४१९-२३ | १०७-८ |
| ,, दूरीकरणं | १४० | ८०८-३३ | ५९-६० | मणिधारणं | २३०-४१ | १४२४-१५७८ | १०८-११९ |
| सर्पविषनाशनं | १४१-४३ | ८३४-४८ | ६०-६१ | शंखः | २३० | १४२४-१४३० | १०८ |
| सर्पेभ्यो रक्षणं | १४४ | ८४९-५१ | ६२ | प्रतिसरः | २३१ | १४३१-१४५२ | १०८-११० |
| विषभैषज्यं | १४५ | ८५२-५९ | ,, | वरणः | २३२ | १४५३-१४७७ | ११०-११२ |
| जलचिकित्सा | १४६-२०२ | ८६०-११०७ | ६२-८३ | फालः | २३३ | १४७८-१५१२ | ११२-११४ |
| आपः | १४६-६५ | ८६०-९५५ | ६२-६९ | दर्भः | २३४-२३६ | १५१३-१५३६ | ११५-११६ |
| दिव्या आपः | १६६-१६७ | ९५६-६२ | ७० | औदुम्बरः | २३७ | १५३७-१५५० | ११६-११७ |
| अपां भेषजं | १६८-७२ | ९६३-७३ | ७०-७१ | जंगिडः | २३८-२३९ | १५५१-१५६५ | ११७-११८ |
| पर्जन्यः | १७३-७९ | ९७४-१०२१ | ७१-७५ | शतवारः | २४० | १५६६-१५७१ | ११८-११९ |
| नद्यः | १८०-८२ | १०२२-४४ | ७५-७७ | अस्तृतः | २४१ | १५७२-१५७८ | ११९ |
| सरस्वान् | १८३-८५ | १०४५-५० | ७७-७८ | अरिष्टनाशनं | २४२-२४५ | १५७९-१५९० | ११९-२० |
| सरस्वती | १८६-९७ | १०५१-९२ | ७८-८१ | ,, क्षयणं | ,, | ,, | ,, |
| आपः | १९८-२०२ | १०९३-११०७ | ८१-८३ | कृत्यादुपणं | २४६-२४९ | १५९१-१६५३ | १२१-२५ |
| अन्नादिकं | २०३-१४ | ११०८-१३३१ | ८३-१०१ | ,, परिहरणं | २४६-२४७ | १५९१-१६१५ | १२१-२२ |
| अन्नं | २०३-६ | ११०८-२६ | ८३-८४ | ,, नृषणं | २४८ | १६१६-१६४७ | १२२-२४ |
| ओदनः | २०७ | ११२७-८२ | ८४-८९ | दस्युनाशनं | २४९ | १६४८-१६५३ | १२४-२५ |
| पञ्चोदनः | २०८ | ११८३-१२२० | ८९-९२ | पापादिनाशनं | २५०-२९३ | १६५४-१९१७ | १२५-४३ |
| ब्रह्मोदनं | २०९-१९ | १२२१-६५ | ९३-९६ | पापमोचनं | २५०-२५५ | १६५४-१६७९ | १२५-२७ |
| मधुमदन्नं | २११ | १२६६-१२६८ | ९६ | बन्ध ,, | २५६ | १६८०-१६८२ | १२७ |
| वासः | २१२-१३ | १२६९-१२७१ | ,, | मन्याविनाशनं | २५७ | १६८२-१६८४ | १२७-२८ |

| | सूक्त | मन्त्र | पृष्ठ | | सूक्त | मन्त्र | पृष्ठ |
|----------------|---------|-----------|--------|-------------------|--------|-----------|--------|
| पापमोचनं | २५८-२६८ | १६८५-१७५५ | १२८-३३ | पितरः | ३०४ | १९८७-२००० | १४८-४९ |
| ,, नाशनं | २६९-२७५ | १७५७-१७७६ | १३३-३५ | पितृमेधः | ३०५-७ | २००१-२१५० | १४९-६० |
| अराति ,, | २७६ | १७७६-१७८६ | १३५ | यमः पितरः | ३०८ | २१५१-२२३९ | १६१-६६ |
| एनो ,, | २७७ | १७८७-१७८९ | १३६ | यज्ञः | ३०९-१४ | २२४०-५६ | १६६-६७ |
| निर्ऋतिमोचनं | २७८ | १७९०-१७९३ | ,, | वेदी | ३१५-२० | २२५७-७३ | १६८-६९ |
| उन्मोचनं | २७९ | १७९४-१७९६ | ,, | हविः | ३२१ | २२७४ | १७० |
| दुःखनाशनं | २८० | X X | ,, | हविर्धाने | ३२२ | २२७५-७९ | ,, |
| दुःखनाशनं | २८१ | १७९७-१८०२ | १३६-३७ | उल्लुखलमुसले | ३२३ | २२८०-८३ | ,, |
| ,, मोचनं | २८२-२८५ | १८०३-१८३२ | १३७-३८ | प्रावाणः | ३२४-२७ | २२८४-२३१० | १७०-७२ |
| दुःस्वप्ननाशनं | २८६-२९३ | १८३५-१९१७ | १३९-४३ | धनान्नदानं | ३२८ | २३११-२३१९ | १७३ |
| अवनं | २९४ | X X | १४३ | गावः | ३२९ | २३२०-२३२५ | १७३-७४ |
| यज्ञादिकं | २९५-३३७ | १९१८-२३२४ | १४३-७६ | अग्निः | ३३० | २३२६ | १७४ |
| घर्मः | २९५ | १९१९-१९२० | १४३ | दीर्घायुष्यं | ३३१-३३ | २३२७-२३३५ | १७४-७५ |
| अग्निः | २९६ | १९२१-२२ | ,, | दम्पत्योर्यक्ष्म- | | | |
| दर्भः | २९७-९८ | १९२३-३७ | १४३-४४ | नाशनं | ३३४ | २३३६ | १७५ |
| घृतहोमः | २९९ | १९३८-४५ | १४५ | अलक्ष्मीघ्नं | ३३५ | २३३७-२३३८ | ,, |
| पितृमेधः | ३०० | १९४६-५३ | १४५-४६ | सपत्नघ्नं | ३३६-३७ | २३३९-२३४५ | १७५-७६ |
| यमः | ३०१-३ | १९५४-८६ | १४६-४८ | | | | |



दैवत-संहिता ।

(ऋग्यजुःसामाथर्वणां संहितानां सर्वान् मन्त्रान् विषयानुसारेण संगृह्य निर्मितम् ।)

६ आयुर्वेद-प्रकरणम् ।

दीर्घायुष्यम् । (१-१५१)

॥१॥ (अथर्व० २।२८।१-५)

शम्भुः । १,३ जरिमा, आयुः; २ मित्रावरुणौ; ३-५ द्यावापृथिव्यादयो देवाः । त्रिष्टुप्, १ जगती, ५ अुरिक् ।

तुभ्यमेव जरिमन् वर्धतामयं मेममन्ये मृत्यवो हिंसिषुः शतं ये ।

मातेव पुत्रं प्रमना उपस्थे मित्र एनं मित्रियात् पात्वंहसः १

मित्र एनं वरुणो वा रिशादा जरामृत्युं कृणुतां संविदानौ ।

तदग्निर्होता वयुनानि विद्वान् विश्वा देवानां जनिमा विवक्ति २

त्वमींशिषे पशूनां पार्थिवानां ये जाता उत वा ये जनित्राः ।

मेमं प्राणो हासीन्मो अपानो मेमं मित्रा वधिषुर्मो अमित्राः ३

द्यौष्टा पिता पृथिवी माता जरामृत्युं कृणुतां संविदाने ।

यथा जीवा अदितेरुपस्थे प्राणापानाभ्यां गुपितः शतं हिमाः ४

इममग्र आयुषे वर्चसे नय प्रियं रेतो वरुण मित्रराजन् ।

मातेवास्मा अदिते शर्म यच्छ विश्वे देवा जरदष्टिर्यथासत् ५ ५

॥२॥ (अथर्व० ८।१।१-२१)

ब्रह्मा । आयुः । त्रिष्टुप्; १ पुरोबृहती त्रिष्टुप्; २-३, १७-२१ अनुष्टुप्; ४, ९, १५-१६

प्रस्तारपङ्क्तिः; ७ त्रिपदा विराङ्गायत्री; ८ विराट्पथ्याबृहती; १२ व्यवसाना पञ्चपदा

जगती; १३ त्रिपाद्भुरिङ्महाबृहती; १४ एकावसाना द्विपदा साम्नी भुरिबृहती ।

अन्तर्काय मृत्यवे नमः प्राणा अपाना इह ते रमन्ताम् ।

इहायमस्तु पुरुषः सहासुना सूर्यस्य भागे अमृतस्य लोके १

उदेनं भगो अग्रभीदुदेनं सोमो अंशुमान् ।

उदेनं मरुतो देवा उदिन्द्राग्नी स्वस्तये २

इह तेऽसुरिह प्राण इहायुरिह ते मनः ।

उत् त्वा निर्ऋत्याः पार्श्वेभ्यो दैव्या वाचा भरामसि ३ ८

| | |
|---|-------|
| उत् क्रामातः पुरुष माव पत्था मृत्योः पङ्क्तिशमवमुश्चमानः । | |
| मा च्छित्था अस्माल्लोकादग्नेः सूर्यस्य संहशः | ४ |
| तुभ्यं वातः पवतां मातरिश्वा तुभ्यं वर्षन्त्वमृतान्यार्पः । | |
| सूर्यस्ते तन्वेइ शं तपाति त्वां मृत्युर्दयतां मा प्र मेष्टाः | ५ १० |
| उद्यानं ते पुरुष नावयानं जीवातुं ते दक्षतातिं कृणोमि । | |
| आ हि रोहेमममृतं सुखं रथमथ जिर्विर्विदथमा वंदासि | ६ |
| मा ते मनस्तत्र गान्मा तिरो भून्मा जीवेभ्यः प्र मदो मानु गाः पितृन् । | |
| विश्वे देवा अभि रक्षन्तु त्वेह | ७ |
| मा गतानामा दीधीथा ये नयन्ति परावतम् । | |
| आ रोह तमसो ज्योतिरेह्या ते हस्तौ रभामहे | ८ |
| श्यामश्च त्वा मा शबलश्च प्रेषितौ यमस्य यौ पथिरक्षी श्वानौ । | |
| अर्वाङ्गेहि मा वि दीध्यो मात्र तिष्ठः पराङ्मनाः । | ९ |
| मैतं पन्थामनु गा भीम एष येन पूर्वं नेयथ तं ब्रवीमि । | |
| तम एतत् पुरुष मा प्र पत्था भयं परस्तादभयं ते अर्वाक् | १० १५ |
| रक्षन्तु त्वाग्रयो ये अप्सवन्ता रक्षतु त्वा मनुष्याइ यमिन्धते । | |
| वैश्वानरो रक्षतु जातवेदा दिव्यस्त्वा मा प्र धाग् विद्युता सह | ११ |
| मा त्वा क्रव्यादभि मैस्तारात् संकसुकाच्चर । | |
| रक्षतु त्वा द्यौ रक्षतु पृथिवी सूर्यश्च त्वा रक्षतां चन्द्रमाश्च । | |
| अन्तरिक्षं रक्षतु देवहेत्याः | १२ |
| बोधश्च त्वा प्रतीबोधश्च रक्षतामस्वप्नश्च त्वानवद्राणश्च रक्षताम् । | |
| गोपायश्च त्वा जागृविश्च रक्षताम् | १३ |
| ते त्वा रक्षन्तु ते त्वा गोपायन्तु तेभ्यो नमस्तेभ्यः स्वाहा | १४ |
| जीवेभ्यस्त्वा समुदे वायुरिन्द्रो धाता दधातु सविता त्रायमाणः । | |
| मा त्वा प्राणो बलं हासीदसुं तेऽनु ह्वयामसि | १५ २० |
| मा त्वा जुम्भः संहनुर्मा तमो विदुन्मा जिह्वा बर्हिः प्रमयुः कथा स्याः । | |
| उत् त्वादित्या वसवो भरन्तुर्दिन्द्राग्नी स्वस्तये | १६ |
| उत् त्वा द्यौरुत् पृथिव्युत् प्रजापतिरग्रभीत । उत् त्वा मृत्योरोषधयः सोमराज्ञीरपीपरन् | १७ |
| अयं देवा इहैवास्त्वयं मामुत्र गादितः । इमं सहस्रवीर्येण मृत्योरुत् पारयामसि | १८ २३ |

उत् त्वा मृत्योरपीपरं सं धमन्तु वयोधसः । मा त्वा व्यस्तकेऽयोः मा त्वाघरुदो रुदन् १९

आहर्षमविदं त्वा पुनरागाः पुनर्णवः । सर्वाङ्ग सर्वे ते चक्षुः सर्वमायुश्च तेऽविदम् २० २५

व्यवात् ते ज्योतिरभूदप त्वत् तमो अक्रीत् ।

अप त्वन्मृत्युं निर्क्रीतिमप यक्ष्मं नि दध्मसि २१

॥३॥ (अथर्व० ८।२।१-२८)

ब्रह्मा । आयुः । त्रिष्टुप् ; १-२, ७ भुरिक् ; ३, २६ आस्तारपङ्क्तिः, ४ प्रस्तारपङ्क्तिः, ६, १५ पथ्यापङ्क्तिः ; ८ पुरस्ताज्ज्योतिष्मती जगती ; ९ पञ्चपदा जगती ; ११ विष्टारपङ्क्तिः ; १२, २२, २८ पुरस्ताद्बृहती ; १४ व्यवसाना षट्पदा जगती ; १९ उपरिष्ठाद्बृहती ; २१ सतः पङ्क्तिः ; ५, १०, १६-१८, २०, २३-२५, २७ अनुष्टुप् (१७ त्रिपाद्) ।

आ रभस्वेमाममृतस्य श्रुष्टिमच्छिद्यमाना जरदष्टिरस्तु ते ।

असुं त आयुः पुनरा भ्रामि रजस्तमो मोष गा मा प्र मेष्टाः १

जीवतां ज्योतिरभ्येह्यर्वाडा त्वा हरामि शतशरदाय ।

अवमुञ्चन् मृत्युपाशानशस्ति द्राघीय आयुः प्रतरं ते दधामि २

वातात् ते प्राणमविदं सूर्याचक्षुरहं तव ।

यत् ते मनस्त्वयि तद् धारयामि सं वित्स्वाङ्गैर्वद जिह्वयाल्पन् ३

प्राणेन त्वा द्विपदां चतुष्पदामग्निमिव जातमग्निं सं धमामि ।

नमस्ते मृत्यो चक्षुषे ममः प्राणाय तेऽकरम् ४ ३०

अयं जीवतु मा मृत्युमं समीरयामसि ।

कृणोम्यसौ भेषजं मृत्यो मा पुरुषं वधीः ५

जीवलां नधारिषां जीवन्तीमोषधीमहम् ।

त्रायमाणां सहमानां सहस्वतीमिह हुवेऽस्मा अरिष्टतातये ६

अग्निं ब्रूहि मा रभथाः सृजेमं तवैव सन्तसर्वहाया इहास्तु ।

भवाशर्वो मृडतं शर्म यच्छतमपसिध्य दुरितं धत्तमायुः ७

असौ मृत्यो अग्निं ब्रूहिमं दयस्वोदितोऽयमेतु ।

अरिष्टः सर्वाङ्गः सुश्रुज्रसा शतहायन आत्मना भुजमश्रुताम् ८

देवानां हेतिः परि त्वा वृणक्तु पारयामि त्वा रजस उत् त्वा मृत्योरपीपरम् ।

आरादग्निं क्रव्यादं निरूहं जीवातवे ते परिधिं दधामि ९

यत् ते नियानं रजसं मृत्यो अनवधुष्यम् ।

पथ इमं तस्माद् रक्षन्तो ब्रह्मास्मै वर्म कृण्मसि १० ३६

| | | |
|--|--|----------|
| कृणोमि ते प्राणापानौ जरां मृत्युं दीर्घमायुः स्वस्ति । वैवस्वतेन ग्रहितान् यमदूतांश्चरतोऽपि सेधामि सर्वान् आरादरातिं निर्ऋतिं परो ग्राहिं क्रव्यादः पिशाचान् । रक्षो यत् सर्वं दुर्भूतं तत् तम इवापि हन्मसि अग्नेष्टे प्राणममृतादायुष्मतो वन्वे जातवेदसः । यथा न रिष्या अमृतः सजरसस्तत् ते कृणोमि तदु ते समृध्यताम् शिवे ते स्तां द्यावापृथिवी असंतापे अभिश्रियौ । शं ते सूर्य आ तपतु शं वातो वातु ते हृदे । शिवा अभि क्षरन्तु त्वापो दिव्याः पर्यस्वतीः शिवास्ते सन्त्वोषधय उत् त्वाहार्षमधरस्या उत्तरां पृथिवीमभि । तत्र त्वादित्यौ रक्षतां सूर्याचन्द्रमसावुभा यत् ते वासः परिधानं यां नीधिं कृणुषे त्वम् । शिवं ते तन्वेष्टु तत् कृणुमः संस्पर्शेऽद्रक्ष्णमस्तु ते यत् क्षुरेण मर्चयता सुतेजसा वप्ता वपासि केशदमश्रु । शुभं मुखं मा न आयुः प्र मोषीः शिवौ ते स्तां ब्रीहियवावबलासावदोमधौ । एतौ यक्ष्मं वि बाधेते एतौ मुञ्चतो अंहसः यदश्रासि यत् पिबसि धान्यं कृष्याः पर्यः । यदाद्यं यदनाद्यं सर्वं ते अन्नमविषं कृणोमि अहं च त्वा रात्रये चोभाभ्यां परि ददामि । अरायेभ्यो जिघत्सुभ्य इमं मे परि रक्षत शतं तेऽयुतं हायनान् द्वे युगे त्रीणि चत्वारि कृणुमः । इन्द्राग्नी विश्वे देवास्तेऽनु मन्यन्तामहणीयमानाः शरदे त्वा हेमन्ताय वसन्ताय ग्रीष्माय परि ददामि । वर्षाणि तुभ्यं स्योनानि येषु वर्धन्त ओषधीः मृत्युरीशे द्विपदां मृत्युरीशे चतुष्पदाम् । तस्मात् त्वां मृत्योर्गोपतेरुद्धरामि स मा बिभेः २३ सोऽरिष्ट न मरिष्यसि न मरिष्यसि मा बिभेः । न वै तत्र म्रियन्ते नो यन्त्यधमं तमः २४ सर्वो वै तत्र जीवति गौरश्चः पुरुषः पशुः । यत्रेदं ब्रह्म क्रियते परिधिर्जीवनाय कम् २५ | ११ १२ १३ १४ १५ १६ १७ १८ १९ २० २१ २२ | ४० ४५ |
|--|--|----------|

| | |
|--|----|
| परि त्वा पातु समानेभ्योऽभिचारात् सबन्धुभ्यः । | |
| अमग्निर्भवाभृतोऽतिजीवो मा ते हासिषुरसवः शरीरम् | २६ |
| ये मृत्यव एकशतं या नाष्ट्रा अतितायाः । | |
| मुञ्चन्तु तस्मात् त्वां देवा अग्नेर्वैश्वानरादधि | २७ |
| अग्नेः शरीरमसि पारयिष्णु रक्षोहासि सपत्नहा । | |
| अथो अमीवचातनः पूतुर्दुर्नाम भेषजम् | २८ |

॥४॥ (अथर्व० १।३०।१-४)

अथर्वा (आयुष्कामः) । विश्वे देवाः (१ वसवः, आदित्याः, १-४ देवाः) ।

त्रिष्टुप्, ३ शाकलगर्भा विराड्जगती ।

| | |
|--|------|
| विश्वे देवा वसवो रक्षतेममुतादित्या जागृत यूयमस्मिन् । | |
| मेमं सनाभिरुत वान्यनाभिर्मेमं प्रापत् पौरुषेयो वधो यः | १ ५५ |
| ये वो देवाः पितरो ये च पुत्राः सचेतसो मे शृणुतेदमुक्तम् । | |
| सर्वेभ्यो वः परि ददाम्येतं स्वस्त्येनिं जरसे वहाथ | २ |
| ये देवा दिवि छ ये पृथिव्यां ये अन्तरिक्ष ओषधीषु पशुष्वप्स्व१न्तः । | |
| ते कृणुत जरसमार्युरस्मै शतमन्यान् परि वृणक्तु मृत्यून् | ३ |
| येषां प्रयाजा उत वानुयाजा हुतभागा अहुतादश्च देवाः । | |
| येषां वः पश्च प्रदिशो विभक्तास्तान् वो अस्मै सत्रसदः कृणोमि | ४ |

॥५॥ (अथर्व० १।३५।१-४)

अथर्वा (आयुष्कामः) । हिरण्यम्, इन्द्राग्नी, विश्वे देवाः । जगती, ४ अनुष्टुप्गर्भा

चतुष्पदा त्रिष्टुप् ।

| | |
|---|------|
| यदावधन् दाक्षायणा हिरण्यं शतानीकाय सुमनस्यमानाः । | |
| तत् ते बध्नाभ्यायुषे वर्चसे बलाय दीर्घायुत्वाय शतशारदाय | १ |
| नैनं रक्षांसि न पिशाचाः सहन्ते देवानामोजः प्रथमजं ह्येतेतत् । | |
| यो विभर्ति दाक्षायणं हिरण्यं स जीवेषु कृणुते दीर्घमायुः | २ ६० |
| अपां तेजो ज्योतिरोजो बलं च वनस्पतीनामुत वीर्याणि । | |
| इन्द्र इवेन्द्रियाण्यधि धारयामो अस्मिन् तद् दक्षमाणो विभरद्विरण्यम् | ३ |
| समानां मासामृतभिर्द्वा वयं संवत्सरस्य पर्यसा पिपमि । | |
| इन्द्राग्नी विश्वे देवास्तेऽनु मन्यन्तामहणीयमानाः | ४ ६१ |

॥६॥ (अथर्व० ६।४१।१—३)

ब्रह्मा । चन्द्रमाः, १ सरस्वती, ३ दैव्या ऋषयः । अनुष्टुप्, १ भुरिक्, ३ त्रिष्टुप् ।

मन॑से चेत॑से धिय॑ आकू॑तय उ॒त चित्त॑ये । म॒त्यै श्रु॒ताय॑ चक्ष॑से वि॒धेम॑ ह॒विषा॑ व॒यम् १
 अ॒पाना॑य॒ व्याना॑य॒ प्राणा॑य॒ भूरि॑धायसे । सर॑स्वत्या उरु॒व्यचै॑ वि॒धेम॑ ह॒विषा॑ व॒यम् २
 मा नो॑ हासिषु॒र्ऋषयो॑ दै॒व्या ये त॑नूपा ये नस्त॒न्वस्त॑नूजाः ।

अम॑र्त्या म॒र्त्या अ॒भि नः॑ सच॒ध्वमा॑यु॒र्धत्त॑ प्र॒तरं जी॑वसे नः

३ ६५

॥७॥ (अथर्व० २।४।१—६)

अथर्वा । (चन्द्रमाः,) जङ्गिडः । अनुष्टुप्, १ विराद् प्रस्तारपङ्क्तिः ।

दी॒र्घायु॑त्वाय॑ बृ॒हते॑ र॒णायारि॑ष्यन्तो दक्ष॑माणाः सदै॒व ।

म॒णिं वि॑ष्क॒न्धदू॑षणं जङ्गि॒डं वि॑भृमो व॒यम् १

जङ्गि॒डो ज॒म्भाद् वि॑श॒राद् वि॑ष्क॒न्धाद॑भि॒शोच॑नात् ।

म॒णिः स॒हस्र॑वीर्यः परि॑ णः पातु॑ विश्व॑तः २

अ॒यं वि॑ष्क॒न्धं स॒हते॑ऽयं बा॑धते अ॒त्त्रिणः॑ ।

अ॒यं नो॑ विश्व॑भैषजो जङ्गि॒डः पा॒त्वंह॑सः ३

दे॒वैर्द॑त्तेन॑ म॒णिना॑ जङ्गि॒डेन॑ म॒योभु॑वा ।

वि॑ष्क॒न्धं स॒र्वा र॑क्षांसि व्या॒यामे॑ स॒हाम॑हे ४

श॒णश्च॑ मा जङ्गि॒डश्च॑ वि॑ष्क॒न्धाद॑भि रक्ष॑ताम् ।

अ॒र॑ण्यादु॒न्य आ॑भृतः कृ॒ष्या अ॒न्यो रसे॑भ्यः ५

७०

कृ॒त्यादू॑र्वि॒र॒ण्यं म॒णिर॑थो अ॒राति॑दूषिः ।

अथो॑ स॒हस्वान् जङ्गि॒डः प्र॒ ण॒ आयू॑षि तारि॑पत् ६

॥८॥ (अथर्व० ३।११।१—८)

ब्रह्मा, भृग्वङ्गिराश्च । इन्द्राग्नी, आयुष्यं, यक्षमनाशनम् । त्रिष्टुप्, ४ शकरीगर्भा जगती, ५-६ अनुष्टुप्, ७ उष्णिग्वृहतीगर्भा पथ्यापङ्क्तिः, ८ त्र्यवसाना षट्पदा बृहतीगर्भा जगती ।

मु॒ञ्चामि॑ त्वा ह॒विषा॑ जी॒वना॑य॒ कर्म॑ज्ञातय॒क्षमा॑दु॒त रा॑जय॒क्षमा॑त् ।

ग्राहि॑र्ज॒ग्राह॑ यद्येतदे॒नं तस्या॑ इन्द्रा॒ग्नी प्र॑ मु॒मुक्त॑मेनम् १

यदि॑ क्षि॒तायु॑र्यदि॑ वा॒ परे॑तो यदि॑ मृ॒त्योरे॑न्तिकं नीति॑ ए॒व ।

तमा॑ ह॒रामि॑ नि॒र्ऋते॑रु॒पस्था॑दस्पा॒र्शमे॑नं श॒तशार॑दाय २

स॒हस्रा॑क्षेण॑ श॒तवी॑र्येण॑ श॒तार्थु॑षा ह॒विषा॑हार्पमे॒नम् ।

इन्द्रो॑ यथै॒नं श॒रदो॑ नया॒त्यति॑ विश्व॑स्य द॒रित॑स्य॒ पार॑म् ३

७४

शतं जीव शरदो वर्धमानः शतं हेमन्तान् छतम् वसन्तान् ।
 शतं त इन्द्रो अग्निः सविता बृहस्पतिः शतार्युषा हविषार्हर्षमेनम् ४ ७५
 प्र विशतं प्राणापानावनद्वाहाविव व्रजम् ।
 व्य॑न्ये यन्तु मृत्यवो याना॑हुरितरान् छतम् ५
 इहैव स्तं प्राणापानौ मापं गातमितो युवम् ।
 शरीरमस्याङ्गानि ज॒रसे॑ वहतं पुनः ६
 ज॒रायै॑ त्वा परि॑ ददामि ज॒रायै॑ नि धुवामि त्वा ।
 ज॒रा त्वा भ॒द्रा नैष्ट॑ व्य॑न्ये यन्तु मृत्यवो याना॑हुरितरान् छतम् ७
 अ॒भि त्वा ज॒रिमा॑हितं गामु॒क्षणमि॑व रज्ज्वा ।
 यस्त्वा मृत्युरभ्यर्धत् जायमानं सुपाशया ।
 तं ते स॒त्यस्य॑ हस्ताभ्यामुदमुञ्चद् बृहस्पतिः ८

॥९॥ (अथर्व० २।९।१-५)

भृग्वक्त्रिः । वनस्पतिः, यक्ष्मनाशनम् । अनुष्टुप्, १ विराट् प्रस्तारपङ्क्तिः ।

दशवृक्ष मुञ्चेमं रक्षसो ग्राह्या अधि यैनं जग्राह पर्वसु ।
 अथो एनं वनस्पते जीवानां लोकमुन्नय १ ८०
 आगादुदगादयं जीवानां व्रातमप्यगात् ।
 अभूदु पुत्राणां पिता नृणां च भगवत्तमः २
 अधीतीरध्यगादयमधि जीवपुरा अगन् ।
 शतं ह्यस्य भिषजः सहस्रमुत वीरुधः ३
 देवास्ते चीतिर्मविदन् ब्रह्माण उत वीरुधः ।
 चीतिं ते विश्वे देवा अविदन् भूम्यामधि ४
 यश्चकार स निष्करत् स एव सुभिषक्तमः ।
 स एव तुभ्यं भेषजानि कृणवद् भिषजा शुचिः ५

॥१०॥ (अथर्व० ६।११०।१-३)

अथर्वा । अग्निः । त्रिष्टुप्, १ पङ्क्तिः ।

प्र॒तो हि क॒मीढ्यो॑ अध्व॒रेषु॑ स॒नाच्च॑ हो॒ता न॒व्यश्च॑ स॒स्ति ।
 स्वां चा॒ग्ने त॒न्वं॑ पि॒प्राय॑स्वा॒स्मभ्यं॑ च सौम॑ग॒मा य॑जस्व १ ८५

ज्येष्ठ्यां जातो विचृतोर्यमस्य मूलवर्हेणात् परि पाद्येनम् ।
 अत्येनं नेषद् दुरितानि विश्वा दीर्घायुत्वाय शतशारदाय २
 व्याघ्रेऽह्वयजनिष्ट वीरो नक्षत्रजा जायमानः सुवीरः ।
 स मा वधीत् पितरं वर्धमानो मा मातरं प्र मिनीज्जनित्रीम् ३

॥११॥ (अथर्व० ६।४७।१-३)

अङ्गिराः प्रचेताः । १ अग्निः, २ विश्वे देवाः, ३ सुधन्वा । त्रिष्टुप् ।

अग्निः प्रातःसवने पात्वस्मान् वैश्वानरो विश्वकृद् विश्वशंभूः ।
 स नः पावको द्रविणे दधात्वार्युष्मन्तः सहभक्षाः स्याम १
 विश्वे देवा मरुत इन्द्रो अस्मानस्मिन् द्वितीये सवने न जह्युः ।
 आर्युष्मन्तः प्रियमेषां वदन्तो वयं देवानां सुमतौ स्याम २
 इदं तृतीयं सवनं कवीनामृतेन ये चमसमैरयन्त ।
 ते सौधन्वनाः स्वरानशानाः स्विष्टिं नो अभि वस्यो नयन्तु ३ ९०

॥१२॥ (अथर्व० २।२९।१-७)

अथर्वा । १ अग्निः, सूर्यः, बृहस्पतिः; २ जातवेदाः, सविता; ३ इन्द्रः; ४-५ द्यावापृथिवी, विश्वे देवाः,
 मरुतः, आपः; ६ अश्विनौ, ७ इन्द्रः । त्रिष्टुप्, १ अनुष्टुप्,
 ४ पराबृहती निचृत्प्रस्तारपङ्क्तिः ।

पार्थिवस्य रसे देवा भगस्य तन्वोऽङ्गे बले ।
 आयुष्यमिस्मा अग्निः सूर्यो वर्च आ धाद् बृहस्पतिः १
 आयुरस्मै धेहि जातवेदः प्रजां त्वष्टरधिनिधेह्यस्मै ।
 रायस्पोषं सवितरा सुवास्मै शतं जीवाति शरदुस्तवायम् २
 आशीर्णं ऊर्जमुत सौप्रजास्त्वं दक्षं धत्तं द्रविणं सचेतसौ ।
 जयं क्षेत्राणि सहसायमिन्द्र कृण्वानो अन्यानधरान्तसपत्नान् ३
 इन्द्रेण दुत्तो वरुणेन शिष्टो मरुद्भिरुग्रः प्रहितो न आगन् ।
 एष वा द्यावापृथिवी उपस्थे मा क्षुधन्मा तृषत् ४
 ऊर्जमस्मा ऊर्जस्वती धत्तं पयो अस्मै पयस्वती धत्तम् ।
 ऊर्जमस्मै द्यावापृथिवी अधातां विश्वे देवा मरुत ऊर्जमापः ५
 शिवाभिष्टे हृदयं तर्पयाम्यनमीवो मोदिषीष्ठाः सुवर्चाः ।
 सवासिनौ पिबतां मन्थमेतमश्विनो रूपं परिधाय मायाम् ६ ९६

इन्द्रं एतां संसृजे विद्वो अग्रं ऊर्जां स्वधामजरां सा त एषा ।

तया त्वं जीव शरदः सुवर्चा मा त आ सुस्रोद् भिषजस्ते अक्रन्

७

॥१३॥ (अथर्व० ५।३०।१-१७)

उन्मोचनः (आयुष्कामः) । आयुष्यम् । अनुष्टुप् ; १ पथ्यापङ्क्तिः, ९ भुरिक्, ११ चतुष्पदा
विराड्जगती, १४ विरादप्रस्तारपङ्क्तिः, १७ त्र्यवसाना षट्पदा जगती ।

आवर्तस्त आवर्तः परावर्तस्त आवर्तः ।

इहैव भव मा नु गा मा पूर्वाननु गाः पितृनसुं बध्नामि ते दृढम् १
यत् त्वाभिचरुः पुरुषः स्वो यदरणो जनः उन्मोचनप्रमोचने उभे वाचा वदामि ते २
यद् दुद्रोहिथ शेपिषे स्त्रियै पुंसे अचिन्त्या । उन्मोचनप्रमोचने उभे वाचा वदामि ते ३ १००
यदेनसो मातृकृताच्छेषे पितृकृताश्च यत् । उन्मोचनप्रमोचने उभे वाचा वदामि ते ४
यत् ते माता यत् ते पिता जामिभ्राता च सर्जितः । प्रत्यक्सेवस्व भेषजं जरदष्टिं कृणोमि त्वा ५
इहैधि पुरुष सर्वेण मनसा सह । दूतौ यमस्य मानुं गा अधि जीवपुरा इहि ६
अनुहूतः पुनरेहि विद्वानुदयनं पथः । आरोहणमाक्रमणं जीवतो जीवतोऽयनम् ७
मा बिभेर्न मरिष्यसि जरदष्टिं कृणोमि त्वा । निर्वोचमहं यक्षमङ्गैभ्यो अङ्गज्वरं तव ८ १०५
अङ्गभेदो अङ्गज्वरो यश्च ते हृदयामयः । यक्ष्मः श्येन इव प्रार्पसद् वाचा साढः परस्तराम् ९
ऋषी बोधप्रतीबोधावस्वमो यश्च जागृविः । तौ ते प्राणस्य गोप्सारौ दिवा नक्तं च जागृताम् १०
अयमग्निरुपसद्य इह सूर्य उदेतु ते । उदेहि मृत्योर्गम्भीरात् कृष्णाच्चित् तमसुस्परि ११
नमो यमाय नमो अस्तु मृत्यवे नमः पितृभ्य उत ये नयन्ति ।
उत् पारणस्य यो वेद तमग्निं पुरो दधेऽस्मा अरिष्टतातये १२
एतु प्राण एतु मन एतु चक्षुरथो बलेम् । शरीरमस्य सं विदां तत् पद्भ्यां प्रति तिष्ठतु १३ ११०
प्राणेनाग्ने चक्षुषा सं सृजेमं समीरय तन्वाइ सं बलेन ।
वेत्थामृतस्य मा नु गान्मा नु भूमिगृहो भुवत् १४
मा ते प्राण उप दसन्मो अपानोऽपि धायि ते । सूर्यस्त्वाधिपतिर्मृत्योरुदायच्छतु रग्निभिः १५
इयमन्तर्वदति जिह्वा बद्धा पनिष्पदा । त्वया यक्ष्मं निर्वोचं शतं रोपीश्च त्वमनः १६
अयं लोकः प्रियर्तमो देवानामपराजितः । यस्मै त्वमिह मृत्यवे दिष्टः पुरुष जज्ञिषे ।
स च त्वानु ह्वयामसि मा पुरा जरसो मृथाः १७ ११४

॥१४॥ (अथर्व० १९।६४।१—४)

ब्रह्मा । अग्निः (दीर्घायुत्वम्) । अनुष्टुप् ।

अग्ने समिधमाहावर्षं बृहते जातवेदसे । स मे श्रद्धां च मेधां च जातवेदाः प्र यच्छंतु १ ११५
 इध्मेन त्वा जातवेदः समिधा वर्धयामसि । तथा त्वमस्मान् वर्धय प्रजया च धनेन च २
 यदग्ने यानि कानि चिदा ते दारूणि दुध्मसि । सर्वं तदस्तु मे शिवं तज्जुषस्व यविष्य ३
 एतास्ते अग्ने समिधस्त्वमिद्धः समिद्धव । आयुरस्मासु धेह्यमृतत्वमाचार्यायि ४

॥१५॥ (अथर्व० १९।६७।१—८)

ब्रह्मा । सूर्यः (दीर्घायुत्वम्) । प्रजापत्या गायत्री ।

| | | | |
|-------------------|---|-------------------|-------|
| पश्येम शरदः शतम् | १ | जीवेम शरदः शतम् | २ |
| बुध्येम शरदः शतम् | ३ | रोहेम शरदः शतम् | ४ |
| पूषेम शरदः शतम् | ५ | भवेम शरदः शतम् | ६ |
| भूयेम शरदः शतम् | ७ | भूयसीः शरदः शतात् | ८ ११६ |

॥१६॥ (अथर्व० ५।२८।१—१४)

अथर्वा । त्रिवृत्, अग्न्यादयः (दीर्घायुः) । त्रिष्टुप्, ६ पञ्चपदातिशकरी;

७, ९, १०, १२ ककुम्मत्यनुष्टुप्; १३ पुरउष्णिक् ।

नवं प्राणान् नवभिः सं मिमीते दीर्घायुत्वाय शतशारदाय ।
 हरिते त्रीणि रजते त्रीण्ययसि त्रीणि तपसार्विष्टितानि १
 अग्निः सूर्यश्चन्द्रमा भूमिरापो द्यौरन्तरिक्षं प्रदिशो दिशश्च ।
 आर्तवा ऋतुभिः संविदाना अनेन मा त्रिवृता पारयन्तु २
 त्रयः पोषास्त्रिवृति श्रयन्तामनक्तु पूषा पर्यसा घृतेन ।
 अन्नस्य भूमा पुरुषस्य भूमा भूमा पशूनां त इह श्रयन्ताम् ३
 इममादित्या वसुना समुक्षतेमग्ने वर्धय वावृधानः ।
 इममिन्द्र सं सृज वीर्येणास्मिन् त्रिवृच्छ्रयतां पोषयिष्णु ४ ११७
 भूमिष्ठा पातु हरितेन विश्वभृदग्निः पिपृत्वयसा सजोषाः ।
 वीरुद्धिष्टे अर्जुनं संविदानं दक्षं दधातु सुमनस्यमानम् ५
 त्रेधा जातं जन्मनेदं हिरण्यमग्नेरेकं प्रियतमं बभूव सोमस्यैकं हिसितस्य परापतत् ।
 अपामेकं वेधसां रेत आहुस्तत् ते हिरण्यं त्रिवृदस्त्वायुषे ६ ११८

अ्यायुषं जमदग्नेः कश्यपस्य अ्यायुषम् ।

त्रेभामृतस्य चक्षुषं त्रीण्यायूषि तेऽकरम् ७

त्रयः सुपर्णास्त्रिवृता यदार्यभेकाक्षरमभिसंभूय शक्राः ।

प्रत्यौहन् मृत्युममृतेन साकमन्तर्दधाना दुरितानि विश्वा ८

दिवस्त्वा पातु हरितं मघ्यात् त्वा पात्वर्जुनम् ।

भूम्या अयस्मयं पातु प्रागाद् देवपुरा अयम् ९ १३५

इमास्तिस्रो देवपुरास्तास्त्वा रक्षन्तु सर्वतः ।

तास्त्वं बिभ्रद् वर्चस्व्युत्तरो द्विषतां भव १०

पुरं देवानाममृतं हिरण्यं य आब्रेधे प्रथमो देवो अग्ने ।

तस्मै नमो दश प्राचीः कृणोम्यनु मन्यतां त्रिवृदावर्धे मे ११

आ त्वा चृतत्वयमा पूषा बृहस्पतिः ।

अहर्जातस्य यन्माम तेन त्वाति चृतामसि १२

ऋतुभिर्घातवैरायुषे वर्चसे त्वा ।

संवत्सरस्य तेजसा तेन संहनु कृणमसि १३

घृतादुल्लुप्तं मधुना समकतं भूमिदंहमच्युतं पारायिष्णु ।

भिन्दत सपत्नानधरांश्च कृण्वदा मां रोह सहते सौभगाय १४ १४०

॥१७॥ (अथर्व० ७।३२।१)

ब्रह्मा । आयुः । अनुष्टुप् ।

उपे प्रियं पनिमृतं युवानमाहुतीवर्धम् ।

अगन्म बिभ्रतो नमो दीर्घमायुः कृणोतु मे १

॥१८॥ (अथर्व० ७।३३।१)

ब्रह्मा । मरुतः, पूषा, बृहस्पतिः, अग्निः, (दीर्घायुः) । पथ्यापङ्क्तिः ।

सं मां सिञ्चन्तु मरुतः सं पूषा सं बृहस्पतिः ।

सं मायमग्निः सिञ्चतु प्रजया च धनेन च दीर्घमायुः कृणोतु मे १

॥१९॥ (अथर्व० ७।५३।१-७)

ब्रह्मा । आयुः, बृहस्पतिः अश्विनौ च । त्रिष्टुप्, ३ भुरिक्, ४ उणिगर्भाभिर्
पङ्क्तिः, ५-७ अनुष्टुप् ।

अमुत्रभूयादधि यद् यमस्य बृहस्पतेरभिर्शस्तेरमुञ्चः ।

प्रत्यौहतामश्विना मृत्युमस्मद् देवानामग्ने मिषजा शचीभिः १ १४३

सं क्रामतं मा जहीतं शरीरं प्राणापानौ ते सयुजाविह स्ताम् ।

शतं जीव शरदो वर्धमानोऽग्निष्टे गोपा अधिपा वसिष्ठः २

आयुर्यत् ते अतिहितं पराचैरपानः प्राणः पुनरा ताविताम् ।

अग्निष्टदाहानिर्ऋतेरुपस्थात् तदात्मनि पुनरा वेशयामि ते ३ १४५

मेमं प्राणो हांसीन्मो अपानो विहाय परां गात् ।

सप्तर्षिभ्य एनं परि ददामि त एनं स्वस्ति जरसे वहन्तु ४

प्र विंशतं प्राणापानावनद्वाहाविव व्रजम् । अयं जरिष्णः शैवधिररिष्ट इह वर्धताम् ५

आ ते प्राणं सुवामसि परा यक्ष्मं सुवामि ते । आयुर्नो विश्वतो दधद्यमभिर्वरेण्यः ६

उद्वयं तमेसपरि रोहन्तो नाकमुत्तमम् । देवं देवत्रा सूर्यमगन्म ज्योतिरुत्तमम् ७

॥२०॥ (अथर्व० ६।७६।१-४)

कबन्धः । सान्तपनाग्निः (आयुधम्) । अनुष्टुप्, ३ ककुम्मती ।

य एनं परिषीदन्ति समादधति चक्षसे । संप्रेद्धो अग्निर्जिह्वाभिरुदेतु हृदयादधि १ १५०

अग्नेः सान्तपनस्याहमायुषे पदमा रभे । अद्वातिर्यस्य पश्यति धूममुद्यन्तमास्यतः २

यो अस्य समिधं वेदं क्षत्रियेण समाहिताम् । नाभिहारे पदं नि दधाति स मृत्यवे ३

नैनं म्रन्ति पर्यायिणो न सन्नां अव गच्छति । अग्नेर्यः क्षत्रियो विद्वान् नाम गृह्णात्यायुषे ४

॥२१॥ (अथर्व० १९।६३।१)

ब्रह्मा । ब्रह्मणस्पतिः (आयुर्वर्धनम्) । विराड् पृथ्याबृहती ।

उत्तिष्ठ ब्रह्मणस्पते देवान् यज्ञेन बोधय । आयुः प्राणं प्रजां पशून् कीर्तिं यजमानं च वर्धय १

॥२२॥ (अथर्व० १९।६१।१)

ब्रह्मा । ब्रह्मणस्पतिः (सर्वमायुः) । विराद् पृथ्याबृहती ।

तनुस्तन्वा मे सहे दतः सर्वमायुरशीय । स्योनं मे सीद पुरुः पृणस्व पवमानः स्वर्गे १

॥२३॥ (अथर्व० १९।७०।१)

ब्रह्मा । इन्द्रसूर्यादयः (सर्वमायुः) । गायत्री ।

इन्द्र जीव सूर्य जीव देवा जीवा जीव्यासमहम् । सर्वमायुर्जीव्यासम् १ १५६

अरिष्टानि अङ्गानि । (१५७-१६१)

॥२४॥ (अथर्व० १९।६०।१-२)

ब्रह्मा । वाक्, अङ्गानि च । १ पृथ्याबृहती; २ ककुम्मती पुरउष्णिक् ।

वाङ् मे आसन्नसोः प्राणश्चक्षुरक्ष्णोः श्रोत्रं कर्णयोः ।

अपलिताः केशा अक्षोणा दन्ता बहु बाह्वोर्बलम् १ १५७

ऊर्वोरोजो जङ्घयोर्जवः पादयोः । प्रतिष्ठा अरिष्ठानि मे सर्वात्मानिभृष्टः २

सुमङ्गलौ दन्तौ ।

॥२५॥ (अथर्व० ६।१४०।१-३)

अथर्वा । ब्रह्मणस्पतिः, दन्ताः । (अनुष्टुप् ?) १ उरोबृहती, २ उपरिष्ठाज्ज्योतिष्मती
त्रिष्टुप्, ३ आस्तारपङ्क्तिः ।

यौ व्याघ्रावर्वरूढौ जिघत्सतः पितरं मातरं च ।

यौ दन्तौ ब्रह्मणस्पते शिवौ कृणु जातवेदः १

व्रीहिर्मत्तं यवमत्तमथो माषमथो तिलम् ।

एष वां भागो निहितो रत्नधेयाय दन्तौ मा हिंसिष्टं पितरं मातरं च । २

उपहूतौ सयुजौ स्योनौ दन्तौ सुमङ्गलौ ।

अन्यत्र वां घोरं तन्वः परैतु दन्तौ मा हिंसिष्टं पितरं मातरं च ३ १६१

यक्ष्म-नाशनम् ।

(१६२-३००) ॥२६॥ (ऋ० १०।१६३।१-६)

विवृद्धा काश्यपः । यक्ष्मनाशनम् । अनुष्टुप् ।

अक्षीभ्यां ते नासिकाभ्यां कर्णाभ्यां छुबुकादधि ।

यक्ष्मं शीर्ष्यं मस्तिष्का—जिह्वाया वि वृहामि ते १

ग्रीवाभ्यस्त उष्णिहाभ्यः कीकसाभ्यो अनूक्यात् ।

यक्ष्मं दोष्यं मंसाभ्यां बाहुभ्यां वि वृहामि ते २

आन्त्रेभ्यस्ते गुदाभ्यो वनिष्ठोर्हृदयादधि ।

यक्ष्मं मत्स्याभ्यां यक्नः प्लाशिभ्यो वि वृहामि ते ३

ऊरुभ्यां ते अष्टिवद्भ्यां पार्णिभ्यां प्रपदाभ्याम् ।

यक्ष्मं श्रोणिभ्यां भासदा—ङ्गंसो वि वृहामि ते ४ १६५

मेहनाद्वनंकरणा—ल्लोमभ्यस्ते नखेभ्यः ।

यक्ष्मं सर्वस्मादात्मन—स्तमिदं वि वृहामि ते ५

अङ्गादङ्गाल्लोमोलोमो जातं पर्वणिपर्वणि ।

यक्ष्मं सर्वस्मादात्मन—स्तमिदं वि वृहामि ते ६ १६७

॥२७॥ (अथर्व० ३।३।१-११)

ब्रह्मा । पाप्महाः १ अग्निः, २ शक्रः, ३ पशवः, ४ द्यावापृथिवी, ५ त्वष्टा, अग्निः, इन्द्रः, ७ देवाः, सूर्यः, ८-१० आयुः, ११ पर्जन्यः (यक्षमनाशनम्) । अनुष्टुप्, ४ भुरिक्, ५ विराट् प्रस्तारपङ्क्तिः ।

वि देवा ज॒रसा॑वृ॒तन् वि त्व॑र्म॒ग्ने अ॑रा॒त्या ।

व्य॑हं सर्वे॑ण पा॒प्मना॑ वि यक्ष॑मे॒ण॒ समा॑यु॒षा १

व्या॒त्या प॑र्व॒मानो॑ वि श॒क्रः पा॑प॒कृत्य॑या ।

व्य॑हं सर्वे॑ण पा॒प्मना॑ वि यक्ष॑मे॒ण॒ समा॑यु॒षा २

वि ग्रा॒म्याः प॑श॒व आ॑र॒ण्यै॒र्व्या॑पि॒स्तृष्ण॑यासरन् ।

व्य॑हं सर्वे॑ण पा॒प्मना॑ वि यक्ष॑मे॒ण॒ समा॑यु॒षा ३ १७०

वी॒क्ष्मे द्या॑वा॒पृथि॒वी इ॒तो वि प॑न्था॒नो दि॒शदि॑शम् ।

व्य॑हं सर्वे॑ण पा॒प्मना॑ वि यक्ष॑मे॒ण॒ समा॑यु॒षा ४

त्वष्टा॑ दु॒हित्रे॑ व॒हंतु॑ यु॒नक्ती॑ती॒दं वि॒श्वं भु॑वं॒न् वि या॑ति ।

व्य॑हं सर्वे॑ण पा॒प्मना॑ वि यक्ष॑मे॒ण॒ समा॑यु॒षा ५

अ॒ग्निः प्रा॑णान्त्सं द॒धाति॑ च॒न्द्रः प्रा॑णे॒न संहि॑तः ।

व्य॑हं सर्वे॑ण पा॒प्मना॑ वि यक्ष॑मे॒ण॒ समा॑यु॒षा ६

प्रा॒णेन॑ वि॒श्वतो॑वी॒र्यं दे॒वाः सूर्य॑ स॒मैर॑यन् ।

व्य॑हं सर्वे॑ण पा॒प्मना॑ वि यक्ष॑मे॒ण॒ समा॑यु॒षा ७

आयु॑ष्म॒तामायु॑ष्कृ॒तां प्रा॑णे॒न जी॒व मा मृ॑थाः ।

व्य॑हं सर्वे॑ण पा॒प्मना॑ वि यक्ष॑मे॒ण॒ समा॑यु॒षा ८ १७५

प्रा॒णेन॑ प्रा॒णतां॑ प्रा॒णेहै॒व भ॑व॒ मा मृ॑थाः ।

व्य॑हं सर्वे॑ण पा॒प्मना॑ वि यक्ष॑मे॒ण॒ समा॑यु॒षा ९

उ॒दायु॑षा॒ समा॑यु॒षोदोष॑धी॒नां रसे॑न ।

व्य॑हं सर्वे॑ण पा॒प्मना॑ वि यक्ष॑मे॒ण॒ समा॑यु॒षा १०

आ पर्ज॑न्यस्य वृ॒ष्ट्योद॑स्था॒मामृ॑ता॒ वयम्

व्य॑हं सर्वे॑ण पा॒प्मना॑ वि यक्ष॑मे॒ण॒ समा॑यु॒षा ११

॥२८॥ (अथर्व० ६।१०।१-३)

भृ॒ग्वङ्गि॑राः । यक्षमनाशनम् । १ जगती, २ ककुम्भतीप्रस्तारपङ्क्तिः, ३ सतः पङ्क्तिः ।

अ॒मेरि॑वास्य॒ दहत॑ एति शु॒ष्मिण॑ उ॒तेव॑ म॒त्तो वि॒लप॑न्नपा॒यति॑ ।

अ॒न्यम॒स्मदिच्छ॑तु॒ कं चि॑द॒व्रत॑स्त॒र्पुर्व॑धाय॒ नमो॑ अस्तु त॒कम॑ने

१ १७९

नमो रुद्राय नमो अस्तु त्वमने नमो राजे वरुणाय त्विषीमते ।

नमो दिवे नमः पृथिव्यै नम ओषधीभ्यः

२ १८०

अयं यो अभिशोचयिष्णुर्विश्वा रूपाणि हरिता कृणोषि ।

तस्मै तेऽरुणाय बभ्रवे नमः कृणोमि वन्याय त्वमने

३

॥२९॥ (अथर्व० ६।८५।१-३)

अथर्वा । वनस्पतिः (यक्षमनाशनम्) । अनुष्टुप् ।

वरुणो वारयाता अयं देवो वनस्पतिः । यक्षमो यो अस्मिन्नाविष्टस्तमु देवा अवीवरन् १

इन्द्रस्य वर्चसा वयं मित्रस्य वरुणस्य च । देवानां सर्वेषां वाचा यक्षमं ते वारयामहे २

यथा वृत्र इमा आपस्तस्तम्भं विश्वधा यतीः ।

एवा ते अग्निना यक्षमं वैश्वानरेण वारये ३

॥३०॥ (अथर्व० ६।१२७।१-३)

भृग्वक्त्रिराः । यक्षमनाशनम्, वनस्पतिः । अनुष्टुप्, ३ ज्यवसाना पदपदा जगती ।

विद्रुधस्य बलासस्य लोहितस्य वनस्पते । विसर्पकस्योषधे मोच्छिषः पिशितं चन १ १८५

यौ ते बलास तिष्ठतः कक्षे मुष्कावपश्रितौ । वेदाहं तस्य भेषजं चीपुद्रुरभिचक्षणम् २

यो अङ्गथो यः कर्ण्यो यो अक्षयोर्विसर्पकः । वि वृहामो विसर्पकं विद्रुधं हृदयामयम् ।

परा तमज्ञातं यक्षममधराञ्च सुवामसि ३

॥३१॥ (अथर्व० १।१२।१-४)

भृग्वक्त्रिराः । यक्षमनाशनम् । जगती (त्रिष्टुप् ?), ४ अनुष्टुप् ।

जरायुजः प्रथम उस्त्रियो वृषा वार्तभ्रजा स्तनयन्नेति वृष्टया ।

स नो मृडाति तन्व ऋजुगो रुजन् य एकमोजस्त्रेधा विचक्रमे १

अङ्गेअङ्गे शोचिषा शिश्रियाणं नमस्यन्तस्त्वा हविषा विधेम ।

अङ्कान्तसमङ्कान् हविषा विधेम यो अग्रभीत् पर्वीस्या ग्रभीता २

मुञ्च शीर्षिक्त्या उत कास एनं परुष्परुराविवेशा यो अस्य ।

यो अभ्रजा वार्तजा यश्च शुष्मो वनस्पतीन्तसचतां पर्वतांश्च ३

शं मे परस्मै गात्राय शमस्त्ववराय मे ।

शं मे चतुभ्यो अङ्गेभ्यः शमस्तु तन्वेऽङ्गे मम ४ १९१

॥३२॥ (अथर्व० ३।७।१-७)

भृग्वज्जिराः । १-३ हरिणः, ४ तारके, ५ आपः, ६-७ यक्षमनाशनम् । अनुष्टुप्, ६ भुक्ति ।

हरिणस्य रघुष्यदोऽधि शीर्षणि भेषजम् ।

स क्षेत्रियं विषाणया विषुचीनमनीनशत् १

अनु त्वा हरिणो वृषा पङ्क्तिश्चतुर्भिरकमीत् ।

विषाणे वि ष्य गुष्पितं यदस्य क्षेत्रियं हृदि २

अदो यदवरोचते चतुष्पक्षमिव च्छदिः ।

तेना ते सर्वे क्षेत्रियमङ्गैभ्यो नाशयामसि ३

अमू ये दिवि सुभगे विचृतौ नाम तारके ।

वि क्षेत्रियस्य मुञ्चतामधमं पार्श्वमुत्तमम् ४ १९५

आप इद् वा उ भेषजीरापो अमीवचार्तनीः ।

आपो विश्वस्य भेषजीस्तास्त्वा मुञ्चन्तु क्षेत्रियात् ५

यदासुतेः क्रियमाणायाः क्षेत्रियं त्वा व्यानशे ।

वेदाहं तस्य भेषजं क्षेत्रियं नाशयामि त्वत् ६

अपवासे नक्षत्राणामपवास उपसामुत ।

अपास्मत् सर्वे दुर्भूतमप क्षेत्रियमुच्छतु ७

॥३३॥ (अथर्व० ६।९।१-३)

भृग्वज्जिराः । यक्षमनाशनम्, ३ आपः । अनुष्टुप् ।

इमं यवमष्टायोगैः षड्योगैर्भिरचर्कषुः । तेना ते तन्वोऽ रपोऽपाचीनमप व्यये १

न्यग् वातो वाति न्यक् तपति सूर्यः । नीचीनमध्या दुहे न्यग् भवतु ते रपः २ २००

आप इद् वा उ भेषजीरापो अमीवचार्तनीः ।

आपो विश्वस्य भेषजीस्तास्ते कृण्वन्तु भेषजम् ३

॥३४॥ (अथर्व० १९।३।१-३)

अथर्वा । गुल्गुलुः (यक्षमनाशनम्) । अनुष्टुप्; २ चतुष्पदा उष्णिक्; ३ एकावसाना प्राजापस्यानुष्टुप् ।

न तं यक्षमा अरुन्धते नैनं शपथो अश्नुते ।

यं भेषजस्य गुल्गुलोः सुरभिर्गन्धो अश्नुते १

विष्वक्स्तस्माद् यक्षमा मृगा अश्वा इवेरते । यद् गुल्गुलु सैन्धवं यद् बाप्यासि समुद्रियम् २

उभयोरग्रभं नामास्मा अरिष्टतातये ३ २०४

॥३५॥ (अथर्व० २०।९६।६-१०)

यक्ष्मनाशनः । यक्ष्मनाशनम् । त्रिष्टुप् ।

मुञ्चामि त्वा हविषा जीवनाय कर्मज्ञातयक्ष्मादुत राजयक्ष्मात् ।

ग्राहिर्जग्राह यद्येतदेनं तस्या इन्द्राग्नी प्र मुमुक्तमेनम् ६ २०५

यदि क्षितायुर्यदि वा परेतो यदि मृत्योरन्तिकं नीति एव ।

तमा हराभि निर्ऋतेरुपस्थादस्पर्शमेनं शतशारदाय ७

सहस्राक्षेण शतवीर्येण शतायुषा हविषार्हर्षमेनम् ।

इन्द्रो यथैनं शरदो नयात्यति विश्वस्य दुरितस्य पारम् ८

शतं जीव शरदो वर्धमानः शतं हेमन्तान् छतमु वसन्तान् ।

शतं त इन्द्रो अग्निः सविता बृहस्पतिः शतायुषा हविषार्हर्षमेनम् ९

आहर्षमविदं त्वा पुनरागाः पुनर्णवः । सर्वाङ्ग सर्वे ते चक्षुः सर्वमायुश्च तेऽविदम् १०

॥३६॥ (अथर्व० २०।९६।१७-२३)

विबृहाः । यक्ष्मनाशनम् । अनुष्टुप् ।

अक्षीभ्यां ते नासिकाभ्यां कर्णाभ्यां छुबुकादधि ।

यक्ष्मं शीर्षण्यं मस्तिष्काज्जिह्वाया वि वृहामि ते १७ २१०

ग्रीवाभ्यस्त उष्णिहाभ्यः कीकसाभ्यो अनुक्यात् ।

यक्ष्मं दोषुण्यमंसाभ्यां बाहुभ्यां वि वृहामि ते १८

हृदयात् ते परि क्लोमो हलीक्षणात् पाश्वाभ्याम् ।

यक्ष्मं मर्तस्त्राभ्यां प्लीहो यक्नस्ते वि वृहामसि १९

आन्त्रेभ्यस्ते गुदाभ्यो वनिष्ठोरुदरादधि ।

यक्ष्मं कुक्षिभ्यां प्लाशेर्नाभ्या वि वृहामि ते २०

उरुभ्यां ते अष्टीवद्भ्यां पार्श्विभ्यां प्रपदाभ्याम् ।

यक्ष्मं भसद्यं श्रोणिभ्यां भासदुं भंससो वि वृहामि ते २१

अस्थिभ्यस्ते मज्जभ्यः स्नावभ्यो धमनिभ्यः ।

यक्ष्मं पाणिभ्यामङ्गुलिभ्यो नखेभ्यो वि वृहामि ते २२

अङ्गेअङ्गे लोमिलोमि यस्ते पर्वणिपर्वणि ।

यक्ष्मं त्वचस्यं ते वयं कश्यपस्य वीवर्हेण विष्वञ्चं वि वृहामसि २३ २१६

॥३७॥ (अथर्व० १२।२।१-५५)

भृगुः । अग्निः; मन्त्रोक्ताः; २१-३३ मृत्युः (यक्षमरोगनाशनम्) । त्रिष्टुप्; २,५,१२-२०,३४-३६;३८-४१,
 ४३,५१,५४ अनुष्टुप् (१६ ककुम्भती परावृहती, १८ निवृत्, ४० पुरस्तात्ककुम्भती) ।
 ३ आस्तारपङ्क्तिः; ६ भुरिगार्षी पङ्क्तिः; ७,४५ जगती; ८,४८-४९ भुरिगु;
 ९ अनुष्टुब्गर्भा विपरीतपादलक्ष्मा पङ्क्तिः; ३७ पुरस्ताद्वृहती; ४२ त्रिप०
 एकाव० भुरिगार्ची गायत्री; ४४ एकाव० द्विप० आर्ची वृहती;
 ४६ एका० द्विप० सास्त्री त्रिष्टुप्; ४७ पञ्चपदा बार्हतवैराजगर्भा
 जगती; ५० उपरिष्टाद्विराड् वृहती; ५२ पुरस्ताद्विराड्
 वृहती; ५५ वृहतीगर्भा ।

नडमा रोह न ते अत्र लोक इदं सीसं भागधेयं त एहि ।

यो गोषु यक्ष्मः पुरुषेषु यक्ष्मस्तेन त्वं साकमधराड् परेहि १
 अधशंसदुःशंसाभ्यां करेणानुकरेण च । यक्ष्मं च सर्वं तेनेतो मृत्युं च निरंजामसि २
 निरितो मृत्युं निर्क्रैतिं निररातिमजामसि ।

यो नो द्वेष्टि तमद्वयग्रे अक्रव्याद्यमुं द्विष्मस्तमुं ते प्र सुवामसि ३
 यद्यग्निः क्रव्याद् यदि वा व्याघ्र इमं गोष्ठं प्रविवेशान्योकाः ।

तं मापाज्यं कृत्वा प्र हिणोमि दूरं स गच्छत्वप्सुषदोऽप्यग्नीन् ४ २२०
 यत् त्वां क्रुद्धाः प्रचक्रुर्मन्युना पुरुषे मृते । सुकल्पमग्रे तत् त्वया पुनस्त्वोदीपयामसि ५
 पुनस्त्वादित्या रुद्रा वसवः पुनर्ब्रह्मा वसुनीतिरग्रे ।

पुनस्त्वा ब्रह्मणस्पतिराधाद् दीर्घायुत्वाय शतशारदाय ६

यो अग्निः क्रव्यात् प्रविवेश नो गृहमिमं पश्यन्नितरं जातवेदसम् ।

तं हरामि पितृयज्ञाय दूरं स घर्ममिन्धां परमे सधस्थे ७

क्रव्यादमग्निं प्र हिणोमि दूरं यमराज्ञो गच्छतु रिप्रवाहः ।

इहायमितरो जातवेदा देवो देवेभ्यो हव्यं वहतु प्रजानन् ८

क्रव्यादमग्निमिषितो हरामि जनान् दृंहन्तं वज्रेण मृत्युम् ।

नि तं शास्मि गार्हपत्येन विद्वान् पितृणां लोकेऽर्षि भागो अस्तु ९ २२५

क्रव्यादमग्निं शशमानमुक्थ्यैः प्र हिणोमि पथिभिः पितृयाणैः ।

मा देवयानैः पुनरा गा अत्रैवैधि पितृषु जागृहि त्वम् १०

समिन्धते संकसुको स्वस्तये शुद्धा भवन्तः शुचयः पावकाः ।

जहाति रिप्रमत्येन एति समिद्धो अग्निः सुपुना पुनाति ११

वो अग्निः संकसुको दिवस्पृष्टान्यारुहत् । मुच्यमानो निरेणसोऽमोगस्मां अशस्त्याः १२ २२८

| | |
|--|--------|
| अस्मिन् वयं संकसुके अग्रौ रिप्राणि मृज्महे । | |
| अभूम यज्ञियाः शुद्धाः प्र ण आयूषि तारिषत् | १३ |
| संकसुको विकसुको निर्ऋथो यश्च निस्वरः । ते ते यक्ष्मं सर्वेदसो दूराद् दूरमनीनशन् | १४ २३० |
| यो नो अश्वेषु वीरेषु यो नो गोष्वजाविषु । | |
| ऋव्यादं निर्णुदामसि यो अग्निर्जनयोपनः | १५ |
| अन्येभ्यस्त्वा पुरुषेभ्यो गोभ्यो अश्वेभ्यस्त्वा । | |
| निः ऋव्यादं नुदामसि यो अग्निर्जीवितयोपनः | १६ |
| यास्मिन् देवा अमृजत यास्मिन् मनुष्या उत । | |
| तस्मिन् घृतस्तावो मृष्टा त्वमग्ने दिवं रुह | १७ |
| समिद्धो अग्र आहुत स नो माभ्यर्षकमीः । | |
| अत्रैव दीदिहि द्यवि ज्योक् च सूर्यं दशे | १८ |
| सीसे मृड्द्वं नडे मृड्द्वमग्रौ संकसुके च यत् । | |
| अथो अव्यां रामायां शीर्षिक्तमुपवर्हणे | १९ २३५ |
| सीसे मलं सादयित्वा शीर्षिक्तमुपवर्हणे । अव्यामसिक्न्यां मृष्टा शुद्धा भवत यज्ञियाः | २० |
| परं मृत्यो अनु परेहि पन्थां यस्त एष इतरो देवयानात् । | |
| चक्षुष्मते शृण्वते ते ब्रवीमीहिमे वीरा बहवो भवन्तु | २१ |
| इमे जीवा वि मृतैराववृत्रन्नभूद् भद्रा देवहूतिर्नो अद्य । | |
| प्राञ्चो अगाम नृतये हसाय सुवीरासो विदथमा वदेम | २२ |
| इमं जीवेभ्यः परिधिं दधामि मैषां नु गादपरो अर्थमेतम् । | |
| शतं जीवन्तः शरदः पुरुचीस्तिरो मृत्युं दधतां पर्वतेन | २३ |
| आ रोहतायुर्जरसं वृणाना अनुपूर्वं यतमाना यति स्थ । | |
| तान्वस्त्वष्टा सुजनिमा सजोषाः सर्वमायुर्नयतु जीवनाय | २४ २४० |
| यथाहान्यनुपूर्वं भवन्ति यथर्तव ऋतुभिर्यन्ति साकम् । | |
| यथा न पूर्वमपरो जहात्येवा धातरायूषि कल्पयैषाम् | २५ |
| अश्मन्वती रीयते सं रभध्वं वीरयध्वं प्र तरता सखायः । | |
| अत्रा जहीत ये असन्दुरेवा अनमीवानुत्तरेमाभि वाजान् | २६ |
| उत्तिष्ठता प्र तरता सखायोऽश्मन्वती नदी स्यन्दत इयम् । | |
| अत्रा जहीत ये असन्नाशिवाः शिवान्त्स्योनानुत्तरेमाभि वाजान् | २७ २४३ |

| | |
|--|--------|
| वैश्वदेवीं वर्चस आ रभध्वं शुद्धा भवन्तः शुचयः पावकाः । | |
| अतिक्रामन्तो दुरिता पदानि शतं हिमाः सर्ववीरा मदेम | २८ |
| उदीचीनैः पथिभिर्वायुमाद्भिरतिक्रामन्तोऽवरान् परेभिः । | |
| त्रिः सप्त कृत्व ऋषयः परेता मृत्युं प्रत्यौहन् पदयोर्पनेन | २९ २४५ |
| मृत्योः पदं योपयन्त एत द्राघीय आयुः प्रतुरं दधानाः । | |
| आसीना मृत्युं जुदता सधस्येऽथ जीवासो विदथमा वदेम | ३० |
| हमा नारीरविधवाः सुपत्नीराञ्जनेन सर्पिषा सं स्पृशन्ताम् । | |
| अनश्रवो अनमीवाः सुरत्ना आ रोहन्तु जनयो योनिमग्रे | ३१ |
| व्याकरोमि हविषाहमेतौ तौ ब्रह्मणा व्यहं कल्पयामि । | |
| स्वधां पितृभ्यो अजरां कृणोमि दीर्घेणायुषा समिमान्त्सृजामि | ३२ |
| यो नो अग्निः पितरो हृत्स्वहन्तराविवेशामृतो मर्त्येषु । | |
| मय्यहं तं परि गृह्णामि देवं मा सो अस्मान् द्विक्षत मा वयं तम् | ३३ |
| अपावृत्य गार्हपत्यात् क्रव्यादा प्रेतं दक्षिणा । | |
| प्रियं पितृभ्य आत्मने ब्रह्मभ्यः कृणुता प्रियम् | ३४ २५० |
| द्विभागधनमादाय प्र क्षिणात्यवर्त्या । अग्निः पुत्रस्य ज्येष्ठस्य यः क्रव्यादनिराहितः | ३५ |
| यत् कृषते यद् वनुते यच्च वस्त्रेन विन्दते । सर्वं मर्त्यस्य तन्नास्ति क्रव्याच्चेदनिराहितः | ३६ |
| अयज्ञियो हतवर्चा भवति नैनेन हविरत्तवे । छिनत्ति कृष्या गोर्धनाद्यं क्रव्यादनुवर्तते | ३७ |
| मुहुर्गृध्रैः प्र वदत्यर्ति मर्त्यो नीत्य । क्रव्याद्यानग्निरन्तिकार्दनुविद्वान् वितावति | ३८ |
| ग्राह्या गृहाः सं सृज्यन्ते स्त्रिया यन्म्रियते पतिः । | |
| ब्रह्मैव विद्वानेष्टोऽयः क्रव्यादं निरादधत् | ३९ २५५ |
| यद् रिप्रं शर्मलं चक्रुम यच्च दुष्कृतम् । | |
| आपो मा तस्माच्छुम्भन्त्वग्नेः संकसुकाच्च यत् | ४० |
| ता अंधरादुदीचीराववृत्रन् प्रजानतीः पथिभिर्देव्यानैः । | |
| पर्वतस्य वृषभस्याधि पृष्ठे नवाश्चरन्ति सरितः पुराणीः | ४१ |
| अग्ने अक्रव्याग्निः क्रव्यादं नुदा देवयजनं वह | ४२ |
| हमं क्रव्यादा विवेशायं क्रव्यादुमन्वगात् । व्याघ्रौ कृत्वा नानानं तं हरामि शिवापरम् | ४३ |
| अन्तर्धिर्देवानो परिधिर्मनुष्याणामग्निर्गार्हपत्य उभयानन्तरा श्रितः | ४४ २६० |

जीवानामायुः प्र तिर् त्वमग्ने पितॄणां लोकमपि गच्छन्तु ये मृताः ।

सुगार्हपत्यो वितपन्नरातिमुषामृषां श्रेयसीं धेह्यस्मै ४५

सर्वानग्ने सहमानः सपत्नानैषामूर्जं रयिमस्मासु धेहि ४६

इममिन्द्रं वह्निं पश्निमन्वारंभध्वं स वो निर्वक्षद् दुरितादवद्यात् ।

तेनाप हत शरुमापतन्तं तेन रुद्रस्य परि पातास्ताम् ४७

अनङ्गाहं प्लवमन्वारंभध्वं स वो निर्वक्षद् दुरितादवद्यात् ।

आ रौहत सवितुर्नावमेतां षड्भिरुर्वीभिरमतिं तरेम ४८

अहोरात्रे अन्वेषि विभ्रत् क्षेम्यस्तिष्ठन् प्रतरणः सुवीरः ।

अनातुरान्तसुमनसस्तल्प विभ्रज्ज्योगेव नः पुरुषगन्धिरेधि ४९ २६५

ते देवेभ्य आ वृश्चन्ते पापं जीवन्ति सर्वदा ।

ऋव्याद्यानभिरन्तिकादश्च इवानुवपते नडम् ५०

येऽश्रद्धा धनकाम्या ऋव्यादा समासते । ते वा अन्येषां कुम्भीं पर्यादधति सर्वदा ५१

प्रेवं पिपतिषति मनसा मुहुरा वर्तते पुनः । ऋव्याद्यानभिरन्तिकादनुविद्वान् वितावति ५२

अविः कृष्णा भागधेयं पशूनां सीसं ऋव्यादपि चन्द्रं त आहुः ।

माषाः पिष्टा भागधेयं ते हव्यमरण्यान्या गह्वरं सचस्व ५३

इषीकां जरतीमिष्टा तिलिपञ्जं दण्डनं नडम् । तमिन्द्र इध्मं कृत्वा यमस्याग्निं निरादधौ ५४ २७०

प्रत्यश्चमर्कं प्रत्यर्पयित्वा प्रविद्वान् पन्थां वि ह्यविवेश ।

परामीषामसून् दिदेश दीर्घेणायुषा समिमान्तसृजामि ५५

॥३८॥ (अथर्व० ९।८।१-२२)

भृग्वक्त्रिराः । सर्वशीर्षामयाद्यपाकरणम् (यक्षमभितारणम्) । अनुष्टुप्; १२ अनुष्टुग्गर्भा ककुम्भती

चतुष्पदोष्णिक्; १५ विराडनुष्टुप्; २१ विराट् पथ्यावृहती;

२२ पथ्यापञ्क्तिः ।

शीर्षक्तिं शीर्षामयं कर्णशूलं विलोहितम् । सर्वं शीर्षण्यं ते रोगं बहिर्निर्मन्त्रयामहे १

कर्णाभ्यां ते कङ्कूषेभ्यः कर्णशूलं विसर्पकम् ।

सर्वं शीर्षण्यं ते रोगं बहिर्निर्मन्त्रयामहे २

यस्य हेतोः प्रच्यवते यक्ष्मः कर्णत आस्यतः ।

सर्वं शीर्षण्यं ते रोगं बहिर्निर्मन्त्रयामहे ३

यः कृणोति प्रमोतमन्धं कृणोति पूरुषम् । सर्वं शीर्षण्यं ते रोगं बहिर्निर्मन्त्रयामहे ४ २७५

| | |
|--|--------|
| अङ्गभेदमङ्गज्वरं विश्वाङ्ग्यं विसर्पकम् । | |
| सर्वं शीर्षण्यं ते रोगं बहिर्निर्मन्त्रयामहे | ५ |
| यस्य भीमः प्रतीकाश उद्वेपयति पूरुषम् । त्वमानं विश्वशारदं बहिर्निर्मन्त्रयामहे | ६ |
| य ऊरु अनुसर्पत्यथो एति गवीनिके । यक्षमे ते अन्तरङ्गभ्यो बहिर्निर्मन्त्रयामहे | ७ |
| यदि कामादपक्वमाद्भुदयाज्जायते परि । हृदो बलासमङ्गभ्यो बहिर्निर्मन्त्रयामहे | ८ |
| हरिमाणं ते अङ्गभ्योऽप्वामन्तरोदरात् । यक्षमोधामन्तरात्मनो बहिर्निर्मन्त्रयामहे | ९ २८० |
| आसौ बलासो भवतु मूत्रं भवत्वामयत् । यक्षमाणां सर्वेषां विषं निरवोचमहं त्वत् | १० |
| बहिर्बिलं निर्द्रवतु काहाबाहं तवोदरात् । यक्षमाणां सर्वेषां विषं निरवोचमहं त्वत् | ११ |
| उदरात् ते क्लोमो नाभ्या हृदयादधि । यक्षमाणां सर्वेषां विषं निरवोचमहं त्वत् | १२ |
| याः सीमानं विरुजन्ति मूर्धानं प्रत्यर्षणीः । अहिंसन्तीरनामया निर्द्रवन्तु बहिर्बिलम् | १३ |
| या हृदयमुपपन्त्यनुतन्वन्ति कीकसाः । | |
| अहिंसन्तीरनामया निर्द्रवन्तु बहिर्बिलम् | १४ २८५ |
| याः पार्श्वे उपपन्त्यनुनिक्षन्ति पृष्ठीः । | |
| अहिंसन्तीरनामया निर्द्रवन्तु बहिर्बिलम् | १५ |
| यास्तिरश्चरुपपन्त्यर्षणीर्विक्षणांसु ते । | |
| अहिंसन्तीरनामया निर्द्रवन्तु बहिर्बिलम् | १६ |
| या गुदा अनुसर्पन्त्यान्त्राणि मोहयन्ति च । | |
| अहिंसन्तीरनामया निर्द्रवन्तु बहिर्बिलम् | १७ |
| या मज्जो निर्धयन्ति परूषि विरुजन्ति च । | |
| अहिंसन्तीरनामया निर्द्रवन्तु बहिर्बिलम् | १८ |
| ये अङ्गानि मदयन्ति यक्षमासो रोपणास्तव । | |
| यक्षमाणां सर्वेषां विषं निरवोचमहं त्वत् | १९ २९० |
| विसर्पस्य विद्रुधस्य वातीकारस्य बालजेः । | |
| यक्षमाणां सर्वेषां विषं निरवोचमहं त्वत् | २० |
| पादाभ्यां ते जानुभ्यां श्रोणिभ्यां परि भंससः । | |
| अनूकादर्षणीरुष्णिहाभ्यः शीर्णो रोगमनीनशम् | २१ |
| सं ते शीर्णः कपालानि हृदयस्य च यो विधुः । | |
| उद्यन्नादित्य रश्मिभिः शीर्णो रोगमनीनशोऽङ्गभेदमशीशमः | २२ २९३ |

॥३९॥ (अथर्व० २।३३।१-७)

ब्रह्मा । यक्षमविबर्हणं, चन्द्रमाः, आयुष्यम् । अनुष्टुप्, ३ ककुम्मती, ४ चतुष्पदा भुरिगुणिक्,
५ उपरिष्ठाद्विराड्बृहती, ६ उष्णिग्गर्भा निचृदनुष्टुप्, ७ पथ्यापङ्क्तिः ।

| | |
|--|-------|
| अक्षीभ्यां ते नासिकाभ्यां कर्णाभ्यां छुबुकादधि । | |
| यक्षमे शीर्ष्यं मस्तिष्काञ्जिह्वाया वि वृहामि ते | १ |
| ग्रीवाभ्यस्त उष्णिहाभ्यः कीकसाभ्यो अनुक्यात् । | |
| यक्षमे दोष्यमंसाभ्यां बाहुभ्यां वि वृहामि ते | २ २९५ |
| हृदयात् ते परि क्लोमो हलीक्षणात् पार्श्वभ्याम् । | |
| यक्षमे मत्सनाभ्यां ग्रीहो यवनस्ते वि वृहामसि | ३ |
| आन्त्रेभ्यस्ते गुदाभ्यो वनिष्ठोरुदरादधि । | |
| यक्षमे कुक्षिभ्यां प्लाशेर्नाभ्या वि वृहामि ते | ४ |
| ऊरुभ्यां ते अष्टीवद्भ्यां पार्णिभ्यां प्रपदाभ्याम् । | |
| यक्षमे भसद्यो श्रोणिभ्यां भासदं भंसो वि वृहामि ते | ५ |
| अस्थिभ्यस्ते मज्जभ्यः स्नावभ्यो धमनिभ्यः । | |
| यक्षमे पाणिभ्यामङ्गुलिभ्यो नखेभ्यो वि वृहामि ते | ६ |
| अङ्गैर्लोमिलोमि यस्ते पर्वणिपर्वणि । | |
| यक्षमे त्वचस्यं ते वयं कश्यपस्य वीबुर्हेण विष्वञ्चं वि वृहामसि | ७ ३०० |

ओषधिवनस्पतयः । (३०१-४८२)

॥४०॥ (ऋ० १०।९।११-२३)

आथर्वणो भिषग् । ओषधयः । अनुष्टुप् ।

| | |
|---|-------|
| या ओषधीः पूर्वा जाता देवेभ्यस्त्रियुगं पुरा । | |
| मनै नु बभ्रूणामहं शतं धामानि सप्त च | १ |
| शतं वो अम्ब धामानि सहस्रमुत वो रुहः । | |
| अघा शतक्रत्वो यूयमिमं मे अगदं कृत | २ |
| ओषधीः प्रति मोदध्वं पुष्पवतीः प्रस्रवरीः । | |
| अश्वा इव सजित्वरीर्वीरुधः पारयिष्णवः | ३ |
| ओषधीरिति मातरस्तद् वो देवीरुपं ब्रुवे । | |
| सनेयमश्च गां वास आत्मानं तव पूरुष | ४ ३०४ |

| | |
|---|--------|
| अश्वत्थे वो निषदनं पूर्णे वो वसतिष्कृता । | |
| गोभाज इत् किलासथ यत् सनवथ पूरुषम् | ५ ३०५ |
| यत्रौषधीः समगमत राजानः समिताविव । | |
| विप्रः स उच्यते भिषग् रक्षोहामीवचातनः | ६ |
| अश्वावतीं सोमावती—मूर्जयन्तीमुदोजसम् । अविस्ति सर्वा ओषधी—रस्मा अरिष्टतातये ७ | |
| उच्छुष्मा ओषधीनां गावो गोष्ठादिवेरते । धनं सनिष्यन्तीना—मात्मानं तव पूरुष ८ | |
| इष्कृतिर्नाम वो माता ऽथो यूयं स्थ निष्कृतीः । | |
| सीराः पतत्रिणीः स्थन् यदामयति निष्कृथ | ९ |
| अति विश्वाः परिष्ठाः स्तेन इव व्रजमक्रमुः । ओषधीः प्राचुच्यवु—र्यत् किं च तन्वोऽरे रपः १० | ३१० |
| यदिमा वाजयन्नाह—मोषधीर्हस्ते आदुधे । आत्मा यक्ष्मस्य नश्यति पुरा जीवगृभो यथा ११ | |
| यस्यौषधीः प्रसर्पथा—ङ्गमङ्गं परुषपरुः । ततो यक्ष्मं वि बाधध्व उग्रो मध्यमशीरिव १२ | |
| साकं यक्ष्मं प्र पत चाषेण किकिदीविना । | |
| साकं वार्तस्य ध्राज्या साकं नश्य निहाकया | १३ |
| अन्या वो अन्यामव—त्वन्यान्यस्या उपावत । | |
| ताः सर्वाः संविदाना इदं मे प्रावता वचः | १४ |
| याः फलिनीर्या अफला अपुष्पा याश्च पुष्पिणीः । | |
| बृहस्पतिप्रसूता—स्ता नो मुञ्चन्त्वंहसः | १५ ३१५ |
| मुञ्चन्तु मा शपथ्याऽ—दथो वरुण्यादुत । | |
| अथो यमस्य पड्वीशात् सर्वस्माद् देवकिल्बिषात् | १६ |
| अवपतन्तीरवदन् दिव ओषधयस्परि । यं जीवमश्रवामहै न स रिष्याति पूरुषः १७ | |
| या ओषधीः सोमराज्ञी—बह्वीः शतविचक्षणाः । तासां त्वमस्युत्तमा—रं कामाय शं हृदे १८ | |
| या ओषधीः सोमराज्ञी—विष्टिताः पृथिवीमनु । बृहस्पतिप्रसूता अस्यै सं दत्त वीर्यम् १९ | |
| मा वो रिषत् खनिता यस्मै चाहं खनामि वः । द्विपञ्चतुष्पदस्माकं सर्वमस्त्वनातुरम् २० | ३२० |
| याश्चेदष्टपशुष्वन्ति याश्च दूरं परागताः । सर्वाः संगत्य वीरुधो ऽस्यै सं दत्त वीर्यम् २१ | |
| ओषधयः सं वदन्ते सोमेन सह राज्ञा । यस्मै कृणोति ब्राह्मण—स्तं राजन् पारयामसि २२ | |
| त्वमुत्तमास्योषधे तव वृक्षा उपस्तयः । | |
| उपस्तिरस्तु सोऽस्माकं यो अस्मां अभिदासति | २३ ३२३ |

॥४१॥ (अथर्व० ८।७।१-२८)

अथर्वा । भैषज्यं, आयुष्यं, ओषधयः । अनुष्टुप्; २ उपरिष्टान्नृग्वृहती; ३ पुर उष्णिक्; ४ पञ्चपदा
परानुष्टुबतिजगती; ५-६, १०, २५ पथ्यापञ्चक्तिः (६ विराड्गर्भा भुरिक्); ९ द्विपदार्ची
भुरिगनुष्टुप्; १२ पञ्चपदा विराडतिशक्ती; १४ उपरिष्टान्नृग्वृहती;
२६ निवृत्त; २८ भुरिक् ।

या बभ्रवो याश्च शुक्रा रोहिणीरुत पृथ्वयः ।

असिक्नीः कृष्णा ओषधीः सर्वा अच्छावदामसि १

त्रायन्तामिमं पुरुषं यक्ष्माद् देवेषितादधि ।

यासां द्यौष्पिता पृथिवी माता समुद्रो मूलं वीरुधां बभूव २ ३२५

आपो अग्रं दिव्या ओषधयः । तास्ते यक्ष्ममेनस्य मङ्गादङ्गादनीनशन् ३

प्रस्तृणती स्तम्बिनीरेकशुङ्गाः प्रतन्वतीरोषधीरा वदामि ।

अंशुमतीः काण्डिनीर्या विशाखा ह्वयामि ते वीरुधो वैश्वदेवीरुग्राः पुरुषजीवनीः ४

यद् वः सहः सहमाना वीर्यं यच्च वो बलम् ।

तेनेममस्माद् यक्ष्मात् पुरुषं मुञ्चतौषधीरथो कृणोमि भेषजम् ५

जीवलां नधारिषां जीवन्तीमोषधीमहम् ।

अरुन्धतीमुन्नयन्तीं पुष्पां मधुमतीमिह ह्रुवेऽस्मा अरिष्टतातये ६

इहा यन्तु प्रचेतसो मेदिनीर्वचसो मम । यथेमं पारयामसि पुरुषं दुरितादधि ७ ३३०

अग्नेर्घासो अपां गर्भो या रोहन्ति पुनर्नवाः ।

ध्रुवाः सहस्रनाम्नीर्भेषजीः सन्त्वाभृताः ८

अवकौल्वा उदकात्मान ओषधयः । व्यृषन्तु दुरितं तीक्ष्णशृङ्गयः ९

उन्मुञ्चन्तीर्विवरुणा उग्रा या विषदूषणीः ।

अथो बलासनाशनीः कृत्यादूषणीश्च यास्ता इहा यन्त्वोषधीः १०

अपक्नीताः सहीयसीर्वीरुधो या अभिष्टृताः । त्रायन्तामस्मिन् ग्रामे गामश्च पुरुषं पशुम् ११

मधुमन्मूलं मधुमदग्रमासां मधुमन्मध्यं वीरुधां बभूव ।

मधुमत् पूर्णं मधुमत् पुष्पमासां मधोः संभक्ता अमृतस्य भक्षो घृतमन्नं दुहतां गोपुरोगवम् १२ ३३५

यावन्तीः कियतीश्चेमाः पृथिव्यामध्योषधीः । ता मां सहस्रपण्यां मृत्योर्मुञ्चन्त्वंहसः १३

वैयाघ्रो मणिर्वीरुधां त्रायमाणोऽभिशस्तिपाः । अमीवाः सर्वा रक्षांस्यप हन्त्वाधि दूरमस्मत् १४

सिंहस्यैव स्तनथोः सं विजन्तेऽग्रेरिव विजन्त आभृताभ्यः ।

गवां यक्ष्मः पुरुषाणां वीरुद्भिरतिनुत्तो नाव्या एतु स्रोत्याः १५ ३३८

मुमुचाना ओषधयोऽग्नेर्वैश्वानरादधि । भूमिं संतन्वतीरित यासां राजा वनस्पतिः १६
 या रोहन्त्याङ्गिरसीः पर्वतेषु समेषु च । ता नः पर्यस्वतीः शिवा ओषधीः सन्तु शं हृदे १७ ३४०
 याश्चाहं वेदं वीरुधो याश्च पश्यामि चक्षुषा । अज्ञाता जानीमश्च या यासु विद्य च संभृतम् १८
 सर्वाः समग्रा ओषधीर्बोधन्तु वचंसो मम । यथेमं पारयामसि पुरुषं दुरितादधि १९
 अश्वत्थो दुर्भो वीरुधां सोमो राजामृतं हविः । त्रीहिर्यवश्च भेषजौ दिवस्पुत्रावमृत्यौ २०
 उज्जिहीध्वे स्तनयत्यभिक्रन्दत्योषधीः । यदा वः पृश्निमातरः पर्जन्यो रेतसावति २१
 तस्यामृतस्येमं बलं पुरुषं पाययामसि । अथो कृणोमि भेषजं यथासच्छतहायनः २२ ३४५
 वराहो वेदं वीरुधं नकुलो वेदं भेषजीम् । सर्पा गन्धर्वा या विदुस्ता अस्मा अवसे हुवे २३
 याः सुपर्णा आङ्गिरसीर्दिव्या या रघटो विदुः । वयांसि हंसा या विदुर्याश्च सर्वे पतत्रिणः ।
 मृगा या विदुरोषधीस्ता अस्मा अवसे हुवे २४
 यावतीनामोषधीनां गावः प्राश्नन्त्यग्न्या यावतीनामजावयः ।
 तावतीस्तुभ्यमोषधीः शर्मं यच्छन्त्वाभृताः २५
 यावतीषु मनुष्या भेषजं भिषजौ विदुः । तावतीर्विश्वभेषजीरा भेरामि त्वामभि २६
 पुष्पवतीः प्रस्रमतीः फलिनीरफला उत । समातरं इव दुहामस्मा अरिष्टताये २७ ३५०
 उत त्वाहार्षं पञ्चशलादथो दशशलादुत । अथो यमस्य पङ्क्तिंशाद् विश्वस्माद् देवकिल्बिषात् २८

॥४२॥ (अथर्व० ६।९६।१-३)

भृग्वङ्गिराः । वनस्पतिः (चिकित्सा), ३ सोमः । अनुष्टुप्, ३ त्रिपदा विराण्णाम गायत्री ।
 या ओषधयः सोमराज्ञीर्वह्नीः शतविचक्षणाः । बृहस्पतिप्रस्रतास्ता नो मुञ्चन्त्वंहंसः १
 मुञ्चन्तु मा शपथ्याद्दुधो वरुण्यादुत ।
 अथो यमस्य पङ्क्तिंशाद् विश्वस्माद् देवकिल्बिषात् २
 यच्चक्षुषा मनसा यच्च वाचोपारिम जाग्रतो यत् स्वपन्तः ।
 सोमस्तानि स्वधया नः पुनातु ३

॥४३॥ (वा० य० ४।१; ५।४२; ६।१५)
(ओषधयः ।)

ओषधे त्रायस्व स्वधिते मैत्रं हिंसीः १

॥४४॥ (वा० य० ११।४७-४८)
(ओषधयः ।)

ओषधयः प्रतिमोदध्वमग्निमेतं शिवमायन्तमभ्यत्र युष्माः ४७ ३५६

ओषधयः प्रतिगृम्णीत पुष्पवतीः सुपिप्पलाः ।

अयं वो गर्भे ऽ ऋत्विग्यः प्रत्नः सधस्थमासदत्

४८

॥४५॥ (वा० य० १२।७९;३५।४)

(ओषधिः ।)

अश्वत्थे वो निषदनं पर्णे वो वसतिष्कृता ।

गोभाज ऽ इत्किलासथ यत् सनवथ पूरुषम्

७९

॥४६॥ (वा० य० १८।३२-३४)

(अन्नम् ।)

वाजो नः सप्त प्रदिशश्चतस्रो वा परावतः ।

वाजो नो विश्वेर्देवैर्धनसाताविहावतु

३२

वाजो नो ऽ अद्य प्रसुवाति दानं वाजो देवाँऽ ऋतुभिः कल्पयाति ।

वाजो हि मा सर्ववीरं जजान विश्वा ऽ आशा वाजपतिर्जयेयम्

३३

३६०

वाजः पुरस्तादुत मध्यतो नो वाजो देवान् हविषा वर्धयाति ।

वाजो हि मा सर्ववीरं चकार सर्वा ऽ आशा वाजपतिर्भवेयम्

३४

॥४७॥ (ऋ० १।९०।६)

गोतमो राहूगणः । विश्वे देवाः (वानसिन्धोषधयः) । गायत्री ।

मधु वाता क्रतायते मधु क्षरन्ति सिन्धवः । माध्वीनः सन्त्वोषधीः

६

॥४८॥ (ऋ० ३।५७।३)

गायिनो विश्वामित्रः । विश्वे देवाः (ओषधयः सूर्यमरीचयो वा) । त्रिष्टुप् ।

या जामयो वृष्ण इच्छन्ति शक्तिं नमस्यन्तीर्जानते गर्भमस्मिन् ।

अच्छा पुत्रं धेनवो वावशाना महश्चरन्ति विश्रतं धूपि

३

॥४९॥ (अथर्व० ३।१८।१-६)

अथर्व । वनस्पतिः । अनुष्टुप्, ४ अनुष्टुग्गर्भा चतुष्पदा उष्णिक्, ६ उष्णिग्गर्भा पथ्यापङ्क्तिः ।

इमां खनाम्योषधिं वीरुधां बलवत्तमाम् । यया सपत्नीं बाधते यया संविन्दते पतिम् १

उत्तानपर्णे सुभगे देवजूते सहस्वति । सपत्नीं मे परां शुद्र पतिं मे केवलं कृधि २

३६५

नहि ते नाम जग्राह नो अस्मिन् रमसे पतौ । परामेव परावतं सपत्नीं गमयामसि ३

उत्तराहमुत्तर उत्तरेदुत्तराभ्यः । अधः सपत्नी या ममाधरा साधराभ्यः ४

अहमस्मि सहमानाथो त्वमसि सासहिः । उभे सहस्वती भूत्वा सपत्नीं मे सहावहैः ५

३६८

अभि तेऽधां सहमानामुप तेऽधां सहीयसीम् ।

मामनु प्र ते मनो वृत्सं गौरिव धावतु पथा वारिव धावतु

६

॥५०॥ (वा० य० ५।४२-४३)

(वनस्पतिः ।)

अत्यन्याँ२९ अगां नान्याँ२९ उपांगामर्वाक् त्वा परेभ्योऽविदं पुरोऽवरेभ्यः ।

तं त्वा जुषामहे देव वनस्पते देवयज्यायै देवास्त्वा देवयज्यायै जुषन्तां विष्णवे त्वा ।

ओषधे त्रायस्व स्वर्धिते मैत्रं हिंसीः

४२ ३७०

द्यां मा लेखीरन्तरिक्षं मा हिंसीः पृथिव्या सम्भव ।

अयं हि त्वा स्वर्धितिस्तेतिजानः प्रणिनायं महते सौभगाय ।

अतस्त्वं देव वनस्पते शतवल्शो विरोह सहस्रवल्शा वि वयं रुहेम

४३

॥५१॥ (वा० य० २०।४१)

(वनस्पतिः ।)

वनस्पतिरवसृष्टो न पाशैस्त्वान्या समञ्जच्छमिता न देवः ।

इन्द्रस्य हव्यैर्जठरं पृणानः स्वदाति यज्ञं मधुना घृतेन

४५

॥५२॥ (वा० य० २१।२१)

(वनस्पतिः ।)

शमिता नो वनस्पतिः सविता प्रसुवन् भगम् ।

ककुप् छन्दऽ इहेन्द्रियं वशा वेहद् वयो दधुः

२१

॥५३॥ (वा० य० २७।२१)

(वनस्पतिः ।)

वनस्पतेऽव सृजा रराणस्त्वना देवेषु । अग्निहव्यं शमिता स्रदयाति

२१

॥५४॥ (वा० य० २८।१०, ३३, ४३)

(वनस्पतिः ।)

होता यक्षद् वनस्पतिं शमितारं शतक्रतुं धियो जोष्टारमिन्द्रियम् ।

मध्वा समञ्जन् पृथिभिः सुगेभिः स्वदाति यज्ञं मधुना घृतेन वेत्वाज्यस्य होतर्यजं १०

होता यक्षद् वनस्पतिं शमितारं शतक्रतुं हिरण्यपर्णमुक्थिनं रशनां विभ्रतं

वाशिं भगमिन्द्रं वयोधसम् ।

ककुभं छन्दऽ इहेन्द्रियं वशां वेहतं गां वयो दधद् वेत्वाज्यस्य होतर्यजं

३३

३७६

देवो वनस्पतिर्देवमिन्द्रं वयोधसं देवो देवमवर्धयत् ।

द्विपदा छन्दसेन्द्रियं भगमिन्द्रे वयो दधद् वसुवने वसुधेयस्य वेतु यज ४३

॥५५॥ (वा० २९।१०, ३५)

(वनस्पतिः ।)

अश्वो घृतेन त्मन्या समक्तऽ उप देवाँऽऽकृतुशः पार्थऽ एतु ।

वनस्पतिर्देवलोकं प्रजानन्नग्निना हव्या स्वदितानि वक्षत् १०

उपावसुज त्मन्या समञ्जन् देवानां पार्थऽ ऋतुथा हवीऽषि ।

वनस्पतिः शमिता देवोऽ अग्निः स्वदन्तु हव्यं मधुना घृतेन ३५

॥५६॥ (अथर्व० ४।१७।१-८)

शुक्रः । अपामार्गो वनस्पतिः । अनुष्टुप् ।

ईशानां त्वा भेषजानामुज्जेष आ रभामहे । चक्रे सहस्रवीर्यं सर्वस्मा ओषधे त्वा १ ३८०

सत्यजितं शपथयावर्नीं सहमानां पुनःसराम् ।

सर्वाः समह्वयोषधीरितो नः पारयादिति २

या शशाप शपनेन याधं मूरमादधे । या रसस्य हरणाय जातमारेभे तोकमत्तु सा ३

यां ते चक्रुरामे पात्रे यां चक्रुर्नीललोहिते ।

आमे मांसे कृत्यां यां चक्रुस्तया कृत्याकृतो जहि ४

दौष्वप्न्यं दौर्जीवित्यं रक्षो अभ्वमिरायुः ।

दुर्णाम्नीः सर्वा दुर्वाचस्ता अस्मन्नाशयामसि ५

क्षुधामारं तृष्णामारमगोतामनपत्यताम् । अपामार्गं त्वया वयं सर्वं तदर्पं मृज्महे ६ ३८५

तृष्णामारं क्षुधामारमथो अक्षपराजयम् । अपामार्गं त्वया वयं सर्वं तदर्पं मृज्महे ७

अपामार्गं ओषधीनां सर्वासामेक इद् वशी । तेन ते मृज्म आस्थितमथ त्वमगदश्चर ८

॥५७॥ (अथर्व० ४।१८।१-८)

शुक्रः । अपामार्गो वनस्पतिः । अनुष्टुप्, ६ बृहतीगर्भा ।

समं ज्योतिः सूर्येणाह्वा रात्रीं समावती ।

कृणोमि सत्यमूतयेऽरसाः संन्तु कृत्वरीः १

यो देवाः कृत्यां कृत्वा हरादर्विदुषो गृहम् ।

वत्सो धारुरिव मातरं तं प्रत्यगुप पद्यताम् २ ३८९

| | |
|--|-------|
| अमा कृत्वा पाप्मानं यस्तेनान्यं जिघांसति । | |
| अश्मानस्तस्यां दुग्धायी बहुलाः फट् करिक्रति | ३ ३९० |
| सहस्रधामन् विशिखान् विग्रीवां छायया त्वम् । | |
| प्रति स्म चक्रुषे कृत्यां प्रियां प्रियावते हर | ४ |
| अनयाहमोषध्या सर्वाः कृत्या अदूदुषम् । | |
| यां क्षेत्रे चक्रुर्या गोषु यां वां ते पुरुषेषु | ५ |
| यश्चकार न शशाककर्तुं शश्रे पादमङ्गुरिम् । चकार भद्रमस्मभ्यमात्मने तपनं तु सः ६ | |
| अपामार्गोऽप माष्टु क्षेत्रियं शपथश्च यः । अपाह यातुधानीरप सर्वा अराग्यः ७ | |
| अपमृज्य यातुधानानप सर्वा अराग्यः । अपामार्ग त्वया वयं सर्वं तदप मृज्महे ८ | ३९५ |

॥५८॥ (अथर्व० ४।१९।१-८)

शुक्रः । अपामार्गो वनस्पतिः । अनुष्टुप्, २ पद्यापङ्क्तिः ।

| | |
|--|-------|
| उतो अस्यबन्धुकुटुतो असि नु जामिकृत् । | |
| उतो कृत्याकृतः प्रजां नडमिवा छिन्धि वार्षिकम् | १ |
| ब्राह्मणेन पर्युक्तासि कण्वेन नार्षदेन । | |
| सेनेवैषि त्विषीमती न तत्र भयमस्ति यत्र ग्रामोऽप्योषधे | २ |
| अग्रमेग्योषधीनां ज्योतिषेवाभिदीपयन् । उत त्रातासि पाकस्यार्थो हन्तासि रक्षसः | ३ |
| यदुदो देवा असुरांस्त्वयाग्रे निरकुर्वत । ततस्त्वमध्योषधेऽपामार्गो अजायथाः | ४ |
| विभिन्दुती शतशाखा विभिन्दन् नाम ते पिता । | |
| प्रत्यग् वि भिन्धि त्वं तं यो अस्मां अभिदासति | ५ ४०० |
| असद् भूम्याः समभवत् तद् यामेति महद् व्यचः । | |
| तद् वै ततो विधूपायत् प्रत्यक् कर्तारमृच्छतु | ६ |
| प्रत्यङ् हि सैवभूर्विथ प्रतीचीनफलस्त्वम् । सर्वान् मच्छपथां अधि वरीयो यावया वधम् ७ | |
| शतेन मा परि पाहि सहस्रेणाभि रक्ष मा । इन्द्रस्ते वीरुधां पत उग्र ओजमानमा दधत् ८ | |

॥५९॥ (अथर्व० ७।६५।१-३)

शुक्रः । अपामार्गवीरुत् (दुरितनाशनम्) । अनुष्टुप् ।

| | |
|--|-----|
| प्रतीचीनफलो हि त्वमपामार्ग रुरोर्हित । सर्वान् मच्छपथां अधि वरीयो यावया इतः १ | |
| यद् दुष्कृतं यच्छमलं यद् वा चेरिम पापया । त्वया तद् विश्वतोमुखापामार्गार्प मृज्महे २ | |
| अयावदता कनखिना वण्डेन यत सहासिम । अपामार्ग त्वया वयं सर्वं तदप मृज्महे ३ | ४०६ |

॥६०॥ (अथर्व० ६।५९।१-३)

अथर्वा । रुद्रः, अरुन्धती औषधिः । अनुष्टुप् ।

अनडुद्धयस्त्वं प्रथमं धेनुभ्यस्त्वमरुन्धति । अर्धेनवे वयंसु शर्म यच्छ चतुष्पदे १
 शर्म यच्छत्वोषधिः सह देवीररुन्धती । करत् पर्यस्वन्तं गोष्ठमयुक्ष्मां उत पूरुषान् २
 विश्वरूपां सुभगां मच्छावदामि जीवलाम् । सा नो रुद्रस्यास्तां हेति दूरं नयतु गोभ्यः ३

॥६१॥ (अथर्व० ६।९५।१-३)

भृग्वङ्किराः । वनस्पतिः (कुष्ठोषधिः) । अनुष्टुप् ।

अश्वत्थो देवसदनस्तृतीयस्यामितो दिवि । तत्रामृतस्य चक्षुर्ण देवाः कुष्ठमवन्वत १ ४१०
 हिरण्ययी नौरचरद्विरण्यबन्धना दिवि । तत्रामृतस्य पुष्पं देवाः कुष्ठमवन्वत २
 गर्भो अस्योषधीनां गर्भो हिमवतामुत । गर्भो विश्वस्य भूतस्येमं मे अगदं कृधि ३

॥६२॥ (अथर्व० ६।१०९।१-३)

अथर्वा । पिप्पली-भेषज्यं, आयुः । अनुष्टुप् ।

पिप्पली क्षिप्तभेषज्युः तातिविद्धभेषजी । तां देवाः समकल्पयन्नियं जीवित्वा अलम् १
 पिप्पल्युः समवदन्तायतीर्जननादधि । यं जीवमश्रवामहै न स रिष्याति पूरुषः २
 असुरास्त्वा न्यखिनन् देवास्त्वोदवपन् पुनः । वातीकृतस्य भेषजीमथो क्षिप्तस्य भेषजीम् ३ ४१५

॥६३॥ (अथर्व० १।२५।१-५)

चातनः । पृश्निपर्णी वनस्पतिः । अनुष्टुप्, ४ भुरिक् ।

शं नो देवी पृश्निपर्ण्यशं निर्रेत्या अकः ।
 उग्रा हि कण्वजम्भनी तामभक्षि सहस्वतीम् १
 सहमानेयं प्रथमा पृश्निपर्ण्यजायत । तयाहं दुर्णाम्नां शिरो वृश्चामि शकुनेरिव २
 अरायमसृक् पावानं यश्च स्फाति जिहीर्षति ।
 गर्भादं कण्वं नाशय पृश्निपर्णि सहस्व च ३
 गिरिमेनां आ वेशय कण्वान् जीवितयोर्पनान् ।
 तांस्त्वं देवि पृश्निपर्ण्यगिरिवानुदहन्निहि ४
 पराच एनान् प्र णुद कण्वान् जीवितयोर्पनान् ।
 तमांसि यत्र गच्छन्ति तत् क्रव्यादो अजीगमम् ५

॥६४॥ (अथर्व० ४।१२।१-७)

ऋभुः । रोहणी वनस्पतिः । अनुष्टुप्, १ त्रिपदा गायत्री, त्रिपदा यवमध्या
 भुरिगायत्री, ७ बृहती ।

रोहण्यसि रोहण्यश्नश्छिन्नस्य रोहणी । रोहयेदमरुन्धति

१ ४२१

| | |
|---|-------|
| यत् ते रिष्टं यत् ते द्युत्तमस्ति पेष्टं त आत्मनि । | |
| धाता तद् भद्रया पुनः सं दधत् परुषा परुः | २ |
| सं ते मज्जा मज्ज्ञा भवतु समु ते परुषा परुः । | |
| सं ते मांसस्य विस्रस्तं समस्थ्यपि रोहतु | ३ |
| मज्जा मज्ज्ञा सं धीयतां चर्मणा चर्म रोहतु । | |
| असृक् ते अस्थि रोहतु मांसं मांसेन रोहतु | ४ |
| लोम लोम्ना सं कल्पया त्वचा सं कल्पया त्वचम् । | |
| असृक् ते अस्थि रोहतु च्छिन्नं सं धैह्योषधे | ५ ४२५ |
| स उत् तिष्ठ प्रेहि प्र द्रव रथः सुचक्रः सुपविः सुनाभिः । प्रति तिष्ठोर्ध्वः | ६ |
| यदि कर्त पतित्वा संश्रे यदि वाश्मा ग्रहतो जघान । | |
| ऋभू रथस्येवाङ्गानि सं दधत् परुषा परुः | ७ |

॥६५॥ (अथर्व० ५।५।१-९)

अथर्वा । लाक्षा । अनुष्टुप् ।

| | |
|---|-------|
| रात्री माता नभः पितार्यमा ते पितामहः । | |
| सिलाची नाम वा असि सा देवानामसि स्वसा | १ |
| यस्त्वा पिबति जीवति त्रायसे पुरुषं त्वम् । | |
| भर्त्री हि शश्वतामसि जनानां च न्यञ्जनी | २ |
| वृक्षंवृक्षमा रोहसि वृषण्यन्तीव कन्यला । जयन्ती प्रत्यातिष्ठन्ती स्पर्णी नाम वा असि | ३ ४३० |
| यद् दुण्डेन यदिष्वा यद् वारुहरसा कुतम् । | |
| तस्य त्वमसि निष्कृतिः सेमं निष्कृधि पूरुषम् | ४ |
| भद्रात् प्लक्षान्निस्तिष्ठस्यश्चत्थात् खदिराद्रवात् । | |
| भद्राक्यग्रोधात् पर्णात् सा न एह्यरुन्धति | ५ |
| हिरण्यवर्णे सुभगे सूर्यवर्णे वपुष्टमे । रुतं गच्छासि निष्कृते निष्कृतिर्नाम वा असि | ६ |
| हिरण्यवर्णे सुभगे शुष्मे लोमशवक्षणे । अपामसि स्वसा लाक्षे वातो हात्मा बभूव ते | ७ |
| सिलाची नाम कानीनोऽजबभ्रु पिता तव । | |
| अश्वो यमस्य यः श्यावस्तस्य हास्त्रास्युक्षिता | ८ |
| अश्वस्यास्त्रः संपतिता सा वृक्षा अभि सिंघ्यदे । | |
| सरा पतत्रिणी भुत्वा सा न एह्यरुन्धति | ९ ४३६ |

॥६६॥ (अथर्व० ५।४।१-१०)

भृग्वक्त्रिगिराः । कुष्ठो, यक्ष्मनाशनम् (कुष्ठतकमनाशनम्) । अनुष्टुप्, ५ भुरिक्, ६ गायत्री,
१० उष्णिग्गर्भा निचृत् ।

यो गिरिष्वजायथा वीरुधां बलवत्तमः । कुष्ठेहिं तकमनाशन तकमानं नाशयन्नितः १
सुपर्णमुर्वने गिरौ जातं हिमवतस्परि । धनैरभि श्रुत्वा यन्ति विदुहिं तकमनाशनम् २
अश्वत्थो देवसदनस्तुतीयस्यामितो दिवि । तत्रामृतस्य चक्षुषं देवाः कुष्ठमवन्वत ३
हिरण्ययी नौरचरद्विरण्यबन्धना दिवि । तत्रामृतस्य पुष्पं देवाः कुष्ठमवन्वत ४ ४४०
हिरण्ययाः पन्थान आसन्नरित्राणि हिरण्यया ।
नावो हिरण्ययीरासन् याभिः कुष्ठं निरावहन् ५
इमं मे कुष्ठं पूरुषं तमा वह तं निष्कुरु । तमु मे अगदं कृधि ६
देवेभ्यो अधि जातोऽसि सोमस्यासि सखा हितः ।
स प्राणाय व्यानाय चक्षुषे मे अस्मै मृड ७
उदङ् जातो हिमवतः स प्राच्यां नीयसे जनम् ।
तत्र कुष्ठस्य नामान्युत्तमानि वि भेजिरे ८
उत्तमो नाम कुष्ठास्युत्तमो नाम ते पिता ।
यक्ष्मं च सर्वं नाशय तकमानं चारुसं कृधि ९ ४४१
शीर्षामयमुपहत्यामक्षयोस्तन्वोऽरे रपः । कुष्ठस्तत् सर्वं निष्करद् दैवं समह वृण्यम् १०

॥६७॥ (अथर्व० १९।३९।१-१०)

भृग्वक्त्रिगिराः । कुष्ठः (कुष्ठनाशनम्) । अनुष्टुप्, २, ३ ज्यवसाना पद्यापङ्क्तिः, ४ पदपदा
जगती, ५ सप्तपदा शकरी, ६-८ अष्टिः (५-८ चतुरवसाना) ।

ऐतुं देवस्त्रायमाणः कुष्ठो हिमवतस्परि । तकमानं सर्वं नाशय सर्वाश्च यातुधान्यः १
त्रीणि ते कुष्ठं नामानि नद्यमारो नद्यारिषः । नद्यायं पूरुषो रिपत् ।
यस्मै परिब्रवीमि त्वा सायंप्रातरथो दिवा २
जीवला नाम ते माता जीवन्तो नाम ते पिता । नद्यायं पूरुषो रिपत् ।
यस्मै परिब्रवीमि त्वा सायंप्रातरथो दिवा ३
उत्तमो अस्योषधीनामनङ्गान् जगतामिव व्याघ्रः श्वपदामिव । नद्यायं पूरुषो रिपत् ।
यस्मै परिब्रवीमि त्वा सायंप्रातरथो दिवा ४ ४५०
दे० [आयुर्वेद०] ५

त्रिः शम्भुभ्यो अङ्गिरेभ्यस्त्रिरादित्येभ्यस्परिं । त्रिर्जातो विश्वदेवेभ्यः ।

स कुष्ठो विश्वभैषजः साकं सोमेन तिष्ठति ।

तक्मानं सर्वं नाशय सर्वाश्च यातुधान्यः

५

अश्वत्थो देवसदनस्तृतीयस्यामितो दिवि । तत्रामृतस्य चक्षुषं ततः कुष्ठो अजायत ।

स कुष्ठो विश्वभैषजः साकं सोमेन तिष्ठति ।

तक्मानं सर्वं नाशय सर्वाश्च यातुधान्यः

६

हिरण्ययी नौरचरद्विरण्यबन्धना दिवि । तत्रामृतस्य चक्षुषं ततः कुष्ठो अजायत ।

स कुष्ठो विश्वभैषजः साकं सोमेन तिष्ठति ।

तक्मानं सर्वं नाशय सर्वाश्च यातुधान्यः

७

यत्र नावप्रभ्रंशनं यत्र हिमवतः शिरः । तत्रामृतस्य चक्षुषं ततः कुष्ठो अजायत ।

स कुष्ठो विश्वभैषजः साकं सोमेन तिष्ठति ।

तक्मानं सर्वं नाशय सर्वाश्च यातुधान्यः

८

यं त्वा वेद पूर्व इक्ष्वाको यं वा त्वा कुष्ठ काम्यः ।

यं वा वसो यमात्स्यस्तेनार्सि विश्वभैषजः

९

४५५

शीर्षिलोकं तृतीयकं सदुन्दिर्यश्च हायनः । तक्मानं विश्वधावीर्याधुराश्रं परां सुव १०

॥६८॥ (अथर्व० ६।२१।१-३)

शन्तातिः । चन्द्रमाः (केशवर्धनी औषधिः) । अनुष्टुप् ।

इमा यास्तिष्ठः पृथिवीस्तासां ह भूमिरुत्तमा ।

तासामधि त्वचो अहं भैषजं समु जग्रभम्

१

श्रेष्ठमसि भेषजानां वसिष्ठं वीरुधानाम् । सोमो भग इव यामेषु देवेषु वरुणो यथा २

रेवतीरनाधृषः सिषासर्वः सिषासथ । उत स्थ केशदृहणीरथो ह केशवर्धनीः ३

॥६९॥ (अथर्व० ६।२३।१-३)

वीतहव्यः । नितली वनस्पतिः (केशदृहणम्) । अनुष्टुप्, २ एकावसाना द्विपदा साम्नी बृहती ।

देवी देव्यामधि जाता पृथिव्यामस्योषधे ।

तां त्वां नितलि केशेभ्यो दृहणाय खनामसि

१

४६०

दृहं प्रलान् जनयार्जातान् जातानु वर्षीयसस्कृधि

२

यस्ते केशोऽवपद्यते समूलो यश्च वृश्चते । इदं तं विश्वभैषज्यामि विश्वामि वीरुधा ३

४६१

॥७०॥ (अथर्व० ६।१३७।१-३)

वीतहव्यः । वनस्पतिः (केशवर्धनम्) । अनुष्टुप् ।

यां जुमदगिरिखनद् दुहित्रे केशवर्धनीम् । तां वीतहव्य आभरदसितस्य गृहेभ्यः १
 अभीशुना मेया आसन् व्यामेनानुमेयाः । केशा नडा इव वर्धन्तां शीर्ष्णस्ते असिताः परि २
 दंढ मूलमाग्रे यच्छ वि मध्यं यामयौषधे । केशा नडा इव वर्धन्तां शीर्ष्णस्ते असिताः परि ३ ४६५

॥७१॥ (अथर्व० ६।१६।१-४)

शौनकः । चन्द्रमाः, मन्त्रोक्तदेवताः (अक्षिरोगमैषजम्) । अनुष्टुप्, १ निचृत्त्रिपदा गायत्रीः
 ३ बृहतीगर्भा ककुम्मत्यनुष्टुप्, ४ त्रिपदा प्रतिष्ठा ।

आवयो अनावयो रसस्त उग्र आवयो । आ ते कस्मभमन्नसि १
 विहहो नाम ते पिता मदावती नाम ते माता । स हि न त्वमसि यस्त्वमात्मानमावयः २
 तौर्विलिकेऽवेलयावायमैलव ऐलयीत् । बभ्रुश्च बभ्रुकर्णश्चापैहि निराल ३
 अलसालामि पूर्वा सिलाञ्जालास्युत्तरा । नीलगलसाला ४

॥७२॥ (अथर्व० ६।३०।१-३)

उपरिबभ्रवः । शमी (पापशमनम्) । जगती, २ त्रिष्टुप्, ३ चतुष्पाच्छकुम्मत्यनुष्टुप् ।

देवा इमं मधुना संयुतं यवं सरस्वत्यामधि मणावचर्कषुः ।
 इन्द्र आसीत् सीरपतिः शतक्रतुः कीनाशा आसन् मरुतः सुदानवः १ ४७०
 यस्ते मदोऽवकेशो विकेशो येनाभिहस्यं पुरुषं कृणोषि ।
 आरात् त्वदन्या वनानि वृक्षि त्वं शमि शतवल्शा वि रोह २
 बृहत्पलाशे सुभगे वर्षवृद्ध क्रतावारि । मातेव पुत्रेभ्यो मृड केशेभ्यः शमि ३

॥७३॥ (ऋ० १।९०।८)

गोतमो राहगणः । विश्वे देवाः (वनस्पतिसूर्यगावः) । गायत्री ।

मधुमात्रो वनस्पतिर्मधुमा अस्तु सूर्यः । माध्वीर्गावो भवन्तु नः ८

॥७४॥ (ऋ० १०।८५।२-४)

मावित्री सूर्या ऋषिका । सोमः । अनुष्टुप् ।

सोमेनादित्या बलिनः सोमेन पृथिवी मही ।
 अथो नक्षत्राणामेपा—मुपस्थे सोम आहितः १
 सोमं मन्यते पपिवान् यत् संपिषन्त्योषधिम् ।
 सोमं यं ब्रह्माणो विदुर्न तस्याश्नाति कश्चन ३ ४७५

आच्छद्भिर्धानैर्गुपितो बर्हितैः सोम रक्षितः ।

ग्राव्णामिच्छृण्वन् तिष्ठसि न ते अश्नाति पार्थिवः

४

॥७५॥ (ऋ० १।९।१६)

गोतमो राहूगणः । सोमवनस्पतिः । गायत्री ।

त्वं च सोम नो वशो जीवातुं न मरामहे । प्रियस्तोत्रो वनस्पतिः

६

॥७६॥ (अथर्व० १।३४।१-५)

अथर्वा । मधुवनस्पतिः (मधुविद्या) । अनुष्टुप् ।

इयं वीरुन्मधुजाता मधुना त्वा खनामसि ।

मधोरधि प्रजातासि सा नो मधुमतस्कृधि

१

जिह्वाया अग्रे मधु मे जिह्वामूले मधूलकम् ।

ममेदह क्रतावसो मम चित्तमुपायसि

२

मधुमन्मे निकर्मणं मधुमन्मे परायणम् ।

वाचा वदामि मधुमद् भूयासं मधुसंदृशः

३

४८०

मधोरस्मि मधुतरो मदुघान्मधुमत्तरः ।

मामित् किल त्वं वनाः शाखां मधुमतीमिव

४

परि त्वा परितन्नुनेक्षुणागामविद्विषे । यथा मां कामिन्यसो यथा मन्नापंगा असः

५ ४८१

रोगचिकित्सा । (४८३ ६८०)

॥७७॥ (अथर्व० ६।१४।१-३)

वध्रुपिङ्गलः । बलासः (बलासनाशनम्) । अनुष्टुप् ।

अस्थिसंसं परुसंममास्थितं हृदयामयम् । बलासं सर्वं नाशयाङ्गेष्टा यश्च पर्वसु

१

निर्वलासं बलासिनः क्षिणोमि मुष्करं यथा । छिनदयस्य बन्धनं मूलमुर्वावा इव

२

निर्वलासेतः प्र पताशुंगः शिशुको यथा । अथो इट इव हायनोप द्राव्यवीरहा

३

४८५

॥७८॥ (अथर्व० ६।१०५।१-३)

उन्मोचनः । कासा (कासशमनम्) । अनुष्टुप् ।

यथा मनो मनस्केतैः परापतत्याशुमत् । एवा त्वं कासे प्र पत मनसोऽनु प्रवाय्यम्

१

यथा बाणः सुसंशितः परापतत्याशुमत् । एवा त्वं कासे प्र पत पृथिव्या अनु संवर्तम्

२

यथा सूर्यस्य रश्मयः परापतन्त्याशुमत् । एवा त्वं कामे प्र पत समुद्रस्यानु विक्षरम्

३

४८८

॥७९॥ (अथर्व० १।२१।१-४)

ब्रह्मा । सूर्यो, हरिमा हृद्रोगश्च (हृद्रोग-कामिला-नाशनम्) । अनुष्टुप् ।

अनु सूर्यमुदयतां हृदयोतो हरिमा च ते ।

गो रोहितस्य वर्णेन तेन त्वा परि दध्मसि १

परि त्वा रोहितैर्वर्णैर्दीर्घायुत्वाय दध्मसि । यथायमरपा असुदधो अहरितो भुवत् २ ४९०

या रोहिणीर्देवत्याश्च गावो या उत रोहिणीः ।

रूपं रूपं वयोवयस्ताभिश्च परि दध्मसि ३

शुक्लेषु ते हरिमाणं रोपणाकासु दध्मसि । अथो हारिद्रवेषु ते हरिमाणं निदध्मसि ४

॥८०॥ (अथर्व० २।८।१-५)

भृग्वङ्गिराः । वनस्पतिः, यक्ष्मनाशनम् (क्षेत्रियरोगनाशनम्) । अनुष्टुप्, ३ पथ्यापङ्क्तिः, ४ विराट्, ५ निचृत्पथ्यापङ्क्तिः ।

उदगातां भगवती विचृतौ नाम तारके । वि क्षेत्रियस्य मुञ्चतामधमं पाशमुत्तमम् १

अपेयं रात्र्युच्छत्वपोच्छन्त्वभिकृत्वरीः । वीरुत् क्षेत्रियनाशन्यप क्षेत्रियमुच्छतु २

बभ्रोरर्जुनकाण्डस्य यवस्य ते पलाल्या तिलस्य तिलपिड्या ।

वीरुत् क्षेत्रियनाशन्यप क्षेत्रियमुच्छतु ३ ४९५

नमस्ते लाङ्गलेभ्यो नम ईषायुगेभ्यः । वीरुत् क्षेत्रियनाशन्यप क्षेत्रियमुच्छतु ४

नमः सनिस्रसाक्षेभ्यो नमः संदेश्येभ्यः ।

नमः क्षेत्रस्य पतये वीरुत् क्षेत्रियनाशन्यप क्षेत्रियमुच्छतु ५

॥८१॥ (अथर्व० ६।१३।१-५)

अथर्वा । वनस्पतिः (क्लीबत्वम्) । अनुष्टुप्, ३ पथ्यापङ्क्तिः ।

त्वं वीरुधां श्रेष्ठतमाभिभ्रुतास्योषधे । इमं मे अद्य पूरुषं क्लीबमोपशिनं कृधि १

क्लीबं कृध्योपशिनमर्थो कुरीरिणं कृधि । अथास्येन्द्रो ग्रावभ्यामुभे भिनन्त्राण्ड्यौ २

क्लीबं क्लीबं त्वाकरं वध्रे वध्रि त्वाकरमरसारसं त्वाकरम् ।

कुरीरमस्य शीर्षणि कुम्भं चाधिनिदध्मसि ३ ५००

ये ते नाड्यौ देवकृते ययोस्तिष्ठति वृण्यम् । ते ते भिनन्नि शम्ययामुष्या अधि मुष्कयोः ४

यथा नडं कशिपुने स्त्रियो भिन्दन्त्यश्मना । एवा भिनन्नि ते शेषोऽमुष्या अधि मुष्कयोः ५

॥८२॥ (अथर्व० ७।७४।१-४)

अथर्वाङ्गिराः । मन्त्रोक्ताः, ४ जातवेदाः (गण्डमालाचिकित्सा) । अनुष्टुप् ।

अपचित्तां लोहिनीनां कृष्णा मातेति शुश्रुम । मुनेर्देवस्य मूलेन सर्वा विध्यामि ता अहम् १ ५०३

विध्याम्यासां प्रथमां विध्याम्युत मध्यमाम् । इदं जघन्यामासामा च्छिनन्नि स्तुकाभिव २
 त्वाष्ट्रेणाहं वचसा वि त ईर्ष्याममीमदम् । अथो यो मन्युष्टे पते तमु ते शमयामसि ३ ५०५
 व्रतेन त्वं व्रतपते समक्तो विश्वाहा सुमना दीदिहीह ।
 तं त्वा वयं जातवेदुः समिद्धं प्रजावन्त उप सदेम सर्वे ४

॥८३॥ (अथर्व० ७।७६।१-६)

अथर्वा । १, २ अपचिद्धैपज्यं, ३-६ जायान्यः, इन्द्रः, (गण्डमालाचिकित्सा) । अनुष्टुप्, १ विराट्,
 २ परोष्णिक्, ४ त्रिष्टुप्, ५ भुगिगुष्टुप् ।

आ सुस्रसः सुस्रसो असतीभ्यो असत्तराः । सेहोररसतरा लवणाद् विक्लेदीयसीः १
 या ग्रैव्या अपचितोऽथो या उपपक्ष्याः । विजाम्नि या अपचितः स्वयंस्रसः २
 यः कीकसाः प्रशृणाति तलीधमिवतिष्ठति । निर्हास्तं सर्वं जायान्यं यः कश्चं ककुदिं श्रितः ३
 पक्षी जायान्यः पतति स आ विशति पूरुषम् । तदक्षितस्य भेषजमुभयोः सुक्षतस्य च ४ ५१०
 विश्व वै ते जायान्य जानं यतो जायान्य जायसे । कथं ह तत्र त्वंहनो यस्य कृष्णो हविर्गृहे
 धृषत् पिब कलशे सोममिन्द्र वृत्रहा शूर समरे वस्त्रनाम् ।
 माध्यन्दिने सर्वान् आ वृषस्व रयिष्ठानो रयिमस्मासु धेहि ६

॥८४॥ (अथर्व० ६।८३।१-४)

भगः । १ सूर्यः चन्द्रमाः, २ रोहिणी, ३ रामायणी (भैषज्यम्) । अनुष्टुप्, ४ एकावसाना
 छिपदा निचृदार्यनुष्टुप् ।

अपचितः प्र पतत सुपर्णो वसतेरिव । सूर्यः कृणोतु भेषजं चन्द्रमा वोऽपौच्छतु १
 अन्येका इयेन्येका कृष्णैका रोहिणी द्वे । सर्वासामग्रभं नामावीरघ्नीरपेतन २
 असूतिका रामायण्यपचित् प्र पतिष्यति ।
 ग्लौरितः प्र पतिष्यति स गलुन्तो नशिष्यति ३ ५१५
 बीहि स्वामाहुतिं जुषाणो मनसा स्वाहा मनसा यदिदं जुहोमि ४

॥८५॥ (अथर्व० १।२३।१-४)

अथर्वा । घनस्पतिः [असिक्लिः] (श्वेतकुष्ठनाशनम्) । अनुष्टुप् ।

नक्तंजातास्योषधे रामे कृष्णे असिक्विन च ।
 इदं रजनि रजय किलासं पलितं च यत् १
 किलासं च पलितं च निरितो नाशया पृषत् ।
 आ त्वा स्वो विशतां वर्णः परां शुक्लानि पातय २
 असितं ते प्रलयेनमास्थानममितं तव । असिक्न्यस्योषधे निरितो नाशया पृषत् ३ ५१९

अस्थिजस्य किलासस्य तनूजस्य च यत् त्वचि ।

दूष्या कृतस्य ब्रह्मणा लक्ष्मं श्वेतमनीनशम्

४ ५२०

॥८६॥ (अथर्व० १।२४।१-४)

ब्रह्मा । आसुरी वनस्पतिः (श्वेतकुष्ठनाशनम्) । अनुष्टुप्, २ निवृत्त्यपहृतिः ।

सुपर्णो जातः प्रथमस्तस्य त्वं पित्तमासिथ ।

तदासुरी युधा जिता रूपं चक्रे वनस्पतीन्

१

आसुरी चक्रे प्रथमेदं किलासभेषजमिदं किलासनाशनम् ।

अनीनशत् किलासं सरूपामकरत् त्वचम्

२

सरूपा नाम ते माता सरूपो नाम ते पिता ।

सरूपकृत् त्वमोषधे सा सरूपमिदं कृधि

३

इयामा सरूपंकरणी पृथिव्या अयुद्धता । इदम् पु प्र साधय पुना रूपानि कल्पय ४

॥८७॥ (अथर्व० १।२५।१-४)

भृग्वक्त्रिः । यक्षमनाशनोऽग्निः (ज्वर-नाशनम्) । त्रिष्टुप्, २-३ विराड्गर्भा, ४ पुरोऽनुष्टुप् ।

यदग्निरापो अदहत् प्रविश्य यत्राकृण्वन् धर्मधृतो नमांसि ।

तत्र त आहुः परमं जनित्रं स नः संविद्वान् परि वृद्धिं तक्मन्

१

५२५

यद्यर्चिर्यदि वासि शोचिः शकल्येषि यदि वा ते जनित्रम् ।

हूडुर्नामांसि हरितस्य देव स नः संविद्वान् परि वृद्धिं तक्मन्

२

यदि शोको यदि वाभिः शोको यदि वा राज्ञो वरुणस्यासि पुत्रः ।

हूडुर्नामांसि हरितस्य देव स नः संविद्वान् परि वृद्धिं तक्मन्

३

नमः शीताय तक्मने नमो रूराय शोचिषे कृणोमि ।

यो अन्येद्युरुभयद्युरभ्येति तृतीयकाय नमो अस्तु तक्मने

४

॥८८॥ (अथर्व० ७।११६।१-२)

अथर्वान्निगिराः । चन्द्रमाः (ज्वर-नाशनम्) । १ पुरोऽणिक, २ एकावसाना द्विपदा आर्च्यनुष्टुप् ।

नमो रूराय च्यवनाय नोदनाय धृणवे । नमः शीताय पूर्वकामकृत्वे

१

या अन्येद्युरुभयद्युरभ्येतीमं मण्डूकमभ्येति त्वत्रतः

२

॥८९॥ (अथर्व० ५।२२।१-१४)

भृग्वक्त्रिः । तक्मनाशनः । अनुष्टुप्, १ भुरिक् त्रिष्टुप्, २ त्रिष्टुप्, ५ विराट् पथ्यावृहती ।

अग्निस्तक्मानमप बाधतामितः सोमो ग्रावा वरुणः पूतदक्षाः ।

वेदिर्बहिः समिधः शोशुचाना अप द्वेषास्यमुया भवन्तु

१

५३१

अयं यो विश्वान् हरितान् कृणोष्युच्छोचयन्नग्निरिवाभिदुन्वन् ।

अथा हि तक्मन्नरसो हि भूया अधा न्यङ्कुधराड् वा परेहि २

यः परुषः पारुषेयोऽवध्वंस इवारुणः । तक्मानं विश्वधावीर्याधराश्वं परां सुव ३

अधराश्वं प्र हिणोमि नमः कृत्वा तक्मने । शक्रम्भरस्य मुष्टिहा पुनरेतु महावृषान् ४

ओको अस्य मूर्जवन्त ओको अस्य महावृषाः ।

यावज्जातस्तक्मंस्तावानसि बल्लिकेषु न्योचरः ५ ५३५

तक्मन् व्यालि वि गदु व्यङ्ग भूरि यावय ।

दासीं निष्टकरीमिच्छ तां वज्रैण समर्पय ६

तक्मन् मूर्जवतो गच्छ बल्लिकान् वा परस्तराम् ।

शूद्रामिच्छ प्रफर्व्य तां तक्मन् वीवि धूनुहि ७

महावृषान् मूर्जवतो बन्ध्वद्वि परेत्य । प्रैतानि तक्मने ब्रूमो अन्यक्षेत्राणि वा इमा ८

अन्यक्षेत्रे न रमसे वशी सन्मृडयासि नः ।

अभूदु प्रार्थेस्तक्मा स गमिष्यति बल्लिकान् ९

यत् त्वं शीतोऽथो रुरः सह कासावैषयः ।

भीमास्ते तक्मन् हेतयस्ताभिः स्म परि वृङ्गि नः १० ५४०

मा स्मैतान्तसखीन् कुरुथा बलासं कासमुद्युगम् ।

मा स्मातोऽर्वाडैः पुनस्तत् त्वा तक्मन्नुप ब्रुवे ११

तक्मन् भ्रात्रा बलासेन स्वस्रा कार्सिकया सह ।

पाप्मा भ्रातृव्येण सह गच्छामुमरणं जनम् १२

तृतीयकं वितृतीयं सदुन्दिमुत शरदम् ।

तक्मानं शीतं रुरं ग्रैष्मं नाशय वार्षिकम् १३

गन्धारिभ्यो मूर्जवद्भयोऽङ्गेभ्यो मृगधेभ्यः ।

ग्रैष्यन् जनमिव शेवधिं तक्मानं परि दन्नसि १४

॥९०॥ (ऋ० १।५०।११-१३)

प्रस्कण्वः काण्वः । सूर्यः (रोगघ्न्य उपनिषदः, १३ अन्त्योऽर्धर्चः द्विषद्ग्नश्च) । अनुष्टुप् ।

उद्यन्नद्य मित्रमह आरोहन्नुत्तरां दिवंम् । हद्रोगं मम सूर्य हरिमाणं च नाशय ११ ५४५

शुकैषु मे हरिमाणं रोपणाकासु दध्मसि । अथो हारिद्रवेषु मे हरिमाणं निदध्मसि १२

उदंगादयमादित्यो विश्वेन सहसा सह । द्विषन्तं मह्यं रन्धयन् मो अहं द्विषते रधम् १३ ५४७

॥९१॥ (अथर्व० ४।१३।१-७)

शन्तातिः । चन्द्रमाः, विश्वे देवाः, १ देवाः, २-३ वातः, ४ मरुतः, ६-७ हस्तः, (रोगनिवारणम्) । अनुष्टुप् ।

उत देवा अवहितं देवा उन्नयथा पुनः । उतागश्चक्रुषं देवा देवा जीवयथा पुनः १

द्राविमौ वातौ वात आ सिन्धोरा परावतः ।

दक्षं ते अन्य आवातु व्य१न्यो वातु यद् रपः २

आ वात वाहि भेषजं वि वात वाहि यद् रपः ।

त्वं हि विश्वभेषज देवानां दूत ईर्यसे ३ ५१०

त्रायन्तामिमं देवास्त्रायन्तां मरुतां गणाः । त्रायन्तां विश्वा भूतानि यथायमरपा असत् ४

आ त्वागमुं शन्तातिभिरथो अरिष्टतातिभिः ।

दक्षं त उग्रमाभारिषं परा यक्षमं सुवामि ते ५

अयं मे हस्तो भगवानयं मे भगवत्तरः । अयं मे विश्वभेषजोऽयं शिवाभिमर्शनः ६

हस्ताभ्यां दर्शशाखाभ्यां जिह्वा वाचः पुरोगवी ।

अनामयिल्लभ्यां हस्ताभ्यां ताभ्यां त्वाभि मृशामसि ७

॥९२॥ (अथर्व० १।१७।१-४)

ब्रह्मा । योषितः धमन्यश्च (रुधिरस्त्रावनिवृत्तये धमनीबन्धनम्) । अनुष्टुप्, १ भुरिगनुष्टुप्,
४ त्रिपदार्षी गायत्री ।

अमूर्या यन्ति योषितो हिरा लोहितवाससः ।

अभ्रातर इव जामयस्तिष्ठन्तु इतर्वर्चसः १ ५११

तिष्ठानिरे तिष्ठ पर उत त्वं तिष्ठ मध्यमे ।

कनिष्ठिका च तिष्ठति तिष्ठादिद्धमनिर्मही २

शतस्य धमनीनां सहस्रस्य हिराणाम् । अस्थुरिन्मध्यमा इमाः साकमन्ता अरंसत ३

परि वः सिकतावती धनूर्बृहत्यक्रिमीत् । तिष्ठतेलयता सु कम् ४

॥९३॥ (अथर्व० ६।४४।१-३)

विश्वामित्रः । वनस्पतिः (रोगनाशनम्) । अनुष्टुप्, ३ त्रिपदा महाबृहती ।

अस्थाद् द्यौरस्थात् पृथिव्यस्थाद् विश्वमिदं जगत् ।

अस्थुर्वृक्षा ऊर्ध्वस्वप्नास्तिष्ठाद् रोगो अयं तव १

शतं या भेषजानि ते सहस्रं संगतानि च । श्रेष्ठमास्त्रावभेषजं वसिष्ठं रोगनाशनम् २

रुद्रस्य मूत्रमस्यमृतस्य नाभिः ।

विषाणका नाम वा असि पितृणां मूलादुत्थिता वातीकृतनाशनी ३ ५६१

दै० । आयुर्वेद० । ६

॥९४॥ (अथर्व० ६।५२।१-३)

भागलिः । १ सूर्यः, २ गाघः, ३ भेषजम् । अनुष्टुप् ।

उत् सूर्यो दिव एति पुरो रक्षांसि निजूर्ध्वम् । आदित्यः पर्वतेभ्यो विश्वदृष्टो अदृष्टहा १
 नि गावो गोष्ठे असदुन् नि मृगासो अविक्षत । न्यूक्ष्मयो नदीनां न्युदृष्टा अलिप्तत २
 आयुर्ददं विपश्चितं श्रुतां कण्वस्य वीरुधम् । आभारिषं विश्वभेषजीमस्यादृष्टान् नि शमयत् ३

॥९५॥ (अथर्व० २।३।१-६)

आङ्गिराः । भेषज्यं, आयुः, धन्वन्तरिः, (आस्त्रावस्य भेषजम्) । अनुष्टुप्, ६ त्रिपदा
 स्वराडुपरिष्ठान्महावृहती ।

अदो यदवधावत्यवत्कमधि पर्वतात् ।

तत् ते कृणोमि भेषजं सुभेषजं यथासंसि

१ ५६५

आदुङ्गा कुविदुङ्गा शतं या भेषजानि ते ।

तेषामसि त्वमुत्तममनास्त्रावमरोगणम्

२

नीचैः खनन्त्यसुरा अरुस्त्राणमिदं महत् ।

तदास्त्रावस्य भेषजं तदु रोगमनीनशत्

३

उपजीका उद् भरन्ति समुद्रादधि भेषजम् ।

तदास्त्रावस्य भेषजं तदु रोगमशीशमत्

४

अरुस्त्राणमिदं महत् पृथिव्या अध्युद्धृतम् ।

तदास्त्रावस्य भेषजं तदु रोगमनीनशत्

५

शं नो भवन्त्वप ओषधयः शिवाः ।

इन्द्रस्य वज्रो अप हन्तु रक्षसं आराद् विसृष्टा इषवः पतन्तु रक्षसाम्

६ ५७०

॥९६॥ (अथर्व० १।३।१-९)

अथर्वा । १ पर्जन्यः, २ मित्रः, ३ वरुणः, ४ चन्द्रः, ५ सूर्यः, (मूत्रमोचनम्) । अनुष्टुप्,
 १-५ पथ्यापङ्क्तिः ।

विद्या शरस्य पितरं पर्जन्यं शतवृण्यम् ।

तेना ते तन्वेक्षुं शं करं पृथिव्यां ते निषेचनं बहिष्टे अस्तु बालिति

१

विद्या शरस्य पितरं मित्रं शतवृण्यम् ।

तेना ते तन्वेक्षुं शं करं पृथिव्यां ते निषेचनं बहिष्टे अस्तु बालिति

२

विद्या शरस्य पितरं वरुणं शतवृण्यम् ।

तेना ते तन्वेक्षुं शं करं पृथिव्यां ते निषेचनं बहिष्टे अस्तु बालिति

३ ५७३

विद्या शरस्य पितरं चन्द्रं शतवृण्यम् ।

तेना ते तन्वे३ शं करं पृथिव्यां ते निषेचनं बहिष्टे अस्तु बालिति ४

विद्या शरस्य पितरं सूर्यं शतवृण्यम् ।

तेना ते तन्वे३ शं करं पृथिव्यां ते निषेचनं बहिष्टे अस्तु बालिति ५ ५७५

यदान्त्रेषु गवीन्योर्यद्वस्तावधिसंश्रुतम् । एवा ते मूत्रं मुच्यतां बहिर्बालिति सर्वकम् ६

प्र ते भिनन्नि मेहनं वत्र वेशन्त्या इव ।

एवा ते मूत्रं मुच्यतां बहिर्बालिति सर्वकम् ७

विषितं ते वस्तिबिलं समुद्रस्योदधेरिव ।

एवा ते मूत्रं मुच्यतां बहिर्बालिति सर्वकम् ८

यथेषुका परापतदवसृष्टाधि धन्वनः ।

एवा ते मूत्रं मुच्यतां बहिर्बालिति सर्वकम् ९

॥९७॥ (अथर्व० ४।९।१-१०)

भृगुः । त्रैकाकुदाञ्जनम् । अनुष्टुप्, २ ककुम्मती, ३ पथ्यापङ्क्तिः ।

एहि जीवं त्रायमाणं पर्वतस्यास्यक्ष्यम् । विश्वेभिर्देवैर्दत्तं परिधिर्जीवनाय कम् १ ५८०

परिपाणं पुरुषाणां परिपाणं गवामसि । अश्वानामर्वतां परिपाणाय तस्थिषे २

उतासि परिपाणं यातुजम्भेनमाञ्जन ।

उतामृतस्य त्वं वेत्थाथो असि जीवभोजनमथो हरितभेषजम् ३

यस्याञ्जनं प्रसर्पस्यङ्गमङ्गं परुषपरुः । ततो यक्ष्मं वि बाधस उग्रो मध्यमशीरिव ४

नैनं प्रामोति शपथो न कृत्या नाभिशोचनम् ।

नैनं विष्कन्धमश्रुते यस्त्वा बिभर्त्याञ्जन ५

असन्मन्त्राद् दुष्वप्याद् दुष्कृताच्छर्मलादुत ।

दुर्हार्दश्चक्षुषो घोरात् तस्मान्नः पाह्याञ्जन ६ ५८५

इदं विद्वानाञ्जन सत्यं वक्ष्यामि नानृतम् । सुनेयमश्वं गामहमात्मानं तव पूरुष ७

त्रयो दासा आञ्जनस्य त्वमा बलास आदहिः ।

वर्षिष्ठः पर्वतानां त्रिकुक्षाम ते पिता ८

यदाञ्जनं त्रैककुदं जातं हिमवतस्परि । यातृंश्च सर्वाञ्जम्भयत् सर्वाश्च यातुधान्यः ९

यदि वासि त्रैककुदं यदि यामुनमुच्यसे ।

उमे ते भद्रे नाम्नी ताम्या नः पाह्याञ्जन १० ५८९

॥९८॥ (अथर्व० ७।३०।१)

भृग्वङ्गिराः । द्यावापृथिवी, मित्रः, ब्रह्मणस्पतिः, सविता च (अञ्जनम्) । बृहती ।

स्वाक्तं मे द्यावापृथिवी स्वाक्तं मित्रो अंकरयम् ।

स्वाक्तं मे ब्रह्मणस्पतिः स्वाक्तं सविता करतु

१ ५९०

॥९९॥ (अथर्व० ७।३६।१)

१ अथर्वा । आक्षि, मनः (अञ्जनम्) । अनुष्टुप् ।

अक्षयौ नौ गधुसंकाशे अनीकं नौ समञ्जनम् ।

अन्तः कृणुष्व मां हृदि मन इन्नौ सहासति

१

॥१००॥ (अथर्व० १९।४५।१-१०)

भृगुः । आञ्जनम्, मन्त्रोक्तदेवताः । १-२ अनुष्टुप्; ३, ५ त्रिष्टुप्; ६-१० एकावसाना महाबृहती (६ विगाट्, ७-१० निचृत्) ।

ऋणाट्टणमिव संनयन् कृत्यां कृत्याकृतो गृहम् ।

चक्षुर्मन्त्रस्य दुर्हर्दिः पृष्टीरपि शृणाञ्जन

१

यदस्मासु दुष्वप्यं यद् गोषु यच्च नो गृहे ।

अनामगस्तं च दुर्हर्दिः प्रियः प्रति मुञ्चताम्

२

अपामूर्ज ओजसो वावृधानमग्नेर्जातमधि जातवेदसः ।

चतुर्वारं पर्वतीयं यदाञ्जनं दिशः प्रदिशः करदिच्छिवास्ते

३

चतुर्वारं बध्यत आञ्जनं ते सर्वा दिशो अभयास्ते भवन्तु ।

ध्रुवस्तिष्ठासि सवितेव चार्य इमा विशो अभि हरन्तु ते बलिम्

४ ५९५

आक्ष्वैकं मणिमेकं कृणुष्व स्नाह्येकेना पिबैकमेषाम् ।

चतुर्वारं नैर्ऋतेभ्यश्चतुर्भ्यो ग्राह्या बन्धेभ्यः परि पात्वस्मान्

५

अग्निर्माग्निनावतु प्राणायानायायुषे वर्चस ओजसे तेजसे स्वस्तये सुभूतये स्वाहा

६

इन्द्रो मेन्द्रियेणावतु प्राणायानायायुषे वर्चस ओजसे तेजसे स्वस्तये सुभूतये स्वाहा

७

सोमो मा सौम्येनावतु प्राणायानायायुषे वर्चस ओजसे तेजसे स्वस्तये सुभूतये स्वाहा

८

भगो मा भगेनावतु प्राणायानायायुषे वर्चस ओजसे तेजसे स्वस्तये सुभूतये स्वाहा

९

मरुतो मा गणैरवन्तु प्राणायानायायुषे वर्चस ओजसे तेजसे स्वस्तये सुभूतये स्वाहा १०

६००

॥१०१॥ (अथर्व० १९।४४।१-१०)

भृगुः । आञ्जनम्, ८-९ वरुणः (भेषज्यम्) । अनुष्टुप्; ४ चतुष्पदा शंकुमती उष्णिक्; ५ निचृष्टिषमा त्रिपदा गायत्री ।

आयुषोऽसि प्रतरणं विप्रं भेषजमुच्यते । तदाञ्जनं त्वं शैताते शमापो अभयं कृतम् १ ६०१

| | |
|---|-------|
| यो हरिमा जायान्योऽङ्गभेदो विसर्पकः । सर्वे ते यक्षमङ्गभ्यो बहिर्निर्हन्त्वाञ्जनम् | २ |
| आञ्जनं पृथिव्यां जातं भद्रं पुरुषजीवनम् । कृणोत्वग्रमायुकं रथजूतिमनागसम् | ३ |
| प्राणं प्राणं त्रायस्वासो असेवे मृड । निर्ऋते निर्ऋत्या नः पार्श्वेभ्यो मुञ्च | ४ ६०५ |
| सिन्धोर्गर्भोऽसि विद्युतां पुष्पम् । वार्तः प्राणः सूर्यश्चक्षुर्दिवस्पयः | ५ |
| देवाञ्जनं त्रैकुदं परि मा पाहि विश्वतः । न त्वा तरन्त्योषधयो बाह्याः पर्वतीया उत | ६ |
| वीडुदं मध्यमवासृषद् रक्षोहामीवचातनः । अमीवाः सर्वाश्चातयन् नाशयदभिभा इतः | ७ |
| बह्वीडुदं राजन् वरुणानृतमाह पूरुषः । तस्मात् सहस्रवीर्यं मुञ्च नः पर्यहसः | ८ |
| यदापो अघ्न्या इति वरुणेति यदूचिम । तस्मात् सहस्रवीर्यं मुञ्च नः पर्यहसः | ९ ६१० |
| मित्रश्च त्वा वरुणश्चानुप्रेयतुराञ्जन । तौ त्वानुगत्य दूरं भोगाय पुनरोहतुः | १० |

॥१०२॥ (वा० य० ४।३)

(अञ्जनम् ।)

वृत्रस्यासि कनीनकश्चक्षुर्दा ऽ असि चक्षुर्मे देहि ३

॥१०३॥ (अथर्व० ४।५।१-७)

ब्रह्मा । स्वापनं, वृषभः । अनुष्टुप्, २ भुरिक, ७ पुरस्ताज्ज्योतिस्त्रिष्टुप् ।

| | |
|--|-------|
| सहस्रशृङ्गो वृषभो यः समुद्रादुदाचरत् । | |
| तेना सहस्येना वयं नि जनान्त्स्वापयामसि | १ |
| न भूमिं वातो अतिं वाति नातिं पश्यति कश्चन । | |
| स्त्रियश्च सर्वाः स्वापय शुनश्चेन्द्रसखा चरन् | २ |
| ग्रोष्ठेशयास्तल्पेशया नारीर्या बह्यशीवरीः । | |
| स्त्रियो याः पुण्यगन्धयस्ताः सर्वाः स्वापयामसि | ३ ६१५ |
| एजदेजदजग्रभं चक्षुः प्राणमजग्रभम् । अङ्गान्यजग्रभं सर्वा रात्रीणामतिशर्वरे | ४ |
| य आस्ते यश्चरति यश्च तिष्ठन् विपश्यति । | |
| तेषां सं दध्मो अक्षीणि यथेदं हर्म्य तथा | ५ |
| स्वमु माता स्वमु पिता स्वमु श्वा स्वमु विशपतिः । | |
| स्वपन्त्वस्यै जातयः स्वप्त्वयमभितो जनः | ६ |
| स्वप्नं स्वप्नाभिकरणेन सर्वं नि प्वापया जनम् । | |
| ओत्सूर्यमन्यान्त्स्वापयाव्युषं जागृतादुहमिन्द्र इवारिष्टो अक्षितः | ७ ६१९ |

॥१०४॥ (अथर्व० ६।९०।१-३)

अथर्वा । रुद्रः (इषुनिष्कासनम्) । अनुष्टुप्, ३ आर्षां भुरिगुणिक् ।

यां ते रुद्र इषुमास्यदङ्गैभ्यो हृदयाय च । इदं तामद्य त्वद्वयं धिषूचीं विवृहामसि १ ६२०
 यास्ते शतं धमनयोऽङ्गान्यनु विष्टिताः । तासां ते सर्वासां वयं निर्विषाणि ह्वयामसि २
 नमस्ते रुद्रास्यते नमः प्रतिहितायै । नमो विसृज्यमानायै नमो निपतितायै ३

॥१०५॥ (ऋ० १।१२०।१२)

कक्षीवान् दैर्घतमस औशिजः । अश्विनौ (दुःष्वप्प्रनाशनम्) । गायत्री ।

अध स्वप्नस्य निर्विदे ऽभुञ्जतश्च रेवतः । उभा ता वसिं नश्यतः १२

॥१०६॥ (ऋ० २।२८।१०)

कर्मो गात्समदो गृत्समदो वा । वरुणः (दुःष्वप्प्रनाशिनी) । त्रिष्टुप् ।

यो मे राजन् युज्यो वा सखा वा स्वप्ने भयं भीरवे मह्यमाह ।
 स्तेनो वा यो दिप्सति नो वृको वा त्वं तस्माद् वरुण पाह्यस्मान् १०

॥१०७॥ (ऋ० १०।१६४।१-५)

प्रचेता आङ्गिरसः । दुःष्वप्प्रनाशनम् । अनुष्टुप्, ३ त्रिष्टुप्, ५ पङ्क्तिः ।

अपेहि मनसस्पते ऽपं काम पुरश्चर ।

पुरो निर्ऋत्या आ चक्ष्व बहुधा जीवतो मनः

× १ ६२५

भद्रं वै वरं वृणते भद्रं युञ्जन्ति दक्षिणम् ।

भद्रं वैवस्वते चक्षुर्वहुत्रा जीवतो मनः

२

यदाशसा निःशसाभिशसा पारिम जाग्रतो यत् स्वपन्तः ।

अग्निर्विश्वान्यप दुकृता न्यजुष्टान्यार अस्मद् दधातु

३

यदिन्द्र ब्रह्मणस्पते ऽभिद्रोहं चरामसि ।

प्रचेता न आङ्गिरसो द्विपतां पात्वंहसः

४

अजैष्माद्यासनाम् चाऽभूमानागसो वयम् ।

जाग्रत्स्वप्नः संकल्पः पापो यं द्विष्मस्तं स क्रच्छतु यो नो द्वेष्टि तमृच्छतु ५

॥१०८॥ (अथर्व० ६।४५।१-३)

अङ्गिराः प्रचेता यमश्च । दुःष्वप्प्रनाशनम् । १ पथ्यापङ्क्तिः, २ भुरिक् त्रिष्टुप्, ३ अनुष्टुप् ।

पुरोऽपेहि मनस्पाप् किमशस्तानि शंससि ।

परेहि न त्वा कामये वृक्षा वनानि सं चर गृहेषु गोषु मे मनः

१ ६३०

अवशसा निःशसा यत् पराशसोपारिम जाग्रतो यत् स्वपन्तः ।

अग्निर्विश्वान्यप दुष्कृतान्यजुष्टान्यारे असद् दधातु २

यदिन्द्र ब्रह्मणस्पतेऽपि मृषा चरामसि । प्रचेता न आङ्गिरसो दुरितात् पात्वद्दंसः ३

॥१०९॥ (अथर्व० ६।४६।१-३)

अङ्गिराः प्रचेता यमश्च । दुःष्वप्ननाशनम् । १ विष्टारपङ्क्तिः, २ त्र्यवसाना शक्नोतीति पञ्चपदा जगती, ३ अनुष्टुप् ।

यो न जीवोऽसि न मृतो देवानाममृतगर्भोऽसि स्वप्न ।

वरुणानी ते माता यमः पितारुरुर्नामासि १

विद्म ते स्वप्न जनित्रं देवजामीनां पुत्रोऽसि यमस्य करणः ।

अन्तकोऽसि मृत्युरसि ।

तं त्वा स्वप्न तथा सं विद्म स नः स्वप्न दुष्पन्त्यात् पाहि २

यथा कलां यथा शफं यथर्णं संनयन्ति । एवा दुष्पन्त्यं सर्वं द्विपते सं नयामसि ३ ६३५

॥११०॥ (अथर्व० ७।१००।१)

यमः । दुःष्वप्ननाशनम् । अनुष्टुप् ।

पर्यावर्ते दुष्पन्त्यात् पापात् स्वपन्त्यादभूत्याः ।

ब्रह्माहमन्तरं कृण्वे परा स्वप्नमुखाः शुचः १

॥१११॥ (अथर्व० ७।१०१।१)

यमः । दुःष्वप्ननाशनम् । अनुष्टुप् ।

यत् स्वप्ने अन्नमश्रामि न प्रातरधिगम्यते ।

सर्वं तदस्तु मे शिवं नहि तद् दृश्यते दिवा १

॥११२॥ (अथर्व० ७।११।१)

शान्तातिः । सुखम् । पथ्यापङ्क्तिः ।

शं नो वातो वातु शं नस्तपतु सूर्यः ।

अहानि शं भवन्तु नः शं रात्री प्रति धीयतां शुमुषा नो व्युच्छितु १

॥११३॥ (अथर्व० ६।४३।१-३)

भृगवङ्गिराः (परस्परचित्तैकीकरणकामः) । मन्युशमनम् । अनुष्टुप् ।

अयं दुर्भो विमन्युकः स्वाय चारणाय च । मन्योर्विमन्युकस्यायं मन्युशमन उच्यते १

अयं यो भूरिमूलः समुद्रमवतिष्ठति । दुर्भः पृथिव्या उत्थितो मन्युशमन उच्यते २

वि ते हनव्यां शरणि वि ते मुख्यां नयामसि ।

यथावशो न वार्दिषो मम चित्तमुपायसि ३ ६४१

॥११४॥ (अथर्व० ५।१६।१-११)

त्रिध्वामित्रः । एकवृषः (वृषरोगशमनम्) । एकावसानं द्वैपदम् : १,४,५,७-१० सास्त्री उष्णिक् ;
२,३,६, आसुरी अनुष्टुप् : ११ आसुरी गायत्री ।

| | | |
|------------------------------|---------------------------------|-----|
| यद्येकवृषोऽसिं सृजार्सोऽसि | १ यदि द्विवृषोऽसिं सृजार्सोऽसि | २ |
| यदि त्रिवृषोऽसिं सृजार्सोऽसि | ३ यदि चतुर्वृषोऽसिं सृजार्सोऽसि | ४ |
| यदि पञ्चवृषोऽसिं सृजार्सोऽसि | ५ यदि षड्वृषोऽसिं सृजार्सोऽसि | ६ |
| यदि सप्तवृषोऽसिं सृजार्सोऽसि | ७ यद्यष्टवृषोऽसिं सृजार्सोऽसि | ८ |
| यदि नववृषोऽसिं सृजार्सोऽसि | ९ यदि दशवृषोऽसिं सृजार्सोऽसि | १० |
| यद्येकादशोऽसिं सोऽपोदकोऽसि | ११ | ६५२ |

॥११५॥ (अथर्व० ५।१५।१-११)

विध्वामित्रः । मधुला वनस्पतिः (रोगोपशमनम्) । अनुष्टुप्, ४ पुरस्ताद्वृहती, ५, ७-९ भुरिक् ।

एका च मे दश च मेऽपवृत्तार् ओषधे । ऋतं जातं ऋतावरि मधु मे मधुला करः १
द्वे च मे विंशतिश्च मेऽपवृत्तार् ओषधे । ऋतं जातं ऋतावरि मधु मे मधुला करः २
तिस्रश्च मे त्रिंशच्च मेऽपवृत्तार् ओषधे । ऋतं जातं ऋतावरि मधु मे मधुला करः ३
चतस्रश्च मे चत्वारिंशच्च मेऽपवृत्तार् ओषधे ।

ऋतं जातं ऋतावरि मधु मे मधुला करः ४

पञ्च च मे पञ्चाशच्च मेऽपवृत्तार् ओषधे ।

ऋतं जातं ऋतावरि मधु मे मधुला करः ५

षट् च मे षष्टिश्च मेऽपवृत्तार् ओषधे । ऋतं जातं ऋतावरि मधु मे मधुला करः ६

सप्त च मे सप्ततिश्च मेऽपवृत्तार् ओषधे । ऋतं जातं ऋतावरि मधु मे मधुला करः ७

अष्ट च मेऽशीतिश्च मेऽपवृत्तार् ओषधे । ऋतं जातं ऋतावरि मधु मे मधुला करः ८

नव च मे नवतिश्च मेऽपवृत्तार् ओषधे । ऋतं जातं ऋतावरि मधु मे मधुला करः ९

दश च मे शतं च मेऽपवृत्तार् ओषधे । ऋतं जातं ऋतावरि मधु मे मधुला करः १०

शतं च मे सहस्रं चापवृत्तार् ओषधे । ऋतं जातं ऋतावरि मधु मे मधुला करः ११

॥११६॥ (अथर्व० १।१।१-४)

अथर्वा । पर्जन्यः, (१,४ पृथिवी, ३ इन्द्रः, [चन्द्रमाश्च]) (रोगोपशमनम्) । अनुष्टुप्, ३ त्रिपदा विराणनाम गायत्री ।

विष्वा शरस्य पितरं पर्जन्यं भूरिधायसम् । विष्वा ष्वस्य मातरं पृथिवीं भूरिर्वपसम् १

ज्याक्वि परिणो नुमाश्मानं तन्वं कृधि । वीडुर्वरीयोऽरातीरप द्वेषांस्या कृधि २

वृक्षं यद् गावः परिष्वजाना अनुस्फुरं शरमर्चन्त्यृधुम् । शरुमस्सद्यावय दिद्युमिन्द्र ३

६६६

यथा द्यां च पृथिवीं चान्तस्तिष्ठति तेजसम् ।

एवा रोगं चास्त्रावं चान्तस्तिष्ठतु मुञ्ज इत्

४

॥११७॥ (अथर्व० २।७।१-५)

अथर्वा । भैषज्यं, आयुः, वनस्पतिः (शापमोचनम्) । अनुष्टुप्, १ भुरिक्, ४ विराडुपरिष्ठाद्बृहती ।

अघद्विष्टा देवजाता वीरुच्छपथयोपनी ।

आपो मलमिव प्राणैक्षीत् सर्वान् मच्छपथाँ अधि

१

यश्च सापत्नः शपथो जाम्याः शपथश्च यः ।

ब्रह्मा यन्मन्युतः शपात् सर्वं तन्नो अधस्पदम्

२

दिवो मूलमवततं पृथिव्या अध्युत्ततम् । तेन सहस्रकाण्डेन परि णः पाहि विश्वतः ३

६७०

परि मां परि मे प्रजां परि णः पाहि यद्वनम् ।

अरातिनो मा तारीन्मा नस्तारिपुरभिमातयः

४

शप्तारमेतु शपथो यः सुहार्त् तेन नः सह । चक्षुर्मन्त्रस्य दुर्हर्दिः पृष्टीरपि शृणीमसि ५

॥११८॥ (अथर्व० २।१८।१-४)

द्रविणोदाः । १ विनायकः, (२ सविता, वरुणः, मित्रः, अर्यमा, देवाः, ३ सविता) (अलक्ष्मीनाशनम्) ।

१ विराडुपरिष्ठाद् बृहती, २ निचृज्जगती, ३ विराडास्तारपङ्क्तिस्त्रिष्टुप्, ४ अनुष्टुप् ।

निलक्ष्म्यं ललाम्यं१ निररातिं सुवामसि ।

अथ या भद्रा तानि नः प्रजाया अरातिं नयामसि

१

निरराणि सविता साविष्क् पदोर्निहस्तयोर्वरुणो मित्रो अर्यमा ।

निरसभ्यमनुमती रराणा प्रेमां देवा असाविषुः सौभगाय

२

यत् त आत्मनि तन्वां घोरमस्ति यद् वा केशेषु प्रतिचक्षणे वा ।

सर्वं तद्वाचार्ष हन्मो वयं देवस्त्वा सविता सृदयतु

३

६७५

रिश्यपदीं वृषदतीं गोपेधां विधमामुत । विलीढ्यं ललाम्यं१ ता असन्नाशयामसि ४

॥११९॥ (अथर्व० ६।१३९।१-५)

अथर्वा । वनस्पतिः (सौभाग्यवर्धनम्) । अनुष्टुप्, १ व्यवसाना पट्पदा विराड् जगती ।

न्यस्तिका रुरोहिथ सुभगंकरणी मम । शतं त्वं प्रतानास्त्रयस्त्रिंशन्नितानाः ।

तया सहस्रपण्या हृदयं शोषयामि ते

१

शुष्यंतु मयि ते हृदयमथो शुष्यत्वास्यम् । अथो नि शुष्य मां कामेनाथो शुष्कास्या चर २

संवर्ननी सङ्घण्डला बभ्रु कल्याणि सं नुद । अमूं च मां च सं नुद समानं हृदयं कृधि ३

६७९

दै० [आयुर्वेद०] ७

यथोदकमपंपुषोऽपशुष्यत्यास्यमि । एवा नि शुष्य मां कामेनाथो शुष्कास्या चर ४ ६८०
यथा नकुलो विच्छिद्य संदधात्यहिं पुनः । एवा कामस्य विच्छिन्नं सं धेहि वीर्यावति ५

॥१२०॥ (अथर्व० ६।१८।१-३)

अथर्वा । ईर्ष्याविनाशनम् । अनुष्टुप् ।

ईर्ष्याया ध्राजिं प्रथमां प्रथमस्या उतापराम् । अग्निं हृदय्यं शोकं तं ते निर्वपयामसि १
यथा भूमिर्मृतमना मृतान्मृतमनस्तरा । यथोत मम्रुषो मन एवेर्ष्योर्मृतं मनः २
अदो यत् ते हृदि श्रितं मनस्कं पतयिष्णुकम् ।
ततस्त ईर्ष्या मुञ्चामि निरूष्माणं दत्तेरिव ३

॥१२१॥ (अथर्व० ७।४५।१-२)

प्रस्कण्वः, २ अथर्वा । ईर्ष्यापनयनं, भेषजम् । अनुष्टुप् ।

जनाद् विश्वजनीनात् सिन्धुतस्पर्शभृतम् । दूरात् त्वा मन्य उद्धृतमीर्ष्याया नाम भेषजम् १ ६८५
अग्नेरिवास्य दहतो दावस्य दहतः पृथक् । एतामेतस्येर्ष्यामुद्राग्निमिव शमय २

॥१२२॥ (अथर्व० ६।१११।१-४)

अथर्वा । अग्निः (उन्मत्ततामोचनम्) । अनुष्टुप्, १ परानुष्टुप् त्रिष्टुप् ।

इमं मे अग्ने पुरुषं मुमुग्ध्ययं यो बद्धः सुयतो लालपीति ।
अतोऽधि ते कृणवद् भागधेयं यदानुन्मदितोऽसति १
अग्निष्टे नि शमयतु यदि ते मन उद्युतम् । कृणोमि विद्वान् भेषजं यथानुन्मदितोऽसति २
देवैन्सादुन्मदितमुन्मत्तं रक्षसस्परि । कृणोमि विद्वान् भेषजं यदानुन्मदितोऽसति ३
पुनस्त्वा दुरप्सरसः पुनरिन्द्रः पुनर्भगः । पुनस्त्वा दुर्विश्वे देवा यथानुन्मदितोऽसति ४ ६९०

क्रिमिनाशनम् । (६९१-७७३)

॥१२३॥ (अथर्व० २।३१।१-५)

काण्वः । मही, चन्द्रमाः (क्रिमिजम्भनम्) । अनुष्टुप्, २, ४ उपरिष्टाद्विराड् बृहती, ३, ५ आर्षी त्रिष्टुप् ।

इन्द्रस्य या मही दृषत् क्रिमेर्विश्वस्य तर्हणी ।
तया पिनष्मि सं क्रिमीन् दृषदा खल्वी इव १
दृष्टमदृष्टमतृहमथो कुरूमतृहम् ।
अलगण्डुन्तसर्वान् ललुनान् क्रिमीन् वचसा जम्भयामसि २
अलगण्डून् हन्मि महता वधेन दूना अदूना अरसा अभूवन् ।
शिष्टानशिष्टान् नि तिरामि वाचा यथा क्रिमीणां नकिरुच्छिषातै ३ ६९३

अन्वान्यं शीर्षण्यमथो पाष्ट्यं क्रिमीन् ।

अवस्कवं व्यध्वरं क्रिमीन् वर्चसा जम्भयामसि

४

ये क्रिमयः पर्वतेषु वनेष्वोषधीषु पशुष्वुत्सवंतः ।

ये असाकं तन्वमाविविशुः सर्वं तद्वन्मि जनिम क्रिमीणाम्

५ ६९५

॥१२४॥ (अथर्व० ५।२३।१-१३)

कण्वः । इन्द्रः (क्रिमिघ्नम्) । अनुष्टुप्, १३ विराट् ।

ओते मे द्यावापृथिवी ओता देवी सरस्वती ।

ओतौ म इन्द्रश्चाग्निश्च क्रिमिं जम्भयतामिति

१

अस्येन्द्रं कुमारस्य क्रिमीन् धनपते जहि । हता विश्वा अरातय उग्रेण वर्चसा मम २
यो अक्ष्यौ परिसर्पति यो नासे परिसर्पति ।

दुतां यो मध्यं गच्छति तं क्रिमिं जम्भयामसि

३

सरूपौ द्वौ विरूपौ द्वौ कृष्णौ द्वौ रोहितौ द्वौ ।

बभ्रुश्च बभ्रुकर्णश्च गृध्रः कोकश्च ते हताः

४

ये क्रिमयः शितिकक्षा ये कृष्णाः शितिवाहवः ।

ये के च विश्वरूपास्तान् क्रिमीन् जम्भयामसि

५ ७००

उत् पुरस्तात् सूर्य एति विश्वदृष्टो अदृष्टहा ।

दृष्टांश्च घ्नन्नदृष्टांश्च सर्वांश्च प्रमुणन् क्रिमीन्

६

येवाषासः कर्कषास एजत्काः शिपविलुकाः ।

दृष्टश्च हन्यतां क्रिमिरुतादृष्टश्च हन्यताम्

७

हतो येवाषः क्रिमीणां हतो नदनिमोत । सर्वान् नि मग्मपाकरं दृषद्वा खल्वौ इव ८

त्रिशीर्षाणं त्रिकुदं क्रिमिं सारङ्गमर्जुनम् । शृणाम्यस्य पृष्टीरपि वृश्चामि यच्छिरः ९

अत्त्रिवद् वः क्रिमयो हन्मि कण्ववज्रमदशिवत् ।

अगस्त्यस्य ब्रह्मणा सं पिनम्यहं क्रिमीन्

१० ७०५

हतो राजा क्रिमीणामुतैषां स्थपतिर्हतः । हतो हतमाता क्रिमिर्हतभ्राता हतस्वसा ११

हतासौ अस्य वेशसो हतासः परिवेशसः ।

अथो ये क्षुल्लका इव सर्वे ते क्रिमयो हताः

१२

सर्वेषां च क्रिमीणां सर्वासां च क्रिमीणाम् ।

भिनश्यश्मना शिरो दहाम्यग्निना मुखम्

१३ ७०६

॥१२५॥ (अथर्व० २।३२।१-६)

काण्वः । आवित्यः (किमिनाशनम्) । अनुष्टुप्, १ त्रिपदा भुरिगायत्री, ६ चतुष्पदा निचृदुष्णिक् ।

उद्यन्नादित्यः क्रिमीन् हन्तु निग्नोचन् हन्तु रश्मिभिः ।

ये अन्तः क्रिमयो गर्वि १

विश्वरूपं चतुरक्षं क्रिमिं सारङ्गमर्जुनम् । शृणाम्यस्य पृष्टीरपि वृश्चामि यच्छिरः २ ७१०

अत्रिवद् वः क्रिमयो हन्मि कण्ववज्रमदशिवत् ।

अगस्त्यस्य ब्रह्मणा सं पिनम्यहं क्रिमीन् ३

हतो राजा क्रिमीणामुतैषां स्थपतिर्हतः । हतो हतमाता क्रिमिर्हतभ्राता हतस्वसा ४

हतासौ अस्य वेशसो हतासुः परिवेशसः ।

अथो ये क्षुल्लका इव सर्वे ते क्रिमयो हताः ५

प्र ते शृणामि शृङ्गे याभ्यां वितुदायसि । भिनन्ति ते कुषुम्भं यस्तं विषधानः ६

॥१२६॥ (अथर्व० ४।३७।१-१२)

वादरायणिः । अजशृङ्गीः १ अप्सरसः १-२, ६, १० औषधी अजशृङ्गीः ३-५ अप्सरसः ७-१२ गन्धर्वाप्सरसः

(किमिनाशनम्) । अनुष्टुप्, ३ व्ययसाना षट्पदा त्रिष्टुप्, ५ प्रस्तरपङ्क्तिः,

७ परोष्णिक्, ११ षट्पदा जगती, १२ निचृत् ।

त्वया पूर्वमथर्वाणो जघ्न रक्षोस्योषधे ।

त्वया जघान कश्यपस्त्वया कण्वो अगस्त्यः १ ७१५

त्वया व्यमप्सरसो गन्धर्वाश्चातयामहे । अजशृङ्गचज रक्षः सर्वान् गन्धेन नाशय २

नदीं यन्त्वप्सरसोऽपां तारमवश्वसम् ।

गुल्गुलूः पीला नलद्यौऽक्षगन्धिः प्रमन्दनी ।

तत् परेताप्सरसः प्रतिबुद्धा अभूतन ३

यत्राश्चत्था न्यग्रोधा महावृक्षाः शिखण्डिनः ।

तत् परेताप्सरसः प्रतिबुद्धा अभूतन ४

यत्र वः प्रेङ्क्षा हरिता अर्जुना उत यत्राघाटाः कर्कर्यः संवदन्ति ।

तत् परेताप्सरसः प्रतिबुद्धा अभूतन ५

एयमगन्धोषधीनां वीरुधां वीर्यावती । अजशृङ्गचराटकी तीक्ष्णशृङ्गी व्यृषितु ६ ७२०

आनृत्यतः शिखण्डिनो गन्धर्वस्याप्सरापतेः । भिनन्ति मुष्कावपि यामि शेषः ७

भीमा इन्द्रस्य हेतयः शतमृष्टीर्यस्ययीः । तामिहविरदान् गन्धर्वानवकादान् व्यृषितु ८ ७२२

भीमा इन्द्रस्य हेतयः शतमृष्टीर्हिरण्ययीः । तार्भिर्हविरदान् गन्धर्वानवकादान् व्यृषितु९

अवकादानभिश्चोचानप्सु ज्योतय मामकान् ।

पिशाचान्तसर्वानोषधे प्र मृणीहि सहस्र च

१०

श्वेवैकः कपिरिवैकः कुमारः सर्वकेशकः ।

प्रियो दृश इव भूत्वा गन्धर्वः संचते स्त्रियस्तमितो नाशयामसि ब्रह्मणा वीर्याविता ११ ७२५

जाया इद् वो अप्सरसो गन्धर्वाः पतयो यूयम् ।

अप धात्रतामर्त्या मर्त्यान् मा संचध्वम्

१२

॥१२७॥ (अथर्व० १।८।१-४)

चातनः । १-२ बृहस्पतिः, अग्नीषोमौ च; ३-४ अग्निः [जातवेदाः] (यातुधाननाशनम्) । १-३ अनुष्टुप्,
४ बार्हतगर्भा त्रिष्टुप् ।

इदं हविर्यातुधानान् नदी फेनमिवा वहत् ।

य इदं स्त्री पुमानकरिह स स्तुवतां जनः

१

अयं स्तुवान् आगमदिमं स्म प्रति हर्यत । बृहस्पते वशं लब्ध्वाग्नीषोमा वि विध्यतम् २

यातुधानस्य सोमप जहि प्रजां नयस्व च । नि स्तुवानस्य पातय परमक्षुतावरम् ३

यत्रैषामग्रे जनिमानि वेत्थ गुहां सतामत्त्रिणां जातवेदः ।

तांस्त्वं ब्रह्मणा वावृधानो जह्येपां शततर्हमग्रे

४ ७३०

॥१२८॥ (अथर्व० ६।३२।१-३)

चातनः; ३ अथर्वा । १ अग्निः, २ रुद्रः, ३ मित्रावरुणौ (यातुधानक्षयणम्) । त्रिष्टुप्,
२ प्रस्तारपङ्क्तिः ।

अन्तर्दावे जुहुता स्वेष्टे तद् यातुधानक्षयणं घृतेन ।

आराद् रक्षांसि प्रति दह त्वमग्रे न नो गृहाणामुप तीतपासि

१

रुद्रो वो ग्रीवा अशरैत् पिशाचाः पृष्टीर्वोऽपि शृणातु यातुधानाः ।

वीरुद् वो विश्वतोवीर्या यमेन समजीगमत

२

अभयं मित्रावरुणाविहास्तु नोऽर्चिषात्त्रिणां नुदतं प्रतीचः ।

मा ज्ञातारं मा प्रतिष्ठां विदन्त मिथो विघ्नाना उप यन्तु मृत्युम्

३

॥१२९॥ (अथर्व० १।२८।१-४)

चातनः । १-२ अग्निः, ३-४ यातुधानीः (रक्षोघ्नम्) । अनुष्टुप्, ३ विराट्पथ्याबृहती, ४ पथ्यापङ्क्तिः ।

उप प्रागाद् देवो अग्नी रक्षोहामीव चातनः ।

दहन्मप इयाविनो यातुधानान् किमीदिनः

१ ७३४

प्रति दह यातुधानान् प्रति देव किमीदिनः ।

प्रतीचीः कृष्णवर्तने सं दह यातुधान्यः ।

२ ७३५

या शशाप शपनेन याघं मूरमादधे । या रसस्य हरणाय जातमारिभे तोकर्मत्तु सा ३

पुत्रमत्तु यातुधानीः स्वसारमुत नृत्यम् ।

अर्धा मिथो विकेश्योऽे वि प्रतां यातुधान्योऽे वि तृहन्तामराय्यः ।

४

॥१३०॥ (अथर्व० ५।२९।१-१५)

चातनः । जातवेदाः, मन्त्रोक्ताः (रक्षोघ्नम्) । त्रिष्टुप्; ३ त्रिपदा विराण्नाम गायत्री; ५ पुरोऽति-
जगती विराड्जगती; १२-१५ अनुष्टुप् (१२ भुक्तिः १४ चतुष्टुपदा परावृहती ककुम्भती ।)

पुरस्ताद् युक्तो वह जातवेदोऽग्ने विद्धि क्रियमाणं यथेदम् ।

त्वं भिषग् भेषजस्यासि कर्ता त्वया गामश्च पुरुषं सनेम

१

तथा तदग्ने कृणु जातवेदो विश्वेभिर्देवैः सह संविदानः ।

यो नो दिदेव यतमो जघासु यथा सो अस्य परिधिष्पताति

२

यथा सो अस्य परिधिष्पताति यथा तदग्ने कृणु जातवेदः ।

विश्वेभिर्देवैः सह संविदानः

३

७४०

अक्ष्योऽे नि विध्य हृदयं नि विध्य जिह्वां नि तृन्धि प्र दतो मृणीहि ।

पिशाचो अस्य यतमो जघासाग्ने यविष्ठ प्रति तं शृणीहि

४

यदस्य हुतं विहृतं यत् पराभृतमात्मनो जग्धं यतमत् पिशाचैः ।

तदग्ने विद्वान् पुनरा भर त्वं शरीरे मांसमसुमेरयामः

५

आमे सुपर्के श्वले विपर्के यो मां पिशाचो अशने दृदम्भ ।

तदात्मना प्रजया पिशाचा वि यातयन्तामगदोऽयमस्तु

६

क्षीरे मां मन्थे यतमो दृदम्भाकृष्टपच्ये अशने धान्येऽे यः ।

तदात्मना प्रजया पिशाचा वि यातयन्तामगदोऽयमस्तु

७

अपां मा पाने यतमो दृदम्भं क्रव्याद् यातूनां शयने शयानम् ।

तदात्मना प्रजया पिशाचा वि यातयन्तामगदोऽयमस्तु

८

७४५

दिवा मा नक्तं यतमो दृदम्भं क्रव्याद् यातूनां शयने शयानम् ।

तदात्मना प्रजया पिशाचा वि यातयन्तामगदोऽयमस्तु

९

क्रव्यादमग्ने रुधिरं पिशाचं मनोहनं जहि जातवेदः ।

तमिन्द्रो वाजी वज्रेण हन्तु छिनत्तु सोमः शिरो अस्य धृष्णुः

१०

७४७

सनांदग्ने मृणसि यातुधानान् न त्वा रक्षांसि पृतनासु जिग्युः ।

सहमूराननु दह क्रव्यादो मा ते हेत्या मुक्षत दैव्यायाः ११

समाहर जातवेदो यद्धृतं यत् पराभृतम् । गात्राण्यस्य वर्धन्तामंशुरिवा प्यायतामयम् १२

सोमस्येव जातवेदो अंशुरा प्यायतामयम् ।

अग्ने विरप्शिनं मेघ्यमयक्ष्मं कृणु जीवतु १३ ७५०

एतास्ते अग्ने समिधः पिशाचजम्भनीः ।

तास्त्वं जुषस्व प्रति चैना गृहाण जातवेदः १४

तार्ष्टीधीरग्ने समिधः प्रति गृह्णाह्यर्चिषा ।

जहातु क्रव्याद् रूपं यो अस्य मांसं जिहीर्षति १५

॥१३१॥ (वा० य० ५।२२)

(रक्षोग्नम् ।)

इदमहं रक्षसां ग्रीवा ऽ अपि कृन्तामि २२

॥१३२॥ (अथर्व० ४।२०।१-९)

मातृनामा । मातृनामा (पिशाचक्षयणम्) । अनुष्टुप्; १ स्वराट्, ९ भुरिक् ।

आ पश्यति प्रति पश्यति परां पश्यति पश्यति ।

दिवमन्तरिक्षमाद् भूमिं सर्वं तद् देवि पश्यति १

तिस्रो दिवस्तिष्ठः पृथिवीः पट् चेमाः प्रदिशः पृथक् ।

त्वयाहं सर्वा भूतानि पश्यानि देव्योषधे २ ७५५

दिव्यस्य सुपर्णस्य तस्य हासि कनीनिका ।

सा भूमिमा रुरोहिथ वह्यं श्रान्ता वधूरिव ३

तां मे सहस्राक्षो देवो दक्षिणे हस्त आ दधत् ।

तयाहं सर्वं पश्यामि यश्च शूद्र उत्तार्यः ४

आविष्कृणुष्व रूपाणि मात्मानमप गूहथाः ।

अथो सहस्रचक्षो त्वं प्रति पश्याः किमीदिनः ५

दर्शय मा यातुधानान् दर्शय यातुधान्यः । पिशाचान्तसर्वान् दर्शयेति त्वा रंभ ओषधे ६

कश्यपस्य चक्षुरसि शुन्याश्च चतुरक्ष्याः ।

वीध्रे सूर्यमिव सर्पन्तं मा पिशाचं तिरस्करः ७

उदग्रं परिपाणाद् यातुधानं किमीदिनम् । तेनाहं सर्वं पश्याम्युत शूद्रमुत्तार्यम् ८ ७६१

यो अ॒न्तरि॑क्षेण॒ पत॑ति दि॒वं यश्चा॑ति॒सर्प॑ति ।

भूमि॑ यो म॒न्यते॑ ना॒थं तं पि॑शाचं प्र दर्शय

९

॥१३३॥ (अथर्व० ६।७।१-३)

अथर्वा । सोमः, अदितिः, ३ देवाः (असुरक्षयणम्) । गायत्री, १ निष्कृत् ।

येन॑ सो॒मादि॑तिः प॒था मि॒त्रा वा॒ यन्त्य॑द्रु॒हः । तेना॒ नोऽव॑सा ग॒हि १

येन॑ सोम साह॒न्त्यासु॑रान् र॒न्धया॑सि नः । तेना॒ नो अ॒र्धि वो॑चत २

येन॑ दे॒वा असु॑राणा॒मोजा॑स्यवृ॒णीध्व॑म् । तेना॒ नः श॒र्म य॑च्छत ३ ७६५

॥१३४॥ (अथर्व० १९।६६।१)

ब्रह्मा । जातवेदाः सूर्यो वज्रश्च (असुरक्षयणम्) । अतिजगती ।

अयो॑जाला असु॑रा मा॒यिनो॑ऽय॒स्मयैः॑ पा॒शैर॑ङ्कि॒नो ये च॑रन्ति ।

तांस्ते॑ र॒न्धया॑मि ह॒रसा॑ जातवेदः स॒हस्र॑क्र॒ष्टिः स॒पत्नान्॑ प्रमृ॒णन् पा॑हि वज्रः १

॥१३५॥ (अथर्व० १।७।१-७)

चातनः । अग्निः (जातवेदाः), ३ अग्निन्द्रो (यातुधाननाशनम्) । अनुष्टुप्, ५ त्रिष्टुप् ।

स्तु॒वान॑म॒ग्न आ व॑ह यातु॒धानं॑ कि॒मीदि॑नम् ।

त्वं हि दे॒व व॑न्दितो ह॒न्ता द॑स्यो॒र्बुभू॑विथ १

आज्य॑स्य परमे॒ष्ठिन् जा॑तवेदस्तनू॒वशि॑न् ।

अग्ने॑ तौल॒स्य प्रा॑शान् यातु॒धानान्॑ वि ला॒पय २

वि ला॑पन्तु यातु॒धाना॑ अ॒त्त्रिणो॑ ये कि॒मीदि॑नः ।

अथे॒दम॑ग्ने नो ह॒विरि॑न्द्रश्च॒ प्रति॑ ह॒र्यत॑म् ३

अग्निः॑ पूर्वं आ र॑भतां प्रेन्द्रो॑ नुदतु बाहु॒मान् ।

ब्रवी॑तु॒ सर्वो॑ यातु॒मान॑यम॒सीत्ये॑त्य ४ ७७०

पश्या॑म ते वी॒र्यं॑ जातवेदः प्र णो॑ ब्रूहि यातु॒धानान्॑ नृचक्षः ।

त्वया॑ सर्वे॒ परित॑प्ताः पुरस्ता॒त् त आ य॑न्तु प्रबु॒वाणा॑ उपे॒दम् ५

आ र॑भस्व जातवेदोऽस्मा॒कार्थी॑य जज्ञिषे ।

दूतो॑ नो॒ अग्ने भू॑त्वा यातु॒धानान्॑ वि ला॒पय ६

त्वम॑ग्ने यातु॒धानानु॑प॒बद्धो॑ इ॒हा व॑ह ।

अथै॒षामि॑न्द्रो वज्रे॒णापि॑ शि॒र्षाणि॑ वृ॒श्चतु ७ ७७३

विषनाशनम् । (७७४-८५९)

॥१३६॥ (ऋ० १।१९१।१-१६)

अगस्त्यो मैत्रावरुणिः । अष्टणसूर्याः (विषघ्नोपनिषद्) । अनुष्टुप्; १०-१२ महापङ्क्तिः; १३ महावृहती ।

कङ्कतो न कङ्कतो ऽथो सतीनकङ्कतः ।

द्वाविति प्लुषी इति न्यदृष्टा अलिप्सत

१

अदृष्टान् हन्त्याय—त्यथो हन्ति परायती ।

अथो अवघ्नती ह—न्त्यथो पिनष्टि पिंषती

२

७७५

शरासः कुशरासो दुर्भासः सैर्या उत ।

मौञ्जा अदृष्टा बैरिणाः सर्वे साकं न्यलिप्सत

३

नि गावो गोष्ठे असदुन् नि मृगासो अविक्षत ।

नि केतवो जनानां न्यदृष्टा अलिप्सत

४

एत उ त्वे प्रत्यदृष्टन् प्रदोषं तस्करा इव ।

अदृष्टा विश्वदृष्टाः प्रतिबुद्धा अभूतन

५

द्यौर्वैः पिता पृथिवी माता सोमो भ्रातादितिः स्वसा ।

अदृष्टा विश्वदृष्टा—स्तिष्ठतेलयता सु कम्

६

ये अस्या ये अङ्गयाः सूचीका ये प्रकङ्कताः ।

अदृष्टाः किं चनेह वः सर्वे साकं नि जस्यत

७

७८०

उत् पुरस्तात् सूर्य एति विश्वदृष्टो अदृष्टहा ।

अदृष्टान्तसर्वाञ्जम्भय—न्तसर्वाश्च यातुधान्यः

८

उदपप्तदुसौ सूर्यः पुरु विश्वानि जूर्वन् ।

आदित्यः पर्वतेभ्यो विश्वदृष्टो अदृष्टहा

९

सूर्ये विषमा संजामि दृतिं सुरावतो गृहे ।

सो चिन्नु न मराति नो वयं मरामाऽऽरे अस्य योजनं हरिष्ठा मधु त्वा मधुला चकार १०

इयत्तिका शकुन्तिका सका जघास ते विषम् ।

सो चिन्नु न मराति नो वयं मरामाऽऽरे अस्य योजनं हरिष्ठा मधु त्वा मधुला

चकार

११

त्रिः सप्त विष्णुलिङ्गका विषस्य पुष्पमक्षन् ।

ताश्चिन्नु न मरन्ति नो वयं मरामाऽऽरे अस्य योजनं हरिष्ठा मधु त्वा मधुला चकार १२

७८५

| | |
|--|----|
| नवानां नवतीनां विषस्य रोपुषीणाम् । | |
| सर्वासामग्रं नामा—ऽऽरे अस्य योजनं हरिष्ठा मधुं त्वा मधुला चकार | १३ |
| त्रिः सप्त मयूर्यः सप्त स्वसारो अग्रुवः । | |
| तास्तै विषं वि जभ्रिर उदकं कुम्भिनीरिव | १४ |
| इयत्तकः कुषुम्भक—स्तकं भिन्व्यश्मना । | |
| ततो विषं प्र वावृते पराचीरनु संवतः | १५ |
| कुषुम्भकस्तदब्रवीद् गिरेः प्रवर्तमानकः । | |
| वृश्चिकस्यारसं विष—मरुसं वृश्चिक ते विषम् | १६ |

॥१३७॥ (अथर्व० ४।६।१-८)

गरुत्मान् । नक्षकः, १ ब्राह्मणः, २ द्यावापृथिवी, सप्तसिन्धवः, ३ सुपर्णः, ४-८ विषम् (विषघ्नम्) । अनुष्टुप् ।

| | |
|--|-------|
| ब्राह्मणो जज्ञे प्रथमो दशशीर्षो दशस्यः । | |
| स सोमं प्रथमः पपौ स चकारारसं विषम् | १ ७९० |
| यावती द्यावापृथिवी वरिम्णा यावत् सप्त सिन्धवो वितष्ठिरे । | |
| वाचं विषस्य दूषणीं तामितो निरवादिषम् | २ |
| सुपर्णस्त्वा गरुत्मान् विषं प्रथममावयत् । | |
| नामीमदो नारूरुप उतास्मा अभवः पितुः | ३ |
| यस्त आस्यत् पञ्चाङ्गुरिर्वक्राच्चिदधि धन्वनः । | |
| अपस्कम्भस्य शल्याभिरवोचमहं विषम् | ४ |
| शल्याद् विषं निरवोचं प्राञ्जनादुत पर्णधेः । | |
| अपाष्ठाच्छृङ्गात् कुल्मलाभिरवोचमहं विषम् | ५ |
| अरसस्त इषो शल्योऽथो ते अरसं विषम् । उतारसस्य वृक्षस्य धनुष्टे अरसारसम् | ६ ७९५ |
| ये अपीषन् ये अदिहन् य आस्यन् ये अवासृजन् । | |
| सर्वे ते वध्रयः कृता वध्रिर्विषगिरिः कृतः | ७ |
| वध्रयस्ते खनितारो वध्रिस्त्वर्मस्योषधे । | |
| वध्रिः स पर्वतो गिरिर्यतो जातमिदं विषम् | ८ |

॥१३८॥ (अथर्व० ४।७।१-७)

गरुत्मान् । वनस्पतिः (विषनाशनम्) । अनुष्टुप्, ४ स्वराद् ।

| | |
|--|-------|
| वारिदं वारयातै वरणावत्यामधि । तत्रामृतस्यासिक्तं तेना ते वारये विषम् | १ ७९८ |
|--|-------|

| | |
|---|-------|
| अरसं प्राच्यं विषमरसं यदुदीच्यम् । अथेदमधराच्यं करम्भेण वि कल्पते | २ |
| करम्भं कृत्वा तिर्यं पीबस्पाकमुदारथिम् । | |
| क्षुधा किल त्वा दुष्टनो जक्षिवान्त्स न रूरुपः | ३ ८०० |
| वि ते मदं मदावति शरमिव पातयामसि । | |
| प्र त्वां चरुमिव येषन्तं वचसा स्थापयामसि | ४ |
| परि शरममिवाचितं वचसा स्थापयामसि । | |
| तिष्ठा वृक्ष इव स्थाम्न्यभिखाते न रूरुपः | ५ |
| पवस्तैस्त्वा पर्यक्रीणन् दूर्शोर्भिरजिनैरुत । प्रक्रीरसि त्वमोषधेऽभिखाते न रूरुपः | ६ |
| अनाम्ना ये वः प्रथमा यानि कर्माणि चक्रिरे । | |
| वीरान् नो अत्र मा दभन् तद् व एतत् पुरो दधे | ७ |

॥१३९॥ (अथर्व० ६।१००।१-३)

गरुत्मान् । वनस्पतिः (विषदूषणम्) । अनुष्टुप् ।

| | |
|--|-------|
| देवा अदुः सूर्यो अदाद् द्यौरदात् पृथिव्यदात् । | |
| तिस्रः सरस्वतीरदुः सचित्ता विषदूषणम् | १ ८०५ |
| यद् वो देवा उपजीका आसिञ्चन् धन्वैन्यदुकम् । | |
| तेन देवप्रसूतेनेदं दूषयता विषम् | २ |
| असुराणां दुहितासि सा देवानामसि स्वसा । | |
| दिवस्पृथिव्याः संभूता सा चर्त्तारसं विषम् | ३ |

॥१४०॥ (अथर्व० १०।४।१-२६)

गरुत्मान् । तक्षकः (सर्पविषहूरीकरणम्) । अनुष्टुप्; १ पथ्यापाङ्क्तिः; २ त्रिपदा यवमध्या गायत्री; ३-४ पथ्याबृहती; ८ उष्णिग्गर्भा परा त्रिष्टुप्; १२ भुरिग्गायत्री; १६ त्रिपदा प्रतिष्ठा गायत्री; २१ ककुम्मती; २३ त्रिष्टुप्; २६ ज्यवसाना षट्पदा बृहतीगर्भा ककुम्मती भुरिक् त्रिष्टुप् ।

| | |
|--|-------|
| इन्द्रस्य प्रथमो रथो देवानामपरो रथो वरुणस्य तृतीय इत् । | |
| अहीनामपमा रथं स्थाणुमारदर्थापत् | १ |
| दुर्मः शोचिस्तरुणकमश्वस्य वारः परुषस्य वारः । रथस्य बन्धुरम् | २ |
| अव श्वेत पदा जहि पूर्वेण चापरेण च । उदुष्टुतमिव दार्वहीनामरसं विषं वारुग्रम् | ३ ८१० |
| अरंघुषो निमज्योन्मज्य पुनरब्रवीत् । उदुष्टुतमिव दार्वहीनामरसं विषं वारुग्रम् | ४ |
| पैदो हन्ति कसर्णालं पैदः श्चित्रमुतासितम् । पैदो रथर्व्याः शिरः सं बिभेद पृदाक्ताः | ५ ८१२ |

| | |
|---|--------|
| पैद्व प्रेहिं प्रथमोऽनु त्वा वयमेमांसि । अहीन् व्यस्यतात् पथो येन स्मा वयमेमांसि | ६ |
| इदं पैद्वो अजायतेदमस्य परायणम् । इमान्यर्वतः पदाहिभ्यो वाजिनीवतः | ७ |
| संयतं न वि पर्परद् व्यात्तं न सं यमत् । अस्मिन् क्षेत्रे द्वावही स्त्री च पुमांश्च तावुभावरसा | ८ ८१५ |
| अरसासं इहाहयो ये अन्ति ये च दूरके । घनेन हन्मि वृश्चिकमहिं दुण्डेनागतम् | ९ |
| अघाश्चस्येदं भेषजमुभयोः स्वजस्य च । इन्द्रो मेऽहिमघायन्तमहिं पैद्वो अरन्धयत् | १० |
| पैद्वस्यं मन्महे वयं स्थिरस्य स्थिरधाम्नः । इमे पश्चा पृदाकवः प्रदीक्ष्यत आसते | ११ |
| नष्टासवो नष्टविषा हता इन्द्रेण वज्रिणा । जघानेन्द्रो जघ्निमा वयम् | १२ |
| हतास्तिरश्चिराजयो निषिष्टासः पृदाकवः । दर्विं करिकृतं श्वित्रं दुर्भेष्वसितं जहि | १३ ८१० |
| कैरातिका कुमारिका सका खनति भेषजम् । हिरण्ययीभिरभिभिर्गिरीणामुप सानुषु | १४ |
| आयमगन् युवा भिषक् पृश्निहापराजितः । स वै स्वजस्य जम्भेन उभयोर्वृश्चिकस्य च | १५ |
| इन्द्रो मेऽहिमरन्धयन्मित्रश्च वरुणश्च । वातापर्जन्योऽग्निमा | १६ |
| इन्द्रो मेऽहिमरन्धयत् पृदाकुं च पृदाकम् । स्वजं तिरश्चिराजिं कसर्णालं दशोनसिम् | १७ |
| इन्द्रो जघान प्रथमं जनितारमहे तव । तेषामु तुह्यमाणानां कः स्मिन् तेषामसद् रसः | १८ ८१५ |
| सं हि शीर्षाण्यग्रभं पौञ्छिष्ठ इव कर्वरम् । सिन्धोर्मध्यं परेत्य व्यनिजमहेर्विषम् | १९ |
| अहीनां सर्वेषां विषं परा वहन्तु सिन्धवः । हतास्तिरश्चिराजयो निषिष्टासः पृदाकवः | २० |
| ओषधीनामहं वृण उर्वरीरिव साधुया । नयाम्यर्वतीरिवाहे निरैतु ते विषम् | २१ |
| यदुग्रौ सूर्ये विषं पृथिव्यामोषधीषु यत् । कान्दाविषं कनककं निरैत्वैतु ते विषम् | २२ |
| ये अग्निजा ओषधिजा अहीनां ये अप्सुजा विद्युतं आवभूवुः । | |
| येषां जातानि बहुधा महान्ति तेभ्यः सर्वेभ्यो नमसा विधेम | २३ ८३० |
| तौद्री नामांसि कन्या घृताची नाम वा असि । अधस्पदेन ते पदमा ददे विषदूषणम् | २४ |
| अङ्गादङ्गात् प्र च्यावय हृदयं परि वर्जय । अघा विषस्य यत् तेजोऽवाचीनं तदेतु ते | २५ |
| आरे अभूद् विषमरौद् विषे विषमप्रागपि । अग्निर्विषमहेनिरघात् सोमो निरणथीत् । | |
| दंष्टारमन्वगाद् विषमहिरमृत | २६ |

॥१४१॥ (अथर्व० ५।२३।१-११)

गरुत्मान् । तक्षकः (सर्पविषनाशनम्) । जगती, २ आस्तरपङ्क्तिः, ४, ७-८ अनुष्टुप्, ५ डिष्टुप्,
६ पथ्यापङ्क्तिः, ९ भुरिक, १०-११ निचृद्गायत्री ।

दुदिहिं मह्यं वरुणो दिवः कविर्वचोभिरुग्रैर्नि रिणामि ते विषम् ।

खातमखातमुत सक्तमग्रभमिरेव धन्वन् नि जजास ते विषम्

१ ८३४

| | |
|--|-------|
| यत् ते अपोदकं विषं तत् तं एतास्वग्रभम् । | |
| गृह्णामि ते मध्यममुत्तमं रसमुतावमं भियसां नेशदादु ते | २ ८३५ |
| वृषां मे रवो नभसा न तन्यतुरुग्रेण ते वचसा वाध आदु ते । | |
| अहं तमस्य नृभिरग्रभं रसं तमस इव ज्योतिरुदेतु सूर्यः | ३ |
| चक्षुषा ते चक्षुर्हन्मि विषेण हन्मि ते विषम् । | |
| अहं भ्रियस्व मा जीवीः प्रत्यगभ्येतु त्वा विषम् | ४ |
| कैरात पृश्न उपतृण्य बभ्र आ मे शृणुतासिता अलीकाः । | |
| मा मे सख्युः स्तामानमपि छाताश्रावयन्तो नि विषे रमध्वम् | ५ |
| असितस्य तैमातस्य बभ्रोरपोदकस्य च । | |
| सात्रासाहस्याहं मन्योरव ज्यामिव धन्वनो वि मुञ्चामि रथां इव | ६ |
| आलिङ्गी च विलिङ्गी च पिता च माता च । | |
| विद्य वः सर्वतो बन्ध्वरसाः किं करिष्यथ | ७ ८४० |
| उरुगूलाया दुहिता जाता दास्यसिक्न्या । | |
| प्रतङ्गं दद्रुषीणां सर्वांसामरसं विषम् | ८ |
| कर्णा श्चावित् तदब्रवीद् गिरेरवचरन्तिका । | |
| याः काश्रेमाः खनित्रिमास्तासामरसतमं विषम् | ९ |
| ताबुवं न ताबुवं न घेत् त्वमसि ताबुवंम् । ताबुर्वेनारसं विषम् | १० |
| तस्तुवं न तस्तुवं न घेत् त्वमसि तस्तुवंम् । तस्तुर्वेनारसं विषम् | ११ |

॥१४२॥ (अथर्व० ७।८८।१)

गरुत्मान् । तक्षकः (सर्पविषनाशनम्) । ज्यवसाना बृहती ।

अपेह्यरिरस्यरिर्वा असि । विषे विषमपृक्था विषमिद् वा अपृक्थाः ।

अहिमेवाभ्यर्पेहि तं जहि

१ ८४५

॥१४३॥ (अथर्व० ६।१२।१-३)

गरुत्मान् । तक्षकः (सर्पविषनिवारणम्) । अनुष्टुप् ।

परि द्यामिव सूर्योऽहीनां जनिमागमम् ।

रात्री जगदिवान्यद्भंसात् तेना ते वारये विषम्

१

यद् ब्रह्मभिर्यदपिभिर्यद् देवैर्विदितं पुरा । यद् भूतं भव्यमासन्वत् तेना ते वारये विषम्

२

मध्वा पृश्ने नद्यः पर्वता गिरयो मधु । मधु परुष्णी शीपाला शमास्ने अस्तु शं हृदे

३

८४८

॥१४४॥ (अथर्व० ६।५६।१-३)

शन्तातिः । १ विश्वे देवाः, २-३ रुद्रः (सर्पेभ्यो रक्षणम्) । १ उष्णिग्गर्भा पथ्यापङ्क्तिः,
२ अनुष्टुप्, ३ निचृत् ।

मा नो देवा अर्हिर्वधीत् सतीकान्तसहपूरुपान् ।

संयतं न वि ष्वरद् व्यात्तं न सं यमन्नमो देवजनेभ्यः १

नमोऽस्त्वसिताय नमस्तिरश्चिराजये । स्वजाय बभ्रवे नमो नमो देवजनेभ्यः २ ८५०

सं ते हन्मि दता दतः समु ते हन्वा हनू ।

सं ते जिह्वायां जिह्वां सम्वास्ताह आस्यम् ३

॥१४५॥ (अथर्व० ७।५६।१-८)

अथर्वा । वृद्धिकादयः, २ वनस्पतिः, ४ ब्रह्मणस्पतिः (विषभैषज्यम्) । अनुष्टुप्, ४ विराट्प्रस्तारपङ्क्तिः ।

तिरश्चिराजेरसितात् पृदाकोः परि संभृतम् । तत् कङ्कपर्वणो विषमियं वीरुदनीनशत् १

इयं वीरुन्मधुजाता मधुशुन्मधुला मधूः । सा विहुतस्य भेषज्यथो मशकजम्भनी २

यतो दृष्टं यतो धीतं ततस्ते निर्ह्वयामसि । अर्भस्य तृप्रदंशिनो मशकस्यासं विषम् ३

अयं यो वक्रो विपरुर्व्यङ्गो मुखानि वक्रा वृजिना कृणोषि ।

तानि त्वं ब्रह्मणस्पत इपीकामिव सं नमः ४ ८५५

अस्सस्य शर्कोटस्य नीचीनस्योपसर्पतः । विषं ह्यस्यादिव्यथो एनमजीजभम् ५

न ते बाहोर्बलमस्ति न शीर्षे नोत मध्यतः । अथ किं पापयामुया पुच्छे विभर्ष्यर्भकम् ६

अदन्ति त्वा पिपीलीका वि वृश्चन्ति मयूर्यः । सर्वे भल ब्रवाथ शर्कोटमरसं विषम् ७

य उभाभ्यां प्रहरसि पुच्छेन चास्येन च । आस्येन न ते विषं किमु ते पुच्छधावसत् ८ ८५९

जलचिकित्सा । (८६०-१११९)

॥१४६॥ (अथर्व० ६।५७।१-३)

शन्तातिः । रुद्रः । १-२ अनुष्टुप्, ३ पथ्याबृहती ।

इदमिद् वा उं भेषजमिदं रुद्रस्य भेषजम् ।

येनेषुमेकतेजनां शतशल्यामपब्रवत् १

जालापेणाभि पिञ्चत जालापेणोप सिञ्चत ।

जालाषमुग्रं भेषजं तेन नो मृड जीवसे २

शं च नो मयश्च नो मा च नः किं चनाममत ।

क्षमा रणो विश्वं नो अस्तु भेषजं सर्वं नो अस्तु भेषजम् ३ ८६१

॥१४७॥ (ऋ० १।२३।१६-२३)

मेधातिथिः काण्वः । आपः, २३ आपः अग्निश्च । १६-१८ गायत्री, १९ पुर उष्णिक्, २१ प्रतिष्ठा ।
२०, २२-२३ अनुष्टुप् ।

अम्बयो यन्त्यध्वभिर्जामयो अध्वरीयताम् । पुञ्चतीर्मधुना पयः १६
अमूर्या उप सूर्ये यामिर्वा सूर्यः सह । ता नो हिन्वन्त्वध्वरम् १७
अपो देवीरुपं ह्वये यत्र गावः पिबन्ति नः । सिन्धुभ्यः कर्त्वि हविः १८ ८६५
अप्स्वृन्तरमृतमप्सु भेषजं मपामुत प्रशस्तये । देवा भवन्त वाजिनः १९
अप्सु मे सोमो अब्रवीदन्तर्विश्वानि भेषजा । अग्निं च विश्वशंभुवमापश्च विश्वभेषजीः २०
आपः पृणीत भेषजं वरूथं तन्वेरे मम । ज्योक् च सूर्यं दृशे २१
इदमापः प्र वहत यत् किं च दुरितं मयि । यद् वाहमभिदुद्रोह यद् वा शेष उतानृतम् २२
आपो अद्यान्वचारिषं रसेन समगस्महि । पर्यस्वानग्र आ गहि तं मा सं सृज वचसा २३ ८७०

॥१४८॥ (ऋ० ७।४७।१-४)

वसिष्ठो मैत्रावरुणिः । आपः । त्रिष्टुप् ।

आपो यं वः प्रथमं देवयन्तं इन्द्रपानमूर्मिमकृण्वतेळः ।
तं वो वयं शुचिमरिप्रमद्य घृतगुणं मधुमन्तं वनेम १
तमूर्मिमापो मधुमत्तमं वो ऽपां नपादवत्त्वाशुहेमा ।
यस्मिन्निन्द्रो वसुभिर्मादयाते तमश्याम देवयन्तो वो अद्य २
शतपवित्राः स्वधया मदन्तीर्देवीर्देवानामपि यन्ति पार्थः ।
ता इन्द्रस्य न मिनन्ति व्रतानि सिन्धुभ्यो हव्यं घृतवज्रहोत ३
याः सूर्यो रश्मिभिराततान याभ्य इन्द्रो अरदद् गातुमूर्मिम् ।
ते सिन्धवो वरिवो धातना नो यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ४

॥१४९॥ (ऋ० ७।४९।१-४)

वसिष्ठो मैत्रावरुणिः । आपः । त्रिष्टुप् ।

समुद्रज्येष्ठाः सलिलस्य मध्यात् पुनाना यन्त्यनिविशमानाः ।
इन्द्रो या वज्री वृषभो रराद ता आपो देवीरिह मामवन्तु १ ८७५
या आपो दिव्या उत वा स्रवन्ति खनित्रिमा उत वा याः स्वयंजाः ।
समुद्रार्था याः शुचयः पावकास्ता आपो देवीरिह मामवन्तु २
यासां राजा वरुणो याति मध्ये सत्यानृते अवपश्यञ्जनानाम् ।
मधुश्रुतः शुचयो याः पावकास्ता आपो देवीरिह मामवन्तु ३ ८७७

यासु राजा वरुणो यासु सोमो विश्वे देवा यासुर्जं मदन्ति ।
वैश्वानरो यास्वग्निः प्रविष्ट—स्ता आपो देवीरिह मामवन्तु

४

+॥१५०॥ (ऋ० १०।१।१-९)

त्रिशिरास्त्वाष्ट्रः, सिन्धुद्वीप आम्बरीषो वा । आपः । गायत्री, ५ वर्धमाना गायत्री,
७ प्रतिष्ठा गायत्री, ८-९ अनुष्टुप् ।

| | | |
|---|-------------------------|-------|
| आपो हि ष्ठा मयोभुव—स्ता न ऊर्जे दधातन | । महे रणाय चक्षसे | १ |
| यो वः शिवर्तमो रस—स्तस्य भाजयतेह नः | । उशतीरिव मातरः | २ ८८० |
| तस्मा अरं गमाम वो यस्य क्षयाय जिन्वथ | । आपो जनयथा च नः | ३ |
| शं नो देवीरभिष्टय आपो भवन्तु पीतये | । शं योरभि स्रवन्तु नः | ४ |
| ईशाना वार्याणां क्षयन्तीश्वर्याणाम् | । अपो याचामि भेषजम् | ५ |
| अप्सु मे सोमो अब्रवी—दन्तर्विश्वानि भेषजा | । अग्निं च विश्वशोभुवम् | ६ |
| आपः पृणीत भेषजं वरूथं तन्वेरे मम | । ज्योक् च सूर्यं दृशे | ७ ८८५ |
| इदमापः प्र वहत यत् किं च दुरितं मयि । | | |
| यद् बाहमभिदुद्रोह यद् वा शेष उतानृतम् | | ८ |
| आपो अद्यान्वचारिषं रसेन समगस्महि । | | |
| पर्यस्वानग्र आ गहि तं मा सं सृज वर्चसा | | ९ |

॥१५१॥ (ऋ० १०।१।१०-१४)

देवधवा यामायनः । १०-१४ आपः, ११-१३ सोमो वा । त्रिष्टुप्, १३-१४ अनुष्टुप्,
(१३ पुरस्ताद्बृहती वा ।)

| | |
|---|--------|
| आपो अस्मान् मातरः शुन्धयन्तु घृतेन नो घृतप्वः पुनन्तु । | |
| विश्वं हि रिग्रं प्रवहन्ति देवी—रुदिदाभ्यः शुचिरा पूत एमि | १० |
| द्रप्सश्चस्कन्द प्रथमाँ अनु द्यू—निमं च योनिमनु यश्च पूर्वः । | |
| समानं योनिमनु संचरन्तं द्रप्सं जुहोम्यनु सप्त होत्राः | ११ |
| यस्ते द्रप्सः स्कन्दति यस्ते अंशु—र्बाहुच्युतो धिषणाया उपस्थात् । | |
| अध्वर्योर्वा परि वा यः पवित्रात् तं ते जुहोमि मनसा वर्षदकृतम् | १२ |
| यस्ते द्रप्सः स्कन्धो यस्ते अंशु—रवश्च यः परः सुचा । | |
| अयं देवो बृहस्पतिः सं तं सिञ्चतु राधसे | १३ ८९१ |

पर्यस्वतीरोषधयः पर्यस्वन्मामकं वचः ।

अपां पर्यस्वदित् पयस्तेन मा सह शुन्धत

१४

॥१५२॥ (ऋ० १०।१९।१-८)

मथितो यामायनः, भृगुर्वाणिर्वा, व्यवनो भार्गवो वा । आपः, गावो वा, १ उत्तरार्धर्चस्य
अग्नीषोमौ । अनुष्टुप्, ६ गायत्री ।

नि वर्तध्वं मानु गाताऽस्मान्तिषक्त रेवतीः ।

अग्नीषोमा पुनर्वसु अस्मे धारयतं रयिम्

१

पुनरेना नि वर्तय पुनरेना न्या कुरु ।

इन्द्र एणा नि यच्छ त्वग्निरेना उपाजतु

२

पुनरेता नि वर्तन्ता मस्मिन् पुष्यन्तु गोपतौ ।

इहैवाग्ने नि धारयेह तिष्ठतु या रयिः

३

८९५

यन्नियानं न्ययनं संज्ञानं यत् परायणम् ।

आवर्तनं निवर्तनं यो गोपा अपि तं ह्रुवे

४

य उदानड् व्ययनं य उदानट् परायणम् ।

आवर्तनं निवर्तनं मपि गोपा नि वर्तताम्

५

आ निवर्त नि वर्तय पुनर्न इन्द्र गा देहि । जीवाभिर्भुनजामहै

६

परि वो विश्वतो दध ऊर्जा घृतेन पर्यसा ।

ये देवाः के च यज्ञियास्ते रय्या सं सृजन्तु नः

७

आ निवर्तन वर्तय नि निवर्तन वर्तय ।

भूम्याश्चतस्रः प्रदिशस्ताभ्य एना नि वर्तय

८

९००

॥१५३॥ (ऋ० १०।३०।१-१५)

कवष ऐलूषः । आपः, अपां नपात् वा । त्रिष्टुप् ।

प्र देवत्रा ब्रह्मणे गातुरे त्वपो अच्छा मनसो न प्रयुक्ति ।

महीं मित्रस्य वरुणस्य धासिं पृथुजयसे रीरधा सुवृक्तिम्

१

अध्वर्यवो हविष्मन्तो हि भूताऽच्छाप इतोशतीरुशन्तः ।

अव याश्चष्टे अरुणः सुपर्णस्तमास्यध्वमूर्मिमद्या सहस्ताः

२

अध्वर्यवोऽप इता समुद्रमुपां नपातं हविषा यजध्वम् ।

स वो दददूर्मिमद्या सुपूतं तस्मै सोमं मधुमन्तं सुनोत

३

९०३

दे० [आयुर्वेद०] ९

| | |
|---|--------|
| यो अनिध्मो दीदयदुस्वन्त—र्यं विप्रासु ईळते अध्वरेषु । | |
| अपां नपान्मधुमतीरपो दा याभिरिन्द्रो वावुधे वीर्याय | ४ |
| याभिः सोमो मोदते हर्षते च कल्याणीभिर्युवतिभिर्न मर्यः । | |
| ता अध्वर्यो अपो अच्छा परेहि यदासिञ्चा ओषधीभिः पुनीतात् | ५ ९०५ |
| एवेधूने युवतयो नमन्त यदीमुशन्नुशतीरित्यच्छ । | |
| सं जानते मनसा सं चिकित्से ऽध्वर्यवो धिषणापश्च देवीः | ६ |
| यो वो वृताभ्यो अकृणोदु लोकं यो वो मद्या अभिशस्तेरमुञ्चत् । | |
| तस्मा इन्द्राय मधुमन्तमूर्मि देवमादनं प्र हिणोतनापः | ७ |
| प्रास्मै हिनोत मधुमन्तमूर्मि गर्भो यो वः सिन्धवो मध्व उत्सः । | |
| घृतपृष्ठमीड्यमध्वरेष्वा—ऽऽपो रेवतीः शृणुता हवं मे | ८ |
| तं सिन्धवो मत्सरमिन्द्रपान—मूर्मि प्र हेत य उभे इयति । | |
| मदच्युतमौशानं नभोजां परि त्रितन्तुं विचरन्तमुत्सम् | ९ |
| आवर्षेततीरधु नु द्विधारा गोषुयुधो न नियवं चरन्तीः । | |
| ऋषे जनित्रीर्भुवनस्य पत्नी—रपो वन्दस्व सवृधः सयौनीः | १० ९१० |
| हिनोता नो अध्वरं देवयज्या हिनोत ब्रह्म सनये धनानाम् । | |
| ऋतस्य योगे वि ष्यध्वमूधः श्रुष्टीवरीर्भूतनास्मभ्यमापः | ११ |
| आपो रेवतीः क्षयथा हि वस्वः कर्तुं च भद्रं विभ्रुथामृतं च । | |
| रायश्च स्थ स्वपत्यस्य पत्नीः सरस्वती तद् गृणते वयो धात् | १२ |
| प्रति यदापो अदृश्रमायती—धृतं पयोसि विभ्रतीर्मधूनि । | |
| अध्वर्युभिर्मनसा संविदाना इन्द्राय सोमं सुषुतं भरन्तीः | १३ |
| एमा अगमन् रेवतीर्जीवधन्या अध्वर्यवः सादयता सखायः । | |
| नि बहिषि धत्तन सोम्यासो ऽपां नप्त्रां संविदानास एनाः | १४ |
| आगमन्नाप उशतीर्विहिरेदं न्यध्वरे असदन् देवयन्तीः । | |
| अध्वर्यवः सुनुतेन्द्राय सोम—मभूदु वः सुशका देवयज्या | १५ |

॥१५४॥ (अथर्व० १।३३।१-४)

शन्तातिः । (चन्द्रमाः) आपः (च) । त्रिष्टुप् ।

हिरण्यवर्णाः शुचयः पावका यासु जातः सविता यास्वभिः ।

या अभि गर्भं दधिरे सुवर्णास्ता न आपः शं स्योना भवन्तु

१ ९१६

यासां राज्ञा वरुणो याति मध्ये सत्यानृते अवपश्यन् जनानाम् ।
 या अग्निं गर्भं दधिरे सुवर्णास्ता न आपः शं स्योना भवन्तु २
 यासां देवा दिवि कृण्वन्ति भक्षं या अन्तरिक्षे बहुधा भवन्ति ।
 या अग्निं गर्भं दधिरे सुवर्णास्ता न आपः शं स्योना भवन्तु ३
 शिवेन मा चक्षुषा पश्यतापः शिवया तन्वोषं स्पृशत त्वचं मे ।
 घृतश्रुतः शुचयो याः पावकास्ता न आपः शं स्योना भवन्तु ४

॥१५५॥ (अथर्व० ३।१३।१-७)

भृगुः । वरुणः, सिन्धुः, आपः; २-३ इन्द्रः । अनुष्टुप्, १ निचृत्, ५ विराड्जगती, ६ निचृदनुष्टुप् ।

यदुदः संप्रयतीरहावनदता हते ।
 तस्मादा नद्योऽत्र नाम स्थ ता वो नामानि सिन्धवः १ ९२०
 यत् प्रेषिता वरुणेनाच्छीमं समवल्गत ।
 तदाप्नोदिन्द्रो वो यतीस्तस्मादापो अनुं घ्न २
 अपक्रामं स्यन्दमाना अधीवरत वो हि कम् ।
 इन्द्रो वः शक्तिभिर्देवीस्तस्माद् वार्नामं वो हितम् ३
 एको वो देवोऽप्यतिष्ठत् स्यन्दमाना यथावशम् ।
 उदानिषुर्महीरिति तस्मादुदकमुच्यते ४
 आपो भद्रा घृतमिदाप आसन्नग्रीषोमौ बिभ्रत्याप इत् ताः ।
 तीव्रो रसो मधुपृचामरंगम आ मा प्राणेन सह वर्चसा गमेत् ५
 आदित् पश्याम्युत वा शृणोम्या मा घोषो गच्छति वाङ् मासाम् ।
 मन्ये भेजानो अमृतस्य तर्हि हिरण्यवर्णा अर्तुपं यदा वः ६ ९२५
 इदं व आपो हृदयमयं वत्स क्रतावरीः । इहेत्थमेतं शक्ररीर्यत्रेदं वेशयामि वः ७

॥१५६॥ (अथर्व० ७।३९।१)

प्रस्कण्वः । आपः, सुपर्णः, वृषभः । त्रिष्टुप् ।

दिव्यं सुपर्णं पयसं बृहन्तमपां गर्भं वृषभमोषधीनाम् ।
 अभीपतो वृष्ट्या तपयन्तमा नो गोष्ठे रयिष्ठां स्थापयाति १

॥१५७॥ (अथर्व० १९।२।१-५)

सिन्धुद्वीपः । आपः । अनुष्टुप् ।

शं त आपो हैमवतीः शम्भु ते सन्तुत्स्याः । शं ते सनिष्यदा आपः शम्भु ते सन्तु वर्याः १
 शं त आपो धन्वत्याः । शं ते सन्तुवनूप्याः । शं ते खनित्रिमा आपः शं याः कुम्भेभिराभृताः २ ९२९

अनभ्रयः खनमाना विप्रा गम्भीरे अपसः ।

भिषग्भ्यो भिषक्तरा आपो अच्छा वदामसि

३ ९३०

अपामहं दिव्यानिमपां स्रोतस्यानिम ।

अपामहं प्रणेजनेऽश्वा भवथ वाजिनः

४

ता अपः शिवा अपोऽयक्ष्मंकरणीरपः । यथैव तृप्यते मयस्तास्त आ दत्त भेषजीः

५

॥१५८॥ (अथर्व० १९।६९।१-४)

ब्रह्मा । आपः । १ आसुर्यनुष्टुप्; २ साम्यनुष्टुप्; ३ आसुरी गायत्री; ४ साम्ययुष्णिक् ।

जीवा स्थ जीव्यासं सर्वमार्युर्जीव्यासम्

१

उपजीवा स्थोप जीव्यासं सर्वमार्युर्जीव्यासम्

२

संजीवा स्थ सं जीव्यासं सर्वमार्युर्जीव्यासम्

३

९३५

जीवला स्थ जीव्यासं सर्वमार्युर्जीव्यासम्

४

॥१५९॥ (वा० य० १।१२-१३, २१, ३१)

(आपः ।)

सवितुर्वैः प्रसव उत्पुनाम्यच्छिद्रेण पवित्रेण सूर्यस्य रश्मिभिः ।

देवीरापो अग्नेगुवो अग्नेपुवोऽग्र इममद्य यज्ञं नयताग्रे यज्ञपतिं सुधातुं यज्ञपतिं

देवयुवम्

१२

युष्मा इन्द्रोऽवृणीत वृत्रतूर्ये यूयमिन्द्रमवृणीष्वं वृत्रतूर्ये प्रोक्षिता स्थ

१३

समाप ओषधीभिः समोषधयो रसेन ।

स रेवतीर्जगतीभिः पृच्यन्ता सं मधुमतीर्मधुमतीभिः पृच्यन्ताम्

२१

सवितुर्वैः प्रसव उत्पुनाम्यच्छिद्रेण पवित्रेण सूर्यस्य रश्मिभिः

३१

९४०

॥१६०॥ (वा० य० १।२, ३४)

(आपः ।)

अदित्यै व्युन्देनमसि

२

ऊर्जं वहन्तीरमृतं घृतं पयः कीलालं परिस्रुतम् । स्वधा स्थ तर्पयत मे पितृन्

३४

॥१६१॥ (वा० य० ४।१, १२)

(आपः ।)

इमा आपः शम्भु मे सन्तु देवीः

१

श्वात्राः पीता भवत यूयमापोऽस्माकमन्तरुदरे सुशेवाः ।

ता अस्मभ्यमयक्ष्मा अनमीवा अनागसः स्वदन्तु देवीरमृता ऋतावृषः

१२

९४४

॥१६२॥ (वा० य० ५।११)

(आपः ।)

इदमहं तप्तं वर्षहिर्घा यज्ञाभिः सृजामि

११ ९४५

॥१६३॥ (वा० य० ६।१०, १३, ३०-३१)

(आपः ।)

आपो देवीः स्वदन्तु स्वात्तं चित्सद् देवहविः

१०

देवीरापः शुद्धा वोद्वं सुपरिविष्टा देवेषु सुपरिविष्टा वयं परिविष्टारो भूयास्म

१३

निग्राभ्या स्थ देवश्रुतस्तर्पयत मा

३०

मनो मे तर्पयत वाचं मे तर्पयत प्राणं मे तर्पयत चक्षुर्मे तर्पयत श्रोत्रं मे तर्पयतात्मानं मे

तर्पयत प्रजां मे तर्पयत पशून् मे तर्पयत गणान् मे तर्पयत गणा मे मा वितृषन्

३१

॥१६४॥ (वा० य० ६।१७, २२, २४, २७-२८)

(आपः ।)

इदमापः प्रवहतावद्यं च मलं च यत् ।

यच्चाभिद्रोहानृतं यच्च शेषे अभीरुणम् ।

आपो मा तस्मादेनसः पर्वमानश्च शुश्रुतु

१७ ९५०

मापो मौषधीर्हिंसीः ।

सुमित्रिया न आप ओषधयः सन्तु । योऽस्मान् द्वेष्टि यं च वयं द्विष्मः

२२

अग्नेर्वोऽर्पन्नगृहस्य सदैसि सादयामीन्द्राग्न्योर्भागधेयीं स्थ मित्रावरुणयोर्भागधेयीं स्थ

विश्वेषां देवानां भागधेयीं स्थ ।

अमूर्या उप सूर्ये याभिर्वा सूर्यः सह । ता नो हिन्वन्त्वध्वरम्

२४

देवीरापो अपां नपाद्यो व ऊर्मिर्हविष्य इन्द्रियावान् मदिन्तमः ।

तं देवेभ्यो देवत्रा दत्त शुक्रपेभ्यो येषां भाग स्थ स्वाहा

२७

समुद्रस्य त्वा क्षित्या उन्नयामि । समापो अद्विरगमत समोषधीभिरोषधीः

२८

॥१६५॥ (वा० य० ८।१६)

(आपः ।)

देवीराप एष वो गर्भस्तं सुप्रीतं सुभृतं विभृत ।

देव सोमैष ते लोकस्तस्मिच्छं च वक्ष्व परि च वक्ष्व

२६ ९५५

॥१६६॥ (अथर्व० ६।१२४।१-३)

अथर्वा । दिव्या आपः (निर्ऋत्यपस्तरणम्) । त्रिष्टुप् ।

दिवो नु मां बृहतो अन्तरिक्षादुपां स्तोको अभ्यपिप्तु रसेन ।
 समिन्द्रियेण पर्यसाहमग्ने छन्दोभिर्यज्ञैः सुकृतां कृतेन १
 यदि वृक्षादभ्यर्पन्तु फलं तद् यद्यन्तरिक्षात् स उ वायुरेव ।
 यत्रास्पृक्षत् तन्वोऽं यच्च वासस आपो नुदन्तु निर्ऋतिं पराचैः २
 अभ्यर्जनं सुराभि सा समृद्धिर्हिरण्यं वर्चस्तदु पुत्रिममेव ।
 सर्वा पवित्रा वितताध्यस्मत् तन्मा तारीर्निर्ऋतिर्मो अरातिः ३

॥१६७॥ (अथर्व० ७।८९।१-४)

सिन्धुद्वीपः । अग्निः (दिव्या आपः) । अनुष्टुप्, ४ त्रिपदा निचृत् परोष्णिक् ।

अपो दिव्या अचायिषं रसेन समपृक्षमहि ।
 पर्यस्वानग्र आगमं तं मा सं सृज वर्चसा १
 सं माग्ने वर्चसा सृज सं प्रजया समायुषा ।
 विद्युर्मै अस्य देवा इन्द्रो विद्यात् सह ऋषिभिः २ ९६०
 इदमापः प्र वहतावद्यं च मलं च यत् । यच्चभिदुद्रोहानृतं यच्च शेपे अभीरुणम् ३
 एधोऽस्येधिषीय समिदसि समेधिषीय । तेजोऽसि तेजो मयि धेहि ४

॥१६८॥ (अथर्व० १।४।४)

सिन्धुद्वीपः । आपः (अपां भेषजम्) । पुरस्ताद्बृहती ।

अप्स्वन्तरमृतमप्सु भेषजम् ।
 अपामुत प्रशस्तिभिरश्वा भवथ वाजिनो गावो भवथ वाजिनीः ४

॥१६९॥ (अथर्व० १।४।४)

सिन्धुद्वीपः (अथर्वा कृतिर्वा) । आपः (अपां भेषजम्) । पथ्यापङ्क्तिः ।

शं न आपो धन्वन्याऽः शमु सन्त्वनूप्याऽः ।
 शं नः खनित्रिमा आपः शमु याः कुम्भ आभृताः शिवा नः सन्तु वार्षिकीः ४

॥१७०॥ (अथर्व० ६।२२।१-३)

शन्तातिः । १ आदित्यरास्मिः, २-३ मरुतः (भेषज्यम्) । त्रिष्टुप्, २ चतुष्पदा भुरिजगती ।

कृष्णं नियानं हरयः सुपर्णा अपो वसाना दिवमुत् पतन्ति ।
 त आर्ववृत्रन्तसर्दनाहृतस्यादिद घृतेन पृथिवीं व्युद्भिः १ ९६५

पर्यस्वतीः कृणुथाप ओषधीः शिवा यदेजंथा मरुतो रुक्मवक्षसः ।
 ऊर्जं च तत्र सुमतिं च पिन्वत यत्रा नरो मरुतः सिञ्चथा मधु २
 उदप्रुतो मरुतस्तौ इयते वृष्टिर्या विश्वा निवतस्पृणार्ति ।
 एजाति ग्लहा कन्येवि तुन्नैरुं तुन्दाना पत्येव जाया ३

॥१७१॥ (अथर्व० ६।२३।१-३)

शन्तातिः । आपः (अपां भेषज्यम्) । १ अनुष्टुप्, २ त्रिपदा गायत्री, ३ परोष्टिणक् ।

सस्रुषीस्तदपसो दिवा नक्तं च सस्रुषीः । वरेण्यक्रतुरहमपो देवीरुपं ह्वये १
 ओता आपः कर्मण्या मुञ्चन्त्वितः प्रणीतये । सद्यः कृण्वन्त्वेतवे २
 देवस्य सवितुः सवे कर्म कृण्वन्तु भानुषाः । शं नो भवन्त्वप ओषधीः शिवाः ३ ९७०

॥१७२॥ (अथर्व० ६।२४।१-३)

शन्तातिः । आपः (अपां भेषज्यम्) । अनुष्टुप् ।

हिमवतः प्र स्रवन्ति सिन्धौ समह संगमः ।
 आपो ह मह्यं तद् देवीर्ददन् हृद्योतभेषजम् १
 यन्मे अक्षयोरादिद्योत पाण्योः प्रपदोश्च यत् ।
 आपस्तत् सर्वं निष्करन् भिषजां सुभिषक्तागाः २
 सिन्धुपत्नीः सिन्धुराज्ञीः सर्वा या नद्यं स्थनं ।
 दत्त नस्तस्य भेषजं तेना वो भुनजामहे ३

॥१७३॥ (ऋ० ५।८३।१-१०)

भौमोऽग्निः । पर्जन्यः । त्रिष्टुप्, २-४ जगती, ९ अनुष्टुप् ।

अच्छा वद तवसं गीर्भिराभिः स्तुहि पर्जन्यं नमसा विवास ।
 कर्निक्रदद् वृषभो जीरदान् रेतो दध्वात्योषधीषु गर्भम् १
 वि वृक्षान् हन्त्युत हन्ति रक्षसो विश्वं बिभाय भुवनं महावधात् ।
 उतानागा ईषते वृष्ण्यावतो यत् पर्जन्यः स्तनयन् हन्ति दुष्कृतः २ ९७५
 रथीव कश्याश्वा अभिक्षिप आविर्दूतान् कृणुते वर्ष्याँ इ अहं ।
 दूरात् सिंहस्य स्तनथा उदीरते यत् पर्जन्यः कृणुते वर्ष्याँ नमः ३
 प्र वाता वान्ति पतर्यान्ति विद्युत् उदोषधीर्जिहते पिन्वते स्वः ।
 इरा विश्वस्मै भुवनाय जायते यत् पर्जन्यः पृथिवीं रेतसार्वति ४ ९७७

| | | |
|-------------------------------|--|-------|
| यस्य व्रते पृथिवी ननमीति | यस्य व्रते शफवज्रधूरीति । | |
| यस्य व्रत ओषधीर्विश्वरूपाः | स नः पर्जन्य महि शर्म यच्छ | ५ |
| दिवो नो वृष्टिं मरुतो ररीध्वं | प्र पिन्वत वृष्णो अश्वस्य धाराः । | |
| अर्वाङ्गितेन स्तनयितुनेह्यपो | निषिञ्चन्नसुरः पिता नः | ६ |
| अभि क्रन्द स्तनय गर्भमा धा | उदुन्वता परि दीया रथेन । | |
| दतिं सु कर्ष विषितं न्यञ्चं | समा भवन्तूद्वतो निपादाः | ७ ९८० |
| महान्तं कोशमुदचा नि षिञ्च | स्यन्दन्तां कुल्या विषिताः पुरस्तात् । | |
| घृतेन द्यावापृथिवी व्युन्धि | सुप्रपाणं भवत्वधन्याभ्यः | ८ |
| यत् पर्जन्य कनिक्रदत् | स्तनयन् हंसि दुष्कृतः । | |
| प्रतीदं विश्वं मोदते | यत् किं च पृथिव्यामधि | ९ |
| अवर्षीर्विषमुदू षू गृभाया | ऽकूर्धन्वान्यत्येतवा उ । | |
| अर्जीजन ओषधीर्भोजनाय | कमुत प्रजाभ्योऽविदो मनीषां | १० |

॥१७४॥ (ऋ० १०।१७।१६)

ऐन्द्रो वसुक्रः । इन्द्रः (पर्जन्यः) । त्रिष्टुप् ।

| | | |
|--------------------------|-------------------------------|----|
| दशानामेकं कपिलं समानं | तं हिन्वन्ति क्रतवे पार्याय । | |
| गर्भे माता सुधितं वक्षणा | स्ववेनन्तं तुषयन्ती विभर्ति | १६ |

॥१७५॥ (ऋ० ७।१०।१-६)

मैत्रावरुणिर्वासिष्ठः (वृष्टिकामः), कुमार आग्नेयो वा । पर्जन्यः । त्रिष्टुप् ।

| | | |
|---------------------------------|----------------------------------|-------|
| तिस्रो वाचः प्र वदु ज्योतिरग्रा | या एतद् दुहे मधुदोषमूषः । | |
| स वत्सं कृण्वन् गर्भमोषधीनां | सद्यो जातो वृषभो रौरवीति | १ ९८५ |
| यो वर्धन ओषधीनां यो अपां | यो विश्वस्य जगतो देव ईशे । | |
| स त्रिधातुं शरणं शर्म यंसत् | त्रिवर्तु ज्योतिः स्वभिष्टयस्मे | २ |
| स्तरीरुं त्वद् भवति सूत उ त्वद् | यथावशं तन्वै चक्र एषः । | |
| पितुः पयः प्रति गृभ्णाति माता | तेन पिता वर्धते तेन पुत्रः | ३ |
| यस्मिन् विश्वानि भुवनानि तस्थु | स्तिस्रो द्यावस्त्रेधा ससुरापः । | |
| त्रयः कोशास उपसेचनासो | मध्वः श्रोतन्त्यभितो विरप्शम् | ४ ९८८ |

इदं वचः पर्जन्याय स्वराजं हृदो अस्त्वन्तरं तज्जुजोषत् ।
 मयोभ्रुवो वृष्टयः सन्त्वस्मे सुपिप्पला ओषधीर्देवगोपाः ५
 स रेतोधा वृषभः शश्वतीनां तस्मिन्नात्मा जगतस्तस्थुषश्च ।
 तन्म श्रुतं पातु शतशारदाय यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ६ ९९०

॥१७६॥ (ऋ० ७।१०२।१-३)

मैत्रावरुणिर्वसिष्ठः (वृष्टिकामः), कुमार आग्नेयो वा । पर्जन्यः । गायत्री, २ पादनिचृत् ।
 पर्जन्याय प्र गायत दिवस्पुत्राय मीळहुषे । स नो यवसमिच्छतु १
 यो गर्भमोषधीनां गवां कृणोत्यवताम् । पर्जन्यः पुरुषीणाम् २
 तस्मा इदास्ये हविर्जुहोता मधुमत्तमम् । इळां नः संयतं करत् ३

॥१७७॥ (ऋ० ७।१०३।१-१०)

मैत्रावरुणिर्वसिष्ठः । मण्डूकाः (पर्जन्यः) । त्रिष्टुप्, १ अनुष्टुप् ।

संवत्सरं शश्याना ब्राह्मणा व्रतचारिणः ।
 वाचं पर्जन्यजिन्वितां प्र मण्डूकां अवादिषुः १
 दिव्या आपो अभि यदेनमायन् दृतिं न शुष्कं सरसी शयानम् ।
 गवामह न मायुर्वत्सिनीनां मण्डूकानां वधुरत्रा समेति २ ९९५
 यदीमेनां उशतो अभ्यवर्षात् तृष्यावतः प्रावृष्यागतायाम् ।
 अक्खलीकृत्या पितरं न पुत्रो अन्यो अन्यमुप वदन्तमेति ३
 अन्यो अन्यमनु गृष्णात्येनो रपां प्रसर्गे यदमन्दिषाताम् ।
 मण्डूको यदुभिवृष्टः कनिष्कन् पृश्निः संपृङ्क्ते हरितेन वाचम् ४
 यदेषामन्यो अन्यस्य वाचं शाक्तस्यैव वदति शिक्षमाणः ।
 सर्वं तदेषां समृधेव पर्व यत् सुवाचो वदथनाध्यप्सु ५
 गोमाथुरेको अजमाथुरेकः पृश्निरेको हरित एक एषाम् ।
 समानं नाम बिभ्रतो विरूपाः पुरुत्रा वाचं पिपिशुर्वदन्तः ६
 ब्राह्मणासौ अतिरात्रे न सोमे सरो न पूर्णमभितो वदन्तः ।
 संवत्सरस्य तदहः परि ष्ट यन्मण्डूकाः प्रावृषीणं बभूव ७
 ब्राह्मणासः सोमिनो वाचमक्रत ब्रह्म कृण्वन्तः परिवत्सुरीणम् ।
 अध्वर्यवो घर्मिणः सिष्विद्वाना आविर्भवन्ति गुह्या न के चित् ८ १००१
 दै० [आयुर्वेद०] १०

देवर्हितं जुगुपुर्द्वादशस्य ऋतुं नरो न प्रमिनन्त्येते ।
 संवत्सरे प्रावृष्यागतायां तप्ता घर्मा अश्रुवते विसर्गम् ९
 गोमांपुरदादुजमांयुरदात् पृश्निरदाद्धरितो नो वस्त्रनि ।
 गवां मण्डूका ददतः शतानि सहस्रसावे प्रतिरन्त आयुः १०

॥१७८॥ (अथर्व० ४।१५।१-१६)

अथर्वा । १ दिशः, २-३ वीरुधः, ४ मरुत्पर्जन्यौ, ५-१० मरुतः आपः, ११ प्रजापतिः स्तनयितुः,
 १२ वरुणः, १३-१५ मण्डूकाः पितरश्च, १६ वातः (वृष्टिः) । त्रिष्टुप्, १-२, ५ विराट्
 जगती, ४ विराट् पुरस्तादबृहती; ७, १३ अनुष्टुप्, ९ पथ्यापङ्क्तिः, १० भुरिक्,
 १२ पञ्चपदानुष्टुग्गर्भा भुरिक्, १५ शंकुमत्यनुष्टुप् ।

समुत्पतन्तु प्रदिशो नभस्वतोः समभ्राणि वातजृतानि यन्तु ।
 महऋषभस्य नदतो नभस्वतो वाश्रा आपः पृथिवीं तर्पयन्तु १
 समीक्षयन्तु तविषाः सुदानवोऽपां रसा ओषधीभिः सचन्ताम् ।
 वर्षस्य सर्गा महयन्तु भूमिं पृथग् जायन्तामोषधयो विश्वरूपाः २ १००५
 समीक्षयस्व गायतो नभस्यपां वेगांसः पृथगुद् विजन्ताम् ।
 वर्षस्य सर्गा महयन्तु भूमिं पृथग् जायन्तां वीरुधो विश्वरूपाः ३
 गुणास्त्वोषं गायन्तु मारुताः पर्जन्य घोषिणः पृथक् ।
 सर्गा वर्षस्य वर्षतो वर्षन्तु पृथिवीमनु ४
 उदीरयत मरुतः समुद्रतस्त्वेषो अर्को नभ उत पातयाथ ।
 महऋषभस्य नदतो नभस्वतो वाश्रा आपः पृथिवीं तर्पयन्तु ५
 अभि क्रन्द स्तनयार्दयोदधिं भूमिं पर्जन्य पयसा समङ्ग्धि ।
 त्वया सृष्टं बहुलमैतु वर्षमांशरैषी कृशगुरेत्वस्तम् ६
 सं वोऽवन्तु सुदानव उत्सा अजगरा उत ।
 मरुद्भिः प्रच्युता मेघा वर्षन्तु पृथिवीमनु ७ १०१०
 आशामाशां वि द्यौततां वाता वान्तु दिशोदिशः ।
 मरुद्भिः प्रच्युता मेघाः सं यन्तु पृथिवीमनु ८
 आपो विद्युदुभ्रं वर्षं सं वोऽवन्तु सुदानव उत्सा अजगरा उत ।
 मरुद्भिः प्रच्युता मेघाः प्रावन्तु पृथिवीमनु ९
 अपामग्निस्तनूभिः संविदानो य ओषधीनामाधिपा बभूव ।
 स नो वर्षं वन्तुतां जातवेदाः प्राणं प्रजाभ्यो अमृतं दिवस्पति १० १०१३

- प्रजापतिः सलिलादा समुद्रादापं ईरयन्नुदधिर्मर्दयाति ।
 प्र प्यायतां वृष्णो अश्वस्य रेतोऽर्वाङ्तेन स्तनयितुनेहि ११
 अपो निषिञ्चन्नसुरः पिता नः श्वसन्तु गर्गैरा अपां वरुणाव नीचीरपः सृज ।
 वदन्तु पृथिवीबाहवो मण्डूका हरिणानु १२ १०१५
 संवत्सरं शशयाना ब्राह्मणा व्रतचारिणः ।
 वाचं पर्जन्याजिन्वितां प्र मण्डूकां अवादिषुः १३
 उपप्रवद मण्डूकि वर्षमा वद तादुरि । मध्ये हृदस्य छवस्व विगृह्य चतुरः पदः १४
 खण्वखा३इ खैमखा३इ मध्ये तदुरि । वर्षं वनुध्वं पितरो मरुतां मन इच्छत १५
 महान्तं कोशमुदचाभि षिञ्च सविद्युतं भवतु वातु वातः ।
 तन्वतां यज्ञं बहुधा विसृष्टा आनन्दिनीरोषधयो भवन्तु १६

॥१७९॥ (अथर्व० ७।१८।१-२)

अथर्वा । पृथिवी, पर्जन्यः (वृष्टिः) । १ चतुष्पदा भुरिगुणिक, २ त्रिष्टुप् ।

- प्र नभस्व पृथिवि भिन्द्हीदं दिव्यं नमः ।
 उद्रो दिव्यस्य नो धातरीशानो वि प्या हतिम् १ १०२०
 न घ्नस्तताप न हिमो जघान प्र नभतां पृथिवी जीरदानुः ।
 आपश्चिदस्मै घृतमित् क्षरन्ति यत्र सोमः सदमित् तत्र भद्रम् २

॥१८०॥ (ऋ० ३।३३।१-१३)

गाथिनो विश्वामित्रः; ४,६,८,१० नद्यः ऋषिकाः । नद्यः; ४,८,१० विश्वामित्रः;

६,७ इन्द्रः । त्रिष्टुप्, १३ अनुष्टुप् ।

- प्र पर्वतानामुशती उपस्था—दश्वे इव विषिते हासमाने ।
 गावेव शुभ्रे मातरा रिहाणे विपाट्छुतुद्री पर्यसा जवेते १
 इन्द्रैषिते प्रसवं भिक्षमाणे अच्छा समुद्रं रथ्येव याथः ।
 समाराणे ऊर्मिभिः पिन्वमाने अन्या वामन्यामप्येति शुभ्रे २
 अच्छा सिन्धुं मातृतमामयासं विपाशमुर्वी सुभगागन्म ।
 वत्समिव मातरा संरिहाणे समानं योनिमनु संचरन्ती ३
 एना वयं पर्यसा पिन्वमाना अनु योनिं देवकृतं चरन्तीः ।
 न वर्तवे प्रसवः सर्गेतक्तः कियुर्विप्रो नद्यो जोहवीति ४
 रमध्वं मे वचसे सोम्याय ऋतावरीरुपं मुहूर्तमेवैः ।
 प्र सिन्धुमच्छा बृहती मनीषा ऽवस्युरहे कुशिकस्य सूनुः ५ १०२६

| | |
|---|--------|
| इन्द्रो असाँ अरदुद् वज्रबाहु—रपाहन् वृत्रं परिधिं नदीनाम् । | |
| देवोऽनयत् सविता सुपाणि—स्तस्य वयं प्रसवे याम उर्वीः | ६ |
| प्रवाच्यं शश्वधा वीर्यं त—दिन्द्रस्य कर्म यदहिं विवृश्वत् । | |
| वि वज्रेण परिषदो जघाना—ऽऽयन्नापोऽयं नभिच्छमानाः | ७ |
| एतद् वचो जरितर्माणि मृष्टा आ यत् ते घोषानुत्तरा युगानि । | |
| उक्थेषु कारो प्रति नो जुषस्व मा नो नि कः पुरुषत्रा नमस्ते | ८ |
| ओ षु स्वसारः कारवे शृणोत ययौ वो दूरादनसा रथेन । | |
| नि पू नमध्वं भवता सुपारा अधोअक्षाः सिन्धवः स्रोत्याभिः | ९ १०३० |
| आ ते कारो शृणवामा वचोसि ययार्थं दूरादनसा रथेन । | |
| नि ते नंसै पीप्यानेव योषा मर्यायेव कन्या शश्वचै ते | १० |
| यदुङ्ग त्वा भरताः संतरेयु—र्गव्यन् ग्रामं इषित इन्द्रजितः । | |
| अर्षादहं प्रसवः सर्गतक्त आ वो वृणे सुमतिं यज्ञियानाम् | ११ |
| अतारिषुर्भरता गव्यवः स—मभक्त विप्रः सुमतिं नदीनाम् । | |
| प्र पिन्वध्वमिषयन्तीः सुराधा आ वक्षणाः पूणध्वं यात शीभम् | १२ |
| उद् व ऊर्मिः शम्या ह—न्त्वापो योक्त्राणि मुञ्चत । | |
| मादुष्कृतौ व्येनसा—ऽघ्न्यौ शूनमारताम् | १३ |

॥१८१॥ (ऋ० ७।५०।४)

मैत्रावरुणिर्वसिष्ठः । नद्यः । अतिजगती शकरी वा ।

| | |
|--|--------|
| याः प्रवतो निवर्त उद्वत उदुन्वतीरनुदुकाश्च याः । | |
| ता असभ्यं पर्यसा पिन्वमानाः शिवा देवीरशिपदा भवन्तु | |
| सर्वी नद्यो अशिमिदा भवन्तु | ४ १०३५ |

॥१८२॥ (ऋ० १०।७५।१-९)

सिन्धुक्षित प्रेयमेधः । नद्यः । जगती ।

| | |
|--|--------|
| प्र सु व आपो महिमानमुत्तमं कारुर्वोचाति सदर्ने विवस्वतः । | |
| प्र सप्तसप्त त्रेधा हि चक्रुः प्र सुत्वरीणामति सिन्धुरोजसा | १ |
| प्र तेऽरदुद् वरुणो यातवे पथः सिन्धो यद् वाजो अभ्यद्रवस्त्वम् । | |
| भूम्या अधि प्रवता यासि सानुना यदेषामग्रं जगतामिरज्यासि | २ १०३७ |

| | |
|--|--------|
| दिवि स्व॒नो य॑तते भू॒म्योप॑र्य॒नन्तं शु॒ष्ममु॒दि॒यति॑ भा॒नुना॑ । | |
| अ॒भ्रादि॑व प्र स्त॒नय॑न्ति वृ॒ष्टयः॑ सि॒न्धुर्य॑देति॑ वृ॒षभो॑ न रो॒रुवत् | ३ |
| अ॒भि त्वा॑ सि॒न्धो शिशु॑मिन्न मा॒तरो वा॒श्रा अ॑र्षन्ति॒ पय॑सेव धे॒नवः॑ । | |
| राजै॑व यु॒ष्वा नय॑सि त्वामि॒त् सि॒चौ यदा॑सा॒मग्रं प्र॑वता॒मिन॑क्षसि | ४ |
| इ॒मं मे॑ ग॒ङ्गे य॒मुने॑ सरस्वति॒ शु॒त॒द्रि स्तोमं॑ स॒चता॑ प॒रु॒ण्या । | |
| अ॒सि॒कन्या॑ म॒रुदृ॒धे वि॒तस्त॑या—ऽऽजी॑कीये शृ॒णु॒ह्या सु॒षोम॑या | ५ १०४० |
| तृ॒ष्टा॒मया॑ प्रथ॒मं या॑तवे स॒जः सु॒सर्त्वा॑ र॒सया॑ श्वेत्या॒ त्या । | |
| त्वं सि॒न्धो कु॑र्मया गोम॒तीं कु॑र्म॒ मेह॑त्त्वा स॒रथं॑ या॒भिरी॑यसे | ६ |
| ऋ॒जी॒त्येनी॑ रु॒शती॑ महि॒त्वा प॒रि ज॒यांसि॑ भ॒रते॑ रजांसि॒ । | |
| अ॒द॒ब्धा सि॒न्धुर॑पसा॒मप॑स्त॒मा—ऽश्वा॑ न चि॒त्रा व॑पु॒षीव॑ दर्श॒ता | ७ |
| स्व॒श्चा सि॒न्धुः सु॒रथा॑ सु॒वासा॑ हि॒र॒ण्ययी॑ सु॒कृता॑ वा॒जिनी॑वती । | |
| ऊ॒र्णा॒वती॑ यु॒वतिः॑ सी॒लमा॑व—त्यु॒ताधि॑ वस्ते सु॒भगा॑ मधु॒वृध॑म् | ८ |
| सु॒खं रथं॑ यु॒युजे॑ सि॒न्धुर॑श्चि॒नं तेन॑ वा॒जं स॒निष॑द॒स्मिन्नाजौ॑ । | |
| म॒हान् ह्य॑स्य म॒हिमा॑ प॒न॒स्यते॑ ऽद॒ब्धस्य॑ स्वयं॒शसो॑ वि॒र॒ग्निनः॑ | ९ |

॥१८३॥ (ऋ० ७।९।५।३)

मैत्रावरुणिर्वसिष्ठः । सरस्वान् । त्रिष्टुप् ।

| | |
|---|--------|
| स वा॑वृ॒धे न॒र्यो योष॑णासु वृ॒षा शिशु॑र्वृ॒षभो॑ य॒ज्ञिया॑सु । | |
| स वा॒जिनं॑ म॒धव॑द्भ॒थो द॒धाति॑ वि सा॒तये॑ त॒नवं॑ मा॒मृजी॑त | ३ १०४५ |

॥१८४॥ (ऋ० ७।९।४--६)

मैत्रावरुणिर्वसिष्ठः । सरस्वान् । गायत्री ।

| | |
|---|---|
| ज॒नीय॑न्तो न्वग्र॒वः पु॒त्रीय॑न्तः सु॒दान॑वः । सर॑स्वन्तं ह॒वाम॑हे | ४ |
| ये ते॑ सर॒स्व ऊ॒र्मयो॑ म॒धुम॑न्तो घृ॒तश्चु॑तः । तेभि॑र्नोऽवि॒ता भ॑व | ५ |
| पी॒पि॒वांसं॑ सर॒स्वतः॑ स्त॒नं यो वि॒श्वदर्श॑तः । भ॒क्षीम॑हि॒ प्र॒जामि॑षम् | ६ |

॥१८५॥ (अथर्व० ७।४०।१-२)

प्रस्कण्वः । सरस्वान् । १ भुरिक्, २ त्रिष्टुप् ।

| | |
|--|--------|
| यस्य॑ व्र॒तं प॒शवो॑ य॒न्ति स॑र्वे॒ यस्य॑ व्र॒त उ॑प॒तिष्ठ॑न्त॒ आपः॑ । | |
| यस्य॑ व्र॒ते पु॑ष्ट॒पति॑र्नि॒विष्ट॑स्तं सर॑स्वन्त॒मव॑से ह॒वाम॑हे | १ १०४९ |

आ प्रत्यश्च दाशुषे दाश्वंसं सरस्वन्तं पुष्टपतिं रयिष्ठाम् ।

रायस्पोषे श्रवस्युं वसाना इह हुवेम सदनं रयीणाम्

२ १०५०

॥१८६॥ (ऋ० १।३।१०-११)

मधुच्छन्दावैश्वामित्रः । सरस्वती । गायत्री ।

पावका नः सरस्वती वाजेभिर्वाजिनीवती । यज्ञं वष्टु धियावसुः

१०

चोदयित्री सुनृतानां चेतन्ती सुमतीनाम् । यज्ञं दधे सरस्वती

११

महो अर्णः सरस्वती प्र चेतयति केतुना । धियो विश्वा वि राजति

१२

॥१८७॥ (ऋ० १।१६४।४९)

दीर्घतमा औचध्यः । सरस्वती । त्रिष्टुप् ।

यस्ते स्तनः शशयो यो मयोभू—र्येन विश्वा पुष्यसि वार्याणि ।

यो रतन्धा वसुविद् यः सुदत्रः सरस्वति तमिह धातवे कः

४९

×॥१८८॥ (ऋ० १।३०।८ [पूर्वार्धः])

गृत्समदः (आङ्गिरसः शौनहोत्रः पश्चाद् भार्गवः) शौनकः । सरस्वती । त्रिष्टुप् ।

सरस्वति त्वमस्माँ अविड्ढि मरुत्वती धृषती जेषि शत्रून्

८ १०५५

॥१८९॥ (ऋ० २।४१।१६-१८)

गृत्समदः (आङ्गिरसः शौनहोत्रः पश्चाद् भार्गवः) शौनकः । सरस्वती । अनुष्टुप्, १८ बृहती ।

अम्बितमे नदीतमे देवितमे सरस्वति ।

अप्रशस्ता इव स्मसि प्रशस्तिमम्ब नस्कृधि

१६

त्वे विश्वा सरस्वति श्रितार्युषि देव्याम् ।

शुनहोत्रेषु मत्स्व प्रजां देवि दिदिड्ढि नः

१७

इमा ब्रह्म सरस्वति जुषस्व वाजिनीवति ।

या ते मन्म गृत्समदा ऋतावारी प्रिया देवेषु जुह्वति

१८

॥१९०॥ (ऋ० ६।६१।१-१४)

बार्हस्पत्यो भरद्वाजः । सरस्वती । गायत्री, १-३, १३ जगती; १४ त्रिष्टुप् ।

इयमददाद् रभसमृणच्युतं दिवोदासं वध्यश्वाय दाशुषे ।

या अश्वन्तमाचखादावसं पणि ता ते दात्राणि तविषा सरस्वति

१

इयं शुष्मेभिर्विसुखा इवारुजत् सानु गिरीणां तविषेभिरूमिभिः ।

पारावतप्रीमवसे सुवृत्तिभिः सरस्वतीमा विवासेम धीतिभिः

२ १०६०

| | |
|--|---------|
| सरस्वति देवनिदो नि बर्हय प्रजां विश्वस्य वृसयस्य मायिनः । | |
| उत क्षितिभ्योऽवनीरविन्दो विषमेभ्यो अस्रवो वाजिनीवति | ३ |
| प्र णो देवी सरस्वती वाजैर्भिर्वाजिनीवती । धीनामचित्र्यवतु | ४ |
| यस्त्वा देवि सरस्वत्युपब्रूते धने हिते । इन्द्रं न वृत्रतूर्ये | ५ |
| त्वं देवि सरस्वत्यवा वाजेषु वाजिनि । रदा पूषेवं नः सुनिम् | ६ |
| उत स्या नः सरस्वती घोरा हिरण्यवर्तनिः । वृत्रघ्नी वष्टि सुष्टुतिम् | ७ १०६५ |
| यस्या अनन्तो अहुतस्त्वेषश्चरिष्णुरर्णवः । अमश्चरति रोरुवत् | ८ |
| सा नो विश्वा अति द्विषः स्वसरन्या ऋतावरी । अतन्नहेव सूर्यः | ९ |
| उत नः प्रिया प्रियासु सप्तस्वसा सजुष्टा । सरस्वती स्तोम्या भूत् | १० |
| आपमृषी पार्थिवा न्युरु रजो अन्तरिक्षम् । सरस्वती निदस्पातु | ११ |
| त्रिषधस्या सप्तधातुः पञ्च जाता वर्धयन्ती । वाजैवाजे हव्या भूत् | १२ १०७० |
| प्र या महिम्ना महिनासु चेकिते द्युम्नेभिरन्या अपसामपस्तमा । | |
| रथ इव बृहती विभ्वने कृतोपस्तुत्या चिकितुषा सरस्वती | १३ |
| सरस्वत्यभि नो नेषि वस्यो माप स्फरीः पयसा मा न आ धक् । | |
| जुषस्वं नः सुख्या वेद्या च मा त्वत् क्षेत्राण्यरणानि गन्म | १४ |

॥१९१॥ (ऋ० ७।९५।१-२,४-६)

मैत्रावरुणिर्वसिष्ठः । सरस्वती । त्रिष्टुप् ।

| | |
|---|--------|
| प्र क्षोदसा धार्यसा सप्त एषा सरस्वती धरुणमार्यसी पूः । | |
| प्रबार्धाना रथ्येव याति विश्वा अपो महिना सिन्धुरन्याः | १ |
| एकाचेतत् सरस्वती नदीनां शुचिर्यती गिरिभ्य आ समुद्रात् । | |
| रायश्चेतन्ती भुवनस्य भूरैर्धृतं पयो दुदुहे नाहुषाय | २ |
| उत स्या नः सरस्वती जुषाणोप श्रवत् सुभगा यज्ञे असिन् । | |
| मितक्षुभिर्नमस्यैरियाना राया युजा चिदुत्तरा सखिभ्यः | ४ १०७५ |
| इमा जुह्वाना युष्मदा नमोभिः प्रति स्तोमं सरस्वति जुषस्व । | |
| तव शर्मन् प्रियतमे दधाना उप स्थेयाम शरणं न वृक्षम् | ५ |
| अयं ते सरस्वति वसिष्ठो द्वारावृतस्य सुभगे व्यावः । | |
| वर्धे शुभ्रे स्तुवते रासि वाजान् युयं पात स्वस्तिभिः सदा नः | ६ १०७७ |

॥१९२॥ (क्र० ७।९६।१-३)

मैत्रावरुणिर्वासिष्ठः । सरस्वती । १-२ प्रगाथः- (१ बृहती, २ सतो बृहती), ३ प्रस्तारपङ्क्तिः ।

बृहदु गायिषे वचो ऽसुर्या नदीनाम् ।

सरस्वतीमिन्महया सुवृक्तिभिः स्तोमैर्वसिष्ठ रोदसी १

उभे यत् ते महिना शुभ्रे अन्धसी अधिक्षियन्ति पुरवः ।

सा नो बोध्यवित्री मरुत्सखा चोद राधो मघोनाम् २

भद्रमिद् भद्रा कृणवत् सरस्वत्यकवारी चेतति वाजिनीवती ।

गृणाना जमदाग्नवत् स्तुवाना च वसिष्ठवत् ३ १०८०

॥१९३॥ (क्र० १०।१७।१-२, ७-९)

देवश्रवा यामायनः । १-२ सरण्यूः, ७-९ सरस्वती । त्रिष्टुप् ।

त्वष्टा दुहित्रे वहतुं कृणोतीतीदं विश्वं भुवनं समेति ।

यमस्य माता पर्युह्यमाना महो जाया विवस्वतो ननाश १

अपांगूहन्नमृतां मर्त्येभ्यः कृत्वी सर्वर्णामददुर्विवस्वते ।

उताश्विनावभरद् यत् तदासीदजहद् द्वा मिथुना सरण्यूः २

सरस्वतीं देवयन्तो हवन्ते सरस्वतीमध्वरे तायमाने ।

सरस्वतीं सुकृतो अह्वयन्त सरस्वती दाशुषे वार्यं दात् ७

सरस्वति या सरथं ययार्थं स्वधार्भिर्देवि पितृभिर्मदन्ती ।

आसद्यास्मिन् बर्हिषि मादयस्वाऽनमीवा इष आ धेह्यस्मे ८

सरस्वतीं यां पितरो हवन्ते दक्षिणा यज्ञमभिनक्षमाणाः ।

सहस्रार्धमिलो अत्र भागं रायस्पोषं यजमानेषु धेहि ९ १०८५

॥१९४॥ (अथर्व० ७।१०।१)

शौनकः । सरस्वती । त्रिष्टुप् ।

यस्ते स्तनः शशयुर्यो मयोभूर्यः सुम्रयुः सुहवो यः सुदत्रः ।

येन विश्वा पुष्यसि वार्याणि सरस्वति तमिह धातवे कः १

॥१९५॥ (अथर्व० ७।११।१)

शौनकः । सरस्वती । त्रिष्टुप् ।

यस्ते पृथु स्तनयितुर्य ऋष्वो दैवः केतुर्विश्वमाभूषतीदम् ।

मा नो वधीर्विद्युता देव सस्यं मोत वधी रश्मिभिः सूर्यस्य १ १०८७

॥१९६॥ (अथर्व० ७।५७।१-२)

वामदेवः । सरस्वती । जगती ।

यदाशसा वदतो मे विचुक्षुमे यद् याचमानस्य चरतो जनाँ अनु ।

यदात्मनि तन्वो मे विरिष्टं सरस्वती तदा पृणद् घृतेन १

सप्त क्षरन्ति शिशवे मरुत्वते पित्रे पुत्रामो अप्यवीवृतन्नृतानि ।

उभे इदस्योभे अस्य राजत उभे यतेते उभे अस्य पुष्यतः २

॥१९७॥ (अथर्व० ७।६८।१-३)

शन्तातिः । सरस्वती । १ अनुष्टुप्, २ त्रिष्टुप्, ३ गायत्री ।

सरस्वति व्रतेषु ते दिव्येषु देवि धामसु । जुषस्व हव्यमाहुतं प्रजां देवि ररास्व नः १ १०९०

इदं ते हव्यं घृतवत् सरस्वतीदं पितॄणां हविरास्यै १ यत् ।

इमानि त उदिता शंतमानि तेभिर्वयं मधुमन्तः स्याम २

शिवा नः शंतमा भव सुमृडीका सरस्वति । मा ते युयोम संदशः ३

॥१९८॥ (वा० य० १०।१-४, ६, १९)

(आपः ।)

अपो देवा मधुमतीरगृभ्णन्नूजस्वती राजम्बुश्रितानाः ।

याभिर्मित्रावरुणावभ्यषिञ्चन् याभिरिन्द्रमनयन्नत्यरातीः १

वृष्णा ऊर्मिरसि राष्ट्रदा राष्ट्रं मे देहि स्वाहा वृष्णा ऊर्मिरसि राष्ट्रदा राष्ट्रममुष्मै देहि वृषसेनोऽसि

राष्ट्रदा राष्ट्रं मे देहि स्वाहा वृषसेनोऽसि राष्ट्रदा राष्ट्रममुष्मै देहि २

अर्थेत स्थ राष्ट्रदा राष्ट्रं मे दत्त स्वाहाअर्थेत स्थ राष्ट्रदा राष्ट्रममुष्मै दत्तौजस्वती स्थ राष्ट्रदा राष्ट्रं

मे दत्त स्वाहौजस्वती स्थ राष्ट्रदा राष्ट्रममुष्मै दत्तापः परिवाहिणीं स्थ राष्ट्रदा राष्ट्रं मे दत्त स्वाहापः

परिवाहिणीं स्थ राष्ट्रदा राष्ट्रममुष्मै दत्तापां पतिरसि राष्ट्रदा राष्ट्रं मे देहि स्वाहापां पतिरसि राष्ट्रदा

राष्ट्रममुष्मै देह्यापां गर्भोऽसि राष्ट्रदा राष्ट्रं मे देहि स्वाहापां गर्भोऽसि राष्ट्रदा राष्ट्रममुष्मै देहि ३ १०९५

सूर्यत्वचस स्थ राष्ट्रदा राष्ट्रं मे दत्त स्वाहा सूर्यत्वचस स्थ राष्ट्रदा राष्ट्रममुष्मै दत्त सूर्यवर्चस स्थ

राष्ट्रदा राष्ट्रं मे दत्त स्वाहा सूर्यवर्चस स्थ राष्ट्रदा राष्ट्रममुष्मै दत्त मान्दा स्थ राष्ट्रदा राष्ट्रं मे दत्त

स्वाहा मान्दा स्थ राष्ट्रदा राष्ट्रममुष्मै दत्त व्रजक्षितं स्थ राष्ट्रदा राष्ट्रं मे दत्त स्वाहा व्रजक्षितं स्थ

राष्ट्रदा राष्ट्रममुष्मै दत्त वाशा स्थ राष्ट्रदा राष्ट्रं मे दत्त स्वाहा वाशा स्थ राष्ट्रदा राष्ट्रममुष्मै दत्त

शर्विष्ठा स्थ राष्ट्रदा राष्ट्रं मे दत्त स्वाहा शर्विष्ठा स्थ राष्ट्रदा राष्ट्रममुष्मै दत्त शक्वरी स्थ राष्ट्रदा

राष्ट्रं मे दत्त स्वाहा शक्वरी स्थ राष्ट्रदा राष्ट्रममुष्मै दत्त जनभृतं स्थ राष्ट्रदा राष्ट्रं मे दत्त स्वाहा

जनभृतं स्थ राष्ट्रदा राष्ट्रमुष्मै दत्त विश्वभृतं स्थ राष्ट्रदा राष्ट्रं मे दत्त स्वाहा विश्वभृतं स्थ राष्ट्रदा
राष्ट्रमुष्मै दत्तापः स्वराजं स्थ राष्ट्रदा राष्ट्रमुष्मै दत्त । मधुमतीर्मधुमतीभिः पृच्यन्तां महिं क्षत्रं
क्षत्रियाय वन्वाना अनाघृष्टाः सीदत सहजैसो महिं क्षत्रं क्षत्रियाय दधतीः ४

सवितुर्वैः प्रसव उत्पुनाम्यच्छिद्रेण पवित्रेण सूर्यस्य रश्मिभिः ।

अनिभृष्टमसि वाचो बन्धुस्तपोजाः सोमस्य दात्रमसि स्वाहा राजस्वः ६

प्र पर्वतस्य वृषभस्य पृष्ठान्नावश्वरन्ति स्वसिच इयानाः ।

ता आववृत्रन्नधरागुदक्ता अहिं बुध्न्यमनु रीर्यमाणाः १९

॥१९९॥ (वा० य० ११।३८)

(आपः ।)

अपो देवीरुपसृज मधुमतीर्यक्ष्माय प्रजाभ्यः ।

तासामास्थानादुज्जिहतामोषधयः सुपिप्पलाः ३८

॥२००॥ (वा० य० ११।३५, ५५)

(आपः ।)

आपो देवीः प्रतितृष्णीत भस्मैतत् स्योने कृणुध्वः सुरभा उ लोके ।

तस्मै नमन्तां जनयः सुपत्नीर्मातेव पुत्रं बिभृताप्स्वेनत् ३५ ११००

ता अस्य स्रद्धदोहसः सोमः श्रीणन्ति पृश्नयः ।

जन्मन् देवानां विशस्त्रिष्वारौचने दिवः ५५

॥२०१॥ (वा० य० ११।८)

(आपः ।)

अपः पिन्वौषधीर्जिन्व द्विपादव चतुष्पात् पाहि दिवो वृष्टिमेरय ८

॥२०२॥ (वा० य० २०।१८-२०, २२-२३)

(आपः ।)

यदापो अघ्न्या इति वरुणेति शर्पामहे ततो वरुण नो मुञ्च ।

अवभृथ निचुम्पुण निचरुरसि निचुम्पुणः ।

अव देवैर्देवकृतमेनोऽयक्ष्यव मर्त्यैर्मर्त्यकृतं पुरुराव्णो देव रिषस्पाहि १८

समुद्रे ते हृदयमप्स्वन्तः सं त्वा विशन्त्वोषधीरुतापः ।

सुमित्रिया न आप ओषधयः सन्तु दुर्मित्रियास्तस्मै सन्तु योऽस्मान् द्वेष्टि यं च वयं द्विष्मः १९

द्रुपदादिं वृष्टुचानः स्विन्नः स्नातो मलादिव ।

पूतं पवित्रेणैवाज्यमापः शुन्धन्तु मैरसः २० ११०

अपो अद्यान्वचारिषु रसेन समसृक्षमहि ।

पर्यस्वानम आगमं तं मा सः सृज वर्चसा प्रजया च धनेन च

२२

एधोऽस्येधिषीमहि समिदसि तेजोऽसि तेजो मयि धेहि

२३ ११०७

अन्नादिकम् । (११०८-१३३१)

॥२०३॥ (ऋ० १।१८७,१-११)

अगस्त्यो मैत्रावरुणिः । अन्नं । १ अनुष्टुप्गर्भा उष्णिक् ३,५-७,११ अनुष्टुप्; (११ बृहती वा);
२,४,८-१० गायत्री ।

पितुं नु स्तोषं महो धर्माणं तर्विषीम् । यस्य त्रितो व्योजसा वृत्रं विपर्वमर्दयत्+ १

स्वादो पितो मधो पितो वयं त्वा ववृमहे । अस्माकमविता भव २

उप नः पितवा चर शिवः शिवाभिरूतिभिः । मयोभुरद्विषेण्यः सखा सुशेवो अद्वयाः ३ १११०

तव त्वे पितो रसा रजांस्यनु विष्टिताः । दिवि वाता इव श्रिताः ४

तव त्वे पितो ददतस्तव स्वादिष्ट ते पितो । प्र स्वान्नानो रसानां तुविग्रीवा इवेरते ५

त्वे पितो महानां देवानां मनो हितम् । अकारि चारु केतुना तवाहिमवसावधीत् ६

यदुदो पितो अजगन् विवस्व पर्वतानाम् । अत्रा चिन्नो मधो पितो ऽरं भक्षाय गम्याः ७

यदुपामोषधीनां परिशमारिशामहे । वातापे पीव इद् भव ८ १११५

यत् ते सोम गवाशिरो यवाशिरो भजामहे । वातापे पीव इद् भव ९

करम्भ औषधे भव पीवो वृक् उदारथिः । वातापे पीव इद् भव १०

तं त्वा वयं पितो वचोभिर्गावो न हव्या सुषूदिम ।

देवेभ्यस्त्वा सधमादमुस्मभ्यं त्वा सधमादम् ११

॥२०४॥ (अथर्व० ६।७१।१-३)

ब्रह्मा । अग्निः, ३ वैश्वानरः, देवाः (अन्नम्) । जगती, ३ त्रिष्टुप् ।

यदन्नमग्निं बहुधा विरूपं हिरण्यमश्नुत गामजामविम् ।

यदेव किं च प्रतिजग्रहामग्निष्टदोता सुहुतं कृणोत १

यन्मा हुतमहुतमाजगाम दुत्तं पितृभिरनुमतं मनुष्यैः ।

यस्मान्मे मन उदिव रारजीत्यग्निष्टदोता सुहुतं कृणोत २

यदन्नमभ्यनृतेन देवा दास्यन्नदास्यन्नुत सङ्गुणामि ।

वैश्वानरस्य महतो महिम्ना शिवं मह्यं मधुमदस्त्वन्नम् ३ ११२१

॥२०५॥ (अथर्व० ७।५८।१-२)

कौरुपथिः । इन्द्रावरुणौ (अन्नम्) । १ जगती, २ त्रिष्टुप् ।

इन्द्रावरुणा सुतपाविमं सुतं सोमं पिबतं मद्यं धृतव्रतौ ।
 युवो रथो अध्वरो देववीतये प्रति स्वसरमुप यातु पीतये १
 इन्द्रावरुणा मधुमत्तमस्य वृष्णः सोमस्य वृष्णा वृषेथाम् ।
 इदं वामन्धः परिषिक्तमासद्यास्मिन् बहिषि मादयेथाम् २

॥२०६॥ (अथर्व० ६।१४२।१-३)

विश्वामित्रः । वायुः (अन्नसमृद्धिः) । अनुष्टुप् ।

उच्छ्रयस्व बहुभैव स्वेन महसा यव । मृणीहि विश्वा पात्राणि मा त्वा दिव्याशनिर्वधीत् १
 आशृण्वन्तं यवै देवं यत्र त्वाच्छावदामसि । तदुच्छ्रयस्व द्यौरिव समुद्र इवैध्यक्षितः २ ११२५
 अक्षितास्त उपसदोऽक्षिताः सन्तु राशयः । पृणन्तो अक्षिताः सन्त्वत्तारः सन्त्वक्षिताः ३

॥२०७॥ (अथर्व० ११।३।१-५६)

[प्रथमः पर्यायः । १-३१]

अथर्वा । ओदनः (वार्हस्पत्यौदनः) ।

१, १४ आसुरी गायत्रा; २ त्रिपदा समविषमा गायत्री; ३, ६, १० आसुरी पङ्क्तिः;

४.८ सामन्यनुष्टुप्; ५.१३, १५, २५ सामन्युष्णिक्; ७.१९-२२ प्राजापत्या-

ऽनुष्टुप्; ९, १७-१८ आसुर्यनुष्टुप्; ११ भुरिगार्च्यनुष्टुप्; १२ याजुषी

जगती; १६, २३ आसुरी बृहती; २४ त्रिपदा प्राजापत्या बृहती;

२६ आर्च्युष्णिक्; २७-२९ साम्ना बृहती (२८-२९ भुरिक्);

३० याजुषी त्रिष्टुप्; ३१ अल्पशः पङ्क्तिरुत याजुषी ।

तस्यौदनस्य बृहस्पतिः शिरो ब्रह्म मुखम् १
 द्यावापृथिवी श्रात्रे सूर्याचन्द्रममावक्षिणी सप्तऋषयः प्राणापानाः २
 चक्षुर्मुसलं कामं उल्लखलम् । ३ । दितिः शूर्पमदितिः शूर्पग्राही वातोऽपाविनक् ४ ११३०
 अश्वाः कणा गावस्तण्डुला मशकास्तुषाः ५
 कञ्चु फलीकरणाः शरोऽभ्रम् ६
 इयाममयोऽस्य मांसानि लोहितमस्य लोहितम् ७
 त्रपु भस्म हरितं वर्णः पुष्करमस्य गन्धः ८
 खलः पात्रं स्फयावंसाव्रीषे अनुक्ये । ९ । आन्त्राणि जत्रयो गुदा वत्राः १०
 इयमेव पृथिवी कुम्भी भवति राध्यमानस्यौदनस्य द्यौरपिधानम् ११
 सीताः पर्शवः सिकता ऊबध्यम् । १२ । ऋतं हस्तावनेजनं कुल्योपिसेचनम् १३ ११३९

| | |
|---|---------|
| ऋचा कुम्भ्यर्धितात्विज्येन प्रेषिता | १४ ११४० |
| ब्रह्मणा परिगृहीता साम्ना पर्युढा । १५। बृहदायवनं रथन्तरं दर्विः | १६ |
| ऋतवः पक्ता आर्तवाः समिन्धते । १७। चरुं पञ्चबिलमुखं घर्मोऽर्भीन्धे | १८ |
| ओदुनेन यज्ञवचः सधे लोकाः समाण्याः | १९ ११४५ |
| यस्मिन्त्समुद्रो द्यौर्भूमिस्त्रयोऽवरपरं श्रिताः | २० |
| यस्य देवा अकल्पन्तोच्छिष्टे षडशीतयः | २१ |
| तं त्वौदुनस्य पृच्छामि यो अस्य महिमा महान् | २२ |
| स य ओदुनस्य महिमानं विद्यात् | २३ |
| नाल्प इति ब्रूयान्नानुपसेचन इति नेदं च किं चेति | २४ ११५० |
| यावद् दाताभिमनस्येत तन्नाति वदेत् | २५ |
| ब्रह्मवादिनो वदन्ति पराञ्चमोदुनं प्राशीः प्रत्यश्चाऽमिति | २६ |
| त्वमोदुनं प्राशीः स्वामोदुनाः इति | २७ |
| पराञ्चं चैनं प्राशीः प्राणास्त्वा हास्यन्तीत्येनमाह | २८ |
| प्रत्यश्चं चैनं प्राशीरपानास्त्वा हास्यन्तीत्येनमाह | २९ ११५५ |
| नैवाहमोदुनं न मामोदुनः । ३०। ओदुन एवौदुनं प्राशीत् | ३१ |

[द्वितीयः पर्यायः । ३२-४९]

मन्त्रोक्ताः । ३२, ३८, ४१ (प्रथमा), ३२-४९ (सप्तमी) साम्ना त्रिष्टुप्; ३२, ३५, ४२ (द्वितीया), ३२-४९ (तृतीया), ३३-३४, ४४-४८ (पञ्चमी) एकपदाऽऽसुरी गायत्री; ३२, ४१, ४३, ४७ दैवी जगती; ३८, ४४, ४६ (द्वि०), ३२, ३५-४३, ४९ (पञ्चमी) एकपदाऽऽसुर्यनुष्टुप्; ३२-४९ (षष्ठी) सामान्यनुष्टुप्; ३३-४९ (प्र०) आर्च्यनुष्टुप्; ३७ (प्र०) साम्ना पङ्क्तिः; ३३, ३६, ४०, ४७-४८ (द्वि०) आसुरी जगती; ३४, ३७, ४१, ४३, ४५ (द्वि०) आसुरी पङ्क्तिः; ३४ (चतुर्थी) आसुरी त्रिष्टुप्; ३५, ४६, ४८ (च०) याजुषी गायत्री; ३६-३७, ४० (च०) दैवी पङ्क्तिः; ३८-३९ (च०) प्राजापत्या गायत्री; ३९ (द्वि०) आसुर्युष्णिक्; ४२, ४५, ४९ (चतुर्थी) दैवी त्रिष्टुप्; ४९ (द्वि०) एकपदा भुविस्साम्ना बृहती ।

ततश्चैनमन्येन शीर्ष्णा प्राशीर्येन चैतं पूर्वं ऋषयः प्राशन् । १।

ज्येष्ठतस्ते प्रजा मरिष्यतीत्येनमाह । २।

तं वा अहं नार्वाञ्चं न पराञ्चं न प्रत्यश्चम् । ३।

बृहस्पतिना शीर्ष्णा । ४। तेनैनं प्राशिषु तेनैनमजीगमम् । ५।

एष वा ओदुनः सर्वाङ्गः सर्वपदः सर्वतनूः । ६।

सर्वाङ्ग एव सर्वपदः सर्वतनूः सं भवति य एवं वेद । ७।

ततश्चैनमन्याभ्यां श्रोत्राभ्यां प्राशीर्याभ्यां चैतं पूर्वं ऋषयः प्राश्नन् । १।
 बधिरो भविष्यसीत्येनमाह । २। तं वा अहं नार्वाञ्चं न पराञ्चं न प्रत्यञ्चम् । ३।
 द्यावापृथिवीभ्यां श्रोत्राभ्याम् । ४। ताभ्यामेनं प्राशिषं ताभ्यामेनमजीगमम् । ५।
 एष वा ओदुनः सर्वाङ्गः सर्वपुरुः सर्वतनूः । ६।
 सर्वाङ्ग एव सर्वपुरुः सर्वतनूः सं भवति य एवं वेद । ७। ३३

ततश्चैनमन्याभ्यामक्षीभ्यां प्राशीर्याभ्यां चैतं पूर्वं ऋषयः प्राश्नन् । १।
 अन्धो भविष्यसीत्येनमाह । २। तं वा अहं नार्वाञ्चं न पराञ्चं न प्रत्यञ्चम् । ३।
 सूर्याचन्द्रमसाभ्यामक्षीभ्याम् । ४। ताभ्यामेनं प्राशिषं ताभ्यामेनमजीगमम् । ५।
 एष वा ओदुनः सर्वाङ्गः सर्वपुरुः सर्वतनूः । ६।
 सर्वाङ्ग एव सर्वपुरुः सर्वतनूः सं भवति य एवं वेद । ७। ३४ ११६०

ततश्चैनमन्येन मुखेन प्राशीर्येन चैतं पूर्वं ऋषयः प्राश्नन् । १।
 मुखतस्ते प्रजा मरिष्यतीत्येनमाह । २। तं वा अहं नार्वाञ्चं न पराञ्चं न प्रत्यञ्चम् । ३।
 ब्रह्मणा मुखेन । ४। तेनैनं प्राशिषं तेनैनमजीगमम् । ५।
 एष वा ओदुनः सर्वाङ्गः सर्वपुरुः सर्वतनूः । ६।
 सर्वाङ्ग एव सर्वपुरुः सर्वतनूः सं भवति य एवं वेद । ७। ३५

ततश्चैनमन्यया जिह्वया प्राशीर्यया चैतं पूर्वं ऋषयः प्राश्नन् । १।
 जिह्वा तै मरिष्यतीत्येनमाह । २। तं वा अहं नार्वाञ्चं न पराञ्चं न प्रत्यञ्चम् । ३।
 अग्नेजिह्वया । ४। तयैनं प्राशिषं तयैनमजीगमम् । ५।
 एष वा ओदुनः सर्वाङ्गः सर्वपुरुः सर्वतनूः । ६।
 सर्वाङ्ग एव सर्वपुरुः सर्वतनूः सं भवति य एवं वेद । ७। ३६

ततश्चैनमन्यैर्दन्तैः प्राशीर्यैश्चैतं पूर्वं ऋषयः प्राश्नन् । १।
 दन्तास्ते शत्स्यन्तीत्येनमाह । २। तं वा अहं नार्वाञ्चं न पराञ्चं न प्रत्यञ्चम् । ३।
 ऋतुभिर्दन्तैः । ४। तैरेनं प्राशिषं तैरेनमजीगमम् । ५।
 एष वा ओदुनः सर्वाङ्गः सर्वपुरुः सर्वतनूः । ६।
 सर्वाङ्ग एव सर्वपुरुः सर्वतनूः सं भवति य एवं वेद । ७। ३७ ११६३

ततश्चैनमन्यैः प्राणापानैः प्राशीर्यैश्चैतं पूर्वं ऋषयः प्राश्नन् । १।
 प्राणापानास्त्वा हास्यन्तीत्येनमाह । २। तं वा अहं नार्वाञ्चं न पराञ्चं न प्रत्यञ्चम् । ३।

सप्तविंशतिः प्राणापानैः ।४। तेनैतं प्राशिषं तेनैतमजीगमम् ।५।

एष वा ओदुनः सर्वाङ्गः सर्वपरुः सर्वतनूः ।६।

सर्वाङ्ग एव सर्वपरुः सर्वतनूः सं भवति य एवं वेद ।७।

३८

ततश्चैनमन्येन व्यचसा प्राशीर्येन चैतं पूर्वं ऋषयः प्राश्नन् ।१।

राजयक्ष्मस्त्वा हनिष्यतीत्येनमाह ।२। तं वा अहं नार्वाञ्चं न पराञ्चं न प्रत्यञ्चम् ।३।

अन्तरिक्षेण व्यचसा ।४। तेनैतं प्राशिषं तेनैतमजीगमम् ।५।

एष वा ओदुनः सर्वाङ्गः सर्वपरुः सर्वतनूः ।६।

सर्वाङ्ग एव सर्वपरुः सर्वतनूः सं भवति य एवं वेद ।७।

३९ ११६५

ततश्चैनमन्येन पृष्ठेन प्राशीर्येन चैतं पूर्वं ऋषयः प्राश्नन् ।१।

विद्युत् त्वा हनिष्यतीत्येनमाह ।२। तं वा अहं नार्वाञ्चं न पराञ्चं न प्रत्यञ्चम् ।३।

दिवा पृष्ठेन ।४। तेनैतं प्राशिषं तेनैतमजीगमम् ।५।

एष वा ओदुनः सर्वाङ्गः सर्वपरुः सर्वतनूः ।६।

सर्वाङ्ग एव सर्वपरुः सर्वतनूः सं भवति य एवं वेद ।७।

४०

ततश्चैनमन्येनोदरेण प्राशीर्येन चैतं पूर्वं ऋषयः प्राश्नन् ।१।

कुप्या न रात्स्यसीत्येनमाह ।२। तं वा अहं नार्वाञ्चं न पराञ्चं न प्रत्यञ्चम् ।३।

पृथिव्योदरेण ।४। तेनैतं प्राशिषं तेनैतमजीगमम् ।५।

एष वा ओदुनः सर्वाङ्गः सर्वपरुः सर्वतनूः ।६।

सर्वाङ्ग एव सर्वपरुः सर्वतनूः सं भवति य एवं वेद ।७।

४१

ततश्चैनमन्येनोदरेण प्राशीर्येन चैतं पूर्वं ऋषयः प्राश्नन् ।१।

उदुरदुरस्त्वा हनिष्यतीत्येनमाह ।२। तं वा अहं नार्वाञ्चं न पराञ्चं न प्रत्यञ्चम् ।३।

सत्येनोदरेण ।४। तेनैतं प्राशिषं तेनैतमजीगमम् ।५।

एष वा ओदुनः सर्वाङ्गः सर्वपरुः सर्वतनूः ।६।

सर्वाङ्ग एव सर्वपरुः सर्वतनूः सं भवति य एवं वेद ।७।

४२ ११६८

ततश्चैनमन्येन वस्तिना प्राशीर्येन चैतं पूर्वं ऋषयः प्राश्नन् ।१।

अप्सु मरिष्यसीत्येनमाह ।२। तं वा अहं नार्वाञ्चं न पराञ्चं न प्रत्यञ्चम् ।३।

सुमुद्रेण वस्तिना ।४। तेनैतं प्राशिषं तेनैतमजीगमम् ।५।

एष वा ओदुनः सर्वाङ्गः सर्वपुरुः सर्वतनूः ।६।

सर्वाङ्ग एव सर्वपुरुः सर्वतनूः सं भवति य एवं वेद ।७।

४३

ततश्चैनमन्याभ्यामुरुभ्यां प्राशीर्याभ्यां चैतं पूर्वं ऋषयः प्राश्नन् ।१।

ऊरू ते मरिष्यत इत्येनमाह ।२। तं वा अहं नार्वाञ्चं न पराञ्चं न प्रत्यञ्चम् ।३।

मित्रावरुणयोरुरुभ्याम् ।४। ताभ्यामेनं प्राशिषं ताभ्यामेनमजीगमम् ।५।

एष वा ओदुनः सर्वाङ्गः सर्वपुरुः सर्वतनूः ।६।

सर्वाङ्ग एव सर्वपुरुः सर्वतनूः सं भवति य एवं वेद । ७।

४४ ११७०

ततश्चैनमन्याभ्यामष्टिवद्भ्यां प्राशीर्याभ्यां चैतं पूर्वं ऋषयः प्राश्नन् ।१।

सामो भविष्यसीत्येनमाह ।२। तं वा अहं नार्वाञ्चं न पराञ्चं न प्रत्यञ्चम् ।३।

त्वष्टुरष्टिवद्भ्याम् ।४। ताभ्यामेनं प्राशिषं ताभ्यामेनमजीगमम् ।५।

एष वा ओदुनः सर्वाङ्गः सर्वपुरुः सर्वतनूः ।६।

सर्वाङ्ग एव सर्वपुरुः सर्वतनूः सं भवति य एवं वेद ।७।

४५

ततश्चैनमन्याभ्यां पादाभ्यां प्राशीर्याभ्यां चैतं पूर्वं ऋषयः प्राश्नन् ।१।

बहुचारी भविष्यसीत्येनमाह ।२। तं वा अहं नार्वाञ्चं न पराञ्चं न प्रत्यञ्चम् ।३।

अश्विनोः पादाभ्याम् ।४। ताभ्यामेनं प्राशिषं ताभ्यामेनमजीगमम् ।५।

एष वा ओदुनः सर्वाङ्गः सर्वपुरुः सर्वतनूः ।६।

सर्वाङ्ग एव सर्वपुरुः सर्वतनूः सं भवति य एवं वेद ।७।

४६

ततश्चैनमन्याभ्यां प्रपदाभ्यां प्राशीर्याभ्यां चैतं पूर्वं ऋषयः प्राश्नन् ।१।

सर्पस्त्वा हनिष्यसीत्येनमाह ।२। तं वा अहं नार्वाञ्चं न पराञ्चं न प्रत्यञ्चम् ।३।

सवितुः प्रपदाभ्याम् ।४। ताभ्यामेनं प्राशिषं ताभ्यामेनमजीगमम् ।५।

एष वा ओदुनः सर्वाङ्गः सर्वपुरुः सर्वतनूः ।६।

सर्वाङ्ग एव सर्वपुरुः सर्वतनूः सं भवति य एवं वेद ।७।

४७

ततश्चैनमन्याभ्यां हस्ताभ्यां प्राशीर्याभ्यां चैतं पूर्वं ऋषयः प्राश्नन् ।१।

ब्राह्मणं हनिष्यसीत्येनमाह ।२। तं वा अहं नार्वाञ्चं न पराञ्चं न प्रत्यञ्चम् ।३।

ऋतस्य हस्ताभ्याम् ।४। ताभ्यामेनं प्राशिषं ताभ्यामेनमजीगमम् ।५।

एष वा ओदुनः सर्वाङ्गः सर्वपुरुः सर्वतनूः ।६।

सर्वाङ्ग एव सर्वपुरुः सर्वतनूः सं भवति य एवं वेद ।७।

४८ ११७४

तत्तच्चैनमन्यया प्रतिष्ठया प्राशीर्यया चैतं पूर्वं ऋषयः प्राश्रन् । १।

अप्रतिष्ठानोऽनायतनो मरिष्यसीत्येनमाह । २।

तं वा अहं नार्वाञ्चं न पराञ्चं न प्रत्यञ्चम् । ३।

सस्ये प्रतिष्ठाय । ४। तथैनं प्राशिषं तथैनमजीगमम् । ५।

एष वा ओदुनः सर्वाङ्गः सर्वपरुः सर्वतनूः । ६।

सर्वाङ्ग एव सर्वपरुः सर्वतनूः सं भवति य एवं वेद । ७।

४९ ११७५

[तृतीयः पर्यायः । ५०-५६]

मन्त्रोक्ताः । ५० आसुर्यनुष्टुप्; ५१ आचर्युष्णिक्; ५२ त्रिपदा भुरिक् सास्त्री
त्रिष्टुप्; ५३ आसुरी बृहती; ५४ द्विपदा भुरिक् सास्त्री बृहती; ५५ साम्युष्णिक्;
५६ प्राजपत्या बृहती ।

एतद् वै ब्रह्मस्य विष्टपं यदौदुनः

५०

ब्रह्मलोको भवति ब्रह्मस्य विष्टपि श्रयते य एवं वेद

५१

एतस्माद् वा ओदुनात् त्रयस्त्रिंशत् लोकान् निरमिमीत प्रजापतिः

५२

तेषां प्रज्ञानाय यज्ञमसृजत

५३

स य एवं विदुषं उपदृष्ट्वा भवति प्राणं रुणद्धि

५४

११८०

न च प्राणं रुणद्धि सर्वज्यानि जीयते

५५

न च सर्वज्यानि जीयते पुरेनै जरसः प्राणो जहाति

५६

॥२०८॥ (अथर्व० ९।५।१-३८)

भृगुः । पञ्चौदनोऽजः; मन्त्रोक्ताः । त्रिष्टुप्; ३ चतुष्पदा पुरोऽतिशक्ती जगती; ४.१०
जगती; १४.१७, २७-३० अनुष्टुप् (३० ककुम्मती); १६ त्रिपदाऽनुष्टुप्; १८, ३७ त्रिपदा
विराड् गायत्री; २३ पुर उष्णिक्; २४ पञ्चपदाऽनुष्टुबुष्णिगभोपरिष्टाद्विराड् जगती;
२०-२२, २६ पञ्चपदाऽनुष्टुबुष्णिगभोपरिष्टाद्वाहता भुरिक्; ३१ सप्तपदाऽष्टिः;
३२-३५ दशपदा प्रकृतिः; ३६ दशपदाऽऽकृताः; ३८ एकावसाना

द्विपदा सास्त्री त्रिष्टुप् ।

आ नयैतमा रभस्व सुकृतां लोकमपि गच्छतु प्रजानन् ।

तीर्त्वा तमांसि बहुधा महान्त्यजो नाकृमा क्रमतां तृतीयम्

१

इन्द्राय भागं परि त्वा नयाम्यसिन् यज्ञे यजमानाय सूरिम् ।

ये नो द्विषन्त्यनु तान् रभस्वानागसो यजमानस्य वीराः

२

११८४

६० [आयुर्वेद०] १२

- प्र पदोऽव नेनिग्धि दुश्चरितं यच्चचारं शुद्धैः शकैरा क्रमतां प्रजानन् ।
 तत्त्वा तमांसि बहुधा विपर्ययजो नाकमा क्रमतां तृतीयम् ३ ११८५
 अनु च्छय श्यामेन त्वचमेतां विशस्तयथापर्वसिना मामि मंस्थाः ।
 माभि द्रुहः परुशः कल्पयैनं तृतीये नाके अधि वि श्रयैनम् ४
 ऋचा कुम्भीमध्यग्नौ श्रयाम्या सिञ्चोदकमव धेहेनम् ।
 पर्याधत्ताग्निना शमितारः शृतो गच्छतु सुकृतां यत्र लोकः ५
 उत् क्रामातः परि चेदत्तस्तप्ताच्चरोरधि नाकं तृतीयम् ।
 अग्नेरग्निरधि सं बभूविथ ज्योतिष्मन्तमभि लोकं जयैतम् ६
 अजो अग्निरजमु ज्योतिराहुरजं जीवता ब्रह्मणे देयमाहुः ।
 अजस्तमांस्यप हन्ति दूरमसिल्लोके श्रद्धधानेन दत्तः ७
 पञ्चौदनः पञ्चधा वि क्रमतामाक्रंस्यमानस्त्रीणि ज्योतीषि ।
 ईजानानां सुकृतां प्रेहि मध्यं तृतीये नाके अधि वि श्रयस्व ८ ११९०
 अजा रोह सुकृतां यत्र लोकः शरभो न चत्तोऽर्ति दुर्गार्ण्येषः ।
 पञ्चौदनो ब्रह्मणे दीयमानः स दातारं तृप्त्या तर्पयाति ९
 अजस्त्रिनाके त्रिदिवे त्रिपृष्ठे नाकस्य पृष्ठे ददिवान्सं दधाति ।
 पञ्चौदनो ब्रह्मणे दीयमानो विश्वरूपा धेनुः कामदुघास्येका १०
 एतद् वो ज्योतिः पितरस्तृतीयं पञ्चौदनं ब्रह्मणेऽजं ददाति ।
 अजस्तमांस्यप हन्ति दूरमसिल्लोके श्रद्धधानेन दत्तः ११
 ईजानानां सुकृतां लोकमीप्सन् पञ्चौदनं ब्रह्मणेऽजं ददाति ।
 स व्याप्तिमभि लोकं जयैतं शिवोऽसृभ्यं प्रतिगृहीतो अस्तु १२
 अजो ह्यग्नेरजनिष्ट शोकाद् विप्रो विप्रस्य सहसो विपश्चित् ।
 इष्टं पूतमभिपूतं वर्षत्कृतं तद् देवा क्रतुशः कल्पयन्तु १३ ११९५
 अमोतं वासो दद्याद्विरण्यमपि दक्षिणाम् ।
 तथा लोकान्तसमाप्नोति ये दिव्या ये च पार्थिवाः १४
 एतास्त्वाजोप यन्तु धाराः सोम्या देवीर्धृतपृष्ठा मधुश्रुतः ।
 स्तभान पृथिवीमुत द्यां नाकस्य पृष्ठेऽर्धे सप्तरश्मा १५
 अजोऽस्यजं स्वर्गोऽसि त्वया लोकमङ्गिरसः प्राजानन् । तं लोकं पुण्यं प्र ज्ञेयम् १६
 येना सहस्रं वहसि येनाग्निं सर्ववेदसम् । तेनेमं यज्ञं नो वह स्वर्गदेवेषु गन्तवे १७ ११९९

अजः पृक् स्वर्गे लोके दधाति पञ्चौदनो निर्ऋतिं बाधमानः ।

तेन लोकान्त्सूर्यवतो जयेम

१८ १२००

यं ब्राह्मणे निदुधे यं च विक्षु या विप्रुष ओदनानामजस्य ।

सर्वं तदग्ने सुकृतस्य लोके जानीतान्नः संगमने पथीनाम्

१९

अजो वा इदमग्रे व्यक्रिमत् तस्योर इयमभवद् द्यौः पृष्ठम् ।

अन्तरिक्षं मध्यं दिशः पार्श्वं समुद्रौ कुक्षी

२०

सत्यं चर्तं च चक्षुषी विश्वं सत्यं श्रद्धा प्राणो विराट् शिरः ।

एष वा अपरिमितो यज्ञो यदुजः पञ्चौदनः

२१

अपरिमितमेव यज्ञमाप्नोत्यपरिमितं लोकमव रुन्धे ।

योऽज्ञं पञ्चौदनं दक्षिणाज्योतिषं ददाति

२२

नास्यास्थीनि भिन्द्यान्न मज्ज्ञो निर्धयेत् । सर्वमेनं समादायेदमिदं प्र वैशयेत्

२३ १२०५

इदमिदमेवास्य रूपं भवति तेनैनं सं गमयति ।

इषं मह ऊर्जमस्मै दुहे योऽज्ञं पञ्चौदनं दक्षिणाज्योतिषं ददाति

२४

पञ्चं रुक्मा पञ्च नवानि वस्त्रा पञ्चास्मै धेनवः कामदुघा भवन्ति ।

योऽज्ञं पञ्चौदनं दक्षिणाज्योतिषं ददाति

२५

पञ्चं रुक्मा ज्योतिरस्मै भवन्ति वर्म वासांसि तन्वे भवन्ति ।

स्वर्गं लोकमश्नुते योऽज्ञं पञ्चौदनं दक्षिणाज्योतिषं ददाति

२६

या पूर्वं पतिं विच्चाथान्यं विन्दतेऽपरम् । पञ्चौदनं च तावजं ददातो न वि योषतः २७

समानलोको भवति पुनर्भुवापरः पतिः । योऽज्ञं पञ्चौदनं दक्षिणाज्योतिषं ददाति

२८ १२१०

अनुपूर्ववत्सां धेनुमनङ्गाहमुपवर्हणम् । वासो हिरण्यं दुत्वा ते यन्ति दिवमुत्तमाम् २९

आत्मानं पितरं पुत्रं पौत्रं पितामहम् । जायां जनित्रीं मातरं ये प्रियास्तानुष ह्वये ३०

यो वै नैदाघं नामर्तु वेद । एष वै नैदाघो नामर्तुर्यदुजः पञ्चौदनः ।

निरेवाप्रियस्य आतृव्यस्य श्रियं दहति भवत्यात्मना ।

योऽज्ञं पञ्चौदनं दक्षिणाज्योतिषं ददाति

३१

यो वै कुर्वन्तं नामर्तु वेद । कुर्वतीकुर्वतीमेवाप्रियस्य आतृव्यस्य श्रियमा दत्ते ।

एष वै कुर्वन्नामर्तुर्यदुजः पञ्चौदनः ।

निरेवाप्रियस्य आतृव्यस्य श्रियं दहति भवत्यात्मना ।

योऽज्ञं पञ्चौदनं दक्षिणाज्योतिषं ददाति

३२ १२१४

यो वै संयन्तं नामर्तु वेद । संयतींसंयतीमेवाप्रियस्य भ्रातृव्यस्य श्रियमा दत्ते ।

एष वै संयन्तामर्तुर्यदुजः पञ्चौदनः ।

निरेवाप्रियस्य भ्रातृव्यस्य श्रियं दहति भवत्यात्मना ।

योऽजं पञ्चौदनं दक्षिणाज्योतिषं ददाति ३३ १२१५

यो वै पिन्वन्तं नामर्तु वेद । पिन्वतींपिन्वतीमेवाप्रियस्य भ्रातृव्यस्य श्रियमा दत्ते ।

एष वै पिन्वन्तामर्तुर्यदुजः पञ्चौदनः ।

निरेवाप्रियस्य भ्रातृव्यस्य श्रियं दहति भवत्यात्मना ।

योऽजं पञ्चौदनं दक्षिणाज्योतिषं ददाति ३४

यो वा उद्यन्तं नामर्तु वेद । उद्यतीमुद्यतीमेवाप्रियस्य भ्रातृव्यस्य श्रियमा दत्ते ।

एष वा उद्यन्तामर्तुर्यदुजः पञ्चौदनः ।

निरेवाप्रियस्य भ्रातृव्यस्य श्रियं दहति भवत्यात्मना ।

योऽजं पञ्चौदनं दक्षिणाज्योतिषं ददाति ३५

यो वा अभिभुवं नामर्तु वेद ।

अभिभवन्तीमभिवन्तीमेवाप्रियस्य भ्रातृव्यस्य श्रियमा दत्ते ।

एष वा अभिभूर्नामर्तुर्यदुजः पञ्चौदनः ।

निरेवाप्रियस्य भ्रातृव्यस्य श्रियं दहति भवत्यात्मना ।

योऽजं पञ्चौदनं दक्षिणाज्योतिषं ददाति ३६

अजं च पचत पञ्च चौदनान् ।

सर्वा दिशः संमनसः सध्रीचीः सान्तर्देशाः प्रतिं गृह्णन्तु त एतम् ३७

तास्ते रक्षन्तु तव तुभ्यमेतं ताभ्य आज्यं हविरिदं जुहोमि ३८ १२२०

॥२०९॥ (अथर्व० ४।३४।१-८)

अथर्वा । ब्रह्मौदनम् । त्रिष्टुप्, ४ उत्तमा भुरिक्, ५ ज्यवसाना सप्तपदा कृतिः;

६ पञ्चपदातिशकरी, ७ भुरिक् शकरी, ८ जगती ।

ब्रह्मास्य शीर्षं बृहदस्य पृष्ठं वामदेव्यमुदरमोदनस्य ।

छन्दांसि पक्षौ मुखमस्य सत्यं विष्टारी जातस्तपसोऽधि यज्ञः १

अनस्थाः पृताः पवनेन शुद्धाः शुचयः शुचिमपि यन्ति लोकम् ।

नैषां शिश्रं प्र दहति जातवेदाः स्वर्गे लोके बहु स्त्रैर्णमेषाम् २

त्रिष्टारिणमोदनं ये पचन्ति नैनानवर्तिः सचते कदा चन ।

आस्ते यम उप याति देवान्त्सं गन्धर्वैर्मदते सोम्येभिः ३ १२२३

विष्टारिणमोदुनं ये पचन्ति नैनान् यमः परिं मुष्णाति रेतः ।

रथी ह भूत्वा रथयानं ईयते पक्षी ह भूत्वाति दिवः समैति

४

एष यज्ञानां विततो वहिष्ठो विष्टारिणं पक्त्वा दिवमा विवेश ।

आण्डीकं कुमुदं सं तेनोति विसं शालूकं शफको मलाली ।

एतास्त्वा धारा उप यन्तु सर्वाः स्वर्गे लोके मधुमत् पिन्वमाना

उप त्वा तिष्ठन्तु पुष्करिणीः समन्ताः

५ १२२५

घृतहृदा मधुकूलाः सुरोदकाः क्षीरेण पूर्णा उदकेन दुग्धा ।

एतास्त्वा धारा उप यन्तु सर्वाः स्वर्गे लोके मधुमत् पिन्वमाना

उप त्वा तिष्ठन्तु पुष्करिणीः समन्ताः

६

चतुरः कुम्भांश्चतुर्धा ददामि क्षीरेण पूर्णा उदकेन दुग्धा ।

एतास्त्वा धारा उप यन्तु सर्वाः स्वर्गे लोके मधुमत् पिन्वमाना

उप त्वा तिष्ठन्तु पुष्करिणीः समन्ताः

७

इममोदुनं नि दधे ब्राह्मणेषु विष्टारिणं लोकजितं स्वर्गम् ।

स मे मा क्षेष्ट स्वधया पिन्वमानो विश्वरूपा धेनुः कामदुघा मे अस्तु

८

॥२१०॥ (अथर्व० ११।१।१-३७)

ब्रह्मा । ओदनः (ब्रह्मौदनम्) । त्रिष्टुप्, १ अनुष्टुप्गर्भा भुरिक्पङ्क्तिः, २ बृहतीगर्भा विराट्, ३ चतुष्पदा शाकरगर्भा जगती, ४, १५-१६, २९, ३१ भुरिक्, ५ बृहतीगर्भा विराट्, ६ उष्णिक्, ८ विराट् गायत्री;

९ शाकरातिजागतगर्भा जगती, १० विराट् पुरोऽतिजगती विराड्जगती, ११ जगती;

१७, २१, २४ २६, ३७ विराट् जगती, १८ अतिजागतगर्भा परातिजागता विराड्जगती;

२० अतिजागतगर्भा परा शाकरा चतुष्पदा भुरिजगती;

२७ अतिजागतगर्भा जगती; ३५ चतुष्पदा

ककुम्मत्युष्णिक्; ३६ पुरोविराट्

(व्याघ्रादिष्ववगन्तव्या)

अग्ने जायस्वादितिर्नाथितेयं ब्रह्मौदनं पचति पुत्रकामा ।

सप्तऋषयो भूतकृतस्ते त्वा मन्थन्तु प्रजया सह

१

कृणुत धूमं वृषणः सखायोऽद्रोधाविता वाचमच्छ ।

अयमग्निः पृतनाषाद् सुवीरो येन देवा असहन्त दस्यून्

२

अग्नेऽर्जनिष्ठा महते वीर्याय ब्रह्मौदनाय पक्त्वे जातवेदः ।

सप्तऋषयो भूतकृतस्ते त्वाजीजनस्यै रयिं सर्ववीरं नि यच्छ

३ १२३१

| | |
|--|---------|
| समिद्धो अग्ने समिधा समिध्यस्व विद्वान् देवान् यज्ञियाँ एह वंक्षः । | |
| तेभ्यो हविः श्रपयं जातवेद उत्तमं नाकमधि रोहयेमम् | ४ |
| त्रेधा भागो निहितो यः पुरा वो देवानां पितॄणां मर्त्यानाम् । | |
| अंशान् जानीध्वं वि भंजामि तान् वो यो देवानां स इमां पारयाति | ५ |
| अग्ने सहस्वानभिभूरभीदसि नीचो न्युजि द्विषतः सपत्नान् । | |
| इयं मात्रा मीयमाना मिता च सजातास्ते बलिहृतः कृणोतु | ६ |
| साकं सजातैः पर्यसा सहैध्युदुजैनां महते वीर्यायि । | |
| ऊर्ध्वो नाकस्याधि रोह विष्टपं स्वर्गो लोक इति यं वदन्ति | ७ १२३५ |
| इयं मही प्रति गृह्णातु चर्मं पृथिवी देवी सुमनस्यमाना । | |
| अथ गच्छेम सुकृतस्य लोकम् | ८ |
| एतौ ग्रावाणौ सयुजा युङ्ग्धि चर्मणि निर्भिन्ध्यंश्न यजेमानाय साधु । | |
| अवम्रती नि जहि य इमां पृतन्यव ऊर्ध्वं प्रजामुद्धरन्त्युदूह | ९ |
| गृहाण ग्रावाणौ सकृदौ वीर हस्त आ ते देवा यज्ञियां यज्ञमगुः । | |
| त्रयो वरा यतमास्त्वं वृणीषे तास्ते समृद्धीरिह राधयामि | १० |
| इयं ते धीतिरिदं ते जनित्रं गृह्णातु त्वामदितिः शरपुत्रा । | |
| परा पुनीहि य इमां पृतन्यवोऽस्य रयिं सर्ववीरं नि यच्छ | ११ |
| उपश्वसे द्रुवये सीदता यूयं वि विन्ध्यध्वं यज्ञियासस्तुषैः । | |
| श्रिया समानानति सर्वान्तस्यामाधस्पदं द्विषतस्पादयामि | १२ १२४० |
| परिहि नारि पुनरेहि क्षिप्रमपां त्वा गोष्ठोऽध्यैरुक्षद् भराय । | |
| तासां गृहीताद् यतमा यज्ञिया असन् विभाज्य धीरीतरा जहीतात् | १३ |
| एमा अगुर्योषितः शुभमाना उत्तिष्ठ नारि तवसं रभस्व । | |
| सुपत्नी पत्यां प्रजयां प्रजावत्या त्वागन् यज्ञः प्रति कुम्भं गृभाय | १४ |
| ऊर्जो भागो निहितो यः पुरा व ऋषिप्रशिष्टाय आ भैरताः । | |
| अयं यज्ञो गातुविस्माथवित् प्रजाविदुग्रः पशुविद् वीरविद् वो अस्तु | १५ |
| अग्ने चरुयज्ञिस्त्वाध्यैरुक्षच्छुचिस्तपिष्ठस्तपसा तपैनम् । | |
| आर्वेया देवा अभिसंगत्य भागमिमं तपिष्ठा ऋतुभिस्तपन्तु | १६ |
| शुद्धाः पूता योषितो यज्ञिया इमा आपश्चरुमव सर्पन्तु शुभ्राः । | |
| अदुः प्रजां बहुलान् पशन् नः पक्तौदनस्य सुकृतामेतु लोकम् | १७ १२४५ |

| | |
|--|---|
| ब्रह्मणा शुद्धा उत पूता घृतेन सोमस्यांशवस्तण्डुला यज्ञिया इमे । अपः प्र विशत प्रति गृह्णातु वञ्चरुमिं पक्त्वा सुकृतामेत लोकम् उरुः प्रथस्व महता महिम्ना सहस्रपृष्ठः सुकृतस्य लोके । पितामहाः पितरः प्रजोपजाहं पक्ता पञ्चदशस्ते अस्मि सहस्रपृष्ठः शतधारो अर्क्षितो ब्रह्मौदनो देवयानः स्वर्गः । अमूस्त आ दधामि प्रजयां रेषयैनान् बलिहाराय मृडतान्महमेव उदेहि वेदिं प्रजयां वर्धयैनां नुदस्व रक्षः प्रतरं धेहेनाम् । श्रिया समानानति सर्वान्त्स्यामाधस्पदं द्विषतस्पादयामि अभ्यावर्तस्व पशुभिः सहैनां प्रत्यङ्गेनां देवताभिः सहैधि । मा त्वा प्रापच्छपथो मामिचारः स्वे क्षेत्रे अनमीवा वि राज ऋतेन तष्टा मनसा हितैषा ब्रह्मौदनस्य विहिता वेदिरग्रे । अंसर्द्रां शुद्धामुप धेहि नारि तत्रौदनं सादय दैवानाम् अर्दितेर्हस्तां सुचमेतां द्वितीयां सप्तऋषयो भूतकृतो यामकृण्वन् । सा गात्राणि विदुष्योदनस्य दर्विवेद्यामध्येनं चिनोतु शृतं त्वा हव्यमुप सीदन्तु दैवा निःसृप्याग्नेः पुनरेनान् प्र सीद । सोमैः पुतो जठरे सीद ब्रह्मणामार्षेयास्ते मा रिषन् प्राशितारः सोमं राजन्त्संज्ञानमा वपैभ्यः सुब्राह्मणा यतमे त्वोपसीदन् । ऋषीनार्षेयांस्तपसोऽधि जातान् ब्रह्मौदने सुहवां जोहवीमि शुद्धाः पूता योषितो यज्ञिया इमा ब्रह्मणां हस्तेषु प्रपृथक् सादयामि । यत्काम इदमभिषिञ्चामि वोऽहमिन्द्रो मरुत्वान्त्स ददादिदं मे इदं मे ज्योतिरमृतं हिरण्यं पक्कं क्षेत्रात् कामदुर्घा म एषा । इदं धनं नि दधे ब्राह्मणेषु कृण्वे पन्थां पितृषु यः स्वर्गः अग्नौ तुषाना वप जातवेदसि परः कम्बूका अप मृड्ढि दूरम् । एतं शुश्रुम गृहराजस्य भागमथो विद्य निर्ऋतेर्भागधेयम् श्राम्यतः पचतो विद्धि सुन्वतः पन्थां स्वर्गमधि रोहयैनम् । येन रोह्यात् परमापद्य यद् वयं उत्तमं नाकं परमं व्योमि बभ्रेरध्वर्यो मुखमेतद् वि मृड्ढयाज्याय लोकं कृणुहि प्रविडान् । घृतेन गात्रान् सर्वा वि मृड्ढि कृण्वे पन्थां पितृषु यः स्वर्गः | १८ १९ २० २१ २२ १२५० २३ २४ २५ २६ २७ १२५५ २८ २९ ३० ३१ १२५९ |
|--|---|

| | |
|---|---------|
| बभ्रे रक्षः समदुमा वपैभ्योऽब्राह्मणा यतमे त्वोपसीदान् । | |
| पुरीषिणः प्रथमानाः पुरस्तादार्षेयास्ते मा रिषन् प्राशितारः | ३२ १२६० |
| आर्षेयेषु नि दध ओदन त्वा नानार्षेयाणामप्यस्त्यत्र । | |
| अग्निर्मे गोप्ता मरुतश्च सर्वे विश्वे देवा अभि रक्षन्तु पक्वम् | ३३ |
| यज्ञं दुहानं सदमिह प्रपीनं पुमांसं धेनुं सदनं रयीणाम् । | |
| प्रजामुतत्वमुत दीर्घमायू रायश्च पोषैरुप त्वा सदेम | ३४ |
| वृषभोऽसि स्वर्गं ऋषीनार्षेयान् गच्छ । | |
| सुकृतां लोके सीदु तत्र नौ संस्कृतम् | ३५ |
| समार्चिनुष्वानुसंप्रयाह्यग्रे पथः कल्पय देवयानान् । | |
| एतैः सुकृतैरनु गच्छेम यज्ञं नाके तिष्ठन्तमति सप्तरश्मौ | ३६ |
| येन देवा ज्योतिषा द्यामुदायन् ब्रह्मौदनं पक्त्वा सुकृतस्य लोकम् । | |
| तेन गेष्म सुकृतस्य लोकं स्वरारोहन्तो अभि नाकमुत्तमम् | ३७ १२६५ |

॥२११॥ (अथर्व० ६।११६।१-३)

जाटिकायनः । विवस्वान् (मधुमदन्नम्) । जगती, २ त्रिष्टुप् ।

| | |
|--|---|
| यद् यामं चक्रुर्निखनन्तो अग्रे कार्षीवणा अन्नविदो न विद्यया । | |
| वैवस्वते राजनि तर्जुहोम्यथ यज्ञियं मधुमदस्तु नोऽन्नम् | १ |
| वैवस्वतः कृणवद् भागधेयं मधुभागो मधुना सं सृजाति । | |
| मातुर्यदेन इषितं न आगन् यद् वा पितापराद्धो जिहीडे | २ |
| यदीदं मातुर्यदि वा पितुर्नः परि भ्रातुः पुत्राच्चेतस एन आगन् । | |
| यवन्तो अस्मान् पितरः सचन्ते तेषां सर्वेषां शिवो अस्तु मन्युः | ३ |

॥२१२॥ (अथर्व० ७।३७।१)

अथर्वा । वासः । अनुष्टुप् ।

| | |
|--------------------------------------|---|
| अभि त्वा मनुजातेन दधामि मम वाससा । | |
| यथासो मम केवलो नान्यासां कीर्तयाश्चन | १ |

॥२१३॥ (वा० य० ४।२, १०)

(वासः ।)

| | |
|--|---------|
| दीक्षातपसोस्तनूरसि तां त्वां शिवाः शग्मां परिदधे भद्रं वर्णं पुष्यन् | २ |
| विष्णोः शर्मासि शर्म यजमानस्येन्द्रस्य योनिरसि सुसस्याः कृषीस्कृधि | १० १२७१ |

॥२१४॥ (अथर्व० १२।३।१-६०)

यमः । स्वर्गः, ओदनः, अग्निः (स्वर्गोदनः) । त्रिष्टुप् १, ४२-४३, ४७ भुरिक; ८, १२, २६-२२,
 २४ जगती; १३, १७ स्वराडावी पङ्क्तिः; ३४ विराड्गर्भा; ३९ अनुष्टुप्गर्भा;
 ४४ पराबृहती; ५५-६० त्र्यवसाना सप्तपदा शङ्कुमत्यतिजागतशाकराति-
 शाकरधार्त्यगर्भातिधृतिः (५५, ५७-६० कृतिः, ५६ विराट् कृतिः) ।

पुमान् पुंसोऽधि तिष्ठ चर्मेहि तत्र ह्यस्व यतमा प्रिया तै ।

यार्वन्तावग्रे प्रथमं समेयथुस्तद् वां वर्यो यमराज्ये समानम् १

तावद् वां चक्षुस्तति वीर्याणि तावन् तेजस्ततिधा वार्जिनानि ।

अग्निः शरीरं सचते यदैघोऽर्धा पृक्कान्मिथुना सं भवाथः २

समस्मिच्छोके समु देवयाने सं स्मां समेतं यमराज्येषु ।

पुतौ पवित्रैरुप तद्धव्येथां यद्यद् रेतो अधि वां संबभूव ३

आपस्पृत्रासो अभि सं विशध्वमिमं जीवं जीवधन्याः समेत्य ।

तासां भजध्वममृतं यमाहुर्यमोदनं पचति वां जनित्री ४ १२७५

यं वां पिता पचति यं च माता रिप्रान्निर्मुक्त्यै शर्मलाच्च वाचः ।

स ओदनः शतधारः स्वर्ग उभे व्यापि नभसी महित्वा ५

उभे नभसी उभयांश्च लोकान् ये यज्वनामभिजिताः स्वर्गाः ।

तेषां ज्योतिष्मान् मधुमान् यो अग्रे तस्मिन् पुत्रैर्जरसि सं श्रयेथाम् ६

प्राचीं प्राचीं प्रदिशमा रभेथामेतं लोकं श्रद्धधानाः सचन्ते ।

यद् वां पक्कं परिविष्टमग्नौ तस्य गुप्तये दंपती सं श्रयेथाम् ७

दक्षिणां दिशमभि नक्षमाणौ पर्यावर्तेथामभि पात्रमेतत् ।

तस्मिन् वां यमः पितृभिः संविदानः पक्काय शर्म बहुलं नि यच्छात् ८

प्रतीचीं दिशामियमिद् वरं यस्यां सोमो अधिपा मृडिता च ।

तस्यां श्रयेथां सुकृतः सचेथामर्धा पृक्कान्मिथुना सं भवाथः ९ १२८०

उत्तरं राष्ट्रं प्रजयौत्तरावद् दिशामुदीची कृणवन्नो अग्रम् ।

पाङ्क्तं छन्दुः पुरुषो बभूव विश्वैर्विश्वाङ्गैः सह सं भवेम १०

ध्रुवेयं विराण्णमो अस्त्वस्यै शिवा पुत्रेभ्य उत मह्यमस्तु ।

सा नो देव्यदिते विश्ववार इर्य इव गोपा अभि रक्ष पक्कम् ११

पितेव पुत्रानामि सं स्वजस्व नः शिवा नो वाता इव वान्तु भूमौ ।

यमोदनं पचतो देवतै इह तं नुस्तप उत सत्यं च वेत्तु १२ १२८३

| | |
|---|---------|
| यद्यत् कृष्णः शकुन एह गत्वा त्सरन् विषक्तं बिलं आसृसाद । | |
| यद् वा दास्याइद्रेहस्ता समङ्क्त उल्लखलं मुसलं शुम्भतापः | १३ |
| अयं ग्रावा पृथुबुधो वयोधाः पूतः पवित्रैरपं हन्तु रक्षः । | |
| आ रोह चर्म महि शर्म यच्छ मा दंपती पौत्रमघं नि गाताम् | १४ १२८५ |
| वनस्पतिः सह देवैर्न आगन् रक्षः पिशाचाँ अपबाधमानः । | |
| स उच्छ्रयातै प्र वंदाति वाचं तेन लोकाँ अभि सर्वान् जयेम | १५ |
| सप्त मेधान् पशवः पर्यगृह्णन् य एषां ज्योतिष्माँ उत यश्चकर्ष । | |
| त्रयस्त्रिंशद् देवतास्तान्त्सचन्ते स नः स्वर्गमभि नैष लोकम् | १६ |
| स्वर्ग लोकमभि नो नयासि सं जायया सह पुत्रैः स्याम । | |
| गृह्णामि हस्तमनु मैत्वत्र मा नस्तारीन्निर्क्रान्तिर्मा अरातिः | १७ |
| ग्राहिँ पाप्मानमति ताँ अयाम् तमो व्यस्य प्र वंदासि वल्गु । | |
| वानस्पत्य उद्यतो मा जिहिँसीर्मा तण्डुलं वि शरीर्देवयन्तम् | १८ |
| विश्वव्यचा घृतपृष्ठो भविष्यन्त्सयोनिलोकमुप याद्येतम् । | |
| वर्षवृद्धमुप गच्छ शूर्पं तुषं पलावानप तद् विनक्तु | १९ १२९० |
| त्रयो लोकाः संमिता ब्राह्मणेन द्यौरेवासौ पृथिव्यन्तरिक्षम् । | |
| अंशून् गृभीत्वान्वारंभेथामा प्यायन्तां पुनरा यन्तु शूर्पम् | २० |
| पृथग् रूपाणि बहुधा पशूनामेकरूपो भवसि सं समृद्ध्या । | |
| एतां त्वचं लोहिनीं तां नुदस्व ग्रावां शुम्भाति मलग इव वस्त्रा | २१ |
| पृथिवीं त्वां पृथिव्यामा वेशयामि तनूः समानी विकृता त एषा । | |
| यद्यद् द्युत्तं लिखितमर्पणेन तेन मा सुस्रोत्रह्यणापि तद् वपामि | २२ |
| जनित्रीव प्रति हर्यासि सुनुं सं त्वां दधामि पृथिवीं पृथिव्या । | |
| उखा कुम्भी वेद्यां मा व्यथिष्ठा यज्ञायुधैराज्येनातिषक्ता | २३ |
| अग्निः पचन् रक्षतु त्वा पुरस्तादिन्द्रो रक्षतु दक्षिणतो मरुत्वान् । | |
| वरुणस्त्वा दंहाद्धरणे प्रतीच्या उत्तरात् त्वा सोमः सं ददातै | २४ १२९५ |
| पूताः पवित्रैः पवन्ते अभ्राद् दिवं च यन्ति पृथिवीं च लोकान् । | |
| ता जीवला जीवधन्याः प्रतिष्ठाः पात्र आसिक्ताः पर्यागिरिन्धाम् | २५ |
| आ यन्ति दिवः पृथिवीं सचन्ते भूम्याः सचन्ते अघ्यन्तरिक्षम् । | |
| शुद्धाः सतीस्ता उ शुम्भन्त एव ता नः स्वर्गमभि लोकं नयन्तु | २६ १२९७ |

| | |
|--|---------|
| उतेव प्रभ्वीरुत संमितास उत शुक्राः शुचयश्चामृतांसः । | |
| ता औदुनं दंपतिभ्यां प्रशिष्टा आपः शिक्षन्तीः पचता सुनाथाः | २७ |
| संख्याता स्तोकाः पृथिवीं सचन्ते प्राणापानैः संमिता ओषधीभिः । | |
| असंख्याता ओप्यमानाः सुवर्णाः सर्वं व्यापुः शुचयः शुचित्वम् | २८ |
| उद्योषन्त्यभि बलान्ति तप्ताः फेनमस्यन्ति बहुलांश्च बिन्दन् । | |
| योषेव दृष्ट्वा पतिमृत्विषयायैतैस्तण्डुलैर्भवता समापः | २९ १३०० |
| उत्थापय सीदतो बुध एनानद्भिरात्मानमभि सं स्पृशन्ताम् । | |
| अमासि पात्रैरुदकं यदेतन्मितास्तण्डुलाः प्रदिशो यदीमाः | ३० |
| प्र यच्छ पशुं त्वरया हरौषमहिंसन्त ओषधीर्दान्तु पर्वन् । | |
| यासां सोमः परि राज्यं बभूवामन्युता नो वीरुधौ भवन्तु | ३१ |
| नवं बहिर्होदनाय स्तृणीत प्रियं हृदश्चक्षुषो वल्ग्वस्तु । | |
| तस्मिन् देवाः सह दैवीर्विशन्तिवमं प्राशन्त्वृतुभिर्निषद्य | ३२ |
| वनस्पते स्तीर्णमा सीद बहिर्गग्निष्टोमैः संमितो देवताभिः । | |
| त्वष्ट्रेव रूपं सुकृतं स्वधित्यैना एहाः परि पात्रे ददृश्राम् | ३३ |
| षष्ठ्यां शरत्सु निधिपा अभीच्छात् स्वः पक्वेनाभ्यश्रवातै । | |
| उपैनं जीवान् पितरंश्च पुत्रा एतं स्वर्गं गमयान्तमग्नेः | ३४ १३०५ |
| धृता ध्रियस्व धरुणे पृथिव्या अच्युतं त्वा देवताश्चयावयन्तु । | |
| तं त्वा दंपती जीवन्तौ जीवपुत्रावुद् वासयातः पर्याग्नेधानात् | ३५ |
| सर्वान्तसमागां अभिजित्य लोकान् यावन्तः कामाः समतीतृपस्तान् । | |
| वि गाहिथामायवनं च दविरेकस्मिन् पात्रे अभ्युद्धरैनम् | ३६ |
| उप स्तृणीहि प्रथयं पुरस्ताद् घृतेन पात्रमभि धारयैतत् । | |
| वाश्रेवोस्त्रा तरुणं स्तनस्युमिमं देवासो अभिहिङ्कृणोत | ३७ |
| उपास्तरिर्करो लोकमेतमुरुः प्रथतामसमः स्वर्गः । | |
| तस्मिच्छ्यातै महिषः सुपर्णो देवा एनं देवताभ्यः प्र यच्छान् | ३८ |
| यद्यज्ञाया पचति त्वत् परापरः पतिर्वा जाये त्वत् तिरः । | |
| सं तत् सृजेथां सह वां तदस्तु संपादयन्तौ सह लोकमेकम् | ३९ |
| यावन्तो अस्याः पृथिवीं सचन्ते अस्मत् पुत्राः परि ये सैवभूवुः । | |
| सर्वास्तां उप पात्रे ह्वयेथां नाभिं जानानाः शिशवः समायान् | ४० १३११ |

| | |
|--|---------|
| वसोर्या धारा मधुना प्रपीना घृतेन मिश्रा अमृतस्य नाभयः । सर्वास्ता अव रुन्धे स्वर्गः षष्ट्यां शरत्सु निधिपा अभीच्छात् | ४१ |
| निधिं निधिपा अभ्येनिमिच्छादनीश्वरा अभितः सन्तु येऽन्ये । अस्माभिर्दुत्तो निहितः स्वर्गस्त्रिभिः काण्डैस्त्रीन्स्वर्गानरुक्षत् | ४२ |
| अग्नी रक्षस्तपतु यद् विदेवं कृव्यात् पिशाच इह मा प्र पास्त । नुदाम एनमप रुध्मो अस्मदादित्या एनमङ्गिरसः सचन्ताम् | ४३ |
| आदित्येभ्यो अङ्गिरोभ्यो मध्विदं घृतेन मिश्रं प्रति वेदयामि । शुद्धहस्तौ ब्राह्मणस्यानिहत्यैतं स्वर्गं सुकृतावपीतम् | ४४ १३१५ |
| इदं प्रापमुत्तमं काण्डमस्य यस्माल्लोकात् परमेष्ठी समाप । आ सिञ्च सर्पिर्घृतवत् समङ्गध्येष भागो अङ्गिरसो नो अत्र | ४५ |
| सत्याय च तपसे देवताभ्यो निधिं शैवधिं परि दन्न एतम् । मा नो घृतेऽव गान्मा समित्यां मा स्मान्यस्मा उत् सृजता पुरा मत् | ४६ |
| अहं पंचाम्यहं ददामि ममेदु कर्मन् करुणेऽधि जाया । कौमारो लोको अजनिष्ट पुत्रोऽन्वारभेथां वय उत्तरावत् | ४७ |
| न किल्बिषमत्र नाधारो अस्ति न यन्मित्रैः समममान एति । अनूनं पात्रं निहितं न एतत् पक्तरं पक्वः पुनरा विंशति | ४८ |
| प्रियं प्रियाणां कृणवाम तमस्ते यन्तु यतमे द्विषन्ति । धेनुरनङ्गान् वयोवय आयदेव पौरुषेयमप मृत्युं नुदन्तु | ४९ १३२० |
| समग्रयो विदुरन्यो अन्यं य ओषधीः सचते यश्च सिन्धून् । यावन्तो देवा दिव्याश्चैतपन्ति हिरण्यं ज्योतिः पचतो बभूव | ५० |
| एषा त्वचां पुरुषे सं बभूवानग्राः सर्वे पशवो ये अन्ये । क्षत्रेणात्मानं परि धापयाथोऽमोतं वासो मुखमोदनस्य | ५१ |
| यदुक्षेपु वदा यत् समित्यां यद् वा वदा अनृतं वित्तकाम्या । समानं तन्तुमभि संवसानौ तस्मिन्सर्वं शर्मलं सादयाथः | ५२ |
| वर्षं वनुष्वापि गच्छ देवांस्त्वचो धूमं पर्युत् पातयासि । विश्वव्यचा घृतपृष्ठो भविष्यन्त्सयोर्निर्लोकमुप याह्येतम् | ५३ |
| तन्वं स्वर्गो बहुधा वि चक्रे यथा विद आत्मन्नन्यवर्णाम् । अपोजैत् कृष्णां रुशतीं पुनानो या लोहिनी तां ते अमौ जुहोमि | ५४ १३२५ |

प्राच्यै त्वा दिशेऽग्नयेऽधिपतयेऽसिताय रक्षित्र आदित्यायेषुमते ।

एतं परि दद्मस्तं नो गोपायतास्माकमैतौः ।

दिष्टं नो अत्र जरसे नि नैषज्जरा मृत्यवे परि णो ददात्वथ पक्केन सह सं भवेम ५५

दक्षिणायै त्वा दिश इन्द्रायाधिपतये तिरश्चिराजये रक्षित्रे यमायेषुमते ।

एतं परि दद्मस्तं नो गोपायतास्माकमैतौः ।

दिष्टं नो अत्र जरसे नि नैषज्जरा मृत्यवे परि णो ददात्वथ पक्केन सह सं भवेम ५६

प्रतीच्यै त्वा दिशे वरुणायाधिपतये पृदाकवे रक्षित्रेऽन्नायेषुमते ।

एतं परि दद्मस्तं नो गोपायतास्माकमैतौः ।

दिष्टं नो अत्र जरसे नि नैषज्जरा मृत्यवे परि णो ददात्वथ पक्केन सह सं भवेम ५७

उदीच्यै त्वा दिशे सोमायाधिपतये स्वजाय रक्षित्रेऽशन्या इषुमत्यै ।

एतं परि दद्मस्तं नो गोपायतास्माकमैतौः ।

दिष्टं नो अत्र जरसे नि नैषज्जरा मृत्यवे परि णो ददात्वथ पक्केन सह सं भवेम ५८

ध्रुवायै त्वा दिशे विष्णवेऽधिपतये कल्माषग्रीवाय रक्षित्र ओषधीभ्य इषुमतीभ्यः ।

एतं परि दद्मस्तं नो गोपायतास्माकमैतौः ।

दिष्टं नो अत्र जरसे नि नैषज्जरा मृत्यवे परि णो ददात्वथ पक्केन सह सं भवेम ५९

ऊर्ध्वायै त्वा दिशे बृहस्पतयेऽधिपतये श्चित्राय रक्षित्रे वर्षायेषुमते ।

एतं परि दद्मस्तं नो गोपायतास्माकमैतौः ।

दिष्टं नो अत्र जरसे नि नैषज्जरा मृत्यवे परि णो ददात्वथ पक्केन सह सं भवेम ६० १३३१

वाजीकरणम् । (१३३२-१३४५)

॥२१५॥ (अथर्व० ४।४।१-८)

अथर्वा । वनस्पतिः; १-२ सूर्यः, प्रजापतिः; ४ इन्द्रः; ५ आपः, सोमः; ६ अग्निः, सरस्वती,
ब्रह्मणस्पतिः (वाजीकरणम्) । अनुष्टुप्, ४ पुर उष्णिक्, ६-७ भुरिक् ।

यां त्वा गन्धर्वो अखनद् वरुणाय मृतभ्रजे ।

तां त्वा वयं खनामस्योषधिं शेपहर्षणीम् १

उदुषा उदु सूर्य उदिदं मामकं वचः । उदैजतु प्रजापतिर्वृषा शुष्मेण वाजिनां २

यथा स्म ते विरोहतोऽभितप्तमिवानति । ततस्ते शुष्मवत्तरमियं कृणोत्वोषधिः ३

उच्छुष्मौषधीनां सारं ऋषभाणाम् । सं पुंसामिन्द्र वृष्ण्यमस्मिन् धैहि तनूवशिन् ४

अपां रसः प्रथमजोऽथो वनस्पतीनाम् । उत सोमस्य आतास्युतार्शमसि वृष्ण्यम् ५ १३३६

अद्याग्ने अद्य संवितरद्य देवि सरस्वति । अद्यास्य ब्रह्मणस्पते धनुर्वा तानया पसः ६
आहं तनोमि ते पसो अधि ज्यामिव धन्वनि ।

क्रमस्वर्श इव रोहितमनवग्लायता सदा ७

अश्वस्याश्वतरस्याजस्य पेतृस्य च ।

अथ ऋषभस्य ये वाजास्तानस्मिन् धेहि तनूवशिन् ८

॥२१६॥ (अथर्व० ६।७२।१-३)

अथर्वाङ्गिराः । शेषोऽर्कः (वाजीकरणम्) । १ जगती, २ अनुष्टुप्, ३ भुरिक् ।

यथासितः प्रथयते वशाँ अनु वर्षेषि कृण्वन्नसुरस्य मायया ।

एवा ते शेषः सहसायमर्कोऽङ्गेनाङ्गं संसमकं कृणोतु १ १३४०

यथा पसस्तायादुरं वार्तेन स्थूलभं कृतम् ।

यावत् परस्वतः पसस्तावत् ते वर्धतां पसः २

यावदङ्गीनं पारस्वतं हास्तिनं गार्दिभं च यत् ।

यावदश्वस्य वाजिनस्तावत् ते वर्धतां पसः ३

॥२१७॥ (अथर्व० ६।१०१।१-३)

अथर्वाङ्गिराः । ब्रह्मणस्पतिः (वाजीकरणम्) । अनुष्टुप् ।

आ वृषायस्व श्वसिहि वर्षस्व प्रथयस्व च । यथाङ्गं वर्धतां शेषस्तेन योषितमिज्जहि १

येन कृशं वाजयन्ति येन हिन्वन्त्यातुर्म । तेनास्य ब्रह्मणस्पते धनुर्वा तानया पसः २

आहं तनोमि ते पसो अधि ज्यामिव धन्वनि ।

क्रमस्वर्श इव रोहितमनवग्लायता सदा ३ १३४५

गर्भाधानम् । (१३४६-१४९३)

॥२१८॥ (अथर्व० ५।२५।१-१३)

ब्रह्मा । योनिगर्भः, पृथिव्यादयो देवताः । अनुष्टुप्, १३ विराट्पुरस्ताद्बृहती ।

पर्वताद् दिवो योनेरङ्गादङ्गात् समाभृतम् । शेषो गर्भस्य रेतोधाः सरौ पर्णमिवा दधत् १

यथेयं पृथिवी मही भूतानां गर्भमादधे । एवा दधामि ते गर्भं तस्मै त्वामवसे हुवे २

गर्भं धेहि सिनीवालि गर्भं धेहि सरस्वति । गर्भं ते अश्विनोभा धत्तां पुष्करस्तजा ३

गर्भं ते मित्रावरुणौ गर्भं देवो बृहस्पतिः । गर्भं त इन्द्रश्चाग्निश्च गर्भं धाता दधातु ते ४

विष्णुर्योनिं कल्पयतु त्वष्टा रूपाणि पिशतु । आ सिंश्चतु प्रजापतिर्धाता गर्भं दधातु ते ५

यद् वेद राजा वरुणो यद् वा देवी सरस्वती । यदिन्द्रो बृत्रहा वेदु तद् गर्भकरणं पिब ६ १३५१

गर्भो अस्थोषधीनां गर्भो वनस्पतीनाम् । गर्भो विश्वस्य भूतस्य सो अग्ने गर्भमेह धाः ७
 अर्धे स्कन्द वीरयस्व गर्भमा धेहि योन्याम् । वृषासि वृण्यावन् प्रजायै त्वा नयामसि ८
 वि जिहीष्व बर्हेत्सामे गर्भस्ते योनिमा शयाम् । अदुष्टे देवाः पुत्रं सोमपा उभयाविनम् ९
 धातुः श्रेष्ठेन रूपेणास्या नार्या गवीन्योः । पुमांसं पुत्रमा धेहि दशमे मासि सूतवे १० १३५५
 त्वष्टः श्रेष्ठेन रूपेणास्या नार्या गवीन्योः । पुमांसं पुत्रमा धेहि दशमे मासि सूतवे ११
 सवितः श्रेष्ठेन रूपेणास्या नार्या गवीन्योः । पुमांसं पुत्रमा धेहि दशमे मासि सूतवे १२
 प्रजापते श्रेष्ठेन रूपेणास्या नार्या गवीन्योः । पुमांसं पुत्रमा धेहि दशमे मासि सूतवे १३

॥२१९॥ (अथर्व० ६।८१।१-३)

अथर्वा । आदित्यः, ३ त्वष्टा (गर्भाधानम्) । अनुष्टुप् ।

यन्तासि यच्छसे हस्तावप रक्षांसि सेधसि । प्रजां धनं च गृह्णानः परिहस्तो अभूदयम् १
 परिहस्तं वि धारय योनिं गर्भाय धातवे । मर्यादे पुत्रमा धेहि तं त्वमा गमयागमे २ १३६०
 यं परिहस्तमर्बिभरदितिः पुत्रकाम्या । त्वष्टा तमस्या आ बध्नाद् यथा पुत्रं जनादिति ३

॥२२०॥ (अथर्व० ६।१७।१-४)

अथर्वा । गर्भदहनम्, पृथिवी । अनुष्टुप् ।

यथेयं पृथिवी मही भूतानां गर्भमादधे । एवा तै ध्रियतां गर्भो अनु सूतुं सवितवे १
 यथेयं पृथिवी मही दाधारेमान् वनस्पतीन् । एवा तै ध्रियतां गर्भो अनु सूतुं सवितवे २
 यथेयं पृथिवी मही दाधार पर्वतान् गिरीन् । एवा तै ध्रियतां गर्भो अनु सूतुं सवितवे ३
 यथेयं पृथिवी मही दाधार विष्टितं जगत् । एवा तै ध्रियतां गर्भो अनु सूतुं सवितवे ४ १३६५

॥२२१॥ (अथर्व० ७।११।१-१)

ब्रह्मा । वृषभः (आत्मा) । परावृहती त्रिष्टुप् ।

इन्द्रस्य कुक्षिरसि सोमधानं आत्मा देवानामुत मानुषाणाम् ।

इह प्रजा जनय यास्तं आसु या अन्यत्रेह तास्तै रमन्ताम् १

॥२२२॥ (अथर्व० ८।६।१-२६)

मातृनामा । मन्त्रोक्ताः, मातृनामा, १५ ब्रह्मणस्पतिः (गर्भदोषनिवारणम्) । अनुष्टुप्, २ पुरस्ताद्वृहती;

१० ज्यवसाना षट्पदा जगती; ११-१२, १४, १६, पथ्यापङ्क्तिः; १५ ज्यवसाना सप्तपदा शकरी;

१७ ज्यवसाना सप्तपदा जगती ।

यौ तै मातोन्ममार्जे जातायाः पतिवेदनौ । दुर्णामा तत्र मा गृध्रदलिंश उत वत्सपः १

पलालानुपलालौ शर्कु कोकं मलिम्लुचं पलीजकम् ।

आश्रेषं वृत्रिवाससमृक्षग्रीवं प्रमीलिनम्

२ १३६८

| | |
|--|---------|
| मा सं वृतो मोषं सृप ऊरू मावं सृपोऽन्तरा । | |
| कृणोम्यस्यै भेषजं वृजं दुर्णामिचार्तनम् | ३ |
| दुर्णामां च सुनामां चोभा संवृतमिच्छतः । अरायानप हन्मः सुनामा स्त्रैणमिच्छताम् ४ | १३७० |
| यः कृष्णः केश्यसुर स्तम्बज उत तुण्डिकः । | |
| अरायानस्या मुष्काभ्यां भंससोप हन्मसि | ५ |
| अनुजिघ्रं प्रमृशन्तं क्रव्यादमुत रेरिहम् । | |
| अरायोद्धकिष्किणो वजः पिङ्गो अननिशत् | ६ |
| यस्त्वा स्वप्ने निपद्यते भ्राता भूत्वा पितेव च । | |
| वृजस्तान्तसंहतामितः ह्रीवरूपांस्तिरीटिनः | ७ |
| यस्त्वा स्वपन्तीं त्सरति यस्त्वा दिप्सति जाग्रतीम् । | |
| छायामिव प्र तान्तसूर्यः परिक्रामन्नीनशत् | ८ |
| यः कृणोति मृतवत्सामवतो कामिमां स्त्रियम् । | |
| तमोषधे त्वं नाशयास्याः कुमलमञ्जिवम् | ९ १३७५ |
| ये शालाः परिनृत्यन्ति सायं गर्दभनादिनः । | |
| कुसुला ये च कुक्षिलाः ककुभाः करुमाः सिमाः । | |
| तानोषधे त्वं गन्धेन विषूचीनान् वि नाशय | १० |
| ये कुकुन्धाः कुकूरभाः कृत्तीर्दृशानि बिभ्रति । | |
| ह्रीवा इव प्रनृत्यन्तो वने ये कुर्वते घोषं तानितो नाशयामसि | ११ |
| ये सूर्यं न तितिक्षन्त आतर्पन्तमष्टं दिवः । | |
| अरायान् वस्तवासिनो दुर्गन्धील्लोहितास्यान् मर्ककान् नाशयामसि | १२ |
| य आत्मानमतिमात्रमंसं आधाय बिभ्रति स्त्रीणां श्रोणिप्रतोदिन इन्द्र रक्षांसि नाशय १३ | |
| ये पूर्वं वध्वोऽयन्ति हस्ते शृङ्गाणि बिभ्रतः । | |
| आपाकेष्ठाः प्रहासिनं स्तम्बे ये कुर्वते ज्योतिस्तानितो नाशयामसि | १४ १३८० |
| येषां पश्चात् प्रपदानि पुरः पाष्णीः पुरो मुखा । | |
| खलजाः शकधूमजा उरुण्डा ये च मट्मटाः कुम्भमुष्का अयाशवः । | |
| तानस्या ब्रह्मणस्पते प्रतीवोधेन नाशय | १५ |
| पर्यस्ताक्षा अग्रचङ्कशा अस्त्रैणाः सन्तु पण्डगाः । | |
| अवं भेषज पादय य इमां संविष्टसत्यपतिः स्वपतिं स्त्रियम् | १६ १३८१ |

उद्धर्षिणं मुनिकेशं जम्भयन्तं मरीमशम् । उपेयन्तमुदुम्बलं तुण्डेलमुत शालुडम्
 पुदा प्र विध्य पाण्ण्यां स्थालीं गौरैव स्पन्दुना १७
 यस्ते गर्भं प्रतिमृशज्जातं वा मारयाति ते ।
 पिङ्गस्तमुग्रधन्वा कृणोतु हृदयाविधम् १८
 ये अमो जातान् मारयन्ति स्रुतिका अनुशेरते ।
 स्त्रीभागान् पिङ्गो गन्धर्वान् वातो अभ्रमिवाजतु १९ १३८५
 परिसृष्टं धारयतु यद्धितं मावं पादु तत् ।
 गर्भं त उग्रौ रक्षतां भेषजौ नीविभार्यौ २०
 पूर्वीनसात् तङ्गत्वाश्छायाकादुत नग्नकात् ।
 प्रजायै पत्यै त्वा पिङ्गः परि पातु किमीदिनः २१
 आस्थिष्वतुरक्षात् पञ्चपादादनङ्गुरेः । वृन्तादुभि प्रसर्पतुः परि पाहि वरीवृतात् २२
 य आमं मांसमदान्ति पौरुषेयं च ये ऋविः ।
 गर्भान् खादन्ति केशवास्तानितो नाशयामसि २३
 ये स्रुयात् परिसर्पन्ति स्नुषेव श्वशुरादधि ।
 वज्रश्च तेषां पिङ्गश्च हृदयेऽधि नि विध्यताम् २४ १३९०
 पिङ्ग रक्ष जायमानं मा पुमांसं स्त्रियं क्रन् ।
 आण्डादो गर्भान् मा दभन् बाधस्वेतः किमीदिनः २५
 अग्रजास्त्वं मार्तवत्समाद् रोदमघमावयम् । वृक्षादिव स्रजं कृत्वाप्रिये प्रति मुञ्च तत् २६

॥२२३॥ (अथर्व० २०।९६।११-१६)

रक्षोहा । गर्भसंस्त्राव । अनुष्टुप् ।

ब्रह्मणाभिः संविदानो रक्षोहा बाधतामितः ।
 अभीवा यस्ते गर्भं दुर्णामा योनिमाश्रये ११
 यस्ते गर्भमभीवा दुर्णामा योनिमाश्रये । अग्रिष्टं ब्रह्मणा सह निष्क्रव्यादमननिश त् १२
 यस्ते हन्ति पत्यन्तं निषत्स्नुं यः संरीसृपम् ।
 जातं यस्ते जिघांसति तमितो नाशयामसि १३ १३९५
 यस्त ऊरू विहरत्यन्तरा दम्पती श्रये । योनिं यो अन्तरारोहति तमितो नाशयामसि १४
 यस्त्वा भ्राता पतिर्भूत्वा जारो भूत्वा निषद्यते ।
 प्रजां यस्ते जिघांसति तमितो नाशयामसि १५ १३९७
 [आयुर्वेद०] १४

यस्त्वा स्वप्नेन तमसा मोहयित्वा निपद्यते ।
प्रजां यस्ते जिघांसति तमितो नाशयामसि

१६

॥२२४॥ (ऋ० ५।७८५-९)

सप्तवधिरात्रेयः । अश्विनौ (गर्भस्त्राविण्युपनिषद्) । अनुष्टुप् ।

वि जिहीष्व वनस्पते योनिः सूर्यन्त्या इव ।

श्रुतं मे अश्विना हवं सप्तवधिं च मुञ्चतम्

५

भीताय नार्धमानाय ऋषये सप्तवध्रये ।

मायाभिरश्विना युवं वृक्षं सं च वि चाचथः

६ १४००

यथा वातः पुष्करिणीं समिङ्गयति सर्वतः । एवा ते गर्भे एजतु निरैतु दशमास्यः ७

यथा वातो यथा वनं यथा समुद्र एजति ।

एवा त्वं दशमास्य सहावेहि जरायुणा

८

दश मासाञ्छशयानः कुमारो अधि मातरि ।

निरैतु जीवो अक्षतो जीवो जीवन्त्या अधि

९

॥२२५॥ (ऋ० ९।७४।५)

कक्षीवान् दैर्घतमसः । पवमानः सोमः (अदितेर्गर्भः) । जगती ।

अरात्रीदंशुः सचमान ऊर्मिणा देवाव्यं मनुषे पिन्वति त्वचम् ।

दधाति गर्भमदितेरुपस्थ आ येन तोकं च तनयं च धामहे

५

॥२२६॥ (अथर्व० १।२१।१-६)

अथर्वा । पूषा, अर्यमा, वेधाः, दिशः, देवाः (नारी-सुखप्रसूतिः) । १ पङ्क्तिः; २ अनुष्टुप्; ३ चतुष्पदोष्णिग्गर्भा
ककुम्भत्यनुष्टुप्; ४-६ पथ्यापङ्क्तः ।

वषट् ते पूषस्मिन्सूतावर्यमा होता कृणोतु वेधाः ।

सिस्ततां नार्युतप्रजाता वि पर्वाणि जिहतां सूतवा उ

१ १४०५

चतस्रो दिवः प्रदिशश्चतस्रो भूम्या उत । देवा गर्भं समैरयन् तं व्यूर्ण्वन्तु सूतवे २

सुषा व्यूर्णोतु वि योनिं हापयामसि । अथया सूषणे त्वमव त्वं विष्कले सृज ३

नेवं मांसे न पीवसि नेवं मज्जस्वाहृतम् ।

अत्रैतु पृश्नि शेवलं शुने जरायवत्तवेऽव जरायु पद्यताम्

४

वि ते भिनक्षि मेहनं वि योनिं वि गवीनिंके ।

वि मातरं च पत्रं च वि कुमारं जरायणाव जराय पद्यताम्

५ १४०९

यथा वातो यथा मनो यथा पतन्ति पक्षिणः ।

एवा त्वं दशमास्य साकं जरायुणा पतावं जरायुं पद्यताम्

६ १४१०

॥२२७॥ (अथर्व० १९।४०।१-४)

ब्रह्मा । बृहस्पतिः, विश्वे देवाश्च (मेधा) । १ पराऽनुष्टुप् त्रिष्टुप्; २ पुरःककुम्मत्युपरिष्टाद्बृहती;
३ बृहतीगर्भा; ४ त्रिपदाऽऽर्षी गायत्री ।

यन्मे छिद्रं मनसो यच्च वाचः सरस्वती मन्युमन्तं जुगाम् ।

विश्वेस्तद् देवैः सह संविदानः सं दधातु बृहस्पतिः

१

मा न आपो मेधां मा ब्रह्म प्र मथिष्टन ।

सुष्यदा यूयं स्यन्दध्वमुपहृतोऽहं सुमेधां वर्चस्वी

२

मा नो मेधां मा नो दीक्षां मा नो हिंसिष्टं यत् तपः ।

शिवा नः शं सन्त्वार्युषे शिवा भवन्तु मातरः

३

या नः पीपरदुश्चिना ज्योतिष्मती तमस्तिरः । तामस्मे रासतामिषम्

४

॥२२८॥ (अथर्व० १।१।१-४)

अथर्वा । वाचस्पतिः (मेधाजननम्) । अनुष्टुप्, ४ चतुष्पदा विराड्रोबृहती ।

ये त्रिपत्ताः परियन्ति विश्वा रूपाणि बिभ्रतः ।

वाचस्पतिर्बला तेषां तन्वो अद्य दधातु मे

१

पुनरेहि वाचस्पते देवेन मनसा सह ।

वसोष्पते निरमय मय्येवास्तु मयि श्रुतम्

२

इहैवाभि वि तनुभे आर्त्ता इव ज्यया ।

वाचस्पतिर्नि यच्छतु मय्येवास्तु मयि श्रुतम्

३

उपहृतो वाचस्पतिरुपास्मान् वाचस्पतिह्वयताम् ।

सं श्रुतेन गमेमहि मा श्रुतेन वि राधिवि

४

॥२२९॥ अथर्व० ६।१०८।१-५)

शौनकः । मेधा, ४ अग्निः (मेधावर्धनम्) । अनुष्टुप्, २ उरोबृहती, ३ पथ्याबृहती ।

त्वं नो मेधे प्रथमा गोभिरश्वेभिरा गंहि । त्वं सूर्यस्य रश्मिभिस्त्वं नो असि यज्ञियां

मेधामहं प्रथमां ब्रह्मण्वतीं ब्रह्मज्जतामृषिष्टुताम् । प्रणीतां ब्रह्मचारिभिर्देवानामवसे हुवे

यां मेधामभवो विदुर्या मेधामसुरा विदुः ।

ऋषयो भद्रां मेधां यां विदुस्तं मया वैद्ययामसि -

३ १४२१

यामृषयो भूतकृतो मेधां मेधाविनो विदुः । तया मामद्य मेधया मेधाविनै कृणु ४
मेधां सायं मेधां प्रातर्मेधां मध्यंदिनं परि । मेधां सूर्यस्य रश्मिभिर्वचसा वैश्वामहे ५ १४२२

मणिधारणम् । (१४२४-१५७८)

॥२३०॥ (अथर्व० ४।१०।१-७)

अथर्वा । शङ्खमणिः, कुशनः । अनुष्टुप्, ६ पथ्यापङ्क्तिः, ७ पञ्चपदा पराऽनुष्टुप्शकरी ।
वाताञ्जातो अन्तरिक्षाद् विद्युतो ज्योतिष्वपरि ।

स नो हिरण्यजाः शङ्खः कुशनः पात्वंहसः १

यो अग्रतो रौचनानां समुद्रादधि जज्ञिषे । शङ्खेन हत्वा रक्षांस्यत्त्रिणो वि बहामहे २ १४२५

शङ्खेनामीवाममतिं शङ्खेनोत सदान्वाः ।

शङ्खो नो विश्वमेषजः कुशनः पात्वंहसः ३

दिवि जातः समुद्रजः सिन्धुतस्पर्याभृतः ।

स नो हिरण्यजाः शङ्ख आयुषप्रतरणो मणिः ४

समुद्राञ्जातो मणिर्वृत्राज्जातो दिवाकरः । सो अस्मान्तसर्वतः पातु हेत्या देवासुरेभ्यः ५

हिरण्यानामेकोऽसि सोमात् त्वमधि जज्ञिषे ।

रथे त्वमसि दर्शत इषुधौ रौचनस्त्वं प्र ण आयूषि तारिषत् ६

देवानामस्थि कुशनं बभूव तदात्मन्वचरत्यप्स्वं १ न्तः ।

तत् ते बभ्राम्यायुषे वर्चसे बलाय दीर्घायुत्वाय श्रतशारदाय कार्शनस्त्वाभि रक्षतु ७ १४३०

॥२३१॥ (अथर्व० ८।५।१-२२)

शुक्रः । कृत्यादूषणं, मन्त्रोक्ताः (प्रतिसरो मणिः । अनुष्टुप्; १, ६ उपरिष्ठाद्बृहती; २ त्रिपदा विराट्

गायत्री; ३ चतुष्पदा भुरिगजगती; ५ भुरिक्खस्तारपङ्क्तिः; ७-८ ककुम्भती; ९

पुरस्कृतिर्जगती; १० त्रिष्टुप्; ११ पथ्यापङ्क्तिः; १४ त्र्यवसाना षट्पदा जगती;

१५ पुरस्ताद्बृहती; १९ जगतीगर्भा त्रिष्टुप्; २० विराट्गर्भा प्रस्तारपङ्क्तिः

२१ विराट् त्रिष्टुप्; २२ त्र्यवसाना सप्तपदा विराट्गर्भा भुरिक्खशकरी ।

अयं प्रतिसरो मणिर्वीरो वीराय बध्यते ।

वीर्यवान्सपत्नहा शूरवीरः परिपाणः समङ्गलः १

अयं मणिः सपत्नहा सुवीरः सहस्वान् वाजी सहमान उग्रः ।

प्रत्यक् कृत्या दूषयन्नेति वीरः २

अनेनेन्द्रो मणिना वृत्रमहन्ननेनासुरान् पराभादयन्मनीषी ।

अनेनाजयद् द्यावापृथिवी उमे इमे अनेनाजयत् प्रदिशुश्चतस्रः ३ १४३३

- अयं स्राक्त्यो मणिः प्रतीवर्तः प्रतिसरः ।
 ओजस्वान् विमृधो वशी सो अस्मान् पातु सर्वतः ४
 तदुगिराह तदु सोमं आह बृहस्पतिः सविता तदिन्द्रः ।
 ते मे देवाः पुरोहिताः प्रतीचीः कृत्याः प्रतिसरैरजन्तु ५ १४३५
 अन्तर्दधे द्यावापृथिवी उताहरुत सूर्यम् ।
 ते मे देवाः पुरोहिताः प्रतीचीः कृत्याः प्रतिसरैरजन्तु ६
 ये स्राक्त्यं मणिं जना वर्माणि कृण्वते । सूर्य इव दिवमारुह्य वि कृत्या बाधते वशी ७
 स्राक्त्येन मणिन ऋषिणेव मनीषिणा । अजैषु सर्वाः पृतना वि मृधो हन्मि रक्षसः ८
 याः कृत्या आङ्गिरसीर्याः कृत्या आसुरीर्याः कृत्याः स्वयंकृता या उ चान्येभिराभृताः ।
 उभयीस्ताः परा यन्तु परावतो नवति नाव्याश्च अति ९
 अस्मै मणिं वर्मं बध्नन्तु देवा इन्द्रो विष्णुः सविता रुद्रो अग्निः ।
 प्रजापतिः परमेष्ठी विराड् वैश्वानर ऋषयश्च सर्वे १० १४४०
 उत्तमो अस्योषधीनामनङ्गान् जगतामिव व्याघ्रः श्वपदामिव ।
 यमैच्छामाविदाम् तं प्रतिस्पाशन्मन्तितम् ११
 स इद् व्याघ्रो भवत्यथो सिंहो अथो वृषा । अथो सपत्नकर्शनो यो बिभर्तमिं मणिम् १२
 नैनं घ्नन्त्यप्सरसो न गन्धर्वा न मर्त्याः ।
 सर्वा दिशो वि राजति यो बिभर्तमिं मणिम् १३
 कश्यपस्त्वामसृजत कश्यपस्त्वा समैरयत् ।
 अविभस्त्वेन्द्रो मानुषे बिभ्रत् संश्रेषिणेऽजयत् ।
 मणिं सहस्रवीर्यं वर्मं देवा अकृण्वत १४
 यस्त्वा कृत्याभिर्यस्त्वा दीक्षाभिर्यज्ञैर्यस्त्वा जिघांसति ।
 प्रत्यक् त्वमिन्द्र तं जहि वज्रेण शतपर्वणा १५ १४४५
 अयमिद् वै प्रतीवर्त ओजस्वान् संजयो मणिः ।
 प्रजां धनं च रक्षतु परिपाणः सुमङ्गलः १६
 असपत्नं नो अधरादसपत्नं न उत्तरात् । इन्द्रासपत्नं नः पश्चाज्ज्योतिः शूर पुरस्कृषि १७
 वर्मं मे द्यावापृथिवी वर्माहर्वर्मं सूर्यः । वर्मं म इन्द्रश्चाग्निश्च वर्मं धाता दधातु मे १८
 ऐन्द्राभं वर्मं बहुलं यदुग्रं विश्वे देवा नाति विध्यान्ति सर्वे ।
 अस्मै तन्वं त्रायतां सर्वतो बृहदायुष्मां जरदक्षिर्यथासानि १९ १४४९

आ मारुक्षद् देवमणिमेक्षा अरिष्टतातये ।

इमं मेथिमभिसंविशध्वं तनूपानं त्रिवरूथमोजसे

२० १४५०

अस्मिन्निन्द्रो नि दधातु नृम्णमिमं देवासो अभिसंविशध्वम् ।

दीर्घायुत्वायं शतशारदायायुष्मान् जरदष्टिर्यथासत्

२१

स्वास्तिदा विशां पतिर्वृत्रहा विमृषो वृशी ।

इन्द्रो बध्नातु ते मणिं जिगीवाँ अपराजितः सोमपा अभयंकरो वृषा ।

स त्वा रक्षतु सर्वतो दिवा नक्तं च विश्वतः

२२

॥२३२॥ (अथर्व० १०।३।१-२५)

अथर्वा । (सपत्नक्षयणो), वरणमणिः, वनस्पतिः, चन्द्रमाः । अनुष्टुप्; २-३, ६ भुरिक् त्रिष्टुप्;

८, १३-१४ पथ्यापञ्चक्तिः; ११, १६ भुरिक्; १५, १७-२५ षट्पदा जगती ।

अयं मे वरणो मणिः सपत्नक्षयणो वृषा ।

तेना रभस्व त्वं शत्रून् प्र मृणीहि दुरस्यतः

१

प्रैणान्छृणीहि प्र मृणा रभस्व मणिस्तं अस्तु पुरस्तात् पुरस्तात् ।

अवारयन्त वरणेन देवा अभ्याचारमसुराणां श्वःश्वः

२

अयं मणिर्वरणो विश्वभेषजः सहस्राक्षो हरितो हिरण्ययः ।

स ते शत्रून् धरान् पादयाति पूर्वस्तान् दभ्नुहि ये त्वा द्विषन्ति

३ १४५५

अयं ते कृत्यां विततां पौरुषेयादयं भयात् ।

अयं त्वा सर्वस्मात् पापाद् वरणो वारयिष्यते

४

वरणो वारयाता अयं देवो वनस्पतिः । यक्ष्मो यो अस्मिन्नाविष्टस्तम् देवा अवीवरन्

स्वप्नं सुप्त्वा यदि पश्यासि पापं मृगः सृतिं यति धावादजुष्टाम् ।

परिक्ष्वाच्छकुनेः पापवादादयं मणिर्वरणो वारयिष्यते

६

अरात्यास्त्वा निर्ऋत्या अभिचारादथो भयात् ।

मृत्योरोजीयसो वधाद् वरणो वारयिष्यते

७

यन्मे माता यन्मे पिता भ्रातरो यच्च मे स्वा यदेनश्चक्रुमा वयम् ।

ततो नो वारयिष्यतेऽयं देवो वनस्पतिः

८ १४६०

वृगेन प्रव्यथिता भ्रातृव्या मे सर्वन्धवः । अघूर्तं रजो अप्यंगुस्ते यन्त्वधमं तमः

अरिष्टोऽहमरिष्टगुरायुष्मान्तसर्वपूरुषः ।

तं मायं वरणो मणिः परि पातु दिशोदिशः

१० १४६२

अयं मे वरण उरसि राजा देवो वनस्पतिः ।

स मे शत्रून् वि बाधतामिन्द्रो दस्युनिवासुरान्

११

इमं विभर्मि वरणमायुष्मान्छतशारदः ।

स मे राष्ट्रं च क्षत्रं च पशूनोजश्व मे दधत्

१२

यथा वातो वनस्पतीन् वृक्षान् भनक्त्योजसा ।

एवा सपत्नान् मे भङ्गिष्वि पूर्वीन् जातौ उतापरान् वरणस्त्वाभि रक्षतु

१३ १४६५

यथा वार्तश्चाग्निश्च वृक्षान् प्सातो वनस्पतीन् ।

एवा सपत्नान् मे प्साहि पूर्वीन् जातौ उतापरान् वरणस्त्वाभि रक्षतु

१४

यथा वार्तेन प्रक्षीणा वृक्षाः शेरे न्यर्पिताः ।

एवा सपत्नांस्त्वं मम प्र क्षिणीहि न्यर्पय पूर्वीन् जातौ उतापरान् वरणस्त्वाभि रक्षतु १५

तांस्त्वं प्र छिन्दि वरण पुरा दिष्टात् पुरायुषः ।

य एनं पशुषु दिप्सन्ति ये चास्य राष्ट्रदिप्सवः

१६

यथा सूर्यो अतिभाति यथास्मिन् तेज आहितम् ।

एवा मे वरणो मणिः कीर्तिं भूतिं नि यच्छतु

तेजसा मा समुक्षतु यशसा समनक्तु मा

१७

यथा यशश्चन्द्रमस्यादित्ये च नृचक्षसि ।

एवा मे वरणो मणिः कीर्तिं भूतिं नि यच्छतु

तेजसा मा समुक्षतु यशसा समनक्तु मा

१८ १४७०

यथा यशः पृथिव्यां यथास्मिन् जातवेदसि ।

एवा मे वरणो मणिः कीर्तिं भूतिं नि यच्छतु

तेजसा मा समुक्षतु यशसा समनक्तु मा

१९

यथा यशः कन्यायां यथास्मिन्संभृते रथे ।

एवा मे वरणो मणिः कीर्तिं भूतिं नि यच्छतु

तेजसा मा समुक्षतु यशसा समनक्तु मा

२०

यथा यशः सोमपीथे मधुपर्के यथा यशः ।

एवा मे वरणो मणिः कीर्तिं भूतिं नि यच्छतु

तेजसा मा समुक्षतु यशसा समनक्तु मा

२१ १४७३

यथा यशोऽग्निहोत्रे वषट्कारं यथा यशः ।

एवा मे वरणो मणिः कीर्तिं भूतिं नि यच्छतु

तेजसा मा समुक्षतु यशसा समनक्तु मा

२२

यथा यशो यजमाने यथास्मिन् यज्ञ आहितम् ।

एवा मे वरणो मणिः कीर्तिं भूतिं नि यच्छतु

तेजसा मा समुक्षतु यशसा समनक्तु मा

२३ १४७५

यथा यशः प्रजापतौ यथास्मिन् परमेष्ठिनि ।

एवा मे वरणो मणिः कीर्तिं भूतिं नि यच्छतु

तेजसा मा समुक्षतु यशसा समनक्तु मा

२४

यथा देवेष्वमृतं यथैषु सत्यमाहितम् ।

एवा मे वरणो मणिः कीर्तिं भूतिं नि यच्छतु

तेजसा मा समुक्षतु यशसा समनक्तु मा

२५

॥२३३॥ (अथर्व० १०।६।१-३५)

बृहस्पतिः । फालमणिः, वनस्पतिः, ३ आपः (मणिबन्धनम्) । अनुष्टुप् : १, ४, २१ गायत्री; ५ षट्पदा

जगती; ६ सप्तपदा विराट् शकरी; ७-१० त्र्यवसाना अष्टपदाऽष्टिः (१० नवपदा धृतिः) ; ११, २०,

२३-२७ पद्यापङ्क्तिः, १२-१७ त्र्यवसाना षट्पदा शकरी; ३१ त्र्यवसाना षट्पदा

जगती; ३५ पञ्चपदा त्र्यनुष्टुगभा जगती ।

अरातीयोर्भ्रातृव्यस्य दुर्हादौ द्विषतः शिरः । अपि वृश्चाम्योजसा १

वर्म महामयं मणिः फालाज्जातः करिष्यति । पूर्णो मन्येन मागमद् रसेन सह वर्चसा २

यत् त्वा शिक्कः परावधीत् तक्षा हस्तेन वास्या ।

आपस्त्वा तस्माजीवलाः पुनन्तु शुच्यः शुचिम्

३ १४८०

हिरण्यस्रगयं मणिः श्रद्धां यज्ञं महो दधत् । गृहे वसतु नोऽतिथिः

४

तस्मै घृतं सुरां मध्वन्नमन्नं क्षदामहे ।

स नः पितेव पुत्रेभ्यः श्रेयःश्रेयश्चिकित्सतु भूयोभूयः श्वःश्वो देवेभ्यो मणिरेत्य ५

यमबन्धाद् बृहस्पतिर्मणिं फालं घृतश्रुतमुग्रं खंदिरमोजसे ।

तमग्निः प्रत्यमुञ्चत सो अस्मै दुह आज्यं भूयोभूयः श्वःश्वस्तेन त्वं द्विषतो जहि ६

यमबन्धाद् बृहस्पतिर्मणिं फालं घृतश्रुतमुग्रं खंदिरमोजसे ।

तमिन्द्रः प्रत्यमुञ्चतौजसे वीर्यायि कम् ।

सो अस्मै बलमिदं दुहे भूयोभूयः श्वःश्वस्तेन त्वं द्विषतो जहि

७ १४८४

- यमबध्नाद् बृहस्पतिर्मणिं फालं घृतश्रुतमुग्रं खदिरमोजसे ।
तं सोमः प्रत्यमुञ्चत महे श्रोत्राय चक्षसे ।
सो अस्मै वर्च इद् दुहे भूयोभूयः श्वःश्वस्तेन त्वं द्विषतो जहि ८ १४८५
यमबध्नाद् बृहस्पतिर्मणिं फालं घृतश्रुतमुग्रं खदिरमोजसे ।
तं घूर्यः प्रत्यमुञ्चत तेनेमा अजयद् दिशः ।
सो अस्मै भूतिमिद् दुहे भूयोभूयः श्वःश्वस्तेन त्वं द्विषतो जहि ९
यमबध्नाद् बृहस्पतिर्मणिं फालं घृतश्रुतमुग्रं खदिरमोजसे ।
तं बिभ्रच्चन्द्रमा मणिमसुराणां पुरोऽजयद् दानवानां हिरण्ययीः ।
सो अस्मै भ्रियमिद् दुहे भूयोभूयः श्वःश्वस्तेन त्वं द्विषतो जहि १०
यमबध्नाद् बृहस्पतिर्वाताय मणिमाशवे ।
सो अस्मै वाजिनं दुहे भूयोभूयः श्वःश्वस्तेन त्वं द्विषतो जहि ११
यमबध्नाद् बृहस्पतिर्वाताय मणिमाशवे । तेनेमां मणिनां कृषिमश्विनावभि रक्षतः ।
स भिषग्भ्यां महौ दुहे भूयोभूयः श्वःश्वस्तेन त्वं द्विषतो जहि १२
यमबध्नाद् बृहस्पतिर्वाताय मणिमाशवे । तं बिभ्रत् सविता मणिं तेनेदमजयत् स्वः ।
सो अस्मै सूनृतां दुहे भूयोभूयः श्वःश्वस्तेन त्वं द्विषतो जहि १३ १४९०
यमबध्नाद् बृहस्पतिर्वाताय मणिमाशवे । तमापो बिभ्रतीर्मणिं सदा धावन्त्यक्षिताः ।
स आभ्योऽमृतमिद् दुहे भूयोभूयः श्वःश्वस्तेन त्वं द्विषतो जहि १४
यमबध्नाद् बृहस्पतिर्वाताय मणिमाशवे । तं राजा वरुणो मणिं प्रत्यमुञ्चत शंभुर्वम् ।
सो अस्मै सत्यमिद् दुहे भूयोभूयः श्वःश्वस्तेन त्वं द्विषतो जहि १५
यमबध्नाद् बृहस्पतिर्वाताय मणिमाशवे । तं देवा बिभ्रतो मणिं सर्वाँल्लोकान् युधार्जयन् ।
स एभ्यो जितिमिद् दुहे भूयोभूयः श्वःश्वस्तेन त्वं द्विषतो जहि १६
यमबध्नाद् बृहस्पतिर्वाताय मणिमाशवे । तमिमं देवतां मणिं प्रत्यमुञ्चन्त शंभुर्वम् ।
स आभ्यो विश्वमिद् दुहे भूयोभूयः श्वःश्वस्तेन त्वं द्विषतो जहि १७
ऋतवस्तमबधतार्तवास्तमबधत । संवत्सरस्तं बद्ध्वा सर्वं भूतं वि रक्षति १८ १४९५
अन्तर्देशा अबधत प्रदिशस्तमबधत । प्रजापतिसृष्टो मणिद्विषतो मेऽधराँ अकः १९
अथर्वाणो अबधताथर्वणा अबधत ।
तैर्मेदिनो अङ्गिरसो दस्यूनां बिभिदुः पुरस्तेन त्वं द्विषतो जहि २०
तं धाता प्रत्यमुञ्चत स भूतं व्यक्लिपयत् । तेन त्वं द्विषतो जहि । २१ १४९८

| | |
|---|---------|
| यमबध्नाद् बृहस्पतिर्देवेभ्यो असुरक्षितिम् । | |
| स मायं मणिरागमद् रसेन सह वर्चसा | २२ |
| यमबध्नाद् बृहस्पतिर्देवेभ्यो असुरक्षितिम् । | |
| स मायं मणिरागमत् सह गोभिरजाविभिरन्नेन प्रजया सह | २३ १५०० |
| यमबध्नाद् बृहस्पतिर्देवेभ्यो असुरक्षितिम् । | |
| स मायं मणिरागमत् सह व्रीहियवाभ्यां महमा भूत्या सह | २४ |
| यमबध्नाद् बृहस्पतिर्देवेभ्यो असुरक्षितिम् । | |
| स मायं मणिरागमन्मधोर्धृतस्य धारया कीलालेन मणिः सह | २५ |
| यमबध्नाद् बृहस्पतिर्देवेभ्यो असुरक्षितिम् । | |
| स मायं मणिरागमदूर्जया पयसा सह द्रविणेन श्रिया सह | २६ |
| यमबध्नाद् बृहस्पतिर्देवेभ्यो असुरक्षितिम् । | |
| स मायं मणिरागमत् तेजसा त्विष्या सह यशसा कीर्त्या सह | २७ |
| यमबध्नाद् बृहस्पतिर्देवेभ्यो असुरक्षितिम् । | |
| स मायं मणिरागमन् सर्वाभिर्भूतिभिः सह | २८ १५०५ |
| तमिमं देवतां मणिं मद्यं ददतु पुष्टये । अभिष्टं क्षत्रवर्धनं सपत्नदम्भनं मणिम् | २९ |
| ब्रह्मणा तेजसा सह प्रति मुञ्चामि मे शिवम् । | |
| असपत्नः सपत्नहा सपत्नान् मेऽधराँ अकः | ३० |
| उत्तरं द्विषतो मामयं मणिः कृणोतु देवजाः । | |
| यस्य लोका इमे त्रयः पयो दुग्धमुपासते । | |
| स मायमधि रोहतु मणिः श्रेष्ठयाय मूर्धतः | ३१ |
| यं देवाः पितरौ मनुष्या उपजीवन्ति सर्वदा । | |
| स मायमधि रोहतु मणिः श्रेष्ठयाय मूर्धतः | ३२ |
| यथा बीजमुर्वरायां कृष्टे फालेन रोहति । | |
| एवा मयि प्रजा पशवोऽन्नमन्नं वि रोहतु | ३३ १५१० |
| यस्मै त्वा यज्ञवर्धन मणे प्रत्यग्रुचं शिवम् । | |
| तं त्वं शतदक्षिण मणे श्रेष्ठयाय जिन्वतात् | ३४ |
| एतमिध्मं समाहितं जुषाणो अग्रे प्रति हर्य होमैः । | |
| तस्मिन् विदेम सुमतिं स्वस्ति प्रजां चक्षुः पशून्तस्मिन्ने जातवेदसि ब्रह्मणा | ३५ १५१२ |

॥२३४॥ (अथर्व० १९।२८।१-१०)

ब्रह्मा (सपत्नक्षयकामः) । दर्भमाणिः मन्त्रोक्ताश्च । अनुष्टुप् ।

इमं बध्नामि ते मणि दीर्घायुत्वाय तेजसे । दुर्भ सपत्नदम्भनं द्विषतस्तपनं हृदः १

द्विषतस्तापयन् हृदः शत्रूणां तापयन् मनः ।

दुर्हार्दुः सर्वस्त्वं दर्भ घर्भ इवाभिन्तसंतापयन् २

घर्भ इवाभितपन् दर्भ द्विषतो नितपन् मणे ।

हृदः सपत्नानां भिन्द्धीन्द्र इव विरुजं बलम् ३ १५६५

भिन्द्धि दर्भ सपत्नानां हृदयं द्विषतां मणे ।

उद्यन् त्वर्चमिव भूम्याः शिर एषां वि पातय ४

भिन्द्धि दर्भ सपत्नान् मे भिन्द्धि मे पृतनायतः ।

भिन्द्धि मे सर्वान् दुर्हार्दो भिन्द्धि मे द्विषतो मणे ५

छिन्द्धि दर्भ सपत्नान् मे छिन्द्धि मे पृतनायतः ।

छिन्द्धि मे सर्वान् दुर्हार्दो छिन्द्धि मे द्विषतो मणे ६

वृश्च दर्भ सपत्नान् मे वृश्च मे पृतनायतः ।

वृश्च मे सर्वान् दुर्हार्दो वृश्च मे द्विषतो मणे ७

कृन्त दर्भ सपत्नान् मे कृन्त मे पृतनायतः ।

कृन्त मे सर्वान् दुर्हार्दो कृन्त मे द्विषतो मणे ८ १५२०

पिंश दर्भ सपत्नान् मे पिंश मे पृतनायतः ।

पिंश मे सर्वान् दुर्हार्दो पिंश मे द्विषतो मणे ९

विध्य दर्भ सपत्नान् मे विध्य मे पृतनायतः ।

विध्य मे सर्वान् दुर्हार्दो विध्य मे द्विषतो मणे १०

॥२३५॥ (अथर्व० १९।२९।१-९)

ब्रह्मा । दर्भमाणिः । अनुष्टुप् ।

निक्ष दर्भ सपत्नान् मे निक्ष मे पृतनायतः ।

निक्ष मे सर्वान् दुर्हार्दो निक्ष मे द्विषतो मणे १

तृन्द्धि दर्भ सपत्नान् मे तृन्द्धि मे पृतनायतः ।

तृन्द्धि मे सर्वान् दुर्हार्दो तृन्द्धि मे द्विषतो मणे २

रुन्द्धि दर्भ सपत्नान् मे रुन्द्धि मे पृतनायतः ।

रुन्द्धि मे सर्वान् दुर्हार्दो रुन्द्धि मे द्विषतो मणे ३ १५२५

| | |
|--|--------|
| मृण दर्म सपत्नान् मे मृण मे पृतनायतः । | |
| मृण मे सर्वान् दुर्हादो मृण मे द्विषतो मणे | ४ |
| मन्थ दर्म सपत्नान् मे मन्थ मे पृतनायतः । | |
| मन्थ मे सर्वान् दुर्हादो मन्थ मे द्विषतो मणे | ५ |
| पिण्डिद दर्म सपत्नान् मे पिण्डिद मे पृतनायतः । | |
| पिण्डिद मे सर्वान् दुर्हादो पिण्डिद मे द्विषतो मणे | ६ |
| ओष दर्म सपत्नान् मे ओष मे पृतनायतः । | |
| ओष मे सर्वान् दुर्हादो ओष मे द्विषतो मणे | ७ |
| दह दर्म सपत्नान् मे दह मे पृतनायतः । | |
| दह मे सर्वान् दुर्हादो दह मे द्विषतो मणे | ८ १५१० |
| जहि दर्म सपत्नान् मे जहि मे पृतनायतः । | |
| जहि मे सर्वान् दुर्हादो जहि मे द्विषतो मणे | ९ |

॥२३६॥ (अथर्व० १९।३०।१-५)

ग्रह्या । दर्भमणिः । अनुष्टुप् ।

| | |
|--|------|
| यत् ते दर्म जरामृत्युः शतं वर्मसु वर्म ते । तेनेमं वर्मिणं कृत्वा सपत्नां जहि वीर्यैः १ | |
| शतं ते दर्म वर्माणि सहस्रं वीर्याणि ते । तमस्मै विश्वे त्वां देवा जरसे भर्तवा अदुः २ | |
| त्वामाहुर्देववर्म त्वां दर्म ब्रह्मणस्पतिम् । त्वामिन्द्रस्याहुर्वर्म त्वं राष्ट्राणि रक्षसि ३ | |
| सपत्नक्षयणं दर्म द्विषतस्तपनं हृदः । मणिं क्षत्रस्य वर्धनं तनूपानं कृणोमि ते ४ | १५१५ |
| यत् समुद्रो अभ्यक्रन्दत् पर्जन्यो विद्युता सह । | |
| ततो हिरण्ययो बिन्दुस्ततो दुर्भो अजायत ५ | ५ |

॥२३७॥ (अथर्व० १९।३१।१-१४)

मविता (पुष्टिकामः) । औदुम्बरमणिः । अनुष्टुप् ; ५, १२ त्रिष्टुप् ; ६ विराट् प्रस्ताव-
पङ्क्तिः ; ११, १३ पञ्चपदा शकरीः १४ विराडास्तारपङ्क्तिः ।

| | |
|--|--------|
| औदुम्बरेण मणिना पुष्टिकामाय वेधसा । पशूनां सर्वेषां स्फूर्तिं गोष्ठे मे सविता करत् १ | |
| यो नो अग्निर्गाहिपत्यः पशूनामधिपा असत् । | |
| औदुम्बरो वृषा मणिः स मां सृजतु पुष्ट्या २ | २ |
| करीषिणीं फलवतीं स्वधामिरां च नो गृहे । | |
| औदुम्बरस्य तेजसा धाता पुष्टिं दधातु मे ३ | ३ १५१९ |

| | |
|---|---------|
| यत् द्विपाच्च चतुष्पाच्च यान्यन्नानि ये रसाः । | |
| गृहेऽहं त्वेषां भूमानं बिभ्रदौदुम्बरं मणिम् | ४ १५४० |
| पुष्टिं पशूनां परिं जग्रभाहं चतुष्पदां द्विपदां यच्च धान्यम् । | |
| पर्यः पशूनां रसमोषधीनां बृहस्पतिः सविता मे नि यच्छात् | ५ |
| अहं पशूनामधिपा असानि मयि पुष्टं पुष्टपतिर्दधातु । | |
| मण्यमौदुम्बरो मणिर्द्रविणानि नि यच्छतु | ६ |
| उप मौदुम्बरो मणिः प्रजया च धनेन च । | |
| इन्द्रेण जिन्वितो मणिरा मागन्त्सह वर्चसा | ७ |
| देवो मणिः संपत्नहा धनसा धनसातये । | |
| पशोरन्नस्य भूमानं गवां स्फातिं नि यच्छतु | ८ |
| यथाग्रे त्वं वनस्पते पुष्ट्या सह जज्ञिषे । | |
| एवा धनस्य मे स्फातिमा दधातु सरस्वती | ९ १५४५ |
| आ मे धनं सरस्वती पर्यस्फातिं च धान्यम् । | |
| सिनीवालयुपां बहादयं चौदुम्बरो मणिः | १० |
| त्वं मणीनामधिपा वृषासि त्वयि पुष्टं पुष्टपतिर्जजान । | |
| त्वयिमे वाजा द्रविणानि सर्वौदुम्बरः स त्वमस्सत् सहस्रारादरानिममति क्षुधं च ११ | |
| ग्रामणीरसि ग्रामणीरुत्थायाभिषिक्तोऽभि मां सिञ्च वर्चसा । | |
| तेजोऽसि तेजो मयि धारयाधि रयिरसि रयिं मे धेहि | १२ |
| पुष्टिरसि पुष्ट्या मां समङ्ग्धि गृहमेधी गृहपतिं मा कृणु । | |
| औदुम्बरः स त्वमस्सासु धेहि रयिं च नः सर्ववीरं नि यच्छ | |
| रायस्पोषाय प्रति मुञ्चे अहं त्वाम् | १३ |
| अयमौदुम्बरो मणिर्वीरो वीराय बध्यते । | |
| स नः सनि मधुमतीं कृणोतु रयिं च नः सर्ववीरं नि यच्छात् | १४ १५५० |

॥२३८॥ (अथर्व० १९।३४।१-१०)

भक्षिराः । वनस्पतिः, लिंगोक्ताः (जङ्गिडमणिः) । अनुष्टुप् ।

जङ्गिडोऽसि जङ्गिडो रक्षितासि जङ्गिडः । द्विपाच्चतुष्पादस्माकं सर्वं रक्षतु जङ्गिडः १
या गृत्स्यस्त्रिपञ्चाशीः शतं कृत्याकृतश्च ये ।
सर्वान् विनक्तु तेजसोऽरसां जङ्गिडस्करत्

अ॒रसं कृ॒त्रिमं ना॒दम॑रसाः स॒प्त वि॒स्रसः । अ॒पेतो जङ्गि॒डाम॑तिमिषुमस्तेव शातय ३
कृ॒त्यादू॒षण ए॒वाय॑मथो अरातिदू॒षणः । अथो स॒हस्वान् जङ्गि॒डः प्र ण आ॒यूषि॑ तारिषत् ४
स जङ्गि॒डस्य॑ म॒हिमा परि॑ णः पातु वि॒श्वतः ।

विष्क॑न्धं येन सासह संस्क॑न्धमोज॒ ओज॑सा

५ १५५५

त्रि॒ष्ट्वा दे॒वा अ॑जनयन् निष्ठितं भू॒म्याम॑धि । तमु त्वाङ्गि॒रा इति॑ ब्राह्म॒णाः पू॒र्या वि॒दुः ६
न त्वा पूर्वा ओष॑धयो न त्वा तरन्ति या नवाः ।

विबा॑ध उग्रो जङ्गि॒डः परि॑पाणः सुम॒ङ्गलः

७

अथो॑पदान भगवो जङ्गि॒डामि॑तवीर्य । पुरा तं उ॒ग्रा ग्र॑सत् उपेन्द्रो वी॒र्यं द॑दौ

८

उ॒ग्र इत् तं वन॑स्पत इन्द्रं ओ॒ज्मान॑मा दधौ । अमी॑वाः सर्वाश्चातयं ज॒हि रक्षा॑स्योषधे ९

आ॒शरी॑कं वि॒शरी॑कं ब॒लासं॑ पृ॒ष्ठ्याम॑यम् । त॒कमा॑नं वि॒श्वशा॑रदम॒सां जङ्गि॒डस्कर॑त् १० १५६०

॥२३९॥ (अथर्व० १९।३५।१-५)

अङ्गिराः । वनस्पतिः (जङ्गिडः) । अनुष्टुप् ; ३ पद्यापङ्क्तिः ; ४ निष्टुत् त्रिष्टुप् ।

इन्द्र॑स्य नाम गृह्णन्त ऋषयो जङ्गि॒डं द॑दुः ।

दे॒वा यं च॒क्रुर्भेष॑जमग्रं विष्क॑न्धदूषणम्

१

स नो रक्ष॑तु जङ्गि॒डो ध॑न॒पालो ध॑नेव । दे॒वा यं च॒क्रुर्ब्रा॑ह्म॒णाः परि॑पाणमरातिहम् २

दुर्हा॑र्दुः संघो॑रं चक्षुः पाप॑कृ॒त्वान॒माग॑मम् ।

तांस्त्वं स॒हस्र॑चक्षो प्रती॒बोधे॑न नाशय परि॒पाणो॑ऽसि जङ्गि॒डः

३

परि॑ मा दिवः परि॑ मा पृथि॒व्याः पर्य॑न्तरिक्षात् परि॑ मा वी॒रुद्ध॑यः ।

परि॑ मा भू॒तात् परि॑ मो॒त भ॒व्याद् दि॒शोदि॑शो जङ्गि॒डः पा॑त्व॒स्मान्

४

य ऋ॒ष्णवो॑ दे॒वकृ॑ता य उ॒तो व॑वृतेऽन्यः ।

सर्वा॑स्तान् वि॒श्वभेष॑जोऽर॒सां जङ्गि॒डस्कर॑त्

५ १५६५

॥२४०॥ (अथर्व० १९।३६।१-६)

ब्रह्मा । शतवारो मणिः । अनुष्टुप् ।

श॒तवा॑रो अनीनश॒द् यक्ष॑मान् रक्षा॑सि तेजसा ।

आ॒रोह॑न् वर्चसा स॒ह म॒णिर्दु॑र्णाम॒चात॑नः

१

शृ॒ङ्गाभ्यां॑ रक्षा॑ नुदते मूलेन यातु॒धान्य॑ः । मध्ये॑न यक्ष॑मं बाधते नैनं पा॒प्माति॑ तत्रति २

ये यक्ष॑मासो अ॒र्भका॑ म॒हान्तो॑ ये च श॒ब्दिनः॑ ।

सर्वा॑ दुर्णाम॒हा म॒णिः श॒तवा॑रो अनीनश॒त्

३ १५६८

शतं वीरानजनयच्छतं यक्षमानपावपत् । दुर्णाम्नः सर्वान् हत्वाव रक्षांसि धूनुते ४
 हिरण्यशृङ्ग ऋषभः शतवारो अयं मणिः । दुर्णाम्नः सर्वैस्तृड्द्वाव रक्षांस्यक्रमीत् ५ १५७०
 शतमहं दुर्णाम्नीनां गन्धर्वाप्सरसां शतम् । शतं शश्वन्वतीनां शतवारेण वारये ६

॥२४१॥ (अथर्व० १९।४६।१-७)

प्रजापतिः । अस्तृतमणिः । त्रिष्टुप्, १ पञ्चपदा ज्योतिष्मती त्रिष्टुप्, २ षट्पदा भुरिक्शकरी;
 ३, ७ पञ्चपदा पथ्यापङ्क्तिः; ४ चतुष्पदा; ५ पञ्चपदा अतिशकरी; ६ पञ्चपदोष्णिग्गर्भा
 विराड् जगती ।

प्रजापतिष्ठा बध्नात् प्रथममस्तृतं वीर्यायि कम् ।

तत् ते बध्नाभ्यायुषे वर्चस ओजसे च बलाय चास्तृतस्त्वाभि रक्षतु १

ऊर्ध्वस्तिष्ठतु रक्षन्नप्रमादमस्तृतेमं मा त्वा दभन् पणयो यातुधानाः ।

इन्द्र इव दस्युनवं धूनुष्व पृतन्यतः सर्वाल्लवून् वि षहस्वास्तृतस्त्वाभि रक्षतु २

शतं च न प्रहरन्तो निघ्नन्तो न तस्तिरे ।

तस्मिन्निन्द्रः पर्यदत्त चक्षुः प्राणमथो बलमस्तृतस्त्वाभि रक्षतु ३

इन्द्रस्य त्वा वर्मेणा परि धापयामो यो देवानामधिराजो बभूव ।

पुनस्त्वा देवाः प्र णयन्तु सर्वेऽस्तृतस्त्वाभि रक्षतु ४ १५७५

अस्मिन् मणावेकशतं वीर्याणि सहस्रं प्राणा अस्मिन्नस्तृते ।

व्याघ्रः शत्रून्भि तिष्ठ सर्वान् यस्त्वा पृतन्यादधरः सो अस्त्वस्तृतस्त्वाभि रक्षतु ५

घृतादुल्लो मधुमान् पर्यस्वान्तसहस्रप्राणः शतयोनिर्वयोधाः ।

शंभूश्च मयोभूश्चोर्जस्वाश्च पर्यस्वाश्चास्तृतस्त्वाभि रक्षतु ६

यथा त्वमुत्तरोऽसौ असपलः सपलहा ।

सज्जातानामसद् वशी तथा त्वा सविता करदस्तृतस्त्वाभि रक्षतु ७ १५८०

अरिष्टनाशनम् । (१५७९-१५९०)

॥२४२॥ (अथर्व० ६।२७।१-३)

भृगुः । यमः, निर्ऋतिः (अरिष्टक्षयणम्) । जगती, २ त्रिष्टुप् ।

देवाः कपोत इषितो यदिच्छन् दूतो निर्ऋत्या इदमाजगाम ।

तस्मा अर्चाम कृण्वाम निष्कृतिं शं नो अस्तु द्विपदे शं चतुष्पदे १

शिवः कपोत इषितो नो अस्त्वनागा देवाः शकुना गृहं नः ।

अग्निहि विप्रो जुषतां हविर्नः परि हेतिः पक्षिणी नो घृणक्तु २ १५८०

हेतिः पक्षिणी न दभात्यस्मानाष्ट्री पदं कृणुते अग्निधाने ।

शिवो गोभ्य उत पुरुषेभ्यो नो अस्तु मा नो देवा इह हिंसीत् कपोतः ३

॥२४३॥ (अथर्व० ६।२८।१-३)

भृगुः । यमः, निर्ऋतिः (अरिष्टक्षयणम्) । १ त्रिष्टुप्, २ अनुष्टुप्, ३ जगती ।

ऋचा कपोतं नुदत प्रणोदमिषं मर्दन्तः परि गां नयामः ।

संलोभयन्तो दुरिता पदानि हित्वा न ऊर्जे प्र पदात् पथिष्ठः १

परीमेदुभिर्मर्षत परीमे गार्मनेषत ।

देवेष्वकृत श्रवः क इमां आ दधर्षति २

यः प्रथमः प्रवर्तमाससाद बहुभ्यः पन्थामनुपस्पशानः ।

योऽस्येशे द्विपदो यश्चतुष्पदस्तस्मै यमाय नमो अस्तु मृत्यवे ३

॥२४४॥ (अथर्व० ६।२९।१-३)

भृगुः । यमः, निर्ऋतिः (अरिष्टक्षयणम्) । (बृहती) १-२ विराण्नाम गायत्री, ३ व्यवसाना सप्तपदा विराडष्टिः ।

अमून् हेतिः पतत्रिणी न्येतु यदुल्लको वदति मोघमेतत् ।

यद् वा कपोतः पदमग्नौ कृणोति १ १५८५

यौ ते दूतौ निर्ऋत इदमेतोऽप्रहितौ प्रहितौ वा गृहं नः ।

कपोतोलूकाभ्यामपदं तदस्तु २

अवैरहत्यायेदमा पपत्यात् सुवीरताया इदमा संसद्यात् ।

पराङ्मुख परा वद पराचीमनु संवर्तम् ।

यथा यमस्य त्वा गृहेऽरसं प्रतिचाकशानाभूकं प्रतिचाकशान् ३

॥२४५॥ (अथर्व० ६।८०।१-३)

अथर्वा । चन्द्रमाः (अरिष्टक्षयणम्) । १ भुरिक्, २ अनुष्टुप्, ३ प्रस्तारपङ्क्तिः ।

अन्तरिक्षेण पतति विश्वा भूताश्चाकशत् ।

शुनो दिव्यस्य यन्महस्तेना ते हविषा विधेम १

ये त्रयः कालकाञ्जा दिवि देवा इव श्रिताः ।

तान्सर्वानह ऊतयऽस्मा अरिष्टतातये २

अप्सु ते जन्म दिवि ते सधस्थं समुद्रे अन्तर्मेहिमा ते पृथिव्याम् ।

शुनो दिव्यस्य यन्महस्तेना ते हविषा विधेम ३ १५९०

कृत्यादूषणम् । (१५९१-१६५३)

॥२४६॥ (अथर्व० ५।१४।१-१३)

शुक्रः । वनस्पतिः, कृत्यापरिहरणम् । अनुष्टुप्; ३.५.१२ भुरिक्; ८ त्रिपदा विराट् ।

१० निष्पृद्यहती; ११ त्रिपदा सास्त्री त्रिष्टुप्; १३ स्वराट् ।

सुपर्णस्त्वान्वविन्दत् स्रक्स्त्वाखनन्नसा । दिप्सौषधे त्वं दिप्सन्तमव कृत्याकृतं जहि १

अव जहि यातुधानानव कृत्याकृतं जहि ।

अथो यो अस्मान् दिप्सन्ति तमु त्वं जह्योषधे २

रिश्यस्येव परीशासं परिकृत्य परि त्वचः ।

कृत्यां कृत्याकृतं देवा निष्कर्मिव प्रति मुञ्चत ३

पुनः कृत्यां कृत्याकृतं हस्तगृह्य परा णय ।

समक्षमस्मा आ धेहि यथा कृत्याकृतं हनत् ४

कृत्याः सन्तु कृत्याकृतं शपथः शपथीयते ।

सुखो रथ इव वर्ततां कृत्या कृत्याकृतं पुनः ५ १५९५

यदि स्त्री यदि वा पुमान् कृत्यां चकार पाप्मने ।

तामु तस्मै नयामस्यश्चमिवाश्वाभिधान्या ६

यदि वारिं देवकृता यदि वा पुरुषैः कृता । तां त्वा पुनर्णयामसीन्द्रेण सयुजा वयम् ७

अग्ने पृतनाषाट् पृतनाः सहस्र । पुनः कृत्यां कृत्याकृतं प्रतिहरणेन हरामसि ८

कृत्यव्यधनि विध्य तं यश्चकार तमिज्जहि । न त्वामचक्रुषे वयं वधाय सं शिशीमहि ९

पुत्र इव पितरं गच्छ स्वज इवाभिष्टितो दश ।

बन्धमिवावक्रामी गच्छ कृत्यं कृत्याकृतं पुनः १० १६००

उदेणीव वारण्यभिस्कन्दं मृगीव । कृत्या कर्तारमृच्छतु ११

इष्वा ऋजीयः पततु द्यावापृथिवी तं प्रति ।

सा तं मृगमिव गृह्णातु कृत्या कृत्याकृतं पुनः १२

अग्निरिवैतु प्रतिकूलमनुकूलमिवोदुकम् । सुखो रथ इव वर्ततां कृत्या कृत्याकृतं पुनः १३

॥२४७॥ (अथर्व० ५।३१।१-१२)

शुक्रः । कृत्यादूषणम् (कृत्यापरिहरणम्) । अनुष्टुप्; ११ बृहतीगर्भाऽनुष्टुप्; १२ पथ्याबृहती ।

यां ते चक्रामे पात्रे यां चक्रुर्मिश्रधान्ये ।

आमे मांसे कृत्यां यां चक्रुः पुनः प्रति हरामि ताम्

१-१६०४

| | |
|---|--------|
| यां ते चक्रुः कृकवाकावजे वा यां कुरीरिणि । | |
| अव्यां ते कृत्यां यां चक्रुः पुनः प्रति हरामि ताम् | २ १६०५ |
| यां ते चक्रुरेकशफे पशूनामुभयादति । | |
| गर्दभे कृत्यां यां चक्रुः पुनः प्रति हरामि ताम् | ३ |
| यां ते चक्रुरमूलायां वलगं वा नराच्याम् । | |
| क्षेत्रे ते कृत्यां यां चक्रुः पुनः प्रति हरामि ताम् | ४ |
| यां ते चक्रुर्गाहपत्ये पूर्वाग्रावुत दुश्चितः । | |
| शालायां कृत्यां यां चक्रुः पुनः प्रति हरामि ताम् | ५ |
| यां ते चक्रुः सभायां यां चक्रुरधिदेवेन । | |
| अक्षेषु कृत्यां यां चक्रुः पुनः प्रति हरामि ताम् | ६ |
| यां ते चक्रुः सेनायां यां चक्रुरिन्वायुधे । | |
| दुन्दुभौ कृत्यां यां चक्रुः पुनः प्रति हरामि ताम् | ७ १६१० |
| यां ते कृत्यां कूपेऽवदधुः इमंशाने वा निचखनुः । | |
| सन्नानि कृत्यां यां चक्रुः पुनः प्रति हरामि ताम् | ८ |
| यां ते चक्रुः पुरुषास्थे अग्नौ संकसुके च याम् । | |
| म्रोक्तं निर्दाहं क्रव्यादुं पुनः प्रति हरामि ताम् | ९ |
| अपथेना जभारिणां तां पथेतः प्र हिण्मसि । | |
| अधीरो मर्याधीरेभ्यः सं जभाराचिन्त्या | १० |
| यश्चकार न शशाक कर्तुं शश्रे पादमङ्गुरिम् । चकार भद्रमस्मभ्यमभगो भगवद्भयः ११ | |
| कृत्याकृतं वलगिनै मूलिनै शपथेय्यम् । | |
| इन्द्रस्तं हन्तु महता वधेनाग्निर्विध्यत्वस्तया | १२ |

॥२४८॥ (अथर्व० १०।१।१-३२)

प्रत्यङ्गिरसः । कृत्यादूषणम् । अनुष्टुप्; १ महाबृहती; २ विराण्नाम गायत्री; ९ पथ्यापङ्क्तिः;
 १२ पङ्क्तिः; १३ उरोवृहती; १५ चतुष्पदा विराड्जगती; १७, २०, २४ प्रस्तारपङ्क्तिः
 (२० विराड्); १६, १८ त्रिष्टुप्; १९ चतुष्पदा जगती; २२ एकावसाना द्विपदाऽऽर्ची
 उष्णिक्; २३ त्रिपदा भुरिग्विषमा गायत्री; २८ त्रिपदा गायत्री; २९ मध्ये ज्योतिष्मती
 जगती; ३२ द्व्यनुष्टुब्गर्भा पञ्चपदाऽतिजगती ।

यां कल्पयन्ति वहतौ वधूमिव विश्वरूपां हस्तकृतां चिकित्सवः ।

सारादेत्वप नुदाम एनाम्

शीर्षवतीं नस्वतीं कर्णिनीं कृत्याकृता संभृता विश्वरूपा । सारादेत्वपं नुदाम एनाम् २
 शुद्रकृता राजकृता स्त्रीकृता ब्रह्मभिः कृता । जाया पत्या नुत्तेव कर्तारं बन्ध्वच्छतु ३
 अनयाहमोषध्या सर्वाः कृत्या अददुषम् । यां क्षेत्रे चक्रुर्या गोषु यां वा ते पुरुषेषु ४
 अधमस्त्वघकृते शपथः शपथीयते । प्रत्यक् प्रतिप्रहिण्मो यथा कृत्याकृतं हनत् ५ १६२०
 प्रतीचीनं आङ्गिरसोऽध्यक्षो नः पुरोहितः ।
 प्रतीचीः कृत्या आकृत्यामून् कृत्याकृतो जहि ६
 यस्त्वोवाच परेहीति प्रतिकूलमुदाग्यम् ।
 तं कृत्येऽभिनिर्वर्तस्व मास्मानिच्छो अनागसः ७
 यस्ते परूणि संदुधौ रथस्येवर्धुधिया । तं गच्छ तत्र तेऽयं नमज्जातस्तेऽयं जनः ८
 ये त्वा कृत्वालेभिरे विद्वला अभिचारिणः ।
 शंभ्वीडेदं कृत्यादूषणं प्रतिवर्त्म पुनःसरं तेन त्वा स्नपयामसि ९
 यद् दुर्भगां प्रस्नपितां मृतवत्सामुपेयिम । अपंतु सर्वं मत् पापं द्रविणं मोषं तिष्ठतु १० १६२५
 यत् तै पितृभ्यो ददतो यज्ञे वा नाम जगूहुः ।
 संदेश्याडेत् सर्वस्मात् पापादिमा मुञ्चन्तु त्वौषधीः ११
 देवैन्सात् पित्र्यान्नामग्राहात् संदेश्यादिभिनिष्कृतात् ।
 मुञ्चन्तु त्वा वीरुधो वीर्येण ब्रह्मण ऋग्भिः पयस ऋषीणाम् १२
 यथा वातश्चयावयति भूम्या रेणुमन्तरिक्षाच्चाभ्रम् ।
 एवा मत् सर्वं दुर्भूतं ब्रह्मनुत्तमपायति १३
 अपं क्राम नानदती विनेद्धा गर्दभीव ।
 कर्तृन् नक्षस्वेतो नुत्ता ब्रह्मणा वीर्याविता १४
 अयं पन्थाः कृत्येति त्वा नयामोऽभिप्रहितां प्रति त्वा प्र हिण्मः ।
 तेनाभि याहि भञ्जत्यनस्वतीव बाहिनीं विश्वरूपा कुरूटिनीं १५ १६३०
 पराक् ते ज्योतिरपथं ते अर्वाग्न्यत्रास्मदयना कृणुष्व ।
 परेणेहि नवतिं नाव्याडे अति दुर्गाः स्त्रोत्या मा क्षणिष्ठाः परेहि १६
 वात इव वृक्षान् नि मृणीहि पादय मा गामश्चं पुरुषमुच्छिष एषाम् ।
 कर्तृन् निवृत्त्येतः कृत्येऽप्रजास्त्वाय बोधय १७
 यां तं बर्हिषि यां श्मशाने क्षेत्रे कृत्यां वलगं वा निचरुनुः ।
 अग्नौ वा त्वा गार्हिपत्येऽभिचेरुः पाकं सन्तं धीरतरा अनागसम् १८ १६३३

| | |
|---|---------|
| उपाहृतमनुबुद्धं निखातं वैरं त्सार्यन्वविदाम् कर्त्रम् । | |
| तदेतु यत् आभृतं तत्राश्वं इव वि वर्ततां हन्तुं कृत्याकृतः प्रजाम् | १९ |
| स्त्रायुसा असयः सन्ति नो गृहे विद्या तै कृत्ये यतिधा परूषि । | |
| उत्तिष्ठैव परेहीतोऽज्ञाते किमिहेच्छसि | २० १६३५ |
| ग्रीवास्ते कृत्ये पादौ चापि कत्स्यामि निर्द्रव । | |
| इन्द्राग्नी अस्मान् रक्षतां यौ प्रजानां प्रजार्वती | २१ |
| सोमो राजाधिपा मृडिता च भूतस्य नः पतयो मृडयन्तु | २२ |
| भवाश्चावस्यतां पापकृते कृत्याकृते । दुष्कृते विद्युनं देवहेतिम् | २३ |
| यद्येयथ द्विपदी चतुष्पदी कृत्याकृता संभृता विश्वरूपा । | |
| सेतोऽष्टापदी भूत्वा पुनः परेहि दुच्छने | २४ |
| अभ्युक्ताक्ता स्वरिकृता सर्वं भरन्ती दुरितं परेहि । | |
| जानीहि कृत्ये कर्तारं दुहितेव पितरं स्वम् | २५ १६४० |
| परेहि कृत्ये मा तिष्ठो विद्वभ्येव पदं नय । | |
| मृगः स मृगयुस्त्वं न त्वा निकर्तुमर्हति | २६ |
| उत हन्ति पूर्वासिनं प्रत्यादायापरं इष्वा । उत पूर्वस्य निघ्नतो नि हन्त्यपरः प्रति | २७ |
| एतद्धि शृणु मे वचोऽर्थेहि यत् एयथ । यस्त्वा चकार तं प्रति | २८ |
| अनागोऽहत्या वै भीमा कृत्ये मा नो गामश्च पुरुषं वधीः । | |
| यत्रयत्रासि निर्हिता ततस्त्वोत्थापयामसि पर्णाल्लघीयसी भव | २९ |
| यदि स्थ तमसावृता जालेनाभिहिता इव । | |
| सर्वाः संलुप्येतः कृत्याः पुनः कर्त्रे प्र हिण्मसि | ३० १६४५ |
| कृत्याकृतो वलगिनोऽभिनिष्कारिणः प्रजाम् । | |
| मृणीहि कृत्ये मोच्छिषोऽमून् कृत्याकृतो जहि | ३१ |
| यथा सूर्यो मुच्यते तमसस्परि रात्रिं जहात्युषसश्च केतून् । | |
| एवाहं सर्वं दुर्भूतं कर्त्रे कृत्याकृता कृतं हस्तीव रजो दुरितं जहामि | ३२ |

॥२४९॥ (अथर्व० २।१४।१-६)

चातनः । शालाग्निदेवत्यं (दस्युनाशनम्) । अनुष्टुप्, २ भुरिक्, ४ उपरिष्ठाद्विराड्ब्रह्मी ।

निःसालां धृष्णं धिषणमेकवाद्यां जिघत्स्वम् ।

सर्वाश्चण्डस्य नप्त्यो नाशयामः सदान्वाः

१ १६४८

| | |
|--|--------|
| निर्वो गोष्ठादजामसि निरक्षाभिरुपानसात् । | |
| निर्वो मगुन्धा दुहितरो गुहेभ्यश्चातयामहे | २ |
| असौ यो अधराद् गुहस्तत्र सन्त्वराय्यः । | |
| तत्र सेदिन्युच्यतु सर्वाश्च यातुधान्यः | ३ १६५० |
| भूतपतिर्निरजत्विन्द्रश्चेतः सदान्वाः । | |
| गृहस्य बुध आसीनास्ता इन्द्रो वज्रेणाधि तिष्ठतु | ४ |
| यदि स्थ क्षेत्रियाणां यदि वा पुरुषेषिताः । | |
| यदि स्थ दस्युभ्यो जाता नश्यतेतः सदान्वाः | ५ |
| परि धामान्यासामाशुर्गाष्ठाभिवासरन् । | |
| अजैषं सर्वानाजीन्वो नश्यतेतः सदान्वाः | ६ १६५३ |

पापादिनाशनम् । (१६५४-१९३०)

॥२५०॥ (अथर्व० १।१०।१-४)

| | |
|--|--------|
| अथर्वा । असुरो वरुणः (पाश-विमोचनम्) । त्रिष्टुप्, ३ ककुम्मत्यनुष्टुप्, ४ अनुष्टुप् । | |
| अयं देवानामसुरो वि राजति वशा हि सत्या वरुणस्य राज्ञः । | |
| ततस्परि ब्रह्मणा शशदान उग्रस्य मन्योरुदुमं नयामि | १ |
| नमस्ते राजन् वरुणास्तु मन्यवे विश्वं ह्यग्रि निचिकेषि दुग्धम् । | |
| सहस्रमन्यान् प्र सुवामि साकं शतं जीवाति शरदस्तवायम् | २ १६५५ |
| यदुवकथानृतं जिह्वया वृजिनं बहु । राज्ञस्त्वा सत्यधर्मणो मुञ्चामि वरुणादुहम् | ३ |
| मुञ्चामि त्वा वैश्वानरादर्णवान्महतस्परि । | |
| सजातानुग्रेहा वंद ब्रह्म चापं चिकीहि नः | ४ |

॥२५१॥ (अथर्व० १।३१।१-४)

ब्रह्मा । आशापालाः, [वास्तोष्पतिः] (पाशमोचनम्) । अनुष्टुप्, ३ विराट् त्रिष्टुप्,
४ परानुष्टुप् त्रिष्टुप् ।

| | |
|--|--------|
| आशानामाशापालेभ्यश्चतुर्भ्योऽमृतैभ्यः । इदं भूतस्याध्यक्षेभ्यो विधेम हविषा वयम् । | |
| य आशानामाशापालाश्चत्वारः स्थन देवाः । | |
| ते नो निश्रैत्याः पार्श्वेभ्यो मुञ्चतांहसोऽंहसः | २ |
| अस्मामस्त्वा हविषा यजाम्यश्लोणस्त्वा धृतेन जुहोमि । | |
| य आशानामाशापालस्तुरीयो देवः स नः सुभूतमेह वक्षत् | ३ १६६० |

स्वस्ति मात्र उत पित्रे नो अस्तु स्वस्ति गोभ्यो जगते पुरुषेभ्यः ।
विश्वं सुभूतं सुविदत्रं नो अस्तु ज्योगेव दशेम सूर्यम्

४

॥२५२॥ (अथर्व० २।१०।१-८)

भृग्वङ्गिराः । १-८ द्यावापृथिवी, ब्रह्म; २ अग्निः, आपः, ओषधयः, सोमः; ३ वातः, दिशः; ४-८ वातपत्नीः, सूर्यः, यक्ष्मं, निर्ऋतिः (पाशमोचनम्) । १ त्रिष्टुप्; २ सप्तपदाऽष्टिः; ३ ५, ७-८ सप्तपदा धृतिः; ६ सप्तपदाऽत्यष्टिः; ८ (२-३) द्वौ पादौ उष्णिही ।

क्षेत्रियात् त्वा निर्ऋत्या जामिशंसाद् द्रुहो मुञ्चामि वरुणस्य पाशात् ।

अनागसं ब्रह्मणा त्वा कृणोमि शिवे ते द्यावापृथिवी उभे स्ताम् १

शं ते अग्निः सहाङ्गिरंस्तु शं सोमः सहोषधीभिः ।

एवाहं त्वां क्षेत्रियान्निर्ऋत्या जामिशंसाद् द्रुहो मुञ्चामि वरुणस्य पाशात् । अना० । २

शं ते वातो अन्तरिक्षे वयो धाच्छं ते भवन्तु प्रदिशश्चतस्रः । एवाहं० । अना० । ३

इमा या देवीः प्रदिशश्चतस्रो वातपत्नीरभि सूर्यो विचष्टे । एवाहं० । अना० । ४ १६६५

तासु त्वान्तर्जरस्या दधामि प्र यक्ष्म एतु निर्ऋतिः पराचैः । एवाहं० । अना० । ५

अमुकथा यक्ष्माद् दुरितादवद्याद् द्रुहः पाशाद् ग्राह्याश्चोदमुकथाः । एवाहं० । अना० । ६

अहा अरातिमविदः स्योनमप्यभूर्भद्रे सुकृतस्य लोके । एवाहं० । अना० । ७

सूर्यमृतं तमसो ग्राह्या अधि देवा मुञ्चन्तो असृजन्निरेणसः ।

एवाहं त्वां क्षेत्रियान्निर्ऋत्या जामिशंसाद् द्रुहो मुञ्चामि वरुणस्य पाशात् ।

अनागसं ब्रह्मणा त्वा कृणोमि शिवे ते द्यावापृथिवी उभे स्ताम् ८

॥२५३॥ (अथर्व० ६।११२।१-३)

अथर्वा । अग्निः (पाशमोचनम्) । त्रिष्टुप् ।

मा ज्येष्ठं वधीदयमग्र एषां मूलवर्हणात् परिरं पाह्येनम् ।

स ग्राह्याः पाशान् वि चृत प्रजानन् तुभ्यं देवा अनु जानन्तु विश्वे १ १६७०

उन्मुञ्च पाशांस्त्वमग्र एषां त्रयस्त्रिभिरुत्सिता येभिरासन् ।

स ग्राह्याः पाशान् वि चृत प्रजानन् पितापुत्रौ मातरं मुञ्च सर्वान् २

येभिः पाशैः परिवित्तो विबद्धोऽङ्गेऽङ्ग आपित उत्सितश्च ।

वि ते मुच्यन्तां विमुचो हि सन्ति भूणमि पूषन् दुरितानि मृक्ष ३ १६७१

॥२५४॥ (अथर्व० ६।११९।१-३)

कौशिकः । वैश्वानरोऽग्निः [आनुष्यम्] (पाशमोचनम्) । त्रिष्टुप् ।

यददीव्यन्नृणमहं कृणोम्यदास्यन्नग्र उत संगृणामि ।

वैश्वानरो नो अधिपा वसिष्ठ उदिन्नयाति सुकृतस्य लोकम् १

वैश्वानराय प्रति वेदयामि यद्युणं संगरो देवतासु ।

स एतान् पाशान् विचृतं वेदु सर्वाथ पक्केन सह सं भवेम २

वैश्वानरः पविता मा पुनातु यत् संगरमभिधावाभ्याशाम् ।

अनाजानन् मनसा याचमानो यत् तन्नो अप तत् सुवामि ३ १६७५

॥२५५॥ (अथर्व० ७।८३।१-४)

शुनःशेषः । वरुणः (पाशमोचनम्) । १ अनुष्टुप्, २ पथ्यापङ्क्तिः, ३ त्रिष्टुप्, ४ बृहतीगर्भा त्रिष्टुप् ।

अप्सु ते राजन् वरुणगृहो हिरण्ययो मिथः ।

ततो धृतव्रतो राजा सर्वा धामानि मुञ्चतु १

धाम्नोधाम्नो राजन्नितो वरुण मुञ्च नः ।

यदापो अद्या इति वरुणेति यदूचिम ततो वरुण मुञ्च नः २

उदुत्तमं वरुण पाशमस्मदवाधमं वि मध्यमं श्रथाय ।

अधा वयमादित्य व्रते तवानागसो अदितये स्याम ३

प्रासत् पाशान् वरुण मुञ्च सर्वान् य उत्तमा अधभा वारुणा ये ।

दुष्पण्यं दुरितं नि घ्वास्मदथ गच्छेम सुकृतस्य लोकम् ४

॥२५६॥ (अथर्व० ७।७८।१-२)

अथर्वा । अग्निः (बन्धमोचनम्) । १ परोष्णिक्, २ त्रिष्टुप् ।

वि ते मुञ्चामि रशनां वि योक्त्रं वि नियोजनम् । इहैव त्वमजस्र एध्यमे १ १६८०

अस्मै क्षत्राणि धारयन्तमग्ने युनजि त्वा ब्रह्मणा दैव्येन ।

दीदिहस्मभ्यं द्रविणेह भद्रं प्रेमं वोचो हविर्दा देवतासु २

॥२५७॥ (अथर्व० ६।२५।१-३)

शुनःशेषः । मन्याविनाशनम् । अनुष्टुप् ।

पञ्च च याः पञ्चाशच्च संयन्ति मन्या अभि ।

इतस्ताः सर्वा नश्यन्तु वाका अपचितामिव १

सप्त च याः सप्ततिश्च संयन्ति ग्रैव्या अभि ।

इतस्ताः सर्वा नश्यन्तु वाका अपचितामिव २ १६८३

नव च या नवतिश्च संयन्ति स्कन्ध्या अभि ।

इतस्ताः सर्वा नश्यन्तु वाका अपचितामिव

३

॥२५८॥ (अथर्व० ४।२३।१-७)

मृगारः । प्रचेता अग्निः (पाप-मोचनम्) । त्रिष्टुप्, ३ पुरस्ताज्ज्योतिष्मती, ४ अनुष्टुप्, ६ प्रस्तरपङ्क्तिः ।

अग्नेर्मन्वे प्रथमस्य प्रचेतसः पाञ्चजन्यस्य बहुधा यमिन्धते ।

विशोविशः प्रविशिवांसमीमहे स नो मुञ्चत्वंहसः

१ १६८५

यथा हव्यं वहसि जातवेदो यथा यज्ञं कल्पयसि प्रजानन् ।

एवा देवेभ्यः सुमतिं न आ वह स नो मुञ्चत्वंहसः

२

यामन्यामभ्रुपयुक्तं वहिष्ठं कर्मन्कर्मन्नाभगम् ।

अग्निमीडे रक्षोहणं यज्ञवृधं घृताहुतं स नो मुञ्चत्वंहसः

३

सुजातं जातवेदसमग्निं वैश्वानरं विशुम् । हव्यवाहं हवामहे स नो मुञ्चत्वंहसः

४

येन ऋषयो बलमद्योतयन् युजा येनासुराणामयुवन्त मायाः ।

येनाग्निना पृणीनिन्द्रो जिगाय स नो मुञ्चत्वंहसः

५

येन देवा अमृतमन्वविन्दन् येनौषधीर्मधुमतीरकृण्वन् ।

येन देवाः स्वशराभरन्त्स नो मुञ्चत्वंहसः

६ १६९०

यस्येदं प्रदिशि यद् विरोचते यजातं जनितव्यं च केवलम् ।

स्तौम्यग्निं नाथितो जोहवीमि स नो मुञ्चत्वंहसः

७

॥२५९॥ (अथर्व० ४।२४।१-७)

मृगारः । इन्द्रः (पापमोचनम्) । त्रिष्टुप्, १ शाकरीगर्भा पुरःशकरी ।

इन्द्रस्य मन्महे शश्वदिदस्य मन्महे वृत्रघ्न स्तोमा उर्प मेम आगुः ।

यो दाशुषः सुकृतो हवमेति स नो मुञ्चत्वंहसः

१

य उग्रीणामुग्रबाहुर्ययुर्यो दानवानां बलमारुरोज ।

येन जिताः सिन्धवो येन गावः स नो मुञ्चत्वंहसः

२

यश्चर्षणिप्रो वृषभः स्वर्विद् यस्मै ग्रावाणः प्रवदन्ति नृम्याम् ।

यस्याध्वरः सप्तहोता मदिष्ठः स नो मुञ्चत्वंहसः

३

यस्य वशासं ऋषभासं उक्षणो यस्मै मीयन्ते स्वरवः स्वर्विदे ।

यस्मै शुक्रः पर्वते ब्रह्मशुम्भितः स नो मुञ्चत्वंहसः

४

यस्य जुष्टिं सोमिनः कामयन्ते यं हवन्त इष्टुमन्तं गर्विष्टौ ।

यस्मिन्नर्कः शिश्रिये यस्मिन्नोजः स नो मुञ्चत्वंहसः

५ १६९६

यः प्रथमः कर्मकृत्याय जज्ञे यस्य वीर्यं प्रथमस्यानुबुद्धम् ।

येनोद्यतो वज्रोऽभ्यायताहिं स नो मुञ्चत्वंहसः

६

यः संग्रामाभयति सं युधे वशी यः पुष्टानि संसृजति द्रयानि ।

स्तौमीन्द्रं नाथितो जोहवीमि स नो मुञ्चत्वंहसः

७

॥२६०॥ (अथर्व० ४।२५।१-७)

मृगारः । सविता, वायुः (पापमोचनम्) । त्रिष्टुप्, ३ अतिशकरी, ७ पथ्यावृहता ।

वायोः सवितुर्विदधानि मन्महे यावात्मन्वद् विशथो यौ च रक्षथः ।

यौ विश्वस्य परिभू बभूवथुस्तौ नो मुञ्चतमंहसः

१

ययोः संख्याता वरिमा पार्थिवानि याम्यां रजौ युपितमन्तरिक्षे ।

ययोः प्रायं नान्वानशे कश्चन तौ नो मुञ्चतमंहसः

२ १७००

तव व्रते नि विशन्ते जनास्त्वय्युदिते प्रेरते चित्रभानो ।

युवं वायो सविता च भुव्नानि रक्षथस्तौ नो मुञ्चतमंहसः

३

अपेतो वातो सविता च दुष्कृतमप रक्षांसि शिमिदां च सेधतम् ।

सं ह्युर्जया सृजथः सं बलैर्न तौ नो मुञ्चतमंहसः

४

रयिं मे पोषं सवितोत वायुस्तनू दक्षमा सुवतां सुशेवम् ।

अयक्ष्मतातिं मह इह धत्तं तौ नो मुञ्चतमंहसः

५

प्र सुमतिं सवितर्वाय ऊतये महस्वन्तं मत्सरं मादयाथः ।

अर्वाग् वामस्य प्रवतो नि यच्छतं तौ नो मुञ्चतमंहसः

६

उप श्रेष्ठा न आशिषो देवयोर्धाम्नस्थिरन् ।

स्तौमि देवं सवितारं च वायुं तौ नो मुञ्चतमंहसः

७ १७०५

॥२६१॥ (अथर्व० ४।२६।१-७)

मृगारः । द्यावापृथिवी (पापमोचनम्) । त्रिष्टुप्, १ अष्टिः, २-३ जगती,

७ शाकरगभातिमध्येज्योतिः ।

मन्वे वा द्यावापृथिवी सुभोजसौ सचेतसौ ये अप्रथेथाममिता योजनानि ।

प्रतिष्ठे ह्यभवतं वध्नां ते नो मुञ्चतमंहसः

१

प्रतिष्ठे ह्यभवतं वध्नां प्रवृद्धे देवी सुभगे उरूची ।

द्यावापृथिवी भवतं मे स्योने ते नो मुञ्चतमंहसः

२

असंतापे सुतपसौ हुवेऽहमुर्वी गम्भीरे कविभिर्नमस्ये । द्यावापृथिवी० ।

३ १७०८

दे० [आयुर्वेद०] १७

| | |
|--|--------|
| ये अमृतं विभृथो ये हवींषि ये स्तोत्या विभृथो ये मनुष्यानि । | |
| द्यावापृथिवी भवतं मे स्योने ते नो मुञ्चतमंहसः | ४ |
| ये उस्त्रिया विभृथो ये वनस्पतीन् ययोर्वा विश्वा भुवनान्यन्तः । | |
| द्यावापृथिवी भवतं मे स्योने ते नो मुञ्चतमंहसः | ५ १७१० |
| ये कीलालेन तर्पयथो ये घृतेन याभ्यामुते न किं च न शक्नुवन्ति । | |
| द्यावापृथिवी भवतं मे स्योने ते नो मुञ्चतमंहसः | ६ |
| यन्मेदमभिशोचति येनयेन वा कृतं पौरुषेयान्न दैवात् । | |
| स्तौमि द्यावापृथिवी नाथितो जोहवीमि ते नो मुञ्चतमंहसः | ७ |

॥२६२॥ (अथर्व० ४।२७।१-७) [पापमोचनम्] ।×

॥२६३॥ (अथर्व० ४।२८।१-७)

मृगारोऽथर्वा वा । भवाशर्वो रुद्रो वा (पापमोचनम्) । त्रिष्टुप्, १ अतिजागतगर्भा भुरिक् ।

| | |
|--|--------|
| भवाशर्वो मन्वे वा तस्य वित्तं ययोर्वाभिदं प्रदिशि यद् विरोचते । | |
| यावस्येशाथे द्विपदो यौ चतुष्पदस्तौ नो मुञ्चतमंहसः | १ |
| ययोरभ्यध्व उत यद् दूरे चिद् यौ विदिताविषुभृतामसिष्ठौ । यावस्येशाथे० । | २ |
| सहस्राक्षौ वृत्रहणा हुवेऽहं दूरेगव्यूती स्तुवन्नेम्युग्रौ । यावस्येशाथे० । | ३ १७१५ |
| यावारेभार्थे बहु साकमग्रे प्र चेदसाष्टमभिभां जनेषु । यावस्येशाथे० । | ४ |
| ययोर्विधानापपद्यते कश्चनान्तर्देवेषूत मानुषेषु । यावस्येशाथे० । | ५ |
| यः कृत्याकृन्मूलकृद् यातुधानो नि तस्मिन् धत्तं वज्रमुग्रौ । यावस्येशाथे० । | ६ |
| अधि नो ब्रूतं पृतनामृगौ सं वज्रेण सृजतं यः किमीदी । | |
| स्तौमि भवाशर्वो नाथितो जोहवीमि तौ नो मुञ्चतमंहसः | ७ |

॥२६४॥ (अथर्व० ४।२९।१-७)

मृगारः । मित्रावरुणो (पापमोचनम्) । त्रिष्टुप्, ७ शकरीगर्भाऽतिजगती ।

| | |
|---|--------|
| मन्वे वा मित्रावरुणावृतावृधौ सचेतसौ द्रुहणो यौ नुदेथे । | |
| प्र सत्यावानमवथो भरेषु तौ नो मुञ्चतमंहसः | १ |
| सचेतसौ द्रुहणो यौ नुदेथे प्र सत्यावानमवथो भरेषु । | |
| यौ गच्छथो नृचक्षसौ बभ्रुणा सुतं तौ नो मुञ्चतमंहसः | २ १७२१ |

यावङ्गिरसमवथो यावगस्ति मित्रावरुणा जमदग्निमत्रिम् ।

यौ कश्यपमवथो यौ वसिष्ठं तौ नो मुञ्चतमंहसः ३

यौ श्यावाश्वमवथो वध्यश्वं मित्रावरुणा पुरुमीढमत्रिम् ।

यौ विमदमवथः सप्तर्षिं तौ नो मुञ्चतमंहसः ४

यौ भरद्वाजमवथो यौ गविष्ठिरं विश्वामित्रं वरुण मित्र कुत्सम् ।

यौ कक्षीर्वन्तमवथः प्रोत कण्वं तौ नो मुञ्चतमंहसः ५

यौ मेधातिथिमवथो यौ त्रिशोकं मित्रावरुणावुशनां काव्यं यौ ।

यौ गोतममवथः प्रोत मुद्गलं तौ नो मुञ्चतमंहसः ६ १७२५

ययो रथः सत्यवर्त्मर्जुरश्मिर्मिथुया चरन्तमभियाति दूषयन् ।

स्तौमि मित्रावरुणौ नाथितो जौहवीमि तौ नो मुञ्चतमंहसः ७

॥२६५॥ (अथर्व० ६।११५।१-३)

ब्रह्मा । विश्वे देवाः (पापमोचनम्) । अनुष्टुप् ।

यद् विद्वांसो यदविद्वांस एनांसि चक्रुमा वयम् ।

यूयं नस्तस्मान्मुञ्चत विश्वे देवाः सजोषसः १

यदि जाग्रद् यदि स्वप्नेन एनस्योऽकरम् ।

भूतं मा तस्माद् भव्यं च द्रुपदादिव मुञ्चताम् २

द्रुपदादिव मुमुक्षानः स्विन्नः स्नात्वा मलादिव ।

पूतं पवित्रेणैवाज्यं विश्वे शुष्मन्तु मैनसः ३

॥२६६॥ (अथर्व० ७।४२।१-२) +

प्रस्कण्वः । सोमारुद्रौ (पापमोचनम्) । त्रिष्टुप् ।

सोमारुद्रा वि बृहतं विषूचीममीवा या नो गयमाविवेश ।

बाधेथां दूरं निर्कृतिं पराचैः कृतं चिदेनः प्र मुमुक्तमस्मत् १ १७३०

सोमारुद्रा युवमेतान्यस्मद् विश्वा तनूषु भेषजानि धत्तम् ।

अव स्यतं मुञ्चतं यन्नो असत् तनूषु बद्धं कृतमेनो अस्मत् २

॥२६७॥ (अथर्व० ७।६४।१-२)

यमः । आपः, अग्निः, निर्कृतिः (पापमोचनम्) । १ भुरिगनुष्टुप्, २ न्यङ्कुसारिणी बृहती ।

इदं यत् कृष्णः शुक्लिरभिनिष्पतन्नपीपतत् ।

आपो मा तस्मात् सर्वस्माद् दुरितात् पान्त्वंहसः १ १७३२

इदं यत् कृष्णः शकुनिर्वाभृक्षभिर्ऋते ते मुखेन ।

अभिर्मा तस्मादेनसो गार्हपत्यः प्र मुञ्चतु

२

॥२६८॥ (अथर्व० ११।६।१-२३)

शन्तातिः । चन्द्रमाः, मन्त्रोक्ताः (पापमोचनम्) । अनुष्टुप्; २३ बृहतीगर्भा ।

अभिं ब्रूमो वनस्पतीनोषधीरुत वीरुधः ।

इन्द्रं बृहस्पतिं सूर्यं ते नो मुञ्चन्त्वंहंसः

१

ब्रूमो राजानं वरुणं मित्रं विष्णुमथो भगम् ।

अंशं विवस्वन्तं ब्रूमस्ते नो मुञ्चन्त्वंहंसः

२ १७३५

ब्रूमो देवं सवितारं धातारमुत पूषणम् । त्वष्टारमग्रियं ब्रूमस्ते नो मुञ्चन्त्वंहंसः

३

गन्धर्वाप्सरसो ब्रूमो अश्विना ब्रह्मणस्पतिम् ।

अर्यमा नाम यो देवस्ते नो मुञ्चन्त्वंहंसः

४

अहोरात्रे इदं ब्रूमः सूर्याचन्द्रमसाबुभा ।

विश्वानादित्यान् ब्रूमस्ते नो मुञ्चन्त्वंहंसः

५

वातं ब्रूमः पर्जन्यमन्तरिक्षमथो दिशः । आशाश्च सर्वा ब्रूमस्ते नो मुञ्चन्त्वंहंसः

६

मुञ्चन्तु मा शपथ्यादहोरात्रे अथो उषाः ।

सोमो मा देवो मुञ्चतु यमाहुश्चन्द्रमा इति

७ १७४०

पार्थिवा दिव्याः पशव आरण्या उत ये मृगाः ।

शकुन्तान् पक्षिणो ब्रूमस्ते नो मुञ्चन्त्वंहंसः

८

भवाशर्वाविदं ब्रूमो रुद्रं पशुपतिंश्च यः ।

इषूर्या एषां संविद्य ता नः सन्तु सदा शिवाः

९

दिवं ब्रूमो नक्षत्राणि भूमिं यक्षाणि पर्वतान् ।

समुद्रा नद्यो विशन्तास्ते नो मुञ्चन्त्वंहंसः

१०

सप्तर्षिन् वा इदं ब्रूमोऽपो देवीः प्रजापतिम् ।

११

पितॄन् यमश्रेष्ठान् ब्रूमस्ते नो मुञ्चन्त्वंहंसः

ये देवा दिविषदो अन्तरिक्षसदश्च ये । पृथिव्यां शक्रा ये श्रितास्ते नो मुञ्चन्त्वंहंसः

१२ १७४५

आदित्या रुद्रा वसवो दिवि देवा अथर्वाणाः ।

अङ्गिरसो मनीषिणस्ते नो मुञ्चन्त्वंहंसः

१३

यज्ञं ब्रूमो यजमानमृचः सामानि भेषजा । यजूंषि होत्रा ब्रूमस्ते नो मुञ्चन्त्वंहंसः

१४ १७४७

| | |
|---|---------|
| पञ्च राज्यानि वीरुधां सोमश्रेष्ठानि ब्रूमः । | |
| दुर्मो भङ्गो यवः सहस्ते नो मुञ्चन्त्वंहंसः | १५ |
| अरायान् ब्रूमो रक्षांसि सर्पान् पुण्यजनान् पितॄन् । | |
| मृत्युनेकशतं ब्रूमस्ते नो मुञ्चन्त्वंहंसः | १६ |
| ऋतून् ब्रूम ऋतुपतीनार्तवानुत हायनान् । | |
| समाः संवत्सरान् मासांस्ते नो मुञ्चन्त्वंहंसः | १७ १७५० |
| एतं देवा दक्षिणतः पश्चात् प्राञ्च उदेत । | |
| पुरस्तादुत्तराच्छक्रा विश्वे देवाः समेत्य ते नो मुञ्चन्त्वंहंसः | १८ |
| विश्वान् देवानिदं ब्रूमः सत्यसंधानृतवृधः । | |
| विश्वाभिः पत्नीभिः सह ते नो मुञ्चन्त्वंहंसः | १९ |
| सर्वान् देवानिदं ब्रूमः सत्यसंधानृतवृधः । | |
| सर्वाभिः पत्नीभिः सह ते नो मुञ्चन्त्वंहंसः | २० |
| भूतं ब्रूमो भूतपतिं भूतानामुत यो वशी । | |
| भूतानि सर्वा संगत्य ते नो मुञ्चन्त्वंहंसः | २१ |
| या देवीः पञ्च प्रदिशो ये देवा द्वादशर्तवः । | |
| संवत्सरस्य ये दंष्ट्रास्ते नः सन्तु सदा शिवाः | २२ १७५५ |
| यन्मातली रथक्रीतममृतं वेदं भेषजम् । | |
| तदिन्द्रो अप्सु प्रावेशयत् तदापो दत्त भेषजम् | २३ |

॥२६९॥ (अथर्व० ४।३३।१-८; ऋ० १।९७।१-८; अग्निः १८८७-९४)

ब्रह्मा । पाप्मनाशनोऽग्निः (पाप-नाशनम्) । गायत्री ।

| | |
|--|--------|
| अपं नः शोशुचदुधमग्ने शुशुग्ध्या रयिम् । अपं नः शोशुचदुधम् | १ |
| सुक्षेत्रिया सुगातुया वसूया च यजामहे । अपं नः शोशुचदुधम् | २ |
| प्र यद् भन्दिष्ठ एषां प्रासाकासश्च सूरयः । अपं नः शोशुचदुधम् | ३ |
| प्र यत् ते अग्ने सूरयो जायेमहि प्र ते वयम् । अपं नः शोशुचदुधम् | ४ १७६० |
| प्र यदग्नेः सहस्वतो विश्वतो यन्ति भानवः । अपं नः शोशुचदुधम् | ५ |
| त्वं हि विश्वतोमुख विश्वतः परिभूरसि । अपं नः शोशुचदुधम् | ६ |
| द्विषो नो विश्वतोमुखाति नावेव पारय । अपं नः शोशुचदुधम् | ७ |
| स नः सिन्धुमिव नावाति पर्वा स्वस्तये । अपं नः शोशुचदुधम् | ८ १७६४ |

॥२७०॥ (अथर्व० ६।११३।१-३)

अथर्वा । पूषा (पापनाशनम्) । त्रिष्टुप्, ३ पङ्क्तिः ।

त्रिते देवा अमृजतैतदेनस्त्रित एनन्मनुष्येषु ममृजे ।

ततो यदि त्वा ग्राहिरानुशे तां तै देवा ब्रह्मणा नाशयन्तु

१ १७६५

मरीचीर्धूमान् प्र विशानु पाप्मन्नुदारान् गच्छोत वा नीहारान् ।

नदीनां फेनां अनु तान् वि नश्य भ्रूणानि पूषन् दुरितानि मृक्ष

२

द्वादशधा निहितं त्रितस्यापमृष्टं मनुष्यैरसानि ।

ततो यदि त्वा ग्राहिरानुशे तां तै देवा ब्रह्मणा नाशयन्तु

३

॥२७१॥ (अथर्व० ७।११२।१-२)

वरुणः । आपः, वरुणश्च (पापनाशनम्) । १ भुरिक्, २ अनुष्टुप् ।

शुम्भनी द्यावापृथिवी अन्तिसुम्ने महिब्रते ।

आपः सप्त सुसुबुर्देवीस्ता नो मुञ्चन्त्वंहंसः

१

मुञ्चन्तु मा शपथ्याइदथो वरुण्यादित ।

अथो यमस्य पङ्कीशाद् विश्वस्माद् देवकिल्बिषात्

२

॥२७२॥ (अथर्व० ७।११५।१-४) [पापलक्षणनाशनम्] :

॥२७३॥ (अथर्व० ६।२६।१-३)

ब्रह्मा । पाप्मा (पाप्मनाशनम्) । अनुष्टुप् ।

अवं मा पाप्मन्सृज वृशी सन् मृडयासि नः ।

आ मा भद्रस्य लोके पाप्मन् धेह्यविहृतम्

१ १७७०

यो नः पाप्मन् न जहासि तमु त्वा जहिमो वयम् ।

पथामनु व्यावर्तनेऽन्यं पाप्मानु पद्यताम्

२

अन्यत्रास्मन्न्यु च्यितु सहस्राक्षो अमर्त्यः ।

यं द्वेषाम तमृच्छतु यमु द्विष्मस्तमिज्जहि

३

॥२७४॥ (अथर्व० ६।३७।१-३)

अथर्वा । (स्वस्त्ययनकामः) । चन्द्रमाः (शापनाशनम्) । अनुष्टुप् ।

उप प्रागात् सहस्राक्षो युक्त्वा शपथो रथम् ।

शस्तरमन्विच्छन् मम वृक् इवाविमतो गृहम्

१

पथि णो वृङ्ग्धि शपथ हृदमगिरिवा दहेन् ।

शस्त्रामत्र नो जहि दिवो वृक्षमिवाशनिः

२ १७७४

यो नः शपादशपतः शपतो यश्च नः शपात् ।

शुने पेष्टमिवावक्षामं तं प्रत्यस्यामि मृत्यवे

३ १७७५

॥२७५॥ (अथर्व० ७।५९।१)

बादरायणिः । अरिनाशनम् (शाप-मोचनम्) । अनुष्टुप् ।

यो नः शपादशपतः शपतो यश्च नः शपात् ।

वृक्ष इव विद्युता हत आ मूलादनु शुष्यतु

१

॥२७६॥ (अथर्व० ५।७।१-१०)

अथर्वा । बहुदैवत्यम् ; १-३, ६-१० अरातयः ; ४-५ सरस्वती (अरातिनाशनम्) । अनुष्टुप् ; १ विराङ्गर्भा
प्रस्तारपङ्क्तिः ; ४ पद्याबृहती ; ६ प्रस्तारपङ्क्तिः ।

आ नो भर मा परिं ष्ठा अराते मा नो रक्षीर्दक्षिणां नीयमानाम् ।

नमो वीर्त्साया असमृद्धये नमो अस्त्वरातये

१

यमराते पुरोधत्से पुरुषं परिरापिणम् ।

नमस्ते तस्मै कृण्मो मा वनि व्यथयीर्मम

२

प्र णो वनिर्देवकृता दिवा नक्तं च कल्पताम् ।

अरातिमनुप्रेमो वयं नमो अस्त्वरातये

३

सरस्वतीमनुमतिं भगं यन्तो हवामहे ।

वाचं जुष्टां मधुमतीमवादिषं देवानां देवहूतिषु

४ १७८०

यं याचाम्यहं वाचा सरस्वत्या मनोयुजा ।

श्रद्धा तमद्य विन्दतु दुत्ता सोमेन बभ्रुणा

५

मा वनि मा वाचं नो वीर्त्सीरुभाविन्द्राग्नी आ भरतां नो वस्त्रानि ।

सर्वे नो अद्य दित्सन्तोऽरातिं प्रति हर्यत

६

पुरोऽपेक्षसमृद्धे वि ते हेति नयामसि ।

वेदं त्वाहं निमीवन्तीं नितुदन्तीमराते

७

उत नग्ना बोधुवती स्वप्नया संचसे जनम् ।

अराते चित्तं वीर्त्सन्त्याकूतिं पुरुषस्य च

८

या महती महोन्माना विश्वा आशा व्यानशे ।

तस्यै हिरण्यकेश्यै निर्ऋत्या अकरं नमः

९

हिरण्यवर्णा सुभगा हिरण्यकशिपुर्मही ।

तस्यै हिरण्यद्रापयेऽरात्या अकरं नमः

१० १७८६

॥२७७॥ (अथर्व० ६।५।१-३)

शन्तातिः । आपः, ३ वरुणः (एनोनाशनम्) । १ गायत्री, २ त्रिष्टुप्, ३ जगती ।

वायोः पूतः पवित्रेण प्रत्यङ् सोमो अति द्रुतः । इन्द्रस्य युज्यः सखा १

आपो अस्मान् मातरः सृदयन्तु घृतेन नो घृतप्वः पुनन्तु ।

विश्वं हि रिप्रं प्रवहन्ति देवीरुदिदाभ्यः शुचिरा पूत एभि २

यत् किं चेदं वरुण दैव्ये जनेऽभिद्रोहं मनुष्याश्चरन्ति ।

आर्चिष्या चेत् तव धर्मा युगोपिम मा नस्तस्मादेनसो देव रीरिषः ४

॥२७८॥ (अथर्व० ६।८४।१-४)

भगः । निर्ऋतिः (निर्ऋतिमोचनम्) । १ भुरिजगतीः २ त्रिपदार्षी बृहतीः ३ जगतीः

४ भुरिक् त्रिष्टुप् (जगती) ।

यस्यास्त आसनि घोरे जुहोम्येषां बद्धानामवसर्जनाय कम् ।

भूमिरिति त्वाभिप्रमन्वते जना निर्ऋतिरिति त्वाहं परि वेद सर्वतः १ १७९०

भूते हविष्मती भवैष ते भागो यो अस्मासु । मुञ्चेमानमूनेनसः स्वाहा २

एवो ष्वऽस्मन्निर्ऋतेऽनेहा त्वमयस्मयान् वि चृता बन्धपाशान् ।

यमो मह्यं पुनरित् त्वां ददाति तस्मै यमाय नमो अस्तु मृत्यवे ३

अयस्मये द्रुपदे वैधिष इहाभिहितो मृत्युभिर्ये सहस्रम् ।

यमेन त्वं पितृभिः संविदान उत्तमं नाकमधि रोहयेमम् ४

॥२७९॥ (अथर्व० ६।११४।१-३)

ब्रह्मा । विश्वे देवाः (उन्मोचनम्) । अनुष्टुप् ।

यद् देवा देवहेडनं देवासश्चक्रमा वयम् । आदित्यास्तस्मान्नो यूयमृतस्युतेन मुञ्चत १

ऋतस्यतेनादित्या यजत्रा मुञ्चतेह नः ।

यज्ञं यद् यज्ञवाहसः शिक्षन्तो नोपशेकिम २ १७९५

मेदस्वता यजमानाः सुचाज्यानि जुह्वतः ।

अक्रामा विश्वे वो देवाः शिक्षन्तो नोप शेकिम ३

॥२८०॥ (अथर्व० ७।६३।१) [दुरितनाशनम्] ×

॥२८१॥ (अथर्व० ३।९।१-६)

वामदेवः । द्यावापृथिवी, देवाः (दुःखनाशनम्) । अनुष्टुप्, ४ चतुष्पदा निवृद्धवृहती, ६ भुरिक्

कर्शफस्य विशफस्य द्यौः पिता पृथिवी माता ।

यथाभिचक्र देवास्तथाप कृणुता पुनः

१ १७९७

| | |
|---|--------|
| अश्रेष्माणो अधारयन् तथा तन्मनुना कृतम् । | |
| कृणोमि वधि विष्कन्धं मुष्काबुर्हो गवांमिव | २ |
| पिशङ्गे सूत्रे खृगलं तदा बध्नन्ति वेधसः । | |
| श्रवस्यं शुष्मं काववं वधि कृण्वन्तु बन्धुरः | ३ |
| येनां श्रवस्यवश्चरथ देवा इवासुरमायया । | |
| शुनां कपिरिव दूषणो बन्धुग काववस्यं च | ४ १८०० |
| दुष्ट्यै हि त्वा भत्स्यामि दूषयिष्यामि काववम् । | |
| उदाशवो रथा इव शपथेभिः सरिष्यथ | ५ |
| एकशतं विष्कन्धानि विष्टिता पृथिवीमनु । | |
| तेषां त्वामग्र उज्जहरुर्मणि विष्कन्धदूषणम् | ६ |

॥२८२॥ (अथर्व० १६।१।१-१३) [प्रथमः पर्यायः।]

अथर्वा । प्रजापतिः (दुःखमोचनम्) । १,३ द्विपदा सास्त्री बृहती; २,१० याजुषी त्रिष्टुप्; ४ आसुरी गायत्री; ५,८ सास्त्री पङ्क्तिः (५ द्विपदा); ६ सास्त्री अनुष्टुप्; ७ निचृद् विराड् गायत्री; ९ आसुरी पङ्क्तिः; ११ साम्युष्णिक्; १२-१३ आर्च्यनुष्टुप् ।

| | |
|--|---------|
| अतिसृष्टो अपां वृषभोऽतिसृष्टा अग्रयो दिव्याः | १ |
| रुजन् परिरुजन् मृणन् प्रमृणन् | २ |
| म्रोको मनोहा खनो निर्दाह आत्मदूषिस्तनूदूषिः | ३ १८०५ |
| इदं तमति सृजामि तं माभ्यवनिक्षि | ४ |
| तेन तमभ्यतिसृजामो योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मः | ५ |
| अपामग्रमसि समुद्रं वोऽभ्यवसृजामि | ६ |
| योऽहंस्वश्रमिरति तं सृजामि म्रोक् खनि तनूदूषिम् | ७ |
| यो व आपोऽग्निराविवेश स एष यद् वो घोरां तदेतत् | ८ १८१० |
| इन्द्रस्य व इन्द्रियेणाभि विञ्चेत् | ९ |
| अरिप्रा आपो अप रिप्रमस्मत् | १० |
| प्रास्मदेनो वहन्तु प्र दुष्वप्यं वहन्तु | ११ |
| शिवेन मा चक्षुषा पश्यतापः शिवया तन्वोप स्पृशत त्वचं मे | १२ |
| शिवानग्नीन्सुषदो हवामहे मयि क्षत्रं वर्च आ धत्त देवीः | १३ १८१५ |

दै० [आयुर्वेद०] १८

॥२८३॥ (अथर्व० १६।१।१-६) [द्वितीयः पर्यायः ।]

अथर्वी । वाक् १ आसुर्यनुष्टुप्; २ आसुर्युष्णिक्; ३ साम्युष्णिक्; ४ त्रिपदा साक्षी बृहती;
५ आर्च्यनुष्टुप्; ६ निचृद् विराङ्गायत्री ।

| | |
|---|--------|
| निर्दुरर्मण्य ऊर्जा मधुमती वाक् . | १ |
| मधुमती स्थ मधुमती वाचमुदेयम् | २ |
| उपहूतो मे गोपा उपहूतो गोपीथः | ३ |
| सुश्रुतौ कर्णौ भद्रश्रुतौ कर्णौ भद्रं श्लोकं श्रूयासम् | ४ |
| सुश्रुतिश्च मोषश्रुतिश्च मा हासिष्टां सौपर्णं चक्षुरजस्रं ज्योतिः | ५ १८२० |
| ऋषीणां प्रस्तरोऽसि नमोऽस्तु देवाय प्रस्तराय | ६ |

॥२८४॥ (अथर्व० १६।३।१-६) [तृतीयः पर्यायः ।]

ब्रह्मा । आदित्यः । १ आसुरी गायत्री; २-३ आर्च्यनुष्टुप्; ४ प्राजापत्या त्रिष्टुप्; ५ साम्युष्णिक्;
६ द्विपदा साक्षी त्रिष्टुप् ।

| | |
|---|--------|
| मूर्धाहं रयीणां मूर्धा समानानां भूयासम् | १ |
| रुजश्च मा वेनश्च मा हासिष्टां मूर्धा च मा विधर्मा च मा हासिष्टाम् | २ |
| उर्वश्च मा चमसश्च मा हासिष्टां धर्ता च मा धरुणश्च मा हासिष्टाम् | ३ |
| विमोकश्च मार्द्रपविश्च मा हासिष्टामार्द्रदानुश्च मा मातरिश्वा च मा हासिष्टाम् | ४ १८२५ |
| बृहस्पतिर्म आत्मा नृमणा नाम हृद्यः | ५ |
| असंतापं मे हृदयमुर्वी गव्यूतिः समुद्रो अस्मि विधर्मणा | ६ |

॥२८५॥ (अथर्व० १६।४।१-७) [चतुर्थः पर्यायः ।]

ब्रह्मा । आदित्यः । १, ३ साम्यनुष्टुप्; २ साम्युष्णिक्; ४ त्रिपदाऽनुष्टुप्;
५ आसुरी गायत्री; ६ आर्च्युष्णिक्; ७ त्रिपदा विराङ्गार्भाऽनुष्टुप् ।

| | |
|---|--------|
| नाभिरहं रयीणां नाभिः समानानां भूयासम् | १ |
| स्वासदसि सुषा अमृतो मर्येष्व | २ |
| मा मां प्राणो हामीन्मो अपानोऽवहाय परा गात्र | ३ १८३० |
| सूर्यो माहः पान्वग्निः पृथिव्या वायुरन्तरिक्षाद् यमो मनुष्येभ्यः सरस्वती पार्थिवेभ्यः | ४ |
| प्राणापानौ मा मां हासिष्टं मा जने प्र मोष | ५ |
| स्वस्त्यं दोषसौ दोषसश्च सर्व आपः सर्वगणो अशीय | ६ |
| शक्ररी स्थ पशवो मोष स्थेषु मित्रावरुणौ मे प्राणापानावग्निमे दक्षं दधातु | ७ १८३४ |

॥१८६॥ (अथर्व० १६।५।१-१०) [पञ्चमः पर्यायः ।]

यमः । ४ दुःस्वप्ननाशनम् । १-६ (प्रथमा) विराड् गायत्री [५ (प्रथमा) भुरिक, ६ (प्रथमा) स्वराद्];

१-६ (द्वितीया) प्राजापत्या गायत्री; १-६ (तृतीया) द्विपदा सास्त्री बृहती ।

| | |
|--|--------|
| विद्य तै स्वप्न जनित्रं ग्राह्याः पुत्रोऽसि यमस्य करणः ॥१॥ | १ १८३५ |
| अन्तकोऽसि मृत्युरसि ॥२॥ | २ |
| तं त्वा स्वप्न तथा सं विद्य स नः स्वप्न दुष्वप्यात् पाहि ॥३॥ | ३ |
| विद्य तै स्वप्न जनित्रं निर्भूत्याः पुत्रोऽसि यमस्य करणः ॥१॥ अन्तं०।२ तं०।३ ४ | ४ |
| विद्य तै स्वप्न जनित्रमभूत्याः पुत्रोऽसि यमस्य करणः ॥१॥ अन्तं०।२ तं०।३ ५ | ५ |
| विद्य तै स्वप्न जनित्रं निर्भूत्याः पुत्रोऽसि यमस्य करणः ॥१॥ अन्तं०।२ तं०।३ ६ १८४० | ६ |
| विद्य तै स्वप्न जनित्रं पराभूत्याः पुत्रोऽसि यमस्य करणः ॥१॥ अन्तं०।२ तं०।३ ७ | ७ |
| विद्य तै स्वप्न जनित्रं देवजाम्नीनां पुत्रोऽसि यमस्य करणः ॥१॥ | ८ |
| अन्तकोऽसि मृत्युरसि ॥२॥ | ९ |
| तं त्वा स्वप्न तथा सं विद्य स नः स्वप्न दुष्वप्यात् पाहि ॥३॥ | १० |

॥१८७॥ (अथर्व० १६।६।१-११) [षष्ठः पर्यायः ।]

यमः । दुःस्वप्ननाशनं, उषा । १-४ प्राजापत्याऽनुष्टुप्; ५ सास्त्री पङ्क्तिः; ६ निचृदाणी बृहती;

७ द्विपदा सास्त्री बृहती; ८ आसुरी जगती; ९ आसुरी बृहती; १० आच्युष्णिक्;

११ त्रिपदा यवमध्या गायत्री वा आच्यनुष्टुप् ।

| | |
|--|---------|
| अजैष्माद्यासनामाद्याभूमानागसो वयम् | १ १८४५ |
| उषो यस्माद् दुष्वप्यादभैष्माप तदुच्छतु | २ |
| द्विषते तत् परा वह शपते तत् परा वह | ३ |
| यं द्विष्मो यच्च नो द्वेष्टि तस्मा एनद् गमयामः | ४ |
| उषा देवी वाचा संविदाना वाग् देव्युषसां संविदाना | ५ |
| उषस्पतिर्वाचस्पतिना संविदानो वाचस्पतिरुषस्पतिना संविदानः | ६ १८५० |
| तेऽमुष्मै परा वहन्त्वायां दुर्गाम्नः सदान्ताः | ७ |
| कुम्भीका दूषीकाः पीयकान् | ८ |
| जाग्रदुष्वप्यं स्वप्नेदुष्वप्यम् | ९ |
| अनागमिष्यतो वरानवित्तेः संकल्पानमुष्या द्रुहः पाशान् | १० |
| तदमुष्मा अमे देवाः परा वहन्तु वधिर्यथासद् विथुरो न माधुः | ११ १८५५ |

॥२८८॥ (अथर्व० १६।७.१-१३) [सप्तमः पर्यायः ।]

यमः । दुःस्वप्ननाशनं, उषा । १ पङ्क्तिः; २ सामान्यनुष्टुप्; ३ आसुर्युष्णिक्; ४ प्राजापत्या गायत्री; ५ आच्युष्णिक्; ६, ९, ११ सास्त्री बृहती, ७ याजुषी गायत्री; ८ प्राजापत्या बृहती; १० सास्त्री गायत्री; १२ भुरिक् प्राजापत्यानुष्टुप्; १३ आसुरी त्रिष्टुप् ।

तेनैनं विध्याम्यभूत्यैनं विध्यामि निर्भूत्यैनं विध्यामि

पराभूत्यैनं विध्यामि ग्राह्यैनं विध्यामि तमसैनं विध्यामि १

देवानामेनं घोरैः क्रूरैः प्रैरैरभिप्रेष्यामि २

वैश्वानरस्यैनं दंष्ट्रयोरपि दधामि ॥३॥ एवानेवाव सा गरत् ४

योऽस्मान् द्वेष्टि तमात्मा द्वेष्टु यं वयं द्विष्मः स आत्मानं द्वेष्टु ५ १८६०

निद्विषन्तं दिवो निः पृथिव्या निरन्तरिक्षाद् भजाम ॥६॥ सुयामंश्चाक्षुष ७

इदमहमागुष्यायणेऽगुष्याः पुत्रे दुःस्वप्न्यं मृजे ८

यदुदोअदो अभ्यगच्छन् यद् दोषा यत् पूर्वा रात्रिम् ९

यज्याग्रद् यत् सुप्तो यद् दिवा यन्नक्तम् १० १८६५

यदहंरहरभिगच्छामि तस्मादेनमव दये ११

तं जहि तेन मन्दस्व तस्य पुष्टीरपि शृणीहि १२

स मा जीवीत् तं प्राणो जहातु १३

॥२८९॥ (अथर्व० १६।८।१-२७) [अष्टमः पर्यायः ।]

यमः । दुःस्वप्ननाशनम् । १-२७ (प्रथमा) एकपदा यजुर्ब्राह्मणनुष्टुप्; १-२७ (द्वितीया) द्विपदा निचृद्गायत्री; १ (तृतीया) प्राजापत्या गायत्री; १-२७ (चतुर्थी) त्रिपदा प्राजापत्या त्रिष्टुप्; २-४, ९, १७, १९, २४ (तृतीया) आसुरी जगती; ५, ७-८, १०-१२, १३ १८ (तृतीया) आसुरी त्रिष्टुप्; ६, १२, १४-१६, २०-२३, २७ (तृतीया) आसुरी पङ्क्तिः; २५-२६ (तृतीया) आसुरी बृहती ।

जितमस्माकमुद्विन्नमस्माकंमृतमस्माकं तेजोऽस्माकं ब्रह्मास्माकं स्वरिस्माकं

यज्ञोऽस्माकं पशवोऽस्माकं प्रजा अस्माकं वीरा अस्माकम् ॥१॥ १

तस्मादमुं निर्भजामोऽमुमागुष्यायणमगुष्याः पुत्रमसौ यः ॥२॥ २ १८७०

स ग्राह्याः पाशान्मा मौचि ॥३॥ ३

तस्येदं वर्चस्तेजः प्राणमायुर्नि वैष्टयाभीदमेनमधराश्च पादयामि ॥४॥ १ । ४

जितम० । स निर्भेत्याः पाशान्मा मौचि । तस्येदं० ॥१-४॥ २ । ५

जितम० । सोऽभूत्याः पाशान्मा मौचि । तस्येदं० ॥१-४॥ ३ । ६

जितम० । स निर्भेत्याः पाशान्मा मौचि । तस्येदं० ॥१-४॥ ४ । ७ १८७५

| | | | |
|--|-------|------|---------|
| जितम्० । स पराभूत्याः पाशान्मा मौचि । तस्येदं० | ॥१-४॥ | ५ । | ८ |
| जितम्० । स देवजामीनां पाशान्मा मौचि । तस्येदं० | ॥१-४॥ | ६ । | ९ |
| जितम्० । स बृहस्पतेः पाशान्मा मौचि । तस्येदं० | ॥१-४॥ | ७ । | १० |
| जितम्० । स प्रजापतेः पाशान्मा मौचि । तस्येदं० | ॥१-४॥ | ८ । | ११ |
| जितम्० । स ऋषीणां पाशान्मा मौचि । तस्येदं० | ॥१-४॥ | ९ । | १२ १८८० |
| जितम्० । स आर्षेयाणां पाशान्मा मौचि । तस्येदं० | ॥१-४॥ | १० । | १३ |
| जितम्० । सोऽङ्गिरसां पाशान्मा मौचि । तस्येदं० | ॥१-४॥ | ११ । | १४ |
| जितम्० । स आङ्गिरसानां पाशान्मा मौचि । तस्येदं० | ॥१-४॥ | १२ । | १५ |
| जितम्० । सोऽथर्वणां पाशान्मा मौचि । तस्येदं० | ॥१-४॥ | १३ । | १६ |
| जितम्० । स आथर्वणानां पाशान्मा मौचि । तस्येदं० | ॥१-४॥ | १४ । | १७ १८८५ |
| जितम्० । स वनस्पतीनां पाशान्मा मौचि । तस्येदं० | ॥१-४॥ | १५ । | १८ |
| जितम्० । स वानस्पत्यानां पाशान्मा मौचि । तस्येदं० | ॥१-४॥ | १६ । | १९ |
| जितम्० । स ऋतूनां पाशान्मा मौचि । तस्येदं० | ॥१-४॥ | १७ । | २० |
| जितम्० । स आर्तवानां पाशान्मा मौचि । तस्येदं० | ॥१-४॥ | १८ । | २१ |
| जितम्० । स मासानां पाशान्मा मौचि । तस्येदं० | ॥१-४॥ | १९ । | २२ १८९० |
| जितम्० । सोऽर्धमासानां पाशान्मा मौचि । तस्येदं० | ॥१-४॥ | २० । | २३ |
| जितम्० । सोऽहोरात्रयोः पाशान्मा मौचि । तस्येदं० | ॥१-४॥ | २१ । | २४ |
| जितम्० । सोऽह्नोः संयतोः पाशान्मा मौचि । तस्येदं० | ॥१-४॥ | २२ । | २५ |
| जितम्० । स द्यावापृथिव्योः पाशान्मा मौचि । तस्येदं० | ॥१-४॥ | २३ । | २६ |
| जितम्० । स इन्द्राग्न्योः पाशान्मा मौचि । तस्येदं० | ॥१-४॥ | २४ । | २७ १८९५ |
| जितम्० । स मित्रावरुणयोः पाशान्मा मौचि । तस्येदं० | ॥१-४॥ | २५ । | २८ |
| जितम्० । स राज्ञो वरुणस्य पाशान्मा मौचि । तस्येदं० | ॥१-४॥ | २६ । | २९ |
| जितमस्माकमुद्भिन्नमस्माकमृतमस्माकं तेजोऽस्माकं ब्रह्मास्माकं स्वरिस्माकं | | | |
| यज्ञोऽस्माकं पशवोऽस्माकं प्रजा अस्माकं वीरा अस्माकम् ॥१॥ | | | |
| तस्मादुमुं निर्भजामोऽमुमांमुष्यायणमुष्याः पुत्रमसौ यः ॥२॥ | | | |
| स मृत्योः पङ्कीशात् पाशान्मा मौचि ॥३॥ | | | |
| तस्येदं वर्चस्तेजः प्राणमायुर्नि वैष्टयामिदमेनमधराञ्च पादयामि ॥४॥ | | | |

३०

३१

३२

३३ १९०१

॥२९०॥ (अथर्व० १६।९।१-४) [नवमः पर्यायः ।]

यमः । १ प्रजापतिः; २ अग्निः, सोमः, पूषा; ३-४ सूर्यः । १ प्राजापत्या अर्च्यनुष्टुप्; २ आर्च्युष्णिक्;
३ सास्त्री पङ्क्तिः; ४ परोष्णिक् ।

जितमस्माकमुद्भिन्नमस्माकमभ्यष्टिं विश्वाः पृतना अरातीः १
तदग्निराह तदु सोम आह पूषा मा धात् सुकृतस्य लोके २
अगन्म स्वर्गः स्वरिगन्म सं सूर्यस्य ज्योतिषागन्म ३
वस्योभूयाय वसुमान् यज्ञो वसु वंशिषीय वसुमान् भूयासं वसु मयि धेहि ४ १९०५

॥२९१॥ (अथर्व० ७।२३।१)

यमः । दुःष्वप्प्रनाशनम् । अनुष्टुप् ।

दौष्वप्यं दौर्जीवित्यं रक्षो अभ्वमिराग्यः ।
दुर्णाम्नीः सर्वा दुर्वाचस्ता असन्नाशयामसि १

॥२९२॥ (अथर्व० १९।५६।१-६)

यमः । दुःष्वप्प्रनाशनम् । त्रिष्टुप् ।

यमस्य लोकादध्या बभूविथ प्रमदा मर्त्यान् प्र युनक्षि धीरः ।
एकाकिना सुरथं यासि विद्वान्स्वप्नं मिमानो असुरस्य योनौ १
बन्धस्त्वाग्नें विश्वर्चया अपश्यत् पुरा रात्र्या जनितोरेके अहि ।
ततः स्वप्नेदमध्या बभूविथ भिषग्भ्यो रूपमपगूहमानः २
बृहद्वावासुरेभ्योऽधि देवानुपावर्तत महिमानमिच्छन् ।
तस्मै स्वप्नाय दधुराधिपत्यं त्रयस्त्रिंशसः स्वरानशानाः ३
नैतां विदुः पितरो नोत देवा येषां जल्पिश्चरन्त्यन्तरेदम् ।
त्रिते स्वप्नमदधुराप्त्ये नर आदित्यासो वरुणेनानुशिष्टाः ४ १९१०
यस्य क्रूरमभजन्त दुष्कृतोऽस्वप्नेन सुकृतः पुण्यमायुः ।
स्वर्गमदसि परमेण बन्धुना तप्यमानस्य मनसोऽधि जज्ञिषे ५
विद्य ते सर्वाः परिजाः पुरस्ताद् विद्य स्वप्न यो अधिपा इहा ते ।
यशस्विनो नो यशसेह पाद्भ्याद् द्विषेभिरप याहि दूरम् ६

॥२९३॥ (अथर्व० १९।५७।१-५)

यमः । दुःष्वप्प्रनाशनम् । १ अनुष्टुप्; २-३ त्रिष्टुप् (ज्यवसाना); ४ षट्पदा उष्णिग्बृहतीगर्भा विराट् शकरी;
५ ज्यवसाना पञ्चपदा परशाकरातिजगती ।

यथा कलां यथा शकं यथर्णं संनयन्ति ।

एवा दुष्वप्यं सर्वमग्निं सं नयामसि

१ १९१३

सं राजानो अगुः समृणान्यगुः सं कुष्ठा अगुः सं कुला अगुः ।

समस्मासु यद् दुष्वप्यं निर्विषते दुष्वप्यं सुवाम २

देवानां पत्नीनां गर्भं यमस्य कर् यो भद्रः स्वप्न ।

स मम यः पापस्तद् द्विषते प्र हिण्मः । मा तृष्टानामसि कृष्णशकुनेर्मुखम् ३ १९१५

तं त्वा स्वप्न तथा सं विद्म स त्वं स्वप्नाश्च इव कायमश्च इव नीनाहम् ।

अनाम्नाकं देवपीयुं पियारुं वप यदुस्मासु दुष्वप्यं यद् गोषु यच्च नो गृहे ४

अनाम्नाकस्तद् देवपीयुः पियारुर्निष्कर्मिव प्रति मुञ्चताम् ।

नवारत्नीनपमया अस्माकं ततः परि । दुष्वप्यं सर्वं द्विषते निर्दयामसि ५ १९१७

॥२९४॥ (अथर्व० १९।६५।१) [अवमम्]*

यज्ञादिकम् । (१९१८-२३२४)

॥२९५॥ (अथर्व० ७।७३।६-७, ११) X

अथर्वा । घर्मः, अश्विनौ । ६ जगती; ७, ११ त्रिष्टुप् ।

उपं द्रव पर्यसा गोधुगोषमा घर्मे सिञ्च पर्य उस्त्रियायाः ।

वि नाकमख्यत् सविता वरेण्योऽनुप्रयाणमुपसो वि राजति ६

उपं ह्वये सुदुघां धेनुमेतां सुहस्तो गोधुगुत दौहदेनाम् ।

श्रेष्ठं सवं मविता साविषन्नाऽभीद्विः घर्मस्तद् दुषु प्र वोचत् ७

सुयवसाद् भगवती हि भूया अघा वयं भगवन्तः स्याम ।

अद्वि तृणमघ्न्ये विश्वदानीं पिब शुद्धमुदकमाचरन्ती ११ १९२०

॥२९६॥ (अथर्व० ७।६१।१-२)

अथर्वा । अग्निः (तपः) अनुष्टुप् ।

यदग्ने तपसा तप उपतप्यामहे तपः । प्रियाः श्रुतस्य भूयास्मायुष्मन्तः सुमेधसः १

अग्ने तपस्तप्यामहे उप तप्यामहे तपः ।

श्रुतानि शृण्वन्तो वयमायुष्मन्तः सुमेधसः २

॥२९७॥ (अथर्व० १९।३१।१-१०)

भृगुः (आयुष्कामः) । धर्मः । अनुष्टुप्; ८ पुरस्ताद्वृहती; ९ त्रिष्टुप्; १० जगती ।

शतकाण्डो दुश्चयनः सहस्रपर्ण उत्तिरः । दुर्भो य उग्र ओषधिस्तं ते बध्नाम्यायुषे १९२३

* दै० [अग्निः] २३४९

X अथर्व० ७।७३।१-५, ८ = दै० [अश्विनौ] ६७९-६८४ ।

॥ ७।७३।९-१० = दै० [अग्निः] ७९४, ९३५ ।

नास्य केशान् प्र वर्पन्ति नोरांसि ताडुमा घ्नते ।
 यस्मा अच्छिन्नपर्णेन दुर्भेण शर्मै यच्छति २
 दिवि ते तूलमोषधे पृथिव्याममि निष्ठितः । त्वया सहस्रकाण्डेनायुः प्र वर्धयामहे ३ १९१५
 तिस्रो दिवो अत्यंतृणत् तिस्र इमाः पृथिवीरुत ।
 त्वयाहं दुर्हादो जिह्वां नि तृणन्नि वचांसि ४
 त्वमसि सहमानोऽहमस्मि सहस्वान् । उभौ सहस्वन्तौ भूत्वा सपत्नान्तसहिषीवहि ५
 सहस्व नो अभिमांति सहस्व पृतनायतः ।
 सहस्व सर्वान् दुर्हादोः सुहादो मे बहून् कृधि ६
 दुर्भेण देवजातेन दिवि घृम्भेन शश्वदित् ।
 तेनाहं शश्वतो जनां असेनं सनवानि च ७
 प्रियं मां दर्भं कृणु ब्रह्मराजन्याभ्यां शूद्राय चार्याय च ।
 यस्मै च कामयामहे सर्वस्मै च विपश्यते ८ १९२०
 यो जायमानः पृथिवीमदृहद् यो अस्तभ्रादन्तरिक्षं दिवं च ।
 यं बिभ्रतं ननु पाप्मा विवेद स नोऽयं दुर्भो वरुणो दिवा कः ९
 सपत्नहा शतकाण्डः सहस्वानोषधीनां प्रथमः सं बभूव ।
 स नोऽयं दुर्भः परि पातु विश्वतस्तेन साक्षीय पृतनाः पृतन्यतः १०

॥२९८॥ (अथर्व० १९।३३।१-५)

भृगुः । दर्भः । १ जगती; २, ५ त्रिष्टुप्; ३ आर्षी पङ्क्तिः; ४ आस्तारपङ्क्तिः ।

सहस्रार्धः शतकाण्डः पर्यस्वान्पामग्निर्वीरुधौ राजसूयम् ।
 स नोऽयं दुर्भः परि पातु विश्वतो देवो मणिरायुषा सं सृजाति नः १
 घृतादुल्लभो मधुमान् पर्यस्वान् भूमिदृहोऽच्युतश्चयावयिष्णुः ।
 नुदन्तसपत्नानधरांश्च कृण्वन् दर्भा रोह महतामिन्द्रियेण २
 त्वं भूमिमत्येष्योजसा त्वं वेद्यां सीदसि चारुरध्वरे ।
 त्वां पवित्रमृषयोऽभरन्त त्वं पुनीहि दुरितान्यस्सत् ३ १९३५
 तीक्ष्णो राजा विषासही रक्षोहा विश्वचर्षणिः ।
 ओजो देवानां बलमुग्रमेतत् तं ते बभ्रामि जुरसे स्वस्तये ४
 दुर्भेण त्वं कृणवद् वीर्याणि दुर्भं बिभ्रद्वात्मना मा व्यथिष्ठाः ।
 अतिष्ठाया वर्चसाधान्यान्तस्त्वयि इवा भाहि प्रदिशश्चतस्रः ५ १९३७

॥२९९॥ (अथर्व० ५।२६।२-४, ६-९, ११)।

ब्रह्मा । वास्तोष्पतिः, २ सविता, ३, ११ इन्द्रः, ४ निविदः, ६ अदितिः, ७ विष्णुः,
८ त्वष्टा, ९ भगः, (नवशालायां घृतहोमः) । २, ४, ६-८, ११ द्विपदा
प्राजापत्या बृहती; ३ त्रिपदा धिराङ् गायत्री; ९ त्रिपदा
पिपीलिकमध्या पुर उष्णिक्; (सर्वा एकावसानाः)

| | |
|---|---------|
| युनक्तु देवः सविता प्रजानस्मिन् यज्ञे महिषः स्वाहा | २ |
| इन्द्र उक्थामदान्यस्मिन् यज्ञे प्रविद्वान् युनक्तु सुयुजः स्वाहा | ३ |
| प्रैषा यज्ञे निविदः स्वाहा शिष्टाः पत्नीभिर्वहतेह युक्ताः | ४ १९४० |
| एयमगन् बर्हिषा प्रोक्षणीभिर्यज्ञं तन्वानादितिः स्वाहा | ६ |
| विष्णुर्युनक्तु बहुधा तपांस्यस्मिन् यज्ञे सुयुजः स्वाहा | ७ |
| त्वष्टा युनक्तु बहुधा नु रूपा अस्मिन् यज्ञे सुयुजः स्वाहा | ८ |
| भगो युनक्त्वाशिषो न्वस्मा अस्मिन् यज्ञे प्रविद्वान् युनक्तु सुयुजः स्वाहा | ९ |
| इन्द्रो युनक्तु बहुधा वीर्याण्यस्मिन् यज्ञे सुयुजः स्वाहा | ११ १९४५ |

॥३००॥ (ऋ० १०।१८।७-१४)×

संकुसुको यामायनः । ७-१४ पितृमेघः, १४ प्रजापतिर्वा । त्रिष्टुप्, ११ प्रस्तारपङ्क्तिः, १३ जगती, १४ अनुष्टुप् ।

| | |
|--|---------|
| इमा नारीरविधवाः सुपत्नी—राजनेन सर्पिषा सं विशन्तु । | |
| अनश्रवोऽनमीवाः सुरन्ना आ रोहन्तु जनयो योनिमग्रे | ७ |
| उदीर्ष्व नार्यभि जीवलोकं गतासुमेतस्य शेष एहि । | |
| हस्तग्राभस्य दिधिषोस्तवेदं पत्युर्जनित्वमभि सं बभूथ | ८ |
| धनुर्हस्तादाददानो मृतस्या—ऽस्मे क्षत्राय वर्चसे बलाय । | |
| अत्रैव त्वमिह वयं सुवीरा विश्वाः स्पृधो अभिमातीर्जयेम | ९ |
| उप सर्प मातरं भूमिमेता—मुरुव्यचसं पृथिवीं सुशेवाम् । | |
| ऊर्णप्रदा युवतिर्दक्षिणावत एषा त्वा पातु निऋतेरुपस्थात् | १० |
| उच्छ्रस्व पृथिवि मा नि बाधथाः स्रपायनास्मै भव स्रपवञ्चना । | |
| माता पुत्रं यथा सिचा ऽभ्येनं भूम ऊर्णहि | १० |
| उच्छ्रस्माना पृथिवी सु तिष्ठतु सहस्रं मित उप हि श्रयन्ताम् । | |
| ते गृहासो घृतभृतो भवन्तु विश्वाहास्मै शरणाः सन्त्वन्नं | १२ १९५१ |

+ अथ० ५।२६।१ = अग्निः २३४५; ५।२६।५ = मरुतः ४३२; ५।२६।१० = सोमः ११८९; ५।२६।१२ = अश्विनौ ६७१

× अथर्व० १८।३।२, ५०-५१, ५७

६० [आयुर्वेद] १९

उत् ते स्तभ्नामि पृथिवीं त्वत् परी—मं लोगं निदधन्मो अहं रिषम् ।
 एतां स्थूणां पितरो धारयन्तु तेऽत्रा यमः सादेना ते मिनोतु १३
 प्रतीचीने मामहनी—ष्वाः पूर्णमिवा दधुः ।
 प्रतीचीं जग्रभा वाच—मश्वं रशनया यथा १४

॥३०१॥ (ऋ० १०।१०।१-१४)

नवमीवर्ज्यानामयुजां षष्ठ्याश्च वैवस्वती यमी ऋषिका । यमः । षष्ठीवर्ज्यानां युजां
 नवम्याश्च वैवस्वतो यमः ऋषिः । यमी । त्रिष्टुप्, १३ विराट्स्थाना ।

ओ चित् सखायं सख्या ववृत्यां तिरः पुरु चिदर्णवं जगन्वान् ।
 पितुर्नपातमा दधीत वेधा अधि क्षमिं प्रतरं दीध्यानः १
 न ते सखा सख्यं वष्टयेतत् सलक्ष्मा यद् विषुरुपा भवाति ।
 महस्पुत्रासो असुरस्य वीरा दिवो धर्तारं उर्विया परि ख्यन् २ १९५५
 उशान्तिं घा ते अमृतास एत—देकस्य चित् त्यजसं मर्त्यस्य ।
 नि ते मनो मनसि धायस्मे जन्युः पतिस्तन्वमा विविश्याः ३
 न यत् पुरा चक्रुमा कद्धं नून—मृता वदन्तो अनृतं रपेम ।
 गन्धर्वो अस्वप्या च योषा सा नो नाभिः परमं जामि तन्नौ ४
 गर्भे नु नौ जनिता दंपती क—देवस्त्वष्टा सविता विश्वरूपः ।
 नकिरस्य प्र मिनन्ति व्रतानि वेदं नावस्य पृथिवी उत द्यौः ५
 को अस्य वेदं प्रथमस्याहः क ई ददर्श क इह प्र वोचत् ।
 बृहन्मित्रस्य वरुणस्य धाम कदु ब्रव आहनो वीच्या नृन् ६
 यमस्य मा यम्यं काम आग—न्तसमाने योनौ सहशेय्याय ।
 जायेव पत्ये तन्वै रिरिच्यां वि चिद् वृहेव रथ्येव चक्रा ७ १९६०
 न तिष्ठन्ति न नि मिषन्त्येते देवानां स्पर्श इह ये चरन्ति ।
 अन्येन मदाहनो याहि तूयं तेन वि वृह रथ्येव चक्रा ८
 रात्रीभिरस्मा अहभिर्दशस्येत् सूर्यस्य चक्षुर्मुहुरुन्मिमीयात् ।
 दिवा पृथिव्या मिथुना सबन्धू यमीर्यमस्यं बिभृयादजामि ९
 आ घा ता गच्छानुत्तरा युगानि यत्र जामयः कृणवन्नजामि ।
 उप बर्बहि वृषभाय बाहु—मन्यमिच्छस्व सुभगे पतिं मत् १० १९६१

किं भ्रातासद् यदेनाथं भवति किमु स्वसा यन्निर्ऋतिर्निगच्छात् ।

काममूता बहुहेतुतद् रपामि तन्वा मे तन्वां सं पृषधि ११

न वा उ ते तन्वां तन्वां सं पृष्यां पापमाहुर्यः स्वसारं निगच्छात् ।

अन्येन मत् प्रमुदः कल्पयस्व न ते भ्राता सुभगे वष्टयेतत् १२ १९६५

बतो बतासि यम नैव ते मनो हृदयं चाविदाम ।

अन्या किल त्वां कक्ष्येव युक्तं परि ष्वजाते लिबुजेव वृक्षम् १३

अन्यम् पु त्वं यम्यन्य उ त्वां परि ष्वजाते लिबुजेव वृक्षम् ।

तस्य वा त्वं मन इच्छा स वा तवा—ऽर्धा कृणुष्व संविदं सुभद्राम् १४

॥३०२॥ (ऋ० १०।१४।१-५, ७-९, १३-१६)+

वैवस्वतो यमः । यमः, ७-९ लिङ्गोक्ताः, पितरो वा । त्रिष्टुप्; १३-१४, १६ अनुष्टुप्; १५ बृहती ।

परेयिवासं प्रवतो महीरन् बहुभ्यः पन्थामनुपस्पशानम् ।

वैवस्वतं संगमनं जनानां यमं राजानं हविषा दुवस्य १

यमो नो गातुं प्रथमो विवेद नैषा गव्यूतिरपमर्त्तवा उ ।

यत्रा नः पूर्वे पितरः परेयुरेना जज्ञानाः पथ्याहे अनु स्वाः २

मातली कव्यैर्यमो अङ्गिरोभिर्बृहस्पतिर्ऋक्भिर्वावृधानः ।

याँश्च देवा वावृधुर्ये च देवा—न्त्स्वाहान्ये स्वधयान्यं मदन्ति ३ १९७०

इमं यम प्रस्तुरमा हि सीदा—ऽङ्गिरोभिः पितृभिः संविदानः ।

आ त्वा मन्त्राः कविशस्ता बहन्त्वेना राजन् हविषा मादयस्व ४

अङ्गिरोभिरा गेहि यज्ञियेभिर्—र्यम वैरूपैरिह मादयस्व ।

विर्वस्वन्तं हुवे यः पिता ते ऽस्मिन् यज्ञे बर्हिष्या निषद्य ५

प्रेहि प्रेहि पृथिभिः पूर्येभिर्—र्यत्रा नः पूर्वे पितरः परेयुः ।

उभा राजाना स्वधया मदन्ता यमं पश्यासि वरुणं च देवम् ७

सं गच्छस्व पितृभिः सं यमेने—ष्टापूनेन परमं व्योमन् ।

द्वित्वायावद्यं पुनरस्तमेहि सं गच्छस्व तन्वा सुवर्चाः ८

अपेत वीत वि च सर्पतातो ऽस्मा एतं पितरो लोकमकन ।

अहोभिरङ्गिरक्तुभिर्व्यक्तं यमो ददात्यवसानमस्मै ९

यमाय सोमं सुनुत यमाय जुहुता हविः ।

यमं ह यज्ञो गच्छ—त्यग्निदूतो अरंकृतः १३ १९७६

| | |
|---|----|
| यमाय घृतवद्वविर्जुहोत प्र च तिष्ठत । | |
| स नो देवेष्वा यमद् दीर्घमायुः प्र जीवसे | १४ |
| यमाय मधुमत्तमं राज्ञे हव्यं जुहोतन । | |
| इदं नम ऋषिभ्यः पूर्वजेभ्यः पूर्वैभ्यः पथिकृद्भ्यः | १५ |
| त्रिकद्रुकेभिः पतति षड्वारिकमिद् बृहत् । | |
| त्रिष्टुब् गायत्री छन्दांसि सर्वा ता यम आहिता | १६ |

॥३०३॥ (ऋ० १०।१३५।१-७)

कुमारो यामायनः । यमः । अनुष्टुप् ।

| | |
|---|--------|
| यस्मिन् वृक्षे सुपलाशे देवैः संपिबते यमः । | |
| अत्रा नो विश्वतिः पिता पुराणां अनु वेनति | १ १९८० |
| पुराणां अनुवेनेन्तं चरेन्तं पापयामया । | |
| असुयन्नभ्यचाकशं तस्मा अस्पृह्यं पुनः | २ |
| यं कुमार नवं रथं—मचक्रं मनसाकृणोः । | |
| एकैषं विश्वतः प्राञ्च—मपश्यन्नाधि तिष्ठसि | ३ |
| यं कुमार प्रार्थयतो रथं विप्रैभ्यस्परि । | |
| तं सामानु प्रार्थयत् समितो नाव्याहितम् | ४ |
| कः कुमारमजनयद् रथं को निरवर्तयत् । | |
| कः स्वित् तदद्य नो ब्रूया—दनुदेयी यथार्भवत् | ५ |
| यथार्भवदनुदेयी ततो अग्रमजायत । | |
| पुरस्ताद् बुध्न आततः पश्चान्निरयणं कृतम् | ६ १९८५ |
| इदं यमस्य सार्दनं देवमानं यदुच्यते । | |
| इयमस्य घम्यते नाळी—रयं गीर्भिः परिष्कृतः | ७ |

॥३०४॥ (ऋ० १०।१५।१-१४)

शङ्खो यामायनः । पितरः । त्रिष्टुप्, ११ जगती ।

| | |
|---|--------|
| उदीरतामवरं उत् परास उन्मध्यमाः पितरः सोम्यासः । | |
| असुं य ईयुरवृका ऋतज्ञा—स्ते नोऽवन्तु पितरो हवेषु | १ |
| इदं पितृभ्यो नमो अस्त्वद्य ये पूर्वासो य उपरास ईयुः । | |
| ये पार्थिवे रजस्या निषत्ता ये वा नूनं सुवृजनासु विश्व | २ १९८८ |

आहं पितृन्सुविदत्राँ अवात्सि नपातं च विक्रमणं च विष्णोः ।

बर्हिषदो ये स्वधया सुतस्य भजन्त पित्वस्त इहागमिष्ठाः ३

बर्हिषदः पितर ऊत्यर्वा—गिमा वो हव्या चक्रमा जुषध्वम् ।

त आ गतावसा शंतमेना—ऽथा नः शं योररपो दधात ४ १९९०

उपहृताः पितरः सोम्यासौ बर्हिष्येषु निधिषु प्रियेषु ।

त आ गमन्तु त इह श्रुवन्त्व—धिं ब्रुवन्तु तेंऽवन्त्वस्मान् ५

आच्या जानु दक्षिणतो निषद्ये—मं यज्ञमभि गृणीत विश्वे ।

मा हिंसिष्ट पितरः केन चिन्नो यद् व आगः पुरुषता करांम ६

आसीनासो अरुणीनामुपस्थे रयिं धत्त दाशुषे मर्त्याय ।

पुत्रेभ्यः पितरस्तस्य वस्वः प्र यच्छत त इहोर्जि दधात ७

ये नः पूर्वे पितरः सोम्यासौ ऽनूहिरे सोमपीथं वसिष्ठाः ।

तेभिर्ममः संरराणो हवींष्यु—शन्नशङ्गिः प्रतिकाममन्तु ८

ये तातृषुर्देवत्रा जेहमाना होत्राविदुः स्तोमतष्टासो अर्कैः ।

आग्ने याहि सुविदत्रेभिर्वाङ् सत्यैः कव्यैः पितृभिर्धर्मसङ्गिः ९ १९९५

ये सत्यासौ हविरदौ हविष्पा इन्द्रेण देवैः सरथं दधानाः ।

आग्ने याहि सहस्रं देववन्दैः परैः पूर्वैः पितृभिर्धर्मसङ्गिः १०

अग्निष्वात्ताः पितर एह गच्छत सदैःसदः सदत सुप्रणीतयः ।

अत्ता हवींषि प्रयतानि बर्हिष्य—था रयिं सर्ववीरं दधातन ११

त्वमम ईळितो जातवेदो ऽवाङ्मुव्यानि सुरभीणि कृत्वी ।

प्रादाः पितृभ्यः स्वधया ते अक्ष—न्नाद्वि त्वं देव प्रयता हवींषि १२

ये चेह पितरो ये च नेह याँश्च त्रिष याँ उ च न प्रविष ।

त्वं वेत्थ यति ते जातवेदः स्वधाभिर्यज्ञं सुकृतं जुषस्व १३

ये अग्निदग्धा ये अर्नाग्निदग्धा मध्ये दिवः स्वधया मादयन्ते ।

तेभिः स्वराळसूनीतिमेतां यथावशं तन्वं कल्पयस्व १४

॥३०५॥ (अथर्व १८।१।६, १३-१४, १७, ३९-४०, ५१-५४, ५७-६१)X

अथर्वा । यमः, मन्त्रोक्ताः, ४० रुद्रः ४१-४३ सरस्वती, ४४-४६, ५१-५२ पितरः (पितृमेधः) ।

त्रिष्टुप्; १४, ४९ भुरिक्, ५७, ६१ अनुष्टुप्; ५९ पुरोबृहती ।

को अद्य युक्ते धुरि गा क्रतस्य शिमीवतो भामिनो दुर्हणायून् ।

आसुभिषून् हृत्स्वसो मयोभून् य एषां भृत्यामृणधत् स जीवात् ६ २००१

| | |
|--|---------|
| न ते नाथं यम्यत्राहमस्मि न ते तनूं तन्वाइ सं पृच्याम् । | |
| अन्येन मत् प्रमुदः कल्पयस्व न ते आता सुभगे वष्टयेतत् | १३ |
| न वा उ ते तनूं तन्वाइ सं पृच्यां पापमाहुर्यः स्वसारं निगच्छात् । | |
| असंयदेतन्मनसो हृदो मे आता स्वसुः शर्यने यच्छयीय | १४ |
| त्रीणि च्छन्दांसि कवयो वि येतिरे पुरुषं दर्शतं विश्वचक्षणम् । | |
| आपो वाता ओषधयस्तान्येकस्मिन् भुवनं आपितानि | १७ |
| स्तेगो न क्षामत्येषि पृथिवीं मही नो वाता इह वान्तु भूमौ । | |
| मित्रो नो अत्र वरुणो युज्यमानो अग्निरने न व्यसृष्ट शोकम् | ३९ २००५ |
| स्तुहि श्रुतं गर्तसदं जनानां राजानं भीममुपहत्नुमुग्रम् । | |
| मृडा जरित्रे रुद्र स्तवानो अन्यमस्मत् ते नि वपन्तु सेन्यम् | ४० |
| सरस्वतीं देवयन्तो हवन्ते सरस्वतीमध्वरे तायमाने । | |
| सरस्वतीं सुकृतो हवन्ते सरस्वती दाशुषे वार्यं दात् | ४१ |
| सरस्वतीं पितरो हवन्ते दक्षिणा यज्ञमभिनक्षमाणाः । | |
| आसद्यास्मिन् बर्हिषि मादयध्वमनमीवा इष आ धेह्यस्मे | ४२ |
| सरस्वति या सरथं ययाथोकथैः स्वधार्भिर्देवि पितृभिर्मदन्ती । | |
| सहस्रार्धमिडो अत्र भागं रायस्पोषं यजमानाय धेहि | ४३ |
| उदीरतामवरं उत् परास उन्मध्यमाः पितरः सोम्यासः । | |
| असुं य ईयुरवृका ऋतज्ञास्ते नोऽवन्तु पितरो हवेषु | ४४ २०१० |
| आहं पितृन्त्सुविदत्रां अविस्ति नपातं च विक्रमणं च विष्णोः । | |
| बर्हिषदो ये स्वधयां सुतस्य भजन्त पित्वस्त इहागमिष्ठाः | ४५ |
| इदं पितृभ्यो नमो अस्त्वद्य ये पूर्वासो ये अपरास ईयुः । | |
| ये पार्थिवे रजस्या निषत्ता ये वा नूनं सुवृजनासु दिक्षु | ४६ |
| मातली कव्यैर्यमो अङ्गिरोभिर्बृहस्पतिर्ऋकभिर्वावृधानः । | |
| यांश्च देवा वावृधुर्ये च देवास्ते नोऽवन्तु पितरो हवेषु | ४७ |
| स्वादुक्किलायं मधुमां उतायं तीव्रः किलायं रसवां उतायम् । | |
| उतो न्वस्य पपिवांसमिन्द्रं न कश्चन सहत आहवेषु | ४८ |
| परेयिवासं प्रवतो महीरिति बहुभ्यः पन्थामनुपस्पशानम् । | |
| वैवस्वतं संगमनं जनानां यमं राजानं हविषा सपर्यत | ४९ २०१५ |

| | |
|---|---------|
| वर्हिषदः पितर ऊत्यर्वाग्निमा वो हव्या चक्रुमा जुषध्वम् । | |
| त आ गतावसा शतमेनावा नः शं योररपो दधात | ५१ |
| आच्या जानु दक्षिणतो निषद्येदं नो हविरभि ग्रणन्तु विश्वे । | |
| मा हिंसिष्ट पितरः केन चिन्नो यद् व आगः पुरुषता करोम | ५२ |
| त्वष्टा दुहित्रे वहतुं कृणोति तेनेदं विश्वं भुवनं समेति । | |
| यमस्य माता पर्युद्यमाना महो जाया विवस्वतो ननाश | ५३ |
| प्रेहि प्रेहि पथिभिः पर्याणैर्येना ते पूर्वे पितरः परेताः । | |
| उभा राजानौ स्वधया मदन्तौ यमं पश्यासि वरुणं च देवम् | ५४ |
| द्युमन्तस्त्वेधीमहि द्युमन्तः समिधीमहि । | |
| द्युमान् द्युमत आ वह पितृन् हविषे अत्तवे | ५७ २०२० |
| अङ्गिरसो नः पितरो नवग्वा अथर्वाणो भृगवः सोम्यासः । | |
| तेषां वयं सुमतौ यज्ञियानामपि भद्रे सौमनमे स्याम | ५८ |
| अङ्गिरोभिर्यज्ञियैरा गद्दीह यमं वैरूपैरिह मादयस्व । | |
| विवस्वन्तं हुवे यः पिता तेऽस्मिन् वर्हिष्या निषद्य | ५९ |
| इमं यम प्रस्तरमा हि रोहाङ्गिरोभिः पितृभिः संविदानः । | |
| आ त्वा मन्त्राः कविशस्ता वहन्त्वेना राजन् हविषो मादयस्व | ६० |
| इत एत उदारुहन् दिवस्पृष्ठान्यारुहन् । | |
| प्र भूर्जयो यथा पथा घामङ्गिरसो ययुः | ६१ |

॥३०६॥ (अथर्व० १८।२।१-६०)

अथर्वा । यमः, मन्त्रोक्ताः; ४, ३४ अग्निः; ५ जातवेदाः; २९ पितरः (पितृमेधः) । त्रिष्टुप्; १-३, ६, १४-१८, २०, २२-२३, २५, ३०, ३४, ३६, ४६, ४८, ५०-५२, ५६ अनुष्टुप्; ४, ७, ९, १३ जगती; ५, १६, ४९, ५७ भुरिक्; १९ त्रिपदाऽऽर्षी गायत्री; २४ त्रिपदा समविषमाऽऽर्षी गायत्री; ३७ विराड् जगती; ३८-४४ आर्षी गायत्री; (४०, ४२-४४ भुरिक्) ४५ ककुम्भती अनुष्टुप् ।

| | |
|--|--------|
| यमाय सोमः पवते यमार्य क्रियते हविः । यमं ह यज्ञो गच्छत्यग्निर्दूतो अरंकृतः १ | २०२५ |
| यमाय मधुमत्तमं जुहोता प्र च तिष्ठत । | |
| इदं नम ऋषिभ्यः पूर्वजेभ्यः पूर्वैभ्यः पथिकृद्भ्यः | २ |
| यमार्य घृतवत् पयो राज्ञे हविर्जुहोतन । | |
| स नो जीवेष्वा यमेद् दीर्घमायुः प्र जीवसे | ३ २०२७ |

मैनमग्ने वि देहो माभि शूशुचो मास्य त्वचं चिक्षिपो मा शरीरम् ।

शृतं यदा करासि जातवेदोऽथेमेनं प्र हिणुतात् पितृरूपं

४

यदा शृतं कृणवो जातवेदोऽथेममेनं परि दत्तात् पितृभ्यः ।

यदो गच्छात्यसुनीतिमेतामथ देवानां वशनीर्भवाति

५

त्रिकद्रुकेभिः पवते षडुर्वारेकमिद् बृहत् ।

त्रिष्टुब् गांयत्री छन्दांसि सर्वा ता यम आपैता

६ २०३०

सूर्यं चक्षुषा गच्छ वातमात्मना दिवं च गच्छ पृथिवीं च धर्मभिः ।

अपो वा गच्छ यदि तत्र ते हितमोषधीषु प्रति तिष्ठा शरीरैः

७

अजो भागस्तपस्तं तपस्व तं ते शोचिस्तपतु तं ते अर्चिः ।

यास्ते शिवास्तन्वो जातवेदस्ताभिर्वहैनं सुकृतास्तु लोकम्

८

यास्ते शोच्यो रंहयो जातवेदो याभिरापृणासि दिवमन्तरिक्षम् ।

अजं यन्तमनु ताः समृण्वतामथेतराभिः शिवतमाभिः शृतं कृषि

९

अवं सृज पुनरग्ने पितृभ्यो यस्त आहुतश्चरति स्वधावान् ।

आयुर्वसान् उप यातु शेषः सं गच्छतां तन्वा सुवर्चाः

१०

अति द्रव श्वानौ सारमेयौ चतुरक्षौ श्वलौ साधुना पथा ।

अधा पितृन्तुविदत्रा अपीहि यमेन ये सधमादं मदन्ति

११ २०३५

यौ ते श्वानौ यम रक्षितारौ चतुरक्षौ पथिषदी नृचक्षसा ।

ताभ्यां राजन् परि धेद्येनं स्वस्त्यस्मा अनमीवं च धेहि

१२

उरूणसावसुतृपावुदुम्बलौ यमस्य दूतौ चरतो जना अनु ।

तावस्मभ्यं दृश्ये सूर्याय पुनर्दातामसुमद्येह भद्रम्

१३

सोम एकैभ्यः पवते घृतमेक उपासते ।

येभ्यो मधु प्रधावति तांश्चिदेवापि गच्छतात्

१४

ये चित् पूर्वं ऋतसाता ऋतजाता ऋतावृधः ।

ऋषीन् तपस्वतो यम तपोजा अपि गच्छतात्

१५

तपसा ये अनाधृष्यास्तपसा ये स्वर्ययुः ।

तपो ये चक्रिरे महस्तांश्चिदेवापि गच्छतात्

१६

ये युध्यन्ते प्रघनेषु शूरासो ये तनूत्यजः ।

ये वा सहस्रदक्षिणास्तांश्चिदेवापि गच्छतात्

१७ २०४१

सहस्रणीथाः कवयो ये गोपायन्ति सूर्यम् ।

ऋषीन् तपस्वतो यम तपोजाँ अपि गच्छतात् १८

स्योनास्मै भव पृथिव्यनृक्षरा निवेशनी । यच्छास्मै शर्म सप्रथाः १९

असंबाधे पृथिव्या उरौ लोके नि धीयस्व ।

स्वधा याश्चकृषे जीवन् तास्ते सन्तु मधुश्रुतः २०

ह्वयामि ते मनसा मन इहेमान् गृह्णामि उप जुजुषाण एहि ।

सं गच्छस्व पितृभिः सं यमेन स्योनास्त्वा वाता उप वान्तु शग्माः २१ २०४५

उत् त्वा वहन्तु मरुत उदवाहा उदप्रुतः । अजेन कृण्वन्तः शीतं वर्षेणोक्षन्तु बालिति २२

उदह्वमायुरायुषे कृत्वे दक्षाय जीवसे ।

स्वान् गच्छतु ते मनो अधा पितृरुपं द्रव २३

मा ते मनो मासोर्माङ्गानां मा रसस्य ते ।

मा ते हास्त तन्वः किं चनेह २४

मा त्वा वृक्षः सं बाधिष्ट मा देवी पृथिवी मही ।

लोकं पितृषु विश्वैधस्व यमराजसु २५

यत् ते अङ्गमतिहितं पराचैरपानः प्राणो य उ वा ते परेतः ।

तत् ते संगत्य पितरः सनीडा घासाद् घासं पुनरा वैशयन्तु २६ २०५०

अपेमं जीवा अरुधन् गृहेभ्यस्तं निर्वहन् परि ग्रामादितः ।

मृत्युर्यमस्यासीद् दूतः प्रचेता असन् पितृभ्यो गमयां चकार २७

ये दस्यवः पितृषु प्रविष्टा ज्ञातिमुखा अहुतादुश्चरन्ति ।

परापुरो निपुरो ये भरन्त्यग्निष्ठानसात् प्र धमाति यज्ञात् २८

सं विशन्तिवृह पितरः स्वा नः स्योनं कृण्वन्तः प्रतिरन्त आयुः ।

तेभ्यः शकेम हविषा नक्षमाणा ज्योग् जीवन्तः शरदः पुरुचीः २९

यां ते धेनुं निपृणामि यम्बु ते क्षीर औदनम् ।

तेना जनस्यासो भर्ता योऽत्रासदजीवनः ३०

अश्वावतीं प्र तर या सुशेवाक्षार्कं वा प्रतरं नवीयः ।

यस्त्वा जघान वध्यः सो अस्तु मा सो अन्यद् विदत भागधेयम् ३१

यमः परोऽवरो विवस्वान् ततः परं नाति पश्यामि किं चन ।

यमे अवरो अर्ध मे निर्विष्टो भवो विवस्वानन्वार्ततान ३२ २०५६

| | |
|--|---------|
| अपाङ्गूहन्नमृतां मर्त्येभ्यः कृत्वा सर्वर्णामदधुर्विवस्वते । | |
| उताश्विनावभरद् यत् तदासीदजहादु द्वा मिथुना संरण्यूः | ३३ |
| ये निखाता ये परोमा ये दुग्धा ये चोद्धिताः । | |
| सर्वास्तानग्र आ वह पितृन् हविषे अत्तवे | ३४ |
| ये अग्निदग्धा ये अनाग्निदग्धा मध्ये दिवः स्वधया मादयन्ते । | |
| त्वं तान् वेत्थ यदि ते जातवेदः स्वधया यज्ञं स्वधितिं जुषन्ताम् | ३५ |
| शं तप मातिं तपो अग्रे मा तन्वैः तपः । | |
| वनेषु शुष्मो अस्तु ते पृथिव्यामस्तु यद्धरः | ३६ २०६० |
| ददाम्यस्मा अवसानमेतद् य एष आगन् मम चेदभूदिह । | |
| यमश्चिकित्वान् प्रत्येतदाह ममैष राय उप तिष्ठतामिह | ३७ |
| इमां मात्रां मिमीमहे यथापरं न मासातै । शते शरत्सु नो पुरा | ३८ |
| प्रेमां मात्रां मिमीमहे यथापरं न मासातै । शते शरत्सु नो पुरा | ३९ |
| अपेमां मात्रां मिमीमहे यथापरं न मासातै । शते शरत्सु नो पुरा | ४० |
| वीडेमां मात्रां मिमीमहे यथापरं न मासातै । शते शरत्सु नो पुरा | ४१ २०६५ |
| निरिमां मात्रां मिमीमहे यथापरं न मासातै । शते शरत्सु नो पुरा | ४२ |
| उदिमां मात्रां मिमीमहे यथापरं न मासातै । शते शरत्सु नो पुरा | ४३ |
| समिमां मात्रां मिमीमहे यथापरं न मासातै । शते शरत्सु नो पुरा | ४४ |
| अमासि मात्रां स्वरिगामायुष्मान् भूयासम् । | |
| यथापरं न मासातै शते शरत्सु नो पुरा | ४५ |
| प्राणो अपानो व्यान आयुश्चक्षुर्दृश्ये सूर्याय । | |
| अपरिपरेण पथा यमराज्ञः पितृन् गच्छ | ४६ २०७० |
| ये अग्रवः शशमानाः परेयुर्हित्वा द्वेषांस्यनपत्यवन्तः । | |
| ते द्यामुदित्याविदन्त लोकं नार्कस्य पृष्ठे अधि दीध्यानाः | ४७ |
| उदन्वती द्यौरवमा पीलुमतीति मध्यमा । | |
| तृतीया ह प्रद्यौरिति यस्यां पितर आसते | ४८ |
| ये नः पितुः पितरो ये पितामहा य आविविशुर्वन्तरिक्षम् । | |
| य आश्रियन्ति पृथिवीमुत द्यां तेभ्यः पितृभ्यो नमसा विधेम | ४९ २०७३ |

- इदमिद् वा उ नापरं दिवि पश्यसि सूर्यम् ।
माता पुत्रं यथा सिचाम्येनिं भूम ऊर्णहि ५०
- इदमिद् वा उ नापरं जरस्यन्यदितोऽपरम् ।
जाया पतिमिव वाससाभ्येनिं भूम ऊर्णहि ५१ २०७५
- अभि त्वोर्णोमि पृथिव्या मातुर्वर्त्सेण भद्रया ।
जीविषु भद्रं तन्मयि स्वधा पितृषु सा त्वयि ५२
- अग्नीषोमा पथिकृता स्योनं देवेभ्यो रत्नं दधथुर्वि लोकम् ।
उप प्रेष्यन्तं पूषणं यो वहत्यञ्जोयानैः पथिभिस्तत्र गच्छतम् ५३
- पूषा त्वेतश्चयावयतु प्र विद्वाननष्टपशुर्धुवनस्य गोपाः ।
स त्वैतेभ्यः परि ददत् पितृभ्योऽग्निर्देवेभ्यः सुविदुत्रियेभ्यः ५४
- आयुर्विश्वायुः परि पातु त्वा पूषा त्वा पातु प्रपथे पुरस्तात् ।
यत्रासते सुकृतो यत्र त इयुस्तत्र त्वा देवः सविता दधातु ५५
- इमौ युनज्मि ते वह्नी अस्तुनताय वोढवे ।
ताभ्यां यमस्य सादनं समितीश्चाव गच्छतात् ५६ २०८०
- एतत् त्वा वासः प्रथमं न्वागन्नपैतदूह यदिहाविमः पुरा ।
इष्टापूतमनुसंक्राम विद्वान् यत्र ते दत्तं बहुधा विबन्धुषु ५७
- अग्नेर्वर्म परि गोभिर्व्ययस्व सं प्रोर्णुष्व मेदसा पीवसा च ।
नेत् त्वा धृष्णुर्हरसा जर्हषाणो दधृग् विधक्षन् परीङ्खयातै ५८
- दण्डं हस्ताद्वाददानो गतासोः सह श्रोत्रेण वर्चसा बलेन ।
अत्रैव त्वमिह वयं सुवीरा विश्वा मृधो अभिमातीर्जयेम ५९
- धनुर्हस्ताद्वाददानो मृतस्य सह क्षत्रेण वर्चसा बलेन ।
समागृभाय वसु भूरि पृष्टमर्वाङ् त्वमेक्षुर्षु जीवलोकम् ६० २०८४

॥३०७॥ (अथर्व० १८।३।१, ३-४९, ५२, ५४, ५६, ५८-६६, ६८-७३) X

अथर्व। यमः; ४४, ४६ मन्त्रोक्ताः, ५-६ अग्निः; ५४ इन्द्रः, ५६ आपः (पितृमेघः) । अग्निष्टुप्; ४, ८, ११, २३
सतः पङ्क्तिः; ५ त्रिपदा निचृद्गायत्री; ६, ५६, ६८, ७०, ७२ अनुष्टुप् (५६ आर्षी); १८, २५-२९,
४४, ४६ जगती (१८ भुरिक्, २९ विराट्); ३० पञ्चपदाऽतिजगती; ३१ विराट् शकरी;
३२-३५, ४७, ४९, ५२ भुरिक्; ३६ एकावसानाऽऽसुर्यनुष्टुप्; ३७ एकाव-
सानाऽऽसुरी गायत्री; ३९ परा अग्निष्टुप् पङ्क्तिः; ५४ पुरोऽनुष्टुप्;
५८ विराट्; ६० त्र्यवसाना षट्पदा जगती;
६४ भुरिक् पञ्चापङ्क्तिः;
६९, ७१ उपरिष्टाद् बृहती ।

इयं नारीं पतिलोकं वृणाना नि पद्यत उप त्वा मर्त्यं प्रेतम् ।

धर्मं पुराणमनुपालयन्ती तस्यै प्रजां द्रविणं चेह धैहि

१ २०८५

अपश्यं युवतिं नीयमानां जीवां मृतेभ्यः परिणीयमानाम् ।

अन्धेन यत् तमसा प्रावृतासीत् प्राक्तो अपाचीमनयं तदेनाम्

३

प्रज्ञानत्यग्नये जीवलोकं देवानां पन्थामनुसंचरन्ती ।

अयं ते गोपतिस्तं जुषस्व स्वर्गं लोकमधि रोहयैनम्

४

उप द्यामुप वेतसमवत्तरो नदीनाम् । अग्रे पित्तमपामसि

५

यं त्वमग्रे समदेहस्तमु निर्वपया पुनः ।

क्याम्बूरत्र रोहतु शाण्डदूर्वा व्यल्कशा

६

इदं त एकं पर ऊं त एकं तृतीयेन ज्योतिषा सं विशस्व ।

संवशने तन्वाडे चारुरोधि प्रियो देवानां परमे सधस्थे

७ २०९०

उत् तिष्ठ प्रेहि प्र द्रवौकः कृणुष्व सलिले सधस्थे ।

तत्र त्वं पितृभिः संविदानः सं सोमेन मदस्व सं स्वधार्भिः

८

प्र च्यवस्व तन्वां१ सं भरस्व मा ते गात्रा वि हायि मो शरीरम् ।

मनो निर्विष्टमनुसंविशस्व यत्र भूर्मेजुपसे तत्र गच्छ

९

वर्चसा मां पितरः सोम्यासो अज्जन्तु देवा मधुना घृतेन ।

चक्षुषे मा प्रतरं तारयन्तो जरसे मा जरदष्टि वर्धन्तु

१०

वर्चसा मां समनक्त्वग्निर्मेधां मे विष्णुर्न्यनिक्त्वा सन् ।

रयि मे विश्वे नि यच्छन्तु देवाः स्योना मापः पवनैः पुनन्तु

११ २०९४

| | |
|--|--|
| मित्रावरुणा परि मामधातामादित्या मा स्वरवो वर्धयन्तु । वर्चो म इन्द्रो न्युनक्तु हस्तयोजरदष्टि मा सविता कृणोतु यो ममारं प्रथमो मर्त्यानां यः प्रेयार्थं प्रथमो लोकमेतम् । वैवस्वतं संगमनं जनानां यमं राजानं हविषा सपर्यत परा यात पितर आ च यातायं वो यज्ञो मधुना समक्तः । दत्तो अस्मभ्यं द्रविणेह भद्रं रथिं च नः सर्ववीरं दधात कण्वः कक्षीवान् पुरुमीढो अगस्त्यः श्यावाश्वः सोमैर्यर्चनानाः । विश्वामित्रोऽयं जमदैग्रिरत्रिरवन्तु नः कश्यपो वामदेवः विश्वामित्र जमदग्ने वसिष्ठ भरद्वाज गोतम वामदेव । शर्दिनो अत्रिरग्रभीन्नमोभिः सुसंशासः पितरो मृडता नः कस्ये मृजाना अति यन्ति रिप्रमायुर्दधानाः प्रतरं नवीयः । आप्यार्यमानाः प्रजया धनेनार्थं स्याम सुरभयो गृहेषु अञ्जते व्यञ्जिते समञ्जते क्रतुं रिहन्ति मधुनाभ्यञ्जिते । सिन्धोरुच्छवासे पतयन्तमुक्षणं हिरण्यपावाः पशुमांसु गृह्णते यद् वो मुद्रं पितरः सोम्यं च तेनो सचध्वं स्वयंशसो हि भूत । ते अर्वाणः कवय आ शृणोत सुविदुत्रा विदथे ह्ययमानाः ये अत्रयो अङ्गिरसो नवग्वा इष्टावन्तो रातिषाचो दधानाः । दक्षिणावन्तः सुक्रतो य उ स्यासद्यास्मिन् बर्हिषि मादयध्वम् अधा यथा नः पितरः परासः प्रत्तासो अग्र क्रतमांशशानाः । शुचीदयन् दीध्यत उक्थशासः क्षामा भिन्दन्तो अरुणीरपं व्रन् सुकर्माणः सुरुचो देवयन्तो अयो न देवा जनिमा धमन्तः । शुचन्तो अग्निं वावृधन्त इन्द्रमुर्वी गव्यां परिषदं नो अक्रन् आ यूथेव क्षुमति पश्वो अरुयद् देवानां जनिमान्त्युग्रः । मर्तासश्चिदुर्वशीरकृप्रन् वृधे चिदुर्य उपरस्यायोः अकर्म ते स्वर्पसो अभूम क्रतमवसन्नृषसो विभातीः । विश्वं तद् भद्रं यदवन्ति देवा बृहद् वंदेम विदथे सुवीराः इन्द्रो मा मरुत्वान् प्राच्या दिशः पातु बाहुच्युता पृथिवी द्यामिवोपरि । लोककृतः पथिकृतो यजामहे ये देवानां हुतभागा इह स्थ | १२ २०९५ १३ १४ १५ १६ १७ २१०० १८ १९ २० २१ २२ २१०५ २३ २४ २५ २१०८ |
|--|--|

- धाता मा निर्ऋत्या दक्षिणाया दिशः पातु बाहुच्युता पृथिवी धामिबोपरि ।
 लोककृतः पथिकृतो यजामहे ये देवानां हुतभागा इह स्थ २६
- अदितिर्मादित्यैः प्रतीच्या दिशः पातु बाहुच्युता पृथिवी धामिबोपरि ।
 लोककृतः पथिकृतो यजामहे ये देवानां हुतभागा इह स्थ २७ २११०
- सोमो मा विश्वैर्देवैरुदीच्या दिशः पातु बाहुच्युता पृथिवी धामिबोपरि ।
 लोककृतः पथिकृतो यजामहे ये देवानां हुतभागा इह स्थ २८
- धर्ता ह त्वा धरुणो धारयाता ऊर्ध्व भानुं सविता धामिबोपरि ।
 लोककृतः पथिकृतो यजामहे ये देवानां हुतभागा इह स्थ २९
- प्राच्यां त्वा दिशि पुरा संवृतः स्वधायामा दधामि बाहुच्युता पृथिवी धामिबोपरि ।
 लोककृतः पथिकृतो यजामहे ये देवानां हुतभागा इह स्थ ३०
- दक्षिणायां त्वा दिशि पुरा संवृतः स्वधायामा दधामि बाहुच्युता पृथिवी धामिबोपरि ।
 लोककृतः पथिकृतो यजामहे ये देवानां हुतभागा इह स्थ ३१
- प्रतीच्यां त्वा दिशि पुरा संवृतः स्वधायामा दधामि बाहुच्युता पृथिवी धामिबोपरि ।
 लोककृतः पथिकृतो यजामहे ये देवानां हुतभागा इह स्थ ३२ २११५
- उदीच्यां त्वा दिशि पुरा संवृतः स्वधायामा दधामि बाहुच्युता पृथिवी धामिबोपरि ।
 लोककृतः पथिकृतो यजामहे ये देवानां हुतभागा इह स्थ ३३
- ध्रुवायां त्वा दिशि पुरा संवृतः स्वधायामा दधामि बाहुच्युता पृथिवी धामिबोपरि ।
 लोककृतः पथिकृतो यजामहे ये देवानां हुतभागा इह स्थ ३४
- ऊर्ध्वायां त्वा दिशि पुरा संवृतः स्वधायामा दधामि बाहुच्युता पृथिवी धामिबोपरि ।
 लोककृतः पथिकृतो यजामहे ये देवानां हुतभागा इह स्थ ३५
- धर्तासि धरुणोऽसि वंसगोऽसि ॥३६॥ उदपूरसि मधुपूरसि वातपूरसि ३७ २१२०
 इतश्च मामुतश्चावतां यमे इव यतमाने यदैतम् ।
 प्र वां भरन् मानुषा देवयन्तो आ सीदतां स्वमु लोकं विदानि ३८
 स्वासस्थे भवतमिन्दवे नो युजे वां ब्रह्म पूर्य नमाभिः ।
 वि श्लोक एति पथ्ये वि सूरिः शृण्वन्तु विश्वे अमृतांस एतत् ३९
 श्रीणि पदानि रूपो अन्वरोहचतुष्पदीमन्वैतद् ब्रतेन ।
 अक्षरेण प्रति मिमीते अर्कमृतस्य नाभावमि सं पुनाति ४० २१२३

| | |
|--|---------|
| देवेभ्यः कर्मवृणीत मृत्युं प्रजायै किममृतं नावृणीत । | |
| बृहस्पतिर्यज्ञमृतनुत ऋषिः प्रियां यमस्तन्वमा रिरिच | ४१ |
| त्वमग्न ईडितो जातवेदोऽवाङ्मृष्यानि सुरभीणि कृत्वा । | |
| प्रादाः पितृभ्यः स्वधया ते अश्वनाद्वि त्वं देव प्रयता हवींषि | ४२ २१२५ |
| आसीनासो अरुणीनामुपस्थे रयिं धत्त दाशुषे मर्त्याय । | |
| पुत्रेभ्यः पितरस्तस्य वस्वः प्र यच्छत त इहोर्ज दधात | ४३ |
| अग्निष्वात्ताः पितर एह गच्छत सदःसदः सदत सुप्रणीतयः । | |
| असो हवींषि प्रयतानि बर्हिषि रयिं च नः सर्ववीरं दधात | ४४ |
| उपहृता नः पितरः सोम्यासो बर्हिष्येषु निधिषु प्रियेषु । | |
| त आ गमन्तु त इह श्रुवन्त्वधि ब्रुवन्तु तेऽवन्त्वस्मान् | ४५ |
| ये नः पितुः पितरो ये पितामहा अनूजहिरे सोमपीथं वसिष्ठाः । | |
| तेभिर्यमः संरराणो हवींष्यशन्नशङ्निः प्रतिकाममत्तु | ४६ |
| ये तातृषुर्देवत्रा जेहमाना होत्राविदुः स्तोमतष्टासो अर्कैः । | |
| आग्ने याहि सहस्रं देववन्दैः सत्यैः कविभिर्ऋषिभिर्धर्मसङ्निः | ४७ २१३० |
| ये सत्यासो हविरदो हविष्पा इन्द्रेण देवैः सरथं तुरेण । | |
| आग्ने याहि सुविदत्रैर्भिरवाङ् परैः पूर्वैर्ऋषिभिर्धर्मसङ्निः | ४८ |
| उप सर्प मातरं भूमिमेतामुरुन्यचसं पृथिवीं सुशेवाम् । | |
| ऊर्णम्रदाः पृथिवी दक्षिणावत एषा त्वा पातु प्रपथे पुरस्तात् | ४९ |
| उत् ते स्तभ्नामि पृथिवीं त्वत् परीमं लोगं निदधन्मो अहं रिषम् । | |
| एतां स्थूणां पितरो धारयन्ति ते तत्र यमः सादना ते कृणोतु | ५२ |
| अथर्वा पूर्णं चमसं यमिन्द्रायाविर्भवाजिनीवते । | |
| तस्मिन् कृणोति सुकृतस्य भक्षं तस्मिन्भिन्दुः पवते विश्वदानीम् | ५४ |
| पयस्वतीरोषधयः पयस्वन्मामकं पयः । | |
| अपां पयसो यत् पयस्तेन मा सह शुम्भतु | ५६ २१३५ |
| सं गच्छस्व पितृभिः सं यमेनेष्टापूतेन परमे व्योमिन् । | |
| द्वित्वावद्यं पुनरस्तमेहि सं गच्छतां तन्वा सुवर्चाः | ५८ |
| ये नः पितुः पितरो ये पितामहा य आविविशुरुर्वन्तरिक्षम् । | |
| तेभ्यः स्वराडसुनीतिर्नो अद्य यथावशं तन्वाः कल्पयाति | ५९ २१३७ |

शं ते नीहारो भवतु शं ते प्रुषाव शीयताम् ।

शीतिके शीतिकावति ह्लादिके ह्लादिकावति ।

मण्डुक्य१प्सु शं भुव इमं स्व१ग्निं शमय

६०

विवस्वान् नो अभयं कृणोतु यः सुत्रामा जीरदानुः सुदानुः ।

इहेमे वीरा बहवो भवन्तु गोमदश्चवन्मर्यस्तु पुष्टम्

६१

विवस्वान् नो अमृतत्वे दधातु परैतु मृत्युरमृतं न ऐतु ।

इमान् रक्षतु पुरुषाना जरिम्णो मो ष्वेषामसवो यमं गुः

६२ २१४०

यो दुध्रे अन्तरिक्षे न मद्वा पितृणां कविः प्रमतिर्मतीनाम् ।

तमर्चत विश्वमित्रा हविभिः स नो यमः प्रतरं जीवसे धातु

६३

आ रोहत दिवमुत्तमामृषयो मा बिभीतन ।

सोमपाः सोमपायिन इदं वः क्रियते हविरगन्म ज्योतिरुत्तमम्

६४

प्र केतुना बृहता भात्यग्निरा रोदसी वृषभो रौरवीति ।

दिवश्चिदन्तादुपमामुदानडपामुपस्थे महिषो ववर्ध

६५

नाके सुपर्णमुप यत् पतन्तं हुदा वेनन्तो अभ्यचक्षत त्वा ।

हिरण्यपक्षं वरुणस्य दूतं यमस्य योनौ शकुनं भुरण्युम्

६६

अपूपार्पितान् कुम्भान् यास्ते देवा आधारयन् ।

ते ते सन्तु स्वधावन्तो मधुमन्तो घृतश्रुतः

६८ २१४५

यास्ते धाना अनुकिरामि तिलमिश्राः स्वधावतीः ।

तास्ते सन्तु बिम्बीः प्रम्बीस्तास्ते यमो राजानु मन्यताम्

६९

पुनर्देहि वनस्पते य एष निर्हितस्त्वयि ।

यथा यमस्य सादन् आसातै विदथा वदन्

७०

आ रभस्व जातवेदस्तेजस्वद्भरो अस्तु ते ।

शरीरमस्य सं दुहाथैनं घेहि सुकृतामु लोके

७१

ये ते पूर्वे परागता अपरे पितरश्च ये ।

तेभ्यो घृतस्य कुल्यैति शतधारा व्युन्दती

७२

एतदा रोह वयं उन्मृजानः स्वा इह बृहदु दीदयन्ते ।

अभि ग्रेहि मध्यतो माप हास्थाः पितृणां लोकं प्रथमो यो अत्र

७३ २१५०

॥३०८॥ (अथर्व० १८।४।१-८९)+

अथर्वा । यमः, मन्त्रोक्ताः, ८१ पितरः, ८८ अग्निः, ८९ चन्द्रमाः । त्रिष्टुप्; १.४,७,१४,३६,६० भुरिक्; २,५,११
२९,५०-५१,५८ जगती; ३ पञ्चपदा भुरिगतिजगती; ६९,१३ पञ्चपदा शकरी (९ भुरिक्, १३ ज्यवसाना);
८ पञ्चपदाऽतिशकरी; १२ महाबृहती; १६-२४ त्रिपदा भुरिङ्महाबृहती; २६,३३,४३ उपरि-
ष्टाबृहती (२६ विराट्); २७ याजुषी गायत्री; २५,३१-३२,३८,४१-४२,५५-५७,५९,६१
अनुष्टुप् (५६ ककुम्मती); ३९,६२-६३ आस्तारपङ्क्तिः; (३९ पुरोविराट्,
६२ भुरिक्, ६३ स्वराट्); ४९ अनुष्टुप्गर्भा त्रिष्टुप्; ५३ पुरोविराट् सतः
पङ्क्तिः; ६६ त्रिपदा स्वराट् गायत्री; ६७ द्विपदाऽऽचर्यनुष्टुप्;
६८,७१ आसुर्यनुष्टुप्, ७२-७४,७९ आसुरी पङ्क्तिः; ७५
आसुरी गायत्री; ७६ आसुर्युष्णिक्; ७७ दैवी जगती;
७८ आसुरी त्रिष्टुप्; ८० आसुरी जगती; ८१ प्राजा-
पत्याऽनुष्टुप्; ८२ साम्नी बृहती; ८३-८४ साम्नी
त्रिष्टुप्; ८५ आसुरी बृहती; (६७-६८,७१-८६
एकावसाना); ८६-८७ चतुष्पदा उष्णिक्;
(८६ ककुम्मती, ८७ शंकुमती);
८८ ज्यवसाना पथ्यापङ्क्तिः; ८९ पञ्चपदा पथ्यापङ्क्तिः ।

आ रोह॒त॒ ज॒नि॒त्रीं ज॒त॒वे॒द॒सः पि॒त॒या॒णैः सं व॒ आ रो॒ह॒या॒मि ।

अवा॒द्द॒व्ये॒षि॒तो ह॒व्य॒वाह॑ ई॒जानं॑ यु॒क्ताः सु॒कृता॑ ध॒त्त लो॒के १

दे॒वा य॒ज्ञमु॒तवः॑ क॒ल्प॒यन्ति॑ ह॒विः पु॒रोडा॑शं सु॒चो य॑ज्ञा॒यु॒धानि॑ ।

तेभि॑र्याहि प॒थिभि॑र्दे॒व॒यानै॑र्यैरी॒जानाः॑ स्व॒र्गं य॒न्ति लो॒कम् २

ऋ॒तस्य॑ प॒न्था॒मनु॑ प॒श्य सा॒ध्वङ्गि॑र॒सः सु॒कृ॒तो येन॑ य॒न्ति ।

तेभि॑र्याहि प॒थिभिः॑ स्व॒र्गं य॒त्रादि॒त्या मधु॑ भ॒क्षय॑न्ति तृती॒ये ना॒के अ॒धि वि श्र॑यस्व३

त्रयः॑ सु॒पर्णा॑ उप॒रस्य॑ मा॒यू ना॒कस्य॑ पृ॒ष्ठे अ॒धि वि॒ष्टपि॑ श्रि॒ताः ।

स्व॒र्गा लो॒का अ॒मृते॑न वि॒ष्टा इष॑मूर्जे॒ यज॑मानाय दु॒हाम् ४

जुह॑र्दा॒धार द्या॒मृप॑भृद॒न्तरि॑क्षं ध्रु॒वा दा॑धार पृथि॒वीं प्र॑ति॒ष्ठाम् ।

प्र॒तीमां॑ लो॒का घृ॒तपृ॑ष्ठाः स्व॒र्गाः का॒मैका॑मं॒ यज॑मानाय दु॒हाम् ५ २१५५

ध्रु॒व आ रो॒ह पृथि॑वीं वि॒श्वभो॑ज॒सम॑न्त॒रि॒क्षमृ॑पभृ॒दा क्र॑मस्व ।

जुहु॑ धां गच्छ॒ यज॑मानेन सा॒कं सु॒वेण॑ व॒त्सेन॑ दि॒शः प्र॑पी॒नाः सर्वा॑ ध्रु॒क्वाह॑णीयमानः ६

तीर्थै॑स्तेर॒न्ति प्र॒वतो॑ म॒हीरि॑ति॒ यज्ञ॑कृतः सु॒कृ॒तो येन॑ य॒न्ति ।

अ॒त्राद॑ध्रु॒यज॑मानाय लो॒कं दि॒शो भू॒तानि॑ यद॒कल्प॑यन्त

७ २१५७

अङ्गिरसामयनं पूर्वीं अग्निरादित्यानामयनं गार्हपत्यो दक्षिणानामयनं दक्षिणाग्निः ।

महिमानमग्नेर्विहितस्य ब्रह्मणा समङ्गः सर्वं उप याहि शम्भः ८

पूर्वीं अग्निष्ठां तपतु शं पुरस्ताच्छं पश्चात् तपतु गार्हपत्यः ।

दक्षिणाग्निष्टे तपतु शर्म वर्मोत्तरतो मध्यतो अन्तरिक्षाद् दिशोदिशो

अग्ने परि पाहि घोरात् ९

यूयमग्ने शतं माभिस्तनूभिरीजानमभि लोकं स्वर्गम् ।

अश्वा भूत्वा पृष्टिवाहो बहाथ यत्र देवैः संधमादुं मदन्ति १० २१६०

शमग्ने पश्चात् तप शं पुरस्ताच्छमृत्तराच्छमधरात् तपैनम् ।

एकस्त्रेधा विहितो जातवेदः सम्यगेनं धेहि सुकृतांस्तु लोके ११

शमग्रयः समिद्धा आ रभन्तां प्राजापत्यं मेध्यं जातवेदसः ।

शृतं कृण्वन्त इह माव चिक्षिपन् १२

यज्ञ एति विततः कल्पमान ईजानमभि लोकं स्वर्गम् ।

तमग्रयः सर्वहुतं जुषन्तां प्राजापत्यं मेध्यं जातवेदसः ।

शृतं कृण्वन्त इह माव चिक्षिपन् १३

ईजानश्चितमारुक्षदग्निं नाकस्य पृष्ठाद् दिवमुत् पतिष्यन् ।

तस्मै प्र भाति नभसो ज्योतिषीमान्स्वर्गः पन्थाः सुकृते देवयानः १४

अग्निर्होताध्वर्युष्टे बृहस्पतिरिन्द्रो ब्रह्मा दक्षिणतस्ते अस्तु ।

हुतोऽयं संस्थितो यज्ञ एति यत्र पूर्वमयनं हुतानाम् १५ २१६५

अपूपवान् क्षीरवांश्चरुह सीदतु ।

लोककृतः पथिकृतो यजामहे ये देवानां हुतभागा इह स्थ १६

अपूपवान् दधिवांश्चरुह सीदतु । लोककृतः पथिकृतो यजामहे ये० १७

अपूपवान् द्रव्यवांश्चरुह सीदतु । लोककृतः पथिकृतो यजामहे ये० १८

अपूपवान् घृतवांश्चरुह सीदतु । लोककृतः पथिकृतो यजामहे ये० १९

अपूपवान् मांसवांश्चरुह सीदतु । लोककृतः पथिकृतो यजामहे ये० २० २१७०

अपूपवान् भवांश्चरुह सीदतु । लोककृतः पथिकृतो यजामहे ये० २१

अपूपवान् मधुमांश्चरुह सीदतु । लोककृतः पथिकृतो यजामहे ये० २२

अपूपवान् रसवांश्चरुह सीदतु । लोककृतः पथिकृतो यजामहे ये० २३

अपूपवान् पवांश्चरुह सीदतु । लोककृतः पथिकृतो यजामहे ये० २४ २१७४

| | |
|--|---------|
| अपूपार्पिहितान् कुम्भान् यांस्ते देवा अधारयन् । | |
| ते ते सन्तु स्वधावन्तो मधुमन्तो घृतश्रुतः | २५ ११७५ |
| यास्ते धाना अनुकिरामि तिलमिश्राः स्वधावतीः । | |
| तास्ते सन्तुदुग्धीः प्रग्धीस्तास्ते यमो राजानु मन्यताम् | २६ |
| अक्षितिं भूर्यसीम् | २७ |
| द्रुप्तसर्धस्कन्द पृथिवीमनु घामिमं च योनिमनु यश्च पूर्वं । | |
| समानं बोनिमनु संचरन्तं द्रुप्तं जुहोम्यनु सप्त होत्राः | २८ |
| शतधारं वायुमर्कं स्वर्विदं नृचक्षसस्ते अभि चक्षते रयिम् । | |
| ये पुणान्ति प्र च यच्छन्ति सर्वदा ते दुहते दक्षिणां सप्तमातरम् | २९ |
| कोशं दुहन्ति कलशं चतुर्विलमिडां धेनुं मधुमतीं स्वस्तये । | |
| ऊर्जे मदन्तीमदिति जनेष्वग्रे मा हिंसीः परमे व्योमिन् | ३० ११८० |
| एतत् ते देवः सविता वासो ददाति भर्तवे । | |
| तत् त्वं यमस्य राज्ये वासानस्ताप्यं चर | ३१ |
| धाना धेनुरभवद् वत्सो अस्यास्तिलं ऽभवत् । | |
| तां वै यमस्य राज्ये अक्षितामुप जीवति | ३२ |
| एतास्ते असौ धेनवः कामदुधा भवन्तु । | |
| एनीः श्येनीः सरूपा विरूपास्तिलवत्सा उप तिष्ठन्तु त्वात्र | ३३ |
| एनीर्धाना हरिणीः श्येनीरस्य कृष्णा धाना रोहिणीर्धेनवस्ते । | |
| तिलवत्सा ऊर्जमस्मै दुहाना विश्वाहा सन्त्वनपस्फुरन्तीः | ३४ |
| वैश्वानरे हविरिदं जुहोमि साहस्रं शतधारमुत्सम् । | |
| स बिभर्ति पितरं पितामहान् प्रपितामहान् बिभर्ति पिन्वमानः | ३५ ११८५ |
| सहस्रधारं शतधारमुत्समक्षितं व्यच्यमानं सलिलस्यं पृष्ठे । | |
| ऊर्जे दुहानमनपस्फुरन्तमुपासते पितरः स्वधाभिः | ३६ |
| इदं कसाम्बु चर्यनेन चितं तत् संजाता अव पश्यतेत । | |
| मर्त्योऽयममृतत्वमेति तस्मै गृहान् कृणुत यावत्सर्वन्धु | ३७ |
| इहैवैधि धनसन्निहिदचित्त इहकृतुः । इहैधि वीर्यवित्तरो वयोधा अपराहतः | ३८ |
| पुत्रं पौत्रमभितर्पयन्तीरापो मधुमतीरिमाः । | |
| स्वधां पितृभ्यो अपृतुं दुहाना आपो देवीरुभयांस्तर्पयन्तु | ३९ ११८९ |

| | |
|---|---------|
| आपो अग्निं प्र हिणुत पितॄरुपेमं यज्ञं पितरो मे जुषन्ताम् । | |
| आसीनामूर्जमुप ये सचन्ते ते नो रयिं सर्ववीरं नि यच्छान् | ४० ११९० |
| समिन्धते अमर्त्यं हव्यवाहं घृतप्रियम् । स वेद निहिताभिधीन् पितॄन् परावतो गतान् ४१ | |
| यं ते मन्थं यमोदुनं यन्मांसं निपृणामि ते । ते ते सन्तु स्वधावन्तो मधुमन्तो घृतश्रुतः ४२ | |
| यास्ते धाना अनुकिरामि तिलमिश्राः स्वधावतीः । | |
| तास्ते सन्तुदुग्धीः प्रग्धीस्तास्ते यमो राजानु मन्यताम् | ४३ |
| इदं पूर्वमपरं नियानं येनां ते पूर्वं पितरः परेताः । | |
| पुरोगवा ये अभिशार्चो अस्य ते त्वा वहन्ति सुकृताश्च लोकम् | ४४ |
| सरस्वतीं देवयन्तो हवन्ते सरस्वतीमध्वरे तायमाने । | |
| सरस्वतीं सुकृतो हवन्ते सरस्वती दाशुषे वार्यं दातु | ४५ ११९५ |
| सरस्वतीं पितरो हवन्ते दक्षिणा यज्ञमभिनक्षमाणाः । | |
| आसद्यास्मिन् बर्हिषि मादयध्वमनमीवा इष आ धेह्यसे | ४६ |
| सरस्वति या सरथं ययाथोकथैः स्वधाभिर्देवि पितृभिर्मदन्ती । | |
| सहस्रार्धमिडो अत्र भागं रायस्पोषं यजमानाय धेहि | ४७ |
| पृथिवीं त्वा पृथिव्यामा वेशयामि देवो नो धाता प्र तिरात्यायुः । | |
| परापरेता वसुविद् वो अस्त्वधा मृताः पितृषु सं भवन्तु | ४८ |
| आ प्र च्यवेथामप तन्मृजेथां यद् वामभिभा अत्रोचुः । | |
| अस्मादेतमघ्न्यौ तद् वशीयो दातुः पितृष्विहभोजनौ मम | ४९ |
| मयमगन् दक्षिणा भद्रतो नो अनेन दत्ता सुदुर्घा वयोधाः । | |
| यौवने जीवानुपपृञ्चती जरा पितृभ्य उपसंपराणयादिमान् | ५० ११०० |
| इदं पितृभ्यः प्र भेरामि बर्हिर्जीवं देवेभ्य उत्तरं स्तृणामि । | |
| तदा रोह पुरुष मेध्यो भवन् प्रति त्वा जानन्तु पितरः परेतम् | ५१ |
| एदं बर्हिरसदो मेध्योऽभूः प्रति त्वा जानन्तु पितरः परेतम् । | |
| यथापरु तन्वंशं सं भरस्व गात्राणि ते ब्रह्मणा कल्पयामि | ५२ |
| पर्णो राजापिधानं चरूणामूर्जो बलं सह ओजो न आगन् । | |
| आयुर्जीवेभ्यो विदधद् दीर्घायुत्वाय शतशारदाय | ५३ |
| ऊर्जो भागो य इमं जजानाश्मान्नानामाधिपत्यं जगाम । | |
| तमर्चेत विश्वमित्रा हविर्भिः स नो यमः प्रतरं जीवसे धातु | ५४ ११०४ |

| | |
|--|---------|
| यथा यमाय हर्म्यमवपन् पञ्च मानवाः । | |
| एवा वपामि हर्म्यं यथा मे भूरयोऽसंत | ५५ २२०५ |
| इदं हिरण्यं बिभृहि यत् ते पिताविभः पुरा । | |
| स्वर्गं यतः पितुर्हस्तं निर्मृङ्क्षु दक्षिणम् | ५६ |
| ये च जीवा ये च मृता ये जाता ये च यज्ञियाः । | |
| तेभ्यो घृतस्य कुल्यैर्तु मधुधारा व्युन्दती | ५७ |
| वृषा मतीनां पवते विचक्षणः सरो अह्नां प्रतरीतोषसां दिवः । | |
| प्राणः सिन्धूनां कलशो अचिक्रदुदिन्द्रस्य हार्दिमाविशन् मनीषया | ५८ |
| त्वेषस्ते धूम ऊर्णोतु दिवि पञ्चलुक्र आततः । | |
| सरो न हि द्युता त्वं कृपा पावक रोचसे | ५९ |
| प्र वा एतीन्दुरिन्द्रस्य निष्कृतिं सखा सख्युर्न प्र भिनाति संगिरः । | |
| मयै इव योषाः समर्षसे सोमः कलशे शतयामना पथा | ६० २२१० |
| अक्षन्मीमदन्त द्यवं प्रियां अधूषत । अस्तोषत स्वभानवो विप्रा यविष्ठा ईमहे | ६१ |
| आ यात पितरः सोम्यासौ गम्भीरैः पथिभिः पितृयाणैः । | |
| आयुस्मभ्यं दधतः प्रजां च रायश्च पोषैरभि नः सचध्वम् | ६२ |
| परा यात पितरः सोम्यासौ गम्भीरैः पथिभिः पूर्याणैः । | |
| अघा मासि पुनरा यात नो गुहान् हविरत्तु सुप्रजसः सुवीराः | ६३ |
| यद् वो अग्निरजहादेकमङ्गं पितृलोकं गमयं जातवेदाः । | |
| तद् व एतत् पुनरा प्याययामि साङ्गाः स्वर्गे पितरो मादयध्वम् | ६४ |
| अभूद् दूतः प्रहितो जातवेदाः सायं न्यह्म उपवन्द्यो नृभिः । | |
| प्रादाः पितृभ्यः स्वधया ते अक्षन्नद्धि त्वं देव प्रयता हवींषि | ६५ २२१५ |
| असौ हा इह ते मनः ककुत्सलमिव जामयः । अम्येनि भूम ऊर्णुहि | ६६ |
| शुम्भन्तां लोकाः पितृषदना पितृषदने त्वा लोक आ सादयामि | ६७ |
| येऽस्माकं पितरस्तेषां बहिरीसि ॥६८॥ उदुत्तमं वरुण०+ | ६९ |
| प्रास्मत् पाशान् वरुण मुञ्च सर्वान् यैः संमामे बध्यते गैर्व्यामे । | |
| अथा जीवेम शूरदै शतानि त्वया राजन् गुपिता रक्षमाणाः | ७० |
| अग्नये कव्यवाहनाय स्वधा नमः ॥७१॥ सोमाय पितृमते स्वधा नमः | ७२ २२२२ |

| | |
|---|---------|
| पितृभ्यः सोमवद्भ्यः स्वधा नमः ॥७३॥ यमाय पितृमते स्वधा नमः | ७४ |
| एतत् ते प्रततामह स्वधा ये च त्वामनु | ७५ ११२५ |
| एतत् ते ततामह स्वधा ये च त्वामनु | ७६ |
| एतत् ते तत स्वधा ॥७७॥ स्वधा पितृभ्यः पृथिविषद्भ्यः | ७८ |
| स्वधा पितृभ्यो अन्तरिक्षसद्भ्यः ॥७९॥ स्वधा पितृभ्यो दिविषद्भ्यः | ८० १११० |
| नमो वः पितर ऊर्जे नमो वः पितरो रसाय | ८१ |
| नमो वः पितरो भामाय नमो वः पितरो मन्यवे | ८२ |
| नमो वः पितरो यद् घोरं तस्मै नमो वः पितरो यत् क्रूरं तस्मै | ८३ |
| नमो वः पितरो यच्छिवं तस्मै नमो वः पितरो यत् स्योनं तस्मै | ८४ |
| नमो वः पितरः स्वधा वः पितरः | ८५ ११३५ |
| येऽत्र पितरः पितरो येऽत्र यूयं स्थ युष्माँस्तेऽनु यूयं तेषां श्रेष्ठा भूयास्थ | ८६ |
| य इह पितरो जीवा इह वयं स्मः । अस्माँस्तेऽनु वयं तेषां श्रेष्ठा भूयास्म | ८७ |
| आ त्वाम इधीमहि द्युमन्तै देवाजरम् । | |
| यद् घ सा ते पनीयसी समिद् दीदयति धर्वि । इषं स्तोतृभ्य आ भर | ८८ |
| चन्द्रमा अस्व१न्तरा सुप१र्णो धावते दिवि । | |
| न वो हिरण्यनेमयः पदं विन्दन्ति विद्युतो वित्तं मे अस्य रोदसी | ८९ |

॥३०९॥ (ऋ० ८।३।१-४)

मनुर्वैवस्वतः । यज्ञः, यजमानश्च । गायत्री ।

| | |
|--|--------|
| यो यजाति यजात इत् सुनवच्च पचाति च । ब्रह्मेदिन्द्रस्य चाकनत् | १ ११४० |
| पुरोळाशं यो अस्मै सोमं ररत आशिरम् । पादित् तं शक्रो अंहसः | २ |
| तस्य द्युमाँ अंसद् रथो देवजूतः स शशुवत् । विश्वा वन्वन्नमित्रिया | ३ |
| अस्य प्रजावती गृहे ऽसश्चन्ती दिवेर्दिवे । इळा धेनुमती दुहे | ४ |

॥३१०॥ (ऋ० १०।१८३।१-२)

प्रजावान् प्राजापत्यः । १ यजमानः; २ यजमानपत्नी । त्रिष्टुप् ।

| | |
|--|--------|
| अपश्यं त्वा मनसा चेकितानं तपसो जातं तपसो विभूतम् । | |
| इह प्रजामिह रयि रराणः प्र जायस्व प्रजया पुत्रकाम | १ |
| अपश्यं त्वा मनसा दीघ्यानां स्वायां तनू ऋत्वे नाधमानाम् । | |
| उप मामुष्वा युवतिर्बभूयाः प्र जायस्व प्रजया पुत्रकामे | २ ११४५ |

॥३११॥ (अथर्व० ७।९७।१-८) [यज्ञः ।] +

॥३१२॥ (अथर्व० १९।१।१-३)

ब्रह्मा । यज्ञः, चन्द्रमाश्च । १-२ पथ्याबृहती, ३ पङ्क्तिः ।

सं सं स्रवन्तु नद्यः१ सं वाताः सं पतत्रिणः ।

यज्ञमिमं वर्धयता गिरः संस्त्राव्येण हविषा जुहोमि १

इमं होमा यज्ञमवतेमं संस्त्रावणा उत ।

यज्ञमिमं वर्धयता गिरः संस्त्राव्येण हविषा जुहोमि २

रूपंरूपं वयोवयः संरभ्यैनं परिं ष्वजे ।

यज्ञमिमं चतस्रः प्रदिशो वर्धयन्तु संस्त्राव्येण हविषा जुहोमि ३

॥३१३॥ (अथर्व० १९।५८।१-६)

ब्रह्मा । यज्ञः, बहुदैवत्यम् । त्रिष्टुप्, २ पुरोऽनुष्टुप्, ३ चतुष्पदाऽतिशकरी, ५ भूरिक् ।

धृतस्य जूतिः समेना सदेवा संवत्सरं हविषा वर्धयन्ती ।

श्रोत्रं चक्षुः प्राणोच्छिन्नो नो अस्त्वच्छिन्ना वयमायुषो वर्चसः १

उपास्मान् प्राणो ह्ययताम्युप वयं प्राणं हवामहे ।

वर्चो जग्राह पृथिव्यन्तरिक्षं वर्चः सोमो बृहस्पतिर्विधत्ता २ ११५०

वर्चसो द्यावापृथिवी संग्रहणी बभूवथुर्वर्चो गृहीत्वा पृथिवीमनु सं चरेम ।

यशसं गावो गोपतिमुप तिष्ठन्त्यायतीर्यशो गृहीत्वा पृथिवीमनु सं चरेम ३

व्रजं कृणुध्वं स हि वो नृपाणो वर्मा सीव्यध्वं बहुला पृथूनि ।

पुरः कृणुध्वमार्यसीरृष्टा मा वः सुस्रोचमसो दैहता तम् ४

यज्ञस्य चक्षुः प्रभृतिर्मुखं च वाचा श्रोत्रेण मनसा जुहोमि ।

इमं यज्ञं विततं विश्वकर्मणा देवा यन्तु सुमनस्यमानाः ५

ये देवानामुत्विजो ये च यज्ञिया येभ्यो हव्यं क्रियते भागधेयम् ।

इमं यज्ञं सह पत्नीभिरेत्य यावन्तो देवास्तविषा मादयन्ताम् ६

॥३१४॥ (अथर्व० १९।५९।२)*

ब्रह्मा । अग्निः (यज्ञः) । त्रिष्टुप् ।

यद् वो वयं प्रमिनाम व्रतानि विदुषां देवा अविदुष्टरासः ।

अग्निष्टद् विश्वादा पृणातु विद्वान्तसोमस्य यो ब्राह्मणां आविवेश २ १२५५

॥३१५॥ (अथर्व० ७।९९।१)

अथर्वा । वेदी । भुरिक् त्रिष्टुप् ।

परि स्तृणीहि परि धेहि वेदि मा जामि मौषीरमुया शयानाम् ।

होतृषदंनं हरितं हिरण्ययं निष्का एते यजमानस्य लोके

१

॥३१६॥ (ऋ० १।३६।१३-१४)

कण्वो घौरः । (अग्निः) यूपः । प्रगाथः [विषमा बृहती+समा सतोबृहती] (१३ उपरिष्टाद्बृहती ।

ऐ. प्रा. २।२ चरणच्छेदः) ।

ऊर्ध्व ऊ षु णं ऊतये तिष्ठा देवो न संविता ।

ऊर्ध्वो वाजस्य सनिता यदञ्जिभिर्वाघद्विर्विह्वयामहे

१३

ऊर्ध्वो नः पाह्यंसो नि केतुना विश्वं समन्त्रिणं दह ।

कृधी न ऊर्ध्वाश्चरथाय जीवसे विदा देवेषु नो दुवः

१४

॥३१७॥ (ऋ० ३।८।१-१०)

गाथिनो विश्वामित्रः । यूपः, ६-१० यूपाः, ८ विश्वे देवा वा । त्रिष्टुप्, १, ७ अनुष्टुप् ।

अञ्जन्ति त्वामध्वरे देवयन्तो वनस्पते मधुना दैव्येन ।

यदूर्ध्वस्तिष्ठा द्रविणेह धत्ताद् यद् वा क्षयो मातुरस्या उपस्थे

१

समिद्धस्य श्रयमाणः पुरस्ताद् ब्रह्म वन्वानो अजरं सुवीरम् ।

आरे अस्मदमर्ति बाधमान उच्छ्रयस्व महते सौमगाय

२ १२६०

उच्छ्रयस्व वनस्पते वर्ष्मन् पृथिव्या अर्धि ।

सुमिती मीयमानो वर्चो धा यज्ञवाहसे

३

युवा सुवासाः परिवीत आगात् स उ श्रेयान् भवति जायमानः ।

तं घीरांसः कुवय उन्नयन्ति स्वाध्योऽ मनसा देवयन्तः

४

जातो जायते सुदिनत्वे अह्नां समर्य आ विदथे वर्धमानः ।

पुनन्ति घीरा अपसो मनीषा देव्या विप्र उर्दियति वाचम्

५

यान् वो नरो देवयन्तो निमिम्युर्वनस्पते स्वधितिर्वा ततक्ष ।

ते देवासः स्वरवस्तस्थिवांसः प्रजावदुस्मे दिधिषन्तु रत्नम्

६

ये वृक्णासो अधि क्षमि निर्मितासो यतस्तुचः ।

ते नो व्यन्तु वार्य देवत्रा क्षेत्रसाधंसः

७

आदित्या रुद्रा वसवः सुनीथा द्यावाक्षामा पृथिवी अन्तरिक्षम् ।

सुजोषसो यज्ञमवन्तु देवा ऊर्ध्वं कृण्वन्त्वध्वरस्य केतुम्

८ १२६६

॥३२१॥ (अथर्व० ७।९८।१)

अथर्वा । इन्द्रः, विश्वे देवाः (हविः) । विराद् त्रिष्टुप् ।

सं बृहिरिक्तं हविषा धृतेन समिन्द्रेण वसुना सं मरुद्भिः ।

सं देवैर्विश्वदेवेभिरुक्तमिन्द्रं गच्छतु हविः स्वाहा

१

॥३२२॥ (ऋ० १०।१३।१-५)

आग्निर्हविर्धानः विवस्वानादित्यो वा । हविर्धाने× । त्रिष्टुप्, ५ जगती ।

युजे वां ब्रह्म पूर्य नमोभिर्वि श्लोकं एतु पृथयेव सुरैः ।

शृण्वन्तु विश्वे अमृतस्य पुत्रा आ ये धामानि दिव्यानि तस्थुः

१ १२७५

यमे इव यतमाने यदैतं प्र वां भरन् मानुषा देवयन्तः ।

आ सीदतं स्वर्गं लोकं विदानि स्वासस्थे भवतुमिन्द्रवे नः

२

पञ्च पदानि रूपो अन्वरोहं चतुष्पदीमन्वेमि ब्रतेन ।

अक्षरेण प्रति मिम एतामृतस्य नाभावधि सं पुनामि

३

देवेभ्यः कर्मवृणीत मृत्युं प्रजायै कमृतं नावृणीत ।

बृहस्पतिं यज्ञमकृण्वत ऋषिं प्रियां यमस्तन्वं प्रारिरेचीत्

४

सप्त क्षरन्ति शिशवे मरुत्वन्ते पित्रे पुत्रासो अप्यवीवतमृतम् ।

उमे इदस्योभयस्य राजत उमे यतते उभयस्य पुण्यतः

५

॥३२३॥ (ऋ० १।२८।५-८)

आजीगतिः शुनःशेपः स कृत्रिमो वैश्वामित्रो देवरातः । ५-६ उलूखलं, ७-८ उलूखलमुसले ।

५-६ अनुष्टुप्, ७-८ गायत्री ।

यश्चिद्धि त्वं गृहेगृह उलूखलक युज्यसे ।

इह द्युमत्तमं वदु जयतामिव दुन्दुभिः

५ १२८०

उत स्म ते वनस्पते वातो वि वात्यग्रमित् ।

अथो इन्द्राय पातवे सुनु सोममुलूखल

६

आयजी वाजसार्तमा ता ह्युच्चा विजर्भतः । हरी इवान्धांसि बप्सता

७

ता नो अद्य वनस्पती ऋष्यावृष्वेभिः सोतृभिः । इन्द्राय मधुमत् सुतम्

८

॥३२४॥ (ऋ० ७।१०४।१७)

मैत्रावरुणिवृत्तिष्ठः । प्रावाणः । त्रिष्टुप् ।

प्र या जिगाति खर्गलेव नक्तमप द्रुहा तन्वं गृहमाना ।

वव्राँ अनन्ताँ अव सा पदीष्ट प्रावाणो भन्तु रक्षसं उपब्दैः

१७ १२८४

॥११५॥ (अ० १०।७६।१-८)

सर्पं पेरावतो जरत्कर्णः । प्राघाणः । जगती ।

| | |
|--|--------|
| आ वं ऋञ्जस ऊर्जा व्युष्टि—ष्विन्द्रं मरुतो रोदसी अनक्तन । | |
| उभे यथा नो अहनी सचाभुवा सदैःसदो वरिवस्यात उन्निदां | १ ११८१ |
| तदु श्रेष्ठं सर्वनं सुनोतना—ऽत्यो न हस्तयतो अद्रिः सोतरिं । | |
| विदद्वय्यो अभिभूति पौंस्यं महो राये चित् तरुते यदर्वतः | २ |
| तदिद्वयस्य सर्वनं विवेरपो यथा पुरा मनवे गातुमश्नेत् । | |
| गोअर्णसि त्वाष्ट्रे अश्वनिर्णिजि प्रेमध्वरेष्वध्वराँ अशिश्रयुः | ३ |
| अपं हत रक्षसो भङ्गुरावतः स्कभायत निर्ऋतिं सेधतामतिम् । | |
| आ नो रयि सर्ववीरं सुनोतन देवाव्यं भरत श्लोकमद्रयः | ४ |
| दिवश्चिदा वोऽमवत्तरेभ्यो विभ्वनां चिदाश्वपस्तरेभ्यः । | |
| वायोश्चिदा सोमरभस्तरेभ्यो ऽग्नेश्चिदर्व पितुकृत्तरेभ्यः | ५ |
| मुरन्तु नो यशसः सोत्वन्धसो प्रावाणो वाचा दिवितां दिविर्त्मता । | |
| नरो यत्र दुहते काम्यं मध्वा—घोषयन्तो अभितो मिथस्तुरः | ६ ११९० |
| सुन्वन्ति सोमं रथिरासो अद्रयो निरस्य रसं गविषो दुहन्ति ते । | |
| दुहन्त्यूर्ध्वरूपसेचनाय कं नरो हव्या न मर्जयन्त आसभिः | ७ |
| एते नरः स्वर्पसो अभूतन य इन्द्राय सुनुथ सोममद्रयः । | |
| वामं वामं वो दिव्याय धाम्ने वसुवसु वः पार्थिवाय सुन्वते | ८ |

॥१२६॥ (अ० १०।९४।१-१४)

अर्बुदः काद्रवेयः सर्पः । प्राघाणः । जगतीः ५, ७, १४ त्रिष्टुप् ।

| | |
|---|--------|
| प्रैते वदन्तु प्र वयं वदाम प्रावभ्यो वाचं वदता वदद्भ्यः । | |
| यदद्वयः पर्वताः साकमाशवः श्लोकं घोषं भरथेन्द्राय सोमिनः | १ |
| एते वदन्ति शतवत् सहस्रव—दुभि क्रन्दन्ति हरितेभिरासभिः । | |
| विष्टी प्रावाणः सुकृतः सुकृत्यया होतुंश्चित् पूर्वं हविरद्यमाशत | २ |
| एते वदन्त्यविदन्नना मधु न्यूङ्खयन्ते अर्धि पक्क आमिषि । | |
| वृक्षस्य शाखामरुणस्य वप्सत—स्ते स्रभर्वा वृषभाः प्रेमराविषुः | ३ |
| बृहद् वदन्ति मदिरेण मन्दिने—न्द्रं क्रोशन्तोऽविदन्नना मधु । | |
| संरभ्या वीराः स्वसुभिरनर्तिषु—राघोषयन्तः पृथिवीमुपब्दिभिः | ४ १२९६ |

| | |
|---|---------|
| सुपर्णा वाचमक्रतोप धव्या—खरे कृष्णा इषिरा अनर्तिषुः । | |
| न्यङ्गि यन्त्युपरस्य निष्कृतं पुरु रेतो दधिरे सूर्यश्चितः | ५ |
| उग्रा इव प्रवहन्तः समायसुः साकं युक्ता वृषणो विभ्रतो धुरः । | |
| यच्छ्वसन्तो जग्रसाना अराविषुः शृण्व एषां प्रोथथो अर्वतामिव | ६ |
| दशावनिभ्यो दशक्षयेभ्यो दशयोक्त्रेभ्यो दशयोजनेभ्यः । | |
| दशमीशुभ्यो अर्चताजरेभ्यो दश धुरो दश युक्ता वहन्मूधः | ७ |
| ते अद्रयो दशयन्त्रास आश्वस्तेषामाधानं पर्येति हर्यतम् । | |
| त ऊं सुतस्य सोम्यस्यान्धसो—ऽशोः पीयूषं प्रथमस्य भेजिरे | ८ १३०० |
| ते सोमादो हरी इन्द्रस्य निसर्तं—ऽशुं दुहन्तो अध्यासते गर्वि । | |
| तेभिर्दुग्धं पपिवान्तसोम्यं मन्विन्द्रो वर्धते प्रथते वृषायते | ९ |
| वृषा वो अंशुर्न किला रिषाधने—लावन्तः सदमित् स्थनाशिताः । | |
| रैवत्येव महसा चारवः स्थन् यस्य ग्रावाणो अजुषध्वमध्वरम् | १० |
| तुदिला अतृदिलासो अद्रयो ऽश्रमणा अशृथिता अमृत्यवः । | |
| अनातुरा अजराः स्थामविष्णवः सुपीवसो अतृपिता अतृणजः | ११ |
| ध्रुवा एव वः पितरो युगेयुगे क्षेमकामासः सदसो न युञ्जते । | |
| अजुर्यासो हरिपाचो हरिद्रव आ द्यां रवेण पृथिवीमशुश्रुवुः | १२ |
| तदिद् वेदुन्यद्रयो विमोचने यामन्नञ्जस्पा इव घेदुपन्दिभिः । | |
| वर्पन्तो बीजमिव धान्याकृतः पृश्चन्ति सोमं न मिनन्ति वप्सतः | १३ १३०५ |
| मुते अध्वरे अधि वाचमक्रता—ऽऽ क्रीळयो न मातरं तुदन्तः । | |
| वि वृ मुञ्चा सुपुवुषो मनीषां वि वर्तन्तामद्रयश्चायमानाः | १४ |

॥३२७॥ (क्र० १०।१७५।१-४)

ऊर्ध्वग्रावा सर्प आर्धुदिः । ग्रावाणः । गायत्री ।

| | |
|--|--------|
| प्र वो ग्रावाणः सविता देवः सुवतु धर्मणा । धूर्षु युज्यध्वं सुनुत | १ |
| ग्रावाणो अप दुच्छुना—मप सेधत दुर्मतिम् । उस्ताः कर्तन भेषजम् | २ |
| ग्रावाण उपरेष्वा महीयन्ते सजोषसः । वृष्णे दधतो वृष्ण्यम् | ३ |
| ग्रावाणः सविता नु वो देवः सुवतु धर्मणा । यजमानाय सुन्वते | ४ १३१० |

॥३२८॥ (ऋ० १०।११।७।१-९)

मिक्षुराङ्गिरसः । धनाश्वानम् । त्रिष्टुप्, १-२ जगती ।

- न वा उ देवाः क्षुधमिद्धं ददु-रुताशितमुप गच्छन्ति मृत्यवः ।
 उतो रयिः पृणतो नोप दस्य-त्युतापृणन् मर्दितारं न विन्दते १
 य आधाय चक्रमानाय पित्वो ऽश्वान्तसन् रफितायौपजग्मुषे ।
 स्थिरं मनः कृणुते सेवते पुरो-तो चित् स मर्दितारं न विन्दते २
 स इन्द्रो जो यो गृहवे ददा-त्यन्नकामाय चरते कुशाय ।
 अरमस्मै भवति यामहूता उतापरीषु कृणुते सखायम् ३
 न स सखा यो न ददाति सख्ये सचाश्वे सचमानाय पित्वः ।
 अपास्मात् प्रेयान्न तदोक्तो अस्ति पृणन्तमन्यमरणं चिदिच्छेत् ४
 पूर्णीयादिन्नार्धमानाय तव्यान् द्राघीयांसमनु पश्येत् पन्थाम् ।
 ओ हि वर्तन्ते रथ्येव चक्रा ऽन्यमन्यमुप तिष्ठन्त रायः ५ १३१५
 मोषमन्नं विन्दते अप्रचेताः सत्यं ब्रवीमि वध इत् स तस्य ।
 नार्यमणं पुष्यति नो सखायं केवलाघो भवति केवलादी ६
 कुषन्ति फाल आशितं कृणोति यन्नध्वानमप वृङ्क्ते चरित्रैः ।
 वदन् ब्रह्मावदतो वनीयान् पृणन्नापिरपृणन्तमभिष्यात् ७
 एकपाद् भूयो द्विपादो वि चक्रमे द्विपात् त्रिपादमभ्येति पश्चात् ।
 चतुष्पादेति द्विपदामभिस्वरे संपश्यन् पङ्क्तीरुपतिष्ठमानः ८
 समौ चिद्वस्तौ न समं विविष्टः संमातरां चिन्न समं दुहाते ।
 यमयोश्चिन्न समा वीर्याणि ज्ञाती चित् सन्तौ न समं पृणीतः ९

॥३२९॥ (अथर्व० ३।१४।१-३)

ब्रह्मा । गोष्ठः, अहः, २ अर्यमा, पूषा, बृहस्पतिः, इन्द्रः, १-६ गावः, ५ गोष्ठश्च ।

अनुष्टुप्, ६ आर्षी त्रिष्टुप् ।

- सं वो गोष्ठेन सुषदा सं रय्या सं सुभृत्या ।
 अहर्जातस्य यन्नाम तेना वः सं सृजामसि १ १३२०
 सं वः सृजत्वर्थमा सं पूषा सं बृहस्पतिः ।
 समिन्द्रो यो धनंजयो मयि पुष्यत यद् वसु २
 संजग्माना अविभ्युषीरस्मिन् गोष्ठे करीषिणीः ।
 विभ्रंतीः सौम्यं मध्वनमीवा उपेतन ३ १३२१

परि धत्त धत्त नो वर्धसेमं जुरामृत्युं कृणुत दीर्घमायुः ।

बृहस्पतिः प्रार्यच्छद् वास एतत् सोमाय रात्रे परिधातुवा उं

२

परीदं वासो अधिथाः स्वस्तयेऽभूर्गृहीनामभिश्चस्तिपा उं ।

शतं च जीवं शरदः पुरुची रायश्च पोषंष्टुपसंध्ययस्व

३

एषश्मानमा तिष्ठाश्मां भवतु ते तनूः ।

कृण्वन्तु विश्वे देवा आयुष्टे शरदः शतम्

४

यस्य ते वासः प्रथमवास्थं१ हरामुस्तं त्वा विश्वेऽवन्तु देवाः ।

तं त्वा भ्रातरः सुवृधा वर्धमानमनु जायन्तां बहवः सुजातम्

५ २३३५

॥३३४॥ (ऋ० १०।८।५।३१)

सावित्री सूर्या ऋषिका । दम्पत्योर्यक्षमनाशनम् । अनुष्टुप् ।

ये वृष्वक्षन्द्रं बहंतु यक्ष्मा यन्ति जनादनु ।

पुनस्तान् यज्ञियां देवा नयन्तु यत् आगताः

३१

॥३३५॥ (ऋ० १०।१५।१।४)

शिरिम्बिठो भारद्वाजः । अलक्ष्मीघ्नम् । अनुष्टुप् ।

अरायि काणे विकटे गिरिं गच्छ सदान्वे ।

शिरिम्बिठस्य सत्त्वमि—स्तेभिर्घ्ना चातयामसि

१

यद्वा प्राचीरजगन्तो—रो मण्डूरधाणिकीः ।

इता इन्द्रस्य शत्रवः सर्वे बुधुदयोश्चवः

४

॥३३६॥ (ऋ० १०।१४।४।६)

इन्द्राणी । सपत्नीबाधनम् (उपनिषत्) । ४ अनुष्टुप्, ६ पङ्क्तिः ।

नक्षस्या नामं गुह्णामि नो अस्मिन् रमते जने ।

परमेव परावर्तं सपत्नीं गमयामसि

४

उप तेऽधां सहमाना—मभि त्वाधां सहीयसा ।

मामनु प्र ते मनो वृत्सं गौरिव धावतु पथा वारिव धावतु

६

॥३३७॥ (ऋ० १०।१६।१।५)

ऋषभो वैराजः, ऋषभः शाकरो वा । सपत्नघ्नम् । अनुष्टुप्, ५ महापङ्क्तिः ।

ऋषभं मां समानानां सपत्नानां विषासहिम् ।

हन्तारं शत्रूणां कृधि विराजं गोपतिं गवाम्

१ २३४१

अ॒हमस्मि स॒पत्न॒हे—न्द्रं इ॒वारि॒ष्टो अक्ष॑तः ।

अ॒धः स॒पत्ना॑ मे प॒दो—रिमे सर्वे॑ अ॒भिष्टि॑ताः

२

अत्रै॒व वोऽपि॑ न॒ह्या—म्युमे आ॒र्त्नी इ॒व उ॒यया॑ ।

वाच॑स्पते॒ नि वे॒धेमा॒न् यथा॑ म॒दध॑रं॒ वदा॑न्

३

अ॒भिभू॑र॒हमा॒गमं॑ वि॒श्वक॑र्मेण॒ धाम्ना॑ ।

आ व॑ञ्चि॒त्तमा॑ वो॒ व्रत॑—मा वोऽहं॑ स॒मिति॑ ददे

४

यो॒ग॒क्षेमं॑ व॒ आ॒दाया॑—ऽहं भू॒यास॑मु॒त्तम॑ आ वो॑ मु॒र्धान॑म॒क्रमी॑म् ।

अ॒ध॒स्पदा॑न्म॒ उद॑दत॒ म॒ण्डूका॑ इ॒वोद॑का—न्म॒ण्डूका॑ उ॒दुका॑दिव

५ २३४५

इत्यायुर्वेद-प्रकरणं समाप्तम् ।

दैवतसंहितायां आयुर्वेद-प्रकरणस्य उपमा-सूची ।

अंशुः इव अथ. ५, २९, १२; ७४९ आ प्यायतां अयम् ।
 अंशुगः शिशुकः यथा अथ. ६, १४, ३; ४८५ निर्बलासः प्रपत ।
 अग्निः इव अथ. २, २५, ४; ४१९ तान् अनुदहन् इहि ।
 अग्निः इव अथ. ५, १४, १३; १६०३ एतु प्रतिकूलम् ।
 अग्निः इव अथ. ५, २२, २; ५३२ अभिदुन्वन् । उच्छोचयन् ।
 अग्निः वने न अ. १८, १, ३९; २००५ व्यसृष्ट शोकम् ।
 (यथा) अग्निः वृक्षान् अ. १०, ३, १४; १४६६ एवा सपत्नान् ।
 अग्निं इव अ. ८, २, ४; ३० जातं अग्निं सं धमामि ।
 अग्नेः इव अ. ७, ४५, २; ६८६ अस्य दहतः दावस्य पृथक् ।
 अग्नेः इव अ. ८, ७, १५; ३३८ विजन्त आभृताभ्यः ।
 अग्नेः इव अ. ६, २०, १; १७९ अस्य दहतः एति शुष्मिणः ।
 (यथा यशः) अग्निहोत्रे अ. १०, ३, २२; १४७४ एवा मणिः ।
 (यथा) अध्या नीचीनं दुहे अ. ६, ९१, २; २०० न्यग् भवतु ते रपः ।
 अजः पाः इव ऋ. १०, ९४, १३; २३०५ अत्रयः यामन् तद् इद् ।
 अत्रिवात् अ. ५, २३, १०; ७०५ क्रिमयः हन्मि ।
 अधि ज्यामिव धन्वनि अ. ४, ४, ७; १३३८ अहं ते पसः
 अ. ६, १०१, २; १३४५ आतनोमि ।
 अत्यः न ऋ. १०, ७६, २; २२८६ अग्निः हस्तयतः सोतरि ।
 अध्वर्यवः घर्मिणः सिष्वि० ऋ. ७ १०३, ८; १००१ मण्डूकाः गुह्याः ।
 अनड्वान् जगतामिव अ. ८, ५, ११; १४४१ उत्तमा ओष-
 , , अ. १९, ३९, ४; ४५० धानाम् ।
 अनड्वाहौ इव व्रजम् अ. ३, ११, ५; ७६ प्रविशतं प्राणापानौ ।
 अ. ७, ५३, ५; १४७
 अनस्वती इव वाहिनी अ. १०, १, १५; १६३० तेनाभि ग्राहि भजती ।
 अनुकूलं इव उदकम् अ. ५, १४, १३; १६०३ वर्ततां कृत्या ।
 (यथा) अभिचक्रं देवाः अ. ३, ९, १; १७९७ तथाप कृणुता पुनः ।
 (यथा स्म ते विरोहतः) अभि तप्तं अ. ४, ४, ३; १३३४ शुष्मवत्तरं ।
 अघ्रात् इव वृष्टयः ऋ. १०, ७५, ३; १०३८ सिन्धुः एति ।
 अघ्रातर इव जामयः अ. १, १७, १; ५५५ हिराः हतवर्चसः तिष्ठन्तु
 (यथा) अमृतं देवेषु अ. १०, ३, २५; १४७७ एवा मणिः ।
 अयः न अ. १८, ३, २२; २१०५ देवाः जनिमा धमन्तः ।

दै०[आयुर्वेद०] २३

अर्वतां इव ऋ. १०, ९४, ६; २२९८ एषां गेथथः गृध्वे ।
 अर्वतीः इव अ. १०, ४, २१; ८२८ नयामि ।
 अवध्वमः इव अ. ५, २२, ३; ५३३ अरणः ।
 अवसृष्टः न पाशैः वा. य. २०, ४५; ३७२ स्मन्या समञ्जः ।
 अश्रेष्माणः आधारयन् अ. ३, ९, २; ७९८ तथा तत् मनुना ।
 अश्वः इव अ. १०, १, १९; ६३४ वि वर्तताम् ।
 अश्व इव अ. १९, ५७, ४; १९१६ कायम् ।
 अश्व इव अ. १९, ५७, ४; १९१६ नीनाहम् ।
 अश्व इव नडम् अ. १२, २, ५०; २६६ अग्निः आन्तकात् अनुवपते ।
 अश्वं इव अश्वामिधान्या अ. ५, १४, ६; १५९६ ता तस्मै नयाम से ।
 अश्वः इव ऋ. १०, ९७, ३; ३०३ बरुधः सजित्वरीः ।
 (सृगाः) अश्वः इव अ. १९, ३८, २; २०३ विष्वक् यक्ष्मा ईरते ।
 अश्वः न ऋ. १०, ७५, ७; १०४२ चित्रः सिन्धुः ।
 (विषिते हासमाने) अश्वे इव ऋ. ३, ३३, १; १०२२ पर्वतानां ।
 (यथा) ऽसितः प्रथयते अ. ६, ७२, १; १३४० एवा ते अङ्गेन ।
 (इषुम्) अस्ता इव अ. १२, १४, ३; १५५३ अपेतो जङ्घिडामतिं
 (यथा) अहानि अनुपूर्वम् अ. १२, २, २५; २४१ एवा आशि
 (यथा) अह्ना रात्री समवती अ. ४, १८, १; ३८८ तथा ऋणोमि
 अह्ना इव सूर्यः ऋ. ६, ६१, २; १०६७ ऋताक्वी अन्याः स्वसूः
 (यथा यशः) आदित्ये अ. १०, ३, १८ १४७० एवा मणिः कीर्ति
 आपः मलं इव अ. २, ७, १; ६६८ सर्वान् शपथान् अधि ।
 (पक्षे) आमिषे अधि ऋ. १०, ९४, ३; २२९५ सूभर्वाः वृषभाः
 आर्त्ता इव ज्यया अ. १, १, ३; १४१७ इहैव उर्भा अभि वि तनु ।
 आर्त्ता इव ज्यया ऋ. १०, १६६, ३; २३४२ अत्रैव व. अपि ।
 इष्टः इव अ. ६, १४, ३; ४८५ हायन, उप द्राहि ।
 इन्द्र इव विहजं बलम् अ. १९, २८, ३; १५१५ हृदः सपत्नानां
 इन्द्रः इव ऋ. १, १६६, २; २३४२ अहं अक्षत अस्मि ।
 इन्द्रः इव अ. ४, ५, ७; ६१९ अहं अरिष्टः अक्षितः ।
 इन्द्रः इव दस्यून् असुगन् अ. १० ३ ११; १४६३ मे शत्रून् ।
 इन्द्र इन्द्रियाणि इव अ. १, ३५, ३; ६१ दक्षमाणः हिरण्यं भिन्नत ।

इन्द्रं न वृत्रतुर्ये धने हिते ऋ. ६, ६१, ५; १०६३ यः त्वा उप ब्रूते
(धन्वन्) इरा इव अ. ५, १३, १; ८३४ ते विषं नि जजास ।
इषाकां इव अ. ७, ५६, ४; ८५५ तानि त्वं सं नमः ।
(यथा) इषुका परापतदव सृष्टा अ. १, ३, ९; ५७९ एवा ते मूत्रं ।
इलावन्तः इव ऋ. १०, ९४, १०; २३०२ सदमित् आशिताः ।
(मध्यमशीः) उग्रः इव अ. ४, ९, ४; ५८३ ततः यक्षं विबाधसे ।
उग्राः इव प्रवहन्तः ऋ. १०, ९४, ६; २२९७ ग्रावाणः समाययुः ।
(यथा) उदकं अपपुषः अ. ६, १३९, ४; ६८० एवा नि शुष्य ।
उदप्रुतमिव दारु अ. १०, ४, ३-४; ८१०-११ अरसं विषं उग्रम् ।
उद्गा अग्निं इव अ. ७, ४५, २; ६८६ ईर्ष्यां शमय ।
उर्वरीः इव साधुया अ. १०, ४, २१; ८२८ ओषधीनां अहं वृणे ।
(यथा) ऋणं सं नयन्ति अ. १९, ५७, १; १९१३ एवा दुष्कण्यं
अ. ६, ४६, ३; ६३५ अप्रिये ।
ऋणात् ऋणं इव अ. १९, ४५, १; ५९२; संनयन् कृत्यां ।
(यथा) ऋतवः ऋतुभिः अ. १२, २, २५; २४१ एवा धातः ।
ऋषिणा इव मर्नषिणा अ. ८, ५, ८; १४३८ स्वाक्येन मणिना ।
(वारणी) एणी इव अ. ५, १४, ११; १६०१ कृत्या कर्तारं उत् ।
ककुत्सलमिव जामयः अ. १८, ४, ६६; २२१६ अभि एनं भूम ।
कक्ष्या युक्तं इव ऋ. १०, १०, १३; १९६६ त्वां अन्या परि ।
कण्ववत् अ. ५, २३, १०; ७०६ किमयः हन्मि ।
कन्या इव तुज्ञा अ. ६, २२, ३; ९६७ एजाति ग्लहा ।
(मर्याय इव) कन्या ऋ. ३, ३३, १०; १०३१ शश्वचै ते ।
(यथा यशः) कन्यायाम् अ. १०, ३, २०; १४७२ एवा मणिः ।
कापिः इव अ. ४, ३७, ११; ७२५ एकः गन्धर्वः ।
(यथा) कलां संनयन्ति अ. १९, ५७, १; १९१३ एवा सर्व
अ. ६, ४६, ३; ६३५ अप्रिये ।
कुमारः सर्वकेशकः इव अ. ४, ३७, ११; ७२५ एकः गन्धर्वः ।
(उदकं) कुम्भिनीः इव ऋ. १, १९१, १४; ७८७ मयूर्यः ते विषं ।
कशः इव रोहितम् अ. ४, ४, ७; १३३८ अनवगलायता सदा ।
अ. ६, १०१, ३; १३४५ ।
क्रीलयः न मातरम् ऋ. १०, ९४, १४; २३०६ सुतं अश्वरे अधि ।
क्रीबा इव अ. ८, ६, ११; १३७८ वने प्रनृत्यन्तः ।
खर्गलाः इव ऋ. ७, १०४, १७; २२८४ या नक्तं प्राजिगाति ।
(दृषदां) खल्वान् इव अ. २, ३१, १; ६९१ सं पिनाष्मि क्रिमीन् ।
(दृषदा) खल्वान् इव अ. ५, २३, ८; ७०३ मष्मषा नि आकरम् ।
गवां अह न मायुः ऋ. ७, १०३, २; ९९५ मण्डूकानां वग्नुः ।

(मुष्काबर्हो) गवामिव अ. ३, ९, २; १७९८ कृणोमि वध्नि ।
गां उक्षणमिव रज्ज्वा अ. ३, ११, ८; ७९ अभि त्वा ।
गावः गोघ्रात् इव ऋ. १०, ९७, ८; ३०८ ओषधीनां शुष्माः ।
(रिहाणा मातरा शुभ्रे) गावा ऋ. ३, ३३, १; १०२२ पर्वतानां ।
गावो न हव्या ऋ. १, १८७, ११; १११८ हे पितो वचोभिः ।
गोषु युधः न ऋ. १०, ३०, १०; ९१० नियवं चरन्तीः ।
गोष्ठामिव अ. २, १४, ६; १६५३ आसां धामानि परि असरन्
(वत्सं) गौः इव ऋ. १०, १४५, ६; २३४० ते मनः मां अनु ।
" " अ. ३, १८, ६; ३६९ मामनु ते मनः प्र धावतु ।
(स्पन्दना) गौः स्थालीं अ. ८, ६, १७; १३८३ पाण्यो पदा ।
(अचित्ते) ग्रामं इव अ. ४, ७, ५; ८०२ वचसा परि स्थाप० ।
घर्म इव अभितपन् अ. १९, २८, ३; १५१५ द्विषतो नितपन् मणे ।
चतुष्पदामिव च्छदिः अ. ३, ७, ३; १९४ अदो यदवरोचते ।
(यथा यशः) चन्द्रमसि अ. १०, ३, १८; १४७० मणिः कीर्तिं भूतिं ।
(येषन्तं) चरमिव अ. ४, ७, ४; ८०१ वचसा परि स्थापयामसि ।
छायां इव अ. ८, ६, ८; १३७४ प्र तान् सूर्यः अनीनशत् ।
(रात्री) जगत् इव अ. ६, १२, १; ८४६ हंसात् अन्यत् विषं ।
जनं इव शेवधिम् अ. ५, २२, ४; ५४४ त्वमानं परि ददासि ।
जमदग्निवत् अ. ५, २३, १०; ७०५ किमयः हन्मि ।
जयतां इव दुन्दुभिः ऋ. १, २८, ५; २२८० छुमतमं वद ।
(यथा यशः) जातवेदसि अ. १०, ३, १९; १४७१ एवा मणिः कीर्तिं
जाया पतिं इव अ. १८, २, ५१; २०७५ वाससा अभ्येनं ।
(पत्या नुशा) जाया इव अ. १०, १, ३; १६१८ शद्रकृता कर्तार
जाया इव पत्ये ऋ. १०, १०, ७; १९६० अहं तन्वं वि रिरिच्याम् ।
जालेन अभिहिता इव अ. १०, १, ३०; १६४५ तमसा आश्रुताः ।
(यथा) जीवाः अदितेः उपस्थे अ. २, २८, ४, ४ त्वां पिता गुपिता ।
(यथा) जीवगृभः अ. १०, ९७, ११; ३११ तथा यक्षमस्य आत्मा ।
ज्यामिव धन्वनः अ. ५, १३, ६; ८३९ मन्योः विमुञ्चामि ।
(यथा) समं ज्योतिः सूर्येण अ. ४, १८, १; ३८८ तथा कृणोमि ।
ज्योतिषा इव अ. ४, १९, ३; ३९८ अभि दीपयन् अग्रमेषि ।
तक्मन्वी इव अ. ५, २२, ७; ५३७ तां धूनुहि ।
तम इव अ. ८, २, १२; ३८ सर्वं दुर्भूतं अपहन्मसि ।
तमस इव ज्योतिः अ. ५, १३, ३; ८३६ उदेतु सूर्यः ।
(प्रदोषं) तस्काराः इव ऋ. १, १९१, ५; ७७८ अदृष्टाः विद्वदृष्टाः ।
(यथैव) तृप्यते मयः अ. १९, २, ५; ९३२ तास्त आदत्त भेषजीः ।

(यथा) तेज आहितम् अ. १०,३,१७ १४६९ एवा मणिः कीर्ति
(यथा अन्तस्तिष्ठति) तेजनम् अ. १,२,४; ६६७ एवा रोमं च ।
(उद्यन्) त्वचमिव भूम्याः अ. १९,२८,४; १५१६ शिर एषां ।
दिवि देवाः इव अ. ६,८०,२; १५८९ त्रयः कालकाज्जाः त्रिताः ।
दिवो वृक्षमिवाशनि अ. ६,३७,२; १७७४ शतारं अत्र नो जहि ।
दुहिता इव पितरम् अ. १०,१,२६; १६४१ जानीहि कृत्ये ।
इति न शुष्कम् ऋ. ७,१०३,२; ९९५ आपः शयानं एनम् ।
इति (इव) सुरावतो ऋ. १,१२१,१०; ७८३ सूर्यं विषम् ।
(निरूष्माणं) इतोरेव अ. ६,१८,३; ६८४ ते ईर्ष्यां सुधामि ।
दशः इव अ. ४,३७,११; ७२५ प्रियः भूत्वा ।
देवः न सविता ऋ. १,३६,१३; २२५७ (यूप), ऊर्ध्वः तिष्ठ ।
देवा इव असुरमायया अ. ३,९,४; १८०० येन श्रवस्यवः चरथा
यां इव उपरि अ. १८,३,२९; २११२ ऊर्ध्वं भानुं सविता ।
" | अ. १८,३,२५-२८, ३०-३५; २१०८-
११, २११३-१८ बाहुच्युता पृथिवी
(परि) यां इव सूर्यः अ. ६,१२,१; ८४६ अहीनां जनिमागमम् ।
(इमे) यावापृथिवी वि इतः अ. ३,३१,४; १७१ अहं सर्वेण ।
यौः इव अ. ६,१४२,२; ११२५ तत् उच्छ्रयस्व ।
द्रुपदादिव सुसुचानः वा. य. २०,२०; ११०५ आपः मा एनसः ।
" " अ. ६,११५,३; १७२९ आपः शुन्धन्तु ।
धनपालः धना इव अ. १९,३५,२; १५६२ स नो रक्षतु जज्ञिडः ।
धनुः इव अ. ६,१०१,२; १३४४ आ तानय पसः ।
" " अ. ४,४,६; १३३७ " "
(यथा) नकुलः विच्छिद्य अ. ६,१३९,५; ६८१ एवा कामस्य
नडं इव अ. ४,१९,१; ३९६ प्रजां छिन्धि वार्षिकम् ।
(यथा) नडं काशिपुने स्त्रियो अ. ६,१३८,५; ५०२ एवा भिनयि
नडाः इव अ. ६,१३७,२-३; ४६४-६५ केशाः वर्धन्ताम् ।
नदी केनमिवा वहत् अ. १,८,१; ७२७ इदं हविः यातुधानान् ।
नावा इव अ. ४,३३,७; १७६२ द्विषो नो अति पारय ।
निष्कमिव अ. ५,१४,३; १५९३ कृत्यां देवाः प्रति मुञ्चत ।
(यथा) पतन्ति पक्षिणः अ. १,११,६; १४१० एवा त्वं जरायुणा
पत्या इव जाया अ. ६,२२,३; ९६७ एहं तुन्दाना ।
पथ्या इव सूरिः अ. १८,३,३९; २१२२ वि श्लोक एति ।
(सूरेः) पथ्या इव ऋ. १०,१३,१; २२७५ श्लोकः एतु ।
पन्थानः दिशं दिशं वि अ. ३,३१,४; १७१ अहं सर्वेण ।
पयसा इव धेनवः ऋ. १०,७५,४; १०३९ त्वां वाश्याः अर्षन्ति ।

(यथा यशः) परमेष्ठिनि अ. १०,३,२४; १४७६ एवा मणिः कीर्ति
(इष्वाः) पर्ण इव ऋ. १०,१८,१४; १९५३ मां प्रतीचानि ।
(सरौ) पर्ण इव अ. ५,२५,२; १३४६ शेषो गर्भस्य रेतोधाः ।
(पूतं) पवित्रेण इव | वा. य. २०,२०; ११०५ आपः शुन्धन्तु ।
आज्यं | अ. ६,११५, ३; १७१९
पिता इव पुत्रान् अ. २,१३,१; २३३१ अभिरक्षतात् इमम् ।
पितरं न पुत्रः ऋ. ७,१०३,३; ९९६ अन्यः अन्यं (मण्डूकं) ।
पियाहः निष्कमिव अ. १९,५५,५; १९१७ देवपीयुः प्रति ।
पुत्र इव पितरम् अ. ५,१४,१०; १६०० कृत्ये गच्छ ।
(यथा) पुत्रं जनादिति अ. ६,८१,३; १३६१ त्वष्टा तं अस्यै ।
(यथा न) पूर्वं अपरः जहाति अ. १२,२,२५; २४१ एवा धातः ।
पूषा इव ऋ. ६,६१,६; १०६४ नः सनिं रद ।
(यथेयं) पृथिवी गर्भं आ दधे अ. ५,२५,२; १३४७ एवा दधामि
" " अ. ६,१७,१-४; १३६२-६५ एवा तं ।
(यथा यशः) पृथिव्याम् अ. १०,३,१९; १४७१ एवा मणिः ।
पौञ्छिष्ठ इव कर्वरम् अ. १०,४,१९; ८२६ शीर्षाणि अग्रभम् ।
(यथा यशः) प्रजापतौ अ. १०,३,२४; १४७६ एवा मणिः कीर्ति
बन्धमिव अ. ५,१४,१०; १६०० अवकामी ।
(यथा) बाणः सुसंशितः अ. ६,१०५,२; ४८७ एवा त्वं कासे ।
बिसखा इव ऋ. ६,६१,२; १०६० ऊर्मिभिः गिरीणां सानु ।
(वपन्तः धान्यकृतः) बीजम् ऋ. १०,९४,१३; २३०५ प्रावाणः ।
(यथा) बीजं उर्वराया अ. १०,६,३३; १५१० एवा मयि प्रजा ।
ब्राह्मणा इव व्रतचारिणः ऋ. ७,१०३,१; ९९४ मण्डूकाः वाचं ।
ब्राह्मणासः अतिरात्रे न सोमे ऋ. ७,१०३,७; १००० मण्डूकाः ।
भग इव यामेषु अ. ६,२१,२; ४५८ भेषजानां श्रेष्ठं असि ।
(इदं) भुवनं विश्वं वि अ. ३,३१,५; १७२ अहं सर्वेण पाप्मना ।
(यथा) भूमिः मृतमनाः अ. ६,१८,२; ६८३ एवा ईर्ष्याः ।
मण्डूकाः उदकात् इव ऋ. १०,१६६,५; २३४५ मे पदान् अधः
मत्तः इव अ. ६,२०,१; १७९ विलपन् ।
मधुपर्कं यथा यशः अ. १०,३,२१; १४७३ एवा मणिः ।
(उग्रः) मध्यमशीः इव ऋ. १०,९७,१२; ३१२ ओषधीः यश्मं ।
(यथा) मनः (पतति) अ. १,११,६; १४१० एवा त्वं जरायुणा ।
यथा मनः मनस्कैतैः परा अ. ६,१०५,१; ४८६ एवा कासे प्रपत ।
(यथा पुरा) मनवे गातुम् ऋ. १०,७६,३; २२८७ तद्वत् व्याप्नोतु ।
मनसः न प्रयुक्ति ऋ. १०,३०,१; ९०१ सोमः देवत्रा अपः ।
(यथा) मञ्जुवो मनः अ. ६,१८,२; ६८३ एवा ईर्ष्यां मृतं मनः ।

मर्यः न कृत्याणीभिः ऋ. १०, ३०, ५; २०५ याभिः सोमः ।
 मर्य इव योषाः अ. १८, ४, १०; २२१० सोमः शतयामना ।
 माता इव अ. २, २८, ५; ५ अस्मै शर्म यच्छ ।
 माता इव पुत्रम् अ. २, २८, १; १ मित्रः एवं पातुं हसः ।
 (सं)मातरः इव अ. ८, ७, २७; ३५० पुष्पवतीः दुहामस्या ।
 (उशनी इव) मतरः ऋ. १०, ९, २; ८८० तस्य भाजयत इह नः
 (स) मातरा चित् न ऋ. १०, ११७, ९; २३१९ ज्ञाती चित् ।
 माता पुत्रं यथा अ. १८, २, ५०; २०७४ अभ्येनं भूम ऊर्णुहि ।
 (यथा) माता पुत्रं सिचा ऋ. १०, १८, ११; १२५० एनं हे भूमे
 माता इव पुत्रम् वा. य. १२, ३५; ११०० सुपत्नीः बिभ्रत ।
 माता इव पुत्रेभ्यः अ. ६, ३०, ३; ४७२ शमि केशेभ्यः मृड ।
 मुष्करं यथा अ. ६, १४, २; ४८४ बलासं निः क्षिणोमि ।
 मूलमुर्गवा इव अ. ६, १४, २; ४८४ छिनाद्यि अस्य बन्धनम् ।
 मृगं इव अ. ५, १४, १२; १६०२ तं कृत्याकृतं पुनः गृह्णातु ।
 मृगी इव अ. ५, १४, ११; १६०१ कृत्या कर्तारं उद् ऋच्छतु ।
 यथा यमस्य गृहे त्वा अ. ६, २९, ३; १५८७ तथा आभूकम् ।
 यथा यमस्य सादन अ. १८, ३, ७०; २१४७ पुनर्देहि वनस्पते ।
 यथा यमाय हर्म्य अ. १८, ४, ५५; २२०५ एवा वपामि ।
 यमे इव ऋ. १०, १३, २; २२७६ युवां यतमने यदा एतम् ।
 अ. १८, ३, ३८; २१२१ ।
 यथा यशः यजमाने अ. १०, ३, २३; १४७५ एवा मणिः कीर्ति ।
 यथा यशः यज्ञे अ. १०, ३, २३; १४७५ एवा मणिः कीर्ति ।
 युवयोः चित् न समा ऋ. १०, ११७, ९; २३१९ तथा ज्ञाती चित् ।
 यूथा इव सुमति पश्वः अ. १८, ३, २३; २१०६ उग्रः देव ना ।
 पीप्यान यं षा इव ऋ. ३, ३३, १०; १०३१ वयं ते नि नंसै ।
 (सुखः) रथः इव अ. ५, १४, ५; १५९५ कृत्या कृत्याकृतं ।
 अ. ५, १४, १३; १६०३ ।
 रथः इव ऋ. ६, ६१, ३; १०७१ बृहती विभ्वने कृता ।
 (यथा सुचक्र सुपावि. रथः अ. ४, १२, ६; ४२६ तथा प्रति ।
 (आशवः) रथाः इव अ. ३, ९, ५; १८०१ शपथेभिः उत् ।
 रथान् इव अ. ५, १३, ६. ८३९ सात्रास हस्य मन्योः वि मुन्नामि ।
 (ऋभुः) रथस्य अगानि इव अ. ४, १२, ७; ४२७ परुषा परुः ।
 रथस्य इव अ. १०, १, ८; १६९३ यस्ते परंषि संदधौ ।
 (यथा यशः) रथे अ. १०, ३, २०; १४७२ एवा मणिः ।
 रथी इव ऋ. ५, ८३, ३; ९७६ कशया अश्वान् अभिशिपन् ।
 रथ्या इव ऋ. ३, ३३, २; १०२३ युवां समुद्रं अच्छा याथः ।

(प्रबाबधाना) रथ्या इव ऋ. ७, ९५, १; १०७३ अप. प्रबाबधाना ।
 रथ्या इव चक्रा ऋ. १०, ११७, ५; २३१५ रायः आ वर्तन्ते ।
 " ऋ. १०, १०, ७ १९६० [आवां] वि बृहेव चित् ।
 ,, ऋ. १०, १०, ८ १९६१ तेन अन्येन वि बृह ।
 राजा इव युष्वा ऋ. १०, ७५, ४; १०३९ त्वमित् सिचौ नयसि ।
 राजानः समितौ इव ऋ. १०, ९७, ६; ३०६ ओषधीः सममत् ।
 रिश्यस्य इव पराशिसम् अ. ५, १४, ३; १५२३ त्वचः परि ।
 रैवत्या इव ऋ. १०, ९४, १०; २३०२ महसा चारतः स्थन ।
 लिबुजा वृक्षं इव ऋ. १०, १०, १३; १९६६ त्यां अन्या ।
 ,, ,, ऋ. १०, १०, १४; १९६७ अन्यः त्वां ।
 वत्सो धारुरिव मातरम् अ. ४, १८, २; ३८९ त प्रत्यगुप पयताम् ।
 वत्समिव मातरा संरिहाणे ऋ. ३, ३३, ३; १०२४ युवां अया०
 वधूं इव वहतौ अ. १०, १, १; १६१६ चिकित्सवः यां ।
 वपुषी इव ऋ. १०, ७५, ७; १०४२ दर्शता ।
 (देवेषु) वरुणो यथा अ. ६, २१, २; ४५८ भेषजानां श्रेष्ठं असि ।
 वर्चं वेशन्त्या इव अ. १, ३, ७; ५७७ प्र ते भिनक्षि मेहनम् ।
 वषट्कारे यथा यशः अ. १०, ३, २२; १४७४ एवा मणिः ।
 वक्ष्वाश्वान्ता वधूः इव अ. ४, २०, ३; ७५६ स भूमि आ ।
 वाका अपचिता इव अ. ६, २५, १-३; १६८२-८४ताः सर्वाः नश्यन्तु
 (यथा) वातः अ. १, ११, ६; १४१० एवा त्वं पत ।
 वातः अभ्रं इव अ. ८, ६, १२; १३८५ पिङ्गः स्त्रीभागान् ।
 (यथा) वतश्चयावयति अ. १०, १, १३; १६२८ एवा सर्व ।
 (यथा) वातश्चयावयति अन्तरिक्षादभ्रम् ,, ,,
 यथा वातः न्यग् वाति अ. ६, ९१, २; २०० न्यग भवतु ते रपः ।
 वात इव वृक्षान् अ. १०, १, १७; १६३२ नि मृणीहि ।
 (यथा) वातः वनस्पतीन् अ. १०, ३, १३; १४६५ एवा मे ।
 (यथा) वातश्च अग्निश्च अ. १०, ३, १४; १४६६ ,, ,,
 (दिवि) वाता इव श्रिताः ऋ. १, १८७, ४; १०११ त्ये रसाः ।
 (यथा) वातेन प्रक्षीणाः अ. १०, ३, १५; १४६७ एवा सपत्नान् ।
 (पथा) वार् इव ऋ. १०, १४५, ६; २३४० मनः मामनु ।
 विद्धस्य इव अ. १०, १, २६; १६४१ कृत्ये पदं नय ।
 (नानदती) विनद्धा गर्दभी इव अ. १०, १, १४; १६२९ कृत्ये
 वृक इव अविमतः अ. ६, ३७, १; १७७३ सहस्राक्षः उप प्रागात् ।
 वृक्षः इव अ. ४, ७, ५; ८०२ तिष्ठ स्थानि ।
 वृक्ष इव विद्युता हतः अ. ७, ५९, १; १७७६ आ मूलात् अनु ।
 वृक्षादिव सजम् अ. ८, ६, २६; १३९२ कृत्वा त्रिये प्रति ।

(यथा) वृत्रः अपः तस्तम्भ अ. ६, ८५, ३; १८४ एवा ते यक्ष्मां
वृषण्यन्ती इव कन्यला अ. ५, ५, ३; ४३० वृक्षं वृक्षं आरोहसि ।
वृषभः न ऋ. १०, ७५, ३; १०३८ सिन्धुः रोहवत् एति ।
व्याघ्रः श्वपदामिव अ. १९, ३९, ४; ४५० उत्तमोऽसि ओषधीनाम् ।

,, ,, अ. ८, ५, ११; १४४१

शका इव अ. ३, १४, ४; २३२३ इहो पुष्यत ।

शकुनेः इव अ. २, २५, २; ४१७ दुर्णाम्नां शिरो वृश्चामि ।

शतवत् ऋ. १०, ९४, २; २२९४ एते वदन्ति ।

(यथा) शर्षं संनयन्ति अ. ६, ४६, ३; ६३५ दुध्वप्यं द्विषते ।

,, ,, ,, अ. १९, ५७, १; १९१३ दुध्वप्ये अप्रिये ।

शमिता न त्मन्या समजन् वा. य. २०, ४५; ३७२ देवः यशं ।

शरं इव अ. ४, ७, ४; ८०१ ते मदं मदावति वि पातयामसि ।

शरणं न वृक्षम् ऋ. ७, ९५, ५; १०७६ शर्मन् दधानाः उप स्थेयाम

शाक्यस्य इव शिक्षमाणः ऋ. ७, १०३, ५; ९९८ मण्डूकानां ।

शाखां मधुमतीं इव अ. १, ३४, ४, ४८१ मां इत किलत्वं ।

शारिशाका इव अ. ३, १४, ५; २३२४ शिवो वो गोष्ठो भवतु ।

शिशुं इत् न मातरः ऋ. १०, ७५, ४; १०३९ त्वां वात्राः अर्षन्ति ।

शुने पेष्ट्रं इव अवक्षामम् अ. ६, ३७, ३; १७७५ तं प्रत्यस्यामि ।

शुनां कपिः इव दूषणः अ. ३, ९, ४; १८०० बन्धुरा कावयस्य च ।

शृंगिणां शृंगाणि इव ऋ. ३, ८, २०; २२६८ स्वरवः पृथिव्यां ।

श्येनः इव अ. ५, ३०, ९; १०६ यक्ष्मः प्राप्यत ।

श्व इव अ. ४, ३७, ११; ७२५ एकः गन्धर्वः ।

सखा सख्युः न अ. १८, ४, ६०; २२१० प्र वा एति इन्दुः ।

(यथा) सत्यं आहितम् अ. १०, ३, २५; १४७७ एवा मणिः ।

समुद्रः इव अ. ६, १४२, २; ११२५ अधि अक्षितः ।

समुद्रं न सुभुवः अ. ४, ८, ७; ८०४ आस्वन्तः तस्थिबांसं ।

समुद्रस्य उदधेः इव अ. १, ३, ८; ५७८ ते वस्तिबिलं विषितम् ।

सविता इव अ. १९, ४५, ४; ५९५ ध्रुवस्तिष्ठसि चर्यः ।

सहस्रवत् ऋ. १०, ९४, २; २२९४ एते प्रावाणः वदन्ति ।

सिंहस्य इव अ. ८, ७, १५; ३३८ स्तनयोः सं विजन्ते ।

सिन्धुं इव नावा अ. ४, ३३, ८; १७६३ अति पर्षा स्वस्तये ।

सुपर्णो वसतेः इव अ. ६, ८३, १; ५१३ अपचितः प्र पतत ।

सूरो न श्रुता अ. १८, ४, ५९; २२०९ त्वं कृपा रोचसे ।

सूर्यः इव अ. १९, ३३, ५; १८३७ आभाहि प्रदिशः चतस्रः ।

सूर्य इव दिवमारुह्य अ. ८, ५, ७; १४३७ वशी कृत्या वि बाधते ।

(यथा) सूर्यः अतिभाति अ. १०, ३, १७; १४६९ मणिः कीर्ति ।

(यथा न्यक तपति) सूर्यः अ. ६, ९१, २; २०० न्यग् भवतु ते ।

(यथा) सूर्यो मुच्यते तमसः अ. १०, १, ३२; १६४७ एव अहं ।

(वीधे) सूर्यमिव सर्पन्तम् अ. ४, २०, ७; ७६० मा पिशाचं ।

(यथा) सूर्यस्य रश्मयः अ. ६, १०५, ३; ४८८ एवा त्वं कासे ।

सेना इव अ. ४, १९, २; ३९७ एषि त्विषीमती ।

सोमः इव यामेषु अ. ६, २१, २; ४५८ वीरधानां वसिष्ठम् ।

(यथा यशः) सोमपीथे अ. १०, ३, २१; १४७३ मणिः कीर्ति ।

स्तुकां इव अ. ७, ७४, २; ५०४ जघन्यां आसां आ छिनद्मि ।

स्तेनः इव व्रजम् ऋ. १०, ९७, १०; ३१० ओषधीः विश्वाः ।

स्नुषा इव श्वशुरादधि अ. ८, ६, २४; १३९० सूर्यात् परि सर्पन्ति ।

स्वजः इव अ. ५, १४, १०; १६०० अभिष्ठितः दश ।

स्विजः स्नात्वा मलादिव अ. ६, ११५, ३; १७२९ आपः शुन्धन्तु
वा. य. २०, २०, ११०५ मैतसः ।

हंसाः इव ऋ. ३, ८, ९; २२६७ स्वगवः नः आगुः ।

हरी इव अन्यासि ऋ. १, २८, ७; २२८२ आयजी उल्लखल०

(यथेवं) हर्म्यम् अ. ४, ५, ५; ६१७ तेषां अक्षीणि सं दम्भः ।

(यथा) हव्यं नहसि अ. ४, २३, २; १६८६ एवा देवेभ्यः ।

(यथा) यज्ञं कल्पयसि अ. ४, २३, २; १६८६ ,, ,,

(समौषित्) हस्तौ न समं ऋ. १०, ११७, ९; २३१९ तथा ज्ञाती ।

हस्ती इव रजः अ. १०, १, ३२; १६४७ दुरितं जहामि ।

हदं अग्निः इवा दहन् अ. ६, ३७, २; १७७४ परि णः वृद्धिश्च शपथा



विषय-सूची ।



| विषयः । | मंत्रांकाः | प्रकरणम् । | विषयः । | मंत्रांकाः | प्रकरणम् । |
|--|------------|------------|--|------------|--------------------|
| आक्षि ७, ३६, १; ५२१ | | रोगचि. | अग्निस्तवः ६, ४९, ३; २३२६ | | यज्ञादि. |
| अक्षिरोगभैषज्यम् ६ १६, १-४; ४६६-६९ | | ओषधि. | अमीन्द्रौ १, ७, ३; ७६९ | | किमिना. |
| आग्निः ६, ११, १-३; ८५-८७ । ६, ४७, १; ८८ । | | | अमीषोमौ १, ८, १-२; ७२७-२८ | | " |
| २, २९, १; ९१ । १९, ६४, १-४; ११५-१८ । | | | " ऋ. १०, १९, १ उत्तरार्धः; ८९३ | | जलचि. |
| ७, ३३, १; १४२ । २, १३, १; २३३१ | | दीर्घायु. | अग्न्यादयः त्रिवृत् ५, २८, १-४; १२७-४० | | दीर्घायु. |
| " ३, ३१, १, ६; १६८, १७३ । १२, २, १-५५; | | | अंगानि १९, ६०, १-२; १५७-५८ | | " |
| २१७-७१ | | यक्षमना. | | | (अरिष्टानि अंगानि) |
| " १, २५, १-४; ५२५-२८ । ६, १११, १-४; | | | अजः ९, ५, १-३८; ११८३-१२२० | | अन्नादि. |
| ६८७-९० | | रोगचि. | अजशृंगी (ओषधिः) ४, ३७, १-२१; ७१५-२६ | | किमिना. |
| " ६, ३२, १; ७३१ । १, २८, १-२; ७३४-३५ | | किमिना. | अजगम् ७, ३०, १; ५९० । ७, ३६, १; ५९१ । | | |
| " १, २३, २३; ८७० । ७, ८५, १-४; ९५९-६२ | | जलचि. | वा० य० ४, ३; ६१२ | | रोगचि. |
| " ६, ७१, १-३; १११९-२१ । १२, ३, १-६०; | | | अदितिः ६, ७, १-३; ७६३-६५ | | किमिना. |
| १२७२-१३३१ | | अन्नादि. | " ५, २६, ६; १९४१ | | यज्ञादि. |
| " ४, ४, ६; १३३७ | | वाजी. | अदितेर्गर्भः ऋ. ९, ७४, ५, १४०४ | | गर्भाधानं |
| " ६, १०८, ४; १४२२ | | गर्भाधा. | अजम् वा० य० १८, ३२-३४; ३५९-६१ [वाजः] | | ओषधि. |
| " २, १०, २; १६६३ । ६, ११२, १-३; | | | " ऋ. १, १८७, १-११; ११०८-१८ । अ. ६, | | |
| १६७०-७२ । ७, ७८, १-२; १६८०-८१ । | | | ७२, १-३; १११९-२१ । ७, ५८, १-२; ११२२-२३ । | | |
| ४, २३, १-७; १६८५-९१ । ७, ६४, १-२; | | | ६, ११६, १-३; १२६६-६८ | | अन्नादि. |
| १७३२-३३ । ४, ३३, १-८; १७५७-६४ । | | | अन्नसमृद्धिः ६, १४२, १-३; ११२४-२६ | | |
| १६, ९, २; १९०३ | | पापादि. | अन्नादिकम् । (११०८-१३३१) | | |
| " ७, ६१, १-२; १९२१-२२ । १८, २, ४, ३४; | | | अपचिद्-भैषज्यम् ७, ७६, १-२; ५०७-८ | | रोगचि. |
| २०२८, २०५८ । १८, ३, ५-६; २०८८-८९ । | | | अपामार्गो वनस्पतिः ४, १७, १-८ । १८, १-८ । १९, १-८; | | |
| १८, ४, ८८; २२३८ । १९, ५९, २; २२५५ । | | | ३८०-४०३ | | ओषधि. |
| ऋ. १, ३६, १३-१४; २२५७-५८ । ६, ४९, ३; | | | अपामार्गवीरुत् ७, ६५, १-३; ४०४-६ | | " |
| २३२६ | | यज्ञादि. | अपां नपात् ऋ. १०, ३०, १-१५; ९०१-१५ | | जलचि. |
| " ऋ. १०, १५५, १, ४; २३३७-३८ (अलक्ष्मी) | | रोगचि. | अपां भैषज्यम् १, ४, ४; ९६३ । १, ६, ४; ९६४ | | " |
| अग्निः जातवेदाः १, १८, ३-४; ७२९-३० । १, ७, | | | अपां भैषज्यम् ६, २३, १-३; ९६८-७० । ६, २४, | | |
| १-७; ७६७-७३ | | किमिना. | १-३; ९७१-७३ | | " |
| " वैश्वानरः ६, ११९, १-३; १६७३-७५ | | पापादिना. | अप्सरसः ४, ३७, १, ३-५; ७१५, ७१७-१९ | | किमिना. |

अरातयः ५, ७, १-३, ६-१०; १७७७-७९, १७८२-८६ पापादि.
अरातिनाशनम् ५, ७, १-१०; १७७७-८६
अरिनाशनम् ७, ५९, १; १७७६

अरिष्टनाशनम् । (१५७९ १५९०)

अरिष्टक्षयणम् ६, २७, १-३; १५७९ ८१ । ६, २८,
१-३। २९, १-३ । ८०, १-३; १५८२-९०

अरिष्ट.

अरिष्टानि अंगानि । (१५७-१५८)

अरुन्धती (औषधिः) ६, ५९, १-३; ४०७-९

ओषधि.

अर्कः ६, ७२, १-३; १३४०-४२

वाजीक.

अर्यमा १, १८, २; ६७४

रोगाचि.

" १, ११, १-६; १४०५-१०

गर्भाधानं

" ३, १४, २; २३२१

यज्ञादि.

अलक्ष्मीघ्नम् ऋ. १०, १५५, १, ४; २३३७-३८

रोगाचि.

अलक्ष्मीनाशनम् १, १८, १-४; ६७३-७६

"

अवनम् १९, ६५, १ [अग्निः २३४९]

पापादि.

अश्विनौ २, २९, ६; ९६ । ७, ५३, १-७; १४३-४९

दीर्घायु.

" ऋ. १, १२०, १; ६२३

रोगाचि.

" ऋ. ५, ७८, ५-९; १३२९-१४०३

(गर्भस्त्राविष्णुपनिषद्) गर्भाधानं.

" ७, ७३, ६-७, ११; १९१८-२०

यज्ञादि.

असिक्लिः १, २३, १ ४; ५१७-२०

रोगाचि.

असुरक्षयणम् ६, ७, १-३; ७६३-६५

किमिना.

असुरः वह्णः १, १०, १-४; १६५४-५७

पापादिना.

अस्तृतमणिः १९, ४६, १-७; १५७२-७८

मणिधारणं

अहः ३, १४, १; २३२०

यज्ञादि.

अहानि ७, ६९, १। ६३८

रोगाचि.

आञ्जनम् ४, ९, १-१०; ५८०-८९ । १९, ४५, १-१०;

५९२ ६०१ । १९, ४४, १-१२; ६०२-११

"

आत्मा ७, १११, १; १३६६

गर्भाधानं.

आदित्यः २, ३२, १-६; ७०९-१४

किमिना.

" ६, ८१, १-३; १३५९-६१

गर्भाधानं.

" १६, ३, १-६। ४, १-७; १८२२-३४

पापादि.

आदित्याः १, ३०, १; ५५

दीर्घायु.

आदित्यरश्मयः ६, २२, १; २६५

जलचि.

आनृण्यम् ६, ११९, १-३; १६७३-७५

पापादिना.

आपः २, २९, ४-५; ९४-९५

दीर्घायु.

आपः ३, ७, ५; १९६ । ६, २१, ३; २०१

यक्षमना.

" ऋ० १, १९१, १-१६; ७७४-८९

विषना.

" ऋ० १, २३, १६-२३ । ७, ४७, १-४ ।

४९, १-४ । १०, ९, १-९ । १७, १०-१४ । १९,

१-८ । ३०, १-१५ । अ० १, ३३, १-४;

८६३-९१९ । ३, १३, १, ४-७; २२०, ९२३-२६ ।

७, ३९, १; ९२७ । १९, २, १-५ । ६९, १-४;

२२८-३६ । वा. य. १, १२-१३. २१. ३१ ।

२, २. ३४; ४, १. १२। ५, ११। ६, १०-१३. ३०-३१।

६, १७. २२. २४. २७-२८ । ८, २६; ९३७. ५५ ।

१, ४. ४। ६, ४। ९६३-६४। ६, २३, १-३। २४, १-३;

९६८-७३ । ४, १५, ५-१०; १००८-१३ । वा० य०

१०, १-४. ६. १९। ११, ३८। १२, ३५. ५५। १४, ८।

२०, १८-२०, २२-२३, १०९३-११०७

जलचि.

" ४, ४, ५; १३३६

वाजीक.

" १०, ६, ३; १४८०

मणिधारणं

" २, १०, २; १६६३ । ७, ६४, १-२; १७३२-

३३। ११२, १-२; १७६८-६९। ६, ५१, १-३;

१७८७-८९

पापादिना.

" १८, ३, ५६; २१३५

यज्ञादि.

आपः दिव्याः ६, १२४, १-३। ७, ८९, १-४; ९५६-६२

जलचि.

आयुः २, २८, १, ३; १, ३ । ८, १, १-२१। २, १-२८;

६-५४ । ७, ३२, १; १४१ ।

७, ५३, १-७; १४३-४९

दीर्घायुष्यम्

" ३, ३१, ८-१०; १७५-७७

यक्षमनाश.

" ६, १०९, १-३; ४१३-१५

ओषधि.

" २, ३, १-६; ५६५-७० । ७, १-५; ६६८-७२

रोगाचिकि.

आयुः सर्वम् १९, ६१, १; १५५ । ७०, १; १५६

दीर्घायु.

आयुष्यम् ३, ११, १-८; ७२-७९ । ५, ३०, १-१७;

९८-११४ । ६, ७६, १-४; १५०-५३

दीर्घायु.

" २, ३३, १-७; २९४-३००

यक्षमनाश.

" ८, ७, १-२८; ३२४-५१

ओषधि.

आयुष्कामः द्रष्टा १, ३०, १-४; ५५-५८ । ३५, १-४;

५९-६२ । ५, ३०, १-१७; ९८-११४

दीर्घायु.

" १९, ३२, १-१० । ३३, १-५; १९२३-३७

यज्ञादि.

आयुर्वर्धनम् १९, ६३, १; १५४

दीर्घायु.

| | |
|---|-----------|
| आशापालाः १, ३१, १-४; १६५८-६१ | पापादिना. |
| आसुरी वनस्पतिः १.२४, १-४; ५२१-२४ | रोगचिकि. |
| आद्यावस्य भेषजम् २, ३, १-६; ५६५-७० | ,, |
| इन्द्रः १८, ३, ५४; २१३४ | यज्ञादि. |
| इन्द्रः २.२९, ३, ९३ | दीर्घायु. |
| " ७, ७६, ३-६; ५०९-१२ । १, २, ३; ६६६ | रोगचिकि. |
| " ५, २३, १-१३; ६९६-७०८ | क्रिमिना. |
| " ३.१२, २-३; ९२१-२२। ऋ० १०, २७, १६; | |
| ९८४ । ऋ० ३, ३३, ६-७; १०२७-२८ | जलाचि. |
| " ४, ४ ४; १३३५ | अन्नादि. |
| " ४, २४, १-७; १६९२ ९८ | पापादिना. |
| " ५, २६, ३, ११; १९३९, १९४५ । ३, १४, २; | |
| २३२१ | यज्ञादि. |
| इन्द्रसूर्यादयः १९, ७०, १; १५६ | दीर्घायु. |
| इन्द्राग्री १, ३५, १-४; ५९-६२ । ३, ११, १-८; | |
| ७२-७९ | ,, |
| इन्द्रावरुणौ ७, ५८, १-२; ११२२-२३ | अन्नादि. |
| इष्टुनिष्कासनम् ६, ९०, १-३; ६२०-२२ | रोगचि. |
| ईर्ष्यापनयनम् ७, ४५, १-२; ६८५-८६ | ,, |
| ईर्ष्याविनाशनम् ६, १८, १-३; ६८२-८४ | ,, |
| उन्मत्ततामोचनम् ६, १११, १-४; ६८७-९० | ,, |
| उन्मोचनम् ६, ११४, १-३; १७९४ ९६ | पापादिना. |
| उल्लखलम् ऋ० १, २८, ५-६; २२८०-८१ | यज्ञादि. |
| उल्लखलमुसले ऋ० १, २८, ७-८; २२८२-८३ | ,, |
| उषा ७, ६९, १; ६३८ | रोगचि. |
| ,, १६, ६, १-११। ७, १-१३; १८४५-६८ | पापादिना. |
| एकशृषः ५, १६, १-११; ६४२-५२ | रोगचि. |
| एनोनाशनम् ६, ५१, १-३; १६८७-८९ | पापादिना. |
| ओदनम् पञ्च ९, ५, १-३८; ११८३-१२२० | अन्नादि. |
| ,, बार्हस्पत्य ११, ३ १-५६; ११२७-८२ | ,, |
| ,, ब्रह्म ११, १, १-३७; १२२९-६५ | ,, |
| ,, स्वर्ग १२, ३, १-६०; १२७२-१३३१ | ,, |

| | |
|---|------------|
| औषधिवनस्पतयः । (३०१-४८२) | |
| औषधिः वा० य० १२, ७९; ३५८ | औषधि. |
| औषधयः ऋ० १०, ९७, १-२३; ३०१-२३ । अ० ८, ७, | |
| १-२८; ३२४-५१। ऋ० ३, ५३, ७; ३६३ | ,, |
| औषधयः २, १०, २; १६६३ | पापादि. |
| औषधिः अजशृंगी ४, ३७, १-२, ६, १०; ७१५-१६, | |
| ७२०, ७२४ | क्रिमिनाश. |
| ,, अरुन्धती ६, ५९, १-३; ४०७-९ | औषधिव. |
| ,, केशवर्धनी ६, २१, १-३; ४५७-५९ | ,, |
| औदुम्बरमणिः १९, ३१, १-१४; १५३७-५० | मणिधार. |
| कामिलानाशनम् १, २२, १-४; ४८९-९२ | रोगचि. |
| कासा क सशमनम् ६, १०५, १-३; ४८६-८८ | ,, |
| कुष्ठः ५, ४, १-१०; ४३७-४६ । १९, ३९, १-१०; | |
| ४४७-५६ | औषधिव. |
| कुष्ठतकमनाशनम् ५, ४, १-१०; ४३७-४६ | ,, |
| ,, १९, ३९, १-१०; ४४७-५६ | ,, |
| कुष्ठौषधिः ६, ९५, १-३; ४१०-१२ | ,, |
| कृत्यादूषणम् । (१५९१-१६५३) | |
| कृत्यादूषणम् ८, ५, १-२२; १४३१-५२ | मणिधारणम्. |
| ,, १०, १, १-३२; १६१६-४७ । ५, ३१, | |
| १-१२; १६०४-१५ | कृत्यादू. |
| कृत्यापरिहरणम् ५, १४, १-१३; १५९१-१६०३ । | |
| ५, ३१, १-१२; १६०४-१५ | ,, |
| कृमिनाशनम् ४, ३७, १-२; ७१५-२६ | क्रिमिना. |
| कृशनः ४, १०, १-७; १४२४-३० | मणिधा. |
| केशदंष्ट्रणम् ६, १३६, १-३; ४६०-६२ | औषधि. |
| केशवर्धनम् ६, १३७, १-३; ४६३-६५ | ,, |
| केशवर्धनी औषधिः ६, २१, १-३; ४५७-५९ | ,, |
| क्रिमिघ्नम् ५, २३, १-१३; ६९६-७०८ | क्रिमिना. |
| क्रिमिजम्भनम् २, ३२, १-५; ६९१-९५ | ,, |
| क्रिमिनाशनम् । (६९१-७७३) | |
| क्रिमिनाशनम् २, ३२, १-६; ७०९-१४ | ,, |
| क्रीबत्वम्* ६, १३८, १-५; ४९८-५०२ | रोगचि. |

× 'कुष्ठः' वीरुधां बलवत्तमा औषधिः । सा तक्रमानं नाशयति । अतः अत्र 'कुष्ठः तक्रमनाशनः ।' इति प्रथमस्थले, 'तक्रमनाशनम्' इति द्वितीयस्थले पाठः योग्यः ।

* अत्र 'क्रीबत्वापादनम्' इति पाठः समीचीनतरः भवति ।

| | |
|---|-------------|
| क्षेत्रियरोगनाशनम् २,८,१-५; ४९३-९७ | रोगचिकित्सा |
| गण्डमाल.चिकित्सा ७,७४,१-४। ७६,१-६; ५०३-१२ " | |
| गन्धर्वाप्सरसः ४,३७,७-१२; ७२१-२६ | किमिना. |
| गर्भाधानम् । (१३४६-१४१०) | |
| गर्भदृष्टणम् ६,१७,१-४; १३६२-६५ | गर्भाधानम् |
| गर्भदोषनिवारणम् ८,६,१-२६; १३६७-९२ | " |
| गर्भसंस्त्रावः २०,९६,११-१६; १३९३-९८ | " |
| गर्भस्त्राविष्युपनिषद् क्र० ५,७८,५-९; १३९९-१४०३ " | " |
| गर्भाधानम् ६,८१,१-३; १३५९ ६१ | " |
| गावः क्र० १,९०,८; ४७३ | ओषधि |
| " ६,५२,२; ५६३ | रोगचि. |
| " क्र. १०,१९,१-८; ८९३-९०० | जलचि. |
| " ३,१४,१-६; २३२०-२५ | यज्ञादि. |
| गोष्ठः ३,१४,१-५; २३२०,२३२४ | " |
| ग्रावाणः क्र० ७।१०४,१७। १०,७६,१-८। ९४, | " |
| १-१४। १७५,१४; २२८४-२३१० | " |
| घर्मः ७,७३,६-७.११; १९१८-२० | " |
| घृतहोमः ५,६२,२-४, ६-९,११, १९३८-४५ | " |
| चन्द्रः ३,३१,६; १७३ | यक्षमना. |
| " १,३,४; ५७४ | रोगचि. |
| चन्द्रमाः २,४,१६; ६६-७१। ४,१,१-३; ६३-६५ | दीर्घायु. |
| " २,३३,१-७; २९४३-३०० | यक्षमना. |
| " ६,२,१-३; ४५७-५९। ६,१६,१-४; ४६६-६९ | ओषधि. |
| " ६,८३,१; ५१३। ७,११६,१-२; ५२९-३०। | |
| " ४,१३,१-७; ५४८-५४। १,२,३; ६६६ | रोगचि. |
| " २,३१,१-५; ६९१-९५ | किमिना. |
| " १,३३,१-४; ९१६ १२ | जलचि. |
| " १०,३,१-२५; १४५३-७७ | मणिधा. |
| " ६,८०,१-३; १५८८-९० | अरिष्टना. |
| " ११,६,१-२३; १७३४-५६। ६,३७,१-३; | |
| १७७३-७५ | पापादि. |
| " १८,४,८९; २२३२। १९,१,१-३; २२४६-४८ | यज्ञादि. |
| चिकित्सा ६,९६,१-३; ३५२-५४ | ओषधि. |
| जङ्घिडः २,४,१-६; ६६-७१ | दीर्घायु. |
| " १९,३५,१-५; १५६१-६५ | मणिधा. |
| जङ्घिडमणिः १९,३४,१-१०; १५५१-६० | " |
| दै०[आयुर्वेद०] १४ | |

| | |
|---|-----------|
| जरिमा २,२८,१-३; १,३ | दीर्घायु |
| जलचिकित्सा । (८६०-११०७) | |
| जातवेदा ६,२९,२, ९२ | " |
| " ७,७४,४; ५०४ | रे गचि. |
| " १,१८ ३४; ७२९-३०। ५ २९,१-१५; | |
| ७३८-५२। १९,६६,१; ७६६। १,७ | |
| १-७, ७६७ ७३ | किमिना. |
| " १८,२,५; २०२९ | यज्ञादि. |
| जायान्यः ७,७६,३-६; ५०९-१२ | रोगचि. |
| ज्वरनाशनम् १,२५,१-४; ५२५ २८। ७,११६,१-२; | |
| ५२९-३० | " |
| तकमनाशनः ५,२२,१-१४; ५३१-४४ | " |
| तक्षकः ४,६,१-८; ७९०-९७। १०,४,१-२६; | |
| ५,१३,१-११। ७ ८८,१; ६,१२,१-३; ८०८ ४८ | विपना. |
| तपः ७,६१,१-२; १९२१-२२ | यज्ञादि. |
| तारके ३,७,१; १७५ | यक्षमना. |
| तृणम् क्र० १ १९१,१ १६; ७७४-८९ (आतृणमूर्ग) | विपना. |
| त्रिष्टुप् ५,२८,१-१४; १२७-४० | दीर्घायु. |
| त्रैकाकुदन्नम् ४,२,१-१०; ५८०-८९ | रोगचि. |
| त्वष्टा ३,३१,९; १७२ | यक्षमना. |
| " ६,८१,३; १३६१ | गर्भाधानं |
| " ५,२६,८; १९४३ | यज्ञादि. |
| दन्तौ ६,१४०,१-३; १५९ ६१ (सुमंगली दन्तौ) | दीर्घायु. |
| दर्भः १९ ३२,१ १०; १९२३-३२। ३३,१-५; | |
| १९३३-३७ | यज्ञादि. |
| दर्भमणिः १९,२८,१ १०। २९,१-९। ३०,१-५; | |
| १५१३-३६ | मणिधा. |
| दस्युनाशनम् २,१४,१-६; १६४८-५३ | कृत्यादः |
| दिशः ४,१५,१; १००४ | जलचि. |
| " १,११,१-६; १००५-१० | गर्भाधानं |
| " २,१०,३; १६६४ | पापादिना. |
| दीर्घायुष्यम् । (१-१६१) | |
| दीर्घायुः ५,२८,१-१४; १२७-४०। ७,३३,१; १४२ | दीर्घायु |
| दीर्घायुत्वम् १९,६४,१-४; ११५ १८। ६७,१ ८; | |
| ११९-२६ | " |

दीर्घायुष्यम् वा० य० १२,१०० । ३४,५०-५२;
 २३२७-३० दीर्घायु.
 दीर्घायुः प्राप्तिः २,१३,१-५; २३३१-३५
 दुरितनाशनम् ७,६५,१-३; ४०४-६ ओषधि.
 ,, ७,६३,१; [अग्निः २३७४] पापादि.
 दुःखनाशनम् ३,९,१-६; १७९७-१८०३
 दुःखमोचनम् १६,१,१-१३। २,१-६। ३,१-६। ४,१-५;
 १८०३-३४
 दुःप्वप्रनाशनम् ऋ० १,१२०,१२। २,२८,१०। १०,
 १६४,१-५; ६२३-२९ रोगचि.
 ,, अ० ६,४५,१-३। ४६,१-३। ७,१००,१।
 १०१,१; ६३०-३७
 ,, १६,५,१-१०। ६,१-११। ७,१-१३। ८,
 १-३३। ९,१-४; ७,२३,१; १९,५६,१-६।
 ५७,१-५; १८३५-१९१७ पापादि.
 इवाः १,३०,१-४; ५५-५८ दीर्घायु.
 ,, ३,३१,७; १७४ यक्षमना.
 ,, ४,१३,१; ५४८। १,१८,२; ६७४ रोगचि.
 ,, ६,७,३; ७६५ किमिना.
 ,, ६,७१,३; ११२१ अज्ञादि.
 ,, १,११,१-६; १४०५-१० गर्भाधानं
 ,, ३,२,१-६; १७९७-१८०२ पापादि.
 इव्याः ऋषयः ६,४१,१-३; ६३ ६५ दीर्घायु.
 यावापृथिवी २,२९,४-५; ९४-९५
 ,, ३,३१,४; १७१
 ,, ७,३०,१; ५९०
 ,, ४,६,२; ७९१
 ,, २,१०,१-८; १६६२-६९ । ४,२६,१-७;
 १७०६-१२ । ३,९,१-६; १७९७-१८०२ पापादि.
 यावापृथिव्यादयः २,२८,४-५; ४-५ दीर्घायु.
 धनान्नदानम् ऋ. १०,११७,१-९; २३११-१९ यज्ञादि.
 धन्वन्तरिः २,३,१-६; ५६५-७० रोगचि.
 धमन्यः धमनीबन्धनम् १,१७,१-४; ५५५-५८
 नद्यः ऋ. ३,३३,१-३. ५.९.११-१३; १०२२-३४
 ऋ० ७,५०,४; ऋ० १०,७५,१-९; १०३५-४४ जलचि.
 नारीमुखप्रसूतिः १,११,१-६ १४०५-१० गर्भाधानं

नितत्नी (वनस्पतिः) ६,१३६,१-३; ४६०-६२ ओषधि.
 निर्ऋतिः ६,२७,१-३। २८,१-३। २९,१-३;
 १५७९-८७ अरिष्टना.
 ,, २,१०,४-८; १६६५-६९ । ७,६४,१-२;
 १७३२-३३ पापादि.
 निऋतिमोचनम् ६,८४,१-४। १७९०-९३
 निविदः ५,२६,४; १९४०
 पञ्चोदनः अजः ९,५,१-३८; ११८३-१२२० अज्ञादि.
 परस्परचित्तौकीकरणकामः [द्रष्टा] ६,४३,१-३; ६३९-४१ रोगचि.
 पर्जन्यः ३,३१,११; १७८ यक्षमना.
 ,, १,३,१; ५७१ । १,२,१४; ६६४-६७ रोगचि.
 ,, ऋ० ५,८३,१-१०; १०,२७,१६। ७,१०१,
 १-६। १०२,१-३। १०३,१-१०; ९७४-१००३
 ४,१५,४; १००७ । ७,१८,१-२; १०२०-२१ जलचि.
 पवमानः सोमः ऋ० ९,७४,५; १४०४ गर्भाधानं
 पशवः ३,३१,३; १७० यक्षमना.
 पापादिनाशनम् । (१६५४-१९१७)
 पापनाशनम् ४,३३,१-८; १७५७-६४। ६,११,१-३;
 १७६५-६७। ७,११२,१-२; १७६८-६९ पापादि.
 पापमोचनम् ४,२३,१-७। २४,१-७। २५,१ ७।
 २६,१-७। १६८५-१७१२ । २७,१-७। [मरुतः
 ४४०-४६] । २८,१-७। २९,१-७। ६,१५,१-३;
 ७,४२,१-२। ६४,१-२। ११,६,१-२३; १७१३-५६
 पापलक्षणनाशनम् ७,११५,१-४; [अग्निः २२०१-४]
 पापशमनम् ६,३०,१-३; ४७०-७२ ओषधि.
 पाप्मनाशनः (अग्निः) ४,३३,१-८; १७५७-६४ पापादि.
 पाप्मनाशनम् ६,२६,१-३; १७७०-७२
 पाप्महा ३,३१,१-११; १६८-७८
 पाप्मा ६,२६,१-३; १७७० ७२ पापादि.
 पाशमोचनम् १,३१,१-४। २,१०,१-८। ६,११२,१-३।
 ११९,१-३ । ७,८३,१-४; १६५८-७९
 पाशविमोचनम् १,१०,१-४; १६५४-५७
 पितरः ४,१५,१३-१५; १०१६-१८ जलचि.
 ,, १०,१४,७-९; १९७३-७५ । १५,१-१४;
 १९८७-२००० । १८,१,४४-४६; ५१,५२;
 २०१०-१२,२०१६-१७ । १८,२,२९; २०५३।
 ४,८१; २२३१ यज्ञादि.

पितृमेघः १०, १८, ७-१४; १९४६-५३ । १८, १, ६.
 १३-१४. १७. ३९-४९. ५१-५४. ५७-६१ ।
 २, १-६० । ३, १, ३-४९. ५२. ५४. ५६. ५८-६६.
 ६८-७३; २००१-२१५० यज्ञादि.
 पिप्पली ६, १०९, १-३; ४१३-१५ ओषधि.
 पिशाचक्षयणम् ४, २०, १-९; ७५४-६२ किमिना.
 पुष्टिकामः (द्रष्टा) १९, ३१, १-१४; १५३७-५० मणिधा.
 पूषा ७, ३३, १; १४२ दीर्घायु.
 ,, १, ११, १-६; १४०५-१० गर्भाधानं
 ,, ६, ११३, १-३; १७६५-६७ । १६, ९, २:
 १९०३ पापादि.
 ,, ३, १४, २; २३२१ यज्ञादि.
 पृथिवी १, २, १, ४; ६६४, ६६७ रोगचि.
 ,, ७, १८, १-२; १०२०-२१ जलचि.
 ,, ६, १७, १-४; १३६२-६५ गर्भाधानं
 पृथिव्यादयः ५, २५, १-१३; १३४६-५८ ,,
 पृथिव्याणां २, २५, १-५; ४१६-२० ओषधि.
 प्रजापतिः ४, १५, ११; १०१४ जलचि.
 ,, ४, ४, १-२; १३३२-३३ वाजीक.
 ,, १६, १, १-३३; १८०३-१५। १६, ९, १; १९०२ पापादि.
 ,, ऋ० १०, १८, १४; १९५३ यज्ञादि.
 प्रतिसरः मणिः ८, ५, १-२२; १४३१-५२ मणिधा.
 फालमणिः १०, ६, १-३५; १४७८-१५१२ ,,
 बन्धमोचनम् ७, ७८, १-२; १६८०-८१ पापादि.
 बलासः बलासनाशनम् ६, १४, १-३; ४८३-८५ रोगचि.
 बहुदैवत्यम् ५, ७, १-१०; १७७७-८६ (अरातिनाशनम्) पापादि.
 ,, १९, ५८, १-६; २२४९-५४ (यज्ञः) यज्ञादि.
 बर्हस्पत्य-ओदनः ११, ३, १-५६; ११२७-८२ अज्ञादि.
 बृहस्पतिः २, २९, १; ९१। ७, ५३, १-७; १४३-४९।
 २, १३, २-३; २३३२-३३ दीर्घायु.
 ,, १, १८, १-२; ७२८-२९ किमिना.
 ,, १९, ४०, १-४; १४११-१४ गर्भाधानं
 ,, ३, १४, २; २३२१ यज्ञादि.
 ब्रह्म २, १०, १-८; १६६२-६९ पापादि.
 ब्रह्मणस्पतिः १९, ६३, १-६१-१; १५४-५५। ६, १४०,
 १-३; १५९, ६१ (सुमंगली दन्ती) दीर्घायु.

ब्रह्मणस्पतिः ७, ३०, १; ५९० रोगचि.
 ,, ७, ५६, ४; ८५५ विषना.
 ,, ४ ४, ६; १३३७ । ६, ७२, १-३। १०१, १-३;
 १३४०-४५ वाजीक.
 ,, ८, ६, १५; १३८१ गर्भाधानं
 ब्रह्मौदनम् ११, १, १-३७; १२२९-६५ अज्ञादि.
 भगः ५, २६, २; १९४४ यज्ञादि.
 भवाश्वौ ४, २८, १-७; १७१३-१९ पापादिना.
 भेषजम् ६, ५२, ३; ५६४। ७, ४५, १-२; ६८५ ८६ रोगचि.
 भेषजम्, आस्त्रावस्य २, ३, १ ६; ५६५-७० ,,
 भेषज्यम् ८, ७, १ २८; ३२४-५१ । ६, १०९, १-३;
 ४१३-१५ ओषधि.
 ,, २, ३, १-६; ५६५-७० । १९, ४४, १-१०;
 ६०२-११; २, ७ १-५; ६६८-७२ रोगचि.
 ,, ६, २२, १-३; ९६५-६७ जलचि.

मणिधारणम् । (१४२४-१५७८)

मणिः अस्तृत १९, ४६, १-७; १५७२ ७८ मणिधारणं
 ,, औदुम्बरः १९, ३१, १ १४; १५३७-५० ,,
 ,, जंगिडः १९, ३४, १-१०; १५५१-६०। ३५, १-५;
 १५६१-६५ ,,
 ,, २, ४, १-६; ६६ ७१ दीर्घायु.
 ,, दर्भ १९, २८, १-१०। २९, १-९ । ३०, १-५;
 १५१३-३६ मणिधारणं
 ,, प्रतिसरः ८, ५, १-२२; १४३१-५२ ,,
 ,, फाल १०, ६, १-३५; १४७८-१५१२ ,,
 ,, वरणः १०, ३, १-२५; १४५३-७७ ,,
 ,, शंख ४, १०, १-७; १४२४-३० ,,
 ,, शतवारः १९, ३६, १-६; १५६६-७१ ,,
 मण्डूकाः ऋ० ७, १०३, १-१०; ९९४-१००३ ।
 अ. ४, १५, १३-१५; १०१६-१८ जलचि.
 मधु (वनस्पतिः) मधु-विद्या १, ३४ १-५; ४७८-८२ ओषधि.
 मधुमत् अन्नम् ६, ११६, १-३; १२६६-६८ अज्ञादि.
 मधुला (वनस्पतिः) ५, १५, १-११; ६५३-६३ रोगचि.
 मनः ७, ३६, १; ५९१ ,,
 मंत्रोक्तः १२, २, १-५५; २१७-७१ यक्षमना.
 ,, ६, १६, १-४; ४६६-६९ ओषधि.

मंत्रोक्ताः १९, ४५ १-१०; ५९२-६०१ । (आञ्जनम्) रोगचि.
 ,, ५, २९, १-१५; ७३८ ५२ । (रक्षोघ्नम्) किमिना.
 ,, ११, ३ ३२-५६; ११५८-८२ । ९, ५, १-३८;
 ११८३-१२२० (ओदनः) अन्नादि.
 ,, ८, ६, १-२६; १३६७-९२ । (मातृनाम) गर्भाधानं
 ,, ८, ५, १-२२; १४३१-५२ (कृत्यादूषणम्) मणिधा.
 ,, ११, ६, १-२३; १७३४-५६ पापादि.
 ,, १८, १, ६, १३-१४ १७, ३९-४९. ५१-५४.
 ५७-६१। २, १-६०; २००१-८४ । (पितृमेधः)
 ३, ४४, ४६; २२२७, २२२९ । १८, ४, १-८९;
 २६५१-२२३९ यज्ञादि.
 मन्याविनाशनम् ६, २५, १-३; १६८२-८४ पापादि.
 मन्युशमनम् ६, ४३, १-३; ६३९-४१ रोगचि.
 महतः २, २९, ४-५; ९४-९५ । ७, ३३, १; १४२ दीर्घायु.
 ,, ४, १३, ४; ५५१ रोगचि.
 ,, ६, २२, २-३; ९६६-६७ । ४, १५, ४-१०;
 १००७-१३ जलचि.
 ,, ४, २७, १-७; [महतः ४४०-४६] पापादि.
 मही २, ३१, १-५; ६९१-९५ किमिना.
 मातृना मा ४, २०, १-९; ७५४-६२
 ,, ८, ६, १-२६; १३६७-९२ गर्भाधानं
 मित्रः १, ३, २, ५७२ । ७, ३०, १; ५९०; १, १८, २;
 ६७४ रोगचि.
 मित्रावरुणौ २, २८, २; २ दीर्घायु.
 ,, ६, ३२, ३; ७३३ किमिना.
 मूत्रमोचनम् १, ३, १ ९; ५७१-७९ रोगचि.
 मृत्युः १२, २, २१-३३; २३७-४९ यक्षमना.
 मेधा १९, ४० १-४; १४११-१४ । ६, १०८, १-५;
 १४१९-२३ गर्भाधानं
 मेधाजननम् १ १ १-४; १४१५-१८
 ,, मेधावर्धनम् ६, १०८, १-५; १४१९-२३
 ,, यक्ष्म २, १०, ४-८; १६६५-६९ पापादि.
 यक्ष्मनाशनम् । (१६२ ३००. २३३६)
 यक्ष्मनाशनम् ३, ११, १-८; ७२-७९ । २, ९, १-५;
 ८०-८४ दीर्घायु.

यक्ष्मनाशनम् ऋ. १०, १६३, १-६; अ. ३, ३१, १-११।
 ६, २०, १-३। ८५, १-३। १२७, १-३। १, १२, १-४;
 १६२-९१। ३, ७, ६-७। ६, ९१, १-३; १९७-२०१।
 २०, ९६, ६-१०; २०५-९ । १९, ३८, १-३;
 २०२-४ । २०, ९६, १७-२३; २१०-१६ यक्ष्मना.
 ,, दम्पत्योः ऋ. १०, ८५, ३१; २३३६
 ,, ५, ४, १-१०; ४३७ ४६ ओषधि.
 ,, (वनस्पतिः) २, ८, १-५; ४९३-९७ रोगचि.
 यक्ष्मनाशनः अग्निः १, २५, १-४; ५२५-२८
 ,, यक्ष्म विबर्हणम् २, ३३, १-७; २९४-३०० यक्ष्मना.
 यक्ष्मनिवारणम् ९, ८, १-२२; २७२-९३
 ,, यक्ष्मरोगनाशनम् १२, २, १-५५; २१७-७१
 ,, यजमानः ऋ ८, ३१, १-४; २२४०-४३। ऋ. १०,
 १८३, १; २२४४ यज्ञादि.
 यजमानपत्नी ऋ. १०, १८३, २; २२४५
 ,, यज्ञादिकम् । (१९१८-२३२४)
 यज्ञः ऋ. ८, ३१, १-४; २२४०-४३। अ. ७, १७, १-८।
 [इन्द्रः ३१२० २७]। १९, १, १-३। ५८, १-६। ५९, २;
 २२४६-५५ । ५९, १, ३ [अग्निः १२१४, १४९४] यज्ञादि.
 यमः ६, २७, १-३ २८, १-३ । २९, १-३, १५७९-८७ अरिष्ट.
 ऋ. १०, १४, १-५. १३-१६; १९६८-७२,
 १९७६-७९ यज्ञादि.
 ,, यमी ऋ. १०, १०, १-१४; १९५४-६७
 ,, ऋ १०, १३५, १-७; १९८०-८६। १८, १, ६.
 १३-१४. १७, ३९-४९. ५१-५४. ५७-६१ ।
 २, १-६०। ३, १, ३-४९. ५२. ५४. ५६. ५८-६६.
 ६८-७३ । ४, १-८९; २००१-२२३९
 ,, यतुधानीः १, २८, ३-४. ७३६-३७ किमिना.
 यातुधानक्षयणम् ६, ३२, १-३; ७३१-३३
 ,, यातुधाननशनम् १, १८, १-४; ७२७-३० । १, ७,
 १-७; ७६७-७३
 ,, यूपः १, ३६, १३-१४; २२५७-५८। ऋ. ३, ८, १-५;
 २२५९ ६३ यज्ञादि.
 ,, वा य ६, २-३, ६। २१, ४६। २८, १०; २२६९-७३
 ,, यूपाः ऋ. ३ ८, ६-१०, २२६४-६८
 ,, योनिगर्भः ५, २५, १-१३; १३४६-५८ गर्भाधानं

| | |
|---|-----------|
| योषितः (धमन्यः) १, १७, १-४; ५५५-५८ | रोगचि. |
| रक्षोघ्नम् १, २८, १-४; ७३४-३७ । ५, २९, १-१५; | |
| ७३८-५२ । वा. य. ५, २२; ७५३ | क्रिमिना. |
| रात्रिः ७, ६९, १; ६३८ (सुखम्) | रोगचि. |
| रामायणी ६, ८३, ३; ५१५ | " |
| रुद्रः ५, ५९, १-३; ४०७-९ । ६, ९०, १-३; ६२०-२२ | ओषधि. |
| " ६, ३२, २; ७३२ | क्रिमिना. |
| " ६, ५६, २-३; ८५०-५१ | विषना. |
| " ६, ५७, १-३; ८६०-६२ | जलचि. |
| " ४, २८, १-७; १७१३-१९ | पापदि. |
| " १८, १, ४०; २००६ | यज्ञादि. |
| रुधिरस्त्रावनिवृत्तये धमनोर्बन्धनम् १, १७, १-४; ५५५-५८ | रोगचि. |
| रोगचिकित्सा । (४८३-६९०) | |
| रोगघ्न्यः उपनिषदः ऋ. १, ५०, ११-१३; ५४५-४७ | " |
| रोगनाशनम् (वनस्पतिः) ६, ४४, १-३; ५५९-६१ | " |
| रोगनिवारणम् ४, १३, १-७; ५४८-५४ | " |
| रोगोपशमनम् ५, १५, १-११ । १, २, १-४; ६५३-६७ | " |
| रोहणी ४, १२, १-७; ४२१-२७ | ओषधि. |
| रोहिणी २, ८, १-५; ४९३-९७ । ६, ८३, २; ५१४ | रोगचि. |
| लाक्षा ५, ५, १ ९; ४२८-३६ | ओषधि. |
| लिङ्गोक्ताः १९, ३४, १-१०; १५५१-६० (जंगिडमणिः) मणिधारणं | |
| " १०, १४, ७-९; १९७३-७५ | यज्ञादि. |
| वज्र १९, ६६, १; ७६६ | क्रिमिना. |
| वनस्पतिः ६, ८५, १-३ । १२७, १-३; १८२-८७ | यक्ष्मना. |
| " ६, २६, १-३; ३५४-५६ । ३, १८, १-६; ३६४-६९ । | |
| वा. य. ५, ४२-४३ । २०, ४५ । २१, २१ । २७, २१ । | |
| २८, १०, ३३-४३ । २९, १०, ३५; ३७०-७९ | ओषधि. |
| " २, ८, १-५ । ६, १३८, १-५; ४९३-५०२ । ६, ४४, | |
| १-३; ५५९-६१ । २, ७, १-५; ६६८-७२ । | |
| ६, १३९, १-५; ६७७-८१ | रोगचि. |
| " ४, ७, १-७; ७९८-८०४ । ६, १००, १-३; ८०५-७ । ७, ५६, २; ८५३ | विषना. |
| " ४, ४, १-८; १३३२-३९ | वाजीक. |
| " १०, ३, १-२५; १४५३-७७ । ५, १४, १-१३; | |
| १५९१ १६०३ | मणिधा. |
| वनस्पतिसूर्यगावः ऋ. १, ९०, ८; ४७३ | ओषधि. |

| | |
|--|-----------|
| वनस्पतिः, अपामार्गः ४, १७, १-८ । १८, १-८ । १९, | |
| १-८; ३८०-४०३ | " |
| " असिक्ती १, २३, १-४; ५१७-२० | रोगचि. |
| " आसुरी १, २४, १-४; ५२१-२४ | " |
| " कुग्रौषधिः ६, ९५, १-३ । ४१०-१२ | ओषधि. |
| " जंगिडः १९, ३४, १-१० । ३५, १-५; १५५१-६५ | मणिधा. |
| " दशवृक्षः २, ९, १-५; ८०-८४ | दीर्घायु. |
| " वृद्धिपर्णी २, २५, १-५; ४१६-२० | ओषधि. |
| " फालमणिः १०, ६, १-३५; १४७८-१५७२ | मणिधा. |
| " मधुला ५, १५, १-११; ६५३-६३ | रोगचि. |
| " रोहणी ४, १२, १-७; ४२१-२७ | ओषधि. |
| " वरणमणिः १०, ३, १, २५; १४५३ ७७ | मणिधा. |
| वरणमणिः १०, ३, १-२५; १४५३-७७ | " |
| वरुणः १, ३, ३; ५७३ । १९, ४४, ८ ९; ६०९-१०; | |
| ऋ. २, २८, १०; ६२४ । १, १८, २; ६७४ | रोगचि. |
| " ४, ५, १२; १०१५ | जलचि. |
| " ७, ८३, १-४; १६७६-७९ । ७, ११२, १-२; | |
| १७६८-६९ | पापदि. |
| वरुणः आसुरः १, १०, १-४; १६५४-५७ | " |
| वसवः १, ३०, १; ५५, | दीर्घायु. |
| वाक् १९, ६०, १-२; १५७-५८ (अरिष्टानि अंगानि) | " |
| " १६, २, १-६; १८१६-२१ | पापदि. |
| वाचस्पतिः १, १, १-४; १४१५-१८ (मेधाजननम्) | गर्भाधानं |
| वाजीकरणम् । (१३३२-१३४५) | |
| वाजीकरणम् ४, ४, १-८ । ६, ७२, १-३ । १०१, १-३; | |
| १३३२-४५ | वाजीक. |
| वातः ४, १३, २-३; ५४९-५० । ७, ६९, १; ६३८ | रोगचि. |
| " ४, १५, १६; १०१९ | जलचि. |
| " २, १०, ३; १६६४ | पापदि. |
| वातपत्नीः २, १०, ४-८; १६६५-६९ | " |
| वातसिन्धोषधयः ऋ. १, ९०-६; ३६२ | ओषधि. |
| वायुः ६, १४२, १-३; ११२४-२६ | अन्नादि. |
| " ४, २५, १-७; १६९९-१७०५ | पापदि. |
| वासः (सस्) ७, ३७, १; १२६९ । वा. य. ४, २, १०; | |
| १२७०-७१ | अन्नादि. |
| वास्तोष्पतिः १, ३१, १-४; १६५८-६१ | पापदि. |
| " ५, २६, २-४-६-९-११; १९३८-४५ | यज्ञादि. |

| | |
|---|-----------|
| विनायकः १, १८, १; ६७३ | रोगचि. |
| विष्वान् ६, ११६, १-३; १२६६-६८ | अज्ञादि. |
| विश्वामित्रः ऋ. ३, ३३, ४. १०; १०२५, १०२९, १०३१ | जलचि. |
| विश्वे देवाः १, ३०, १-४। ३५, १-४; ५५-६२। ६, ४७, २; ८९। २, २९, ४-५; ९४-९५। २, १३, ४-५; २३३४-३५ | दीर्घायु. |
| „ ऋ. १, ९०, ६; ३६२। ऋ. ३, ५७, ३; ३६३। | ओषधि. |
| „ ऋ. १, ९०, ८; ४७३ | रोगचि. |
| „ ४, १३, १-७; ५४८-५४ | विषना. |
| „ ६, ५६, १, ८४९ | गर्भाधानं |
| „ १९, ४०, १-४; १४११-१४ | पापादि. |
| „ ६, १५, १-३; १७२७-२९। ११४, १-३; १७९४-९६। | यज्ञादि. |
| „ ऋ. ३, ८८; २२६६। अ. ७, ९८, १; २२७४ | |

विषनाशनम् । (७७४-८५९)

| | |
|---|-----------|
| विषम् ४, ६, ४-८; ७९३-९७ | विषना. |
| विषघ्नम् ४, ६, १-८; ७९०-९७ | „ |
| विषघ्नोपनिषद् ऋ. १, ९१, १-१६; ७७४-८९ | „ |
| विषदूषणम् ६, १००, १-३; ८०५-७ | „ |
| विषनाशनम् ४, ७, १-७; ७९८-८०४ | „ |
| विषभैज्यम् ७, ५६, १-८; ८५२-५९ | „ |
| विष्णुः ५, २६, ७; १९४२ | यज्ञादि. |
| वीरुधः ४, १५, २-३; १००५-६ | जलचि. |
| वृश्चिकादयः ७, ५६, १-८; ८५२-५९ | विषना. |
| वृषभः ४, ५, १-७; ६१३-१९ | रोगचि. |
| „ ७, ३९, १; ९२७ | जलचि. |
| „ ७, ११, १; १३३६ | गर्भाधानं |
| वृषरोगशमनम् ६, १६, १-११; ६४२-५२ | रोगचि. |
| वृष्टिः ४, १५, १-१६; १००४-१९। ७, १८, १-२; १०२०-२१ | जलचि. |
| वृष्टिकामः (द्रष्टा) ऋ. ७, १०२, १-६। १०२, १-३; ९८५-९३ | „ |
| वेदी ७, ९९, १; २२५६ | यज्ञादि. |
| वेधाः १, ११, १-६; १४०५-१० | गर्भाधानं |
| वैश्वानरः (अग्निः) ६, ७१, ३; ११२१ | अज्ञादि. |

| | |
|---|-----------|
| „ ६, ११९, १-३; १६७३-७५ | पापादि. |
| शक्रः ३, ३१, २; १६९ | यक्षमना. |
| शंखमणिः ४, १०, १-७; १४२४-३० | मणिधा. |
| शतवारः मणिः १९, ३६, १-६; १५६६-७१ | „ |
| शमी ६, ३०, १-३; ४७०-७२ | ओषधि. |
| शापनाशनम् ६, ३७, १-३; १७७३-७५ | पापादि. |
| शापमोचनम् २, ७, १-५; ६६८-७२ | रोगचि. |
| „ ७, ५९, १; १७७६ | पापादि. |
| शालाग्रेदैवत्यम् २, १४, १-६; १६४८-५३ | कृत्याद्. |
| शेषः ६, ७९, १-३; १३४०-४२ | वाजीक. |
| श्वेतकुष्ठनाशनम् १, २३, १-४; ५१७-२० | रोगचि. |
| सप्तक्षयकामः (द्रष्टा) १९, २८, १-१०; १५१३-२२ | मणिधा. |
| सप्तक्षयणः १०, ३, १-२५; १४५३-७७ | „ |
| सप्तघ्नम् ऋ० १०, १६६, १-५; २३४१-४५ | ओषधि. |
| सप्तजीजयः ३, १८, १-६; ३६४-६९ | „ |
| सप्तजीवाधनम् ऋ० १०, १४५, ४-६; २३३९-४० | „ |
| सप्तसिन्धवः ४, ६, २; ७९१ | विषना. |
| सरण्युः ऋ० १०, १७, १-२; १०८१-८२ | जलचि. |
| सरस्वान् ऋ० ७, ९५, ३। ९६, ४-६। अ. ७, ४०, १-२; १०४५-५० | „ |
| सरस्वती ६, ४१, २; ६४ | दीर्घायु. |
| „ ऋ० १, ३, १०-१२। १६४, ४९। २, ३०, ८ पूर्वार्धः। ४१, १६-१८। ६, ६१, १-१४। ७, ९५, १-२, ४-६। ९६, १-३। १०५१-८०। १०, १७, ७-९; १०८३-८५। अ० ७, १०, १। ११, १। ५७, १२। ६८, १-३; १०८६-९२ | जलचि. |
| „ ४, ४, ६; १३३७ | वाजीक. |
| „ ५, ७, ४-५; १७८०-८१ | पापादि. |
| „ १८, १, ४१-४३; २००७-९ | यज्ञादि. |
| सर्पविषहरीकरणम् १०, ४, १-२६। ५, १३, १-११; ८०८-४४ | विषना. |
| सर्पविषनाशनम् ७, ८८, १; ८४५ | „ |
| सर्पविषनिवारणम् ६, १२, १-३; ८४६-४८ | „ |
| सर्पेभ्यो रक्षणम् ६, ५६, १-३; ८४९-५१ | „ |
| सर्वमायुः १९, ६१, १; १५५। ७०, १; १५६ | दीर्घायु. |
| सर्वशीर्षमाययाकरणम् ९, ८, १-२२; २७२-९३ | यक्षमना. |

| | | | |
|---|-----------|--|-----------|
| सविता २,२९,२; ९२ | दीर्घायु. | सोमः ६,२६,३; ३५४ । ऋ० १०,८५,२-४; ४७४-७६ | किमिना. |
| " ७,३०,१; ५९० । १,१८,२-३; ६७४-७५ | रोगाचि. | " ६,७,१-३; ७६३-६५ | जलचि. |
| " ४,२५,१-७; १६९९-१७०५ | पापादि. | " ऋ० १०,१७,११-१३; ८४९-५१ | वाजाक. |
| " ५,२६,२; १९३८ | यज्ञादि | " ४,४,५; १३३६ | पापादि. |
| सान्तपन अग्निः ६,७६,१-४; १५०-५३ | दीर्घायु. | " २,१०,२; १६६३ । १६,९,२; १९०३ | गर्भाधानं |
| सुखम् ७,६९,१; ६३८ | रोगाचि. | सोमः पवमानः ऋ० २७४,५; १४०४ | ओषधि. |
| सुधन्वा ६,४७,३; ९० | दीर्घायु. | सोमवनस्पतिः ऋ० १,९१,६; ४७७ | पापादि. |
| सुपर्णः ४,६,३; ७९२ | विषना. | सोमारुद्रौ ७,४२,१-२; १७३०-३१ | रोगाचि. |
| " ७,३९,१; ९२७ | जलचि. | सोमाश्वयवर्धनम् ६,१३९; १-५; ६७७-८१ | जलचि. |
| सूर्यः २,२९,१; ९१ । १९,६७,१-८; ११९-२६ | दीर्घायु. | स्तनयितुः ४,१५,११; १०१४ | अज्ञादि. |
| " ३,३१,७; १७४ | यक्षमना. | स्वर्गः स्वर्गादिनः १२,३,१-६०; १२७२-१३३१ | पापादि. |
| " ऋ० १,९०,८; ४७३ | ओषधि. | रवस्त्ययनकामः (दृष्टा) ६,३७,१-३; १७७३-७५ | रोगाचि. |
| " १,२२,१-४; ४८९-९२ । ६,८३,१; ५१३ । | | रवापनम् ४,५,१-७; ६१३-१९ | यक्षमना. |
| ऋ० १,५०,११-१३; ५४५-४७ । ६,५२,१; | रोगाचि. | हरिणः ३,७,१-३; १९२-९४ | रोगाचि. |
| ५६२ । १,३,७; ५७५ । ७,६९,१; ६३८ | किमिना, | हरिमा १,२२,१-४; ४८९-९२ | यज्ञादि. |
| " १९,६६,१; ७६६ | विषना. | हविः ७,९८,१; २२७४ | " |
| " ऋ० १,१९१,१-१६; ७७४-८९ (अप्तृणसूर्याः) | वाजाक. | हविर्धाने ऋ० १०,१३,१-५; २२७५-७९ | रोगाचि. |
| " ४,४,१-२; १३३२-३३ | पापादि. | हरतः ४,१३,६-७; ५५३-५४ | दीर्घायु. |
| " २,१०,४-८; १६६५-६९ । १६,९,३-४; | ओषधि. | हिरण्यम् १,३५,१-४; ५९-६२ | रोगाचि. |
| १९०४-५ | | हृद्भोगः (कामिलानाशनम्) १,२२,१-४; ४८९-९२ | |
| सूर्यमरीचयः ऋ० ३,५७,३; ३८३ | | | |

अभावकरणार्थ निर्दिष्टाः विषयाः ।

निस् + कस् ।

इषु निष्कासनम् ।

अपा + दूरी + कृ ।

सर्वृशीर्षामयादि अपाकरणम् ।

सर्पविषदूरीकरणम् ।

क्षि ।

अरिष्ट— क्षयणम् ।

अमुर— "

पिशाच— "

शानुधान— "

सपत्न— "

जम्भ ।

किमिजम्भनम् ।

दुष् ।

कृत्यादूषणम् ।

विषदूषणम् ।

वि + नश् ।

अरातिनाशनम् ।

अरि— "

अलक्ष्मी— "

एनः— नाशनम् ।

कामिला— "

कृमि— "

क्षेत्रियरोग— "

ज्वर— "

तवम— "

दस्यु— "

दुरित— "

दुःख— "

दुष्प्र— "

पाप— नाशनम्
 पापलक्षण—,,
 पापम्—,,
 बलास—,,
 यक्षम्—,,
 यक्षमरोग—,,
 रोग—,,
 विष—,,
 श्वेतकुष्ठ—,,
 सर्पविष—,,
 ईर्ष्याविनाशनम् ।
 मन्या—,,
 अप+ नि ।
 ईर्ष्या— अपनयनम् ।
 चि+ बर्ह् ।
 यक्षमविबर्हणम् ।
 वाध् ।
 सपत्नीबाधनम् ।
 उत्+वि+ मुच् ।
 उन्मत्तता-मोचनम् ।
 दुःख—,,
 निर्ऋति—,,
 पाप—,,
 पाश—,,
 बन्ध—,,

मूत्र-- मोचनम् ।
 शाप--,,
 उत्--,,
 पाश - विमोचनम् ।
 नि + वृ ।
 गर्भदोष-निवारणम् ।
 यक्षम्--,,
 रोग--,,
 सर्पविष--,,
 उप+ शम् ।
 कास-शमनम् ।
 पाप--,,
 मन्थु--,,
 वृषरोग--,,
 शाप--,,
 रोग-उपशमनम् ।
 हन् ।
 अलक्ष्मी-घ्नम् ।
 क्रिमि--,,
 रक्षो--,,
 रोग--,,
 विष--,,
 पाप्म-- हा
 पारि+ ह ।
 कृत्यापरिहरणम् ।

भावकरणार्थं निर्दिष्टाः विषयाः ।

दीर्घायुःप्राप्तिः ।
 मेधा- जननम् ।
 सपत्नी- जयः ।
 केश- दंढणम् ।
 गर्भ- दंढणम् ।
 धमनी- बन्धनम् ।
 सर्पेभ्यः- रक्षणम् ।
 आयुर्- वर्धनम् ।
 केश- वर्धनम् ।

मेधा- वर्धनम् ।
 सौभाग्य- वर्धनम् ।
 द्रष्टुः कामः ।
 आयुष्कामः ।
 परस्परैकचित्तीकरणकामः ।
 पुष्टि- कामः ।
 वृष्टि- कामः ।
 सपत्नक्षय- कामः ।
 स्वस्त्ययन- कामः ।

यक्षमनाशनम् ।

(१) गुणबोधक-पदसहिता मन्त्रोक्त-देवताः ।

अग्निः अ. ३, ३१, १, ६; १६८, १७३ । २०, ९६, २; २०८ ।
 १२, २, ३-५, १७-१८, ५०, ५२; २१९-२१, २३३-३४,
 २६६, २६८ । १२, २, १-५५; २१७-७१
 अग्निः कव्यात् १२, २, ७-१०, १५-१६, ३५-३८; २२३-२६,
 २३१-२३२, २५१-५४
 ,, गार्हपत्यः १२, २, ३४, ४४-४६; २५०, २६०-६२
 ,, वैश्वानरः ६, ८५, ३; १८४
 ,, संकुसुमः १२, २, ११-१४, १९, ४०; २२७-३०, २३५,
 २५६
 अघ्न्या ६, ९१, २; २००
 अनड्वान् १२, २, ४८; २६४
 अममन्वती १२, २, २६-२७; २४२-४३
 आदित्यः १२, २, ६; २२२ । १२, ८, २१-२२; २९२-९३
 आदित्याः ९, ८, २२; २९३
 आपः ३, ३१, ३; १७० । ३, ७, ५; १९६ । ६, ९१, ३; २०१ ।
 १२, २, ४०-४१; २५६-५७
 आयुः ३, ३१, ८-१०; १७५-७७
 आयुष्यम् २, ३३, १-७; २९४-३००
 इन्द्रः ६, ८५, २; १८३ । २०, ९६, ९; २०८ । १२, २, ४७,
 ५४; २६३, २७०
 इन्द्राग्नी २०, ९६, ६; २०५
 ऋषयः १२, २, २९-३०; २४५-४६
 ओषधयः ६, २०, २; १८०
 गुल्गुलुः अ. १९, ३८, १-३, २०२-४
 ग्राम्याः पशवः ३, ३१, ३; १७०
 चन्द्रः ३, ३१, ६; १७३
 चन्द्रमाः २, ३३, १-७, २९४-३००
 तक्षमा ६, २०, १-३; १७९-८१
 तारके ३, ७, ४; १९५ । विवृतौ सुभगे ।
 त्वष्टा ३, ३१, ५; १७३ । १२, २, २४; २४०
 दै०[आयुर्वेद०] २५

देवाः ३, ३१, १, ७; १६८, १७४ । ६, ८५, १-२; १८२-८३ ।
 ऋ. १०, ८५, ३१; २३३६ यज्ञियाः ।
 द्यौः ६, २०, २; १८०
 द्यावापृथिवी ३, ३१, ४; १७१
 धाता १२, २, २५; २४१
 पन्थानः ३, ३१, ४; १७१
 पर्जन्यः पर्जन्यस्य ऋष्टिः ३, ३१, ११; १७८
 पवमानः ३, ३१, २; १६९
 पशवः ग्राम्याः ३, ३१, ३; १७०
 पाप्महा ३, ३१, १-११; १६८-७८
 पृथिवी ६, २०, २; १८०
 बृहस्पतिः २०, ९६, ९; २०८
 ब्रह्मा १२, २, ६; २२२ । वसुनातिः ।
 ब्रह्मणस्पतिः १२, २, ६; २२२
 मन्त्रोक्ताः १२, २, १-५५; २१७-७१
 मित्रः अ. ६, ८५, २; १८३
 मृत्युः १२, २, २१-३३; २३७-४९
 यक्षमनाशनम् ऋ. १०, १६३, १-६; १६२-६७ । अ. ३, ३१,
 १-११; १६८-७८ । ६, २०, १-३; १७९-८१ । ८५, १-३;
 १८२-१८४ । १२७, १-३; १८५-८७ । १, १२, १-४;
 १८८-१९१ । ३, ७, ६-७; १९७-९८ । ६, ९१, १-३;
 १९९-२०१ । १९, ३८, १-३; २०२-४ । २०, ९६, ६-१०;
 २०५-९ । ९६, १७-२३; २१०-१६ । ऋ. १०, ८५, ३१,
 २३३६
 यक्षमनिवारणम् अ. ९, ८, १-२२; २७२-९३
 यक्षमरोग नाशनम् अ. १२, २, १-५५; २१८-७१
 यक्षम विवर्हणम् अ. २, ३३, १-७; २९४-३००
 रुद्रः ६, २०, २; १८०
 रुद्राः १२, २, ६; २२२
 वनस्पतिः ६, ८५, १; १८२ । १२७, १-३; १८५-८७

वह्णः ६, २०, २; १८० । ६, ८५, २; १८३
 वसवः १२, २, ६; २२२
 वातः ६ ९१, २; २००
 विचृतौ तारके ३, ७, ४; १९५ । सुभगे ।
 विश्वे देवाः ६, ८५, २; १८३ । १२, २, २८, २४४
 शक्रः अ. ३, ३१, २; १६९
 सर्वशीर्षामयायपाकरणम् २, ८, १-२२; २७२-९३

सविता २०, ९६, ९; २०८
 सुपत्नी १२, २, ३१; २४७ । अनमीवाः अनश्रवाः अविधवाः
 नारीः सुरत्नाः ।
 सूर्यः ३, ३१, ७; १७४ (विश्वतोवीर्यः) । १, १२, १-४;
 १८८-९१ । ६, ९१, २; २०० । अग्निवायुसूर्यात्मा ।
 हरिणः ३, ७, १; १९२ रघुष्यद् । ३, ७, २-३; १९३-९४

(२) यक्षमस्य शरीरगतस्थानानि ।

अंसौ ऋ. १०, १६३, २; १६३ । अ. २०, ९६, १८; २११ ।
 २, ३३, २; २९५
 अक्षिणी ऋ. १०, १६३, १; १६२ । अ. २०, ९६, १७;
 २१० । २, ३३, १; २९४
 अंगम् ऋ. १०, १६३, ६; १६७ । अ. २०, ९६, २३; २१६ ।
 २, ३३, ७; ३००
 अंगानि अ. ९, ८, ९, १९; २८०, २९०
 अङ्गुलयः अ. २०, ९६, २२; २१५ । २, ३३, ६; २९९
 अनुक्यम् ऋ. १०, १६३, २; १६३ । अ. २०, ९६, १८;
 २११ । २, ३३, २; २९५
 अन्तरात्मा अ. ९, ८, ९; २८०
 अष्टीवन्तौ ऋ. १०, १६३, ४; १६५ । अ. २०, ९६, २१;
 २१४ । २, ३३, ५; २९८
 अस्थानि ऋ. १०, १६३, ४; १६५ । अ. २०, ९६, २२;
 २१५ । २, ३३, ६; २९९
 आत्मा ऋ. १०, १६३, ५; १६६ । अ. २०, ९६, २२;
 २१५ । २, ३३, ६; २९९
 आन्त्राणि ऋ. १०, १६३, ३; १६४ । अ. २०, ९६, १९;
 २१२ । २, ३३, ३; २९६
 आस (आसः पञ्च) अ. ९, ८, १०; २८१
 आस्यम् अ. ९, ८, ३; २७४
 उदरम् अ. ९, ८, ९, ११-१२; २८०, २८२-२८३ । २०,
 ९६, २०; २१३ । २, ३३, ४; २९७
 उष्णिहाः ऋ. १०, १६३, २; १६३ । अ. २०, ९६, १८; २११ ।
 २, ३३, २; २९५

ऊरु ऋ. १०, १६३, ४; १६५ । अ. २०, ९६, २१; २१४ ।
 २, ३३, ५; २९८ । अ. ९, ८, ७; २७८
 कक्षम् अ. ६, १२७, २; १८६
 कङ्कषाः अ. ९, ८, २; २७३
 कर्णौ ऋ. १०, १६३, १; १६२ । अ. २०, ९६, १७; २१० ।
 २, ३३, १; २९४ । अ. ९, ८, २-३; २७३-७४
 कीकसाः ऋ. १०, १६३, २; १६३ । अ. २०, ९६, १८;
 २११ । २, ३३, २; २९५
 कुक्षी ऋ. १०, १६३, २; १६३ । अ. २०, ९६, २०; २१३ ।
 २, ३३, ४; २९७
 क्लोमन् अ. ९, ८, १२; २८३
 गवीनिके अ. ९, ८, ७; २७८
 गुदाः ऋ. १०, १६३, ३; १६४ । अ. २०, ९६, १९; २१२ ।
 २, ३३, ३; २९६ । अ. ९, ८, १७; २८८
 ग्रीवाः ऋ. १०, १६३, २; १६३ । अ. २०, ९६, १८; २११ ।
 २, ३३, २; २९५
 छुबुकम् ऋ. १०, १६३, १; १६२ । अ. २०, ९६, १७;
 २१० । २, ३३, १; २९४
 जानू अ. ९, ८, २१; २९२
 जिह्वा ऋ. १०, १६३, १; १६२ । अ. २०, ९६, १७; २१० ।
 २, ३३, १; २९४
 त्वक् (त्वचस्यम्)..... अ. २०, ९६, २३; २१६ । २, ३३,
 ७; ३००
 दोस् (दोषण्यम्) ऋ. १०, १६३, २; १६३ । अ. २०, ९६, २३;
 २१६ । २, ३३, ७; ३००

धमन्यः ऋ. १०, १६३, १; १६२। अ. २०, ९६, २२; २१५।
२, ३३, ६; २९९
नखानि ऋ. १०, १६३, ५; १६६। अ. २०, ९६, २२; २१५।
२, ३३, ६; २९९
नाभिः अ. ९, ८, १२; २८३। २०, ९६, २०; २१३। २,
३३, ४; २९७
नासिका ऋ. १०, १६३, १; १६२। अ. २०, ९६, १७;
२१०। २, ३३, १; २९४
परुस्-रुषि अ. ९, १८, १८; २८९
पर्वन्-र्व ऋ. १०, १६३, ६; १६७। अ. २०, ९६, २३;
२१६। २, ३३, ७; ३००
पाणी ऋ. १०, १६३, ६; १६७। अ. २०, ९६, २२; २१५।
२, ३३, ६; २९९
पादौ अ. ९, १८, २१; २९२
पार्श्वे अ. ९, ८, १५; २८६। अ. २०, ९६, १९; २१२।
२, ३३, ३; २९६
पाष्णीं ऋ. १०, १६३, ४; १६५। अ. २०, ९६, २१; २१४।
२, ३३, ५; २९८
पृष्ठयः अ. ९, ८, १५; २८६
प्रपदे ऋ. १०, १६३, ४; १६५। अ. २०, ९६, २१; २१४।
२, ३३, ५; २९८
प्लाशयः ऋ. १०, १६३, ३; १६४। अ. २०, ९६, २०; २१३।
२, ३३, ४; २१७
प्रीहा ऋ. १०, १६३, ३; १६४। अ. २०, ९६, १९; २१२।
२, ३३, ३; २९६
बाहू ऋ. १०, १६३, २; १६३। अ. २०, ९६, १८; २११।
२, ३३, २; २९५
भंसस् ऋ. १०, १६३, ४; १६५। अ. २०, ९६, २१; २१४।
२, ३३, ५; २९८। अ. ९, ८, २१; २९२
भासदः ऋ. १०, १६३, ४; १६५। अ. २०, ९६, २१;
२१४। २, ३३, ५; २९८

मज्जा अ. ९, ८, १८, २८९। अ. २०, ९६, २२; २१५।
२, ३३, ६; २९९
मतस्नौ ऋ. १०, १६३, ३; १६४। अ. २०, ९६, १९; २१२।
२, ३३, ३; २९६
मस्तिष्कम् ऋ. १०, १६३, १; १६२। अ. २०, ९६, १७;
२१०। २, ३३, १; २९४
मुष्कौ अ. ६, १२७, २; १८६
मूर्धा अ. ९, ८, १३; २८७
मेहनम् ऋ. १०, १६३, ५; १६६
यकृत्-यकृन् ऋ. १०, १६३, ३; १६४। अ. २०, ९६, १९;
२१२। अ. २, ३३, ३; २९६
लोम-मानि ऋ. १०, १६३, ५-६; १६६-१६७। अ. २०,
९६, २३; २१६। २, ३३, ७; ३००
वक्षणाः अ. ९, ८, १६; २८७
वनंकरणम् ऋ. १०, १६३, ५; १६६
वनिष्टुः ऋ. १०, १६३, ३; १६४। अ. २०, ९६, २०;
२१३। २, ३३, ४; २९७
शीर्षन् अ. ९, ८, १-५, २२; २७२-७६, २९३
शीर्षन् (शीर्षण्यम्) ऋ. १०, १६३, १; १६२। अ. २०,
९६, १७; २१०। २, ३३, १; २९४
श्रोणी ऋ. १०, १६३, ४; १६५। अ. २०, ९६, २१; २१४।
२, ३३, ५; २९८। अ. ९, ८, २१; २९२
सीमन्-मा अ. ९, ८, १३; २८४
स्नावन्-वा ऋ. १०, १६३, ४; १६५। अ. २०, ९६, २२;
२१५। २, ३३, ६; २९९
हलीक्षणम् ऋ. १०, १६३, ४; १६५। अ. २०, ९६, १९;
२१२। २, ३३, ३; २९६
हृदयम् ऋ. १०, १६३, ३; १६४। अ. २०, ९६, १९; २१२।
२, ३३, ३; २९६। अ. ९, ८, ८, १२, १४, २२; ८७९, २८३;
२८५, २९३

(३) गुणबोधकपदसहिताः यक्षमभेदाः ।

अक्षयोः विसल्पकः अ. ६, १२७, ३; १८७
अघशंसः १२, २, २; २१८
अंगज्वरः ९, ८, ५; २७६

अंगभेदः ९, ८, ५; २७६। ९, ८, २२; २९३
अंगयः विसल्पकः ६, १२७, ३; १८७
अज्ञातः यक्षमः ६, १२७, ३; १८७

अज्ञातयक्ष्मः २०,९६,६; २०५
 अधराञ्च् ६,१२७,३; १८७
 अन्धः पुरुषः (अन्धत्वम्) ९,८,४; २७५
 अवा ९,८,९; २८०
 अभिशोचयिष्णुः ६,२०,३; १८१
 अघ्नजाः १,१२,३; १९०
 अरातिः ३,३१,१; १६८ । १२,२,३; २१९
 अरुणः ६,२०,३; १८१
 अर्षणीः ९,८,१३,१६,२१; २८४,२८७,२९२
 अलाजिः ९,८,२०; २८१
 भार्तिः ३,३१,२; १६९
 आसो बलासः ९,८,१०; २८१
 कर्ण्यः विसल्पकः ६,१२७,३; १८७
 कर्णशूलः ९,८,१-२; २७२-७३
 कासः १,१२,३; १९०
 काहाबाहः ९,८,११; २८२
 कीकसाः ९,८,१४; २८५
 क्षेत्रियः ३,७,१-७; १९२-९८
 गुष्पितः हृदि ३,७,२; १९३
 गोषु यक्ष्मः १२,२,१; २१७
 ग्राहिः २०,९६,६; २०५
 जातः पर्वणि पर्वणि ऋ. १०,१६३,६; १६७
 तक्मा ६,२०,१-३; १७९-८१ । ९,८,६; २७७
 तपुर्वधः ६,२०,१; १७९
 तिलिपजः १२,२,५४; २७०
 त्वचस्यः २०,९६,२३; २१६
 दण्डनम् १२,२,५४; २७०
 दुःशंसः १२,२,२; २१८
 दुर्भूतं सर्वम् ३,७,७; १९८
 दोषण्यः यक्ष्मः ऋ. १०,१६३,२; १६३
 निर्ऋतिः २०,९६,७; २०६ । १२,२,३; २१९
 पापकृत्या ३,३६,२; १६९
 पाप्मा सर्वः ३,३१,१-११; १६८-७८
 पुरुषेषु यक्ष्मः १२,२,१; २१७
 प्रमोतः पुरुषः (प्रमोतत्वम्) ९,८,४; २७५

बभ्रुः (तक्मा) ६,१०,३; १८१
 बलासः ६,१२७,२; १८६ । ९,८,८,१०; २७९,२८१
 मूत्रं आमयत् ९,८,१०; २८१
 मृत्युः १२,२,३; २१९
 यक्ष्मः (बहुशः प्रतिसूक्तम्)।
 रपः ६,९१,१-२; १९९-२००
 राजयक्ष्मः २०,९६,६; २०५
 रोपणाः ९,८,१९; २९०
 लोहितः ६,१२७,२; १८६
 वन्यः ६,२०,३; १८१
 वातजाः १,१२,३; १९०
 वातीकारः ९,८,२०; २९१
 विद्रधः ६,१२७,१,३; १८५,१८७ । ९,८,२०; २९१
 विलोहितः ९,८,१; २७२
 विश्वशारदः ९,८,६; २७७
 विश्वाङ्ग्यः ९,८,५; २७६
 विषूचीनः ३,७,१; १९२
 विष्वङ् २०,९६,२३; २१६
 विसल्पः ९,८,२०; २९१
 विसल्पकः ६,१२७,३; १८७ । ९,८,२,५; २७३,२७६
 शपथः १९,३८,१; २०२
 शरुः १२,२,४७; २६३
 शीर्ष्णः रोगः ९,८,२२; २९३
 शीर्षण्यः यक्ष्मः ऋ. १०,१६३,१; १६२ । अ. २०,९६,
 १७; २१०
 शीर्षण्यः रोगः ९,८,१-५; २७२-७६
 शीर्षाक्तिः १,१२,३; १९० । १२,२,१९-२०;
 २३५-३६ । ९,८,१, २७२
 शीर्षामयः ९,८,१; २७२
 शुष्मः १,१२,३; १९०
 शुष्मी ६,२०,१; १७९
 सीसम् १२,२,२०; २३६
 हरिमा ९,८,९; २८०
 हृदयामयः ६,१२७,३; १८७

(४) दीर्घायुत्वपर्यायाः ।

| | |
|------------|----------------------------------|
| आयुः | ३,३१,१-११; १६८-७८ । १२,२,२५; २४१ |
| „ दीर्घम् | १२,२,६,३२,५५; २२२,२४८,२७१ |
| „ द्राघीयः | १२,२,३०; २४६ |
| „ सर्वम् | २०,९६,१०; २०९ । १२,२,२४; २४० |
| „ शतम् | २०,९६,८-९; २०७-८ |
| „ जरसम् | १२,२,२४; २४० |

| | |
|-------------|--------------|
| शतं वसन्ताः | २०,९६,९; २०८ |
| „ शरदः | २०,९६,९; २०८ |
| „ हेमन्ताः | २०,९६,९; २०८ |
| „ हिमाः | १२,२,८; २४४ |
| शतशारदम् | २०,९६,७; २०६ |

(५) भैषज्यम् ।

(१) ओषधयः ।

| | |
|------------------------|------------------|
| गुल्गुलुः | १९,३८,१-३; २०२-४ |
| गुल्गुलु, सैन्धवम् | १९,३८,१; २०३ |
| „ समुद्रियम् | १९,३८,२; २०३ |
| गुल्गुलोः सुरभिः गन्धः | १९,३८,१; २०२ |
| चीपु-द्रुः | ६,१२७,२; १८६ |
| यवः | ६,११,१८; १९९ |

| | |
|------------------------|--------------|
| वरणः (वनस्पतिः देवः) | ६,८५,१; १८२ |
| वनस्पतिः | ६,१२७,१; १८५ |

(२) अन्ये पदार्थाः ।

| | |
|-------------------------|--------------------------|
| आपः | ३,७,५; १९६ । ६,९१,३; २०१ |
| हरिणस्य शीर्षाणि भैषजम् | ३,७,१; १९२ |
| हरिण- विषाणम् | ३,७,१-२; १९-२९३ |

ओषधिवनस्पतयः ।

ओषधिदेवता-गुणबोधक पदानि ।

| पदानि । | स्थानम् । | विशेषनाम । | पदानि । | स्थानम् । | विशेषनाम । |
|--------------------|---------------|------------|---------------|--------------------------------|------------|
| अंशुमत्यः | अ० ८,७,४; ३२७ | ओषधयः | अपक्नीताः | ८,७,११; ३३४ | ओषधयः |
| अग्नेः घासः | अ. ८,७,८ ३३१ | „ | अपां स्वसा | ५,५,७; ४३४ | लाक्षा |
| अग्रं आपः | अ० ८,७,३; ३२६ | „ | अपां गर्भः | ८,७,८; ३३१ | ओषधयः |
| अग्रं ओषधीनाम् एषि | ४,१९,३; ३९८ | अपामार्गः | अपामार्गः | ४,१७,१-८ । १८,१-८ । १९,१-८ । | |
| अग्रं मधुमत् | ८,७,१२; ३३५ | ओषधयः | | ७,६५,१-३; ३८०-४०६ | विशेषनाम |
| अजबध्रु पिता | ५,५,८; ४३५ | लाक्षा | अपुष्पाः | ऋ० १०,९७,१५; ३१५ | ओषधयः |
| अतिविद्धभेषजी | ६,१०९,१; ४१३ | पिप्पली | अफलाः | ऋ० १०,९७,१५; ३१५ । ८,७,२७; ३५० | „ |
| अनङ्गान् जगताम् | १९,३९,४; ४५० | कुष्ठः | अबन्धुकृत् | ४,१९,१; ३९६ | अपामार्गः |
| अनाधुषः | ६,११,३; ४५९ | रेवतीः | अभिदीपयन् | ४,१९,३; ३९८ | „ |
| अनावयुः | ६,१६,१; ४६६ | विशेषनाम | अभिष्टुताः | ८,७,११; ३३४ | ओषधयः |
| अन्नं घृतं आसाम् | ८,७,१२; ३३५ | ओषधयः | अमृतस्य भक्षः | ८,७,१२; ३३५ | „ |

| | | | |
|--|-------------|--|---------------------|
| अयक्ष्मान् पुरुषान् करत् ६,५९,२; ४०८ | अरुन्धती | ऊर्जयन्ती ऋ. १०,९७,७; ३०७ | वि. नाम |
| अरुन्धती ८,७,६; ३२९ । ६,५९,१-३ | ओषधिविशेषः | ऋतावरी ६,३०,३; ४७२ | शमी |
| ,, ६,५९,१-३; ४०७ ९ | ,, | एकशृङ्गाः ८,७,४; ३२७ | ओषधयः |
| ,, ४,१२,१; ४२१ | रोहणी | ओषधिः ओषधयः (बहुलं दृश्यते)। | सामान्यनाम |
| ,, ५,५,५; ४३२ | लाक्षा | ओषधीनां गर्भः ६,९५,३; ४१२ | कुष्ठः, अश्वत्थो वा |
| अर्यमा पितामहः ५,५,१; ४२८ | ,, | कण्वजम्भनी २,२५,१; ४१६ | पृश्निपर्णी |
| अलसाला (पूर्वा) ६,१६,४; ४६९ | विशेषनाम | काण्डिनीः ८,७,४; ३२७ | ओषधयः |
| अषकोत्वाः ८,७,९; ३३२ | ओषधयः | कानीनः ५,५,५; ४३५ | लाक्षा |
| अवपतन्तीः दिवः ऋ. १०,९७,१५; ३१५ | ,, | कुष्ठः ६,९५,१-३; ४१०-१२ । ५,४,१-१०। १९, | वि. नाम |
| अश्वत्थः ५,५,५; ४३२। ५,४,३; ४३९। १९,३९,६; | विशेषनाम | ३९,१-१०; ४३७-४५६ | ओषधयः |
| ४५२ | ओषधयः | कृत्यादृषणीः ८,७,१०; ३३३ | ,, |
| अश्वत्थः, दर्भः ८,७,२०; ३४३ | ओषधयः | कृष्णाः ८,७,१; ३२४ | रेवतीः |
| अश्वत्थे निषूदनम् ऋ. १०,९७,५; ३०५ । वा० य० | ,, | केशहंघ्नीः ६,२१,३; ४५९ | ,, |
| १२,७९; ३५,४; ३५८ | वि. नाम | केशवर्धनीः ६,२१,३; ४५९ | वनस्पतिः |
| अश्वत्थी ऋ. १०,९७,७; ३०७ | ओषधयः | केशवर्धनी ६,१२,७,१; ४६३ | पिप्पली |
| असिक्नी ८,७,१; ३२४ | ,, | क्षिप्तभेषजी ६,१०९,१; ४१३ | ,, |
| आंगिरसीः ८,७,१७,२४; ३४०,३४७ | लाक्षा | क्षिप्तस्य भेषजी ६,१०९,३; ४१५ | ओषधिविशेषः |
| आत्मा वातः ५,५,७; ४३४ | ओषधयः | खदिरः ५,५,५; ४३२ | ओषधयः |
| आपः अप्रम् ८,७,३; ३२६ | वि. नाम | गर्भः अपाम् ८,७,८; ३३१ | अश्वत्थः कुष्ठो वा |
| आबयुः ६,१६,१; ४६६ | ओषधयः | ,, ओषधीनाम् ६,९५,३; ४१२ | ,, |
| आभूताः ८,७,८,२५; ३३१,३४८ | वि. नाम | ,, विश्वस्य भूतस्य ” ” ” ” | ,, |
| इक्ष्वाकुः १९,३९,९; ४५५ | ओषधयः | ,, हिमवताम् ” ” ” ” | ,, |
| इक्षुतिः माता ऋ. १०,९७,९; ३०९ | ,, | गोभाजः ऋ. १०,९७,५; ३०५। वा० य० १२,७९, | ओषधयः |
| उक्थिन्-क्थी वा० य० २८,३३; ३७६ | वनस्पतिः | ३५,४; ३५८ | अरुन्धती |
| उक्षिता अश्वस्य अन्वा ५,५,८; ४३५ | लाक्षा | गोष्ठं पयस्वन्तं करत् ६,५९,२; ४०८ | ओषधयः |
| उग्राः ८,७,४,१०; ३२७,३३३ | ओषधयः | घातः अमेः ८,७,८; ३३१ | लाक्षा |
| उग्रा २,२५,१; ४१६ | पृश्निपर्णी | जनानां न्यखनी ५,५,२; ४२९ | जयन्ती ५,५,३; ४३० |
| उत्तमः ५,४,९; ४४५ | कुष्ठः | जातः त्रिः आदित्येभ्यः परि १९,३९,५; ४५१ | कुष्ठः |
| उत्तमः नाम ते पिता ५,४,९; ४४५ | ,, | ,, ,, विश्वेभ्यो देवेभ्यः १९,३९,५; ४५१ | ,, |
| उत्तमः ओषधीनाम् १९,३९,४; ४५० | वि. नाम | ,, ,, शाम्बुभ्यो अंगिरीभ्यः १९,३९,५; ४५१ | ,, |
| उत्तरा ३,१,४; ३६७ | वि. नाम | ,, देवेभ्यः अधि ५,४,७; ४४३ | ,, |
| उत्तानपर्णी ३,१,२; ३६५ | ओषधयः | ,, सुपर्णसुवने गिरौ ५,४,२; ४३८ | ,, |
| उदकात्मानः ८,७,९; ३३२ | वि. नाम | ,, हिमवतः उदङ् ५,४,८; ४४४ | ,, |
| उदोजस्-जाः ऋ. १०,९७,७; ३०७ | अरुन्धती | जामयः ऋ. ३,५७,३; ३६३ | ओषधयः |
| उज्जयन्ती ८,७,६; ३२९ | ओषधयः | जामिकृत् ४,१९,१; ३९६ | अपामार्गः |
| उन्मुञ्चन्तीः ८,७,१०; ३३३ | | | |

| | | | |
|--|-----------------|--|----------------|
| जीवन्ती ८,७,६; ३२९ | विशेषनाम | नमस्यन्तीः ऋ. ३,५७,३; ३६३ | ओषधयः |
| जीवन्तो नाम पिता १९,३९,३; ४४९ | कुष्ठः | नितत्नी ६,१३६,१; ४६० | वि. नाम |
| जीथला ८,७,६; ३२९ | वि. नाम | निषदनं अश्वत्थे ऋ. १०,९७,५; ३०५ | ओषधयः |
| जीवला नाम ते माता १९,३९,३; ४४९ | कुष्ठः | निष्कृतिः ५,५,६; ४३३ | लाक्षा |
| जीवला ६,५९,३; ४०९ | अश्वत्थी | निष्कृतिः ऋ. १०,९७,९; ३०९ | ओषधयः |
| जोष्टा धियः वा. य. २८,१०; ३७५ | वनस्पतिः (यूपः) | नीलागलसाला ६,१६,४; ४६९ | वि. नाम |
| तक्मनाशनः ५,४,१-२; ४३७-४३८ | कुष्ठः | न्यग्रोधः ५,५,५; ४३२ | वि. नाम |
| तीक्ष्णशृंग्यः ८,७,९; ३३२ | ओषधयः | न्यग्रचनी जनानाम् ५,५,१; ४२८ | लाक्षा |
| त्विषीमती ४,१९,२; ३९७ | अपामार्गः | पतात्रिणी ५,५,९; ४३६ | " |
| त्राता पाकस्य ४,१९,३; ३९८ | " | पतात्रिणीः ऋ. १०,९७,९; ३०९ | ओषधयः |
| त्रायमाणः १९,३९,१; ४४७ | कुष्ठः | पयस्वतीः ८,७,१७; ३४० | " |
| दर्भः अश्वत्थः वीरुधाम् ८,७,२०; ३४३ | अश्वत्थः | परागताः दूरम् ऋ. १०,९७,२१; ३२१ | " |
| दिव्याः ८,७,३,२४; ३२६,३४७ | ओषधयः | परिष्ठाः ऋ. १०,९७,१०; ३१० | " |
| देवः १९,३९,१; ४४७ | कुष्ठः | पर्णः ५,५,५; ४३२ | वि. नाम |
| देवः वा. य. ५,४२-४३; ३७०-३७१ । २०,४५; | | पर्णं मधुमत् ८,७,१२; ३३५ | ओषधयः |
| ३७२ । २८,४३; ३७७ । २९,३५; ३७९ | वनस्पतिः (यूपः) | पर्णं वसतिः ऋ. १०,९७,५; ३०५ | " |
| देवीः ऋ. १०,९७,४; ३०४ | ओषधयः | पर्युक्ता कण्वेन नार्षदेन ४,१९,२; ३९७ | अपामार्गः |
| देवी ६,१३६,१; ४६० | नितत्नी | पाकस्य त्राता ४,१९,३; ३९८ | " |
| देवजूता ३,१८,२; ३६५ | उत्तानपर्णा | पारयिष्णवः ऋ. १०,९७,३; ३०३ | ओषधयः |
| देवलोकं प्रजानन् २९,१०; ३७८ | वनस्पतिः (यूपः) | पिता अजबभ्रः ५,५,८; ४३५ | (सिलाची)लोक्षा |
| देवसदनः ५,४,३; ४३९ | अश्वत्थः | " द्यौः ८,७,२; ३२५ | ओषधयः |
| देवेभ्यः त्रियुगं पुरा ऋ. १०,९७,१; ३०१ | ओषधयः | " नमः ५,५,१; ४२८ | (सिलाची)लाक्षा |
| देवानां स्वसा ५,५,१; ४२८ | लाक्षा | " विभिन्दिन् नाम ४,१९,५; ४०० | अपामार्गः |
| द्यौः पिता ८,७,२; ३२५ | ओषधयः | " विहहो नाम ६,१६,२; ४६७ | आबयुः |
| धनं सनिध्यन्तीः ऋ. १०,९७,८; ३०८ | " | पितामहः अर्यमा ५,५,१; ४२८ | लाक्षा |
| धवः ५,५,५; ४३२ | वि. नाम | पिप्पली-ल्यः ६,१०९,१-२; ४१३-४१४ | वि. नाम |
| धामानि शतम् ऋ. १०,९७,२; ३०२ | ओषधयः | पुनर्नवाः ८,७,८; ३३१ | ओषधयः |
| धामानि शतं सदा च ऋ. १०,९७,१; ३०१ | " | पुनः सरा ४,१७,२; ३८१ | अपामार्गः |
| धियः जोष्टा वा. य. २८,१०; ३७५ | वनस्पतिः (यूपः) | पुरुषजीवनीः ८,७,४; ३२७ | ओषधयः |
| धेनवः ऋ. ३,५७,३; ३६३ | ओषधयः | पुष्पा ८,७,६; ३२९ | वि. नाम |
| ध्रुवाः ८,७,८; ३३१ | " | पुष्पं मधुमत् ८,७,१२; ३३५ | ओषधयः |
| नद्यमारः १९,३९,२; ४४८ | कुष्ठः | पुष्पिणीः ऋ. १०,९७,१५; ३१५ | " |
| नद्यायम् १९,३९,२; ४४८ | " | पुष्पवतीः ऋ. १०,९७,३; ३०३ । अ. ८,७,२७; | " |
| नद्यारिषः ८,७,६; ३२९ | ओषधयः | ३५० | " |
| नद्यारिषः १९,३९,२; ४४८ | कुष्ठः | पूर्वा जाताः ऋ. १०,९७,१; ३०१ | " |
| नभः पिता ५,५,१; ४२८ | लाक्षा | पृथिवी माता ८,७,२; ३२५ | " |

| | | | |
|---|-----------------|---|-------------------|
| पृथयः ८,७,१; ३२४ | ओषधयः | मधुमान् ऋ. १,९०,८; ४७३ | वनस्पतिः |
| पृश्निपर्णी २,२५,१-४; ४१६-४१९ | वि. नाम | मधुमती ८,७,६; ३२९ | ओषधयः |
| प्रचेतसः ८,७,७; ३३० | ओषधयः | मधुना संयुतः ६,३०,१; ४७० | यवः |
| प्रजाता मधोः अधि १,३४,१; ४७८ | मधुवनस्पतिः | मधुजाता १,३४,१; ४७८ | मधुवनस्पतिः |
| प्रजानन् देवलोकम् वा० य० २९,१०; ३७८ | वनस्पतिः | मधोः अधि प्रजाता " " | " |
| प्रतन्वतीः ८,७,४; ३२७ | ओषधयः | मधोः सम्भक्ताः ८,७,१२; ३३५ | ओषधयः |
| प्रतीचीन फलः ४,१९,७; ४०२ | अपामार्गः | मध्यं मधुमत् ८,७,१२; ३३५ | " |
| प्रत्यातिष्ठन्ती ५,५,३; ४३० | लाक्षा | मातरः ऋ. १०,९७,४; ३०४ | " |
| प्रथमा (सहमाना) २,२५,२; ४१७ | पृश्निपर्णी | माता इष्टकृतिः ऋ. १०,९७,९; ३०९ | " |
| प्रसूमतीः ८,७,२७; ३५० | ओषधयः | माता पृथिवी ८,७,२; ३२५ | " |
| प्रसूवरीः ऋ. १०,९७,३; ३०३ | " | माता मदावती नाम ६,१६,२; ४६७ | आबयुः |
| प्रस्तृणतीः ८,७,४; ३२७ | " | माता रात्रिः ५,५,१; ४२८ | लाक्षा |
| प्लक्षः ५,५,५; ४३२ | वि. नाम | माध्वीः ऋ. १,९०,६; ३६२ | ओषधयः |
| फलिनीः ऋ. १०,९७,१५; ३१५ | ओषधयः | मूलं मधुमत् ८,७,१२; ३३५ | " |
| बभ्रवः ऋ. १०,९७,१; ३०१ । ८,७,१; ३२४ | " | मूलं समुद्रः ८,७,२; ३२५ | " |
| बलवत्तमा वीरुधाम् ३,१८,१; ३६४ | उत्तानपर्णा | मेदिनीः ८,७,७; ३३० | " |
| बलासनाशनीः ८,७,१०; ३३३ | ओषधयः | यवः ८,७,२०; ३४३ । ६,३०,१; ४७० | वि. नाम |
| बह्नीः ऋ. १०,९७,१५; ३१५ । ६,९६,१; ३५२ | " | रक्षसः हन्ता ४,१९,३; ३९८ | अपामार्गः |
| बृहत्पलाशा ६,३०,३; ४७२ | शमी | रराणः त्मना देवेभ्यु वा. य. २७,२१; ३७४ वनस्पतिः (यूपः) | " " |
| बृहस्पतिप्रसूताः ऋ. १०,९७,१५,१९; ३१५,३१९; ६,९६,१; ३५२ | ओषधयः | रशनां बिभ्रत् वा. य. २८,३३; ३७६ | " " |
| भक्षः अमृतस्य ८,७,१२; ३३५ | " | राजा वनस्पतिः यासाम् ८,७,१६; ३३९ | ओषधयः |
| भगः वा० य० २८,३३; ३७६ | वनस्पतिः (यूपः) | राजा वीरुधाम् ८,७,२०; ३४३ | सोमः |
| भद्रः ५,५,५; ४३२ | वि. नाम | रात्रिः माता ५,५,१; ४२८ | लाक्षा |
| भद्रा ४,१२,२; ४२२ | रोहणी | रुहः सहस्रं यासाम् ऋ. १०,९७,२; ३०२ | ओषधयः |
| भर्त्री शश्वताम् ५,५,२; ४२९ | लाक्षा | रेवतीः ६,२१,३; ४५९ | वि. नाम |
| भूमिं सन्तन्वतीः ८,७,१६; ३३९ | ओषधयः | रोहणी ४,१२,१; ४२१ | वि. नाम |
| भेषजीः ८,७,८; ३३१ | " | रोहिणीः ८,७,१; ३२४ | ओषधयः |
| भेषजौ ८,७,२०; ३४३ | व्रीहिः यवश्च | लाक्षा ५,५,७; ४३४ | लाक्षा |
| भेषजानां श्रेष्ठः ६,२१,२; ४५८ | चन्द्रमाः | लोमशवक्षणा ५,५,७; ४३४ | " |
| मणिः वैयाघ्रः यासाम् ८,७,१४; ३३७ | वीरुधः | वनस्पतिः वा० य० ५,४२-४३ । २०,४५ । | |
| मदावती नाम माता ६,१६,२; ४६७ | आबयुः | २१,२१ । २७,२१ । २८,१०. ३३. ४३; | |
| मधुमत् अग्रम् ८,७,१२; ३३५ | ओषधयः | ३७०-३७७ | वनस्पतिः (यूपः) |
| " पर्णम् " " | " | वनस्पतिः (उपर्युक्तान्यस्थले सामान्यनाम रूपेण निर्देशः) । | |
| " पुण्यम् " " | " | वपुष्टमा ५,५,६; ४३३ | लाक्षा |
| " मध्यम् " " | " | वर्षवृद्धा ६,३०,३; ४७२ | शमी |
| " मूलम् " " | " | वशिः वा० य० २८,३३; ३७६ | (वनस्पतिः) यूपः |

| | | | |
|---|-----------------|-----------------------------------|----------------------|
| वशी ४,१७,८; ३८७ | अपामार्गः | शतशाखा ४,१९,५; ४०० | अपामार्गो वनस्पतिः |
| वसतिः पर्णं वः ऋ. १०,९७,५; ३०५ । वा. व्य० | | शपथयावनी ४,१७,२; ३८१ | " " |
| १२,७९; ३५,४; ३५८ | ओषधयः | शमिता वा. य. २१,२१; २७,२१; | |
| वातः आत्मा ५,५,७; ४३४ | लक्षा | २८,१०,३३; ३७३-३७६ | वनस्पतिः (यूपः) |
| वातीकृतस्य भेषजी ६,१०९,३; ४१५ | पिप्पली | शमी ६,३०,३; ४७२ | वि. नाम |
| वावशानाः पुत्रम् ऋ. ३,५७,३; ३६३ | ओषधयः | शक्ता भर्त्री ५,५,२; ४२९ | लाक्षा |
| विभिन्दन् नाम पिता ४,१९,५; ४०० | अपामार्गः | शिवाः ८,७,१७; ३४० | ओषधयः |
| विभिदन्तो ४,१९,५; ४०० | " | शुकाः ८,७,१; ३२४ | " |
| विवरुणाः ८,७,१०; ३३३ | ओषधयः | शुष्मा ५,५,७; ४३४ | लाक्षा |
| विशाखाः ८,७,४; ३२७ | " | सजिन्वरीः ऋ. १०,९७,३; ३०३ | ओषधयः |
| विश्वाः ऋ. १०,९७,१०; ३१० | " | सत्यजित् ४,१७,२; ३८१ | अपामार्गः |
| विश्वधार्वायः १९,३९,१०; ४५६ | कुष्ठः | सनिष्यन्तीः धनम् ऋ. १०,९७,८; ३०८ | ओषधयः |
| विश्वभेषजः १२,३९,५-९; ४५१-४५५ | " | सन्तन्वन्ती भूमिम् ८,७,१६; ३३९ | " |
| विश्वभेषजी ६,१३६,३; ४६२ | नितत्नी | समुद्रः मूलम् ८,७,२; ३२५ | " |
| विश्वभेषजीः ८,७,२६; ३४९ | ओषधयः | सम्पतिता अश्वस्य अस्नः ५,५,९; ४३६ | लक्षा |
| विश्वतोमुखः ७,६५,२; ४०५ | अपामार्गः | सम्भक्ता मधोः ८,७,१२; ३३५ | ओषधयः |
| विश्वरूपा ६,५२,३; ४०९ | अरुन्धती | सरा ५,५,९; ४३६ | लाक्षा |
| विश्वस्य भूतस्य गर्भः ६,९५,३; ४१२ | कुष्ठौषधिः | सहमानाः ८,७,५; ३२८ | ओषधयः |
| विषदूषणीः ८,७,१०; ३३३ | ओषधयः | " २,२५,२; ४१७ | पृथ्वीर्णा |
| विष्णुः वा. य. ५,४२; ३७० | वनस्पतिः (यूपः) | " ४,१७,२; ३८१ | अपामार्गः |
| विष्टिताः पृथिवीं अनु ऋ. १०,९७,१९; ३१९ | " | सहस्रधामा ४,१८,४; ३९१ | " |
| विहहो नाम ते पिता ६,१६,२; ४६७ | आवयुः | सहस्रनाम्नीः ८,७,८; ३३१ | ओषधयः |
| वीरुधः ऋ. १०,९७,३,२१; ३०३,३२१ । ८,७,२; | | सहस्रपर्ण्यः ८,७,१३; ३३६ | " |
| ३२५ | सामान्यव ची | सहस्वती ३,१८,२,५; ३६५,३६८ | उत्तरा उत्तनपर्णा वा |
| वीरुधां पतिः ४,१९,४; ४०३ | अपामार्गः | " २,२५,१; ४१६ | पृथ्वीर्णा |
| वीरुधां बलवत्तमा ३,१८,१; ३६४ | उत्तानपर्णा | सासहिः ३,१८,५; ३६८ | उत्तरा |
| वीरुधां बलवत्तमः ५,४,१; ४३७ | कुष्ठः | सिलाची ५,५,१,८; ४२८, ४३५ | लाक्षा |
| वीरुधानां वसिष्ठः ६,२१,२; ४५८ | चन्द्रमाः | सिलाज्जाला ६,१६,४; ४६२ | आवयुः |
| वृक्षाः उपस्तयः तव ऋ. १०,९७,२३; ३२३ | सोमः | सिषासवः ६,२१,३; ४५९ | रेवतीः केशवर्धनीः |
| वैश्वदेवीः ८,७,४; ३२७ | ओषधयः | सीराः ऋ. १०,९७,९; ३०९ | ओषधयः |
| व्रीहिः ८,७,२०; ३४३ | वि. नाम | सुपर्णाः ८,७,२४; ३४७ | " |
| शतक्रतुः वा. य. २८,१०,३३; ३७५-३७६ | वनस्पति (यूपः) | सुपिप्पलाः वा. य. ११,४८; ३५७ | " |
| शतक्रवः ऋ. १०,९७,२; ३०२ | ओषधयः | सुभगा ३,१८,२; ३६५ | उत्तानपर्णा |
| शतवल्शाः वा. य. ५,४३; ३७१ | वनस्पतिः (यूपः) | " ६,५९,३; ४०९ | अरुन्धती |
| शतवल्शा ६,३०,२; ४७१ | शम | " ५,५,६-७; ४३३-४३४ | लाक्षा |
| शतविचक्षणः ऋ. १०,९७,१८; ३१८ । ६,९६,१; | ओषधयः | " ६,३०,३; ४७२ | शमी |
| ३५२ | | | |

| | | | |
|---------------------------------------|-----------|---|-----------------|
| सूर्यवर्णा ५, ५, ६; ४३३ | लाक्षा | स्वधितिः वा० य० ४, १; ५, ४२; ६, १५; ३५५ । | |
| सोमः ६, २१, २; ४५८ | चन्द्रमाः | ५, ४२; ३७० | ओषधिः |
| सोमः (राजा) ऋ. १०, ९७, २२-२३; ३२२-३२३ | | स्वसा अपाम् ५, ५, ७; ४३४ | लाक्षा |
| ८, ७, २०; ३४३ । ६, ९६, ३; ३५४ | वि. नाम | स्वसा देवानाम् ५, ५, १; ४२८ | सिलाची (लाक्षा) |
| सोम-राज्ञीः ऋ. १०, ९७, १८-१९; ३१८-१९ | | हन्ता रक्षसः ४, १२, ३; ३९८ | अपामार्गः |
| ६, ९६, १; ३५२ | ओषधयः | हितः सखा सोमस्य ५, ४, ७; ४४३ | कुष्ठः |
| सोमावती ऋ. १०, ९७, ७; ३०७ | वि. नाम | हिमवतां गर्भः ६, ९५, ३; ४१२ | " |
| स्तम्बिनीः ८, ७, ४; ३२७ | ओषधयः | हिरण्यवर्णः वा० य० २८, ३३; ३७६ | वनस्पतिः (यूपः) |
| स्पर्णी ५, ५, ३; ४३० | लाक्षा | हिरण्यवर्णा ५, ५, ६-७; ४३३-३४ | लाक्षा |

रोगचिकित्सान्तर्गता ओषधयः ।

घनस्पतिः सौभाग्यवर्धनी । ६, १३९, १-५; ६७७-६८१

कल्याणी ३; ६७९

त्रयस्त्रिंशत् नितानाः १; ६७७

न्यस्तिका १; ६७७

बभ्रु ३; ६७९

वीर्यावती ५; ६८१

शतं प्रतानाः १; ६७७

संवननी ३; ६७९

समुष्पला ३; ६७९

सदस्त्रपर्णी १; ६७७

सुभगंकरणं १; ६७७

घनस्पतिः मधुला (रोगोपशमनम्) । ५, १५, १-११;

६५३-६६३

ऋतजाता १-११; ६५३-६६३

ऋतापरी १-११; ६५३-६६३

घनस्पतिः (शापमोचनम्) । २, ७, १-५; ६६८-६७२

अर्घद्विष्टा १; ६६८

देवजाता १; ६६८

मूलं दिवः अवततम् ३; ६७०

मूलं पृथिव्या अधि उततम् ३; ६७०

शापथोपनी वीरुत् १; ६६८

सदस्त्रकाण्डः ३; ६७०

अलक्ष्मी- (दोषः) । १, १८, १-४; ६७३-६७६

अरणिः पदोः २; ६७४

" हस्तयोः २, ६७४

अरातिः १, ६७३

गोषेधा ४; ६७६

घेरः आत्मनि ३; ६७५

" केशेषु "

" तन्वाम् "

" प्रतिचक्षणे "

निर्लेक्ष्यम् १, ६७३

रिश्यपदी ४; ६७६

ललाम्यम् १, ४; ६७३, ६७६

विधमा ४; ६७६

विलीढ्यम् ४; ६७६

वृषदती ४; ६७६

रोगचिकित्सा ।

(१) रोगाणां नामानि, तेषां गुणबोधकपदानि च ।

अपचितः गण्डमालाः वा (५०३-५१६)

अपचित्-तः ६,८३,१,३; ५१३,५१५

अरसतराः सेहोः ७,७६,१; ५०७

असतराः असतीभ्यः ७,७६,१; ५०७

अवीरघ्नीः ६,८३,२; ५१४

असूतिवत् ६,८३,३; ५१५

उपपक्ष्याः अपचितः ७,७६,२; ५०८

एनी ६,८३,२; ५१४

ककुदिभ्रितः ७,७६,३; ५०९

कीकसाः प्रशृणाति यः ७,७६,३; ५०९

कृष्णा ६,८३,२; ५१४

गलुन्तः ६,८३,३; ५१५

ग्रैव्याः अपचितः ७,७६,२; ५०८

ग्लौः ६,८३,३; ५१५

जायान्यः ७,७६,३-५; ५०९-५११

तलीयं अवतिष्ठमाना ७,७६,३; ५०९

माता यासां कृष्णा ७,७६,१; ५०३

रामायणी ६,८३,३; ५१५

रोहिणी ६,८३,२; ५१४

लोहिनी ७,७६,१; ५०३

विक्लेदीयसीः लवणात् ७,७६,१; ५०७

विजान्ति याः अपचिताः ७,७६,२; ५०८

श्येनी ६,८३,२; ५१४

सुस्रसः सुस्रसः ७,७६,१; ५०७

स्वयंस्त्रसः ७,७६,२; २

अलक्ष्मी दोषः । १,१८,१४; ६७३-७६

इषु- (वेधः) । ६,१०,१-३; ६२०-६२२

इषुः अस्यमाना १,३; ६२०,६२२

” निपतिता ३; ६२२

” प्रतिहिता ३; ६२२

” विसृज्यमाना ३; ६२२

ईर्ष्या । ६८२-६८६

अग्निः हृदयः ६,१८,१; ६८२

मनस्कं पतयिष्णुकम् ६,१८,३; ६८४

मृतं मनः ईर्ष्याः ६,१८,२; ६८३

शोकः हृदयः ६,१८,१; ६८२

उन्मत्तता । ६,१११,१-४; ६८७-६९०

उन्मत्तं रक्षसस्फुरि ६,१११,३; ६८९

उन्मदितं देव एनसात् ” ”

उद्युतं मनः ६,१११,२; ६८८

सुयतः ललपीति यः ६,१११,१; ६८७

कासा । ६,१०५,१-३; ४८६-४८८

क्षेत्रियरोगः । २,८,१-५; ४९३-९७

अभिकृत्वरीः २; ४९४

ज्वरः । १,२५,१-४ । ७,११६,१-२; ५२५-३०

अन्येषुः अन्येता १,२५,४; ५२८ । ७,११६,२; ५३०

अभिशोकः १,२५,३; ५२७

अर्चिः ” २; ५२६

अव्रतः ७,११६,२; ५३०

उभयषुः १,२५,४; ५२८ । ७,११६,२; ५३०

च्यवनः ७,११६,१; ५२९

जनित्रं शकल्येषि १,२५,२; ५२६

तकमा १,२५,१-४; ५२५-२८

तृतीयकः १,२५,४; ५२८

धृष्णुः ७,११६,१; ५२९

नोऽनः ७,११६,१; ५२९

पुत्रः राज्ञः वक्षस्य १,२५,३; ५२७

पूर्वकामकृत्वन् ७,११६,१; ५२९

रुरः १,२५,४; ५२८ । ७,११६,१; ५२९

वरुणस्य पुत्रः १,२५,३; ५२७

शकल्येषि जनित्रम् १,२५,२; ५२६

शतिः १,२५,४; ५२८ । ७,११६,१; ५२९

शोकः १,२५,३; ५२७

शोचिः १,२५,२,४; ५२५,५२८

हरितस्य देवः १, २५, ३, ५२७

ह्रुडुः नाम "

तक्मा । ५, २२, १-१४; ५३१-४४

अधराङ् ३, ५३३

अभितुन्वन् अग्निः इव २; ५३२

अरसः २; ५३२

अवध्वंसः इव अरुणः ३; ५३३

उच्छेद्यन् अग्निः इव २; ५३२

उद्युगः यस्य सखा ११; ५४१

कासः " " ११; ५४१

कासा सह अवेपयः १०; ५४०

कासिका यस्य स्वरा १२; ५४२

ग्रैष्मः १३; ५४३

तक्मा १-१४; ५३१-४४

तृतीयकः १३; ५४३

परुषः पारुषेयः ३; ५३३

पाप्मा भ्रातृव्यः १२; ५४२

प्रार्थः ९; ५३९

बहिकेषु न्योचरः ५; ५३५

बलासः यस्य भ्राता १२; ५४२

बलासः यस्य सखा ११; ५४१

महावृषाः अस्य ओकः ५; ५३५

मूजयन्तः अस्य ओकः ५; ५३५

रुरः १०, १३; ५४०, ५४३

वशी ९; ५३९

वार्षिकः १३; ५४३

वितृतीयः १३; ५४३

व्यंगः ६; ५३६

व्यालः ६; ५३६

शक्रम्भरस्य मुष्टिदा ४; ५३४

शा-दः १३; ५४३

क्षीतः १०, १३; ५४०, ५४३

सदन्दिः १३; ५४३

हरितान् विश्वान् यः कृणोति २; ५३२

हेतयः यस्य भीमाः १०; ५४०

दुःस्वप्नानि ।

बलासः । ६, १४, १-३; ४८३-४८५

अंगेष्ठाः १, ४८३

अवीरहा ३; ४८५

अस्थिखंसः १, ४८३

पर्वसु (तिष्ठमानः) १; १४३

पुराखंसः १, ४८३

हृदयामयः १, ४८३

मूत्र- (कृच्छ्रम्) । १, ३, १-९; ५७१-७९

आन्त्रेषु अधि संश्रुतं मूत्रम् ६; ५७६

गवीन्धोः " "

वस्तौ " "

यक्षमनाशनम् । २, ८, १-५; ४९३ ९६

इदं सूक्तं क्षेत्रियरोगनाशनपरम्, न यक्षमनाशनपरम् ।

' यक्षमनाशनम् ' नाम स्वतन्त्रं प्रकरणं (१६२-३००

मंत्रांकाः) अस्यां संहितायां वर्तते ।

सधिरास्त्रावः । १, १७, १-४ । ६, ४४, १-३ । २, ३, १-६;

५५५-६१, ५६५-५७०

श्वेत कुष्ठम् । १, २३, १-४ । २४, १-४, ५१७-२४

अस्थिजः किलासः १, २३, ४; ५२०

किलासः १, २३, १-२; ५१७-१८

तनूजः किलासः १, २३, ४; ५२०

दृष्टा कृतः " "

पलितम् १, २३, १-२; ५१७-१८

पृषत् १, २३, २-३; ५१८-१९

लक्ष्म श्वेतं त्वचि १, २३, ४; ५२०

शुक्लानि १, २३, २; ५१८

हरिमा । १, २२, १-४; ४८९-४९२ ।

ऋ. १, ५०, ११-१३; ५४५-५७

हरिगा १, २२, १, ४; ४८९, ४९२

ऋ. १, ५०, ११-१२; ५४५-४६

द्वयोतः १, २१, १; ४८९

द्वद्वोगः १, ५०, ११; ५४५

(२) रोगाणां परिहार-साधनानि ।

अपचितः गण्डमाला वा ।

मुनेः देवस्य मूलम् ७,७४,१; ५०३

त्वाष्ट्रं वचः ७,७४,३; ५०५

इष्टुनिष्कासनम् ।

ईर्ष्यापनयनम् ।

भेषजम् ७,४५,१; ६८५

उन्मत्ततामोचनम् ।

भेषजम् ६,१११,२-३; ६८८-६८९

कासा-शमनम् ।

क्षेत्रियरोगनाशनम् । २,८,१-५; ४९३-९७

क्षेत्रियनाशनी वीरुत् २-५; ४९४-९७

तिलस्य तिलपिडी ३; ४९५

यवस्य पलाली अर्जुनकाण्डस्य ३; ४९५

यवस्य पलाली बभ्रोः ३; ४९५

विचृतौ नाम तरके १; ४९३

ईषायुगेभ्यः क्षेत्रस्य पतये लांगलेभ्यः मनिस्त्रसाक्षेभ्यः

सन्देशेभ्यः च नमस्कृतिः ४-५; ४९६-९७

ज्वरनाशनम् ।

तक्मनाशनम् ।

दुःश्वप्ननाशनम् ।

बलासनाशनम् ।

मूत्रमोचनः ।

प्र ते भिनन्नि मेहनम् १,३,७; ५७७

विषितं ते वस्तिबिलम् १,३,८; ५७८

यक्ष्मनाशनम् । २,८,१-५; ४९३-९७

इदं सूक्तं न यक्ष्मनाशनम् [स्वतन्त्रं प्रकरणं द्रष्टव्यम्
१६२ ३००]

रुधिरास्त्रावनिवृत्तिः ।

योषितः हिराः लोहितवारराः धमन्यः अम्नातरः द्य ज मयः

तिष्ठन्तु १,१७,१; ५५५

आस्त्रावभेषजम् ६,४४,२; ५६०

रुद्रस्य मूत्रम् ६,४४ ३; ५६१

वातीकृतनाशनी ६,४४,३; ५६१

विषणका नाम ,, ,,

अन्वास्त्रावम् २,३,२; ५६६

अरुखाणम् २,३,३,५; ५६७-५६९

अरोगणम् २,३,२; ५६६

आस्त्रावस्य भेषजम् २,३,३-५; ५६७-६९

श्वेतकुष्ठनाशनम् ।

असिक्ती (वनस्पतिः) १,२३,१-४; ५१७-२०

असितं आस्थानम् १,२३,३; ५१९

असितं प्रलयनम् ,, ,,

आमुरी (वनस्पतिः) १,२४,१-४; ५२१-२४

किलासनाशनम् १,२४,२; ५२२

कितागभेषजम् १,२४,२; ५२२

कृष्णा १,२३,१; ५१७

पृथिव्या अधि उन्नता १,२४,४; ५२४

रामा १,२३,१; ५१७

श्यामा १,२४,४; ५२४

सरूपं करणी ,, ,,

सरूपकृत् १,२४,३; ५२३

सरूपो नाम पिता ,, ,,

सरूपा नाम माता ,, ,,

हरिमा- (हृद्रोग-कामिला नाशनम्)।

नाशनम् । १,२२,१-४; ४८९-९२

रोगध्न्यः उपनिषदः ऋ १,५०,११-१३; ५४५-४७

रोपणाकासु ध्यानम् १,२२,४; ४९२ । ऋ. १,५०,

१२; ५४६

रोहितैः वर्णैः ध्यानम् १,२२,२; ४९०

रोहितस्य वर्णेन ,, १,२२,१; ४८९

रोहिणीभिः ,, १,२२,३; ४९१

रोहिणीः देवत्याः गावः ताभिः ध्यानम् १,२२,३; ४९१

शुक्ले ध्यानम् १,२२,४; ४९२ । ऋ. १,५०,१२; ५४६

हारिद्वेषु ,, १,२२,४; ४९२ । ऋ. १,५०,१२; ५४६

(३) भैषज्यम् ।

आञ्जनं । गुणबोधक पदानि

अञ्जनं आञ्जनं वा ४,९,१-१० । ७,३०,१ । ३६,१ ।
 १९,४५,१-१०; १९,४४,१-१० । वा. य. ४,३;
 ५८०-६१२
 अपां ऊर्जः १९,४५,३; ५९४
 अभयम् १९,४४,१; ६०२
 आञ्जनम् १९,४४,३; ६०४
 आयुषः प्रतरणम् १९,४४,१; ६०२
 ओजसः वातुधानम् १९,४५,३; ५९४
 कम् ४,९,१; ५८०
 चक्षुर्दोः वा. य. ४,३; ६१२
 चतुर्वीरम् १९,४५,३-५; ५९४-९६
 जम्भयत् यातून ४,९,२; ५८८
 ,, यातुधान्यः ४,९,९; ५८८
 जातं अग्नेः जातवेदसः १९,४५,३; ५९४
 जातं हिमवतः परि ४,९,९; ५८८
 जीवं त्रायमाणम् ४,९,१; ५८०
 जीवभोजनम् ४,९,३; ५८२
 त्रिककुद् नाम ते पिता ४,९,८; ५८७
 त्रैककुद्म् ४,९,९-१०; ५८८-५८९
 ,, १९,४४,६; ६७०
 दत्तं विश्वेभिः देवैः ४,९,१; ५८०
 देवः १९,४४,६; ६०७
 परिधिः जीवनाय १९,४५,३; ५९४
 परिपाणं अर्वताम् ४,९,२; ५८१
 ,, अश्वानाम् ,,
 ,, गवाम् ,,
 ,, पुरुषाणाम् ,,

पर्वतस्य अक्षयम् ४,९,१; ५८०
 पर्वतीयम् १९,४५,३; ५९४
 पुरुषजीवनम् १९,४४,३; ६०४
 पृथिव्यां जातम् १९,४४,३; ६०४
 भद्रम् १९,४४,३; ६०४
 भेषजम् १९,४४,१; ६०२
 यातुजम्भनम् ४,९,३; ५८२
 यामुनम् ४,९,१०; ५८९
 विष्टुतां पुष्पम् १९,४४,५; ६०६
 विप्रम् १९,४४,१; ६०२
 वृत्रस्य कनीनकः वा. य. ४,३; ६१२
 शन्तातिः १९,४४,१; ६०२
 सहस्रवीर्यम् १९,४४,८-९; ६०९-६१०
 सिन्धोः गर्भः १९,४४,५; ६०६
 हरितभेषजम् ४,९,३; ५८२

आञ्जनेन परिहरणीयाः रोगाः

अंगभेदः विसर्पकः १९,४४,२; ६०३
 अत्रमायुकः १९,४४,३; ६०४
 आदादिः (अञ्जनस्य दातः) ४,९,८; ५८७
 तक्मा (,,) ,, ,,
 बलासः (,,) ,, ,,
 यक्ष्म १९,४४,१; ६०३
 रथजूतिः १९,४४,३; ६०४
 विसर्पकः अंगभेदः १९,४४,२; ६०३
 हरिमा जायान्य ,, ,,

क्रिमिनाशनम् ।

(१) क्रिमीणां विविधप्रकाराः; तेषां गुणबोधकपदानि च ।

अक्षयौ परिसर्पन् ५,२३,३; ६९८
 अङ्गिनः अयस्मयैः पाशैः १९,६६,१; ७६६
 आत्त्रिणः ६,३२,३; ७३३ । १,७,३; ७६९
 अदनाः २,३१,३; ६९३

अदष्टः २,३१,२; ६९२
 अदष्टाः ५,२३,६-७; ७०१-७०२
 अन्तः ये अप्ता २,३१,५; ६९५
 ,, ओषधीषु ,,

अन्तः ये गवि २,३२,१; ७८२
 " पर्वतेषु २,३१,५; ६९५
 " पशुषु " "
 " वनेषु " "
 अन्वान्यः २,३१,४; ६९४
 अप्सरसः ४,३७,२-५; ७१६-७१९
 अप्सरसः जाया ४,३७,१२; ७२६
 अप्सरापतिः ४,३७,७; ७२१
 अभिशोचाः ४,३७,१०; ७२४
 अयोजालाः १९,६६,१; ७६६
 अरसाः २,३१,३; ६९३
 अराग्यः १,२८,४ ७३७
 अर्जुनः २,३२,२; ७१० । ५,२३,९; ७०४
 अलगण्डवः २,३१,२; ६९२
 अवक दाः गन्धर्वाः ४,३७,८-१०; ७२२-७२४
 अवस्कवः २,३१,४; ६९४
 अशिष्टाः २,३१,३; ६९३
 असुराः ६,७,२-३; ७६४-६५ । १९,६६,१; ७६६
 आनृत्यत् ४,३७,७; ७२१
 एजकाः ५,२३,७; ७०२
 कपिः इव ४,३७,११; ७२५
 कष्कषासः ५,२३,७; ७०२
 किमीदिनः ४,२०,८; ७६१ । १,७,१,३; ७६७,७६९।
 १,२८,१-२; ७३४-७३५
 कुमारः इव सर्वकेशकः ४,३७,११; ७२५
 कुरूः २,३१,२; ६९२
 कृष्णौष्णाः ५,२३,४-५; ६९९-७००
 कोकः ५,२३,४; ६९९
 कव्यात् ५,२९,८-११,१५; ७४५-४८,७५२
 क्रिमयः २,३१,१-५; ५,२३,१-१३; २,३२,१-५;
 ६९२-७१३ सर्वत्र
 क्षुल्लकाः २,३२,५; ७१३
 गन्धर्वाः ४,३७,२ ७; ७१६,७२१
 गन्धर्वाः पतयः ४,३७,१२; ७२६

गृध्रः ५,२३,४; ६९९
 चतुरक्षः २,३२,२; ७१०
 छलुनाः २,३१,२; ६९२
 त्रिककुद् ५,२३,९; ७०४
 त्रिशीर्षा ५,२३,९; ७०४
 दत्ता मध्ये गच्छन् ५,२३,३; ६९८
 दूनाः २,३१,३; ६९३
 दृष्टः-प्राः २,३१,२; ६९२ । ५,२३,६-७; ७०१-७०२
 द्रयाविनः १,२८,१; ७३४
 नासे परिसर्पन् ५,२३,३; ६९८
 परिवेशसः २,३२,५; ७१३
 पार्ष्ट्यः २,३१,४; ६९४
 पिशाचाः ६,३२,२; ७३२ । ५,२९,४-१०; ७४१-७४७
 ४,२०,६-७,९; ७५९-६०,७६२ । ४,३७,१०; ७२४
 प्रियः दशः इव ४,३७,११; ७२५
 बभ्रुः ५,२३,४; ६९९
 बभ्रुकर्णः ५,२३,४; ६९९
 मनोहनः ५,२९,१०; ७४७
 मायिनः १९,६६,१; ७६६
 यातुधानाः १,८,१; ७२७ X
 यातुधानः १,८,३; ७२९ X
 यातुधानाः ६,३२,२; ७३२ । १,२८,१-२; ७३४-३५
 ५,२९,११; ७४८ । ४,२०,६,८; ७५९,७६१ । १,
 ७,१-३,५-७; ७६७-७६९,७७१-७७३
 यातुधान्यः १,२८,२,४; ७३५,७३७ । ४,२०,६; ७५९
 यातुमान् १,७,४; ७७०
 येवाषः-पासः ५,२३,७-८; ७०२-७०३
 रक्षः ४,३७,२; ७१६
 रक्षांसि ४,३७,१; ७१५ । ६,३२,१; ७३१ । ५,२९,१०;
 ७४७ । वा. य. ५,२२; ७५३
 राजा किमीणाम् २,३२,४; ७१२
 रुधिरः ५,२२,१०; ७४७
 रोहिता ५,२३,४; ६९९
 विरूपौ ५,२३,४; ६९९

विश्वरूपः ५, २३, ५; ७००। २, ३१, २; ७१०
 वेशसः २, ३२, ५; ७१३
 व्यध्वरः २, ३१, ४; ६९४
 शिखण्डी ४, ३७, ७, ७२१
 शिनिकक्षाः ५, २३, ५; ७००
 शितिबाहवः ५, २३, ५; ७००
 शिपवित्तुकाः ५, २३, ७; ७०२
 शिष्टाः २, ३१, ३; ६९३
 शीर्षण्यः २, ३१, ४; ६९४

श्वा इव ४, ३७, ११; ७२५
 शरूपौ ५, २३, ४; ६९९
 सहमूराः ५, २९, ११; ७४८
 सारङ्गः २, ३२, २; ७१०। ५, २३, ९; ७०४
 स्थपतिः २, ३२, ४; ७१२
 हनभ्राता २, ३२, ४; ७१२
 हतमाता ,,
 हतस्वरा ,,
 हविरदाः ४, ३७, ८-९; ७२२-७२३

(२) ओषधिनामानि ।

तासां गुणबोधकपदानि च ।

अजशृङ्गी ४, ३७, २, ६; ७१६, ७२०
 अराटकी ४, ३७, ६; ७२०
 अर्जुनाः ४, ३७, ५; ७१९
 अश्वत्थाः ४, ३७, ४; ७१८ (महावृक्षाः)
 अघाटाः ४, ३७, ५; ७१९
 ओषधिः देवी ४, २०, २; ७५५
 ओषधीनां वीरुधां वीर्यावती ४, ३७, ६; ७२०
 औक्षगन्धिः ४, ३७, ३; ७१७
 कर्कर्यः ४, ३७, ५; ७१९
 गुरुगुलः ४, ३७, ३; ७१७

तीक्ष्णशृङ्गी ४, ३७, ६; ७२०
 नलदी ४, ३७, ३; ७१७
 न्यग्रोधाः ४, ३७, ४; ७१८ (महावृक्षाः)
 पीला ४, ३७, ३; ७१७
 प्रमन्दनी ४, ३७, ३; ७१७
 ब्रह्म ४, ३७, २१; ७२५
 विश्वतोवीर्या वीरुत् ६, ३२, २, ७३२
 शिखण्डिनः ४, ३७, ४; ७१८ (महावृक्षाः)
 हरिताः ४, ३७, ५; ७१९

विषनाशनम् ।

(१) विष-उत्पत्ति-हेतवः ।

अंस्याः ऋ. १, १९१, ७; ७८०
 अग्निविषम् १०, ४, २२; ८२९
 अग्निजाः सर्पाः १०, ४, २३; ८३०
 अघाश्वः १०, ४, १०; ८१७
 अङ्गथाः ऋ. १, १९१, ७; ७८०
 अट्टहाः ऋ. १, १९१, १-८; ७७४ ७८१
 अपोदकाः ५, १३, ६; ८३९
 अम्बुजाः सर्पाः १०, ४, २३; ८३०
 अलीकाः ५, १३, ६; ८३९
 असिकन्या दासी ५, १३, ८; ८४१

असितं-ताः १०, ४, ५, १३; ८१२, ८२०। ५, १३, ५-६;
 ८३८-८३९
 अहिः-हयः १०, ४, ६, ८-९, १६-१७, १९-२१, २६;
 ८१३, ८१५-१६, ८२३-२४, ८२६-२८, ८३३ । ७,
 ८८, १; ८४५ । ६, ५६, १; ८४२
 आलिगी ५, १३, ७; ८४०
 उपतृण्यः ५, १३, ५, ८३८
 उरुगूलायाः दुहिता ५, १३, ८; ९४१
 ओषधिः ४, ६, ८; ७९७
 ओषधिजाः सर्पाः १०, ४, २३; ८३०

प्रकंकता ऋ. १, १९१, ७; ७८०
बभ्रुः ५, १३, ५-६; ८३८-३९ । ६, ५६, ९; ८५०
बैरिणाः ऋ. १, १९१, ३; ७७६
मदावती ४, ७, ४; ८०१
मन्युः ५, १३, ६; ८३९
मशकः तृप्रदंशी ७, ५६, ३; ८५४
मौज्जाः ऋ. १, १९१, ३; ७७६
यातुधान्यः ऋ. १, १९१, ८; ७८१
रथर्वा १०, ४, ५; ८१२
विष्णुतः जाताः सर्पाः १०, ४, २३; ८३०
विलिंगा ५, १३, ७; ८४०
वृद्धिकः ऋ. १, १९१, १६; ७८९ । १०, ४, ९, १५;
८१६, ८२२
शरासः ऋ. १, १९१, ३; ७७६
शर्कोटः ७, ५६, ५, ७; ८५६, ८५८
श्राविन् ५, १३, ९; ८४२
खिन्नम् १०, ४, ५, १३; ८१२, ८२०
सर्तानकंकतः ऋ. १, १९१, १; ७७४
सर्पाः १०, ४, २३; ८३०
सात्रामाहः ५, १३, ६; ८३९
सूर्ये यत् विषम् १०, ४, २९; ८२९
सेर्याः ऋ. १, १९१, ३; ७७६
स्वजः १०, ४, १०; ८१७
सूचीकाः ऋ. १, १९१, ७; ७८०

दे०[आयुर्वेद०] २७

करम्भः ४, ७, २-३; ७९९-८००
 गरुडमान् ४, ६, ३; ७९९
 कुपुम्भकः ऋ. १, १९१, १६; ७८९
 गिर्यः (तेषां मधु) ६, १२, ३; ८४८
 घृताची नाम (कन्या) १०, ४, २४; ८३१
 तरुणकम् १०, ४, २; ८०९
 तानुवम् ५, १३, ११; ८४४
 तानुवम् ५, १३, १०; ८४३
 तौमी नाम (कन्या) १०, ४, २४; ८३१
 दर्भः १०, ४, २; ८०९
 दशार्धः (ब्राह्मणः) ४, ६, १; ७९०
 दशम्यः (ब्राह्मणः) ४, ६, १; ७९०
 देवजनाः ६, ५६, २; ८५०
 देवाः ६, १००, १; ८०५
 गौः ६, १००, १; ८०५
 धन्वनि उदकम् ६, १००, २; ८०६
 नयः (तागं मधु) ६, १२, ३; ८४८
 परुणी (ओषधिः) ६, १२, ३; ८४८
 पर्वन्यः १०, ४, १६; ८२३
 पर्वताः (तेषां मधु) ६, १२, ३; ८४८
 पार्श्वपाकः तिर्यः उदारधिः ४, ७, ३; ८००
 पुरुषरथवारः १०, ४, २; ८०९
 पेडः १०, ४, ५ ७, १०-११; ८१२-१४, ८१७-१८
 ब्रह्मणस्पतिः ७, ५६, ४; ८५५
 ब्राह्मणः (दशार्धः दशस्य) ४, ६, १; ७९०
 मधु (नयः पर्वता गिर्यः एतेषां) ६, १२, ३; ८४८
 मधुता (वीरः) ७, ५६, २; ८५३

मशकजम्भनी (वीरः) ७, ५६, २; ८५३
 मयूर्यः त्रिः सप्त ऋ. १, १९१, १४; ७८७
 मित्रः १०, ४, १६; ८२३
 रोपुष्यः नव नवत्यः ऋ. १, १९१, १३; ७८६
 वचस् (ओषधिः) ४, ७, ४-५; ८०१-२
 वरणावल्यां अधि (ओषधिः) ४, ७, १; ७९८
 वरुणः १०, ४, १६; ८२३
 वातः १०, ४, १६; ८२३
 विश्वदृष्टः (सूर्यः) ऋ. १, १९१, ८-९; ७८१-८२
 विष्णुलिङ्गा त्रिः सप्त ऋ. १, १९१, १२; ७८५
 वीरः ७, ५६, २; ८५२
 ,, मधुजाता ७, ५६, २; ८५३
 ,, मधुला ,,
 ,, मधुरचुत् ,,
 ,, मधूः ,,
 ,, मशकजम्भनी ,,
 शकुन्तिका इत्यतिका ऋ. १, १९१, ११; ७८४
 शोचिः १०, ४, २; ८०९
 श्वेतः (ओषधिः) १०, ४, ३; ८१०
 शीपाला ,, ६, १२, ३; ८४८
 सरस्वतीः तिस्रः ६, १००, १; ८०५
 मिन्धवः १०, ४, २०; ८२७
 सुपर्णः (गरुडमान्) ४, ६, ३; ७९९
 सूर्यः ६, १००, १; ८०५। ऋ. १, १९१, १०; ७८३
 सूर्यः अष्टदृष्टा विश्वदृष्टः ऋ. १, १९१, ८-९; ७८१-८२
 सोमः १०, ४, २६; ८३३
 स्वमारः सप्त (अमुवः) ऋ. १, १९१, १४; ७८७

मणिधारणम् ।

अस्तृतादि-मणिदेवता-गुणबोधकपदानि ।

(१) अस्तृतमणिः । १९, ४६, १-७; १५७२-१५७८
 असपत्नः ७; १५७८
 ऊर्जरवान् ६; १५७७
 घृतात् उल्लुताः ६; १५७७
 पयस्वान् ६; १५७७

मधुमान् ६; १५७७
 मयोभूः ६; १५७७
 वयोधाः ६; १५७७
 वशी सजातानाम् ७; १५७८
 शतघोनिः ६; १५७७

शम्भूः ६; १५७८

सपत्नहा ७; १५७८

सहस्रप्राणः ६; १५७७

(१) औदुम्बरमणिः । १९, ३१, १-१४; १५३७-५०

अधिपाः मर्णानाम् ११; १५४७

शृङ्गमेधी १३; १५४९

ग्रामणीः १२; १५४८

तेजः १२; १५४८

देवः ८; १५४४

धनसाः ८; १५४४

पुष्टपतिः ६; १५४२

पुष्टिः १३; १५४९

रविः १२; १५४८

वनस्पतिः ९; १५४५

वीरः १४; १५५०

वृषा ३, ११; १५३८, १५४६

सपत्नहा ८; १५४४

(३) जङ्घिडमणिः । २, ४, १-६; ६६-७१ । १९,

३४, १-१०; ३५, १-५; १५५१-६५

अंगिराः ३४, ६; १५५६

अमितवीर्यः ३४, ८; १५५८

अरातिदूषणः ३४, ४; १५५४

अरातिदूषिः २, ४, ६; ७१

अरतिहा ३५, २; १५६२

आमृतः अरण्यान् २, ४, ५; ७०

उग्रः ३४, ७; १५५७

उपदानः ३४, ८; १५५८

ओजः ३४, ५; १५५५

ओषधिः ३४, ९; १५५९

कृत्वादूषणः ३४, ४; १५५४

कृत्यादूषिः २, ४, ६; ७१

कृत्वाः रसेभ्यः २, ४, ५; ७०

देवैः दत्तः २, ४, ४; ६९

परिपाणः ३४, ७; १५५७ । ३५, २-३; १५६२-६३

भगवान् ३४, ८; १५५८

भूम्यां अधि निष्ठितः ३४, ६; १५५६

भेषजम् ३५, १; १५६१

मयोभूः २, ४, ४; ६९

वनस्पतिः ३४, ९; १५५९

विश्वभेषजः २, ४, ३; ६८ । १९, ३५, ५; १५६५

विष्कन्धदूषणः २, ४, १; ६६ । १९, ३५, १; १५६२

सहस्रचक्षुः १९, ३५, ३; १५६३

सहस्रवीर्यः २, ४, २; ६७

सहस्वान् २, ४, ६; ७१ । १९, ३४, ५; १५५४

सुमालः १९, ३४, ७; १५५७

(४) दर्भमणिः । १९, २८, १ १०; ६९, १-३;

३०, १-५; १५१३-३६

अभितपन् धर्मः द्रव २८, ३; १५१५

इन्द्रस्य वर्म ३०, ३; १५३४

क्षत्रस्य वर्धनः ३०, ४; १५३५

दुर्हार्दः सन्नाययन् २८, २; १५१४

देववर्म ३०, ३; १५३४

द्विषतः नितपन् २८, ३; १५१५

द्विषतः हृदः तपनः २८, १-२; १५१३-१४

ब्रह्मणस्पतिः ३०, ३; १५३४

वर्माणि ते शतम् ३०, २; १५३३

वीर्याणि ते सहस्रम् ३०, २; १५३३

शत्रूणां मनः तापयन् २८, २; १५१४

सपत्नक्षयणः ३०, ४; १५३५

सपत्नश्मनः २८, १; १५१३

यक्षादि-प्रकरणे 'दर्भः' देवता-गुणबोधकपदानि ।

१९, ३३, १-१०; १९२३-३२ । ३३, १-५; १९३३-३७

अच्युतः ३३, २; १९३४

अपां अग्निः ३३, १; १९३३

उग्रः ३२, १; १९२३

उत्तरिः ३२, १; १९२३

उग्रं बलम् ३३, ४; १९३६

ओजः देवानाम् ३३, ४; १९३६

ओषधिः ३२, १, ३; १९२३, १९२५

ओषधीनां प्रथमः ३२, १०; १९३२

पृतात् उन्मुक्तः ३३, २; १९३४

च्यावयिष्णुः ३३, २; १९३४

तीक्ष्णः १९, ३३, ४; १९३६
 दिवि तूलं ते ३२, ३; १९२५
 दिविष्टम्भः ३२, ७; १९२९
 दुश्च्यवनः ३२, १; १९२३
 देवजातः ३२, ७; १९२९
 जुदन् सपत्नान् ३३, २; १९३४
 पयस्वान् ३३, १-२; १९३३-३४
 पवित्रः ३३, ३; १९३५
 पृथिव्यां निष्ठितः ३२, ३; १९२५
 भूमिद्वंद्वः ३३, २; १९३४
 मधुमान् ३३, २; १९३४
 रक्षोहा ३३, ४; १९३६
 राजा ३३, ४; १९३६
 विश्वचर्षणिः ३३, ४; १९३६
 विषासहिः ३३, ४; १९३६
 वीरुधां राजगूयः ३३, १; १९३३
 शतकाण्डः १९, ३२, १, १०; १९२३, १९३२ । ३३, १;
 १९३३
 सपत्नहा ३२, १०; १९३२
 सहमानः ३२, ५; १९२७
 सहस्रकाण्डः ३२, ३; १९२५
 सहस्रपर्णः ३२, १; १९२३
 सहस्रार्धः ३३, १; १९३३

(५) प्रतिसरमणिः । ८, ५, १-२२; १४३१-५२

अनङ्गान् जगतामिव ११; १४४१
 उग्रः २; १४३२
 उत्तमः ओषधीनाम् ११; १४४१
 आज्ञवान् ४, १६; १४३४, १४४६
 ओषधीनां उत्तमः ११; १४४१
 तनुपानः २०; १४५०
 त्रिदह्यः २०; १४५०
 देवमणिः २०; १४५०
 नृमणः २१; १४५१
 परिपाणः १, १६; १४३१, १४४६
 प्रतिसरः (मणिः) १, ४; १४३१, १४३४
 प्रतीवर्तः ४, १६; १४३४, १४४६

मणिः १, ४, ७, ८, २२; १४३१, १४३४, १४३७-३८;
 १४५२
 मेधिः २०, १४५०
 वशी ४, ७; १४३४, १४३७
 वाजी २; १४३२
 विमृधः ४; १४३४
 वीरः १-२; १४३१-३२
 वीर्यवान् १; १४३१
 व्याघ्रः श्वपदां इव ११, १४४१
 शूरीरः १; १४३१
 सज्जयः १६, १४४६
 सपत्नहा १-२, १४३१-३२
 सहमानः २; १४३२
 सहस्रवीर्यः १४; १४४४
 सहस्वान् २; १४३२
 सुमंगलः १, १६; १४३१, १४४६
 सुवीरः २; १४३२
 स्नाक्यः ४, ७-८; १४३४, १४३७-३८

(६) फालमणिः । १०, ६, १-३५, १४७८-१५१२

अभिभूः २९, १५०६
 असपत्नः ३०; १५०७
 असुराक्षितिः २२-२८, १४९९-१५०५
 उग्रः ६-१०; १४८३-८७
 क्षत्रवर्धनः २९; १५०६
 खदिरः ६-१०; १४८३-८७
 गृतरुतः ६-७, १४८३-८४
 देवजाः ३१; १५०८
 प्रजापतिसृष्टः १९; १४९६
 यज्ञवर्धनः ३४; १५११
 शतदाक्षिणः ३४; १५११
 शंभुवः १५, १७, १४९२, १४९४
 सपत्नदम्भनः २९; १५०६
 सपत्नहा ३०; १५०७
 हिरण्यस्रक् ४; १४८१

(७) वरुणमणिः । १०, ३, १-२५; १४५३-७७

देवः ५, ८, ११; १४५७, १४६०, १४६३

पुरणता २; १४५४
मणिः २; १४५४
वनस्पतिः ५, ८, ११; १४५७, १४६०, १४६३
विश्वभेषजः ३; १४५५
वृषा १; १४५३
सप्तनक्षत्रणः १; १४५३
सहस्राक्षः ३; १४५५
हरितः ३; १४५५
हिरण्ययः ३; १४५५

(८) शाङ्गमणिः । ४, १०, १-७; १४२४-३०

आयुष्प्रतरणः ४; १४२७
कार्शनः ७; १४३०
कृशानः १, ३; १४२४, १४२६
जातः अन्तरिक्षात् १; १४२४
,, दिवि ४; १४२७
,, वातात् १; १४२४
,, विष्णुतः १; १४२४
,, श्वात् ५; १४२८

जातः समुद्रात् ५; १४२८
ज्योतिषः परि १; १४२४
दर्शतः ६; १४२९
दिवाकरः ५; १४२८
पर्याभृतः सिन्धुतः ४; १४२७
मणिः ४; १४२७
रोचनः ६; १४२९
विश्वभेषजः ३; १४२६
शंखः १-४; १४२४-२७
समुद्रजः ४; १४२७

हिरण्यजाः १, ४; १४२४, १४२७
हिरण्यानां एकः ६; १४२९

(९) शातवारमणिः । १९, ३६, १६; १५६६ ७१

ऋषभः ५; १५७०
दुर्णामचातनः १; १५६६
दुर्णामहा ३; १५६८
शातवारः मणिः ५; १५७०
हिरण्यशृंगः ५; १५७०

यज्ञादिकम् ।

(१) यम-देवताया गुणबोधकपदानि ।

अनुपरपशानः बहुभ्यः पन्थाम् ऋ. १०, १४, १; १९६८।
अ. १८, १, ४९; २०१५। ६, २८, ३; १५८४
ईशो वः द्विषदः चतुष्पदः ६, २८, ३; १५८४
उषान् ऋ. १०, १५, ८; १९९४
कविः १८, ३, ६३; २१४१
चिकित्वात् १८, २, ३७; २०६१
छन्दांसि आहिताः यस्मिन् ऋ. १०, १४, १६; १९७९
जनानां संगमनः ऋ. १०, १४, १; १९६८। अ. १८, १, ४९; २०१५। १८, ३, १३; २०९६
न.भिः आसु गन्धर्वः अप्या च योषा यस्य ऋ. १०, १०, ४; १९५७
परेयिवाम् ऋ. १०, १४, १; १९६८। अ. १८, १, ४९; २०१५
पिता ऋ. १०, १३५, १; १९८०

पिता विवस्वान् यस्य ऋ. १०, १४, ५; १९७९
पितृमान् १८, ४, ७४; २२२४
प्रथमः ऋ. १०, १४, २; १९६९। अ. ६, २८, ३; १५८४
प्रेयाय यः प्रथमः लोकमेतम् १८, ३, १३; २०९६
मदनं स्वधया ऋ. १०, १४ ७; १९७३। अ. १८, १, ५४; २०१९
ममार य प्रथमः मर्त्यानाम् १८, ३, १३; २०९६
मृत्युः ६, २८, ३; १५८४
यमः ६, २७-२९, १-३; १५७९-१५८७। ऋ. १०, १०, १-४४; १४, १-५, ७ ९, १३-१६; १३५, १-७; १९५४-८६। २००१ २२३९ मंत्रेषु बहुषु स्थलेषु।
यमी (यमस्य भगिनी) ऋ. १०, १०, ९; १९६९

राजा ऋ. १०, १४, १, ४, ७, १५, १९६८, १९७१, १९७३,
१९७८। अ. १८, १, ४९; २०१५। अ. १८, १, ६०;
२०२३। १८, २, १२; २०३६। १८, ३, १३;
२०९६
विवस्वान् पिता यस्य ऋ. १०, १४, ५; १९७२
विस्पतिः ऋ. १०, १३५, १; १९८०

वैवस्वतः ऋ. १०, १४, १; १९६८। अ. १८, १, ४९;
२०१५। १८, ३, १३; २०९६
संररणः हवीषि ऋ. १०, १५, ८; १९९४। अ. १८,
३, ४६; २१२९
संगमनः जनानाम् 'जनानां संगमनः' द्रष्टव्यम् ।
स्वधया मदन् 'मदन् स्वधया' द्रष्टव्यम् ।

(२) पितर-देवताया गुणबोधकपदानि ।

अग्निदग्धाः ऋ. १०, १५, १४; २०००। अ. १८, २,
३५; २०५९
अग्निष्वात्ताः ऋ. १०, १५, ११; १९९७। अ. १८, ३,
४४; २१२७
अंगिरसः ऋ. १०, १४, ३५; १९७०-७२। अ. १८,
१, ५८-६१; २०२१-२४
अथर्वाणः १८, १, ५८; २०२१
अनग्निदग्धाः ऋ. १०, १५, १४; २०००। अ. १८, २, ३५;
२०५९
अनापृष्याः तपसा १८, २, १६; २०४०
अन्तरिक्षसदः १८, ४, ७९; २२२९
अपरासः १८, १, ४६; २०१२
अर्वाणः १८, ३, १९; २१०२
अवरे ऋ. १०, १५, १; १९८७। अ. १८, १, ४४; २०१०
अत्रकाः " "
असुं ये ईयुः " "
आसीनासः अक्षणीनां उपस्थे ऋ. १०, १५, ७; १९९३।
अ. १८, ३, ४३; २१२६
उक्थशासः १८, ३, २१; २१०४
उद्धिताः १८, २, ३४; २०५८
उपरासः ऋ. १०, १५, २; १९८८
उपहूताः ऋ. १०, १५, ५; १९९१
ऋतं आशशानाः १८, ३, २१; २१०४
ऋतजातः १८, २, १५; २०३९
ऋतज्ञाः ऋ. १०, १५, १; १९८७। अ. १८, १, ४४;
२०१०
ऋतसाताः १८, २, १५; २०३९
ऋतावृधः ,

कवयः १८, ३, १९, ४७; २१०२, २१३०
कव्याः ऋ. १०, १५, ९; १९९५
घर्मसदः ऋ. १०, १५, २-१०; १९९५-९६। अ. १८, ३,
४७-४८; २१३०-३१
जेहमानाः ऋ. १०, १५, ९; १९९५। अ. १८, ३, ४७;
२१३०
तपस्वन्तः १८, २, १५; २०३९
तपोजाः "
दग्धाः १८, २, ३४; २०५८
देवदाः ऋ. १०, १५, ९; १९९५। अ. १८, ३, ४७; २१३०
देववन्दाः ऋ. १०, १५, १०; १९९६
द्युमन्तः १८, १, ५७; २०२०
नवग्वाः १८, १, ५८; २०२१
निष्वाताः १८, २, ३४; २०५८
पराः रासः ऋ. १०, १५, १, १०; १९८७, १९९६।
अ. १८, १, ४४; २०१०। १८, ३, २१; २१०४
परोप्ताः १८, २, ३४; २०५८
पार्थिवे रजमि आ निषताः ऋ. १०, १५, २; १९८८
पूर्वे-वासः ऋ. १०, १५, २, ८, १०; १९८८, १९९४,
१९९६। अ. १८, १, ४६; २०१२
पितरः पितृदैवतमंत्रेषु सर्वत्र ।
प्रतनासः १८, ३, २१; २१०४
बर्हिषदः ऋ. १०, १५, ३-४; १९८९-९०। अ. १८, १,
४५, ५१; २०११, २०१६
भूर्जयः १८, १, ६१; २०२४
भृगवः १८, १, ५८; २०२१
मध्यमाः ऋ. १०, १५, १; १९८७। अ. १८, १, ४४;
२०१०

सुविदत्राः ऋ. १०, १५, ३, ९, १९८९, १९९५। अ. १८, १,
४५; २०११। १८, ३, १९, ४८; २१०२, २१३१
सुवीराः १८, ४, ६३; २२१३
सुवृजनासु विश्व (वर्तमानाः) ऋ. १०, १५, २; १९८८
सुसंज्ञासः १८, ३, १६; २०९९
सोमवन्तः १८, ४, ७३; २२२३
सोम्यासः ऋ. १०, १५, १, ५, ८, १९८७, १९९१, १९९४।
३, १८, १, ४४, ५८; २०१०, २०२१। १८, ३, ४५; २१२८
स्तोमतष्टासः ऋ. १०, १५, ९; १९९५। अ. १८, ३, ४७;
२१३०
हविरदः ऋ. १०, १५, १०, १९९६। अ. १८, ३, ४८,
२१३१
हविष्ठाः ” ”
होत्राविदः ऋ. १०, १५, ९; १९९५। अ. १८, ३, ४७;
२१३०

आदित्यौ ८, ९, १५; ४१

आपः ८, १, ५; १०। ५, २८, २; १२८
 " दिव्याः पयस्वतीः ८, २, १४, ४०
 " पयस्वतीः २, २९, ५, ९५
 आयुः २, २८, १, ३; १, ३। ८, १, १-२१; ६-२६। ८
 २, १ २८; २७-५४। ७, ३२, १; १४१। ७, ५३, १-७;
 १४३-४९
 आयुर्वर्धनम् १९, ६३, १, १५४। वा. य. ३४, ५०-५२;
 २३२८-३०
 आयुष्यम् ३, ११, १-८; ७२-७९। ५, ३०, १-१७, २८-
 ११४। ६, ७६, १-४, १५०-१५३। ५, २८, १-१४,
 १२७-४०। ७, ३३, १; १४२। २, १३, ४, ५; २३३४
 दीर्घायुत्वम् अ. १९, ६४, १-४; ११५-१८। १९, ६७,
 १-८; ११९-२६। ५, २८, १-१४; १२७-४०। ७, ३३,
 १; १४२। २, १३, ४-५, २३३४-३५। वा. य. १२,
 १००; २३२७
 सर्वमायुः १९, ६१, १; १५५। १९, ७०, १; १५६
 इन्द्रः ८, १, १५; २०। ३, ११, ३-४; ७४-७५। ६, ४७,
 २; ८९। २, २९, ३-४, ७; ९३-९४, ९७। ५, २८, ४,
 १३०। १९, ७०, १; १५६
 इन्द्रार्मी ८, १, २, १६; ७, २१। ८, २, २१; ४७। १,
 ३५, ४; ६२। ३, ११, १-८; ७२-७९
 ऋतवः आर्तवाः ५, २८, २, १३; १२८, १३९
 ऋषयः दैव्याः ६, ४१, ३; ६५, अमत्याः तन्वः तनूजाः
 तनूपाः।
 ,, सप्त ७, ५३, ४; १४६
 ओषधी-धयः ८, २, ६, १५; ३२, ४१
 गोपायन् ८, १, १३, १८
 चन्द्रमाः ८, १, १२; १७। ६, ४१, १; ६३। ५, २८, २,
 १२८
 जङ्गिः मणिः २, ४, १-६; ६६-७१
 जरिमा २, २८, १, ३; १, ३
 जागृविः ८, १, १३; १८। ५, ३०, १०; १०७
 त्रिष्टुत् ५, २८, १-१४; १२७-४०
 ,, आयुः ५, २८, ७; १३३
 ,, देवपुराः ५, २८, ९-१०; १३५-३६
 ,, पोषाः भूमा वा ५, २८, ३; १२९
 ,, प्राणाः ५, २८, १; १२७

,, सुपर्णाः ५, २८, ८; १३४
 ,, हिरण्यम् ५, २८, ६; १३२
 त्वष्टा २, २९, २; ९२
 दशगृक्षः २, २, १, ८०
 दाक्षायणाः १, ३५, १, ५९
 दाक्षायणं हिरण्यम् १, ३५, २; ६०। वा. य. ३४, ५०-
 ५२; २३२८-२३३०
 दिशः ५, २८, २; १२८
 देवाः ८, १, १८; २३। ८, २, २७; ५३। १, ३०, २, ४,
 ५६, ५८ (अहुतादः सत्रसदः हुतभागाः)। २, २९, १;
 ९१। १९, ७०, १; १५६
 योः १, १२, १७; १७, २२
 यावापृथिवी २, २८, ४; ४। ८, २, १४; ४० (अभिध्रियौ
 असन्तापे शिवे)। २, २९, ४-५; ९४-९५ (ऊर्जस्वती
 पयस्वती)।
 धाता ८, १, १५; २०
 पितरः ५, ३०, १२; १०९
 पूषा ५, २८, ३, १२, १२९, १३८। ७, ३२, १; १४२
 पृथिवी ८, १, १२, १७
 प्रजापतिः ८, १, १७; २२
 प्रतीबोधः ८, १, १३; १८। ५, ३०, १०; १०७
 प्रदिशः ५, २८, २; १२८
 बृहस्पतिः ३, ११, ४, ८; ७५, ७९। २, २९, १; ९१। ५,
 २८, १२; १३८। ७, ३३, १; १४२। ७, ५३, १; १४३।
 २, १३, २-३; २३३२-३३
 बोधः ८, १, १३; १८। ५, ३०, १०; १०७
 ब्रह्मणस्पतिः १९, ६३, १; १५४। ६१, १; १५५
 भगः ८, १, २; ७
 भवाशर्वौ ८, २, ७, ३३
 भूमिः ५, २८, २, ५; १२८, १३१
 मरुतः ८, १, २; ७। ६, १७, २; ८९। २, २९, ४-५;
 ९४-९५। ७, ३३, १; १४२
 मातरिश्वा वातः ८, १, ५; १०। ८, २, ३, १४, २९, ४०
 मित्रः २, २८, १, १
 मित्रावरुणौ २, २८, २, ५; २, ५ रिशादा संविदानौ।
 मृत्युः ८, १, १, ६; ६, १०। ५, ३०, १२; १०९
 यक्ष्मनाशनम् ३, ११, १-८; ७२-७९। २, ९, १-५, ८०-८४

यमः ५, ३०, १२, १०९ । ७, ५३, १, १४३
 राणः ८, १, १३, १८
 वनस्पतिः २, ९, १-५, ८०-८४
 वरुणः २, २९, ४, ९४
 वसवः ८, १, १६, २१ । १, ३०, १, ५५
 वायुः ८, १, १५, २०
 विश्वे देवाः २, २८, ५, ५ । ८, १, ७, १२ । ८, २, २१, ४७ ।
 १, ३५, ४, ६२ (अह्णीयमनाः) । १, ३०, १-४,
 ५५-५८ । २, ९, ४, ८३ । ६, ४७, २, ८९ । २, २९, ५,
 ९५ । २, १३, ४-५, २३३४-२३३५
 घणः २, ४, ५, ७०
 शबलः ८, १, ९, १४
 द्यामः ८, १, ९, १४

सरस्वती ६, ४१, २, ६४
 सविता ८, १, १५, २० । ३, ११, ४, ७५ । २, २९, २, ९२
 सूर्यः ८, १, ५, १२, १०, १७ । ८, २, ३, १४, २९, ४० ।
 २, २९, १, ९१ । ५, ३०, ११, १०८ । ५, ३०, १५,
 ११२ (अधिपतिः) । १९, ६७, १-८, ११९-१२६ । ५,
 २८, २, १२८ । ७, ५३, ७, १४९ । १९, ७०, १, १५६
 सूर्याचन्द्रमसौ ८, २, १५, ४१
 सोमः ८, १, २, ७ । ७, ३२, १, १४१ । २, १३, २, २३३२
 सोमराज्ञी ८, १, १७, २२
 सौधन्वनाः ६, ४७, ३, ९० स्वर् आनशानाः ।
 सुधन्वा ६, ४७, ३, ९०
 हिरण्यम् १, ३५, १४, ५९-६२

(२) अग्निदेवता-गुणबोधकपदानि ।

अन्तः अश्व ८, १, ११, १६
 आयुर्दा २, १३, १, २३३१
 इन्द्रः १९, ६४, ४, ११८
 ईज्यः ६, ११०, १, ८५
 घृतपृष्ठः २, १३, १, २३३१
 घृतप्रतीकः " "
 जरसं कृणानः " "
 जातवेदाः १९, ६४, १-२, ११५-११६
 नख्यः ६, ११०, १, ८५
 पावकः ६, ४७, १, ८८
 प्रत्नः ६, ११०, १, ८५
 यविष्ठयः १९, ६४, ३, ११७
 विद्वान् वयुनानि २, २८, २, २
 विश्वकृत् ६, ४७, १, ८८
 विश्वशंभूः " "

वैश्वानरः ६, ४७, १, ८८
 सनात् ६, ११०, १, ८५
 संपेद्धः ६, ७६, १, १५०
 सान्तपनः ६, ७६, १-४, १५०-१५३
 होता २, २८, २, २ । ६, ११०, १, ८५

जंगिडमणिदेवता-गुणबोधकपदानि ।

अरातिदूषिः २, ४, ६, ७१
 कृत्यादूषिः " ६, ७१
 देवैः दत्तः " ४, ६९
 मयोभूः " ४, ६९
 विश्वभेषजः २, ४, ३, ६८
 विष्कन्धदूषणः " १, ६६
 सहस्रवीर्यः " २, ६७
 सहस्वान् " ६, ७१

(३) ' दीर्घायुष्यम् ' पर्यायशब्दाः ।

अमृतत्वम् १९, ६४, ४, ११८
 आयुः " "
 आयुः दीर्घम् १, ३५, १, ६० । ७, ३२, १, १४१ ।
 ३३, १, १४२ । वा. य. ३४, ५१, २३२९ । २, १३,
 २, २३३२
 वै० आयुर्वेद० १८

दीर्घायुत्वम् १, ३५, १, ५९ । ६, ११०, २, ८६ । ५, २८,
 १, १२७ । वा. य. १२, १००, २३२७
 द्राघीयः आयुः ८, २, २, २८
 जरदष्टिः २, २८, ५, ५ । ८, २, १, २७ । ५, ३०, ५, ८,
 १०२, १०५ । वा. य. ३४, ५२, २३३०

जरसे आयुः १,३०,३; ५७
 जरसे बहू ७,५३,४; १४६
 जरामृत्युः २,२८,२,४; २,४
 शतशारदम् ८,२,२; २८ । १,३५,१; ५९ । ३,११,२;
 ७३ । ६,११०,२; ८६ । ५,२८,१; १२५ । वा. य.
 ३४,५२; २३३०
 शतहायनम् ८,२,१; ३४

शतं शारदः ३,११,४; ७५ । २,२९,२; ९२ । १९,
 ६७,१-८; ११९-१२६ । ७,५३,२; १४४
 ,, वसन्ताः ३,११,४; ७५
 ,, हेमन्ताः ,, ,,
 ,, हिमाः २,२८,४; ४
 शतं अयुतं हायनान् द्वे युगे त्रीणि चत्वारि ८,२,२१; ४७
 सर्व आयुः १९,६१,१; १५५ । १९,७०,१; १५६

(४) दीर्घायुत्वे परिहरणीयम् ।

अंहः २,२८,१; १ । २,४,३; ६८
 अंगज्वरः ५,३०,९; १०६
 अंगमेदः ,, ,,
 अजातयक्ष्मः ३,११,१; ७२
 अभिशस्तिः ७,५३,१; १४३
 अभिशोचनम् २,४,२; ६७
 ग्राहिः ३,११,१; ७२
 अम्भः २,४,२; ६७

मृत्युः ७,५३,१; १४३
 मृत्यवः शतम् २,२८,१; १
 यक्ष्मः ५,३०,९; १०६
 राजयक्ष्मः ३,११,१; ७२
 विशरः २,४,२; ६७
 विरुन्धः २,४,२,५; ६७,७०
 हृदयामयः ५,३०,९; १०६

(५) ओषधयः, तासां विकाराः, गुणबोधकपदानि च ।

ओषधिः वा. य. १२,१००; २३२७
 जायतः मणिः २,४,१-६; ६६-७१
 जवन्ता ८,२,६; ३२
 जवन्ता ,, ,,
 त्रायमाणा ,, ,,
 दशवृद्धः २,९,१; ८०
 नधारिषा ८,२,६; ३२

पूतुदुः नाम भेषजम् ८,२,२८; ५४
 वनस्पतिः २,९,१; ८०
 वीरुधः ८,७,२; ३२५
 शतशल्शा वा. य. १२,१००; २३२७
 सर्वहा ८,२,७; ३३
 सहमाना ८,२,६; ३२
 सहस्रती ,, ,,

जलचिकित्सा ।

(१) आपः [उदकम्] गुणबोधकपदानि ।

अग्नेयुवः वा. य. १,१२; ९३७
 अग्नेपुवः वा. य. १,१२; ९३७
 अध्याः वा. य. २०,१८; ११०३
 अध्वरीयतां अम्भयः ऋ. १,२३,१६; ८६३

अध्वरीयतां जामयः ऋ. १,२३,१६; ८६३
 अध्वर्युभिः मनसा संविदानाः ऋ. १०,३०,१३; ९१३
 अनभ्रयः अ. १९,२,३; ९३०
 अनर्मावाः वा. य. ४,१२; ९४४

अनागसः वा. य. ४, १२; ९४४
 अनाधृष्टाः वा. य. १०, ४; १०९६
 अनिमृष्टम् वा. य. १०, ६; १०९७
 अनिविशमानाः अ. ७, ४९, १; ८७५
 अनूय्याः अ. १९, २, २; ९२९ । १, ६, ४; ९६४
 अन्तरिक्षेयाः बहुधा भवन्ति अ. १, ३३, ३; ९१८
 अपां गर्भः वा. य. १०, ३; १०९५
 अपां पतिः वा. य. १०, ३; १०९५
 अपां गर्भः [सुपर्णः वृषभः वा] अ. ७, ३९, १; ९१७
 अमृतं अप्सु अन्तः ऋ. १, २३, १९; ८६६ । अ. १, ४, ४; ९६३
 अमृताः वा. य. ४, १२; ९४४
 अयक्ष्मंकरणीः अ. १९, २, ५; ९३२
 अयक्ष्माः वा. य. ४, १२; ९४४
 अरिपः [सोमरसः] ऋ. ७, ४७, १; ८७१
 अर्थेतः वा. य. १०, ३; १०९५
 अहिं बुद्ध्यं अनुरीयमाणाः वा. य. १०, १९; १०९८
 आपः वा. य. ११, ३८; १०९९ । १२, ३, ५; ११०० ।
 ऋ. १०, ९, १, ४-५; ८७९, ८८२-८८३ । अ. ७, ४९, १-४; ८७५-७८
 आपः (निर्वचनम्) अ. ३, १३, २; ९२१
 आयतीः ऋ. १०, ३०, १३; ९१३
 आवर्तुततीः ऋ. १०, ३०, १०; ९१०
 इन्द्रपानः [सोमः] अ. ७, ४७, १; ८७१ । ऋ. १०, ३०, ९; ९०९
 इयानाः पर्वतस्य पृष्ठात् वा. य. १०, १९; १०९८
 ईक्ष्यः ऋ. १०, ३०, ८; ९०८
 ईशानाः वार्याणाम् ऋ. १०, ९, ५; ८८३
 उत्स्याः अ. १९, २, १; ९२८
 उदकम् (निर्वचनम्) अ. ३, १३, ४; ९२३
 उदक्ताः वा. य. १०, १९; १०९८
 उपजीवाः अ. १९, ६९, २; ९३४
 उशतीः ऋ. १०, ३०, १५; ९१५
 ऊर्जं वहन्तीः वा. य. २, ३४; ९४२
 ऊर्जस्वतीः वा. य. १०, १; १०९३
 ऊर्मिः (सोमः) ऋ. ७, ४७, १; ८७१ । १०, ३०, ७-९; ९०७-९०९

ऊर्मिः वृष्णः वा. य. १०, २; १०९४
 ऋतावरीः अ. ३, १३, ७; ९२६
 ऋतावृधः वा. य. ४, १२; ९४४
 ओजस्वतीः वा. य. १०, ३; १०९५
 ओषधीनां वृषभः [सुपर्णः] अ. ७, ३९, १; ९२७
 औशानः [सोमः] ऋ. १०, ३०, ९; ९०९
 कल्याणीः ऋ. १०, ३०, ५; ९०५
 कुंभेभिः-भे-आमृताः अ. १९, २, २; ९२९ । १, ६, ४; ९६४
 क्षत्रियाय महि क्षत्रं वन्वानाः वा. य. १०, ४; १०९६
 क्षयन्तीः चर्षणीनाम् ऋ. १०, ९, ५; ८८२
 खनमानाः अ. १९, २, ३; ९३०
 खनित्रिमाः ऋ. ७, ४९, २; ८७६ । अ. १२, २, २; ९०७ ।
 १, ६, ४; ९६४
 घृतवः ऋ. १०, १७, १; ८८८
 घृतपुष् ऋ. १०, ३०, ८; ९०८
 घृतमुष (सोमः) ऋ. ७, ४७, १; ८७१
 घृतं बिभ्रतीः ऋ. १०, ३, १३; ९१३ । अ. ३, १३, ५; ९२४
 घृतश्चुतः अ. १, ३३, ४; ९१९
 चरन्तीः नियवम् ऋ. १०, ३०, १०; ९१०
 चितानाः वा. य. १०, १; १०९३
 जनभृतः वा. य. १०, ४; १०९६
 जनयः वा. य. १२, ३५; ११००
 जनित्रीः भुवनस्य ऋ. १०, ३०, १०; ९१०
 जानयः अध्वरीयताम् ऋ. १, २३, १६; ८६३
 जालषम् (जलम्) अ. ६, ५७, २; ८६१
 जीवाः अ. १९, ६९, १; ९३३
 जीवधन्याः ऋ. १०, ३०, १४; ९१४
 जीवलाः अ. १९, ६९, ४; ९३६
 तपोजाः वा. य. १०, ६; १०९७
 त्रितन्तुः [सोमः] ऋ. १०, ३०, ९; ९०९
 दिव्यः ऋ. ७, ४९, २; ८७६ । अ. ७, ३९, १; ९०७ ।
 १९, २, ४; ९३१
 दुर्मित्रियाः द्विषे वा. य. २०, १९; ११०४
 देवमादनः [सोमः] ऋ. १०, ३०, ७; ९०७

देवश्रुतः वा. य. ६, ३०; ९४८
 देवीः ऋ. १, २३, १८; ८६५ । ७, ४७, ३; ८७३ ।
 ४९, १-४; ८७५-७८ । १०, १७, १०; ८८८ । वा. य.
 ४, १, १२; ९४३-४४ । ६, १०, १३; ९४६-४७ ।
 अ. ६, २४, १; ९७१ । वा. य. ११, ३८; १०९९ ।
 १२, ३५; ११००
 द्विधाराः ऋ. १०, ३०, १०; ९१०
 धन्वत्याः अ. १९, २, २; ९२९ । १, ६, ४; ९६४
 नद्यः (निर्वचनम्) अ. ३, १३, १; ९२०
 नभोजाः (सोमः) ऋ. १०, ३०, ९; ९०९
 नावः वा. य. १०, १९; १०९८
 निग्राभ्यः वा. य. ६, ३०; ९४८
 द्रासः [सोमः] ऋ. १०, १७, ११-१३; ८८९-९१
 पत्नीः भुवनस्य ऋ. १०, ३०, १०; ९१०
 पत्नीः रायः ऋ. १०, ३०, १२; ९१२
 ,, स्वपत्यस्य ऋ. १०, ३०, १२; ९१२
 पयम् [सुपर्णः वृषभः] अ. ७, ३९, १; ९२७
 पयस्वत् इत् पयः अपाम् (सोमः) ऋ. १०, १७, १४;
 ८९२
 पयः पृथ्वीः मधुना ऋ. १, २३, १६; ८६३
 परिवाहिणीः वा. य. १०, ३; १०९५
 पावकाः ऋ. ७, ४९, २-३; ८७६-८७७ । अ. १, ३०,
 १, ४; ९१६, ९१९
 पीताः वा. य. ४, १२; ९४४
 पुनानाः ऋ. ७, ४९, १; ८७५
 पृथगः वा. य. १२, ५५; ११०१
 बृहत् [सुपर्णः] अ. ७, ३९, १; ९२७
 भद्राः अ. ३, १३, ५; ९२४
 भिषक्ताराः भिषग्भ्यः अ. १९, २, ३; ९३०
 भिषक्तमाः भिषजाम् अ. ६, २४, २; ९७२
 भुवनस्य जनित्रीः ऋ. १०, ३०, १०; ९१०
 भुवनस्य पत्नीः ऋ. १०, ३०, १०; ९१०
 भेषजम् (जलम्) अ. ६, ५७, १-३; ८६०-६२
 भेषजीः अ. १९, २, ५; ९३२
 मत्सरः (सोमः) ऋ. १०, ३०, ९; ९०९
 मदच्युतः (सोमः) ऋ. १०, ३०, ९; ९०९
 मदन्तीः स्वधया ऋ. ७, ४७, ३; ८७३

मधुमतीः वा. य. १०, १, ४; १०९३, १०९६ । ११, ३८;
 १०९९ । १, ११; ९३९ । ऋ. १०, ३०, ४; ९०४
 मधुमान् (सोमः) ऋ. ७, ४७, १; ८७१ । १०, ३०, ७-
 ८; ९०७-८
 मधुमत्तमः (सोमः) ऋ. ७, ४७, २; ८७२
 मध्व उत्सः (सोमः) ऋ. १०, ३०, ८; ९०८
 मधुश्चुतः ऋ. ७, ४९, ३; ८७७
 मधुपृचः अ. ३, १३, ५; ९२४
 मयोभुवः ऋ. १०, ९, १; ८७९
 मातरः ऋ. १०, १७, १०; ८८८
 मान्दाः वा. य. १०, ४; १०९६
 रसः यासां शिष्यतमः ऋ. १०, ९, २; ८८०
 राजस्वः वा. य. १०, १, ६; १०९३, १०९७
 रायः पत्नीः ऋ. १०, ३०, १२; ९१२
 राष्ट्रदाः वा. य. १०, २-४; १०९४-१०९६
 रेवतीः ऋ. १०, ३०, ८, १२, १४; ९०८, ९१२, ९१४ ।
 वा. य. १, २१; ९३९
 वर्ध्याः अ. १९, २, १; ९२८
 वाः (२) अ. ३, १३, ३; ९२२ निर्वचनम् । वा. य. ५,
 ११, ९४५
 वाचः बन्धुः वा. य. १०, ६; १०९७
 वार्षिकीः अ. १, ६, ३; ९६४
 वाशाः वा. य. १०, ४; १०९६
 विचरन् (सोमः) ऋ. १०, ३०, ९; ९०९
 विश्वमृतः वा. य. १०, ४; १०९६
 विश्वभेषजीः ऋ. १, २३, २०; ८६७
 वृषण ऊर्मिः वा. य. १०, २; १०९४
 वृषसेनः वा. य. १०, २; १०९४
 वृषभः ओषधीनाम् (सुपर्णः) अ. ७, ३९, १; ९२७
 वृष्टया अभीपतः तर्पयन् (सुपर्णः) अ. ७, ३९, १; ९२७
 व्रजक्षितः वा. य. १०, ४; १०९६
 शं भवन्तः अ. १, ३३, १-४; ९१६-१९ । वा. य. ४, १, ९४३
 शक्राः अ. ३, १३, ७; ९२६ । वा. य. १०, ४; ९९६
 शतपत्रिन्नाः ऋ. ७, ४७, ३; ८७३
 शविष्ठाः वा. य. १०, ४; १०९६
 शिवाः अ. १९, २, ५; ९३२

शुचयः ऋ. ७, ४९, १-३; ८७६-७७ । अ. १, ३३, १, ४;
९१६, ९१९
शुचिः (सोमः) ऋ. ७, ४७, १; ८७१
शुद्धाः वा. य. ६, १३; ९४७
श्रुष्टीवरीः ऋ. १०, ३०, ११; ९११
श्वानाः वा. य. ४, १२; ९४४
संजीवाः अ. १९, ६९, ३; ९३५
सनिष्यदाः अ. १९, २, १; ९२८
समुद्रज्येष्ठाः ऋ. ७, ४९, १; ८७५
समुद्रार्थाः ऋ. ७, ४९, २; ८७६
सयोनः ऋ. १०, ३०, १०; ९१०
सवृधः ऋ. १०, ३०, १०; ९१०
सहोजसः वा. य. १०, ४; १०९६
सिन्धवः (निर्वचनम्) अ. ३, १३, १; ९२०
सिन्धवः ऋ. १, २३, १८; ८६५ । ७, ४७, ३-४; ८७३-
७४ । १०, ३०, ८-९; ९०८-९
सुपत्नीः वा. य. १२, ३५; ११००
सुपरिविष्टाः वा. य. ६, १३; ९४७

सुपर्णः (देवता) अ. ७, ३९, १; ९२७
सुमित्रियाः नः वा. य. ६, २२; ९५१ । २०, १९; ११०४
सुवर्णाः अ. १, ३३, १-३; ९१६-१८
सुशेवाः वा. य. ४, १२; ९४४
सूददोहसः वा. य. १२, ५५; ११०१
सूर्यत्वचसः वा. य. १०, ४; १०९६
सूर्यवर्चसः वा. य. १०, ४; १०९६
सोमस्य दात्रम् वा. य. १०, ६; १०९७
स्योनाः अ. १, ३३, १-४; ९१६-१९
स्रवन्ति याः ऋ. ७, ४९, २; ८७६
स्रोतस्याः अ. १९, २, ४; ९३१
स्वपत्यस्य पत्नीः ऋ. १०, ३०, १२; ९१२
स्वयंजाः ऋ. ७, ४९, २; ८७६
स्वराजः वा. य. १०, ४; १०९६
स्वसिचः वा. य. १०, १९; १०९८
हिरण्यवर्णाः अ. १, ३३, १; ९१६ । ३, १३, ६; ९२५
हैमवतीः अ. १२, २, १; ९२८

(२) सरस्वत्यादि-नदी-नामानि, तासां गुणबोधकपदानि च ।

अकय-अरी (सरस्वती) ऋ. ७, ९३, ३; १०८०
अज्यौ (विपाद् शुतुद्रौ) ऋ. ३, ३३, १३; १०३४
अदग्धा (सिन्धुः) ऋ. १०, ७५, ७; १०४२
अदुष्कृतौ (विपाद् शुतुद्रौ) ऋ. ३, ३३, १३; १०३४
अधोअक्षाः (नद्यः) ऋ. ३, ३३, ९; १०३०
अनन्तः (सरस्वत्याः अमः) ऋ. ६, ६१, ८; १०६६
अनुदकाः (नद्यः) अ. ७, ५०, ४; १०३५
अपसां अपसामा (नद्या) ऋ. १०, ७५, ७; १०४२
(सरस्वती) ६, ६१, १३; १०७१
अप्येति अन्या अन्याम् (विपाद् शुतुद्रौ) ऋ. ३, ३३, २;
१०२३
अमृता (सरण्यः) ऋ. १०, १७, २; १०८२
अम्बितमा (सरस्वती) ऋ. २, ८१, १६; १०५६
अर्णवः (सरस्वत्याः अमः) ऋ. ६, ६१, ८; १०६६
अवित्री (सरस्वती) ऋ. ७, ९३, ३; १०७९ । ऋ. ६,
६१, ४; १०६२

अशिपदाः (नद्यः) अ. ७, ५०, ४; १०३५
अशिमिदाः (नद्यः) अ. ७, ५०, ४; १०३५
असिक्नी [विशेषनाम] ऋ. १०, ७५, ५; १०४०
अहृतः (सरस्वत्याः अमः) ऋ. ६, ६१, ८; १०६६
आर्जोकीया [विशेषनाम] ऋ. १०, ७५, ५; १०४०
इन्द्रेषिते [विराद् शुतुद्रौ] ऋ. ३, ३३, २; १०२३
इयाना भित्तुभिः नमस्यैः [सरस्वती] ऋ. ७, ९५, ४;
१०७५
इषयन्तीः (नद्यः) ऋ. ३, ३३, १२; १०३३
उत्तरा सखिभ्यः [सरस्वती] ऋ. ७, ९५, ४; १०७५
उदन्वतीः (नद्यः) अ. ७, ५०, ४; १०३५
उदधिः (समुद्रः) अ. ४, १५, ११; १०१४
उद्वतः (नद्यः) अ. ७, ५०, ४; १०५०
उपस्तुत्या चिकितुषा (सरस्वती) ऋ. ६, ६१, १३; १०७१
उर्वा (विपाद्) ऋ. ३, ३३, ३; १०२४
उशती (विपाद् शुतुद्रौ) ऋ. ३, ३३, १; १०२२

ऊर्णावती (सिन्धुः) ऋ. १०, ७५, ८; १०४३
 ऋजीती (सिन्धुः) ऋ. १०, ७५, ७; १०४२
 ऋतवरीः (नद्यः) ऋ. ३, ३३, ५; १०२६ (सरस्वती)।
 २, ४१, १८; १०५८
 ऋष्वः (सरस्वती स्तनः) अ. ७, ११, १; १०८७
 एनी (सिन्धुः) ऋ. १०, ७५, ७; १०४२
 कुभा (सिन्धुसंगता) ऋ. १०, ७५, ६; १०४१
 केतुः [सरस्वती स्तनः] अ. ७, ११, १; १०८७
 गंगा (नदीविशेषः) ऋ. १०, ७५, ५; १०४०
 गोमती (सिन्धुसंगता) ऋ. १०, ७५, ६; १०४१
 घृतश्रुतः (सरस्वदूर्मयः) ऋ. ७, ९६, ५; १०४७
 घोरा (सरस्वती) ऋ. ६, ६१, ७; १०६५
 चरन्ती देवकृतं योनिं अनु (विपाट् शुतुद्री) ऋ. ३, ३३,
 ४; १०२५
 चरिष्णुः [सरस्वत्याः अमः] ऋ. ६, ६१, ८; १०६६
 चित्रा अश्वा न (सिन्धुः) ऋ. १०, ७५, ७; १०४२
 चेतन्ती भुवनस्य भूरैः रायः (सरस्वती) ऋ. ७, ९५, २;
 १०७४
 चेतन्ती सुमतीनाम् (सरस्वती) ऋ. १, ३, ११; १०५२
 चोदयित्री सृजुतानाम् (सरस्वती) ऋ. १, ३, ११; १०५२
 जुषाणा (सरस्वती) ऋ. ७, ९५, ४; १०७५
 तृष्टामा (सिन्धुसंगतानदी) ऋ. १०, ७५, ६; १०४१
 त्वेषः (सरस्वत्याः अमः) ऋ. ६, ६१, ८; १०६६
 त्रिषधस्था (सरस्वती) ऋ. ६, ६१, १२; १०७०
 दर्शिता वपुषी इव (सिन्धुः) ऋ. १०, ७५, ७; १०४२
 दाश्वान् (सरस्वान्) अ. ७, ४०, २; १०५०
 देवी (सरस्वती) ऋ. ६, ६१, ४-६; १०६२-६४। २,
 ४१, १७; १०५७। ... (नद्यः) अ. ७, ५०, ४; १०३५
 देवितामा (सरस्वती) ऋ. २, ४१, १६; १०५६
 दैवः (सरस्वती स्तनः) अ. ७, ११, १; १०८७
 धरणा (सरस्वती) ऋ. ७, ९५, १; १०७३
 धियावसुः (सरस्वती) ऋ. १, ३, १० १०५१
 धीनां अवित्री (सरस्वती) ऋ. ६, ६१, ४; १०६२
 धृषती (सरस्वती) ऋ. २, ३०, ८; १०४५
 नदीनमा (सरस्वती) ऋ. २, ४१, १६; १०५६
 नर्यः (सरस्वान्) ऋ. ७, ९५, ३; १०४५
 निवतः (नद्यः) अ. ७, ५०, ४; १०३५

पञ्चजाता वर्धयन्ती (सरस्वती) ऋ. ६, ६१, १२; १०७०
 परुष्णी (नदीविशेषा) ऋ. १०, ७५, ५; १०४०
 पारवतघ्नी (सरस्वती) ऋ. ६, ६१, २; १०६०
 पावका (सरस्वती) ऋ. १, ३, १०; १०५१
 पिन्वमाने ऊर्मिभिः (विपाट् शुतुद्री) ऋ. ३, ३३, २; १०२३
 पिन्वमानाः पयसा (विपाट् शुतुद्री) ऋ. ३, ३३, ४; १०२५।
 (नद्यः) अ. ७, ५०, ४; १०३५
 पीपिवान् (सरस्वतः स्तनः) ऋ. ७, ९६, ६; १०४८
 पुष्टपतिः (सरस्वन्) अ. ७, ४०, २; १०५०
 पृथुः (सरस्वती स्तनः) अ. ७, ११, १; १०८७
 प्रचेतयति महः अर्णः केतुना (सरस्वती) ऋ. १, ३, १२;
 १०५३
 प्रत्यङ् आ दाशुषे (सरस्वान्) अ. ७, ४०, २; १०५०
 प्रभाबधाना महिना विश्वा अयः (सरस्वती) ऋ. ७, ९५, १;
 १०७३
 प्रवतः (नद्यः) अ. ७, ५०, ४; १०३५
 प्रिया प्रियासु (सरस्वती) ऋ. ६, ६१, १०; १०६८
 बृहती कृता बिम्बने (सरस्वती) ऋ. ६, ६१, १३; १०७१
 भद्रा (सरस्वती) ऋ. ७, ९६, ३; १०८०
 भद्रं कृणवत् (सरस्वती) ऋ. ७, ९६, ३; १०८०
 भिक्षमाणे प्रसवम् (विपाट् शुतुद्री) ३, ३३, २; १०२३
 मधुमन्तः (सरस्व ऊर्मयः) ऋ. ७, ९६, ५; १०४७
 मधोभूः (सरस्वती स्तनः) ऋ. १, १६४, ४९; १०५४।
 अ. ७, १०, १; १०८६
 मरुस्वती (सरस्वती) ऋ. २, ३०, ८; १०५५
 मरुस्खा (सरस्वती) ऋ. ७, ९६, २; १०७९
 मरुद्बृधा (नदीविशेषः) ऋ. १०, ७५, ५; १०४०
 मातृतमा (शुतुद्री) ऋ. ३, ३३, ३; १०२४
 मेहल्लुः (सिन्धुसंगतानदी) ऋ. १०, ७५, ६; १०४१
 यती गिरिभ्यः आ समुद्रात् (सरस्वती) ऋ. ७, ९५, २;
 १०७४
 यमुना (नदीविशेषा) ऋ. १०, ७५, ५; १०४०
 याति रथ्या इव (सरस्वती) ऋ. ७, ९५, १; १०७३
 (युक्ता) युग्मेभिः- (सरस्वती) ऋ. ६, ६१, १३; १०७१
 (युक्ता) महिना महिना (सरस्वती) ऋ. ६, ६१, १३;
 १०७१
 युजा राया (सरस्वती) ७, ९५, ४; १०७५

युयुजे सुखं अश्विनं रथम् (सिन्धुः) ऋ. १०, ७५, ९; १०४४
 युवतिः (सिन्धुः) ऋ. १०, ७५, ८; १०४३
 रयिष्ठाः (सरस्वान्) अ. ७, ४०, २; १०५०
 रसा (सिन्धुसंगतानदी) ऋ. १०, ७५, ६; १०४१
 रायस्पोषः (सरस्वान्) अ. ७, ४०, २; १०५०
 रुशती (सिन्धुः) ऋ. १०, ७५, ७; १०४२
 रोहवत् एति (सिन्धुः) ऋ. १०, ७५, ३; १०३८
 रोहवत् चरति (सरस्वत्याः अमः) ऋ. ६, ६१, ८; १०६६
 वक्षणाः (नद्यः) ऋ. ३, ३३, १२; १०३३
 वर्धयन्ती पञ्चजाता (सरस्वती) ऋ. ६, ६१, १२; १०७०
 वस्ते मधुवृषं अधि (सिन्धुः) ऋ. १०, ७५, ८; १०४३
 वाजिनी (सरस्वती) ऋ. ६, ६१, ६; १०६४
 वाजिनीवती (सरस्वती) ऋ. ६, ६१, ३-४; १०६१-
 १०६२ । ७, २६, ३; १०८० । २, ४, १८; १०५८ ।
 १, ३, १०; १०५१। (सिन्धुः) ऋ. १०, ७५, ८; १०४३
 वि-एनसा (विपाद् शुतुद्रि) ऋ. ३, ३३, १३; १०३४
 वितस्ता (नदीविशेषः) ऋ. १०, ७५, ५; १०४०
 विपाद् (नदीविशेषः) ऋ. ३, ३३, १; १०२२
 विश्वदर्शतः (सरस्वान्) ऋ. ७, ९६, ६; १०४८
 वृत्रघ्नी (सरस्वती) ऋ. ६, ६१, ७; १०६५
 वृषभः (सरस्वान्) ऋ. ७, ९५, ३; १०४५
 वृषा (सरस्वान्) ऋ. ७, ९५, ३; १०४५
 शशयः (सरस्वती स्तनः) ऋ. १, १६४, ४९; १०५४
 शशयुः (सरस्वती स्तनः) अ. ७, १०, १; १०८६
 शिवाः (नद्यः) अ. ७, ५०, ४; १०३५
 शिशुः (सरस्वान्) ऋ. ७, ९५, ३; १०४५
 शुचिः (सरस्वती) ऋ. ७, ९५, २; १०७४
 शुतुद्रिः (नदीविशेषः) ऋ. ३, ३३, १; १०२२ । १०, ७५,
 ५, १०४०
 शुभ्रा-श्रे (विपाद् शुतुद्रि) ऋ. ३, ३३, २, १०२३ ।
 (सरस्वती) ऋ. ७, २५, ६; १०७७ । ७, ९६, १;
 १०७८
 श्रवस्त्युः (सरस्वान्) अ. ७, ४०, २; १०५०
 श्वेती (सिन्धुसंगता) ऋ. १०, ७५, ६; १०४१
 संरिहाणे वत्समिव (विपाद् शुतुद्रि) ऋ. ३, ३३, ३; १०२४
 संचरन्ती समानं योनिं अनु (विपाद् शुतुद्रि) ऋ. ३, ३३,
 ३; १०२४

सप्तधातुः (सरस्वती) ऋ. ६, ६१, १२; १०७०
 सप्तस्वसा (सरस्वती) ऋ. ६, ६१, १०; १०६८
 समुद्रः अ. ४, १५, ५; १००८ । ऋ. ३, ३३, २;
 १०२३। ७, ९५, २; १०७४। वा. य. २०, १९; ११०४
 समाराणे (विपाद् शुतुद्रि) ऋ. ३, ३३, २; १०२३
 सरण्युः (नदीविशेषः) ऋ. १०, १७, १-२; १०८१-८२
 सरस्वती (नदीविशेषः) ऋ. १०, ७५, ५; १०४० । १, ३,
 १०-१२; १०५१-५३ । १, १६४, ४९; १०५४ । २,
 ३०, ८; १०५५ । २, ४१, १६-१८; १०५६-५८ । ६,
 ६१, १-७, १०-११, १३-१४; १०५९-६५, १०६८-६९,
 १०७१-७२ । ७, ९५, १-२, ४-६; १०७३-७७ । ९६,
 १, ३; १०७८, १०८० । १०, १७, ७-९; १०८३-८५ ।
 अ. ७, १०, १; १०८६ । ५७, १; १०८८; ६८, १-३;
 १०९०-९२
 सरस्वान् ऋ. ७, २६, ४-६; १०४६-४८ । अ. ७, ४०,
 १-२; १०४९-५०
 सिन्धुः ऋ. ३, ३३, ३, ५ (शुतुद्रि), ९ (नद्यः); १०२४,
 १०२६, १०३०
 ,, (समुद्रः) अ. ६, २४, १; ९७१ । ऋ. १०, ७५,
 १-४, ६-९; १०३६-३९, १०४१-४४ । (विशेषनाम)
 सिन्धुपत्नीः (नद्यः) अ. ६, २४, ३; ९७३
 सिन्धुराज्ञीः ,, ,, ,,
 सौलमावती (सिन्धुः) ऋ. १०, ७५, ८; १०४३
 सुकृता (सिन्धुः) ऋ. १०, ७५, ८; १०४३
 सुजुष्टा (सरस्वती) ऋ. ६, ६१, १०, १०६८
 सुदत्रः (सरस्वती स्तनः) ऋ. १, १६४, ४९; १०५४ ।
 अ. ७, १०, १; १०८६
 सुपाराः (नद्यः) ऋ. ३, ३३, २, १०३०
 सुभगा (सिन्धुः) ऋ. १०, ७५, ८; १०४३ । (विपाद्)
 ऋ. ३, ३३, ३; १०२४
 ,, (सरस्वती) ऋ. ७, ९५, ४, ६; १०७५, १०७७
 सुमतीनां चेतन्ती (सरस्वती) ऋ. १, ३, २१; १०५९
 सुरथा (सिन्धुः) ऋ. १०, ७५, ८; १०४३
 सुराधाः (नद्यः) ऋ. ३, ३३, १२; १०३३
 सुवासाः (सिन्धुः) ऋ. १०, ७५, ८; १०४३
 सुसर्तुः (सिन्धुसङ्गता) ऋ. १०, ७५, ६; १०४१

सुसोमा (नदीविशेषः) ऋ. १०, ७५, ५; १०४०
 सुहवः (सरस्वती स्तनः) अ. ७, १०, १; १०८६
 सूतृतानां चोदयित्री (सरस्वती) ऋ. १, ३, ११; १०५२
 स्तनः (सरस्वत्याः) ऋ. १, १६४, ४९; १०५४ । अ.
 ७, १०, १; १०८६
 स्तनयितुः (सरस्वत्याः) अ. ७, ११, १; १०८७

स्ताम्या (सरस्वती) ऋ. ६, ६१, १०; १०६८
 स्वश्वा (सिन्धुः) ऋ. १०, ७५, ८; १०४३
 स्वसारः (नद्यः) ऋ. ३, ३३, ९; १०३०
 हासमाने (विपाद् शुतुद्रि) ऋ. ३, ३३, १; १०२२
 हिरण्ययी (सिन्धुः) ऋ. १०, ७५, ८; १०४३
 हिरण्यवर्तनिः (सरस्वती) ऋ. ६, ६१, ७; १०६५

(३) 'पर्जन्य' देवताया गुणबोधकपदानि ।

अजगराः (मेघाः) अ. ४, १५, ९; १०१२
 असुरः ऋ. ५, ८३, ६; ९७९ । अ. ४, १५, १२; १०१५
 ईशः विश्वस्य जगतः ऋ. ७, १०१, २; ९८६
 उत्साः (मेघाः) अ. ४, १५, ९; १०१२
 ऊधः ऋ. ७, १०१, १; ९८५
 कनिकदत्तः ऋ. ५, ८३, १, २; ९७४, ९८२
 कृणोति गर्भं ओषधीनाम् ऋ. ७, १०२, २; ९९२
 " " गवाम् ऋ. ७, १०२, २; ९९२
 " " पृषीणाम् ऋ. ७, १०२, २; ९९२
 कृण्वन् ओषधीनां गर्भम् ऋ. ७, १०१, १; ९८५
 कृण्वन् वत्सम् ऋ. ७, १०१, १; ९८५
 जीरदानुः ऋ. ५, ८३, १; ९७४
 दिवस्पुत्रः ऋ. ७, १०२, १; ९९१
 देवः ऋ. ७, १०१, २; ९८६
 निषिन्नन् अपः ऋ. ५, ८३, ६; ९७९ । अ. ४, १५, १२;
 १०१५
 पर्जन्यः ऋ. ५, ८३, १-५, ९; ९७४-७८, ९८९ । अ.
 १०१, ५; ९८९ । १०२, १; ९९१
 पिता नः ऋ. ५, ८३, ६; ९७९ । अ. ४, १५, १२; १०१५

प्रच्युताः महद्भिः (मेघाः) अ. ४, १५, ७, ९; १०१०-१२
 मधुदोघः (मेघः) ऋ. ७, १०१, १; ९८५
 मीढ्वान् ऋ. ७, १०२, १; ९९१
 मेघाः अ. ४, १५, ७-९; १०१०-१२
 यंसत् त्रिधातु शरणं शर्म ऋ. ७, १०१, २; ९८६
 रेतोधाः ऋ. ७, १०१, ६; ९९०
 वर्धनः अपाम् ऋ. ७, १०१, २; ९८६
 वर्धनः ओषधीनाम् ऋ. ७, १०१, २; ९८६
 वर्षम् (वृष्टिः) ऋ. ५, ८३, १०; ९८३ । अ. ७, १५, २-४,
 ६, १०, १४-१५; १००५-७, १००९, १०१३, १०१७-१८
 वर्षम् (वृष्टयोपेतम्) ऋ. ५, ८३, ३; ९७६
 वर्ष्याः (मेघाः) ऋ. ५, ८३, ३; ९७६
 वृषभः ऋ. ५, ८३, १; ९७४ । अ. ७, १०१, १, ६; ९८५, ९९०
 वृष्टिः-ष्टयः ऋ. ५, ८३, ६; ९७९ । अ. ७, १०१, ५; ९८९
 सयोजातः ऋ. ७, १०१, १; ९८५
 सुदानवः (मेघाः) अ. ४, १५, ९; १०१२
 स्तनयन् ऋ. ५, ८३, २, ९; ९७५, ९८२
 स्वराट् ऋ. ७, १०१, ५; ९८९

(४) 'मण्डूक' देवताया गुणबोधकपदानि ।

अजमायुः ऋ. ७, १०३, ६, १०; ९९९, १००३
 अभिवृष्टः ४; ९९७
 उशनः ३; ९९६
 कनिष्ठः ४; ९९७
 गुह्याः न ८; १००१
 गोमायुः ६, १०; ९९९, १००३
 घर्माः ९; १००२

घर्मिणः ऋ. ७, १०३, ८; १००१
 तप्ताः ९; १००२
 तृष्यावन्तः ३; ९९६
 नरः न ९; १००२
 पुरुत्रा वाचं वदन्तः ६; ९९९
 पृथिः ४, ६, १०; ९९७, ९९९, १००३
 पृथिवाहवः अ. ४, १५, १२; १०१५

ब्राह्मणाः-णासः न ऋ. ७, १०३, १, ७, ९९४, १००० ।
 अ. ४, १५, १३, १०१६
 मण्डूकाः ऋ. ७, १०३, १-२, ७, १०, ९९४-९५, १०००,
 १००३ । अ. ४, १५, १२-१३,
 १०१५-१६
 मण्डूकी अ. ४, १५, १४, १०१७
 वदन, वदन्तः ऋ. ७, १०३, ३, ७, ९९६, १०००

विरूपाः ७, १०३, ६, ९९९
 व्रतचारिणः १, ९९४ । अ. ४, १५, १३, १०१६
 शयानः २, ९९५
 शशयानः संवत्सरम् १, ९९४ । अ. ४, १५, १३, १०१६
 समानं नाम बिभ्रतः ६, ९९९
 सिध्दिदानाः ८, १००१
 हरितः ४, ६, १०, ९९७, ९९९, १००३

(५) 'आपः' देवतान्तरसम्बन्धः ।

पयस्वान् अम आ गहि । तं मा सं सृज वर्चसा । ऋ. १,
 २३, २३, ८७० । १०, ९, ९, ८८७ । अ. ७, ८९, १,
 ९५९

अमिः अप्सु अन्तः ऋ. १, २३, २०, ८६७
 अमिं याः गर्भं दधिरे अ. १, ३३, १-३, ९१६-१८
 अमिः यासु जातः अ. १, ३३, २, ९१६
 वैश्वानरो यासु अमिः प्रविष्टः ऋ. ७, ४९, ४, ८७८
 इन्द्रो याभ्यः अरदद् गातुर्मूर्तिम् ऋ. ७, ४७, ४, ८७४
 इन्द्रो या वज्री वृषभो रराद ऋ. ७, ४९, १, ८७५
 इन्द्रो याभिः वावृधे वीर्याय ऋ. १०, ३०, ४, ९०४
 यः (इन्द्रः) वो वृताभ्यो अकृणोदु लोकम् ऋ. १०, ३०,
 ७, ९०७

यः (इन्द्रः) वो मर्या अभिशस्तेरमुषत् ऋ. १०, ३०,
 ७, ९०७

युष्मा इन्द्रोऽवृणीत वृत्रतूर्यं वा. य. १, १३, ९३८;
 यूयमिन्द्रमवृणीध्वं वृत्रतूर्यं " "
 याभिः इन्द्रमनयन्नत्यरातीः वा. य. १०, १, १०९३
 इन्द्राय सोमं सुषुतं भरन्तीः ऋ. १०, ३०, १३, ९१३
 अध्वर्वाः " " सुवृत ऋ. १०, ३०, १५, ९१५
 तां इन्द्रस्य न मिनन्ति व्रतानि ऋ. ७, ४७, ३, ८७३
 यं वः प्रथमं इन्द्रपानमूर्तिमकृण्वतेळः ऋ. ७, ४७, १, ८७१
 तं सिन्धवो मत्सरमिन्द्रपानं ऊर्वि प्र हेत ऋ. १०, ३०, ९,
 ९०९

इन्द्राय मधुमन्तं ऊर्मिं प्र हिणोतनापः ऋ. १०, ३०, ७, ९०७
 प्रास्मै (इन्द्राय) मधुमन्तमूर्तिम् ऋ. १०, ३०, ८, ९०८
 इन्द्राग्न्योः भागधेयीः स्थ । वा. य. ६, २४, ९५२
 यासां देवा दिवि कृण्वन्ति भक्षम् ऋ. १, ३३, ३, ९१८
 देवानां अपि यन्ति पाथः ऋ. ७, ४७, ३, ८७३

दे०[आयुर्वेद०] १९

याभिर्मित्रावरुणावभ्ययिषन् वा. य. १०, १, १०९३
 मित्रावरुणयोः भागधेयी स्थ वा. य. ६, २४, ९५२
 यासां राजा वरुणो यति मध्ये सत्याचूते अ. १, ३३, २, ९१७।
 अवपश्यन्ननानाम् ऋ. ७, ४९, ३, ८७७
 यासु राजा वरुणः (वर्तते) ऋ. ७, ४९, ४, ८७८
 विश्वे देवा यासूर्जं मदन्ति ऋ. ७, ४९, ४, ८७८
 विश्वेषां देवानां भागधेयी स्थ वा. य. ६, २४, ९५२
 अपामुत प्रशस्तये । देवा भवत वाजिनः॥ ऋ. १, २३,
 १२, ८६६

यासु जातः सविता अ. १, ३३, १, ९१६
 सूर्यः रश्मिभिर्याः (आपः) आततान ऋ. ७, ४७, ४, ८७४
 अमूः (आपः) याः उप सूर्ये ऋ. १, ३३, १७, ८६४ ।
 याभिर्वा सूर्यः सह वा. य. ६, २४, ९५२
 आपः पृणीत भेषजं ज्योक् च सूर्यं दृशे ऋ. १, २३, २१,
 ८६८ । १०, ९, ७, ८८५

यासु सोमः (वर्तते) ऋ. ७, ४९, ४, ८७८
 याभिः सोमः मोदते हर्षते च ऋ. १०, ३०, ५, ९०५
 आसु मे सोमोऽब्रवीदन्तर्विश्वानि भेषजा ऋ. १, २३, २०,
 ८६७
 अग्निं च विश्वशंसुवं आपश्च विश्वभेषजीः ऋ. १०, ९, ६,
 ८८४

तमूर्तिमापो मधुमत्तमं वोऽपां नपादवत्वाशुहेमा । ऋ. ७,
 ४७, २, ८७२

अध्वर्यवोऽप इता समुद्रं अपां नपातं हविषा यजध्वम् । ऋ.
 १०, ३०, ३, ९०३

नि बर्हिषि धत्तन सोम्यालोऽपां नपत्रा संविदानास एनाः ।
 ऋ. १०, ३०, १४, ९१४

अपां नपाथो व ऊर्मिर्हविष्यः वा. य. ६, २७, ९५३

आयुर्वेदमन्त्राणां वर्णानुक्रमसूची ।

| | | | |
|----------------------------------|---------------|--------------------------------|----------|
| अकर्म ते स्वपसो अभूम | २१०७ | अग्ने सहस्वानभिभूरभीदसि | १२३४ |
| अक्षन्नमिमदन्त ह्यव | २२११ | अग्नेः शरीरमसि | ५४ |
| अक्षितास्त उपसदो | ११२६ | अग्नेः सान्तपनस्य | १५१ |
| अक्षितिं भूयसीम् | २१७७ | अग्नेरिवास्य दहत एति | १७९ |
| अक्षीभ्यां ते नासिकाभ्यां | १६२, २१०, २९४ | अग्नेरिवास्य दहतो दावस्य | ६८६ |
| अक्ष्यौ नि विध्य हृदयं | ७४१ | अग्नेर्घासो अपां गर्भो | ३३१ |
| अक्ष्यौ नो मधुसंकाशे | ५९१ | अग्नेर्मन्वे प्रथमस्य प्रचेतसः | १६८५ |
| अगन्म स्वः स्वरगन्म | १९०४ | अग्नेर्वर्म परि गोभिर्व्ययस्व | २०८२ |
| अमये कव्यवाहनाय | २२२१ | अग्नेर्वोऽपन्नगृहस्य सदसि | ९५२ |
| अग्निः पचन् रक्षतु त्वा | १२९५ | अग्नेष्टे प्राणममृताद् | ३९ |
| अग्निः पूर्वं आ रभतां | ७७० | अग्नौ तुषाना वप जातवेदसि | १२५७ |
| अग्निः प्राणान्त्सं दधाति | १७३ | अग्नेष्ट्योषधीनां ज्योतिषा | ३९८ |
| अग्निः प्रातःसवने पात्वस्मान् | ८८ | अग्नेणीरसि स्वावेश | २२६९ |
| अग्निः सूर्यश्चन्द्रमा भूमिरापो | १२८ | अघद्विष्टा देवजाता | ६६८ |
| अग्निं भूमो वनस्पतीन् | १७३४ | अघमस्त्वघकृते शपथः | १६२० |
| अग्निरिवैतु प्रतिकूलम् | १६०३ | अघशंसदुःशंसाभ्यां | २१८ |
| अग्निर्माग्निनावतु प्राणाय | ५९७ | अघाश्वस्येदं भेषजम् | ८१७ |
| अग्निर्होताध्वर्युष्टे बृहस्पतिः | २१६५ | अज्ञभेदमज्ञज्वरं | २७६ |
| अग्निष्टे नि शमयतु | ६८८ | अज्ञभेदो अज्ञज्वरो | १०६ |
| अग्निष्वात्ताः पितर एह गच्छत | १९९७, २१२७ | अज्ञादज्ञात् प्र च्यावय | ८३२ |
| अग्निस्तक्मानमप बाधतामितः | ५३१ | अज्ञादज्ञाल्लोत्रोत्रो | १६७ |
| अग्ना रक्षस्तपतु यद् विदेवं | १३१४ | अज्ञिरसामयनं पूर्वो | २१५८ |
| अग्नाषोमा पथिकृता स्योनं | २०७७ | अज्ञिरसो नः पितरो नवग्वा | २०२१ |
| अग्ने अकव्यग्निः कव्यादं | २५८ | अज्ञिरोभिरा गहि यज्ञियेभिः | १९७२ |
| अग्ने चर्यज्ञियस्त्वाध्यरुक्षन् | १२४४ | अज्ञिरोभिर्व्यज्ञियैरा गहीह | २०२२ |
| अग्नेऽजनिष्ठा महते वीर्याय | १२३१ | अज्ञेअज्ञे लोमिलोमि | २१६, ३०० |
| अग्ने जायस्वादितिनाथितेयं | १२२२ | अज्ञेअज्ञे शोचिषा शिभ्रियाणं | १८९ |
| अग्ने तपस्तपामह उप | १९२२ | अच्छा वद तवसं गर्भिंराभिः | ९७४ |
| अग्ने पृतनाषाट् पृतनाः | १५९८ | अच्छा सिन्धुं मातुतमा | १०२४ |
| अग्ने समिधमाहर्ष | ११५ | अजं च पचत पथ | १२१९ |
| | | अजः पक्वः स्वर्गे लोके | १२०० |

| | | | |
|------------------------------------|----------|-----------------------------|------------|
| अजस्त्रिनाके त्रिदिवे त्रिपृष्ठे | ११९२ | अध्वर्यवोऽप इता समुद्रं | ९०३ |
| अजा रोह सुकृतां यत्र लोकः | ११९१ | अध्वर्यवो हविष्मन्तो हि | ९०२ |
| अजैष्माद्यासनाम च | ६२९ | अनहुद्भयस्त्वं प्रथमं | ४०७ |
| अजैष्माद्यासनामायाभूम | १८४५ | अनङ्गाहं प्लवमन्वारमध्वं | २६४ |
| अजो अभिरजमु ज्योतिराहुः | ११८९ | अनघ्नयः खनमाना | ९३० |
| अजो भागस्तपसस्तं तपस्व | २०३२ | अनयाहमोषध्या सर्वाः | ३९२, १६१९ |
| अजो वा इदमग्रे व्यक्रमत | १२०२ | अनस्थाः पूताः पवनेन शुद्धाः | १२२२ |
| अजोऽस्यज स्वर्गोऽसि त्वया | ११९८ | अनागमिष्यतो वरानवितेः | १८५४ |
| अजो ह्यमेरजनिष्ठ शोकाद् | ११९५ | अनागोहत्या वै भीमा कृत्ये | १६४४ |
| अजते व्यञ्जते समञ्जते | २१०१ | अनाप्ता ये वः प्रथमा | ८०४ |
| अजन्ति त्वामध्वरे देवयन्तो | २२५९ | अनास्माकस्तद् देवपीयुः | १९१७ |
| अतारिषुर्भरता गव्यवः | १०३३ | अनु च्छथ श्यामेन त्वचमेतां | ११८६ |
| अति द्रव श्वानौ सारमेयौ | २०३५ | अनुजिघ्रं प्रमृशन्तं | १३७२ |
| अति विश्वाः परिष्टाः | ३१० | अनु त्वा हरिणो वृषा | १९३ |
| अतिसृष्टो अपां वृषभो | १८०३ | अनुपूर्ववत्सां धेनुम् | १२११ |
| अत्यन्याँ अगां नान्याँ | ३७० | अनुसूर्यमुदयतां | ४८९ |
| अत्रिवद् वः क्रिमयो हन्मि | ७०५, ७११ | अनुहृतः पुनरोहि | १०४ |
| अत्रैव वोऽपि नह्यामि | २३४३ | अनेनेन्द्रो मणिना वृत्रमहन् | १४३३ |
| अथर्वाणो अबध्नत | १४९७ | अन्तकाय मृत्यवे नमः | ६ |
| अथर्वा पूर्णं चमसं | २१३४ | अन्तकोऽसि मृत्युरसि | १८३६, १८४३ |
| अथोपदान भगवो | १५५८ | अन्तरिक्षेण पतति | १५८८ |
| अदन्ति त्वा पिपालिका | ८५८ | अन्तर्दधे द्यावापृथिवी | १४३६ |
| अदितिर्मादित्यैः प्रतीच्या दिशः | २११० | अन्तर्दावे जुहुता स्वेतद् | ७३१ |
| अदितैर्हस्तां क्षुचमेतां द्वितीयां | १२५२ | अन्तर्देशा अबध्नत | १४९६ |
| अदित्यै व्युन्दनमसि | ९४१ | अन्तर्धिर्देवानां परिधिः | २६० |
| अदृष्टान् हन्यायति | ७७५ | अन्यक्षेत्रे न रमसे | ५३९ |
| अदो यत् ते हृदि श्रितं | ६८४ | अन्यत्रास्मन्युच्यतु | १७७२ |
| अदो यदवभावति | ५६५ | अन्यमू षु त्वं यम्यन्य | १९६७ |
| अदो यदवरोचते | १९४ | अन्या वो अन्यामवतु | ३१४ |
| अद्याग्ने अद्य सवितः | १३३७ | अन्येभ्यस्त्वा पुरुषेभ्यो | २३२ |
| अधरात्रं प्र हिणोमि | ५३४ | अन्यो अन्यमनुगृह्णात्येनोः | ९९७ |
| अध स्वप्नस्य निर्विदे | ६२३ | अन्वान्त्र्यं शिर्षण्यमथो | ६९४ |
| अघा यथा नः पितरः | २१०४ | अपकामं स्थन्दमाना | ९२२ |
| अधि नो भूतं पृतनासूयौ | १७१९ | अप काम नानदती | १६२९ |
| अधि ब्रूहि मा रभथाः | ३३ | अपकीताः सहीयसाः | ३३४ |
| अधि स्कन्द वीरयस्व | १३५३ | अपचितः प्र पतत | ५१३ |
| अधीतारिध्यगादयम् | ८२ | अपचितां लोहिनीनां | ५०३ |

| | | | |
|----------------------------|------------|--------------------------------|----------|
| अपथेना जभारैणां | १६१३ | अपेहि मनसस्पते | ६२५ |
| अप नः शोशुचदघममे | १७५७ | अपेह्यरिरस्यरिर्वा असि | ८४५ |
| अपः पिन्वौषधीर्जन्व | ११०२ | अपो अयान्वचारिषः | ११०६ |
| अपमृज्य यातुधानान् | ३९५ | अपो दिव्या अचायिषं | ९५९ |
| अपरिमितमेव यज्ञमाप्नोति | १२०४ | अपो देवा मधुमतीः | १०९३ |
| अपवासे नक्षत्राणाम् | १९८ | अपो देवीरुपसृज | १०९९ |
| अपश्यं युवतिं नीयमानां | २०८६ | अपो देवीरुप ह्वये | ८६५ |
| अपश्यं त्वा मनसा चेकितानं | २२४४ | अपो निषिञ्चसुरः | १०१५ |
| अपश्यं त्वा मनसा दीध्यानां | २२४५ | अप्रजास्त्वं मार्तवत्समात् | १३९२ |
| अप हत रक्षसो भङ्गुरावतः | २२८८ | अप्सु ते जन्म दिवि ते | १५९० |
| अपां रसः प्रथमजोऽथो | १३३६ | अप्सु ते राजन् वरुण | १६७६ |
| अपागूहन्नमृतां मर्त्येभ्यः | १०८२, २०५७ | अप्सु मे सोमो अब्रवीद् | ८६७, ८८४ |
| अपानाय व्यानाय | ६४ | अप्स्वन्तरमृतमप्सु भेषजम् | ८६६, ९६३ |
| अपां तेजो ज्योतिरोजो बलं | ६१ | अभयं मित्रावरुणाविहास्तु | ७३३ |
| अपःममिस्तन्मूभिः संविदानो | १०१३ | अभि क्रन्द स्तनयं गर्भमा | ९८० |
| अपामप्रमसि समुद्रं वो | १८०८ | अभि क्रन्द स्तनयार्दयोदधि | १००९ |
| अपमह दिव्यानाम् | ९३१ | अभि तेऽधां सहमानाम् | ३६३ |
| अपामार्ग ओषधीनां | ३८७ | अभि त्वा जरिमाहित | ७९ |
| अपामार्गोऽप मार्तु | ३९४ | अभि त्वा मनुजातेन | १२६९ |
| अपामूर्ज ओजसो वावृधानं | ५९४ | अभि त्वा सिन्धो शिशुमित्र | १०३९ |
| अपां मा पाने यतमो ददम्भ | ७४५ | अभि त्वोर्गोमि पृथिव्या | २०७६ |
| अपा तृत्य गार्हपत्यात् | २५० | अभिभूरहमागमं | २३४४ |
| अपूपवानन्नवान् | २१७१ | अभीशुना मेया आसन् | ४६४ |
| अपूपवानपवान् | २१७४ | अभूद् दूतः प्रहितो जातवेदाः | २२१५ |
| अपूपवान् क्षीरवा | २१६६ | अभ्यक्ताक्ता स्वरंकृता | १६४० |
| अपूपवान् घृतवान् | २१६९ | अभ्यजनं सुरभि सा समृद्धिः | ९५८ |
| अपूपवान् दधिवान् | २१६७ | अभ्यावर्तस्व पशुभिः सहैनां | १२५० |
| अपूपवान् द्रव्यवान् | २१६८ | अमा कृत्वा पाप्मानं | ३९० |
| अपूपवान् मधुमान् | २१७२ | अभासि मात्रां स्वरगाम् | २०६९ |
| अपूपवान् मांसवान् | २१७० | अमुकथा यक्षमाद् दुरितादवद्याद् | १६६७ |
| अपूपवान् रसवान् | २१७३ | अमुत्रभूयादधि ययमस्य | १४३ |
| अपूपापिहितान् कुम्भान् | २१४५, २१७५ | अमून् हेतिः पतत्रिणी | १५८५ |
| अपेत वीत वि च सर्पतातो | १९७५ | अमू ये दिवि सुभगे | १९५ |
| अपेतो वातो सविता च | १७०२ | अमूर्था उप सूर्ये याभिः | ८६४ |
| अपेमं जीवा अदधन् | २०५१ | अमूर्था यन्ति योषितो | ५५५ |
| अपेमां मात्रां मिमीमहे | २०६४ | अमोतं वासो दद्यात् | ११९६ |
| अपेयं रात्र्युच्छत्वपे० | ४९४ | अभ्ययो यःत्यध्वभिः | ८६३ |

| | |
|----------------------------|------|
| अम्बितमे नदीतमे | १०५६ |
| अयं यो अभिशोचयिष्णुः | १८१ |
| अयं यो भूरिमूलः | ६४० |
| अयं यो वक्रो विपद् | ८५५ |
| अयं यो विश्वान् हरितान् | ५३२ |
| अयं लोकः प्रियतमो | ११४ |
| अयं विष्कन्धं सहते | ६८ |
| अयं स्तुवान् आगमद् | ७२८ |
| अयं स्नाक्यो मणिः | १४३४ |
| अयं प्रावा पृथुबुधो वयोधाः | १२८५ |
| अयं जीवतु मा मृत | ३१ |
| अयस्त्रियो हतवर्चा भवति | २५३ |
| अयं ते कृत्या विततां | १४५६ |
| अयं दर्भो विमन्युकः | ६३९ |
| अयं देवा इहैवास्तु | २३ |
| अयं देवानामसुरो वि राजति | १६५४ |
| अयमग्निरुपसद्य इह | १०८ |
| अयमिद् वै प्रतीवर्त | १४४६ |
| अयमु ते सरस्वति वसिष्ठो | १०७७ |
| अयमौदुम्बरो मणिः | १५५० |
| अयं पन्थाः कृत्येति त्वा | १६३० |
| अयं प्रतिसरो मणिः | १४३१ |
| अयं मणिर्वरणो विश्वभेषजः | १४५५ |
| अयं मणिः सपत्नहा सुवीरः | १४३२ |
| अयं मे वरण उरसि | १४६३ |
| अयं मे वरणो मणिः | १४५३ |
| अयं मे हस्तो भगवान् | ५५३ |
| अयस्मये दुपदे बेधिष इह | १७९३ |
| अयोजाला असुरा मायिनो | ७६६ |
| अरंघुषो निमज्ज | ८११ |
| अरसं कृत्रिमं नादम् | १५५३ |
| अरसं प्राक्त्यं विषम् | ७९९ |
| अरसस्त इषो शल्यो | ७९५ |
| अरसस्य शर्कोटस्य | ८५६ |
| अरसास इहाहयो | ८१६ |
| अरातीयेर्भ्रातृव्यस्य | १४७८ |
| अरात्यास्त्वा निर्गत्या | १४५९ |

| | |
|-------------------------------|---------------|
| अरायमसृक् पावनं | ४१८ |
| अरायान् भूमो रक्षांसि | १७४९ |
| अरायि वाणे विकटे | २३३७ |
| अरावीदंशुः सचमानः | १४०४ |
| अरिप्रा आपो अप | १८१२ |
| अरिष्टोऽहमरिष्टगुः | १४६२ |
| अरुह्माणमिदं महत् | ५६९ |
| अर्थेत स्थ राष्ट्रदा राष्ट्रं | १०९५ |
| अलसालासि पूर्वा | ४६९ |
| अल्गण्डून् हन्मि महता | ६९३ |
| अवकादानभिशोचानामु | ७२४ |
| अवकोल्बा उदकात्मान | ३३२ |
| अव जहि यातुधानान् | १५९२ |
| अवपतन्तीरवदन् | ३१७ |
| अव मा पाप्मन्सृज | १७७० |
| अवर्षावर्षमुदू पू गृभाय | ९८३ |
| अवशसा निःशसा यत् | ६३१ |
| अव श्वेत पदा जहि | ८१० |
| अव सृज पुनरग्रे पितृभ्यो | २०३४ |
| अविः कृष्णा भागधेयं | २६९ |
| अवैरहत्यायेदमा पपत्यात् | १५८७ |
| अदमन्वनी रीयते सं रभन्वं | २४२ |
| अश्रेष्माणो अधारयन् | १७९८ |
| अश्वत्थे वो निषदनं | ३०५, ३५८ |
| अश्वत्थो दर्भो वीर्यां | ३४३ |
| अश्वत्थो देवसदनः | ४१०, ४३९, ४५२ |
| अश्वस्याश्वनरस्याजरस्य | १३३९ |
| अश्वस्याश्वः संपतिता सा | ४३६ |
| अश्वः कणा गावः | ११३१ |
| अश्ववर्ती प्र तर या | २०५५ |
| अश्ववर्ती सोमावर्ती | ३०७ |
| अश्वो घृतेन त्मन्या समन्त | ३७८ |
| अष्ट च मेऽशीतिश्च मे | ६६० |
| असद् भूम्याः समभवत् | ४०१ |
| असंतापं मे हृदयमुर्वा | १८९७ |
| असंतापे सुतपसौ हुषे | १७०८ |
| असन्मन्त्राद् दुःष्वप्याद् | ५८५ |

| | |
|----------------------------|------------|
| असपत्नं नो अधराद् | १४४७ |
| असंवाधे पृथिव्या उरौ | २०४४ |
| असितं ते प्रलयनम् | ५१९ |
| असितस्य तैमातस्य | ८३९ |
| असुराणां दुहितासि | ८०७ |
| असुरास्त्वा न्यखनन् देवाः | ४१५ |
| अस्मृतिका रामायणी | ५१५ |
| असौ यो अधराद् गृहः | १६५० |
| असौ हा इह ते मनः | २२१६ |
| अस्थाद् द्यौरस्थाद् पृथिवी | ५५९ |
| अस्थिजस्य किलासस्य | ५२० |
| अस्थिभ्यस्ते मज्जभ्यः | २१५, २९९ |
| अस्थिस्त्रंसं परस्त्रंसम् | ४८३ |
| अस्मिन्निन्द्रो नि दधातु | १४५१ |
| अस्मिन् मणावेकशतं | १५७६ |
| अस्मिन् वयं संकुके | २२९ |
| अस्मै क्षत्राणि धारयन्तम् | १६८१ |
| अस्मै मणिं वर्म बध्नन्तु | १४४० |
| अस्मै मृत्यो अधि बृहि | ३४ |
| अस्य प्रजावती गृहे | २२४३ |
| अस्येन्द्र कुमारस्य | ६९७ |
| अस्त्रामस्त्वा हविषा यजामि | १६६० |
| अहमस्मि सपत्नहेन्द्रो | २३४२ |
| अहमस्मि सहमानाथो | ३६८ |
| अहं पचाम्यहं ददामि | १३१८ |
| अहं पशूनामधिषा असानि | १५४२ |
| अहा अरातिमविदः स्योनम् | १६६८ |
| अहीनां सर्वेषां विषं | ८२७ |
| अहोरात्रे अन्वेषि बिभ्रत् | २६५ |
| अहोरात्रे इदं ब्रूमः | १७३८ |
| अहं च त्वा रात्रये च | ४६ |
| आश्वैकं मणिमेकं कृष्णम् | ५९६ |
| आगादुदगादयं | ८१ |
| आममन्त्राप उशतीर्षहिरेदं | ९१५ |
| आ घा ता गच्छानुत्तरा | १९६३ |
| आच्छाद्विधानैर्गुपितो | ४७६ |
| आच्या जानु दक्षिणतो | १९९२, २०१७ |

| | |
|----------------------------|---------------|
| आज्यस्य परमेष्ठिन् | ७६८ |
| आजनं पृथिव्यां जातं | ६०४ |
| आ ते कारो शृण्वामा | १०३१ |
| आ ते प्राणं सुवामसि | १४८ |
| आत्मानं पितरं पुत्रं | १२१२ |
| आ त्वागमं शंतातिभिः | ५५२ |
| आ त्वाग्न इधीमहि | २२३८ |
| आ त्वा नृतत्वयमा | १३८ |
| आदज्ञा कुविदज्ञा | ५६६ |
| आदित् पद्यामुत वा | ९२५ |
| आदित्या रुद्रा वसवः | १७४६, २२६६ |
| आदित्येभ्यो अग्निरोभ्यो | १३१५ |
| आ नयैतमा रभस्व | ११८३ |
| आ निवर्तन वर्तय | ९०० |
| आ निवर्त नि वर्तय | ८९८ |
| आनृत्यतः शिखण्डिनो | ७२१ |
| आ नो भर मा परि द्या | १७७७ |
| अन्त्राणि जघ्नवो गुदा | ११३६ |
| आन्त्रेभ्यस्ते गुदाभ्यो | १६४, २१३, २९७ |
| आप इद् वा उ भेषजीः | १२६, २०१ |
| आपः पृणीत भेषजं | ८६८, ८८५ |
| आपमुषी पार्थिवानि | १०६२ |
| आ पर्जन्यस्य वृष्टयो | १७८ |
| आ पश्यति प्रति पश्यति | ७५४ |
| आपस्पृत्रासो अभि सं | १२७५ |
| आपो अग्निं प्र हिणुत | २१९० |
| आपो अप्रं विव्या | ३२६ |
| आपो अयान्वचारिषं | ८७०, ८८७ |
| आपो अस्मान् मातरः | ८८८, १७८८ |
| आपो देवीः प्रतिगृह्णीत | ११०० |
| आपो देवीः स्वदन्तु | ९४६ |
| आपो भद्रा घृतमिदाप | ९२४ |
| आपो यं वः प्रथमं देवयन्ते | ८७१ |
| आपो रेवतीः क्षयथा हि | ९१२ |
| आपो विष्णुदं वर्षं सं वो | १०१२ |
| आपो हि द्या मयोभुवः | ८७९ |
| आ प्र च्यवेधामप तन्मृजेयां | २१९९ |

| | | | |
|------------------------------|-----------|----------------------------|------------|
| आ प्रत्यञ्चं दाशुषे दाश्वंसं | १०५० | आशृण्वन्तं यवं देवं | ११२५ |
| आबयो अनाबयो रसः | ४६६ | आसीनासो अरुणीनाम् | १९९३, २१२६ |
| आ मारुक्षद् देवमणिः | १४५० | आसुरी चक्रे प्रथमेदं | ५२२ |
| आ मे धनं सरस्वती | १५४६ | आ सुखसः सुखसो | ५०७ |
| आमे सुपक्वे शबले विपक्वे | ७४३ | आसो बलासो भवतु | २८१ |
| आयजी वाजसातमा | २२८९ | आहं तनोमि ते पसो | १३३८, १३४५ |
| आ यन्ति दिवः पृथिवीं | १२९७ | आहं पितृन्सुविदत्रां | १९८९, २०११ |
| आयमगन् युवा भिषक् | ८२२ | आहर्षमविदं त्वा | २५, २०९ |
| आ यात पितरः सोम्यासो | २२१२ | इत एत उदारुहन् | २०२४ |
| आयुरस्मै धेहि जातवेदः | ९२ | इतश्च मामुतश्चावतां | २१२१ |
| आयुर्ददं विपश्चितं | ५६४ | इदं यत् कृष्णः शकुनि० | १७३२, १७३३ |
| आयुर्दा अग्ने जरसं वृणानो | २३३१ | इदं यमस्य सादनं | १९८६ |
| आयुर्यत् ते अतिहितं पराचैः | १४५ | इदं व आपो हृदयमयं | ९२६ |
| आयुर्विश्वायुः परि पातु त्वा | २०७९ | इदं वचः पर्जन्याय स्वराजे | ९८९ |
| आयुषोऽसि प्रतरणं | ६०२ | इदं विद्वानाजन सत्यं | ५८६ |
| आयुष्मतामायुष्कृतां | १७५ | इदं हविर्यातुधानान् | ७२७ |
| आयुष्यं वर्चस्य० राय० | २३२८ | इदं हिरण्यं बिभृहि | २२०६ |
| आ यूथेव क्षुमति पञ्चो | २१०६ | इदं कसाम्बु चयनेन चितं | २१८७ |
| आ रभस्व जातवेदः | ७७२, २१४८ | इदं त एकं पर ऊ त एकं | २०९० |
| आ रभस्वेमाममृतस्य | २७ | इदं तमति सृजामि | १८०६ |
| आरादरातिं निर्ऋतिं परां | ३८ | इदं तृतीयं सवनं कवीनाम् | २० |
| आरे अभूद् विषमरौद् | ८३३ | इदं ते हव्यं घृतवत् | १०९१ |
| आ रोहत जनित्रीं जातवेदसः | २१५१ | इदमह० रक्षसां प्रीवा | ७५३ |
| आ रोहत दिवमुत्तमाम् | २१४२ | इदमहं तप्तं वार्षहिर्धा | ९४५ |
| आ रोहतायुर्जरसं वृणाना | २४० | इदमहमासुष्यायणेऽसुष्याः | १८६३ |
| आर्षेयेषु नि दध ओन्न | १२६१ | इदमापः प्र वहत | ८६९, ८८६ |
| आलिगि च विलिगी च | ८४० | इदमापः प्रवहतावयं | ९५०, ९६१ |
| आ व ऋजस ऊर्जा व्युष्टिषु | २२८५ | इदमिदमेवास्य रूपं | १२०६ |
| अभवतस्त आवतः | ९८ | इदमिद् वा उ नापरं | २०७४, २०७५ |
| आवर्ध्वततीरध नु द्विधारा | ९१० | इदमिद् वा उ भेषजम् | ८६० |
| आ वात वाहि भेषजं | ५५० | इदं पितृभ्यः प्र भरामि | २२०१ |
| आविष्कृण्व रूपानि | ७५८ | इदं पितृभ्यो नमो अस्त्वद्य | १९८८, २०१२ |
| आ वृषायस्व श्वसिहि | १३४३ | इदं पूर्वमपरं नियानं | २१९४ |
| आशरीकं विशरीकं | १५६० | इदं पैदो अजायत | ८१४ |
| आशानामाशापालेभ्यः | १६५८ | इदं प्रापमुत्तमं काण्डम् | १३१६ |
| आशामाशां वि द्योततां | १०११ | इदं मे ज्योतिरमृतं हिरण्यं | १२५६ |
| आशीर्ण ऊर्जमुत सौप्रजास्वं | ९३ | | |

| | |
|--------------------------------|------------|
| इध्मेन त्वा जातवेदः | ११६ |
| इन्द्र उक्थामदान्यस्मिन् | १९३९ |
| इन्द्र एतां ससृजे विद्वो | ९७ |
| इन्द्र जीव सूर्य जीव | १५६ |
| इन्द्रस्य कुक्षिरसि सोमधान | १३६६ |
| इन्द्रस्य त्वा वर्मणा परि | १५७५ |
| इन्द्रस्य नाम गृह्णन्त | १५६१ |
| इन्द्रस्य प्रथमो रथो देवानाम् | ८०८ |
| इन्द्रस्य मन्महे शश्वदिदस्य | १६९२ |
| इन्द्रस्य या मही दृषत् | ६९१ |
| इन्द्रस्य व इन्द्रियेण | १८११ |
| इन्द्रस्य वचसा वयं | १८३ |
| इन्द्राय भागं परि त्वा | ११८४ |
| इन्द्रावरुणा मधुमत्तमस्य | ११२३ |
| इन्द्रावरुणा सुतपाविमं सुतं | ११२२ |
| इन्द्रेण दत्तो वरुणेन शिष्टो | ९४ |
| इन्द्रेषिते प्रसवं भिक्षमाणे | १०२३ |
| इन्द्रो अस्मां अरदद् | १०२७ |
| इन्द्रो जघन प्रथमं | ८२५ |
| इन्द्रो मा मरुत्वान् प्राच्या | २१०८ |
| इन्द्रो मेन्द्रियेणावतु | ५९८ |
| इन्द्रो मेऽहिमरन्धयत् | ८२३, ८२४ |
| इन्द्रो युनक्तु बहुधा वीर्याणि | १९४५ |
| इमं यम प्रस्तरमा | १९७१, २०२३ |
| इमं यवमष्टायोगैः | १९९ |
| इमं होमा यज्ञमवतेमं | २२४७ |
| इमं कव्यादा विवेशायं | २५९ |
| इमं जीवेभ्यः परिधिं दधामि | २३९ |
| इममग्र अयुषे वर्चसे जय | ५ |
| इममादित्या वसुना समुक्षत | १३० |
| इममिन्द्रं वह्निं पप्रिमन्तु | २६३ |
| इममोदनं नि दधे ब्राह्मणेपु | १२२८ |
| इमं बभ्रामि ते मणिं | १५१३ |
| इमं बिभ्रामि वरणम् | १४६४ |
| इमं मे अग्ने पुरुषं सुसुगन्धयं | ६८७ |
| इमं मे कुष्ठं पूरुषं | ४४२ |
| इमं मे गङ्गे यमुने सरस्वति | १०४० |

| | |
|-----------------------------|-----------|
| इमा आपः शमु मे सन्तु | ९४३ |
| इमां खनाम्योषधिं | ३६४ |
| इमा जुह्वाना युष्मदा नमोभिः | १०७६ |
| इमा नारीरविधवाः सुपत्नीः | २४७, १९४६ |
| इमा ब्रह्म सरस्वति | १०५८ |
| इमां मात्रां मिमीमहे | २०६२ |
| इमा या देवीः प्रदिशश्चतस्रो | १६६५ |
| इमा यस्तिष्ठः पृथिवी | ४५७ |
| इमास्तिष्ठो दक्षपुराः | १३६ |
| इमे जीवा वि मृतैराववृत्रन् | २३८ |
| इमौ युनक्ति ते वह्नी | २०८० |
| इयं वीरुन्मधुजाता | ४७८, ८५३ |
| इयं शुष्मेभिर्बिसखा इव | १०६० |
| इयत्तकः कुषुम्भकः | ७८८ |
| इयत्तिका शकुन्तिका | ७८४ |
| इयं ते धीतिरिदमु ते जनित्रं | १२३९ |
| इयं नारी पतिलोकं वृणाना | २०८५ |
| इयमददाद् रभसमृणन्त्युतं | १०५९ |
| इयमन्तर्वदति जिह्वा | ११३ |
| इयमेव पृथिवी कुम्भी भवति | ११३७ |
| इयं मही प्रति गृह्णातु | १२३६ |
| इषीकां जरतीमिष्ट्वा | २७० |
| इष्टुतिर्नाम वो माता | ३०९ |
| इष्वा ऋजीयः पततु | १६०२ |
| इह तेऽसुरिह प्राण | ८ |
| इहा यन्तु प्रचेतसो | ३३० |
| इहैधि पुरुष सर्वेण | १०३ |
| इहैव गाव एतनेहो | २३२३ |
| इहैव स्तं प्राणापानौ | ७७ |
| इहैवाभि वि तनूभे | १४१७ |
| इहैवैधि धनसनिः | २१८८ |
| ईजानश्चितमारुक्षद् | २१६४ |
| ईजान.नां सुकृतां लोकम् | ११९४ |
| ईर्ष्याया ध्राजिं प्रथमां | ६८९ |
| ईशानां त्वा भेषजानाम् | ३८० |
| ईशाना वार्याणां क्षयन्तीः | ८८३ |

| | | | |
|--------------------------------|------------|-------------------------------|------------|
| उम इत् ते वनस्पते | १५५९ | उदगाता भगवती | ४९३ |
| उमा इव प्रवहन्तः | २२९८ | उदगादयमादित्यो | ५४७ |
| उच्छुष्मा ओषधीनां | ३०८ | उदग्रभं परिपाणाद् | ७६१ |
| उच्छुष्मौषधीनां सार | १३३५ | उदङ् जातो हिमवतः | ४४४ |
| उच्छ्रयस्व बहुर्भव स्वेन | ११२४ | उदन्वती यौरवमा | २०७२ |
| उच्छ्रयस्व वनस्पते | २२६१ | उदपतदसौ सूर्यः | ७८२ |
| उच्छ्वस्माना पृथिवी सु | १९५१ | उदपूरसि मधुपूरसि | २१२० |
| उच्छ्वस्वस्य पृथिवि मा | १९५० | उदप्रुतो मरुतस्तौ इयर्त | ९६७ |
| उज्जिहीध्वे स्तनयति | ३४४ | उदरात् ते क्लोत्रो नाभ्या | ३८३ |
| उत देवा अवहितं | ५४८ | उदहमायुरायुषे कत्वे | २०४७ |
| उत नमा बोभुवती | १७८४ | उदायुषा समायुषा | १७७ |
| उत नः प्रिया प्रियासु | १०६८ | उदिमां मात्रां मिमीमहे | २०६७ |
| उत स्म ते वनस्पते | २२८१ | उदीर्चनैः पथिभिर्वायुमाद्भिः | २४५ |
| उत स्या नः सरस्वती | १०६५, १०७५ | उदीच्यां त्वा दिशि पुरा | २११६ |
| उत हन्ति पूर्वोसिनं | १६४२ | उदीच्यै त्वा दिशे सोमाय | १३२२ |
| उतासि परिपाणं | ५८२ | उदीरतामवर उत् परासः | १९८७, २०१० |
| उतेव प्रभ्वीरुत संमितासः | १२९८ | उदीरयत मरुतः समुद्रतः | १००८ |
| उतो अस्यबन्धुकुदुतो | ३९६ | उदीर्ष्व नार्यभि जीवलोकं | १९४७ |
| उत् क्रामातः परि चेद् | ११८८ | उदुत्तमं वरुण पाशम् | १६७८, २२१९ |
| उत् क्रामातः पुरुष माव | ९ | उदुषा उदु सूर्य उदिदं | १३३३ |
| उत्तमो अस्योषधीनाम् | ४५०, १४४१ | उदेणीव वारण्यभिस्कन्दं | १६०१ |
| उत्तमो नाम कुष्ठासि | ४४५ | उदेनं भगो अप्रभीद् | ७ |
| उत्तरं द्विषतो मामयं | १५०८ | उदेहि वेदिं प्रजया वर्धय | १२४९ |
| उत्तरं राष्ट्रं प्रजयोत्तरावद् | १२८१ | उद्यन्नय मित्रमह | ५४५ |
| उत्तराहमुत्तर उत्तरेद् | ३६७ | उद्यन्नादित्यः किमीन् हन्तु | ७०९ |
| उत्तानपणं सुभगे | ३६५ | उद्यानं ते पुरुष नावयानं | ११ |
| उत्तिष्ठता प्र तरता सखायो | २४३ | उद्योधन्त्यभि वल्गन्ति तप्ताः | १३०० |
| उत्तिष्ठ प्रेहि प्र द्रवौकः | २०९१ | उद् व ऊर्मिः शम्भ्या हन्तु | १०३४ |
| उत्तिष्ठ ब्रह्मणस्पते | १५४ | उद्वयं तमसस्परी रोहन्तो | १४९ |
| उत् ते स्तभ्रासि पृथिवीं | १९५२, २१३३ | उद्भिणं मुनिकेशं | १३८३ |
| उत् त्वा यौरुत पृथिवी | २२ | उन्मुञ्चन्तीर्विवरुणा | ३३३ |
| उत् त्वा मृत्योरपीपरं | २४ | उन्मुञ्च पाशांस्त्वमग्र एषां | १६७१ |
| उत् त्वा वहन्तु मरुतः | २०४६ | उपजीका उद् भरन्ति | ५६८ |
| उत् त्वाहार्य पञ्चशलाद् | ३५१ | उपजीवा स्थोप जीव्यासं | ९३४ |
| उस्थापय सीदतो बुध एनान् | १३०१ | उप तेऽर्धां सहमानाम् | २३४० |
| उत् पुरस्तात् सूर्य एति | ७०१, ७८१ | उप द्यामुप वेतसमवतरो | २०८८ |
| उत् सूर्यो दिव एति | ५६२ | उप इव पयसा गोधु गोषमा | १९१८ |

| | |
|-----------------------------|---------------|
| उप नः पितवा चर | १११० |
| उपप्रवद मण्डूके वर्षमा | १०१७ |
| उप प्रागात् सहस्रक्षो | १७७३ |
| उप प्रागाद् देवो अमी | ७३४ |
| उप प्रियं पनिप्रतं | १४१ |
| उप मौदुम्बरो मणिः | १५४३ |
| उप श्रेष्ठा न आशिषो | १७०५ |
| उपश्वसे हुवये सीदता यूयं | १२४० |
| उप सर्प मातरं भूमिम् | १९४९, २१३२ |
| उप स्तृणीहि प्रथय पुरस्ताद् | १३०८ |
| उपहृता नः पितरः सोम्यासो | २१२८ |
| उपहृताः पितरः सोम्यासो | १९९१ |
| उपहृतो मे गोपा | १८१८ |
| उपहृतो वाचस्पतिः | १४१८ |
| उपहृतौ सयुजां स्योनौ | १६१ |
| उप ह्वये सुदुघां धेनुमेतां | १९१९ |
| उपावसृज त्मन्या समञ्जन् | ३७९ |
| उपास्तरीरकरो लोकम् | १३०९ |
| उपास्मान् प्राणो ह्वयताम् | २२५० |
| उपाहृतमनुबुद्धं निखातं | १६३४ |
| उभयोरग्रभं नामास्मा | २०४ |
| उभे नभसी उभयांश्च | १२७७ |
| उभे यत् ते महिना | १०७९ |
| उरुगूलाया बुहिता | ८४१ |
| उरुः प्रथस्व महता | १२४७ |
| उरुणसावसुतृपायुदुम्बलौ | २०३७ |
| उर्वश्च मा चमसश्च मा | १८२४ |
| उशन्ति घा ते अमृतासः | १९५६ |
| उषस्पतिर्वाचस्पतिना | १८५० |
| उषा देवी वाचा संविदाना | १८४९ |
| उषो यस्माद् दुष्पञ्चयाद् | १८४६ |
| ऊरुभ्यां ते अष्टीवद्भ्यां | १६५, २१४, २९८ |
| ऊर्जं वहन्तीरमृतं घृतं | ९४२ |
| ऊर्जमस्मा ऊर्जस्वती | ९५ |
| ऊर्जो भागो निहितो यः | १२४३ |
| ऊर्जो भागो य इमं जजाना | २२०४ |

| | |
|-------------------------------|------|
| ऊर्ध्व ऊ षु ण ऊतये | २२५७ |
| ऊर्ध्वस्तिष्ठतु रक्षजप्रमादम् | १५७३ |
| ऊर्ध्वायां त्वा दिशि पुरा | २११८ |
| ऊर्ध्वायै त्वा दिशे बृहस्पतये | १३३१ |
| ऊर्ध्वो नः पाहांसो नि | २२५८ |
| ऊर्वोरोजो जङ्घयोर्जल | १५८ |
| ऋचा कपोतं नुदत | १५८२ |
| ऋचा कुम्भीमध्यग्नौ | ११८७ |
| ऋचा कुम्भ्यधिहिता | ११४० |
| ऋजीत्येनी रुशती महित्वा | १०४२ |
| ऋणाहणमिव संनयन् | ५९२ |
| ऋतं हस्तावनेजनं | ११३९ |
| ऋतवः पक्कार आर्तिवाः | ११४३ |
| ऋतवस्तमबध्नत | १४९५ |
| ऋतस्य पन्थामनु पश्य | २१५३ |
| ऋतस्यर्तेनादित्या | १७९५ |
| ऋतुभिष्ट्वार्तवैरायुषे | १३९ |
| ऋतून् भूम ऋतुपतीन् | १७५० |
| ऋतेन तष्टा मनसा | १२५१ |
| ऋषभं मा समानानां | २३४१ |
| ऋषीणां प्रस्तरोऽसि | १८२१ |
| ऋषी बोधप्रतीबोधा | १०७ |
| एकपाद् भूयो द्विपदो | २३१८ |
| एकशतं विष्कन्धानि | १८०२ |
| एका च मे दश च मे | ६५३ |
| एकाचेतत् सरस्वती नदीनां | १०७४ |
| एको वो देवोऽयतिष्ठत् | ९२३ |
| एजदेजदजप्रमं चक्षुः | ६१६ |
| एत उ त्ये प्रत्यहश्नन् | ७७८ |
| एतत् ते तत स्वधा | २२२७ |
| एतत् ते ततामह स्वधा | २२२६ |
| एतत् ते देवः सविता | २१८१ |
| एतत् ते प्रततामह स्वधा | २२२५ |
| एतत् त्वा वासः प्रथमं | २०८१ |
| एतदा रोह वय उन्मृजानः | २१५० |
| एत देवा दक्षिणतः | १७५१ |

| | |
|-----------------------------|----------|
| एतद्धि शृणु मे वचो | १६४३ |
| एतद् वचो जरितर्मापि | १०२९ |
| एतद् वै ब्रध्नस्य विष्टपं | ११७६ |
| एतद् वो ज्योतिः पितरः | ११९३ |
| एतमिध्मं समाहितं जुषाणो | १५१२ |
| एतस्माद् वा ओदनाद् | ११७८ |
| एतास्ते अग्ने समिधः | ११८, ७५१ |
| एतास्ते असौ धेनवः | २१८३ |
| एतास्त्वजोप यन्तु धाराः | ११९७ |
| एते नरः स्वपसो अभूतन | २२९२ |
| एते वदन्ति शतवत् | २२९४ |
| एते वदन्यविदक्षना मधु | २२९५ |
| एतौ प्रावाणौ सयुजा | १२३७ |
| एदं बर्हिंसदो मेथ्योऽभूः | २२०२ |
| एधोऽस्येधिषीमहि समिदसि | ११०७ |
| एधोऽस्येधिषीय समिदसि | ९६२ |
| एना वयं पयसा पिन्वमाना | १०२५ |
| एनीर्धना हरिणीः श्येनीः | २१८४ |
| एन्येका श्येन्येका कृष्णैका | ५१४ |
| एमा अगुर्योषितः शुम्भमाना | १२४२ |
| एमा अगमन् रेवतीः | ९१४ |
| एयमगन्नोषधीनां | ७२० |
| एयमगन् दक्षिणा भद्रतो | २२०० |
| एयमगन् बर्हिषा प्रोक्षणीभिः | १९४१ |
| एवानेवाव सा गरत् | १८५९ |
| एवेष्टूने युवतयो नमन्त | ९०६ |
| एवो प्वस्मन्निर्ऋतेऽनेहा | १७९२ |
| एष यज्ञानां विततो | १२२५ |
| एषा त्वचां पुरुषे सं बभूव | १३२२ |
| एहि जीवं त्रायमाणं | ५८० |
| एष्टदमानमा तिष्ठाश्मा | २३३४ |
| ऐतु देवन्नायमाणः | ४४७ |
| ऐतु प्राण ऐतु मनः | ११० |
| ऐन्द्राग्रं वर्म बहुलं | १४४९ |
| ओको अस्य मूजवन्त | ५३५ |
| ओ चित् सखायं सख्या | १९५४ |

| | |
|--------------------------|------|
| ओता आपः कर्मण्या | ९६९ |
| ओते मे यावापृथिवी | ६९६ |
| ओदन एवौदनं | ११५७ |
| ओदनेन यज्ञवचः | ११४५ |
| ओष दर्भं सपत्नान् मे | १५२९ |
| ओषधयः प्रतिगृभ्णीत | ३५७ |
| ओषधयः प्रतिमोदध्वं | ३५६ |
| ओषधयः सं वदन्ते | ३२२ |
| ओषधीः प्रति मोदध्वं | ३०३ |
| ओषधीनामहं वृण | ८२८ |
| ओषधीरिति मातरः | ३०४ |
| ओषधे त्रायस्व स्वधिते | ३५५ |
| ओ पु स्वसारः कारवे | १०३० |
| औदुम्बरेण मणिना | १५३७ |
| कः कुमारमजनयद् | १९८४ |
| कङ्कतो न कङ्कतो | ७७४ |
| कण्वः कक्षीवान् पुरुमीढो | २०९८ |
| कणु फलीकरणाः | ११३२ |
| करम्भ ओषधे भव | १११७ |
| करम्भं कृत्वा तिर्य | ८०० |
| करीषिणीं फलवतीं | १५३९ |
| कर्णाभ्यां ते कङ्कषेभ्यः | २७३ |
| कर्णा श्वावित् तदब्रवीद् | ८४२ |
| कर्षाफस्य विशाफस्य | १७९७ |
| कश्यपस्त्वामसृजत | १४४४ |
| कश्यपस्य चक्षुरसि | ७६० |
| कस्ये मृजाना अति | २१०० |
| किं भ्रातासद् यदनार्थं | १९६४ |
| किलासं च पलितं च | ५१८ |
| कुम्भीका दूषीकाः | १८५२ |
| कुपुम्भकस्तदब्रवीद् | ७८९ |
| कृणुत धूमं वृषणः | १२३० |
| कृणोमि ते प्राणापानौ | ३७ |
| कृतव्यधनि विध्य तं | १५९९ |
| कृत्याकृतं बलगिनं | १६१५ |
| कृत्याकृतो बलगिने | १६४६ |

| | | | |
|------------------------------|-----------|------------------------------|---------------|
| कृत्यादूषण एवायमथो | १५५४ | प्रावाणो अप दुच्छुनाम् | २३०८ |
| कृत्यादूषिरण्यं मणिः | ७१ | प्राहिं पाप्मानमति तौ | १२८९ |
| कृत्याः सन्तु कृत्याकृते | १५९५ | प्राह्या गृहाः सं सृज्यन्ते | २५५ |
| कृन्त दर्भे सपत्नान् मे | १५२० | प्रीवाभ्यस्त उष्णिहाभ्यः | १६३, २११, २९५ |
| कृषञित् फाल आशितं | २३१७ | प्रीवास्ते कृत्ये पादौ | १६३६ |
| कृष्णं नियानं हरयः | ९६५ | घर्म इवाभितपन् दर्भे | १५१५ |
| कैरात पृश्न उपतृष्य | ८३८ | घृतस्य जूतिः समना | २२४९ |
| कैरातिका कुमारिका | ८२१ | घृतहृदा मधुकूलाः सुरोदकाः | १२२६ |
| को अय युङ्क्ते धुरि | २००१ | घृतादुल्लसं मधुना समकृतं | १४० |
| को अस्य वेद प्रथमस्य | १९५९ | घृतादुल्लसो मधुमान् पयस्वान् | १५७७, १९३४ |
| कोशं दुहन्ति कलशं | २१८० | चक्षुर्मुसलं काम उल्लखलम् | ११२९ |
| कव्यादमग्निं शशमान | २२६ | चक्षुषा ते चक्षुर्हन्मि | ८३७ |
| कव्यादमग्निमिषितो हरामि | २२५ | चतस्रश्च मे चत्वारिंशच्च मे | ६५६ |
| कव्यादमग्निं प्र दूरं हिणोमि | २२४ | चतस्रो दिवः प्रदिशः | १४०६ |
| कव्यादमग्ने रुधिरं पिशाचं | ७४७ | चतुरः कुम्भांश्चतुर्धा ददामि | १२२७ |
| क्लीब क्लीबं त्वाकरं वध्रे | ५०० | चतुर्वारं बध्यत आज्ञनं ते | ५९५ |
| क्लीबं कृध्योपशिनम् | ४९९ | चन्द्रमा अप्स्वन्तरा | २२३९ |
| क्षीरे मा मन्ये यतमो | ७४४ | चरुं पञ्चबिलमुखं | ११४४ |
| क्षुधामारं तृष्णामारम् | ३८५ | चोदयित्री सूनृतानां | १०५२ |
| क्षेत्रियात् त्वा निर्कृत्या | १६६२ | छिन्दि दर्भे सपत्नान् मे | १५१८ |
| खण्वस्वाद् खैमस्वाद् | १०१८ | जङ्घिडो जम्भाद् विशराद् | ६७ |
| खलः पात्रं स्फयावसावीधे | ११३५ | जङ्घिडोऽसि जङ्घिडो | १५५१ |
| गणास्त्वोप गायन्तु मारुताः | १००७ | जनाद् विश्वजनीनात् | ६८५ |
| गन्धर्वाप्सरसो ब्रूमो | १७३७ | जनित्रीव प्रति हर्षासि | १२९४ |
| गन्धारिभ्यो मूजवद्भ्यो | ५४४ | जनीयन्तो न्यग्रवः | १०४६ |
| गर्भं ते मित्रावरुणौ | १३४९ | जरायुजः प्रथम उल्लियो | १८८ |
| गर्भं धेहि सिनीवालि | १३४८ | जरायै त्वा परि ददामि | ७८ |
| गर्भे नु नौ जनिता दंपती | १९५८ | जहि दर्भे सपत्नान् मे | १५३१ |
| गर्भो अस्योषधीनां | ४१२, १३५२ | जाम्रदुष्प्रण्यं स्वप्ने | १८५३ |
| गिरिमेनां आ वेशय | ४१९ | जातो जायते सुदिनत्वे | २२६३ |
| गृहाण प्रावाणौ सकृतौ | १२३८ | जाया इद् वो अप्सरसो | ७२६ |
| गोमायुरदादजमायुरदात् | १००३ | जालाषेणाभि भिद्यत | ८६१ |
| गोमायुरेको अजमायुरेकः | ९९९ | जितम० । स आङ्गिरसानां | १८८३ |
| ग्रामणीरसि ग्रामणीः | १५४८ | जितम० । स आथर्वणानां | १८८५ |
| प्रावाण उपरेष्वा | २३०९ | जितम० । स आर्तवानां | १८८९ |
| प्रावाणः सविता नु वो | २३१० | जितम० । स आर्षेयानां | १८८१ |

| | | | |
|---------------------------------|------------------|---------------------------------|------------------|
| जितम० । स इन्द्राग्न्योः | १८९५ | तकमन् मूजवतो गच्छ | ५३७ |
| जितम० । स ऋतूनां | १८८८ | तकमन् व्याल वि गद | ५३६ |
| जितम० । स ऋषीणां | १८८० | तं जहि तेन मन्दस्व | १८६७ |
| जितम० । स देवजामीनां | १८७७ | ततश्चैनमन्यया जिह्वया | ११६२ |
| जितम० । स यावापृथिव्योः | १८९४ | ततश्चैनमन्यया प्रतिष्ठया | ११७५ |
| जितम० । स निर्ऋत्याः | १८७३ | ततश्चैनमन्याभ्यां श्रोत्राभ्यां | ११५९ |
| जितम० । स निर्भूत्याः | १८७५ | ततश्चैनमन्याभ्यां हस्ताभ्यां | ११७४ |
| जितम० । स पराभूत्याः | १८७६ | ततश्चैनमन्याभ्यामक्षीभ्यां | ११६० |
| जितम० । स प्रजापतेः | १८७९ | ततश्चैनमन्याभ्य मष्ठीवद्भ्यां | ११७१ |
| जितम० । स बृहस्पतेः | १८७८ | ततश्चैनमन्याभ्यामूर्ध्वभ्यां | ११७० |
| जितम० । स मासानां | १८९० | ततश्चैनमन्याभ्यां पादाभ्यां | ११७२ |
| जितम० । स मित्रावरुणयोः | १८९६ | ततश्चैनमन्याभ्यां प्रपदाभ्यां | ११७३ |
| जितम० । स राज्ञो वरुणस्य | १८९७ | ततश्चैनमन्येन धृष्टे | ११६६ |
| जितम० । स वनस्पतीनां | १८८६ | ततश्चैनमन्येन मुखेन | ११६१ |
| जितम० । स वानस्पत्यानां | १८८७ | ततश्चैनमन्येन वस्तिना | ११६९ |
| जितम० । सोऽङ्गिरसां | १८८२ | ततश्चैनमन्येन व्यचसा | ११६५ |
| जितम० । सोऽथर्वणां | १८८४ | ततश्चैनमन्येन शीर्ष्णां | ११५८ |
| जितम० । सोऽभूत्याः | १८७४ | ततश्चैनमन्यैः प्राणापानैः | ११६४ |
| जितम० । सोऽर्धमासानां | १८९१ | ततश्चैनमन्यैर्दन्तैः प्राशीः | ११६३ |
| जितम० । सोऽहोरात्रयोः | १८९२ | ततश्चैनमन्येनोदरेण प्राशीः | ११६८ |
| जितम० । सोऽहोः संयतोः | १८९३ | ततश्चैनमन्येनोरसा प्राशीः | ११६७ |
| जितमस्माकमुद्भिन्नमस्माकम् | १८६९, १८९८, १९०२ | तथा तदमे कृणु जातेवेदो | ७३९ |
| जिह्वाया अग्रे मधु मे | ४७९ | तदमिराह तदु सोम आह | १४३५, १९०३ |
| जीवतां ज्योतिरभि | २८ | तदमुष्मा अग्ने देवाः परा | १८५५ |
| जीवलां नधारिषां | ३२, ३२९ | तदिद्धस्य सवनं विवेरपो | २२८७ |
| जीवला नाम ते माता | ४४९ | तदिद् वदन्त्यद्रयो | २३०५ |
| जीवला स्थ जीव्यासं | ९३६ | तदु श्रेष्ठं सवनं सुनोतना | २२८६ |
| जीवानामायुः प्र तिर | २६१ | तनूस्तन्वा मे सहे | १५५ |
| जीवा स्थ जीव्यासं | ९३३ | तं त्वा वयं पितो वचोभिः | १११८ |
| जीवेभ्यस्त्वा समुदे वायुः | २० | तं त्वा स्वप्न तथा सं विद्य | १८३७, १८४४, १९१६ |
| जीवेम शरदः शतम् | १२० | तं त्वौदनस्य पृच्छामि | ११४८ |
| जुहूर्दाधार द्यामुपभृदन्तरिक्षं | २१५५ | तं धाता प्रत्यमुञ्चत | १४९८ |
| ज्याके परि णो नमादमानं | ६६५ | तन्वं स्वर्गो बहुधा | १३२५ |
| ज्येष्ठभ्यां जातो विवृतोः | ८६ | तपसा ये अनाधृष्याः | २०४० |
| तं सिन्धवो मत्सरम् | ९०९ | तमिमं देवता मणिं | १५०६ |
| तकमन् भ्रात्रा बलासेन | ५४२ | तमूर्मिमापो मधुमत्तमं | ८७२ |
| | | तत्र ल्ये पितो ददतः | १११२ |

| | |
|----------------------------|------------|
| तव ल्ये पितो रसा | ११११ |
| तव व्रते नि विशन्ते | १७०१ |
| तस्तुवं न तस्तुवं | ८४४ |
| तस्मा अरं गमाम वो | ८८१ |
| तस्मा इदास्ये हविः | ९९३ |
| तस्मादमुं निर्भजामो | १८७०, १८९९ |
| तस्मै घृतं सुरा मधु | १४८२ |
| तस्य क्षुमां असद् | २२४२ |
| तस्यामृतस्येमं बलं | ३४५ |
| तस्येदं वर्चस्तेजः | १८७२, १९०१ |
| तस्यौदनस्य बृहस्पतिः | ११२७ |
| ता अधरादुदीचीः | २५७ |
| ता अपः शिवा अपो | ९३२ |
| ता अस्मभ्यमयक्ष्मा | ९४४ |
| ता अस्य सूददोहसः | ११०१ |
| ता नो अय वनस्पती | २२८३ |
| ताबुवं न ताबुवं | ८४३ |
| तां मे सहस्राक्षो देवो | ७५७ |
| तार्ष्टाधीरमे समिधः | ७५२ |
| तावद् वां चक्षुस्तति | १२७३ |
| तासु त्वान्तर्जरस्या | १६६६ |
| तास्ते रक्षन्तु तव | १२२० |
| तांस्त्वं प्रच्छिन्द | १४६८ |
| तिरश्चिराजरसितात् | ८५२ |
| तिष्ठावरे तिष्ठ पर | ५५६ |
| तिस्रश्च मे त्रिशच्च मे | ६५५ |
| तिस्रो दिवास्त्रिः पृथिवीः | ७५५ |
| तिस्रो दिवो अत्यतृणत् | १९२६ |
| तिस्रो वाचः प्र वद | ९८५ |
| तीक्ष्णो राजा विषासही | १२३६ |
| तीर्थैस्तरन्ति प्रवतो | २१५७ |
| तुभ्यं वातः पवतां | १० |
| तुभ्यमेव जरिमन् | १ |
| तृतीयकं वितृतीयं | ५४३ |
| तृदिक्ता अतृदिलः सो अद्रयो | २३०३ |
| तृदिक् दर्भ सप्तमान् मे | १५२४ |
| तृष्णामारं क्षुधामारम् | ३८६ |

| | |
|------------------------------|------|
| तृष्टामया प्रथमं यातवे | १०४१ |
| ते अद्रयो दशयन्त्रासः | २३०० |
| ते त्वा रक्षन्तु ते | १९ |
| ते देवेभ्य आ वृश्चन्ते | २६६ |
| तेन तमभ्यतिसृजामो | १८०७ |
| तेनैनं विध्याम्यभूत्यैनं | १८५६ |
| तेऽमुष्मै परा वहन्तु | १८५१ |
| तेषां प्रज्ञानाय यज्ञम् | ११७९ |
| ते सोमादो हरी इन्द्रस्य | २३०१ |
| तौदी नामासि कन्या | ८३१ |
| तौ विलिक्तेऽवेलयाम् | ४६८ |
| त्रपु भस्म हरितं वर्णः | ११३४ |
| त्रयः पोषास्त्रिवृति | १२९ |
| त्रयः सुपर्णा उपरस्य | २१५४ |
| त्रयः सुपर्णास्त्रिवृता | १३४ |
| त्रयो दासा आज्ञनस्य | ५८७ |
| त्रयो लोकाः संमिता | १२९१ |
| त्रायन्तामिमं देवाः | ५५१ |
| त्रायन्तामिमं पुरुषं | ३२५ |
| त्रिः शाम्बुभ्यो अङ्गिरेभ्यः | ४५१ |
| त्रिः सप्त मयूर्यः | ७८७ |
| त्रिः सप्त विष्णुलिङ्गका | ७८५ |
| त्रिकद्रुकेभिः पतति | १९७९ |
| त्रिकद्रुकेभिः पवते | २०३० |
| त्रिते देवा अमृजत | १७६५ |
| त्रिशिर्षाणं त्रिककुदं | ७०४ |
| त्रिषधस्था सप्तधातुः | १०७० |
| त्रिष्ट्वा देवा अजनयन् | १५५६ |
| त्रीणि च्छन्दांसि कवयो | २००४ |
| त्रीणि ते कुछ नामानि | ४४८ |
| त्रीणि पदानि रूपो | २१२३ |
| त्रेधा जातं जम्भनेदं | १३२ |
| त्रेधा भागो निहितो | १२३३ |
| त्रयायुषं जमदमेः | १३३ |
| त्वं वीरुधां श्रेष्ठतमा | ४९८ |
| त्वं हि विश्वतोमुख | १७६२ |
| त्वं च सोम नो वशी | ४७७ |

| | |
|-----------------------------------|------------|
| त्वं देवि सरस्वत्यवा | १०६४ |
| त्वं नो मेधे प्रथमा | १४१९ |
| त्वमग्न ईक्ति (०डि०) तो जातवेदो | १९९८, २१२५ |
| त्वमग्ने यातुधानान् | ७७३ |
| त्वमसि सहमानो | १९२७ |
| त्वमीशिषे पञ्चानां | ३ |
| त्वमुत्तमास्योषधे | ३२३ |
| त्वमोदनं प्राशीस्त्वाम् | ११५३ |
| त्वं भूमिमत्येष्योजसा | १९३५ |
| त्वं मणीनामधिपा वृषासि | १५४७ |
| त्वया पूर्वमथर्वाणो | ७ |
| त्वया वयमप्सरसो | ७१६ |
| त्वष्टः श्रेष्ठेन रूपेणास्या | १३५६ |
| त्वष्टा दुहित्रे बहतुं कृणोति | १०८१, २०१८ |
| त्वष्टा दुहित्रे बहतुं युनक्ति | १७२ |
| त्वष्टा युनक्तु बहुधा | १९४३ |
| त्वामाहुर्देववर्म त्वां | १५३४ |
| त्वाष्ट्रेणाहं वचसा वि | ५०५ |
| त्वे पितो महानां देवानां | १११३ |
| त्वे विश्वा सरस्वति | १०५७ |
| त्वेषस्ते धूम ऊर्णोतु | २२०९ |
| दक्षिणां दिशमभि | १२७९ |
| दक्षिणायां त्वा दिशि | २११४ |
| दक्षिणायै त्वा दिश | १३२७ |
| दण्डं हस्तादाददानो | २०८३ |
| ददाम्यस्मा अवसानम् | २०६१ |
| ददिहि मयां वरुणो दिवः | ८३४ |
| दर्भः शोचिस्तरुणकम् | ८०९ |
| दर्भेण त्वं कृणवद् वीर्याणि | १९३७ |
| दर्भेण देवजातेन | १९२९ |
| दर्शय मा यातुधानान् | ७५९ |
| दश च मे शतं च मे | ६६२ |
| दश मासाञ्छशयानः | १४०३ |
| दशवृक्ष मुखेमं रक्षसो | ८० |
| दशानामेकं कपिलं समानं | ९८४ |
| दशावनिभ्यो दशकक्षेभ्यो | २२९९ |

| | |
|----------------------------|------|
| दह दर्भ सपत्नान् मे | १५३० |
| दितिः शूर्पमदितिः | ११३० |
| दिवं ब्रूमो नक्षत्राणि | १७४३ |
| दिवश्चिदा वोऽमवत्तरेभ्यो | २२८९ |
| दिवस्त्वा पातु हरितं | १३५ |
| दिवा मा नक्तं यतमो | ७४६ |
| दिवि जातः समुद्रजः | १४१७ |
| दिवि ते तूलमोषधे | १९२५ |
| दिवि स्वनो यतते | १०३८ |
| दिवो तु मां बृहतो | ९५६ |
| दिवो नो वृष्टिं मरुतो | ९७९ |
| दिवो मूलमवततं | ६७० |
| दिव्यं सुपर्णं पयसं | ९२७ |
| दिव्यस्य सुपर्णस्य तस्य | ७५६ |
| दिव्या आपो अभि | ९२५ |
| दीक्षातपसोस्तनूरसि | १२७० |
| दीर्घायुत्वाय बृहते रणाय | ६६ |
| दीर्घायुस्त ओषधे खनिता | २३२७ |
| दुर्णामा च सुनामा च | १३७० |
| दुर्हार्दः संघोरं चक्षुः | १५६३ |
| दुष्टयै हि त्वा भर्स्यामि | १८०१ |
| दृढं मूलमाग्रं यच्छ | ४६५ |
| दृढं प्रतनान् जनयाजातान् | ४६१ |
| दृष्टमदृष्टमनुहम् | ६९२ |
| देवस्य सवितुः सवे | ९७० |
| देवहिंति जुगुपुर्द्वादशस्य | १००२ |
| देवा अदुः सूर्यो अदाद् | ८०५ |
| देवा इमं मधुना संयुतं | ४७० |
| देवाः कपोत इषितो | १५७९ |
| देवाञ्जन त्रैककुदं | ६०७ |
| देवानां हेतिः परि त्वा | ३५ |
| देवानामस्थि कृशानं बभूव | १४३० |
| देवानामेनं घोरैः | १८५७ |
| देवानां पत्नीनां गर्भं | १९१५ |
| देवा यज्ञमृतवः कल्पयन्ति | २१५२ |
| देवास्ते चीतिमविदन् | ८३ |

| | | | |
|-------------------------------|------------|----------------------------|------|
| देवी देव्यःमधि जाता | ४६० | धाना धेनुरभवद् वत्सो | २१८२ |
| देवीराप एष वो गर्भः | ९५५ | धाम्नो धाम्नो राजन्निता | १६७७ |
| देवीरापः शुद्धा वोढ्वः | ९४७ | धृषत् पिब कलशे सोमम् | ५१२ |
| देवीरापो अपां नपाद्यो | ९५३ | ध्रुव आ रोह पृथिवीं | २१५६ |
| देवेभ्यः कमृणीत मृत्युं | २१२४, २२७८ | ध्रुवा एव वः पितरो | २३०४ |
| देवेभ्यो अधि जातोऽसि | ४४३ | ध्रुवायां त्वा दिशि पुरा | २११७ |
| देवैनसात् पित्र्यान्नाम | १६२७ | ध्रुवायै त्वा दिशे विष्णवे | १३३० |
| देवैनसा दुन्मदितम् | ६८९ | ध्रुवेयं विराणमो अस्तु | १२८२ |
| देवैर्दत्तेन मणिना | ६२ | न किल्बिषमग्र नाधरो | १३१९ |
| देवो अग्निः संक्रसुको | २२८ | नक्तंजातास्योषधे रामे | ५१७ |
| देवो देवैर्वनस्पतिः | २२७३ | न ग्रंस्तताप न हिमो | १०२१ |
| देवो मणिः सपत्नहा | १५४४ | न च प्राणं रुणद्धि | ११८१ |
| देवो वनस्पतिर्देवमिन्द्रं | ३७७ | न च सर्वज्यानि जीयते | ११८२ |
| दौर्बल्यं दौर्जाविल्यं | ३८१, १९०६ | नडमा रोह न ते | २१७ |
| पां मा खीरन्तरिक्षं | ३७१ | न तं यक्ष्मा अरुन्धते | २०२ |
| द्यावापृथिवी श्रोत्रे | ११२८ | न तद् रक्षांसि न | २३२९ |
| धुमन्तस्त्वेधीमहि | २०२० | न तिष्ठन्ति न नि मिषन्ति | १९६१ |
| द्यौर्वः पिता पृथिवी माता | ७७९ | न ते नाथं यम्यन्नाहमस्मि | २००२ |
| द्यौष्ट्वा पिता पृथिवी माता | ४ | न ते बाहोर्बलमस्ति | ८५७ |
| द्रप्सश्चस्कन्द पृथिवीमनु | २१७८ | न ते सखा सख्यं वष्टयेतत् | १९५५ |
| द्रप्सश्चस्कन्द प्रथमोऽनु | ८८९ | न त्वा पूर्वो ओषधयो | १५५७ |
| द्रुपदादिव मुमुचानः | ११०५, १७२९ | नदीं यन्त्वप्सरसो | ७१७ |
| द्वादशधा निहितं त्रितस्या० | १७६७ | न भूमि वातो अति | ६१४ |
| द्वाविमौ वातौ वात आ | ५४९ | नमः शीताय तक्मने | ५२८ |
| द्विभागधनमादाय प्र | २५१ | नमः सनिस्त्रसाक्षेभ्यो | ४२७ |
| द्विषतस्तापयन् हृदः | १५१४ | नमस्ते राजन् वरुणास्तु | १६५५ |
| द्विषते तत् परा वह | १८४७ | नमस्ते रुद्रास्यते | ६२२ |
| द्विषो नो विश्वतोमुखाति | १७६३ | नमस्ते लाङ्गलेभ्यो | ४९६ |
| द्वे च मे विंशतिश्च मे | ६५४ | नमो यमाय नमो अस्तु | १०९ |
| द्यास्याच्चतुरक्षात् | १३८८ | नमो रुद्राय नमो अस्तु | १८० |
| धनुर्हस्तादादानो मृतस्य | १९४८, २०८४ | नमो रूराय ऋष्यवनाय | ५२९ |
| धर्ता प्रियस्व धरुणे पृथिव्या | १३०६ | नमो वः पितर ऊर्जे | २२३१ |
| धर्तासि धरुणोऽसि | २११२ | नमो वः पितरः स्वधा | २२३५ |
| धर्ता ह त्वा धरुणो | २११२ | नमो वः पितरो भामाय | २२३२ |
| धातः श्रेष्ठेन रूपेणास्या | १३५५ | नमो वः पितरो यच्छिवं | २२३४ |
| धाता मा निर्ऋत्या | २१०९ | नमो वः पितरो यद् घोरं | २२३३ |

| | |
|---------------------------------|----------|
| नमोऽस्त्वसिताय नमः | ८५० |
| न यत् पुरा चक्रुमा कक्ष | १९५७ |
| नव च मे नवतिश्च मे | ६६१ |
| नव च या नवतिश्च | १६८४ |
| नव प्राणान् नवभिः सं | १२७ |
| नवं बर्हिरोदनाय स्तृणीत | १३०३ |
| न वा उ ते तनूं तन्वा सं | २००३ |
| न वा उ ते तन्वा तन्वं सं | १९६५ |
| न वा उ देवाः क्षुधमिद्वधं | २३११ |
| नवानां नवतीनां | ७८६ |
| नष्टासवो नष्टविषा | ८१९ |
| न स सखा यो न ददाति | २३१४ |
| नहि ते नाम जग्राह | ३६६ |
| नह्यस्या नाम गृभ्णामि | २३३९ |
| नाके सुपर्णमुप यत् पतन्तं | २१४४ |
| नाभिरहं रयीणां | १८२८ |
| नाल्प इति श्रूयान्नानुसेचन | ११५० |
| नास्य केशान् प्र वपन्ति | १९२४ |
| नास्यास्थीनि भिन्त्यान्न | १२०५ |
| निःसालां धृष्णुं धिषणम् | १६४८ |
| निक्ष दर्भ सपत्नान् मे | १५२३ |
| नि गावो गोष्ठे असदन् | ५६३, ७७७ |
| निग्राभ्या स्थ देवश्रुतः | २४८ |
| निधि निधिपा अभ्येनम् | १३१३ |
| निररणि सविता साविष्क् | ६७४ |
| निरितो मृत्युं निर्ऋतिं | २१९ |
| निरिमां मात्रां मिमीमहे | २०६६ |
| निर्दुरर्मण्य ऊर्जा | १८१६ |
| निर्द्विषन्तं दिवो निः पृथिव्या | १८६१ |
| निर्बलासं बलासिनः | ४८४ |
| निर्बलासेतः प्र पताशुंगः | ४८५ |
| निर्लक्ष्यं ललाम्यं | ६७३ |
| निर्बो गोष्ठादजामसि | १६४९ |
| नि वर्तध्वं मानु गात | ८९३ |
| नीचैः खनन्त्यसुरा | ५६७ |
| नेतां बिदुः पितरो नोत | १९१० |
| नेव मांसं न पीबसि | १४०८ |

| | |
|----------------------------------|-----------|
| नैनं रक्षांसि न पिशाचाः | ६० |
| नैनं घ्नन्ति पर्यायिणो | १५३ |
| नैनं घ्नन्त्यप्सरसो | १४४३ |
| नैनं प्राप्नोति शपथो | ५८४ |
| नैवाहमोदनं न मामोदनः | ११५६ |
| न्यग् वातो वाति न्यक् | २०० |
| न्यस्तिका हरोद्विध | ६७७ |
| पक्षी जायान्यः पतति | ५१० |
| पञ्च च मे पञ्चाशच्च मे | ६५७ |
| पञ्च च याः पञ्चाशच्च | १६८२ |
| पञ्च पदानि रूपो अन्वरोहं | २२७७ |
| पञ्च राज्यानि वारुधां | १७४८ |
| पञ्च रुक्मा ज्योतिरस्मै | १२०८ |
| पञ्च रुक्मा पञ्च नवानि | १२०७ |
| पञ्चौदनः पञ्चधा वि कमताम् | ११९० |
| पयस्वतीः कृणुथाप ओषधीः | ९६६ |
| पयस्वतीरोषधयः | ८२२, २१३५ |
| परं मृत्यो अनु परेहि पन्थां | २३७ |
| पराक् ते ज्योतिरपथं ते | १६३१ |
| पराच एनान् प्र गुद | ४२० |
| पराञ्च चैनं प्राशीः प्राणास्त्वा | ११५४ |
| परा यात पितर आ च यात | २०९७ |
| परा यात पितरः सोम्यासो | २२१३ |
| परि ग्राममिवाचितं | ८०२ |
| परि णो वृद्धिर्ध शपथ | १७७४ |
| परि त्वा परितन्नुना | ४८२ |
| परि त्वा पातु समानेभ्यो | ५२ |
| परि त्वा रोहितैर्वर्णैः | ४९० |
| परि यामिव सूर्योऽहीनां | ८४६ |
| परि धत्त धत्त नो वर्चसा | २३३२ |
| परि धामान्यासामाशुः | १६५३ |
| परिपाणं पुरुषाणां | ५८१ |
| परि मा दिवः परि मा पृथिव्याः | १५६४ |
| परि मां परि मे प्रजां | ६७१ |
| परि वः सिकतावती | ५५८ |
| परिबीरसि परि त्वा दैवीर्विशो | २२७१ |

| | |
|------------------------------|------------|
| परि वो विश्वतो दध | ८९९ |
| परिमृष्टं धारयतु यद्धितं | १३८६ |
| परि स्तृणीहि परि धेहि | २२५६ |
| परिहस्त वि धारय | १३६० |
| परीदं वासो अधिथाः | २३३३ |
| परीमेऽग्निमर्षत परि | १५८३ |
| परेयिवांसं प्रवतो महीः | १९६८, २०१५ |
| परेहि कृत्ये मा तिष्ठो | १६४१ |
| परेहि नारि पुनरेहि क्षिप्रम् | १९४१ |
| परोऽपेहि मनस्पाप किम् | ६३० |
| परोऽपेह्यसमृद्धे वि | १७८३ |
| पर्जन्याय प्र ग.यत | ९९१ |
| पर्णो राजापिधानं चरुणाम् | २२०३ |
| पर्यस्ताक्षा अप्रचङ्कशा | १३८२ |
| पर्यावर्ते दुष्वन्यात् | ६३६ |
| पर्वताद् दिवो योनेः | १३४६ |
| पलालानुपलालौ शकुं | १३६८ |
| पवस्तेस्त्वा पर्यकीणन् | ८०३ |
| पवीनसात् तज्जल्वात् | १३८७ |
| पश्याम ते वीर्यं जातवेदः | ७७१ |
| पश्येम शरदः शतम् | ११९ |
| पादाभ्यां ते जानुभ्यां | २९२ |
| पार्थिवस्य रसे देवा | ९१ |
| पार्थिवा दिव्याः पशवः | १७४१ |
| पावका नः सरस्वती | १०५१ |
| पिंश दर्भ सपत्नान् मे | १५२१ |
| पिङ्ग रक्ष जायमानं | १३९१ |
| पिण्डु दर्भ सपत्नान् मे | १५२८ |
| पितुं नु स्तोषं महो | ११०८ |
| पितृभ्यः सोमवद्भ्यः | २२२३ |
| पितेव पुत्रानभि सं | १२८३ |
| पिप्पली क्षिप्तमेषजी | ४१३ |
| पिपल्यः समवदन्त | ४१४ |
| पिशङ्गे सूत्रे खृगलं | १७९९ |
| पीपिवांसं सरस्वतः | १०४८ |
| पुत्र इव पितरं गच्छ | १६०० |
| पुत्रमनु यातुधानीः | ७३७ |

| | |
|---------------------------------|------------|
| पुत्रं पौत्रमभितर्पयन्तीः | २१८९ |
| पुनः कृत्यां कृत्याकृते | १५२४ |
| पुनरेता नि वर्तन्ताम् | ८९५ |
| पुनरेता नि वर्तय | ८९४ |
| पुनरेहि वाचस्पते | १४१६ |
| पुनर्देहि वनस्पते य | २१४७ |
| पुनस्त्वादित्या रुद्रा वसवः | २२२ |
| पुनस्त्वा दुरप्सरसः | ६९० |
| पुमान् पुंसोऽधि तिष्ठ | १२७२ |
| पुरं देवानाममृतं हिरण्यं | १३७ |
| पुरस्ताद् युक्तो वह जातवेदो | ७३८ |
| पुराणां अनुवेनन्तं | १९८१ |
| पुरोळाशं यो अस्मै | २२४१ |
| पुष्टिं पशुनां परि जप्रभ | १५४१ |
| पुष्टिरसि पुष्ट्या मा समङ्गिध | १५४९ |
| पुष्पवतीः प्रसूमतीः | ३५० |
| पूताः पवित्रैः पवन्ते अभ्राद् | १२९६ |
| पूर्वो अग्निष्ट्वा तपतु शं | २१५२ |
| पूषा त्वेतश्चावयतु प्र | २०७८ |
| पूषेम शरदः शतम् | १२३ |
| पृणीयादिन्नाधमानाय तम्यान् | २३१५ |
| पृथग् रूपाणि बहुधा पशुनाम् | १२९२ |
| पृथिवीं त्वा पृथिव्यामा वेशयामि | १२९३, २१९८ |
| पैद्व प्रेहि प्रथमोऽनु | ८१३ |
| पैद्वस्य मन्महे वयं | ८१८ |
| पैद्वो हन्ति कसर्णालं | ८१२ |
| प्र केतुना बृहता भास्यमिः | २१४३ |
| प्र क्षोदसा धायसा सन्न | १०७३ |
| प्र च्यवस्व तन्वं सं भरस्व | २०९२ |
| प्रजापतिष्वा भद्रात् प्रथमम् | १५७२ |
| प्रजापतिः सलिलादा समुद्राद् | १०१४ |
| प्रजापते श्रेष्ठेन रूपेण | १३५८ |
| प्रजानस्यघ्न्ये जीवलोकं | २०८७ |
| प्र णो देवी सरस्वती | १०६२ |
| प्र णो बनिर्देवकृता | १७७२ |
| प्रति दद यातुधानान् | ७३५ |
| प्रति यदापो अदृश्रमायतीः | ९१३ |

| | |
|--------------------------------|---------|
| प्रतिष्ठे ह्यभवतं वसूनां | १७०७ |
| प्रतीची दिशामियमिद् | १९८० |
| प्रतीचीन आश्रितो | १६९१ |
| प्रतीचीनफलो हि | ४०४ |
| प्रतीचीने मामहनीष्वाः | १९५३ |
| प्रतीच्यां त्वा दिशि पुरा | २११५ |
| प्रतीच्यै त्वा दिशे वरुणाय | १३१८ |
| प्र ते भिनशि मेहृनं | ५७७ |
| प्र तेऽरदद् वरुणो यातवे | १०३७ |
| प्र ते शृणामि शृणै | ७१४ |
| प्रतो हि कमीज्यो अन्धरेषु | ८५ |
| प्रत्यक् हि संबभूविथ | ४०२ |
| प्रत्यक्षं चैनं प्राशीरपानाः | ११५५ |
| प्रत्यश्चमर्कं प्रत्यर्पयित्वा | २७१ |
| प्र देवत्रा ब्रह्मणे गातुः | ९०१ |
| प्र नभस्व पृथिवि | १०२० |
| प्र पदोऽव नेनिविध दुश्चरितं | ११८५ |
| प्र पर्वतस्य वृषभस्य | १०९८ |
| प्र पर्वतानामुशती उपस्थाद् | १०२२ |
| प्र यच्छ पशुं त्वरया | १३०२ |
| प्र यत् ते अग्ने सूरयो | १७६० |
| प्र यदग्नेः सहस्वतो | १७६१ |
| प्र यद् भन्दिष्ठ एषां | १७५९ |
| प्र या जिगाति खर्गलेव | २९८४ |
| प्र या महिम्ना महिनासु | १०७१ |
| प्र वा एतीन्दुरिन्द्रस्य | २२१० |
| प्रवाच्यं शश्वधा वीर्यं तद् | १०२८ |
| प्र वाता वान्ति पतयन्ति | ९७७ |
| प्र विशतं प्राणापानौ | ७६, १४७ |
| प्र वो प्रावाणः सवित्ता | २३०७ |
| प्र सुमतिं सवितर्वाय ऊतये | १७०४ |
| प्र सु व आपो महिमानम् | १०३६ |
| प्रस्तृणती स्तम्बिनीरेकशृङ्गाः | ३२७ |
| प्राचीं प्राचीं प्रदिशमा | १२७८ |
| प्राच्यां त्वा दिशि पुरा | २११३ |
| प्राच्यै त्वा दिशेऽग्नये | १३२६ |
| प्राण प्राणं त्रावस्त्रासो | ६०५ |

| | |
|---------------------------------|------------|
| प्राणापानौ मा मा हासिष्टं | १८३९ |
| प्राणेन त्वा द्विपदां चतुष्पदां | ३० |
| प्राणेन प्राणतां प्राण | १७६ |
| प्राणेन विश्वतोवीर्यं | १७४ |
| प्राणेनामे चक्षुषा सं सृजेमं | १११ |
| प्राणो अपानो व्यान आयुः | २०७० |
| प्रास्मत् पाशान् वरुण मुञ्च | १६७९, २२२० |
| प्रास्मदेनो वहन्तु प्र | १८१३ |
| प्रास्मै हिनोत मधुमन्तमूर्मि | ९०८ |
| प्रियं प्रियाणां कृण्वाम तमः | १३२० |
| प्रियं मा दर्भं कृणु ब्रह्म० | १९३० |
| प्रेमां मात्रां मिमीमहे | २०६३ |
| प्रेव पिपतिषति मनसा | २६८ |
| प्रेहि प्रेहि पथिभिः पूर्यैः | २०१९ |
| प्रेहि प्रेहि पथिभिः पूर्यैः | १९७३ |
| प्रेणान्कृणीहि प्र मृणा रभस्व | १४५४ |
| प्रेते वदन्तु प्र वयं वदाम | २२९३ |
| प्रेषा यज्ञे निविदः स्वाहा | १९४० |
| प्रोष्ठेशयास्तल्पेशया | ६१५ |
| खतो बतासि यम नैव ते | १९६६ |
| बन्धस्त्वाग्रे विश्वचया | १९०८ |
| बन्धे रक्षः समदमा वपैभ्यो | १२६० |
| बन्धेरध्वर्यो मुखमेतद् | १२५९ |
| बन्धोरर्जुनकाण्डस्य यवस्य | ४९५ |
| बर्हिषदः पितर ऊत्यर्वाग् | १९९०, २०१६ |
| बर्हिर्बिलं निर्द्वतु | २८२ |
| बह्नीदं राजन् वरुणान् | ६०९ |
| बुध्येम शरदः शतम् | १२१ |
| बृहत्पलाशे सुभगे | ४७९ |
| बृहदायवनं रथन्तरं दर्विः | ११४२ |
| बृहदु गायिषे वचो | १०७८ |
| बृहद्वावासुरेभ्योऽधि देवान् | १९०९ |
| बृहद् वदन्ति मदिरण | २२९६ |
| बृहस्पतिर्म आत्मा | १८२६ |
| बोधश्च त्वा प्रतीबोधश्च | १८ |
| ब्रह्मलोको भवति ब्रह्मस्य | ११७७ |

| | | | |
|------------------------------|----------|--------------------------------|------------|
| ब्रह्मणामिः संविदानो | १३९३ | मधुमाजो वनस्पतिः | ४७३ |
| ब्रह्मणा तेजसा सह | १५०७ | मधु वाता ऋतायते | ३६१ |
| ब्रह्मणा परिगृहीता | ११४१ | मध्वा पृथे नयः पर्वता | ८४८ |
| ब्रह्मणा शुद्धा उत पूता | १२४६ | मधोरस्मि मधुतरो | ४८१ |
| ब्रह्मवादिनो वदन्ति पराश्वम् | ११५२ | मनसे चेतसे धियः | ६३ |
| ब्रह्मास्य शीर्षं बृहदस्य | १२२१ | मनो मे तर्पयत वाचं मे | ९४९ |
| ब्राह्मणासः सोमिनो वाचम् | १००१ | मन्थ दर्भ सपत्नान् मे | १५२७ |
| ब्राह्मणासो अतिरात्रे न सोमे | १००० | मन्वे वां द्यावापृथिवी सुभोजसौ | १७०६ |
| ब्रह्मणेन पर्युक्ताक्षि | ३९७ | मन्वे वां मित्रावरुणावृतावृधौ | १७२० |
| ब्राह्मणो जज्ञे प्रथमो | ७९० | मया गावो गोपतिना सचध्वम् | २३२५ |
| ब्रूमो देवं सवितारं | १७३६ | मरीचीर्धूमान् प्र विशानु | १७६६ |
| ब्रूमो राजानं वरुणं | १७३५ | मरुतो मा गणैरवन्तु | ६०१ |
| भगो मा भगेनावतु प्राणाय | ६०० | महान्तं कोशमुदचा नि बिञ्च | ९८१ |
| भगो युनक्तु शिषो न्वम्मा | १९४४ | महान्तं कोशमुदचाभि बिञ्च | १०१९ |
| भद्रं वै वरं वृणते | ६२६ | महावृषान् मूजवतो | ५३८ |
| भद्रमिद् भद्रा कृणवत् | १०८० | महो अर्णः सरस्वती | १०५३ |
| भद्रात् ऋक्षान्निस्तित्ति | ४३२ | मा गतानामा दीधीथा | १३ |
| भवाशर्वावस्यतां पापकृते | १६३८ | मा ज्येष्ठं वधीदयमम एषां | १६७० |
| भवाशर्वाविदं ब्रूमो | १७४२ | मातली कव्यैर्यमो अङ्गिरोभिः | १९७०, २०१३ |
| भवशर्वो मन्वे वा तस्य | १७१३ | मा ते प्राण उप दसन्मो | ११२ |
| भवेम शरदः शतम् | १२४ | मा ते मनस्तत्र गान्मा तिरो | १२ |
| भिन्दि दर्भ सपत्नानां | १५१६ | मा ते मनो मासोर्माज्ञानां | २०४८ |
| भिन्दि दर्भ सपत्नान मे | १५१७ | मा त्वा कव्यादभि मंस्त | १७ |
| भीताय नाधमानाय | १४०० | मा त्वा जम्भः संहनुर्मा | २१ |
| भीमा इन्द्रस्य हेतयः | ७२२, ७२३ | मा त्वा वृक्षः सं बाधिष्ट | २०४९ |
| भुगन्तु नो यशमः मोत्वन्धसो | २२९० | मा न आपो मेधां मा | १४१२ |
| भूतपतिर्निरजतु | १६५१ | मा नो देवा अहिर्वधीत् | ८४९ |
| भूतं ब्रूमो भूतपति | १७५४ | मा नो मेधां मा नो दीक्षां | १४१३ |
| भूते हविष्मती भवैष ते | १७९१ | मा नो हासिषुर्ऋषयो दैव्या | ६५ |
| भूमिष्वा पातु हरितेन | १३१ | मापो मौषधीर्हिंसीः | ९५१ |
| भूयमीः शरदः शतात् | १२६ | मा बिभेर्न मरिष्यसि | १०५ |
| भूयेम शरदः शतम् | १२५ | मा मां प्राणो हासीन्मो | १८३० |
| भज्जा मज्जा सं धीयतां | ४२४ | मा वनिं मा वाचं नो | १७८२ |
| मधुमती स्थ मधुमती | १८१७ | मा वो रिषत् खनिता | ३२० |
| मधुमन्मे निकमणं | ४८० | मा सं वृतो मोष स्य | १३६९ |
| मधुमन्मूलं मधुमदग्रमासां | ३३५ | मा स्मैतान्सखीन् कुरुथा | ५४१ |

| | |
|--|---------|
| मित्र एनं वरुणो वा | २ |
| मित्रश्च त्वा वरुणश्च | ६११ |
| मित्रावरुणा परि माम् | २०९५ |
| मुञ्चन्तु मा शपथ्याद् ३१६, ३५३, १७४०, १७६९ | |
| मुख शीर्षकत्या उत कासः | १९० |
| मुञ्चामि त्वा वैश्वानराद् | १६५७ |
| मुञ्चामि त्वा हविषा | ७२, २०५ |
| मुमुचाना ओषधयो | ३३९ |
| मुहुर्गृध्रैः प्र वदति | २५४ |
| मूर्धाहं रयीणां मूर्धा | १८२२ |
| मृण दर्भं सपत्नान् मे | १५२६ |
| मृत्युरीक्षे द्विपदां | ४९ |
| मृत्योः पदं योपयन्त | २४६ |
| मेदस्वता यजमानाः | १७९६ |
| मेधां सायं मेधां प्रातः | १४२३ |
| मेधामहं प्रथमां ब्रह्मण्वतीं | १४२० |
| मेमं प्राणो हासीन्मो | १४६ |
| मेहनाद्वनंकरणात् | १६६ |
| मैतं पन्थामनु गा भीम | १५ |
| मैनममे वि दहो माभि | २०२८ |
| मोघमर्चं विन्दते अप्रचेताः | २३१६ |
| मोको मनोहा खनो निः | १८०५ |
| य आत्मानमतिमात्रमंस | १३७९ |
| य आधाय चकमानाय | २३१२ |
| य आमं मांसमदन्ति | १३८९ |
| य आशानामाशापालाः | १६५९ |
| य आस्ते यश्चरति यश्च | ६१७ |
| य इह पितरो जीवा | २२३७ |
| य उग्रीणामुग्रबाहुर्वयुः | १६९३ |
| य उदानङ् व्ययनं | ८९७ |
| य उभाभ्यां प्रहरसि | ८५९ |
| य ऊरू अनुसर्पति | २७८ |
| य ऋष्यको देवकृता | १५६५ |
| य एनं परिषीदन्ति | १५० |
| यं याचाम्यहं वाचा | १७८१ |
| यं वां पिता पचति यं | १२७६ |

| | |
|------------------------------|------|
| यः कीकसाः शृणाति | ५०९ |
| यः शृणोति प्रमोतम् | २७५ |
| यः कृणोति गृतवत्साम् | १३७५ |
| यः कृत्याकृन्मूलकृद् | १७१८ |
| यः कृष्णः केदयसुर | ११७१ |
| यः पक्षः पारुषेयो | ५३३ |
| यः प्रथमः कर्मकृत्याय | १६९७ |
| यः प्रथमः प्रवतमाससाद | १५८४ |
| यः संप्रामात्रयति सं युधे | १६९८ |
| यं कुमार नवं रथम् | १९८२ |
| यं कुमार प्रावर्तयो | १९८३ |
| यच्चक्षुषा मनसा यच्च | ३५४ |
| यच्चिच्छि त्वं गृहेगृहे | २२८० |
| यज्जाग्रद् यत् सुप्तो | १८६५ |
| यज्ञ एति विततः कल्पमानः | २१६३ |
| यज्ञं दुहानं सदमित् प्रपीनं | १२६२ |
| यज्ञं ब्रह्मो यजमानम् | १७४७ |
| यज्ञस्य चक्षुः प्रभृतिर्मुखं | २२५३ |
| यतो दष्टं यतो धातं | ८५४ |
| यत् किं चेदं वरुण दैव्ये | १७८९ |
| यत् कृषते यद् वनुते | २५२ |
| यत् क्षुरेण मर्चयता | ४३ |
| यत् त आत्मनि तन्वां | ६७५ |
| यत् ते अङ्गमतिहितं | २०५० |
| यत् ते अपोदकं विषं | ८३५ |
| यत् ते दर्भं जराभृत्युः | १५३२ |
| यत् ते नियानं रजसं | ३६ |
| यत् ते पितृभ्यो ददनो | १६२६ |
| यत् ते माता यत् ते पिता | १०२ |
| यत् ते रिष्टं यत् ते छुत्तम् | ४२२ |
| यत् ते वासः परिधानं | ४२ |
| यत् ते सोम गवाशिरो | १११६ |
| यत् त्वं शीतोऽथो रुरः | ५४० |
| यत् त्वा क्रुद्धाः प्रचक्रुः | २२१ |
| यत् त्वाभिचेरुः पुरुषः | ९९ |
| यत् त्वा शिक्वः पराव० | १४८० |
| यत् पर्जन्य कनिकदत् | ९८९ |

| | | | |
|----------------------------|-----------|-------------------------------|------------|
| यत् प्रेषिता वरुणेन | ९११ | यथा नृत्र इमा आपः | १८४ |
| यत्र नावप्रभ्रंशनं | ४५४ | यथासितः प्रथयते वशौ | १३४० |
| यत्र वः प्रेङ्गा हरिता | ७१९ | यथा सूर्यस्य रश्मयः | ४८८ |
| यत्राश्वत्था न्यग्रोधा | ७१८ | यथा सूर्यो अतिभाति | १४६९ |
| यत्रैषामग्ने जनिमानि | ७३० | यथा सूर्यो मुच्यते तमसः | १६४७ |
| यत्रौषधीः समगमत | ३०६ | यथा सो अस्य परिधिः | ७४० |
| यत् समुद्रो अभ्यकन्दत् | १५३६ | यथा स्म ते विरोहतो | १३३४ |
| यत् स्वप्ने अजमश्रामि | ६३७ | यथा हव्यं वहसि जातवेदो | १६८६ |
| यथा कलां यथा शफं | ६३५, १९१३ | यथाहान्यनुपूर्वं भवन्ति | २४१ |
| यथाग्ने त्वं वनस्पते | १५४५ | यथेयं पृथिवी मही दाधार | १३६३-६५ |
| यथा त्वमुत्तरोऽसौ | १५७८ | यथेयं पृथिवी मही भूतानां | १३४७, १३६२ |
| यथा देवेष्वमृतं यथा | १४७७ | यथेषुका परापतद् | ५७९ |
| यथा यां च पृथिवीं च | ६६७ | यथोदकमपपुषो | ६८० |
| यथा नकुलो विच्छिद्य | ६८१ | यदक्षेषु वदा यत् समित्यां | १३२३ |
| यथा नडं कशिपुने | ५०२ | यदग्निरापो अदहत प्रविश्य | ५२५ |
| यथा पसस्तायादरं | १३४१ | यदग्ने तपसा तपः | १९२१ |
| यथा बाणः सुसंशितं | ४८७ | यदग्ने यानि कानि | ११७ |
| यथा बीजमुर्वरायां | १५१० | यदग्नी सूर्ये विषं पृथिव्याम् | ८२९ |
| यथाभवदनुदेयी ततो | १९८५ | यदङ्ग त्वा भरताः संतरेयुः | १०३२ |
| यथा भूमिर्मृतमना | ६८३ | यददः संप्रयतीरहा० | ९२० |
| यथा मनो मनस्कैतैः | ४८६ | यददीव्यन्नृणमहं कृणोमि | १६७३ |
| यथा यमाय हर्म्यम् | २२०५ | यददोऽदो अभ्यगच्छन् | १८६४ |
| यथा यशः कन्यायां | १४७२ | यददो देवा असुरान् | ३९९ |
| यथा यशः पृथिव्यां | १४७१ | यददो पितो अजगन् | १११४ |
| यथा यशः प्रजापतौ | १४७६ | यदक्षमग्निं बहुधा विरूपं | १११९ |
| यथा यशः सोमपाये | १४७३ | यदक्षमदम्यनृतेन देवा | ११२१ |
| यथा यशश्चन्द्रमसि | १४७० | यदपामोषधीनां परि० | १११५ |
| यथा यशोऽग्निहोत्रे | १४७४ | यदध्रासि यत् पिबसि | ४५ |
| यथा यशो यजमाने | १४७५ | यदस्मासु दुष्वप्यं यद् | ५९३ |
| यथा वातः पुष्करिणीं | १४०१ | यदस्य हतं विद्वतं यत् | ७४२ |
| यथा वातश्चामिश्रं वृक्षान् | १४६६ | यदहरहरभिगच्छामि | १८६६ |
| यथा वातश्च्योवयति | १६२८ | यदाजनं त्रैककुदं | ५८८ |
| यथा वातेन प्रक्षीणा | १४६७ | यदान्त्रेषु गर्वाभ्योः | ५७६ |
| यथा वातो यथा मनो | १४१० | यदापो अप्न्या इति | ६१०, ११०३ |
| यथा वातो यथा वनं | १४०२ | यदाबध्नन् दाक्षायणा | ५९, २३३० |
| यथा वातो वनस्पतीन् | १४६५ | यदाशसा निःशसाभिशसो | ६२७ |
| | | यदाशसा वसतो मे विचुक्षुभे | १०८८ |

| | | | |
|-----------------------------|----------|------------------------------|-----------|
| यदा शृतं कृण्वो जातवेदो | २०२९ | यद्यत् कृष्णः शकुनः | १२८४ |
| यदासुतेः क्रियमाणायाः | १९७ | यद्यर्चिर्यदि वासि शोचिः | ५२६ |
| यदि कर्तं पतित्वा संशभ्रे | ४२७ | यद्यष्टवृषोऽसि सृजारसो | ६४९ |
| यदि कामादपकामाद् | २७९ | यद् यामं चकुर्निखनन्तो | १२६६ |
| यदि क्षितायुर्यदि वा | ७३, २०६ | यद्येकवृषोऽसि सृजारसो | ६४२ |
| यदि चतुर्वृषोऽसि सृजा० | ६४५ | यद्येकादशोऽसि सोऽपो | ६५२ |
| यदि जाग्रद् यदि स्वपन्नेन | १७२८ | यद्येयथ द्विपदी चतुष्पदी | १६३९ |
| यदि त्रिवृषोऽसि सृजारसो | ६४४ | यद् रिप्रं शमलं चक्रम | २५६ |
| यदि दशवृषोऽसि सृजा० | ६५१ | यद् वः सहः सहमाना | ३२८ |
| यदि द्विवृषोऽसि सृजा० | ६४३ | यद् विद्वांसो यद्विद्वांसः | १७२७ |
| यदि नववृषोऽसि सृजा० | ६५० | यद् द्विपाच्च चतुष्पाच्च | १५४० |
| यदिन्द्र ब्रह्मणस्पते | ६२८, ६३२ | यद् वेद राजा वरुणो | १३५१ |
| यदि पञ्चवृषोऽसि सृजा० | ६४६ | यद् वो अग्निरजहादेकं | २२१४ |
| यदिमा वाजयज्ञहम् | ३११ | यद् वो देवा उपजीका | ८०६ |
| यदि वासि त्रैककुदं | ५८९ | यद् वो मुदं पितरः सोम्यं | २१०२ |
| यदि वासि देवकृता | १५९७ | यद् वो वयं प्रमिनाम | २०५५ |
| यदि वृक्षादभ्यपत्तत् | ९५७ | यन्तासि यच्छसे हस्तौ | १३५२ |
| यदि शोको यदि वाभि | ५२७ | यं ते मन्थं यमोदनं | २१९२ |
| यदि षड्वृषोऽसि सृजा० | ६४७ | यं त्वममे समदहस्तमु | २०८९ |
| यदि सप्तवृषोऽसि सृजा० | ६४८ | यं त्वा वेद पूर्वं इक्ष्वाको | ४५५ |
| यदि स्त्री यदि वा पुमान् | १५९६ | यं देवा पितरो मनुष्या | १५०९ |
| यदि स्थ क्षेत्रियाणां | १६५२ | यं द्विष्मो यच्च नो द्वेष्टि | १८४८ |
| यदि स्थ तमसाश्रुता | १६४५ | यन्नियानं न्ययनं | ८९६ |
| यदीदं मातुर्यदि वा पितुर्नः | १२६८ | यन्मातली रथक्रीतम् | १७५६ |
| यदीमेनां उशतो अभि | ९९६ | यन्मा हुतमहुतमाजगाम | ११२० |
| यदुक्कथाचृतं जिह्वया | १६५६ | यन्मे अक्षोरादियोत | ९७२ |
| यदेनसो मातृकृता० | १०१ | यन्मे छिद्रं मनसो यच्च | १४११ |
| यदेषामन्यो अन्यस्य | ९९८ | यन्मेदमभिश्चोचति येनयेन | १७१२ |
| यद् दण्डेन यदिष्वा | ४३१ | यन्मे माता यन्मे पिता | १४६० |
| यद् दुरोहिथ शेपिषे | १०० | यमः परोऽवरो विवस्वान् | २०५६ |
| यद् दुर्भगां प्रस्नपितां | १६२५ | यमबध्नाद् बृहस्पतिर्देवेभ्यो | १४९९-१५०५ |
| यद् दुष्कृतं यच्छमलं | ४०५ | यमबध्नाद् बृहस्पतिर्मणिं | १४८३-८७ |
| यद् देवा देवहेडनं | १७९४ | यमबध्नाद् बृहस्पतिर्वाताय | १४८८-९४ |
| यद्वा प्राचीरजगन्तोरो | २३३८ | यमराते पुरोधस्ते पुरुषं | १७७८ |
| यद्वा अक्षभिर्यद्विभिः | ८४७ | यमस्य मा यम्यं कामः | १९६० |
| यद्यमिः क्रव्याद् यदि | २२० | यमस्य लोकादध्या बभूविथ | १९०७ |
| यद्यज्जाया पचति त्वत् | १३१० | | |

| | |
|------------------------------|------------|
| यमाय घृतवत् पयो | २०२७ |
| यमाय घृतवद्धविः | १९७७ |
| यमाय पितृमते स्वधा | २२२४ |
| यमाय मधुमत्तमं | १९७८, २०२६ |
| यमाय सोमं सुनुत | १९७६ |
| यमाय सोमः पवते | २०२५ |
| यमे इव यतमाने यदैतं | २२७६ |
| यमो नो गातुं प्रथमो | १९६९ |
| यं परिहरतमविभः | १३६१ |
| यं ब्राह्मणे निदधे यं च | १२०१ |
| ययो रयः सत्यवर्त्मजुर्गदिमः | १७२६ |
| ययोरभ्यध्व उत यद् दूरे | १७१४ |
| ययोर्वधान्नापयते कश्चन | १७१७ |
| ययोः संख्याता वरिमा | १७०० |
| यश्चकार न शशाक कतुं | ३९३, १६१४ |
| यश्चकार स निष्करत् | ८४ |
| यश्चर्षणिप्रो वृषभः स्वविन्द | १६९४ |
| यश्च सापत्नः शपथो | ६६९ |
| यस्त आस्थत् पनाङ्गुरिः | ७९३ |
| यस्त ऊरु विहरति | १३९६ |
| यस्ते केशोऽवपयते | ४६२ |
| यस्ते गर्भमर्मावा दुर्णामा | १३९४ |
| यस्ते गर्भं प्रतिमृशान् | १३८४ |
| यसो द्रप्सः रक्कन्दति | ८९० |
| यस्ते द्रप्सः रक्करो यस्ते | ८९१ |
| यस्ते परुषि संदधौ | १६२३ |
| यस्ते पृथु स्तनयितुर्न्युः | १०८७ |
| यस्ते मदोऽवकेशो विकेशो | ४७१ |
| यस्ते स्तनः शशयुर्यो | १०८६ |
| यस्ते स्तनः शशयो यो | १०५४ |
| यस्ते हन्ति पतयन्तं | १३९५ |
| यस्त्वा कृत्याभिर्यस्त्वा | १४४५ |
| यस्त्वा देवि सरस्वति | १०६३ |
| यस्त्वा पिबति जीवति | ४२९ |
| यस्त्वा भ्राता पातेर्भूत्वा | १३९७ |
| यस्त्वा स्वपन्ती त्सरति | १३७४ |
| यस्त्वा स्वप्नेन तमसा | १३९८ |

| | |
|-------------------------------|------|
| यस्त्वा स्वप्ने निपद्यते | १३७३ |
| यस्त्वोवाच परेहीति | १६२२ |
| यस्मिन्समुद्रो यौर्भूमिः | ११४६ |
| यस्मिन् देवा अमृजत | २३३ |
| यस्मिन् विश्वानि भुवनानि | ९८८ |
| यस्मिन् वृक्षे सुपलाशे | १९८० |
| यस्मै त्वा यज्ञवर्धन मणे | १५११ |
| यस्य क्रूरमभजन्त दुष्कृतो | १९११ |
| यस्य जुष्टि सोमिनः | १६९६ |
| यस्य ते वासः प्रथमवास्यं | २३३५ |
| यस्य देवा अकल्पन्त | ११४७ |
| यस्य भीमः प्रतीकाशः | २७७ |
| यस्य वशास ऋषभासः | १६९५ |
| यस्य व्रतं पशवो यन्ति | १०४९ |
| यस्य व्रते पृथिवी ननमीति | ९७८ |
| यस्य हेतोः प्रच्यवते | २७४ |
| यस्या अनन्तो अहतः | १०६६ |
| यस्याज्जन प्रसर्पसि | ५८३ |
| यस्यास्त आसनि घोरे | १७९० |
| यस्येदं प्रदिशि यद् | १६९१ |
| यस्यौषधीः प्रसर्पथ | ३१२ |
| या अन्येषु रुभयष्टुः | ५३० |
| या आपो दिव्या उत | ८७६ |
| या ओषधयः सोमराज्ञीः | ३५२ |
| या ओषधीः पूर्वा जाता | ३०१ |
| या ओषधीः सोमराज्ञीर्बह्वीः | ३१८ |
| या ओषधीः सोमराज्ञीर्विष्टिताः | ३१९ |
| याः कृत्या आङ्गिरसीयाः | १४९९ |
| याः पार्श्वे उपर्षन्ति | २८६ |
| याः प्रवतो निवत उद्वतः | १०३५ |
| याः फलिनीर्या अफला | ३१५ |
| याः सीमानं विरुजन्ति | २८४ |
| याः सुपर्णा आङ्गिरसीः | ३४७ |
| याः सूर्यो रदिमभिराततान | ८७४ |
| या गुदा अनुसर्पन्ति | २८८ |
| या गृत्स्यन्निपन्नाशीः | १५५२ |
| या ग्रैव्या अपचितो | ५०८ |

| | | | |
|-----------------------------|-----------|---------------------------------|------------------|
| यां कल्पयन्ति बहुते | १६१६ | यावद् दाताभिमनस्येत | ११५१ |
| या जामयो वृष्ण इच्छन्ति | ३६३ | यावन्तो अस्याः पृथिवीं | १३११ |
| यां जमदग्निरखनद् | ४६३ | यावारेभाये बहु साकम् | १७१६ |
| यातुधानस्य सोमप | ७२९ | या शशाप शपनेन | ३८१, ७३६ |
| या ते धामान्युदमसि | २२७० | याश्वाहं वेद वीरुधो | ३४१ |
| या देवीः पञ्च प्रदिशो | १७५५ | याश्चेदमुपशृण्वन्ति | ३२१ |
| या नः पीपरदग्निना | १४१४ | यासां राजा वरुणो याति | ८७७, ९१७ |
| यां ते कृत्यां कूपेऽवदधुः | १६११ | यासां देवा दिवि कृण्वन्ति | ९१८ |
| यां ते चक्रुः कुरुनाकावजे | १६०५ | यामु राजा वरुणो यामु | ८७८ |
| यां ते चक्रुः पुरुषास्थे | १६१२ | यास्तिरश्चीरुपर्षन्ति | २८७ |
| यां ते चक्रुः राभायां | १६०९ | यास्ते धाना अनुकिरामि | २१४६, २१७६, २१९३ |
| यां ते चक्रुरमूलायां | १६०७ | यास्ते शतं धमनयो | ६२१ |
| यां ते चक्रुरामे पात्रे | ३८३, १६०४ | यास्ते शोचयो रंहयो | २०३३ |
| यां ते चक्रुरेकशफे | १६०६ | या हृदयमुपर्षन्ति | २८५ |
| यां ते चक्रुर्गार्हपत्ये | १६०८ | युजे वां ब्रह्म पूज्यं | २२७५ |
| यां ते चक्रुः सेनायां | १६१० | युनक्तु देवः सविता प्रजानन् | १९३८ |
| यां ते धेनुं निपृणामि | २०५४ | युवा सुवासाः परिवीत आगात् | २२६२ |
| यां ते बर्हिषि यां इमशाने | १६३३ | युष्मा इ द्रोऽवृणीत वृत्रतूर्ये | ९३८ |
| यां ते रुद्र इषुमास्यद् | ६२० | यूयमग्ने शंतमाभिस्तनूभिः | २१६० |
| यां त्वा गन्धर्वो अखनद् | १३३२ | ये अस्या ये अज्ञपा | ७८० |
| यान् वो नरो देवयन्तो | २२६४ | ये अग्निजा ओषधिजा अहीनां | ८३० |
| या पूर्वं पतिं विरवाथ | १२०९ | ये अग्निदग्धा ये अनग्निदग्धा | २०००, २०५९ |
| या बभ्रवो याश्च शुका | ३२४ | ये अप्रवः शशमानाः परेयुः | २०७१ |
| याभिः सोमो मोदते | ९०५ | ये अज्ञानि मदयन्ति | २९० |
| या मज्ज्ञो निर्धयन्ति | २८९ | ये अत्रयो अत्रिरसो नवग्वा | २१०३ |
| यामन्यामन्नुपयुक्तं बहिष्ठं | १६८७ | ये अपीषन् ये अदिहन् | ७९६ |
| या महती महोन्माना | १७८५ | ये अमृतं बिभृथो ये हर्वाषि | १७०९ |
| यामृषयो भूतकृतो | १४२२ | ये अन्नो जातान् मारयन्ति | १३८५ |
| यां मेधामृभवो विदुर्यां | १४२१ | ये उखिया बिभृथो ये वनस्पतीन् | १७१० |
| या रोहन्त्याङ्गिरसीः | ३४० | ये कीलालेन तर्पयथो ये घृतेन | १७११ |
| या रोहिणीर्देवत्याः | ४९१ | ये कुकुन्धाः कुकूरभाः | १३७७ |
| याङ्गिरसमवथो यावगस्ति | १७२२ | ये क्रिमयः पर्वतेषु वनेषु | ६९५ |
| यावतीः कियतीक्षेमाः | ३३६ | ये क्रिमयः शितिकक्षा | ७०० |
| यावती यावापृथिवी वरिष्णा | ७९१ | ये च जीवा ये च मृता | २२०७ |
| यावतीनामोषधीनां गावः | ३४८ | ये चित् पूर्व ऋतसाता | २०३९ |
| यावतीषु मनुष्या भेषजं | ३४९ | ये चेह पितरो ये च नेह | १९९९ |
| यावदग्निं पारस्वतं | १३४२ | ये तातृषुर्देवत्रा जहमाना | १९९५, २१३० |

| | |
|-------------------------------|------------------|
| ये ते नाभ्यौ देवकृते | ५०१ |
| ये ते पूर्वे परागता | २१४९ |
| ये ते सरस्व ऊर्मयो | १०४७ |
| येऽत्र पितरः पितरो | २२३६ |
| ये त्रयः कालकाजा | १५८९ |
| ये त्रिषप्ताः परियन्ति | १४१५ |
| ये त्वा कृत्वालेभिरे | १६२४ |
| ये दस्यवः पितृषु प्रविष्टा | २०५२ |
| ये देवा दिविषदे | १७४५ |
| ये देवा दिवि ष्ट ये पृथिव्यां | ५७ |
| ये देवानामृत्विजो ये च | २२५४ |
| येन ऋषयो बलमयोजयन् | १६८९ |
| येन कृशं वाजयन्ति | १३४४ |
| येन देवा अमृतमन्वाविन्दन् | १६९० |
| येन देवा असुराणाम् | ७६५ |
| येन देवा ज्योतिषा ग्राम् | १२६५ |
| ये नः पितुः पितरो ये | २०७३, २१२९, २१३७ |
| ये नः पूर्वे पितरः सोम्यासो | १२९४ |
| येन सोम साहन्त्यासुरान् | ७६४ |
| येन सोमादितिः पथा | ७६३ |
| येना ध्रुवस्यवध्वरथ | १८०० |
| येना सहस्रं वहसि | ११९९ |
| ये निस्त्राता ये परोत्ता | २०५८ |
| ये पूर्वे बभूवो यन्ति | १३८० |
| येभिः पाशैः परिवित्तो | १६७२ |
| ये मृत्यव एकशतं | ५३ |
| ये यक्षमासो अर्भका | १५६८ |
| ये युध्यन्ते प्रधनेषु | २०४१ |
| ये बभ्वध्वन्त्रं वहतुं | २३३६ |
| येषाषासः कष्कषासः | ७०२ |
| ये वृक्णासो अधि क्षमि | २२६५ |
| ये वो देवाः पितरो ये च | ५६ |
| ये शालाः परितृल्यन्ति | १३७६ |
| येऽध्रद्धा धनकाम्या | २६७ |
| येषां पश्चात् प्रपदानि | १३८१ |
| येषां प्रयाजा उत वानुयाजा | ५८ |

| | |
|------------------------------|------------|
| ये सत्यासो हविरदो | १९९६, २१३१ |
| ये सूर्य न तितिक्षन्त | १३७८ |
| ये सूर्यात् परिसर्पन्ति | १३९० |
| येऽस्माकं पितरस्तेषां | २२१८ |
| ये स्नाकर्यं मणिं जना | १४३७ |
| यो अक्ष्यौ परिसर्पति | ६९८ |
| यो अग्निः क्रव्यात् प्रविशे | २२३ |
| यो अज्ञयो यः कण्यो | १८७ |
| यो अग्रतो रोचनानां | १४२५ |
| यो अनिध्नो दीदयदस्त्वन्तर्यं | ९०४ |
| यो अन्तरिक्षेण पतति | ७६२ |
| यो अस्य समिधं वेद | १५२ |
| योगक्षेमं व आदाय | २३४५ |
| यो गर्भमोषधीनां | ९२२ |
| यो गिरिष्वजायया | ४३७ |
| यो जायमानः पृथिवीम् | १९३१ |
| यो दध्रे अन्तरिक्षे न महा | २१४१ |
| यो देवाः कृत्यां कृत्वा | ३८९ |
| यो न जीबोऽसि न मृतो | ६३३ |
| यो नः पाप्मन् न जहासि | १७७१ |
| यो नः शपादशपतः | १७७५, १७७६ |
| यो नो अग्निः पितरो हस्तु | २४९ |
| यो नो अग्निर्गार्हपत्यः | १५३८ |
| यो नो अश्वेषु वीरेषु | २३१ |
| योऽस्त्वमिरति तं सृजामि | १८०९ |
| यो ममार प्रथमो मर्त्यानां | २०९६ |
| यो मे राजन् युज्यो वा | ६२४ |
| यो यजाति यजात इत् | २२४० |
| यो व आपोऽमिराविवेश | १८१० |
| यो वर्धन ओषधीनां | ९८६ |
| यो वः शिवतमो रसः | ८८० |
| यो वा अभिभुवं नामर्तु | १२१८ |
| यो वा उद्यन्तं नामर्तु | १२१७ |
| यो वै कुर्वन्तं नामर्तु | १२१४ |
| यो वै नैदाघं नामर्तु | १२१३ |
| यो वै पिम्बन्तं नामर्तु | १२१६ |
| यो वै संयन्तं नामर्तु | १२१५ |

| | |
|---------------------------------|-----------|
| यो वो वृताभ्यो अकृणोदु | ९०७ |
| योऽस्मान् द्वेष्टि तमात्मा | १८६० |
| यो हरिमा जायान्यो | ६०३ |
| यौ ते वृत्तौ निर्ऋत इदम् | १५८६ |
| यौ ते बलास तिष्ठतः | १८६ |
| यौ ते मातोन्ममार्ज | १३६७ |
| यौ ते श्वानौ यम रक्षितारौ | २०३६ |
| यौ भरद्वाजमवथो यौ | १७२४ |
| यौ मेधातिथिमवथो यौ | १७२५ |
| यौ व्याघ्राववरूढौ जिघत्सतः | १५९ |
| यौ श्यावाश्वमवथो वक्ष्यश्वं | १७२३ |
| रक्षन्तु त्वामयो ये अपस्वन्ता | १६ |
| रधीव कशयाश्वौ अभिक्षिपन् | ९७६ |
| रमध्वं मे वचसे सोम्याय | १०२६ |
| रथि मे पोषं सवितोत वायुः | १७०३ |
| रात्रीभिरस्मा अहभिर्दशस्येत | १९६२ |
| रात्री माता नभः पिता | ४२८ |
| रिश्यपर्दी वृषदर्ती | ६७६ |
| रिश्यस्येव परीशासं | १५९३ |
| रुजन् परिरुजन् मृणन् | १८०४ |
| रुजश्च मा वेनश्च मा ह्रासिष्टां | १८२३ |
| रुद्रस्य मूत्रमस्यमृतस्य नाभिः | ५६१ |
| रुद्रो वो प्रीवा अशरैत् | ७३२ |
| रुन्दि दर्भं सपत्नान् मे | १५२५ |
| रूपरूपं वयोवयः | २२४८ |
| रेवतीरनःपुषः सिषासवः | ४५९ |
| रोहण्यसि रोहणी | ४२१ |
| रोहेम शरदः दातम् | १२२ |
| लोम लोत्रा सं कल्पया | ४२५ |
| वध्रयस्ते खनितारो | ७९७ |
| वनस्पतिरवसृष्टो न पाशैः | ३७२ |
| वनस्पतिः सह देवैर्न आगन् | १२८६ |
| वनस्पतेऽव सृजा रराणः | ३७४ |
| वनस्पते स्तीर्णमा सीद बर्हिः | १३०४ |
| वरणेन प्रव्यधिता | १४६१ |
| वरणो वारयाता अयं | १८२, १४५७ |

| | |
|-------------------------------------|-----------|
| वराहो वेद वीरुधं | ३४६ |
| वर्चसा मां समनक्स्वग्निर्मेधां | २०९४ |
| वर्चसा मां पितरः सोम्यासो | २०९३ |
| वर्चसो द्यावापृथिवी संप्रहणी | २२५१ |
| वर्म मह्यमयं ऋणिः | १४७९ |
| वर्म मे द्यावापृथिवी | १४४८ |
| वर्ष वनुष्वापि गच्छ देवान् | १३२४ |
| वषट् ते पूषन्नस्मिन्सूतौ | १४०५ |
| वसोर्यो धारा मधुना प्रपीना | १३१२ |
| वर्योभूयाय वसुमान् यज्ञो | १९०५ |
| वाक् म आसन्नसोः प्राणः | १५७ |
| वाजः पुरस्तादुत मभ्यतो | ३६१ |
| वाजो नः सप्त प्रदिशः | ३५९ |
| वाजो नो अद्य प्रसुवाति | ३६० |
| वात इव वृक्षान् नि मृणीहि | १६३२ |
| वाताज्जातो अन्तरिक्षाद् | १४२४ |
| वातत् ते प्राणमविदं | २९ |
| वातं ब्रूमः पर्जन्यम् | १७३९ |
| वायोः पूतः पवित्रेण | १७८७ |
| वायोः सवितुर्विदधानि | १६९९ |
| वारिदं वारयातै | ७९८ |
| वि ग्राम्याः पशव आरण्यैः | १७० |
| वि जिहीष्व बार्हत्सामे | १३५४ |
| वि जिहीष्व वनस्पते | १३९९ |
| वि ते भिनन्नि मेहनं | १४०९ |
| वि ते मदं मदावति | ८०१ |
| वि ते मुञ्चामि रशनां | १६८० |
| वि ते हनव्यां शरणि | ६४१ |
| वि देवा जरसावृतन् | १६८ |
| विद्य ते सर्वाः परिजाः पुरस्ताद् | १९१२ |
| विद्य ते स्वप्न जनित्रं ग्राह्याः | १८३५ |
| विद्य ते स्वप्न जनित्रं देवजामीनां | ६३४, १८४२ |
| विद्य ते स्वप्न जनित्रं निर्ऋत्याः | १८३८ |
| विद्य ते स्वप्न जनित्रं निर्भृत्याः | १८४० |
| विद्य ते स्वप्न जनित्रमभूत्याः | १८३९ |
| विद्य ते स्वप्न जनित्रं पराभूत्याः | १८४१ |
| विद्य वै ते जायान्म जानं | ५११ |

| | | | |
|-------------------------------|------------|----------------------------|---------|
| विद्या शरस्य पितरं चन्द्रं | ५७४ | वृषभोऽसि स्वर्गं ऋषीन् | १२६३ |
| विद्या शरस्य पितरं पर्जन्यं | ५७१, ६६४ | वृषा मतीनां पवते विचक्षणः | २२०८ |
| विद्या शरस्य पितरं मित्रं | ५७२ | वृषा मे रवो नभसा न | ८३६ |
| विद्या शरस्य पितरं वरुणं | ५७३ | वृषा वो अंशुर्न किला | २३०२ |
| विद्या शरस्य पितरं सूर्यं | ५७५ | वृष्ण ऊर्मिरसि राष्ट्रवा | १०९४ |
| विद्रधस्य बलासस्य | १८५ | वैयाघ्रो मणिर्बांधा | ३३७ |
| विभ्य दर्भं सपत्नान् मे | १५२२ | वैवस्वतः कृणवद् भागधेयं | १२६७ |
| विध्याम्यासां प्रथमा | ५०४ | वैश्वदेवीं वर्चस आ रभध्वं | २४४ |
| विभिन्दती शतशाखा | ४०० | वैश्वानरः पविता मा पुनातु | १६७५ |
| विमोक्षश्च मार्द्रपविश्व मा | १८२५ | वैश्वानरस्यैनं दंष्ट्रयोः | १८५८ |
| वि लपन्तु यातुधाना | ७६९ | वैश्वानराय प्रति वेदयामि | १६७४ |
| विवस्वान् नो अभयं कृणोतु | २१३९ | वैश्वानरे हविरिदं जुहोमि | २१८५ |
| विवस्वन् नो अमृतत्वे दधातु | २१४० | व्यवात् ते ज्योतिरभूद् | २६ |
| वि वृक्षान् हन्त्युत हन्ति | ९७५ | व्याकरोमि हविषाहमेती | २४८ |
| विश्वरूपं चतुरक्षं किमि | ७१० | व्याघ्रोऽह्यजनिष्ट वीरो | ८७ |
| विश्वरूपां सुभगाम् | ४०९ | व्यार्था पवमानो ऽ | १६९ |
| विश्वव्यचा घृतपृष्ठो भविष्यन् | १२९० | व्रजं कृणुध्वं स हि वो | २२५२ |
| विश्वान् देवानिदं ब्रूमः | १७५२ | व्रतेन त्वं व्रतपते समको | ५०६ |
| विश्वामित्र जमदग्ने वसिष्ठ | २०९९ | व्रीहिमतं यवमत्तम् | १६० |
| विश्वे देवा मरुत इन्द्रो | ८९ | शक्रवरी रथ पशवो | १८३४ |
| विश्वे देवा वसवो रक्षते० | ५५ | शङ्खेनामीवाममतिं | १४२६ |
| विश्वितं ते वस्तिबिलं | ५७८ | शं च नो मयथ नो | ८६२ |
| विष्टारिणमोदनं ये पचन्ति | १२२३, १२२४ | शणश्च मा जङ्गिडश्च | ७० |
| विष्णुर्युनक्तु बहुधा तपांसि | १९४२ | शतं या भेषजानि ते | ५६० |
| विष्णुर्योनिं कल्पयतु | १३५० | शतं वीरानजनयच्छतं | १५६९ |
| विष्णोः शर्मासि शर्भ | १२७१ | शतं वो अम्ब धामानि | ३०२ |
| विष्वक्वस्तस्माद् यक्षमा | २०३ | शतकाण्डो दुश्च्यवनः | १९२३ |
| विसत्पस्य विद्रधाय | २९१ | शतं च न प्रहरन्तो | १५७४ |
| विहृहो नाम ते पिता | ४६७ | शतं च मे सहस्रं च | ६६३ |
| वीदं मयमवासृपद् | ६०८ | शतं जीव शरदो वर्धमानः | ७५, २०८ |
| वीमां मात्रां मिमीमहे | २०६५ | शतधारं वायुमर्कं स्वर्विदं | २१७९ |
| वीमे थावापृथिवी इतो | १७१ | शतं ते दर्भं वर्माणि | १५३३ |
| वीहि स्वामाहुति जुषाणो | ५१६ | शतं तेऽयुतं हायन न् | ४७ |
| वृक्षं यद् गावः परिष्वजाना | ६६६ | शतपवित्राः स्वधया मदन्तीः | ८७३ |
| वृक्षं वृक्षमा रोदसि वृष० | ४३० | शतमहं दुर्णम्रिनां | १५७१ |
| वृत्रस्यासि कर्नानकः | ६१२ | शतवारो अनीनशाद् यक्षमान् | १५६६ |
| वृश्च दर्भं सपत्नान् मे | १५१९ | | |

| | |
|-----------------------------|------------|
| शतस्य धमनीनां | ५५७ |
| शतेन मा परि पाहि | ४०३ |
| शं त आपो धन्वन्याः | ९२९ |
| शं त आपो हैमवतीः | ९२८ |
| शं तप माति तपो अग्ने | २०६० |
| शं ते अभिः सहाग्निरस्तु | १६६३ |
| शं ते नीहारो भवतु | २१३८ |
| शं ते वातो अन्तरिक्षे | १६६४ |
| शं न आपो धन्वन्याः | ९६४ |
| शं नो देवी पृथिव्यर्थां | ४१६ |
| शं नो देवीरभिष्टय | ८८२ |
| शं नो भवन्स्वप | ५७० |
| शं नो वातो वातु | ६३८ |
| शप्तामेतु शपथो यः | ६७२ |
| शममयः समिद्धा आ | २१६२ |
| शममे पश्चात् तप शं | २१६१ |
| शमिता नो वनस्पतिः | ३७३ |
| शं मे परस्मै गात्राय | १९१ |
| शरदे त्वा हसन्ताय | ४८ |
| शरासः कुशरासो | ७७६ |
| शर्म यच्छत्वोषधिः | ४०८ |
| शल्याद् विषं निरवोचं | ७७४ |
| शिवः कपोत इषितो | १५८० |
| शिवा नः शान्तमा भव | १०९२ |
| शिवानम्रीनप्सुषदो हवामहे | १८१५ |
| शिव भिष्टे हृदयं तर्पयामि | ९६ |
| शिवास्ते सन्त्वोषधय उत | ४१ |
| शिवे ते स्तां थावापृथिवी | ४० |
| शिबेन मा चक्षुषा पश्यतापः | ९१९, १८१४ |
| शिबो वो गोष्ठो भवतु | २३२४ |
| शिवी ते स्तां ग्रीह्ययी | ४४ |
| शीर्षांस्ति शीर्षामयं | २७२ |
| शीर्षण्वती नस्वती कर्णिनी | १६१७ |
| शीर्षलोकं तृतीयकं | ४५६ |
| शीर्षामयमुपहृत्याम् | ४४६ |
| शुकेषु ते हरिमाणं | ४९२, ५४६ |
| शुक्लाः पूता योषितो यज्ञिया | १२४५, १२५५ |

| | |
|---------------------------------|------------|
| शुम्भनी थावापृथिवी | १७६८ |
| शुम्भन्तां लोकाः पितृषन्ना | २२१७ |
| शुष्यतु मयि ते हृदयम् | ६७८ |
| शृङ्गता राजकृता | १६१८ |
| शृङ्गाणिवेच्छृङ्गिणां सं दहध्रे | २२६८ |
| शृङ्गाभ्यां रक्षो नुदते | १५६७ |
| शृतं त्वा हव्यमुप सीदन्तु | १२५३ |
| श्याममयोऽस्य मांसानि | ११३३ |
| श्यामश्च त्वा मा शबलः | १४ |
| श्यामा सरूपं करणी | ५२४ |
| श्यावदता कुनस्त्रिना | ४०६ |
| श्राम्यतः पचतो विद्धि | १२५८ |
| श्रेष्ठमसि भेषजानां | ४५८ |
| श्वेवैकः कपिरिवैकः | ७२५ |
| षट् च मे षष्टिश्च मे | ६५८ |
| षष्ठ्यां शरत्सु निधिपा | १३०५ |
| स्व इन्द्रो जो यो गृहवे | २३१३ |
| स इद् व्याघ्रो भवत्यथो | १४४२ |
| स उत् तिष्ठ प्रेहि प्र प्रव | ४२६ |
| संयतं न वि ष्वरद् | ८१५ |
| सं राजानो अगुः समृणानि | १९१४ |
| सं बः सृजत्वर्थमा | २३२१ |
| संवत्सरं शशयाना | ९९४, १०१६ |
| संवन्नी समुष्पला | ६७९ |
| सं विशन्तिवह पितरः | २०५३ |
| सं वो गोष्ठेन सुषदा | २३२० |
| सं बोऽवन्तु सुदानव | १०१० |
| सं सं स्वन्तु नद्यः | २२४६ |
| सं हि शीर्षाण्यम्रं | ८९६ |
| स प्राधाः पाशान्मा मोचि | १८७१ |
| संकसुको विकसुको | २३० |
| सं क्रामतं मा जहीतं शरीरं | १४४ |
| संख्याता स्तोकाः पृथिवीं | १२९९ |
| सं गच्छस्व पितृभिः सं | १९७४, २१३६ |
| सचेतसौ ब्रह्मणो यौ | १७२१ |
| स जज्ञिडस्य महिमा | १५५५ |

| | |
|---------------------------------|------------|
| संजग्माना अभिभ्युषीः | २३२२ |
| संजीवा स्थ सं जीव्यासं | ९३५ |
| सत्यजितं शपथयावनीं | ३८१ |
| सत्यं चर्तं च चक्षुषी विश्वं | १२०३ |
| सत्याय च तपसे देवताभ्यो | १३१७ |
| स नः सिन्धुमिव नावाति | १७६४ |
| सनादमे मृणसि यातुधानान् | ७४८ |
| स नो रक्षतु जङ्घिडो | १५६२ |
| सं ते मज्जा मज्जा भवतु | ४२३ |
| सं ते क्षीर्णाः कपालानि | २९३ |
| सं ते हन्मि दता दतः | ८५१ |
| सपत्नहा शतकाण्डः सहस्वान् | १९३२ |
| सपत्नक्षयणं दर्भं द्विषतः | १५३५ |
| सप्त क्षरन्ति शिशवे मरुत्वते | १०८९, २२७९ |
| सप्त च मे सप्ततिश्च मे | ६५९ |
| सप्त च याः सप्ततिश्च | १६८३ |
| सप्त मेधान् पशवः पर्यगृह्णन् | १२८७ |
| सप्तर्षीन् वा इदं ब्रूमो | १७४४ |
| सप्तमयो विदुरन्यो अन्यं य | १३२१ |
| समं ज्योतिः सूर्येण | ३८८ |
| समस्मिन्लोकं समु देवयाने | १२७४ |
| समाचिनुष्वानुसंप्रयाक्षमे | १२६४ |
| स मा जीवीत् तं प्राणो | १८६८ |
| समानलोको भवति | १२१० |
| समानां मासामृतुभिर्ध्वा वयं | ६२ |
| समाप ओषधीभिः सम् | ९३९ |
| समाहर जातवेदो | ७४९ |
| समिद्धस्य श्रयमाणः पुरस्ताद् | २२६० |
| समिद्धो अग्न आहुत | २३४ |
| समिद्धो अग्ने समिधा समिन्धस्व | १२३२ |
| समिन्धते अमर्त्यं | २१९१ |
| समिन्धते संकसुकं स्वस्तये | २२७ |
| समिमां मात्रां मिमामहे | २०६८ |
| समीक्षयन्तु तविषाः सुदानवो | १००५ |
| समीक्षयस्व गायतो नभांसि | १००६ |
| समुत्पतन्तु प्रदिशो नभस्वतीः | १००४ |
| समुद्रज्येष्ठाः सलिलस्य मध्यात् | ८७५ |

| | |
|------------------------------|------------------|
| समुद्रस्य त्वा क्षित्या | ९५४ |
| समुद्राज्जातो मणिः | १४२८ |
| समुद्रे ते हृदयमस्वन्तः | ११०४ |
| स मृत्योः पङ्क्तिं पाशान्मा | १९०० |
| समौ चिद्धस्तौ न समं विविष्टः | २३१९ |
| सं बर्हिस्त्वं हविषा घृतेन | २२७४ |
| सं मामे वर्चसा सृज | ९६० |
| सं मा सिञ्चन्तु मरुतः | १४१ |
| स य एवं विदुष उपद्रष्टा | ११८० |
| स य ओदनस्य महिमानं | ११४९ |
| सरस्वति त्वमस्मां अविड्ढि | १०५५ |
| सरस्वति देवनिदो नि बर्हय | १०६१ |
| सरस्वति या सरथं ययाध | १०८४, २००९, २१९७ |
| सरस्वति व्रतेषु ते | १०९० |
| सरस्वती यां पितरो हवन्ते | १०८५ |
| सरस्वती देवयन्तो हवन्ते | १०८३, २००७, २१९५ |
| सरस्वतीमनुमतिं भगं | १७८० |
| सरस्वतीं पितरो हवन्ते | २००८, २१९६ |
| सरस्वत्याभि नो नेषि वस्यो | १०७२ |
| सरूपा नाम ते म ता | ५२३ |
| सरूपौ द्वौ विरूपौ द्वौ | ६९९ |
| स रेतोधा वृषभः शश्वतीनां | ९९० |
| सर्वाः समग्रा ओषधीः | ३४२ |
| सर्वानग्ने सहमानः सपत्नान् | २६२ |
| सर्वान्समागा अभिजित्य | १३०७ |
| सर्वान् देवानिदं ब्रूमः | १७५३ |
| सर्वेषां च क्रिमीणां | ७०८ |
| सर्वो वै तत्र जीवति | ५१ |
| स वावृधे नर्यो योषणासु | १०४५ |
| सवितः श्रेष्ठेन रूपेण | १३५७ |
| सवितुर्वः प्रसव उत्पुनामि | ९३७, ९४०, १०९७ |
| सस्रुषीस्तदपसो दिवा | २६८ |
| सहमानेयं प्रथमा | ४१७ |
| सहस्रणीथाः कवयो | २०४२ |
| सहस्रधामन् विशिखान् | ३९१ |
| सहस्रधारं शतधारमुत्समक्षितं | २१८६ |
| सहस्रपृष्ठः शतधारो अक्षितो | १२४८ |

| | | | |
|--------------------------------|------------|-------------------------------|----------|
| सहस्रवृक्षो वृषभो | ६१३ | सोमं मन्यते पपिवान् | ४७५ |
| सहस्राक्षेण शतवीर्येण | ७४, २०७ | सोम राजन्संज्ञानमा | १२५४ |
| सहस्राक्षो वृत्रहणा हुवे | १७१५ | सोमस्येव जातवेदो | ७५० |
| सहस्रार्धः शतकाण्डः | १९३३ | सोमाय पितृमते स्वधा | २२२२ |
| सहस्र नो अभिमातिं | १९२८ | सोमारुद्रा युवमेतानि | १७३१ |
| साकं यक्ष्म प्र पत | ३१३ | सोमारुद्रा वि बृहतं | १७३० |
| साकं सजातैः पयसा सह | १२३५ | सोमेनादित्या बलिनः | ४७४ |
| सा नो विश्वा अति द्विषः | १०६७ | सोमो मा विश्वेदेवैरुह्यन्त्या | २१११ |
| सिंहस्येव स्तनयोः सं | ३३८ | सोमो मा सौम्येनावतु | ५९९ |
| सिन्धुपत्नीः सिन्धुराज्ञाः | ९७३ | सोमो राजाधिपा मृडिता | १६३७ |
| सिन्धोर्गर्भोऽसि विष्णुतां | ६०६ | सोडरिष्ठ न मरिष्यसि | ५० |
| सिलाची नाम कानीनो | ४३५ | स्तरिह त्वद् भवति सूते | ९८७ |
| सीताः पर्शवः सिकता | ११३८ | स्तुषानमम आ वह | ७६७ |
| सीसे मलं सादयित्वा | २३६ | स्तुहि ध्रुतं गर्तसदं | २००६ |
| सीसे मृड्ढं नडे मृड्ढं | २३५ | स्तेगो न क्षामत्येषि | २००५ |
| सुकर्माणः सुकचो देवयन्तो | २१०५ | स्योनास्मै भव पृथिवि | २०४३ |
| सुक्षेत्रिया सुगातुया | १७५८ | स्त्राक्त्येन मणिन ऋषिणा | १४३८ |
| सुखं रथं युयुजे सिन्धुः | १०४४ | स्वधा पितृभ्यः पृथिवि | २२२८ |
| सुजातं जातवेदसम् | १६८८ | स्वधा पितृभ्यो अन्तरिक्ष | २२२९ |
| सुते अध्वरे अधि वाचमकृत | २३०६ | स्वधा पितृभ्यो दिवि | २२३० |
| सुन्वन्ति सोमं रथिरासो | २२९१ | स्वप्नु माता स्वप्नु पिता | ६१८ |
| सुपर्णसुवने गिरौ | ४३८ | स्वप्नं सुप्त्वा यदि | १४५८ |
| सुपर्णस्त्वा गरुमान् | ७९२ | स्वप्न स्वप्नाभिकरणेन | ६१९ |
| सुपर्णस्त्वान्वबिन्दत् | १५९१ | स्वर्गं लोकमभि नो | १२८८ |
| सुपर्णा वाचमकृतोप यवि | २२९७, २३२६ | स्वश्वा सिन्धुः सुरथा | १०४३ |
| सुपर्णो जातः प्रथमः | ५२१ | स्वस्तिदा विशां पतिः | १४५२ |
| सुषामंश्वाशुष | १८६२ | स्वस्ति मात्र उत पित्रे | १६६१ |
| सुश्रुतिश्च मोपश्रुतिश्च मा | १८९० | स्वस्त्यद्योषसो दोषसश्च | १८३३ |
| सुश्रुतौ कर्णौ भ्रश्रुतौ | १८१९ | स्वाक्तं मे द्यावापृथिवी | ५९० |
| सूर्यस्यैव भगवतो हि | १९२० | स्वादुष्किलायं मधुमौ | २०१४ |
| सूर्ये चन्द्रो गच्छ | २०३१ | स्वादेऽपितो मधो पितो | ११०९ |
| सूर्ये चन्द्रस्य स्थ राष्ट्रदा | १०९६ | स्वायसा असयः सन्ति | १६३५ |
| सूर्यमृतं तमसो प्राणाः | १६६९ | स्वासदसि सूषा अमृतो | १८२९ |
| सूर्ये विषमा सजामि | ७८३ | स्वासस्ये भवतमिन्द्रवे | २१२२ |
| सूर्यो माहः पात्वभिः | १८३१ | हंसा इव भ्रेणिशो | २२६७ |
| सूषा म्यूर्णोतु वि योनिं | १४०७ | हतासो अस्य वेशसो | ७०७, ७१३ |
| सोम एकेभ्यः पवते | २०३८ | | |

| | | | |
|----------------------------|---------------|--------------------------|----------|
| हतास्तिरक्षिराजयो | ८१० | हिरण्यवर्णा सुभगा | १७८६ |
| हतो येवाषः किमीणां | ७०३ | हिरण्यवर्णे सुभगे शुष्मे | ४३४ |
| हतो राजा किमीणाम् | ७०६, ७१२ | हिरण्यवर्णे सुभगे सूर्य | ४३३ |
| हस्ताभ्यां दशशास्त्राभ्यां | ५५४ | हिरण्यशृङ्ग ऋषभः | १५७० |
| हरिणस्य रघुण्यदो | १९२ | हिरण्यस्रगयं मणिः | १४८१ |
| हरिमाणं ते अङ्गेभ्यो | २८० | हिरण्यानामेकोऽसि | १४२९ |
| हिनोता नो अश्वरं | ९११ | हृदयात् ते परि क्लोन्नो | २१२, २९६ |
| हिमवतः प्र स्रवन्ति | ९७१ | हेतिः पक्षिणी न | १५८१ |
| हिरण्ययाः पन्थानः | ४४१ | होता यक्षद् वनस्पतिमभि | २२७२ |
| हिरण्ययी नौरचरद् | ४११, ४४०, ४५३ | नो । यक्षद् वनस्पतिः | ३७५, ३७६ |
| हिरण्यवर्णाः शुचयः | ९१६ | ह्वयामि ते मनसा | २०४५ |

॥ आयुर्वेद-प्रकरणं समाप्तम् ॥



दैवत-संहिता ।

(७)

रुद्रदेवता ।

संपादक

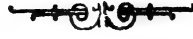
श्रीपाद दामोदर सातवळेकर,
स्वाध्याय-मण्डल, भोंध (जि० सातारा)

संवत् २०००, शके १८६५, सन १९४३

मुद्रक और प्रकाशक- वसंत श्रीपाद सातवळेकर, B. A.

भारतमुद्रणालय, स्वाध्याय-मंडल, औंध, (जि. सातारा.)

रुद्रदेवताका परिचय ।



‘रुद्र’ के विषयमें निरुक्तका मत ।

‘निघण्टु’ नामक वैदिक कोश में अ० ३।१६ में ‘स्तोतृनामों’ में ‘रुद्र’ शब्दका निर्देश किया गया है । इससे ‘रुद्र’ शब्दका ‘स्तोता’ स्तुति करनेवाला, ऐसा अर्थ निघण्टुकार के मतसे है । इसलिये निघण्टुकारके मतानुसार ‘रुद्र’ शब्द मनुष्यवाचकही प्रतीत होता है । परंतु निरुक्तकार यास्काचार्यने इस ‘रुद्र’ देवताका परिगणन मध्यस्थानीय देवगण (नि० अ० १०।१) में किया है ।

अथातो मध्यस्थाना देवताः ॥ १ ॥ रुद्रो
रौतीति सतः रोरूयमाणो द्रवतीति वा,
रोदयतेर्वा, ‘यद् रुद्रोत्तद्रुद्रस्य रुद्रत्वम्’ इति
काठकम् ‘यद् रोदीत्तद्रुद्रस्य रुद्रत्वम्’ इति
हारिद्रविकम् ॥

(निरुक्त, देवतकाण्ड १०।१।१-६)

“ अब मध्यम स्थान अर्थात् अंतरिक्ष स्थानके देवोंका विचार करना है । ‘रु’ अर्थात् शब्द करना, इस अर्थका यह शब्द है, किंवा शब्द करता हुआ पिघलता है, ऐसा इसका अर्थ है । रौनेके कारण इसको रुद्र कहा है, ऐसा काठक और हरिद्रविक शाखा संप्रदायवालोंका मत है । ” अर्थात् ‘रुद्र’ देवता अंतरिक्षमें है । मेघोंमें रहकर यह गर्जनारूप शब्द करता है, और गर्जना करता हुआ, मेघोंको द्रवरूप बनाकर वृष्टि कराता है । काठक और हारिद्रविक शाखा-संप्रदाय-वालोंका मत ऐतिहासिक है; देखिए—

(१) स किल पितरं प्रजापतिमिषुणा विध्यन्त-
मनुशोचन्नरदत् तद्रुद्रस्य रुद्रत्वम् ॥

(२) यद् रोदीत्तद्रुद्रस्य रुद्रत्वम् ॥

(नि० भाष्य १०।१।६)

“ वह रुद्र अपने प्रजापति पिताको बाणसे विद्ध करता हुआ देखकर रोया, इसलिये उसका नाम रुद्र हुआ । ” यह मत ऐतिहासिकोंका है । तथा—

एक एव रुद्रोऽवतस्थे न द्वितीयः ।

असंख्याताः सहस्राणि ये रुद्रा अधिभू म्याम् ।

.....इति ॥

(नि० १।१३)

“ एक मंत्र कहता है कि ‘एकही रुद्र है, वह अ-द्वितीय है’ । परंतु दूसरे मंत्रमें कहा है कि ‘पृथ्वीमें असंख्य और हजारों रुद्र हैं ।

इस विषय में निरुक्तकार कहते हैं—

तासां महाभाग्यादेकैकस्या अपि बहूनि नाम-
धेयानि भवन्ति ॥ १ ॥तत्र संस्थानैकत्वं
संभोगैकत्वं चोपेक्षितव्यम् ।..... ॥
तत्रैतन्नरराष्ट्रमिव ॥ ५ ॥ (नि० दै. ७।२।५)

“ उन देवताओंमें एकएक देवताका महत्त्व विशेष होनेके कारण एक-एक देवताके अनेक नाम होते हैं ।परंतु उन का स्थानसे और भोगसे एकत्व देखना चाहिए । जैसा मनुष्योंका राष्ट्र । ”

अर्थात् एकएक देवताके विशेष गुणोंके कारण अनेक नाम हुआ करते हैं । नाम अनेक होनेपर भी भिन्न देवता नहीं होते हैं । अनेक शब्दोंसे एकही देवताका बोध होता है । क्योंकि उनके स्थान और भोगकी एकता देखकर उनकी विविधतामें एकता देखनी चाहिए । जैसा राष्ट्रमें रंग-रूप-जातिके कारण अनेक प्रकारके लोग होनेपर भी उन सबमें एक राष्ट्रीयत्व होता है, उसी प्रकार अनेक देवताओंके ‘स्थानके और भोगके एकत्व’ के कारण उन अनेकोंमें एकत्व मानना उचित है ।

इसलिये यद्यपि किसी मंत्रमें ‘एकही रुद्र है’ ऐसा वचन आया अथवा दूसरे किसी मंत्रमें ‘हजारों रुद्र हैं’ ऐसा विधान

आगया, तथापि इतनेसे ही उनमें भेद है, ऐसा नहीं सिद्ध होता । यह उक्त निरुक्तवचनोंका तात्पर्य है ।

निरुक्तकार और क्या क्या कहते हैं, यह पहिले यहां देखेंगे और पश्चात् अन्य मतोंका विचार करेंगे—

अग्निरपि रुद्र उच्यते ॥ (नि. १०।७।२)

“अग्निको भी रुद्र कहते हैं ।” इस प्रकार ‘रुद्र’ शब्दका ‘अग्नि’ ऐसा अर्थ यहां निरुक्तकारने दिया है ।

‘रुद्र’ शब्दका ‘परमात्मा, परमेश्वर’ ऐसा अर्थ स्पष्टतापूर्वक यद्यपि निरुक्तकारने नहीं दिया, तथापि ‘एकही देवताके अनेक नाम देवताके महत्त्वके कारण हुआ करते हैं ।’ ऐसा कहकर सूचित किया है कि परमात्माके अनेक नामोंमें ‘रुद्र’ भी एक नाम है; अर्थात् ‘रुद्र’ शब्दका परमेश्वरपर अर्थ भी हो सकता है ।

स्थानके एकत्वके कारण, भिन्न वर्णन होने पर भी, एकत्वकी कल्पना करनेकी सूचना निरुक्तकार यास्काचार्य पूर्वोक्त वचनमें देते हैं । सर्वव्यापक परमात्मा जैसा पृथ्वी पर है, वैसाही अंतरिक्षमें और ऊपर शूलोकमें भी व्यापक होनेसे उसका स्थान सर्वत्र है; इसलिये सब स्थानके देवताओंके सब शब्द उस एक अद्वितीय महा देवताके वाचक हो सकते हैं । इस तर्कशास्त्रसे हम निरुक्तकारका भाव जान सकते हैं । यही भाव श्वेताश्वतर उपनिषद्में विलकुल स्पष्ट है । देखिए—

रुद्रके विषयमें उपनिषत्कारोंकी संमति ।

श्वेताश्वतर उपनिषद्में ‘एक रुद्र है,’ इस विषयमें निम्न मंत्र आया है—

**एको ह रुद्रो न द्वितीयाय तस्थुर्य इमांल्लोकानी-
शत ईशनीभिः ॥ प्रत्यङ् जनास्तिष्ठति सं-
चुकोचान्तकाले संसृज्य विश्वा भुवनानि
गोपाः ॥ २ ॥** (श्वे. उ. ३।२)

यही मंत्र निरुक्तभाष्यकारने निम्न प्रकार दिया है—

**एक एव रुद्रोऽवतस्थे न द्वितीयो रणे निघ्नन्
पृतनासु शत्रून् ॥ संसृज्य विश्वा भुवनानि
गोप्ता प्रत्यङ् जनांसंचुकोचान्तकाले ॥**

(नि. १।१४ दुर्गाचर्यटीका)

एक एव रुद्रो न द्वितीयाय तस्थे ॥ (तै.सं. १।८।६।१)

“एकही रुद्र है, दूसरा रुद्र नहीं है । वह शत्रुओंको युद्धमें पराजित करता है । सब भुवनोंको उत्पन्न करके, उस सब

विश्वका संरक्षण करता है और अंतकालमें सबका संकोच (प्रलय) करता है ।”

ऊपर दिये हुए श्वेताश्वतर मंत्रका अर्थ—“एकही रुद्र है, वह किसी दूसरेकी सहायताकी अपेक्षा नहीं करता । वह अपनी शक्तियोंसे इन सब लोकोंको स्वाधीन रखता है । और प्रत्येक मनुष्यके अंदर रहता है । यह संरक्षक प्रभु सब विश्वको उत्पन्न करने और पालन करनेके पश्चात् अंतकालमें सबको संकुचित करता है ।” तथा—

**एको रुद्रो न द्वितीयाय तस्मै य इमांल्लोका-
नीशत ईशनीभिः ॥** (अथर्व-शिर. ५)

रुद्रमेकत्वमाहुः शाश्वतं वै पुराणम् ॥ (अथर्व-शिर. ५)
**यो अग्नौ रुद्रो यो अण्स्वन्तर्य ओषधीर्वीरुध
आविवेश ॥ य इमा विश्वा भुवनानि चकल्पे
तस्मै रुद्राय नमोऽस्त्वग्नये ॥** (अथर्व-शिर. ६)

“एक ही रुद्र है । वह किसी दूसरेकी सहायता नहीं चाहता । जो इन सब लोक-लोकान्तरोंको अपनी शक्तियोंद्वारा स्वाधीन रखता है । “रुद्र” एकही है ऐसा कहते हैं । वह शाश्वत और प्राचीन है ।” “जो रुद्र अग्नि, जल, ओषधी, वनस्पति, आदिमें व्यापक है और जो इन सब भुवनोंको बनाता है, उस एक अद्वितीय तेजस्वी रुद्रके लिये नमस्कार है ।” तथा—

**यो देवानां प्रभवश्चोद्भवश्च विश्वाधिपो रुद्रो
महर्षिः ॥ हिरण्यगर्भं जनयामास पूर्वं स नो
बुद्ध्या शुभया संयुनक्तु ॥ ४ ॥** (श्वेता. उ. ३।४)
**यो देवानां प्रभवश्चोद्भवश्च विश्वाधिपो रुद्रो
महर्षिः ॥ हिरण्यगर्भं पश्यति जायमानं स
नो बुद्ध्या शुभया संयुनक्तु ॥ ११ ॥** (श्वेता. उ. ४।१२)

“जो सब देवताओंको जन्म देता है, जो सर्व ब्रह्मा और सब विश्वका अधिपति है, जिसने पहिले हिरण्यगर्भ को उत्पन्न किया था, वह एक प्रभु रुद्र हम सबको शुभ बुद्धि देवे ।”

इस प्रकार ‘रुद्र’ शब्दसे ‘एक परमात्मा’ का बोध उपनिषदोंमें लिया है । इससे सिद्ध है कि ‘रुद्र’ शब्द परमात्म-वाचक है । यद्यपि इस समयका कोई कोशकार ‘रुद्र’ शब्दका ‘परमात्मा’ ऐसा अर्थ नहीं देता, तथापि कृष्णयजुर्वेदीय श्वेताश्वतर उपनिषद्के उक्त वचनद्वारा उस शब्दका परमात्म-वाचक अर्थ निःसंदेह सिद्ध है ।

रुद्रके एकत्वके विषयमें वेदकी संमति ।

‘रुद्र’ के एकत्वके विषयमें निरुक्तकारने दिया हुआ मंत्र पूर्व स्थलमें दिया ही है । वह आजकल किसी संहितामें नहीं मिलता । इसलिये अनुमान है कि वह किसी अन्य शाखाग्रंथमें पठित होगा और निरुक्तकारके समय वह शाखाग्रंथ उपलब्ध होगा । रुद्रके एकत्वके विषयमें वेदमें ये वचन हैं—

स धाता स विधर्ता स वायुर्नभ उच्छ्रितम् । ... ३

सोऽर्यमा स वरुणः स रुद्रः स महादेवः । ... ४

तमिदं निगतं सहः स एष एक एकवृदेक एवा॥१२॥

एते अस्मिन्देवा एकवृतो भवन्ति १३ (अथर्व. १३।४।२)

“वह ही धाता, विधाता, वायु, अर्यमा, वरुण, रुद्र और महादेव है । उसीसे यह आकाश ऊपर हुआ है, यह सब महान् शक्ति उसी में है । वह एकही है । वह एक सर्वत्र व्यापता है । वह निश्चयसे एक है । सब देव उसमें एक जैसे होते हैं ।” इसमें बताया है कि एक सर्वव्यापक सर्वाधार आत्मतत्त्वका नाम भी रुद्र है ।

सर्वव्यापक रुद्रदेव ।

एकही रुद्र सर्वत्र व्यापक है, इस आशयको निम्न मंत्र प्रकट कर रहा है—

यो अग्नौ रुद्रो यो अन्वन्तर्य ओषधीर्वीरुध

आविशेः॥ य इमा विश्वा भुवनानि चाकल्पे

तस्यै रुद्राय नमोस्त्वग्नये ॥ (अथर्व. ७।१२।११)

“ जो एक रुद्र देव अग्नि, जल, औषधि, वनस्पति आदि पदार्थोंमें व्याप्त है और जो सब भुवनोंकी (चाकल्पे) बना सकता है, उस (अग्नये रुद्राय) एक तेजस्वी रुद्रदेवके लिये नमन है । ”

यह मंत्र बिलकुल स्पष्ट है और इससे रुद्रदेवकी सर्वव्यापकता सिद्ध होती है । जगत् की रचना करनेवाला, सब पदार्थोंमें व्यापक और सबका उपास्य जो देव है, उसीका उल्लेख यहां ‘रुद्र’ नामसे किया है । रुद्र शब्दके एकवचन होनेके कारण वह एक ही है, ऐसा सिद्ध होता है । तथा सर्वव्यापक जो होता है, वह एकही हो सकता है । इससे भी उसका एकत्व सिद्ध हो सकता है । रुद्रदेवका ही सब कुछ है, ऐसा अथर्ववेदीय रुद्र-सूक्तके निम्न मंत्रमें कहा है—

तव चतस्रः प्रदिशस्तव द्यौस्तव पृथिवी तवेद-

मुप्रोर्वन्तरिक्षम् । तवेदं सर्वमात्मन्वद् यत्प्राणत्

पृथिवीमनु ॥१०॥ (अथर्व. ११।२।१०)

“हे रुद्र ! इन चार दिशाओंमें तथा ध्रुव, पृथ्वी और इस

बड़े अंतरिक्षमें जो कुछ है, वह सब तेरा ही है । जो कुछ (आत्मन्-वत्) आत्मायुक्त अर्थात् प्राण धारण करनेवाला है, जो इस पृथ्वी पर जीवनरूपसे रहता है, वह सब तेरा ही है । ”

इस तरह ‘रुद्र’ का सामर्थ्य और प्रभुत्व चारों ओर सब दिशा विदिशाओंमें है, ऐसा वर्णन इस मंत्रमें है । इससे सिद्ध होता है कि उस जगन्नियन्ता परमात्माकाही यह ‘रुद्र’ नाम है ।

केवल इतनेही प्रमाणोंसे ‘परमात्मा’ वाचक ‘रुद्र’ शब्द है, ऐसा सिद्ध होगा । तथापि परमात्माके अनेक गुण वेदमंत्रोंद्वारा ‘रुद्र’ के साथ मिलते हैं वा नहीं, यह हम अब देखते हैं—

जगत् का पिता रुद्र ।

‘पिता’ का अर्थ ‘रक्षक और अपने वीर्यद्वारा जन्म देने-वाला’ ऐसा होता है । ‘रुद्र’ सब भुवनोंका पिता है, ऐसा निम्न मंत्रमें कहा है—

भुवनस्य पितरं गीर्भिराभी रुद्रं दिवा वर्धया

रुद्रमक्तो ॥ बृहन्तमृष्वमजरं सुपुंसमृधग्युवेम

कविनेषितासः । (ऋ. ६।४९।१०)

“(दिवा अक्तौ) दिनमें और रात्रिमें (आभिः गीर्भिः) इन वचनोंके साथ (भुवनस्य पितरं) सब सृष्टिके पिता (रुद्रं) बलवान् रुद्र देवकी (वर्धया) बधाई करो । उनके महत्त्वकी प्रशंसा करो । उस (बृहन्तं) महान् (ऋष्वं) श्रेष्ठ ज्ञानी तथा (अ-जरं) जीर्ण अथवा क्षीण न होनेवाले और (सु-सु-मं) अत्यंत उत्तम विचारशील, रुद्रदेवताकी, (कविना इषितासः) बुद्धिवानोंके साथ उन्नतिकी इच्छा करनेवाले हम सब (ऋधक् युवेम) विशेष प्रकारसे उपासना करेंगे । ”

इस मंत्रमें वह ‘रुद्र’ देव ‘महान्, ज्ञानी, अजर, अमर और सुविचारी’ है, ऐसा कहा है । ये उनके गुण परमात्माके गुणोंके साथ मिलनेवालेही हैं, तथा ‘भुवनस्य पितरं रुद्रं’ ये शब्द रुद्रदेवका वास्तविक स्वरूप बताते हैं । ‘सृष्टिका पिता रुद्र है ।’ जगत्का पिता जो अजर, अमर, सर्वज्ञ और सर्वशक्तिमान् है, वह परमात्माके सिवा दूसरा कौन हो सकता है? इस प्रकार इस मंत्रका ‘रुद्र’ देव उस अद्वितीय परमात्माका ही नाम है, ऐसा दीखता है । इस जगदीशका वर्णन निम्न मंत्रमें देखने योग्य है—

सब सृष्टिका स्वामी रुद्र ।

स्थिरेभिरंगैः पुरुरूप उग्रो बभ्रुः शुक्रेभिः

पिपिशे हिरण्यैः॥ ईशानादस्य भुवनस्य भूरेर्न

वा उ योषद्गुद्रावसुर्यम् ॥ (ऋ. २।३३।९)

“(स्थिरेभिः अंगैः) दृढ अवयवोंसे (पुरु-रूपः) अनेक पदार्थोंको आकार देनेवाला (उग्रः) महान् प्रबल और (बभ्रुः) तेजस्वी रुद्र (शुक्रेभिः हिरण्यैः) शुद्ध तेजोंके साथ (पिपिशे) शोभता है। (अस्य भुवनस्य) इस सब सृष्टिके (भूरेः ईशानात् रुद्रात्) महान् स्वामी रुद्रदेवसे (असुर्यं) उसकी महान् जीवनशक्ति (न वा उ योषत्) कभी पृथक् नहीं होती।”

यह ‘रुद्र’ देव जगत्को निर्माण करके सब पदार्थोंको रंग, रूप और आकार देता है। वह अत्यंत तेजस्वी और सर्व शक्तिमान् है। अपनेही विविध तेजोंसे और पवित्रताओंके कारण वह शोभायमान हो रहा है। वह सब जगत्का ईश्वर है और उससे उसकी शक्ति कभी पृथक् नहीं होती। यह मंत्र ‘रुद्र’ देवताके सब शंकाओंको दूर कर सकता है। ‘भुवनस्य ईशानात् रुद्रात् असुर्यं न योषत्।’ जगत् के स्वामी रुद्रदेवसे उसकी दिव्य शक्ति कभी पृथक् नहीं होती। इस वाक्यसे रुद्र देवताके वास्तविक मूल स्वरूपका पता लग सकता है।

भुवनस्य पिता रुद्रः ॥ (ऋ० ६।४९।१०)

भुवनस्य ईशानः रुद्रः ॥ (ऋ० २।३३।९)

उक्त दो मंत्रोंके ये दो वाक्य एकही आशयको बतानेवाले हैं, इसका यदि पाठक विचार करेंगे, तो वेदमंत्रोंके शब्दोंकी विशेष योजनाका पता लग सकता है। यह वाक्य यदृच्छासे नहीं बने हैं, विशेष हेतुपूर्वकही यह शब्दप्रयोग हुआ है, ऐसा प्रतीत होता है। इससे अगला मंत्र यहां अब देखिए।

सर्वशक्तिमान् रुद्र ।

अर्हन् विभर्षि सायकानि धन्वार्हन्निष्कं यजतं विश्वरूपम् ॥ अर्हन्निदं दयसे विश्वमभ्वं न वा ओजीयो रुद्र त्वदास्ति ॥ (ऋ० २।३३।१०)

“(अर्हन्) योग्य होनेके कारण रुद्र सब शस्त्रास्त्रोंको धारण करता है। रुद्र योग्य होनेके कारण सब विश्वको रूप और तेज देता है। योग्य होनेके कारणही इस (अभ्वं विद्वं) महान् विश्व पर (दयसे) दया करके उस सबका संरक्षण करता है। हे रुद्र ! (त्वत्) तेरेसे कोई भी अधिक (ओजीयः) बलवान् (न वा अस्ति) नहीं है।”

इस मंत्रमें ‘त्वत् ओजीयो न वा अस्ति।’ तेरेसे अधिक शक्तिशाली कोई भी नहीं है, अर्थात् तूही सबसे अधिक बलवान् है। इससे सर्वशक्तिमान् रुद्रदेव परमात्माही है, ऐसा दिखाई दे रहा है। अब निम्न लिखित मंत्र देखिए। इसमें रुद्रदेव

सब जनताका राजा है, ऐसा कहा है—

गुहा-निवासी रुद्र ।

**स्तुहि श्रुतं गर्तसदं जनानां राजानं भीममुपह-
हत्नुमुग्रम् ॥ मृडा जरित्रे रुद्र स्तवानो अन्यम-
सस्ते नि वपन्तु सेन्यम् ॥ (अथर्व० १८।१।४०)**

“(उग्रं भीमं) उग्र और शक्तिमान्, (उप-हत्नुं) प्रलय-कर्ता, (श्रुतं) ज्ञानी, (गर्त-सदं) सबके अंदर रहनेवाला, (जनानां राजानं) सब लोकोंका राजा रुद्र है, उसकी (स्तुहि) स्तुति करो। हे रुद्र ! तेरी (स्तवानः) प्रशंसा होनेपर (जरित्रे) उपासकको तू (मृडा) सुख दे। (ते सेन्यं) तेरी शक्ति (अस्मत् अन्यं) हम सबको बचाकर दूसरे दुष्टका (निवपन्तु) नाश करे।”

इस मंत्रमें जनानां राजानं रुद्रं ये शब्द विशेष महत्त्व रखते हैं। सब लोगोंका एक राजा रुद्र है।

गर्त-सदं } = निहितं गुहा सत् । (यजु० ३२।८)
गुहाऽऽहितः } = परमं गुहा यत् । (अथर्व० २।१।१;२)
गुहा-चरः }
गुहा-शयः } = गुणं ब्रह्म ।

उक्त शब्दोंके साथ ‘गर्त-सद’ शब्द देखने और विचार करनेसे इस शब्दके गूढ़ आशयका पता लग सकता है। ‘गुहाऽऽहित’ और ‘गर्त-सद’ ये दोनों शब्द एकही अर्थ बता रहे हैं। ‘गर्त’ शब्दका ‘गुहा’ ऐसा अर्थ ऊपर दिया ही है। अस्तु। इस मंत्रसे भी ‘रुद्र’ का पूर्वोक्त भावही दृढ़ हो रहा है। तात्पर्य ‘रुद्र’ शब्दका ‘सर्वव्यापक परमात्मा’ ऐसा एक अर्थ निःसंदेह है। इस मंत्रका ऋग्वेदका पाठ यहां देखिए—

**स्तुहि श्रुतं गर्तसदं युवानं मृगं न भीममुपह-
हत्नुमुग्रम् ॥ मृळा जरित्रे रुद्र स्तवानोऽन्यं ते
अस्मान्नि वपन्तु सेनाः ॥ (ऋ० २।३३।११)**
इसका अर्थ स्पष्ट है।

अपने अंतःकरणमें रुद्रकी खोज ।

अन्तरिच्छन्ति तं जने रुद्रं परो मनीषया ॥

गृभ्णन्ति जिह्वया ससम् ॥ (ऋ० ८।७२।३)

“मुमुक्षुजन (तं रुद्रं) उसी रुद्रको (जने परः अन्तः) मनुष्यके अत्यंत बीचके अंतःकरणमें (मनीषया) बुद्धिद्वारा जानना (इच्छन्ति) चाहते हैं। (जिह्वया) जिह्वासे (ससं) फलको (गृभ्णन्ति) लेते हैं।”

मुमुक्षु जन जिह्मसे सात्त्विक पदार्थोंको लेते हैं । 'सस' शब्दका अर्थ 'फल, धान्य, अनाज, शाकभाजी, ओषधि, वनस्पति' इतनाही है । जिह्मसे जिस अन्नका ग्रहण करना उचित है, उसका इस मंत्रने यहां उपदेश किया है । फल, धान्य, अनाज, शाकभाजी, आदि पदार्थही खाने चाहिए । इस प्रकारका सात्त्विक आहार करनेवाले मुमुक्षु लोग उस रुद्र देवको अर्थात् परमात्माको मनुष्यके अतःकरणके अत्यन्त गहरे स्थानमें अपनी सात्त्विक विचारशक्तिके द्वारा हूँ हूँ कर देखनेकी इच्छा करते हैं ।

अनेक रुद्रोंमें व्यापक 'एक रुद्र' ।

पूर्वांक्ति प्रमाणोंसे 'रुद्र' एक है और वह सर्वत्र व्यापक है, यह बात सिद्ध हो चुकी । अब अनेक रुद्रोंका वर्णन, जो वेदमें आता है, उसका विचार करना चाहिए ।

रुद्रं रुद्रेषु रुद्रियं हवामहे ॥ (ऋ. १०।६।४८)

“(रुद्रेषु) अनेक रुद्रोंमें रहनेवाले (रुद्रियं रुद्रं) प्रशंसा करने योग्य एक रुद्रकी (हवामहे) हम सब पूजा करते हैं ।”

एक रुद्रदेव अनेक रुद्रोंमें रहता है, अर्थात् यह एक रुद्र सबमें व्यापक है और अनेक रुद्र व्याप्य हैं । अनेक रुद्र अणु हैं और यह एक रुद्र महान् है । इस एक रुद्रके द्वारा अनेक रुद्र प्रेरित होते हैं, अर्थात् अनेक रुद्र प्रेर्य हैं और यह एक रुद्र सबका प्रेरक है । तथा—

(१) शं नो रुद्रो रुद्रेभिर्जलापः ॥ (ऋ. ७।३।५।६)

(२) रुद्रो रुद्रेभिर्देवो मृळयाति नः ॥ (ऋ. १०।६।९।३)

(३) रुद्रं रुद्रेभिरावहा बृहन्तम् ॥ (ऋ. ७।१०।४)

“(१) अनेक रुद्रोंके साथ एक रुद्र हम सबका कल्याण करे ।

(२) अनेक रुद्रोंके साथ एक रुद्रदेव हम सबको सुख देवे । (३) अनेक रुद्रोंके साथ रहनेवाले एक महान् रुद्रकी पूजा करो ।” ये सब मंत्र उक्त भाव बता रहे हैं । अनेक छोटे रुद्रोंमें एक महान् रुद्र की प्रेरणा होती है, इस आशयका ध्वनि निम्न मंत्रमें देखने योग्य है—

तदिदुद्रस्य चेतति यक्षं प्रलेषु धामसु ॥

मनो यत्रा वि तद्दधुर्विचेतसः ॥ (ऋ. ८।१३।२०)

“(रुद्रस्य तत् यक्षं) रुद्र देवकी वह एक महान् प्रेरक शक्ति (प्रलेषु धामसु) अनेक सनातन स्थानोंमें (इत् चेतति) निश्चयसे चेतना देती है । (यत्र) जिस शक्तिमें (वि-चेतसः) विशेष ज्ञानी लोक (तत् मनः) अपना वह मन (वि-दधुः) विशेष

प्रकार धारण करते हैं ।”

इस मंत्रमें 'रुद्र' की 'यक्ष' शक्तिका वर्णन है । यह शक्ति सब को सतत चेतना दे रही है ।

एक रुद्रके पुत्र अनेक रुद्र हैं ।

**रुद्रस्य ये मीळुषः सन्ति पुत्रा यांश्चो नु दाधृ-
विर्भरध्यै ॥ विदे हि माता महो मही वा
सेत्पृश्निः सुभ्वे गर्भमाधात् ॥ ३ ॥** (ऋ० ६।६।१३)

“(मीळुषः रुद्रस्य) एक दानशूर रुद्रदेवके (ये पुत्राः) जो अनेक रुद्र संज्ञकपुत्र हैं, (यान् च उ नु) और जिनका निश्चयसे (भरध्यै) भरण पोषण पालन करनेकी सब शक्ति वह एक अद्वितीय रुद्र (दाधृविः) धारण करता है । (महः) इस महान् रुद्रकी शक्तिको (सा मही माता विदे) वह मूल प्रकृतिरूपी बड़ी माता जानती है, अथवा प्राप्त करती है और (सु-भ्वे) जीवोंकी उत्तम अवस्था होनेके लिये (सा पृश्निः) वह विविध रंगरूपवाली माता (इत्) निश्चयसे (गर्भमाधात्) जीवोंको गर्भमें धारण करती है ।”

इस मंत्रमें अनेक रुद्र इस एक रुद्रके पुत्र हैं, ऐसा स्पष्ट कहा है । इस लिये परमपिता परमात्मा ही रुद्र है और सब जीव उसके पुत्र हैं, ऐसाही इसका अर्थ मानना उचित है ।

अनंत प्राणी अनेक रुद्र हैं ।

ये अनंत रुद्र जीव हैं, ये प्राणी अर्थात् जीवन धारण करनेवाले हैं । ये मर्य, मर्त्य हैं । इनका शरीर धारण होनेके कारण जन्म होता है और मृत्युभी होती है । यद्यपि जन्ममरण शरीरका धर्म है, तथापि इन रुद्रोंकी शरीरके साथ स्थिति होनेके कारण, शरीरके साथ इनका जन्म और मरण हुआ, ऐसा कहा जाता है । अर्थात् शरीरके धर्मोंका इनके ऊपर आरोपण होता है । ये 'मर्त्य' हैं, ऐसा निम्न मंत्रमें कहा है—

**ते जशिरे दिव ऋष्यास उक्षाणो रुद्रस्य मर्या
असुरा अरेपसः ॥ पावकासः शुचयः सूर्या
इव सत्वानो न द्रप्सिनो घोरवर्षसः ॥**

(ऋ० १।६।४।२)

“(ते) वे अनंत रुद्र (ऋष्यासः) उच्च (दिवः उक्षाणः) दिव्य बलसे युक्त (असु-राः) जीवनशक्तिके प्रकाशनेवाले, (अ-रेपसः) निष्कलंक और (मर्याः) मर्त्य हैं । वे उस (रुद्रस्य जशिरे) एक रुद्रसे प्रकट होते हैं । वे (पावकासः)

अमिके समान पवित्र (शुचयः) तेजस्वी और शुद्ध (सूर्य इव सत्त्वानः) सूर्यके समान सत्त्वशाली और (द्रप्तिनः न) वर्षा करनेवाले मेघोंके समान (घोर-वर्षसः) सुंदर और विशाल रूप धारण करनेवाले हैं ।”

इस मंत्रमें रुद्रसंज्ञक जीवके गुणधर्म बताये हैं। इनमें ‘मर्त्य’ शब्द आया है। प्राणी, शरीरधारी, मरणधर्मवाला, ऐसा उस शब्दका अर्थ है। जिन अनंत रुद्रोंमें एक महान् रुद्र व्यापक हो रहा है वे अनंत रुद्र ‘अनंत मर्त्य’ प्राणी हैं; यह भाव इस मंत्रसे प्रकट हो रहा है। ‘जनानां राजा रुद्रः’ ऐसा एक वचन पूर्व स्थलमें आया है। उसके साथ इस मंत्रका आशय ‘मर्त्यानां पिता रुद्रः’ देखने योग्य है। एक ही भाव किस प्रकार भिन्न भिन्न प्रकारसे बताया गया है, यह यहां देखने योग्य है। इसी विषयका स्पष्टीकरण करनेवाले निम्न लिखित मंत्र यहां देखिए—

क ई व्यक्ता नरः सनीळा रुद्रस्य मर्या अधा
स्वश्वाः ॥१॥ न किर्होषां जनुंषि वेद ते अंग
विद्रे मिथो जनित्रम् ॥ २ ॥ (ऋ० ७।५६)

“(अध) अजी! (स्वश्वाः = सु-अश्वाः) उत्तम भोग भोगनेवाले, (स-नीळाः) एक आश्रयसे रहनेवाले और (व्यक्ताः नरः) अलग अलग दीखनेवाले पुरुष (के) कौन हैं? वे (रुद्रस्य मर्याः) रुद्रके मर्त्य पुत्र हैं। (एषां जनुंषि) इनके जन्मका वृत्तांत (न किः वेद) कोईभी नहीं जानता? हे (अंग) प्रिय! (ते मिथः) वेही परस्पर एक दूसरेका (जनित्र) जन्म (विद्रे) जानते हैं।”

इस मंत्रमें ‘रुद्रस्य मर्याः’ रुद्रके मर्त्य पुत्रोंका वर्णन फिर आया है। इनमें अलग अलग व्यक्तित्व अर्थात् व्यक्तित्व, पृथक्त्व, इकाई है, इस लिये इनको ‘व्यक्त’ अर्थात् ‘व्यक्ति-भाव’ से युक्त कहा है। प्रकृति और पुरुष ऐसे जो दो भेद हैं, उनमें ये ‘पुरुष’ हैं, इसलिये मंत्रमें इनको ‘नर’ कहा है। एक ईश्वरके आश्रयसे ये रहते हैं, इसलिये इन सबको ‘स-नीळाः’ (स-नीडाः) कहा है। यहां—

यत्र विश्वं भवत्येक-नीडम् ॥ (यजु० ३२।८)

यत्र विश्वं भवत्येक-रूपम् ॥ (अथर्व० २।१।१)

इन मंत्रोंके ‘एक-नीड’ और ‘एक-रूप’ ये शब्द देखने योग्य हैं। ‘स-नीळ, स-नीड, एक-नीड, एक-रूप’ ये सब शब्द ‘सबका एकही आश्रयस्थान है,’ ऐसा बता रहे हैं।

इस विचारसे पता लग जायगा कि (१) अनंत रुद्रोंका जन्म, (२) उनको पुत्र कहना, (३) उनकी माताका वर्णन, (४) उनके गर्भधारणका वर्णन यहां है।

रुद्रके पुत्र मरुत् हैं। मरुतोंके विषयमें श्री सायणाचार्य लिखते हैं कि ‘मनुष्यरूपा वा मरुतः। पूर्वं मनुष्याः संतः पश्चात् सुकृतविशेषेण ह्यमरा आसन्।’ मरुत् पहिले मनुष्यही होते हैं, परंतु उत्तम प्रशस्त कर्म करनेके कारण जो अमर बनते हैं (ऋ. सायणभाष्य, मं. १०, सू. ७७, मं. २) इस प्रकार मरुतोंके मनुष्यरूप होनेमें शंकाही नहीं है। मनुष्योंके अतिरिक्त भी मरुतोंका अर्थ है, उसका विचार मरुतदेवताके ग्रंथमें किया गया है। अब मरुतोंके मनुष्य होनेके विषयमें वेदका प्रमाण देखिए—

अग्निश्रियो मरुतो विश्वकृष्टय आत्वेष्टमुग्रमव
ईमहे वयम् ॥ ते स्वानिनो रुद्रिया वर्षेनिर्णिजः
सिंहा न हेषकृतवः सुदानवः ॥ (ऋ. ३।२६।५)

“(ते रुद्रियाः मरुतः) वे रुद्रके पुत्र मरुत् (अग्नि-श्रियः) अग्निके समान तेजस्वी, (स्वानिनः) उत्तम शब्द बोलनेवाले, (सिंहा न हेषकृतवः) सिंहके समान गंभीर शब्द करनेवाले, (वर्षे-निर्णिजः) ऋष्टिके द्वारा शुद्ध होनेवाले, (सु-दानवः) उत्तम दान करनेवाले, (विश्वकृष्टयः) सर्व-मनुष्य हैं। (वयं) हम सब (त्वेष्टं उग्रं अवः) तेजस्वी शौर्यमय संरक्षण उनसे (आ ईमहे) प्राप्त करते हैं।”

इस मंत्रमें ‘विश्व-कृष्टि’ शब्द अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। ‘कृष्टि’-शब्दका अर्थ—(१) मनुष्यमात्र, मानवजाति है। (२) देशनिवासी राष्ट्रीय जनता। ‘विश्व-कृष्टिः’ = (विश्व+जन=सर्व+जन) सब मनुष्य, मनुष्यमात्र, मनुष्यजाति।

यहां कई शंका करेंगे कि मानवजातिके विषयका उल्लेख वेदमें कहां है? वैदिक धर्म ‘वैयक्तिक’ होनेके कारण उसमें ‘सार्व-जनिक भाव’ नहीं होगा। इस शंकाका उत्तर देनेके लिये यहां सार्वजनिक भाव बतानेवाले कुछ वैदिक शब्दोंका उल्लेख करना चाहिए। देखिए निम्न शब्द—

(१) विश्व-कृष्टिः = (सर्व-मनुष्य) = मानवजाति।

(२) विश्व-चर्षणिः = (सर्व-जन) = सब लोक, मनुष्य, मनुष्यमात्र, मानवजाति।

(३) विश्व-जनः = (सर्व-जन) = मानवजाति।

(४) विश्व-मनुष्यः = (सर्व-मनुष्य) = मनुष्यमात्र।

(५) विश्व-मानुषः = (सर्व-मनुष्य) = मनुष्यमात्र।

(६) विश्वा-नरः = (सर्व-नर) = सब मनुष्य ।

(७) पंच-जनाः = ज्ञानी, शूर, व्यापारी, कारीगर और साधारण लोक । ये पांच प्रकारके लोक मिलकर सब जनता होती है ।

इस तरह सार्वजनिक भावोंकी विस्तारपूर्वक कल्पना वेदमेंही स्पष्ट है । वैदिक धर्म 'सार्वजनिक भावका धर्म' ही है ।

प्रस्तुत मंत्रमें 'विश्व-कृष्टि' शब्द 'मानव-जाति' का भाव बता रहा है । मरुतोंका अथवा रुद्र-पुत्रोंका अर्थात् छोटे छोटे असंख्य रुद्रोंका स्वरूप 'विश्व-कृष्टि' शब्दने बताया है । इस प्रकार अनेक रुद्र ये अनंत मानवप्राणी हैं, यह बात सिद्ध हो गई । 'मर्त्य' शब्दसे साधारण मर्त्य अर्थात् मरणधर्मवाले प्राणिमात्र, ऐसीभी भाव निकल सकता है । इसका निश्चय अब करेंगे ।

अनेक रुद्रोंकी संख्या ।

इन अनंत रुद्रोंकी संख्याके विषयमें वाजसनेय यजुर्वेदमें निम्न लिखित मंत्र देखने योग्य हैं—

असंख्याताः सहस्राणि ये रुद्रा अधि भूम्याम् ॥

(यजु. १६।५४)

“असंख्यात हजार (ये रुद्राः) जो रुद्र (भूम्यां अधि) पृथ्वी पर हैं ।” अर्थात् ये अनेक रुद्र अनंत हजार इस पृथ्वीपर हैं । प्राणियोंकी संख्या किसी समयमें भी पृथ्वीपर निश्चित नहीं कही जा सकती । क्योंकि प्राणियोंकी संख्या अनेक कारणोंसे बढ़ भी सकती है और घट भी सकती है । इस हेतुसे यहां निश्चित संख्या नहीं कही, परंतु 'अनंत हजार' ऐसीही कहा है । इससे वेदके शब्दोंका अद्भुत महत्त्व ज्ञात हो सकता है ।

यजुर्वेद वाजसनेय संहिता अ० १६ में रुद्रोंके कई नाम लिखे हैं । यह अध्याय काण्व संहितामें १७ वां है । और तैत्तिरीय संहितामें यही रुद्राध्याय ४।५।१।१ में है । अब इन रुद्रोंका वर्गीकरण करना है । परंतु इससे पूर्व 'रुद्र' शब्दका भाष्यकार आचार्योंका किया हुआ अर्थ अवश्य देखना चाहिए । क्योंकि उन अर्थोंको देख करहि हम रुद्रोंके वर्ग बना सकते हैं ।

✓ रुद्रके विषयमें श्रीसायणाचार्यजीका मत ।

श्री सायणाचार्यजीने चारों वेद और सब मुख्य ब्राह्मणोंपर भाष्य किया है । इनका भाष्य विशेषतया याज्ञिक पद्धतिके अनुसार है । इस लिये इनका भाष्य देखनेसे याज्ञिक-संप्रदायवालोंका मत

रुद्र प्र० २

ज्ञान हो सकता है । अब देखिए श्री सायणाचार्यजी 'रुद्र' के विषयमें क्या कहते हैं—

ऋग्वेद-भाष्य ।

१. रुद्रस्य कालात्मकस्य परमेश्वरस्य । (ऋ. ६।२८।७)
२. रुद्राय कुराय भग्नये । (ऋ. १।२७।१०)
३. रुत् दुःखं तद्धेतुभूतं पापं वा । तस्य द्रावयितारौ रुद्रौ । संग्रामे भयंकरं शब्दयन्तौ वा ॥

(ऋ. १।१५८।१)

४. रुद्राणां.....प्राणरूपेण वर्तमानानां मरुतां । यद्वा । रोदयितृणां प्राणानां । प्राणा हि शरीरास्त्रिगताः सन्तो बंधुजनान् रोदयन्ति ॥ (ऋ. १।१०।१।७)

५. रुद्राणां रोदनकारिणां शूरभटानां वर्तन्निर्माणौ घाटी-रूपो पयोस्तौ रुद्रवर्तनी ॥ (ऋ. १।३।३)

६. रोदयन्ति शत्रूनि रुद्राः । (ऋ. ३।३।२।३)

७. रुद्रौ संग्रामे रुदन्तौ । (ऋ. ८।२६।५)

८. हे रुद्र ! जरादिगोहस्य प्रेक्षणेन मंहर्तरेव ।

(ऋ० १।१६९।१)

९. रुद्रियं सुखं । (ऋ. २।११।३)

१०. रुद्रियं रुद्रसंबन्धि भेषजं । (ऋ. १।४३।२)

अथर्ववेद-भाष्य ।

१. रोदयति सर्वं अंतकाले इति रुद्रः संहर्ता देवः । (अथर्व. १।१९।३)

२. रौति शब्दायने तारकं ब्रह्म उपदिशतीति रुद्रः । तथा च जाबालश्रुतिः । 'अत्र हि जन्तोः प्राणे-पूत्कामस्तु रुद्रस्तारकं ब्रह्म व्याचष्टे ॥ (जाबा. उ. १)

(अथर्व. २।२७।६)

३. तस्मै जगत्स्रष्ट्रे सर्वं जगदनुप्रविष्टाय रुद्राय ।

(अथर्व. ७।९२।१)

४. रुत् दुःखं दुःखहेतुर्वा तस्य द्रावको देवो रुद्रः परमेश्वरः । (अथर्व. १।१२।३)

५. सर्वप्राणिनो मामनिष्ट्वा विनश्यन्ति इति स्वयं रौति रुद्रः । (अथर्व. १८।१।४०)

६. स्वसेवकानां दुःखस्य द्रावकत्वं (रुद्रस्य) ।

(अथर्व. १८।१।४०)

७. महाबुभुक्षं रुद्रं ॥ (अथर्व. १८।१।४०)

८. रुद्रस्य हिंसकस्य देवस्य ॥ (अथर्व. ६।५९।३)

९. रुद्रस्य ज्वराभिमानिदेवस्य हेतिः आयुधं ।
(अथर्व. ४।२।१७)
१०. रुद्रः रोदयिता शूलाभिमानि देवः ।
(अथर्व. ६।२०।१)
११. रोदयति उपतापेन अश्रूणि मोचयति इति रुद्रो
ज्वराभिमानि देवः । (अथर्व. ६।२०।२)
१२. रोदयति शत्रूनि रुद्रः । (अथर्व. ७।९२।१)
१३. रुद्रा रोदकाः । (अथर्व. १९।९।१०)
१४. रुद्राः रोदयितारः अंतरिक्षस्थानीया देवाः ।
(अथर्व. १९।११।४)
१५. रुद्रः पशूनां अभिमन्ता पीडाकरो देवः ।
(अथर्व. ६।१४।११)

ये ' रुद्र ' शब्दके श्री सायणाचार्यजीके किये हुए अर्थ हैं। अब यजुर्वेदके भाष्यमें श्री उवटाचार्य और श्री महीधरा-
चार्य क्या कहते हैं, देखिए—

श्री उवटाचार्यजीका 'रुद्र' विषयक मत ।

१. रुद्रः स्तोतृभिः । (यजु. भाष्य. ३८।१६)
२. रुद्रवर्तनी रुग्णवर्तनी ॥ (य. १९।८२)
३. रुद्रौ शत्रूणां रोदयितारौ । (य. २०।८१)
४. रुद्रैः धीरैः ॥ (य. ११।५५)

श्री महीधराचार्यजीका 'रुद्र' संबंधी मत ।

१. रुद्रस्य शिवस्य । (वा. यजु. भाष्य १६।५०)
२. रुद्राय शंकराय । (य. १६।४८)
३. रुद्रः दुःखं द्रावयति रुद्रः ।
रवणं रुद्रं ज्ञानं राति ददाति ।
पापिनो नरान् दुःखभोगेन रोदयति । (य. १६।१)
४. रुद्रस्य क्रुदेवस्य । (य. ११।१५)
५. रुद्रः दुःखं द्रावयति नाशयति रुद्रः । (य. १६।२८)
६. रुद्रो दुःखनाशकः । (य. १६।३९)
७. रोदयति विरोधिनां शत्रुं इति रुद्रः । (य. ३।५७)
८. रुद्रौ शत्रूणां रोदयितारौ । (य. २०।८१)
९. रुद्रैः धीरैः बुद्धिमद्भिः । (य. ११।५५)
१०. रुद्रैः स्तोतृभिः । (य. ३८।१६)
११. रुद्रवर्तनी रुग्णवर्तनी भिषजो अश्विनौ ।
(य. १९।८२)

१२. रुद्रमक्षणे चौर्ये वा प्रवर्त्य, रोगमुत्पाद्य, जनान्
प्रमत्ति तेभ्यः पृथ्वीस्थेभ्यो अस्मायुजेभ्यो रुद्रेभ्यः ॥

(य. १६।६६)

१३. कुवातेनाज्ञं विनाश्य चातुरोगं वा उत्पाद्य जनान्
प्रमत्ति । (य. १६।६५)

श्री स्वामी दयानंद सरस्वतीजीका रुद्रके विषयमें मत ।

ऋग्वेद-भाष्य ।

१. रुद्राय परमेश्वराय जीवाय वा ॥ ॥ रुद्रशब्देन
त्रयोऽर्था गृह्यन्ते । परमेश्वरो जीवो वायुश्चेति । तत्र परमे-
श्वरः सर्वज्ञतया येन यादृशं पापकर्म कृतं तत्फलदानेन रोद-
यिताऽस्ति । जीवः खलु यदा मरणसमये शरीरं जहाति
पापफलं च भुंक्ते तदा स्वयं रोदिति । वायुश्च शूलादि-
पीडा कर्मणा कर्मनिमित्तः सन् रोदयितास्ति । अत एते
रुद्रा विज्ञेयाः । (ऋग्वेद. १।४३।१)

२. रुद्रः दुःखनिवारकः । (ऋ. २।३३।७)
३. रुद्रः दुष्टानां भयंकरः । (ऋ. ५।४६।२)
४. रुद्रः दुष्टदण्डकः । (ऋ. ५।५१।१३)
५. रुद्रः सर्वरोगदोषनिवारकः । (ऋ. २।३३।९)
६. रुद्रस्य रोगाणां द्रावकस्य निःसारकस्य ।

(ऋ. ७।५६।१)

७. रुद्रः रोगाणां प्रलयकृत् । (ऋ. २।३३।६)

८. रुद्रः कुपथ्यकारिणां रोदयिता । (ऋ. २।३३।४)

९. रुद्रस्य प्राणस्य वर्तनिः मार्गः ययोस्तौ रुद्रवर्तनी ।

(ऋ. १।३३।३)

१०. रुद्रं शत्रुरोद्धारं । (ऋ. १।११।४।४)

११. रुद्रस्य शत्रूणां रोदयितुर्महावीरस्य । (ऋ. १।८५)

१२. रुद्राणां प्राणानां दुष्टान् श्रेष्ठान् रोदयति ।

(ऋ. १०।१०।१।७)

१३. रुद्र ! रुतः सत्योपदेशान् राति ददाति तसंजुहौ ।

(ऋ. १।११।४।३)

१४. रुद्रः अधीतविद्यः । (ऋ. १।११।४।११)

१५. रुद्राय सभाष्यक्षाय । (ऋ. १।११।४।६)

१६. रुद्रः न्यायाधीशः । (ऋ. १।११।४।२)

१७. रुद्रिणं रुद्रस्येदं कर्म । (ऋ. १।४३।२)

यजुर्वेद-भाष्य ।

१. रुद्रः परमेश्वरः। चतुश्चत्वारिंशद्वर्षकृतमहाचर्यो विद्वान्
धा । (यजु. ४।२०)
२. रोदयत्यन्यायकारिणो जनान् स रुद्रः । (य. ३।५७)
३. दुष्टानां रोदयिता विद्वान् रुद्रः । (य. ४।२१)
४. रुद्रः शत्रूणां रोदयिता शूरवीरः । (य. ९।३९)
५. रुद्रस्य शत्रुरोदकस्य स्वसेनापतेः । (य. ११।१५)
६. रुद्रः जीव । (य. ८।५८)
७. रुद्राः एकादशप्राणाः । (य. २।५)
८. रुद्राः प्राणरूपा वायवः । (य. ११।५४)
९. रुद्रा बहवन्तो वायवः । (य. १५।११)
१०. रुद्राः सजीवा भजीवाः प्राणाद्यो वायवः ।
(य. १६।५४)
११. रुद्रा मध्यस्थाः । (य. १२।४४)
१२. रुद्रा रुद्रसंज्ञका विद्वांसः । (य. ११।५८)
१३. रुद्रः राजवैद्यः । (य. १६।४९)
१४. रुद्रस्य सभेशस्य । (य. १६।५०)

इस तरह भाष्य में अर्थ हैं ।

यजु० अ० १६ में रुद्रवाचक अनेक पद आये हैं । इनकी संख्या लगभग २४० है ।

(१) विद्व-रूप, (२) विद्युत्, (३) वायु, (४) वृक्ष, (५) गृत्स, (६) मंत्रिन्, (७) भिषक्, (८) सभा, (९) सभापति, (१०) स्थ-पति, (११) सेनानी, (१२) सेना, (१३) इषु-कृत्, (१४) रथी, (१५) वणिज्, (१६) किरिक, (१७) तक्षन्, (१८) परि-चर, (१९) स्तेन, (२०) प्रतरण, (२१) श्वन्, (२२) तल्प्य.

ये सब रुद्र ही हैं—(१) सर्वव्यापक ईश्वर, (२) बिजुली, (३) वायु, (४) वृक्ष, (५) विद्वान्, (६) दिवाण, (७) वैद्य, (८) सभा, (९) सभापति, (१०) राजा, (११) सेना-पति, (१२) सेना, (१३) शस्त्र बनानेवाला, (१४) वीर, (१५) बनिया, (१६) किसान, (१७) बर्हई, (१८) नौकर, (१९) चोर, (२०) धोखेबाज, (२१) कुता, (२२) खटमल, इन सबको यहां रुद्रही कहा है, इस सबमें 'रुद्रत्व' है यह निश्चित है ।

'रोदयति इति रुद्रः' (जो दूसरोंको रलाता है, वह रुद्र है) यह रुद्र शब्दका एक अर्थ है । दूसरोंको रलानेका धर्म रुद्रमें है, यह बात इस अर्थसे सिद्ध होती है । रलानेका तात्पर्य

कष्ट अथवा दुःख देना है । देखिए—

- (१) रोदयति शत्रून् इति रुद्रः महा-वीरः ।
- (२) रोदयति दुष्टान् इति रुद्रः न्यायाधीशः ।
- (३) रोदयति धनिकान् इति रुद्रः चोरः ।
- (४) रोदयति निद्राक्रान्तान् इति रुद्रः तल्प-कीटः ।
- (१) शत्रुओंको रलानेके कारण शूरको रुद्र कहते हैं ।
- (२) दुष्टोंको रलानेके कारण न्यायाधीशको रुद्र कहते हैं । (३) धनिकोंको रलानेके कारण चोरको रुद्र कहते हैं । (४) सोने-वालोंको रलानेके कारण खटमलको रुद्र कहते हैं ।

उक्त चार विग्रहोंमें क्रमशः '(१) शत्रून्, (२) दुष्टान्, (३) धनिकान्, (४) निद्राक्रान्तान् ।' इन चार पदोंका अध्याहार अर्थात् कल्पना की है । और उस कल्पनाके अनुसार 'रुद्र' शब्दके चार भिन्न भिन्न अर्थ किये हैं । जहां जैसा पूर्वापर संबंध होगा, वहां वैसा अर्थ लेना उचित है ।

उक्त चार आर्थोंमें 'रलानेका धर्म' सबमें समान है । यही यहां 'रुद्रत्व' है । 'रोदयितृत्वं रुद्रत्वं' रलानेका धर्म हि रुद्रपन है, ऐसा हम यहां कह सकते हैं । जहां जहां 'रलानेका गुण' होगा, वहां वहां रुद्रत्व होगा, यह इस विवरण-का तात्पर्य है ।

इस प्रकार अन्य स्थानोंमें भी समझना चाहिए । यह बात स्पष्ट है कि इस अर्थमें 'स्वयं दुःखका अनुभव करना रुद्रपनका लक्षण' है । दूसरोंको रलाना अथवा स्वयं रोना ये दोनों रुद्रके लक्षण हैं । इन दोनों अर्थोंको लेनेसे पूर्वोक्त रुद्रवाचक अनेक शब्दोंमेंसे कई शब्दोंका मूल आशय खुल जाता है और इस बातका निश्चय होता है, कि इनको रुद्र क्यों कहा गया है ।

'रुद्र' के इतने ही लक्षण नहीं हैं । 'रुद्रं ज्ञानं तत् ददाति इति रुद्रः' जो ज्ञानको उपदेशद्वारा देता है, वह रुद्र होता है । इस अर्थको लेनेसे 'ज्ञानी, उपदेशक, गुरु, व्याख्यानदाता' ये रुद्र हैं, ऐसा प्रतीत होगा । पूर्वोक्त शब्दोंमें 'अधिवक्ता' शब्द इसी अर्थका प्रकाश करनेवाला है । 'श्रुत, गृत्स, मंत्रिन्' ये भी शब्द इसी भावको वतानेवाले हैं । 'ज्ञानदातृत्वं रुद्रत्वं' दूसरोंको उपदेश करनेका रुद्रका धर्म है, ऐसा इस अर्थसे सिद्ध होता है ।

'रुद्रं दुःखं द्रावयति विनाशयति इति रुद्रः' । रुद्र अर्थात् दुःख, उसका जो नाश करता है, वह रुद्र कहलाता है । 'क्षत्र' शब्दका अर्थ 'क्षतात् त्रायते' जो दुःखसे बचाता है,

ऐसा होता है । यह रुद्रका एक अर्थ है ।

रुद्र+द्र= दुःखको दूर करनेवाला ।

क्षत्+त्र= दुःखसे बचानेवाला ।

ये दोनों शब्द बिल्कुल समान अर्थवाले हैं। इसीलिये क्षत्रिय-वाचक शब्द रुद्रके लिये आये हैं । इस बातको पूर्वोक्त वीरवर्गमें पाठक देख सकते हैं ।

‘रुद्रं रोगं राति ददाति इति रुद्रः रोगोत्पादकः॥’ जो रोगोंको उत्पन्न करता है, उसको रुद्र कहते हैं । बुरी हवा, सड़ा हुआ जल, दुर्गन्धयुक्त भूमि, कुपथ्य, आदि सब इस अर्थके कारण रुद्र होते हैं । ‘रुत्’ शब्दके दुःख और रोग ऐसे अर्थ कोशोंमें हैं । रोग उत्पन्न करना यह रुद्रका कार्य कई मंत्रोंमें वर्णन किया है, उनमेंसे एक मंत्र यहां देखिए—

येऽन्नेषु विविध्यन्ति पात्रेषु पियतो जनान् ॥

(यजु. अ. १६।६२)

‘ (ये) जो रुद्र (अन्नेषु) अन्नोंमें और (पात्रेषु) बर्तनोंमें प्रविष्ट होकर (पियतः जनान्) जल पीनेवाले मनुष्योंको (विविध्यन्ति) अनेक प्रकारके रोग उत्पन्न करते हैं ।’ यह रुद्रका वर्णन विशेष प्रकारसे देखने योग्य है । इसी मंत्रके भाष्य देखिए—

श्री सायणाचार्य— ये रुद्रा भक्षेष्ु भुज्यमानेषु स्थिताः सन्तो जनान् विविध्यन्ति, विशेषेण ताडयन्ति । धातुवैषम्यं कृत्वा रोगान् उत्पादयन्ति इत्यर्थः । तथा पात्रेषु पात्रस्थक्षीरोदकादिषु स्थिताः सन्तः क्षीरादिपानं कुर्यान्तो जनान् विविध्यन्ति । भक्षोदकभोक्तारो व्याधिभिः पीडनीया इति भावः ॥ (काण्वयजु. १।७।१६)

श्री महीधराचार्य— (पूर्ववत्)

श्री उवटाचार्य— ये अन्नेषु अवस्थिताः विविध्यन्ति अतिशयेन विध्यन्ति ताडयन्ति । येषामयमधिकारः भक्षस्य भक्षयितारो व्याधिभिर्गृहीतव्या इति इ० ॥

उक्त आचार्य-मतका तात्पर्य— ये रुद्र अन्न और पानीमें प्रविष्ट होकर उस अन्नको खानेवाले और उस पानीको पीनेवाले लोगोंमें रोग उत्पन्न करते हैं ।

रोग उत्पन्न करना रुद्रोंका कर्म है । रोगजन्तुओंका यह वर्णन है । ‘रोग-जन्तु’ अन्नेके द्वारा और जलके द्वारा शरीरमें प्रविष्ट होकर शरीरमें नाना प्रकारके रोग उत्पन्न करते हैं, यही भाव उक्त मंत्रका है । इसीलिये रोगबीजाँका नाम रुद्र हुआ है । रोगजन्तु किस प्रकारके होते हैं और कहाँ रहते हैं,

इस बातका ज्ञान पूर्वोक्त अध्यायमें ‘जन्तुवर्ग’ के रुद्रवाचक शब्दोंके अर्थोंका विचार करनेसे स्पष्टतया हो सकता है ।

तात्पर्य इस प्रकार रुद्रोंके लक्षण हैं । यहां नमूनेके लिये थोड़ेसे दिये हैं । विशेष विचार करनेके लिये पूर्वोक्त आचार्योंके अर्थोंका मनन करना उचित है । इन अर्थोंको देखनेसे ‘रुद्रत्व’ की कल्पना हो सकती है । अर्थात् ‘रुद्र’ यह कोई एकही पदार्थ नहीं है, परंतु यह अनेक कल्पनाओंका समूहवाचक शब्द है ।

जिस प्रकार ‘प्राणी’ कहनेसे ‘मनुष्य, घोड़ा, गाय, चूहा’ आदि का बोध होता है अथवा ‘मनुष्य’ कहनेसे ‘ज्ञानी, शूर, व्यापारी’ आदि जनोंका बोध होता है, इसी प्रकार ‘रुद्र’ कहनेसे ‘ज्ञानी, शूर, दुष्ट, सज्जन’ आदिका बोध होता है । परंतु ये सब प्रत्यक्षमें एक नहीं हैं, इनमें भिन्नत्व है । इस भिन्नत्वका स्वरूप यहां बताया है और इस समयतक के संपूर्ण विवरणमें भी इसी भिन्नत्वका रूप स्पष्ट किया है ।

‘श्री भ० गीताके विभूतियोगके साथ तुलना ।

श्रीमद्भगवद्गीताके १० अध्यायमें ‘विभूतियोग’ कहा है । उसका थोड़ासा भाग देखिए—

रुद्राणां शंकरश्चास्मि त्रिक्लेशो यक्षरक्षसाम् ।
वसूनां पावकश्चास्मि मेरुः शिखरिणामहम् ॥२३॥
यज्ञानां जपयज्ञोऽस्मि स्थावराणां हिमालयः ॥२५॥
मृगाणां च मृगेन्द्रोऽहं वैनतेयश्च पक्षिणाम् ॥३०॥
अध्यात्मविद्या विद्यानां वादः प्रवदतामहम् ॥३१॥
द्यूतं छलयतामस्मि तेजस्तेजस्विनामहम् ॥३६॥
वृष्णीनां वासुदेवोऽस्मि पांडवानां धनंजयः ॥३७॥
यद्यद्विभूतिमत्सत्त्वं श्रीमदूर्जितमेव वा ।
तत्तद्देवावगच्छ त्वं मम तेजोऽशसंभवम् ॥४१॥
अथवा बहुनैतेन किं ज्ञातेन तवार्जुन ॥
विष्टभ्याहमिदं कृत्स्नमेकांशेन स्थितो जगत् ॥३९॥

(श्री भ० गी० अ० १०)

“ रुद्रोंमें मैं शंकर, यक्ष और राक्षसोंमें मैं कुबेर, वसुओंमें मैं पावक, चोटियोंवाले पहाड़ोंमें मैं मेरुपर्वत हूँ । यज्ञोंमें जपयज्ञ, स्थिर पदार्थोंमें हिमालय, मृगोंमें सिंह, पक्षियोंमें गरुड, विद्याओंमें आत्मविद्या और वक्ताओंका भाषण मैं ही हूँ । कपटियोंका द्यूत अर्थात् जूआ, तेजस्वियोंका तेज, वृष्णियोंमें वासुदेव, पांडवोंमें अर्जुन मैं हूँ । जो जो विशेष ऐश्वर्ययुक्त,

शोभायुक्त और उच्च तत्त्व होगा, वह सब मेरे ही अंशसे हुआ है, ऐसा तुम जानो । अथवा इतने विस्तारसे कहनेकी क्या आवश्यकता है ? सारांशरूपसे इतनाही कहना पर्याप्त है कि एक अंशसे सब जगत् व्याप कर मैं रहा हूँ ।

जगतमें जो जो ऐश्वर्ययुक्त सत्त्व होता है, वह परमेश्वरके अंशसे होता है, ऐसा यहां कहा है ।

इसी 'विभूतियोग'के समान 'रुद्रको चोर के रूपमें मानना' है । कई टीकाकारोंने इस रुद्राध्यायपर टीका करते हुए लिखा है कि चोर और डाकूभी रुद्रके रूप हैं । देखिए—

रुद्रो लीलया चोरादिरूपं धत्ते, यद्वा रुद्रस्य जगदात्मकत्वाच्चोरादयो रुद्रा एव ज्ञेयाः । यद्वा स्तेनादिशरीरे जीवेश्वररूपेण रुद्रो द्विधा तिष्ठति तत्र जीवरूपं स्तेनादिपदवाच्यं तदीश्वररुद्ररूपं लक्षयति यथा शाखाग्रं चन्द्रस्य लक्षकम् । किंबहुना लक्ष्यार्थविवक्षया मंत्रेषु लौकिकाः शब्दाः प्रयुक्ताः ॥

(महीधरभाष्य य. अ. १६।२०)

“रुद्ररूपी जगदात्मा लीलासे चोरका रूप धारण करता है । अथवा रुद्र जगदात्मा होनेसे चोरादि सब रुद्रही जान लीजिए । अथवा चोरादिकोंके शरीरमें जीव और ईश्वररूपसे रुद्र दो प्रकारका होकर रहता है, वहां चोर आदि शब्द जीवरूपके दर्शक होते हुए भी ईश्वररूपके बोधक होते हैं, जिस प्रकार शाखाके अग्रसे चंद्रमाका ज्ञान बताया जाता है । बहुत क्या कहना है ? ईश्वरका ज्ञान देनेकी इच्छासे मंत्रोंमें बहुतसे लौकिक शब्द प्रयुक्त किये हैं ।”

श्री सायणाचार्य भी अग्नि काण्व-यजु० अ० १७ के भाष्य में उक्त प्रकारही कहते हैं । उक्त विषयमें सायण और महीधर की संमति एक जैसीहि है ।

१. छलयतां यूतं अस्मि (गीता)—कपटीयोंका यूत में हूँ ।
२. स्तेनानां पतिः अस्मि (वेद)—चोरोंका स्वामी मैं हूँ ।
३. स्तायूनां पतिः अस्मि । (")—ठगोंका मुखिया मैं हूँ ।
४. तस्करणां पतिः अस्मि । (")—डाकुओंका सरदार मैं हूँ ।
५. मुष्णतां पतिः अस्मि । (")—छुटेरोंका श्रेष्ठ मैं हूँ ।

उक्त गीताके वचनमें 'रुद्राणां शंकरश्चास्मि' यह वाक्य है । 'अनंत रुद्रोंमें मैं एक शंकरनामक रुद्र हूँ ।' इस वाक्यमें रुद्रोंका अनंतत्व और शंकरका एतत्त्व सिद्ध है । यहां

शंकर शब्दसे परमात्मा और रुद्र शब्दसे परमात्मासे उत्पन्न पूर्वोक्त उतर रुद्र लेना उचित है । इस प्रकार करनेसे इस वाक्यकी वेदके आशयके साथ संगति लग सकती है ।

पं० जान डॉसनसाहब का मत ।

'हिंदु-क्यामिकल डिक्शनरी'में पं० डॉसन साहब लिखते हैं कि—

'He is the howling terrible god, the god of storms, the father of the Rudras or Maruts, and is sometimes identified with the god of fire. On the one hand he is a destructive deity who brings diseases upon men and cattle, and upon the other he is a beneficent deity supposed to have a healing influence. These are the germs which afterwards developed into the god Siva.'

(पृ. २६९)

'यह (रुद्र) गर्जना करनेवाला भयानक देव है, जो तूफानका देव है और जो रुद्रों अथवा मरुतोंका पिता है । कभी कभी इसका संबंध अग्निदेव के साथ जोड़ा जाता है । एक ओर यह देव सबका नाश करता है और प्राणियोंमें बीमारियाँ फैलाता है, तथा दूसरी ओर इसको सुखदायक और आरोग्य देनेवाला देव समझा जाता है । ये ही मूल अंकुर हैं कि जिनका विकास होकर आगे जाकर शिवजीका स्वरूप बना है ।'

रुद्रको केवल बादलोंका देव पं० डॉसन साहब मानते हैं । परंतु यदि वे 'रुद्र और मरुत्'के मूल अर्थोंकी थोड़ीसी भी खोज करते, तो उनको पता लगता कि 'रुद्र' को 'जगतां पतिः' अर्थात् 'अनंत ब्रह्मांडोंका स्वामी' कहा है । यह मंत्रोंका विधान ये यूरोपियन पंडित देखतेही नहीं ।

सर मोनिअर वुडलियमसाहब की संमति ।

यह साहब कहते हैं कि—

'Rudra, roarer, the god of tempests and father and ruler of Rudras and Maruts. (In Veda he is closely connected with Indra and still more with Agni, the god of fire and also with Kala or time, the all-consumer with whom he is afterwards identified; though

generally represented as a destroying deity, .. he has also the epithet Siva, 'benevolent or auspicious' and is even supposed to possess healing powers..... from his purifying the atmosphere ;)'

(सर मो. वुडलियम का संस्कृत-इंग्लिश कोश)

‘ गरजनेवाला रुद्र तूफानोंका देव है और रुद्रों और मरुतोंका पिता और राजा है । (वेदमें रुद्र देवका इन्द्र और विशेष कर अग्निके साथ संबंध बताया है । बादमें सर्वभक्षक कालके साथ भी जोड़ दिया है । यद्यपि इसको संहारक देव समझा जाता है तथापि यह कल्याणकारक और आरोग्यदायक भी वर्णन किया है । यह हवा को शुद्ध करता है ।)’

एकहि परमेश्वर जगत्का उत्पादक, पालक, संहारक, कल्याणकारक, सुखदायक, आदि अनंत गुणोंसे युक्त है । ये लोग इन सब गुणोंकी रुद्र-वर्णनमें देखते हैं, परंतु रुद्रको ईश्वर माननेके समय सिद्ध करते हैं ।

श्री० म० आर्थर आंटोनी मॅकडोनेल- साहबकी संमति ।

‘This god occupies a subordinate position in the Rig Veda being celebrated in only three entire hymns, in part of another, and in one conjointly with Soma. His hand, his arms, and his limbs are mentioned. He has beautiful lips and wears braided hair. His colour is brown; his form is dazzling, for he shines like the radiant sun, like gold..... he holds the thunderbolt in his arm, and discharges his lightning shaft from the sky; but he is usually said to be armed with a bow & arrows, which are strong and swift.’

‘ Rudra is very often associated with the Maruts (i. 85). He is their father, and is said to have generated them from the shining udder of the cow Prishni.’

‘ He is fierce and destructive like a terrible beast, and is called a bull, as well as the ruddy (arusa) boar of heaven. He is exalted, strongest of the strong, swift, unassailable,

unsurpassed in might. He is young and unaging, a lord (Ishana) and father of the world. By his rule and universal dominion he is aware of the doings of men and gods. He is bountiful (midhvams), easily invoked and auspicious (Shiva). But he is usually regarded as malevolent; for the hymns addressed to him chiefly express fear of his terrible shafts and deprecation of his wrath..... He is, however, not purely maleficent like a demon. He not only preserves from calamity, but bestows blessing. His healing powers are especially often mentioned; he has a thousand remedies, and is the greatest physician of physicians.....’

‘ The physical basis represented by Rudra is not clearly apparent. But it seems probable that the phenomenon underlying his nature was the storm.’ [A Vedic Reader, pages 56-57]

‘ यह रुद्रदेव ऋग्वेदमें निम्न कोटिका देव है । क्योंकि संपूर्ण ऋग्वेदमें इसके लिये केवल तीन सूक्त हैं । उसके हात, बाहु और अवयवोंका वर्णन किया है । उसके होंठ सुंदर हैं, और वह जटाजूट धारण करनेवाला है । उसका बदामी रंग है और इसका आकार चमकीला है, क्योंकि तेजस्वी सूर्यके समान वह चमकता है..... मेघविद्युत् का बज्र वह हाथमें धरता है, और आकाशसे तेजस्वी बाण मारता है, परंतु बहुत करके धनुष्यबाण धारण करता है, ऐसाहि कहा गया है...’

‘ रुद्रका मरुतोंके साथ बहुत संबंध बताया है । वह उनका पिता है और पृश्निनामक गायके चमकीले गर्भस्थानसे मरुतोंकी उत्पत्ति की गई है, ऐसा कहा गया है ।’

‘ क्रूर पशुके समान भयानक और विनाशक वह रुद्र है । ओर उसको बैल कहते हैं, तथा उसको स्वर्गका लाल सुवर कहा है । वह बड़ा उत्तुच, बलवानोंमें बलवान्, चपल, न दबनेवाला और राबसे प्रबल है । वह तरुण और वृद्धावस्थासे रहित है । वह सबका राजा और जगत्का पिता है । सब मनुष्य और सब देवताओंके सब कर्मोंको वह जानता है, क्योंकि उसका राज्य

और उसका शासन सर्व जगत्में है । वह दानशूर, कल्याणमय और सुलभतासे संतुष्ट होनेवाला है । परंतु बहुधा ऐसा समझा जाता है कि वह बड़ा द्रोही है, क्योंकि जिन सूक्तोंसे उनकी प्रार्थना की गई है, उन सूक्तोंमें उसके क्रोधकी भीति और उसके शत्रुओंका डर व्यक्त हुआ है । परंतु वह राक्षसके समान अत्याचारी नहीं है । वह कष्टोंसे न केवल बचाता है, परंतु आशीर्वादभी देता है । उसकी आरोग्यवर्धनकी शक्तियोंका वर्णन आया है और उसके पास हजारों दवाइयां हैं और वह वैद्योंमें बड़ा वैद्य है ।'

‘ रुद्रके द्वारा जिस पांचभौतिक घटनाका वर्णन हुआ है, वह घटना स्पष्ट रीतिसे ज्ञात नहीं होती । परंतु यह संभव है कि उसके स्वभावके नीचे जो पांचभौतिक घटना है, वह बहुधा तूफानी अवस्था होगी.....’

(वैदिकरीडर, पृ. ५६-५७)

युरोपियन पंडितोंकी ये हि संमतियां हैं । अन्य अनेक पंडितोंने रुद्र देवताके विषयपर बहुतसा लिखा है, परंतु उसका मुख्य अंश उक्त संमतियोंमें हैं । इसलिये और अधिक संमतियां न देता हुआ मैं इनकीही समालोचना करता हूं । उक्त संमतियां देखनेसे निम्न मत प्रतीत होते हैं—

(१) रुद्रका दर्जा बहुत नीचे है, क्योंकि उसके लिये थोड़े सूक्त हैं ।

(२) उसके अवयवोंका और रंगरूपका वर्णन होनेसे वह साकार है ।

(३) धनुष्यबाणका वर्णन होनेसे वह शस्त्रधारी साकार है ।

(४) रुद्र मरुतोंका पिता है और पृथ्विनामक गायसे मरुतोंकी उत्पत्ति हुई है ।

(५) रुद्र देव क्रूर, द्रोही, भयानक है, परंतु राक्षसके समान अत्याचारी नहीं है ।

(६) वह उच्च, श्रेष्ठ, सर्वशक्तिमान्, चपल, न दबनेवाला, सबसे प्रबल, तेजस्वी, सर्वज्ञ, दाता, मंगलमय और संतुष्ट है । वह सब जगत्का पिता और राजा है ।

(७) यह आरोग्यदाता और रोग दूर करनेवाला है ।

(८) रुद्रके वर्णनके बीचमें जो नैसर्गिक घटना है, वह गुप्त है, उसका पता नहीं लगता । परंतु वह घटना बहुधा तूफानकी हवा होगी ।

(९) वह बैल और दिव्य सुवर कहा गया है ।

(१०) रुद्र मेघस्थानकी बिजुली है ।

अब हम रुद्रसूक्तका थोड़ासा विचार करते हैं—

पौराणिक रुद्र और वैदिक रुद्र ।

पुराणोंमें आया हुआ रुद्रका वर्णन और वेदका रुद्रका वर्णन कई अंशोंमें भिन्न है । देखिए—

एष ते रुद्र भागः सह स्वस्त्राऽम्बिकया
तं जुषस्य स्वाहा । एष ते रुद्र भाग
आयुस्ते पशुः ॥ (यजु० ३।५७)

‘ हे रुद्र ! यह तेरा भाग है । अपनी बहन अंबिकाके साथ उसका सेवन करो । यह तेरा भाग है और चूहा तेरा पशु है ।’

यहां इतनाही बताना है कि वेदमें अंबिका रुद्रदेवकी बहन कही है, परंतु पुराणोंमें उसकी धर्मपत्नी कही है । तथा रुद्रका पशु चूहा इस मंत्रमें बताया है । परंतु पुराणोंमें चूहा गणपति का पशु कहा है । यह भेद देखने योग्य है । तथा—

भवारुद्रौ सयुजा संविदानाबुभावुप्रौ

चरतो वीर्याय । ताभ्यां नमो यतमस्यां दिशीतः ॥

(अथर्व. ११।२।१४)

‘ भव और शर्व ये दोनों (सयुजा) साथ रहनेवाले मित्र, (संविदानौ) उत्तम ज्ञानवाले हैं । (उभौ उग्रौ) दोनों प्रतापी हैं, वे (वीर्याय चरतः) वे पराक्रम करनेके लिये चलते हैं । (यतमस्यां दिशि) जिस किसी दिशामें वे होंगे, उनको हमारा नमस्कार है ।’

इससे ‘ भव और शर्व ’ ये परस्पर भिन्न हैं, परंतु साथ रहनेवाले और बड़ा पराक्रम करनेवाले हैं, ऐसा पता लगता है । पुराणमें ये दोनों शब्द एकहि रुद्रके लिये आये हैं ।

‘ भव ’ का अर्थ ‘ उत्पन्नकर्ता ’ है और ‘ शर्व ’ का अर्थ ‘ प्रलय करनेवाला ’ है । परमात्मामें ये दोनों गुण होनेसे वहां इनकी भिन्नता लुप्त होती है, ऐसा भी माना जा सकता है । इसलिये यह भिन्नत्व और एकत्व विशेष विचारसे सोचना चाहिए ।

रुद्रका शरीर ।

शिवपुराणमें निम्न श्लोक ‘ रौद्री तनुः ’ अर्थात् रुद्रके शरीर-के विषयमें आते हैं, रुद्रका विचार करनेके समय इसका भी विचार करना उचित है—

अग्निरित्युच्यते रौद्री घोरा या तैजसी तनुः ।
 सोमः शाक्तोऽमृतमयः शक्तेः शांतिकरी तनुः ॥३॥
 विविधा तेजसे वृत्तिः सूर्यात्मा च जलात्मिका ।
 तथैव रसवृत्तिश्च सोमात्मा च जलात्मिका ॥४॥
 वैद्युतादिमयं तेजः मधुरादिमयो रसः ।
 अग्निरमृतनिष्पत्तिरमृतादग्निरेधते ॥ ५ ॥

‘ अमितत्त्वको रुद्रका भयानक तैजस् शरीर कहते हैं । तथा जलमय सोमतत्त्वको शक्तिका- (रुद्रपत्नी)-शांतिकारक शरीर कहते हैं । तेजके तत्त्व अनेक प्रकारके हैं तथा जलके तत्त्वभी विविध है । विद्युत् आदि तेज हैं और मधुर आदि रस है । अग्नि से जलकी उत्पत्ति और जलसे अग्निका प्रकाश होता है ।’ इस प्रकार सब जगत् ‘तैजस् उग्र शक्तिके साथ जलात्मक शांत शक्तिके वास्तव्य’ से होता है ।

उक्त वर्णनका तात्पर्य इतनाही है कि, इस जगत्में दो शक्तियाँ हैं. (१) एक तेजस शक्ति गति उत्पन्न करनेवाली है; (२) दूसरी शांति करनेवाली एक शक्ति है । इन दो शक्तियोंसे यह जगत् चल रहा है । दोनों शक्तियाँ कार्य कर रही हैं । पहिली रुद्र शक्ति है और दूसरी रुद्रकी धर्मपत्नी है । इसीलिये इन को जगत् के माता पिता कहते हैं ।

| | |
|--------|---------|
| रुद्र | अंबिका |
| महादेव | पार्वती |
| अग्नि | जल |
| सूर्य | चंद्र |
| अग्नि | सोम |

इत्यादि शब्दोंसे उक्त आशयका पता लग सकता है । आशा है कि इस विधानका भी पाठक विचार करेंगे ।

खोजका विषय ।

‘रुद्र’ देवताका परिचय देनेके लिये बहुतसा रुद्रविषयक ज्ञान इस निबंधमें एकत्रित किया है । अभी बहुतसे बातोंका संशोधन करना है । आशा है कि पाठक इन बातोंका विचार करेंगे और रुद्रत्वका निश्चय करनेके लिये अन्य ग्रंथोंका संशोधन करके अधिक ज्ञान प्रकाशित करेंगे ।

रुद्रदेवताका यजुर्वेदोक्त विश्वरूप ।

यह रुद्रसूक्त यजुर्वेद-संहिता में है । वाजसनेयी संहिता का १६ वां अध्याय, काण्वसंहिताका १७ वां अध्याय, मैत्रायणी संहिताका काण्ड २, प्रपाठक ९; काठक संहिताका १७, १३-१४,

कपिष्ठल कठ संहिता का २७, ३-४; तैत्तिरीयसंहिताका कां. ७।५।४-५ रुद्रदेवता के वर्णन के लिये ही प्रसिद्ध हैं । जो सूक्त हम यहां आज विचार करनेके लिये लेना चाहते हैं, वह इतनी संहिताओं में प्रमाणत्वेन विद्यमान है । इस अध्याय में रुद्रदेवताका बड़ा विस्तृत वर्णन है ।

यहां विचार करनेके लिये हम वा० यजु० अ० १६ के १७-४६ और ५४ ये ३१ मंत्र लेते हैं ।

यहां कई रुद्रों के नाम गिनाये हैं । इन मन्त्रों में नाम ही नाम गिनाये हैं । इन नामों के हम नीचे वर्ग करके बता देते हैं, जिन से पाठकों को पता लगेगा कि, वे सब रुद्र किन किन वर्गों में संमिलित होने योग्य हैं । इन में से जो मानवों में संमिलित होनेयोग्य हैं, उन के वर्ग वे हैं—

मानवरूपों में रुद्र ।

(ज्ञानी पुरुष ।)

पूर्वोक्त मन्त्रों में जो ज्ञानी-वर्ग के रुद्र हैं, उनकी नामावलि यह है । ज्ञानी-वर्गके रुद्रोंको ब्राह्मणवर्ग के रुद्र कहा जा सकता है ।

१. गृत्स = ज्ञानी, कवि, एक ऋषि [२५]

२. गृत्सपति = ज्ञानियोंमें श्रेष्ठ, गृत्सों का अधिष्ठाता [२५]

३. श्रुत = विख्यात, प्रसिद्ध, विद्वान्, श्रुति का वेत्ता [३५]

४. पुलस्ति = विद्वान्, ऋषि [४३]

५. रुद्र = [रु] शब्द शास्त्र का [रु] पारंगत, ज्ञानी [१८]

६. षड्गुरमाण = उत्तम ज्ञानका उपदेश देनेवाला, वक्ता [४६]

७. अधिवक्ता = [वा० य० १६।५] = उपदेशक, अध्यापक, वक्ता ।

८. मंत्री = राजा का मन्त्री, दिवान, सलाहगार, सुवि-चारी, बुद्धिमान, चतुर, हित की मंत्रणा देनेवाला [१९]

९. देवानां हृदयः = देवताओंके लिये जिसने अपना हृदय दिया है, भक्त, प्रेमी, साधु, सज्जनों की सेवा करनेवाला [४६]

१०. भिषक्, दैव्यो भिषक् = दिव्य वैद्य [वा० य० १६।५], आयुर्बुध [६०] आयुष्य की वृद्धि करने-वाला ।

११. औषधीनां पतिः = औषधियां अपने पास रखनेवाला [१९]

१२. सभा = सभा, परिषद्, विविध सभाओं के गभासद [२४]

१३. सभापतिः = सभा का अध्यक्ष, परिषद् का प्रमुख [२४]

१४. श्रवः = कान, सुननेवाला, श्रवण करनेवाला, शिष्य [३४] प्रमृशः = परामर्श लेनेवाले पंडित [३६]

१५. प्रतिश्रवः = सुननेवाला, उपदेश करनेवाला, गुरु [३४]। वादी-प्रतिवादी, प्रश्न-प्रतिप्रश्न के समान श्रव-प्रतिश्रव ये पद हैं। इनका परस्परसंबंध है। 'सोभ्यः' [३३] = पुण्यकर्म करनेवाले तथा प्रतिमर्थ [३३] = गुप्त बात प्रकट करनेवाले।

१६. श्लोक्यः = प्रशंसनीय, श्लोकों के योग्य, प्रशंसनीय विद्वान् [३३]

प्राचीन परंपराके अनुसार वैश्य, राजा का मंत्री, अध्यापक आदि ब्राह्मण अथवा ज्ञानी-वर्गके लोग ही हुआ करते हैं। अर्थात् ये ब्राह्मण हैं अथवा ज्ञानी तो निःसन्देह हैं।

पुरुषसूक्त में 'ब्राह्मणों को नारायण का मुख' कहा है। यहाँ उसी नारायण के अथवा रुद्रदेवता के मुख में किन का समावेश होता है, यह अधिक नाम देकर बताया है। यहाँ के कई नाम जैसे 'उद्गुरमाण' आदि अन्य वर्गमें भी गिने जाना स्वाभाविक है। जो शेष बचेंगे, वे इस वर्ग में रहेंगे। इस तरह ब्राह्मणवर्ग के रुद्रोंका विचार करने के पश्चात् अब क्षत्रियवर्ग के रुद्रों का, अथवा वीरोंका विचार करते हैं। रुद्र का नाम 'वीरभद्र' सुप्रसिद्ध है। कल्याण करनेवाला वीर 'वीरभद्र' कहा जाता है। देखिये, वीरभद्रके वर्गमें कौनसे रुद्र गिने जाने योग्य हैं—

क्षत्रिय-वर्ग के रुद्र ।

(वीर रुद्र ।)

(रोदयति इति रुद्रः) जो रलाता है, वह रुद्र है। शत्रुओं को रलाने के कारण वीर को रुद्र कहते हैं। इस तरह क्षत्रिय वीर रुद्र कहे जाते हैं।

१. रुद्रः = शत्रुओं को रलानेवाला वीर [१, १८]

तवस् = बलवान् [४८] आगे राजाके अनेक अधिकारी, ओहदेदार, रुद्र करके गिनाये हैं।

२. क्षेत्राणां पतिः = खेतोंकी रक्षा करनेवाला [१८]

रुद्र प्र० ३

भूतानां अधिपतिः = प्राणियों के रक्षक [५९]

३. वनानां पतिः = वनोंकी पालना करनेवाला [१८]

वन्धः = वनमें उत्पन्न [३४]

४. अरण्यानां पतिः = अरण्यों का संरक्षण करनेवाला [२०]

५. स्थपतिः = स्थानोंका पालक [१९], पथिरक्षी [६०], प्रपथ्य [४३] = मार्गों की रक्षा करनेवाले।

६. कक्षाणां पतिः [१९] दिशां पतिः [१७]

(कक्षा) = गुप्त स्थान, अन्तर्का भग, बड़ा अरण्य, बहुत ही बड़ा वन। [कक्षाणां पतिः, कक्षापः] = गुप्त स्थान की रक्षा करनेवाला, अन्तिम विभाग का रक्षक, बड़े अरण्योंका रक्षक [१९], कक्ष्यः = अरण्य की कक्षा में रहनेवाला [३४]

७. पत्तीनां पतिः = सेनाओं का पालक, सेनापति, पादचारी सेनाविभाग का अधिपति [१९],

सस्त्रनां पतिः = प्राणियोंका रक्षक [२०]

८. भाव्याधिनीनां पतिः = उत्तम निशाना मारनेवाले सैनिकोंका अधिपति, सेनापति [२०],

[व्याधिन्] = शत्रु का वेध करनेवाला [२०, २४]

९. विकृन्तानां पतिः = शत्रु सैनिकोंका अधिपति [२१]

१०. कुलुब्धानां पतिः = शत्रुसेनाको पीसनेवाले, शत्रुपर चढ़ाई करके उनके सेनाविभागोंको पृथक् करके उनका नाश करनेवाले वीरोंके प्रमुख अधिपति [२२]

११. गणपतिः = वीरोंके गणों के अधिपति [२५]

ककुभः = प्रमुख, मुख्य [२०]

१२. व्रातपतिः = वीरों के समूह के प्रमुख [२५]

१३. सेना, १४ व्रातः, १५ गणः = ये सेनाविभागोंके नाम हैं; सैनिकों की संख्या के अनुसार ये नाम प्रयुक्त होते हैं [२५, २६]।

१६. शूरः = वीर, शूर [३४]; क्षयद्वीरः = शत्रु का नाश करनेवाला वीर [४८]; उग्रः, भीमः = उग्र, शूर वीर, भयानक कर्म करनेवाले [४०]

१७. विचिन्वक्कः = शूर वीर, बहादुर, चुन चुन कर शत्रुवीरों का वेध करनेवाला वीर [४६], विकि-रिद्रः = विशेष नाश करनेवाला [५२]

१८. रथी = रथमें बैठनेवाला वीर [२६]

१९. अरथी = रथके बिना युद्ध करनेमें प्रवर्ण वीर [२६]
 २०. आशुरथ = जो त्वराके साथ रथयुद्ध करता है, त्वरासे रथ चलानेवाला वीर [३४]
 २१. उगणा = शस्त्रास्त्रों को ऊपर उठाकर शत्रुपर हमला करनेवाली सेना का समूह [२४]
 २२. आशुसेनः = अपनी सेनाको अतिशीघ्र तैयार करनेवाला वीर, अपनी सेनाको सदा सिद्ध रखनेवाला वीर [३४]
 २३. श्रुतसेनः = जिस सेनाका यश चारों ओर फैला हो, विख्यात, यशस्वी, सदा विजयी सेनापति [३५]
 २४. सेनानी = सेनाको कुशलता के साथ चलानेवाला सेनापति [२६]
 २५. दुन्दुभ्यः = नौवत, ढोल अथवा बाजेके साथ रहकर लड़नेवाला सैन्य [३५]
 २६. अभिमान् = तलवारसे लड़नेवाले सैनिक वीर [२१]
 २७. इषुभान् = बाणोंका उपयोग करनेवाले, बाणोंको बर्तनेवाले वीर [२२, २९]
 २८. सुक्रायी = तीक्ष्ण बाण अथवा भाला बर्तनेवाला वीर [२१]
 सुक्रादस्त्राः = शस्त्र धारण करनेवाले [६१]
 २९. निष्प्रायी = खड्गधारी वीर [२०, २१, ३६]
 ३०. धनुभायी = धनुष्य धारण करके शत्रुपर चढाई करनेवाला वीर [२२]
 आयुधी = शस्त्रोंको साथ रखनेवाला वीर [३६]
 ३१. शतधन्वा = सौ धनुष्योंका धारण करनेवाला वीर [२९]
 ३२. इषुधितान् = बाणोंके तर्कसको पास रखनेवाला [२१, ३६]
 ३३. तीक्ष्णेषुः = तीखे बाणोंका उपयोग करनेवाला [३६]
 ३४. स्यायुधः = उत्तम आयुधोंको पास रखनेवाला [३६]
 ३५. सुधन्वन् = उत्तम धनुष्यका उपयोग करनेवाला [३६]
 ३६-३९. वर्मी, कवची, बिल्वी, वरूथी = विविध प्रकारके कवच धारण करनेवाला वीर [३५]
 ४०. कृस्त्रायतया धावन् = आकर्षण धनुष्य पूर्णतया खींचकर युद्धभूमिमें दौड़नेवाला वीर [२०]
 ४१. निव्याधी [१८, २०] = शत्रुका निःशेष वेध करनेवाला वीर [२०]
 ४२. जिघांसत् = शत्रुकी कत्ल करनेवाला वीर [२१]
 ४३. विधत् = शत्रुका वेध करनेवाला [२३]

४४. अग्रभेदी = शत्रुको नीचे गिराकर उसको छिन्नभिन्न करनेवाला वीर [३४]
 ४५. हन्ता = शत्रुका हनन करनेवाला [४०]
 ४६. हनीयान् = शत्रुका संहार करनेवाला [४०]
 ४७. अभिघ्नत् = शत्रुपर प्रहार करनेवाला [४६]
 ४८. अग्रेवधः = अग्रभागमें रहकर शत्रुका वध करनेवाला [४०]
 ४९. दूरेवधः = दूरसे शत्रुका वध करनेवाला [४०]
 ५०. आहनन्यः = शत्रुपर आघात करनेवाला [३५]
 ढोलका शब्द करता हुआ शत्रुपर आक्रमण करनेवाला ।
 ५१. धृष्णुः = शत्रुका वध करनेवाला साहसी वीर [१४, ३६]
 ५२. विक्षिणस्क = शत्रुका नाश करनेवाला [४६]
 ५३. भानिर्हत् = आसमन्तात् भागसे जिसने शत्रुका वध किया है [४६]
 ५४. सहमानः = शत्रुका पराभव करनेवाला [२०]
 ५५. आतन्वानः = धनुष्यकी प्रत्यंचा चढानेवाला वीर [२२]
 ५६. प्रतिद्धानः = प्रत्यंचा चढाये धनुष्यपर बाण लगानेवाला [२२]
 ५७. आयच्छत् = धनुष्यकी डोरी खींचनेवाला वीर [२२]
 ५८. अस्यत् = शत्रुपर बाण फेंकनेवाला [२२]
 ५९. विसृजत् = शत्रुपर विशेष रूपसे बाण फेंकनेवाला [२३]
 ६०-६१. आखिदत् प्रखिदत् = शत्रुको खेद उत्पन्न करने योग्य आत्तरण करनेवाला वीर [४६]
 ६२-६३. आव्याधिनी [२४], आव्याधिनीनां पतिः [२०] = शत्रुसेनापर चारों ओरसे हमला करनेवाला वीर तथा ऐसी वीरसेनाका सेनापति ।
 ६४. त्रिविध्यन्ती = विशेष रीतिसे शत्रुसेना का वेध करनेवाली प्रबल वीरसेना [२४]
 ६५. तृहती = शत्रुका नाश करनेवाली वीरसेना [२४]
 ६६. अवसान्यः = अन्तिम भागपर खडा रहकर संरक्षण करनेवाला वीर [३३]
 ६७. पथीनां पतिः = मार्गस्थोंके रक्षक वीर [१७]
 ६८. मृगयुः = मृगया, अथवा शिकार करनेवाला वीर [२७]
 ये वीरवर्ग अथवा क्षत्रियवर्गके नाम हैं । रुद्रोंकेही ये नाम हैं, जैसे ब्राह्मणवर्गके रुद्र पाँछे दिये हैं, वैसे ही ये क्षत्रियवर्गके

रुद्र हैं । जिस तरह ब्राह्मण रुद्र हैं, वैसे ही क्षत्रिय भी रुद्र हैं । अब वैश्यवर्गके रुद्र देखिये । वैश्यवर्गमें खेती और पशु-पालन करनेवालोंका समावेश होता है, अतः उक्त मन्त्रोंमें वैश्य-रुद्रोंका वर्णन देखिये—

वैश्यवर्गके रुद्र ।

वैश्यवर्गमें निम्नलिखित रुद्रोंका अन्तर्भाव हो सकता है—

१. वाणिजः = बनिया, व्यापारी, दूकानदारी करने-वाला [१९]

२. संग्रहीता = पदार्थों का संग्रह करनेवाला [२६]
वारिवस्कृत् [१९] धनकी उत्पत्ति करनेवाला ।

३-४. अन्धसस्पतिः [४७], अन्नानां पतिः [१८] = अन्नका पालनकर्ता, अन्नेके लिये उपयोगी होनेवाले विविध धान्यादि पदार्थोंका पालन करनेवाला, [४७, १८]
ऐलबुदाः [६०] = अन्नकी वृद्धि करनेवाला ।

५. वृक्षाणां पतिः = वृक्षवनस्पति आदिओं की पालना करनेवाला [१९]

६-७. पशुपतिः [२८], पशूनां पतिः [१७] = पशुओं का पालनेवाला ।

८. अश्वपतिः = घोड़ोंकी पालना करनेवाला [२४]

९-१०. श्वपतिः [२८], श्वनी [२७], कुतोंकी पालना करनेवाला ।

११. पुष्टानां पतिः = पुष्टोंके स्वामी [१७]

१२. जगतां पतिः = चलनेवालोंका पालक [१८]

वैश्योंका कर्तव्य खेती, वृक्षसंवर्धन और पशुपालन है । यह कर्म करनेवाले ये रुद्र इस रुद्रसूक्तमें दीखते हैं । इस तरह ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य वर्गोंके रुद्रोंका वर्णन हमने यहां तक देखा । शूद्रवर्गके रुद्रोंका वर्णन अब देखना है । शूद्रोंमें सब कारीगरों का समावेश होता है । देखिये—

शिल्पिवर्गके रुद्र ।

पूर्वोक्त मन्त्रोंमें निम्नलिखित रुद्र शिल्पिवर्गके आ गये हैं—

१. सूतः = सारथी, रथ चलावेवाला, घोड़ोंकी शिक्षा देनेवाला, भाट और वीरोंकी कथाओंको सुनानेवाला ।

२-४. क्षत्ता [२६], तक्षा [२७], रथकारः [२७] = बढई, तख्ताण, रथ बनानेवाला, लकड़ीका काम करने-वाला [२६]

५-६. धनुकृत्, ह्युकृत् = धनुष्य और बाण बनाने-वाला कारीगर [४६]

७. कर्मारः = लुहार, लोहेका अथवा धातुका कार्य करनेवाला [२७]

८. कुलालः = कुम्हार [२७]

९. निपादः = जंगलमें रहनेवाला, जंगली आदमी, सभामें [नि साद] सबसे नीचे बैठने योग्य [२७]

१०. पुंजि-ष्ठ = टालियां बनाकर रहनेवाले लोग [२७]

११. गिरि-चरः [२२] गिरिशायः [२९] गिरिशन्त [२] पहाडियोंपर घूमनेवाला, पहाडी लोग ।

१२. उत्तरण, प्रतरण, तार = नदीके पार करानेवाला, नदीपार करानेमें कुशल [४२]

१३. अहन्तिः सूतः = हननसे बचानेवाला सूत [१८]

ये नाम प्रायः कारीगरोंके तथा अन्यान्य व्यवहार करनेवालों के वाचक हैं । अर्थात् शूद्रों के वाचक हैं । शूद्रोंमें जो कारीगरी कर नहीं सकते, वे परिचर्या, सेवा शूश्रूषा करके अपनी आजीविका करते हैं, उनके नाम उपर्युक्त रुद्रमन्त्रों में ये हैं -

१४. परि-चरः = परिचारक, नौकर, सेवक, परिचर्या करने-वाले [२२]

१५. नि-चेरुः = नौकरी करनेवाला, नीचे के स्थानमें रहनेयोग्य [२०]

१६. जधन्यः = हानि, अन्त्यज, नीच वृत्तिका संतुष्य, अधः-पतित मनुष्य [३२]

ये नाम शूद्रवर्ग के हैं । इनमें 'परिचर' नाम परिचर्या करने-वाले का स्पष्ट है । लुहार, बढई आदि के नाम भी सब को मालूम हैं । शूद्रों में दो भेद हैं, एक सच्छूद्र कहलाते हैं । जो कारीगरीके द्वारा अपनी आजीविका प्राप्त करके निर्वाह करते हैं और दूसरे असच्छूद्र हैं, जो सेवा करके आजीविका प्राप्त करते हैं । इन दोनों प्रकारके शूद्रों का वर्णन पूर्वोक्त शब्दोंद्वारा हुआ है ।

यहां तक ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र इन चारों वर्गोंके अर्थात् ज्ञानी, शूर, व्यापारी और कारीगर इन चार प्रकार के व्यवसायियों के नाम रुद्र के नामों में दीखते हैं । वे सब रुद्र के रूप हैं । रुद्रदेवता इन रूपों में इस भूमिपर विचर रहा है । रुद्रदेवता की भेट करनी हो, तो इन रूपों में रुद्र का दर्शन हो सकता है । रुद्र इन नाना रूपों में इस भूमिपर विचर रहा है । रुद्रदेवता के भक्त अपनी उपर्युक्त देवता का दर्शन करें । वेद ने रुद्रदेवता का इस तरह प्रत्यक्ष साक्षात्कार कराया है । पाठक इस का स्वीकार करें ।

पाठक यह जानते हैं कि, 'रुद्र' उसी एक अद्वितीय देव का नाम है, जिस को 'पुरुष, नारायण, अग्नि, इन्द्र,' आदि अनेक नाम दिये गये हैं ।

ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद्

बाहू राजन्यः कृतः ।

ऊरू तदस्य यद् वैश्यः

पद्भ्यां शूद्रो अजायत ॥ [ऋ० १०।१०।१२]

ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र इन चार वर्णों के लोग ये सब परमात्मा के क्रमशः सिर, बाहू, पेट या जंघा तथा पांव हैं । अर्थात् चारों वर्ण मिलकर परमात्मा का शरीर है । परमात्मा के शरीर के ये चार अवयव हैं । इस परमात्मा को आत्मा, ब्रह्म, पुरुष, नारायण या रुद्र आदि नामों से पुकारते हैं । रुद्र और नारायण एक ही देव हैं । एक ही देवता के ये दो नाम हैं । इसलिये जो वर्णन नारायणपुरुष का पुरुषसूक्त में हुआ है, वही वर्णन रुद्र का विस्तार से रुद्रसूक्त में दिखाई दिया, तो वह उचित ही है ।

यहां पाठक देखें कि, पुरुषसूक्त में जो वर्णन अतिसंक्षेप से है, वही वर्णन रुद्रसूक्त में विस्तार से है । पुरुषसूक्त में पुरुष, नारायण-देवता के ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र ये लोग अवयव हैं, ऐसा कहा है और रुद्रसूक्त में ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र वर्णों के कई नाम गिनये हैं । अर्थात् पुरुषसूक्त का यह विस्तार से स्पष्टीकरण है । इस रुद्रसूक्त में ये रुद्र के रूप हैं, ऐसा कहा है; और इन रुद्र को नमस्कार किया है । ये उपास्य और संसेव्य हैं, ऐसा यहां बताया है ।

मानवों को जो परमात्मा संसेव्य है, वह ज्ञानी, शूर, व्यापारी और सेवक रूप से इस भूमि पर विचरनेवाला ही परमात्मा है । यह बात इस रुद्रसूक्त के मनन से सिद्ध हो रही है । परमात्मा सब रूपों में इस भूमि पर विचर रहा है, इन में मानवों के रूप भी हैं । हमें परमात्मा की सेवा करके कृतकृत्य बनना है, तो हमें इन मानवों की-जनतारूपी जनार्दन की सेवा करना उचित है । वेदका यही धर्म है, पर आज मानवों की सेवा अपनी कृतकृत्यता के लिये करने का भाव समाज से दूर हुआ है और अन्यान्य उपासन, एवं प्रचलित हुई हैं !! वैदिक धर्म से जनता कितनी दूर जा रही है, इसका विचार यहां इस विवेक से हो सकता है ।

चार वर्णों के रुद्र ।

चार वर्णों के चार वर्गों में जो रुद्र होते हैं, उनकी गणना उपर के लेख में की है, परन्तु वहां ब्राह्मण-क्षत्रिय-वैश्य ये नाम नहीं आये हैं । इसलिये पाठकों के मनमें सन्देह हो सकता है कि, ये नाम चार वर्णों के कैसे माने जायेंगे ? इस शंका का निवारण यजुर्वेदकी मैत्रायणी-संहिता में किया है, वह मन्त्र-भाग अब देखिये—

नमो ब्राह्मणेभ्यो राजन्येभ्यश्च वो नमः ।

नमः सूतेभ्यो विश्वेभ्यश्च वो नमः ॥

(मैत्रायणी सं० २।१।५)

'ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और सूत संज्ञक रुद्रों को मैं प्रणाम करता हूं ।' वहां शूद्र नाम नहीं है, पर 'सूत' नाम है, जो शूद्र का वाचक है । अन्य तीन नाम हैं । इस से सिद्ध होता है कि, चारों वर्णों के लोग रुद्र देवता के रूप हैं । इसलिये इस विषय में अधिक लिखने की आवश्यकता नहीं है ।

पूर्वाक्त चार वर्णों के रुद्रों में ही संपूर्ण जनता समाप्त नहीं होती है । जिनको दुष्ट डाकू आदि कहा जाता है, उन रूपों में भी रुद्रदेवता हमारे सम्मुख उपस्थित होती है, देखिये—

आततायी वर्ग के रुद्र ।

१. आततायी = घातपातवाला करनेवाला [१८]

धनुष्य सज्य करके हमला करनेवाला घातक ।

२-५. स्तेनानां पतिः [२०], तस्कराणां पतिः [२१],

मुष्णतां पतिः [२१], स्तायूनां पतिः [२१] =

चोर, डाकू, लुटेरे, ठगनेवाले ।

६-८. वञ्चत् [२१], परिवञ्चत् [२१] = धोखेबाज,

फरेबी, मक्कार, कपटी, छल करनेवाला ।

९. लोप्यः = नियमों का लोप करनेवाला, नियमों का उल्लंघन करनेवाला [४५] ।

१०. नक्तंचरत् = रात्री के समय दुष्ट इच्छा से भ्रमण करनेवाला [२१] ।

ये नाम चोर, डाकू, लुटेरे, आततायी दुष्टों के हैं । निःसन्देह ये दुष्ट भाववाले मानवों के वाचक हैं । परन्तु ये भी रुद्र के ही रूप हैं । जिस तरह ज्ञानदाता ब्राह्मण, सब के पालन करनेवाले क्षत्रिय, सब के पोषणकर्ता वैश्य और सबकी सहायतार्थ कर्म

करनेवाले शूद्र रुद्रके रूप हैं, उसी तरह चोरी करके लोगों को लूटनेवाले भी रुद्र के ही रूप हैं ।

पाठकों को यह मानने के लिये बड़ा कठिन कार्य है । चोर भी परमात्मा का अंश है । क्या यह सत्य नहीं हैं ? भगवद्गीता में कहा है कि—

मम एव अंशः जीवलोकं जीवभूतः सनातनः ।

[भ. गी. १५।७]

‘मेरा सनातन एक अंश जीवलोकमें जीव होता है ।’ यदि मानवों का जीव परमात्मा का अंश है, तब तो वह जैसा ज्ञानी योगियों का जीव परमात्मा का अंश है, वैसा ही दुष्ट डाकुओं का भी जीव परमात्मा का ही अंश है । जीवमात्र परमात्मा का अंश है, यह जैसा भगवद्गीता में कहा है, वैसा ही वेद में— पुरुषसूक्त में भी कहा है । पुरुष का एक अंश इस विश्व में वारंवार जन्मता है, यह बात पुरुषसूक्त में कही है । अस्तु, इस तरह चार वर्णों के मानवों का जीव जैसा परमात्मा का अंश है, वैसा ही चोर, डाकू, लुटेरे दुष्टों का भी परमात्माका ही अंश है । तत्त्वतः सब की एकता है ।

इसी तरह आंख में सूर्य का अंश, जिह्वा में जल का अंश, नासिकामें पृथ्वी का अंश और अन्यान्य इंद्रियों में और अवयवों में अन्यान्य देवताओं के अंश आकर बसे हैं । ये जैसे सत्पुरुष के देह में बसे हैं, वैसे ही दुष्ट दुर्जनों के देहों में भी बसे हैं । देवताओं के अंशों के निवास का दृष्टि से भी सब मानवों की, सब प्राणियों की समता है । इस रीति से ३३ देवताओं के अंश और परमात्मा का अंश शरीर में आकर रहे हैं, इस दृष्टि से सब के देह समान हैं । प्रत्येक देह में ३३ देवताओं के अंशों के साथ परमात्मा का अंश रहता है । देह सज्जन का हो या दुर्जन का, उसमें परमात्माके अंशके साथ सब देवताओं के अंश रहतेही हैं ।

अतः वेद का कथन यह है कि, जिस तरह चार वर्णों में विद्यमान जनता संसेव्य है, उसी तरह चोर, डाकू आदि भी वैसे ही संसेव्य हैं । पर सज्जनों की अपेक्षा दुर्जनों की सेवा अधिक प्रेमसे करनी चाहिये, क्योंकि इन दुष्ट मानवों की दुष्टता उन के शारीरिक और मानसिक विकृति के कारण होती है ।

सेवा उसकी करनी चाहिये, जिस के लिये सेवाकी आवश्यकता है । जैसे किसीको सर्दा लगती हो, तो उसको

कंबल देना चाहिये, प्यासेको जल, भूखेको अन्न, रोगीको दवा आदि देना सेवा है । जो तृप्त है, उसको अन्न देना सेवा नहीं है । सर्वत्र न्यूनता, हीनता, विकृतता की पूर्तिके लिये ही सेवा हुआ करता है । रोगी-की सेवा शुश्रूषा उसमें उत्पन्न विकार अथवा न्यूनता को दूर करनेके लिये की जानी चाहिये । इसी तरह चोर, डाकू, आततायी, लुटेरे, ठग, कपटी आदि जो गुनहगार हैं, वे यकृत, ग्रीहा या मस्तिष्क की विकृतिके कारण अथवा सामाजिक, आर्थिक या राजकीय दोषोंके कारण गुनाह करनेके लिये प्रवृत्त होते हैं । देखिये, यकृत बिगडनेसे मस्तिष्क बिगडता है और क्रोधी प्रकृति बनती है, जिसका परिणाम खून करनेतक होता है । दरिद्रताके कारण त्रस्त हुआ मनुष्य चोरी की ओर झुकता है । इसी तरह अन्यान्य कुप्रवृत्तियोंके कारण शारीरिक, मानसिक, आर्थिक, सामाजिक अथवा राजकीय विकृतियाँ उत्पन्न होती हैं । इसलिये जैसे ज्वरके रोगी चिकित्सा-द्वारा संसेव्य हैं, उसी तरह चोर, डाकू, खूनी, आततायी भी शारीरिक, मानसिक, आर्थिक, सामाजिक अथवा राजकीय चिकित्सासे सेवा करनेयोग्य हैं ।

आजकल इन चोर, डाकू आदिकोंको जेलखानेमें बंद करते हैं, कोडोंसे मारते हैं अथवा खूनियोंको फांसी देते हैं । पर वेद कहता है कि, ये भी वैसेही रुद्रके अवतार हैं, जैसे उत्तम ब्राह्मण और श्रेष्ठ क्षत्रिय । अतः ये भी सेवाके योग्य हैं । उनकी सेवा करके जिन दोषोंके कारण उनमें कुप्रवृत्तियाँ उठीं, उनको दूर करके उनकी तनदुःस्ती अथवा मनदुःस्ती करनी चाहिये । सदैक्यवादकी भूमिकाके अनुकूल और वेदके द्वारा कथित उपदेशके अनुसार चोर भी ईश्वरका रूप है और वह भी सज्जनके समान ही सेवाके योग्य है । यदि ठीक तरह इस ईश्वरके रूपकी सेवा होगी, तो जो उस ईश्वरके रूपमें अप्रसन्नता थी, वहां सुप्रसन्नता होगी और वेही लोग समाजमें प्रसन्नता बढ़ायेंगे । सदैक्यवादसे अर्थात् वैदिक दृष्टिकोण धारण करनेसे इस तरह चोर और डाकू भी दिव्य भावप्रकाशनका अवसर मिलनेसे देवत्वको प्रकट कर सकते हैं । सेवा तो अप्रसन्नकी प्रसन्नता करनेके लिये ही की जाती जाती है । इस विषयमें अधिक आगे लिखा जायगा । यहां किंचित् दिग्दर्शनमात्र लिखना पर्याप्त है ।

यहांतक मानवी प्राणियों के रुद्र के रूपों का वर्णन हुआ, अब अन्य प्राणियों के रूपों में जो रुद्र का अवतरण हुआ है, उस विषय में देखिये—

प्राणियों में रुद्र के रूप ।

१. अश्वः = घोड़ा [२४]
२. श्वा = कुत्ता [२८]
३. व्रज्यः = व्रज अर्थात् ग्वालों के बाड़ोंमें पालनेयोग्य गौ आदि पशु [४४]
४. गोप्लव्यः = गोशाला में पालनेयोग्य गौ आदि पशु [४४]
५. शीभ्यः = बैल आदि गतिमान् पशु [३१]
६. गेह्यः = घरों में पालनेयोग्य पशु, अर्थात् गाय, भैंस, बैल, कुत्ता, बिछी आदि पशु [४४]
७. किरिकः = किरिः = सूवर, सुकर [४६]
८. तल्प्यः = बिछोना, चारपाई, खटिया, तकिया आदि में जो कृमिकीट होते हैं, जिनको खटमल आदि नाम है, वे कृमि [४४]
९. रेण्यः = हिंसक कृमिकीट अथवा जीव [३९]
१०. गह्वरेष्ठः = घन जंगलों में, पहाड़ों की गुफा में रहनेवाले सिंह, व्याघ्र आदि पशु [४४], गुहा में रहनेवाले मनुष्य ।
११. इरिण्यः = उजाड मैदान में, रेतिले स्थानमें, जो भूमि उपजाऊ नहीं है, वैसी भूमि में रहनेवाले, प्राणी अथवा कृमि [४३]
१२. सिकत्यः = रेतिले स्थान में रहनेवाले पशु अथवा कृमिकीट [४३]
१३. किशिलः = पथरावाले स्थान में रहनेवाले पशु अथवा जीव [४३]
- १४-१५ पांसव्यः, रजस्यः = धूला में रहनेवाले जीवजन्तु [४५]
- १६-१७. ऊर्व्यः [४५], उर्वर्यः [३३], = उपजाऊ भूमिमें रहनेवाले जीव ।
१८. खल्यः = खलियान में जो जीव रहते हैं [३३]
१९. सुर्व्यः = [सु-ऊर्व्यः] उत्तम उपजाऊ भूमि में होनेवाला जीव [४५]
- २०-२१. शुष्क्यः [४५], अवर्ष्यः [३८], = शुष्क स्थानमें, वर्षा न होनेवाली भूमिमें होनेवाले जीवजन्तु ।
- २२-२३. हरित्यः [४५], वर्ष्यः [३८] = हरेभरे स्थानमें रहनेवाले, वर्षाके स्थानमें होनेवाले जीवजन्तु ।

२४. अवक्ष्यः = छोटे तालाब में रहनेवाले जीव [३८]
२५. उलप्यः = घास जहाँ उगता है, ऐसे स्थान में होनेवाले कृमि [४५]
२६. शाप्यः = कोमल घासके ऊपर रहनेवाले कृमि [४२]
- २७-२८ पर्णः, पर्णशदः = पत्तोंपर रहनेवाले जीव-जन्तु [४६]
- २९-३० पथ्यः [३७], प्रपथ्यः [४३], = मार्गों पर रहनेवाले जीव, मार्गों के रक्षक ।
३१. नीप्यः = पहाड़के निम्न स्थानमें रहनेवाले प्राणी [३७] अथवा पहाड़ियों की तराईपर निवास करनेवाले मनुष्य ।
३२. आतप्यः = धूप में रहनेवाले प्राणी [३८]
३३. वात्यः = वायुरूप में रहनेवाले प्राणी [३९]
३४. वीध्यः = शुष्क अन्नरूप में रहनेवाले [३८]
३५. मेघ्यः = मेघ में रहनेवाले प्राणी [३८]
- ३६-३७. कात्यः [३७, ४४], कूप्यः [३८] = कुवें में रहनेवाले प्राणी, कूप के पास रहनेवाले मनुष्य ।
- ३८-४६. कुल्यः [३७], कूल्यः [४२] = जल-प्रवाहमें अथवा प्रवाहके समीप रहनेवाले प्राणी, जलप्रवाह के पास रहनेवाले मनुष्य ।
३९. सरस्यः = तालाब के समीप अथवा तालाब में रहनेवाले जीव या मानव [३७]
४०. नादेयः = नदी में अथवा नदीके समीप रहनेवाले जीव या मानव [३१, ३७]
४१. वैशन्तः = छोटे तालाबमें रहनेवाले जीव [३७], अथवा मनुष्य ।
४२. तीर्थ्यः = तीर्थस्थान में रहनेवाले [४२], ये तीर्थानि प्रचरन्ति (६१) = जो तीर्थों में विचरते हैं, यात्री ।
४३. ऊर्म्यः = लहरों में रहनेवाले [३१]
४४. प्रवाह्यः = प्रवाह में रहनेवाले [३१]
४५. पार्यः = परतीर में रहनेवाले [४२]
४६. अवार्यः = नदीके इधरके तीरपर रहनेवाले [४२]
४७. फेन्यः = जलके फेनमें रहनेवाले [४२]
४८. द्वीप्यः = द्वीपमें रहनेवाले, टापूमें रहनेवाले [३१]
४९. निवेण्यः = पानीके भंवरमें रहनेवाले [४४]
५०. क्षयणः = जहाँ पानी स्थिर रहता है, ऐसे स्थानमें रहनेवाले [४३]

ये सब रुद्र जलस्थानोंमें रहनेवाले प्राणियोंके रूप हैं । और देखिये—

५१. हृदयः = हृदयमें रहनेवाले (४४), हृदयको प्रिय लगनेवाले स्थानमें रहनेवाले ।

५२. वास्तुपः = घरोंका संरक्षण करनेवाले [३९] पहरेदार ।

५३. वास्तव्यः = घरोंमें रहनेवाले [३९]

‘ वास्तव्य तथा वास्तुप ’ ये दो पद सर्वसाधारण मानव-जातिके वाचक हो सकते हैं । क्योंकि प्रायः मानव घरोंमें रहते और घरोंकी रक्षा करते हैं ।

सर्वसाधारण रुद्र ।

१. उपवीती = यज्ञोपवीत अथवा उत्तरीय धारण करनेवाले [१७]

२. उष्णीषी = पगडी अथवा साफा धारण करनेवाले [२२]

३. हिरण्यवाहुः = वाहुओंपर सुवर्णभूषण धारण करनेवाले [१७]

४. कपर्दी = जटा अथवा शिखा धारण करनेवाले [२२, ४८]

५. व्युत्केशः = जिनके बाल कटे हैं, हजामत बनाये हुए [२९], विशिखासः [५९] = शिखा न रखनेवाले, सिर मुंडन करनेवाले ।

६. सोम्यः = शान्त [३९]

७. याम्यः = नियममें रहनेवाले [३३]

८. क्षेम्यः = आराम देनेवाले [३३], घरमें रहनेवाले,

९-११. आशु, शीघ्र्य, अजिर = शीघ्रता करनेवाले [३१]

१२-१९ महान् [२६], सवृद्ध [३०], पूर्वज [३२], ज्येष्ठ [३२], अग्न्य [३०], प्रथम [३०], बृहत् [३०], वर्षीयस् [३०], वृद्ध [३९] = बड़ा, ज्येष्ठ श्रेष्ठ, पूर्वज ।

२०-२६ अर्भक [२६], ह्रस्व [३०], वामन [३०], मध्यम [३२], अपर-ज [३२], कनिष्ठ, [३२] अवसान्य [३३] = छोटा, कनिष्ठ, बालक, निष्ठ,

२७. बुध्न्य = तह में रहनेवाला [३२]

२८. अप्रगल्भ = अज्ञानी [३२]

२९-३० ताम्र, अरुण [३९] = विलोहित [७, ५२, ५८] भन्तु [६], सार्सपजर [१७] लाल रंगवाले,

३१. आक्रन्दयन्, उच्चैर्घोषः = गर्जना करनेवाला [१९]

३२. स्वपत् = सोनेवाला [२३]

३३. जाग्रत् = जागनेवाला [१९]

३४. शयानः = लेटनेवाला [२३]

३५. आसीनः = बैठनेवाला [२३]

३६. तिष्ठत् = खड़ा रहनेवाला [२३]

३७. धावत् = दौडनेवाला [२३]

यहां नानाविध प्राणियों के नाम हैं, तथापि इनमें कई पद मानवप्राणियोंके भी वाचक हो सकते हैं, जैसा देखिये—**गव्हरेष्ठ** [४४] यह पद सिंहव्याघ्रादि जंगली जानवरों का वाचक करके ऊपर दिया है, पर इस पदका अर्थ ‘ गुहा में रहनेवाला मानव ’ भी हो सकता है । जो गुहामें रहता है, वह गव्हरेष्ठ है । इसी तरह ‘ नीप्य ’ [३७] पहाड की तराई पर रहनेवाला यह मानव भी हो सकता है, क्योंकि पहाडों की तराई पर मनुष्य भी रहते हैं । ‘ कूल्य ’ [४२] = नदीतीरपर रहनेवाला यह जैसा मानव, वैसाही अन्य प्राणी भी होना संभव है । इसी तरह अन्ततक समझना उचित है । ये पद प्राणियोंके वाचक हैं, फिर ये प्राणी मनुष्य हों अथवा अन्य हों । ये सब रुद्रदेवता के रूप हैं ।

वास्तुपः— [३९] यह पद घरोंकी सुरक्षा के लिये जो पहरेदार होते हैं, उन का वाचक है । आगे ‘ उपवीती ’ [१७] आदि शब्द मानवों के ही वाचक हैं । **व्युत्केश** [हजामत किये हुए], **विशिखासः** [शिखारहित, सन्यासी] ये सब निःसंदेह मानवही हैं ।

इस के आगे [३२-३७] जागनेवाले, सोनेवाले, लेटनेवाले, बैठनेवाले, दौडनेवाले ये सब जाति के प्राणी हो सकते हैं, क्योंकि सभी प्राणी इन क्रियाओं को करते हैं ।

१२ ते २६ तकके शब्द भी बालक—वृद्ध, जवान—तरुण, मध्यम—कनिष्ठ आदि अवस्थाओं के वाचक हैं, अतः ये पद सब प्राणियों के लिये प्रयुक्त हो सकते हैं । अतः इन अवस्थाओंमें रहनेवाले सभी प्राणी रुद्रदेवता के रूप हैं । बालक, तरुण, वृद्ध ये सब रुद्र हैं, अर्थात् सभी प्राणी रुद्र हैं ।

यहां प्राणियों की कोई भी अवस्था छूटी नहीं है, अर्थात् सब अवस्थाओंमें विद्यमान सब प्राणी रुद्रदेवता के रूप हैं, यह यहां सिद्ध हुआ । पशुपक्षी, मानव, कृमिकीट, पतंग सभी रुद्र

के रूप हैं । इसी तरह सूक्ष्म कृमि भी रुद्र हैं, जो जलों और अज्ञोंद्वारा मनुष्यादि प्राणियों में प्रविष्ट होकर नाना प्रकारके रोग उत्पन्न करते हैं । इनकी भयानकता प्रसिद्ध है—

सूक्ष्म रुद्र ।

ये अश्रेषु विविध्यन्ति पात्रेषु पिबतो जनान् ।

(वा. १६-६२)

जो अज्ञों में तथा जलमें रहते हैं और अन्न खानेवालों तथा जल पीनेवालों में नाना प्रकार की पीड़ा उत्पन्न करते हैं, ये भी सूक्ष्म रोगकृमि रुद्र के रूप हैं ।

वृक्षरूपी रुद्र ।

१. वृक्ष (४०) = वृक्ष, पेड़, वनस्पति ।

२. हरिकेश (४०) = हरे रंगवाले पतेरूपी केश जिनको होते हैं, ऐसे ।

इस तरह वृक्षवनस्पति भी रुद्र के रूप हैं ।

ईश्वरवाचक रुद्र ।

अब ईश्वरको इस रुद्रसूक्तमें ' विश्वरूप ' कहा है । क्योंकि जब सभी रूप परमात्मा के हैं, तब विश्व के सब रूपों को कहाँ तक गिना जाय ? एक बार ' विश्वरूप ' कहा, तो उसमें सब रूप आ गये, इसलिये ये नाम देखिये—

१. विश्वरूपः (२५) = विश्वका रूप धारण करनेवाला,

२. विरूप (२५) = विविध रूप धारण करनेवाला,

३. भव (२८) = सबका उत्पादक,

४. शर्व (२८) = प्रलयकर्ता,

५. भगवः, ईशानः (५३) = भगवान्, ईश्वर,

६. भवस्य हेतिः (१८) = संसार के दुःखों को दूर करने का साधन ।

ईश्वर सब का कल्याण करता है, इसलिये निम्न लिखित पद उस में सार्थ होते हैं—

कल्याणकारी रुद्र ।

३८-४०. शिव, शिवतर (४१), शिवतम (५१), = कल्याण करनेवाला ।

४१-४२ शंभु, शंकर (४१) = शांति करनेवाला ।

४३-४४ मयोभव, मयस्कर (४१) = सुख देनेवाला ।

४५. अघोर (२) = जो भयानक नहीं है, जो शांत है ।

४६. सुमंगल (६) = जो मंगल है ।

४७. शंगु (४०) = शांति-सुख का दाता ।

४८. मीदुष्टम = सुखदाता (५१) ।

४९. त्विषीमत् (१७) = तेजस्वी ।

५०. विद्युत् (३८) = बिजली के समान तेजस्वी ।

५१-५२. शिपिविष्ट, सहस्राक्षः (२९) = सहस्रों किरणों से युक्त, तेजस्वी ।

यहाँ तक जो रुद्रदेवता का वर्णन हुआ, उससे पाठकों को पता लग सकता है कि, तमाम विश्वरूप ही परमेश्वर का रूप है, इस रूप में सब रूप आ गये । सूर्य चंद्रके रूप, जल, पृथ्वी, अग्नि, विद्युत् के रूप, सब प्राणियोंके रूप, सब जन्तुओं के रूप इसमें आ गये हैं ।

स्थावर-जंगम में राज्ययन्त्रके कर्मचारी, राजा, मन्त्री, नाना प्रकारके ओहदेदार, प्रजाजन, सैनिक, योद्धा, क्षत्रिय, स्त्रियाँ, बालक, वृद्ध, तरुण, पशुपक्षी आदि सब आते हैं, जो परमात्मा के ही रूप हैं । यही तो सदैव्यवादद्वारा बताया जा रहा है । इसलिये परमेश्वर के रूप में राज्ययन्त्र का अन्तर्भाव होना स्वाभाविक है । सब राज्य-यन्त्र ईश्वर का स्वरूप है । इस विषय में इस यजुर्वेद के रुद्राध्यायद्वारा जो गूढ़ उपदेश दिया है, वह इस लेख में प्रकट करना है ।

रुद्रदेवता संहार की देवता है, पर वह संहार जनता की भलाई करने के उद्देश्य में होता है । इसलिये यह रुद्रदेवता संघटना का कार्य भी करती है । इस देवताद्वारा जो संहार होता है, वह संघटना के लिये ही होता है । इस लिये रुद्रदेवता संघटना के लिये सहायक देवता है, यह बात यहाँ भूलनी नहीं चाहिये ।

रुद्रदेवता ईश्वर का ही रूप है । ईश्वर संहारकारी है, वैसा रचनाकारी भी है । इसलिये जन्म और मृत्यु ये दोनों उसी के रूप हैं । इसलिये संहार से घबराना योग्य नहीं है । जंगल तोड़ने के बाद उस लकड़ी से घर बनते हैं, अर्थात् वृक्षों का तोड़ना घरों के बनानेका सहायक है । इसी तरह संहार आगामी रचनाके लिये आवश्यक ही है ।

या ते रुद्र शिवा तनूः शिवा विश्वाहा भेषजी ।

शिवा रुतस्य भेषजी तया नो मृड जीवसे ॥

(वा० य० १६।४९)

अर्थात्सङ्घः ॥ २१ ॥ क्षयणाय च ॥ ४३ ॥

(वा० य० १६)

रुद्रकी दो 'तनुएँ' हैं। एक 'घोरा' तनु और दूसरी 'शिवा' तनु। रुद्र का घोर कर्म करनेवाला एक शरीर है और कन्याण-कारक कर्म करनेवाला दूसरा शरीर है। इसीलिये इस रुद्र को जैसे 'शिव' कहते हैं, वैसे ही 'कूर' भी कहते हैं। अस्तु। इस से ज्ञात हो सकता है कि, इस देवताके मिथ से जैसे विघटना के, तौड़ने के कार्यों का विधान है, वैसे ही संघटना के, संगठन के कार्यों का भी उल्लेख है। शत्रु के साथ लड़ना और उस का नाश करना, इसका एक विघटनाका कार्य है और राष्ट्रकी घटना करना इस का दूसरा संघटनाका कार्य है। यह दूसरा कार्य अब बताना है।

वा० यजु० के अ० १६, मं० २५ में " नमो गणेश्यो गणपतिभ्यश्च वो नमः, नमो व्रातेभ्यो व्रातपतिभ्यश्च वो नमः " कहा है। यह गणपति-संस्था की महत्त्व की बात है। गणपतिके सहस्रनामों से 'गण, गणेश, गणपति, गण-मण्डल, गणमण्डलाध्यक्ष, महागणपति' आदि पद हैं। ये भी यहाँ देखने आवश्यक है। यही गणपति-संस्था रुद्र की शासनसंस्था में प्रधान कार्य करनेवाली संस्था है। गण और व्रात ये दो इन के संघटना के मूल भाग हैं।

गण और व्रात ।

'व्रात' पालन करनेवालों के संघ का नाम 'व्रात' है और जो केवल एकत्र गिनाने गये हैं, उन का नाम 'गण' है। 'गण' संख्याने 'धातु से 'गण' शब्द बनता है, अतः इस का अर्थ जितकी संख्या निश्चित की गयी है, जो गिने हैं, जिनकी गणना की गयी है, ऐसा होता है और एक व्रातसे, एक नियम से, एक उद्देश्य तथा एक ध्येय के कारण जो इकट्ठे कार्य कर रहे हैं, वे 'व्रात' हैं। तीसरा एक संघटना बतानेवाला पद इस रुद्राध्याय में है, वह है 'पुञ्जिष्ठ' अर्थात् पुञ्ज करके रहनेवाले, अनेक लोग मिलकर अपना जमाव बनाकर रहनेवाले। 'पुञ्ज' का अर्थ एकत्र मिलकर रहना है। सत्रसंघटना के ये तीन भेद हैं।

वेदमें 'संभूति' शब्द (वा. य. अ. ४१।९-११ में) आया है। कारीगरों की संघटना (व्यवसाय करनेवाली मंडली "कंपनी") के अर्थ में यह पद है। 'संभूति, संभजन, संभूषसमुत्थान' आदि अनेक पद मिलकर व्यवसाय करने के अर्थ में भारतीय अर्थशास्त्र में प्रचलित हुए

रुद्र प्र० ४

हैं। अनेक लोगोंने मिलकर बहुत धन इकट्ठा करके बड़ा व्यापारव्यवहार करने के अर्थ में ये पद प्राचीन काल से प्रयुक्त होते हैं। स्मृतियों और अर्थशास्त्र में इस तरह की संघटना के विषय में विस्तारपूर्वक उल्लेख है। यजुर्वेद के चालीसवें अध्याय में उक्त 'संभूति, संभव' ये पद मानवों के सांघिक जीवनविषयक व्यवहार के लिये आये हैं। पर रुद्राध्याय में इस पदका प्रयोग नहीं है, इसलिये हम यहाँ इस पदका विचार नहीं करेंगे।

गण, व्रात और पुञ्ज ये तीन पद रुद्र की संघटना के लिये इस रुद्राध्याय में प्रयुक्त हुए हैं, इसलिये इनका विचार हम यहाँ करेंगे।

१. 'गण' पदसे 'गणना किये गये, गिने हुए लोग,'

२. 'व्रात' पद से 'एक व्रात का पालन करनेवाले लोग,' और—

३. 'पुञ्ज' पदसे 'एक जातिके लोग' बोधित होते हैं।

जनगणना करनेकी बात 'गण' पदसे बोधित होती है। रुद्रकी शासनसंस्थामें जनोकी गणना की जाती थी, यह इससे सूचित होता है। बिना गणना किये 'गण' बनही नहीं सकते। इसलिये जहाँ गणोंका राज्य होता है, वहाँ जनगणना अवश्य होती है। महादेवके भूतगण प्रसिद्ध हैं। इन भूतगणोंमें जन-गणना की जाती थी। ये ही गण रुद्रशासनमें प्रमुख घटक माने गये हैं।

एक नियमका पालन करनेवाले, एक कार्य करनेवाले, एक उद्देश्यसे संघटित हुए, एक ध्येयको माननेवाले जो लोग होंगे, उनके समूहका नाम 'व्रात' है। कर्मव्यवसायसे, व्यापार-व्यवहारसे ये व्रात नामक संघ निर्माण होते हैं। सैनिकोंके समूहों के भी ये नाम महत्सूक्तोंमें प्रसिद्ध हैं। एकही उद्देश्यसे एकही कर्ममें लगनेके कारण इनमें सांघिक बल बड़ा चढ़ा रहता है।

पूर्वोक्त रुद्रसूक्तमें 'गण, गणपति, व्रात, व्रातपति' ऐसे पद आये हैं। अर्थात् इन संघोंका एक अध्यक्ष भी रहता है। इस अध्यक्ष का कार्य अपने संघका हित करना होता है। (आजकल Union, Guild आदि श्रमजीवी लोगोंके संघ और उनके अध्यक्ष रहते हैं, वैसेही यहाँ ये दीखते हैं।)

इससे पूर्व कहा है, 'गण, गणमण्डल, गणमहामण्डल' ऐसे संघोंके छोटे और मोटे संघ हुआ करते हैं। इसी तरह 'गणेश, गणपति, गणमण्डलेश, गणमहामण्डलाधि-

पति, महागणपति ' आदि नाम गणपतिसहस्रनामोंमें संघाधिपतियोंके दिये हैं । इससे इनके कर्तव्योंका ज्ञान हो सकता है और ये संघ अपने संघमें रहनेवाले लोगोंके लिये क्या कार्य करते हैं, इसका भी ज्ञान इन नामोंके मननसे हो सकता है ।

'पुंज' के लिये 'पुंजपति' नहीं है । 'पुंजिष्ठ' पद ही है । अर्थात् इस नामके संघमें कोई अध्यक्ष नहीं होता था । ये संघके सभी सदस्य मिलकर अपना प्रबंध किया करते थे ।

पुंज के सदस्य इकट्ठे होते हैं और वे सबके सब अपना संघ का हित या प्रबंध करने के लिये जो कुछ करना होगा, वह कर लेते हैं । इनके नाम से यह सिद्ध होता है कि, ये संघशासक हैं । इन संघशासकों में कोई एक मुखिया नहीं होता । अतः ये पूरे पूरे 'समाजशासक' होते हैं । इस पुंजव्यवस्था से गण और व्रात की व्यवस्थामें कुछ भिन्नता है । पाठक इस भेद को ध्यान में अवश्य धारण करें । पुंज का जाति के साथ संबंध है और ऐसा जातीय समाजशासन इस भरतखण्ड में कई जातियों में प्राचीन काल से इस समय तक प्रचलित है ।

ये गण और व्रात संघ कार्य, व्यवहार, धंधा, उद्योग, सिद्धान्त या ध्येय के साथ संबंधित हैं । पुंज के समान जाति के या कुल के साथ संबंधित नहीं हैं । इसीलिये गण और व्रातके पूर्व दूसरे व्यवसायों का वाचक कोई पद अवश्य रखना चाहिये, तब इस व्यवस्था की कल्पना ठीक तरह ध्यानमें आ सकती है । बा० यजुर्वेदके १६ वें अध्यायमें ऐसे अनेक धंधोंके पद हैं, उनको इस के साथ जोड़ दें । देखिये, इससे ये संघ सिद्ध होते हैं—

धंधा

संघ

| | |
|------------------------|-------------------------------------|
| भिषक् (वैद्य) | भिषगगण (वैद्यों का संघ) |
| वणिक् (वैश्य) | वणिगगण (व्यापारियों का संघ) |
| क्षत्ता (बढई) | क्षत्तृगण (बढईयों का संघ) |
| तक्ष्ता (तर्खाण) | तक्षगण (तर्खाणों का संघ) |
| रथकार (रथ बनानेवाला) | रथकारगण (गाड़ी बनानेवालों का संघ) |

कुलाल (कुम्हार) कुलालगण (कुम्हारों का संघ)

इस तरह कार्यव्यवहार करनेवाले धन्धेवालों के गण होते थे और शीत लगाकर, नियम बांधकर एक ध्येय से प्रेरित होकर जो संघ बनेते थे, वे 'व्रात' कहलाते थे । उतने नियमों का, उतनी शर्तोंका ही बन्धन उन व्रातनामक संघवालोंपर रहता था । व्रात संघके सदस्य अन्य व्यवहारके लिये स्वतंत्र समझे

जाते थे । 'गण' व्यवस्थामें हरएक सदस्यपर अन्य सदस्योंके हिताहितकी जिम्मेवारी पूर्णतया रहती थी, पर 'व्रात' व्यवस्थामें उतने निश्चित व्रातकी मर्यादा तक की ही यह जिम्मेवारी रहती थी । गणमें उत्तरदायित्व अधिक और व्रातमें नियमानुकूल मर्यादित रहता था । इस कारण गणमें प्रविष्ट होनेवालोंको लाभ भी अधिक होते थे और व्रातमें उसकी अपेक्षासे लाभ भी कम होते थे ।

विचार करनेसे पता चलता है कि, गणसंस्थामें संमिलित होनेवाले सदस्योंका हित करनेका पूर्णतासे उत्तरदायित्व गणके अधिष्ठातापर रहता था । इसलिये गणेश अर्थात् गणके अधिष्ठाताको तथा गणपति अर्थात् गणके पालनकर्ताको गणके प्रत्येक सदस्यके हितकी सब जिम्मेवारी उठानी पड़ती थी । अर्थात् गणमें प्रविष्ट सदस्य बीमार हुआ, युद्धमें जखमी हुआ, किसी अन्य आपत्तिमें फँसा, तो ऐसी सब आपत्तियोंका निवारण करनेके लिये सुप्रबन्ध करनेका कार्य गणपतिको करना पड़ता था । यह भाव निम्न लिखित नामोंसे ज्ञात होता है— 'गणभीतिहर, गणदुःख-प्रणाशन, गणभीत्यपहारक, गणसौख्यप्रद, गणाभीष्टकर, गणरक्षणकर्ता,' ऐसे अनेक नाम हैं, जो बताते हैं कि गणोंका सब प्रकारसे हित करनेके लिये गणोंके अध्यक्षको अनेक प्रकारका योग्य प्रबंध करना पड़ता था ।

'व्रात' के विषयमें जिम्मेवारी थोड़ी होती है । जिस नियम या शर्तसे वह व्रात संघटित होता था, उतनाही उत्तरदायित्व संघाधिपतिपर रहता था । अन्य बातोंके विषयमें उसको देखने की आवश्यकता नहीं होती थी ।

गण-व्यवस्थामें छोटीमोटी कई संस्थाएं थीं, जो निम्नलिखित नामोंसे ज्ञात हो सकती हैं— 'गणप, गणवर, गणेश, गणपति, गणाधीश, गणाग्रणी, गणाध्यक्ष, गणेश्वर, गणैकराट्, गणाधिराज, गणनायक, गणमण्डलाध्यक्ष' ये पद एक अर्थके वाचक नहीं हैं । प्रत्येक पदमें अधिकारका भेद है और तदनुसार छोटे या बड़े संघका भी वह सूचक है ।

गणमण्डलाध्यक्ष वह है, जो अनेक गणोंके संघोंका अध्यक्ष होता है । गणनायक वह है, जो गणोंको चलानेवाला है । गणप वह है कि जो गणोंका पालन करता है । ये सब पद गणशासन की प्रणाली बताते हैं । इन सबका विचार करनेसे इस शासन-सम्बन्धी सब बातोंका पता लग सकता है, पर हमें इस लेखमें गणपतिसंस्थाका पूर्ण विचार करना नहीं है, प्रत्युत रुद्रशासन-

संस्थाका विचार करना है । इसके अन्तर्गत गणपति पद होनेसे गणपतिसंस्थाका थोडासा विचार करना आवश्यक हुआ, अतः अतिसंक्षेपसे यह विचार यहां किया है ।

अपना प्रकृत विषय ठीक तरह समझमें आनेके लिये यजुर्वेद अ. १६ में आये गण और गणपति का थोडासा अधिक विचार करना आवश्यक है । विचार करनेके लिये मान लीजिये कि, 'रथकार-गण' है, अर्थात् गाड़ियाँ बनानेवालोंका एक संघ रुद्रके अधिराज्यमें स्थापन हुआ है । इसका एक अध्यक्ष होगा, जिसका नाम 'रथकार-गणेश' होगा । इस अध्यक्षका प्रथम कर्तव्य है अपने संघमें स्थित सदस्योंकी गणना करना, एक पुस्तकमें अपने सदस्योंके नाम, स्थान तथा उनकी आवश्यकताओंका लेख तैयार करके सुरक्षित रखना । अपने गणको अर्थात् संघसदस्यको कार्य न होगा, तो उसको कार्य देना, भोजनका प्रबंध न होगा तो करना, बीमार होनेपर दवाका प्रबंध करना, अर्थात् काम लेना और उसके बदले दाम देना अथवा सुखसाधन देना । इतने वर्णनसे पाठकोंके मनमें यह बात आधी होगी कि, यह गणव्यवस्था कैसी होनी चाहिये ।

'गण-आर्ति-हर' यह नाम इस प्रबंधकी सुव्यवस्था का सूचक है । गणव्यवस्थामें आये सदस्योंकी हरप्रकारकी आपत्तियोंको दूर करना गणनायकका कर्तव्य होता है और वह उसको करनाही पडता है । सदस्य कर्म करनेके जिम्मेवार हैं, शेष जिम्मेवारी नायकपर रहती है ।

पाठक ऐसी कल्पना करें कि, इस रथकार-गण में १०० सदस्य होंगे, तो उन को उन के करनेयोग्य काम देना, उन से काम करवा लेना और उन को सुखसाधन समय पर देना, यह इस गणसंस्था में अध्यक्ष का मुख्य कर्तव्य है । ऐसा प्रबंध करने के लिये देशभर कैसी सुव्यवस्था रखना आवश्यक है, इस का विचार पाठक कर सकते हैं । यह रथकार-संघ के विषय में हुआ ।

इस के पश्चात् ऐसे अनेक गणों का 'गण-मण्डल' होता है । जिस में एक दूसरे के साथ सम्बन्ध रखनेवाले अनेक उपकारक गणों का परस्पर सम्मेलन होता है और अनेक 'गण-मण्डलों' का मिलकर एक 'महागणमण्डल' हुआ करता है । हम पूर्वोक्त रुद्राध्यायमें देखेंगे कि, गणमण्डल में रथकार-गण के साथ कौन से अन्य गण संमिलित हो सकते हैं । हमारे विचार से निम्न लिखित कारीगरों का गणमण्डल रथकार-गण के

साथ बन सकता है— (क्षतृगण) वडइयोंका संघ, (तक्षगण) तर्खाणों का संघ, (कर्मारगण) लुहारों का संघ, ये और ऐसे एक दूसरेके साथ सम्बन्ध रखनेवाले अनेक कारीगरों के गणोंका मिलकर यह गणमण्डल होगा ।

इस गणमण्डल का एक अध्यक्ष होगा । उसका कर्तव्य सब गणों का हित करना होगा । इस तरह सदस्यों का गण, गणों का गणमण्डल और गणमण्डलों का महागणमण्डल होता है । ऐसा संघों का यह जाला देशभर फैला रहता है । यह है गणशासन की आयोजना ।

रुद्रसूक्त में जो नाम गिनाये हैं, उन में जो कार्यव्यवहार के वाचक नाम हैं, उन सब के ऐसे गण हैं, ऐसा समझकर इस रुद्रशासनप्रणाली का विचार करना चाहिये । तब वैदिक गणशासन का महत्त्व ध्यान में आ सकता है । यहां प्रत्येक के संघ का स्वतन्त्र विचार करके लेख को व्यर्थ बढाने की आवश्यकता नहीं है । रुद्र की शासनव्यवस्था की कल्पना ही पाठकों को देना है । ऊपर दिये वर्णन से वह व्यवस्था पाठकों के मन में आ गयी होगी । इस तरह ब्राह्मणवर्ग में कई गण अथवा संघ, क्षत्रियों में अनेक गण अथवा संघ, इसी तरह वैश्य और शूद्रों में भी कार्यव्यवहार तथा व्यवसाय के गण बनाने से यह रुद्रशासनप्रणाली परिपूर्ण होती है ।

राष्ट्र में कोई मनुष्य गणव्यवस्था से बाहर नहीं रहने पाय, जिसके कर्म और व्यवहार की गणना नहीं हुई, ऐसा भी कोई मनुष्य नहीं रहना चाहिये । प्रत्येक मनुष्य को उसके करनेके लिये सुयोग्य कार्य मिलना चाहिये और उस कर्म के बदले उसको कर्मफलस्वरूप आवश्यक सुखसाधन प्राप्त होने चाहिये । यह इस गणव्यवस्था का मूल सूत्र है ।

प्रत्येक मनुष्य को अपना कर्म उत्तम कुशलता के साथ समाप्त करना चाहिये, कर्म के फलस्वरूप सुखसाधन देना इस शासनसंस्था की जिम्मेवारी है । कर्म करनेपर हरएक को आवश्यक सुखसमाधान मिलने ही चाहिये । आवश्यक सुखसाधनों में रहने के लिये सुयोग्य स्थान, भोजन के लिये योग्य और आवश्यक वस्त्र, पीने के लिये उत्तम जल, ओढने के लिये आवश्यक वस्त्र, बीमारी की निवृत्ति के लिये चिकित्सा के साधन, धर्मसंस्कार के समय पर होनेकी व्यवस्था, विद्या की पढाईकी व्यवस्था और आध्यात्मिक उन्नति के लिये आवश्यक गुरुपदेश आदिका समावेश होना स्वाभाविक है । जो सदस्य उत्तम धर्मा-

नुकूल रहेगे, उनका इस व्यवस्था से कल्याण होगा । पर जो नियमभंग करेंगे, उनको कठोर दण्ड देना भी इस रुद्रशासन के प्रबंधद्वारा ही होता रहता है । उसमें क्षमा नहीं होगी ।

रुद्रसूक्त में जो नाम कार्यव्यवहार करनेवालोंके गिनाये है, उतने ही कार्यव्यवहार करनेवाले हैं, ऐसी बात नहीं है । किसी देशविशेषमें इससे न्यून वा अधिक भी कार्यव्यवहार करनेवाले लोग हो सकते हैं । वहाँ की स्थिति के अनुसार न्यून वा अधिक गणों की व्यवस्था होगी । उस रुद्राध्याय के वर्णन में इस रुद्राध्यक्षशासनव्यवस्था का पता लगने के लिये केवल सूचनामात्र उल्लेख है । उस अध्याय में ' गण, गणपति ' तथा ' व्रात, व्रातपति ' ऐसे नाम लिखकर इस गणशासन के व्यवहार की सूचना दी है । परन्तु प्रत्येक धंधेवाले के साथ ' गण ' शब्द उस अध्याय में लगाया नहीं है । वह उन धंधेवाले नामों के साथ लगाकर इस शासन की कल्पना पाठकों को करनी चाहिये, इसीलिये यह लेख लिखा है ।

उक्त अध्याय में कई पद सर्वसामान्य भाव बतानेवाले हैं, उन्हें देखिये—(उपवीती) यज्ञोपवीतधारी, (उष्णीषी) पगड़ीधारी, (कपर्दी) शिखाधारी, (व्युसकेश) जिस के बाल कटे हैं । ये पद सामान्य हैं । प्रत्येक वर्णके लोगों को ये पद लगाये जा सकते हैं । ' उपवीती ' पद तीन वर्णों के लिये प्रयुक्त हो सकता है, शेष तीनों पद सब मानवोंके लिये प्रयुक्त हो सकते हैं ।

इसी तरह (स्वपत्) सोनेवाला, (जाग्रत्) जागनेवाला, (शयनः) लेटनेवाला, (आसीनः) बैठनेवाला आदि पद सर्वसामान्य मानवों के लिये अथवा प्राणियों के लिये लगाये जा सकते हैं । तथा (महान्) बड़ा, (ज्येष्ठ) श्रेष्ठ, (प्रथम) पहिला, (कनिष्ठ) छोटा आदि पद भी सामान्य पद हैं, जो हरएक प्राणी के लिये प्रयुक्त हो सकते हैं । ऐसे सामान्य पद इस अध्याय में कौनसे हैं, उन का पता पाठकों को उक्त पदों का अर्थ देखने से लग सगता है । ऐसे सर्वसामान्य पद छोटने चाहिये, और शेष पदों में जो पद कामधंधेके सूचक हैं, व्यापार व्यवहार के सूचक तथा विशेष उद्यम के सूचक हैं, उनके साथ ही यह ' गण ' पद अथवा ' व्रात ' पद लग सकता है । ये ' गण, व्रात और पुंज ' पद सब व्यवसायों के साथ लगनेवाले पद हैं । उदाहरण के लिये हम कुछ ऐसे गण बना देते हैं—

ब्राह्मणवर्ण में— गुरुसगण (कवियों का संघ), श्रुतगण

(भुतिशास्त्रज्ञों का संघ), अधिवक्तृगण (उपदेशक संघ), भिषगण (वैद्यों का संघ), इ. इ.

क्षत्रियवर्ण में— क्षेत्रपति-गण (खेतोंके मालिकों का संघ), रथीगण (रथियोंका संघ), स्वायुधगण (उत्तम हथियार चलानेवालों का संघ), दुरेवधगण (दूर से लड़ करनेवालों का संघ), इ. इ.

वैश्यवर्णमें— बणिगण (व्यापारियोंका संघ), संग्रहीत-गण (बड़े बड़े संग्रह [Store] करनेवालोंका संघ), पशु-पतिगण (पशुपालकों का संघ), इ. इ.

शूद्रवर्ण में— रथकारगण (गाड़ी बनानेवालों का संघ), शुकुद्रगण (बाण बनानेवालों का संघ), कुलालगण (कुम्हारों का संघ), निषादगण (निषादोंका संघ), इ. इ.

इस तरह इस रुद्राध्याय का विचार करके जितने धंधेवाले यहां हैं और जितने कल्पना में आ सकते हैं, उतनों के संघों की अर्थात् उतने गणोंकी अथवा व्रातोंकी कल्पना पाठक कर सकते हैं । इस तरह गणोंकी स्थापना के पश्चात् अनेक परस्पर सहायक गणोंका मिलकर एक गणमण्डल बनने की भी कल्पना पाठक करें । प्रत्येक गण का एक अध्यक्ष तथा गणमण्डल का प्रमुख बनाने का भी विचार इसी तरह हो सकता है । इस संस्था के अध्यक्ष वा प्रमुख का कर्तव्य पूर्व स्थानमें बताया ही है । गणके सब सदस्यों का ठीक तरह योगक्षेम चलाना संघप्रमुखों का कर्तव्य है । कर्म कुशलता से करना संघस्थों का कर्तव्य है । इस तरह विचार करनेसे निःसन्देह पता लग सकता है कि, यह गणशासन की आयोजना अत्यंत उत्तम है और बड़ी सुखदायी भी है ।

हम में कर्मकर्ताओं को चिंता नहीं है, प्रमुखों को ही चिंता रहनी है । कर्मकर्ताको इतनी ही चिंता रहती है कि, अपनी कारीगरी की अत्यधिक उन्नति करना । सबका योगक्षेम गणव्यवस्थाके प्रबंधद्वारा यथायोग्य होता रहता है ।

शिक्षाका प्रबंध ब्राह्मणों के द्वारा विनामूल्य होता रहता है । रक्षाका प्रबंध क्षत्रिय करते रहते हैं । इसी तरह वैश्यशूद्रों के व्यवसायों का प्रबंध होता रहता है । और सब मानवों का योगक्षेम चलता है ।

' गणनायक ' का कार्य गणके सदस्यों को चलाना है । यहां नासक का अर्थ अधिपति नहीं है, परन्तु नेता अर्थात्

ज्ञातक है। आज्ञा कर्त्तव्य करना चाहिये, इस विषय की आज्ञा संमति अपने सदस्यों को देकर जो अपने संघ से उत्तमोत्तम कार्य कराता रहता है, वही गणनायक होता है। गण का ईश्वर, गण का पालक, गण का अधिपति, गण का नायक, ये सब विभिन्न कर्त्तव्य बतानेवाले पद हैं। इनके विभिन्न कर्त्तव्य अच्छी तरह समझनेसे ही गणशासन का उपयोगित्व ठीक तरह ध्यान में आ सकता है।

गण का अधिष्ठाता जानता है कि, अपने संघ में कितने कर्मकर्त्ता हैं, किसको किस वस्तु की जरूरत है, उस की आवश्यकता की पूर्तता किस तरह करनी चाहिये, अपने संघ में कौन बीमार है, किस वैद्य से उसकी चिकित्सा करनी योग्य है, आदि का विचार गण का अधिष्ठाता करता रहता है। गणमण्डल के अन्दर अनेक संघ संमिलित रहते हैं, उनके धंधोंका परस्पर संबंध रहता है और वे धंधे एक दूसरे के साहाय्यकारी रहते हैं। इसलिये गणमण्डल की सुव्यवस्थासे सब गणों का सुख बढ़ता जाता है।

गणमण्डलों के मुख्य महागणमण्डलाध्यक्ष के पास सभी प्रकार की व्यवस्था रहती है। सारे कारीगरोंके सब पदार्थ उसके कार्यालयमें जमा होते हैं और आवश्यकताके अनुसार ब्रह्म पदार्थों का लेनदेन करता है। अनावश्यक वस्तुओं के निर्माण पर वह प्रतिबंध रखता है, और आवश्यक वस्तुओं के निर्माण की प्रेरणा करता है। एक बार इस तरह की सुव्यवस्था की कल्पना पाठकोंके मनमें उतर गयी, तो वे ही इस सब व्यवस्था के विषय में उत्तम कल्पना अपने मन में कर सकते हैं। इस दृष्टि से यह वा० यजुर्वेद का १६ वाँ अध्याय विशेष अभ्यवनीय है। साथ ही साथ वा० यजुर्वेद ३०वाँ अध्याय भी मननपूर्वक अध्ययन करनेयोग्य है। १६ वाँ अध्याय रुद्रदेवताके रूप बताने के लिये है और ३० वाँ अध्याय नारायण पुरुष के रूप बताने के लिये है। पर तत्त्वदृष्टि से दोनों का आशय एक ही है।

मह गणशासनव्यवस्था वेद की आदर्श शासनव्यवस्था है। इस से प्रजा का हित अधिक से अधिक हो सकता है। प्रजा का सुख अधिक से अधिक करने के लिये इसी मार्ग से जाना चाहिये। इस में शासकों की व्यवस्था इस तरह रहती है—

१. रुद्र = (महारुद्र, महादेव) = सर्वाधिपति।

२. मंत्री = मन्त्री, सलाहकार।

३. सभा, सभापति = राष्ट्रसभा, राष्ट्रसभापति, ग्रामसभा, प्रांतसमिति, आमंत्रण (मन्त्रीमंडल)।

४. गण, गणपति = गणोंकी नाना प्रकार के संघों की व्यवस्था।

५. व्रात, व्रातपति = नाना प्रकार व्रतनिष्ठ संघों की व्यवस्था।

६. पुञ्जिष्ठ = मानवपुञ्जों की व्यवस्था।

यह व्यवस्था पूर्व स्थान में बतायी है। गण, महामण्डल, गणमण्डल आदि बड़े बड़े संघों में से राष्ट्रसभा के सदस्य चुने जाते हैं और इस तरह राज्य का नियंत्रण होता रहता है और वहां प्रत्यक्ष जनताके साथ रातदिन रहनेवाले और जनता की स्थिति देखनेवाले ही लोग आते हैं, इसलिये जन का शासन जनहित का साधक होता है।

इस के साथ साथ निम्न लिखित कार्यकर्त्ता भी होते हैं—

७. क्षेत्रपति = खेतों की रक्षा करनेवाले,

८. वनपति = वनों की पालना करनेवाले,

९. स्थपति = स्थानों के पालनकर्त्ता,

१०. कक्षाणां पति = राष्ट्र की कक्षा चारों ओर की परिधि होती है, वहीं की सुरक्षा करने के लिये जो नियुक्त होते हैं, वे कक्षापति कहलाते हैं, गुप्त स्थानों के रक्षक।

११. पक्षीनां पति = पैदल विभाग के नेता,

१२. सेना, सेनापति = सब प्रकार की सेना और उस के अधिपति,

१३. सेनानी = सेना का संचालन करनेवाले,

१४. आव्याधिनीनां पति = हमला करनेवाली सेना के नेता।

इस तरह सेना की व्यवस्था इस रुद्रशासन में रहती है। इस रुद्राध्याय में सैनिकों के नाम बड़े विस्तारपूर्वक दिये हैं। पाठक उन सब को यहां रखकर उन का कार्य राष्ट्ररक्षा में कितना है, इस का यथायोग्य विचार करें, उन सबको यहां पुनः लिखने की कोई आवश्यकता नहीं है।

१५. वास्तुपः = घरोंकी रक्षाके लिये नियुक्त पहरेदार,

१६. वास्तव्यः = लोग जहां रहते हैं, वहां रहनेवाला,

१७. गङ्गरेष्ठः = गिरिकंदरों की रक्षाके लिये नियुक्त,

१८. नदेयः, तीर्थः = नदी तैरकर पार होनेके स्थान-
पर रक्षा के लिये तथा सहाय-
तार्थ नियुक्त,

१९. नक्तंचरः = रात्रीके समय घूमकर रक्षा करनेमें नियुक्त ।

इस तरह अनेकानेक पदोंसे पाठक योग्य बोध प्राप्त कर सकते हैं और रुद्र की शासनव्यवस्थाका पता भी इस से लगा सकते हैं ।

यहां पाठक देखें कि, रुद्राध्याय (वा. यजु. अ. १६) के विशेष सूक्ष्म रीति के इस अध्ययन से एक विशेष प्रकार की गणशासन की प्रणाली का बोध यहां हमें मिला है । यह वैदिक व्यवस्था है और प्रत्येक प्रजाजनका इससे लाभ हो सकता है । इस विषय में विस्तारपूर्वक बहुत कुछ स्पष्टीकरण करना आवश्यक है, परन्तु वैयाकरणों के लिये हमारे पास यहां स्थान नहीं है ।

एक रुद्रके अनेक रूप हैं ।

एक ही रुद्र के ये सब मानवी रूप हैं । गण, गणपति ये दोनों रुद्र के रूप हैं । मन्त्री और राजा, सेना और सेनापति, क्षेत्र और क्षेत्रपति, वणिक् और ग्राहक, शिष्य और गुरु ये सब रुद्र के रूप हैं । कोई मनुष्य, कोई प्राणी अथवा कोई वस्तु रुद्रका रूप नहीं, ऐसी वस्तु यहां नहीं है ।

यहां राजा भी ईश्वर का रूप है और प्रजा भी । दोनों मिलकर एक ईश्वरके दो रूप हैं । राजा-प्रजा, गुरु-शिष्य, मालक-मजदूर, धनी-सेवक, ज्ञानी-अज्ञानी ये सब ईश्वरके ही रूप हैं, अतः ये परस्पर की सेवा करनेयोग्य हैं । एक सत्ता के ये अंश हैं । अतः सब की मिलकर एक ही सत्ता माननी चाहिये । यहां किसी की भी विभिन्न सत्ता नहीं है । हम सब एक ही जीवन के अंश हैं, यह जानकर परस्पर के सहायक व्यवहार हम सबको करने चाहिये ।

जिस तरह एक शरीर में सिर, आंख, नाक, कान, मुख, जिह्वा, दांत, होठ, गाल, बाहु, अंगुलियां, हात, पैर, पांव आदि अनेक अवयव एकही जीवनके अवयव हैं और पूर्णतया परस्पर सहायता करना इनका कर्तव्य है, सब का मिलकर एक जीवन है, यह जानना, मानना और उस एक जीवन के हितके लिये अपना समर्पण करना प्रत्येक अवयव का कर्तव्य है, उसी तरह सब मानव एकही जीवनके अंश हैं, यह जानना,

मानना और उस अखंड, अटूट, अनन्य एक जीवनका अत्यधिक हित करनेके लिये अपने जीवनको लगाना, अर्थात् पूर्ण की सेवाके लिये अंशने अपना अर्पण करना आवश्यक है ।

जो लोग शंका करते हैं कि सदैक्यवादसे राष्ट्रीय शासन किस तरह होगा, राष्ट्रीय एकता, राष्ट्रकी उन्नति तथा राष्ट्रीय संघटना किस तरह होगी, इस शंकाका उत्तर इस लेखमें दिया गया है । वेदने जनताकी उन्नतिके लिये 'सदैक्यवाद' दिया और इस वादसे सिद्ध होनेवाला राष्ट्रीय संघटनाका आदर्श भी मानवोंके सम्मुख गणव्यवस्थाद्वारा रख दिया । सदैक्यवादसे अनन्य-भावकी सिद्धता होती है और सब प्राणियोंका मिलकर एक अखण्ड और अटूट जीवन है, इसके विषयमें निश्चय होता है । इस निश्चयके पश्चात् व्यक्ति व्यक्ति की, संघ संघकी तथा जाति जाति की सेवामें लगकर, परस्पर सेवाशुभ्रूषासे जो सबकी उन्नति होती है, उस उन्नतिकी आयोजनाकी कल्पना इस गणसंस्थासे पाठकों के मनमें स्थिर हो सकती है । इस तरह सदैक्यवादसे राष्ट्रीय उन्नति सिद्ध होती है और इससे मानवताका भी पूर्ण विकास हो सकता है ।

इस रुद्राध्याय में सब प्राणी रुद्रके रूप हैं ऐसा कहकर संघटना का वैदिक संदेश दिया है । अन्य स्थानों में पुरुष, नारायण, आत्मा, ब्रह्म आदिके सब रूप हैं, ऐसा बता कर वही संदेश दिया है । सदैक्यवाद का तत्त्व यह है कि, सबके रूप भिन्न होने पर भी सब की सत्ता तत्त्वतः एक मानना । यहां तत्त्वतः भिन्न अनेक सत्ताएं नहीं हैं । इस सदैक्यवाद के सिद्धान्त को व्यवहार में लानेके लिये छोटे छोटे गणों में यह तत्त्व प्रथम आचरणद्वारा तथा परस्पर सेवाद्वारा सिद्ध करना चाहिये । पश्चात् गणों के, संघोंके और राष्ट्रके व्यवहार में लाना चाहिये और अन्त में मानवों के व्यवहार में लाना योग्य है । इसका मार्ग जो वेद ने बताया है, वह यह है । इसका विचार पाठक करें ।

अस्तु । रुद्रदेवताका स्वरूप और उसका कार्य इसका विचार यहांतक हुआ । पाठक रुद्रके मंत्रोंका अधिक विचार करें और वेदका आशय जाननेका यत्न करें । यहां रुद्रके संपूर्ण मंत्रोंका संग्रह इसी प्रकारके मनन के लिये इकट्ठा किया है ।

निवेदन-कर्ता

श्रीपाद दामोदर सातवळेकर,
स्वाध्याय-मण्डल, औंध, (जि. सातारा)

रुद्रदेवताकी विषयसूची ।



| विषय | पृष्ठ | विषय | पृष्ठ |
|---|-------|--|-------|
| १. रुद्रदेवताका परिचय । | ३ | २१. सर मोनिअर वुडलियमसाहबकी सम्मति । | १३ |
| २. रुद्रके विषयमें निरुक्तका मत | ” | २२. श्री० म० आर्थर आंटोनी मॅक्डोनेलसाहबकी सम्मति । | १४ |
| ३. रुद्रके विषयमें उपनिषत्कारोंकी सम्मति । | ४ | २३. पौराणिक रुद्र और वैदिक रुद्र । | १५ |
| ४. रुद्रके एकत्वके विषयमें वेदकी सम्मति । | ५ | २४. रुद्रका शरीर । | ” |
| ५. सर्वव्यापक रुद्रदेव । | ” | २५. खोजका विषय । | १६ |
| ६. जगत् का पिता रुद्र । | ” | २६. रुद्रदेवताका यजुर्वेदोक्त विश्वरूप । | ” |
| ७. सब सृष्टिका स्वामी रुद्र । | ” | २७. मानवरूपोंमें रुद्र (ज्ञानी पुरुष) । | ” |
| ८. सर्वशक्तिमान् रुद्र । | ६ | २८. क्षत्रियवर्गके रुद्र (वीर रुद्र ।) | १७ |
| ९. गुहानिवासी रुद्र । | ” | २९. वैश्यवर्गके रुद्र । | १९ |
| १०. अपने अंतःकरणमें रुद्र की खोज । | ” | ३०. शिल्पिवर्गके रुद्र । | ” |
| ११. अनेक रुद्रोंमें व्यापक ‘ एक रुद्र ’ । | ७ | ३१. चार वर्णोंके रुद्र । | २० |
| १२. एक रुद्रके पुत्र अनेक रुद्र हैं । | ” | ३२. आततायी वर्ग के रुद्र । | ” |
| १३. अनंत प्राणी अनेक रुद्र हैं । | ” | ३३. प्राणियों में रुद्र के रूप । | २२ |
| १४. अनेक रुद्रोंकी संख्या । | ९ | ३४. सर्वसाधारण रुद्र । | २३ |
| १५. रुद्रके विषयमें श्रीसायणाचार्यजीका मत । | ” | ३५. सूक्ष्म रुद्र । | २४ |
| १६. श्रीउवटाचार्यजी का ‘ रुद्र ’ विषयक मत । | १० | ३६. वृक्षरूपी रुद्र । | ” |
| १७. श्रीमहीधराचार्यजीका ‘ रुद्र ’ संबंधी मत । | ” | ३७. ईश्वरवाचक रुद्र । | ” |
| १८. श्री स्वामी दयानंदसरस्वतीजीका रुद्रके विषयमें मत, , | ” | ३८. कल्याणकारी रुद्र । | ” |
| १९. श्री भग० गीताके विभूतियोगके साथ तुलना । | १२ | ३९. गण और व्रात । | २५ |
| २०. पं. जॉन डॉसनसाहबका मत । | १३ | ४०. एक रुद्रके अनेक रूप हैं । | ३० |

रुद्र-देवता-मंत्रोंकी ऋषिसूची ।

रुद्रः ।

| ऋषिः | मंत्रसंख्या | पृष्ठम् | ऋषिः | मंत्रसंख्या | पृष्ठम् |
|------------------------|-------------|---------|--------------------------|-------------|---------|
| कण्वो घौरः | १-५ | १ | (वाज०यजुर्वेदमन्त्राः ।) | ३७-१११ | ४ |
| कुत्स आत्रिरसः । | ६-१६ | ” | ब्रह्मा । | ११२-११७ | ९ |
| यत्समदः शौनकः । | १७-३१ | २ | कपिजलः । | ११८ | १० |
| मैत्रावरुणिर्वसिष्ठः । | ३२-३६ | ३ | अथर्वा । | ११९-१४१ | ” |

रुद्रसहचारी देवगणः ।

| | | |
|---|---------|----|
| (१) रुद्रः मित्रावरुणौ च । कण्वो घोरः । | १४२ | ११ |
| (२) रुद्रः, दिशः । अथर्वा । | १४३-२०० | " |
| (३) आदित्याः, रुद्राः । | " | १३ |
| (४) सोमारुद्रौ । | " | " |
| (५) भव-शर्व-रुद्राः | " | १४ |

| | | |
|---------------------------------------|---------|----|
| भग-शर्व-रुद्राः । मन्तातिः । | २०१-२०२ | १६ |
| (६) रुद्रा, व्याघ्रः । अथर्वा । | २०३-२०९ | " |
| (७) रुद्रः (अग्निः) । वामदेवो गौतमः । | २१० | १७ |
| " " " (मृत्युः) । संकसुको यामायनः । | २११-१४ | " |
| " " " " । अथर्वा । | २१५-२१७ | १८ |
| " " " " । प्रजापतिः । | २१४-२२५ | " |
| " " " " । दुहणः । | २२६-२३७ | १९ |

रुद्र-देवताकी सूचियाँ ।

| | | | |
|--------------------------|--------|--------------------------------|-------|
| १ पुनरुक्त-मन्त्रभागाः । | पृ० २० | ३ गुणबोधक-पदसूची । | २४-३० |
| ऋ० प्रथमं मण्डलम् । | " | ४ मृत्यु-देवता-गुणबोधक-पदानि । | ३१ |
| द्वितीयं " | " | ५ मृत्युनिवारक-ब्रह्मौदन- | " |
| चतुर्थं " | " | गुणबोधक-पदानि । | " |
| सप्तमं " | " | ६ दिग्भेदेन रुद्ररूपाणि । | ३२ |
| २ मन्त्राणां सूची । | २१-२३ | ७ उपमा-सूची । | " |





दैवत-संहिता ।

(ऋग्यजुःसामाथर्वणां संहितानां सर्वान् मन्त्रान् दैवतानुसारेण संगृह्य निर्मिता ।)

७ रुद्रदेवता ।

॥१॥ (ऋ० १।४३।१-२,४-६)

(१-५) कण्वो घोरः । गायत्री ।

| | | | |
|----------------------|----------------------|-------------------------|-----|
| कद् रुद्राय प्रचेतसे | मीळहुष्टमाय तव्यसे | । वोचेम शंतमं हुदे | १ |
| यथा नो अदितिः कर्तु | पश्चे नृभ्यो यथा गवे | । यथा तोकाय रुद्रियम् | २ |
| गाथपतिं मेधपतिं | रुद्रं जलाषभेषजम् | । तच्छंयोः सुम्नमीमहे | ४ |
| यः शुक्र इव सूर्यो | हिरण्यमिव रोचते | । श्रेष्ठो देवानां वसुः | ५ |
| शं नः कर्त्तव्यते | सुगं मेषाय मेघ्ये | । नृभ्यो नारिभ्यो गवे | ६ ५ |

॥२॥ (ऋ० १।११४।१-११)

(६-१६) कुत्स आङ्गिरसः । जगतीः १०-११ त्रिष्टुप् ।

| | | |
|---------------------------------|---------------------------------------|-----|
| इमा रुद्राय तवसे कपर्दिने | क्षयद्वीराय प्र भरामहे मतीः । | |
| यथा शमसद् द्विपदे चतुष्पदे | विश्वं पुष्टं ग्रामे अस्मिन्नानातुरम् | १ |
| मुळा नो रुद्रोत नो मयस्कृधि | क्षयद्वीराय नमसा विधेम ते । | |
| यच्छं च योश्च मनुरायेजे पिता | तदश्याम तव रुद्र प्रणीतिषु | २ |
| अश्याम ते सुमतिं देवयज्यया | क्षयद्वीरस्य तव रुद्र मीद्वः । | |
| सुम्नायन्निद् विशो अस्माकमा चरा | रिष्टवीरा जुह्वाम ते हविः | ३ |
| त्वेषं वयं रुद्रं यज्ञसाधं | वड्कुं कविमवसे नि ह्वयामहे । | |
| आरे असद् दैव्यं हेळो अस्यतु | सुमतिमिद् वयमस्या वृणीमहे | ४ ९ |

| | |
|--|-------|
| दिवो वराहमरुपं कपर्दिनं त्वेष रूपं नमसा नि ह्वयामहे । | |
| हस्ते बिभ्रद् भेषजा वार्याणि शर्म वर्मं च्छदिरसभ्यं यंसत् | ५ १० |
| इदं पित्रे मरुतामुच्यते वचः स्वादोः स्वादीयो रुद्राय वर्धनम् । | |
| रास्वा च नो अमृत मर्तभोजनं तमने तोकाय तनयाय मृळ | ६ |
| मा नो महान्तमुत मा नो अर्भकं मा न उक्षन्तमुत मा न उक्षितम् । | |
| मा नो वधीः पितरं मोत मातरं मा नः प्रियास्तन्वो रुद्र रीरिषः | ७ |
| मा नस्तोके तनये मा न आयौ मा नो गोषु मा नो अश्वेषु रीरिषः । | |
| वीरान् मा नो रुद्र भामितो वधीर्हविष्मन्तः सदमित् त्वां हवामहे | ८ |
| उप ते स्तोमान् पशुपा इवाकरं रास्वा पितर्मरुतां सुम्नमस्ते । | |
| भद्रा हि ते सुमतिर्मृळ्यत्तमाथा वयमव इत् ते वृणीमहे | ९ |
| आरे ते गोघ्नमुत पूरुषघ्नं क्षयद्वीर सुम्नमस्ते ते अस्तु । | |
| मृळा च नो अर्धं च ब्रूहि देवाधा च नः शर्म यच्छ द्विबर्हीः | १० |
| अवोचाम नमो अस्मा अवस्यवः शृणोतु नो हवै रुद्रो मरुत्वान् । | |
| तन्नो मित्रो वरुणो मामहन्तामदितिः सिन्धुः पृथिवी उत द्यौः | ११ १६ |

॥३॥ (ऋ० २।३३।१-१५)

(१७-३१) गृत्समद् (आङ्गिरसः शौनहोत्रः पञ्चात्) भार्गवः शौनकः । त्रिष्टुप् ।

| | |
|--|------|
| आ ते पितर्मरुतां सुम्नमेतु मा नः सूर्यस्य सदृशो युयोथाः । | |
| अभि नो वीरो अर्धति क्षमेत प्र जायेमहि रुद्र प्रजार्भिः | १ |
| त्वादत्तेभी रुद्र शन्तमेभिः शन्तं हिमां अशीय भेषजेभिः । | |
| व्यस्मद् द्वेषो वितरं व्यंहो व्यमीवाश्चातयस्वा विषूचीः | २ |
| श्रेष्ठो जातस्य रुद्र श्रियासि तवस्तमस्तवसां वज्रबाहो । | |
| पर्वि णः पारमंहसः स्वस्ति विश्वा अमीती रपसो युयोधि | ३ |
| मा त्वां रुद्र चुक्रुधामा नमोभिर्मा दुष्टुती वृषभ मा सहूती । | |
| उन्नो वीराँ अर्पय भेषजेभिर्भिषक्तं त्वा भिषजां शृणोमि | ४ २० |
| हवीमभिर्हवते यो हविर्भिरव स्तोमेभी रुद्रं दिषीय । | |
| ऋदूदरः सुहवो मा नो अस्यै बभ्रुः सुशिप्रो रीरधन्मनायै | ५ |
| उन्मा ममन्द वृषभो मरुत्वान् त्वक्षीयसा वयसा नाधमानम् । | |
| घृणीव च्छायामरुपा अशीयाऽऽ विवासेयं रुद्रस्य सुम्नम् | ६ २२ |

| | |
|---|-------|
| क॑ स्य ते रुद्र मृळयाकु—ईस्तो यो अस्ति भेषजो जलाषः । | |
| अप॒भर्ता रप॑सो दैव्यस्या—भी नु मा वृषभ चक्षमीथाः | ७ |
| प्र ब॒भ्रवे वृष॑भार्य श्विती॒चे महो म॒हीं सु॑ष्टुतिर्मीरयामि । | |
| नम॑स्या कल्मलीकिनं नमो॑भि—गृणीमसि त्वेषं रुद्रस्य नाम | ८ |
| स्थिरे॑भिरङ्गैः पुरुरूपं उग्रो बभ्रुः शुक्रेभिः पिपिशे हिरण्यैः । | |
| ईशाना॑दस्य भुवनस्य भूरे—र्न वा उ योषद् रुद्रादसुर्यम् | ९ २५ |
| अर्हेन् बिभर्षि साय॑कानि धन्वा—र्हेन् निष्कं यजतं विश्वरूपम् । | |
| अर्हे॒भिदं द॑यसे विश्वमभ्वं न वा ओजी॑यो रुद्र त्वदस्ति | १० |
| स्तुहि श्रुतं गते॑सदं युवानं मृगं न भीममुपह॑त्नुमुग्रम् | |
| मृळा ज॑रित्रे रुद्र स्तवानो ऽन्यं ते अ॒स्मभि व॑पन्तु सेनाः | ११ |
| कुमारश्चित् पित॑रं वन्दमानं प्रति॑ नानाम रुद्रोपयन्तम् । | |
| भूर॑र्दातारं सत्पतिं गृणीषे स्तुतस्त्वं भेष॑जा रा॒स्यस्मे | १२ |
| या वो भेष॑जा मरुतः शुची॑नि या शंत॑मा वृषणो या म॑योभु । | |
| यानि म॑नुरवृणीता पिता न—स्ता शं च योश्च रुद्रस्य व॑श्मि | १३ |
| परि॑ णो हेती रुद्रस्य वृज्याः परि॑ त्वेषस्य दुर्म॑तिर्मही गात् । | |
| अव॑ स्थिरा म॒घर्व॑द्भ्यस्तनुष्व मी॒ढ्वस्तो॑काय तन॑याय मृळ | १४ |
| ए॒वा ब॑भ्रो वृषभ चेकितान् यथा॑ देव न हृणी॑षे न हंसि । | |
| ह॒वन॑श्रुभो रु॒द्रेह वो॑धि बृहद् व॑देम वि॒दथे॑ सुवीराः | १५ ३१ |

(॥४॥ (ऋ० ७।४६।१-४)

(३२-३६) मैत्रावरुणिर्वसिष्ठः । जगती, ४ त्रिष्टुप् ।

| | |
|--|------|
| इ॒मा रु॒द्राय॑ स्थिरध॑न्वने गिरः क्षि॒प्रेष॑वे दे॒वाय॑ स्व॒धाने॑ । | |
| अषा॑ळहाय सह॑मानाय वे॒धसे॑ ति॒गमायु॑धाय भर॑ता शृ॒णोतु॑ नः | १ |
| स हि क्ष॑येण क्षम्य॑स्य जन्म॑नः साम्रा॑ज्येन दि॒व्यस्य॑ चे॒तति॑ । | |
| अव॑स्रवन्तीरुप॑ नो दुर॑श्चरा—ऽनमी॒वो रु॒द्र जा॑सु नो भव | २ |
| या ते दि॒द्युद॑वसु॒ष्टा दि॒वस्परि॑ क्ष॒मया॑ चर॑ति परि॑ सा वृ॒णक्तु॑ नः । | |
| स॒हस्रं॑ ते स्व॒पिवा॑त भेष॑जा मा न॑स्तो॒केषु॑ तन॑येषु रीरिषः | ३ |
| मा नो॑ वधी रुद्र॒ मा परा॑ दा मा ते॒ भूम॑ प्रसि॑तौ ही॒ळित॑स्य । | |
| आ नो॑ भज ब॒र्हिषि॑ जीव॒शंसे॑ यूयं पा॑त स्व॒स्तिभिः॑ सदा॑ नः | ४ ३५ |

॥५॥ (ऋ० ७।५९।११)

रुद्रः (त्र्यम्बकः) (मृत्युविमोचनी ऋक्) । अनुष्टुप् ।

त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम् ।

उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय मामृतात्

१२ ३६

॥६॥ (३७-१११) (वा० य० ३।५७-६३) ×

एष ते रुद्र भागः सह स्वस्त्राम्बिकया तं जुषस्व स्वाहैष ते रुद्र भाग आस्तुस्ते पशुः ५७

अवं रुद्रमदीमह्यवं देवं त्र्यम्बकम् ।

यथा नो वस्यसस्करद् यथा नः श्रेयसस्करद् यथा नो व्यवसाययात् ५८

भेषजमसि भेषजं गवेऽश्वाय पुरुषाय भेषजम् । सुखं मेषाय मेघ्यै ५९

त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनं । उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय मामृतात् ।

त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पतिवेदनं । उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय मामृतात् ६० ४०

एतत् ते रुद्रावसं तेन परो मूर्जवतोऽतीहि ।

अवततधन्वा पिनाकावसः कृत्तिवासा अहिंशसन्नः शिवोऽतीहि ६१

त्र्यायुषं जमदग्नेः कश्यपस्य त्र्यायुषम् । यद् देवेषु त्र्यायुषं तन्नो अस्तु त्र्यायुषम् ६२

शिवो नामासि स्वधितिस्ते पिता नमस्ते अस्तु मा मा हिंसीः ।

निर्वर्त्तयाम्यायुषेऽन्नाद्याय प्रजननाय रायस्पोषाय सुप्रजास्त्वाय सुवीर्याय ६३

॥७॥ (वा० य० १०।२०)

रुद्र यत् ते क्रिवि परं नाम तस्मिन् हुतमस्यमेष्टमसि स्वाहा

२०

॥८॥ (वा० य० ११।५४)

रुद्राः सन्धुज्यं पृथिवीं बृहज्ज्योतिः समीधिरे ।

तेषां भानुरजस इच्छुक्रो देवेषु रोचते

५४ ४५

॥९॥ (वा० य० १६।१-६३) +

नमस्ते रुद्र मन्यवं उतो न हष्ये नमः । बाहुभ्यामुत ते नमः १

या ते रुद्र शिवा तनूवोरापापकाशिनी ।

तथा नस्तन्वा शन्तमया गिरिशन्ताभिचाकशीहि २

यामिषुं गिरिशन्त हस्ते बिभर्ष्यस्तवे ।

शिवां गिरिन् तां कुरु मा हिंसीः पुरुषं जगत् ३ ४८

| | | |
|--|----|----|
| शिवेन वचसा त्वा गिरिशाच्छा वदामसि । | | |
| यथा नः सर्वमिज्जगदयक्ष्मं सुमना असत् | ४ | |
| अध्यवोचदधिवक्ता प्रथमो दैव्यो भिषक् । | | |
| अर्होश्च सर्वाङ्गभयन्तसर्वाश्च यातुधान्योऽधराचीः परासुव | ५ | ५० |
| असौ यस्ताम्रो अरुण उत चभ्रुः सुमङ्गलः । | | |
| ये चैनं रुद्रा अभितो दिक्षु श्रिताः सहस्रशोऽवैपां हेड ईमहे | ६ | |
| असौ योऽवसर्पति नीलग्रीवो विलोहितः । | | |
| उतैनं गोपा अहश्चन्नदृश्नुदहार्युः स दृष्टो मृडयाति नः | ७ | |
| नमोऽस्तु नीलग्रीवाय सहस्राक्षाय मीढुपे । | | |
| अथो ये अस्य सत्त्वानोऽहं तेभ्योऽकरं नमः | ८ | |
| प्रमुञ्च धन्वंनस्त्वमुभयोरात्न्योर्ज्याम् । | | |
| याश्च ते हस्त इषवः परा ता भगवो वप | ९ | |
| विज्यं धनुः कपर्दिनो विशल्यो वाणवाँर उत । | | |
| अनेशन्नस्य या इषव आभुरस्य निषङ्गधिः | १० | ५५ |
| या ते हेतिर्मीढुष्टम हस्ते बभूव ते धनुः । | | |
| तयास्मान् विश्वतस्त्वमयक्ष्मया परिभुज | ११ | |
| परि ते धन्वनो हेतिरस्मान् वृणक्तु विश्वतः । | | |
| अथो य इषुधस्तवारे अस्मन्निधेहि तम् | १२ | |
| अवतत्य धनुष्वथ सहस्राक्ष शतैषुधे । | | |
| निशीर्य शल्यानां मुखा शिवो नः सुमना भव | १३ | |
| नमस्त आयुधायानां तताय धृष्णवे । उभाभ्यामुत ते नमो बाहुभ्यां तव धन्वने | १४ | |
| मा नो महान्तमुत मा नो अर्भकं मा न उक्षन्तमुत मा न उक्षितम् । | | |
| मा नो वधीः पितरं मोत मातरं मा नः प्रियास्तन्वो रुद्र रीरिषः | १५ | ६० |
| मा नस्तोके तनये मा न आयुषि मा नो गोषु मा नो अश्वेषु रीरिषः । | | |
| मा नो वीरान् रुद्र भामिनो वधीर्हविष्मन्तः सदमित् त्वां हवामहे | १६ | |
| नमो हिरण्यबाहवे सेनान्ये दिशां च पतये नमो नमो वृक्षेभ्यो हरिकेशेभ्यः | | |
| पद्भूनां पतये नमो नमः शष्पिञ्जराय त्विषीमते पथीनां पतये नमो नमो हरिकेशायो- | | |
| पचीतिने पुष्टानां पतये नमः | १७ | ६१ |

नमो बभ्रुशाय व्याधिनेऽक्षानां पतये नमो नमो भवस्य हेत्यै जगतां पतये
नमो नमो रुद्रायाततायिने क्षेत्राणां पतये नमो नमः सूतायाहन्त्यै वनानां पतये
नमः १८

नमो रोहिताय स्थपतये वृक्षाणां पतये नमो नमो भ्रुवन्तये वारिवस्कृतायौष-
धीनां पतये नमो नमो मन्त्रिणे वाणिजाय कक्षाणां पतये नमो नम उच्चैर्घोषायाक्रन्दयते
पत्तीनां पतये नमः १९

नमः कुत्स्नायतया धावते सत्त्वनां पतये नमो नमः सहमानाय निव्याधिर्न आघ्या-
धिनीनां पतये नमो नमो निषङ्गिणे ककुभाय स्तेनानां पतये नमो नमो निचेरवे
परिचरायारण्यानां पतये नमः २०

६५

नमो वञ्चते परिवञ्चते स्तायूनां पतये नमो नमो निषङ्गिण इषुधिमते तस्कराणां
पतये नमो नमः सूक्रायिभ्यो जिघांशसद्भ्यो मुष्णतां पतये नमो नमोऽसिमद्भ्यो
नक्तश्चरद्भ्यो विक्रान्तानां पतये नमः २१

नम उष्णीषिणे गिरिचराय कुलुञ्चानां पतये नमो नम इषुमद्भ्यो धन्वायिभ्यश्च
वो नमो नम आतन्वानेभ्यः प्रतिदधानेभ्यश्च वो नमो नम आयच्छद्भ्योऽस्यद्भ्यश्च
वो नमः २२

नमो विसृजद्भ्यो विध्यद्भ्यश्च वो नमो नमः स्वपद्भ्यो जाग्रद्भ्यश्च वो नमो नमः
शयानेभ्य आसीनेभ्यश्च वो नमो नमस्तिष्ठद्भ्यो धावद्भ्यश्च वो नमः २३
नमः सभाभ्यः सभापतिभ्यश्च वो नमो नमोऽश्वेभ्योऽश्वपतिभ्यश्च वो नमो नम
आघ्याधिनीभ्यो विविध्यन्तीभ्यश्च वो नमो नम उगणाभ्यस्तृहतीभ्यश्च वो नमः २४

नमो गणेभ्यो गणपतिभ्यश्च वो नमो नमो व्रातेभ्यो व्रातपतिभ्यश्च वो नमो नमो
गृत्सेभ्यो गृत्सपतिभ्यश्च वो नमो नमो विरूपेभ्यो विश्वरूपेभ्यश्च वो नमः २५

७०

नमः सेनाभ्यः सेनानिभ्यश्च वो नमो नमो रथिभ्यो अरथेभ्यश्च वो नमो नमः
क्षत्रभ्यः संग्रहीतृभ्यश्च वो नमो नमो महद्भ्यो अर्भकेभ्यश्च वो नमः २६

नमस्तक्ष्मभ्यो रथकारेभ्यश्च वो नमो नमः कुलालेभ्यः कर्मारेभ्यश्च वो नमो
नमो निषादेभ्यः पुञ्जिष्ठेभ्यश्च वो नमो नमः इवनिभ्यो मृगयुभ्यश्च वो नमः २७

नमः श्वभ्यः श्वपतिभ्यश्च वो नमो नमो भवाय च रुद्राय च नमः शर्वाय च
पशुपतये च नमो नीलग्रीवाय च शितिकण्ठाय च २८

७३

नमः कपदिने च व्युप्तकेशाय च नमः सहस्राक्षाय च शतधन्वने च नमो गिरिश-
याय च शिपिविष्टाय च नमो मीढुष्टमाय चेष्टुमते च ३९

नमो ह्रस्वाय च वामनाय च नमो बृहते च वर्षीयसे च नमो वृद्धाय च सवृधे
च नमोऽग्न्याय च प्रथमाय च ३० ७५

नम आशवे चाजिराय च नमः शीघ्राय च शीभ्याय च नम ऊर्म्याय चाव-
स्वन्याय च नमो नादेयाय च द्वीप्याय च ३१

नमो ज्येष्ठाय च कनिष्ठाय च नमः पूर्वजाय चापरजाय च नमो मध्यमाय
चापगल्भाय च नमो जघन्याय च बुध्याय च ३२

नमः सोभ्याय च प्रतिसर्षाय च नमो याम्याय च क्षेम्याय च नमः श्लोक्याय
चावसान्याय च नम उर्वर्याय च खल्याय च ३३

नमो वन्याय च कक्ष्याय च नमः श्रवाय च प्रतिश्रवाय च नम आशुषेणाय
चाशुरथाय च नमः शूराय चावभेदिने च ३४

नमो बिलिने च कवचिने च नमो वर्मिणे च वरूथिने च नमः श्रुताय च
श्रुतसेनाय च नमो दुन्दुभ्याय चाहनन्याय च ३५ ८०

नमो धृष्णवे च प्रमृशाय च नमो निषङ्गिणे चेष्टुधिमते च नमस्तीक्ष्णेषवे चायु-
धिने च नमः स्वायुधाय च सुधन्वने च ३६

नमः स्रुत्याय च पथ्याय च नमः काट्याय च नीप्याय च नमः कुल्याय च
सरस्याय च नमो नादेयाय च वैशन्ताय च ३७

नमः कूप्याय चावट्याय च नमो वीध्याय चातप्याय च नमो मेध्याय च
विद्युत्याय च नमो वर्ष्याय चावर्ष्याय च ३८

नमो वात्याय च रेष्म्याय च नमो वास्तव्याय च वास्तुपाय च नमः सोमाय
च रुद्राय च नमस्ताम्राय चारुणाय च ३९

नमः शङ्गवे च पशुपतये च नम उग्राय च भीमाय च नमोऽग्रेवधाय च दूरे-
वधाय च नमो हन्त्रे च हनीयसे च नमो वृक्षेभ्यो हरिकेशेभ्यो नमस्ताराय ४० ८५

नमः शम्भवाय च मयोभवाय च नमः शङ्कराय च मयस्कराय च नमः शिवाय
च शिवतराय च ४१

नमः पार्याय चावार्याय च नमः प्रतरणाय चोत्तरणाय च नमस्तीर्थ्याय च
कूल्याय च नमः शष्प्याय च फेन्याय च ४२ ८७

नमः सिक्त्याय च प्रवाद्याय च नमः किंशिलाय च क्षयणाय च नमः कप-
दिने च पुलस्तये च नमः इरिण्याय च प्रपञ्च्याय च ४३

नमो ब्रज्याय च गोष्ठ्याय च नमस्तल्प्याय च गेह्याय च नमो हृदय्याय च
निवेष्ट्याय च नमः काट्याय च गह्वरेष्ठाय च ४४

नमः शुष्क्याय च हरित्याय च नमः पांशुसव्याय च रजस्याय च नमो लोप्याय
चोलप्याय च नम ऊर्व्याय च सूर्याय च ४५ ९०

नमः पूर्णाय च पर्णशृङ्गाय च नम उदुरमाणाय चामिध्नते च नम आखिदुते च
प्रखिदुते च नम इषुकृद्भ्यां धनुष्कृद्भ्यां च नमो नमो वः किरिकेभ्यो देवानां च
हृदयेभ्यो नमो विचिन्वत्केभ्यो नमो विक्षिणत्केभ्यो नम आनिर्हतेभ्यः ४६

द्रापे अन्धसस्पते दरिद्र नीललोहित ।

आसां प्रजानामेषां पशूनां मा भेमा रोङ्मो च नः किञ्चनार्ममत् ४७

इमा रुद्राय तवसे कपदिने क्षयद्वीराय प्रभरामहे मतीः ।

यथा शमसद् द्विपदे चतुष्पदे विश्वं पुष्टं ग्रामे अस्मिन्ननातुरम् ४८

या ते रुद्र शिवा तनूः शिवा विश्वाहा भेषजी ।

शिवा रुतस्य भेषजी तया नो मृड जीवसे ४९

परि नो रुद्रस्य हेतिर्वृणक्तु परि त्वेषस्य दुर्मतिरघायोः ।

अव स्थिरा मघवद्भ्यस्तनुष्व मीढ्वस्तोकाय तनयाय मृड ५० ९५

मीढुष्टम शिवतम शिवो नः सुमना भव ।

परमे वृक्ष आयुधं निधाय कृत्ति वसान आचर पिनाकं बिभ्रदागहि ५१

विकिरिद्र विलोहित नमस्ते अस्तु भगवः ।

यास्ते सहस्रं हेतयोऽन्यमस्मभिवपन्तु ताः ५२

सहस्राणि सहस्रशो बाह्वोस्तव हेतयः । तासामीशानो भगवः पराचीना मुखा कृचि ५३

असंख्याता सहस्राणि ये रुद्रा अधि भूम्याम् ।

तेषां सहस्रयोजनेऽव धन्वानि तन्मसि ५४

अस्मिन् महत्यर्णवेऽन्तरिक्षे भुवा अर्थि । तेषां सहस्रयोजनेऽव ५५ १००

नीलग्रीवाः शितिकण्ठा दिव्यं रुद्रा उपश्रिताः । तेषां सहस्रयोजनेऽव ५६

नीलग्रीवाः शितिकण्ठाः शर्वा अधः क्षमाचराः । तेषां सहस्रयोजनेऽव ५७

ये वृक्षेषु शण्डिञ्जरा नीलग्रीवा विलोहिताः । तेषां सहस्रयोजनेऽव ५८ १०३

| | | |
|---|----|-----|
| ये भूतानामर्षिपतयो विशिखासः कपर्दिनः । तेषां सहस्रयोजनेऽव० | ५९ | |
| ये पक्षां पथिरक्षय एलवृदा आयुर्धुधः । तेषां सहस्रयोजनेऽव० | ६० | १०५ |
| ये तीर्थानि प्रचरन्ति सुकाहस्ता निषङ्गिणः । तेषां सहस्रयोजनेऽव० | ६१ | |
| येऽन्धेषु विविष्यन्ति पात्रेषु पिबतो जनान् । तेषां सहस्रयोजनेऽव० | ६२ | |
| य एतावन्तश्च भूयांश्च दिशो रुद्रा वितस्थिर । तेषां सहस्रयोजनेऽव० | ६३ | |
| नमोऽस्तु रुद्रेभ्यो ये द्विवि येषां वर्षमिषवः । तेभ्यो दश प्राचीर्दश दक्षिणा दश प्रतीचीर्दशोदीचीर्दशोर्ध्वाः । तेभ्यो नमो अस्तु ते नोऽवन्तु ते नो मृडयन्तु ते यं द्विष्मो यश्च नो द्वेष्टि तमेषां जम्भे दध्मः | ६४ | |
| नमोऽस्तु रुद्रेभ्यो येऽन्तरिक्षे येषां वात इषवः । तेभ्यो दश प्राचीर्दश दक्षिणा दश प्रतीचीर्दशोदीचीर्दशोर्ध्वाः । तेभ्यो नमो अस्तु ते नोऽवन्तु ते नो मृडयन्तु ते यं द्विष्मो यश्च नो द्वेष्टि तमेषां जम्भे दध्मः | ६५ | |
| नमोऽस्तु रुद्रेभ्यो ये पृथिव्यां येषामन्नमिषवः । तेभ्यो दश प्राचीर्दश दक्षिणा दश प्रतीचीर्दशोदीचीर्दशोर्ध्वाः । तेभ्यो नमो अस्तु ते नोऽवन्तु ते नो मृडयन्तु ते यं द्विष्मो यश्च नो द्वेष्टि तमेषां जम्भे दध्मः | ६६ | १११ |

॥१०॥ (अथर्व० १।१९।३)

(११२-११७) ब्रह्मा । पथ्यापङ्क्तिः ।

यो नः स्वो यो अरणः सज्जात उत निष्ट्यो यो अस्माँ अभिदासति ।
रुद्रः श्ररव्यं यैतान् ममामित्रान् वि विष्यतु

३

॥११॥ (अथर्व० ६।५५।२-३)

१ अष्टुप्, ३ जगती ।

ग्रीष्मो हेमन्तः शिशिरो वसन्तः शरद् वर्षाः स्विते नो दधात ।

आ नो गोषु भजता प्रजायाँ निवात इव वः शरणे स्याम

२

इवावत्सरायं परिवत्सरायं संवत्सरायं कृणुता बृहन्नमः ।

तेषां वयं सुमतौ यद्वियानामपि भद्रे सौमनसे स्याम

३

॥१२॥ (अथर्व० १३।४।४; १३।६।२५-२६) ।

४ प्राजापत्याऽनुष्टुप्, २५ एकपदाऽऽसुरी गायत्री, २६ आच्यनुष्टुप् ।

सोऽर्यमा स वरुणः स रुद्रः स महादेवः ।

रश्मिभिर्नम आभूतं महेन्द्र एत्यावृतः

४

११५

स एव मृत्युः सोऽमृतं सोऽम्वै१ स रक्षः २५
 स रुद्रो वसुवर्निर्वसुदेये नमोवाके वषट्कारोऽनु संहितः २६ ११७

॥१३॥ (अथर्व० २।२७।६)

(११८) कापञ्जलः । अनुष्टुप् ।

रुद्र जलाषभेषज नीलशिखण्ड कर्मकृत् ।

प्राशं प्रतिप्राशो जह्यरसान् कृण्वोषधे ६

॥१४॥ (अथर्व० ७।८७।१)

(११९-१४१) अथर्वा । जगती ।

यो अग्नौ रुद्रो यो अस्व१न्तर्य ओषधीर्वीरुध आविवेश ।

य इमा विश्वा भुवनानि चाकलपे तस्मै रुद्राय नमो अस्त्वग्नये १

॥१५॥ (अथर्व० १।५।१-२१)

१ त्रिपदा समाविषमा गायत्री; २ त्रिपदा भुरिगार्ची त्रिष्टुप्; ३,६,९,१२,१५,१८,२१ त्रिपदा प्राजाप-

त्याऽनुष्टुप्, ४ त्रिपदा स्वराट् प्राजापत्या पङ्क्तिः; ५,८,११,१७ त्रिपदा ब्राह्मी गायत्री; ७,१०,१६

त्रिपदा ककुप्; १३,१९ भुरिग् विषमा गायत्री; १४ निचृद्ब्राह्मी गायत्री; २० विराट् ।

तस्मै प्राच्या दिशो अन्तर्देशाद् भवमिष्वासमनुष्टातारमकुर्वन् ॥१॥ १ १२०

भव एनमिष्वासः प्राच्या दिशो अन्तर्देशादनुष्टातानु तिष्ठति

नैनं श्रवो न भवो नेशानः ॥२॥ २

नास्य पशून् न समानान् हिनस्ति य एवं वेद ॥३॥ ३

तस्मै दक्षिणाया दिशो अन्तर्देशाच्छर्वमिष्वासमनुष्टातारमकुर्वन् ॥१॥ ४

शर्व एनमिष्वासो दक्षिणाया दिशो अन्तर्देशादनुष्टातानु तिष्ठति

नैनं श्रवो न भवो नेशानः ॥२॥ ५ नास्य पशून् ० ॥३॥ ६ १२५

तस्मै प्रतीच्या दिशो अन्तर्देशात् पशुपतिमिष्वासमनुष्टातारमकुर्वन् ॥१॥ ७

पशुपतिरेनामिष्वासः प्रतीच्या दिशो अन्तर्देशादनुष्टातानु तिष्ठति

नैनं श्रवो न भवो नेशानः ॥२॥ ८ नास्य पशून् ० ॥३॥ ९

तस्मा उदीच्या दिशो अन्तर्देशादुग्रं देवमिष्वासमनुष्टातारमकुर्वन् ॥१॥ १०

उग्र एनं देव इष्वास उदीच्या दिशो अन्तर्देशादनुष्टातानु तिष्ठति

नैनं श्रवो न भवो नेशानः ॥२॥ ११ नास्य पशून् ० ॥३॥ १२

तस्मै ध्रुवाया दिशो अन्तर्देशाद् रुद्रमिष्वासमनुष्टातारमकुर्वन् ॥१॥ १३ १३२

रुद्र एनमिष्वासो ध्रुवायां दिशो अन्तर्देशादनुष्ठातानुं तिष्ठति

नैनं श्रुवो न भ्रुवो नेशानः ॥२॥ १४ नास्य पशून् ॥३॥

१५

तस्मा ऊर्ध्वायां दिशो अन्तर्देशान्महादेवमिष्वासमनुष्ठितारमकुर्वन् ॥१॥

१६ १३५

महादेव एनमिष्वास ऊर्ध्वायां दिशो अन्तर्देशादनुष्ठातानुं तिष्ठति

नैनं श्रुवो न भ्रुवो नेशानः ॥२॥ १७ नास्य पशून् ॥३॥

१८

तस्मै सर्वेभ्यो अन्तर्देशेभ्य ईशानमिष्वासमनुष्ठितारमकुर्वन् ॥१॥

१९

ईशान एनमिष्वासः सर्वेभ्यो अन्तर्देशेभ्योऽनुष्ठातानुं तिष्ठति

नैनं श्रुवो न भ्रुवो नेशानः ॥२॥

नास्य पशून् न समानान् हि नस्ति य एवं वेद ॥३॥

२१

॥१६॥ (अथर्व १९।१८।३) आर्च्यनुष्टुप् ।

सोमं ते रुद्रवन्तमृच्छन्तु । ये मां घायवो दक्षिणाया दिशोऽभिदासात्

३ १४१



रुद्र-सहचारी देवगणः ।

(१) रुद्रः मित्रावरुणौ च ।

॥१७॥ (ऋ १।४३।३)

(१४२) कण्वो घोरः । गायत्री ।

यथा नो मित्रो वरुणो यथा रुद्रश्चिकेतति । यथा विश्वे सजोषसः

३

(२) रुद्रः, दिशः ।

॥१८॥ (अथर्व ३।२६।१-६)

(१४३-२००) अथर्वा । दिशः, रुद्रः, १ साम्रयो हेतयः, २ सकामा अविष्यवः, ३ वैराजः, ४ सवाताः प्रविध्यन्तः,

५ सौषधिका निलिम्पाः, ६ बृहस्पतियुता अवस्वन्तः । त्रिष्टुप्; २, ५-६ जगती;

३-४ भुरिक्; १-६ पञ्चपदा विपरीतपादलक्ष्मा ।

येष्टुऽस्यां स्थ प्राच्यां दिशि हेतयो नाम देवास्तेषां वो अग्निरिषवः ।

ते नो मृडत ते नोऽधि ब्रूत तेभ्यो वो नमस्तेभ्यो वः स्वाहा

१

येष्टुऽस्यां स्थ दक्षिणायां दिश्य विष्यवो नाम देवास्तेषां वः काम इषवः ।

ते नो मृडत ते नोऽधि ब्रूत तेभ्यो वो नमस्तेभ्यो वः स्वाहा

२

येष्टुऽस्यां स्थ प्रतीच्यां दिशि वैराजा नाम देवास्तेषां व आप इषवः ।

ते नो मृडत ते नोऽधि ब्रूत तेभ्यो वो नमस्तेभ्यो वः स्वाहा

३ १४५

ये॒द्दे॒ऽस्यां॑ स्थो॒दी॒च्यां॑ दि॒शि प्र॒वि॒ध्यन्तो॑ नाम॑ दे॒वास्तेषां॑ वो॒ वा॒त॒ इ॒षवः॑ ।
 ते नो॑ मृ॒ढत॒ ते नो॒ऽधि॒ ब्रू॒त तेभ्यो॑ वो॒ नम॑स्तेभ्यो॑ वः॒ स्वाहा॑ ४
 ये॒द्दे॒ऽस्यां॑ स्थ॒ ध्रु॒वायां॑ दि॒शि नि॒लि॒म्पा॑ नाम॑ दे॒वास्तेषां॑ व॒ ओष॑धी॒रिष॑वः ।
 ते नो॑ मृ॒ढत॒ ते नो॒ऽधि॒ ब्रू॒त तेभ्यो॑ वो॒ नम॑स्तेभ्यो॑ वः॒ स्वाहा॑ ५
 ये॒द्दे॒ऽस्यां॑ स्थो॒र्ध्वायां॑ दि॒श्यव॑स्वन्तो॑ नाम॑ दे॒वास्तेषां॑ वो॒ बृ॒ह॒स्पति॑रिष॑वः ।
 ते नो॑ मृ॒ढत॒ ते नो॒ऽधि॒ ब्रू॒त तेभ्यो॑ वो॒ नम॑स्तेभ्यो॑ वः॒ स्वाहा॑ ६

॥१९॥ (अथर्व० ३।२।१-६)

दिशः, रुद्रः; १ अग्निः असितः, आदित्याः; २ इन्द्रः, तिरश्चिराजी, पितरः; ३ वरुणः, पृदाकूः, अश्विनः, ४ सोमः, स्वजः, अश्विनः; ५ विष्णुः, कल्माषग्रीवा वीरुधः; ६ बृहस्पतिः, श्वित्रो, वर्षम् ।

१-६ पञ्चपदा ककुम्भतीर्गर्भाऽष्टिः, (२ अत्यष्टिः, ५ भुरिक्) ।

प्रा॒ची दि॒ग्ग॒ग्नि॒रधि॑पति॒रमि॑तो र॒क्षिता॑दि॒त्या इ॒षवः॑ ।
 तेभ्यो॑ नमो॒ऽधि॑पति॒भ्यो नमो॑ र॒क्षितृ॑भ्यो॒ नम॑ इ॒षु॑भ्यो॒ नम॑ ए॒भ्यो अस्तु॑ ।
 यो॒द्दे॒ऽस्मान् द्वेष्टि॑ यं व॒यं द्वि॒ष्मस्तं॑ वो॒ ज॒म्भे॑ द॒ध्मः॑ १
 दक्षि॑णा दि॒ग्निन्द्रो॑ऽधि॒पति॑स्ति॒रश्चि॑राजी र॒क्षिता॑ पि॒तर॒ इष॑वः ।
 तेभ्यो॑ नमो॒ऽधि॑पति॒भ्यो नमो॑ र॒क्षितृ॑भ्यो॒ नम॑ इ॒षु॑भ्यो॒ नम॑ ए॒भ्यो अस्तु॑ ।
 यो॒द्दे॒ऽस्मान् द्वेष्टि॑ यं व॒यं द्वि॒ष्मस्तं॑ वो॒ ज॒म्भे॑ द॒ध्मः॑ २ १५०
 प्र॒ती॒ची दिग् वरु॑णो॒ऽधि॑पतिः पृ॒दाकू॑ र॒क्षिता॑न्मि॒षवः॑ ।
 तेभ्यो॑ नमो॒ऽधि॑पति॒भ्यो नमो॑ र॒क्षितृ॑भ्यो॒ नम॑ इ॒षु॑भ्यो॒ नम॑ ए॒भ्यो अस्तु॑ ।
 यो॒द्दे॒ऽस्मान् द्वेष्टि॑ यं व॒यं द्वि॒ष्मस्तं॑ वो॒ ज॒म्भे॑ द॒ध्मः॑ ३
 उ॒दी॒ची दिक् सो॒मोऽधि॑पतिः स्व॒जो र॒क्षिता॑श॒निरि॑षवः ।
 तेभ्यो॑ नमो॒ऽधि॑पति॒भ्यो नमो॑ र॒क्षितृ॑भ्यो॒ नम॑ इ॒षु॑भ्यो॒ नम॑ ए॒भ्यो अस्तु॑ ।
 यो॒द्दे॒ऽस्मान् द्वेष्टि॑ यं व॒यं द्वि॒ष्मस्तं॑ वो॒ ज॒म्भे॑ द॒ध्मः॑ ४
 ध्रु॒वा दिग् विष्णु॑रधि॒पतिः॑ क॒ल्माष॑ग्री॒वो र॒क्षिता॑ वी॒रुध॒ इष॑वः ।
 तेभ्यो॑ नमो॒ऽधि॑पति॒भ्यो नमो॑ र॒क्षितृ॑भ्यो॒ नम॑ इ॒षु॑भ्यो॒ नम॑ ए॒भ्यो अस्तु॑ ।
 यो॒द्दे॒ऽस्मान् द्वेष्टि॑ यं व॒यं द्वि॒ष्मस्तं॑ वो॒ ज॒म्भे॑ द॒ध्मः॑ ५
 ऊ॒र्ध्वा दिग् बृ॒ह॒स्पति॑रधि॒पतिः॑ श्वि॒त्रो र॒क्षिता॑ व॒र्षमि॑षवः ।
 तेभ्यो॑ नमो॒ऽधि॑पति॒भ्यो नमो॑ र॒क्षितृ॑भ्यो॒ नम॑ इ॒षु॑भ्यो॒ नम॑ ए॒भ्यो अस्तु॑ ।
 यो॒द्दे॒ऽस्मान् द्वेष्टि॑ यं व॒यं द्वि॒ष्मस्तं॑ वो॒ ज॒म्भे॑ द॒ध्मः॑ ६ १५४

(३) आदित्याः, रुद्राः ।

॥२०॥ (अथर्व० ५।३।१०)

बृहद्विवोऽधर्वा । विराड् जगती ।

ये नः सपत्ना अप ते भवन्तिवन्द्राग्निभ्यामव बाधामह एनान् ।

आदित्या रुद्रा उपरिस्पृशौ न उग्रं चेत्तारमधिराजमक्रत

१० १५५

(४) सोमारुद्रौ ।

॥२१॥ (अथर्व० ५।३।१-१४)

१ ब्रह्म, २ कर्माणि, ३-४ रुद्रगणाः, ५-८ सोमारुद्रौ, ९ हेतिः, १०-१४ सर्वात्मा रुद्रः ।

विष्टुप्, २ अनुष्टुप्, ३ जगती, ४ अनुष्टुबुणिक्त्रिष्टुगर्भा पञ्चपदा जगती,

५-७ त्रिपदा विराणनाम गायत्री, ८ एकावसाना द्विपदाऽऽर्च्यनुष्टुप्,

१० प्रस्तारपङ्क्तिः, ११-१३ पङ्क्तिः, १४ स्वराट्पङ्क्तिः ।

ब्रह्म जज्ञानं प्रथमं पुरस्ताद् वि सीमतः सुरुचौ वेन आवः ।

स बुध्या उपमा अस्य विष्ठाः सतश्च योनिमसतश्च वि वः

१

अनाम्ना ये वः प्रथमा यानि कर्माणि चक्रिरे ।

वीरान् नो अत्र मा दभन् तद् व एतत् पुरो दधे

२

सहस्रधार एव ते समस्वरन् दिवो नाके मधुजिह्वा असुधतः ।

तस्य स्पृशो न नि मिषन्ति भूर्णयः पदेपदे पाशिनः सन्ति सेतवे

३

पर्युषु प्र धन्वा वाजसातये परि वृत्राणि सक्षणिः ।

द्विषस्तदध्यर्णवेनेयसे सनिस्सो नामासि त्रयोदशो मास इन्द्रस्य गृहः

४

न्वेष्टेतेनारात्सीरसौ स्वाहा ।

तिग्मायुधौ तिग्महेती सुशेवौ सोमारुद्राविह सु मृडतं नः

५

१६०

अवैतेनारात्सीरधौ स्वाहा । तिग्मायुधौ तिग्महेती०

६

अपैतेनारात्सीरसौ स्वाहा । तिग्मायुधौ तिग्महेती०

७

मुमुक्तमस्मान् दुरितादवधाज्जुषेथां यज्ञममृतमस्मासु घत्तम्

८

चक्षुषो हेते मनसो हेते ब्रह्मणो हेते तपसश्च हेते ।

मेन्या मेनिरस्यमेनयस्ते संन्तु येष्टुऽस्मां अभ्यघायन्ति

९

योष्टुऽस्माश्चक्षुषा मनसा चित्याकृत्या च यो अघायुरभिदासात् ।

स्वं तानमे मेन्यामेनीन् कृणु स्वाहा

१० १६५

| | |
|---|----|
| इन्द्रस्य गृहोऽसि । तं त्वा प्र पद्ये तं त्वा प्र विशामि सर्वगुः सर्वपूरुषः | |
| सर्वोत्मा सर्वतनूः सह यन्मेऽस्ति तेन | ११ |
| इन्द्रस्य शर्मोसि । तं त्वा प्र पद्ये तं० | १२ |
| इन्द्रस्य वर्मोसि । तं त्वा प्र पद्ये तं० | १३ |
| इन्द्रस्य वरूथमसि । तं त्वा प्र पद्ये तं० | १४ |

(५) भव-शर्व-रुद्राः ।×

॥२२॥ (अथर्व० ११।२।१-३१)

त्रिष्टुप्; १पराऽतिजागता विराड्जागती; २ अनुष्टुप्गार्भा पञ्चपदा पथ्याजगती; ३ चतुष्पदा
स्वराड्गणिक; ४-५, ७, १३, १५-१६, २१ अनुष्टुप्; ६ आर्षी गायत्री; ८ महाबृहती;
९ आर्षी; १० पुरोक्तति त्रिपदा विराद्; ११ पञ्चपदा विराड्जगतीगर्भा
शकरी; १२ भुरिक; १४, १७-१९, २३, २६-२७ विराड्गायत्री;
२० भुरिगायत्री; २२ विषमपादलक्ष्मा त्रिपदा
महाबृहती; २४, २९ जगती; २५ पञ्चपदा-
ऽतिशकरी; ३० चतुष्पदा उणिक;
३१ इयवसाना विपरीतपादलक्ष्मा
षड्पदा (जगती?) ।

| | |
|--|-------|
| भवांशर्वौ मुडतं माभि यातं भूतपती पशुपती नमो वाम् । | |
| प्रतिहितामर्यतां मा वि स्नाष्टं मा नो हिंसिष्टं द्विपदो मा चतुष्पदः | १ १७० |
| शुने क्रोष्टे मा शरीराणि कर्तमलिङ्गवेभ्यो गृध्रेभ्यो ये च कृष्णा अविष्यवः । | |
| मक्षिकास्ते पशुपते वयांसि ते विघ्नसे मा विदन्त | २ |
| क्रन्दाय ते प्राणाय याश्च ते भव रोपयः । नमस्ते रुद्र कृष्णः सहस्राक्षायामर्त्य | ३ |
| पुरस्तात् ते नमः कृष्ण उत्तरादधरादुत् । अभीवर्गाद् दिवस्पयन्तरिक्षाय ते नमः ४ | |
| मुखाय ते पशुपते यानि चक्षूषि ते भव । त्वचे रूपाय सुदृशे प्रतीचीनाय ते नमः ५ | |
| अङ्गेभ्यस्त उदराय जिह्वाया आस्यायि ते । दुद्भयो गन्धाय ते नमः | ६ १७५ |
| अस्त्रा नीलशिखण्डेन सहस्राक्षेण वाजिना । रुद्रेणार्धकघातिना तेन मा समरामहि ७ | |
| स नो भवः परि वृणक्तु विश्वत आप इवाग्निः परि वृणक्तु नो भवः । | |
| मा नोऽभि मास्तु नमो अस्त्वस्मै | ८ |
| चतुर्नमो अष्टकृत्वो भवाय दश कृत्वः पशुपते नमस्ते । | |
| तवेमे पञ्च पशवो विभक्ता गावो अश्वाः पुरुषा अजावयः | ९ १७८ |

| | |
|--|--------|
| तव चतस्रः प्रदिशस्तव द्यौस्तव पृथिवी तवेदमृगोर्विन्तरिक्षम् । | |
| तवेदं सर्वमात्मन्वद् यत् प्राणत् पृथिवीमनु | १० |
| उरुः कोशो वसुधानस्तवायं यस्मिन्निमा विश्वा भुवनान्यन्तः । | |
| स नो मृड पशुपते नमस्ते परः क्रोष्टारो अभिभाः श्वानः परो यन्त्वघरुदो विक्रेड्यः | ११ १८० |
| धनुर्विभर्षि हरितं हिरण्यं सहस्रमि शतवधं शिखण्डिनम् । | |
| रुद्रस्येषुश्वरति देवहेतिस्तस्यै नमो यतमस्यां दिशीतः | १२ |
| योऽभियातो निलयते त्वां रुद्र निचिकीर्षति । | |
| पश्चादनुप्रयुङ्क्षे तं विद्धस्य पदनीरिव | १३ |
| भवारुद्रो सयुजा संविदानाबुभावुग्रौ चरतो वीर्यायि । | |
| ताभ्यां नमो यतमस्यां दिशीतः | १४ |
| नमस्तेऽस्तवायते नमो अस्तु परायते । नमस्ते रुद्र तिष्ठत आसीनायोत ते नमः | १५ |
| नमः सायं नमः प्रातर्नमो रात्र्या नमो दिवा । | |
| भवार्यं च शर्वायं चोभाभ्यामकरं नमः | १६ १८५ |
| सहस्राक्षमतिपश्यं पुरस्ताद् रुद्रमस्यन्तं बहुधा विपश्चितम् । | |
| मोपाराम जिह्वयेर्यमानम् | १७ |
| इयावाश्च कृष्णमसितं मृणन्तं भीमं रथं केशिनः पादयन्तम् । | |
| पूर्वं प्रतीमो नमो अस्त्वस्मै | १८ |
| मा नोऽभि स्ना मृत्यं देवहेति मा नः क्रुधः पशुपते नमस्ते । | |
| अन्यत्रास्मद् दिव्यां शाखां वि धूनु | १९ |
| मा नो हिंसीरधि नो ब्रूहि परि णो वृङ्गि मा क्रुधः । मा त्वया समरामहि | २० |
| मा नो गोषु पुरुषेषु मा गृधो नो अजाविषु । | |
| अन्यत्रोग्र वि वर्तय पियारूपां प्रजां जहि | २१ १९० |
| यस्य त्वमा कासिका हेतिरेकमश्वस्येव वृषणः क्रन्द एति । | |
| अभिपूर्वं निर्णयते नमो अस्त्वस्मै | २२ |
| योऽन्तरिक्षे तिष्ठति विष्टभितोऽयज्वनः प्रमृणन् देवपीयून् । | |
| तस्मै नमो दुशभिः शर्कराभिः | २३ |
| तुभ्यमारण्याः पशवो मृगा वने हिता हंसाः सुपर्णाः शकुना वयांसि । | |
| तव यक्षं पशुपते अस्वन्तस्तुभ्यं क्षरन्ति दिव्या आपो वृक्षे | २४ १९३ |

शिशुमारो अजगराः पुरीकया जषा मत्स्या रजसा येभ्यो अस्यसि ।

न ते दूरं न परिष्ठास्ति ते भव सद्यः सर्वान् परि

पश्यासि भूमिं पूर्वस्माद्वस्युत्तरस्मिन्समुद्रे

२५

मा नो रुद्र त्वमना मा विषेण मा नः सं स्ना दिव्येनाग्निना ।

अन्यत्रास्मद् विद्युतं पातयेताम्

२६ १९५

भवो दिवो भव ईशे पृथिव्या भव आ पप्र उर्वरुन्तरिक्षम् ।

तस्मै नमो यतमस्यां दिशीतः

२७

भव राजन् यजमानाय मृड पशूनां हि पशुपतिर्धभूय ।

यः श्रद्धधाति सन्ति देवा इति चतुष्पदे द्विपदेऽस्य मृड

२८

मा नो महान्तमुत मा नो अर्मकं मा नो वहन्तमुत मा नो वक्ष्यतः ।

मा नो हिंसीः पितरं मातरं च स्वां तन्वं रुद्र मा रीरिषो नः

२९

रुद्रस्यैलबकारेभ्योऽसंस्कृतागिलेभ्यः ।

ब्रह्मं महास्येभ्यः श्वभ्यो अकरं नमः

३०

नमस्ते घोषिणीभ्यो नमस्ते केशिनीभ्यः ।

नमो नमस्कृताभ्यो नमः संभुञ्जतीभ्यः ।

नमस्ते देव सेनाभ्यः स्वस्ति नो अर्मयं च नः

३१ १००

॥२३॥ (अथर्व० ६।९।१-२)

(२०१-२०२) शस्तातिः । रुद्रः, १ यमो मृत्युः, शर्वः, २ भवः, शर्वः । त्रिष्टुप् ।

यमो मृत्युरधमारो निर्ऋतो बभ्रुः शर्वोऽस्ता नीलशिखण्डः ।

देवजनाः सेनयोत्तस्थिवांसस्ते अस्माकं परि वृञ्जन्तु वीरान्

१

मनसा होमैर्हरसा धृतेन शर्वायास्त्रं उत राज्ञे भवार्य ।

नमस्येभ्यो नम एभ्यः कृणोम्यन्यत्रास्मदुघर्विषा नयन्तु

२

(६) रुद्रः, व्याघ्रः ।

॥२४॥ (अथर्व० ८।३।१-७)

(२०३-२०९) अथर्वा । अनुष्टुप्, १ पश्यापङ्क्तिः, ३ गायत्री, ७ कङ्कुम्भतीगर्भोपरिष्ठाद्ब्रह्मती ।

उदितस्यो अक्रमन् व्याघ्रः पुरुषो वृकः ।

हिरुग्धि यन्ति सिन्धवो हिरुग् देवो वनस्पतिर्हिरुग्नमन्तु शत्रवः

१ २०१

| | |
|---|-------|
| परैणैतु पथा वृकः परमेणोत तस्करः । | |
| परैण दुत्वती रज्जुः परैणाघायुरर्षतु | २ |
| अक्षयौ च ते मुखं च ते व्याघ्र जम्भयामसि । | |
| आत् सर्वान् विंशतिं नखान् | ३ २०५ |
| व्याघ्रं दुत्वती वयं प्रथमं जम्भयामसि । | |
| आदु ह्येनमथो अहिं यातुधानमथो वृकम् | ४ |
| यो अद्य स्तेन आरयति स संपिष्टो अपायति । | |
| पथामपध्वंसेनैत्विन्द्रो वज्रेण हन्तु तम् | ५ |
| मूर्णा मृगस्य दन्ता अपिशीर्णा उपृष्टयः । | |
| निम्रुक्ते गोधा भवतु नीचार्यच्छशयुर्मृगः | ६ |
| यत् संयमो न वि यमो वि यमो यन्न संयमः । | |
| इन्द्रजाः सोमजा आथर्वणमसि व्याघ्रजम्भनम् | ७ २०९ |

(७) रुद्रः (अग्निः) ।

॥२५॥ (ऋ० ४।३।१)

(२१०) वामदेवो गौतमः । रुद्रः । त्रिष्टुप् ।

आ वो राजानमध्वरस्य रुद्रं होतारं सत्ययजं रोदस्योः ।
अग्निं पुरा तेनयित्नोरचित्ता—द्विरण्यरूपमवसे कृणुध्वम्

१ २१०

॥२६॥ (ऋ० १०।१८।१-४)

(२११-२१४) संकुसुको यामायनः । मृत्युः । त्रिष्टुप् ।

परं मृत्यो अनु परैहि पन्थां यस्ते स्व इतरो देवयानात्
चक्षुष्मते शृण्वते ते ब्रवीमि मा नः प्रजां रीरिषो मोत वीरान्
मृत्योः पदं योपयन्तो यदैत द्राघीय आयुः प्रतरं दधानाः ।
आप्यायमानाः प्रजया धनेन शुद्धाः पुता भवत यज्ञियासः
इमे जीवा वि मृतैराववृत्र—न्नभूद् भद्रा देवहूतिर्नो अद्य ।
प्राञ्चो अगाम नृतये हसाय द्राघीय आयुः प्रतरं दधानाः
इमं जीवेभ्यः परिधिं दधामि मैषां नु गादपरो अर्थमेतम् ।
शतं जिवन्तु शरदः पुरुची—न्तर्मुत्युं दधतां पर्वतेन

१

२

३

४ २१४

॥२७॥ (अथर्व० ६।१३।१-३)

(२१५-२१७) अथर्वा (स्वस्त्ययनकामः) । मृत्युः । अनुष्टुप् ।

नमो देववधेभ्यो नमो राजवधेभ्यः ।

अथो ये विश्वानां वधास्तेभ्यो मृत्यो नमोऽस्तु ते

१ २१५

नमस्ते अधिवाकाय परावाकाय ते नमः ।

सुमत्यै मृत्यो ते नमो दुर्मत्यै त इदं नमः

२

नमस्ते यातुधानेभ्यो नमस्ते भेषजेभ्यः ।

नमस्ते मृत्यो मूलेभ्यो ब्राह्मणेभ्य इदं नमः

३ २१७

॥२८॥ (अथर्व० ४।३५।१-७)

(२१८-२२५) प्रजापतिः । अतिमृत्युः । त्रिष्टुप्, ३ भुरिजगती ।

यमोदुनं प्रथमजा ऋतस्य प्रजापतिस्तपसा ब्रह्मणेऽपचत् ।

यो लोकानां विधृतिर्नाभिरेषात् तेनौदुनेनार्ति तराणि मृत्युम्

१

येनातरन् भूतकृतोऽति मृत्युं यमन्वविन्दन् तपसा श्रमेण ।

यं पपाच ब्रह्मणे ब्रह्म पूर्वं तेनौदुनेनार्ति तराणि मृत्युम्

२

यो दाधार पृथिवीं विश्वभोजसं यो अन्तरिक्षमापृणाद् रसेन ।

यो अस्तभ्राद् दिवमूध्वो महिम्ना तेनौदुनेनार्ति तराणि मृत्युम्

३ २२०

यस्मान्मासा निर्मितास्त्रिंशदराः संवत्सरो यस्मान्निर्मितो द्वादशरः ।

अहोरात्रा यं परियन्तो नापुस्तेनौदुनेनार्ति तराणि मृत्युम्

४

यः प्राणदः प्राणदवान् बभूव यस्मै लोका घृतवन्तः क्षरन्ति ।

ज्योतिष्मतीः प्रदिशो यस्य सर्वास्तेनौदुनेनार्ति तराणि मृत्युम्

५

यस्मात् पक्वादमृतं संबभूव यो गायत्र्या अधिपतिर्बभूव ।

यस्मिन् वेदा निर्हिता विश्वरूपास्तेनौदुनेनार्ति तराणि मृत्युम्

६

अव बाधे द्विषन्तं देवपीयुं सपत्ना ये मेऽप ते भवन्तु ।

ब्रह्मादुनं विश्वजितं पचामि शृण्वन्तु मे श्रद्धधानस्य देवाः

७

॥२९॥ (अथर्व० ७।१०२।१)

द्यावापृथिवी, अन्तरिक्षम्, मृत्युः । बिराट् पुरस्ताद्ब्रह्मती ।

नमस्कृत्य द्यावापृथिवीभ्यामन्तरिक्षाय मृत्यवे ।

मेक्षाम्यूर्ध्वेस्तिष्ठन्मा मा हिंसिषुरीश्वराः

१ २२५

॥३०॥ (अथर्व० ६।६३।२-३)

(२२६-२२७) द्रुक्कणः । २ यमः, ३ मृत्युः॥ २ अतिजगतगिर्भा, ३ जगती ।

नमोऽस्तु ते निर्ऋते तिग्मतेजोऽयस्मयान् वि चृता बन्धपाशान् ।

यमो मघं पुनरित् त्वां ददाति तस्मै यमाय नमो अस्तु मृत्यवे

२

अयस्मये द्रुपदे वैधिष इहाभिहितो मृत्युभिर्ये सहस्रम् ।

यमेन त्वं पितृभिः संविद्वान उत्तमं नाकमधि रोहयेमम्

३ २२७

इति रुद्रदेवता समाप्ता ।

रुद्रदेवता-पुनरुक्त-मन्त्रभागाः ।

ऋग्वेदस्य प्रथमं मण्डलम् ।

[११] १।११४।६ (कुत्स आत्रिरसः । रुद्रः)
— रुद्राय — —
त्मने तोकाय तनयाय मृळ ।
(३०) २।३३।१४ (गृत्समदः शौनकः । रुद्रः)
— रुद्रस्य — — ।
मीद्वस्तोकाय तनयाय मृळ ।

[१४] १।११४।९ उप ते स्तोमान् पशुपा इवाकरं ।
१०।१२७।८ (विहव्य आत्रिरसः । विश्वे देवाः)
उप ते गा इवाकरं ।— स्तोमं ।
[१५] १।११४।१० मृळा च नो अधि च ब्रूहि देव ।
(अदितिः ० ४१९) १।३५।११ (हिरण्यस्तूप आत्रिरसः । सविता)
रक्षा च नो अधि ... ।

ऋग्वेदस्य द्वितीयं मण्डलम् ।

[१८] २।३३।२ (गृत्समदः शौनकः । रुद्रः)
व्य१स्मद् द्वेषो वितरं व्यंहो ।
(इन्द्रः २०५१) ६।४४।१६ (शंयुर्बाहस्पत्यः । इन्द्रः)
व्य१स्मद् द्वेषो युयवद् व्यंहः ।
[३०] २।३३।१४ (गृत्समदः शौनकः । रुद्रः)
परि णो हेती रुद्रस्य वृज्याः ।

६।२८।७ (बार्हस्पत्यो भरद्वाजः । गावः)
परि वो हेती — ।
(इन्द्रः ३१९३) ७।८४।२ (मैत्रावरुणिर्वसिष्ठः । इन्द्रावरुणौ)
परि नो हेलो वरुणस्य वृज्याः ।
[३०] २।३३।१४=(११) १।११४।६ तोकाय तनयाय मृळ ।

ऋग्वेदस्य चतुर्थं मण्डलम् ।

[२२७] ४।३।१ (वामदेवो गौतमः । रुद्रः)
होतारं सत्ययजं रोदस्योः ।

(अग्निः १०८७) ६।१६।४६ (बार्हस्पत्यो भरद्वाजः । अग्निः)
होतारं सत्ययजं रोदस्योः ।

ऋग्वेदस्य सप्तमं मण्डलम् ।

[३२] ७।४६।१ (मैत्रावरुणिर्वसिष्ठः । रुद्रः)
अषाढहाय सहमानाय वेधसे ।
(इन्द्रः १२१८) २।२१।२ गृत्समदो भार्गवः शौनकः । इन्द्रः)
अषाढहाय सहमानाय वेधसे ।

[३५] ७।४६।४ (मैत्रावरुणिर्वसिष्ठः । रुद्रः)
मा नो वधी रुद्र मा परा दा ।
(इन्द्रः ८५४) १।१०४।८ (कुत्स आत्रिरसः । इन्द्रः)
मा नो वधीरिन्द्र मा परा दा ।

दैवत-संहितान्तर्गत रुद्रदेवता-मन्त्राणां सूची ।

| | | | |
|------------------------|-------|--------------------------------|--------|
| अक्ष्यौ च ते मुखं च ते | २०५ | उग्र एनं देव इष्वासः | १३० |
| अङ्गेभ्यस्त उदराय | १७५ | उदितस्त्रयो अक्रमन् | २०३ |
| अध्यवोचदधिवक्ता | ५० | उदाची दिक् सोमोऽधिपतिः | १५२ |
| अनासा ये वः प्रथमा | १५७ | उन्मा ममन्द वृषभो | २२ |
| अपैतेनारात्सीरसौ | १६२ | उप ते स्तोमान् पशुपा | १४ |
| अयस्मये हुपदे | २२७ | उरुः कोशो वसुधानः | १८० |
| अर्हन् बिभर्षि सायकानि | २६ | ऊर्ध्वा दिग् बृहस्पतिरधिपतिः | १५४ |
| अवतत्य धनुष्ट्वं | ५८ | एतत् ते रुद्रवसं | ४१ |
| अव बाधे द्विषन्तं | २२३ | एवा बभ्रो वृषभ | ३१ |
| अव रुद्रमदीमह्यव | ३८ | एष ते रुद्र भागः | ३७ |
| अवैतेनारात्सीरसौ | १६१ | कद्र रुद्राय प्रचेतसे | १ |
| अवोचाम नमो अस्मा | १६ | कुमारश्चित् पितरं | २८ |
| अयाम ते सुमतिं | ८ | क्रन्दाय ते प्राणाय | १७२ |
| असंख्याता सहस्राणि | ९९ | क्व स्य ते रुद्र मृळयाकुः | २३ |
| असौ यस्ताम्रो अरुण | ५१ | गाथपतिं मेधपतिं | ३ |
| असौ योऽवसर्पति | ५२ | ग्रीष्मो हेमन्तः शिशिरो | ११३ |
| अस्त्रा नीलशिखण्डेन | १७६ | चक्षुषो हेते मनसो | १६४ |
| अस्मिन् महत्यर्णवे | १०० | चतुर्नमो अष्टकृत्वो | १७८ |
| आ ते पितर्महतां | १७ | तव चतस्रः प्रदिशः | १७९ |
| आरे ते गोघ्नमुत | १५ | तस्मा उदीच्या दिशो | १२९ |
| आ वो राजानमध्वरस्य | २१० | तस्मा ऊर्ध्वाया दिशो | १३५ |
| इदं पित्रे महताम् | ११ | तस्मै दक्षिणाया दिशो | १२३ |
| इदावत्सराय परि० | ११४ | तस्मै ध्रुवाया दिशो | १३२ |
| इन्द्रस्य गृहोऽसि | १६६ | तस्मै प्रतीच्या दिशो | १२६ |
| इन्द्रस्य वरूथमसि | १६९ | तस्मै प्राच्या दिशो | १२० |
| इन्द्रस्य वर्मासि | १६८ | तस्मै सर्वेभ्यो अन्तर्देशेभ्यः | १३८ |
| इन्द्रस्य शर्मासि | १६७ | तुभ्यमारण्याः पशवो | १९३ |
| इमं जीवेभ्यः परिधिं | २१४ | त्र्यम्बकं यजामहे | ३६; ४० |
| इमा रुद्राय तवसे | ६; ९३ | त्र्यायुषं जमदग्नेः | ४२ |
| इमा रुद्राय स्थिर० | ३२ | त्वादत्तेभी रुद्र शंतमेभिः | १८ |
| इमे जीवा वि मृतैः | २१३ | त्वेधं वयं रुद्रं यज्ञसाधं | ९ |
| ईशान एनमिष्वासः | १३९ | दक्षिणा दिगिन्द्रोऽधिपतिः | १५० |

| | | | |
|-----------------------------|-----|---|-------------|
| दिवो वराहमरुषं | १० | नमो व्रज्याय च | ८९ |
| द्राणे अन्धसस्पते | ९२ | नमोऽस्तु ते निर्ऋते | २२६ |
| धनुर्भिर्भर्षि हरितं | १८१ | नमोऽस्तु नीलग्रीवाय | ५३ |
| ध्रुवा दिग् विष्णुरधिपतिः | १५३ | नमोऽस्तु रुद्रेभ्यो ये दिवि | १०९ |
| नम आशवे चाजिराय | ७६ | नमोऽस्तु रुद्रेभ्यो येऽन्तरिक्षे | ११० |
| नम उष्णीषिणे | ६७ | नमोऽस्तु रुद्रेभ्यो ये पृथिव्यां | १११ |
| नमः कपर्दिने च | ७४ | नमो हिरण्यबाहवे | ६२ |
| नमः कृष्याय च | ८३ | नमो ह्रस्वाय च | ७५ |
| ननः कृत्स्नायतया | ६५ | न्वेतेनारात्सीरसौ | १६० |
| नमः पर्णाय च | ९१ | नास्य पशून् न समानात् १२२, १२५, १२८, १३१, | |
| नमः पार्याय च | ८७ | १३४, १३७, १४० | |
| नमः शङ्खवे च | ८५ | नीलग्रीवाः शितिकण्ठा | १०१ |
| नमः शम्भवाय च | ८६ | नीलग्रीवाः शितिकण्ठाः | १०२ |
| नमः शुष्क्याय च | ९० | परं मृत्यो अनु परेहि | २११ |
| नमः श्वभ्यः श्वपतिभ्यः | ७३ | परि णो हेती रुद्रस्य | ३० |
| नमः सभाभ्यः सभापतिभ्यः | ६९ | परि ते धन्वनो हेतिः | ५७ |
| नमः सायं नमः प्रातः | १८५ | परि नो रुद्रस्य हेतिः | ९५ |
| नमः सिकत्याय च | ८८ | परेणैतु पथा वृकः | २०४ |
| नमः सेनाभ्यः सेनानिभ्यः | ७१ | पर्युषु प्र धन्वा वाजसातये | १५९ |
| नमः सोम्याय च | ७८ | पशुपतिरेनमिष्वासः | १२७ |
| नमः क्षुत्याय च | ८२ | पुरस्तात् ते नमः कृष्णः | १७३ |
| नमस्कृत्य द्यावापृथिवीभ्यां | २२५ | प्रतीची दिग् वरुणोऽधिपतिः | १५१ |
| नमस्त आयुधायानां | ५९ | प्र बभ्रवे वृषभाय | २४ |
| नमस्तक्षभ्यो रथकारेभ्यः | ७२ | प्रमुञ्च धन्वनस्त्वम् | ५४ |
| नमस्ते अधिवाकाय | २१६ | प्राची दिगग्निरधिपतिः | १४९ |
| नमस्ते घोषिणीभ्यो | २०० | ब्रह्म ज्ञानं प्रथमं | १५६ |
| नमस्ते यातुधानेभ्यो | २१७ | भव एनमिष्वासः | १२१ |
| नमस्ते रुद्र मन्यव | ४६ | भव राजन् यजमानाय | १९७ |
| नमस्तेऽस्त्वायते नमो | १८४ | भवारुद्रौ सयुजा | १८३ |
| नमो गणेभ्यो गणपतिभ्यः | ७० | भवाशर्वौ मृडतं | १७० |
| नमो ज्येष्ठाय च | ७७ | भवो दिवो भव ईशे | १९६ |
| नमो देववधेभ्यो | २१५ | भेषजमसि भेषजं | ३९ |
| नमो शृणवे च | ८१ | मनसा होमैर्हरसा | २०२ |
| नमो बभ्रुशाय | ६३ | महादेव एनमिष्वासः | १३६ |
| नमो बिल्मिने च | ८० | मा त्वा रुद्र चुक्रुधामा | २० |
| नमो रोहिताय | ६४ | मा नस्तोके तनये | १३, ६१ |
| नमो बभ्रते पारि० | ६६ | मा नो गोषु पुरुषेषु | १९० |
| नमो वन्याय च | ७९ | मा नोऽभि स्ना मर्त्यं | १८८ |
| नमो वात्याय च | ८४ | मा नो महान्तमुत | १२, ६०, १९८ |
| नमो विसृजद्भ्यो | ६८ | मा नो रुद्र तक्मना | १९५ |

| | | | |
|------------------------------|--------|-----------------------------|-----|
| मा नो वधी रुद्र मा | ३५ | येऽस्यां स्थोर्ध्वायां दिशि | १४८ |
| मा नो हिंसीरधि | १८९ | यो अमौ रुद्रो यो | ११९ |
| मीढुष्टम शिवतम | ९६ | यो अय स्तेन आयति | २०७ |
| सुखाय ते पशुपते | १७४ | यो दाधार पृथिवीं | २२० |
| सुसुक्तमस्मान् दुरिताद् | १६३ | यो नः स्त्रो यो अरणः | ११२ |
| मूर्णा मृगस्य दन्ता | २०८ | योऽन्तरिक्षे तिष्ठति | १९२ |
| मृळा नो रुद्रोत नो | ७ | योऽभियातो निलयते | १८२ |
| मृत्योः पदं योपयन्तो | २१२ | योऽस्मांश्चक्षुषा मनसा | १६५ |
| य एतावन्तश्च भूयाःसः | १०८ | रुद्र एनमिष्वासो | १३३ |
| यः प्राणदः प्राणदवान् | २२२ | रुद्र जलाषभेषज | ११८ |
| यः शुक्र इव सूर्यो | ४ | रुद्र यत् ते किवि | ४४ |
| यत् संयमो न वि | २०९ | रुद्रस्यैलबकारेभ्यो | १९९ |
| यथा नो अदितिः | २ | रुद्राः सःसृज्य पृथिवीं | ४५ |
| यथा नो मित्रो वरुणो | १४२ | विकिरिद्र विलोहित | ९७ |
| यमोदनं प्रथमजा | २१८ | विज्यं धनुः कपर्दिनो | ५५ |
| यमो मृत्युरघमारो | २०१ | व्याघ्रं दत्ततां वयं | २०६ |
| यस्मात् पक्वादमृतं | २२३ | शं नः करत्यवते | ५ |
| यस्मान्मासा निर्मिताः | २२१ | शर्व एनमिष्वासो | १२४ |
| यस्य तक्रमा कासिका | १९१ | शिवेन वचसा त्वा | ४९ |
| या ते दिष्टुदवसृष्टा | ३४ | शिवो नामासि स्वधितिः | ४३ |
| या ते रुद्र शिवा तनुः | ४७; ९४ | शिशुमारा अजगराः | १९४ |
| या ते हेतिर्मीढुष्टम | ५६ | शुने क्रोष्टे मा शरीराणि | १७१ |
| यामिषुं गिरिशन्त | ४८ | श्यावाश्वं कृष्णमसितं | १८७ |
| या वो भेषजा मरुतः | २९ | श्रेष्ठो जातस्य रुद्र | १९ |
| ये तीर्थानि प्रचरन्ति | १०६ | स एव मृत्युः सोऽमृतं | ११६ |
| ये नः सपत्ना अप ते | १५५ | स नो भवः परि वृणक्तु | १७७ |
| येनातरन् भूतकृतो | २१९ | स रुद्रो वसुवनिः | ११७ |
| येऽङ्गेषु विविध्यन्ति | १०७ | सहस्रधार एव ते | १५८ |
| ये पन्थां पथिरक्षय | १०५ | सहस्राक्षमतिपश्यं | १८६ |
| ये भूतानामधिपतयो | १०४ | सहस्राणि सहस्रशो | ९८ |
| ये वृक्षेषु शाष्पिञ्जरा | १०३ | स हि क्षयेण क्षम्यस्य | ३३ |
| येऽस्यां स्थ दक्षिणायां दिशि | १४४ | सोमं ते रुद्रवन्तं | १४१ |
| येऽस्यां स्थ भ्रुवायां दिशि | १४७ | सोऽर्यमा स वरुणः | ११५ |
| येऽस्यां स्थ प्रतीच्यां दिशि | १४५ | स्तुहि ध्रुतं गर्तसदं | २७ |
| येऽस्यां स्थ प्राच्यां दिशि | १४३ | स्थिरेभिरङ्गैः पुरुष्य | २५ |
| येऽस्यां स्थोदीच्यां दिशि | १४६ | हृवीमभिर्हवते | २१ |

दैवत-संहितान्तर्गत रुद्रदेवताया गुणबोधक-पदसूची ।

[१ ऋग्वेदसंहिता 'ऋ०'; अथर्ववेदसंहिता 'अ०'; संहितानामविरहिताः यजुर्वेदमन्त्राः । २ जातसंज्ञाः रुद्राः बहुवचनेन निर्दिष्टाः ।]

अग्ने-वधः १६, ४०. ८५
अग्न्यः १६, ३०. ७५
अजिरः १६, ३१. ७६
अधः क्षमाचराः १६, ५७. १०२
अधिपतयः भूतानाम् १६, ५९. १०४
अधिवक्ता १६, ५. ५०
अध्वरस्य राजा [अग्निः] ऋ० ४, ३, १. २१०
अनुष्ठाता अ० १५, ५, १-२, ४-५, ७-८, १०-११,
१३-१४, १६-१७, १९-२०. १२०-२१, १२३-२४,
१२६-२७, १२९-३०, १३२-३३, १३५-३६, १३८-३९
अन्तरिक्षे (ये) येषां वातः इषवः १६, ६५. ११०
अन्धसस्पतिः १६, ४७. ९२
अन्नानां पतिः १६, १८. ६३
अपगल्भः १६, ३२. ७७
अपभर्ता रपसः दैव्यस्य ऋ० २, ३३, ७. २३
अपरजः १६, ३२. ७७
अभिघ्नन् १६, ४६. ९१
अभ्वं सः अ० १३, ६, २५. ११६
अमर्त्यः अ० ११, २, ३. १७२
अमृतं सः अ० १३, ६, २५. ११६
अरण्यानां पतिः १६, २०. ६५
अरथाः १६, २६. ७१
अरुणः १६, ६, ३९. ५१, ८४
अरुषः ऋ० १, ११४, ५. १०
अर्भकाः १६, २६. ७१
अर्यमा (सः) अ० १३, ४, ४. ११५
अर्हन् ऋ० २, ३३, १०. २६
अवज्यः १६, ३८. ८३
अवततधन्वा ३, ६१. ४१
अवभेदी १६, ३४. ७९
अवर्ष्यः १६, ३८. ८३
अवसान्यः १६, ३३. ७८

अवस्वन्यः १६, ३१. ७६
अवार्यः १६, ४२. ८७
अश्वाः १६, २४. ६९
अश्वपतयः १६, २४. ६९
अषाढहः ऋ० ७, ४६, १. ३२
असंख्याताः १६, ५४. ९९
आसितः अ० ११, २, १८. १८७
आसिमन्तः १६, २१. ६६
अस्यन्तः १६, २२. ६७
अस्यन् बहुधा अ० ११, २, १७. १८६
अहन्तिः १६, १८. ६३
आकन्दयत् १६, १९. ६४
आखिदत् १६, ४६. ९१
आततायी १६, १८. ६३
आतन्वाताः १६, २२. ६७
आतप्यः १६, ३८. ८३
आनिर्हताः १६, ४६. ९१
आयत् अ० ११, २, १५. १८४
आयच्छन्तः १६, २२. ६७
आयुधी (धिन्) १६, ३६. ८१
आयुर्वुधः १६, ६०. १०५
आव्याधिन्यः १६, २४. ६९
आव्याधिनीनां पतिः १६, २०. ६५
आशुः १६, ३१. ७६
आशुरयः १६, ३४. ७९
आशुषेणः १६, ३४. ७९
आसीनः अ० ११, २, १५. १८४
आसीनाः १६, २३. ६८
आहनन्यः १६, ३५. ८०
हरिष्यः १६, ४३. ८८
इषुकृन्तः (त्र) १६, ४६. ९१

इषुधिमाम् १६, २१, ३६. ६६, ८१
 इषुमान् १६, २९. ७४
 इषुमन्तः १६, २२. ६७
 इष्वासः अ० १५, ५, १-२, ४-५, ७-८, १०-११, १३-
 १४, १६-१७, १९-२०. १२०-२१, १२३-२४, १२६-
 २७, १२९-३०, १३२-३३, १३५-३६, १३८-३९
 ईयमानः अ० ११, २, १७. १८६
 ईशानः ऋ० २, ३३, ९. २५ । अ० १५, ५, २, ५, ८,
 ११, १४, १७, १९-२०. १२१, १२४, १२७, १३०, १३३,
 १३६, १३८-३९
 ईशानः हेतीनाम् १६, ५३. ९८
 ईशे दिवः पृथिव्याः अ० ११, २, २७. १९६
 उगणाः १६, २४. ६९
 उग्रः १६, ४०. ८५ । ऋ० २, ३३, २, ११. २५, २७ ।
 अ० १५, ५, १०-११. १२९-१३०. ११, २, २१. १९०
 उच्चैर्घोषः १६, १९. ६४
 उत्तरणः १६, ४२. ८७
 उद्गुरमाणः १६, ४६. ९१
 उपवीती १६, १७. ६२
 उपहृतुः ऋ० २, ३३, ११. २७
 उर्वर्यः १६, ३३. ७८
 उलप्यः १६, ४५. ९०
 उष्णीषी १६, २२. ६७
 ऊर्म्यः १६, ३१. ७६
 ऊर्व्यः १६, ४५. ९०
 ऋदूदरः ऋ० २, ३३, ५. २१
 एतावन्तः १६, ६३. १०८
 ऐलबृदाः १६, ६०. १०५
 ओषधीनां पतिः १६, १९. ६४
 ककुभः १६, २०. ६५
 कक्षाणां पतिः १६, १९. ६४
 कक्ष्यः १६, ३४. ७९
 कनिष्ठः १६, ३२. ७७
 कपर्दी १६, १०, २९, ४३. ५५, ७४, ८८ । ऋ० १, ११४,
 १, ५. ६, १०
 कपर्दिनः १६, ५९. १०४
 कर्मकृत् अ० २, २७, ६. ११८
 कर्माः १६, २७. ७२
 कल्मलीकी ऋ० २, ३३, ८. २४
 वै० [रुद्रः] ४

कवची १६, ३५. ८०
 कविः १६, ४८. ९३ । ऋ० १, ११४, ४. ९
 काव्यः १६, ३७, ४४. ८२, ८९
 किंशिलः १६, ४३. ८८
 किरिकाः १६, ४६. ९१
 कुलालाः १६, २७. ७२
 कुलुब्धानां पतिः १६, २२. ६७
 कुल्यः १६, ३७. ८२
 कूल्यः १६, ४२. ८७
 कृत्ति वसानः १६, ५१. ९६
 कृत्तिवासाः ३, ६१. ४१
 कृत्स्नायतया धावन् १६, २०. ६५
 कृष्णः ११, २, १८. १८७
 क्षत्तारः १६, २६. ७१
 क्षमाचराः अधः १६, ५७. १०२
 क्षयणः १६, ४३. ८८
 क्षयद्वीरः ऋ० १, ११४, १-३, १०. ६-८, १५
 क्षिप्रेषुः ऋ० ७, ४६, १. ३२
 क्षेत्राणां पतिः १६, १८. ६३
 क्षेम्यः १६, ३३. ७८
 खल्यः १६, ३३. ७८
 गणाः १६, २५. ७०
 गणपतयः १६, २५. ७०
 गर्तसदः (इ) ऋ. २, ३३, ११. २७
 गह्वरेष्ठः १६, ४४. ४९
 गाथपतिः ऋ० १, ४३, ४. ३
 गिरिचरः १६, २२. ६७
 गिरिशः १६, ४. ४९
 गिरिशयः १६, २९. ७४
 गिरिशन्तः १६, २-३. ४७-४८
 गृत्साः १६, २५. ७०
 गृत्सपतयः १६, २५. ७०
 गेह्यः १६, ४४. ८९
 गोष्ठ्यः १६, ४४. ८९
 चोक्तितानः ऋ० २, ३३, १५. ३१
 जगतां पतिः १६, १८. ६३
 जघन्यः १६, ३२. ७७
 जलाशयेषजः ऋ० १, ४३, ४. ३ । अ० २, २७, ६. ११८
 जाग्रतः १६, २३. ६८

जातस्य श्रेष्ठः ऋ० २,३३,३. १९
 जिघांसन्तः १६,२१. ६६
 ज्येष्ठः १६,३२. ७७
 तक्षाणः १६,२७. ७२
 तल्प्यः १६,४४. ८९
 तवस् १६,४८. ९३। ऋ० १,११४,१. ६
 तव्यस् ऋ० १,४३,१. १
 तस्कराणां पतिः १६,२१. ६६
 ताम्रः १६,६,३९. ५१,८४
 तारः १६,४०. ८५
 तिग्महेती [सोमारुद्रौ] अ० ५,६,५-७. १६०-१६२
 तिग्मायुधः ऋ० ७,४६,१. ३२
 तिग्मायुधौ [सोमारुद्रौ] अ० ५,६,५-७. १६०-१६२
 तिष्ठन् अ० ११,२,१५. १८४
 तिष्ठन्तः १६,२३. ६८
 तवस्तमः तवसाम् ऋ० २,३३,३. १९
 तीक्ष्णेषुः १६,३६. ८१
 तीर्थः १६,४२. ८७
 तृहन्यः १६,२४. ६९
 त्र्यम्बकः ३,५८,६०. ३८,४०। ऋ० ७,५२,१२.
 ३६
 त्विषीमान् १६,१७. ६२
 त्वेषः ऋ० १,११४,४-५. ९, १०। २,३३,१४. ३०
 द्रिद्रः १६,४७. ९२
 दाता भूरः ऋ० २,३३,१२. २८
 दिवं उपश्रिताः १६,५६. १०१
 दिवि ये येषां वर्ष इषवः १६,६०. १०२
 दिशां पतिः १६,१७. ६२
 दुन्दुभ्यः १६,३५. ८०
 दरेवधः १६,४०. ८५
 देवः ३,५८. ३८। ऋ० १,११४,१०. १५।
 २,३३,१५,३१। ७,४६,१. ३२। अ० १५,५,
 १०-११. १२२-१३०
 देवानां श्रेष्ठः ऋ० १,४३,५. ४
 देवानां हृदयानि १६,४६. ९१
 द्रापिः १६,४७. ९२
 द्विबर्हाः ऋ० १,११४,१०. १५
 द्वाप्यः १६,३१. ७६

धनुष्कृतः १६,४६. ९१
 धन्वायिनः* १६,२२. ६७
 धावत् कृत्स्नायतया १६,२०. ६५
 धावन्तः १६,२३. ६८
 धृष्णुः १६,३६. ८१
 नफस्वरन्तः १६,२१. ६६
 नादेयः १६,३१,३७. ७३,८२
 निचेरुः १६,२०. ६५
 निर्णयन् अभिपूर्वम् अ० ११,२,२२. १९१
 निवेण्यः १६,४४. ८९
 निव्याधी १६,२०. ६५
 निषङ्गिणः १६,६१. १०६
 निषङ्गी १६,२०-२१,३६. ६५-६६,८१
 निषादाः १६,२७. ७२
 नीप्यः १६,३७. ८२
 नीलप्रीवः १६,७-८,२८. ५२-५३,७३
 नीलप्रीवाः १६,५६-५८. १०१-१०३
 नीललोहितः १६,४७. ९२
 नीलशिखण्डः अ० २,२७,६. ११८। ६,९३,१. २०१।
 ११,२,७. १७६
 पतिः अन्धसः १६,४७. ९२
 „ अज्ञानाम् १६,१८. ६३
 „ अरण्यानाम् १६,२०. ६५
 „ आव्याधिनीनाम् १६,२०. ६५
 „ ओषधीनाम् १६,१९. ६४
 „ कक्षाणाम् १६,१९. ६४
 „ कुलुस्त्रानाम् १६,२२. ६७
 „ क्षेत्राणाम् १६,१८. ६३
 „ जगताम् १६,१८. ६३
 „ तस्कराणाम् १६,२१. ६६
 „ दिशाम् १६,१७. ६२
 „ पत्नीनाम् १६,१९. ६४
 „ पथीनाम् १६,१७. ६२
 „ पशूनाम् १६,१७. ६२
 „ पुष्टानाम् १६,१७. ६२
 „ मुष्णताम् १६,२१. ६६
 „ वनानाम् १६,१८. ६३
 „ विकृन्तानाम् १६,२१. ६६

पतिः वृक्षाणाम् १६, १९. ६४
 ,, सत्वनाम् १६, २०. ६५
 ,, स्तायूनाम् १६, २१. ६६
 ,, स्तेनानाम् १६, २०. ६५
 पतिवेदनः ३, ६०. ४०
 पत्नीनां पतिः १६, १९. ६४
 पथां पथि रक्षयः १६, ६०. १०५
 पथीनां पतिः १६, १७. ६२
 पथ्यः १६, ३७. ८२
 परिचरः १६, २०. ६५
 परिवञ्चत् १६, २१. ६६
 परावत् अ० ११, २, १५. १८४
 पर्णः १६, ४६. ९१
 पर्णशदः १६, ४६. ९१
 पशूनां पतिः १६, १७. ६२
 पशुपतिः १६, २८, ४०. ७३, ८५ । अ० १५, ५, ७-८.
 १२६-१२७ । अ० ११, २, २, ५, ९, ११. १७१,
 १७४, १७८, १८०
 पशुपती [भवाशर्वौ] अ० ११, २, १. १७०
 पांसव्यः १६, ४५. ९०
 पादयन् केशिनः रथम् अ० ११, २, १८. १८७
 पार्यः १६, ४२. ८७
 पिता मरुताम् ऋ० १, ११४, ६, ९. ११, १४; २, ३३,
 १. १७
 पिनाकावसः ३, ६१. ४१
 पिनाकं बिभ्रत् १६, ५१. ९६
 पुञ्जिष्ठाः १६, २७. ७२
 पुरुरूपः ऋ० २, ३३, ९. २५
 पुलस्तिः १६, ४३. ८८
 पुष्टानां पतिः १६, १७. ६२
 पुष्टिबर्धनः ३, ६०. ४० । ऋ० ७, ५९, १२. ३६
 पूर्वजः १६, ३२. ७७
 पृथिव्यां ये, येषां अजं इषक् १६, ६६. १११
 प्रखिदत् १६, ४६. ९१
 प्रचरन्तः तीर्थानि १६, ६१. १०६
 प्रचेताः ऋ० १, ४३, १. १
 प्रतरणः १६, ४२. ८७
 प्रतिदधानाः १६, २२. ६७
 प्रतिश्रवः १६, ३४. ७९
 प्रतिश्रव्यः १६, ३३. ७८

प्रतीचीनः अ० ११, २, ५. १७४
 प्रथमः १६, ३०. ७५
 प्रथमः भिषक् दैव्यः १६, ५. ५०
 प्रपथ्यः १६, ४३. ८८
 प्रमृणन् अयज्वनः देवपीयून् अ० ११, २, २३. १९२
 प्रमृशः १६, ३६. ८१
 प्रवाह्यः १६, ४३. ८८
 फेन्यः १६, ४२. ८७
 वन्तः १६, ६. ५१ । ऋ० २, ३३, ५, ८-९, १५. २१,
 २४, २५, ३१
 बभ्रुशः १६, १८. ६३
 बिभ्रत् पिनाकम् १६, ५१. ९६
 बिभ्रत् भेषजा वार्याणि ऋ० १, ११४, ६. ११
 बिल्मी १६, ३५. ८०
 बुध्यः १६, ३२. ७७
 बृहत् १६, ३०. ७५
 भगवान् १६, ९, ५२-५३. ५४, ९७-९८
 भवः १६, २८. ७३ । अ० १५, ५, १-२, ५, ८, ११,
 १४, १७, २०. १२०-२१, १२४, १२७, १३०, १३३,
 १३६, १३९ । अ० ११, २, ३, ५, ८-९, १६, २५, २७.
 १७२, १७४, १७७-१७८, १८५, १९४, १९६
 भवाशर्वौ [देवते] अ० ११, २, १. १७०
 भवस्य हेतिः १६, १८. ६३
 भामितः ऋ० १, ११४, ८. १३
 भिषक् दैव्यः प्रथमः १६, ५. ५०
 भिषक्तमः भिषजाम् ऋ० २, ३३, ४. २०
 भूमिः १६, ४०. ८५ । ऋ० २, ३३, ११. २७
 भुवनस्य भूरिः ऋ० २, ३३, ९. २५
 भुवन्तिः १६, १९. ६४
 भूतानां अधिपतयः १६, ५९. १०४
 भूतपती [भवाशर्वौ] अ० ११, २, १. १७०
 भूयांसः १६, ६३. १०८
 भूरिः भुवनस्य ऋ० २, ३३, ९. २५
 भूरिः दाता ऋ० २, ३३, १२. २८
 भेषजम् ३, ५९. ३९
 भेषजा वार्याणि बिभ्रत् ऋ० १, ११४, ६. ११
 मध्यमः १६, ३२. ७७
 मन्त्री १६, १९. ६४
 मयस्करः १६, ४१. ८६

मयोभुवः १६, ४१. ८६
 मरुत्वान् ऋ० १, ११४, ११. १६। ऋ० २, ३३, ६. २२
 मरुतां पिता ऋ० १, ११४, ६. ११। ऋ० २, ३३, १. १७
 महान्तः १६, २६. ७१
 महादेवः सः अ० १३, ४, ४. ११५। अ० १५, ५,
 १६-१७. १३५-१३६
 महेन्द्रः सः अ० १३, ४, ४. ११५
 मीदवान् १६, ८, ५०. ५३, ९५। ऋ० १, ११४, ३. ८।
 २, ३३, १४. ३०
 मीदुष्टमः १६, ११, २९, ५१. ५६, ७४, ९६। ऋ० १,
 ४३, १. १
 मुष्णतां पतिः १६, २१. ६६
 मृगयवः (युः) १६, २७. ७२
 मृणन् अ० ११, २, १८. १८७
 मृत्युः सः अ० १३, ६, २५. ११६
 मेध्यः १६, ३८. ८३
 मेधपतिः ऋ० १, ४३, ४. ३
 यज्ञसाधः ऋ० १, ११४, ४. ९
 याम्यः १६, ३३. ७८
 युवा ऋ० २, ३३, ११. २७
 रक्षः सः अ० १३, ६, २५. ११६
 रजस्यः १६, ४५. ९०
 रथकाराः १६, २७. ७२
 रथिनः १६, २६. ७१
 राजा अ० ११, २, २८. १९७
 राजा, अव्यरस्थ- [अग्निः] ऋ० ४, ३, १. २१०
 रुद्रः (प्रायः सर्वत्र)।
 रुद्रः [अग्निः] ऋ० ४, ३, १. २१०
 रुद्रः अग्नौ अन्तः अ० ७, ८७, १. ११९
 ,, अप्सु अन्तः अ० ७, ८७, १. ११९। अ० ११, २, २४.
 १९३
 ,, ओषधीः विवेश अ० ७, ८७, १. ११९। अ० ११, २, २४.
 १९३
 ,, वीरुधः विवेश अ० ७, ८७, १. ११९।
 अ० ११, २, २४. १९३
 रूपम् ऋ० १, ११४, ५. १०
 रेष्म्यः १६, ३९. ८४
 रोहितः ऋ० १६, १९. ६४
 रोग्यः १६, ४५. ९०

वङ्कः ऋ० १, ११४, ४. ९
 वज्रबाहुः ऋ० २, ३३, ३. १९
 वसन्त १६, २१. ६६
 वनानां पतिः १६, १८. ६३
 वन्यः १६, ३४. ७९
 वराहः ऋ० १, ११४, ५. १०
 वरुणः सः अ० १३, ४, ४. ११५
 वरूथी १६, ३५. ८०
 वर्मा १६, ३५. ८०
 वर्षीयान् १६, ३०. ७५
 वर्ष्यः १६, ३८. ८३
 वसानः कृत्तिम् १६, ५१. ९६
 वसुः ऋ० १, ४३, ५. ४
 वाणिजः १६, १९. ६४
 वसुदेये वसुवनिः अ० १३, ६, २६. ११७
 वषट्कारः नमोवाके अनु अ० १३, ६, २६. ११७
 वाल्यः १६, ३९. ८४
 वामनः १६, ३०. ७५
 वारिवस्कृतः १६, १९. ६४
 वास्तव्यः १६, ३९. ८४
 वास्तुपः १६, ३९. ८४
 विकिरिद्रः १६, ५२. ९७
 विकृन्तानां पतिः १६, २१. ६६
 विक्षिणत्काः १६, ४६. ९१
 विचिन्वत्काः १६, ४६. ९१
 विद्युत्यः १६, ३८. ८३
 विध्यन्तः १६, २३. ६८
 विपश्चित अ० ११, २, १७. १८६
 विरूपाः १६, २५. ७०
 विलोहितः १६, ७, ५२, ५८. ५२, ९७, १०३
 विविध्यन्त्यः १६, २४. ६९
 विशिखासः १६, ५९. १०४
 विश्वरूपाः १६, २५. ७०
 विमृजन्तः १६, २३. ६८
 वीध्यः १६, ३८. ८३
 वृक्षाः (हरिकेशाः) १६, ४०. ८५
 वृक्षाः १६, १७. ६२
 वृक्षाणां पतिः १६, १९. ६४
 वृक्षेषु स्थिताः १६, ५८. १०३

वृद्धः १६,३०. ७५
 वृषभः ऋ० २,३३,४,६-८,१५. २०,२२-२४,३१
 वेधाः ऋ० ७,४६,१. ३२
 वैशान्तः १६,३७. ८२
 वज्रयः १६,४४, ८९
 वाताः १६,२५. ७०
 वातपतयः १६,२५. ७०
 व्याधी (धिन्) १६,१८. ६३
 व्युत्पत्तेशः १६,२९. ७४
 शङ्करः १६,४१. ८६
 शङ्खः १६,४०. ८५
 शतधन्वा १६,२९. ७४
 शतेषुधिः १६,१३. ५८
 शम्भवः १६,४१. ८६
 शयानाः १६,२३. ६८
 शर्वः १६,२८. ७३। अ० १५,५,२,५,८,११,१४,१७,
 २०. १२१,१२४,१२७,१३०,१३३,१३६,१३९
 शष्पिञ्जरः १६,१७. ६२
 शष्पिञ्जराः वृक्षेषु १६,५८. १०३
 शष्प्यः १६,४२. ८७
 शितिकण्ठः १६,२८. ७३
 शितिकण्ठाः १६,५६,५८. १०१-१०३
 शिपिविष्टः १६,२९. ७४
 शिवः ३,६१. ४१। १६,४१. ८६
 शिवतरः १६,४१. ८६
 शिवतमः १६,५१. ९६
 शिवः नाम ३,६३. ४३
 शीघ्र्यः १६,३१. ७६
 शीघ्र्यः १६,३१. ७६
 शुष्क्यः १६,४५. ९०
 शूरः १६,३४. ७९
 श्यावाश्वः अ० ११,२,१८. १८७
 श्रवः १६,३४. ७९
 श्रिया श्रेष्ठः ऋ० २,३३,३. १९
 श्रुतः १६,३५. ८०। ऋ० २,३३,११. २७
 श्रुतसेनः १६,३५. ८०
 श्रेष्ठः जातस्य ऋ० २,३३,३. १९

श्रेष्ठः देवानाम् ऋ० १,४३,५. ६
 ,, श्रिया ऋ० २,३३,३. १९
 श्लोक्यः १६,३३. ७८
 श्वनयः (निः) १६,२७. ७२
 श्वपतयः १६,२८. ७३
 श्वानः १६,२८. ७३
 श्वित्यञ्च (ङ्) ऋ० २,३३,८. २४
 संविदानौ [भवास्त्रौ] अ० ११,२,१४. १८३
 संगृहीतारः १६,२६. ७१
 सत्पतिः ऋ० २,३३,१२. २८
 सत्ययजः [अग्निः] ऋ० ४,३,१. २१०
 सत्त्वनां पतिः १६,२०. ६५
 सभाः १६,२४. ६९
 सभापतयः १६,२४. ६९
 सगुजौ [भवास्त्रौ] अ० ११,२,१४. १८४
 सरस्यः १६,३७. ८२
 सवृध् १६,३०. ७५
 सहमानः १६,२०. ६५। ऋ० ७,४६,१. ३२
 सहस्त्राणि १६,५४. ९९
 सहस्त्राक्षः १६,८,१३,२९. ५३,५८,७४।
 अ० ११,२,३,७. १७२,१७६
 सिकत्यः १६,४३. ८८
 सुगन्धिः ३,६०,४०। ऋ० ७,५९,१२. ३६
 सुधन्वा १६,३६. ८१
 सुमङ्गलः १६,६. ५१
 सुशिप्रः ऋ० २,३३,५. २१
 सुशेवौ [मोमास्त्रौ] अ० ५,६,५-७. १६०-१६२
 सुहवः ऋ० २,३३,५. २१
 सूतः १६,१८. ६३
 सूर्यः १६,४५. ९०
 गृकायी (यिन्) १६,२१. ६६
 गृकाहस्ताः १६,६१. १०६
 सेनाः १६,२६. ७१
 सेनानीः× १६,१७. ६२
 सेनान्यः १६,२६. ७१
 सोभ्यः १६,३३. ७८

✽ अस्य श्वानः-असंसूक्तगिलाः, ऐलबकाराः, महास्याः। (अ० ११,२,३०. १९९)

✽ अस्य सेनाः-कोशिन्यः, षोषिन्यः, नमस्कृताः, संभुजनयः। (अ० १०,२,३१. २००)

सोमः १६, ३९. ८४। अ० १९, १८, ३. १४१
 स्तुतः ऋ० २, ३३, १२. २८
 स्तुत्यः १६, ३७. ८२
 स्तायूनां पतिः १६, २१. ६६
 स्तेनानां पतिः १६, २०. ६५
 स्थपतिः १६, १९. ६४
 स्थिरधन्वा ऋ० ७, ४६, १. ३२
 स्वधावन् (वा) ऋ० ७, ४६, १. ३२
 स्वपन्तः १६, २३. ६८
 स्वपिवातः ऋ० ७, ४६, ३. ३४
 स्वायुधः १६, ३६. ८१
 हनीयान् १६, ४०. ८५
 हन्ता १६, ४०. ८५
 हरिकेशः १६, १७. ६२
 हरिकेशाः (वृक्षाः) १६, ४०. ८५

हारित्यः १६, ४५. ९०
 हवनश्रुत् ऋ० २, ३३, १५. ३१
 हिरण्यबाहुः १६, १७. ६२
 हिरण्यरूपः [अग्निः] ऋ० ४, ३, १. २१०
 हीळितः ऋ० ७, ४६, ४. ३५
 हस्तः यस्य जलाषः } ऋ० २, ३३, ७. २३
 भेषजः, मृळयाकुः }
 हस्ते बिभ्रत् भेषजा वार्याणि ऋ० १, ११४, ५. १०
 हृदयानि देवानाम् १६, ४६. ९१
 हृदयः १६, ४४. ८९
 हेतिः भवस्य १६, १८. ६३
 हेतिः यस्य तक्मा कासिका अ० ११, २, २२. १९१
 हेतीनाम् ईशानः १६, ५३. ९८
 होता [अग्निः] ऋ० ४, ३, १. २१०
 ह्रस्वः १६, ३०. ७५

मृत्युदेवता-गुणबोधक-पदानि

| | | |
|-------------|--------------------------|--------------------------------|
| अधिवाकः | अ० ६,१३,२. २१६ | २१४ । अ० ६,१३,१-३. २१५-२१७; ४, |
| चक्षुष्मान् | ऋ० १०,१८,१. २११ | ३५, १-७. २१८-२२५; ६, ६३, २-३. |
| तिग्मतेजाः | अ० ६,६३,२. २२६ | २२६-२२७ |
| सुर्मतिः | अ० ६,१३,२. २१६ | यमः अ० ६,६३,२-३. २२६, २२७ |
| देववधाः | अ० ६,१३,१. २१५ | यातुधानाः अ० ६,१३,३. २१७ |
| निर्ऋतिः | अ० ६,६३,२. २२६ | राजवधाः अ० ६,१३,१. २१५ |
| परावाक | अ० ६,१३,२. २१६ | विदयानां वधाः अ० ६,१३,१. २१५ |
| ब्राह्मणाः | अ० ६,१३,३. २१७ | शृण्वन् ऋ० १०,१८,१. २११ |
| भेषजानि | अ० ६,१३,३. २१७ | सुमतिः अ० ६,१३,२. २१६ |
| मृत्युः | ऋ० १०,१८,१-२,४. २११-२१२, | |

मृत्युनिवारक-ब्रह्मौदन-गुणबोधक-पदानि ।

| | | | |
|--------------------|----------------------|-------------------|--------------|
| ओदनः ब्रह्मणे | अ० ४,३५,१-७. २१८-२२४ | प्राणदवान् | ४,३५, ५. २२२ |
| अधिपतिः गायत्र्याः | ,, ६. २२३ | ब्रह्मौदनः | ,, ७. २२४ |
| पक्कः | ,, ६. २२३ | विष्टतिः लोकानाम् | ,, १. २१८ |
| प्राणदः | ,, ५. २२२ | विश्वजित् | ,, ७. २२४ |



दिग्भेदेन रुद्ररूपाणि ।

| अथर्व० ३. २६. १-६ (१४३-१४८) | | | अथर्व० ३. २७. १-६ (१४९-१५४) | | | अथर्व० १५. ५. १-२१ (१२०-१४०) |
|-------------------------------|--------------|-----------|-------------------------------|--------------|----------|----------------------------------|
| दिङ्नाम । | देवाः । | इषवः । | अधिपतिः । | रक्षिता । | इषवः । | अन्तर्देशात् अनुष्ठाता इष्वासः । |
| प्राची | हेतयः | अग्निः | अग्निः | असितः | आदित्याः | भवः |
| दक्षिणा | अविष्यवः | कामः | इन्द्रः | तिरश्चिराजिः | पितरः | शर्वः |
| प्रतीची | वैराजाः | आपः | वरुणः | पृदाकुः | अन्नम् | पशुपातिः |
| उदीची | प्रविध्यन्तः | वातः | सोमः | स्वजः | अशनिः | उग्रः |
| ध्रुवा | निलिम्पाः | ओषधीः | विष्णुः | कल्माषघ्नीवः | वीरुधः | रुद्रः |
| ऊर्ध्वा | अवस्वन्तः | वृहस्पतिः | वृहस्पतिः | श्वित्रः | वर्षम् | महादेवः |
| सर्वे अन्तर्देशाः । | | | | | | ईशानः |

दैवत-संहितान्तर्गत-

रुद्रदेवताया उपमा-सूची ।

| | | |
|--------------------------|-------------------|------------------------------|
| आप इव अग्निः | अ० ११, २, ८. १७७ | परि वृणक्तु नो भवः । |
| वृषणः अश्वस्य क्रन्दः इव | अ० ११, २, २२. १९१ | यस्य तक्मा कासिका हेतिः । |
| घृणी इव च्छायायाम् | ऋ० २, ३३, ६. २२ | अरपाः रुद्रस्य सुम्रं अशीय । |
| पशुपाः इव | ऋ० १, ११४, ९. १४ | ते स्तोमान् उपाकरम् । |
| मृगं न | ऋ० २, ३३, ११. २७ | भीमम् । |
| सूर्यः इव | ऋ० १, ४३, ५. ४ | यः शुक्रः । |
| हिरण्यं इव | ऋ० १, ४३, ५. ४ | यः रोचते । |



दैवत-संहिता

(८)

उषा-देवता

संपादक

श्रीपाद दामोदर सातवळेकर,

स्वाध्याय-मण्डळ, औंध (जि. सातारा)



संवत् २०००, शक १८६५; सन् १९४४

संपादक

भट्टाचार्य पं० श्रीपाद दामोदर सातवलेकर

महामहाध्यापक, गांतालंकार, अध्यक्ष स्वाध्याय मण्डल औंध, (जि० सातारा)

सहसंपादक

पं० दयानंद गणेश धोरेश्वर, बां. ए.

‘वैदिक धर्म’ सहसंपादक, औंध

सूचीलेखक

श्री० पं० अनंत दिनकर रास्ते, वाई, (जि० सातारा)

मुद्रक और प्रकाशक- व० श्री० सातवलेकर, B. A.,

भारत-मुद्रणालय, औंध (जि० सातारा)

उषाका परिचय

(१)

उषादेवता के सूक्तोंमें साधारणतया प्रागैतिक दृश्यका अत्यन्त मनोरम एवं काव्यमय वर्णन किया हुआ है ऐसा प्रथमतः मनमें विचार उठ खड़ा होता है, और यह धारणा है भी ठीक, क्योंकि उषादेवता के लगभग २०० मंत्रोंमें करीब ८० मंत्र भाग स्पष्ट तथा प्रातःकालीन स्फूर्तिप्रद तथा प्रकाशमय दृश्य का बखान करते हुए पाये जाते हैं। इस उषावेलाके सजीव एवं आन्दोलनमय वर्णन के अतिरिक्त पचास से अधिक बार इन मंत्रोंमें आर्थिक और सांपत्तिक समृद्धि एवं वैभव के देने और पानेका उल्लेख पाया जाता है। इसलिये ऐसा निरुसन्देह कहा जा सकता है कि, इन मंत्रोंमें भौतिक संपन्नता और उषाकालीन प्राकृतिक सुरम्यता का ही अत्यधिक चित्रण एवं निर्देश किया है।

अँधेरे का हट जाना और उज्जलेका आविर्भाव मंत्रोंमें इस भाँति चित्रित किया है।

१. उयोतिः कृणोति सूनरी । (ऋ. १।४८।८)
२. उयोतिः विश्वस्मै भुवनाय कृण्वती ... उषा तमः वि आवः । (ऋ. १।९२।४)
३. अप प्रागात् तम आ उयोतिरेति । (ऋ. १।११३।१६)
४. ...वि आवः उयोतिषा तमः । उषः अनु स्वधां अत्र । (ऋ. ४।५२।६)
५. अप ... बाधमाना तमांसि उषा दिवो दुहिता उयोतिषागात् । (ऋ. ५।८०.५)
६. पुनः उयोतिः युवतिः पूर्वधा अकः । (ऋ. ५।८०।६)
७. ... चित्रं भास्ति उषसः ... वि ता बाधन्ते तम ऊर्ध्वाया । (ऋ. ६।६५।२)
८. ...अकः उयोतिः बाधमाना तमांसि । (ऋ. ७।७८।१)
९. उषा याति उयोतिषा बाधमाना विश्वा तमांसि दुरिता अप देवी । (ऋ. ७।७८।२)
१०. उषा स्या नश्यमायुर्दधाना गूड्वी तमो उयोतिषोषा अबोधि । (ऋ. ७।८०।२)
११. अपो महि व्यपति चक्षुषे तमो उयोतिः कृणोति सूनरी । (ऋ. ७।९१।१)

१२. अपो मही वृणुते चक्षुषा तमो उयोतिः कृणोति सूनरी । (साम. ३०३ पूर्व. आ.)

१३. मं ते गातराम आ जनेषन्ति उयोतिः यच्छन्ति...। (ऋ. ७।९१।२)

१४. ...त्याः प्रायदध्नन् पुरस्तान् उयोतिर्यच्छन्तीरामो विभातीः । ...अपाचीनं तमो अगादमुष्टम् । (ऋ. ७।७८।३)

१५. ...उषा उयोतिः यच्छत्यग्ने अह्वम् । (ऋ. ५।८०।१०)

१६. इदं श्रेष्ठं उयोतिषां उयोतिरागात् । (ऋ. १।११३।१९)

१७. इदं ...स्यत् पुरुषतमं पुरस्ताज्ज्योतिरामसो .. अस्यात् । (ऋ. ४।५१।१)

१८. अस्थुः ...चित्रा उषसः पुरस्तान् ...वि ...तमसो द्यारोच्छन्तीः । (ऋ. ४।५१।२)

१. 'यह भली भाँति ले चलनेवाली उषा प्रकाशका मृजन करती है; २. समूचे संसार के लिए उजाला निर्माण करती हुई उषा अँधेरा हटा चुकी है; ३. अँधेरा बिलकुल दूर हट गया और अब उजाला चला आ रहा है; ४. हे उषे! तू उजालेसे अँधेरा हटा चुकी है और अब स्वर्काय धारक शक्तिके अनुकूल रक्षा कर; ५. तुलोक की मानों कन्यासी यह उषा अंधकार के पुत्र को दूर भगाती हुई उजालेके साथ आ चुकी है; ६. इस युवती उषासे फिर पहले जैसी उजाला बनाया है; ७. उषाएँ अगूँठे ढंगसे जगमगाती हैं और वे रात्रिको अँधेरेको विशेषरूपसे हटाती हैं; ८. अंधकार हटाती हुई उषा उजाला कर चुकी है; ९. योतमान उषा सारे अँधेरे एवं बुराइयोंको उजालेसे दूर भगाती हुई चली आती है; १०. यही वह उषा जागृत हुई है जो उजालेसे अँधेरा छिपाकर नवीन जीवनका धारण कर लेती है; ११. गुन्दर ढंगसे ले चरनेवाली उषा देखना रोमभ हो इसलिये बड़ा भारी अँधेरा दूर करती है; १२. हे उषे! तेरी किरणें अँधेरेको ठीक तरह हटाती हैं और उज्जला दे डालती हैं; १३. वे जगमगानेवाली उषाएँ प्रकाश देती हुई सामने दीख पड़ी और अ-सेवनीय अँधेरा नीचा मंड कर चला गया. १४. दिन के आरम्भ में ही

उषा उजाला देती है, १५. यह सभी प्रकाशमें उषा कोटिका प्रकाश आपहुँचा है १६. अंधेरेमेंसे यह विशालतम प्रकाश सामने उठखड़ा हुआ है; १७. सामने ये जगमगाती हुई उषाएँ विशेषरूपसे अंधःकारको हटाती हुई खड़ी हो चुकी हैं । ”

इसमौति अंधियारीके दूर हो जानेपर और सभी जगह प्रकाश का पूर्ण संचार हो चुकनेपर प्राणिमात्रमें जागृति तथा हलचल शुरू होती है जिसका वर्णन निम्न मंत्रोंमें किया दीक्ष पड़ता है—

१ सूनरी उषा आयाति, पद्म इयते, पक्षिणः उत्पातयति ।
(ऋ. १।४८।५)

२. उषे वयश्चित् वसतेरपसन् नरश्च...व्युद्यौ ।
(ऋ. १।१२४।१२; ६।६४।६)

३. वयो नक्षिष्टे पक्षिवांस आसते व्युद्यौ (ऋ. १।४८।६)

४. वयश्चित्ते पताग्रिणो द्विपच्चतुष्पदञ्जुनि ।

उषः प्रारन्तूरुन दिवः अन्तेभ्यपरि (ऋ. १।४९।३)

“ १. सुन्दर रूपवाली या अच्छे ढंगसे ले चलनेवाली उषा चली जाती है तब जो कोई पैरोंसे युक्त होता है, वह चलने-लगता है और पंछी उड़ने लगते हैं; २. हे उषे ! तेरे उठ-आनेपर मानव तथा पंछी भी अपने निवासस्थानसे उठ बाहर निकल आये; ३. हे उषे ! तेरे उदय होनेपर उड़नेवाले पंछी कभी नहीं बैठ जाते हैं याने तुरन्त उड़ना शुरू करते हैं; ४. हे (अर्जुनि उषः) श्वेतवर्णवाली उषे ! (ते ऋतून् अनु) तेरी हलचल होनेके उपरान्तही (द्विपत् चतुष्पत्) मानव, चौपाये (पतत्रिणः वयः चित्) और डैनोंवाले पंछी भी (दिवः अन्तेभ्यः परि) आकाशके एक छोरसे ले दूसरे छोरतक चारों ओरसे (प्रारन्) जाने आने लगे । ” तथा और भी देखिए—

१. अचेति विद्यो दुहिता...विश्वं पश्यन्मयुषसं विभातीम् ।
(ऋ. ७।७८।४)

२. उपो रुरुवे युवतिर्न योषा विश्वं जीवं प्रसुवन्ती चरायै ।
(७।७७।१)

३. आधिष्कृष्वतीं भुवनानि विश्वा । (ऋ. ७।८०।१)

४. अविरकभुवनं विश्वमुषाः । (ऋ. ७।७६।१)

५. विश्वानि देवी भुवनानिचक्षुः...उर्विया वि भाति ।

विश्वं जीवं चरसे बोधयन्ती... ॥ (ऋ. १।९२।९)

६. विश्वमस्या नानाम चक्षसे जगत्...। (१।४८।८)

७. विश्वस्य हि प्राणनं जीवनं त्वे वि यदुच्छसि सूनरी ।
(ऋ. १।४८।१०)

८. दधं पश्यन्नयः उर्विया वि चक्षे उषा भजीगर्भुवनानि विश्वा ।
(ऋ. १।११३।५)

९. ससतो बोधयन्ती शश्वसमागात्...। (ऋ. १।१२४।४)

१०. यूयं हि देवीः...परिप्रयाथ भुवनानि सधः ।

प्रबोधयन्तीरुषसः ससन्तं द्विपाच्चतुष्पाच्चराय जीवम् ॥
(ऋ. ४।५९।५)

१. बुलोककी कन्या इस उषाका पता लगा, अब सभी विशेष-रूपसे जगमगाती हुई उषाको देख लेते हैं; २. यह उषा समूचे प्राणीमात्रको संचारके लिए प्रेरित करती हुई युवती महिलाके तुल्य समीप आकर जगमगाती है; ३. सारे विश्वको प्रकट करती है; ४. समूचे संसारको स्पष्ट कर चुकी है; ५. समूचे जीव-लोकको संचारार्थ जगाती हुई द्योतमान उषा अखिल जगत् को देखकर अंत्यन्त अधिक रूपसे सुहाती है; ६. सारा संसार इसे देखनेके लिए नम्र हुआ है; ७. हे सुन्दरी उषे ! जो तू ऊपर उठ आती है तो सचमुच सबकी प्राणशक्ति तथा जीवनशक्ति तुझपर निर्भर है; ८. जो तनिकसा देख रहे हों वे विस्तृत रूपमें देख सकें इसलिए उषाने सारे संसारको जगाया है; ९. सोने-वालोंको जगाती हुई उषा हमेशा आती है; १०. तुम द्योतमान उषाओ ! तुरन्तही तुम अखिल विश्वमें संचार करती हो और मानव एवं चौपाये जीवोंको जो कि सोये पड़े हैं, संचार करनेके लिए जगाती हो ।

उपर्युक्त अवतरणोंसे स्पष्ट हुआ कि उषाके आगमनमात्रसे सारे संसारमें जागृति एवं संचरणशीलताका सूत्रपात होता है । निद्राधीन प्राणीमात्रको जागृत करना उषाकाही कार्य है । तेजस्विता, सूर्यकिरणों एवं विविध वर्णोंका चेतोहारी दर्शन उषाकालमें हमें होता है। इस संबंधमें निम्न मंत्र देखने योग्य हैं—

१. उष आभाहि भानुना चन्द्रेण दुहितर्दिवः ।

(ऋ. १।४८।९)

२. उषो यदथ भानुना वि द्वारादृणवो दिवः ।

(ऋ. १।४८।१५)

३. भरमे श्रेष्ठेभिर्भानुभिर्विभाहि । (ऋ. ७।७७।४)

४. एते त्वे भानवो द्यौतायाश्चिन्ना उषसो अमृतवास आगुः ।
(ऋ. ७।५५।३)

“ १. हे शुलोककन्ये उषे ! तू आल्हाददायक किरणसे जगमगाती रह; २. हे उषे ! आज तू किरणकी सहायतासे मानों शुलोकके दरवाजोंको खोल चुकी है; ३. हमारे लिए उच्च कोटिके किरणोंसे युक्त हो जगमगाने लगे; ४. देखनेयोग्य उषाके येही वे अनूठे एवं अमृतरवके गुणोंसे पूर्ण किरण आ पहुँचे हैं । ”

१. व्युच्छन्ती हि रश्मिभिर्विश्रमा भासि रोचनम् ।

(ऋ. १।४९।४)

२. सूर्यस्य चेति रश्मिभिर्दशाना । (ऋ. १।९२।१२)

३. आ घां तनोषि रश्मिभिरान्तरिक्षं उरु प्रियं ।

उषः शुक्रेण शोचिषा (ऋ. ४।५२।७)

१. हे. उषे ! तू ऊपर उठती हुई अपने किरणोंसे सारे जगत् को कन्तिमान् बनादेती है; २. सूर्यकिरणोंसे दर्शनीय उषाका पता लगा; ३. हे उषे ! तू दीप्त तेजसे तथा किरणोंसे विशाल अन्तरिक्ष एवं शुलोकको व्याप्त करलेती है ।

उषाके आगमनके फलस्वरूप जनताको पथज्ञान भली भाँति हो जाता है, जिसके बारेमें निम्न निर्देश पाये जाते हैं—

१. एषा जनं दर्शता बोधयन्ती सुगान् पथः कृष्वती

याति अग्रे । (ऋ. ५।८०।२)

२. कृणोति विश्वा सुपथा सुगानि... । (ऋ. ६।६४।२)

३. वि उषा भावः पथ्या जनानाम्... । (ऋ. ७।७९।१)

४. एषा...पथो रदन्ती सुविताय देवी...वि भाति ।

(ऋ. ५।८०।३)

५. ...दिवो दुहितरो विभागीगातुं कृणवन्नुषसो जनाय ।

(ऋ. ४।५१।१)

६. भास्वती...अचेति चित्रा वि दुरो न भावः ।

(ऋ. १।११३।४)

१. यह दर्शनीय उषा जनताको जगाती हुई और मार्गोंको आसानीसे यात्रा करने योग्य बनाती हुई आगे बढ़ती है; २. सारे अच्छे मार्गोंको सुगमतापूर्वक जाने योग्य बनाती है; ३. जनताकी सड़कोंको उषाने विशेष ढंगसे व्यक्त किया है; ४. यह चेतमान उषा भलाईके लिए मार्गोंको खोदती हुई विशेषरूपसे कान्ति युक्त दिखई देती है; ५. जगमगानेवाली शुलोक कन्या उषाओंने जनताके लिए गमनके लिए सड़क बनाई है; ६. जगमगाती हुई अनोखी उषा ज्ञात हुई और उसने हमारे लिए द्वार खोलदिये हैं ।

शुभ्र वस्त्र पहनी हुई नारीके समान उषा दीख पड़ती है ऐसा उल्लेख वेदमंत्रोंमें पाया जाता है—

१. एषा दिवो दुहिता प्रत्यर्क्षी व्युच्छन्ती युवतिः शुक्रवासाः

(ऋ. १।११३।७)

२. एषा दिवो दुहिता प्रत्यर्क्षी उयोतिर्वसाना...

(ऋ. १।१२४।३)

३. ...रुद्रासो विभ्रती शुक्रमश्वैत् । (ऋ. ७।७७।२)

४. ...इयं अश्वैत् युवतिः पुरस्तात्... । (ऋ. १।१२४।११)

५. रुद्रास्मा रुशती श्वेत्यागात् । (१।११३।२)

१. यह शुलोककी कन्या श्वेतवस्त्र पहनी हुई युवतीकी तरह ऊपर उठती हुई सधको दीखपड़ी; २. ज्योतिसे मानों ढकी हुई इस आकाशकन्याका दर्शन हुआ; ३. श्वेत एवं चमकीला वस्त्र धारण करती हुई उषा विकसित तथा शुभ्र हुई; ४. यह युवती नारीके समान आभावाली उषा सामने श्वेतवर्णवाली हुई; ५. जगमगानेवाली एवं चमकीले सूर्यबिम्बको साथ ले शुभ्र उषा आपहुँची है ।

प्रातःकालके समय पूर्वदिशाका दृश्य कितना मनोरम एवं हृदयंगम होता है सो नीचे दिये हुए मंत्रोंमें बताया है—

१. यस्या रुद्रान्तो अर्चयः प्रति भद्रा अदक्षत...सा ..उषा ।

(ऋ. १।४८।१३)

२. ...स्या उषसः केतुं अकृत पूर्वे अर्धे...भानुं अजने ।

(ऋ. १।९२।१)

३. चित्रं केतुं कृणुते चेकिताना (ऋ. १।११३।१५)

४. पूर्वे अर्धे रजसः ... अकृत प्र केतुम् (ऋ. १।१२४।५)

“ १. जिसकी जगमगानेवाली कल्याणकारक ज्वालाएँ सामने दीख पड़ीं वह उषा है; २. वे उषाएँ पूर्व गोलार्धमें मानों झंडा खड़ा करचुकीं और रश्मिजालको सुशोभित करती हैं; ३. जाग्रत होती हुई उषा मानों अनोखा झंडा-ज्ञापक चिन्ह कर लेती है; ४. विश्वके पूर्व विभागमें झंडा ऊँचा किया गया है । ”

पूर्व दिशामें रक्तिमाका दृश्य कैसे होता है सो बताया है ।

१. एषा गोभिः अरुणेभिः पुजाना... । (ऋ. ५।८०।३)

२. ...इयं...युवतिः...युष्के गवामरुणानामनीकम् ।

(ऋ. १।१२४।११)

३. उदपसन् अरुगा भानवो...स्वापुजो अरुषीः गा अयुक्षत ।

... उषासो...रुद्रान्तं भानुं अरुषीः भशिभयुः ।

(ऋ. १।९२।२)

४. युद्धवा हि... अश्वान् अथ अरुणान् उषः

(ऋ. १।९२।१५)

५. निष्कृण्वाना आयुधानीव धृष्णवः, प्रति गावो अरुषीः

यन्ति ... (ऋ. १।९२।१९)

६. प्रति धर्चिः रशत् अस्या अदर्शि, विनिष्ठने बाधने कृष्णं
अश्वम् । विप्रं दिवो दुहिता भानुं अभेत् । (ऋ. १।९२।५)

७. गृध्रस्तीरभ्रमसितं रशद्भिः शुक्रास्तनूभिः शुचयो रुचानाः
... दिवो दुहितरो विभातीः ... । (ऋ. ४।५।१९)

८. सुतर- यामानं... अरुणस्तुं विभातीं, देवीं उषसं ..
(ऋ. ५।८०।१)

९. उते शोचिर्भानवो धामपसन्... उषो देवि रोचमाना
महोभिः (ऋ. ६।६४।२)

१०. उषा स्या... दुहिता दिवोजाः... या भानुना रतता
राम्यामु अज्जयि तिरस्तममश्रिद्वत्तु । (ऋ. ६।६५।१)

११. प्रति धुनानां अरुणामो अश्वः विप्रा अदध्ननुषसं
पहन्तः । (ऋ. ७।७५।६)

१२. ऊर्ध्वा अस्या अज्जयो वि श्रयन्ते । (ऋ. ७।७८।१)

१३. प्र रोचना रुक्वे रण्वसं दक् । (ऋ. ३।६१।५)

१४. उषा अदर्शि रश्मिभिः व्यक्ता । (ऋ. ७।७७।३)

१५. दिवो अर्कैः अशोधि । (ऋ. ३।६१।६)

“ १ यह उषा लालरंगवाले किरणोंसे युक्त होती हुई दीख-
पड़ती है; २. यह नवयौवन संपन्न नारीके तुल्य गौशृङ्गरूपवाली
उषा रक्तमामय किरणोंके समूहमें जोड़देती है; ३. रक्तवर्ण-
वाले किरण ऊपर उठ आये और लालमामय एवं स्वयंही
जुटजानेवाले रश्मिसमूह को जोड़ दिया तथा रक्तिम आभावाली
उषाएँ दीप्तिमान सूर्य किरणके सहारे खड़ी है; ४. हे उषे !
आज तू रक्तिम कान्तिवाले तथा व्याप्त होनेवाले किरणोंको जोड़
दे; ५. ये लाल किरण चारों ओर चले जाते हैं तो ऐसा जान
पड़ता है कि, मानों साहसी वीर अपने हथियार खींच निकालते
हों; ६. इस उषाकी वैद्रीयमान ज्वालाकी कान्ति दिखाई दी
और यह विशेष रूपसे खड़े रहकर काले कटुटे तथा प्रचंड
अंधकारको विनष्ट करडालती है पश्चात् यह ध्रुलोककन्या उषा
पवित्ररूपवाले या अद्भुत सूर्यके सहारे रहती है; ७. ये ध्रुलोक
की कन्यारूप उषाएँ सुशोभित होती हुई तथा पवित्र एवं विशुद्ध
हो चमकती हुई और दीप्त बनकर तेजस्वी रूपोंसे बड़े भारी कृष्ण
वर्णको मानों छिपाती हैं; ८. द्योतमान उषाको जे कि रक्तिम आभा-

वली होकर भासमान होती है, तथा जिसका मार्ग जगमगारहा
है; ९. हे द्योतमान उषे ! तेरी आभा तथा रश्मियाँ आकाशमें
ऊपर उठ चुकी हैं और तू तेजस्वितासे बड़ी सुहावनी प्रतीत
होती है; १०. यही वह ध्रुलोकमें उत्पन्न कन्या है जो तेजस्वी
किरण की बंदौलतही रात्रियोंमें अंधेरा एवं तारागण की टिम-
टिमाहट की अपेक्षा कहीं अधिक प्रतीत होती है; ११. अनूठे,
लाल रंगवाले, व्यापकशक्तियुक्त किरण द्योतमान उषाको
उठाकर लेचलते हुएसे दीख पड़े; १२. इस उषाके विभूषण
ऊपरवाली दिशमें टिके हुए दिखाई देते हैं; १३. देखनेमें
रमणीय प्रतीत होनेवाली उषा आभामय हो यथेष्ट सुहाने
लगी; १४. किरणोंके कारण स्पष्ट होकर उषा दृष्टिगोचर हुई;
१५. ध्रुलोकमें अर्चनीय किरणोंसे वह जागृत हुई ।”

उषाके बारेमें मंत्र क्या कहते हैं सो देख लीजिए-

१. उषो देवि अमर्या वि भाहि । (३।६।१२)

२. उषः... ऊर्ध्वा निष्ठसि अमृतस्य केतुः । (ऋ. ३।६।१३)

१. हे द्योतमान उषे ! तू अमरणशील होकर विशेषतया
जगमगती रह; २. तू अमरणकी पताकामयी है और ऊँची
जगह ठहरती है ।” इसीलिए यह उषा जो कि—

१. भास्वती ... दिवः... दुहिता । (ऋ. १।९२।७)

२. शुक्रा कृष्णात् अजनिष्ट श्वितीयी । (ऋ. १।१२।१९)

३. उषा याति स्वप्नस्य पत्नी... आ भन्तात् दिवः
पश्ये आ पृथिव्याः । (ऋ. ३।६।१४)

अर्थात् ‘१. जगमगती हुई ध्रुलोककन्या तथा २. कृष्णवर्ण
अंधकारमेंसे तेजस्विनी और शुभ्रवर्णवालीके रूपमें उत्पन्न हुई एवं
३. दिनकी मानों पत्नीसी बनकर यात्रा करती है, अतः ध्रुलोक
एवं भूलोकके एक दोनोंसे लेकर दूसरे कोनेतक फैलचुकी है’ और
ध्रुलोककी जीवमुद्गीरयन्ती उषा मृत कंचन बोधयन्ती ।
(ऋ. १।११।३८)

“ उषा ऊपर उठते समय जीवमात्रको ऊपर उठनेके लिए
प्रेरित करती हुई किसी भी निश्चेष्ट पड़े हुए को जगाती हुई”
दीख पड़ती है जब उदित होती है तो लोग कहने लगते कि—

अतारिष्म तमसः पारं अस्य । (ऋ. १।९२।६)

‘ हम इस अंधकारको पार कर गये हैं ’ क्योंकि अब तो
उषा उच्छन्ती... समयने विभाती सुप्रतीका (ऋ. १।९२।६)

‘ ऊपर उठनेवाली उषा सुन्दर स्वरूपवाली होकर और
प्रकाशमान बनकर दृंस रही है ।’ यह उषा

स्पृण्वती दिवो अन्तां अन्नोधि, अप स्वसारं सनुतयुंयोति ।
(११२।११)

आकाशकी चरम सीमासे खोलती हुई उठगयी है और अपनी मानों बहनसी रात्रिको हमेशाही दूर हटाती है ।

वि अज्जिभिः दिव आतासु अद्यौत् अप कृष्णां निर्णिजं
देवी आवः । (१११।३।१४)

‘द्योतमान उषा ऊपरकी दिशाओंमें किरणजालसे चमकने लगी और रात्रिके कालेकल्लेट स्वरूपको दूर कर चुकी है ।

पूर्वा विश्वस्मानुवनाद्बोधि..उच्छा व्यख्ययुवतिः पुनर्भूः..।
(११२।३।२)

‘सारे संसारके पहलेही यह जागृत हुई और नवयौवनसंपन्न तथा बारबार उत्पन्न होनेवाली यह उषा उच्च पदपर चढ़कर खूब सुहने लगी ।’

पुनर्पुनः जायमाना पुराणी समानं त्वं अभिशुम्भमाना ।
(ऋ. ११२।१०)

‘यह उषा पुरानी है पर बारबार उत्पन्न होती हुई वर्णको समान रूपसे साफसुथरा एवं परिमार्जित करती हुई दिखाई देती है ।’

पुराणी देवी युवतिः पुरन्धिः अनु व्रतं चरसि विश्ववारे ।
(ऋ. ३।६।११)

‘हे दासियुक्त तथा सबके स्वीकरणीय उषे ! तू पुरानी है लेकिन नवयौवनयुक्त और बहुतोंका धारण करनेवाली महिला जैसी है तथा व्रत-नियम-के अनुकूल संचार करती है ।’

१. संस्मयमाना युवतिः पुरस्तात्...। (११२।३।१०)

२. सुसंकाशा मातृमृष्टेय योषा... (११२।३।११)

१. यह उषा जनताके सम्मुख सुहास्य वदनी युवतीकी नाई दिखाई देती है; २. यह उषा मानों माताने विभूषित की हुई सुस्वरूप युवती नारीके तुल्य है ।

१. एषा...आविष्कृतवाना तन्वं पुरस्तात् । (ऋ. ५।८०।४)

२. एषा...ऊर्ध्वं ज्ञाती दृश्ये नो अस्थात् । (ऋ. ५।८०।५)

३. आविर्ध्वंशंसि कृणुषे विभाती । (ऋ. १।१२३।१०)

४. आविस्तन्मं कृणुषे दशे कम् । (ऋ. १।१२३।११)

१. यह उषा सामने शरीरको व्यक्त करती हुई और २. ऊँची जगह मानों जलमग्न हुईसी हमारे दर्शनार्थ खड़ी है; ‘हे उषे ! तू सुहाती हुई जनताके दर्शनार्थ अपना सुन्दर शरीर भलीभाँति स्पष्ट अनावृत करती है ।’

ऊपरके वचनोंसे स्पष्ट हुआ होगा कि विश्वके पुरातनतम साहित्य-अर्थात् वेदमें प्राभातिक धेलाका कितना काव्यमय, रसिकतापूर्ण एवं सौन्दर्यप्रादी वर्णन किया हुआ उपलब्ध होता है । ऐसा निरसन्देह कहा जा सकता है कि, उषादेवताके सूक्त वारतवमें वेदकालीन प्रतिभाशाली कवियोंकी रसिकता तथा सौन्दर्य लोलुपताका भलीभाँति परिचय करानेका क्षमता रखने-वाले काव्य हैं ।

उषा सूक्तोंको ध्यानपूर्वक पढ़लेनेसे जहाँ एक ओर वैदिक कवियोंकी सौन्दर्यासक्ति तथा सहृदयताका ज्वलन्त उदाहरण दीख पड़ता है, वहाँ इस बातका भी स्मरण हुए बिना नहीं रहा जाता कि, वैदिक सूक्तोंके सृजन करनेकी क्षमतासे युक्त वे प्राचीन कवि आर्थिक सुसमृद्धि एवं भौतिक वैभवको प्राप्त करनेकी आवश्यकताके बारेमें पर्याप्त रूपसे सतर्क और सचेष्ट रहा करते थे । बात भी बिल्कुल ठीक जंचती है, क्योंकि साधारणतया ऐसा दिखाई देता है कि, जिस समाजमें पर्याप्त मात्रामें वैभव-संपन्नता विद्यमान है, वहीपर रसिकता सहृदयता एवं प्रतिभा-संपन्न सुरुचिताका प्रादुर्भाव हुआ करता है । वैदिक सूक्त पढ़ लेनेसे साफ जाहिर होता कि वैदिक समाज व्यवस्थामें सांपतिक सुविधा एवं भौतिक ऐश्वर्यको अक्षुण्ण बनाये रखनेकी और तत्कालीन जनताका ध्यान किया तीव्रतासे आकृष्ट हो चुका था । अस्तु, अब हमें उन मंत्र भागोंकी ओर दृष्टिपात करना चाहिए जहाँ आर्थिक प्रगति करलेनेके स्पष्ट निर्देश पाये जाते हैं ।

१. दिवः दुहितर् ! रथेभिः वाजंभिः आगदि, रथि अस्मे नि धारय । (ऋ. १।३।०।२)

२. सा न आवइ...रथि दिवो दुहितर्...। (ऋ. ६।६।४)

३. उच्छा दिवो दुहितः प्रभवत्...सुवीरं रथि गृणते रिरिदि...। (ऋ. ६।६।५।६)

४. महे नो अद्य सुविताय बोधि उपो...चित्रं रथि यथासं धेहि अस्मे...। (ऋ. ७।७।५।२)

५. एषा नेत्री राधसः...उषा...दीर्घश्रुतं रथि अस्मे दधाना...। (ऋ. ७।७।६।७)

६. वामेन सह, वृत्ता शुम्नेन राया सह नः वि उच्छ । (ऋ. १।४।८।१)

७. सा अस्मासु धा गोमदधावदुक्थं उषो वाजं सुवीर्यम् । (ऋ. १।४।८।२)

८. बृहता विश्वपेशसा राया, इलाभिः वाजैः शुक्लेन नः
सं मिमिक्ष्व (ऋ. १।४८।१६)
९. उषो अघेह...रेवदस्मे व्युच्छ । (ऋ. १।९२।१४)
१०. उपस्तच्छिन्नमाभरास्मभ्यं ...येन तोकं तनयं च
भामहे । (ऋ. १।९२।१३)
- ११.... अस्मे आयुर्नि दिदीहि प्रजावत् (ऋ. १।११३।१७)
१२. ताः प्रत्यवन्नव्यसीनूनमस्मे रेवदुच्छन्तु सुदिना उषासः।
(ऋ. १।१२४।९)
१३. तेभ्यो शुभ्रं बृहद्यश उषो मघोन्यावह ।
(ऋ. ५।८९।७)
१४. रयिं दिवो दुहितरो विभातीः प्रजावन्तं यच्छतास्मसु
वेवीः ।
१५. स्योनादा वः प्रतिबुध्यमानाः सुवीर्यस्य पतयः स्याम।
(ऋ. ४।५१।१०)
१६. महे नो अघ बोधय उषो राये दिविस्मती ।
(ऋ. ५।७९।१)
१७. ...नो गोमतीरिषः आ बहा दुहितर्दिवः...।
(ऋ. ५।७९।८)
१८. तच्छिन्नं राध आभरोषो ... यस्ते दिवो दुहितर्मतंभोजनं
तत्रास्व भुनजामहे । (ऋ. ७।८१।५)

“१. हे छुलोककन्ये ! उन अर्धों या बलोंके साथ इधर आजा और हममें धन रख दे; २. तू हमतक धन पहुँचा दे; ३. पहले जैसेही तू उदित होता रह और स्तोताको अच्छी वीरतासे युक्त धन देडाल; ४. हे उषे ! हमारी बर्डी भारी भलाई हो इसलिए तू आज जाग तथा हमारे बाँच अनूठे वैभव और यशकी स्थापना कर; ५. यह उषा बहुत दूरतक विख्यात धन हमारे मध्य रखती हुई धनको पहुँचानेवाली है; ६. हमारेलिए तू सुन्दरताके साथ बडे भारी धन एवं वैभवको साथ ले उदित होजा; ७. गायों और घोडोंसे युक्त, अच्छी वीरता से परिपूर्ण एवं सराहनीय अन्नसामग्री या बल हममें धरेदे; ८. बडे प्रचंड, विश्वभरमें सुन्दर धन, अन्न सामग्रियों, बलों तथा वैभवसे तू हमें भली भाँति संयुक्त कर; ९. उषे ! आज तू हमारे लिए धनसंपन्न हो उदित हो; १० वह अनूठा धन हमें दे डाल ताकि हम पुत्र पौत्रोंका धारण करसकें; ११. हमें संतानयुक्त दीर्घजीवन दे डाल, १२. वे उषाएँ हमारेलिए पहले जैसे अबभी अच्छे दिनवाली एवं धनसंपन्न हो उदित हों,

१३. हे ऐश्वर्य संपन्न उषे ! उन्हें बडा भारी यश और धन पहुंचादे; १४. वे द्योतमान छुलोक कन्याएँ हमारे मध्य संतानयुक्त धन का प्रदान करें; १५. हे उषाओ ! आपके दिये हुए सुखसे हम जागृत होकर अच्छी वीरताके अधिपति बनें; १६. हे द्योतमान उषे ! आज हमें बडा भारी धन मिले इसीलिए जागृत कर १७. हे छुलोककन्ये ! हमारे समीप गोधन युक्त अन्नसामग्रियाँ पहुंचादे; १८. वह अनूठा धन देदे और जो तेरे निकट मानवोंके उपभोग योग्य वस्तु हो उसे प्रदान कर ताकि हम उपभोग लें ”

उषाके संबंधमें वैदिक कवि कहते हैं—

१. चित्रामघा राय ईशे वसूनाम् । (ऋ. ७।७५।५)
२. अघं अग्रमित् भजते वसूनाम् । (ऋ. १।१२३।४)
३. विश्वस्येशाना पार्थिवस्य वस्व उषो अघेह सुभगे व्युच्छ।
(ऋ. ९।११३।७)
४. ... उतोषो वस्व ईशिषे । (ऋ. ४।९२।३)
५. धनानां सनये उषा एति । (ऋ. १।१२४।७)
६. एषा ..अस्त्रेधन्ती रयिं अग्रायु चक्रे (ऋ. ५।८०।३)
- ७...ता भद्रा उषसः पुरा आसुः...यास्वीजानः...स्तुवन्
शंसन् द्रविणं सद्य आप । (ऋ० ४।५१।७)
८. अभूदुषा...मघोन्यजीजनत् सुविताय श्रवांसि ।
(ऋ. ७।७९।३)

१. “यह उषा अनोखे धनसे संपन्न है और संपत्तियोंपर प्रभुत्व रखती है; २. धनोंमें जो परले दर्जेका हो उसेही ले लेती है; ३. हे सुंदर ऐश्वर्यवाली उषे ! तू समूचे भूमंडलस्थ धनपर प्रभुत्व रखती हुई आज उदित हो; ४. तेरे आर्धन धन है; ५. धनोंका दान करनेके लिए उषा आती है; ६. यह उषा क्षीण न होती हुई धनको स्थिर कर चुकी है; ७. पहले वे सुन्दर हितकारक उषाएँ थीं जिनमें यज्ञ करनेवाला सराहना एवं भाषण करता हुआ तुरन्त धन पा सका; ८. उषा ऐश्वर्यसंपन्न हुई और भलाईके लिए अर्धोंका उत्पादन करचुकी ।”

अच्छे कार्य करनेवाले तथा दानशूर पुरुषकोही धन देनेके बारेमें निम्न मंत्रोंमें निर्देश मिलते हैं जिससे स्पष्ट होता है कि वैदिक कवि संपत्तिके विकेन्द्रीकरणके अनुकूल थे और ऐसी समाज व्यवस्था चाहते थे जहाँ आर्थिक विषमता न हो तथा अधिकांश जनता निर्धन और कुछ इनेगिने व्यक्ति अत्यधिक संपन्न एवं धनशाली हैं ऐसी दशा न होने पाय ।

१. ...वहसि भूरि वामं उषो देवि दाक्षुषे मर्याय ।
(ऋ. १।१२४।१२)

२. या वहसि पुरु स्पर्ह...रत्नं न दाक्षुषे मयः ।
(ऋ. ७।८१।३)

३. वि दिवो देवी दुहिता दधाति...सुकृते वसूनि ।
(ऋ. ७।७९।३)

४. याति शुभ्रा...दधाति रत्नं विधते जनाय ।
(ऋ. ७।७५।६)

५. श्रवो वाजं हृषं ऊर्जं वहन्तीः नि दाक्षुषे उषसो
मर्याय...अवो धात विधते रत्नं अय । (ऋ. ६।६५।३)

६. एषा...दुहिता दिवो...व्यूषर्वती दाक्षुषे वार्याणि ।
(ऋ. ५।८०।६)

७. या गोमतीरुषसः...व्यूच्छन्ति दाक्षुषे मर्याय...
ता अश्वदा अश्नवत् सोमसुत्वा । (ऋ. १।११३।१८)

१. “हे उषे ! देवि ! तू दानशूर मानवके लिए प्रचंड सुन्दर धन पहुँचाती है; २. तू दान देचुकनेपर उसे यथेष्ट, स्तुहणीय रत्नवस्तु सुख पहुँचाती है; ३. दानशूर छुलोककन्या सुन्दर कार्य करनेवालेके लिए धनसमूह रखती है; ४. श्वेत-वर्णवाली उषा कार्यकर्ता लोगोंके लिए रत्न धरदेती हुई चली आती है; ५. दानी मानवके लिए उषाएँ अन्न, यश तथा बल पहुँचाती हैं, आज कार्यकर्ताके लिए रक्षा एवं रत्न रख दो; ६. यह छुलोककन्या दानीके लिए स्वीकरणीय वस्तुओंको खोल देती है; ७. दानी पुरुषके लिए जो उषाएँ गोधनयुक्त हो उदित होती हैं उन अन्न देनेवाली उषाओंको सोम निचाडनेवाला पाता है ।”

वैदिक कवि उषासे क्या अपेक्षा रखते हैं सो देखलीजिए—

१. उष आ भाहि भानुना...आवहन्ती भूर्यस्मभ्यं सौभागम् ।
(ऋ. १।४८।९)

२. अथा नो विश्वा सौभाग्यावह (ऋ. १।९२।१५)

३. सा नो रथि विश्ववारं सुपेशसं उषा ददातु सुगम्यम् ।
(ऋ. १।४८।१३)

४. ...प्र नो यच्छतादृष्टुं पृथु छर्धिः प्र देवि गोमतीरिषः ।
(ऋ. १।४८।१५)

५. उषस्तमइयां यशसं सुवीरं...रथि... (ऋ. १।९२।८)

६. ... भद्रं भद्रं क्रतुमस्मासु धेहि ।

उषो नो अय सुहवा व्युच्छ अस्मासु रायो मघवस्तु
च स्युः । (ऋ. १।१२३।१३)

७. युष्माकं देवीरवता सनेम सहस्रिणं च शतिनं च वाजम् ।
(ऋ. १।१२४।१३)

८. एतावद् वेदुषस्त्वं भूयो वा दातुमर्हसि ।
(ऋ. ५।७९।१०)

९. नूनो गोदह्रीरवद्धेहि रत्नं उषो अश्वावत् पुरुभोजो अस्मे ।
(ऋ. ७।७५।८)

१०. उरुगायमधि धेहि श्रवो नः (ऋ. ६।६५।६)

११. उषो देवि प्रतिरन्ती न आयुः ।

इषं च नो दधती.... गोमदश्वावद्धवत्त्व राधः

(ऋ. ७।७५।५)

१२. तावदुषो राधो अस्मभ्यं राक्ष यावत् स्तोतृभ्यो
अरदो गृणाना । (ऋ. ७।७९।४)

१३. उषो अर्वाचा बृहता रथेन ज्योतिष्मता वामं अस्मभ्यं
वक्षि । (ऋ. ७।७८।१)

१. “हे उषे ! रश्मिसे तू जगमगाती रह और हमारे लिए बहुतसा अच्छा भाग्य पहुँचाती रह; २. अच्छा, अब तो हमें सभी सौभाग्य प्राप्त करा; ३. वह उषा हमें सुस्वरूप, सबके स्वीकरणीय एवं सुखदायक धनवैभवं देवे; ४. हे द्योतमान ! हमें विस्तीर्ण, शृकरहित (जिसमें भेडिया नहीं घुस सकता हो) घर तथा गोधनयुक्त अन्नसामग्रियाँ यथेष्ट दे दे; ५. हे उषे ! मैं अच्छी वीरतासे युक्त एवं यशसे पूर्ण धनसंपदाको प्राप्त कर लूँ; ६. हममें अच्छे अच्छे कार्योंको धरदेती चल और हे उषे ! तू आज हमारे लिए सुखपूर्वक छुलाने योग्य है अतः उदित हो तथा हममें और धनिकोंमें संपत्तियाँ रहें ऐसा प्रबंध कर; ७. हे द्योतमान उषाओ ! तुम्हारी रक्षाके फलस्वरूप हम तैकड़ों और हजारोंकी संख्यामें अन्न प्राप्त करें; ८. हे उषे ! इतना तो जरूरही लेकिन और भी फिर, तू हमें दे दे; ९. अब हमें गोधन, वाजिधन एवं वीरोंसे युक्त और बहुतोंको भोगसाधन मिलसके ऐसा रत्न दे डाल; १०. बहुतसे लोग जिनके बारेमें गायन करते हैं ऐसा यश हममें धर दे; ११. हे देवतारूपी उषे ! हमारा जीवन बढ़ाती हुई और गौओं, घोड़ों तथा रथादि वाहनोंसे युक्त धन एवं अन्न हमें देती हुई..; १२. हे उषे ! स्तोताओंको जितना धन तूने दिया उतना तू हमें दे दे; १३. हे उषे ! प्रकाशयुक्त और बड़े रथको, जो कि हमारी ओरही आ रहा है साथ लेकर तू सुन्दर धन हमें देती रह ।”

उषासे ऐसी प्रार्थना इसलिए की जाती है कि—

स्पर्हा वसूनि तमसा अपगूळहा भाविकृष्णन्ति उषसो

त्रिधातीः । (ऋ. १।१२३।६)

‘चमः की हुई उषाएं अंधेरेने गुमरूपसे ढकी हुई स्पृहणीय धनोंको खेलदेती हैं ।’ और भी एक बात है कि,

प्राचर्या जगद्गु नो राधो अख्यत् । (ऋ. १।११३।४)

‘जगतको अच्छी तरह दृष्टिगोचर कराके उषाने हमारे धनोंको विशेषरीतिसे खेलदिया, चमकादिया ।’ यह उषा हमारे लिए (‘आवहन्ती पोष्या वार्याणि’) ऋ. १।११३।१५ ‘पोषणीय तथा स्वीकरणीय वस्तुओंको पहुंचाती रहती है । और ‘अस्मभ्यं गोमतः वाजान् सूरिभ्यः अमृतं वसुध्वनं श्रवः चोदयित्री । (ऋ. ७।८१।६)’ अर्थात्, हमें गौओंसे युक्त अन्न और विद्वानोंको अमरपन, धनाढ्यता एवं यश देनेकी प्रेरणा करनेवाली है ।

केवल पर्याप्त मात्रामें प्रकाश, अन्न, बल, धन देनेसेही देवता का कार्य पूर्ण नहीं होता, किन्तु द्वेषा, विरोधियों तथा शत्रु-ओंको हटानाभी अत्यन्त आवश्यक है । देखिए, वैदिक कवि-योंने इस संबंधमें क्या कहा है—

... उषा स्निघः अप उच्छत् । (ऋ. ७।८१।६)

अप द्वेषो मघोनी दुहिता दिव उषा उच्छदप स्निघः ।

(ऋ. १।४८।८)

अर्थात् ‘द्युलोककन्या एवं ऐश्वर्यसंपन्न उषा द्वेषकरनेवालों को और शत्रुओंको हटानेके लिए उदित हो जाए ।’

अन्तिवामा दूरे अभिघ्नमुच्छोर्वी गव्यूतिमभयं कृधी नः ।

यावय द्वेष आ भरा वसूनि चोदय राधो गृणते मघोनि ।

(ऋ० ७।७७।४)

‘हे (मघोनि) ऐश्वर्यसंपन्न उषे ! तू (अन्ति-वामा) अपने समीप हमें देनेके लिए धन रखनेवाली है, अब (अमित्रं दूरे उच्छ) शत्रुको दूर हटादे और (नः) हमारे लिए (उर्वी गव्यूति) विशाल मार्ग तथा (अभयं कृधी) निर्भयतामय वातावरणका सृजन कर; पश्चात् (द्वेषः यावय) द्वेषको हटादे और (वसूनि आ भरा) हमें धन ला दे एवं (गृणते राधः चोदय) स्तोताके लिए धन प्रेरित कर ।’

त्रि उषा आवो... भाविकृष्णवाना महिमानमागात् ।

अप द्रुहस्तम आवरजुष्टे... ॥ (ऋ. ७।७५।१)

‘उषा प्रकट हुई है, वह महिमाको साफ तौरसे व्यक्त करती हुई आ चुकी है और द्वेष करनेवालेको एवं असेवनीय अंधेरेको दूर भगाया है ।’

उषावेलामें अनूठेपनके रहनेपरभी अनोखी समानरूपता पाई जाती है जिसका उल्लेख यूं है—

सदशीरष सदशीरिदु शो... । (ऋ. १।१२३।८)

शुभं यच्छुभ्रा उषसश्चरन्ति न विज्ञायन्ते सदशीरजुषाः ।

(ऋ. ४।५।६)

‘आज ये उषाएँ समानरूपवाली हैं तो कलभी उरी तरह रूपवालीं दिखाई देती हैं; ये शुभ्रवर्णवाली एवं जीर्ण न होनेवाली उषाएँ भलीभाँति हितके लिए संचार करती हैं और समान स्वरूपवाली होनेसे पृथक् पृथक् नहीं जानी जाती हैं ।’

विख्यात ऋषि उषाकी सराहना करते थे ऐसा निम्न मंत्रोंसे सूचित होता है—

१. प्रति त्वा स्तोमैरीकते वसिष्ठा उषशुधः सुभगे

तुष्टुवांसः ।

(ऋ. ७।७६।६)

२. उषा... उषा उच्छन्ती रिभ्यते वसिष्ठैः (ऋ. ७।७६।७)

३. प्रति स्तोमेभिर्हृषसं वसिष्ठा गीर्भिर्विप्रासः प्रथमा

अशुधन् ।

(ऋ. ७।८०।१)

४. ऋषिष्टुता... मघोऽन्युषा उच्छति वह्निभिर्गृणाना ।

(ऋ. ७।७५।५)

५. देवीमुषसं स्वरावहन्तीं प्रति विप्रासो मतिभिर्जरन्ते ।

(ऋ. ५।८०।१)

६. यावयद् द्वेषसं त्वा... प्रति स्तोमैरभुस्महि ।

(ऋ. ४।५२।४)

७. अभि ये त्वा विभावरी स्तोमैर्गृणन्ति वह्नयः ।

(ऋ. ५।७९।४)

८. उषो... स्तोमं जुषस्व गृणतो मघोनि । (ऋ. ३।६१।१)

९. व्युच्छन्ती हि रश्मिभिर्विश्वमाभासि रोचनम् ।

तां त्वामुपर्वसूयवो गीर्भिः कृषवा अहूयता । (ऋ. १।४९।४)

१. “हे सुन्दर ऐश्वर्यवाली उषे ! सुबह जाग उठनेवाले एवं स्तुति करनेवाले वसिष्ठ परिवारके लोग स्तुतिमय काव्योंसे तेरी प्रशंसा करते हैं; २. उदित होनेवाली उषाकी स्तुति वसिष्ठ वंशके ऋषियोंसे की जाती है; ३. प्रथम श्रेणीके तथा ज्ञानी वसिष्ठ कुलके ऋषि उषाके आगमनके मौकेपर स्तोत्रपाठ कर चुके; ४. यह ऐश्वर्यसंपन्न एवं ऋषियोंद्वारा प्रशंसित उषा उदित होती है जबकि हव्योंको ढोनेवाले यजमान उसकी स्तुति करने लगते हैं; ५. स्वर्गतुल्य तेज पहुँचानेवाली तथा दैदीप्यमान उषाकी स्तुति विद्वान लोग मननीय काव्योंसे करते हैं; ६. तू

उदित होनेपर द्वेषभाव हटाती है इसलिए हम स्तोत्रोंसे तुझको मानों जगाते हैं; ७. हे विशेष तेजवाली उषे ! हवनीय वस्तुओंको इष्टस्थानतक पहुँचानेवाले जो यजमान हैं वे स्तोत्रोंसे तेरी स्तुति करते हैं; ८. हे ऐश्वर्यसंपन्न उषे ! स्तोताके स्तुतिमय काव्यका स्वीकार कर, ९ हे उषे ! उदित होती हुई तू समूचे जगत्को सुन्दर करती है, ऐसे तुझको धन चाहनेवाले कण्व वंशके ऋषि भाषणोंसे बुलाते हैं ।’

उषा सुन्दर रथपर चढ़कर आती है और बलिष्ठ घोड़े उसे खींचते हैं ऐसा वर्णन पाया जाता है जैसे,

१. उषो देवि...चन्द्ररथा ..ईरयन्ती ।

२. आत्वा वहन्तु सुयमासो अश्वा हिरण्यवर्णा पृथुपाजसो ये ॥ (ऋ. ३।६।१२)

१. ‘हे द्योतमान उषे ! तू सुन्दर, अलहाद दायक रथवाली है और दूसरोंको प्रेरणा देनेवाली है इसलिए; २. जो विशाल बलयुक्त तथा भलीभाँति नियमित घोड़े हैं वे सुवर्ण कान्तिवाली तुझको इधर ले आयँ ।’

सुपेशसं सुखं रथं यमध्यस्था उपस्त्वम् । (ऋ. १।४९।२)

‘हे उषे ! जिस सुन्दररूपवाले एवं सुखदायक रथपर तू चढ़चुकी थी ।’

सा नो रथेन बृहता.... श्रुधि चित्रामघे हवम् ।

(ऋ. १।४८।१०)

‘हे अनोखे ऐश्वर्यसे युक्त उषे ! बड़े भारी रथपर चढ़कर आती हुई तू हमारी पुकार सुनले ।’

एषा अयुक्त परावतः सूर्यस्योदयनादधि ।

शतं रथेभिः सुभगोषा इयं वि यास्थाभि मानुषान् ॥

(ऋ. १।४८।७)

‘यह उषा सूर्योदयके पहलेही सुदूर स्थानमें रथोंको छोड़े जोत चुकी है, ताकि शीघ्र यात्रावा प्रारंभ हो; यह सुन्दर ऐश्वर्यवाली उषा मानवोंके समीप मानों सैकड़ों रथोंसे चली जाती है ।

... अघोदुषाः शोशुवता रथेन । (ऋ. १।१२३।७)

‘उषा जगमगते हुए रथके कारण चमकनेलगी ।

बृहद्रथा बृहती.... उषा उद्योतिर्यच्छति.... ।

(ऋ. ५।८०।१२)

‘महान उषा बड़े भारी रथसे आती हुई उजला देडालती है ।

... अरुणासो अश्वाश्चित्रा अदश्रमनुषसं वहन्तः ।

याति शुभ्रा विश्वपिशा रथेन.... (ऋ. ७।७५।६)

‘रक्तिम आभावले अनूठे घोड़े उषाको ले आते हुए दीखपड़े और वह तेजस्वी उषा सभीरूप धारण करनेवाले रथपरसे चली जाती है ।’

.... दिवो दुहिता.... आस्थान् रथं सधया युज्यमानं आ यं अश्वासः सुयुजो वहन्ति । (ऋ. ७।७८।४)

‘छुलोककन्या उषा, स्वकीय धारणशक्तियों तैयार होनेवाले रथपर, जिसे भली भाँति जोते हुए घोड़े लेचलते हैं, चढ़गई ।

अश्विनौ जैसे अथक् रूपसे लेक सेवा करनेवालोंमें मित्रता पूर्ण बर्ताव रखना और और गौओंकी माता बनना उषाकी विशेषता है, देखिए—

हिरण्यवर्णा सुदशीकसंदग् गवां माता नैश्यह्ममरोचि ।

(ऋ. ७।७७।२)

‘सुवर्णकी कान्तिवाली अतः जिसका दर्शन बड़ाही रमणीय है ऐसी यह गौओंकी माता उषा जो कि दिनोंकी नेत्री है जगमगाने लगी ।’

...अरुणी माता गवां...सखा अभूदश्विनोरुहाः ।

उत सखा अलि अश्विनोरुन माता गवामसि.... ।

(ऋ. ४।५२।२-३)

‘लालिमामय आभाववाली उषा गौओंकी माता एवं अश्विनोंकी मित्रा है ।’

लोंमेंके दिलमें उषाके प्रति कैसी आदरमय भावना रहा करती थी सो निम्न मंत्रोंसे स्पष्ट होगा—

उच्छन्ती या कृणोषि मंहना महि प्रख्यै देवि स्रद्धे ।

तस्यास्ते रत्नभाज ईमहे वयं स्याम मानुन सूनवः ॥

(ऋ. ७।८१।४)

‘हे (महि देवि) महनीय देवतारूपी उषे ! (या उच्छन्ती) जो तू उदित होती हुई (मंहना) अपने तेजसे (रवः) स्वर्गको (दृशे) दर्शनके योग्य तथा (प्रख्यै कृणोषि) विशेष स्पष्टताके अनुकूल बनाती है उस (तरयाः ते) तुझको जो कि (रत्नभाजः) रत्न साथ रखनेवाली है हम (ईमहे) चाहते हैं, या प्रार्थना करते हैं कि (वयं) हम तेरी निगाहमें (मानु सूनवः न) माताके लिए उमके पुत्र जैसे प्यारे होते हैं, वैसेही (स्याम) प्रिय हों ।’

उषो अद्रेभिरागहि दिवश्चिद्रोचनादधि । (ऋ. १।४९।११)

हे उषे ! तू (रोचनान् दिवः चित्) चमहीले छुलोकसे

भी (भद्रेभिः अधि आगहि) कल्याणप्रद किरणों से युक्त हो हमें प्राप्त होजा ।

तद्धो दिवो दुहितरो विभातीरुप सुव उपसः ...

वयं स्याम यशसो जनेषु ... (ऋ० ४।५१।११)

‘ हे चमकती हुई, शुलोककी कन्यासी उषाओ ! मैं तुमसे वही कहना चाहता हूँ कि हम जनता में यशस्वी हों । ’

या रवा दिवो दुहितर्वर्धयन्त्युषः सुजाते मतिभिर्वसिष्ठाः ।

सा अस्मासु धा रयिमृध्वं बृहन्तं यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ।

(ऋ० ७।७७।६)

‘ हे (सुजाते) सुन्दर ढंगसे उत्पन्न ! शुलोककन्ये उषे ! (यां त्वा) जिस तुझको वसिष्ठवंशोत्पन्न लोग (मतिभिः वर्धयन्ति) बुद्धि से निष्पादित कार्योंद्वारा वृद्धिगत करते हैं ऐसी (सा) वह तू (अस्मासु) हममें (बृहन्तं ऋध्वं रयिं धा) बड़े देदीप्यमान धन रख दे और तुम हमें सदैव कल्याणकारक बातोंसे सुरक्षित रखो । ’

उषा में इन्द्रशक्ति एवं अंगिरसोंकी शक्ति बढनेका उल्लेख मिलता है जैसे—

अभुदुषा इन्द्रतमा मघोनी ... दधात्यङ्गिरसमा सुकृते वसूनि । (७।७९।३)

...समानेन योजनेना परावतः । ... इधं बृहन्तीः सुकृते सुदानये ... ॥ (ऋ० १।९२।३)

‘ यह ऐश्वर्यसंपन्न उषा इन्द्रशक्तिकी खूब श्रद्धा कर चुकी है और अंगिरसोंकी सामर्थ्य यथेष्ट बढाकर सुकर्मकर्ताको धन दे डालती है; ये उषाएं सुदूर देशसे भी सदृश आयोजनाके अनुकूल अच्छे दानी एवं सुन्दर कार्यकर्ता को अन्न पहुंचाती हैं । ’

इस तरह उषा के सूक्तोंमें हमें एक सुरम्य प्राकृतिक दृश्य का और शाश्वतिक मानवी आकांक्षाका संमिश्र वर्णन देखने मिलता है । इन सूक्तोंमें इस बातका परिचय मिलता है कि मानवी मन प्राचीन कालमें मनोहर प्राकृतिक घटना से किस भाँति प्रभावित हुआ करता था और साथही यह भी ज्ञात होता है कि उत्साहवर्धक एवं नयनमनोरम प्राकृतिक दृश्य से प्रभावित होने और उस में रस लेनेकी दशामें भी अनिवार्य सामाजिक आवश्यकताओंकी पूर्तिका भी ख्याल रखना पड़ता है । वैदिक सुकवियोंके विशाल एवं व्यापक दृष्टिकोणका इससे बढकर और क्या अधिक परिचायक हो सकता है कि प्रतिदिन दृश्यमान एक नैसर्गिक दृश्य का सौन्दर्यग्राही वर्णन करते हुए भी शाश्वतिक मानवी आवश्यकताओं का बारंबार उल्लेख करना वे नहीं भूलते ।

लेखक

द्यानंद गणेश धारेश्वर

स्वाध्याय-मण्डल, औध, (जि० सातारा)

(२)

उषा सूक्तोंमें अतीन्द्रिय ज्ञान

योगी श्री अरविंदजी महाराज अपने वेद रहस्य में उषा के स्वरूपका वर्णन अत्यंत हृदयंगम करते हैं, उसे अब यहां देखिये—

“ गोमद् वीरवद् धेहि रत्नम् उषो अश्वावत् ” उस समय कर्मकाण्डपरक व्याख्याकार को इस प्रार्थना में केवल उस सुखमय धन-दौलत की ही याचना दीखती है, जो गौओं, वीर मनुष्यों (या पुत्रों) और घोडों से युक्त हो । दूसरी तरफ यदि ये शब्द प्रतीकरूप हों, तो इसका अभिप्राय होगा— “ हमारे अन्दर आनन्द की उस अवस्था को स्थिर करो, जो ज्योति से, विजय-शील शक्ति से और प्राण-बलसे भरपूर हो । ” इसलिये यह आवश्यक है कि एक बार सभी स्थलों के लिये वेद मंत्रों में

आनेवाले, ‘ गौ ’ शब्द का अर्थ क्या है, इस का निर्णय कर लिया जाय । यदि यह सिद्ध हो जाय, कि यह प्रतीकरूप है, तो निरन्तर इस के साथ आनेवाले अश्व (घोडा), वीर (मनुष्य या शरवीर), अपत्य या प्रजा (औलाद), हिरण्य (सोना), वाज (समृद्धि, या सायण के अनुसार अन्न) । इन दूसरे शब्दों का अर्थ भी अवश्य प्रतीकरूप और इसका सजातीय ही होगा ।

‘ गौ ’ का अलंकार वेद में निरन्तर उषा और सूर्यके साथ सम्बद्ध मिलता है । इसे हम उस कथानक में भी पाते हैं, जिस में इन्द्र और बृहस्पति ने सरमा कुतिया (देवशुनी) और अङ्गिरस ऋषियों की मदद से पणियों की गुफा में से खोई हुई

गौओं को फिर से प्राप्त किया है। उषा का विचार और अङ्गिरसों का कथानक ये मानो वैदिक सम्प्रदायके हृदयस्थानीय हैं और इन्हें करीबकरीब वेद के अर्थों के रहस्य की कुञ्जी समझा जा सकता है। इसलिये ये ही दोनों हैं, जिन की हमें अवश्य परीक्षा कर लेनी चाहिये, जिस से आगे अपने अनुसंधान के लिये हमें एक दृढ़ आधार मिल सके।

अब उषासंबन्धी वेद के सूक्तों को बिल्कुल ऊपर ऊपर से जांचने पर भी इतना बिल्कुल स्पष्ट हो जाता है कि, उषा की गौएँ या सूर्यकी गौएँ 'उषोति' वा प्रतीक हैं, इसके सिवाय और कुछ नहीं हो सकती। सायण खुद इन मन्त्रों का भाष्य करते हुए विवश होकर कहीं इस शब्द का अर्थ 'गाय' करता है और कहीं 'किरणें,' हमेशा की अपनी आदत के अनुसार परस्पर संगति बैठाने की भी कुछ पवाई नहीं रखता, कहीं वह यह भी कह जाता है कि, 'गौ' का अर्थ सत्यवाची 'ऋत' शब्द की तरह पानी होता है। असल में देखा जाय तो यह स्पष्ट है कि इस शब्दसे दो अर्थ लिये जाने अभिप्रेत हैं, (१) 'प्रकाश' इस का असली अर्थ है और (२) 'गाय' उस का स्थूल रूपक-रूप और शाब्दिक अलंकारमय अर्थ है।

ऐसे स्थलों में गौओं का अर्थ 'किरणें' इस में कोई मतभेद नहीं हो सकता, जैसे कि इंद्र के विषय में मधुच्छन्दस् ऋषिके सूक्त (१.७) का तीसरा मन्त्र है— 'इन्द्रे दीर्घ दर्शन के लिये सूर्य को झुलोक में चढाया उसने उसे उसकी किरणों (गौओं) के द्वारा सारे पहाड़ पर पहुंचा दिया— बि गोभिः अद्रिम् पेरयत्॥' परन्तु इस के साथ ही सूर्य की किरणें 'सूर्य' देवता की गौएँ हैं, हीलियस (Helios) की वे गौएँ हैं, जिन्हें ओडिसी (Odyssey) में ओडिसस (Odysseus) के साथियोंने वध किया है, जिन्हें हर्मिज (Hermes) के लिये कहे गये होमर के गीतों में हर्मिजने अपने भाई अपोलो (Apollo) के पास से चुराया है। ये वे गौएँ हैं, जिन्हें 'बल' नामक शत्रूने या पणियोंने छिपा लिया था। जब

मधुच्छन्दस् इंद्रको कहता है— 'तूने बलकी उता गुफाको खोल दिया, जिस में गौएँ बंद पड़ी थीं'— तब उस का यही अभिप्राय होता कि, बल गौओं को कैद करनेवाला है, प्रकाश को रोकनेवाला है और वह रोका हुआ प्रकाश ही है, जिसे इंद्र यज्ञ करनेवालों के लिये फिर से ला देता है। खोई हुई या चुराई हुई गौओं को फिर से पालने का वर्णन वेद के मन्त्रों में लगातार आया है और इस का अभिप्राय पर्याप्त स्पष्ट हो जायगा, जब कि हम पणियों और अङ्गिरसोंके कथानककी परीक्षा करना शुरू करेंगे।

एक बार यदि यह अभिप्राय, यह अर्थ सिद्ध हो जाता है, स्थापित हो जाना है, तो 'गौओं' के लिये की गई वैदिक प्रार्थनाओं की जो भौतिक व्याख्या की जाती है, वह एकदम हिल जाता है। क्योंकि खोई हुई गौएँ, जिन्हें फिर से पा लेने के लिये ऋषि इंद्र का आह्वान करते हैं, वे यदि द्रविड लोगों-द्वारा चुराई गई भौतिक गौएँ नहीं हैं, किंतु सूर्य की ज्योति की चमकती हुई गौएँ हैं, तो हमारा यह विचार बनाना न्याय-संगत ठहरता है कि, जहाँ केवल गौओं के लिये ही प्रार्थना है और साथ में कोई विरोधी निर्देश नहीं है, वहाँ भी यह अलंकार लगता है, वहाँ भी गौ भौतिक गाय नहीं है। उदाहरण के लिये ऋ० १,४,१,२ × में इंद्र के विषय में कहा गया है कि, वह पूर्ण रूपों को बनानेवाला है और वह गौओं के दोहने में ऐसा चतुर है कि, उस का सोम-रस से चढ़नेवाला मद सचमुच गौओंको देनेवाला है, 'गोदा इव रेवतो मदः'।

निरर्थकता और असंगतताकी हद हो जायगी, यदि इस कथनका यह अर्थ समझा जाय कि, इंद्र कोई बड़ा समृद्धि-शाली देवता है और जब वह पिये हुए होता है, उस समय गौओं के दान करने में बड़ा उदार हो जाता है। यह स्पष्ट है कि जैसे पहली ऋचा में गौओं का दोहना एक अलंकार है, वैसे ही दूसरी में गौओं का देना भी अलंकार ही है। और यदि हम वेद के दूसरे सन्दर्भों से यह जान लें कि 'गौ'

❖ इस का अनुवाद हम यह भी कर सकते हैं कि, " उसने अपने वज्र (अद्रि) को उस से निकलती हुई चमकों के साथ चारों ओर भेजा " पर यह अर्थ उतना अच्छा और संगत नहीं लगता। पर यदि हम इसे ही मानें, तो भी 'गोभिः' का अर्थ 'किरणें' ही होता है, गाय पशु नहीं।

× सुरुपकृतुमूतये सुदुधामिव गोदुहे । जुहूमसि यविश्वि ।

उप नः सवना गहि सोमस्य सोमपाः पिब । गोदा इद्रेवतो मदः ॥ (ऋ० १।४।१-२)

प्रकाश का प्रतीक है तो यहां भी हमें अवश्य यही समझना चाहिये कि, इन्द्र जब सोम-जनित आनन्द में भरा होता है, तब वह निश्चित ही हमें ज्योतिरूप गौएं देता है।

उषा के सूक्तों में भी, गौएं ज्योति का प्रतीक हैं, यह भाव वैसा ही स्पष्ट है। उषा को सब जगह 'गोमती' कहा गया है, जिस का स्पष्ट ही अवश्य यही अभिप्राय होना चाहिये कि, वह ज्योतिर्मय या किरणोंवाली है, क्योंकि यह तो बिल्कुल मूर्खतापूर्ण होगा कि, उषा के साथ एक नियत विशेषण के तौरपर 'गौओं से पूर्ण' यह विशेषण उस के शाब्दिक अर्थ में ही प्रयुक्त किया जाय। पर गौओं का प्रतीक वहां पर विशेषण में है, क्योंकि उषा केवल 'गोमती' ही नहीं है, वह 'गोमती अश्वत्थी' है, वह हमेशा अपने साथ अपनी गौएं और अपने घोड़े रखती है।

'वह सारे संसारके लिये ज्योति को रचकर देती है और अन्धकार को, जो गौओं का बाड़ा है, खोल देती है, १.९२.४+' यहां हम देखते हैं कि, बिना किसी भूलचूक की सम्भावना के गौएं ज्योति का प्रतीक ही हैं। हम इस पर भी ध्यान दे सकते हैं कि, इस सूक्त (१.९२) में अधिनों को कहा गया है कि, वे अपने रथ को उस पथपर हांक कर नीचे ले जायें, जो ज्योतिर्मय और सुनहरा है-× 'गोमद् हिरण्यवद्' इस के अतिरिक्त उषा के संबंध में कहा गया है कि, उस के रथ को अरुण गौएं खींचती हैं और कहीं यह भी कहा है कि, अरुण घोड़े खींचते हैं।

'वह अरुण गौओंके समूह को अपने रथ में जोतती है। युङ्क्ते गवामरुणानामनीकम्। ऋ. १.१२४.११' यहां 'अरुण किरणों के समूह को' यह दूसरा अर्थ भी स्थूल अलंकार के पीछे स्पष्ट ही रखा हुआ है। उषा का वर्णन इस रूप में

हुआ है कि, वह गौओं या किरणों की माता है। 'गवां जनित्री अकृत प्रकेतुम् ऋ. १.१२४.५' गौओं (किरणों) की माता ने दर्शन (Vision) को रचा है।' और दूमेर स्थानपर उस के कार्य के विषय में कहा है, 'अथ दर्शनं या बोध उदित हो गया है। जहां पहले कुछ नहीं (असत्) था।' * इस से पुनः यह स्पष्ट है कि, 'गौएं' प्रकाश की ही चमकती हुई किरणें हैं। उस की इस रूप में भी स्तुति की गई है कि, वह चमकती हुई गौओं का नेतृत्व करनेवाली है (नेत्री गवाम् ७.७६.६) और एक दूसरी ऋचा इस पर पूरा ही प्रकाश डाल देती है, जिस में ये दोनों ही विचार इकट्ठे आ गये हैं, 'गौओं की माता दिनों की नेत्री' (गवां माता नेत्री अङ्गाम्। ऋ. ७.७७.२) अन्तमें मानो इस अलंकार पर से आवरण को कतरई हटा देने के लिये ही, वेद स्वयं हमें कहता है कि, गौएं प्रकाश की किरणों के लिये एक अलंकार है, "उसकी सुखमय किरणें दिखाई दीं, जैसे छोड़ी हुई गौएं"-प्रति भद्रा अदक्षत गवां सर्गा न रश्मयः। ऋ. ४.५२.५ हमारे सामने इससे भी अधिक निर्णयात्मक एक दूसरी ऋचा (ऋ. ७.७९.२) है- 'तेरी गौएं (किरणें) अन्धकार को हटा देती हैं और ज्योति को फैलाती हैं: सं ते गावस्तम आधर्तयन्ति ज्योतिर्यच्छन्ति॥

लेकिन उषा इन प्रकाशमय गौओंद्वारा केवल खींची ही नहीं जाती, वह इन गौओं को यज्ञ करनेवालों के लिये उपहाररूप में देती है। वह इन्द्र की ही मांति, जब सोम के आनन्द में होती है, तो ज्योति को देती है वसिष्ठके एक सूक्त (७.७५) में उसका वर्णन इस रूपमें है कि, वह देवों के कार्य में हिस्सा लेती है और उससे वे दृढ स्थान जहां गौएं बन्द पड़ी हैं, टूट कर खुल जाते हैं और गौएं मनुष्यों को प्राप्त हो जाती हैं। "वह * सच्चे देवोंके साथ सच्ची है, महान् देवों के साथ

+ ज्योतिर्विश्वस्मै भुवनाय कृण्वती गावो न व्रजं व्युषा आवर्तमः ॥ (ऋ० १.९२.४)

× अश्विना वर्तिरस्मदा गोमद् दद्या हिरण्यवत्। अर्वाप्रथं समनसा नि यच्छतम्। (ऋ० १.१२.१६)

❖ वि नूनमुच्छाद् असति प्रकेतुः। (ऋ० १.१२.४।१६)

● निस्संदेह इसमें मतभेद हो सकता कि वेद में गौ का अर्थ प्रकाश है, उदाहरण के लिये जब यह कहा जाता है कि, 'गवा,' 'गौ' से, प्रकाश से, वृत्र को मारा गया, तो यहां गाय पशुका तो कोई प्रश्न ही नहीं है, प्रश्न यह है कि, यहां द्वयर्थक प्रयोग है और गौ यहां प्रतीकरूप है।

* सत्या सत्येभिर्महती महद्भिर्देवी देवेभिर्यजता यजत्रैः।

रुजद् दृढानि दददुस्रियाणां प्रति गाव उषसं वावशन्त ॥ (ऋ० ७।७५।७)

नू नो गोमद् वीरवद् धेहि रत्नमुषो अश्वत्थ पुरुभोजो अस्मे ॥ (ऋ० ७।७५।८)

महान् है, वह दृढ स्थानों को तोड़ कर खोलती है और प्रकाश मय गौओंको छोड़ देती हैं, गौएं उषाके प्रति रँभाती हैं” रुजद् इल्लहानि ददद् उल्लियाणाम्, प्रति गाव उषसं वावशन्त । (ऋ. ७.७५.७) और ठीक अगली ही ऋचा में उससे प्रार्थना की गई है कि, वह यज्ञकर्ता के लिये आनन्द की उस अवस्था को स्थिर करे या धारण करावे, जो प्रकाश से (गौओं से), अश्वों से (प्राण-शक्ति से) और बहुत से सुख-भोगों से परिपूर्ण हो— “ गोमद् रत्नम् अश्वावत् पुरुभोजः । ” इसलिये जिन गौओं को उषा देती है, वे गौएं ज्योतिकी ही चमकती हुई सेनायें हैं, जिन्हें देवता और अङ्गिरस ऋषि वल और पणियोंके दृढ स्थानों से उद्धार करके लाये हैं । साथ ही गौओं (और अश्वों) की सम्पत्ति जिस के लिये ऋषि लगातार प्रार्थना करते हैं उसी ज्योति की सम्पत्तिके अतिरिक्त और कुछ नहीं हो सकती; क्योंकि यह कल्पना असंभवसी है कि, जिन गौओं को देने के लिये इस सूक्त की सातवीं ऋचा में उषा को कहा गया है, वे उन गौओं से भिन्न हों जो ८ वीं में मांगी गई हैं, कि पहले मन्त्र में ‘ गौ ’ शब्द का अर्थ है ‘ प्रकाश ’ और अगले में ‘ गाय, ’ और यह कि ऋषि मुखसे निकालते ही उसी क्षण यह भूल गया कि किस अर्थ में वह शब्द का प्रयोग कर रहा था ।

वहीं कहीं ऐसा है कि प्रार्थना ज्योतिर्मय आनन्द या ज्योतिर्मय समृद्धिके लिये नहीं है, बल्कि प्रकाशमय प्रेरणा या बल के लिये है, ‘ हे ऋ की पुत्री उषः ! तू हमारे अन्दर सूर्य की रश्मिमयों के साथ प्रकाशमय प्रेरणाको ला ’- ‘ गोमती-रिषि आवहन्त दुहितृर्विः, साकं सूर्यस्य रश्मिभिः । ५.७९.८ सायणने ‘ गोमतीः इषः ’ का अर्थ किया है ‘ चमकता हुआ अन्न ’ × । परन्तु यह स्पष्ट ही एक निरर्थक सी बात लगती है कि उषा से कहा जाय कि, वह सूर्य किरणों के साथ किरणों से युक्त अन्न को लाये । यदि ‘ इष् ’ का अर्थ अन्न है, तो हमें इस प्रयोग का अभिप्राय लेना होगा ।

इन नमूने के उदाहरणों से हम समझ सकते हैं कि, प्रकाश की गौओं का यह अलंकार कैसा व्यापक है और कैसे अनिवार्य रूप से यह वेदके लिये एक अन्ध्यात्मपरक अर्थ की ओर निर्देश कर रहा है । एक सन्देह भी बीच में आ उपस्थित होता है । हमें माना कि, यह एक अनिवार्य परिणाम है कि ‘ गौ ’ प्रकाश

के लिये प्रयुक्त हुआ है, पर इससे हम क्यों न समझें कि, इसका सीधासाधा मतलब दिन के प्रकाश से है, जैसा कि, वेद की भाषा से निकलता प्रतीत होता है ? वहाँ किसी प्रतीक की कल्पना क्यों करें, जहाँ केवल एक अलंकार ही है ? हम उस दूसरे अलंकार की कठिनाई को निमंत्रण क्यों दें, जिस में ‘ गौ ’ का अर्थ तो हो ‘ उषा का प्रकाश ’ और उषाके प्रकाश को ‘ आन्तरिक ज्योति ’ का प्रतीक समझा जाय ? यह क्यों न मान लें कि ऋषि आत्मिक ज्योति के लिये नहीं, बल्कि दिन के प्रकाश के लिये प्रार्थना कर रहे थे ?

ऐसा माननेपर अनेक प्रकार के आक्षेप आते हैं और उन में कुछ तो बहुत प्रबल हैं । यदि हम यह मानें कि, वैदिक सूक्तों की रचना भारत में हुई थी और यह उषा भारत की उषा है और यह रात्रि वही यहाँ की दस या बारह घण्टे की छोटीसी रात है, तो हमें यह स्वीकार कर के चलना होगा कि, वैदिक ऋषि जंगली थे, अन्धकार के भय से बड़े भयभीत रहते थे और समझते थे कि, इस में भूत-प्रेत रहते हैं, वे दिन-रात की परम्परा के प्राकृतिक नियम से जिसका अब तक बहुत से सूक्तों में बड़ा सुन्दर चित्र खिंचा मिलता है- भी अनभिज्ञ थे और उनका ऐसा विश्वास था कि, आकाश में जो सूर्य निकलता था और उषा अपनी बहिन रात्रि के आलिङ्गन से छूटकर प्रकट होती थी, वह सब केवल उन की प्रार्थनाओं के कारण से ही होता था । पर फिर भी वे देवोंके कार्यमें अटल नियमों का वर्णन करते हैं और कहते हैं कि, उषा हमेशा शाश्वत सत्य व दिव्य नियम के मार्ग का अनुसरण करती है ! हमें यह कल्पना करनी होगी कि, ऋषि जब उल्लास में भरकर पुकार उठता है ‘ हम अन्धकार को पार करके दूसरे किनारे पहुँच गये हैं ! ’ तो यह केवल दैनिक सूर्योदय पर होनेवाला सामान्य जागना ही है ।

जिस की ऋषि ऐसी उत्कण्ठा से स्तुति कर रहा है । हमें यह कल्पना करनी होगी कि, वैदिक लोग उषा निकलने पर यज्ञ के लिये बैठ जाते थे और प्रकाश के लिये प्रार्थना करते थे, जबकि वह पहले से ही निकल चुका होता था । और यदि हम इन सब असंभव कल्पनाओं को मान भी लें, तो आगे हमें यह एक स्पष्ट कथन मिलता है

कि, नौ या दस महीने बैठ चुकने के उपरान्त ही यह हो सका कि अग्निरस ऋषियों को खोया हुआ प्रकाश और खोया हुआ सूर्य फिर से मिल पाया। और जो पितरों के द्वारा 'ज्योति' के खोजे जाने का कथन लगातार मिलता है, उस का हम क्या अर्थ लगायेंगे।

“हमारे पितरों ने छिपी हुई ज्योति को हूँदकर पा लिया, उनके विचारों में जो सत्य था, उस के द्वारा उन्होंने उषा को जन्म दिया— गूळहं ज्योतिः पितरो अन्वविन्दन्, सत्य-मन्त्रा अजनयन् उषासम्। (ऋ. ७।७।६।४) यदि हम किसी भी साहित्य के किसी कविता संग्रह में इस प्रकार का कोई पथ पावें, तो तुरन्त हम उसे एक मनोवैज्ञानिक या आध्यात्मिक रूप दे देंगे, तो फिर वेद के साथ हम दूसरा ही बर्ताव करें, इस में कोई युक्तियुक्त कारण नहीं दीखता।

फिर भी यदि हमें वेद के सूक्तों की प्रकृतिवादी व्याख्या ही करनी है और कोई नहीं, तो भी यह बिलकुल साफ है कि, वैदिक उषा और रात्रि कम से कम भारत की रात्रि और उषा तो नहीं हो सकती। यह केवल उत्तरीय ध्रुव के प्रदेशों में ही हो सकता है कि इन प्रकृति की घटनाओं के संबंध में ऋषियों की जो मनोवृत्ति है और अंगिरसों के विषय में जो बातें कही गई हैं, वे कुछ समझ में आनेलायक बन सकें। प्राचीन वैदिक आर्य उत्तरीय ध्रुव से आये, इस कल्पना (वाद) को क्षणभर के लिये मान लेनेपर भी यद्यपि यह बहुत अधिक सम्भव हो सकता है कि, उत्तरीय ध्रुव की स्मृतियाँ वेद के बाह्य अर्थ में आ गई हों, फिर भी इस कल्पना से प्रकृति से खींचे हुए इन प्राचीन अलंकारों के पीछे जो एक आन्तरिक अर्थ है, उस का निराकरण नहीं हो सकता, नहीं इस के मान लेने से यह सिद्ध हो जाता है कि, उषासंबंधी ऋचाओं की इस की अपेक्षा और अधिक सुसंबद्ध और सीधी किसी दूसरी व्याख्या की आवश्यकता नहीं है।

उदाहरण के लिये हमारे सामने अश्विनो को कहा गया प्रस्कण्व काण्वका सूक्त [१४६] है, जिस में उस ज्योतिर्मय अन्तःप्रेरणा का संकेत है, जो हमें अन्धकार में से पार कर के परले किनारे पर पहुंचा देती है। उस सूक्त का उषा और रात्रिके वैदिक विचार के साथ घनिष्ठ संबंध है। इस में वेद में नियतरूप से आनेवाले बहुत से अलंकारों का संकेत मिलता है; जैसे ऋत के मार्ग का, नदियों को पार करने का, सूर्य के उदय होने का, उषा और अश्विनो में परस्पर संबंध का, सोम-रस के रहस्यमय प्रभाव का और उसके सामुद्रिक रस का।

‘देखो, आकाशमें उषा खिल रही है, जिस से अधिक उच्च और कोई वस्तु नहीं है, जो आनन्द से भरी हुई है। हे अश्विनो ! तुम्हारी मैं महान् स्तुति करता हूँ। + (१) तुम जिन की सिंधु माता है, जो कार्य को पूर्ण करनेवाले हो, जो मन में से होते हुए उस पार पहुंचकर ऐश्वर्यों (रयि) को पा लेते हो, जो दिव्य हो और उस ऐश्वर्य (वसु) को विचार के द्वारा पाते हो। (२) हे समुद्र-यात्रा के देवो जो शब्द को मनोमय करनेवाले हो ! यह तुम्हारे विचारों को भंग करनेवाला है- तुम प्रचण्ड रूपसे सोम का पान करो (५) हे अश्विनो ! हमें वह ज्योति-धमती अन्तःप्रेरणा दो, जो हमें तमस् से निकाल कर पार पहुंचा दे। (६) हमारे लिये तुम अपनी नावपर बैठकर चलो, जिस से हम मन के विचारों से परे परले पार पहुंच सकें। हे अश्विनो ! तुम अपने रथ को जोतो (७) अपने उस रथ को जो शुलोक में इसकी नदियों को पार करने के लिये एक बड़े पतवारवाले जहाज का काम देता है। विचार के द्वारा आनन्द की शक्तियाँ जोती गई हैं। (८) जलों के स्थान पर शुलोक में आनन्दरूपी सोम-शक्तियाँ ही वह ऐश्वर्य [वसु] है। पर अपने उस आवरण को तुम कहाँ रख दोगे, जो तुमने अपने आपको छिपने के लिये बनाया है ? [९] नहीं,

+ एषो उषा अपूर्व्या व्युच्छति प्रिया दिवः । स्तुषे वामश्विना बृहत् । [ऋ० १।४६।१]

या दक्ष्वा सिन्धुमातरा मनोतरा रयीणाम् । धिया देवा वसुविदा ॥ २ ॥

आदारो वां मतीनां नासत्या मतवचसा । पातं सोमस्य धृष्णुया ॥ ५ ॥

या नः पीपरदश्विना ज्योतिष्मती तमस्तिरः । तामस्मे रासाथामिषम् ॥ ६ ॥

आ नो नावा मतीनां यातं पाराय गन्तवे । युजाथामश्विना रथम् ॥ ७ ॥

अरित्रं वां दिवस्पृथु तीर्थे सिन्धूनां रथः । धिया युयुज्ज इन्दवः ॥ ८ ॥

दिवस्कण्वास इन्दवो वसु सिन्धूनां पदे । स्वं वत्रिं कुह भित्सथः ॥ ९ ॥

सोम का आनन्द लेने के लिये प्रकाश उत्पन्न हो गया है,— सूर्य ने जो कि, अन्धकारमय था, अपनी जिह्वा को हिरण्य की ओर लपलपाया है [१०] ऋत का मार्ग प्रकट हो गया है, जिस से हम उस पार पहुंचेंगे; यु के बीच का सारा खुला मार्ग दिखलाई पड़ गया है । [११] खोजनेवाला अपने जीवन में अधिनों के उयों उयों सोम के आनन्दमें तृप्ति-लाभ करते हैं, त्यों त्यों उनके निरन्तर एक के बाद दूसरे आविर्भाव की ओर प्रगति किये जा रहा है ! [१२] उस सूर्य में जिस में ज्योति ही ज्योति है, तुम निवास करते हुए [या चमकते हुए] सोम-पानके द्वारा, वाणीके द्वारा हमारी मानवीयता में सुख का सर्जन करनेवाले के तौरपर आओ । [१३] तुम्हारी कीर्ति और विजयके अनुरूप उषा हमारे पास आती है, जब तुम हमारे सब लोकों में व्याप्त हो जाते हो और रात्रि में से सत्यों को विजय कर लाते हो । [१४] दोनों मिलकर हे अधिनों! सोम-पान करो, दोनों मिलकर हमारे अन्दर शक्ति को प्राप्त कराओ उन विस्तारों के द्वारा जिन की पूर्णता सदा अविच्छिन्न रहती है । [१५] ×

यह इस सूक्त का सीधा और स्वाभाविक अर्थ है और हमें इस का भाव समझने में कठिनाई नहीं होगी, यदि हम वेद के मूलभूत विचारों और अलङ्कारों को स्मरण रखेंगे । ' रात्रि ' स्पष्ट ही आन्तरिक अन्धकार के लिये आलंकारिक रूप से कहा गया है; उषा के आगमन के द्वारा, रात्रि में से ' सत्यों ' को जीतकर हस्तगत किया जाता है । यही उस सूर्यका, सत्यके सूर्य का, उदय होना है, जो अन्धकार के बीच में खो गया था—वही खोये हुए सूर्य का हमारा परिचित अलंकार जिस में उसे देवों और ऋषियोंने फिर से पाया है । और अब यह अपनी अग्नि की जिह्वा को स्वर्णिल ज्योति के प्रति— ' हिरण्य ' के प्रति लपलपाता है ।

सुवर्ण उच्चतर ज्योति का स्थूल प्रतीक है, यह सत्य का सोना है और यही वह निधि है, न कि कोई सोनेका सिक्का,

जिस के लिये वैदिक ऋषि देवों में प्रार्थना करते हैं । आन्तरिक अन्धकार में से निकाल कर ज्योति में लाने के इस महान् परिवर्तन को अग्नि करते हैं, जो मन की और प्राण-शक्तियों की प्रसन्नतायुक्त ऊर्ध्वगति के देवता हैं, और इसे वे इस प्रकार करते हैं कि, आनन्द का अमृतरस मन और शरीर में उण्डला जाता है और वहां वे इस का पान करते हैं । वे व्यंजक शब्द को मनोमय रूप देते हैं, वे हमें विशुद्ध मन के उस स्वर्ग में ले जाते हैं, जो इस अन्धकार से परे है और वहां वे विचार के द्वारा आनन्द की शक्तियों को काम में लाते हैं ।

पर वे यु के जलों का भी पार कर के उससे भी ऊपर चले जाते हैं, क्योंकि सोम की शक्ति उन्हें सब मानसिक रचनाओं को तोड़ डालने में सहायता देती है और वे इस अवरण का भी उतार फेंकते हैं । वे मन से परे चले जाते हैं और सबमें अन्तिम चीज जो वे प्राप्त करते हैं वह ' नदियों का पार करना ' कही गई है, जो कि विशुद्ध मनके शुलोकमें से गुजरने का यात्रा है, वह यात्रा है, जिस से सत्य के मार्ग पर चलकर किनारे पर पहुंचा जाता है और जब तक अन्त में हम उच्चतम पद, परमा परावृत्तपर नहीं पहुंच जाते, तब तक हम इस महान् मानवीय यात्रा से विभ्राम नहीं लेते ।

हम देखेंगे कि, न केवल इस सूक्त में बल्कि सय जगह उषा सत्य को लानेवाली के रूप में आती है, रवयं यह सत्य की ज्योति से जगमगानेवाला है । वह दिव्य उषा है और यह भौतिक उषा (प्रभात होना) उस की केवल छायामात्र है और प्राकृतिक जगत् में उस का प्रतीक है ।

उषा सत्य के पथ की दृढ़ अनुगामिनी है और चूंकि इस बात का उसे ज्ञान या बोध रहता है, इसलिये वह असीमता को, बृहत् को, जिसकी कि वह ज्योति है, सीमित नहीं करती । यही इस मन्त्र का असली अभिप्राय है, यह बात ५ गण्डक की एक ऋचा (ऋ. ५।८०।१) से निर्विवाद स्पष्ट रूपसे सिद्ध

| | |
|--|--------|
| × अभूदु भा उ अंशवे हिरण्यं प्रति सूर्यः । व्यस्यजिह्वासितः | ॥ १० ॥ |
| अभूदु पारमेतवे पन्था ऋतस्य साधुया । अदर्शि वि क्षुतिर्दिवः | ॥ ११ ॥ |
| तत्तदिदंश्चिनोरवो जरिता प्रति भूषति । मदे सोमस्य पिप्रतोः | ॥ १२ ॥ |
| वावसाना विवस्वति सोमस्य पतिया गिरा । मनुष्वच्छंभू आ गतम् | ॥ १३ ॥ |
| युबोरुषा अनु श्रियं परिउमनोरुपाचरत् । ऋता वनथो अक्तुभिः | ॥ १४ ॥ |
| उभा पिबतमश्निोभा नः शर्म यच्छतम् । अविद्रियाभिरूतिभिः | ॥ १५ ॥ |

हो जाती है और इस में भूलचूक की कोई संभावना नहीं रह जाती। इस में उषा के लिये कहा है- **युतव्यामानं बृहतीम् ऋतेन ऋतावरीं, स्वरावहन्तीम्।** “वह प्रकाशमय गति-वाली है, ऋतसे महान् है, ऋत में सर्वोच्च (या ऋत से युक्त) है, अपने साथ स्वःको लाती है।” यहाँ हम बृहत् का विचार, सत्य का विचार, स्वर्लोक के सूर प्रकाश का विचार पाते हैं, और निश्चय ही वे सब विचार इस प्रकार घनिष्ठता और दृढता से एकमात्र भौतिक उषा के साथ सम्बद्ध नहीं रह सकते। इसके साथ हम ७।७।१ के वर्णन की भी तुलना कर सकते हैं- **युषा आवो दिविजा ऋतेन, आविष्कृण्वाना महिमानमागात्।** “यौमें प्रकट हुई उषा सत्यके द्वारा वस्तुओं को खोल देती है, वह महिमा को व्यक्त करती हुई आती है।” यहाँ पुनः हम देखते हैं कि, उषा सत्य की शक्ति के द्वारा सब वस्तुओं को प्रकट करती है और इसका परिणाम यह बताया गया है कि, एक प्रकार की महत्ता का आविर्भाव हो जाता है।

अन्तमें इसी विचार को हम आगे भी वर्णित किया गया पाते हैं, बल्कि यहाँ सत्यके लिए ‘ऋत’ के बजाय सीधा ‘सत्य’ शब्द ही है, जोकि ‘ऋतम्’ की तरह दूसरा अर्थ किये जा सकने की सम्भावनामें डालनेवाला भी नहीं है- **सत्या सत्येभिर्महती महज्जिर्देवी देवेभिः। (ऋ० ७।७।७)** ‘उषा अपनी सत्ता में सच्चे देवों के साथ सच्ची है, महान् देवों के साथ महान् है।’ वामदेव ने अपने एक सूक्त ४.५१ में उषा के इस ‘सत्य’ पर बहुत बल दिया है, क्योंकि वहाँ वह उषाओं के बारे में केवल इतना ही नहीं कहता कि, ‘तुम सत्य के द्वारा जोते हुए अश्वों के साथ जल्दी से लोकों को चारों ओर से घेर लेती हो, ×’ **ऋतयुग्मिभः अश्वैः (तुलना करो ऋ. २।६।१२ +)** परन्तु वह उनके लिए कहता है- **भद्रा ऋतजातसत्याः (ऋ. ४।५।१७)** ‘वे सुखमय हैं और सत्यसे उत्पन्न हुई सच्ची हैं।’ और एक दूसरी ऋचा में वह उनका वर्णन इस रूप में करता है कि, वे देवी हैं जो कि ऋतके स्थानमें प्रबुद्ध होती हैं। *’

‘भद्रा’ और ‘ऋत’ का यह निकट सम्बन्ध आम्हिकों कहे गये मधुच्छन्दस् के सूक्त में इसी प्रकार का जो विचारों का परस्पर सम्बन्ध है, उस का हमें स्मरण करा देता है। वेद की अपनी आध्यात्मिक व्याख्या में हम प्रत्येक मोड़ पर इस प्राचीन विचार को पाते हैं कि ‘सत्य’ आनन्द को प्राप्त करने का मार्ग है। तो उषाको, सत्य की ज्योति से जगमगाती उषा को, भी अवश्य सुख और कल्याण को लानेवाला होना चाहिए। उषा आनन्द को लानेवाली है, यह विचार वेद में हम लगातर पाते हैं और वशिष्ठने (ऋ. ७।८।१३) में इसे बिल्कुल स्पष्ट रूप में कह दिया है- **या वहसि पुरुषार्हं रत्नं न वाञ्छवे मया। “तू जो देनेवाले को कल्याण-सुख प्राप्त कराती है, जो कि अनेक रूप है और स्पृहणीय आनन्द रूप है”**

वेद का एक सामान्य शब्द ‘सुनृता’ है जिसका अर्थ सायण ने ‘मधुर और सत्य वाणी’ किया है, परन्तु प्रतीत होता है कि, इसका प्रायः और भी अधिक व्यापक अभिप्राय ‘सुखमय सत्य’ है। उषा का कहीं कहीं यह कहा गया है कि, वह ‘ऋतावरी’ है, सत्य से परिपूर्ण है और कहीं उसे ‘सुनृतावती’ कहा गया है। वह आती है सच्चे और सुखमय शब्दों को उच्चरित करती हुई **“सुनृता ईरयन्ती”**। जैसे उस का वह वर्णन किया गया है कि, वह जगमगाती हुई गौओं की नेत्री है और दिनों की नेत्री है, वैसे ही उसे सुखमय सत्त्वों की प्रकाशवती नेत्री कहा गया है। **भास्वती नेत्री सुनृतानाम्। (ऋ० १।९२।७)** और वैदिक ऋषियों के मनमें ज्योति, किरणों या गौओं के विचार और सत्य के विचार में जो परस्पर गहरा सम्बन्ध है, वह एक दूसरी ऋचा (ऋ० १।९२।१४) में और भी अधिक स्पष्ट तथा असन्दिग्ध रूप से पाया जाता है- **गोमति अन्नावति विभावति... .. सुनृतावति। “हे उषा, जो तू अपनी जगमगाती हुई गौओंके साथ है, अपने अश्वोंके साथ है अत्यधिक प्रकाशमान है और सुखमय सत्त्वोंसे परिपूर्ण है।”** इसी जैसा पर तो भी इससे अधिक स्पष्ट वाक्यांश (ऋ. १।४८।२) में है, जो इन विशेषणों के इस प्रकार रखे जानेके अभिप्राय को सूचित

× यूयं हि देवाः ऋतयुग्मिभरश्चैः परिप्रयाथ भुवनानि सद्यः। (ऋ. ४।५।१५)

+ वि तद् ययुरणयुग्मिभरश्चैश्चित्रं भान्त्युषसश्चन्द्रयाः। (ऋ. १।९।१२)

* ऋतस्य देवीः सदसो बुधानाः। (ऋ. ४।५।१-८)

कर देता है— गोमतीरश्वावतीर्विचक्षुर्विदः । “ उषाएं जो अपनी ज्योतियों (गौओं) के साथ हैं, अपनी त्वरितगतियों (अश्वों) के साथ हैं और जो सब वस्तुओं को ठीक प्रकार से जानती हैं । ”

वैदिक उषा के आध्यात्मिक स्वरूपका निर्देश करनेवाले जो उदाहरण ऋग्वेद में पाये जाते हैं, वे किसी भी प्रकार वहीं तक परिमित नहीं हैं । उषा को निरन्तर इस रूप में प्रदर्शित किया गया है कि, वह दर्शन, बोध, ठीक दिशामें गति को जानृत करती है । गोतम रङ्गगण कहता है, “ वह देवी सब भुवनोंको सामने होकर देखती है, वह दर्शनरूपी आँख अपनी पूर्ण विस्तीर्णता में चमकती हैं, ठीक दिशा में चलने के लिए सम्पूर्ण जीवन को जगाती हुई वह सब विचारशील लोगों के लिए बाणी को प्रकट करती है । ” × विश्वस्य वाचमविदम् मनायोः । (ऋ० १।९२।९)

वहाँ हम उषा को इस रूप में पाते हैं कि, वह जीवन और मनको बंधन मुक्त करके अधिकसे अधिक पूर्ण विस्तार में पहुँचा देती है और यदि हम इस उपर्युक्त निर्देश को वहीं तक सीमित रखें कि, यह केवल भौतिक उषा के उदय होने पर पार्थिव जीवन के पुनः जाग उठने का ही वर्णन है, तो हम ऋषि के चुने हुए शब्दों और वाक्यांशों में जो बल है, उस सारे की उपेक्षा ही कर रहे होंगे और यदि यह हो कि, उषा से लाये जानेवाले दर्शन के लिए यहाँ जो शब्द प्रयुक्त किया गया है, ‘चक्षुः’ उसे केवल भौतिक दर्शनशक्ति को ही सूचित कर सकनेयोग्य माना जाय, तो दूसरे सन्दर्भों में हम इसके स्थान पर ‘केतु’ शब्द पाते हैं, जिसका अर्थ है बोध, मानसिक चेतना में होनेवाला बोधयुक्त दर्शन, ज्ञान की एक शक्ति । उषा है ‘प्रचेताः’ इस बोधयुक्त ज्ञान से पूर्ण । उषाने जो कि ज्योतियों की माता है, मन के इस बोधयुक्त ज्ञान को रचा है, गवां जनित्री अकृत प्र केतुम् (ऋ. १.१२४.५) । वह स्वयं ही दर्शनरूप है— “अब बोधमय दर्शनकी उषा खिल उठी है, जहाँ कि पहले कुछ नहीं (असत्) था, ” वि नूनमुच्छादसति प्र केतुः (ऋ. १.१२४-११) । वह अपनी बोधयुक्त शक्ति के द्वारा सुखमय सत्यवाली है, चिकित्स

सुनुतावरि । (ऋ. ४.५२.४)

यह बोध, यह दर्शन, हमें बताया गया है, अमरत्व का है— अमृतस्य केतुः (ऋ. ३.६१.३) । दूसरे शब्दोंमें यह उस सत्य और सुख की ज्योति है, जिनसे उच्चतर या अमर चेतन का निर्माण होता है । रात्रि वेद में हमारी उस अन्धकारमय चेतना का प्रतीक है जिस के ज्ञान में अज्ञान भरा पडा है और जिसके संकल्प तथा क्रिया में स्खलन पर स्खलन होते रहते हैं और इसलिए जिसमें सब प्रकार की बुराई, पाप तथा कष्ट रहते हैं । प्रकाश है ज्योतिर्मयी उच्चतर चेतना का आगमन जो कि सत्य और सुख को प्राप्त कराता है । हम निरन्तर ‘दुरितम्’ और ‘सुवितम्’ इन दो शब्दों का विरोध पाते हैं । ‘दुरितम्’ का शाब्दिक अर्थ है स्खलन, गलत रास्ते पर पर जाना और औपचरिक रूप से यह सब प्रकार की गलती और बुराई, सब पाप, भूल और विपत्तियों का सूचक है । ‘सुवितम्’ का शाब्दिक अर्थ है, ठीक और भले रास्ते पर जाना और यह सब प्रकारकी अच्छाई तथा सुख को प्रकट करता है और विशेषकर इस का अर्थ वह सुख-समृद्धि है, जो कि सही मार्ग पर चलनेसे मिलती है । सो वसिष्ठ इस देवी उषाके विषयमें (ऋ. ७.७८.२) में इस प्रकार कहता है— “ दिव्य उषा अपनी ज्योति से सब अन्धकारों और बुराइयों को हटाती हुई आ रही है : ” (विश्वा तमांवि दुरिता) और बहुतसे मन्त्रोंमें इस देवीका वर्णन इस रूपमें किया गया है कि, यह मनुष्योंको जगा रही है, प्रेरित कर रही है, ठीक मार्ग की ओर, सुख की ओर (सुरिताय) ।

इसलिये वह केवल सुखमय सत्यों की ही नहीं, किन्तु हमारी आध्यात्मिक समृद्धि और उल्लास की भी नेत्री है, उस आनन्दको लावेवाली है, जिस तक मनुष्य सत्य के द्वारा पहुँचता है या जो सत्यके द्वारा मनुष्य के पास लाया जाता है, (एषा नेत्री राधसः सुनुतानाम् । (ऋ. ७.७६.७) यह समृद्धि जिन के लिए ऋषि प्रार्थना करते हैं, भौतिक दौलतों के अलावा से वर्णन की गई है, यह ‘गोमद् अश्ववद् घोरवद्’ है, या यह ‘गोमद् अश्ववद् रथवच्च राधः’ है । गौ (गाय), अश्व (घोडा), प्रजा या अत्य (सन्तान), रथ या वीर (मनुष्य या शूरी), हिरण्य (सोना), रथ (सवारीवाला रथ), श्रवः

× विश्व नि देवी भुवनाभिचक्ष्या प्रतीची चक्षुर्विद्या वि भाति ।

विश्वं जीवं चरसे बोधयन्ती विश्वस्य वाचमविदन्मनायोः ॥ (ऋ० १।९२।९)

* उषा याति ज्योतिषा बाधमाना विद्वा तमांसि दुरिताय देवी । (ऋ० ७।७८।२)

(भोजन या कीर्ति)- याज्ञिक साम्प्रदायियों की व्याख्या के अनुसार ये ही उस सम्पत्ति के अंग हैं, जिस की वैदिक ऋषि कामना करते थे। यह लगेगा कि, इससे अधिक ठोस दुनियावी पार्थिव और भौतिक दौलत कोई और नहीं हो सकती थी, निस्सन्देह ये ही वे ऐश्वर्य हैं, जिन के लिए कोई बेहद भूखी, पार्थिव वस्तुओं की लोभी, कामुक, जंगली लोगोंकी जाति अपने आदि देवोंसे याचना करती। परन्तु हम देख चुके हैं कि 'हिरण्य' यैरमें भौतिक सोने की अपेक्षा दूसरे ही अर्थ में प्रयुक्त किया गया है। हम देख आए हैं कि 'गौं' निरन्तर उषा के साथ सम्बद्ध होकर बार बार आती हैं, कि यह प्रकाश के उदय होने का आलङ्कारिक वर्णन होता है और हम यह भी देख चुके हैं कि, इस प्रकाश का सम्बन्ध मानसिक दर्शन के साथ है और उस सत्य के साथ है जो कि सुख लाता है। और अश्व, घोड़ा, आध्यात्मिक भावों के निर्देशक इन मूर्त अलंकारों में सर्वत्र गौ के प्रतीकात्मक अलंकार के साथ जुड़ा हुआ आता है; उषा 'गोमती अश्ववती' है। वसिष्ठ ऋषि की एक ऋचा (ऋ० ७।७।३) है, जिसमें वैदिक मंत्र का प्रतीकात्मक अभिप्राय बड़ी स्पष्टता और बड़े बल के साथ प्रकट होता है-

देवानां षष्ठुः सुभगा वहन्ती, श्वेनं नयन्ती
सुहृदीकमश्वम् । उषा अदृशि रश्मिभिर्वेत्ता,
चित्रमघा विश्वमनु प्रभूता ॥

'देवों की दर्शनरूपी आँख को लाती हुई, पूर्ण दृष्टिवाले सफेद धोटेवा नेतृत्व करती हुई सुखमय उषा रश्मियोंद्वारा व्यक्त होकर दिखाई दे रही है, यह अपने चित्रविचित्र ऐश्वर्योंसे परिपूर्ण है, अपने जन्मको सब वस्तुओंमें अभिव्यक्त कर रही है।' यह पर्याप्त स्पष्ट है कि 'सफेद धोड़ा' पूर्णतया प्रतीकरूप ही है X (सफेद धोड़ा यह मुहावरा अग्निदेवता के लिए प्रयुक्त किया गया है, जो कि अग्नि + 'द्रष्टा का संकल्प' है कविकृतु है, दिव्य संकल्पकी अपने कार्यों को करने

की पूर्ण दृष्टि-शक्ति है। (ऋ. ५।१।४) और ये 'चित्र-विचित्र ऐश्वर्य' भी आलंकारिक ही हैं, जिन्हें कि वह अपने साथ लाती है, निश्चय ही सबका अभिप्राय भौतिक धन-दौलत से नहीं है।

उषाका वर्णन किया गया है कि यह 'गोमती अश्ववती धीरवती' है और क्योंकि उसके साथ लगाये गये 'गोमती' और 'अश्ववती' ये दो विशेषण प्रतीकरूप हैं और इन का अर्थ यह नहीं है कि, यह 'भौतिक गौओं और भौतिक घोड़ोंवाली' है, बल्कि यह अर्थ है कि यह ज्ञान की ज्योति से जगमगानेवाली और शक्ति की तीव्रतासे युक्त है, तो 'धीरवती' का अर्थ भी यह नहीं हो सकता कि यह 'मनुष्योंवाली है या शूर वीरों, नौकरचारकों या पुत्रों से युक्त' है, बल्कि इस की अपेक्षा इस का अर्थ यह होगा कि, यह विनयशील शक्तियों से संयुक्त है अथवा यह शब्द बिल्कुल इसी अर्थ में नहीं, तो कमसे कम किसी ऐसे ही और प्रतीकरूप अर्थ में ही प्रयुक्त हुआ है। यह बात (ऋ० १.११३.१८) में बिल्कुल स्पष्ट हो जाती है। 'या गोमतीरुषसः सर्ववीरा ... ता अश्वदा अश्ववत् सोम सुखा।' इस का यह अर्थ है कि, 'ये उषाएं जिन में कि भौतिक गायें हैं और सब मनुष्य या सब नौकर-चारक हैं, सोम अर्पित कर के मनुष्य उन का भौतिक घोड़ों को देनेवाली के रूप में उपभोग करता है।' उषा देवी यहाँ आन्तरिक उषा है, जो कि मनुष्य के लिए उस की बृहत्तम सत्ता की विविध पूर्णताओं को, शक्ति को, चेतना को और प्रसन्नता को लाती है, यह अपनी ज्योतियों से जगमग है, सब संभव शक्तियों और बलों से युक्त है, यह मनुष्य को जीवन-शक्तिका पूर्ण बल प्रदान करती है, जिस से कि यह उस ब्रह्मत्तर सत्ता के असीम अनन्द का स्वाद ले सके।

अब हम अधिक देर तक 'गोमद् अश्ववद् धीरवद् राधः' को भौतिक अर्थों में नहीं ले सकते; वेदकी भाषा ही हमें इस से बिल्कुल भिन्न तथ्य का निर्देश कर रही है। इस कारण

X धोड़ा प्रतीकरूप ही है, यह पूर्णतया स्पष्ट हो जाता है दीर्घतमस्के सूक्तों में जो कि यज्ञ के घोंडे के सम्बन्ध में हैं, अश्वदधिकारक विषयक भिन्न भिन्न ऋषियों के सूक्तों में और फिर बृहदारण्यक उपनिषद् के आरम्भ में जहाँ यह जटिल आलङ्कारिक वर्णन है, जिसका आरम्भ "उषा घोंडे का सिर है," (उषा या अश्वस्य मेधस्य शिरः,) इस वाक्य से देता है।

+ अग्निमन्त्रा देवयता गनांसि चक्षुष्वि सूर्ये सं शान्ति ।

यदीं सुषाने उषसा विरूपे धेतौ वाजी जायते अमे अहम् ॥ (ऋ० ५।१।४)

देवोंद्वारा दी गई इस सम्पत्ति के अन्य अंगों को भी हमें इसी की तरह अवश्यमेव आध्यात्मिक अर्थों में ही लेना चाहिए; सन्तान, सुवर्ण, रथ ये प्रतीकरूप ही हैं, 'श्रवः' कीर्ति या भोजन नहीं है, बल्कि इसमें आध्यात्मिक अर्थ अन्तर्निहित है और इस का अभिप्राय है, वह उच्चतर दिव्य ज्ञान जो कि इंद्रियों या बुद्धि का विषय नहीं है, बल्कि जो सत्य की दिव्य श्रुति है और सत्य के दिव्य दर्शन से प्राप्त होता है, 'रथि वीर्यधुत्तमम्' रथि श्रवस्युम्' सत्ता की यह सम्पन्न अवस्था है, यह आध्यात्मिक समृद्धि से युक्त वैभव है, जो कि दिव्य ज्ञान की ओर प्रवृत्त होता है (श्रवस्यु) और जिस में उस दिव्य शब्द के कम्पनों को सुननेके लिये सुदीर्घ, दूर तक फैली श्रवणशक्ति है, जो दिव्य शब्द हमारे पास असीम के

प्रदेशों (दिशः) से आता है । इस प्रकार उषाका यह उज्ज्वल अलंकार हमें वेदसम्बन्धी उन सब भौतिक, कर्म-काण्डिक, अज्ञानमूलक भ्रांतियों से मुक्त कर देता है, जिनमें कि यदि हम फंसे रहते तो वे हमें असंगति और अस्पष्टता की रात्रि में ठोकड़ों पर ठोकड़ें खिलाती हुई एक से दूसरे अन्धकूपमें ही गिराती रहतीं, वह हमारे लिए बन्द द्वारों को खोल देती है और वैदिक ज्ञान के हृदय के अन्दर हमारा प्रवेश करा देती है ।

उषा सूक्तों का यह आध्यात्मिक रहस्य श्री योगी अरविन्द जी की खोजसे प्राप्त हुआ है जिसे पाठकोंको मननपूर्वक अपनाना योग्य है ।

(३)

उषादेवताका वर्णन

उषा देवताका वर्णन कई विभिन्न रीतियोंसे भी देखने योग्य है । उषा के सूक्तों में काव्य का आलंकारिक वर्णन तो बड़ा ही मनोरंजक और हृदयंगम है हि परंतु इसकी अन्यभी कुछ विशेषताएं हैं जो देखने योग्य हैं ।

सूर्योदयके पूर्व उषाएँ (वसिष्ठो मैत्रावरुणिः)

तानीवहानि बहुलान्यासन् या प्राचीनमुद्रिता सूर्यस्य ।
यतः परि जार इव आचरन्ती उषः वदक्षे न पुनर्यतीव ॥
(१४९) ऋ. ७।७।३)

' (सूर्यस्य प्राचीनं या उदिता) सूर्यके पूर्व जो उदय हुए थे, (तानि अहानि बहुलानि इत् आसन्) ऐसे वे उषःकाल निःसन्देह बहुत ही थे । '

इस मंत्र में ' सूर्योदयके पूर्व अनेक उषःकाल अथवा (अहानि) अनेक दिन व्यतीत हुए ' ऐसा वर्णन किया है। क्या कभी हमें इसका अनुभव है ? नहीं, हमें अपने देशमें तो एक उषःकाल आनेके बादही उसी दिन प्रत्यक्ष सूर्य उगता हुआ दिखाई देता है । सूर्य उदयके पूर्व बहुत दिन व्यतीत हुए और बहुत दिन व्यतीत होनेतक सूर्य का उदय नहीं हुआ,

ऐसा इस देशमें कभी नहीं होता है । ये बहुत दिन उषःकालके ही हैं, जैसी उषा लाल वर्णके प्रकाशसे युक्त होती है, वैसीही ये दिन हैं । सूर्यप्रकाशवाले ये दिन नहीं हैं । क्यों कि इस सूक्तकी देवता उषा है और इस मंत्रमें भी ' उषः ' संबोधन करके ही वर्णन है, देखिये इसी मंत्रका उत्तरभाग—

' हे उषा देवी ! तू जारके समान आचरण करनेवाली दीखती है, संन्यसिनी यती स्त्रीके समान तू दीखती नहीं । ऐसा उषाको संबोधन करके कहा है । बार की प्रतीक्षा करती हुई जैसी कोई स्त्री रहती है, वह अपने प्रियकी प्रतीक्षा करती रहती है, वह पति न आया तो भी आतुरताके साथ वह स्त्री प्रतीक्षा करतीही रहती है, परंतु अपने प्रियपर क्रोध करके संन्यासिनी बन कर उसको नहीं छोड़ती, तद्वत् यह उषा है ।

यहां सूर्य उदय होनेतक अनेक दिन उषःकाल ही उषः-काल रहनेका स्पष्ट वर्णन है । हमारे देशमें घण्टाभर तक उषः-काल रहता है, पश्चात् सूर्य उदय होता है । अतः यह वर्णन यहां के उषःकालपर घटता ही नहीं । यहां तो सूर्योदयके पूर्व बहुत उषःकाल आते नहीं, प्रतिदिन उषा सूर्य की प्रतीक्षा करती रहती है, पर सूर्य देव उसके पास नहीं आते, ऐसा

यहां नहीं होता, अतः उषा अपने प्रियकी प्रतीक्षा बहुत दिन करती रही, पर सूर्य देव नहीं आये तथापि वह उषा यती (संन्यासिनी) बनी नहीं, अपने प्रिय पर पूर्ववत् प्रेमही करती रही, यह वर्णन यहांके उषःकालका नहीं हो सकता ।

जिस देशमें सूर्योदयके पूर्व अनेक दिन उषःकाल रहता होगा, वहीं पर ऐसी कल्पना कवि कर सकता है । और वहीं यह कल्पना प्रत्यक्ष सृष्टीमें दीख सकती है । जहां घण्टाभर ही उषःकाल रहता होगा, वहां सूर्योदय के पूर्व बहुत दिन उषःकाल रहा, ऐसा वर्णन नहीं हो सकता ।

यहां ' बहुलानि अहानि ' पद है, अनेक दिन व्यतीत होनेके पश्चात् वहां सूर्यदेवका दर्शन होता है । यहां दिनका अर्थ पृथ्वीका अपने इर्दगिर्द भ्रमणका काल है । आकाशमें जो तारका मण्डल दीखता है वह भ्रमण करतासा दीखता है । उसके २४ घण्टोंके परिभ्रमणसे दिनकी कल्पना होती है ! ऐसे बहुत दिन व्यतीत होने तक यह उषा सूर्यकी प्रतीक्षा करती रहती है, और पश्चात् सूर्य देव आते हैं और उषा सूर्यदेवके साथ संलग्न होती है ।

यहां ' बहुलानि अहानि ' पद है । इस वर्णनसे कितने दिन लेने योग्य हैं, इसका भी यहां विचार करना चाहिये । यदि १० दिन व्यतीत हो जायें, तो एक महिना व्यतीत हुआ ऐसा कहेंगे, इसलिये जिस कारण यहां ' अहानि ' अर्थात् ' दिन ' ही व्यतीत हुए ऐसा कहा है, उस कारण हम कह सकते हैं कि, तीस दिनोंसे कम ही ये उषःकाल होंगे । यदि आठ दस दिनतक ही यह उषःकाल रहता होगा, तो उसके लिये ' बहुत दिन ' ऐसा प्रयोग कोई नहीं करेगा, क्योंकि सात संख्यतक संख्या ' बहुत दिन ' कहने योग्य नहीं होती । इसलिये १० दिन भी नहीं और दस दिन तक भी नहीं, अर्थात् बीससे कुछ अधिक दिन ऐसा यह उषाका अवधि ' बहुलानि अहानि ' पदोंसे लेना योग्य है ।

संस्कृत व्याकरणके अनुसार ' बहुलानि अहानि ' (बहुत दिन) का अर्थ कमसे कम तीन दिन और अधिकसे अधिक जितने भी होंगे उतने दिन बोधित होंगे । अतः व्याकरण हमारी इतनीही यहां सहायता करता है और कहता है कि इन पदोंसे कमसे कम तीन दिनोंका अवधि निर्धारित हो सकता है, ज्यादा कितने दिन ले सकते हैं यह व्याकरण नहीं कह सकता । पर केवल तीन ही दिनोंके लिये ' बहुतही दिन ' ऐसा कोई

भी नहीं कहता । इसलिये यह अवधि निश्चयसे तीन दिनोंसे अधिक है इसमें संदेह नहीं, अनेक उषाओंका वर्णन वेदमंत्रोंमें भी है, अतः उषाका बहुवचनमें प्रयोग अनेक वेदमंत्रोंमें दिखाई देता है—

स्पर्हा वसूनि तमसाऽपगूढाः

आविष्कृण्वन्त्युषसो विभातीः॥ (६४; ऋ. १।१२३।६)

' स्पृहणीय पदार्थ जो गूढ अन्धकारसे ढंके थे, उन सबको ये अनेक (विभातीः उषसः आविष्कृण्वन्ति) प्रकाशमेवाली उषायें प्रकट कर रही हैं । ' अर्थात् ये अनेक उषायें अकर सूर्य आनेके पूर्वही विश्वान्तर्गत न न पदार्थोंको हमारे सामने प्रकट करती हैं । इसी सूक्तका अगला मंत्र इस मंत्रका आशय अधिक स्पष्ट कर रहा है—

परा च यन्ति पुनरा च यन्ति

भद्रा नाम वहमाना उषासः । (७०; ऋ. १।१२३।१२)

' ये (उषासः) उषायें (भद्रा नाम वहमानाः) कल्याणकारक यशका धारण करती हुई (परा यन्ति) जाती हैं और (पुनः च आयन्ति) फिर वापस आती हैं । ' उषःकाल चला गयासा दीखता है और उसी समय फिर नया शुरू होने लगता है । यह वर्णन बड़ा महत्त्व रखनेवाला वर्णन है । हमारे देशमें एक बार उषःकाल गया तो दिन आता है, दिनके बाद सायंकाल और उसके बाद रात्री व्यतीत होती है, इसतरह २४ घण्टे व्यतीत होते हैं, तत्पश्चात् दूसरी उषा आती है । अतः यह वर्णन यहांका नहीं है जिस भूभाग पर एकवार उषा गयी तो उसी समय पुनः दूसरी उषःकाल आनेकी संभावना हो, वहीं यह वर्णन प्रत्यक्ष दीख सकता है, और वहीं सूर्योदयके पूर्व अनेक उषाओंका होना भी संभव हो सकता है । ऐसी कई उषायें लगातार आती हैं और पश्चात् सूर्य देव उगते हैं, वहीं कवि कह सकता है कि, ' एक उषा गयी और फिरसे दूसरी उषा पुनः आगयी । ' इसी तरह और भी वर्णन देखिये—

क स्त्रिंशसां कतमा पुराणी ? (९६; ऋ. ४।५१।६)

' इन सब उषाओंमें कौनसी भला उषा पुरानी है ? ' यह प्रश्न तब हो सकता है कि, जब अनेक उषःकाल साक्ष्य हो आते हों । हमारे भारतवर्षमें तो एकही उषःकाल रहता है इस लिये इसमें पुराना और नया ऐसा भेद नहीं हो सकता, परंतु न्यून प्रकाशवाला और अधिक प्रकाशवाला ऐसे अनेक क्रमपूर्वक

उषःकाल जहां होंगे, वहीं एक उषःकाल पुराना और दूसरा नया यह भाषा संभवनीय हो सकती है। इसीतरह और भी—

ता वा ता भद्रा उषसः पुरासुः । (८०, ऋ. ४।५।१७)

‘ वे नि.संदेह वे कल्याणकारक उषःकाल (पुरा आयुः) पहिले हो चुके थे ।’ यहां अनेक संख्यामें कुछ उषःकाल पहिले हो चुके ऐसा कहा है। अनेक संख्यामें उषःकालोंका होना यह जहां संभवनीय होगा, वहीं यह वर्णन हो सकता है। ये सब मंत्र किसी देशमें प्रत्यक्ष दीखनेवाले दृश्यका वर्णन कर रहे हैं। उषा दृश्यमान है, हमारे देशमें प्रतिदिन आती है, परंतु यहां अनेक उषाएं सूर्योदयके पूर्व नहीं आतीं और नहीं इनमें एक प्राचीन और दूसरी अर्वाचीन कही जा सकती है। और जो वर्णन इन उषा सूक्तोंमें है, वहां अनेक उषाएं सूर्योदयके पूर्व होती हैं, और ये उषाएं एकके पीछे दूसरी ऐसी क्रमपूर्वक आती हैं, देखिये—

क्रमसे उषाओंका आना

आसां पूर्वासां अहसु स्वसृणां

अपरा पूर्वा अभ्येति पश्चात् ।

ताः प्रत्यवस्यसीः नूनं अस्मे

रेवदुच्छन्तु सुदिना उषासः ॥ (८०, ऋ. १।१२।४९)

‘ (आसां पूर्वासां स्वसृणां अहसु) इन पहिले बहिनरूपी अनेक उषाओंके दिनोंमें (पूर्वा पश्चात् अपरा अभ्येति) पहिली उषाके पश्चात् ही दूसरी उषा उसके पीछेसेही लगातार आती रहती है। (ताः) वे (नव्यसीः उषासः) नयीं उषाएं (प्रत्यवत्) पुरानी उषाओंके समानही निश्चय पूर्वक (अस्मे) हमें (रेवत् सुदिना उच्छन्तु) ऐश्वर्य युक्त उत्तम दिन दें।’

इस मन्त्रमें ‘ पूर्वा पश्चात् अपरा अभि येति ’ यह वाक्य बड़े महत्त्वका है इसका आशय ऐसा है कि— ‘ पूर्व उषाके पश्चात् ही, उस उषाके पीछेसेही दूसरी उषा सब प्रकारसे आती है। एक उषा समाप्त हुई तो दूसरी उषा शुरू होती है। यह दृश्य इस देशका नहीं है।

यहां ‘ उषा ’ पद अनेक वचनमें है, इससे अनेक उषाओं का होना सिद्ध है, अनेक उषाएं होनेके कारण ही उनको इस मंत्रने (स्वसृः) बहिनें कहा है। एक पिताकी अनेक पुत्रियां आपसमें बहिनें होती हैं। सूर्य आनेवाला है, उसके कारण उत्पन्न होनेवाली अनेक उषाएं आपसमें बहिनें कही जा सकती

हैं। बहिन कहनेसे भी एक सूर्य देवके कारण उत्पन्न होनेवाली सूर्यकी अनेक पुत्रियां, ये उषाएं हैं, अतः वे आपसमें बहिनें हैं यह सिद्ध है। इससे सूर्योदयके पूर्व अनेक उषाओंका होना सिद्ध हुआ है।

उषाओंका क्रमसे और एकके पीछे दूसरीका आना सिद्ध कर रहा है कि ऐसा दृश्य कितनी दूसरे देशमें होगा, इन भारत वर्षमें तो ऐसा दृश्य कदापि नहीं होता।

पहिले दिनको जाननेवाली उषा

जानशब्दः प्रथमस्य नाम

शुक्रा कृष्णादजनिष्ट श्वितीची ॥ (६७, ऋ. १।१२३।९)

‘ यह उषा (प्रथमस्य अहः जानती) पहिले दिनका नाम जानती है, और (शुक्रा श्वितीची) यह प्रकाश देनेवाली तेजस्विनी उषा (कृष्णात् अजनिष्ट) कृष्ण वर्ण अन्धकारसे उत्पन्न हुई।’

हमारे देशमें पहिले दिनकी उषा ऐसा कोई भेद नहीं है, क्योंकि सभी उषाएं एकसी होती हैं, पर जहां जिस प्रदेशमें बड़े अन्धकारके पश्चात् पहिलाही उषःकाल शुरू होता है और वह उषःकाल अनेक दिनोंतक लगातार रहता है वहीं यह संभव हो सकता है कि यह उषा प्रथम दिनकी है और यह दूसरे दिनकी है, पर वे आपसमें बहिनें हैं और एकके पीछे एक आती रहती हैं। इस मंत्र में प्रथम दिनकी उषा (प्रथमस्य अहः उषा) कहीं है, यह वर्णन विशेष महत्त्व का है। इसी तरह के वर्णन के ये मन्त्र हैं—

१. शश्वतीनां विभातीनां प्रथमा उषा शश्वैत् ।

(५३, ऋ. १।११३।१५)

२. शश्वतीनां आयतीनां प्रथमा उषा श्वयौत् ।

(७३, ऋ. १।१२४।२)

३. परायतीनां अभ्येति पाथः

आयतीनां प्रथमा शश्वतीनाम् । (४६, ऋ. १।११३।८)

४. उषा अगन् प्रथमा पूर्व हूती । (६०, ऋ. १।११३।८)

५. उषः स्मृतं प्रथमा जरस्व । (९३, ऋ. १।१२३।२)

६. उषः सुजाते प्रथमा जरस्व । (१५२, ऋ. ७।७६।६)

(१) शश्वत चमकनेवाली उषाओंमें यह पहली उषा प्रकाशित हुई है। (२) शश्वत आनेवाली उषाओंमें पहिली उषा उदित हुई है (३) जानेवाली उषाओंके मार्गका अनुसरण करनेवाली और आनेवाली उषाओंमें पहिली वह उषा

है (४) यह पहिली उषा आगई है । (५-६) हे उत्तम निर्माण हुई उषा ! तू पहिली उषा है ।

(१,३) दुत्स आंगिरसः, (२,४-५) कक्षीवान् दैर्घतमसः, (६) वसिष्ठ के देखे ये मंत्र हैं । इन में यह पहिली उषा है ऐसा कहा है ।

यहां पहिली उषा करके उसमें कोई विशेषता नहीं होती । पर जहां बड़े प्रदीर्घ अन्धेरेके पश्चात् वर्षमें प्रथमही उषाके प्रकाशका दर्शन होता होगा, वहांका आनन्द इन मंत्रोंमें वर्णित हुआ दीखता है ।

तीस बहिनें

त्रिंशत्सत्रसार उपयन्ति निष्कृतं । (तै. सं. ४।३।२।६)

‘ तीस बहिनें नियत स्थानपर चलती हैं । ’ बहिनें उषायें हैं यह जो ऋग्वेदमें कहा था, वे तीस बहिनें हैं ऐसा इस मंत्रने कहा है । तीस ही उषाएं क्यों हैं ? क्योंकि छः मास की रात्री के पश्चात् तीस उषाएं आकर ही सूर्यका उदय होता है ।

भयानक रात्री

न यस्याः पारं ददशे न योयुवद्विधमस्या नि विशते यदेजति । अरिष्टासस्त उर्वि तमस्वति रात्रि पार-मशीमहि भद्रे पारमशीमहि ॥ (अथर्व. १९।४७।२)

(न यस्याः पारं ददशे) जिस रात्रीका पार अर्थात् समाप्ति का समय हम देखते नहीं, इतनी यह विशाल रात्री है ।

(न योयुवत्) जिस रात्री में भिन्नता भी नहीं दीखती, एक जैसी अखण्ड यह रात्री रहती है (विश्वं अस्यां निविशते) सब कुछ इस रात्री में प्रविष्ट होता है (यत् एजति) जो कुछ हिलता है वह सब भी इस रात्रीमें ही रहता है । (अ-रिष्टासः) हम घिनघ्न न होते हुए, हे (उर्वि तमस्वति रात्रि) बड़ी अन्धेरी रात्री ! तेरे पार (अशीमहि) हम होंगे । हे कल्याण रात्री ! तेरे पार हम होंगे ।

यह विशेष दीर्घकालीन रात्रीका ही वर्णन दीखता है । यह हमारी १२ घण्टोंकी रात्री नहीं है, यह छः मासकी रात्री है जो संवत्सर जैसी है इसका वर्णन देखिये—

संवत्सरस्य प्रतिमां या स्वा रात्र्युपास्महे ।

सा न आयुष्मतीं प्रजां रायस्पोषेण सं सृज ॥ ३ ॥

(अ. ३।१०।३)

(यां संवत्सरस्य प्रतिमां रात्रीं त्वां) संवत्सरकी प्रतिमा-

रूपी रात्रीकी (उपास्महे) हम उपासना करते हैं । (सा नः) वह रात्री हमारी (आयुष्मतीं प्रजां) दीर्घायुवाली प्रजाको (रायः पोषेण संसृज) धन और पुष्टीके साथ पूर्ण करो ।

संवत्सरस्य प्रतिमा रात्री= ये पद निःसंदेह वर्षकी दीर्घरात्रीको अर्थात् अर्धसंवत्सर तक चलनेवाली रात्रीको बता रहे हैं । नहीं तो ‘ संवत्सरकी प्रतिमा रात्री ’ का कोई विशेष तात्पर्य ही नहीं है ।

ऐसे बड़े अन्धकारके पार होनेको ही अन्धेरेसे पार होना कहते हैं—

अन्धकारका पार होना

बड़े अन्धकारका पार होना भी इन उषा सूक्तोंमें दीखता है—

अतारिष्म तमसस्वारं अस्य

उषा उच्छन्ती वयुना कृणोति । (२९; ऋ. १।९२।६)

‘ (अस्य तमसः पारं अतारिष्म) इस अन्धकारको हमने पार किया, अब यह (उषा उच्छन्ती) उषा अपना प्रकाश करती हुई अपने उद्देश प्रकट करती है । ’

इस मंत्रमें (अस्य तमसः पारं अतारिष्म) इस अन्धकारके पार हम हो चुके, यह वाक्य प्रगाढ़ और दीर्घकालके अन्धेरे की सूचना दे रहा है । प्रतिरात्रीके अन्धकारके विषयमें ऐसा कोई नहीं कहेगा, क्योंकि हमें पता है कि छः सात बजे यह अन्धेरा दूर होनेका निश्चय है । यदि अन्धेरा ऐसा हो कि जो कई महीने रहनेवाला हो, तो उस अन्धकारकी समाप्तिपर ऐसा वाक्य बोला जाना सर्वथा संभव है कि ‘ इस दुस्तर अन्धकारसे अब हम पार हो चुके हैं । ’ इतने मंत्रोंका आशय मनन पूर्वक देखनेसे हमें ऐसा प्रतीत होता है कि बड़े अन्धकारके व्यतीत होनेपर कई उषायें लगातार आतीं, उनमें पहिली और अन्तिम ऐसी भी उषाएं रहती हैं, ऐसे अनेक उषाकाल व्यतीत होनेपर दिनका प्रारंभ होता है, जहां ऐसा होता हो वहाँका यह वर्णन है ।

हमें विदित है कि अपनीही पृथ्वीपर ऐसे प्रदेश हैं कि जहां करीब पांच महीनोंकी प्रचण्ड रात्री रहती है, इस निबिड गाढ़ अंधेरी प्रचण्ड रात्रीके पश्चात् करीब तीस दिनका उषाकाल और प्रभात होता है, पश्चात् करीब पांच महीनेका दिन होता है और पश्चात् वैसा ही एक मासका सायंकाल होता है । दिन और रात्रीका प्रमाण न्यूनाधिक भी कई

प्रदेशोंमें रहता है। नार्वे स्वीडन के प्रदेशोंमें इस तरहके प्रचण्ड दिन रात आज भी होते हैं। महाभारतकारने ध्रुव पर्वतका वर्णन दिया है वहां छः महिनोका दिन और वैसी ही प्रचण्ड रात्री होनेका वर्णन है। अगस्त ऋषि वहां गये थे ऐमा भी महाभारतमें लिखा है देखो—

एनं त्वहरहमेरुं सूर्याचन्द्रमसौ ध्रुवम् ।

प्रदक्षिणमुपावृथ्य कुर्याः कुरुनन्दन ॥

ज्योतीषि चाप्यशेषेण सर्वाण्यनघ सर्वतः ।

परियन्ति महाराज गिरिराजं प्रदक्षिणम् ॥

(म. भा. वन. १६३।३७-३८)

स्वतेजसा तस्य नगोत्तमस्य महौषधीनां च तथा प्रभावात् ।

विद्विक्तभाग्रो न बभूव कश्चिद्दहोनिशानां पुरुष प्रवीर ॥

बभूव रात्रिर्द्विरसञ्च तेषां संवत्सरेणैव समान रूपः ।

(म. भा. वन. १६४।११, १२)

द्वेवं राज्यद्वनी वर्षं प्रविभागस्तयोः पुनः ।

अदस्तादुदगयनं रात्रिः स्यादक्षिणायनम् (मनु. १।६७)

एकं वा एतद्देवानां अहः यसंवत्सरः । (तै. ब्रा. ३।९।२२।१)

‘ मेरुपर्वत है, उसकी प्रदक्षिणा सूर्य, चन्द्र, तथा सब नक्षत्र करते हैं। उस मेरुपर्वत पर दिन और रात्रीका ऐसा भेद नहीं (जैसा यहां हमारे देशमें प्रतिदिन दिखाई देता है।) वहां दिन आर रात्री वर्ष जैसी होती है (अर्थात् वहां छः मासोंकी रात्री और छः मासोंका दिन होता है, इसमें उपःकाल और सायं-कालके संक्षिप्त समय अन्तर्भूत हुए हैं।) यह महाभारतका वर्णन है ।

मनुस्मृतिमें कहा है कि उत्तरायण दिवस है और दक्षिणायन रात्री है । (अर्थात् छः मासोंका उत्तरायण दिन है और छः मासोंका दक्षिणायण रात्री है ।)

इस तरह मेरुपर्वतका वर्णन हमारे ग्रंथोंमें है । मेरुपर्वतही उत्तरीय ध्रुव है । आज भी वहां छः मासोंकी प्रचण्ड घन अन्ध-कारमयी रात्री है और छः मासोंका प्रचण्ड दिन है । उत्तरीय ध्रुवके नीचे दक्षिण दिशामें नार्वे और स्वीडन देश हैं, इसलिये वहां यह प्रमाण थोडा न्यूनाधिक रहता है । उत्तरीय ध्रुवमें सूर्य चन्द्र तथा नक्षत्र चक्कीके समान घूमते हुए नजर आते हैं, हमारे देशमें जैसे सिरपेर आकर अस्त होनेका दृश्य है वैसा वहां नहीं है, वहां किसी देवताको प्रदक्षिणा करनेके समान ये

सब सूर्य चन्द्र और नक्षत्र घूमते हैं और मेरुकी प्रदक्षिणा करते दीखते हैं ।

संक्षेपसे यहां ५ महिनोंकी निबिड गाठ अन्धकारवाली प्रचण्ड रात्री होती है, इसके बाद पहिली उषा चमकती है, इस कारण वह (प्रथम उषा) पहिली उषा कही जाती है, इसके नंतर करीब सत्तराईस उषाएं क्रमपूर्वक एकके पीछे दूसरी ऐसी आती है, अतः ये परस्पर बहिने होती हैं, पश्चात् सूर्य देव प्रकाशते हैं । ये करीब ५ महिने प्रकाशते ही रहते हैं, तथापि कभी ये मध्यन्हके समय जैसे आकाशमध्यमें नहीं चढते । नौ बजने जितने ऊपर चढते हैं यह अधिक से अधिक ऊंचाई होती है । जिस किसी ऊंचाई पर हो दिनभर उसी ऊंचाईपर रहते हुए ये ध्रुवपर्वत की प्रदक्षिणा करते हैं, पश्चात् सायं समय भी करीब उपःकाल जितना ही होता है और पश्चात् रात्री होती है । इस तरह छः मास सूर्य दर्शन नहीं और छः मास गाठ अन्धकार नहीं ऐसी वर्षकी अवधि काटी जाती है । नक्षत्रोंके एक परिभ्रमणसे एक दिन समझा जाता है, तथा वहां विद्युत्प्रकाश इस छः मासकी रात्रांमें कुछ रोशनी करता रहता है । यह वहां की परिस्थिति ध्यानमें धारण करके पूर्वोक्त मंत्रोंके निम्नलिखित वाक्य पुनः देखिये—

१. अस्य तमसः पारं अतारिषम । (२९; ऋ. १।९।२।६) = अब हम इस गाठ निबिड और प्रचंड अन्धकारके पार हो चुके ।

२. कृष्णात् शुक्रा प्रथमस्य अह्नः (उषा) अजनिष्ट । (६७; ऋ. १।१२३।३) = गाठ अन्धेरी रात्रीके पश्चात् प्रथम दिनकी यह पहिली उषा अब प्रकाशित हुई है ।

३. विभातीनां प्रथमा उषा स्यर्थात् । (७३; ऋ. १।१२४।२) = प्रकाशित होनेवालीयोंमें यह पहिली उषा प्रकाशित हुई ।

४. आसां स्वसृणां पूर्वा पश्चात् अपरा अभ्येति । (८०; ऋ. १।१२४।९) = ये बहिनें जैसी अनेक उषाएं एकके पीछे दूसरी क्रमसे आती हैं ।

५. भद्रा उषसः पुरा आसुः । (८०; ऋ. ४।५१।७) = कल्याण कारक अनेक उषाएं (सूर्य उदयके) पूर्व प्रकाशित हो चुकी हैं ।

६. उषसः पश यन्ति, पुनः आयन्ति । (७०; ऋ. १।१२३।१२) = इन उषाओंमेंसे कई जाती हैं और नयीं आती हैं ।

७. उषसः विभातीः (६४; ऋ. १।१२३।६) = अनेक उषायें (क्रमशः आकर) प्रकाशती हैं ।

८. सूर्यस्य प्राचीनं उदितं अहानि बहुलानि आसन् ।
(१४९; ऋ० ७।७६।३) = सूर्य उदयके पूर्व उदय को प्राप्त होनेवाली उषाएं अनेक हैं ।

इस तरह किसी ऐसे प्रदेशों मंत्रों के ये पद अत्यंत सार्थक दीखते हैं । पाठक इसका विचार करें ।

इतना होनेपर भी उषःकाल जाग्रतिका सूचक है । यह जाग्रति आध्यात्मिक मानना उचित है । क्योंकि कि आत्मिक जाग्रति में सब अन्य जाग्रतियां समाविष्ट होती है । यह भाव

इन मंत्रों में पाठक देख सकते हैं और उससे आध्यात्मिक उन्नति के मार्गका बोध भी प्राप्त कर सकते हैं । यह आध्यात्मिक उन्नति वेदकी मुख्य उन्नति है इस की सिद्धि करनेकी आवश्यकता बिल्कुल नहीं है । क्योंकि यह बात सबको स्वीकृत ही है ।

इस तरह उषाके हृदयंगम सूक्तोंका विचार पाठक कर सकते हैं ।

निवेदक

१ पौष विक्रमाय
संवत् २०००

श्रीपाद दामोदर सातवळेकर.

अध्यक्ष स्वाध्याय मण्डल

औध (जि० सातारा)





दैवत-संहिता ।

(ऋग्यजुःसामाथर्वणां संहितानां सर्वान् मन्त्रान् देवतानुसारेण संगृह्य निर्मिता ।)

८ उषादेवता ।

॥१॥ (ऋ० १।३०।२०-२२)

(१-३) शुनःशेष आजीगर्तिः । गायत्री ।

| | | |
|--|----|---|
| कस्तं उषः कधप्रिये भुजे मर्तो अमर्त्ये । कं नक्षसे विभावरी | २० | |
| वयं हि ते अमन्मह्याऽऽन्तादा पराकात् । अश्वे न चित्रे अरुषि | २१ | |
| त्वं त्येभिरा गहि वाजेभिर्दुहितर्दिवः । अस्मे रयि नि धारय | २२ | ३ |

॥२॥ (ऋ० १।४८।१-१६)

(४-२३) प्रस्कण्वः काण्वः । प्रगाथः = (विषमा बृहती+समा सतोबृहती ।)

| | | |
|--|---|---|
| सह वामेन न उषो व्युच्छा दुहितर्दिवः । | | |
| सह द्युम्नेन बृहता विभावरी राया देवि दास्वती | १ | |
| अश्ववितीर्गोमतीर्विश्वसुविदो भूरि च्यवन्त वस्तवे । | | |
| उदीरय प्रति मा सनृता उपश्रोद राधो मधोनाम् | २ | ५ |
| उवासोषा उच्छाञ्च नु देवी जीरा रथानाम् । | | |
| ये अस्या आचरणेषु दधिरे समुद्रे न श्रेवस्थवः | ३ | |
| उषो ये ते प्र यामेषु युञ्जते मनो दानाय सूरयः । | | |
| अत्राह तत् कर्ष एषां कर्षतमो नाम गृणाति नृणाम् | ४ | |
| आ घा योषेव सूनर्युषा याति प्रभुञ्जती । | | |
| जरयन्ती वृजनं पद्मदीयत उत्पातयति पक्षिणः | ५ | ८ |

दै० [उषा] १

| | |
|--|-------|
| धि या सुजति समनं व्युत्थिनः पदं न वेत्योदती । | |
| वयो नर्किष्टे पमिवांस आसते व्युष्टौ वाजिनीवति | ६ |
| एषार्युक्त परावतः सूर्यस्योदयनादधि । | |
| शतं रथैभिः सुभगोषा द्रुयं वि यात्यभि मानुषान् | ७ १० |
| विश्वमस्या नानाम् चक्षसे जग—ज्ज्योतिष्कृणोति सूनरी । | |
| अप द्वेषो मघोनी दुहिता दिव उषा उच्छदप सिधः | ८ |
| उष आ माहि भानुना चन्द्रेण दुहितर्दिवः । | |
| आवहन्ती भूर्यसभ्यं सौभगं व्युच्छन्ती दिविष्टिषु | ९ |
| विश्वस्य हि प्राणनं जीवनं त्वे वि यदुच्छसि सूनरि । | |
| सा नो रथेन बृहता विभावरी श्रुधि चित्रामघे हवम् | १० |
| उषो वाजं हि वंस्व यश्चित्रो मानुषे जनै । | |
| तेना वह सुकृतो अध्वराँ उप ये त्वा गृणन्ति बह्वयः | ११ |
| विश्वान् देवाँ आ वह सोमपीतये ऽन्तरिक्षादुपस्त्वम् । | |
| सास्मासु धा गोमदश्चावदुक्थ्य—मुषो वाजै सुवीर्यम् | १२ १५ |
| यस्या रुशन्तो अर्चयः प्रति भद्रा अदक्षत । | |
| सा नो रथि विश्ववारं सुपेशस—मुषा ददातु सुगम्यम् | १३ |
| ये चिद्धि त्वामृषयः पूर्वं ऊतये जुद्धरेऽवसे महि । | |
| सा नः स्तोमाँ अभि गृणीहि राधसो—षः शुक्रेण शोचिषा | १४ |
| उषो यदद्य भानुना वि द्वारावृणवो दिवः । | |
| प्र नो यच्छतादवृकं पृथु च्छर्दिः प्र देवि गोमतीरिषः | १५ |
| सं नो राया बृहता विश्वपेशसा मिमिक्षा समिळाभिरा । | |
| सं द्युम्नेन विश्वतुरोषो महि सं वाजैर्वाजिनीवति | १६ |

॥३॥ (ऋ० १।४९।१-४) अनुष्टुप् ।

| | |
|---|------|
| उषो भद्रेभिरा गहि दिवश्चिद् रोचनादधि । | |
| वहन्त्वरुणप्सव उप त्वा सोमिनो गृहम् | १ |
| सुपेशसं सुखं रथं यमध्यस्था उपस्त्वम् । | |
| तेना सुश्रवसं जनं प्रावाद्य दुहितर्दिवः | २ ११ |

वयश्चित् ते पतत्रिणो द्विपञ्चतुष्पदजुनि ।

उषः प्रारम्भतूरनु दिवो अन्तेभ्यस्परि

३

व्युच्छन्ती हि रश्मिभिर्विश्वमाभासि रोचनम् ।

तां त्वामृषर्वसूयवो गीर्भिः कणा अहूषत

४

२३

॥४॥ (ऋ० १।९२।१-१५)

(१४-१८) गोतमो राह्वगणः । १-४ जगती, ५-१२ त्रिष्टुप्, १३-१५ उष्णिक् ।

एता उ त्या उषसः केतुमक्रत पूर्वे अर्धे रजसो भानुमञ्जते ।

निष्कृण्वाना आयुधानीव धृष्णवः प्रति गावोऽरुषीर्यन्ति मातरः

१

उदपमन्नरुणा भानवो वृथा स्वायुजो अरुषीर्गा अयुक्षत ।

अक्रन्नुषासो व्युनानि पूर्वथा रुशन्तं भानुमरुषीरशिथ्र्युः

२

२५

अर्चन्ति नारीरपसो न विष्टिभिः समानेन योजनेना परावतः ।

इषं वहन्तीः सुकृते सुदानवे विश्वेदह यजमानाय सुन्वते

३

अधि पेशांसि वपते नूतूरिवापोर्णुते वक्ष उस्नेव बर्जहम् ।

ज्योतिर्विश्वस्मै भुवनाय कृण्वती गावो न व्रजं व्युषा आवर्तमः

४

प्रत्यर्ची रुशदस्या अदर्शि वि तिष्ठते वार्धते कृष्णमभ्वम् ।

स्वहं न पेशो विदथेष्वाञ्जश्चित्रं दिवो दुहिता भानुमश्रेत्

५

अतारिष्म तमसस्परमस्योषा उच्छन्ती व्युना कृणोति ।

श्रिये छन्दो न संयते विभाती सुप्रतीका सौमनसायाजीगः

६

भास्वती नेत्री सूनृतानां दिवः स्तवे दुहिता गोतमेभिः ।

प्रजावतो नृवतो अश्वबुध्यानुषो गोअग्राँ उप मासि वाजान्

७

३०

उषस्तमश्यां यशसं सुवीरं दासप्रवर्गं रयिमश्वबुध्यम् ।

सुदंससा श्रवसा या विभासि वाजप्रसृता सुभगे बृहन्तम्

८

विश्वानि देवी भुवनाभिचक्ष्या प्रतीची चक्षुरुर्विया वि भाति ।

विश्वं जीवं चरसे बोधयन्ती विश्वस्य वार्चमविदन्मनायोः

९

पुनःपुनर्जायमाना पुराणी समानं वर्णमभि शुभ्रममाना ।

श्रमीवं कृत्नुर्विजं आमिनाना मर्तस्य देवी जरयन्त्यायुः

१०

व्यूर्ण्वती दिवो अन्ताँ अवाँध्यप् स्वसारं सनुतर्धुयोति ।

प्रमिनती मनुष्या युगानि योषा जारस्य चक्षसा वि भाति

११

३४

पञ्चम चित्रा सुभगा प्रथाना सिन्धुर्न क्षोद उर्विया व्यश्नेत् ।
 अमिनती दैव्यानि व्रतानि सूर्यस्य चेति रश्मिभिर्दृशाना १२
 उषस्तच्चित्रमा भरा—सम्भ्यं वाजिनीवति । येन तोकं च तनयं च धामहे १३
 उषो अघेह गोम—त्यश्वावति विभावरी । रेवदस्मे व्युच्छ सूनृतावति १४
 युक्षत्रा हि वाजिनीव—त्यश्वा अद्यारुणो उषः । अथा नो विश्वा सौभगा न्या वह १५ ३८

॥५॥ (ऋ० १।११३।१-२०)

(३९-५८) कुत्स आङ्गिरसः । १ (उत्तरार्धस्य) रात्रिश्च । त्रिष्टुप् ।

इदं श्रेष्ठं ज्योतिषां ज्योतिरागा—चित्रः प्रकेतो अजनिष्ट विश्वा ।
 यथा प्रसृता सवितुः सवायं एवा रात्र्युषसे योनिमारैक् १
 रुक्षदत्सा रुक्षती श्वेत्यागा—दारैर्गु कृष्णा सदनान्यस्याः ।
 समानर्धन्धू अमृतं अनूची द्यावा वर्णी चरत आमिनाने २ ४०
 समानो अध्वा स्वसोरनन्त—स्तमन्यान्यां चरतो देवशिष्टे ।
 न मेथेते न तस्थतुः सुमेके नक्तोषासा समनसा विरूपे ३
 भास्वती नेत्री सूनृताना—मचेति चित्रा वि दुरो न आवः ।
 प्राप्या जगद्व्यु नो रायो अख्य—दुषा अजीगर्भुवनानि विश्वा ४
 जिह्मश्वेष्टे चरितवे मघो—न्याभोगय इष्टये राय उ त्वम् ।
 दुभ्रं पश्यद्भ्य उर्विया विचक्ष उषा अजीगर्भुवनानि विश्वा ५
 क्षत्राय त्वं श्रवसे त्वं महीया इष्टये त्वमर्थमिव त्वमित्यै ।
 विसदृशा जीविताभिप्रचक्ष उषा अजीगर्भुवनानि विश्वा ६
 एषा दिवो दृहिता प्रत्यदर्शि व्युच्छन्ती युवतिः शुक्रवासाः ।
 विश्वस्येशाना पार्थिवस्य वस्व उषो अघेह सुभगे व्युच्छ ७ ४५
 परायतीनाम्वेति पार्थ आयतीनां प्रथमा शश्वतीनाम् ।
 व्युच्छन्ती जीवमुदीरय—न्त्युषा मृतं कं चन बोधयन्ती ८
 उषो यदुभि सभिर्धे चकर्थ वि यदावश्वशसा सूर्यस्य ।
 यन्मातृपान् युक्ष्यमाणौ अजीग—स्तद् देवेषु चकृषे भद्रमम्रः ९
 क्रियात्या यत् समया भवति या व्युष्ट्याश्च नूनं व्युच्छान् ।
 अनु पूर्वाः कृपते वावशाना प्रदीध्याना जोषमन्याभिरेति १०
 इयुष्टे ये पूर्वतरामपश्यन् व्युच्छन्तीमुपसं मर्त्यासः ।
 अस्माभिरू नु प्रतिचक्ष्याभू—दो ते यन्ति ये अपरीष पश्यान् ११ ४९

| | | |
|--|----|----|
| यावयद् देवा ऋतपा ऋतेजाः सुम्रावरीं सूनृता ईरयन्ती । सुमङ्गलीविभ्रती देववीति—मिहाद्योषः श्रेष्ठतमा व्युच्छ | १२ | ५० |
| शश्वत् पुरोषा व्युवास देव्य—थो अद्येदं व्यावो मघोनी । अथो व्युच्छादुत्तरां अनु ह्य—नजरा मृता चरति स्वधार्भिः | १३ | |
| व्युञ्जिभिर्दिव आतास्वद्यौ—दप कृष्णां निर्णिजं देव्यावः । प्रबोधयन्त्यरुणेभिरश्वै—रोषा याति सुयुजा रथेन | १४ | |
| आवहन्ती पोष्या वार्याणि चित्रं केतुं कृणुते चेकिताना । इयुषीणामुपमा शश्वतीनां विभातीनां प्रथमोषा व्युश्चैत् | १५ | |
| उदीर्ध्व जीवो असुर्न आगा—दप प्रागात् तम् आ ज्योतिरेति । आरैक् पन्थां यातवे सूर्याया—गन्म यत्र प्रतिरन्त आयुः | १६ | |
| स्युर्मना वाच उदियति वह्निः स्तवानो रेभ उपसो विभातीः । अद्या तदुच्छ गृणते मघो—न्यस्मे आयुर्नि दिदीहि प्रजावत् | १७ | ५५ |
| या गोमतीरुपसः सर्ववीरा व्युच्छन्ति दाशुषे मर्त्याय । वायोरिव सूनृतानामुदुर्के ता अश्वदा अश्ववत् सोमसुत्वा | १८ | |
| माता देवानामदितेरनीकं यज्ञस्य केतुर्वृद्धी वि भाहि । प्रशस्तिरुद् ब्रह्मणे नो व्युच्छा नो जने जनय विश्ववारे | १९ | |
| यच्चित्रमम उपसो वहन्ती—जानाय शशमानाय भद्रम् । तन्नो मित्रो वरुणो मामहन्ता—मदितिः सिन्धुः पृथिवी उत द्यौः | २० | ५८ |

॥६॥ (ऋ० १।१२३।१-१३)

(५९-८३) कक्षावान् दैर्घतमस औशिजः । त्रिष्टुप् ।

| | | |
|--|---|----|
| पृथू रथो दक्षिणाया अयोज्यै—न देवासो अमृतासो अस्थुः । कृष्णादुदस्थादुर्याह विहाया—श्चिकित्सन्ती मानुषाय क्षयाय | १ | |
| पूर्वा विश्वस्माद् भुवनादवोधि जयन्ती वाजं बृहती सनुत्री । उच्चा व्युख्यद् युवतिः पुनर्भू—रोषा अगन् प्रथमा पूर्वहूतो | २ | |
| यदस्य भागं विभजासि नृभ्य उपो देवि मर्त्यत्रा सुजाते । देवो नो अत्र सविता दमूना अनागसो वोचति सूर्याय | ३ | |
| गृहगृहमहना यात्यच्छा दिवेदिवे अधि नामा दधाना । सिषासन्ती द्योतना शश्वदागा—दग्रमग्रमिद् मजते वसूनाम् | ४ | ६९ |

भर्गस्य स्वसा वरुणस्य जामि—रुषः घ्नते प्रथमा जर्जस्व ।
 पश्चा स दध्या यो अघस्य धाता जयेम तं दक्षिण्या रथेन ५
 उदीरतां सुनृता उत् पुरेन्धी—रुदमयः शुशुचानासो अस्थुः ।
 स्पर्हा वधनि तमसापगूळहा—विष्कृण्वन्त्युषसो विभातीः ६
 अपान्यदेत्यभ्यन्यदेति विषुरूपे अहनी सं चरेते ।
 परिक्षितोस्तमो अन्या गुहाक—रघौदुषाः शोशुचता रथेन ७ ६५
 सदशीरघ सदशीरिदु श्वो दीर्घं संचन्ते वरुणस्य धाम ।
 अनवद्यास्त्रिशतं योजना—न्येकैका क्रतुं परि यन्ति सद्यः ८
 जानत्यहः प्रथमस्य नाम शुक्रा कुष्णादजनिष्ट श्वितीची ।
 ऋतस्य योषा न मिनाति धामा—हरहर्निष्कृतमाचरन्ती ९
 कन्येव तन्वाद्दे शशदानां एषिं देवि देवमियक्षमाणम् ।
 संस्मर्यमाना युवतिः पुरस्ता—द्राविर्वक्षांसि कृणुषे विभाती १०
 सुसंकाशा मातृमृष्टेव योषा—विस्तन्वं कृणुषे दृशे कम् ।
 भद्रा त्वष्टुषो वितुरं व्युच्छ न तत् ते अन्या उषसो नशन्त ११
 अश्वावतीर्गोमतीर्विश्ववारा यतमाना रश्मिभिः सूर्यस्य ।
 परां च यन्ति पुनरा च यन्ति भद्रा नाम वहमाना उषासः १२ ७०
 ऋतस्य रश्मिमनुयच्छमाना भद्रंभद्रं क्रतुमस्मासु धेहि ।
 उषो नो अद्य सुहवा व्युच्छा—स्मासु रायो मववत्सु च स्युः १३

॥७॥ (ऋ० १।१२४।१-१३)

उषा उच्छन्ती समिधाने अग्रा उद्यन्त्यस्य उर्विया ज्योतिरश्नेत् ।
 देवो नो अत्र सविता न्वर्थं प्रासावीद् द्विपत् प्र चतुष्पदित्यै १
 अभिनती दैव्यानि व्रतानि प्रमिनती मनुष्या युगानि ।
 ईयुषीणामुपमा शश्वतीना—मायतीनां प्रथमोषा व्यधौत् २
 एषा दिवो दुहिता प्रत्यदर्शि ज्योतिर्वसाना समना पुरस्तात् ।
 ऋतस्य पन्थामन्वेति साधु प्रजानतीव न दिशो मिनाति ३
 उषो अदर्शि शुन्ध्यवो न वक्षो नोधा इवाविरक्त प्रियाणि ।
 अयसज संसृतो बोधयन्ती शश्वत्तमागात् पुनरेयुषीणाम् ४ ७५

| | | |
|---------------------------------|--------------------------------|-------|
| पूर्वे अर्धे रजसां अप्स्यस्य | गवां जनित्र्यकृत प्र केतुम् । | |
| व्यु प्रथते वितरं वरीय ओ | भा पुणन्तीं पित्रोरुपस्था | ५ |
| एषेदेवा पुरुतमां दृशे कं | नाजामिं न परि वृणक्ति जामिम् । | |
| अरेपसां तन्वाइ शशदाना | नार्भादीषते न महो विभाती | ६ |
| अभ्रातेव पुंस एति प्रतीची | गर्तारुगिव सनये धनानाम् । | |
| जायेव पत्यं उशती सुवासां | उषा इसेव नि रिणीते अप्सः | ७ |
| स्वसा स्वसे ज्यायस्यै योनिमारै | गपैत्यस्याः प्रतिचक्ष्यैव । | |
| व्युच्छन्तीं रश्मिभिः सूर्यस्या | व्यज्यङ्क्ते समनगा इव ब्राः | ८ |
| आसां पूर्वासां महसु स्वसृणा | मपरा पूर्वाभ्येति पश्चात् । | |
| ताः प्रलवन्नव्यसीर्नूनमसौ | रेवदुच्छन्तु सुदिना उपासः | ९ ८० |
| प्र बोधयोषः पृणतो मघो | न्यबुध्यमानाः पृणयः ससन्तु । | |
| रेवदुच्छ मघवद्भ्यो मघोनि | रेवत् स्तोत्रे स्रुते जारयन्ती | १० |
| अवेगमश्चैद् युवतिः पुरस्ताद् | युङ्क्ते गवामरुणानामनीकम् । | |
| वि नूनमुच्छादसति प्र केतु | गृह्णन्तु पतिष्ठाते अग्निः | ११ |
| उत् ते वयश्चिद् वसतेरपसन् | नरश्च ये पितुभाजो व्युष्टौ । | |
| अमा सते बहसि भूरिं वाम | मुषो देवि दाशुषे मर्त्याय | १२ |
| अस्तोद्वं स्तोम्या ब्रह्मणा मे | ऽवीवृधध्वमुशतीरुपासः । | |
| युष्माकं देवीरवसा सनेम | सहस्रिणं च श्रितिनं च वाजम् | १३ ८४ |

॥८॥ (ऋ० ३।६।१-७)

(८५-९१) गाथिनो विश्वामित्रः । त्रिष्टुप् ।

| | | |
|------------------------------|----------------------------------|------|
| उषो वाजेन वाजिनि प्रचेताः | स्तोमं जुषस्व गृणतो मघोनि । | |
| पुराणी देवि युवतिः पुरंधि | रनु ब्रतं चरसि विश्ववारे | १ |
| उषो देव्यमर्त्या वि भाहि | चन्द्ररथा स्रुता इरयन्ती । | |
| आ त्वा बहन्तु सुयमांसो अश्वा | हिरण्यवर्णा पृथुपाजंसो ये | २ |
| उषः प्रतीची भुवनानि विश्वो | र्वा तिम्रस्यमृतस्य केतुः । | |
| समानमर्थं चरणीयमाना | चक्रमिव नव्यस्या ववृत्स्व | ३ |
| अव स्यूमेव चिन्वती मघो | न्यषा याति स्वसरस्य पत्नी । | |
| स्वर्जर्जन्ती सुमगा सुदंसा | आन्ताद् द्विवः पप्रथ आ पृथिव्याः | ४ ८८ |

अच्छा वो देवीमुषसं विभातीं प्र वो भरध्वं नमसा सुवृक्तिम् ।
 ऊर्ध्वं मधुधा दिवि पाजो अश्रेत् प्र रोचना रुरुचे रण्वसैदक्
 ऋतावरी दिवो अर्कैरबो—ध्या रेवती रोदसी चित्रमस्थात् ।
 आयतीमघ उषसं विभातीं वाममेषि द्रविणं भिक्षमाणः
 ऋतस्य बुध उषसामिषण्यन् वृषा मही रोदसी आ विवेश ।
 मही मित्रस्य वरुणस्य माया चन्द्रेव भानुं वि दधे पुरुत्रा

५

६

७

९१

॥९॥ (ऋ० ४।५।१२-११)

(९२-१०९) वामदेवो गौतमः । त्रिष्टुप् ।

इदमु त्यत् पुरुतमं पुरस्ता—ज्ज्योतिस्तमसो वयुनावदस्थात् ।
 नूनं दिवो दुहितरो विभाती—गातुं कृणवन्नुषसो जनाय
 अस्थुरु चित्रा उषसः पुरस्ता—न्मिता इव स्वरवोऽध्वरेषु ।
 व्युं व्रजस्य तमसो द्वारो—च्छन्तीरव्रच्छुचयः पावकाः
 उच्छन्तीरद्य चितयन्त भोजान् राधोदेयायोषसो मघोनीः ।
 अचित्रे अन्तः पणयः सप्त—न्त्वबुध्यमानास्तमसो विमध्ये
 कुवित स देवीः सनयो नवो वा यामो बभूयादुषसो वो अद्य ।
 येना नवगवे अङ्गिरे दशगवे सप्तास्ये रेवती रेवदुष
 यूयं हि देवीर्ऋतयुग्भिरश्वैः परिप्रयाथ शुर्वनानि सद्यः ।
 प्रबोधयन्तीरुषसः ससन्तं द्विपाक्षतुष्पाक्षरथाय जीवम्
 कं स्विदासां कतमा पुराणी यया विधाना विदधुर्ऋभूणाम् ।
 शुभं यच्छुभ्रा उपसश्वरन्ति न वि ज्ञायन्ते सदशीरजुर्याः
 ता घा ता भद्रा उषसः पुरासु—रभिष्टिद्युम्ना ऋतजातसत्याः ।
 यास्वीजानः शशमान उक्थैः स्तुवच्छंसन् द्रविणं सद्य आप
 ता आ चरन्ति समना पुरस्तात् समानतः समना पप्रथानाः ।
 ऋतस्य देवीः सदसो बुधाना गवां न सर्गी उषसो जरन्ते
 ता इक्ष्वेक्षुव समना समानी—रमीतवर्णा उषसश्वरन्ति ।
 गूहन्तीरभ्वमसितं रुशद्भिः शुक्रास्तनूभिः शुचयो रुचानाः
 रयिं दिवो दुहितरो विभातीः प्रजावन्तं यच्छतास्मासु देवीः ।
 स्योनादा वः प्रतिबुध्यमानाः सुवीर्यस्य पतयः स्याम

१

२

३

४

९५

५

६

७

८

९

१०

१०१

तद् वो दिवो दुहितरो विभाती—रुपं ब्रुव उपसो यज्ञकैतुः ।
वयं स्याम युञ्जसो जनेषु तद् द्यौश्च धृतां पृथिवी च देवी

११

॥१०॥ (ऋ० ४।५२।१-७) गायत्री ।

प्रति ष्या सूनरी जनीं व्युच्छन्ती परि स्वसुः । दिवो अदशि दुहिता
अश्वेव चित्रारुषी माता गवामृतावरी । सखाभूदुश्विनोरुषाः
उत सखास्यश्विनो—रुत माता गवामसि । उतोषो वस्व ईशिषे
यावयद् द्वेषसं त्वा चिकित्वित् सूनृतावारि । प्रति स्तोमैरभुत्स्महि
प्रति भद्रा अदक्षत गवां सर्गा न रश्मयः । ओषा अप्रा उरु जयः
आपमुषी विभावरी व्यावर्ज्योतिषा तमः । उषो अनु स्वधामव
आ द्यां तनोषि रश्मिभि—रान्तरिक्षमुरु प्रियम् । उषः शुक्रेण शोचिषा

१

२

३

१०९

४

५

६

७

॥११॥ (ऋ० ५।७९।१-१०)

(११०-१२५) सत्यश्रवा आत्रेयः । पङ्क्तिः ।

महे नो अद्य बोधयो—षो राये दिवित्मती ।

यथा चिन्नो अवोधयः सत्यश्रवसि वाय्ये सुजाते अश्वसूनृते

१

११०

या सुनीथे शौचद्रथे व्यौच्छो दुहितर्दिवः ।

सा व्युच्छ सहीयसि सत्यश्रवसि वाय्ये सुजाते अश्वसूनृते

२

सा नो अधाभरद्वसु—व्युच्छा दुहितर्दिवः ।

यो व्यौच्छः सहीयसि सत्यश्रवसि वाय्ये सुजाते अश्वसूनृते

३

अभि ये त्वा विभावरी स्तोमैर्गृणन्ति वद्वयः ।

मघैर्मघोनि सुश्रियो दामन्वन्तः सुरातयः सुजाते अश्वसूनृते

४

यच्चिद्धि ते गुणा इमे हृदयन्ति मघत्तये ।

परि चिद् वष्टयो दधु—र्ददतो राधो अहयं सुजाते अश्वसूनृते

५

एषु धा वीरवद् यश उषो मघोनि सूरिषु ।

ये नो राधांस्यहया मघवानो अरासत सुजाते अश्वसूनृते

६

११५

तेभ्यो द्युम्नं बृहद् यश उषो मघोन्या वह ।

ये नो राधांस्यहया गव्या भजन्त सूरयः सुजाते अश्वसूनृते

७

उत नो गोर्मतीरिष आ वह्ना दुहितर्दिवः ।

साकं सूर्यस्य रश्मिभिः शुक्रैः शोचद्भिरर्चिभिः सुजाते अश्वसूनृते

८

११७

दे० [उषा] १

व्युच्छा दुहितर्दिवो मा चिरं तनुथा अपः ।

नेत् त्वा स्तेनं यथा रिपुं तपाति सूरौ अर्चिषा सुजाते अश्वसूनृते ९

एतावद् वेदेषस्त्वं भूयो वा दातुमर्हसि ।

या स्तोतृभ्यो विभावर्युच्छन्ती न प्रमीयसे सुजाते अश्वसूनृते १०

॥१२॥ (ऋ० ५।८०।१-६) त्रिष्टुप् ।

द्युतर्धामानं बृहतीमृतेन ऋतावरीमरुणप्सुं विभातीम् ।

देवीमुषसं स्वरावहन्तीं प्रति विप्रांसो मतिभिर्जरन्ते १ १२०

एषा जनं दर्शता बोधयन्ती सुगान् पथः कृण्वती यात्यग्रे ।

बृहद्रथा बृहती विश्वमिन्वोषा ज्योतिर्यच्छत्यग्रे अह्वाम् २

एषा गोभिररुणेभिर्युजाना ऽस्तेधन्ती रयिमप्रायु चक्रे ।

पथो रदन्ती सुविताय देवी पुरुष्टुता विश्ववारा वि भाति ३

एषा व्येनी भवति द्विबर्ही आविष्कृण्वाना तन्वं पुरस्तात् ।

ऋतस्य पन्थामन्वेति साधु प्रजानतीव न दिशो मिनाति ४

एषा शुभ्रा न तन्वो विदानो ध्वेवं स्नाती दृश्ये नो अस्थात् ।

अप द्वेषो बाधमाना तमांस्युषा दिवो दुहिता ज्योतिषागात् ५

एषा प्रतीची दुहिता दिवो नृन् योषेव भद्रा नि रिणीति अप्सः ।

व्यूष्वती दाशुषे वार्याणि पुनर्ज्योतिर्युवतिः पूर्वथाकः ६ १२५

॥१३॥ (ऋ० ६।६४।१-६)

(१२६-१३७) भरद्वाजो बार्हस्पत्यः । त्रिष्टुप् ।

उदु श्रिय उषसो रोचमाना अस्थुरपां नोर्मयो रुशन्तः ।

कृणोति विश्वा सुपथा सुगा न्यभूद वस्वी दक्षिणा मघोनी १

भद्रा ददृक्ष उर्विया वि भास्युत् ते शोचिर्भानवो द्यामपसन् ।

आविर्वक्षः कृणुषे शुम्भमानोषो देवि रोचमाना महोभिः २

वहन्ति सीमरुणासो रुशन्तो गावः सुभगांमुर्विया प्रथानाम् ।

अपेजते शूरो अस्तेव शत्रून् बाधते तमो अजिरो न वोळ्हा ३

सुगोत ते सुपथा पर्वतेष्ववाते अपस्तरसि स्वभानो ।

सा न आ वह पृथुयामनृष्वे रयि दिवो दुहितरिष्यध्वै ४ १२९

सा वह् योक्षभिरवातो—षो वरं वहसि जोषमनु ।
 त्वं दिवो दुहितर्या ह देवी पूर्वहूतौ मंहना दर्शता भूः
 उत् ते वर्यश्चिद् वसतेरपमन् नरश्च ये पितुभाजो व्युष्टौ ।
 अमा सते वहसि भूरि वाम—मुषो देवि दाशुषे मर्त्याय

५ १३०

६

॥१४॥ (ऋ० ६।६५।१-६)

एषा स्या नो दुहिता दिवोजाः क्षितीरुच्छन्ती मानुषीरजीगः ।
 या भानुना रुशता राम्या—स्वज्ञायि तिरस्तमसश्चिदुक्तून्
 वि तद् ययुररुणयुग्भिरश्चै—श्चित्रं भान्त्युषसश्चन्द्ररथाः ।
 अग्रं यज्ञस्य बृहतो नयन्ती—विं ता बाधन्ते तम ऊर्म्यायाः
 श्रवो वाजभिषमूर्जं वहन्ती—निं दाशुषं उषसो मर्त्याय ।
 मघोनीवीरवत् पत्यमाना अवो धात विधते रत्नमद्य
 इदा हि वो विधते रत्नमस्ती—दा वीराय दाशुषं उषासः ।
 इदा विप्राय जरते यदुक्था नि ष्म मावते वहथा पुरा चित्
 इदा हि तं उषो अद्रिसानो गोत्रा गवामाङ्गिरसो गृणान्ति ।
 व्युर्केण विभिदुर्ब्रह्मणा च सत्या नृणामभवद् देवहूतिः
 उच्छा दिवो दुहितः प्रत्नवन्नो भरद्वाजवद् विधते मघोनि ।
 सुवीरं रयिं गृणते रिरीह्य—रुगायमधि धेहि श्रवो नः

१

२

३

४ १३५

५

६

॥१५॥ (ऋ० ७।४१।७)

(१३८-१७८) मैत्रावरुणिर्वसिष्ठः । त्रिष्टुप् ।

अश्वावतीर्गोमतीर्न उपासो वीरवतीः सदमुच्छन्तु भद्राः ।
 घृतं दुहाना विश्वतः प्रपीता यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः

७

॥१६॥ (ऋ० ७।७५।१-८)

व्युष्टा आवो दिविजा ऋतेना—ऽऽविष्कृण्वाना महिमानमागात् ।
 अप द्रुहस्तम आवरजुष्ट—मङ्गिरस्तमा पथ्या अजीगः
 महे नो अद्य सुविताय वो—ध्युषो महे सौभगाय प्र यन्धि ।
 चित्रं रयिं यज्ञसं धेह्यस्मे देवि मर्तेषु मानुषि श्रवस्युम्
 एते त्ये भानवो दर्शताया—श्चित्रा उषसो अमृतास आगुः ।
 जनयन्तो दैव्यानि व्रतान्या—पृणन्तो अन्तरिक्षा व्यंस्थुः

१

२

३ १४१

एषा स्या युञ्जाना पराकात् पञ्च क्षितीः परि सद्यो जिगाति ।
 अभिपश्यन्ती वयुना जनानां दिवो दुहिता भुवनस्य पत्नी
 वाजिनीवती सूर्यस्य योषा चित्रामवा राय ईशे वसूनाम् ।
 ऋषिष्टुता जरयन्ती मघो न्युषा उच्छति वह्निभिर्गृणाना
 प्रति द्युतानामरुषासो अश्वाश्चित्रा अदृश्रन्नुषसं वहन्तः ।
 यार्ति शुभ्रा विश्वपिशा रथेन दधाति रत्नं विधत्ते जनाय
 सत्या सत्येभिर्महती महद्भिर्देवी देवेभिर्यजता यजत्रैः ।
 रुजद् दृढहानि दददुस्त्रियाणां प्रति गावं उषसं वावशन्त
 नू नो गोमद वीरवद् धेहि रत्नमुषो अश्ववत् पुरुभोजो अस्मे ।
 मा नो बर्हिः पुरुषता निदे कयूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः

॥१७॥ (ऋ० ७।७६।१-७)

उदु ज्योतिरमृतं विश्वजन्यं विश्वानरः सविता देवो अश्रेत् ।
 क्रत्वा देवानामजनिष्ट चक्षुः राविरकर्भुवनं विश्वमुषाः
 प्र मे पन्था देवयानां अदृश्रन्नमर्धन्तो वसुभिरिष्कृतासः ।
 अभूदु केतुरुपसः पुरस्तात् प्रतीच्यागादधि हर्म्येभ्यः
 तानीदहानि बहुलान्यासन् या प्राचीनमुदिता सूर्यस्य ।
 यतः परि जार इवाचरन्त्युषो ददृक्षे न पुनर्यतीव
 त इद् देवानां सधमाद आसन्नतावानः कवयः पूर्यासं ।
 गूळहं ज्योतिः पितरो अन्वविन्दन्त्यत्यमन्त्रा अजनयन्नुषासम्
 समान ऊर्वे अधि संगतासः सं जानते न यतन्ते मिथस्ते ।
 ते देवानां न मिनन्ति व्रतान्यमर्धन्तो वसुभिर्यादमानाः
 प्रति त्वा स्तोमैरीकते वसिष्ठा उषर्वुधः सुभगे तुष्टुवांसः ।
 गवां नेत्री वाजपत्नी न उच्छोषः सुजाते प्रथमा जरस्व
 एषा नेत्री राधसः सुनृतांनामुषा उच्छन्ती रिभ्यते वसिष्ठैः ।
 दीर्घश्रुतं रयिमस्मे दधाना यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः

॥१८॥ (ऋ० ७।७७।१-६)

उषो रुरुचे युवतिर्न योषा विश्वं जीवं प्रसुवन्ती चरायै ।
 अभूदुभिः समिधे मातृषाणां मकुज्योतिर्बाधमाना तमांसि

४

५

६

७ १४५

८

१

२

३

४ १५०

५

६

७

१ १५४

विश्वं प्रतीची सप्रथा उदस्थाद् रुशद् वासो विभ्रती शुक्रमश्नैत् ।
 हिरण्यवर्णा सुदशीकसदृग् गवां माता नेत्र्यहामरोचि
 देवानां चक्षुः सुभगा वहन्ती श्वेतं नयन्ती सुदशीकमश्वम् ।
 उषा अदर्शि रश्मिभिर्व्यक्ता चित्रामघा विश्वमनु प्रभूता
 अन्तिवामा दूरे अमित्रमुच्छोर्वी गव्यूतिमभयं कृषी नः ।
 यावय द्वेष आ भरा वसूनि चोदय राधो गृणते मघोनि
 अस्मे श्रेष्ठैर्भिर्भानुभिर्वि भाह्युषो देवि प्रतिरन्ती न आयुः ।
 त्वं च नो दधती विश्ववारे गोमदश्वावद् रथवच्च राधः
 गां त्वां दिवो दुहितवर्धयन्त्युषः सुजाते मतिभिर्वसिष्ठाः ।
 सास्मासु धा रयिमध्वं बृहन्तं यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः

५ दीप्तिम्

॥१९॥ (ऋ० ७।७८।१-५)

प्रति केतवः प्रथमा अदृश्रन्नुर्ध्वा अस्या अञ्जयो वि श्रयन्ते ।
 उषो अर्वाचा बृहता रथेन ज्योतिष्मता वाममस्मभ्यं वक्षि
 प्रति पीमग्निर्जरते समिद्धः प्रति विप्रासो मतिभिर्गुणन्तः ।
 उषा याति ज्योतिषा बाधमाना विश्वा तमांसि दुरिताप देवी
 एता उ त्याः प्रत्यदृशन् पुरस्ताज्ज्योतिर्यच्छन्तीरुषसो विभाती
 अजीजनन्त्सूर्यं यज्ञमग्निं मपाचीनं तमो अगादजुष्टम्
 अचेति दिवो दुहिता मघोनी विश्वं पश्यन्त्युषसं विभातीम् ।
 आस्थाद् रथं स्वधया युज्यमानमा यमश्वासः सुयुजो वहन्ति
 प्रति त्वाद्य सुमनसो बुधन्ताऽस्माकांसो मघवानो वयं च ।
 तिल्विलायध्वमुपसो विभातीर्युयं पात स्वस्तिभिः सदा नः

इत्त १ २२-२१

॥२०॥ (ऋ० ७।७९।१-५)

व्युषा आवः पथ्याइ जनानां पञ्च क्षितीर्मानुषीर्वोधयन्ती ।
 सुसंहग्भिरुक्षभिर्भानुमश्रेद् वि सूर्यो रोदसी चक्षसावः
 व्यञ्जते दिवो अन्तेष्वक्तून् विशो न युक्ता उषसो यतन्ते ।
 सं ते गावस्तम आ वर्तयन्ति ज्योतिर्यच्छन्ति सवितेव बाहू
 अभृदुषा इन्द्रतमा मघो न्यजीजनत् सुविताय श्रवांसि ।
 वि दिवो देवी दुहिता दधात्यङ्गिरस्तमा सुकृते वसूनि

तावदुषो राधो अस्मभ्यं रास्व यावत् स्तोतृभ्यो अरदो गृणाना ।

यां त्वा जजुर्वेषभस्या रवेण वि दृळ्हस्य दुरो अद्रेरौणोः ४

देवंदेवं राधसे चोदयन्त्यस्मभ्यक् सूनृता ईरयन्ती ।

व्युच्छन्ती नः सनये धियो धा यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ५

॥२१॥ (ऋ० ७।८०।१-३)

प्रति स्तोमेभिरुषसं वसिष्ठा गीर्भिर्विप्रांसः प्रथमा अबुधन् ।

विवर्तयन्तीं रजसी समन्ते आविष्कृण्वतीं भुवनानि विश्वा १ १७०

एषा स्या नव्यमायुर्दधाना गूढी तमो ज्योतिषोषा अबोधि ।

अग्र एति युवतिरह्याणा प्राचिकितत् सूर्यं यज्ञमग्निम् २

अश्वावतीर्गोमतीर्न उषासो वीरवतीः सदमुच्छन्तु भद्राः ।

घृतं दुहाना विश्वतः प्रपीत यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ३

॥२२॥ (ऋ० ७।८१।१-६) प्रगाथः = (विषमा बृहती+समा सतोबृहती) ।

प्रत्यु अदश्यायत्युच्छन्तीं दुहिता दिवः ।

अपो महि व्ययति चक्षसे तमो ज्योतिष्कृणोति सूनरीं १

उदुस्त्रियाः सृजते सूर्यः सचौ उद्यन्नक्षत्रमर्चिवत् ।

तवेदुषो व्युषि सूर्यस्य च सं भक्तेनं गमेमहि २

प्रति त्वा दुहितर्दिव उपो जीरा अभुत्समहि ।

या वहसि पुरु स्पार्ह वनन्वति रत्नं न दाशुषे मयः ३ १७५

उच्छन्ती या कृणोषि मंहना महि प्ररुयै देवि स्वर्दशे ।

तस्यास्ते रत्नभाज ईमहे वयं स्याम मातुर्न सूनवः ४

तच्चित्रं राध आ भरोपो यद् दीर्घश्रुत्तमम् ।

यत् ते दिवो दुहितर्मतेभोजनं तद् रास्व भुनजामहै ५

श्रवः सूरिभ्यो अमृतं वसुत्वनं वाजो अस्मभ्यं गोमतः ।

चोदयित्री मघोनः सूनृतावत्युषा उच्छदप सिधः ६

॥२३॥ (ऋ० ८।१०१।१३)

(१७९) जमदग्निर्भागवः । उषाः सूर्यप्रभा वा । बृहती ।

इयं या नीच्यकिणीं रूपा रोहिण्या कृता ।

चित्रेव प्रत्यदश्यायत्युच्छन्तर्दशसु बाहुषु १३ १७९

जन्नीयेन तेजसा ॥२४॥ (ऋ० १०।१७२।१-४)
(१८०-१८३) संवर्त आङ्गिरसः। द्विपदा विराट् ।

आ याहि वनसा सह गावः सचन्त वर्तनि यद्वाभिः १ १८०
आ याहि वस्व्या धिया मंहिष्ठो जार्यन्मखः सुदानुभिः २
पितुभृतो न तन्तुमित् सुदानवः प्रति दध्मो यजामसि ३
उषा अप स्वसुस्तमः सं वर्तयति वर्तनि सुजातता ४

॥२५॥ (१८४) (वा० य० १२।४३)

संज्ञानमसि कामधरणं मयि ते कामधरणं भूयात् ।
अग्नेर्भस्मास्यग्नेः पुरीषमसि चितं स्थ परिचितं ऊर्ध्वचितं श्रयध्वम् ४६ १८४

॥२६॥ (साम० ३०३, ७५१) +
(१८५-१८६) वसिष्ठो मैत्रावरुणिः । बृहती ।

प्रत्यु अदर्श्यायत्यूर्च्छन्ती दुहिता दिवः ।
अपो मही वृणुते चक्षुषा तमो ज्योतिष्कृणोति सूनरी २०३

॥२७॥ (अथर्व० १९।१२।१)
वसिष्ठः । त्रिष्टुप् ।

उषा अप स्वसुस्तमः सं वर्तयति वर्तनि सुजातता ।
अया वाजं देवहितं सनेम मदेम शतहिमाः सुवीराः १ १८५

उषा-सहचारी देवगणः ।

(१) आदित्योषसः । (दुःष्वप्पञ्चमम्)

॥२८॥ (ऋ० ८।४७।१४-१८)
(१८७-१९१) त्रित आप्त्यः । महापङ्क्तिः ।

यच्च गोषु दुःष्वप्यं यच्चास्मे दुहितर्दिवः ।
त्रिताय तद् विभावया—प्त्याय परा वहा—नेहसौ व ऊतयः सुऊतयो व ऊतयः १४
निष्कं वा धि कृणवते स्रजं वा दुहितर्दिवः ।
त्रिते दुःष्वप्यं सर्वं—माप्त्ये परि दद्यस्य—नेहसौ व ऊतयः सुऊतयो व ऊतयः १५
तदभाय तदपसे तं भागमुपसेदुषे ।
त्रिताय च द्विताय चो—षौ दुःष्वप्यं वहा—नेहसौ व ऊतयः सुऊतयो व ऊतयः १६ १८९

यथा कलां यथा शफं यथ ऋणं संनयामसि ।

एवा दुःष्वप्यं सर्वं—माप्ये संनयामस्य—नेहसो व ऊतयः सुऊतयो व ऊतयः १७ १९०

अजैष्माद्यासनाम् चा—भुमानागसो वयम् ।

उषो यस्माद् दुःष्वप्या—दभैष्माप तर्दुच्छत्व—नेहसो व ऊतयः

सुऊतयो व ऊतयः

१८

(२) उषासानक्ता ।*

॥२९॥ (१९२-१९४) (वा० य० २०।४१)

उषासानक्ता बृहती बृहन्तं पर्यस्वती सुदुधे शूरमिन्द्रम् ।

तन्तुं तत् पेशसा संवर्यन्ती देवानां देवं यजतः सुरुक्मे

४१

॥३०॥ (वा० य० २८।१४, ३७)

देवी उषासानक्तेन्द्रं यज्ञे प्रयत्यहेताम् ।

दैवीर्विशः प्रायासिष्टा × सुप्रीते सुधिते वसुवने वसुधेयस्य वीतां यज

१४

देवी उषासानक्ता देवमिन्द्रं वयोधसं देवी देवमवर्धताम् ।

अनुष्टुभा छन्दसेन्द्रियं बलमिन्द्रे वयो दधद् वसुवने वसुधेयस्य वीतां यज

३७ १९४



* वै० (अमिः) [आप्रासिक्तानि] १९११; १९२४; १९३६; १९४७; १९५८; १९६९; १९७९; १९८६; १९९७; २००८; २०१९; २०३१; २०४२; २०८९; २१११; २१२३;

उषादेवता-पुनरुक्त-मन्त्रभागाः ।

ऋग्वेदस्य प्रथमं मण्डलम् ।

- [२] १।३०।२१ (शुनःशेष आजीगर्तिः । उषाः)
अश्वे न चित्रे अरुषि ।
(१०४) ४।५२।१ (वामदेवो गौतमः । उषाः)
अश्वेव चित्रारुषी ।
- [३] १।३०।२२ (शुनःशेष आजीगर्तिः । उषाः)
अस्मे रथि नि धारय ।
(इन्द्रः २४८८) १०।२४।१ (विमद ऐन्द्रः प्राजापत्यो वा,
वसुकृद्वा वासुकः । इन्द्रः)
.....धारय वि वो मदे ।
- [४] १।४८।१ (प्रस्कण्वः काण्वः । उषाः)
व्युच्छा दुहितर्दिवः ।
(११२) ५।७९।३ = (११८) ५।७९।९ (सत्यश्रवा
आत्रेयः । उषाः)
- [५] १।४८।२ (प्रस्कण्वः काण्वः । उषाः)
चोद राधो मघोनाम् ।
(आयुर्वेद० १०७९) ७।९६।२ (मैत्रावरुणिर्वसिष्ठः ।
सरस्वती)
- [११] १।४८।८ (प्रस्कण्वः काण्वः । उषाः)
चक्षसे जगज्ज्योतिष्कृणोति सूनरी ।
अप...दुहिता दिव उषा उच्छदप स्निधः ।
(१७३) ७।८१।१ (मैत्रावरुणिर्वसिष्ठः । उषाः)
.....दुहिता दिवः ।
अपो...चक्षसे तमो ज्योतिष्कृणोति सूनरी ।
(१७८) ७।८१।६ (मैत्रावरुणिर्वसिष्ठः । उषाः)
उषा उच्छदप स्निधः ।
- [१६] १।४८।१३ (प्रस्कण्वः काण्वः । उषाः)
प्रति भद्रा अदक्षत ।
(१०७) ४।५१।५ (वामदेवो गौतमः । उषाः)
- [१७] १।४८।१४ (प्रस्कण्वः काण्वः । उषाः)
ये चिद्धि त्वाभृषयः पूर्वं ऊतये जुहुरेऽवसे महि ।
सानः स्तोमो अभि गृणीहि राधसोषा शुक्लेण
शोचिषा ॥
(अश्विनौ ४२६) ८।८।६ (सध्वंसः काण्वः । अश्विनौ)
यच्चिद्धि वां पुर ऋषयो जुहुरेऽवसे नरा ।
आ यातमश्विना गतमुपेमां सुष्टुतिं मम ।
दे० [उषा] ३

- (१०९) ४।५२।७ (वामदेवो गौतमः । उषाः)
उषः शुक्लेण शोचिषा ।
(अश्विनौ ४१३) ८।५।३० (ब्रह्मातिथि काण्वः । अश्विनौ)
उपेमां सुष्टुतिं मम ।
(अश्विनौ ५३०-५३२) ८।३५।२२-२४ (श्यावाश्व
आत्रेयः । अश्विनौ)
आ यातमश्विना गतम् ।
- [१८] १।४८।१५ प्रस्कण्वः काण्वः । उषाः)
प्र नो यच्छतादवृक्तं पृथु च्छर्दिः ।
(अश्विनौ ४४४) ८।९।१ (शशकर्णः काण्वः । अश्विनौ)
प्रारमै यच्छतमवृक्तं पृथु च्छर्दिः ।
- [२०] १।४९।१ (प्रस्कण्वः काण्वः । उषाः)
दिवश्चिद् रोचनादधि ।
(मरुतः २७५) ५।५६।१ (श्यावाश्व आत्रेयः । मरुतः)
(अश्विनौ ४२७) ८।८।७ (सध्वंसः काण्वः । अश्विनौ)
- [२३] १।४९।४ (प्रस्कण्वः काण्वः । उषाः)
विश्वमाभाति रोचनम् ।
१।५०।४ (प्रस्कण्वः काण्वः । सूर्यः)
विश्वमा भाति — ।
(इन्द्रः १४०३) ३।४४।४ (गाथिनो विश्वामित्रः । इन्द्रः)
विश्वमा भाति रोचनम् ।
- [२६] १।९२।३ (गोतमो राहूगणः । उषाः)
इषं वहन्तीः सुकृते सुदानवे ।
(अश्विनौ ४६) १।४७।८ (प्रस्कण्वः काण्वः । अश्विनौ)
इषं पृथ्वन्ता सुकृते सुदानवे ।
- [२७] १।९।२४ (गोतमो राहूगणः । उषाः)
ज्योतिर्विश्वस्मै भुवनाय कृण्वती ।
(अग्निः ७४६) ४।१४।२ (वामदेवो गौतमः । अग्निः)
— — कृण्वन् ।
- [२९] १।९२।६ (गोतमो राहूगणः । उषाः)
अतारिष्म तमसस्परमस्य ।
(अश्विनौ २०७) १।१८।३।६ = (अश्विनौ २१३) १।१८।४।६

- (अगस्त्यो मैत्रावरुणिः । अश्विनौ)
 अतारिष्म तमसस्वारमस्य प्रति वां स्तोमो ।
 (अश्विनौ ३७३) ७।७३।१ (मैत्रावरुणिर्वसिष्ठः । अश्विनौ)
 अतारिष्म तमसस्वारमस्य प्रति स्तोमं ।
 [३०] १।९२।७ (गेतमो राहूगणः । उषाः)
 भास्वती नेत्री सूनृतानाम् ।
 (४२) १।१२३।४ (कुत्स आङ्गिरसः । उषाः)
 [३४] १।९२।११ (गेतमो राहूगणः । उषाः)
 प्रमिनती मनुष्या युगानि ।
 [३५] १।९२।१२ (गेतमो राहूगणः । उषाः)
 अमिनती देव्यानि व्रतानि ।
 (७३) १।१२४।२ (कक्षीवान् दैर्घतमस औशजः । उषाः)
 अमिनती देव्यानि व्रतानि प्रमिनती मनुष्या
 युगानि ।
 [३६] १।९२।१३ (गेतमो राहूगणः । उषाः)
 उपस्तच्चित्रमा भरास्मभ्यं वाजिनीवति ।
 येन तोकं च तनयं च धामहे ।
 ४।५।५।९ (वामदेवो गौतमः । विश्वे देवाः)
 उपो मघोन्या वह ।
 अस्मभ्यं वाजिनीवति ।
 (सोमः ६६१) ९।७४।५ (कक्षीवान् दैर्घतमस औशजः ।
 पवमानः सोमः)
 येन तोकं च तनयं च धामहे ।
 [४२] १।१२३।४=(३०) १।९२।७
 [४२-४४] १।१२३।४-६ (कुत्स आङ्गिरसः । उषाः)
 उषा भजीगमुंवनानि विश्वा ।
 [४५] १।१२३।७ (कुत्स आङ्गिरसः । उषाः)
 पृषा दिवो दुहिता प्रत्यदर्शिः..... शुक्रवासाः ।
 उपो भघेह सुभगे व्युच्छ ।
 (७४) १।१२४।३ (कक्षीवान् दैर्घतमस औशजः । उषाः)
 —प्रत्यदर्शि ज्योतिर्वसाना ।
 (७१) १।१२३।१३ (कक्षीवान् दैर्घतमस औशजः । उषाः)
 उपो नो अघ सुहवा व्युच्छ ।
 [५२] १।१२३।१४ (कुत्स आङ्गिरसः । उषाः)
 प्रबोधयन्त्यरुणेभिरत्वेरोषा याति सुयुजा रथेन ।
 (अग्निः ७४७) ४।१४।३ (वामदेवो गौतमः । अग्निः)
 प्रबोधयन्ती सुविताय देव्युषा ईयते सुयुजा रथेन ।
 [५३] १।१२३।१५ (कुत्स आङ्गिरसः । उषाः)
 ईयुषीणामुपमा शश्वतीनां विभातीनां प्रथमोषा व्यश्नैत् ।
 (७३) १।१२४।२ (कक्षीवान् दैर्घतमस औशजः । उषाः)

- ईयुषीणामुपमा शश्वतीनामायतीनां प्रथमोषा व्यश्नैत् ।
 [५४] १।१२३।१६ (कुत्स आङ्गिरसः । उषाः)
 आगन्म यत्र प्रतिरन्त आयुः ।
 (सोमः ११४५) ८।४८।११ (प्रगाथो घौरः काण्वः । सोमः)
 अगन्म — — ।
 [६३] १।१२३।५ (कक्षीवान् दैर्घतमस औशजः । उषाः)
 उषः सूनृते प्रथमा जरस्व ।
 (१५२) ७।७६।६ (मैत्रावरुणिर्वसिष्ठः । उषाः)
 उषः सुजाते प्रथमा जरस्व ।
 [७०] १।१२३।१२ (कक्षीवान् दैर्घतमस औशजः । उषाः)
 यतमाना रश्मिभिः सूर्यस्य ।
 (अग्निः ७९३) ५।४।४ (वसुश्रुत आत्रेयः । अग्निः)
 यतमानो रश्मिभिः सूर्यस्य ।
 [७१] १।१२३।१३=(४५) १।१२३।७
 [७३] १।१२४।२=(३५) १।९२।१२
 [„] १।१२४।२=(३४) १।९२।११
 [„] १।१२४।२=(५३) १।१२३।१५
 [७४] १।१२४।३=(४५) १।१२३।७
 [„] १।१२४।३ (कक्षीवान् दैर्घतमस औशजः । उषाः)
 पुरस्तात् ।
 ऋतस्य पन्थामन्वेति साधु प्रजानतीव न दिशो मिनाति ।
 (१२३) ५।८०।४ (सत्यश्रवा आत्रेयः । उषाः)
 १०।६६।१३ (वसुकर्णो वासुकः । विश्वे देवाः)
 ऋतस्य पन्थामन्वेमि साधुया ।
 [७६] १।१२४।५ (कक्षीवान् दैर्घतमस औशजः । उषाः)
 ह्यु प्रथते वितरं वरीय ।
 (अग्निः २००६) १०।१२०।४ (जमदग्निर्भार्गवः, रामो
 वा जामदग्न्यः । आप्रीसूक्तं [बर्हिः])
 [७८] १।१२४।७ (कक्षीवान् दैर्घतमस औशजः । उषाः)
 जायेव पत्य उशती सुवासाः ।
 (अग्निः ६६७) ४।३।२ (वामदेवो गौतमः । अग्निः)
 = १०।७१।४ (बृहस्पतिराङ्गिरसः । ज्ञानम्)
 (अग्निः १६६३) १०।९१।१३ (अरुणो वैतहव्यः । अग्निः)
 [„] १।१२४।७ उषा हस्त्रे नि रिणीते अप्सः ।
 (१२५) ५।८०।६ (सत्यश्रवा आत्रेयः । उषाः)
 योषेव भद्रा नि— ।
 [८१] १।१२४।१० (कक्षीवान् दैर्घतमस औशजः । उषाः)
 पृणतो मघोन्यबुध्यमानाः पणयः ससन्धु ।
 रेवदुच्छ मघवज्यो मघोनि ।
 (९४) ४।५।१३ (वामदेवो गौतमः । उषाः)

उच्छन्तीरय चितयन्त — — मघोनीः ।
अचित्रे अन्तः पणयः ससन्वबुध्यमानाः ।
[८३] १।१२४।१२ (कक्षीवान् दैर्घतमस औशिशः । उषाः)

= (१३१) ६।६४।६ (बार्हस्पत्यो भरद्वाजः । उषाः)
उत् ते वयश्चिद् वसतेरपसन् नरश्च ये पितुभाजो व्युष्टौ ।
अमा सते वहसि भूरि वाममुषो देवि दाशुपे मर्याय ॥

ऋग्वेदस्य तृतीयं मण्डलम् ।

[९१] ३।६१।७ (गाथिनो विश्वामित्रः । उषाः)
वृषा मही रोदसी आ विवेश ।

(अग्निः १६४५) १०।८०।२ (अग्निः सौवीर्यो वैश्व-
नरो वा, सतिर्वाजंभरो वा । अग्निः)
अग्निर्मही रोदसी आ विवेश ।

ऋग्वेदस्य चतुर्थं मण्डलम् ।

[९४] ४।५१।३ (वामदेवो गौतमः । उषाः)
अचित्रे अन्तः पणयः ससन्तु ।
(८१) १।१२४।१० (कक्षीवान् दैर्घतमस औशिशः । उषाः)
अबुध्यमानाः पणयः ससन्तु ।
[१०१] ४।५१।१० (वामदेवो गौतमः । उषाः)
सुवीर्यस्य पतयः स्याम ।
(इन्द्रः २११०) ६।४७।१२ (गर्गो भारद्वाजः । इन्द्रः)
(,, २७७६) १०।१३।१६ (सुकीर्तिः काक्षीवतः । इन्द्रः)
(सोमः ७९९) ९।८९।७ (उशना क.व्यः । पवमानः सोमः)

(सोमः ८३२) ९।९५।५ (प्रस्कन्वः काण्वः । पवमानः सोमः)
[१०४] ४।५२।२ (वामदेवो गौतमः । उषाः)
अश्वे चित्रारुषी ।
(२) १।३०।२१ (शुनःशेष आनीगतिः । उषाः)
अश्वे न चित्रे अरुषि ।
[१०७] ४।५२।५ (वामदेवो गौतमः । उषाः)
प्रति भद्रा भदक्षत ।
(१६) १।४८।१३ (प्रस्कन्वः काण्वः । उषाः)
[१०९] ४।५२।७ = (१७) १।४८।१४
उषः शुक्रेण शोचिषा ।

ऋग्वेदस्य पञ्चमं मण्डलम् ।

[११०-१२] ५।७९।१-३ (सत्यश्रवा आत्रेयः । उषाः)
सत्यश्रवसि वायवे सुजाते अश्वसूनुते ।
(११०-११९) ५।७९।१-१० सुजाते अश्वसूनुते
[१११] ५।७९।२ = (११२) ५।७९।३
सा (यो) व्युच्छ (व्यौच्छः) सहीयसि ।
[११२] ५।७९।३ = (११८) ५।७९।९ व्युच्छा दुहितर्दिवः ।
(४) १।४८।१ प्रस्कन्वः काण्वः । उषाः)
(१२) १।४८।९ चन्द्रेण दुहितर्दिवः ।
(२१) १।४९।२ (प्रस्कन्वः काण्वः । उषाः)
प्रावाय दुहितर्दिवः ।
(१११) ५।७९।२ व्यौच्छो दुहितर्दिवः ।
(११७) ५।७९।८ आ वहा दुहितर्दिवः ।
[११५] ५।७९।६ षेध धा वीरषद् यशः ।
(इन्द्रः १६५६) ४।३२।१२ (वामदेवो गौतमः । इन्द्रः)

[११५-१६] ५।७९।६-७ ये नो राधांस्यहृथा (७ अश्व्या)
[११६] ५।७९।७ उपो मघोन्वा वह ।
४।५५।९ (वामदेवो गौतमः । विश्वे देवाः)
[११७] ५।७९।८ (सत्यश्रवा आत्रेयः । उषाः)
उत् नो गोमतीरिपः ।
(अश्विनौ ३९२) ८।५।९ (प्रह्लातिथिः काण्वः । अश्विनौ)
(सोमः ४४१) ९।६२।२४ (जमदग्निर्भागवः । पवमानः
सोमः)
[११८] ५।७९।८ साकं सूर्यस्य रश्मिभिः ।
(अश्विनौ ४५) १।४७।७ (प्रस्कन्वः काण्वः । अश्विनौ)
(अदितिः ० २११) १।१३७।२ (परच्छेपो देवोदाभिः ।
मित्रावरुणौ)
(७०) १।१२३।१२ (कक्षीवान् दैर्घतमस औशिशः । उषाः)
यतमाना रश्मिभिः सूर्यस्य ।

- (अदितिः ० ३७०) ८।१०१।२
(जमदग्निर्भागवः । मित्रावरुणौ)
[१२३] ५।८०।४ ऋतस्य पन्थामन्वेति साधु ।
(७४) १।१२४।३ (कक्षीवान् दैर्घतमस औशिजः । उषाः)
१०।६६।१३ (वसुकर्णो वासुकः । विश्वे देवाः)
ऋतस्य पन्थामन्वेमि साधुया ।
[१२३] ५।८०।४ प्रजानतीव न दिशो मिनाति ।
(७४) १।१२४।३ (कक्षीवान् दैर्घतमस औशिजः । उषाः)

- [१२५] ५।८०।६ (सत्यश्रवा आत्रेयः । उषाः)
योषेव भद्रा नि रिणीते भप्सः ।
(७८) १।१२४।७ (कक्षीवान् दैर्घतमस औशिजः । उषाः)
उषा हस्तेव नि रिणीते भप्सः ।
["] ५।८०।६ (सत्यश्रवा आत्रेयः । उषाः)
व्यूर्ण्वती दाशुषे वार्याणि ।
६।५०।८ (ऋजिश्वा भारद्वाजः । विश्वे देवाः [सविता])
व्यूर्ण्वते दाशुषे वार्याणि ।

ऋग्वेदस्य षष्ठं मण्डलम् ।

- [१३१] ६।६४।६ (भरद्वाजो बार्हस्पत्यः । उषाः)
= (८३) १।१२४।१२ (कक्षीवान् दैर्घतमस औशिजः । उषाः)
उत् ते वयश्चिद् वसतेरपसन् नरश्च ये पितृभाजो व्युष्टौ ।
अमा सते वहसि भूरि पाममुषो देवि दाशुषे मर्त्याय ॥

- [१३४] ६।६५।३ (भरद्वाजो बार्हस्पत्यः । उषाः)
नि दाशुष उपसो मर्त्याय ।
= (८३) १।१२४।१२ = (१३१) ६।६४।६
उषो देवि दाशुषे मर्त्याय ।

ऋग्वेदस्य सप्तमं मण्डलम् ।

- [१३८] ७।४१।७ = (१७२) ७।८०।३ (मैत्रावरुणर्वसिष्ठः । उषाः)
अथापतीगोमतीर्न उपासो वीरवतीः सदमुच्छन्तु भद्राः ।
घृतं दुहाना विश्वतः प्रपीता यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ।
[,,] x ७।४१।७ यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ।
= (१४६) ७।७५।८ = (१५३) ७।७६।७
= (१५९) ७।७७।६ = (१६४) ७।७८।५
= (१६९) ७।७९।५ = (१७२) ७।८०।३
[१४४] ७।७५।६ (मैत्रावरुणर्वसिष्ठः । उषाः)
दधानि रत्नं विधत्ते जनाय ।
(अश्विनौ २५४) ४।४४।४ (पुरुमाळ्हाजमीळ्हा मोहोत्रा । अश्विनौ)
दधथो रत्नं विधत्ते जनाय ।
[१४५] ७।७५।७ देवी देवेभिर्यजता यजत्रैः ।
४।५६।२ (वामदेवो गौतमः । यावापृथिवी)
देवी देवेभिर्यजते यजत्रैः ।
[१५१] ७।७६।५ ते देवानां न मिनन्ति व्रतानि ।
(आयुर्वेद ० ८७३) ७।४७।३ (मैत्रावरुणर्वसिष्ठः । आपः)
ता इन्द्रस्य न मिनन्ति व्रतानि ।
[१५२] ७।७६।६ = (६३) १।१२३।५
उपः सुजाने (५ सूत्रे) प्रथमा जरस्व ।

- [१५७] ७।७७।४ (मैत्रावरुणर्वसिष्ठः । उषाः)
अन्ति — दूरे अमित्रं — उर्वो गन्धूतिमभयं कृधी नः ।
(सोमः ६८५) ९।७८।५ (कविर्भागवः । पवमानः सोमः)
शत्रुमन्तिके दूरे उर्वो गन्धूतिमभयं च नस्कृषि ।
[१६२] ७।७८।३ एता उ त्याः प्रत्यदश्नन् ।
(आयुर्वेद ० ७७८) १।१९१।५ (अगस्त्यो मैत्रावरुणः ।
अ तृणसूर्याः [विषधोपनिषद्])
एत उ ले प्रत्यदश्नन् ।
[,,] ७।७८।३ (मैत्रावरुणर्वसिष्ठः । उषाः)
अजीजनन्सूर्यं यज्ञमग्निम् ।
[१७१] ७।८०।२ (मैत्रावरुणर्वसिष्ठः । उषाः)
एषा स्या नव्यमायुर्दधाना ।
प्राचिकित्सूर्यं यज्ञमग्निम् ।
३।५३।१६ (गाथिनो विश्वामित्रः । वाक् [ससर्परी])
सा पक्ष्या नव्यमायुर्दधाना ।
[१७२] ७।८०।३ = (१३८) ७।४१।७
[१७३] ७।८१।१ प्रत्यु भदइर्यायति ।
(१७९) ८।१०१।१३ (जमदग्निर्भागवः । उषाः सूर्यप्रभावा)
चित्रेव प्रत्यदइर्यायति ।
[१७३] ७।८१।१ = (११) १।४८।८
ज्योतिष्कणोति सूनरी ।

[१७३] ७।८१।१ = (११) १।४८।८
उच्छन्ती (८ मघोनी) दुहिता दिवः ।
[१७८] ७।८१।६ = (११) १।४८।८
उषा उच्छदप त्रिधः ।

[१७८] ७।८१।६ (मैत्रावरुणिर्वसिष्ठः । उषाः)
अवः सूरिभ्यो अमृतं वसुत्वनम् ।
(इन्द्रः ३३२) ८।१३।१२ (नारदः काण्वः । इन्द्रः)

ऋग्वेदस्याष्टमं मण्डलम् ।

[१७९] ८।१०१।१३ (जमदग्निर्भागवः । उषाः सूर्यप्रभा वा)
चित्रेव प्रत्यदृश्यायति ।
(१७३) ७।८१।१ (मैत्रावरुणिर्वसिष्ठः । उषाः)
प्रत्यु अदृश्यायति ।



दैवत-संहितान्तर्गत- उषादेवता-मन्त्राणां सूची।



| | | | |
|--------------------------------|-----------------|----------------------------|----------|
| अचेति दिवो दुहिता | १६३ | उच्छन्ती या कृणोषि | १७६ |
| अच्छा वो देवीमुषसं | ८९ | उच्छन्तीरय चितयन्त | ९४ |
| अजैष्माद्यासनाम | १९१ | उच्छा दिवो दुहितः | १३७ |
| अतारिष्म तमसः | २९ | उत नो गोमतीरिष | ११७ |
| अधि पेशांसि वपते | २७ | उत सखास्थदिवनोः | १०५ |
| अन्तिवामा दूरे अमित्र० | १५७ | उत् ते वयश्चिद् वसतेः | ८३; १३१ |
| अपान्यदेत्यभ्यन्यदेति | ६५ | उदपपन्नरुणा भानवो वृथा | २५ |
| अभि ये त्वा विभावरि | ११३ | उदीरतां सूनृता उत् | ६४ |
| अभूदुषा इन्द्रतमा | १६७ | उदीर्ध्वं जीवो असुर्न | ५४ |
| अभ्रातेव पुंस एति | ७८ | उदु ज्योतिरमृतं विश्वजन्यं | १४७ |
| अमिनती दैव्यानि व्रतानि | ७३ | उदु श्रिय उषसो रोचमाना | १२६ |
| अर्चन्ति नारीरपसो | २६ | उदुस्त्रियाः सृजते सूर्यः | १७४ |
| अव स्यूमेव चिन्वती | ८८ | उपो अदर्शि शुन्ध्युवो | ७५ |
| अवेयमश्नैद् युवतिः | ८२ | उपो रुरुचे युवतिर्न योषा | १५४ |
| अश्वावतीगोमतीः | ५; ७०; १३८; १७२ | उवासोषा उच्छाच्च नु | ६ |
| अश्वेव चित्रारुषी | १०४ | उष आ भाहि भानुना | १२ |
| अस्तोद्ध्वं स्तोम्या ब्रह्मणा | ८४ | उषः प्रतीची भुवनानि | ८७ |
| अस्थुर चित्रा उषसः | ९३ | उषस्तच्चित्रमा भर | ३६ |
| अस्मे श्रेष्ठेभिर्भानुभिः | १५८ | उषस्तमस्यां यशसं | ३१ |
| आ घा योषेव मूनर्युषा | ८ | उषा अप स्वसुस्तमः | १८३; १८६ |
| आ द्यां तनोषि रश्मिभिः | १०९ | उषा उच्छन्ती समिधाने | ७२ |
| आपम्रुषी विभावरे | १०८ | उषासानकता बृहती | १९२ |
| आ याहि वनसा सह | १८० | उषो अयेह गोमती | ३७ |
| आ याहि बस्व्या धिया | १८१ | उषो देव्यमर्त्या वि | ८६ |
| आवहन्ती पोष्या वार्याणि | ५३ | उषो भद्रेभिरा गहि | २० |
| आसां पूर्वामहमु | ८० | उषो यदग्निं समिधे चक्रध | ४७ |
| इदं श्रेष्ठं ज्योतिषां ज्योतिः | ३९ | उषो यदद्य भानुना | १८ |
| इदमु त्यत् पुरुषतमं | ९२ | उषो ये ते प्र यामेषु युजते | ७ |
| इदा हि त उषो अद्रिसानो | १३६ | उषो वाजं हि वंस्व | १४ |
| इदा हि वो विधते | १३५ | उषो वाजेन वाजिनि | ८५ |
| इयं या नीच्यर्किणी | १७२ | ऋतस्य बुध्न उषसामिषण्यन् | ९१ |
| इयुष्टे ये पूर्वतराम् | ४९ | ऋतस्य रश्मिमनुयच्छमाना | ७१ |
| | | ऋतावरी दिवो अर्कैः | ९० |

| | |
|---------------------------------|--------|
| एता उ त्या उषसः केतुं | २४ |
| एता उ त्याः प्रत्यदश्रन् | १६१ |
| एतावद् वेदुषस्त्वं | ११९ |
| एते ते भानवो दर्शताया० | १४१ |
| एवेदेषा पुरुतमा दशे कं | ७७ |
| एषा गोभिररुणेभिर्यजाना | १२२ |
| एषा जनं दर्शता बोधयन्ती | १२१ |
| एषा दिवो दुहिता प्रत्यदर्शि | ४५; ७४ |
| एषा नेत्री राधसः सूनृतानां | १५३ |
| एषा प्रतीची दुहिता दिवो | १२५ |
| एषायुक्त परावतः | १० |
| एषा व्येनी भवति द्विर्बर्हाः | १२३ |
| एषा शुभ्रा न तन्वो विदानो | १२४ |
| एषा स्या नव्यमायुर्दधाना | १७१ |
| एषा स्या नो दुहिता दिवोजाः | १३२ |
| एषा स्या युजाना पराकात् | १४२ |
| एषु धा वीरवद् यशः | ११५ |
| कन्येव तन्वा शाशदानां | ६८ |
| कस्त उषः रुधप्रिये | १ |
| कियात्या यत् समया भवाति | ४८ |
| कुवित् स देवीः सनयो नवो वा | ९५ |
| क स्विदासां कतमा पुराणी | ९७ |
| क्षत्राय त्वं श्रवसे त्वं महीया | ४४ |
| गृह्णं गृहमहना यात्यच्छ | ६२ |
| जानत्यहः प्रथमस्य नाम | ६७ |
| जिह्वास्ये चरितवे मघोनी | ४३ |
| त इद् देवानां सधमाद् | १५० |
| तच्चित्रं राध आ भर | १७७ |
| तदन्नाय तदपसे | १८९ |
| तद् वो दिवो दुहितरो विभातीः | १०२ |
| ता आ चरन्ति समना पुरस्तात् | ९९ |
| ता इन्वेव समना समानीः | १०० |
| ता घा ता भद्रा उषसः पुरासुः | ९८ |
| तानीदहानि बहुलान्यासन् | १४९ |
| तावदुषो राधो अस्मभ्यं रास्व | १६८ |
| तेभ्यो शुभ्रं बृहद् यशः | ११६ |
| त्वं त्येभिरा गहि | ३ |
| देवंदेवं राधसे चोदयन्ती | १६९ |
| देवानां चक्षुः सुभगा वहन्ती | १५६ |

| | |
|--|----------|
| देवी उषासानका | १९३; १९४ |
| द्युतयामानं बृहतीं | १२० |
| निष्कं वा घा कृणवते | १८८ |
| नू नो गोमद् वीरवद् धेहि | १४६ |
| परायतीनामन्वेति पाथ | ४६ |
| पशून् चित्रा सुभगा प्रधाना | ३५ |
| पितृभृतो न तन्तुमित् | १८२ |
| पुनःपुनर्जायमाना पुराणी | ३३ |
| पूर्वा विश्वस्माद् भुवनादबोधि | ६० |
| पूर्वं अर्धं रजसो अप्स्यस्य | ७६ |
| पृथू रथो दक्षिणाया अयो० | ५९ |
| प्रति केतवः प्रथमा अदश्रन् | १६० |
| प्रति त्वा दुहितर्दिवः | १७५ |
| प्रति त्वाद्य सुमनसो बुधन्त | १६४ |
| प्रति त्वा स्तौमैरीळते वसिष्ठा | १५२ |
| प्रति द्युतानामरुषासो | १४४ |
| प्रति भद्रा अदक्षत | १०७ |
| प्रति षोमभिर्जरते समिद्धः | १६१ |
| प्रति घ्या सूनरी जनी | १०३ |
| प्रति स्तोमेभिरुषसं | १७० |
| प्रत्यर्चीं दशदस्या अदर्शि | २८ |
| प्रत्यु अदर्श्यायत्यु (त्यू) च्छन्ती | १७३; १८५ |
| प्र बोधयोषः पृणतो मघोनि | ८१ |
| प्र मे पन्था देवयाना अदश्रन् | १४८ |
| भगस्य स्वसा वरुणस्य जामिः | ६३ |
| भद्रा ददक्ष उर्विया वि भासि | १२७ |
| भास्वती नेत्री सूनृतानां | ३०; ४२ |
| महे नो अद्य बोधय | ११० |
| महे नो अद्य सुविताय | १४० |
| माता देवानामदितेरर्नाकं | ५७ |
| यच्च गोषु दुःध्वन्त्यं | १८७ |
| यच्चित्रमप्य उषसो वहन्ति | ५८ |
| यच्चिद्धि ते गणा इमे | ११४ |
| यथा कलां यथा शफं | १९० |
| यद्य भागं विभजासि | ६१ |
| यस्या रुशन्तो अर्चयः | १६ |
| या गोमतीरुषसः सर्ववीरा | ५६ |
| यां त्वा दिवो दुहितर्वर्धयन्ति | १५९ |
| यावयद् द्वेषसं त्वा | १०६ |

| | | | |
|--------------------------------|-----|-------------------------------|-----|
| यावयद् द्वेषा ऋतपा ऋतेजाः | ५० | व्युच्छा दुहितर्दिवो | ११८ |
| या सुनीथे शौचद्रथे | १११ | व्युषा आवः पथ्या जनानां | १६५ |
| युष्वा हि वाजिनीवती | ३८ | व्युषा आवो दिविजा ऋतेन | १३९ |
| यूयं हि देवीर्ऋतयुग्भिरर्धैः | ९६ | व्यूर्ध्वती दिवो अन्तां अबोधि | ३४ |
| ये चिद्ध त्वामृषयः पूर्वं ऊतये | १७ | शश्वत् पुरोषा व्युवास देवी | ५१ |
| रयिं दिवो दुहितरो विभातीः | १०१ | श्रवः सूरिभ्यो अमृतं वसुत्वनं | १७८ |
| रुशद्वत्सा रुशती श्वेत्यागा० | ४० | श्रवो वाजमिषमूर्जं वहन्तीः | १३४ |
| वयं हि ते अमन्महि | २ | स्वज्ञानमसि कामधरणं | १८४ |
| वयश्चित् ते पतत्रिणो | २२ | सत्या सत्येभिर्महती महद्भिः | १४५ |
| वहन्ति सीमरुणासो रुशन्तो | १२८ | सदशीरथ सदशीरिदु श्वो | ६६ |
| वज्रिनीवती सूर्यस्य योषा | १४३ | सं नो राया बृहता विश्वपेशसा | १९ |
| वि तद् ययुररुणयुग्भिरर्धैः | १३३ | समान ऊर्वे अधि संगतासः | १५१ |
| वि या सृजति समनं व्यर्थिनः | ९ | समानो अध्वा स्वस्त्रोरनन्त० | ४१ |
| विश्वमस्या न.नाम चक्षसे | ११ | सह वामेन न उषो | ४ |
| विश्वं प्रतीची सप्रथाः | १५५ | सा नो अद्याभरद् वसुः | ११२ |
| विश्वस्य हि प्राणनं जीवनं त्वे | १३ | सा वह योक्षभिरवातो० | १३० |
| विश्वानि देवी भुवनाभिचक्ष्या | ३२ | सुगोत ते सुपथा पर्वतेषु | १२९ |
| विश्वान् देवा आ वह सोमपीतये | १५ | सुपेशसं सुखं रथं | २१ |
| व्यञ्जते दिवो अन्तेष्वयतून् | १६६ | सुसंकाशा मातृमृष्टेव | ६९ |
| व्यञ्जिभिर्दिव आतास्वयौ० | ५२ | स्यूमना वाच उदियतिं वह्निः | ५५ |
| व्युच्छन्ती हि रश्मिभिः | २३ | स्वसा स्वस्त्रे ज्जायस्यै | ७९ |



उषादेवता-मन्त्राणां उपमा-सूची ।

अजिरः न वोळ्हा ६,६४,३; १२८ तमः बाधते ।
 अक्षसत् न १,१२४,४; ७५ ससतः बोधयन्ती ।
 अपसः न १,९२,३; २६ नारीः विष्टिभिः आ परावतः अर्चन्ति ।
 अपां न ऊर्मयः ६,६४,१; १२६ उषसः प्रियः उत् अस्थुः ।
 अभ्राता इव प्रतीची १,१२४,७; ७८ उषा एति ।
 अश्वा इव ४,५२,२; १०४ चित्रा अरुषी उषा ।
 अस्ता इव ६,६४,३; १२८ शूरा शत्रून् अपेजते ।
 उस्मा इव बर्जहम् १,९२,४; २७ उषा वक्षः अपोर्णुते ।
 (यथा) ऋणम् ८,४७,१७; १९० दुःष्वप्यं आप्त्ये संनयामसि ।
 कन्या इव १,१२३,१०; ६८ तन्वा शाशदाना ।
 (यथा) कलाम् ८,४७,१७; १९० दुःष्वप्यं आप्त्ये संनयामसि ।
 गर्तारुक् इव १,१२४,७; ७८ धनानां सनये गर्त एति ।
 गवां सर्गाः न ४,५२,८; ९९ ऋतस्य सदसः बुधानाः जरन्ते ।
 गवां सर्गाः न ४,५२,५; १०७ उरु ज्ञयः आ अप्राः ।
 गावः न व्रजम् १,९२,४; २७ विश्वस्मै भुवनाय ज्योतिः ।
 चक्रं इव ३,६१,३; ८७ समानं अर्थं चरणीयमाना ।
 चन्द्रा इव ३,६१,७; ९१ माया पुरुषा भानुं वि दधे ।
 (यथा) चित् ५,७९,१; ११० नः अबोधयः ।
 चित्रा इव ८,१०१,१३; १७८ आयती प्रत्यदर्शि ।
 जाया इव पत्ये उशती सुवासाः १,१२४,७; ७८ उषाः अप्सः ।
 जारः इव ७,७६,३; १४९ परि आ चरन्ती ।
 तन्तुं ततं इव वा० य० २०,४१; १९२ पेशसा संवयन्ती ।
 (आयुधानि इव) धृष्णवः १,९२,१; २४ निष्कृण्वानः गावः प्रति ।
 नृत्तुः इव १,९२,४; २७ पेशांसि अधि वपते ।
 नोधाः इव १,१२४,४; ७५ प्रियाणि आविः अकृत ।
 पशून् न १,९२,१२; ३५ प्रथाना उर्विया व्यश्नैत् ।
 पितृभृतः न १०,१७२,३; १८२ तन्तुं इत् प्रति दध्मः ।
 पूर्वथा १,९२,२; २५ वयुनानि अकृत ।
 " ५,८०,६; १२५ युवतिः पुनः ज्योतिः अकः ।
 प्रजानती इव १,१२४,३; ७४ ऋतस्य पन्थां साधु एति ।
 " ५,८०,४; १२३ दिशः न मिनाति ।

प्रत्नवत् ६,६५,६; १३७ नः उच्छ ।
 भद्रा योषा इव ५,८०,६; १२५ नृन् अप्सः नि रिणीते ।
 भरद्वाजवत् ६,६५,६; १३७ नः धनं रिरीहि ।
 मातुः न सूनवः ७,८१,४; १७६ वयं ते स्याम ।
 यती इव ७,७६,३; १४९ पुनः न दृक्षे ।
 युवतिः [इव] १,१२३,१०; ६८ संस्मयमाना वक्षांसि आविः ।
 युवतिः अहयाणा ७,८०,२; १७१ सूर्यं आचिकितत् ।
 युवतिः न योषा ७,७७,१; १५४ उप रुरुचे ।
 योषा इव सूनरी १,४८,५; ८ प्रभुवती घा आ याति ।
 योषा इव १,१२३,११; ६९ सुसंकाशा तन्वं दृशे आविः कृणुषे ।
 रत्नं न ७,८१,३; १७५ दक्षिणे पुरु स्पर्हं वहसि ।
 (वृषभस्य) रवेण ७,७९,४; १६८ त्वा प्रकाशेन जनुः ।
 (यथा) रात्रां सवितुः प्रसूता १,११३,१; ३९ उषसे सवायं ।
 वायोः इव १,११३,१८; ५६ सूनृतानां उदकं ।
 विशः न युक्ताः ७,७९,२; १६६ उषासः अन्नत्नं यतन्ते ।
 (समनगा इव) व्राः १,१२४,८; ७९ एषा अग्नि अङ्कते ।
 (यथा) शफम् ८,४७,१७; १९० दुःष्वप्यं आप्त्ये संनयामसि ।
 शुन्युवः न वक्षः १,१२४,४; ७५ एषा उपो अदर्शि ।
 शुभ्रा न ५,८०,५; १२४ तन्वः विदाना नः दृशये अस्थात् ।
 (समुद्रे न) श्रवस्यवः १,४८,३; ६ अस्याः आचरणेषु रथाः ।
 श्रिये छन्दः न १,९२,६; २९ विभाती उषाः स्मयते ।
 श्वघ्नी इव कृत्तुः १,९२,१०; ३३ मर्तस्य आयुः जरयन्ती ।
 सविता इव बाहू ७,७९,२; १६६ उषसः ज्योतिः यच्छन्ति ।
 सिन्धुः न क्षोदः १,९२,१२; ३५ उषाः उर्विया व्यश्नैत् ।
 (उद्यन्) सूर्यः [इव] १,१२४,१; ७२ उर्विया ज्योतिः अश्रेत् ।
 (रिपुं) स्तेनं यथा ५,७९,९; ११८ त्वां अर्चिषा नेत् तपाति ।
 स्यूमा इव ३,६१,४; ८८ (तमः) अव चिन्वती उषा याति ।
 (अश्वरेषु मिताः) स्वरवः इव ४,५१,२; ९३ चित्राः उषसः ।
 (विदधेषु) स्वरं न १,९२,५; २८ पेशः उषा अनक्ति ।
 स्मार्ता ऊर्ध्वा इव ५,८०,५; १२४ उषाः नः दृशये अस्थात् ।
 हस्ता इव १,१२४,७; ७८ उषाः अप्सः नि रिणीते ।



दैवत-संहितान्तर्गत-

उषादेवताया गुणबोधक-पदानि ।

अत्रिरस्तमा ७,७९,३; १६७
 अजरा १,११३,१३; ५१
 अजुर्याः ४,५१,६; ९७
 अदितेः अनीकम् १,११३,१९; ५७
 अद्रिसानुः ६,६५,५; १३६
 अवा समानः स्वलोः १,११३,३; ४१
 अनवद्याः १,१२३,८; ६६
 अनीकम् अदितेः १,११३,१९; ५७
 अनुयच्छमाना ऋतस्य रदिमम् १,१२३,१३; ७१
 अनुर्वा [रात्र्युषसौ] १,११३,२; ४०
 अन्तिवामा ७,७७,४; १५७
 अभिषद्यन्ती जनानां वयुना ७,७५,४; १४२
 अभिष्टिष्टुन्नाः ४,५१,७; ९८
 अमर्त्या ३,६९,२; ८६
 अमिनती दैव्यानि व्रतानि १,९२,१२; ३५ । १२४,२;
 ७२
 अमीतवर्णा ४,५१,२; १००
 अमृतस्य केतुः ३,३९,३; ८७
 अमृता १,११३,१३; ५१
 अमृते [रात्र्युषसौ] १,११३,२; ४०
 अरुणस्तुः ५,८०,१; १२०
 अरुणी १,३०,२१; २ । ९२,१-२; २४-२५ । ४,५२,
 २; १०४
 अर्किणी ८,१०१,१३; १७९
 अर्या १,१२३,१; ५९
 अवाता ६,६४,५; १३०
 अश्वदाः १,११३,१८; ५६
 अश्वं नयन्ती सुदृशीकं श्वेतम् ७,७७,३; १५६
 अश्वसूनुता ५,७९,१-१०; ११०-११९
 अश्वा १,३०,२१; २
 अश्वावती-नीः १,४८,२; ५ । ९२,१४; ३७ । १२३,
 १२; ७० । ७,४१,७; १३८ । ८०,३; १७२
 असितं अश्वं गूहन्तीः ४,५१,९; १००
 अश्विनोः सखा ४,५२,२-३; १०४-१०५
 अश्वेधन्ती ५,८०,३; १२२

अहना १,१२३,४; ६२
 अहः प्रथमस्य नाम जानती १,१२३,९; ६७
 अह्नां नेत्री ७,७७,२; १५५
 आपमृषी ४,५२,६; १०८
 आभरद्वसुः ५,७९,३; ११२
 आमिनाना विजः १,९२,१०; ३३
 आमिनाने वर्णम् [नक्तोषासा] १,११३,२; ४०
 आयती ३,६१,६; ९० । ७,८१,१; १७३ ।
 साम० ३०३; १८५
 आयती अन्तः दशसु बाहुषु ८,१०१,१३; १७९
 आयतीनां प्रथमा १,१२४,२; ७३
 आयुः जरयन्ती १,९२,१०; ३३
 आयुः प्रतिरन्ती ७,७७,५; १५८
 आवहन्ती परेष्या वार्याणि १,११३,१५; ५३
 आवहन्ती स्वर ५,८०,१; १२०
 आविष्कृण्वती विश्वा भुवनानि ७,८०,१; १७०
 आविष्कृण्वाना तन्वम् ५,८०,४; १२३
 आविष्कृण्वाना महिमानम् ७,७५,१; १३९
 इन्द्रतमा ७,७९,३; १६७
 इषं दधती ७,७७,५; १५८
 इषं वहन्ती १,९२,३; २६
 ईयुषीणां शश्वतीनां उपमा १,११३,१५; ५३
 ईरयन्ती सूनृता १,११३,१२; ५० । ३,६०,२; ८६ ।
 ७,७९,५; १६९
 ईशाना वस्वः विश्वस्य पार्थिवस्य १,११३,७; ४५
 ईशिषे वस्वः ४,५२,३; १०५
 ईशे वसूनां रायः ७,७५,५; १४३
 उच्छन्ती १,९२,६; २९ । १२४,१; ७२ । ४,५१,३;
 ९४ । ६,६५,१; १३२ । ७,७६,७; १५३ । ८१,१,
 ४; १७३,१७६ । साम० ३०३; १८९
 उच्छन्ती व्रजस्व तमराः द्वारा ४,५१,२; ९३
 उदीरयन्ती जीवम् १,११३,८; ४६
 उपमा ईयुषीणां शश्वतीनाम् १,११३,१५; ५३ । १२४,
 २; ७३
 उर्विया १,९२,१२; ३५ । ६,६४,२,३; १२७; १२८

उषाः । प्रायः सर्वत्र ।
उषसः ।

ऋतजातसत्या ४,५१,७; ९८

ऋतपाः १,११३,१२; ५०

ऋतस्य सदसः ४,५१,८; ९९

ऋतावरी ३,६९,६; ९० । ४,५२,२; १०४ । ५,८०, १; १२०

ऋतेजाः १,११३,१२; ५०

ऋषिष्टुता ७,७५,५; १४३

ऋष्वा ६,६४,४; १२९

एयुषीणां शश्वत्तमा १,१२४,४; ७५

ओदती १,४८,६; ९

कधप्रिया १,३०,२०; १

कृष्णती ज्योतिः भुवनाय १,९२,४; २७

कृष्णती पथः सुगान् ५,८०,२; १२१

कृतुः १,९२,१०; ३३

केतुः १,१२४,११; ८२

केतुः अमृतस्य ३,६१,३; ८७

केतुः यज्ञस्य १,११३,१९; ५७

गवां जनित्री १,१२४,५; ७६

गवां नेत्री ७,७६,६; १५२

गवां माता ४,५६,२-३; १०४-१०५ । ७,७७,१; १५५

गावः १,९२,१; २४

गूहन्ती अभ्वं असितम् ४,५१,९; १००

गृणाना ७,७९,४; १६८

गृणाना वह्निभिः ७,७५,५; १४३

गोभिः अरुणेभिः युजाना ५,८०,३; १२२

गोमती-तीः १,४८,२; ५ । ९२,१४; ३७ । ११३, १८; ५६ । १२३,१२; ७० । ७,४१,७; १३८ । ८०,३; १७२

घृतं दुहाना ७,४१,७; १३८ । ८०,३; १७२

अन्नरथा ३,६१,२; ८६ । ६,६५,२; १३३

चरणीयमानां समानं अर्थम् ३,६१,३; ८७

चरायै विश्वं जीवं प्रसुवन्ती ७,७७,१; १५४

चिकित्स्वित् ४,५२,४; १०६

चिकित्सन्ती मानुषाणां क्षयाय १,१२३,१; ५९

चित्रा १,३०,२१; २ । ९२,१२; ३५ । ११३,४; ४२ । ४,५१,२; ९३

चित्रामघा १,४८,१०; १३ । ७,७५,५; १४३ । ७७,३; १५६

चेकिताना १,११३,१५; ५३

चोदयन्ती देवंदेवं राधसे ७,७९,५; १६९

चोदयित्री मघोनः ७,८१,६; १७८

जननी स्वर ३,६१,४; ८८

जनानां पथ्या ७,७९,१; १६५

जनानां वयुना अभिपश्यन्ती ७,७५,४; १४२

जनियो गवाम् १,१२४,५; ७६

जनी ४,५२,१; १०३

जयन्ती वाजम् १,१२३,२; ६०

जरयन्ती मर्तस्य आयुः १,९२,१०; ३३

जरयन्ती वृजनम् १,४८,५; ८

जानती प्रथमस्य अह्नः १,१२३,९; ६७

जामिः वरुणस्य १,१२३,५; ६३

जायमाना पुनःपुनः १,९२,१०; ३३

जारयन्ती १,१२४,१०; ८१

जारस्य योषा १,९२,११; ३४

जीरा रथानाम् १,४८,३; ६

जीवं उदीरयन्ती १,११३,८; ४६

ज्योतिः कृष्णती भुवनस्य १,९२,४; २७

ज्योतिः यच्छन्ती ७,७८,३; १६२

ज्योतिः वसाना १,१२४,३; ७४

ज्योतिषा [निवारयन्ती] गूह्वी तमः ७,८०,२; १७१

ज्योतिषां श्रेष्ठं ज्योतिः १,११३,१; ३९

तन्वं आविष्कृष्णाना ५,८०,४; १२३

तन्वः विदाना ५,८०,५; १२४

तमः गूह्वी ज्योतिषा (निवारयन्ती) ७,८०,२; १७१

तमांसि अप बाधमाना ५,८०,५; १२४ । ७,७८,२; १६१

तमांसि बाधमाना ७,७७,१; १५४

दक्षिणा १,१२३,१,५; ५९,६३ । ६,६४,१; १२६

दधती इषं राधः (च) ७,७८,५; १५८

दधाना नव्यं आयुः ७,८०,२; १७१

दधाना नाम अधि १,१२३,४; ६२

दधाना रयिं दीर्घश्नुतम् ७,७६,७; १५३

दर्शता ५,८०,२; १२१ । ६,६४,५; १३० । ७,७५, ३; १४१

दाशुषे वार्याणि व्यूर्ण्वती ५,८०,६; १२५
 दास्वती १,४८,१; ४
 दिवः अन्तान् व्यूर्ण्वती १,९५,११; ३४
 दिविजाः ७,७५,१; १३९
 दिवोजाः ६,६५,१; १३२
 दिवित्मती ५,७९,१; ११०
 दिवो दुहिता-तरः १,३०,२२; ३। ४८,१.८-९; ४,
 ११-१२। ४९,२; २१। ९२,५,७; २८,३०। ११३,
 ७; ४५। १२४,३; ७४। ४,५१,१.१०; ९२,
 १०१। ४,५२,१; १०३। ५, ७९, २-३, ८-९;
 ११०-१११, ११७-११८। ८०,५-६; १२४-१२५।
 ६,६४,४-५; १२९-१३०। ६५,६; १३७। ७,७५,
 ४; १४२। ७७, ६; १५९। ७८, ४; १६३।
 ७९,३; १६७। ८१,१.३.५; १७३,१७५,१७७। ८,
 ४७,१४-१५; १८७-१८८। साम० ३०३; १८५
 दुरिता विधा अप बाधमाना ७,७८,२; १६१
 दुहानाः घृतम् ७,४१,७; १३८। ८०,३; १७२
 दुहिता ६,६५,१; १३२
 दुहिता दिवः 'दिवो दुहिता' द्रष्टव्यम्।
 दृशाना सूर्यस्य रश्मिभिः १,११३,१२; ३५
 देवंदेवं राधसे चोदयन्ती ७,७९,५; १६९
 देववीर्ति बिभ्रती १,११३,१२; ५०
 देवशिष्टे [रात्र्युषसौ] १,११३,३; ४१
 देवानां चक्षुः वहन्ती ७,७७,३; १५६
 देवानां माता १,११३,१९; ५७
 देवी-वीः १,४८,१,३,१५; ४,६,१८। ९२,९-१०;
 ३२-३३। ११३,१३-१४; ५१-५२। १२३,३,१०;
 ६१,६८। १२४,१२-१३; ८३-८४। ३,६१,१-२.५;
 ८५-८६,८९। ४,५१,४-५.८.१०; ९५-९६,९९,१०१।
 ५,८०,१,३; १२०,१२२। ६,६४,२,५-६; १२७,
 १३०-१३१। ७,७५,२,७; १४०,१४५। ७७,५;
 १५८। ८८,२; १६१। ७९,३; १६७। ८१,४;
 १७६। वा०य० २८,१४.३७; १९३-१९४।
 द्युतदामा (मन्) ५,८०,१; १२०
 द्युताना ७,७५,६; १४४
 द्योतना १,१२३,४; ६२
 द्विर्हार्हाः ५,८०,४; १२३
 नक्तोषासा [देवते] १,११३,३; ४१
 नयन्ती यज्ञस्य अग्रम् ६,६५,२; १३३
 नयन्ती सुदशीकं श्वेतं अश्वम् ७,७७,३; १५६

नव्यं आयुः दधाना ७,८०,२; १७१
 नव्यसी-सीः ३,६१,३; ८७। १,१२४,९; ८०
 नाम अधि दधाना १,१२३,४; ६२
 नारीः १,९२,३; २६
 निष्कृतं अहरहः आचरन्ती १,१२३,९; ६७
 नीची ८,१०१,१३; १७९
 नेत्री अक्षाम् ७,७७,२; १५५
 नेत्री गवाम् ७,७६,६ १५२
 नेत्री सूनुतानाम् १,९२,७; ३०। ११३,४; ४२।
 ७,७६,७; १५३
 पत्यमानाः ६,६५,३; १३४
 पत्नी भुवनस्य ७,७५,४; १४२
 पत्नी स्वसरस्य ३,६१,४; ८८
 पथः रदन्ती सुविताय ५,८०,३; १२२
 पथः सुगान् कृण्वती ५,८०,२; १२१
 पथ्या जनानाम् ७,७९,१; १६५
 पप्रथानाः समानतः समना ४,५१,८; ९९
 पयस्वती वा० य० २०,४१; १९२
 पराकात् युजाना ७,७५,४; १४२
 पावकाः ४,५१,२; ९३
 पुनःपुनः जायमाना १,९२,१०; ३३
 पुनर्भूः १,१२३,२; ६०
 पुरन्धिः ३,६१,१; ८५
 पुराणी १,९२,१०; ३३। ३,६१,१; ८५। ४,५१,६
 ९७
 पुरुतमा १,१२४,६; ७७
 पुरुषुता ५,८०,३ १२२
 पूर्वहूतौ प्रथमा १,१२३,२; ६०
 पृणन्ती उभा १,१२४,५; ७६
 पृथुयामा (मन्) ६,६४,४; १२९
 प्रचेताः ३,६१,१, ८५
 प्रजानती इव १,१२४,३; ७४। ५,८०,४; १२३
 प्रतिबुध्यमानाः स्योनात् वः ४,५१,१०; १०१
 प्रतिरन्ती आयुः ७,७७,५; १५८
 प्रतीची १,९२,९; ३२। ५,८०,६; १२५। ७,७६,२;
 १४८
 प्रतीची पुंसः १,१२४,७; ७८
 प्रतीची विश्वम् ७,७७,२; १५५
 प्रतीची विश्वा भुवनानि ३,६१,३; ८७

प्रथमा १,१२३,५; ६३ । ७,७६,६; १५२
 प्रथमा आयतीनाम् १,१२४,२; ७३
 प्रथमा आयतीनां शश्वतीनाम् १,११३,८; ४६
 प्रथमा पूर्वद्वौ १,१२३,२; ६०
 प्रथमा विभातीनाम् १,११३,१५; ५३
 प्रथमा विश्वस्मात् भुवनात् १,१२३,२; ६०
 प्रथाना १,९२,१२; ३५ । ६,६४,३; १२८
 प्रदीध्याना अन्याभिः १,११३,१०; ४८
 प्रपीताः विश्वतः ७,४१,७; १३८ । ८०,३; १७२
 प्रबोधयन्ती अरुणैः अश्वैः १,११३,१४; ५२
 प्रबोधयन्ती ससन्तम् ४,५१,५; ९६
 प्रभुजती १,४८,५; ८
 प्रभूता विश्वं अनु ७,७७,३; १५६
 प्रभिनती मनुष्या युगानि १,९२,११; ३४ । १२४,२; ७२
 प्रशस्तिकृत् १,११३,१९; ५७
 प्रसुवन्ती विश्वं जीवं चरायै ७,७७,१; १५४
 बाधमाना तमांसि द्वेषः अप ५,८०,५; १२४
 बाधमाना तमांसि विश्वा दुरिता अप ७,७८,२; १६१
 बाधमाना तमांसि ७,७७,१; १५४
 बिभ्रती देववीतिम् १,११३,१२; ५०
 बिभ्रती रुशत् शुक्रं वासः ७,७७,२; १५५
 बृहती १,११३,१९; ५७ । ५,८०,२; १२१ । वा०य०
 २०,४१, १९३
 बृहती ऋतेन ५,८०,१; १२०
 बृहद्रथा ५,८०,२; १२१
 बोधयन्ती जनम् ५,८०,२; १२१
 बोधयन्ती पञ्चमानुषीः क्षितीः ७,७७,१; १६५
 बोधयन्ती विश्वं जीवम् १,९२,९; ३२
 बोधयन्ती ससतः १,१२४,४; ७५
 भगस्य स्वसा १,१२३,५; ६३
 भद्रा १,१२३,११; ६९ । ६,६४,२; १२७
 भद्राः ४,५१,७; ९८ । ७,४१,७; १३८ । ८०,३;
 १७२
 भद्रा नाम वहमानाः १,१२३,१२; ७०
 भास्वती १,९२,७; ३०
 भुवनस्य पत्नी ७,७५,४; १४२
 भुवनानि विश्वा आविष्कृष्वती ७,८०,१; १७०
 भुवनानि विश्वा प्रतीची ३,६१,३; ८७
 मंहना ७,८१,४; १७६
 मंहना पूर्वद्वौ ६,६४,५; १३०

मघोनः चोदयित्री ७,८१,६; १७८
 मघोनी १,४८,८; ११ । ११३,५.१३.१७; ४३,५१,
 ५५ । १२४,१०; ८१ । ३,६१,४; ८८ । ४,५१,३
 ९४ । ५,७९,४.६-७; ११३,११५-११६ । ६,६४,१;
 १२६ । ६५, ३. ६; १३४, १३७ । ७, ७५, ५;
 १४५ । ७७,४; १५७ । ७८,४; १६३ । ७९,३;
 १६९
 मधुधा ३,६९,५; ८९
 मर्त्यत्रा १,१२३,३; ६१
 महती ७,७५,७; १४५
 महिमानं आविष्कृष्वाना ऋतेन ७,७५,१; १३९
 मही ३,६९,७; ९१ । ७,८१,४; १७६
 मातरः १,९२,१; २४
 माता गवाम् ४,५२,२-३; १०४-१०५ । ७,७७,२;
 १५५
 माता देवानाम् १,११३,१९; ५७
 मातृमृष्टा १,१२३,११; ६९
 माया मित्रस्य वरुणस्य ३,६१,७; ९१
 मृतं बोधयन्ती १,११३,८; ४६
 यच्छन्तीः ज्योतिः ७,७८,३; १६२
 यजता ७,७५,७; १४५
 यज्ञस्य केतुः १,११३,१९; ५७
 यतमानाः सूर्यस्य रश्मिभिः १,१२३,१२; ७०
 यावयद् द्वेषाः १,११३,१२; ५० । ४,५२,४; १०६
 युगानि मनुष्या प्रभिनती १,९२,११; ३४ । १२४,२;
 ७२
 युजाना अरुणेभिः गोभिः ५,८०,३; १२२
 युजाना पराकात् ७,७५,४; १४२
 युवतिः १,११३,७; ४५ । १२३,२.१०; ६०,६८ ।
 १२४,११; ८२ । ३,६१,१; ८५ । ५,८०,६; १२५
 युवतिः अहयाणा ७,८०,२; १७१
 योषा १,१२३,९; ६७
 योषा जारस्य १,९२,११; ३४
 योषा सूर्यस्य ७,७५,५; १४३
 रजसी समना विवर्तयन्ती ७,८०,१; १७०
 रण्वसंहक् ३,६१,५; ८९
 रत्नभाक् ७,८१,४; १७६
 रथानां जीरा १,४८,३; ६
 रवन्ती पथः सुविताय ५,८०,३; १२२

रयि दीर्घश्रुतं दधाना ७,७६,७; १५३
 रश्मि ऋतस्य अनुयच्छमाना १,१२३,१३; ७१
 रश्मिभिः व्यक्ता ७,७७,३; १५६
 रश्मिभिः सूर्यस्य दृशाना १,९२,१२; ३५
 रश्मिभिः सूर्यस्य यतमानाः १,१२३,१२; ७०
 रुचानाः ४,५१,९; १००
 रुशती १,११३,२; ४०
 रुशद्वत्सा १,११३,२; ४०
 रुशन्तः ६,६४,१.३; १२६,१२८
 रूपा ८,१०१,१३; १७९
 रेवती ४,५१,४; ९५
 रोचना ३,६१,५; ८९
 रोचमानाः ६,६४,१; १२६
 रोहिण्या ८,१०१,१३; १७९
 घनन्वती ७,८१,३; १७५
 वरुणस्य जामिः १,१२३,५; ६३
 वर्ण आमिनानि [नक्तोषासा] १,११३,२; ४०
 वसाना ज्योतिः १,१२४,३; ७४
 वसूनां रायः ईशे ७,७५,५; १४३
 वस्वः ईशिषे ४,५२,३; १०५
 वस्वी ६,६४,१; १२६
 वहन्तीः इषम् १,९२,३; २६
 वहन्तीः दाशुषे श्रवः वाजं इषं ऊर्जम् ६,६५,३; १३४
 वहन्ती देवानां चक्षुः ७,७७,३; १५६
 वह्निभिः गृणाना ७,७५,५; ११३
 वाजं जयन्ती १,१२३,२; ६०
 वाजपत्नी ७,७६,६; १५२
 वाजप्रसूता १,९२,८; ३१
 वाजिनी वाजेन ३,६१,१; ८५
 वाजिनीवती १,४८,६.१६; ९,१९। १२३,१३.१५;
 ३६,३८। ७,७५,५; १४३
 वार्याणि पोष्या आवहन्ती १,११३,१५; ५३
 वार्याणि व्यूर्ध्वती ५,८०,६; १२५
 वावशाना पूर्वाः १,११३,१०; ४८
 विजः आमिनाना १,९६,१०; ३३
 विदाना तन्वः ५,८०,५; १२४
 विभाती १,९२,६; २९। १२३,१०; ६८। १२४,६;
 ७७। ३,६१,५-६; ८९-९०। ४,५१,१.१०-११; ९२,
 १०१-१०२। ५,८०,१; १२०। ७,७८,४; १६३

विभातीः १,११३,१७; ५५। १२३,६; ६४।
 ७,७८,३.५; १६२,१६४
 विभातीनां प्रथमा १,११३,१५; ५३
 विभावरी १,३०,२०; १। ४८,१.१०; ४,१३। ९२,
 १४; ३७। ४,५२,६; १०८। ५,७९,४.१०; ११३,
 ११९। ८,४७,१४; १८७
 विरूपे [नक्तोषासा] १,११३,३; ४१
 विवर्तयन्ती रजसी समन्ते ७,८०,१; १७०
 विवासयन्ती १,११३,११; ४९
 विश्वं अनु प्रभूता ७,७७,३; १५६
 विश्वं जीवं चरायै प्रसुवन्ती ७,७७,१; १५४
 विश्वं प्रतीची ७,७७,२; १५५
 विश्वतः प्रपीताः ७,४१,७; १३८। ८०,३; १७२
 विश्वमिन्वा ५,८०,२; १२१
 विश्ववारा १,११३,१९; ५७। ३,६१,१; ८५। ५,
 ८०,३; १२२। ७,७७,५; १५८
 विश्ववाराः १,१२३,१२; ७०
 विश्वसुविदः १,४८,२; ५
 विश्वस्य वस्वः पार्थिवस्य ईशाना १,११३,७; ४५
 विहायाः १,१२३,१; ५९
 वीरवतीः ७,४१,७; १३८। ८०,३; १७२
 वृजनं जरयन्ती १,४८,५; ८
 व्रतानि दैव्यानि अमिनती १,९२,१२; ३५। १२३,२;
 ७३
 व्यक्ता रश्मिभिः ७,७७,३; १५६
 व्युच्छन्ती [तमांसि] १,४८,९; १२। ४९,४; २३।
 ११३,७-८; ४५-४६। ५,७९,१०; ११९। ७,७९,
 ५; १६९
 व्युच्छन्ती सूर्यस्य रश्मिभिः १,१२४,८; ७९
 व्युच्छन्ती स्वसुः परि ४,५२,१; १०३
 व्यूर्ध्वती दाशुषे वार्याणि ५,८०,६; १२५
 व्यूर्ध्वती दिवो अन्तान् १,९२,११; ३४
 व्येनी ५,८०,४; १२३
 शश्वत्तमा एयुषीणाम् १,१२४,४; ७५
 शाशदाना १,१२३,१०; ६८
 शाशदाना अरेपसा तन्वा १,१२४,६; ७७
 शुक्रा १,१२३,९; ६७
 शुक्राः रुशङ्गिः तन्मिः ४,५१,९; १००
 शुक्रं वासः बिभ्रती ७,७७,२; १५५

शुक्रवासाः १,११३,७; ४५
 शुचयः ४,५१,२,९; ९३,१००
 शुभ्राः ४,५१,६; ९७। ७,७५,६; १४४
 शुम्भमाना १,९२,१०; ३३
 शुम्भमाना महोभिः ६,६४,२; १२७
 श्रुतमा १,११३,१२; ५०
 श्वितीची १,१२३,९; ६७
 श्वेत्या १,११३,२; ४०
 स्वंस्मयमाना १,१२३,१०; ६८
 सखा अश्विनोः ४,५२,२-३; १०४-१०६
 सत्या ७,७५,७; १४५
 सदसः ऋतस्य ४,५१,८; ९९
 सदशीः ४,५१,६; ९७
 सदशीः अय १,१२३,८; ६६
 सदशीः ध्वः १,१२३,८; ६६
 सनुत्री १,१२३,२; ६०
 सप्रथाः ७,७७,२; १५५
 समनसा [नक्तोषासा] १,११३,३; ४१
 समना ४,५१,८-९; ९९-१००
 समना पप्रथानाः ४,५१,८; ९९
 समानबन्धू [नक्तोषासा] १,११३,२; ४४
 समानीः ४,५१,९; १००
 सर्ववीराः १,११३,१८; ५६
 ससतः बोधयन्ती १,१२४,४; ७५
 ससन्तं प्रबोधयन्तीः ४,५१,५; ९६
 सिषासन्ती १,१२३,४; ६२
 सुजाता १,१२३,३; ६१ । ५,७९,१-१०; ११०-११९। ७,७६,६; १५२। ७,७,६; १५९
 सुदंसा ३,६१,४; ८८
 सुदिनाः १,१२४,९; ८०
 सुदुधे [उषासानक्ता] वा० य० २०,४१; १२२
 सुदशीकंसदृक् ७,७२,२; १५५
 सुधिते [उषासानक्ता] वा० य० २८,१४; १९३

सुप्रतीका १,१२,६; २९
 सुप्रीते [उषासानक्ता] वा० य० २८,१४; १९३
 सुभगा १,४८,७; १०। ११३,७; ४५। ९२,८.१२, ३१,३५। ३,६१,४; ८८। ६,६४,३; १२८। ७,७६,६; १५२। ७,७,३; १५६
 सुमङ्गली १,११३,१२; ५०
 सुमेके १,११३,३; ४१
 सुम्रावरी १,११३,१२; ५०
 सुक्कमे [उषासानक्ता] वा० य० २०,४१; १२२
 सुबिताय पथः रदन्ती ५,८०,३; १२२
 सुसंकाशा १,१२३,११; ६९
 सूनी १,४८,५.८.१०; ८,११,१३। ४,५२,१; १०३। ७,८१,१; १७३। साम० ३०३; १८५
 सूनुता १,१२३,५; ६३। १२४,१०; ८१
 सूनुतावती १,९२,१४; ३७। ७,८१,६; १७८
 सूनुतावरी ४,५२,४; १०६
 सूनुताः ईरयन्ती १,११३,१२; ५०। ३,६१,२; ८६। ७,७९,५; १६९
 सूनुतां नेत्री १,९२,७; ३०। ११३,४; ४२। ७,७६,७; १५३
 सूर्यस्य योषा ७,७५,५; १४३
 सौभाग्यं आवहन्ती १,४८,९; १२
 स्तोम्याः १,१२४,१३; ८४
 स्योनात् वः प्रतिबुध्यमानाः ४,५१,१०; १०१
 स्वभानुः ६,६४,४; १२९
 स्वर आवहन्ती ५,८०,१; १२०
 स्वर जनन्ती ३,६१,४; ८८
 स्वसरस्य पत्नी ३,६१,४; ८८
 स्वसा भगस्य १,१२३,५; ६३
 स्वसारौ [नक्तोषासा] १,११३,३; ४१
 स्वसुः परि व्युच्छन्ती ४,५२,१; १०३
 हिरण्यवर्णा ३,६१,२; ८६। ७,७७,२; १५५

अग्निदेवतामन्त्रान्तर्गत--

आग्नीसूक्तेषु ' उपासानक्ता ' देवताया गुणबोधक-पद-संग्रहः ।

| | |
|----------------------------|------------|
| इन्द्रस्य धेनू | २०८९ |
| उक्षिते | १९४७ |
| उपाके | १९५८; १९२४ |
| „ | २०७९ |
| उभे | २१०० |
| उशती | १९९७ |
| उषे | २०४२ |
| ऋतस्य मातरा | १९२४; १९६९ |
| चरन्ती मित्रावरुणा अन्तरा | २१११ |
| ततं तन्तुं संवयन्ती | १९४७ |
| दधाने शुक्रपिशम् | २००८ |
| दर्शते | १९८६ |
| „ | २१०० |
| दिवः दुहितरा | १९९७ |
| दिव्ये | १९७९ |
| दिव्ये (योषणे) | २००८ |
| दिव्ये योषिते | २०६६ |
| दुहितरः दिवः | १९९७ |
| देवी | १९९७ |
| धेनू इन्द्रस्य | २०८९ |
| नृः पतिभ्यः योनिं कृण्वाने | २१३५ |
| पयस्वती | १९४७ |
| पुरुहूते | १९७९ |
| बर्हिषदा | १९७९ |
| वृहती | १९८६ |
| „ | २००८ |
| „ | २१०० |
| „ | २१३५ |
| भन्दमाने | १९२४ |
| मघोनी | १९७९ |
| मही | १९७९ |
| „ | १९८६ |
| „ | २०८९ |

| | |
|----------------------|------------|
| मातरा | २०८९ |
| मातरा ऋतस्य | १९२४ |
| यजते | २००८ |
| „ | २०७९ |
| यङ्ही | १९२४ |
| „ | २०३१ |
| योषणे | २००८ |
| „ | १९७९ |
| योषणे दिव्ये | २०६६ |
| रण्विते | १९४७ |
| वयोवृधा | १९६९ |
| वय्या इव | १९४७ |
| शुक्रपिशं दधाने | २००८ |
| विरूपे | १९५८ |
| संवयन्ती ततं तन्तुम् | १९४७ |
| संविदाने | २१११ |
| संस्मयमाने | २१३५ |
| संजानाने | २०३१ |
| समीची | १९४७ |
| सवातरी | २०८९ |
| सनता | १९४७ |
| सुदुषे | १९४७ |
| सुपेशसा | १९१२; २०४२ |
| „ | १९२४; २१३५ |
| „ | १९३६; २१०० |
| „ | २०१९; २०५४ |
| „ | २०३१; २०४२ |
| सुप्रतीके | १९६९ |
| सुरुषमे | १९३६; २००८ |
| सुशिल्ये | १९८६; २००८ |
| | १९९७; २१०० |
| सुष्वयन्ती | २०८८; २०७९ |
| सुहिरष्ये | २१११ |





दैवत-संहिता

(९)

आदितिः, आदित्याश्व

संपादक

भट्टाचार्य श्रीपाद दामोदर सातवळेकर,
स्वाध्याय-मण्डल, औंध (जि० सातारा)

संवत् २००१, शक १८६६, सन १९४४

मुद्रक और प्रकाशक
वसंत श्री. सातवलेकर, B. A.
भारत मुद्रणालय, और (जि. सातारा)

आदित्यों के कार्य और उनकी लोकसेवा

[लेखक- श्री० दयानन्द गणेश धारेश्वर, बी. ए.]

जिस प्रकार अश्विनौ सदैव जनताके हितके लिए कार्य करनेमें लगे रहते हैं वैसे ही आदित्य अर्थात् अदिति के पुत्र भी जनसेवाको बड़े ही स्पृहणीय ढंग से प्रचलित रखते हैं। अदिति याने अदीनता, अखंडता एवं पूर्णता के इन पुत्रोंने वीरतापूर्वक और साहस से कार्य करके एवं जनताकी रक्षा करके लोगोंका ध्यान अपनी ओर आकृष्ट करलिया है अतः भक्त तथा उपासक इन आदित्यों से क्या कहते हैं सो वेदके शब्दोंमें देखना ठीक होगा।

जनताके सम्मुख अपनी रक्षाकी समस्या सदैव उठखड़ी होती है। अतः अपना संरक्षण भलीभाँति हो ऐसी तीव्र लाजसा हमेशा जनमनमें जागृत रहती है और देवतारूपी सभी सुयोग्य एवं कार्यक्षम व्यक्तियों से इसी संबंधमें बारंबार निवेदन किया जाता है। जसे—

स्यान् नु क्षत्रियान् अव आदित्यान् याचिषामहे ।
(ऋ. ८।६७।१)

‘ उन विषयात आदित्यों के सम्मुख, जो कि क्षत्रिय हैं, हम संरक्षणकी माँग पेश करते हैं । ’

महि वो महतामवो ... अवांस्यावृणीमहे ।
(ऋ. ८।६७।४)

आप जैसे महान लोगोंके संरक्षण बहुत बड़े होते हैं इसलिए हम आपकी संरक्षण आयोजनाओं को स्वीकृत करते हैं । ’

‘ महि वो महतामवो ... दाशुषे । यं आदित्या अभि द्रुहो रक्षथा न ई अघं नशत् ... ।
(ऋ. ८।४७।१)

‘ आप जैसे बड़े वीरोंका दानी पुरुषके लिए दिया हुआ संरक्षण बड़ा है क्योंकि जिसे आदित्य द्रुहणों से बचाते हैं उसे पाप या बुराई घेर नहीं सकती है । ’

स्यामेदिन्द्रस्य शर्मणि आदित्यानामुतावसि ।
(ऋ. ८।४७।५)

आदित्य. प्र. १

‘ हम लोग प्रभु इन्द्रके सुखकी या आदित्योंके संरक्षण की छत्रछाया में रहें । ’

... अनेहसो व ऊतयः सुऊतयो व ऊतयः ।
(ऋ. ८।४७।१)

‘ आप आदित्योंकी रक्षाएं निर्दोष, निष्पाप एवं सुन्दर हैं । ’
आदित्या विश्वे ... तुष्टुवाना यूयं पात स्वस्ति-
भिः सदा नः ।
(ऋ. ७।५१।३)

‘ आप सारे आदित्य प्रसंगित होनेपर हमेशा कल्याणकारक बातों से हमारी रक्षा कीजिए । ’

आदित्यानामवसा नूतनेन सक्षीमहि शर्मणा
शान्तमेन ।
(ऋ. ७।५१।२)

‘ हम लोग आदित्योंकी नई रक्षासे एवं अत्यन्त शक्तिदायक सुखसे जुड़जायें । ’

आदित्यासो अदितिर्मादयन्तां ... अस्माकं सन्तु
भुवनस्य गोपाः पिबन्तु सोमं अवसे नो अद्य ।
(ऋ. ७।५१।२)

‘ अदिति और आदित्य हर्षित हों और हमारे भुवन के संरक्षक बनें तथा आज हमारी रक्षा करनेमें उत्साह मिल जाय इसलिए सोमरसका पान करें । ’

युष्मे देवा अपि ऽमसि युध्यन्त इव चर्मसु ।
यूयं महो न एनसो यूयमर्भादुरुष्यथ । (ऋ. ८।४७।८)

‘ हे दानी या द्योतमान आदित्यो ! तुम्हारे सहारे हम ऐसे रहते हैं मानों कवचधारी लोग लड़ते हों, याने वे जैसे निर्भय हुआ करते वैसेही हम हैं और आप हमें बड़े एवं छोटे पापसे बचाते हैं । ’

शश्वत् हि वः सुदानव आदित्या ऊतिभिवेयं
पुरा नूनं बुभुजमहे ॥ (ऋ. ८।६७।१६)

‘ हे अच्छे दानी ! अदितिके पुत्रो ! हमेशाही हम लोग आपकी रक्षाओं से पहले तथा अब भी सुखोंका उपभोग करते रहते हैं । ’

ते न आस्यो वृकाणामादित्यासो मुमोचत ।
स्तेनं यच्च इवादिते । (ऋ. ८।६७।१४)

‘ हे अदिति एवं वे ऐसे विख्यात आदित्यो । हमें भेड़िये जैसे क्रूर तथा लालची लोगोंके मुँहसे ऐसे छुड़ाओ जैसे बाँधकर रखे हुए चोरको छुड़ाया जाता है । ’

ये मूर्धानः क्षितीनां अदध्यासः स्वयशसा ।
व्रता रक्षन्ते अद्रुहः ॥ (ऋ. ८।६७।१३)

‘ जो आदित्य द्वेष न करते हुए अपनी अर्जित यश-श्रिता के कारण न दबाये हुए होकर मानवों के अग्रभाग में रहते हैं और व्रतोंकी रक्षा करते हैं । ’

धारयन्त आदित्यासो जगत् स्था देवा विश्वस्य
भुवनस्य गोपाः.....रक्षमाणा असुर्यम्..... ।
(ऋ. २।२७।४)

‘ ये देवतारूपी आदित्य अखिल भुवनके संरक्षक होते हुए जंगम तथा स्थावर का धारण करते हैं और प्राणशक्ति को बचाते हैं । ’

विद्यां आदित्या अघसो वो अस्य...यत्...भय
आ चित् मयोभु । (ऋ. २।२७।५)

‘ हे अदितिके पुत्रो ! मैं चाहता हूँ कि आपकी इस रक्षासे परिचित हो जाऊँ जो रक्षा भय के अवसरपर भी सुखदायक बनी रहती है । ’

इन ऊपर दिये हुए मंत्रों और मन्त्रभागोंसे स्पष्ट दिखाई देता है कि जनताकी रक्षा करनेमें अदिति केपुत्र बड़े सिद्ध हस्त थे, अतः लोग भी आदित्यों की संरक्षण आयोजना से लाभ उठानेमें अत्यन्त उत्सुक रहा करते थे । वेद में ऐसे निर्देश मिलते हैं कि लोगों का नेतृत्व भी आदित्य सफलतापूर्वक कर लिया करते थे और जो लोग मार्ग भूके भटके होते हैं तथा जो अन्धकार में रहते हैं उनके पथ-प्रदर्शन तथा प्रकाशदान का कार्य आदित्य सफलतापूर्वक पूर्ण करते हैं, जैसे—

आदित्या.. युष्मानीतो अभयं ज्योतिरदयाम् ।
(ऋ. २।२७।११)

‘ हे आदित्यो ! तुम्हारे नेतृत्वमें मैं निर्भयता से पूर्ण प्रकाश को प्राप्त कर लूँ । ’

...पुत्रासो अदितेः... मर्त्याय ज्योतिर्यच्छन्त्य-
जन्तम् । (ऋ. १०।१८५।३)

‘ आदित्य मानव को लगातार डजेला या प्रकाशपुत्र देते हैं । ’

मृलयद्गो वयं चक्रमा कच्चिद्वागः । उरु अश्यां
अभयं ज्योतिः... मा नो दीर्घा अभि नशन्
तमिस्राः (ऋ. २।२७।१४)

‘ यद्यपि हम से आप का कुछ अपराध हुआ हो तो भी हमें सुख दो; मैं विशाल एवं निर्भयतामय प्रकाश को प्राप्त हो जाऊँ और सुदीर्घ अन्धियारी हमें न घेर ले । ’

नकिष्टं न्नन्त्यन्तितो न दूरात् य आदित्यानां
भवति प्रणीतौ । (ऋ. २।२७।१३)

‘ जो कोई आदित्योंके श्रेष्ठ नेतृत्वके तत्वावधानमें रहता है उसे न कोई दूरसे या समीपसे होकर मार सकते हैं । ’

...आदित्या.. युष्माकं.. प्रणीतौ परि श्वश्रेव
दुरितानि वृज्याम् । (२।७७।५)

‘ हे आदित्यो ! तुम्हारे श्रेष्ठ नेतृत्व में मैं बुराईयों को इस तरह टाक दूँ जैसे कोई ग ढोंको टाक देता हो अर्थात् जहाँ नेता की बुरा आदित्य उठा लेते हैं वहाँ बुराईयों का भय रहता ही नहीं । ’

सभी बुराईयों को हटाने की क्षमता आदित्यों में विद्यमान है ऐसा निम्न मन्त्रभागों से ज्ञात होता है ।

यत् आदिः यत् अपीच्यं... अस्ति दुष्कृतं...
तत् विश्वं... आरे अस्मत् दधातन...
(ऋ. ८।४७।१३)

‘ जो कोई बुरा कृत्य चाहे प्रकटरूपसे या गुप्तरूपसे विद्यमान हो उस सारी बुराई को हम से दूर रखो । ’

अपामीषामपस्त्रिधं अप सेधत दुर्मतिः । आदि-
त्यासो युयोतना नो अंहसः ॥ (ऋ. ८।१८।१०)

‘ हे आदित्यो ! रोग, शत्रु तथा दुष्ट बुद्धि को दूर हटा दो और हमें पाप से पृथक् रखो । ’

अपोषु ण इयं शक्रादित्या अप दुर्मतिः ।
अस्मदेत्स्वजन्तुषी ॥ (ऋ. ८।६७।१५)

‘ हे आदित्यो ! यह हिंसक हथियार तथा यह दुष्ट विचारधारा हमें पीडा न देती हुई, भलीभाँति हम से दूर हो जाए । ’

मा नो हेतिः... आदित्यः कृत्रिमा शक्रः पुरा
नु जरसो वधीतु । (ऋ. ८।६७।२०)

‘ हे आदित्यो ! वृद्धावस्था के पहले यह शस्त्र तथा बनाया हुआ हथियार हमें न मार डाले ऐसा प्रबंध करो । ’

ते नो भद्रेण शर्मणा युष्माकं नावा.. अति विश्वानि तुरिता पिपर्तन । (ऋ. ८।१८।१७)

‘ वे ऐसे विख्यात तुम कल्याणकारक सुखसे और आप की नौका से हमें सभी बुराईयों के पार ले चलो- । ’

युयोत शरुमस्मत्.. आदित्यास उतामति ।

ऋधग् द्वेषः कृणुत विश्वेदसः । (ऋ. ८।१८।११)

‘ हे सर्वज्ञ आदित्यो ! हमसे हिंसक शस्त्र, क्रुमति एवं शत्रुओंका पृथक् कर दो । ’

वैदिक सूक्तोंके दर्शन कर्ता सुकवि आदित्यों से कैसी प्रार्थना करते हैं सो निम्न मंत्रोंमें देखने योग्य है-

तत् सु नः शर्म यच्छत आदित्या यन्मुोचति ।

पनस्वन्तं चिदेनसः सुदानवः ॥ (८।१८।१२)

‘ हे अच्छे दानद्वार आदित्यो ! हमें भलीभाँति वह सुख दे डालो जो पापीको भी पाप से छुड़ा सकता है । ’

यद् वः श्रान्ताय सुन्वते वरूथमस्ति यच्छर्दिः ।

तेना नो अधि वोचत । (ऋ. ८।१७।६)

“ कार्य करके थके हुए और उपयुक्त वस्तुका उत्पादन करनेवाले के लिए आप के पास जो वरणीय धन तथा घर है उसे साथ लेकर हमसे बातलाप करो । ” इस प्रार्थनासे स्पष्ट हुआ कि परिश्रमी तथा आवश्यक मानी हुई वस्तुओं के उत्पादक को ये आदित्य स्वीकार करने योग्य धन देते एवं निवास करनेके लिए योग्य गृहका प्रबंध भी कर डालते ।

जीवान् नो अभि धेतन आदित्यासः पुरा हयात् ।

कच्छ स्थ हवनश्रुतः । (ऋ. ८।१७।५)

“ हमारी पुकार सुननेवाले हे आदित्यो ! भला तुम किधर हो ? जबतक हम जीवित हैं, और मृत्युके पहले ही हमारों निकट चले आओ । ” इस मंत्र में वैदिक ऋषि आदित्यों के संपर्क में आनेके लिए कितने उत्सुक हैं सो स्पष्ट दिखाई देता है ।

ये चिद्धि मृत्युबंधव आदित्या मनवः स्मसि ।

प्र सू न आयुर्जीवसे तिरेतन । (ऋ. ८।१८।२२)

“ हे आदित्यो ! हममें जो कोई मृत्यु के अत्यन्त निकट चले गये हों तो भी जीवनके लिए इसारी आयु बढ़ाइये । ”

दीर्घ जीवन की कुंजी आदित्योंके समीप थी ऐसा जान पड़ता है और वे मृत्यु लोकोको मृत्युपाशसे छुड़ानेकी चेष्टा करते थे । जमसेवाके गुरुतर कार्यमें आयुर्वृद्धिका बहुत ऊँचा स्थान है अतः आदित्य इसविषय में पूर्ण सतर्क रहा करते ।

तुचे तुनाय तत् सु नो द्राधीय आयुर्जीवसे ।

आदित्यासः सुमहसः कृणोतन ॥ (ऋ. ८।१८।१८)

‘ हे आदित्यो ! तुम भलीभाँति महनीय तेजसे युक्त हो इसलिए हमारी सन्तानके लिए जीवनार्थ उस दीर्घ आयुष्यका प्रबंध करो । ’

शतं नो रास्व शरदो विचक्षेऽश्यामायूषि सुधितानि पूर्वा । (ऋ. २।२७।१०)

“ हमें विशेष दर्शनके लिए सौ वर्ष प्रदान करो (उतना दीर्घ जीवन मिले) और हम भलीभाँति रखी हुई पूर्व-कालीन आयुर्मर्यादाको प्राप्त कर लें । ”

वेदकालीन कवि आदित्यों से कष्टनिवारण के लिए प्रार्थना करते थे और अदितिके पुत्र जनताके सुखको बढ़ाने का प्रयत्न करते थे ऐसा निम्न मंत्रों से व्यक्त होता है—

इदं ह नूनमेषां सुमनं भिक्षेत मर्त्यः ।

आदित्यानां...

(ऋ. ८।१८।१)

“ अब इन आदित्यों के सामने मानव इन सुखकी माँग पेश करे ।

तत् सु नः ... शर्म यच्छन्तु सप्रथो यदीमहे ।

(ऋ. ८।१८।३)

“ हमें वही विस्तृत सुख जिसकी चाह हम करते हैं आदित्य हमें दे दें । ”

विदा देवा अघानामादित्यासो अपाकृतिम् ।

पक्षा वयो यथोपरि व्यस्मे शर्म यच्छत...

(ऋ. ८।१७।२)

“ हे दानी आदित्यो ! तुम पापों को हटाना जानते हो और जैसे पंछी ऊपर से डैनों को फैलाते हैं ताकि पक्षिशावकोंको सुख मिले, उसी तरह तुम हमें विशेष वंग से सुखका प्रदान करो । ”

व्य१स्मे अधि शर्म तत् पक्षा वयो न यन्तन

विश्वानि विश्ववेदसो वरूथया मनागहे ...।

(ऋ. ८।१७।३)

“ हे सर्वज्ञ आदित्यो ! हम सारे स्वीकरणीय वस्तुओं

को पाना चाहते हैं अतः विशेष रूपसे हमें वह सुख देदो जिस तरह पंछी अपने शिशुओं पर सुखके लिए पर फैलाते हैं । ”

यद् देवा शर्मं शरणं यद् भद्रं यदनातुरम् ।

त्रिधातु यद् वरुण्यं तदस्मासु वि यन्तन ...
(ऋ. ८।४७।१०)

“ हे देवो आदित्यो ! जो कल्याणकारक, रोगरहित एवं सुखप्रद निवासस्थान है और जो तीन प्रकार के धातुओं से युक्त स्वीकरणीय धन है उसे हम लोगोंमें दे डालो । ”

इन आदित्यों की निरीक्षण शक्ति बड़ी सूक्ष्म है और इनके मार्गमें कोई रुकावट खड़ी नहीं होती है इसीलिए बड़ी सफलता से ये जनसेवा कर सकते हैं और लोगोंकी सुखवृद्धि करना इनके लिए बड़ी सुगम एवं साधारणसी बात है ।

त आदित्यास उरवो गभीरा अद्वधासो...

अन्तः पश्यन्ति घृजिनोत साधु, सर्वं राजभ्यः परमा चिदन्ति । (ऋ. २।२७।३)

“ वे अदितिके पुत्र विशाल, गंभीर तथा न दबे हुए हैं और भली एवं बुरी बातोंकी थाह पूरीतरह पालते हैं, समूची घटनाओं की तहतक देखते हैं क्योंकि इन विराजमान आदित्यों के लिए सभी दूरस्थित वस्तुएँ मानों समीपवर्ति ही हैं । ” इसलिए आदित्यों को सभी जानकारी अनायासही मिलजाती है जैसे,

... देवा हस्तु जानीथ मर्त्यम् ।

उप द्वयुं चाद्वयुं च ... (ऋ. ८।१८।१५)

“ हे देवतारूपी आदित्यो ! तुम अपने दिलमें कपटी एवं अ-कपटी मानवको समीप से याने अच्छी तरह जानते हो । ”

आदित्या अव हि, ख्यताधि कूलादिवः ...

(ऋ. ८।४७।११)

“ हे आदित्यो ! जैसे कोई तटपर खड़े रहकर नीचे पानीकी ओर देखते हैं वैसेही तुम ऊँचे पदपर आरूढ़ हो नीचे हम मानवोंको देखलो । ”

... ते धामान्यमृता मर्त्यानामद्वधा अभि चक्षते । (ऋ. ८।१०१।६)

“ वे न दबे हुए एवं अमर आदित्य मानवोंके स्थानोंको

देखते हैं । ”

सुगः पन्था अनृक्षरः आदित्यासः ... नात्राव-
खादो अस्ति वः । (ऋ. १।४१।४)

“ हे आदित्यो ! तुम्हारा मार्ग सुगम एवं कंटकरहित है, यहाँपर तुम्हारे लिए कोई नीचे गिराने योग्य गर्त आदि नहीं है । ”

सुगो हि वो...पन्था अनृक्षरो... साधुः अस्ति ।
तेनादित्या अधि वोचता नो यच्छता नो दुष्परि-
हन्तु शर्म ॥ (ऋ. २।२७।६)

हे आदित्यो ! आपका मार्ग बड़ा सुगम, निष्कलंक और भला है, उस मार्ग परसे आकर आप हम से भाषण कीजिए और हमें ऐसा सुख दो कि जिसे विनष्ट करना शत्रुके लिए दूभर एवं बड़ा कठिन हो । ”

आदित्या...सुतीर्थमर्वतो यथानु नेषथा सुगं... ।
(ऋ. ८।४७।११)

“ हे आदित्यो ! जैसे घोड़ोंको बिना कठिनाई के सुगमतापूर्वक जाने योग्य स्थानमें ले चलते हैं वैसेही हमें आसानीसे ले चलो । ”

या वो माया अभिद्रुहे यजत्राः पश्या आदित्या
रिपवे विचृत्ताः । अश्वीव तां अति येषं रथेना-
रिष्टा उरावा शर्मन् स्याम । (ऋ. २।२७।१६)

“ हे (यजत्राः) पूजनीय आदित्यो ! (वः) आपकी (याः मायाः) जो शक्तियाँ तथा (पश्याः) जाल (अभि-
द्रुहे रिपवे विचृत्ताः) हमसे द्वेष करनेवाले एवं शत्रुको पकड़नेके लिए फैलाये गये हैं (तान्) उन्हें मैं (रथेन) रथसे यात्रा करता हुआ (अश्वी हव अति येषं) जैसे एक घुड़सवार लाँघकर चला जाता है वैसेही पार निकल जाऊँ और हम लोग (अ-रिष्टाः) अहिंसित-होकर, बिना किसी क्षतिके (उरौ शर्मन् आ स्याम) विशाल सुखमें निवास करते रहें । ” इससे स्पष्ट है कि धीर आदित्य अपनी अद्भुत युक्तियों तथा जालों से शत्रुको पकड़ लेते थे । परन्तु जो दानी एवं सरल मार्गपरसे चलनेवाले होते उनकी हर-
तरह की मदद करना आदित्यों का कार्य था, जैसे-

यो राजभ्य ऋतनिभ्यो ददाश यं वर्धयन्ति पुष्ट-
यश्च नित्याः । स रेवान् याति प्रथमो रथेन वसु-
दावा विदधे प्रशस्तः । (ऋ. २।२७।१९)

‘ (यः) जो मानव (ऋतनिभ्यः राजभ्यः) ऋतके नेता एवं विराजमान आदित्यों को (ददाश) दे-खुका हो और (नित्याः पुष्टयः च यं वर्धयन्ति) शाश्वत टिकनेवाली पुष्टियाँ जिसे वृद्धिगत करते हैं (सः) वह (विदथेषु प्रशस्तः) सभामण्डपों में प्रशंसित होकर (प्रथमः रेवान्) प्रथमश्रेणी का धनाढ्य बनकर (वसुदावा रथेन याति) रथ का दानी होता हुआ रथ पर से संचार करता है । ’

...हिरण्ययाः शुचयो धारपूताः अस्वप्नजो...
अदब्धाः उरुशंसा ऋजवे मर्त्याय । (ऋ. २।२७।९)

‘ सुवर्णमय आभावाले, विशुद्ध तथा जलधाराओं से पवित्र होते हुए आदित्य (अस्वप्नजः) स्वप्नशीलता से दूर रहकर और कठिनाइयों से न दबकर (ऋजवे मर्त्याय) सरल बर्ताव रखनेवाले मानव के लिए (उरुशंसाः) अत्यधिक मात्रा में उपदेश देनेवाले या भाषण करनेवाले हैं । ’
अर्थात् जिस मानवमें सरलता तथा निष्कपटता पाई जाती है उसके समीप आकर आदित्य सहायता करने के लिए या पथप्रदर्शनार्थ बहुत सारी बातें कहनेवाले होते हैं ।

शुचिरपः स्यवसा अदब्ध उपक्षेति वृद्धवयाः
सुधीरः । . य आदित्यानां भवति प्रणीतौ ॥

(ऋ. २।२७।१३)

‘ जो अपने आपको आदित्यों के नेतृत्व के नीचे रखता है वह अच्छा वीर होकर (वृद्ध वयाः) सन्नभाण्डारों की वृद्धि करता हुआ (अदब्धाः) विपत्तियोंसे न दबकर (स्यवसाः) अच्छे तृणों से, युक्त (शुचिः अपः उपक्षेति) निर्मल जलों- जलाशयोंके निकट निवास करता है । ’ इससे स्पष्ट हुआ कि आदित्य जनताके नेता बनकर उन्हें वीर बनाने का प्रयत्न करते तथा अश्वों की वृद्धि कैसे करनी चाहिए सो बतलाकर अच्छे तृण, शुद्ध जल आदि बातों से युक्त स्थानोंके निकट घर बनाकर रहने का प्रबंध करते ।

अनर्वाणो ह्येषां पन्था आदित्यानाम् । अदब्धा
समिति पायवः सुगवृधः ॥ (ऋ. ८।१८।२)

इन आदित्यों का मार्ग (अनू-अर्वाणः) हिसारहित है और इनके संरक्षण सुगमतापूर्वक बढ़नेवाले तथा शत्रुओं से न दबाये हुए हैं । आदित्यों की योग्यता का अच्छा परिचय इसमें मिलता है । आदित्यों के कार्य करने के मार्ग इस ढंगके हुआ करते कि यथा संभव हिंसा न हो

और स्वयं ही अपनी आन्तरिक शक्ति से संरक्षण की आयोजनाएँ फलती फूलती रहें ।

अब अदितिके संबन्धमें क्या कहा है सो देखना चाहिए, क्योंकि इन आदित्यों को- अदिति के पुत्रों को उसी से प्रेरणा मिलती है ।

अदितिर्न उरुष्यत्वदितिः शर्म यच्छतु ।
माता मित्रस्य रेवते ऽर्यम्णो वरुणस्य च ॥ ...

(ऋ. ८।४७।९)

‘ धनाढ्य मित्र, अर्यमा एवं वरुणकी माता जो अदिति है वह हमारी रक्षा करे और सुख दे दे । ’

पिपर्तु नो अदितिः राजपुत्रा अति द्वेषांस्य-
र्यमा सुगेभिः । बृहन्मित्रस्य वरुणस्य शर्मोप
स्याम पुरुवीराः अरिष्टाः । (ऋ. २।२७।७)

‘ जिसके पुत्र विराजमान हैं ऐसी वह अदिति हमारा पालन करे, अर्यमा हमें सुगमतापूर्वक या सुखकर मार्गों से शत्रुओंके परे पहुँचावे; मित्र एवं वरुण का दिया हुआ सुख सचमुच ८ । प्रचंड ह अतः हम अनेक िरोंसे युक्त होकर बिना क्षति उठाये उसके समीप रहें । ’

महीं... मातरं सुव्रतानां ऋतस्य पत्नीमवसे
हुवेम । तुविक्षत्रामजरन्तीमुरुर्ध्वं सुशर्माण-
मदिति सुप्रणीतिम् । (वाजसनेयी यजु. २।१।५
अथर्व. ७।६।२)

‘ हम अदिति को अपनी रक्षा का प्रबंध करनेके लिए बुलायें, जो महनीय, अच्छे व्रतधारी आदित्यों की माता, ऋत की पत्नी, अत्यधिक क्षत्रियोचित वीरता से युक्त, जीर्ण न होनेवाली, विशालता से पूर्ण, सुन्दर सुख देनेवाली एवं भलीभाँति आगे ले चलनेवाली, है । ’

अदितिर्नो दिवा... अदितिर्नक्तं... अदितिः
पातु अंहसः सदावृधा (ऋ. ८।१८।६)

‘ हमेशा बढ़नेवाली अदिति हमें दिन और रात पाप से बचाए ’

उत स्या नो दिवा... अदितिरुत्या गमत् ।
सा... मयस्करक्ष्ण स्निधः ॥ (ऋ. ८।१८।७)

‘ और वह अदिति दिन के समय संरक्षण की आयो-
जनाके साथ हमारे निकट चली आए और वह शत्रुओंको

दूर हटाकर सुखमय वायुमण्डल का सृजन करे । '

आदित्यों की असाधारण योग्यता का परिचय होने के कारण वैदिक कवि इस प्रकार उनकी सराहना करते हैं—

इमा गिरः आदित्येभ्यो... सनात् राजभ्यो
जुह्वा जुहोमि । शृणोतु मित्रो अर्यमा भगो नः
तुविजातो वरुणो... (ऋ. २।२७।१)

' मैं सनातनकाल से विराजमान आदित्यों के लिए इन भाषणों का मानों हविभागसा अपनी ओरसे अर्पण करता हूँ, हमारी इन वक्तृताओंको ये आदित्यमंडलके सदस्य जैसे मित्र, वरुण, अर्यमा एवं भग सुन लें । '

इमं स्तोमं सक्रतवो मे अद्य ...जुषन्त ।

आदित्यासः शुचयो धारप्ता अवृजिना अनवद्या
अरिष्टाः । (ऋ. २।२७।२)

' आज मेरे इस स्तुतिमय भाषणका स्वीकार, कार्य-शील आदित्य, जोकि विशुद्ध, पवित्र, पापरहित, निर्दोष और स्वस्थ हैं, कर लें । '

ऐसा प्रतीत होता है कि अदिति के पुत्र, आदित्य ऐसा नाम अबतक बतलाये हुए गुणों से युक्त कुछ चुने हुए देवोंको दिया जाता था जिनका सर्वोपरि कार्य केवलमात्र लोकरक्षा तथा लोकसेवा करना ही था । इस आदित्यमण्डल के सदस्य वेही हो सकते जो संपूर्णतया निर्दोष एवं पूर्णतया विकसित हों, जिनमें किसी भी प्रकार की त्रुटि न पाई जाती हो, क्योंकि त्रुटि होनेसे वे अदिति अखण्डता, अशूनता के पुत्र कहलाने के अधिकारी नहीं हो सकते । यद्यपि एक स्थान में कहा है कि—

अशीतिभिस्तिसृभिः सामगोभिरादित्येभिः... ।

(अथर्व. २।१२।४)

जिससे ज्ञात होता है कि आदित्यों की संख्या ८० × ३ = २४० थी और इन्हें सामगान विदित था, तथापि इस आदित्यमण्डल में प्रमुखतया मित्र, वरुण, अर्यमा, भग एवं सविता का स्थान था । क्योंकि अपने वैशिष्ट्यपूर्ण कार्यों से शायद इनकी ही अमिट छाप वैदिक कवियों के अन्तःस्तरपर पड़ी हुई हो । आदित्यों के निश्चित कार्य को संभवतः मित्र, वरुण एवं अर्यमा ही अधिकलभाव से संपूर्ण करने की क्षमता से युक्त हों अतः इन तीनों का उल्लेख आदित्यों के सूक्तों में बार बार पाया जाता है । जैसे

कि निम्न मंत्रों से स्पष्ट होगा—

मित्रो नो अर्यंहति वरुणः पर्वदर्यमा ।

आदित्यासो यथा विदुः ॥ (ऋ. ८।६७।२)

' आदित्य जैसे जानते हैं वैसे ही कार्य करके हमें मित्र, वरुण तथा अर्यमा दुर्गति या पापके पार ले चलें । '

महि वो महतामव वरुण मित्रार्यमन्... ।

(ऋ. ८।६७।४)

' हे वरुण ! मित्र ! अर्यमन् ! आप जैसे बड़े आदित्यों का संरक्षण बड़ा है । '

महि त्रीणामवोऽस्तु शुक्लं मित्रस्यार्यमणः ।

दुराधर्षं वरुणस्य ॥ ' (१०।१८५।२)

' तीनों अर्थात् मित्र, वरुण तथा अर्यमा का संरक्षण महान्, दिव्य तथा शत्रुओंके अपराभवनीय हो जाए । '

अनेहो मित्रार्यमन् नृवद् वरुण शंस्यं ।

त्रिवरुथं मरुतो यन्त नछर्दिः ॥ (ऋ. ८।१८।२१)

' हे वीर मरुतो ! हे मित्र, वरुण तथा अर्यमन् ! हमें निष्पाप, नेताओं से युक्त, प्रशंसनीय और तीन प्रकार के स्वीकरणीय धन से पूर्ण घर दे ढाके । '

... मित्रमीमहे वरुणं स्वस्तये । (ऋ. ८।१८।२०)

' हम कल्याण के लिए मित्र तथा वरुणको चाहते हैं । '

महि वो महतामवो वरुण मित्र दाशुषे ।

(ऋ. ८।४७।१)

' हे वरुण और मित्र ! दानीके लिए जो तुम बड़े आदित्य रक्षा का प्रबंध कर ढालते हो वह बड़ा है । '

धयं ते वो वरुण मित्रार्यमन्ःस्यामेदतस्य रथ्यः ।

(ऋ. ८।१९।३५)

' हे वरुण, मित्र तथा अर्यमन् ! हम अवश्य ही आप के ऋतको ले चलनेवाले हों । '

तत् सु नः सविता भगो वरुणो मित्रो अर्यमा ।

शर्म यच्छन्तु सप्रयो यदीमहे । ' (ऋ. ८।१८।३)

' वह विस्तारशील सुख जिसे हम चाहते हैं मित्र, वरुण, अर्यमा, सविता और भग हमें भली प्रकार से दे ढालें । '

यद्य सूर उदितेऽनागा मित्रो अर्यमा । सुवाति

सविता भगः

(ऋ. ७।६६।४)

' आज जब कि सूर्य का उदय होनेपर (अनागाः)

मिथ्याप मित्र, अर्यमा, भग एवं सविता (सुवाति) कार्य निष्पन्न कर दिखाता है । '

...सूर उदिते मित्रं गृणीषे वरुणम् । अर्यमणं
रिशादसम् ॥ (ऋ. ७।६।७)

' सूर्योदय के पश्चात् मित्र, वरुण एवं हिंसकोंके वध-कर्ता अर्यमा की सराहना करता हूँ । '

ते स्याम देव वरुण ते मित्र सूरभिः सह ।
इषं स्वश्च धीमहि । (ऋ. ७।६।९)

' हे द्योतमान वरुण तथा हे मित्र ! हम विद्वानोंके साथ तेरेही बनकर रहें तथा अन्न एवं तेजको पानेके उपाय सोचें ।

अनाप्यं वरुणो मित्रो अर्यमा क्षत्रं राजान
आशत । (ऋ. ७।६।११)

तीनों विराजमान वरुण, मित्र एवं अर्यमा को ऐसा क्षत्रियोचित बल मिला कि जो दूसरोंको पाना असंभव प्रतीत हुआ । '

ऊपर दिये हुए मन्त्रोंसे स्पष्ट ज्ञात होता है कि आदित्यों के संगठित दल में मित्र, वरुण और अर्यमा का स्थान बड़ा ही ऊँचा था । हो सकता है कि आदित्यदल के कार्यकारी मंडल के सत्ताधारी सदस्य उक्त नाम धारण करते हों । वेद में इन तीनों आदित्य दल के प्रमुख सदस्यों के बारेमें कहा है कि—

इमे चेतारो अनृतस्य भूरेर्मित्रो अर्यमा वरुणो
हि सन्ति । इम ऋतस्य वावृधुर्दुरोणे शग्मासः
पुत्रा अदितेरदग्धाः ॥ (ऋ. ७।६।५)

' ये मित्र, अर्यमा एवं वरुण अदिति के (अदग्धाः शग्मासः) न दबे हुए शक्तिशाली पुत्र हैं और ये ऋत के (दुरोणे नवृधुः) घरमें पले हुए हैं तथा (भूरेः अनृतस्य चेतारः) बड़े भारी असत्यको पहचाननेवाले हैं । ' अर्थात् ये कभी मिथ्या बातों में फँस नहीं सकते और इनकी शिक्षादीक्षा ऋतके घरमें हुई है । इस प्रकार शिक्षित होकर ये आदित्यदलके संगठनकार्य में ऊँचे पदपर विराजमान होते हैं । इन के कार्य का स्वरूप बताया है कि ये—

....तिरश्चिद्वहः सुपथा नयन्ति । (ऋ. ७।६।६)

' अच्छे मार्ग से लोगोंको पाप के परे ले चलते हैं । '

... अचेतसं चिदिचितयन्ति दक्षैः ।

... चिकित्वांसो अचेतसं नयन्ति ॥ (ऋ. ७।६।७)

' अच्छे उपायों से अज्ञानी को भी ज्ञानसम्पन्न बनाते हैं और चिकित्सक बुद्धिवाले होकर अनजान को ठीक मार्ग पर ले चलते हैं । '

अब विचार करना चाहिए कि आदित्यों के लिये कौन से विशेषण प्रयुक्त हुए हैं जिन से ज्ञात होगा कि आदित्य दल में प्रवेश पाने के लिए योग्यता का मानदंड कितना ऊँचा रखा था ।

१. सक्रतवः = कार्योंसे युक्त, कभी खाली हाथ या मिठले न बैठे हुए ।

२. शुचयः, धारपूताः = विशुद्ध एवं जलधाराओंमें नहा धोकर साफसुथरे रहनेवाले ।

३. ज-वृजिनाः, अनवद्याः = पापरहित, अनिन्द्य ।

४. अरिष्टाः, अदग्धासः — अहिंसित, न दबे हुए ।

५. उरघः, गभीराः = बृहदाकार, गंभीर मुखा-कृतिवाले ।

६. अस्वप्नजः, अनिमिषाः = निद्रासुख का उपभोग न लेनेवाले और पलक न मारनेवाले । यह दूसरा विशेषण अथक परिश्रम करने की सूचना देता है ।

७. दीर्घाधियः = विशाल बुद्धिवाले या महान् कार्य-क्रम रखनेवाले ।

८. ऋणानि चयमानाः = ऋणोंको बटोरनेवाले ताकि उऋण हो सकें ।

९. ऋजवे मर्त्याय उरुशंसाः = सरल, निष्कपट आचरणवाले मानव को खूब उपदेश की बातें कहनेवाले ।

१०. राजभ्यः (आदित्येभ्यः) राजानः = विराजमान आदित्यों के लिए; लोक सेवकों को जिनका के मध्य विराजमान होने की चेष्टा करनी चाहिए ।

११. सु-दानवः = अच्छे दानशूर । कृपणतासे कोसों दूर रहनेवाले ।

१२. यजत्राः = पूजनीय ।

१३. रजिष्ठाः = लोकोंके मध्य खूब संचार करनेवाले ।

१४. ये अंहः अतिपिप्रति = जो पाप के परे ले जाते हैं, जनता को निष्पाप करनेका प्रयत्न करते हैं।

१५. ये अदृश्यस्य व्रतस्य ईशते = जो न दृश्य हुए व्रतके अधिपति हैं।

१६. ऋतावृधः, घोरासो अनृतद्विषः = ऋत की वृद्धि करनेवाले और असत्य के भीषण विरोधी।

१७. ऋतजाताः ऋतस्थ दुरोणे ववृधुः = ऋत से या ऋतके लिए उत्पन्न, ऋत के घर में पले हुए।

१८. विश्व-वेदसः = सब कुछ जाननेहार।

१९. सु-महसः = बड़े अच्छे अजस्वी।

२०. प्र-चेतसः = प्रकृष्ट ज्ञानवाले।

२१. सुमृलीकाः = बहुत अच्छे ढंगसे सुख देनेवाले।

२२. हवनश्रुतः = जनता की पुकार सुननेवाले।

२३. अ-द्रुहः = द्वेष न करनेवाले।

२४. क्षितीनां मूर्धानः = मानवोंके प्रमुख।

२५. अद्भुत-पनसः = जिन्होंने पहले पापकृत्य किया ही न हो।

इन ऊपर दिये हुए विशेषणों से आदित्यदलके सदस्यों की योग्यतापर बहुत अच्छा प्रकाश पड़ता है। जो निरलस कार्यकर्ता, सत्यप्रेमी, उत्कृष्ट ज्ञानी, सेवातरपर, निष्पाप, साफ सुधरे, दानशूर, विशालचेता और लोकरक्षक बननेके इच्छुक होते वेही आदित्यदल में प्रवेश पा सकते थे और अदिति अर्थात् अदीनता, स्वतंत्रता, पूर्णता के पुत्र कहलानेके अधिकारी बन सकते थे।

इस आदित्यदल में मित्र का स्थान बहुत ही ऊँचा है, इसलिए वेदमें मित्र के बारे में क्या कहा है सो देखना चाहिए—

... मित्राय हव्यं घृतघञ्जुहोत। (ऋ. ३/५९/१)

‘मित्रके लिए घृतयुक्त हवनीय वस्तुका अर्पण करो।’

तस्मा एतत् पन्थ्यतमाय जुष्टमग्नी मित्राय हवि राजुहोत (ऋ. ३/५९/५)

‘उस अत्यन्त प्रशंसनीय मित्र के लिए यह सेवनीय हविर्भाग अग्नि में डाल दो।’ इसभाँति मित्र का सुस्वा-

गत करनेके पश्चात् कवि कहते हैं—

अनमीवास इलया मदन्तो... वयं मित्रस्य समतौ स्याम। (ऋ. ३/५९/३)

‘हम नीरोगी और अन्न मिलनेके कारण हर्षित होते हुए मित्र की प्रसन्न बुद्धि की छत्रछायामें रहें।’

अयं मित्रो नमस्यः... राजा सुक्षत्रो अजनिष्ट... तस्य ध्यं सुमतौ... भद्रे सौमनसे स्याम।

(ऋ. ३/५९/४)

‘यह मित्र विराजमान, अच्छे क्षत्रियोचित बल से युक्त एवं नमन करनेयोग्य हो प्रकट हुआ है अतः हम उस की कल्याणकारक प्रसन्नताके तत्वावधान में रहें। अर्थात् कभी ऐसा न होनेपाय कि मित्र को क्रोधित होना पड़े।

मह्यं आदित्यो नमसोपसद्यो यातयज्जनो गृणते सुशेवः। (ऋ. ३/५९/५)

‘यह मित्र बड़ा भारी आदित्य है जो जनता को प्रेरित करता हुआ प्रशंसा करनेवाले को सुन्दर ढंग से सुख देता है और जिस के समीप नमनपूर्वक बैठना चाहिए।’

मित्रो जनान् यातयति श्रुवाणो...।

(ऋ. ३/५९/१)

‘मित्र लोगों को उपदेश की बातें कहता हुआ कार्य-प्रवृत्त करता है।’

मित्रः कृष्टीरनिमिषाभि चष्टे...। (ऋ. ३/५९/१)

‘मित्र टकटकी लगाकर कृषिकर्म में लगे लोगों को देखता है’ ताकि कहीं काम में भूल न होनेपाय।

...मित्रो दाधार पृथिवीमुत धाम्। (ऋ. ३/५९/१)

...स देवान् विश्वान् बिभर्ति। (ऋ. ३/५९/८)

‘मित्र सुलोक एवं भूलोक की धारणा करता है और सभी देवों का भरणपोषण करता है।’ अर्थात् समूचे विश्व में सुव्यवस्था हो ऐसी कोशिश करता है।

न हन्यते न जीयते त्योतो, नैनं

अंहो अश्नोत्यन्तितो न दूरात्। (ऋ. ३/५९/२)

‘हे मित्र! तू जिसकी रक्षा कर चुका है वह न मारा जाता है और नाहि जीता जाता है, इसे न समीप से न दूर से ही पाप व्याप्त कर पाता है।’

अभि यो महिना दिवं मित्रो बभूव सप्रथाः।

अभि श्रवाभिः पृथिवीम्॥ (ऋ. ३/५९/७)

‘ जो मित्र विशाल होकर अपने महनीय तेज से
ध्रुलोक को तथा अश्वोंसे भूमण्डलको व्याप्त कर चुका है।’

मित्रो... जनाय... इष... अक्षः । (ऋ. ३।५९।९)

‘ मित्रने जनताके लिए अन्न बनाया है ।’

इस प्रकार मित्र की योग्यता बड़ी है, परन्तु वह स्वयं
अकेलाही प्रकट न होकर बहुधा वरुण के साथ मिलकर
कार्य करता है। अतः वेद में दोनोंका संयुक्त उल्लेख पाया
जाता है। जैसे -

मित्रं हुवे पूतदक्षं वरुणं च रिशादसम् ...

...मित्रावरुणौ ऋतावृधौ ऋतस्पृशा...

कवी... मित्रावरुणा तुविजाता उरुक्षया ...

(ऋ. १।२।७-९)

‘ कुछ बलवाले मित्र और शत्रुविध्वंसक वरुण को
बुलाता हूँ; मित्र एवं वरुण ऋत के संपर्क में रह उस की
वृद्धि करनेवाले हैं; मित्र और वरुण विद्वान्, विशालता में
उत्पन्न और विस्तृत स्थल में निवास करनेवाले हैं ।’

मित्रं धयं हवामहे वरुणं सोमपीतये ...

... यौ... ऋतस्य ज्योतिषस्पती ता मित्रा-

वरुणा हुवे। वरुणः प्रविता भुधन् मित्रो
विश्वाभिरुतिभिः । करतां नो सुराधसः ।

(ऋ. १।२३।४-६)

‘ हम मित्र और वरुण को सोम पीनेके लिए बुलाते
हैं, जो ऋत एवं प्रकाशके अधिपति हैं, उन मित्र एवं वरुण
को मैं बुलाता हूँ; वरुण उत्कृष्ट संरक्षक बने तथा सभी
संरक्षणसाधनों से युक्त होकर मित्र भी रक्षणकर्ता हो
और दोनों मिलकर हमें अच्छे धनिक बना दें ।’

मित्र और वरुण के स्वागत का वर्णन वैदिक कवियोंने
इस तरह किया है-

आ नो गन्तं रिशादस्ता वरुण मित्र... उपेमं
आरुमध्वरम् । (ऋ. ५।७।११)

‘ हे शत्रुविध्वंसक मित्र एवं वरुण ! इस सुन्दर, हिंसा-
रहित कार्य के समीप आने के लिए हमारे पास आओ ।’

उप नः सुतमा गतं वरुण मित्र दाशुषः...

सोमस्य पीतये । (ऋ. ५।७।१३)

‘ हे मित्र और वरुण ! हमारे निचोड़े हुए सोमके निकट
आओ, ताकि दानीके सोमका पी जाना संभव हो ।’

आ यातं मित्रावरुणा जुषाणावाहुतिं नरा ।

पातं सोममृतावृथा । (ऋ. ७।६६।१९)

‘ हे नेता एवं ऋत की वृद्धि करनेवाले मित्र और
वरुण ! हमारे दान का स्वीकार करते हुए तुम दोनों
आओ तथा सोम पी जाओ ।’

...आयातं...गोश्रीता मरसरा इमे सोमासो...

आ राजाना दिविस्पृशाऽश्मन्ना गन्तमुप नः
इमे वां मित्रावरुणा गवाशिरः सोमाः शुक्राः...

(ऋ. १।१३।७।९)

‘ हे विराजमान एवं ध्रुलोक के छूनेवाले मित्र एवं
वरुण ! आओ, हमारी ओर आओ; क्योंकि आपके लिए
ये तेजस्वी सोम दुग्धमिश्रित बनाकर रखे हैं ।’

अश्मन्ना गन्तमुप नोऽर्वाञ्चा सोमपीतये ।

अयं वां मित्रावरुणा नृभिः सुतः सोम आ
पीतये सुतः । (ऋ. १।१३।७।३)

‘ हे मित्र तथा वरुण ! सोम पीनेके लिए हमारी ओर
आओ; क्योंकि यह सोम तुम्हारे पीने के लिए मनुष्यों से
निचोड़ा गया है ।’

इससे स्पष्ट है कि आदित्यों का स्वागत तथा सरकार
करने के लिए दुग्धमिश्रित सोम का रस दिया जाता था।
अब देखना चाहिए कि वैदिक कवि मित्र एवं वरुण से
किस तरह की प्रार्थना करते हैं, या उनके सम्मुख कौनसी
माँग पेश करते हैं-

अभयं मित्रावरुणाधिहास्तु नोऽर्घिपात्रिणो

नुदतं प्रतीचः । मा ह्यातारं मा प्रतिष्ठां विद्वन्त

मिथो विघ्नाना उप यन्तु मृत्युम् ॥

(अथर्व. ३।३२।३)

‘ हे मित्र और वरुण ! हमारे लिए दूधर निर्भयता रहे
और अपने तेज से तुम स्वार्थी लोगों को पराङ्मुख बना-
कर दूर कर दो। ध्यानमें रहे कि वे किसी भी बतानेवाले
ज्ञानी को और मानसम्मान को न पा सकें, अपितु आपसमें
ही एक दूसरे की राह में रोड़े अटकाते हुए मौत के मुँह
में समाविष्ट हो जायँ ।’

... मित्रावरुणा ... प्रजावत् क्षत्रं मधुनेह

विश्वतम् । बाधेर्या दूरं निर्ऋतिं पराचैः कृतं

विदेनः प्र ममुक्तमस्मत् ॥ (अथर्व. ६।९७।२)

‘हे मित्र एवं वरुण ! सन्तानयुक्त क्षत्रियोचित वीरताको तुम मधु से पुष्ट करो, बुराई को दूर से ही हटा दो और जो कुछ पाप किया हो, उसे हम से अलग कर दो ।’

यो अद्य सेन्यो .. उदीरते । युवं तं मित्रा-
वरुणौ अस्मद्यावयतं परि ॥ (अथर्व. १।२०।२)

‘ आज जो कोई हथियार सेना साथ ले ऊपर उठ जाता हो, हे मित्र और वरुण ! उसे तुम हम से दूर भगा दो ।’

मित्रावरुणौ वृष्ट्याधिपती तौ मावताम् ।
(अथर्व. ५।२४।५)

‘ वे दोनों मित्र और वरुण जो स्वामी हैं, वर्षा से मेरी रक्षा करें ।’

... मित्रावरुणा धारयत्क्षिती ... युत्रो ...
सख्यैरभिष्याम रक्षसः । (ऋ. १०।१३।२)

‘ हे मानवों के धारणकर्ता मित्र एवं वरुण ! तुम्हारी मित्रता मिलनेपर हम राक्षसों को पराभूत करेंगे ।’

एष स्तोमो वरुण मित्र तुभ्यं ... अविष्टं
धियो जिगृतं पुरन्धीः । ...

(ऋ. ७।६५।५ ; ७।६४।५)

‘ हे मित्र एवं वरुण ! तुम्हारे लिए यह स्तोत्र तैयार किया है; तुम हमारे कर्मों को सुरक्षित रखो और बहुतों के धारणक्षम बातों को जागृत करो ।’

इयं... पुरोहितिर्युवभ्यां यज्ञेषु मित्रावरुणा-
वकारि । विश्वानि दुर्गा पिपृतं तिरो नो... ।

(ऋ. ७।६०।१२ ; ७।६१।७)

‘ यज्ञों में, हे मित्र और वरुण ! तुम्हारे लिए यह पुरस्क्रिया कर डाली है; अतः सभी बीहड़ स्थानों को पार करके हमारी पुष्टि करो ।’

आ मां मित्रावरुणेह रक्षतं ... (ऋ. ७।५०।१)

... हुवे वां मित्रावरुणा सबाधः ।

(ऋ. ७।६१।६)

‘ हे मित्र तथा वरुण ! यहाँ मेरी रक्षा करो, बाधा से विर जानेपर तुम्हें मैं पुकारता हूँ ।’

प्र बाहवा सिसृतं जीवसे न आ नो गव्यूति-
मुक्षतं घृतेन । आ नो जने भवयतं युवाना
भुतं मे मित्रावरुणा हवेमा ॥ (ऋ. ७।६२।५)

‘ हे मित्र एवं वरुण ! अपने बाहुओं को खूब फैलाओ

ताकि हम जीवित रहें और घृतसे हमारे मार्ग को सींच दो, युवकतुल्य तुम जनता में हमें विख्यात करो, मेरी इन पुकारोंको तुम सुन लेना ।’

राजाना... ऋतस्य गोपा सिन्धुपती क्षत्रिया
यातमर्वाक् । इळां नो मित्रावरुणोत वृष्टि
अव दिव इन्धतं जीरवान् ॥ (ऋ. ७।६४।२)

‘ हे विराजमान मित्र एवं वरुण ! तुम ऋत के संरक्षक, क्षत्रिय, शीघ्रदानी और समुद्रपर प्रभुत्व रखनेवाले हो, इसलिए हमारे अभिमुख आओ और शुलोक से हमें वृष्टि एवं अन्न प्रेरित करो ।’

सम्राजावस्य भुवनस्य राजयो मित्रावरुणा
विदधे स्वर्हशा । वृष्टिं वां राधो अमृतत्व-
मीमहे ... (ऋ. ५।६३।२)

‘ हे भलीभाँति विराजमान तुम इस भुवनपर प्रभुत्व रखनेवाले मित्र और वरुण ! यज्ञमें स्वकीय शक्ति से सब कुछ देखनेवाले हो; तुम से हम अपरपन और धन तथा वृष्टि चाहते हैं ।’

यत् बंदिष्ठं... सुदान... अच्छिद्रं शर्म भुव-
नस्य गोपा । तेन नो मित्रावरुणावविष्टं सिपा-
सन्तो जिगीवांसः स्याम ॥ (ऋ. ५।६२।९)

‘ हे अच्छे दानधूर एवं विश्वके पालनकर्ता मित्र और वरुण ! जो कुछ भी छिद्ररहित (चुटिरहित, अखंड) और अत्यधिक सुख है, उससे हमारी रक्षा करो; ताकि हम धन का वितरण करते हुए जिगीषु बनें ।’

... मित्रवरुणा... दिवः सम्राजा पयसा न
उक्षतम् । (ऋ. ५।६३।५)

‘ हे शुलोक के सम्राट्‌तुल्य मित्र और वरुण ! हमें दूध एवं जलसे सींच दो अर्थात् हमारे यहाँ दुग्ध एवं जल की न्यूनता न हो ।’

सम्राजा या... मित्रश्चोभा वरुणश्च देवा देवेषु
प्रशस्ता । ता नः शक्तं पार्थिवस्य महो रायो
दिव्यस्य । महि वां क्षत्रं देवेषु ॥

(ऋ. ५।६८।२-३)

‘ जो ये सम्राट्‌तुल्य, दानी, देवतागण में प्रशंसित मित्र एवं वरुण हैं, वे हमें भूमंडल एवं शुलोकस्थ महनीय धन दे डालें, क्योंकि देवताओं में तुम्हारा क्षत्रियोचित बल

महान् हे । '

नू मित्रो वरुणो अर्यमा नस्यमने तोकाय
ज्रिबो दधन्तु । सुगा नो बिम्बा सुपथानि
सन्तु ... ॥ (ऋ. ७।६२।६)

' जब अर्यमाके साथ मित्र और वरुण हमें तथा बाक-
वर्षों को धन दे डाले और हमारे लिए सभी मार्ग सुन्दर
एवं सुगम हों । '

मा हेले भूम वरुणस्य ... मा मित्रस्य नृणाम् ।
(ऋ. ७।६२।४)

' हम लोग वरुण के तथा मानवोंके अत्यन्त प्यारे मित्र
के भी द्वेष में न रहें ' अर्थात् ऐसा कभी न होने पाय कि
वे हमारा द्वेष करने लगें । इस से स्पष्ट है कि मित्रावरुणों
का कितना भारी प्रभाव जनतापर पड़ा था ।

मित्रस्तप्तो वरुणो देवो...प्र साधिष्ठेभिः पथि-
भिर्नयन्तु । (ऋ. ७।६४।३)

' तो हमें मित्र एवं देवतारूपी वरुण अत्यन्त सुगम
मार्ग से अधिकाधिक ले चलें । '

मित्रस्तप्तो वरुणो मामहन्त शर्म तोकाय तन-
याय गोपाः । मा घो भुजेमान्यजातमेनो मा
तत् कर्म ... यच्छयध्वे ॥ (ऋ. ७।५२।२)

' संरक्षक मित्र एवं वरुण उस सुख को हमारी सन्तान
के लिए देवें; हम भाप के ही हैं, इसलिए दूसरों से उपज
पाप का भार हमें न उठाना पड़े और नाहि हम वह कार्य
करें कि जिसे तुम नष्ट करना चाहो । '

यत् गोपा अवदत् अदितिः शर्म भद्रं मित्रो
यच्छन्ति वरुणः । तस्मिन्ना तोकं तनयं
क्षाना मा कर्म देवहेळनं...॥ (ऋ. ७।६०।८)

' संरक्षक अदितिने जो कहा था कि मित्र एवं वरुण
कल्याणकारक सुख देते हैं, उसीमें हम अपनी सन्तान
रखते हुए ऐसा कर्म न करें कि जिससे देवोंका क्रोध
प्रतीत हो । '

ता नः स्तिपा तनूपा वरुण जरितृणाम् ।

मित्र साधयतं धियः । (ऋ. ७।६६।३)

' हे विख्यात गृहक्षक तथा शरीरसंरक्षक मित्र और
वरुण ! हम स्तोताओं के कर्मों को या बुद्धियोंको सफलता
दे । '

ऋतस्य मित्रावरुणा पथा घामपो न नांवा वुरिता
तरेम । (ऋ. ७।६५।३)

' हे मित्रावरुणो ! तुम्हारे ऋतके मार्गसे हम बुराईयों
को इस भाँति काँवकर भागे बढें, जैसे नौकाके सहारे लोग
जलोंको तैर जाते हैं । '

वयं मित्रस्यावसि स्याम सप्रथस्तमे ... ॥

(ऋ. ५।६५।५)

' हम अत्यन्त विस्तृत एवं चौड़े मित्रके संरक्षणमें रहे '
इन ऊपर दिये हुए मंत्रभागों से मित्र और वरुणके
कार्योंका स्वरूप स्पष्ट हो जाता है । जनताकी सेवा वे
कितनी लगनसे करते थे, सो सूर्यप्रकाशवत् सुस्पष्ट होता
है । वेदमें अन्यत्र इनके बारेमें जो उल्लेख पाये जाते हैं
उनसे भी इसी बात की पुष्टि होती है । जैसे-

यां मे धियं ... देवा अद्वात वरुण मित्र यूयं ।
तां पीपयत पयसेव ध्रेनुं कुषित् गिरो अधि रथे
वहाथ ॥ (ऋ. १०।६४।१२)

' हे श्रोतमान मित्र एवं वरुण ! तुमने जो बुद्धि मुझे
प्रदान की है, उसे तुम ऐसी पुष्ट करो जैसे कोई गायको
अत्यन्त दुग्धवती बनाए अर्थात् बुद्धि यथेष्ट सफल हो ।
क्योंकि तुम अपने रथोंमें बहुतसी वक्तृताओं को ले चलते
हो । ' इससे स्पष्ट होता है कि रथारोही होकर जहाँ जहाँ
वे पहुँचते, उधर लोग इनके लिए भाषण किया करते थे ।
निरसम्भेद इन भाषणोंमें मित्रावरुणकी योग्यताका यथोचित
वर्णन रहता अतः वैदिक कवि उनसे प्रार्थना करते हैं कि
वे दोनों तथा अन्य देवभी उन्हें भलीभाँति लाभ पहुँचायें ।
मित्र और वरुण तथा अन्य आदित्य ऋषिसेवामें अनवरत
रूपसे लगे हैं, इसलिए वैदिक कवि कहते हैं-

आ नो बर्ही रिशादसो वरुणो मित्रो अर्यमा ।

सीदन्तु मनुषो यथा ॥ (ऋ. १।२६।४)

आ सीदन्तु बर्हिषि मित्रो अर्यमा प्रातर्यावाणो

अश्वरम् । (ऋ. १।४४।१३)

' शत्रुहंसक तीन प्रमुख आदित्य मित्र, वरुण और
अर्यमा हमारे बिछाप हुए दर्भासनपर अन्य मानवोंके तुल्य
बैठें । प्रातःकाक ही अहंसक कार्यमें उपस्थित रहनेके लिए
जानेवाले मित्र एवं अर्यमा कुशासनपर बैठ जायें । '

वैदिक कवि अतिसे कहते हैं कि-

त्वमादित्या आषह तान् ह्युदमसि । अग्ने...

(ऋ. १।९४।३)

“ हे अग्ने ! तू अदितिके पुत्रोंको हथर ले आ, क्योंकि हम उन्हें बहुत चाहते हैं । ” आदित्योंकी योग्यताके बारेमें कहा है कि—

ते हि पुत्रासो अदितेर्विदुर्ध्वं षांसि योतवे

अंहोधिदुरुचक्रयोऽनेहसः ॥ (ऋ. ८।१८।५)

“ वे तो अदितिके पुत्र निष्पाप और विशाल मात्रा में कार्य करनेवाले हैं और जानते हैं किस ढंगसे हमें पापसे दूर रखा जाय तथा द्वेषार्थों को हमसे पृथक् किया जाय । ”

सम्राजो ये सुधृधो यज्ञमाययुः ... दधिरे दिवि क्षयम् । (ऋ. १०।६३।५)

“ जो सम्राट्पुरुष भली भाँति बढनेवाले आदित्य हैं वे यज्ञमें भाग्युक्त हैं तथा धुलोकमें निवासस्थान बना चुके हैं । ” आदित्यों से जनताको कैसे लाभ पहुँचता था इस विषय में कहा है कि—

अरिष्टः स मर्तो विश्व एधते प्र प्रजाभिर्जायते...
यमादित्यासो नयथा सुनीतिभिरति विश्वानि
दुरिता स्वस्तये ॥ (ऋ. १०।६३।१३)

“ जिस मानव को आदित्य अच्छी नीतियों से सारी बुराइयों के पार सुख के लिए ले चलते हैं, वह अखंडरूप से अहिंसित होता हुआ वृद्धिगत होता है और संतानों द्वारा विशेष रूप से जन्म लेता है । ”

इस कारण वैदिक कवि इन से प्रार्थना करते हैं कि—

त आदित्या अभयं शर्म यच्छत । सुगा नः कर्तं
सुपथा स्वस्तये ॥ (ऋ. १०।६३।७)

“ ऐसे वे विख्यात आदित्यो ! तुम भयरहित सुख प्रदान करो और भलाई के लिए हमारे लिए सुन्दर मार्ग सुखपूर्वक गमन करने योग्य कर दो । ”

त आदित्या आगता सर्वतातये... (ऋ. १०।३५।११)

“ ऐसे वे तुम आदित्यो ! सबके विस्तार या वृद्धिके लिए आओ । ”

तन्नो देवा यच्छत सुप्रवाचनं छर्विरादित्याः

सुभरं नृपाय्यम् । (ऋ. १०।३५।१२)

“ हे देवतारूपी आदित्यो ! तो हमें ऐसा घर दो कि जिसे नेताओं का संरक्षण प्राप्त हो, जो भलीभाँति भरण

करता हो तथा अत्यन्त प्रशंसनीय हो । ”

...स्वस्तये आदित्यासो भवन्तु नः । (ऋ. ५।५१।१२)

“ हमारे कल्याण के लिए आदित्य प्रयत्नशील रहें । ”

ऐसे विख्यात आदित्यों के दलमें प्रमुखतया विराजमान मित्र, वरुण एवं अर्यमा के संबंधमें निम्न मंत्र देखने योग्य हैं—

प्रातये वरुणं मित्रं... कृत्वावसे नो अथा ।

(ऋ. ६।२१।९)

“ आज विशेष ढंग से संरक्षण हो इसलिए मित्र एवं वरुण को तैयार कर ले । ”

ते नः सन्तु युजः सदा वरुणो मित्रो अर्यमा ।

धृधासश्च प्रचेतसः ॥ (ऋ. ८।८३।२)

“ वे वर्धनशील तथा प्रकृष्ट ज्ञानवाले मित्रावरुण एवं अर्यमा हमेशा हमारे साथ रहनेवाले हों । ”

ऋजुनीती नो वरुणो मित्रो नयतु विद्वान् ।

अर्यमा देवैः सजोषाः ॥ (ऋ. १।९०।१)

शं नो मित्रः, शं वरुणः, शं नो भवत्वर्यमा...

(ऋ. १।९०।९)

“ सरल एवं निष्कपट नीतिसे प्रेरित होकर जाननेवाला मित्र, वरुण तथा देवताओं से युक्त अर्यमा हमें ले चले । ”

“ तीनों आदित्य हमारे लिए हितकारक बनें । ”

आ नो...गमन्तु देवा मित्रो अर्यमा वरुणः

सजोषाः । (ऋ. १।१८९।२)

“ हमारे निकट तीनों देवतारूपी मित्रावरुण तथा अर्यमा मिल कर आजायें । ”

धामं नो अस्त्वर्यमन् धामं वरुण शंस्यम् ।

धामं हि आवृणीमहे ॥ (ऋ. ८।८३।४)

हे वरुण एवं अर्यमन् ! हमें प्रशंसनीय एवं सुन्दर धन मिल जाय, क्योंकि हम तो सुन्दर चीजको ही सर्वथा स्वीकार कर लेते हैं । ”

ते हि श्रेष्ठवर्चसस्त नस्तियो विश्वानि दुरिता नयन्ति । सुक्षत्रासो वरुणो.... । (ऋ. ६।५१।१०)

“ वे उत्तम क्षत्रियोचित बलसे पूर्ण मित्र एवं वरुण उच्च कोटि के तेजवाले हैं और निष्पक्ष से हमें सारी बुराइयोंके पार ले चलते हैं । ”

त आगमन्तु त इह भवन्तु सुक्षत्रासो वरुणो
मित्रो... । (ऋ. ६।४९।१)

“ वे अच्छे क्षत्रिय मित्रावरुण इधर आ जायँ और हमारे कथन को सुन लें । ”

इसभाँति, मित्र और वरुण जिन्हें आदिस्थ दल में सर्वोपरि स्थान मिल गया है अपनी तीव्र लगन एवं अद्भुत उत्साहसे जनसेवा को इतने अच्छे ढंग से निभाते हैं कि वैदिक कवि प्रसन्नचेता होकर उनकी खूब सराहना करते

हैं, देखिए—

इमां वां मित्रावरुणा सुवृक्तिमिधं न कृण्वे
असुरा नवीयः ॥ (ऋ. ७।३६।२)

“ हे बल तथा प्राण शक्ति देनेवाले मित्र और वरुण ! तुम दोनोंके लिए मैं इस नयी सुन्दर वक्तृता को बना देता हूँ, मानों जैसे कि कोई भक्त बनाता हो अर्थात् सोच विचार के उपरान्त परिश्रमपूर्वक तैयार कर देता हूँ । ”

सविता देवताका परिचय

सविता के संबंध में ब्राह्मणग्रन्थों में निम्न निर्देश मिलते हैं जैसे—

सविता वै देवानां प्रसविता । (शत. १।१।२।१७)
(जै. उ. ३।१।८।३)

सविता वै प्रसविता । (कौ. ६।१४)
“ सविता सचमुच देवोंको उत्पन्न करनेवाला है, उत्पादक है । ”

सविता वै प्रसवानामीशे । (कौ. १।३०; ७।१६)
सविता प्रसवानामीशे । (कौ. ५।२)

“ सविता विशेष उत्पादनोंका प्रभु है । ” इस से स्पष्ट हुआ कि उत्पादन या सृजनक्रिया से सविताका घनिष्ठ संबंध है । यही बात निम्न निर्देश में दिखाई देती है—

पताभिर्वै (रात्रिभिः) सविता सर्वस्य प्रसवमगच्छत् । (ताण्ड्य. २४।१५।२)

“ इन्हीं से युक्त हो सविता सबके उत्पादन के निकट चला गया । ”

सविता प्राजनयत् । (तै. ब्रा. १।६।२।२)
प्रजापतिः सविता भूत्वा प्रजा असृजत । (तै. ब्रा. १।६।४।१)

“ सविताने प्रकृष्टतया उत्पन्न किया, प्रजापतिने सविता बनकर प्रजाओं का सृजन किया । ”

अब देखना चाहिए कि वेदमंत्रोंमें उत्पादक सविताके संबंधमें कौनसे निर्देश पाये जाते हैं—

दिवो धर्ता भुवनस्य प्रजापतिः ... विचक्षणः

प्रथयन्नापृणन्नुर्वजीजनत् सविता सुम्नमुक्थ्यम् ।
(ऋ. ४।५३।२)

“ विश्वकी प्रजाओंका पालनकर्ता, सुलोकका धारण करनेवाला और विशेष ढंगसे द्रष्टा सविता फैलानेका तथा भरनेका कार्य करता हुआ प्रशंसनीय एवं विशाल सुखका सृजन कर चुका । ”

... प्रासाधीन्द्रं द्विपदे चतुष्पदे । (ऋ. ५।८।१।२)

“ मानवों तथा चौपायोंके लिए सविताने हितका निर्माण प्रकृष्ट रूपसे किया । ”

उतेशिषे प्रसवस्य त्वमेक इत् ... (ऋ. ५।८।१।५)

“ हे सवितर ! तू भकेला ही उत्पादन कार्यपर प्रभुत्व रखता है । ”

स हि रत्नानि दाशुषे सुवाति सविता भगः ।

तं भागं चिामीमहे ॥ (ऋ. ५।८।२।३)

“ वह सेयनीय या ऐश्वर्यवान् सविता तो दानी पुरुषके लिए रत्नोंका सृजन करता है और हम उस अनूठे भागको पाना चाहते हैं । ”

... देवः सविता दमूना ... आ दाशुषे सुवति भूरि धामम् । (ऋ. ६।७।१।४)

“ दान देनेकी इच्छा मनमें रखता हुआ श्रेष्ठतम सविता दानी पुरुषको देनेके लिए सुन्दर धन को प्रचुर-मात्रा में बना देता है । ”

सविता प्रसवानामधिपतिः स मावतु ... ।

(अथर्व. ५।२४।१)

‘ प्रकृष्ट उत्पादनोका स्वामी जो सविता है वह मेरी रक्षा करे । ’

वाममद्य सवितर्धाममुश्वोदिवेदिवे वाममस्मभ्यं सावीः । (ऋ. ६।७।१६)

“ हे सवितर् ! आज हमारे लिए सुन्दर धनका सृजन कर, कल के दिन भी और प्रतिदिन धनका निर्माण कर । ”

अथा नो देव सवितः प्रजावत् सावीः सौभगम् । (५।८२।४)

“ हे देवतारूपी सवितर् ! आज तू हमारे लिए समस्तानुपुक्त अच्छे ऐश्वर्यका सृजन कर । ”

देवेभ्यो हि प्रथमं यज्ञियेभ्योऽमृतत्वं सुवसि भागमुत्तमम् । (४।५४।२)

“ हे सवितर् ! पहले तो तू पूजनीय देवों के लिए उत्कृष्ट तथा भजनीय धनका और अमरपनका निर्माण करता है । ”

य इमा विश्वा जानान्याध्रावयति श्लोकेन । प्र ख सुवाति सविता ॥ (ऋ. ५।८२।९)

“ जो सविता इन सभी वस्तुओं को प्रकर्ष से उत्पन्न करता है और उत्पादित होनेपर श्लोक द्वारा चारों ओर सुनाता है ।

उदु तिष्ठ सवितः श्रुध्यास्य ... व्युर्ध्वी पृथ्वी... सुजानः आ नृभ्यो मर्तभोजनं सुवानः ॥ (ऋ. ७।३८।२)

‘ हे सवितर् ! तू उठ खड़ा रह, इस प्रार्थना को सुन के और तू विशाल पृथ्वी को बनाता है तथा मानवों के लिए मनुष्योपभोग्य धन-संपदा को प्रेरित करता है । ’

इन उपयुक्त मन्त्रों से भी स्पष्ट होता है कि उत्पादन एवं प्रेरण सविता के प्रमुख कार्यों में गिने जाते थे । दोनों कार्य निरसन्देह महत्वपूर्ण हैं और वैदिक कवि सविता से निम्न प्रकार प्रार्थना करते हैं—

ये ते पन्थाः सवितः पूर्व्यासोऽरेणवः सुकृता अन्तरिक्षे । तोमिनीं अद्य पथिभिः सुगेभी रक्षा न्न नो अधि न्न ब्रूहि देव ॥ (ऋ. १।३५।११)

‘ हे (देव सवितर्) चोतमान ! उत्पादक तथा प्रेरक सवितर् ! अन्तरिक्ष में (ते ये पूर्व्यासः) तेरे जो पूर्व-काक से विद्यमान (अरेणवः सु कृताः) बिना धूलि के

अर्थात् निर्मल एवं भली भाँति बनावे हुए (पन्थाः) मार्ग हैं (तेभिः) उनपर से, (सुगेभिः पथिभिः) जो कि सुगमतापूर्वक यात्रा करनेयोग्य हैं, आकर (अद्य नः रक्ष) आज हमारी रक्षा कर (अधि ब्रूहि च) और हमसे वार्तालाप कर, कुछ उपदेश की बातें हम से कह दे । ’

अस्मभ्यं तद्विषो अदूभ्यः पृथिव्यास्त्वया दत्तं काम्यं राधः आ गात । शं यत् स्तोतृभ्य आपये भवात्युरुशसाय सवितर्जरित्रे ॥

(ऋ. २।३८।११)

‘ हे (सवितर्) उत्पादक तथा प्रेरक देव ! (स्वया दत्तं) तूने दिया हुआ (तत् काम्यं राधः) वह कमनीय धन (दिवः अदूभ्यः पृथिव्याः) युक्तोक्त से, जलोंसे तथा भूमंडलपर से (अस्मभ्यं आ गात्) हमारे लिए आजाय, (यत्) जो धन, (स्तोतृभ्यः) स्तोताओं के लिए तथा (उरुशसाय जरित्रे) विस्तारपूर्वक कहनेवाले प्रशंसक के लिए (शं आपये भवति) शान्तिदायक तथा आस्रवत् बन जाता है । ’

बृहत्सुम्नः प्रसवीता निवेशनो जगतः स्थातु-रुभयस्य यो वशी । स नो देवः सविता शर्म यच्छत्वस्मे क्षयाय त्रिवरुथमंहसः ॥

(ऋ. ४।५३।६)

‘ (देवः सविता) दानी सविता (यः वशी) जो सब को वश में रखनेवाला, (जगतः स्थातुः) जंगम एवं स्थावर (उभयस्य जगतः निवेशनः) द्विविध संसार को ठीक बिठानेवाला, (प्रसवीता) प्रकर्ष से प्रेरित या उत्पन्न करनेवाला और (बृहत्सुम्नः) प्रचंड सुख या धन साथ रखनेवाला है (सः नः) वह हमें (शर्म यच्छतु) सुख दे डाले और (अस्मे) हमारे लिए (अंहसः क्षयाय) पाप का विनाश हो इसलिये (त्रिवरुथं) तीन विभाग-वाले घर का दान करे । ’ इससे विदित होता है कि सविता का कार्यक्षेत्र समूचे विश्व में फैला हुआ है ।

आगन् देव ऋतुभिर्ध्वत् क्षयं, दधातु नः सविता सुप्रजामिषम् । स नः क्षपाभिरह-भिश्च जिन्वतु, प्रजावत्तं रयिमस्मे समिन्वतु (ऋ. ४।५३।७)

‘ देवतारूपी सविता (ऋतुभिः आगन्) विभिन्न

मौसम में आजाए और (क्षयं वर्धतु) हमारे निवास-स्थल को बढ़ाए तथा (सुप्रजां इषं) अच्छी सन्तान तथा अन्न (नः दधातु) हमें देवे; वह सविता (क्षपाभिः अहभिः च) रातदिन (नः जिन्वतु) हमें संतुष्ट रखे और (अस्मे) हमारी ओर (प्रजावन्तं रथिं सं इन्वतु) सन्तानयुक्त धन भलीभाँति प्रेरित करे । '

अभूदेवः सविता वन्द्यो नु नः... वि यो रश्ना
भजति मानवेभ्यः श्रेष्ठं नो अज्ञ द्रविणं यथा
दधत् ॥ (ऋ. ४।५।४।१)

' हमारे लिए द्योतमान सविता वन्दनीय हुआ है, इसमें सम्देह नहीं; जो मानवों को रमणीय धन बाँटकर देता है वह जैसे इधर हमारे लिए उच्च कोटि का द्रव्य रखे ऐसा प्रबंध करो । '

गाव इन ग्रामं युयुधिरिवाश्वान्, वाश्वेव वरसं
सुमना दुहाना । पतिरिव जायामभि नो न्येतु,
धर्ता दिवः सविता विश्ववारः । (ऋ. १०।१४९।४)

" जैसे गौएँ सायंकाल अपने ग्राम की ओर सहर्ष लौट आती हैं, योद्धा जिस तरह उत्सुकतापूर्वक घोड़ों के पास जा पहुँचता है, अच्छी मनवाली गौ दुहते समय रँभाती हुई अपने बछड़े के निकट जिस प्रकार शीघ्र जाती है और पतिदेव अपनी पत्नी के निकट जैसे तीव्रतया जाता है वैसे ही यह सविता, जो कि एलोक का धारणकर्ता और सब लोगों के लिए वरणीय है, हमारे समीप अवश्य अधिक मात्रा में आ जाए । "

देवस्य वयं सवितुः सवीमनि, श्रेष्ठे स्याम वसु-
नश्च दावने । यो विश्वस्य द्विपदो यश्चतुष्पदो
निवेशने प्रसवे चासि भूमनः । (ऋ. ६।७।१२)

(वयं) हम लोग देवतारूपी सविता के उच्चकोटि के (सवीमनि) उत्पादन-कार्य की तथा (वसुनः दावने) धनवितरण-कार्य की छत्रछाया में रहें, हे सवितर ! जो तू अखिल मानव तथा चौपायों के यथेष्ट सृजन एवं प्रस्थापन-कार्य में लगा हुआ है । " इस मन्त्र में सविता के विशाल कार्यक्षेत्र की झलक मिलती है । वह केवल श्रेष्ठ ढंग के उत्पादन-कार्य में ही लगा हो सो बात नहीं अपितु धनके विभाजन में भी उसका ध्यान बराबर लगा रहता है, क्योंकि यदि उत्कृष्ट उत्पादन की ओर ही ध्यान दिया जाय और

उचित वितरण का कुछ भी क्याल न रखा जाय तो बड़ी बिकट समस्याएँ उठ खड़ी होती हैं जैसे कि वर्तमान आर्थिक संगठन से स्पष्ट होता है । समूचे विश्व के उत्पादन तथा ठीक जगह बिठाने के कार्य को सविता सुचारुरूप से निभाता है ।

अदधेभिः सवितः पायुभिर्द्रुं शिवेभिरद्य परि
पाहि नो गयम् । हिरण्यजिह्वः सुविताय नद्यसे
रक्षा माकिर्नो अघशंस ईशत ॥ (ऋ. १।७।१।३)

" हे सवितर ! तू आज (नः गयं) हमारे धन तथा गृहको (शिवेभिः अदधेभिः पायुभिः) हितकारक तथा न दबाये गये संरक्षणसाधनों से (परि पाहि) चतुर्विक् सुरक्षित रख और तू (हिरण्यजिह्वः) हितरमणीय वाणी से कहनेवाला है इसलिये हम तेरे सामने यह माँग पेश करते हैं कि हमें (नद्यसे सुविताय) नई भलाई के लिए बचा दे एवं हमपर (अघ-शंसः) बुरी बातें कहनेवाला कोई भी (माकिः ईशत) कभी न शासन प्रस्थापित करे ।

अपिष्टुतः सविता देवो अस्तु, यमा चित् विश्वे
वसवो गृणन्ति । स नः स्तोमान् नमस्य श्वनो
पाद्विश्वेभिः पातु पायुभिर्नि सूरिन् ॥ (ऋ. ७।३।८।३)

" सभी वसुतक जिसकी प्रशंसा करते हैं वह दानशील सविता भी प्रशंसित होवे, वह नमन करने योग्य है और हमारे स्तोत्रोंको सुनकर हमें अन्न दे डाले तथा सारी संरक्षण आयोजनाओं को साथ लेकर विद्वन्मण्डली की रक्षा कर ले । "

इससे स्पष्ट है कि उत्पादन, प्रेरण के अतिरिक्त संरक्षण कार्य करनेकी क्षमताभी पर्यासरूपसे सवितामें विद्यमान थी ।

सूर्य और सविता

साधारणतया सूर्यको सविता कह जाता है, अतः प्रश्न उठ खड़ा होता है कि क्या सूर्य और सविता अभिन्न हैं ? ब्राह्मण-ग्रंथों के कुछ वचन इस अभिन्नता को मानते हैं ऐसा प्रतीत होता जैसे—

आदिरय एव सविता । गोपथ. १।३३; ज. ङ.

४।२७।११

असावादित्यो देवः सविता । शतपथ. ६।३।१।१८।

असौ वै सविता योऽसौ (सूर्यः) तपति ।

कौ. ७।६; गोपथ. १।२०

एष वै सविता य एष (सूर्यः) तपति।

शतपथ. ३।२।३।१८; ४।४।१।३; ५।३।१।७

इन वचनों से स्पष्ट होता है कि सविता वास्तवमें सूर्य ही है, क्योंकि विश्वभरमें प्रेरणा और उत्पादन-क्रिया का सजीव प्रतीक सूर्य है, यह निस्सन्देह है। वेदमें भी कुछ ऐसे मंत्र पाये जाते हैं जिनसे सूर्य एवं सविताकी अभिन्नताकी सूचना मिलती है, जैसे—

अष्टौ व्यख्यत् ककुभः पृथिव्याः... हिरण्याक्षः
सविता देव आगात्, दधद्रत्ना दाशुषे वार्याणि।
(ऋ. १।३।५।८)

“ हितरमणीय दृष्टिसे युक्त सविता द्योतमान होता हुआ, दानी पुरुष के लिए स्वीकरणीय रत्नों को धारण करता हुआ, पृथ्वीके आठों दिग्दिभागों को प्रकाशित कर गया और आपहुँचा है। ”

हिरण्यपाणिः सविता विचर्षणिः, उभे शावा-
पृथिवी अन्तरीयते, अपामीवां वाधते...अभि
कृष्णेन रजसा घामृणोति ॥ (ऋ. १।३।५।९)

“ विशेषरीतिसे द्रष्टा और हाथ में सुवर्ण धारण करता हुआ भूलोक एवं शुलोक दोनों के बीच चला आता है, रोगों को दूर भगाता है और आकर्षक तेजसे शुलोक को व्याप्त करता है। ”

आ कृष्णेन रजसा वर्तमानो...हिरण्ययेन सवि-
ता रथेना आ देवो याति भुवनानि पश्यन् ॥
(ऋ. १।३।५।२)

‘ आकर्षक तेज से युक्त हो आनेवाला द्योतमान सविता सुवर्ण के बने अर्थात् तेजस्वी जगमगाते हुए रथपर से विश्व को निहारता हुआ चला आता है। ’

वि नाकमख्यत् सविता वरेण्योऽनु प्रयाण-
मुषसो वि राजति। (ऋ. ५।८।१।२)

‘ श्रेष्ठ सविताने आकाश को विशेष ढंग से प्रकाशित कर दिया है और वह उषाके प्रयाण के पश्चात् विराजमान हो बैठता है। ’

नृचक्षा एष दिवो मध्य आस्ते, आपप्रिवान्
रोदसी अन्तरिक्षम्। (ऋ. १०।१३।१२)

‘ शुलोक, भूलोक तथा अन्तरिक्ष पूर्ण करता हुआ यह मानवोंका निरीक्षण करनेवाला आकाश के मध्य बैठे रहता है। ’

सूर्यरश्मिर्हरिकेशः पुरस्तात् सविता ज्योति-
रुदय्यं अजस्रम्। (ऋ. १०।१३।११)

‘ सूर्य की रश्मिवाला तथा हरण करने की क्षमता से युक्त सविता सदैव प्रकाशपुंज को ऊपर उठाता है। ’

सविता यन्त्रैः पृथिवीमरम्णावस्कम्भने सविता
धामदंहत्। (ऋ. १०।१४।११)

‘ सविताने भूमि को यंत्रोंद्वारा स्थिर किया है और निरालम्ब से दिखाई देनेवाले स्थान में शुलोक को स्थायी बनाया है। ’

आप्रा रजांसि दिव्यानि पार्थिवा... प्र बाहू
अस्त्राक् सविता सवीमनि निवेशयन् प्रसव-
श्चतुर्भिर्जगत् ॥ (ऋ. ४।५।३।३)

‘ शुलोकस्थ तथा भूमंडलस्थ लोकोंको अपने तेज से व्याप्त कर चुका और जगत् को दिन और रात के समय प्रेरित तथा अपने स्थान पर बिठाकर उत्पादन कार्यके लिए सविताने अपने बाहुओं को खूब भागे बढ़ाया है। ’ सूर्य का सविमृत्व अत्यन्त स्पष्ट है।

संरक्षण-कार्य करने के लिए सविता को निमंत्रण भेजने के निर्देश देखने योग्य हैं।

... ह्वयामि देवं सवितारमृतये। (ऋ. १।३।५।१)

हिरण्यपाणिमृतये सवितारमुपह्वये। (ऋ. १।२२।५)

विभक्तारं हवामहे वसोश्चित्रस्य राधसः।

सवितारं नृचक्षसम् ॥ (ऋ. १।२२।७)

‘ संरक्षण हो इसलिए मैं देवतारूपी सविता को, जो हाथमें सुवर्ण धारण करता है, बुलाता हूँ; मानवों के द्रष्टा और अनूठे धन का विभजन करनेवाले सविता को हम बुलाते हैं। ’ इस प्रकार भक्तोंके दिये हुए निमंत्रण को पाकर सविता रथपर चढ़कर यात्रा करने लगता है, जैसे—

हिरण्येन सविता रथेनाऽऽदेवो याति भुवनानि
पश्यन्... बृहन्तं आह्याद्रथं सविता चित्र-
भानुः। (ऋ. १।३।५।२, ४)

‘ देव सविता भुवनों को देखता हुआ सुनहले रथपरसे चला आता है; विचित्र किरणोंवाला याने तेजस्वी सविता बड़े भारी रथपर चढ़ गया। ’

इसभाँति, आदित्यों के महनीय कार्यका वर्णन वेदमें किया है। पाठक भी आदित्यों के मंत्र एवं सूक्त पढ़ें और मनन करें, ऐसी विनम्रि है।



दैवत-संहिता ।

[ऋग्यजुःसामाथर्वणां संहितानां सर्वान् मन्त्रान् दैवतानुसारेण संगृह्य निर्मिता ।]

१ अदितिः, आदित्याश्च ।

(१) अदितिः ।

॥१॥ (ऋ० १।८९।१०)

(१)× गोतमो राहूगणः । त्रिष्टुप् ।

अदितिर्घौरदितिरन्तरिक्ष—मदितिर्माता स पिता स पुत्रः ।

विश्वे देवा अदितिः पञ्च जना अदितिर्जातमदितिर्जनित्वम्

१०

॥२॥ (ऋ० ८।१८।४-७)

(२-५) हरिस्विटिः काण्वः । उष्णिक् ।

देवेभिर्देव्यदिते ऽरिष्टभर्मन्ना गंहि । स्मत् सूरिभिः पुरुप्रिये सुशर्मभिः

४

ते हि पुत्रासो अदिते—विदुर्देषांसि योतवे ।

अंहोश्चिदुरुचक्रयोऽनेहसः

५

अदितिर्नो दिवा पशु—मदितिर्नक्तमद्रयाः । अदितिः पात्वंहसः सदावृधा

६

उत स्या नो दिवा मति—रदितिरूत्या गमत् । सा शंताति मयस्करदण सिधः

५

॥३॥ (ऋ० ८।६७।१०-१२)

(६-८) मत्स्यः साम्मदः, मैत्रावरुणिर्मान्यः बहवो वा मत्स्या जालनद्धाः । गायत्री ।

उत त्वामदिते म—ह्यहं देव्युप ब्रुवे । सुमुळीकामभिष्टये

१०

पथि दीने गभीर आँ उग्रपुत्रे जिघांसतः । मार्किस्तोकस्य नो रिपत्

११

अनेहो न उरुव्रज उरूचि वि प्रसर्तवे । कृधि तोकाय जीवसे

१२

॥४॥ (९-१५)(वा० य० ११।५६-५७,५९)

सिनीबाली सुकपर्दा सुकुरीरा स्वौपशा । सा तुभ्यमदिते मह्योखां दधातु हस्तयोः

९

×वा० य० १५,२३ । अथर्व० ७।६।१।

६० [अदितिः०] १

उखां कृणोतु शक्त्या बाहुभ्यामदितिर्धिया ।

माता पुत्रं यथोपस्थे साग्निं बिभर्तु गर्भे आ । मखस्य शिरोऽसि

५७ १०

अदित्यै रास्नास्यदितिष्ठे बिलं गृभ्णातु ।

कृत्वाय सा महीमुखां मृन्मयीं योनिमग्रये ।

पुत्रेभ्यः प्रार्थच्छददितिः श्रपयानिति

५९

॥५॥ (वा० य० २१।५-७)×

महीम् पु मातरं सुव्रतानामृतस्य पत्नीमवसे हुवेम ।

तुविभ्रत्रामजरन्तीमुरुची सुशर्माणमदिति सुप्रणीतिम्

५

सुत्रामाणं पृथिवीं धामनेहस सुशर्माणमदिति सुप्रणीतिम् ।

दैवीं नाव स्वर्ित्रामनागसमस्रवन्तीमा रुहेमा स्वस्तये

६

सुनावमा रुहेयमस्रवन्तीमनागसम् । शतारित्रा स्वस्तये

७

॥६॥ (वा० य० २१।४):

स्तीर्णं बर्हिः सुष्टरीमा जुषाणोरु पृथु प्रथमानं पृथिव्याम् ।

देवेभिर्युक्तमदितिः सजोषाः स्योनं कृण्वाना सुविते दधातु

४ १५

॥७॥ (अथर्व० ७।६।४)+

(१६-१७) अथर्वा । विराड् जगती ।

वाजस्य नु प्रसवे मातरं महीमदिति नाम वचसा करामहे ।

यस्या उपस्थ उर्वेऽन्तरिक्षं सा नः शर्म त्रिवरुथं नि यच्छातु

४

॥८॥ (अथर्व० ७।७।१) आर्वी जगती ।

दितेः पुत्राणामदितेरकारिषमव देवानां बृहतामनर्मणाम् ।

तेषां हि धाम गभिषक् समुद्रियं नैनान् नमसा परो अस्ति कश्चन

१ १७

अदिति-सहचारी देवगणः ।

(१) सोमः, अदितिः ।

॥९॥ (अथर्व० ६।७।१-२) [दे० सोमः १२५१-५२ मन्त्रौ ब्रह्म्यौ]

(२) आदित्याः ।

॥१०॥ (ऋ० १।४१।४-६)

(१८-२०) कण्वो घौरः । गायत्री ।

सुगः पन्था अनृक्षर आदित्यास ऋतं यते । नात्रावखादो अस्ति वः ४
 यं यज्ञं नयथा नर आदित्या ऋजुना पथा । प्र वः स धीतये नशत् ५
 स रत्नं मर्त्यो वसु विश्वं तोकमृत तमना । अच्छा गच्छत्यस्तृतः ६ २०

॥११॥ (ऋ० २।२७।१-१७)

(२१-३७) कूर्मो गात्सर्मदो, गृत्समदो वा । त्रिष्टुप् ।

इमा गिर आदित्येभ्यो घृतस्नूः सनाद् राजभ्यो जुह्वा जुहोमि ।
 शृणोतु मित्रो अर्यमा भर्गो नस्तुविजातो वरुणो दक्षो अंशः १
 इमं स्तोमं सक्तवो मे अद्य मित्रो अर्यमा वरुणो जुषन्त ।
 आदित्यासः शुच्यो धारपूता अष्टजिना अनवद्या अरिष्टाः २
 त आदित्यास उरवो गभीरा अदब्धासो दिप्सन्तो भूर्यक्षाः ।
 अन्तः पश्यन्ति वृजिनोत साधु सर्व राजभ्यः परमा चिदन्ति ३
 धारयन्त आदित्यासो जगत् स्या देवा विश्वस्य भुवनस्य गोपाः ।
 दीर्घार्धियो रक्षमाणा असुर्यमृतावानश्चर्यमाना ऋणानि ४
 विद्यामादित्या अवसो वो अस्य यदर्यमन् भय आ चिन्मयोभु ।
 युष्माकं मित्रावरुणा प्रणीतौ परि श्वश्रैव दुरितानि वृज्याम् ५ २५
 सुगो हि वो अर्यमन् मित्र पन्था अनृक्षरो वरुण साधुरस्ति ।
 तेनादित्या अर्धि वोचता नो यच्छता नो दुष्परिहन्तु शर्म ६
 पिपर्तु नो अदिती राजपुत्रा ऽति द्वेषास्वर्यमा सुगोभिः ।
 बृहन्मित्रस्य वरुणस्य शर्मोप स्याम पुरुवीरा अरिष्टाः ७
 तिस्रो भूमीर्धारयन् त्रीरुत द्यून् त्रीणि व्रता विदथे अन्तरैषाम् ।
 ऋतेनादित्या महि वो महित्वं तदर्यमन् वरुण मित्र चारु ८
 त्री रोचना दिव्या धारयन्त हिरण्ययाः शुच्यो धारपूताः ।
 अस्वमजो अनिमिषा अदब्धा उरुशंसा ऋजवे मर्त्याय ९
 त्वं विश्वेषां वरुणासि राजा ये च देवा असुर ये च मर्ताः ।
 श्रुतं नो रास्व शरदो विचक्षे ऽश्यामार्युषि सुधितानि पूर्वा १० ३०

| | |
|--|-------|
| न दक्षिणा वि चिकिते न सव्या न प्राचीनमादित्या नोत पश्चा । पाक्या चिद् वसवो धीर्या चिद् युष्मानीतो अभयं ज्योतिरइयाम् | ११ |
| यो राजभ्य ऋतुनिभ्यो दुदाश यं वर्धयन्ति पुष्टयश्च नित्याः । स रेवान् याति प्रथमो रथेन वसुदावा विदथेषु प्रशस्तः | १२ |
| शुचिरपः सूयवसा अदब्ध उप क्षेति वृद्धवयाः सुवीरः । नकिष्टं घ्नन्त्यन्तितो न दूराद् य आदित्यानां भवति प्रणीतौ | १३ |
| अदिते मित्र वरुणोत मृळ यद् वो वयं चक्रुमा कश्चिदागः । उर्वइयामभयं ज्योतिरिन्द्र मा नो दीर्घा अभि नशन् तमिस्राः | १४ |
| उभे अस्मै पीपयतः समीची दिवो वृष्टिं सुभगो नाम पुष्यन् । उभा क्षयावाजयन् याति पृत्स्व भावधौ भवतः साधू अस्मै | १५ ३५ |
| या वो माया अभिद्रुहे यजत्राः पाशा आदित्या रिपवे विचृत्ताः । अश्वीव ताँ अति येपं रथेना रिष्टा उरावा शर्मन्त्स्याम | १६ |
| माहं मघोनो वरुण प्रियस्य भूरिदान आ विदं शूनमापेः । मा रायो राजन्त्सुयमादव स्थां बृहद् वदेम विदथे सुवीराः | १७ |

॥१२॥ (ऋ० ७।५१।१-३)

(३८-५३) मैत्रावरुणिर्वासिष्ठः । त्रिष्टुप् ।

| | |
|---|------|
| आदित्यानामवसा नूतनेन सक्षीमहि शर्मणा शतमेन । अनागास्त्वे अदितित्वे तुरास इमं यज्ञं दधतु श्रोपमाणाः | १ |
| आदित्यासो अदितिर्मादयन्तां मित्रो अर्यमा वरुणो रजिष्ठाः । अस्माकं सन्तु भुवनस्य गोपाः पिबन्तु सोममवसे नो अद्य | २ |
| आदित्या विश्वे मरुतश्च विश्वे देवाश्च विश्वे ऋभवश्च विश्वे । इन्द्रो अग्निरश्विना तुष्टवाना यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः | ३ ४० |

॥१३॥ (ऋ० ७।५२।१-३)

| | |
|--|------|
| आदित्यासो अदितयः स्याम पूर्व्वेवत्रा वसवो मर्त्यत्रा । सनेम मित्रावरुणा सनन्तो भवेम द्यावापृथिवी भवन्तः | १ |
| मित्रस्तन्नो वरुणो मामहन्त शर्म तोकाय तनयाय गोपाः । मा वो भुजेमान्यजातमेनो मा तत् कर्म वसवो यच्चयध्वे . | २ ४१ |

तुरण्यवोऽङ्गिरसो नक्षन्त रत्नं देवस्य सवितुरियाणाः ।

पिता च तन्नो महान् यजत्रो विश्वे देवाः समनसो जुषन्त ३

॥१४॥ (ऋ० ७।६६।४-१३)

गायत्री, १०-१३ प्रगाथः = (समा बृहती+विषमा सतोबृहती)

यदद्य सूर उदिते ऽनागा मित्रो अर्यमा । सुवार्ति सविता भगः ४

सुप्रावीरस्तु स क्षयः प्र नु यामन्त्सुदानवः । ये नो अंहोऽतिपिप्रति ५ ४५

उत स्वराजो अदिति रदब्धस्य व्रतस्य ये । महो राजान ईशते ६

प्रति वां सूर उदिते मित्रं गृणीषे वरुणम् । अर्यमणं रिशादसम् ७

राया हिरण्यया मति रियमवुकाय शर्वसे । इयं विप्रा मेधसांतये ८

ते स्याम देव वरुण ते मित्र सूरिभिः सह । इपं स्वश्च धीमहि ९

बहवः सूरचक्षसो ऽग्निजिह्वा ऋतावृधः ।

त्रीणि ये येमुर्विदथानि धीतिभिर्विश्वाति परिभूतिभिः १० ५०

वि ये दधुः शरदुं मासमादहं र्गजमक्तुं चादृचम् ।

अनाप्यं वरुणो मित्रो अर्यमा क्षत्रं राजान आशत ११

तद् वो अद्य मनामहे सूक्तैः सूर उदिते ।

यदोहते वरुणो मित्रो अर्यमा यूयमृतस्य रथ्यः १२

ऋतावान् ऋतजाता ऋतावृधो घोरासो अनृतद्विषः ।

तेषां वः सुप्ते सुच्छदिष्टमे नरः स्याम ये च सूरयः १३

॥१५॥ (ऋ० ८।१८।१-३, १०-२२)

(५४-६९) इरिम्बिष्ठिः काण्वः । उष्णिक् ।

इदं ह नूनमेषां सुम्नं भिक्षेत मर्त्यः । आदित्यानामपूर्व्यं सर्वांमनि १

अनर्वाणो ह्येषां पन्था आदित्यानाम् । अदब्धाः सन्ति पायवः सुगेवृधः २ ५५

तत् सु नः सविता भगो वरुणो मित्रो अर्यमा । शर्म यच्छन्तु सप्रथो यदीमहे ३

अपामीवामप स्निधु मप सेधत दुर्मतिम् । आदित्यासो युयोतना नो अंहसः १०

युयोता शर्मस्मदा आदित्यास उतामतिम् । ऋधग् द्वेषः कृणुत विश्ववेदसः ११

तत् सु नः शर्म यच्छता ऽऽदित्या यन्मुमौचति । एनस्वन्तं चिदेनसः सुदानवः १२

यो नः कश्चिद् रिरिक्षति रक्षस्त्वेन मर्त्यः । स्वैः प एवै रिरिषीष्ट युर्जनः १३

समित् तमधमश्नवद् दुःशंसं मर्त्यं रिपुम् । यो अस्मन्ना दुर्हणावाँ उप द्रयुः १४ ६१

| | | |
|---|----|----|
| पाकत्रा स्थन देवा हृत्सु जानीथ मर्त्यम् । उप द्वयुं चाद्वयुं च वसवः | १५ | |
| आ शर्म पर्वताना—मोतापां वृणीमहे । द्यावाक्षामारे असद् रपस्कृतम् | १६ | |
| ते नो भद्रेण शर्मणा युष्माकं नावा वसवः । अति विश्वानि दुरिता पिपर्तन | १७ | |
| तुचे तनाय तत् सु नो द्राघीय आयुर्जीवसे । आदित्यासः सुमहसः कृणोतन | १८ | ६५ |
| यज्ञो हीळो वो अन्तर आदित्या अस्ति मृळत । | | |
| युष्मे इद् वो अपि षमसि सजात्ये | १९ | |
| बृहद् वरूथं मरुतां देवं त्रातारमश्विना । मित्रमीमहे वरुणं स्वस्त्ये | २० | |
| अनेहो मित्रार्यमन् नृवद् वरुण शंस्यम् । त्रिवरूथं मरुतो यन्त नदछर्दिः | २१ | |
| ये चिद्धि मृत्युबन्धव आदित्या मनवः स्मसि । | | |
| प्र स्र न आयुर्जीवसे तिरेतन | २२ | |

॥१६॥ (ऋ० ८।१९।३४-३५)

(७०-७१) सोमरिः काण्वः । ३४ उष्णिक्, ३५ सतोबृहती ।

| | | |
|--|----|----|
| यमादित्यासो अद्रुहः पारं नयथ मर्त्यम् । मघोनां विश्वेषां सुदानवः | ३४ | ७० |
| यूयं राजानः कं चिच्चर्षणीसहः क्षयन्तं मानुषां अनु । | | |
| वयं ते वो वरुण मित्रार्यम—न्तस्थामेदृतस्य रथ्यः | ३५ | |

॥१७॥ (ऋ० ८।४।११-१३)

(७२-८४) त्रित आपयः । महापङ्क्तिः ।

| | | |
|---|---|----|
| महि वो महतामवो वरुण मित्रं दाशुषे । | | |
| यमादित्या अभि द्रुहो रक्षथा नेमघं नश—दनेहसो व ऊतयः सुऊतयो व ऊतयः | १ | |
| विदा देवा अघाना—मादित्यासो अपाकृतिम् । | | |
| पक्षा वयो यथोपरि व्यष्टस्मे शर्म यच्छता—नेहसो व ऊतयः सुऊतयो व ऊतयः | २ | |
| व्यष्टस्मे अधि शर्म तत् पक्षा वयो न यन्तन । | | |
| विश्वानि विश्ववेदसो वरूथ्या मनामहे ऽनेहसो व ऊतयः सुऊतयो व ऊतयः | ३ | |
| यस्मा अरासत् क्षयं जीवातुं च प्रचेतसः । | | |
| मनोर्विश्वस्य घेदिस आदित्या राय ईशते ऽनेहसो व ऊतयः सुऊतयो व ऊतयः | ४ | |
| परि णो वृणजन्नघा दुर्गाणि रथ्यो यथा । | | |
| स्यामेदिन्द्रस्य शर्म—प्यादित्यानामृतावस्य—नेहसो व ऊतयः सुऊतयो व ऊतयः | ५ | ७१ |

परिहृतेदुना जनो युष्मादत्तस्य वायति ।
 देवा अदध्रमाश वो यमादित्या अहेतना—नेहसो व ऊतयः सुऊतयो व ऊतयः ६
 न तं तिग्मं च न त्यजो न द्रासदुभि तं गुरु ।
 यस्मा उ शर्म सप्रथ आदित्यासो अराध्व—मनेहसो व ऊतयः सुऊतयो व ऊतयः ७
 युष्मे देवा अपि षमसि युध्यन्त इव वर्मसु ।
 यूयं महो न एनसो यूयमभीदुरुष्यता—नेहसो व ऊतयः सुऊतयो व ऊतयः ८
 अदितिर्न उरुष्यत्व—दितिः शर्म यच्छतु ।
 माता मित्रस्य रेवतो ऽर्यम्णो वरुणस्य चा—नेहसो व ऊतयः सुऊतयो व ऊतयः ९ ८०
 यद् देवाः शर्म शरणं यद् भद्रं यदनातुरम् ।
 त्रिधातु यद् वरुध्यं तदुस्मासु वि यन्तना—नेहसो व ऊतयः सुऊतयो व ऊतयः १०
 आदित्या अव हि ख्यता—धि कूलादिव स्पशः ।
 सुतीर्थमर्वतो यथा—नु नो नेषथा सुग—मनेहसो व ऊतयः सुऊतयो व ऊतयः ११
 नेह भद्रं रक्षस्विने नावयै नोपया उत ।
 गवे च भद्रं धेनवे वीराय च श्रवस्यते ऽनेहसो व ऊतयः सुऊतयो व ऊतयः १२
 यदाविर्यदपीच्यं देवासो अस्ति दुष्कृतम् ।
 त्रिवे तद् विश्वमाप्त्य आरे अस्मद् दधातना—नेहसो व ऊतयः सुऊतयो व ऊतयः १३

॥१८॥ (ऋ० ८।६७।१-९, १३-२१)

(८५-१०२) मत्स्यः साम्मदः, मैत्रावरुणिर्मन्यः, बहवो वा मत्स्या जालनद्धाः । गायत्री ।

| | | | |
|---|---------------------------|----|----|
| त्यान् नु क्षत्रियाँ अव आदित्यान् याचिषामहे | । सुमूळीकाँ अभिष्टये | १ | ८५ |
| मित्रो नो अत्यहति वरुणः पर्षदर्यमा | । आदित्यासो यथा विदुः | २ | |
| तेषां हि चित्रमुक्थ्यं वरुथमस्ति दाशुषे | । आदित्यानामरुक्ते | ३ | |
| महि वो महतामवो वरुण मित्रार्यमन् | । अवांस्या वृणीमहे | ४ | |
| जीवान् नो अभि चेतना—ऽऽदित्यासः पुरा इथात् | । कद्रं स्थ हवनश्रुतः | ५ | |
| यद् वः श्रान्ताय सुन्वते वरुथमस्ति यच्छदिः | । तेना नो अधि वोचत | ६ | ९० |
| अस्ति देवा अहोरुर्व—स्ति रत्नमनागसः | । आदित्या अद्भुतैनसः | ७ | |
| मा नः सेतुः सिषेदयं महे वृणक्तु नस्परि | । इन्द्र इद्धि श्रुतो वशी | ८ | |
| मा नो मुचा रिपूणां वृजिनानामविष्यवः | । देवा अभि प्र मृक्षत | ९ | |
| ये मूर्धोनः क्षितीना—मदब्धासः स्वयंशसः | । व्रता रक्षन्ते अद्भुहः | १३ | ९४ |

| | | | |
|--|------------------------|----|-----|
| ते न आलो वृक्षाणा—मादित्यासो मुमोचत | । स्तेनं बद्धमिवादिते | १४ | ९५ |
| अपो पु ण इयं शरु—रादित्या अपं दुर्मतिः | । अस्मदेत्वजमुषी | १५ | |
| शश्वद्धि वः सुदानव आदित्या ऊतिभिर्वियम् | । पुरा नूनं बुभुज्महे | १६ | |
| शश्वन्तं हि प्रचेतसः प्रतियन्तं चिदेनसः | । देवाः कृणुथ जीवसे | १७ | |
| तत् सु नो नव्यं सन्यस आदित्या यन्मुमोचति | । बन्धाद् बद्धमिवादिते | १८ | |
| नास्माकमस्ति तत् तर आदित्यासो अतिष्कदे | । यूयमसभ्यं मूळत | १९ | |
| मा नो हेतिर्विवस्वत आदित्याः कृत्रिमा शरुः | । पुरा नु जरसो वधीत् | २० | |
| वि पु द्वेषो व्यंहति—मादित्यासो वि संहितम् | । विष्वग् वि वृहता रपः | २१ | १०२ |

॥१९॥ (ऋ० ८।१०१।६)

(१०३) जमदग्निर्भार्गवः । सतोवृहती ।

ते हिन्विरे अरुणं जेन्यं वस्वे—कै पुत्रं तिसृणाम् । ते धामान्यमृता मर्त्याना—मदब्धा अभि चक्षते ६

॥२०॥ (ऋ० १०।१८५।१-३)

(१०४-१०६) सत्यधृतिर्वारुणिः । आदित्यः (स्वस्त्ययनम्) । गायत्री ।

| | | | |
|--|---------------------------|---|-----|
| महि त्रीणामवोऽस्तु द्युक्षं मित्रस्यार्यम्णः | । दुराधर्षं वरुणस्य | १ | |
| नहि तेषाममा चन नाध्वंसु वारणेषु | । ईशे रिपुरघशंसः | २ | १०५ |
| यस्मै पुत्रासो अदितेः प्र जीवसे मर्त्याय | । ज्योतिर्यच्छन्त्यजस्रम् | ३ | |

॥२१॥ (१०७-१२०) (वा० य० ८।१-५)

उपयामगृहीतोऽस्यादित्येभ्यस्त्वा ।

| | | |
|--|---|-----|
| विष्णो उरुगायैष ते सोमस्तः रक्षस्व मा त्वा दभन् | १ | |
| कदा चन स्तरीरासि नेन्द्र सश्वसि दाशुषे । | | |
| उपोपेन्नु मघवन् भूय इन्नु ते दानं देवस्य पृच्यत आदित्येभ्यस्त्वा | २ | |
| कदा चन प्रयुच्छस्युभे निपासि जन्मनी । | | |
| तुरीयादित्य सर्वानं त इन्द्रियमातस्थावमृतं दिव्यादित्येभ्यस्त्वा | ३ | |
| यज्ञो देवानां प्रत्येति सुममादित्यासो भवता मृडयन्तः । | | |
| आ वोऽर्वाची सुमतिर्वृत्त्यादुहोश्चिद्या वरिवोवित्तरासदादित्येभ्यस्त्वा | ४ | ११० |
| विवस्वन्नादित्येष ते सोमपीथस्तस्मिन् मत्स्व | ५ | |

॥२२॥ (वा० य० १३।३, ५)

ब्रह्म जज्ञानं प्रथमं पुरस्ताद् वि सीमतः सुरुचो वेन आवः ।

| | | |
|--|---|-----|
| स बुध्न्या उपमा अस्य विष्ठाः सतश्च योनिमसतश्च विवः | ३ | ११२ |
|--|---|-----|

द्रुप्सश्चस्कन्द पृथिवीमनु द्यामिमं च योनिमनु यश्च पूर्वं ।
समानं योनिमनु सञ्चरन्तं द्रुप्सं जुहोम्यनु सप्त होत्राः

५

॥२३॥ (वा० य० १७।५९-६०)

विमानं एष दिवो मध्यं आस्त आपप्रिवान् रोदसी अन्तरिक्षम् ।
स विश्वाचीरभिचष्टे घृताचीरन्तरा पूर्वमपरं च केतुम्
उक्षा समुद्रो अरुणः सुपर्णः पूर्वस्य योनिं पितुराविवेश ।
मध्ये दिवो निहितः पृश्निरश्मा विचक्रमे रजसस्पात्यन्तौ

५९

६० ११५

॥२४॥ (वा० य० २३।५; ३१।१७)×

युञ्जन्ति ब्रध्नमरुपं चरन्तं परिं तस्थुषः । रोचन्ते रोचना दिवि
अद्भ्यः सम्भृतः पृथिव्यै रसाच्च विश्वकर्मणः समवर्तताग्रं ।
तस्य त्वष्टा विदधद् रूपमेति तन्मर्त्यस्य देवत्वमाजानमग्रे

५

१७

॥२५॥ (वा० य० ३३।८१-८३)

इमा उ त्वा पुरुवसो गिरो वर्धन्तु या मम ।
पावकवर्णाः शुचयो त्रिपश्चितोऽभि स्तोमैरनूषत
यस्यायं विश्व आर्यो दासः शेवधिपा अरिः ।
तिरश्चिदुर्ये रुशमे पवीरवि तुभ्येत्सो अज्यते रयिः
अयं सहस्रमृषिभिः सहस्कृतः समुद्र इव पप्रथे ।
सत्यः सो अस्य महिमा गृणे शवो यज्ञेषु विप्रराज्ये

८१

८२

८३ १२०

॥२६॥ (अथर्व० २।३१।१-६) [दै० (आयुर्वेद०) १२५ सूक्तं द्रष्टव्यम् ।]

॥२७॥ (अथर्व० १६।३।१-६)

(१२१-१६३) ब्रह्मा । १ आसुरी गायत्री; २-३ आर्च्यनुष्टुप्; ४ प्राजापत्या त्रिष्टुप्;
५ साम्न्युष्णिक्; ६ क्षिपदा साम्नी त्रिष्टुप् ।

मूर्धाहं रयीणां मूर्धा समानानां भूयासम् १
रुजश्च मा वेनश्च मा हासिष्ठां मूर्धा च मा विधर्मा च मा हासिष्ठाम् २
उर्वश्च मा चमसश्च मा हासिष्ठां धर्ता च मा धरुणश्च मा हासिष्ठाम् ३
विमोकश्च मारुद्रपविश्च मा हासिष्ठामारुद्रदानुश्च मा मातरिश्वा च मा हासिष्ठाम् ४ १२४

× वा० य० २३।५ = दै० [इन्द्रः] २४; अथर्व० २०, २६, ४, ४७, १०, ६९, ९; सा० १४६८

दै० [अदितिः] २

बृहस्पतिर्म आत्मा नमणा नाम हृद्यः

५ १२५

असंतापं मे हृदयमुर्वी गव्यूतिः समुद्रो अस्मि विधर्मणा

६

॥२८॥ (अथर्व० १६।४।१-७)

१,३ साम्यनुष्टुप्; २ साम्ययुष्णिक्; ४ त्रिपदाऽनुष्टुप्; ५ आसुरी गायत्री; ६ आचर्युष्णिक्; ७ त्रिपदा विराड्गर्भाऽनुष्टुप् ।

नाभिरहं रयीणां नाभिः समानानां भूयासम्

१

स्वासदसि सुषा अमृतो मर्त्येष्व

२

मा मां प्राणो हासीन्मो अपानोऽवहाय परां गात्

३

सूर्यो माह्वः पात्वग्निः पृथिव्या वायुरन्तरिक्षाद् यमो मनुष्येभ्यः सरस्वती पार्थिवेभ्यः

४ १३०

प्राणापानौ मा मां हासिष्टं मा जने प्र मेभि

५

स्वस्त्यद्योषसो दोषसश्च सर्वे आपः सर्वगणो अशीय

६

शकरी स्य पशवो मोषं स्थेषुभिन्नावरुणौ मे प्राणापानावभिर्मे दक्षं दधातु

७

॥२९॥ (अथर्व० १७।१।१-३०)

१ जगती; १-८ त्र्यवसाना; १-३ अतिजगती; ६-७, १९ अत्यष्टिः; ८, ११, १६ अतिधृतिः;

९ पञ्चपदा शकरी; १०-१३, १६, १८-१९, २४ त्र्यवसाना; १० अष्टपदा धृतिः;

११ कृतिः; १३ प्रकृतिः; १४-१५ पञ्चपदा शकरी; १७ पञ्चपदा विराडतिशकरी;

१८ भुरिगष्टिः; २४ विराडत्यष्टिः; १-५ षट्पदा; ११-१३, १६, १८-१९, २४

सप्तपदा; २० ककुप्; २१ चतुष्पदा उपरिष्टाद्बृहती; २२ याजुषी

अनुष्टुप्; २३ निचृद्बृहती (२२-२३ द्विपदा); २५-२६ अनुष्टुप्;

२७, ३० जगती; २८-२९ त्रिष्टुप् ।

विषासहिं सहमानं सासहानं सहीयांसम् ।

सहमानं सहोजितं स्वर्जितं गोजितं संधनाजितम् ।

ईड्यं नाम ह इन्द्रमायुष्मान् भूयासम्

१

विषासहिं० । सहमानं० । ईड्यं नाम ह इन्द्रं प्रियो देवानां भूयासम्

२

१३५

विषासहिं० । सहमानं० । ईड्यं नाम ह इन्द्रं प्रियः प्रजानां भूयासम्

३

विषासहिं० । सहमानं० । ईड्यं नाम ह इन्द्रं प्रियः पशूनां भूयासम्

४

विषासहिं० । सहमानं० । ईड्यं नाम ह इन्द्रं प्रियः समानानां भूयासम्

५

उदिह्युदिहि सूर्यं वर्चसा माभ्युदिहि ।

द्विपंश्च मह्यं रध्यातु मा चाहं द्विपते रधं तवेद् विष्णो बहुधा वीर्याणि ।

त्वं नः पृणीहि पशुभिर्विश्वरूपैः सुधायी मा धेहि परमे व्योमिन्

६ १३९

उद्विष्टुर्दिहि सूर्यं वर्चसा माभ्युर्दिहि ।

यांश्च पश्यामि यांश्च न तेषु मा सुमतिं कृधि तवेद् विष्णो० । त्वं नः० ७ १४०

मा त्वा दभन्त्सलिले अप्सर्वन्तये पाशिन उपतिष्ठन्त्यत्र ।

द्वित्वाशस्ति दिवमारुक्ष एतां स नो मृड सुमतौ तै स्याम तवेद् विष्णो० । त्वं नः० ८

त्वं न इन्द्र महते सौमगायादब्धेभिः परि पाह्यक्तुभिस्तवेद् विष्णो० । त्वं नः० ९

त्वं न इन्द्रोतिभिः शिवाभिः शंतमो भव ।

आरोहँस्त्रिदिवं दिवो गृणानः सोमपीतये प्रियधामा स्वस्तये तवेद् विष्णो० । त्वं नः० १०

त्वमिन्द्रासि विश्वजित् सर्ववित् पुरुहूतस्त्वमिन्द्र ।

त्वमिन्द्रेमं सुहवं स्तोममेरयस्व स नो मृड सुमतौ तै स्याम तवेद् विष्णो० । त्वं नः० ११

अदब्धो दिवि पृथिव्यामुतासि न त आपुर्महिमानमन्तरिक्षे ।

अदब्धेन ब्रह्मणा वावृधानः स त्वं न इन्द्र दिवि पंछर्मयच्छ तवेद् विष्णो० । त्वं नः० १२ १४५

या त इन्द्र तनूरप्सु या पृथिव्यां यान्तरग्रौ या त इन्द्र पर्वमाने स्वर्विदि ।

ययेन्द्र तन्वाडेऽन्तरिक्षं व्यापिथ तया न इन्द्र तन्वाडे शर्मयच्छ तवेद् विष्णो० । त्वं नः० १३

त्वामिन्द्र ब्रह्मणा वर्धयन्तः सत्रं नि षेदुर्ऋषयो नाधमानास्तवेद् विष्णो० । त्वं नः० १४

त्वं तृतं त्वं पर्येष्युत्सं सहस्रधारं विदथं स्वर्विदं तवेद् विष्णो० । त्वं नः० १५

त्वं रक्षसे प्रदिशश्चतस्रस्त्वं शोचिषा नभसी वि भासि ।

त्वमिमा विश्वा भुवनानु तिष्ठस ऋतस्य पन्थामन्वेषि विद्वांस्तवेद् विष्णो० । त्वं नः० १६

पञ्चभिः पराङ् तपस्येकयावाङ्शस्तिमेषि सुदिने बाधमानस्तवेद् विष्णो० । त्वं नः० १७ १५०

त्वमिन्द्रस्त्वं महेन्द्रस्त्वं लोकस्त्वं प्रजापतिः ।

तुभ्यं यज्ञो वि तायते तुभ्यं जुहति जुहतिस्तवेद् विष्णो० । त्वं नः० १८

असति सत् प्रतिष्ठितं सति भूतं प्रतिष्ठितम् ।

भूतं ह भव्य आर्हितं भव्यं भूते प्रतिष्ठितं तवेद् विष्णो० । त्वं नः० १९

सुक्रोऽसि भ्राजोऽसि । स यथा त्वं भ्राजता भ्राजोऽस्येवाहं भ्राजता भ्राज्यासम् २०

रुचिरसि रोचोऽसि । स यथा त्वं रुच्या रोचोऽस्येवाहं पशुभिश्च ब्राह्मणवर्चसेन

च रुचिषीय २१

उद्यते नम उदायते नम उदिताय नमः । विराजे नमः स्वराजे नमः सम्राजे नमः २२ १५५

अस्तंयते नमोऽस्तमेष्यते नमोऽस्तमिताय नमः । विराजे नमः स्वराजे नमः० २३
उदगादयमादित्यो विश्वेन तपसा सह ।

सपत्नान् मह्यं रन्धयन् मा चाहं द्विषते रधं तवेद् विष्णो बहुधा वीर्याणि ।
त्वं नः पृणीहि पशुभिर्विश्वरूपैः सुधायां मा धेहि परमे व्योमिन् २४

आदित्य नावमारुक्षः शतारित्रां स्वस्तये । अहर्मात्यपीपरो रात्रिं सत्रातिं पारय २५

सूर्य नावमारुक्षः शतारित्रां स्वस्तये । रात्रिं मात्यपीपरोऽहः सत्रातिं पारय २६

प्रजापतेरावृतो ब्रह्मणा वर्मेणाहं कश्यपस्य ज्योतिषा वर्चसा च ।

जरदष्टिः कृतवीर्यो विहायाः सहस्रायुः सुकृतश्चरेयम् २७ १६०

परीवृतो ब्रह्मणा वर्मेणाहं कश्यपस्य ज्योतिषा वर्चसा च ।

मा मा प्रापन्निषवो दैव्या या मा मानुषीरवसृष्टा वधाय २८

ऋतेन गुप्त ऋतुभिश्च सर्वैर्भूतेन गुप्तो भव्येन चाहम् ।

मा मा प्रापत् पाप्मा मोत मृत्युरन्तर्दधेऽहं सलिलेन वाचः २९

अग्निर्मा गोप्ता परि पातु विश्वत उद्यन्तसूर्यो नुदतां मृत्युपाशान् ।

व्युच्छन्तीरुषसः पर्वता ध्रुवाः सहस्रं प्राणा मय्या यतन्ताम् ३०

॥३०॥ (अथर्व० १९।१८।४)

(१६४) अथर्वा । आर्च्यनुष्टुप् ।

वरुणं त आदित्यवन्तमृच्छन्तु । ये माघायव एतस्यां दिशोऽभिदासात् ४

(१६५) ॥३१॥ (अथर्व० २०।१३५।६)

आदित्या ह जरितरङ्गिरोभ्यो दक्षिणामनयन् ।

तां ह जरितः प्रत्यायंस्ताम् ह जरितः प्रत्यायन् ६ १६५

आदित्य-सहचारी देवगणः ।

(१) आदित्योषसः ।

॥३२॥ [वै० (उषा) १८७-१९१ मन्त्राः द्रष्टव्याः ।]

(२) अग्निमित्रवरुणादित्यविश्वेदेवाः ।

(१६६) ॥३३॥ (वा० य० ४।११)

व्रतं कृणुताभिर्ब्रह्माभिर्यज्ञो वनस्पतिर्यज्ञियः ।

दैर्वा धियं मनामहे सुमृडीकामभिष्टये वर्चोधां यज्ञवाहसः सुतीर्था नो असद्रशे ।

ये देवा मनोजाता मनोयुजो दक्षकृतवस्ते नोऽवन्तु ते नः पान्तु तेभ्यः स्वाहा

११ १६६

(३) आदित्या वसवोऽङ्गिरसः पितरः ।

॥३४॥ (अथर्व० २।१२।४)

(१६७) भरद्वाजः । त्रिष्टुप् ।

अशीतिभिस्तिष्ठभिः सामगेभिरादित्येभिर्वसुभिरङ्गिरोभिः ।

इष्टापूतमवतु नः पितृणामाप्तुं ददे हरसा दैव्येन

४

(४) भगादित्याः ।

॥३५॥ (अथर्व० ३।१६।२-३, ५) (१६८-१७०), अथर्वा । त्रिष्टुप् ।

प्रातर्जितं भगमुग्रं हवामहे वयं पुत्रमदितेर्यो विधर्ता ।

आध्रश्चिद् यं मन्यमानस्तुरश्चिद् राजा चिद् यं भगं भक्षित्याहं

२

भग प्रणेतर्भग सत्यराधो भगेमां धियमुदवा ददन्नः ।

भग प्र णो जनय गोभिरश्वैर्भग प्र नृभिर्नृवन्तः स्याम

३

भग एव भगवाँ अस्तु देवस्तेना वयं भगवन्तः स्याम ।

तं त्वा भग सर्व इजोहवीमि स नो भग पुरएता भवेह

५ १७०

(५) बृहस्पतिः, आदित्यः ।

॥३६॥ (अथर्व० ४।१।१-७) +

(१७१-१७७) वेनः । त्रिष्टुप्, २, ५ पुरोऽनुष्टुप् ।

ब्रह्म जज्ञानं प्रथमं पुरस्ताद् वि सीमतः सुरुचो वेन आवः ।

स बुध्न्या उपमा अस्य विष्टाः सतश्च योनिमसतश्च वि वः

१

इयं पित्र्या राष्ट्रेत्वग्रं प्रथमायं जनुषे भुवनेष्टाः ।

तस्मा एतं सुरुचं ह्यारमह्यं घर्मं श्रीणन्तु प्रथमायं धास्यवे

२

प्र यो जज्ञे विद्वानस्य बन्धुर्विश्वा देवानां जनिमा विवक्ति ।

ब्रह्म ब्रह्मण उज्जभार मर्घ्याग्नीचैरुचैः स्वधा अभि प्र तस्थौ

३ १७३

स हि दिवः स पृथिव्या ऋतस्या मही क्षेमं रोदसी अस्कभायत् ।

मृहान् मही अस्कभायद् वि जातो द्यां सन्न पार्थिवं च रजः ४

स बुध्न्यादाष्टं जनुषोऽभ्यग्रं बृहस्पतिर्देवता तस्य सप्राट् ।

अहर्गच्छुक्रं ज्योतिषो जनिष्ठार्थं द्युमन्तो वि वसन्तु विप्राः ५ १७५

नूनं तदस्य काव्यो हिनोति महो देवस्य पूर्यस्य धाम् ।

एष जज्ञे बहुभिः साकमित्था पूर्वे अर्धे विषिते ससन्न ६

योऽथर्वाणं पितरं देवबन्धुं बृहस्पतिं नमसाव च गच्छात् ।

त्वं विश्वेषां जनिता यथासः कविर्देवो न दभायत् स्वधावान् ७

(६) दिवादित्यौ ।

॥३७॥ (अथर्व० ४।३९।५-६)

(१७८-१७९) अङ्गिराः । ५ त्रिपदा महाबृहती, ६ संस्तारपङ्क्तिः ।

दिव्यादित्याय समनमन्तस आर्धोत् ।

यथा दिव्यादित्यार्य समनमन्नेवा मह्यं संनमः सं नमन्तु ५

द्यौर्धेनुस्तस्या आदित्यो वत्सः । सा मे आदित्येन वत्सेनेषमूर्जं कामं दुहाम् ।

आयुः प्रथमं प्रजां पोषं रयिं स्वाहा ६

(७) आदित्यादयः ।

॥३८॥ (अथर्व० ५।२१।१०-१२)

(१८०-१८२) ब्रह्मा । अनुष्टुप्, ११ बृहतीगर्भा त्रिष्टुप् ।

आदित्यं चक्षुरा दत्स्व मरीचयोऽनु धावत । पत्सङ्गिनीरा संजन्तु विगते बाहुवीर्ये १० १८०

युयमुग्रा मरुतः पृश्निमातर इन्द्रेण युजा प्र मृणीतु शत्रून् ।

सोमो राजा वरुणो राजा महादेव उत मृत्युरिन्द्रः ११

एता देवसेनाः सूर्यकेतवः सचेतसः । अमित्रान् नो जयन्तु स्वाहा १२

(८) आदित्या रुद्रा वसवश्चः ।

॥३९॥ (१८३) (अथर्व० २०।१३।१२)

आदित्या रुद्रा वसवस्त्वेनु त इदं राधः प्रति गृम्णीद्यङ्गिरः ।

इदं राधो विष्टु प्रष्टु इदं राधो बृहत्पृथु ९ १८१

(३) मित्रः, मित्रावरुणौ च ।

॥४०॥ (ऋ० १।१५।१)

(१८४) दीर्घतमा औचथ्यः । जगती ।

मित्रं न यं शिम्या गोषु गव्यवः स्वाध्व्यो विदथे अप्सु जीजनन् ।
अरेजेतां रोदसी पाजसा गिरा प्रति प्रियं यजतं जुनुषामवः

१

॥४१॥ (ऋ० ३।५९।१-९)×

(१८५-१९३) गाथिनो विश्वामित्रः । त्रिष्टुप्, ६-९ गायत्री ।

मित्रो जनान् यातयति ब्रुवाणो मित्रो दाधार पृथिवीमुत द्याम् ।

मित्रः कृष्टीरर्निमिषाभि चष्टे मित्राय हव्यं घृतवज्रुहोत

१ १८५

प्र स मित्रं मर्तो अस्तु प्रयस्वान् यस्तं आदित्य शिक्षति व्रतेन ।

न हन्यते न जीयते त्वोतो नैनमंहो अश्नोत्यन्तितो न दूरात्

२

अनमीवास इळया मदन्तो मितज्ञवो वरिमन्ना पृथिव्याः ।

आदित्यस्य व्रतमुपक्षियन्तो वयं मित्रस्य सुमतौ स्याम

३

अयं मित्रो नमस्यः सुशेवो राजा सुक्षत्रो अजनिष्ट वेधाः ।

तस्य वयं सुमतौ यज्ञियस्याऽपि भद्रे सौमनसे स्याम

४

महौ आदित्यो नमसोपसद्यो यातयज्जनो गृणते सुशेवः ।

तस्मा एतत् पन्यतमाय जुष्टमग्नौ मित्राय हविरा जुहोत

५

मित्रस्य चर्षणीधृतो ऽवो देवस्य सानसि । द्युम्नं चित्रश्रवस्तमम्

६

१९०

अभि यो महिना दिवं मित्रो बभूव सप्रथाः । अभि श्रवोभिः पृथिवीम्

७

मित्राय पञ्च येमिरे जना अभिष्टिशवसे । स देवान् विश्वान् बिभर्ति

८

मित्रो देवेवायुषु जनाय वृक्तबर्हिषे । इषं इष्टव्रता अकः

९

॥४२॥ (१९४) (वा० य० ११।५३)

मित्रः सऽसृज्य पृथिवीं भूमिं च ज्योतिषा सह ।

सुजातं जातवैदसमयक्ष्माय त्वा सऽसृजामि प्रजाभ्यः

५३

॥४३॥ (अथर्व० १९।१९।१)

(१९५) अथर्वा । भुरिगृहती ।

मित्रः पृथिव्योदक्रामत् तां पुरं प्र णयामि वः ।

तामा विशत् तां प्र विशत् सा वः शर्म च वर्म च यच्छतु

१

१९५

॥४४॥ (ऋ० १।२।७-९)

(१९६-१९८) मधुच्छन्दा वैश्वामित्रः । गायत्री ।

मित्रं हुवे पूतदक्षं वरुणं च रिशादसम् । धियै घृताचीं साधन्ता ७
 ऋतेन मित्रावरुणा—वृतावृधावृतस्पृशा । क्रतुं बृहन्तमाशाथे ८
 कवी नो मित्रावरुणा तुविजाता उरुक्षया । दक्षं दधाते अपसम् ९

॥४५॥ (ऋ० १।२३।४-६)

(१९९-२०१) मेधातिथिः काण्वः । गायत्री ।

मित्रं वयं हवामहे वरुणं सोमपीतये । जज्ञाना पूतदक्षसा ४
 ऋतेन यावृतावृधा—वृतस्य ज्योतिषस्पती । ता मित्रावरुणा हुवे ५ २००
 वरुणः प्राविता भुवन् मित्रो विश्वाभिरुतिभिः । करतां नः सुरार्धसः ६

॥४६॥ (ऋ० १।४३।३)

(२०२) कण्वो घौरः । गायत्री ।

यथा नो मित्रो वरुणो यथा रुद्रश्चिकेतति । यथा विश्वे सजोषसः ३

॥४७॥ (ऋ० १।१३६।१-७)

(२०३-२१३) परुच्छेपो दैवोदासिः । अत्यष्टिः, ७ त्रिष्टुप् ।

प्र सु ज्येष्ठं निचिराभ्यां बृहन्नमो हव्यं मतिं भरता मृळ्यद्भ्यां स्वादिष्ठं मृळ्यद्भ्याम् ।
 ता सम्राजा घृतासुती यज्ञेयज्ञ उपस्तुता ।

अथैनोः क्षत्रं न कुतश्चनाधृषे देवत्वं नू चिदाधृषे १

अदर्शि गातुरुवे वरीयसी पन्थां ऋतस्य समयंस्त रश्मिभि—श्चक्षुर्भगस्य रश्मिभिः ।

द्युक्षं मित्रस्य सार्दन—मर्यम्णो वरुणस्य च ।

अथा दधाते बृहदुक्थ्यं वयं उपस्तुत्यं बृहद् वयः २

ज्योतिष्मतीमदिति धारयत्क्षितिं स्वर्वतीमा संचिते दिवेदिवे जागृवांसा दिवेदिवे ।

ज्योतिष्मत् क्षत्रमाशाते आदित्या दानुनस्पती ।

मित्रस्तयोर्वरुणो यातयज्जनो ऽर्यमा यातयज्जनः ३

अयं मित्राय वरुणाय शंतमः सोमो भूत्ववपानेष्वभगो देवो देवेष्वभगः ।

तं देवासो जुषेरत् विश्वे अद्य सजोषसः ।

तथा राजाना करथो यदीमह ऋतावाना यदीमहे

यो मित्राय वरुणायाविध्वज्जनो ऽनर्वाणं तं परि पातो अंहसो दाश्वासं मर्तमंहसः ।
तमर्यमाभि रक्ष—त्यृज्यन्तमनु व्रतम् ।

उक्थैर्य एनोः परिभूषति व्रतं स्तोमैराभूषति व्रतम् ५

नमो दिवे बृहते रोदसीभ्यां मित्राय वोचं वरुणाय मीळहुषे सुमृळीकाय मीळहुषे ।
इन्द्रमग्निमुप स्तुहि द्युक्षमर्यमणं भगम् ।

ज्योग्जीवन्तः प्रजया सचेमहि सोमस्योती सचेमहि ६

ऊती देवानां वयमिन्द्रवन्तो मंसीमहि स्वयंशसो मरुद्भिः ।

अग्निमित्रो वरुणः शर्म यंसन् तदश्याम मघवानो वयं च ७

॥४८॥ (ऋ० १।१३७।१-३) अतिशक्री ।

सुषुमा यातमद्रिभिर्गोश्रीता मत्सरा इमे सोमासो मत्सरा इमे ।

आ राजाना दिविस्पृशा ऽस्मत्रा गन्तमुप नः ।

इमे वा मित्रावरुणा गवाशिरः सोमाः शुक्रा गवाशिरः १ २१०

इम आ यातमिन्द्रवः सोमासो दध्याशिरः सुतासो दध्याशिरः ।

उत वामुषसो बुधि साकं सूर्यस्य रुग्मिभिः ।

सुतो मित्राय वरुणाय पीतये चारुर्ऋताय पीतये २

तां वा धेनुं न वासरी—मंशुं दुहन्त्याद्रिभिः सोमं दुहन्त्याद्रिभिः ।

अस्मत्रा गन्तमुप नो ऽर्वाश्वा सोमपीतये ।

अयं वा मित्रावरुणा नृभिः सुतः सोम आ पीतये सुतः ३

॥४९॥ (ऋ० १।१३९।२) अत्यष्टिः ।

यद्ध त्यन्मित्रावरुणावृतादध्यादुदाथे अनृतं स्वेन मन्युना दक्षस्य स्वेन मन्युना ।

युवोरित्थाधि सन्न—स्वर्षश्याम हिरण्ययम् ।

धीभिश्चन मनसा स्वेभिरक्षभिः सोमस्य स्वेभिरक्षभिः २

॥५०॥ (ऋ० १।१५१।२-९)

(२१४-२३२) दीर्घतमा औचथ्यः । जगती ।

यद्ध त्यद् वा पुरुमीळहस्य सोमिनः प्र मित्रासो न दधिरे स्वाभुवः ।

अध कर्तुं विदतं गातुमर्चत उत श्रुतं वृषणा पुस्त्यावतः १

आ वा भूषन् क्षितयो जन्म रोदस्योः प्रवाच्यं वृषणा दक्षसे महे ।

यदीमृताय भरथो यदर्वते प्र होत्रया शिष्या वीथो अध्वरम् ३ २१५

६० [अदितिः०] ३

| | |
|--|-------|
| प्र सा क्षितिर्सुर या महि प्रिय ऋतावानावृतमा घोषथो बृहत् । | |
| युवं दिवो बृहतो दक्षमाभ्रवं गां न धुर्युषं युञ्जाथे अपः | ४ |
| मही अत्र महिना वारमृण्वथो ऽरेणवस्तुज आ सन्नन् धेनवः । | |
| स्वरान्ति ता उपरताति सूर्यमा निम्रुचं उपसस्तक्ववीरिव | ५ |
| आ वामतायं केशिनीरनूषत मित्र यत्र वरुण गातुमर्चथः । | |
| अव त्मना सृजतं पिन्वतं धियो युवं विप्रस्य मन्मनामिरज्यथः | ६ |
| यो वां यज्ञैः शशमानो ह दाशति कविर्होता यजति मन्मसाधनः । | |
| उपाह तं गच्छथो वीथो अध्वरमच्छा गिरः सुमतिं गन्तमस्मयू | ७ |
| युवां यज्ञैः प्रथमा गोभिरञ्जत ऋतावाना मनसो न प्रयुक्तिषु । | |
| भरन्ति वां मन्मना संयता गिरो ऽदृष्यता मनसा रेवदाशथे | ८ २२० |
| रेवद् वयो दधाथे रेवदाशथे नरा मायाभिरित ऊति माहिनम् । | |
| न वां द्यावोऽहभिर्नोत सिन्धवो न देवत्वं पणयो नानशुर्मघम् | ९ |

॥५१॥ (ऋ० १।१५२।१-७) त्रिष्टुप् ।

| | |
|--|-------|
| युवं वस्त्राणि पीवसा वसाथे युवोरच्छिद्रा मन्तवो ह सर्गाः । | |
| अवातिरतमनृतानि विश्वं ऋतेन मित्रावरुणा सचेथे | १ |
| एतच्चन त्वो वि चिकेतदेषां सत्यो मन्त्रः कविशस्त ऋषावान् । | |
| त्रिराश्रि हन्ति चतुरश्रिरुग्रो देवनिदो ह प्रथमा अजूर्यन् | २ |
| अपादैति प्रथमा पद्वतीनां कस्तद् वां मित्रावरुणा चिकेत । | |
| गर्भो भारं भरत्या चिदस्य ऋतं पिपत्यनृतं नि तारीत् | ३ |
| प्रयन्तमित् परिं जारं कनीनां पश्यामसि नोपनिपद्यमानम् । | |
| अनेवपृग्णा विरता वसानं प्रियं मित्रस्य वरुणस्य धाम | ४ २२५ |
| अनश्वा जातो अनभीशुरवा कनिक्रदत् पतयदूर्ध्वसानुः । | |
| अचित्तं ब्रह्म जुजुषुर्यवानः प्र मित्रे धाम वरुणे गृणन्तः | ५ |
| आ धेनवो मामतेयमवन्ती ब्रह्मप्रियं पीपयन्तस्मिन्मूधन् । | |
| पित्वो भिक्षेत वयुनानि विद्रा नासाविवासादिति म्रुरुष्येत् | ६ |
| आ वां मित्रावरुणा हव्यजुष्टिं नमसा देवाववसा ववृत्याम् । | |
| अस्माकं ब्रह्म पृतनासु सद्या अस्माकं वृष्टिर्विव्या सुपारा | ७ २२८ |

॥५२॥ (ऋ० १।१५३।१-४)

| | |
|--|-------|
| यजामहे वां महः सजोषां हव्येभिर्मित्रावरुणा नमोभिः । | |
| घृतैर्घृतस्नु अध यद् वामस्ये अंघ्र्यवो न धीतिभिर्भरन्ति | १ |
| प्रस्तुतिर्वा धाम न प्रयुक्ति—रयाभि मित्रावरुणा सुवृक्तिः । | |
| अनक्ति यद् वां विदथेषु होता सुभ्रं वां सूरिर्वृषणाविर्यक्षन् | २ २३० |
| पीपाय धेनुरदितिर्ऋताय जनाय मित्रावरुणा हविर्दे । | |
| हिनोति यद् वां विदथे सपर्य—न्त्स रातहव्यो मानुषो न होता | ३ |
| उत वां विक्षु मद्यास्त्रन्धो गाव आपश्च पीपयन्त देवीः । | |
| उतो नो अस्य पूर्यः पतिर्दन् वीतं पातं पर्यस उस्त्रियाथाः | ४ |

॥५३॥ (ऋ० २।४१।४-६)×

| | |
|---|-------|
| (२३३-२३५) गृत्समद् (आङ्गिरसः शौनहोत्रः पश्चाद्) भार्गवः शौनकः । गायत्री । | |
| अयं वां मित्रावरुणा सुतः सोमं ऋतावृधा । ममेदिह श्रुतं हवम् | ४ |
| राजानावनभिद्रुहा ध्रुवे सदस्युत्तमे । सहस्रस्थूण आसाते | ५ |
| ता सम्राजा घृतासुती आदित्या दानुनस्पती । सचेते अनवह्वरम् | ६ २३५ |

॥५४॥ (ऋ० ३।६२।१३-१८)+

(२३६-२३८) गाथिनो विश्वामित्रः, जमदग्निर्वा । गायत्री ।

| | |
|---|----|
| आ नो मित्रावरुणा घृतैर्गव्यूतिमुक्षतम् । मध्वा रजांसि सुकतू | १६ |
| उरुशंसा नमोवृधा मङ्गा दक्षस्य राजथः । द्राघिष्ठाभिः शुचित्रता | १७ |
| गृणाना जमदग्निना योनावृतस्य सीदतम् । पातं सोममृतावृधा | १८ |

॥५५॥ (ऋ० ५।६२।१-९)

(२३९-२४७) श्रुतविदात्रेयः । त्रिष्टुप् ।

| | |
|--|-------|
| ऋतेन ऋतमपिहितं ध्रुवं वां सूर्यस्य यत्र विमुचन्त्यश्वाः । | |
| दशं श्रुता सह तस्थुस्तदेकं देवानां श्रेष्ठं वपुषामपश्यम् | १ |
| तत् सु वां मित्रावरुणा महित्व—मीर्मा तस्थुषीरहभिर्दुदुहे । | |
| विश्वाः पिन्वथः स्वसरस्य धेना अनु वामेकः पविरा वर्धत | २ |
| अधारयतं पृथिवीमुत द्यां मित्रराजाना वरुणा महोभिः । | |
| वर्धयतमोक्षीः पिन्वतं गा अब वृष्टिं सृजतं जीरदान् | ३ २४१ |

× ऋ० २, ४१, ४ = वा० य० ७, ९;

+ ऋ० ३, ६२, १३ = वा० य० २१८; सा० २२०, ६६३

| | |
|---|-------|
| आ वामश्वासः सुयुजो वहन्तु यतरश्मय उप यन्त्वर्वाक् । | |
| घृतस्य निर्णिगनु वर्तते वा—मृष सिन्धवः प्रदिर्वि क्षरन्ति | ४ |
| अनु श्रुताममति वर्धदुर्वी बहिर्निव यजुषा रक्षमाणा । | |
| नमस्वन्ता धृतदक्षाधि गते मित्रासाथे वरुणेळास्वन्तः | ५ |
| अक्रविहस्ता सुकृते परस्पा यं त्रासाथे वरुणेळास्वन्तः । | |
| राजांना क्षत्रमहणीयमाना सहस्रस्थूणं विभृथः सह द्वौ | ६ |
| हिरण्यनिर्णिगयो अस्य स्थूणा वि भ्राजते दिव्यश्वाजनीव । | |
| भद्रे क्षेत्रे निर्मिता तिल्विले वा सनेम मध्वो अधिगर्त्यस्य | ७ २४५ |
| हिरण्यरूपमुषसो व्युष्टा—वयःस्थूणमुदिता सूर्यस्य । | |
| आ रोहथो वरुण मित्र गर्त—मत्तश्चक्षथे अदितिं दितिं च | ८ |
| यद् बहिष्ठं नातिविधे सुदानू अच्छिद्रं शर्म भुवनस्य गोपा । | |
| तेन नो मित्रावरुणावविष्टं सिपासन्तो जिगीवांसः स्याम | ९ |

॥५६॥ (ऋ० ५।६३।१-७)

(२४८-२६१) अर्चनाना आत्रेयः । जगती ।

| | |
|---|-------|
| ऋतस्य गोपावधि तिष्ठथो रथं सत्यधर्माणा परमे व्योमनि । | |
| यमत्र मित्रावरुणावथो युवं तस्मै वृष्टिर्मधुमत् पिन्वते दिवः | १ |
| सम्राजावस्य भुवनस्य राजथो मित्रावरुणा विदथे स्वर्दशा । | |
| वृष्टिं वां राधो अमृतत्वमीमहे द्यावापृथिवी वि चरन्ति तन्यवः | २ |
| सम्राजा उग्रा वृषभा दिवस्पती पृथिव्या मित्रावरुणा विचर्षणी । | |
| चित्रेभिर्भ्रैरुप तिष्ठथो रवं द्यां वर्षयथो असुरस्य मायया | ३ २५० |
| माया वां मित्रावरुणा दिवि श्रिता सूर्यो ज्योतिश्चरति चित्रमायुधम् । | |
| तमभ्रेण वृष्ट्या गूहथो दिवि पर्जन्य द्रप्सा मधुमन्त ईरते | ४ |
| रथं युञ्जते मरुतः शुभे सुखं शूरो न मित्रावरुणा गर्विष्ठिषु । | |
| रजोसि चित्रा वि चरन्ति तन्यवो दिवः सम्राजा पर्यसा न उक्षतम् | ५ |
| वाचं सु मित्रावरुणाविरावती पर्जन्यश्चित्रा वदति त्विषीमतीम् । | |
| अभ्रा वसत मरुतः सु मायया द्यां वर्षयतमरुणामरेपसम् | ६ |
| धर्मणा मित्रावरुणा विपश्चिता व्रता रक्षेथे असुरस्य मायया । | |
| ऋतेन विश्वं भुवनं वि राजथः सूर्यमा धत्थो दिवि विभ्यं रथम् | ७ २५४ |

॥५७॥ (ऋ० ५।६४।१-७) अनुष्टुप्, ७ पङ्क्तिः ।

वरुणं वो रिशादस—मृचा मित्रं हवामहे । परिं व्रजेव बाह्वो—जैगन्वासा स्वर्णरम् १ २५५
 ता बाहवा सुचेतुना प्र यन्तमस्मा अर्चते । शेवं हि जार्यं वां विश्वासु क्षासु जोगुवे २
 यन्नूनमश्यां गतिं मित्रस्य यायां पथा । अस्य प्रियस्य शर्मण्य—हिंसानस्य सश्विरे ३
 युवाभ्यां मित्रावरुणो—पमं धेयामृचा । यदु क्षये मघोनां स्तोतृणां च स्पर्धसे ४
 आ नो मित्र सुदीतिभि—र्वरुणश्च सधस्थ आ । स्वे क्षये मघोनां सखीनां च बृधसे ५
 युवं नो येषु वरुण क्षत्रं बृहच्च विभृथः । उरु णो वाजसातये कृतं राये स्वस्तये ६ २६०
 उच्छन्त्यां मे यजता देवक्षत्रे रुशद्वि ।
 सुतं सोमं न हस्तिभि—रा पङ्क्तिर्धौवतं नरा विभ्रतावर्चनानसम् ७

॥५८॥ (ऋ० ५।६५।१-६)

(२६२-२७३) रातहव्य आत्रेयः । अनुष्टुप्, ६ पङ्क्तिः ।

यश्चिकेत स सुक्रतु—देवत्रा स ब्रवीतु नः । वरुणो यस्य दर्शतो मित्रो वा वनते गिरः १
 ता हि श्रेष्ठवर्चसा राजाना दीर्घश्रुत्तमा । ता सत्पती ऋतावृधं ऋतावाना जनेजने २
 ता वामियानोऽवसे पूर्वा उप ब्रुवे सचा । स्वश्वासः सु चेतुना वाजां अभि प्र दावने ३
 मित्रो अंहोश्चिदादुरु क्षयाय गातुं वनते । मित्रस्य हि प्रतूर्वतः सुमतिरस्ति विधतः ४ २६५
 ब्रयं मित्रस्यावसि स्याम सप्रथस्तमे । अनेहसस्त्वोतयः सत्रा वरुणशेषसः ५
 युवं मित्रेमं जनं यतथः सं च नयथः ।
 मा मघोनः परि ख्यतं मो अस्माकमृषीणां गोपीथे न उरुष्यतम् ६

॥५९॥ (ऋ० ५।६६।१-६) अनुष्टुप् ।

आ चिकितान सुक्रतू देवौ मर्त रिशादसा । वरुणाय ऋतपेशसे दधीत प्रयसे महे १
 ता हि क्षत्रमविहुतं सम्यगसुर्यमाशाते । अर्धं व्रतेव मानुषं स्वर्णं धायि दर्शतम् २
 ता वामेषे रथाना—मुर्वी गव्युतिमेषाम् । रातहव्यस्य सुष्टुतिं दुष्टकू स्तोमैर्मनामहे ३ २७०
 अधा हि काव्या युवं दक्षस्य पूर्भिर्द्भुता । नि केतुना जनानां चिकेथे पूतदक्षसा ४
 तद्वतं पृथिवि बृह—च्छ्रवण ऋषीणाम् । जयसानावरं पृथ्व—ति क्षरन्ति यामभिः ५
 आ यद् वामीयचक्षसा मित्रं वयं च सूरयः । व्यचिष्टे बहुपाय्ये यतमहि स्वराज्ये ६

॥६०॥ (ऋ० ५।६७।१-५)

(२७४-२८३) यजत आत्रेयः । अनुष्टुप् ।

बळिस्था देव निष्कृत—मादित्या यजतं बृहत् । वरुण मित्रार्यमन् वर्षिष्ठं क्षत्रमाशाथे १
 आ यद् योनिं हिरण्ययं वरुण मित्र सदथः । धर्तारा चर्षणीनां यन्तं सुसं रिशादसा २ २७५

विश्वे हि विश्ववेदसो वरुणो मित्रो अर्यमा । व्रता पदेव सश्विरे पान्ति मर्त्ये रिषः ३
ते हि सत्या ऋतस्पृशं ऋतावानो जनैजने । सुनीथासः सुदानवो—ऽहोश्चिदुरुचक्रयः ४
को नु वां मित्रास्तुतो वरुणो वा तनूनाम् । तत् सु वामेषते मति—रत्रिभ्य एषते मतिः ५

॥६१॥ (ऋ० ५।६८।१-५) गायत्री ।

| | |
|---|-------|
| प्र वो मित्राय गायत वरुणाय विपा गिरा । महिक्षत्रावृतं बृहत् | १ |
| सम्राज्ञा या घृतयोनी मित्रश्चोभा वरुणश्च । देवा देवेषु प्रशस्ता | २ २८० |
| ता नः शक्तं पार्थिवस्य महो रायो दिव्यस्य । महि वां क्षत्रं देवेषु | ३ |
| ऋतमृतेन सपन्ते—षिरं दक्षमाशाते । अदुहा देवौ वधेते | ४ |
| वृष्टिद्यावा रीत्यापे—षस्पती दानुमत्याः । बृहन्तं गर्तमाशाते | ५ |

॥६२॥ (ऋ० ५।६९।१-४)

(२८४-२९१) उरुचक्रिरात्रेयः । त्रिष्टुप् ।

त्री रौचना वरुण त्रीरुत द्यून् त्रीणि मित्र धारयथो रजांसि ।
वावृधानावमर्तिं क्षत्रियस्या—ऽनु व्रतं रक्षमाणावजुर्यम् १
इरावतीवरुण धेनवो वां मधुमद् वां सिन्धवो मित्र दुहे ।
त्रयस्तस्थुर्वृषभासस्तिषृणां धिषणानां रेतोधा वि द्युमन्तः २ २८५
प्रातर्देवीमर्दिति जोहवीमि मध्यंदिन उर्दिता सूर्यस्य ।
राये मित्रावरुणा सर्वताते—के तोकाय तनयाय शं योः ३
या धर्तारा रजसो रोचनस्यो—तादित्या दिव्या पार्थिवस्य ।
न वो देवा अमृता आ मिनन्ति व्रतानि मित्रावरुणा ध्रुवाणि ४

॥६३॥ (ऋ० ५।७०।१-४) गायत्री ।

| | |
|---|-------|
| पुरुषा चिद्व्यस्त्य—वो नूनं वां वरुण । मित्र वंसि वां सुमतिम् | १ |
| ता वां सम्यगद्रुह्याणे—षमश्याम धार्यसे । वयं ते रुद्रा स्याम | २ |
| पातं नो रुद्रा पायुभि—रुत त्रायेथां सुत्रात्रा । तुर्याम दस्यून् तनूभिः | ३ २९० |
| मा कस्याद्भुतक्रतू यक्षं भुजेमा तनूभिः । मा शेषसा मा तनसा | ४ |

॥६४॥ (ऋ० ५।७१।१-३)

(२९२-२९७) बाहुवृक्त आत्रेयः । गायत्री ।

| | |
|--|-------|
| आ नो गन्तं रिशादसा वरुण मित्र बर्हणा । उपेमं चारुमध्वरम् | १ |
| विश्वस्य हि प्रचेतसा वरुण मित्र राजथः । ईशाना विप्यतं धियः | २ २९३ |

उप नः सुतमा गतं वरुण मित्रं दाशुषः । अस्य सोमस्य पीतये ३

॥६५॥ (ऋ० ५।७२।१-३) उष्णिक् ।

आ मित्रे वरुणे वयं गीर्भिर्जुहुमो अत्रिवत् । नि बर्हिषि सदतं सोमपीतये १ २९५

व्रतेन स्थो ध्रुवक्षेमा धर्मणा यातयज्जना । नि बर्हिषि सदतं सोमपीतये २

मित्रश्च नो वरुणश्च जुषेतां यज्ञमिष्टये । नि बर्हिषि सदतां सोमपीतये ३

॥६६॥ (ऋ० ६।६७।१-११)

(२९८-३०८) बार्हस्पत्यो भरद्वाजः । त्रिष्टुप् ।

विशेषां वः सतां ज्येष्ठतमा गीर्भिर्मित्रावरुणा वावृधध्वै ।

सं या रश्मेव यमतुर्यमिष्टा द्रा जनाँ असमा बाहुभिः स्वैः १

इयं मद् वाँ प्र स्तृणीते मनीषो—प प्रिया नमसा बर्हिरच्छ ।

यन्तं नो मित्रावरुणावधृष्टं छर्दिर्यद् वाँ वरूथ्यं सुदान २

आ यातं मित्रावरुणा सुशस्त्यु—प प्रिया नमसा ह्यमाना ।

सं यावमःस्थो अपसेव जनाँ—ञ्छुधीयतश्चिद् यतथो महित्वा ३ ३००

अश्वा न या वाजिनां पुतबन्धू ऋता यद् गर्भमदितिर्भरध्वै ।

प्र या महिं महान्ता जायमाना घोरा मर्ताय रिपवे नि दीधः ४

विश्वे यद् वाँ मंहना मन्दमानाः क्षत्रं देवासो अदधुः सजोषाः ।

परि यद् भूथो रोदसी चिदुर्वी सन्ति स्पशो अदब्धासो अमूराः ५

ता हि क्षत्रं धारयेथे अनु द्यून् दृहेथे सानुमुपमादिव द्योः ।

दृळ्हो नक्षत्र उत विश्वदैवो भूमिमातान् द्यां धासिनायोः ६

ता विग्रं धैथे जठरं पृणध्या आ यत् सद्यः सभृतयः पृणन्ति ।

न मृष्यन्ते युवतयोऽवाता वि यत् पयो विश्वजिन्वा भरन्ते ७

ता जिह्वया सदमेदं सुमेधा आ यद् वाँ सत्यो अरतिर्ऋते भूत ।

तद् वाँ महित्वं घृताभावस्तु युवं दाशुषे वि चयिष्टमंहः ८ ३०५

प्र यद् वाँ मित्रावरुणा स्पर्धन् प्रिया धाम युवधिता मिनन्ति ।

न ये देवास ओहसा न मर्ता अयंज्ञसाचो अप्यो न पुत्राः ९

वि यद् वाचं कीस्तासो भरन्ते शंसन्ति के चिन्निविदो मनानाः ।

आद् वाँ ब्रवाम सत्यान्युक्था नर्किर्देवेभिर्यतथो महित्वा १०

अवोरित्था वाँ छर्दिषो अभिष्टौ युवोर्मित्रावरुणावस्कृधोयु ।

अनु यद् गावः स्फुरानृजिप्यं धृष्णुं यद् रणे वृषणं युनर्जन् ११ ३०८

॥६७॥ (ऋ० ७।५०।१)

(३०९-३४७) मित्रावरुणिर्वसिष्ठः । जगती ।

आ मां मित्रावरुणेह रक्षतं कुलाययद् विश्वयन्मा न आ गन् ।
अजकावं दुर्दृशीकं तिरो दधे मा मां पद्येन रपसा विदुत् त्सरुः

१

॥६८॥ (ऋ० ७।६०।१-१२) त्रिष्टुप् ।

एष स्य मित्रावरुणा नृचक्षा उभे उदेति सूर्यो अभि ज्मन् ।
विश्वस्य स्थातुर्जगतश्च गोपा ऋजु मर्तेषु वृजिना च पश्यन्
अयुक्त सप्त हरितः सधस्थाद् या ई वहन्ति सूर्यं घृताचीः ।
धामानि मित्रावरुणा युवाकुः सं यो यूथेव जनिमानि चष्टे
उद् वां पृक्षासो मधुमन्तो अस्थुरा सूर्यो अरुहच्छुक्रमर्णः ।
यस्मां आदित्या अध्वनो रदन्ति मित्रो अर्यमा वरुणः सजोषाः
इमे चेतारो अनृतस्य भूरं मित्रो अर्यमा वरुणो हि सन्ति ।
इम ऋतस्य वावृधुर्दुरोणे शग्मासः पुत्रा अदितेरदब्धाः

२ ३१०

३

४

५

इमे मित्रो वरुणो दुळभासो ऽचेतसं चिचितयन्ति दक्षैः ।
अपि क्रतुं सुचेतसं वर्तन्तस्तिरश्चिदंहः सुपथा नयन्ति
इमे दिवो अनिमिषा पृथिव्याश्चिकित्वांसो अचेतसं नयन्ति ।
प्रत्राजे चिन्नद्यौ गाधमस्ति पारं नो अस्य विष्पितस्य पर्षन्
यद् गोपावददितिः शमं भद्रं मित्रो यच्छन्ति वरुणः सुदासे ।
तस्मिन्ना तोकं तनयं दधाना मा कर्म देवहेळनं तुरासः

६

७ ३१५

८

अव वेदिं होत्राभिर्यजेत रिपः काश्चिद् वरुणध्रुतः सः ।
परि द्वेषोभिर्यमा वृणक्तुरं सुदासे वृषणा उ लोकम्
सस्वश्चिद्धि समृतिस्त्वेष्येषा मपीच्येन सहसा सहन्ते ।
युष्मद् भिया वृषणो रेजमाना दक्षस्य चिन्महिना मृळता नः

९

१०

यो ब्रह्मणे सुमतिमायजाते वाजस्य सातौ परमस्य रायः ।

सीक्षन्त मन्युं मघवानो अर्य उरु क्षयाय चक्रिरे सुधातु

११

इयं देव पुरोहितिर्युवभ्यां यज्ञेषु मित्रावरुणावकारि ।

विश्वानि दुर्गा पिपृतं तिरो नो यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः

१२ ३२०

॥६९॥ (ऋ० ७।६१।१-७)

| | |
|---|-------|
| उद् वां चक्षुर्वरुण सुप्रतीकं देवयौरेति सूर्यस्ततन्वान् । | |
| अभि यो विश्वा भुवनानि चष्टे स मन्युं मर्त्येष्वचिकेत | १ |
| प्र वां स मित्रावरुणावृतावा विप्रो मन्मानि दीर्घश्रुदियति । | |
| यस्य ब्रह्माणि सुक्रतु अवाथ आ यत् क्रत्वा न शरदः पुणैथे | २ |
| प्रोरोमित्रावरुणा पृथिव्याः प्र दिव ऋष्वद् बृहतः सुदानू । | |
| स्पशो दधाथे ओषधीषु विक्ष्वृ—धग्यतो अर्निमिषं रक्षमाणा | ३ |
| शंसा मित्रस्य वरुणस्य धाम शुष्मो रोदसी बद्धधे महित्वा । | |
| अयन् मासा अयज्वनामवीराः प्र यज्ञमन्मा वृजनं तिराते | ४ |
| अमूरा विश्वा वृषणाविमा वां न यासु चित्रं ददृशे न यक्षम् । | |
| द्रुहः सचन्ते अनृता जनानां न वां निष्यान्यचिते अभूवन् | ५ ३२५ |
| समु वां यज्ञं मह्यं नमोभि—हुवे वां मित्रावरुणा सवाधः । | |
| प्र वां मन्मान्युचसे नवानि कृतानि ब्रह्म जुजुषन्निमानि | ६ |
| इयं देव पुरोहितिर्युवभ्यां यज्ञेषु मित्रावरुणावकारि । | |
| विश्वानि दुर्गा पिपृतं तिरो नो यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः | ७ |

॥७०॥ (ऋ० ७।६२।४-६)×

| | |
|--|--------|
| द्यावाभूमी अदिते त्रासीथां नो ये वां जज्ञुः सुजनिमान ऋष्वे । | |
| मा हेळे भूम वरुणस्य वायो—र्मा मित्रस्य प्रियतमस्य नृणाम् | ४ |
| प्र बाहवां सिसृतं जीवसे न आ नो गव्यंतिमुक्षतं घृतेन । | |
| आ नो जने श्रवयतं युवाना श्रुतं मे मित्रावरुणा हवेमा | ५ |
| नू मित्रो वरुणो अर्यमा न—स्मने तोकाय वरिवो दधन्तु । | |
| सुगा नो विश्वा सुपथानि सन्तु यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः | *६ ३३० |

॥७१॥ (ऋ० ७।६४।१-५)

| | |
|---|-------|
| दिवि क्षयन्ता रजसः पृथिव्यां प्र वां घृतस्य निर्णिजो ददीरन् । | |
| हव्यं नो मित्रो अर्यमा सुजातो राजा सुक्षत्रो वरुणो जुषन्त | १ ३३१ |

| | | |
|---|-----------------------------------|-------|
| आ राजाना मह ऋतस्य गोपा | सिन्धुपती क्षत्रिया यातमर्वाक् । | |
| इळां नो मित्रावरुणोत वृष्टि—मव दिव इन्वतं जीरदानू | | २ |
| मित्रस्तन्नो वरुणो देवो अर्यः | प्र सार्धिष्ठेभिः पथिभिर्नयन्तु । | |
| ब्रवद् यथा न आदुरिः सुदासं | इषा मदेम सह देवगोपाः | ३ |
| यो वां गतं मनसा तक्षदेत—मूर्ध्वा धीतिं कृणवद् धारयच्च । | | |
| उक्षेथां मित्रावरुणा घृतेन | ता राजाना सुक्षितीस्तर्पयेथाम् | ४ |
| एष स्तोमो वरुण मित्र तुभ्यं | सोमः शुक्रो न वायवेऽयामि । | |
| अविष्टं धियो जिगृतं पुरंधी—र्युयं पात स्वस्तिभिः सदा नः | | ५ ३३५ |

॥७२॥ (ऋ० ७।६५।१-५)

| | | |
|--|--------------------------------|-------|
| प्रति वां स्र उदिते सूक्तै—मित्रं हुवे वरुणं पूतदक्षम् । | | |
| ययोरसुर्यमक्षितं ज्येष्ठं | विश्वस्य यामन्नाचिता जिगलु | १ |
| ता हि देवानामसुरा तावर्या | ता नः क्षितीः करतमूर्जयन्तीः । | |
| अश्याम मित्रावरुणा वयं वां | द्यावा च यत्र पीपयन्नहा च | २ |
| ता भूरिपाशावनृतस्य सेतू | दुरत्येतू रिपवे मर्त्याय । | |
| ऋतस्य मित्रावरुणा पथा वां | मपो न नावा दुरिता तरेम | ३ |
| आ नो मित्रावरुणा हव्यजुष्टिं | घृतैर्गव्यूतिमुक्षतमिळाभिः । | |
| प्रति वामत्र वरमा जनाय | पृणीतमुद्रो दिव्यस्य चारोः | ४ |
| एष स्तोमो वरुण मित्र तुभ्यं | सोमः शुक्रो न वायवेऽयामि । | |
| अविष्टं धियो जिगृतं पुरंधी—र्युयं पात स्वस्तिभिः सदा नः | | ५ ३४० |

॥७३॥ (ऋ० ७।६६।१-३, १७-१९) गायत्री ।

| | | |
|----------------------|---|--------|
| प्र मित्रयोर्वरुणयोः | स्तोमो न एतु शूष्यः । नमस्वान् तुविजातयोः | १ |
| या धारयन्त देवाः | सुदक्षा दक्षपितरा । असुर्याय प्रमहसा | २ |
| ता नः स्तिपा तनूपा | वरुण जरितृणाम् । मित्रं साधयतं धियः | ३ |
| काव्यैभिरद्राभ्या | ऽऽ यातं वरुण द्युमत् । मित्रश्च सोमपीतये | १७ |
| दिवो धामभिर्वरुण | मित्रश्चा यातमद्रुहा । पिबतं सोममातुजी | १८ ३४५ |
| आ यातं मित्रावरुणा | जुषाणावाहुतिं नरा । पातं सोममृतावृधा | १९ |

॥७४॥ (ऋ० ८।२५।१-२, १३-२४)

(३४७-३६७) विश्वमना वैयश्वः । उष्णिक्, २३ उष्णिग्गर्भा ।

| | | |
|----------------------|--|-------|
| ता वां विश्वस्य गोपा | देवा देवेषु यज्ञिया । ऋतावाना यजसे पूतदक्षसा | १ ३४७ |
|----------------------|--|-------|

मित्रा तना न रथ्याइ वरुणो यश्च सुक्रतुः । सनात् सुजाता तनया धृतव्रता २
 ता माता विश्ववेदसा ऽसुरीय प्रमहसा । मही जजानादितिर्ऋतावरी ३
 महान्ता मित्रावरुणा सम्राजा देवावसुरा । ऋतावानाव्रतमा घोषतो बृहत् ४ ३५०
 नपाता श्वसो महः सूनू दक्षस्य सुक्रतू । सुप्रदानू इषो वास्त्वधि क्षितः ५
 सं या दानूनि येमथु—दिव्याः पार्थिवीरिषः । नभस्वतीरा वां चरन्तु वृष्टयः ६
 अधि या बृहतो दिवोइ ऽभियूथेव पश्यतः । ऋतावाना सम्राजा नमसे हिता ७
 ऋतावाना नि पेंदतुः साम्राज्याय सुक्रतू । धृतव्रता क्षत्रिया क्षत्रमाशतुः ८
 अक्ष्णश्चिद् गातुवित्तरा ऽनुल्बणेन चक्षसा । नि चिन्मिषन्ता निचिरा नि चिक्यतुः ९ ३५५
 तद् वार्यं वृणीमहे वरिष्ठं गोपयत्यम् । मित्रो यत् पान्ति वरुणो यदर्यमा १३
 उत नः सिन्धुरपां तन्मरुतस्तदश्विना । इन्द्रो विष्णुर्माद्वांसः सजोषसः १४
 ते हि ष्मा वनुषो नरो ऽभिर्माति कयस्य चित् । तिग्मं न क्षोदः प्रतिघ्नन्ति भूर्णयः १५
 अयमेक इत्था पुरू—रु चष्टे वि विष्पतिः । तस्य व्रतान्यनु वश्ररामसि १६
 अनु पूर्वाण्योक्या साम्राज्यस्य सश्विम । मित्रस्य व्रता वरुणस्य दीर्घश्रुत् १७ ३६०
 परि यो रश्मिना दिवो ऽन्तान् ममे पृथिव्याः । उभे आ पप्रौ रोदसी महित्वा १८
 उदु ष्य शरणे दिवो ज्योतिरयस्त सूर्यः । अग्निर्न शुक्रः समिधान आहुतः १९
 वर्षो दीर्घप्रसन्ननी—शे वाजस्य गोमतः । ईशे हि पित्वोऽविषस्य दावने २०
 तत् सूर्य रोदसी उभे दोषा वस्तोरुप ब्रुवे । भोजेष्वास्मां अभ्युच्चरा सदा २१
 ऋज्रमुक्षण्यायने रजतं हरयाणे । रथं युक्तमसनाम सुषामणि २२ ३६५
 ता मे अश्वानां हरीणां नितोशना । उतो नु कृत्व्यानां नृवाहसा २३
 स्मदभीशू कशावन्ता विप्रा नविष्ठया मती । महो वाजिनावर्वन्ता सचासनम् २४

॥७५॥ (ऋ० ८।१०।१-४) +

(३६८-३७१) जमदग्निर्भार्गवः १-२ प्रगाथः=(बृहती+सतोवृहती), ३ गायत्री, ४ सतोवृहती ।

ऋधगित्था स मर्त्यः शशमे देवतातये ।

यो नूनं मित्रावरुणावभिष्टय आचक्रे हव्यदातये १

वर्षिष्ठक्षत्रा उरुचक्षसा नरा राजाना दीर्घश्रुत्तमा ।

ता बाहुता न दुंसना रथर्यतः साकं सूर्यस्य रश्मिभिः २

प्र यो वां मित्रावरुणा ऽजिरो दूतो अद्रवत् । अयःशीर्षा मदैरघुः ३ ३७०

न यः संपृच्छे न पुनर्हवीतवे न संवादाय रमते ।
तस्मान्नो अद्य समृतेरुह्यतं बाहुभ्यां न उरुह्यतम् ४

॥७६॥ (ऋ० १०।१३।२-७)

(३७२-३७७) शकपूतो नार्मेधः । विराड् रूपा; २, ६ प्रस्तारपङ्क्तिः, ७ महासतोषृद्धती ।

ता वा मित्रावरुणा धारयत्क्षिती सुषुम्नेषितृत्वता यजामसि ।
युवोः क्राणाय सख्यै—रभि व्याम रक्षसः २
अधा चिन्नु यद्विषामहे वा—मभि प्रियं रेक्णः पत्यमानाः ।
दुद्रां वा यत् पुष्यति रेक्णः सम्वारन् नर्किरस्य मघानि ३
असावन्यो असुर स्यत द्यौ—स्त्वं विश्वेषां वरुणासि राजा ।
मूर्धा रथस्य चाकन् नैतावतैनसान्तकध्रुक ४
अस्मिन्स्वेडेत्तच्छकपूत एनो हिते मित्रे निगतान् हन्ति वीरान् ।
अवोर्वा मद्धात् तनूष्ववः प्रियासु यज्ञियास्वर्वा ५ ३७५
युवोर्हि मातादितिर्विचेतसा द्यौर्न भूमिः पर्यसा पुपुतनि ।
अव प्रिया दिदिष्टन् सूरौ निनिक्त रश्मिभिः ६
युवं ह्यमराज्जावसीदतं तिष्ठद् रथं न धूर्षदं वनर्षदम् ।
ता नः कणूकयन्ती—नृमेधस्तत्रे अंहसः सुमेधस्तत्रे अंहसः ७

॥७७॥ (३७८-३८२) (वा० य० ७।१०) *

राया वयं संसवांसो मदेम हव्येन देवा यवसेन गावः ।
तां धेनुं मित्रावरुणा युवं नो विश्वाहा धत्तमनपस्फुरन्तीम् १०

॥७८॥ (वा० य० १०।१६, २१)

हिरण्यरूपा उपसो विरोक उभार्विन्द्रा उदिथः सूर्यश्च ।
आरोहतं वरुण मित्र गत्तं ततश्चक्षाथामदितिं दितिं च मित्रोऽसि वरुणोऽसि १६
मित्रावरुणयोस्त्वा प्रशास्त्रोः प्रशिषा युनज्मि २१ ३८०

॥७९॥ (वा० य० २९।६)

अन्तरा मित्रावरुणा चरन्ती मुखं यज्ञानामभि संविदुने ।
उपासा वां सुहिरण्ये सुशिल्पे ऋतस्य योनाविह सादयामि ६ ३८१

॥८०॥ (वा० य० ३३।७२)

काव्ययोराजानेषु क्रत्वा दक्षस्य दुरोणे । रिशादसा सधस्थ आ

७२

॥८१॥ (अथर्व० २।२८।२)^{क्ष}

(३८३) शम्भुः । त्रिष्टुप् ।

मित्र एनं वरुणो वा रिशादा जुरामृत्युं कृणुतां संविदानौ ।
तदुभिर्होता वयुनानि विद्वान् विश्वा देवानां जनिमा विवक्ति

२

॥८२॥ (अथर्व० ३।२५।१-६)

(३८४-३८९) भृगुः । अनुष्टुप् ।

उत्तुदस्त्वोत्तुदतु मा धृथाः शर्यने स्वे ।

इषुः कामस्य या भीमा तया विध्यामि त्वा हृदि

१

आधीपणां कामशल्यामिषुं संकल्पकुलमलाम् ।

तां सुसैनतां कृत्वा कामो विध्यतु त्वा हृदि

२ ३८५

या प्लीहानं शौषयति कामस्येषुः सुसैनता ।

प्राचीनपक्षा व्योषि तया विध्यामि त्वा हृदि

३

शुचा विद्धा व्योषिया शुष्कास्याभि सर्प मा ।

मृदुनिर्मन्युः केवली प्रियवादिन्यनुव्रता

४

आजामि त्वाजन्त्या परिं मातुरथो पितुः । यथा मम क्रतावसो मम चित्तमुपायसि ५

व्यस्यै मित्रावरुणौ हृदश्चित्तान्यस्यतम् । अथैनामक्रतुं कृत्वा ममैव कृणुतं वशे ६

॥८३॥ (अथर्व० ४।२९।१-७) [आयुर्वेदप्रकरणे सूक्तं (२६४) द्रष्टव्यम् ।]

॥८४॥ (अथर्व० १।२०।२)

(३९०-३९४) अथर्वा । अनुष्टुप् ।

यो अद्य सेन्यो वधोऽघायूनामुदीरते । युवं तं मित्रावरुणावसद्यावयतं परि

२ ३९०

॥८५॥ (अथर्व० ५।२४।५) चतुष्पदातिऽशकरी ।

मित्रावरुणौ वृष्ट्याधिपती तौ मावताम् ।

अस्मिन् ब्रह्मण्यस्मिन् कर्मण्यस्यां पुरोधायामस्यां प्रतिष्ठायामस्यां चित्त्यामस्यामाकू-

स्यामस्यामाशिष्यस्यां देवहृत्यां स्वाहा

५ ३९१

॥८६॥ (अथर्व० ६।३२।३) त्रिष्टुप् । +

अभयं मित्रावरुणाविहास्तु नोऽर्चिषात्रिणो नुदतं प्रतीचः ।

मा ज्ञातारं मा प्रतिष्ठां विदन्त मिथो विम्वाना उप यन्तु मृत्युम्

३

॥८७॥ (अथर्व० ६।८९।३) अनुष्टुप् ।

मह्यं त्वा मित्रावरुणौ मह्यं देवी सरस्वती ।

मह्यं त्वा मध्यं भूम्या उभावन्तौ समस्यताम्

३

॥८८॥ (अथर्व० ६।९७।२) जगती ।

स्वधास्तु मित्रावरुणा विपश्चिता प्रजावत् क्षत्रं मधुनेह पिन्वतम् ।

बाधेथां दूरं निर्ऋतिं पराचैः कृतं चिदेनः प्र मुमुक्तमसत्

२

॥८९॥ (अथर्व० ९।१०।२३)

(३९५) ब्रह्मा । त्रिष्टुप् ।

अपादेति प्रथमा पद्वतीनां कस्तद्वो मित्रावरुणा चिकेत ।

गर्भो भारं भरत्या चिदस्या ऋतं पिपत्यनृतं नि पाति

२३

३९५

॥९०॥ (अथर्व० १०।५।११)

(३९६) सिन्धुद्वीपः । पथ्यापङ्क्तिः ।

मित्रावरुणयोर्भाग स्थ । अपां शुक्रमापो देवीर्वर्चो असासु धत्त ।

प्रजापतेर्वो धाम्नास्मै लोकाय सादये

११

॥९१॥ (३९७-३९९) (सा० ९८६-९८७)*

^१ता ^२वां ^३सम्यग्द्रु^१हा^२णेषम^३श्याम^४ धाम^५ च । वयं वां मित्रा स्याम

२

^३पातं ^२नो ^३मित्रा ^४पायुभि^५रुत ^६त्रायेथां ^७सुत्रात्रा । साक्ष्याम ^८दस्युं ^९तनूभिः

३

॥९२॥ (सा० १६४७) x

^१त्वां ^२विष्णुर्बृहन् ^३क्षयो ^४मित्रो ^५गृणाति ^६वरुणः । त्वां ^७शुभो ^८मदत्यनु ^९मारुतम्

३

३९९



मित्र-मित्रावरुण-सहचारी-देवगणः ।

(१) मित्रावरुणौ नभस्यश्च ।

॥९३॥ (ऋ० २।३६।६)

गृत्समदे (आङ्गिरसः शौनहोत्रः पश्चाद्) भार्गवः शौनकः । जगती ।

जुषेथां यज्ञं बोधतं हवस्य मे सत्तो होतां निविदः पूर्व्या अनु ।
अच्छा राजाना नम एत्यावृतं प्रशास्त्रादा पिवतं सोम्यं मधु

६ ४००

(२) मित्रावरुणादित्याः ।

॥९४॥ (ऋ० ८।१०।१।५)

जमदग्निभार्गवः । बृहती ।

प्र मित्राय प्रार्यम्णे सचध्यमृतावसो ।
वरुध्यं वरुणे छन्द्यं वचः स्तोत्रं राजसु गायत

५

(३) उखामित्रौ ।

॥९५॥ (वा० य० ११।६४)

उत्थाय बृहती भवोदु तिष्ठ ध्रुवा त्वम् ।
मित्रैतां ते उखां परिददाम्यभित्या एषा मा भेदि

६४ ४०२



(४) सविता ।

॥९६॥ ऋ० १।२२।५-८)+

(४०३-४०६) मेधातिथिः काण्वः । गायत्री ।

| | | |
|------------------|---|-------|
| हिरण्यपाणिमुतये | सवितारमुप ह्वये । स चेत्ता देवता पदम् | ५ |
| अपां नपातमवसे | सवितारमुप स्तुहि । तस्य व्रतान्युश्मसि | ६ |
| विभक्तारं हवामहे | वसोश्चित्रस्य राधसः । सवितारं नृचक्षसम् | ७ ४०५ |
| सखाय आनिषीदत | सविता स्तोम्यो नु नः । दाता राधांसि शुम्भति | ८ |

॥९७॥ (ऋ० १।२४।३-५)

(४०७-४०९) आर्जोगतिः शुनःशेषः स कृत्रिमो वैश्वामित्रो देवरातः । (५ भगो वा) । गायत्री ।

| | | |
|--------------------------------------|---|---|
| अभि त्वा देव सवितु—रीशानं वार्याणाम् | । सदावन् भागमीमहे | ३ |
| यश्चिद्धि त इत्था भगः | शशमानः पुरा निदः । अद्वेषो हस्तयोर्द्वे | ४ |
| भगभक्तस्य ते वय—मुदशेम तवावसा | । मुर्धनै राय आरभे | ५ |

॥९८॥ (ऋ० १।३५।२-११)×

(४१०-४१९) हिरण्यस्तूप आङ्गिरसः । त्रिष्टुप्, ९ जगती ।

| | | |
|---|-----------------------------------|-------|
| आ कृष्णेन रजसा वर्तमानो | निवेशयन्नमृतं मर्त्यं च । | |
| हिरण्ययेन सविता रथेना—ऽऽ देवो याति भुवनानि पश्यन् | | २ ४१० |
| याति देवः प्रवता यात्युद्धता | याति शुभ्राभ्यां यजतो हरिभ्याम् । | |
| आ देवो याति सविता परावतो | ऽप विश्वा दुरिता बाधमानः | ३ |
| अभीवृतं कृशेनैर्विश्वरूपं | हिरण्यशम्यं यजतो बृहन्तम् । | |
| आस्थाद् रथं सविता चित्रभानुः | कृष्णा रजांसि तर्विषीं दधानः | ४ |
| वि जनाच्छयावाः शितिपादो अख्यन् | रथं हिरण्यप्रउगं वहन्तः । | |
| शश्वद् विशः सवितुदैव्यस्यो—पस्थे विश्वा भुवनानि तस्थुः | | ५ |
| तिस्रो द्यावः सवितुर्द्वा उपस्थाँ | एका यमस्य भुवने विराषाद् । | |
| आणि न रथ्यममृताधि तस्थु—रिह ब्रवीतु य उ तच्चिकेतत् | | ६ |
| वि सुपर्णो अन्तरिक्षाण्यख्यद् | गभीरवेपा असुरः सुनीथः । | |
| क्वेदुदानीं सूर्यः कथिकेत | कतमां द्यां रश्मिरस्या ततान | ७ |
| अष्टौ व्यख्यत् ककुभः पृथिव्या—स्त्री धन्व योजना सप्त सिन्धून् । | | |
| हिरण्याक्षः सविता देव आगाद् | दधद्रता दाशुषे वार्याणि | ८ ४१९ |

हिरण्यपाणिः सविता विचर्षणि—रुभे द्यावापृथिवी अन्तरीयते ।
 अपामीवां बाधते वेति सूर्य—मभि कृष्णेन रजसा द्यामृणोति ९
 हिरण्यहस्तो असुरः सुनीथः सुमृळीकः स्वर्वा यात्वर्वाङ् ।
 अपसेधन् रक्षसो यातुधाना—नस्थाद् देवः प्रतिदोषं ग्रणानः १०
 ये ते पन्थाः सवितः पूर्यासो ऽरेणवः सुकृता अन्तरिक्षे ।
 तेभिर्नो अद्य पृथिभिः सुगेभी रक्षा च नो अर्धि च ब्रूहि देव ११

॥९९॥ (क्र० २।३।१-११)

(४२०-४३०) गृत्समद (आङ्गिरसः शौनहोत्रः पश्चाद् भार्गवः शौनकः । त्रिष्टुप् ।

उदु ष्य देवः सविता सवार्यं शश्वत्तमं तदपा वह्निरस्थात् ।
 नूनं देवेभ्यो वि हि धाति रत्न—मथामर्जद् वीतिहोत्रं स्वस्तौ १ ४२०
 विश्वस्य हि श्रुष्ट्ये देव ऊर्ध्वः प्र ब्राह्वा पृथुपाणिः सिसर्ति ।
 आपश्चिदस्य व्रत आ निर्मृग्रा अयं चिद् वातो रमते परिज्मन् २
 आशुभिश्चिद्यान् वि मुचाति नून—मरीरमदत्तमानं चिदेतोः ।
 अहर्षूणां चिन्न्ययाँ अविष्या—मनु व्रतं सवितुर्मोक्यागात् ३
 पुनः समव्यद् विततं वयन्ती मध्या कर्तोन्यधाच्छक्म धीरः ।
 उत् सहायास्थाद् व्यृत्तूरर्धर—रमतिः सविता देव आगात् ४
 नानौकांसि दुषो विश्वमायु—र्वि तिष्ठते प्रभवः शोको अग्रेः ।
 ज्येष्ठं माता सूनवे भागमाधा—दन्वस्य केतमिपितं सवित्रा ५
 समारवति विष्ठितो जिगीषु—र्विश्वेषां कामश्चरताममाभूत् ।
 शश्वाँ अपो विकृतं हित्वयागा—दनु व्रतं सवितुर्देव्यस्य ६ ४२५
 त्वया हितमप्यमप्सु भागं धन्वान्वा मृगयसो वि तस्थुः ।
 वनानि विभ्यो नकिरस्य तानि व्रता देवस्य सवितुर्मिनन्ति ७
 याद्राध्यं वरुणो योनिमप्य—मनिशितं निमिपि जर्भुराणः ।
 विश्वो मार्ताण्डो व्रजमा पशुर्गात् स्थशो जन्मानि सविता व्याकः ८
 न यस्येन्द्रो वरुणो न मित्रो व्रतमर्यमा न मिनन्ति रुद्रः ।
 नारातयस्तमिदं स्वस्ति हुवे देवं सवितारं नमोभिः ९
 भगं धियै वाजयन्तः पुरंधि नराशंसो ग्रास्पतिर्नो अव्याः ।
 आये वामस्य संगथे रयीणां प्रिया देवस्य सवितुः स्याम १० ४२९

अस्मभ्यं तद् दिवो अद्भ्यः पृथिव्या—स्त्वया दत्तं काम्यं राध आ गात् ।
शं यत् स्तोतृभ्य आपये भवा—त्युरुशंसाय सवितर्जरे

११ ४३०

॥१००॥ (ऋ० ३।६२।१०-१२) ×

(४३१-४३३) गाथिनो विश्वामित्रः । गायत्री ।

तत् सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि । धियो यो नः प्रचोदयात्
देवस्य सवितुर्वयं वाजयन्तः पुरंध्या । भर्गस्य रातिमीमहे
देवं नरः सवितारं विप्रा यज्ञैः सुवृक्तिभिः । नमस्यन्ति धियेपिताः

१०

११

१२

॥१०१॥ (ऋ० ४।५३।१-७)

(४३४-४४६) वामदेवो गौतमः । जगती ।

तद् देवस्य सवितुर्वार्यं महद् वृणीमहे असुरस्य प्रचेतसः ।
छर्दिरेन दाशुषे यच्छति त्मना तन्नो महा उदयान् देवो अक्तुभिः
दिवो धर्ता भुवनस्य प्रजापतिः पिशङ्गं द्रापिं प्रति मुञ्चते कविः ।
विचक्षणः प्रथयन्नापृणन्नुर्व—जीजनत् सविता सुम्रमुक्थ्यम्
आप्रा रजोसि दिव्यानि पार्थिवा श्लोकं देवः कृणुते स्वाय धर्मेणे ।
प्र बाहू अस्त्राक् सविता सवीमनि निवेशयन् प्रसुवन्नक्तुभिर्जगत्
अदाभ्यो भुवनानि प्रचाकशद् व्रतानि देवः सविताभि रक्षते ।
प्रास्ताग् बाहू भुवनस्य प्रजाभ्यो धृतव्रतो महो अजमस्य राजति
त्रिरन्तरिक्षं सविता महित्वना त्री रजोसि परिभूस्त्रीणि रोचना ।
तिस्रो दिवः पृथिवीस्तिस्र इन्वति त्रिभिर्व्रतैरभि नो रक्षति त्मना
बृहत्सुम्रः प्रसवीता निवेशनो जगतः स्थातुरुभयस्य यो वशी ।
स नो देवः सविता शर्म यच्छ—त्वस्मे क्षयाय त्रिवरूथमंहसः
आगन् देव ऋतुभिर्वधतु क्षयं दधातु नः सविता सुप्रजामिषम् ।
स नः क्षपाभिरहंभिश्च जिन्वतु प्रजावन्तं रथिमस्मे समिन्वतु

१

२ ४३५

३

४

५

६

७ ४४०

॥१०२॥ (ऋ० ४।५४।१-६) जगती, ६ त्रिष्टुप् ।

अभूद् देवः सविता वन्द्यो नु न इदानीमहं उपवाच्यो नृभिः ।
वि यो रत्ना भजति मानवेभ्यः श्रेष्ठं नो अत्र द्रविणं यथा दधत्
देवेभ्यो हि प्रथमं यज्ञियेभ्यो ऽमृतत्वं सुवासिं भागमुत्तमम् ।
आदिद् दामानं सवितर्व्यूणुषे ऽनूचीना जीविता मानुषेभ्यः

१

२ ४४१

अर्चिन्ती यच्चक्रमा दैव्ये जने दीनैर्दक्षैः प्रभूती पूरुषत्वता ।
 देवेषु च सवितुर्मनुषेषु च त्वं नो अत्र सुवतादनागसः ३
 न प्रमिये सवितुर्दैव्यस्य तद् यथा विश्वं भुवनं धारयिष्यति ।
 यत् पृथिव्या वरिमन्त्रा स्वङ्गुरिर्वर्मन् दिवः सुवति सत्यमस्य तत् ४
 इन्द्रज्येष्ठान् बृहद्भ्यः पर्वतभ्यः क्षया एभ्यः सुवसि पुस्त्यावतः ।
 यथायथा पतर्यन्तो वियेमिर एवैव तस्थुः सवितः सवायं ते ५ ४४५
 ये ते त्रिरहन्त्सवितः सवासो दिवेर्दिवे सौभगमासुवन्ति ।
 इन्द्रो द्यावापृथिवी सिन्धुरङ्घ्रि—रादित्यैर्नो अदितिः शर्म यंसत् ६

॥१०३॥ (ऋ० ५।८।१।१-५) ×

(४४७-४६०) इयावाश्च आत्रेयः । जगती ।

युञ्जते मन उत युञ्जते धियो विप्रा विप्रस्य बृहतो विपश्चितः ।
 वि होत्रा दधे वयुनविदेक इन्मही देवस्य सवितुः परिण्डुतिः १
 विश्वा रूपाणि प्रति मुञ्चते कविः प्रासावीद् भद्रं द्विपदे चतुष्पदे ।
 वि नाकमख्यत् सविता वरेण्यो ऽनु प्रयाणमुषसो वि राजति २
 यस्य प्रयाणमन्वन्य इद् ययुर्देवा देवस्य महिमानमोजसा ।
 यः पार्थिवानि विममे स एतेशो रजांसि देवः सविता महित्वना ३
 उत यांसि सवितस्त्रीणि रोचनो—त सूर्यस्य राशिभिः समुच्यसि ।
 उत रात्रींश्चभयतः परीयस उत मित्रो भवसि देव धर्मेभिः ४ ४५०
 उतेशिषे प्रसवस्य त्वमेक इदुत पूषा भवसि देव यामभिः ।
 उतदं विश्वं भुवनं वि राजसि इयावाश्चस्ते सवितुः स्तोममानशे ५

॥१०४॥ (ऋ० ५।८।१।१-९) + । गायत्री, १ अनुष्टुप् ।

तत् सवितुर्वृणीमहे वयं देवस्य भोजनम् । श्रेष्ठं सर्वधातमं तुरं भगस्य धीमहि १
 अस्य हि स्वयंशस्तरं सवितुः कच्चन प्रियम् । न मिनन्ति स्वराज्यम् २
 स हि रत्नानि दाशुषे सुवति सविता भगः । तं भागं चित्रमीमहे ३
 अद्या नो देव सवितः प्रजावत् सावीः सौभगम् । परा दुःस्वप्न्यं सुव ४ ४५५
 विश्वानि देव सवित—दुरितानि परा सुव । यद् भद्रं तन्न आ सुव ५
 अनागसो अदितये देवस्य सवितुः सवे । विश्वा वामानि धीमहि ६ ४५७

× ऋ० ५।८।१।१-३ = वा० य० ५, १४; ११।४, ६; ३७, २; १२, ३ । अथर्व० ७, ७३, ६ (उत्तरार्धः) ।

+ ऋ० ५।८।१।४-५ = वा० य० ३०, ३; सा० १४१ ।

| |
|---|
| आ विश्वेदेवं सत्पतिं सूक्तैरद्या वृणीमहे । सत्यसवं सवितारम् ७ |
| य इमे उभे अहनी पुर एत्यप्रयुच्छन् । स्वाधीदेवः सविता ८ |
| य इमा विश्वा जाता—न्याश्रावयति श्लोकैः । प्र च सुवार्ति सविता ९ ४६० |

॥१०५॥ (ऋ० ६।७।१-६)

(४६१-४६६) बार्हस्पत्यो भरद्वाजः । जगती, ४-६ त्रिष्टुप् ।

| |
|--|
| उदु ष्य देवः सविता हिरण्यया बाहू अयंस्तु सर्वनाय सुक्रतुः । |
| घृतेन पाणी अभि प्रुष्णुते मखो युवा सुदक्षो रजसो विधर्मणि १ |
| देवस्य वयं सवितुः सर्वांमनि श्रेष्ठे स्याम वसुनश्च दावने । |
| यो विश्वस्य द्विपदो यश्चतुष्पदो निवेशने प्रसवे चासि भूमनः २ |
| अदब्धेभिः सवितः पायुभिर्द्वं शिवेभिरद्य परि पाहि नो गर्यम् । |
| हिरण्यजिह्वः सुविताय नव्यसे रक्षा मार्किनो अघशंस ईशत ३ |
| उदु ष्य देवः सविता दमूना हिरण्यपाणिः प्रतिदोषमस्थात् । |
| अयोहनुर्यजतो मन्द्रजिह्व आ दाशुषे सुवति भूरि वामम् ४ |
| उदू अया उपवक्तेव बाहू हिरण्यया सविता सुप्रतीका । |
| दिवो रोहांस्यरुहत् पृथिव्या अरीरमत पतयत् कच्चिदभ्वम् ५ ४६५ |
| वाममद्य सवितवाममु श्वो दिवेदिवे वाममस्मभ्यं सावीः । |
| वामस्य हि क्षयस्य देव भूरैरया धिया वामभाजः स्याम ६ |

॥१०६॥ (ऋ० ७।३।१-६)

(४६७-४७३) मैत्रावरुणिर्यसिष्ठः । ६ उत्तरार्धस्य भगो वा । त्रिष्टुप् ।

| |
|--|
| उदु ष्य देवः सविता ययाम हिरण्ययीममति यामाशिश्रेत् । |
| नूनं भगो हव्यो मानुषेभिर्वि यो रत्ना पुरुवसुर्दधाति १ |
| उदु तिष्ठ सवितः शुध्यस्य हिरण्यपाणे प्रभृतावृतस्य । |
| व्युर्ध्वी पृथ्वीममति सृजान आ नृभ्यो मर्तभोजनं सुवानः २ |
| अपि द्युतः सविता देवो अस्तु यमा चिद् विश्वे वसवो गृणन्ति । |
| स नः स्तोमान् नमस्यश्वनो धाद् विश्वेभिः पातु पायुभिर्नि सूरीन् ३ |
| अभि यं देव्यदितिर्गृणति सवं देवस्य सवितुर्जुषाणा । |
| अभि सम्राजो वरुणो गृणन्त्यभि मित्रासो अर्यमा सजोषाः ४ |
| अभि ये मिथो वनुषः सपन्ते राति दिवो रातिषाचः पृथिव्याः । |
| अहिर्बुध्न्य उत्त नः शृणोतु वरुच्येकधेनुभिर्नि पातु ५ ४७१ |

अनु तन्नो जास्पतिर्मसीष्ट रत्नं देवस्य सवितुरियानः ।
भगमुग्रोऽवसे जोहवीति भगमनुग्रो अध याति रत्नम्

६

॥१०७॥ (ऋ० ७।४५।१-४)

आ देवो यातु सविता सुरत्नो ऽन्तरिक्षप्रा वहमानो अश्वैः ।
हस्ते दधानो नयीं पुरूणि निवेश्यश्च प्रसुवञ्च भूमं
उदस्य बाहू शिथिरा बृहन्ता हिरण्यया दिवो अन्ता अनष्टाम् ।
नूनं सो अस्य महिमा पानिष्ट सूरश्चिदस्मा अनु दादपस्याम्
स घा नो देवः सविता सहावा ऽऽ साविषद् वसुपतिर्वस्वनि ।
विश्रयमाणो अमर्तिमुरुचीं मर्तभोजनमध रासते नः
इमा गिरः सवितारं सुजिह्वं पूर्णगमस्तिमीळते सुपाणिम् ।
चित्रं वयो बृहदस्मे दधातु यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः

१

२

३

४७५

४

॥१०८॥ (ऋ० १०।१३९।१-३)

(४७७-४७९) देवगन्धर्वो विश्वावसुः । त्रिष्टुप् ।

सूर्यैरश्मिर्हरिकेशः पुरस्तात् सविता ज्योतिरुदयां अजस्रम् ।
तस्य पूषा प्रसवे याति विद्रा—न्तसंपश्यन् विश्वा भुवनानि गोपाः
नृचक्षा एष दिवो मध्यं आस्त आपप्रिवान् रोदसी अन्तरिक्षम् ।
स विश्वाचीरभि चष्टे घृताचीं—रन्तरा पूर्वमपरं च केतुम्
रायो बुध्नः संगमनो वसूनां विश्वा रूपाभि चष्टे शचीभिः ।
देव इव सविता मत्यधर्मेन्द्रो न तस्थौ समरे धनानाम्

१

२

३

॥१०९॥ (ऋ० १०।१४९।१-५)

(४८०-४८४) अर्चन् ह्यैरण्यस्तूपः । त्रिष्टुप् ।

सविता यन्त्रैः पृथिवीमरम्णा—दस्कम्भने सविता द्यामदंहत् ।
अश्वमिवाधुक्षदुर्निमन्तरिक्ष—मृतूर्ते बद्धं सविता समुद्रम्
यत्रा समुद्रः स्कम्भितो व्यौन—दपां नपात् सविता तस्य वेद ।
अतो भूरत आ उत्थितं रजो ऽतो द्यावापृथिवी अप्रथेताम्
पश्चेदमन्यदभवद् यजत्र—ममर्त्यस्य भुवनस्य भूना ।
सुपर्णो अङ्ग सवितुर्गरुत्मान् पूर्वी जातः स उ अस्यानु धर्म

१

४८०

२

३

४८१

गाव इव ग्रामं यूयुधिरिवाश्वान् वाश्रेवं वत्सं सुमना दुहाना ।
 षतिरिव जायामभि नो न्येतु धर्ता दिवः सविता विश्ववारः
 हिरण्यस्तूपः सवितुर्यथा त्वा ऽऽङ्गिरसो जुह्वे वाजं अस्मिन् ।
 एवा त्वार्चन्नवसे चन्दमानः सोमस्येवांशुं प्रति जागराहम्

४

५

॥११०॥ (४८५-५१६) (वा० य० १।१०, ३१)+

देवस्य त्वा सवितुः प्रसवेऽश्विनोर्बाहुभ्यां पूष्णो हस्ताभ्याम्
 सवितुस्त्वा प्रसव उत्पुनाम्यच्छिद्रेण पवित्रेण सूर्यस्य रश्मिभिः ।
 सवितुर्वः प्रसव उत्पुनाम्यच्छिद्रेण पवित्रेण सूर्यस्य रश्मिभिः

१० ४८५

३१

॥१११॥ (वा० य० ४।४, २५)*

चित्पतिर्मा पुनातु वाक्पतिर्मा पुनातु देवो मा सविता पुनात्वच्छिद्रेण पवित्रेण
 सूर्यस्य रश्मिभिः ।

तस्य ते पवित्रपते पवित्रपूतस्य यत्कामः पुने तच्छक्रेयम्
 अभि त्वं देवः सवितारं प्रोण्योः कविक्रतुमर्चामि सत्यसंवत्सरतन्धामभि प्रियं मतिं कविम् ।
 ऊर्ध्वा यस्यामतिर्भा अर्दिद्युतत्सवीमनि हिरण्यपाणिरमिमीत सुक्रतुः कृपा स्वः २५

४

॥११२॥ (वा० य० ५।३९)

देवं सवितरेष ते सोमस्तं रक्षस्व मा त्वा दभन् ।
 एतत् त्वं देव सोम देवो देवाँर उपांगा इदमहं मनुष्यान्तसह रायस्पोषेण स्वाहा ३९

॥११३॥ (वा० य० ८।७)

उपयामगृहीतोऽसि सावित्रोऽसि चनोधाश्चनोधा असि चनो मयि धेहि ।
 जिन्वं यज्ञं जिन्वं यज्ञपतिं भगाय देवाय त्वा सवित्रे

७

॥११४॥ (वा० य० ९।१, ११।७; ३०, १)*

देवं सवितुः प्रसुवं यज्ञं प्रसुवं यज्ञपतिं भगाय ।

दिव्यो गन्धर्वः केतपूः केतं नः पुनातु वाक्स्पतिर्वाजं नः स्वदतु स्वाहा

१ ४९१

+ वा० य० १।२१, २४; २।११, ५।२२, २६; ६।१, ९, ३०; ९।३०, ३८; १०।६; ११।९, २८; १८।३७, २०।३; २२।१,
 ३७।१; ३८।१। अथर्व० १९।५।१२

* अथर्व० ७।१४।१-२ । सा० ४६४ ।

X वा० य० ९, ५; १८, ३०=३० [अदितिः०] १६ ।

॥११५॥ (वा० य० १०,५;२८)×

सवित्रे स्वाहा ॥५॥

सवितासि सत्यप्रसवः

२८

॥११६॥ (वा० य० ११,१-३,८,११,६३)

युञ्जानः प्रथमं मनस्तत्त्वाय सविता धियः ।

अग्नेज्योतिर्निचाय्यं पृथिव्या अध्याभरत्

१

युक्तेन मनसा वयं देवस्य सवितुः सवे । स्वर्ग्याय शक्त्या

२

४९५

युक्त्वाय सविता देवान्त्स्वर्यतो धिया दिवम् ।

बृहज्ज्योतिः करिष्यतः सविता प्रसुवाति तान्

३

इमं नो देव सवितर्यङ्गं प्रणय देवाव्यः सखिविदः सत्राजितं धनजितं स्वर्जितम् ।

ऋचा स्तोमः समर्धय गायत्रेण रथन्तरं बृहदायत्रवर्तनि स्वाहा

८

हस्त आधाय सविता बिभ्रदग्निः हिरण्ययीम् ।

अग्नेज्योतिर्निचाय्यं पृथिव्या अध्याभरत्

११

देवस्त्वा सवितोद्वपतु सुपाणिः स्वङ्गुरिः सुबाहुरुत शक्त्या ।

अव्यथमाना पृथिव्यामाशा दिश आपृण

६३

॥११७॥ (वा० य० १७,७४)

ताः सवितुर्वरेण्यस्य चित्रामाहं वृणे सुमतिं विश्वजन्त्याम् ।

यामस्य कण्ठो अदुहत् प्रपीनाः सहस्रधारां पर्यसा महीं गाम्

७४

५००

॥११८॥ (वा० य० १९,४३)

उभाभ्यां देव सवितः पवित्रेण सवेन च । मां पुनीहि विश्वतः

४३

॥११९॥ (वा० य० २०,७०)*

य इन्द्र इन्द्रियं दधुः सविता वरुणो भगः । स सुत्रामाह विष्पतिर्यजमानाय सश्वत७०

॥१२०॥ (वा० य० २१,२१)

शमिता नो वनस्पतिः सविता प्रसुवन् भगम् ।

ककुप् छन्द इहेन्द्रियं वशा वेहद्वयो दधुः

२१

॥१२१॥ (वा० य० २२,११-१४)

देवस्य चेततो महीं प्र सवितुर्हवामहे । सुमतिः सत्यराधसम्

११

सुष्टुतिः सुमतीवृधो रतिः सवितुरीमहे । प्र देवाय मतीविदे

१२

५०५

रातिः सत्पतिं महे सवितारमुप ह्वये । आसवं देववीतये १३
देवस्य सवितुर्मतिमासवं विश्वदैव्यम् । धिया भगं मनामहे १४

॥१२२॥ (वा० य० ३०।४)

विभक्तारं हवामहे वसोश्चित्रस्य राधसः । सवितारं नृचक्षसम् ४

॥१२३॥ (वा० य० ३५।२-३, ५)

सविता ते शरीरेभ्यः पृथिव्याँल्लोकर्मिच्छतु । तस्मै युज्यन्तामुस्त्रियाः २
सविता पुनातु ३ ५१०

सविता ते शरीराणि मातुरुपस्थ आ वपतु । तस्मै पृथिवि शं भव ५

॥१२४॥ (वा० य० ३७।११-१२, १४-१५)

देवस्त्वा सविता मध्वानक्तु । ११
सुषदा पश्चाद् देवस्य सवितुराधिपत्ये चक्षुर्मे दाः १२
गर्भो देवानां पिता मतीनां पतिः प्रजानाम् ।
सं देवो देवेन सवित्रा गत सः सूर्येण रोचते १४
समग्निरग्निना गत सं दैवेन सवित्रा सः सूर्येणारोचिष्ट ।
स्वाहा समग्निस्तपसा गत सं दैव्येन सवित्रा सः सूर्येणारुरुचत १५ ५१५

॥१२५॥ (३८।८)

सवित्रे त्वं ऋभुमते विभुमते वाजवते स्वाहा ८

॥१२६॥ (अथर्व० १।१८।३)*

(५१७) द्रविणोदाः । विराडास्तारपक्षिस्त्रिष्टुप् ।

यत् तं आत्मनि तन्वाँ घोरमस्ति यद् वा केशेषु प्रतिचक्षणे वा ।
सर्वं तद् वाचाप हन्मो वयं देवस्त्वा सविता स्रदयतु ३

॥१२७॥ (अथर्व० ५।२४।१)

(५१८-५२४) अथर्वा । चतुष्पदाऽतिशकरी ।

सविता प्रसवानामधिपतिः स मावतु ।
अस्मिन् ब्रह्मण्यस्मिन् कर्मण्यस्यां पुरोधायां मस्यां प्रतिष्ठायां मस्यां चित्यां मस्यामाकू-
त्यामस्यामाशिष्यस्यां देवहृत्यां स्वाहा १ ५१८

॥१२८॥ (अथर्व० ६।१।१-३)

उष्णिक्, १ त्रिपदा पिपीलिकमध्या सास्त्री जगती, २-३ पिपीलिकमध्या पुर उष्णिक् ।

दोषो गाय बृहद् गाय द्युमद् धेहि । आथर्वेण स्तुहि देवं सवितारम् १
 तम् छुहि यो अन्तः सिन्धौ सूनुः । सत्यस्य युवानमद्रोघवाचं सुशेवम् २ ५२०
 स घा नो देवः सविता साविषदुमृतांनि भूरि । उभे सुष्टुती सुगातवे ३

॥१२९॥ (अथर्व० ७।१४।३-४)*

३ त्रिष्टुप्, ४ जगती ।

सावीहि देवं प्रथमार्यं पित्रे वर्माणमस्मै वरिमाणमस्मै ।
 अथास्मभ्यं सवितर्वार्याणि दिवोर्दिव आ सुवा भूरि पश्वः ३
 दमूना देवः सविता वरेण्यो दधद् रत्नं दक्षं पितृभ्य आयूषि ।
 पिबात् सोमं ममर्ददेनमिष्टे परिज्मा चित् क्रमते अस्य धर्माणि ४

॥१३०॥ (अथर्व० १९।१६।१) अनुष्टुप् ।

असपत्नं पुरस्तात् पश्चान्नो अभयं कृतम् ।
 सविता मा दक्षिणत उत्तरान्मा शचीपतिः १

॥१३१॥ (अथर्व० ५।२५।१२)

(५२५-५२६) ब्रह्मा । अनुष्टुप् ।

सवितः श्रेष्ठेन रूपेणास्या नार्यी गवीन्योः ।
 पुमांसं पुत्रमा धेहि दशमे मासि सूर्तवे १२ ५२५

॥१३२॥ (अथर्व० ५।२६।२) द्विपदा प्राजापत्या बृहती ।

युनक्तु देवः सविता प्रजानन्नस्मिन् यज्ञे महिषः स्वाहा २

॥१३३॥ (अथर्व० ७।१६।१)

(५२७) ऋगुः । त्रिष्टुप् ।

बृहस्पते सवितर्वर्धयैनं ज्योतयैनं महते सौभगाय ।
 संश्रितं चित् संतरं सं शिशाधि विश्व एनमनु मदन्तु देवाः १

॥१३४॥ (अथर्व० १०।५।१४)

(५२८) सिन्धुद्वीपः । पथ्यापहृक्तिः ।

देवस्य सवितुर्भाग स्थ । अपां शुक्रमापो देवीर्वचो असासु धत्त ।
 प्रजापतेर्वो धाम्नास्मै लोकाय सादये १४ ५२८

* अथर्व० ७।१४।१-२ । = दे० [अदितिः] ४८८।

दे० [अदितिः] ५

सवितृ-सहस्रारी देवगणः ।

(१) सवित्राद्याः ।

॥१३५॥ (५२९-५३०) (वा० य० १०।३०)

सवित्रा प्रसवित्रा सरस्वत्या वाचा त्वष्टा रूपैः पूष्णा
पशुभिरिन्द्रैणास्मे बृहस्पतिना ब्रह्मणा वरुणेनौजसाग्निना
तेजसा सोमैः राज्ञा विष्णुना दशम्या देवतया प्रसृतः प्रसर्पामि

३०

(२) सवित्रादयः ।

॥१३६॥ (वा० य० ३९।६)

सविता प्रथमेऽहन्निर्द्वितीयं वायुस्तृतीयं आदित्यश्चतुर्थं
चन्द्रमाः पञ्चम ऋतुः षष्ठे मरुतः सप्तमे बृहस्पतिरष्टमे ।
मित्रो नवमे वरुणो दशम इन्द्र एकादशे विश्वे देवा द्वादशे

६ ५३०

(३) इन्द्रः, भगः, सविता ।

॥१३७॥ (अथर्व० १।२६।२)

(५३१) ब्रह्मा । त्रिपदा एकावसाना सास्त्री त्रिष्टुप् ।

सखासावस्मभ्यमस्तु रातिः सखेन्द्रो भगः सविता चित्रांघाः

२

(४) सविता, आदित्याः, रुद्राः, वसवः ।

॥१३८॥ (अथर्व० ६।६८।१)

(५३२) अथर्वा । पुरो विराडतिशाकरगर्भा चतुष्पदा जगती ।

आयमगन्तसविता क्षुरेणोष्णेन वाय उदुकेनेहि ।

आदित्या रुद्रा वसव उन्दन्तु सचेतसः सोमस्य राज्ञो वपत प्रचेतसः

१

(५) बृहस्पतिः सविता मित्रोऽर्यमा भगोऽश्विनौ ।

॥१३९॥ (अथर्व० ६।१०३।१)

(५३३) उच्छोचनः । अनुष्टुप् ।

संदानं वो बृहस्पतिः संदानं सविता कर्त ।

संदानं मित्रो अर्यमा संदानं भगो अश्विनौ

१ ५३३

(५) सूर्यः ।

॥१४०॥ (ऋ० १।५०।१-१३)*

(५३४-४६) प्रस्कण्वः काण्वः । गायत्री, १०-१३ अनुष्टुप् ।

| | | |
|---|---|-----|
| उदु त्वं जातवेदसं देवं वहन्ति केतवः । दृशे विश्वाय सूर्यम् | १ | |
| अपत्येतायवो यथा नक्षत्रा यन्त्यक्तुभिः । सूराय विश्वचक्षसे | २ | ५३५ |
| अदृश्रमस्य केतवो विरश्मयो जनां अनु । आर्जन्तो अग्नयो यथा | ३ | |
| तरणिर्विश्वदर्शतो ज्योतिष्कृदसि सूर्य । विश्वमा भासि रोचनम् | ४ | |
| प्रत्यरु देवानां विशः प्रत्यङ्ङुदैषि मानुषान् । प्रत्यङ् विश्वं स्वर्दृशे | ५ | |
| येना पावक चक्षसा भूरण्यन्तं जनां अनु । त्वं वरुण पश्यसि | ६ | |
| विद्यामेषि रजस्पृध्व—हा मिमानो अक्तुभिः । पश्यञ्जन्मानि सूर्य | ७ | ५४० |
| सप्त त्वा हरितो रथे वहन्ति देव सूर्य । शोचिष्केशं विचक्षण | ८ | |
| अयुक्त सप्त शुन्ध्युवः सूरौ रथस्य नप्त्यः । तामिर्याति स्वयुक्तिभिः | ९ | |
| उद्वयं तमसस्पारि ज्योतिष्पश्यन्त उत्तरम् । देवं देवत्रा सूर्य—मर्गन्म ज्योतिरुत्तमम् १० | | |
| उद्यन्नद्य मित्रमह आरोहन्नुत्तरां दिवंम् । हद्रोगं मम सूर्य हरिमाणं च नाशय ११ | | |
| शुक्लेषु मे हरिमाणं रोपणाकासु दध्मसि । अथो हरिद्रवेषु मे हरिमाणं निदध्मसि १२ | | ५४५ |
| उदगादुषमादित्यो विश्वेन सहसा सह । द्विषन्तं मह्यं रन्धयन् मो अहं द्विषते रधम् १३ | | |

॥१४१॥ (ऋ० १।१५।१-६)+

(५४७-५२) कुत्स आङ्गिरसः । त्रिष्टुप् ।

| | | |
|---|---|-----|
| चित्रं देवानामुदगादनीकं चक्षुर्मित्रस्य वरुणस्याग्नेः । | | |
| आग्रा द्यावापृथिवी अन्तरिक्षं सूर्य आत्मा जगतस्तस्थुषश्च | १ | |
| सूर्यो देवीमुषसं रोचमानां मर्यो न योषामभ्येति पश्चात् । | | |
| यत्रा नरो देवयन्तो युगानि वितन्वते प्रति भद्राय भद्रम् | २ | |
| भद्रा अश्वा हरितः सूर्यस्य चित्रा एतग्वा अनुमाद्यासः । | | |
| नमस्यन्तो दिव आ पृष्ठमस्थुः परि द्यावापृथिवी यान्ति सद्यः | ३ | ५४९ |

* ऋ० १।५०।१-१०, १२-१३ = वा० य० ७, ४१; ८, ४०-४१; १०, २१; २७, १०; ३३, ३१-३२, ३६; ३५, १४; ३८, २४
सा० ३१, ६३३-६४० । अथर्व० १, २२, ४; १३, २, १६-२४; १७, १, २४; २०, ४७, १३-२१ । ऋ० १।५०।११-१३ =
दे० [आयुर्वेद०] ५४५-४७ ।

+ ऋ० १।११।१-२, ४-६ = वा० य० ७, ४२; १३, ४६; ३३, ३७-३८, ४१ । अथर्व० १३, २, ३५; २०, १०७, १४-१५;
१२३, १-२ । सा० ६२९ ।

तत् सूर्यस्य देवत्वं तन्महत्त्वं मध्या कर्तोर्विततं सं जभार ।
 यदेदयुक्त हरितः सधस्था—दाद् रात्री वासस्तनुते सिमस्मै
 तन्मित्रस्य वरुणस्याभिचक्षे सूर्यो रूपं कृणते द्यौरुपस्थे ।
 अनन्तमन्यद् रुशदस्य पाजः कृष्णमन्यद्वरितः सं भरन्ति
 अद्या देवा उर्दिता सूर्यस्य निरंहसः पिपृता निरवद्यात् ।
 तन्नो मित्रो वरुणो मामहन्ता—मर्दितिः सिन्धुः पृथिवी उत द्यौः

४ ५५०

५

६

॥१४२॥ (ऋ० १।१६४।४६-४७)×

(५५३-५४) दीर्घतमा औचध्यः । त्रिष्टुप् ।

इन्द्रं मित्रं वरुणमग्निमाहु—रथो दिव्यः स सुपर्णो गरुत्मान् ।
 एकं सद् विप्रा बहुधा वदन्त्यग्निं यमं मातरिश्वानमाहुः
 कृष्णं नियानं हरयः सुपर्णा अपो वसाना दिवमुत्पतन्ति ।
 त आवष्टन्त्सदनादृतस्या—दिद् घृतेन पृथिवी व्युद्यते

४६

४७

॥१४३॥ (ऋ० ४।४०।५)+

(५५५) वामदेवो गौतमः । जगती ।

हंसः शुचिषद् वसुन्तरिक्षस—द्वाता वेदिषदतिथिर्दुरोणसत् ।
 नृषद् वरसदृतसद् व्योमस—दुञ्जा गोजा ऋतजा अद्रिजा ऋतम्

५ ५५५

॥१४४॥ (ऋ० ५।४०।५)

(५५६) अग्निर्भौमः । अनुष्टुप् ।

यत् त्वा सूर्य स्वर्भानु—स्तमसाविध्यदासुरः । अक्षेत्रविद् यथा मुग्धो भुवनान्यदीधयुः

॥१४५॥ (ऋ० ७।६०।१)

(५५७-५६७) मैत्रावरुणिर्वासिष्ठः । त्रिष्टुप् ।

यदुच्च सूर्य ब्रवोऽनागा उद्यन् मित्राय वरुणाय सत्यम् ।
 वयं देवत्रादिते स्याम तव प्रियासो अर्यमन् गृणन्तः

१

॥१४६॥ (ऋ० ७।६२।१-३)

उत् सूर्यो बृहदुर्चीष्यश्रेत् पुरु विश्वा जनिम मानुषाणाम् ।
 समो दिवा ददृशे रोचमानः कृत्वा कृतः सुकृतः कर्तृभिर्भूत्
 स सूर्य प्रति पुरो न उद् गा एभिः स्तोभेभिरेतशेभिरेवैः ।
 प्र नो मित्राय वरुणाय वोचो—ऽनागसो अर्यम्णे अग्रये च

२ ५५९

वि नः सहस्रं शुरुधो रद—न्त्वृतावानो वरुणो मित्रो अग्निः ।

यच्छन्तु चन्द्रा उपमं नो अर्क—मा नः कामं पूपुरन्तु स्तवानाः

३ ५६०

॥१४७॥ (ऋ० ७।६३।१-४)

उद्वेति सुभगो विश्वचक्षाः साधारणः सूर्यो मानुषाणाम् ।

चक्षुर्मित्रस्य वरुणस्य देव—श्चमेव यः समर्विव्यक् तमांसि

१

उद्वेति प्रसवीता जनानां महान् केतुरर्णवः सूर्यस्य ।

समानं चक्रं पर्याविष्टसन् यदेतशो वहति धूर्षु युक्तः

२

विभ्राजमान उषसामुपस्थाद् रेभैरुदेत्यनुमद्यमानः ।

एष मे देवः सविता चच्छन्द यः समानं न प्रमिनाति धामं

३

दिवो रुक्म उरुचक्षा उद्वेति दूरेअर्थस्तरणिभ्राजमानः ।

नूनं जनाः सूर्येण प्रसूता अयन्नर्थानि कृणवन्नपांसि

४

॥१४८॥ (ऋ० ७।६६।१४-१६)+

प्रगाथः=(समा बृहती+विषमा सतोबृहती) १६ पुर उष्णिक् ।

उदु त्यद् दर्शतं वपु—र्दिव एति प्रतिह्वरे ।

यदीमाशुर्वहति देव एतशो विश्वस्मै चक्षसे अरम्

१४ ५६५

शीर्ष्णःशीर्ष्णो जगतस्तस्थुषस्पतिं समया विश्वमा रजः ।

सप्त स्वसारःसुविताय सूर्यं वहन्ति हरितो रथे

१५

तच्चक्षुर्देवहितं शुक्रमुच्चरत् । पश्येम शरदः शतं जीवेम शरदः शतम्

१६

॥१४९॥ (ऋ० ८।१०१।११-१२)×

(५६८-६९) जमदग्निर्भागवः । प्रगाथः=(विषमा बृहती+समा सतोबृहती)

वणमहाँ असि सूर्यं बळादित्य महाँ असि ।

महस्ते सतो मेहिमा पनस्यते ऽद्वा देव महाँ असि

११

बट् सूर्यं श्रवसा महाँ असि सत्रा देव महाँ असि ।

मह्ना देवानामसूर्यः पुरोहितो विश्व ज्योतिरदाम्यम्

१२ ५६९

+ ऋ० ७।६६।१६=वा० य० ३६, २४ ।

× वा० य० ३३, ३९-४० । अथर्व० १३, २, २९; २०, ५८, ३-४ । सा० २७६, १७८८-८९ ।

॥१५०॥ (ऋ० १०।३।१-१२)॥

(५७०-८१) सौर्योऽभितपाः । जगती, १० त्रिष्टुप् ।

| | |
|---|--------|
| नमो मित्रस्य वरुणस्य चक्षसे महो देवाय तदृतं संपर्यत । | |
| दूरेदृशे देवजाताय केतवे दिवस्पुत्राय सूर्याय शंसत | १ ५७० |
| सा मा सत्योक्तिः परि पातु विश्वतो द्यावा च यत्र ततनम्रहानि च । | |
| विश्वमन्यान्नि विशते यदेजति विश्वाहाऽऽपो विश्वाहोदेति सूर्यः | २ |
| न ते अदेवः प्रदिवो नि वासते यदेतशेभिः पतरै रथर्यसि । | |
| प्राचीनमन्यदनु वर्तते रज उदन्येन ज्योतिषा यासि सूर्य | ३ |
| येन सूर्य ज्योतिषा बाधसे तमो जगच्च विश्वमुदियर्षि भानुना । | |
| तेनास्मद् विश्वामनिरामनाहुति मपामीवामप दुष्पवन्त्य सुव | ४ |
| विश्वस्य हि प्रेषितो रक्षसि व्रत महैक्यन्नुचरसि स्वधा अनु । | |
| यदद्य त्वा सूर्योपब्रवामहे तं नो देवा अनु मंसीरत क्रतुम् | ५ |
| तं नो द्यावापृथिवी तन्न आप इन्द्रः शृण्वन्तु मरुतो हवं वचः । | |
| मा शूने भूम सूर्यस्य संदृशि भद्रं जीवन्तो जरणामशीमहि | ६ ५७५ |
| विश्वाहा त्वा सुमनसः सुचक्षसः प्रजावन्तो अनमीवा अनागसः । | |
| उद्यन्तं त्वा मित्रमहो दिवेदिवे ज्योग् जीवाः प्रति पश्येम सूर्य | ७ |
| महि ज्योतिर्विभ्रतं त्वा विचक्षण भास्वन्तं चक्षुषेचक्षुषे मर्यः । | |
| आरोहन्तं बृहतः पाजंसस्परि वयं जीवाः प्रति पश्येम सूर्य | ८ |
| यस्य ते विश्वा भुवनानि केतुना प्र चरते नि च विशन्ते अस्तुभिः । | |
| अनागास्त्वेन हरिकेश सूर्याऽऽह्वाह्वा नो वस्यसावस्यसोदिहि | ९ |
| शं नो भव चक्षसा शं नो अह्वा शं भानुना शं हिमा शं घृणेन । | |
| यथा शमध्वञ्छमसद् दुरोणे तत् सूर्य द्रविणं धेहि चित्रम् | १० |
| अस्माकं देवा उभयाय जन्मने शर्म यच्छत द्विपदे चतुष्पदे । | |
| अदत् पिबदूर्जयमानमाशितं तदस्मे शं योररपो दधातन | ११ |
| यद् वो देवाश्चक्रम जिह्या गुरु मनसो वा प्रयुती देवहेळनम् । | |
| अरावा यो नो अभि दुच्छुनायते तस्मिन् तदेनो वसवो नि धेतन | १२ ५८१ |

॥१५१॥ (ऋ० १०।१५८।१-५)

(५८१-८६) चक्षुः सौर्यः । गायत्री, १ स्वराट् ।

| | | |
|------------------------|--|-------|
| सूर्यो नो दिवस्पातु | वातो अन्तरिक्षात् । अग्निर्नः पार्थिवेभ्यः | १ |
| जोषा सवितर्यस्य ते हरः | शतं सवाँ अर्हति । पाहि नो दिद्युतः पतन्त्याः | २ |
| चक्षुर्नो देवः सविता | चक्षुर्न उत पर्वतः । चक्षुर्धाता दधातु नः | ३ |
| चक्षुर्नो धेहि चक्षुषे | चक्षुर्विख्यै तनूभ्यः । सं चेदं वि च पश्येम | ४ ५८५ |
| सुसहस्रं त्वा वयं | प्रति पश्येम सूर्य । वि पश्येम नृचक्षसः | ५ |

॥१५२॥ (ऋ० १०।१७०।१-४)*

(५८७-९०) विश्राट् सौर्यः । जगती, ४ आस्तारपक्तिः ।

| | | |
|--------------------------------------|----------------------------------|-------|
| बिभ्राट् बृहत् पिबतु सोम्यं | मध्वायुर्धद्यज्ञपतावविहुतम् । | |
| वार्तजूतो यो अभिरक्षति त्मना | प्रजाः पुषोष पुरुधा वि राजति | १ |
| बिभ्राट् बृहत् सुमृतं वाजसातमं | धर्मन् दिवो धरुणै सत्यमर्षितम् । | |
| अमित्रहा वृत्रहा दस्युहंतमं | ज्योतिर्जज्ञे असुरहा सपत्नहा | २ |
| इदं श्रेष्ठं ज्योतिषां ज्योतिरुत्तमं | विश्वजिद् धनजिदुच्यते बृहत् । | |
| विश्वभ्राट् भ्राजो महि सूर्यो दृश | उरु पप्रथे सह ओजो अच्युतम् | ३ |
| विभ्राजज्योतिषा स्व | रगच्छो रोचनं दिवः । | |
| येनेमा विश्वा भुवनान्याभृता | विश्वकर्मणा विश्वदेव्यावता | ४ ५९० |

॥१५३॥ (५९१-६०९) (वा० य० १।११)

| | | |
|------------------------------------|--|----|
| भूताय त्वा नारातये | स्वरभिविख्येषं द२हन्तां दुर्याः पृथिव्यामुर्वन्तरिक्षमन्वेमि । | |
| पृथिव्यास्त्वा नामौ सादयाम्यदित्या | उपस्थेऽग्रे हव्यं रक्ष | ११ |

॥१५४॥ (वा० य० १।२६)×

| | | |
|--|------------------------|----|
| स्वयंभूरसि श्रेष्ठो रश्मिर्वचोदा असि वचो मे देहि । | सूर्यस्यावृतमन्वावर्ते | २६ |
|--|------------------------|----|

॥१५५॥ (वा० य० ३।५, ९-१०)

| | | |
|--|---|-----|
| भूर्ध्रुवः स्वर्द्यौरिव भुम्ना पृथिवीव वरिम्णा । | | |
| तस्यास्ते पृथिवि देवयजनि पृष्ठेऽग्निमन्नादमन्नाद्यायादधे | ५ | ५९३ |

* ऋ० १०, १७०, १-३=वा० य० ३३, ३०; सा० ६२८, १४५३-१४५५

× वा० य० १।२६ (उत्तरार्धः) = अथर्व १०, ५, ३७(२); वा० य० १।२७

सूर्यो ज्योतिर्ज्योतिः सूर्यः स्वाहा । सूर्यो वर्चो ज्योतिर्वर्चः स्वाहा ।

ज्योतिः सूर्यः सूर्यो ज्योतिः स्वाहा

९

सज्जर्देवेन सवित्रा सज्जुरुषसेन्द्रवत्या । जुषाणः सूर्यो वेतु स्वाहा

१० ५९५

॥१५६॥ (वा० य० ५।३३)

अध्वनामध्वपते प्र मा तिर स्वस्ति मेऽस्मिन् पथि देवयाने भूयात्

३३

॥१५७॥ (वा० य० ८।४०)*

अदृश्रमस्य केतवो वि रश्मयो जनाँर अनु । आर्जन्तो अग्र्यो यथा ।

उपयामगृहीतोऽसि सूर्याय त्वा आजायैषते योनिः सूर्याय त्वा आजाय ।

सूर्ये आजिष्ठ आर्जिष्ठस्त्वं देवेष्वसि आर्जिष्ठोऽहं मनुष्येषु भूयासम्

४०

॥१५८॥ (वा० य० १५।५८)×

परमेष्ठी त्वा सादयतु दिवस्पृष्टे ज्योतिष्मतीम् ।

विश्वस्मै प्राणायानाय व्यानाय विश्वं ज्योतिर्यच्छ ।

सूर्यस्तेऽधिपतिस्तया देवतयाऽङ्गिरस्वद् भ्रुवा सीद

५८

॥१५९॥ (वा० य० २०।१६, २१)+

यदि जाग्रद्यदि स्वप्न एनाँसि चक्रमा वयम् ।

सूर्यो मा तस्मादेनसो विश्वान्मुञ्चत्वँ हंसः

१६

उद्वयं तमसस्परि स्तुः पश्यन्त उत्तरम् ।

देवं देवत्रा सूर्यमगन्म ज्योतिरुत्तमम्

२१ ६००

॥१६०॥ (वा० य० ३३।३३-३५, ४१)⊠

दैव्यावध्वर्य आ गतुँ रथेन सूर्यत्वचा । मध्वा यज्ञँ समञ्जाथे

३३

आ न इडाभिर्विदथे सुशस्ति विश्वानरः सविता देव एतु ।

अपि यथा युवानो मत्सथा नो विश्वं जगदभिपित्वे मनीषा

३४

यदद्य कच्च वृत्रहभुदगा अभि सूर्य । सर्वं तदिन्द्र ते वशे

३५

आयन्त इव सूर्य विश्वेदिन्द्रस्य भक्षत ।

वसूनि जाते जर्जमान ओजसा प्रति भागं न दीधिम

४१ ६०४

* वा० य० ८।४१ । × वा० य० १९।४३=दै० [अदितिः०] ५०१ मन्त्रः दृष्टव्यः ।

+ वा० य० २०।१६=अथर्ववेदे (६।११५।१-२) पाठभेद रूपेण, तथा च वा० य० २०।२१; २७, १०; ३५, १४; ३८, २४

=ऋ० १।५०।१०; अथर्व० ७।५३।७ पाठभेदेन च दृश्यते ।

⊠ वा० य० ३३।३५, ४१=दै० [इन्द्रः] २४३३, २३७८ ।

॥१६१॥ (वा० य० ३६:९, २४)×

शं नो मित्रः शं वरुणः शं नो भवत्वयमा ।

शं न इन्द्रो बृहस्पतिः शं नो विष्णुरुक्क्रमः

९ ६०५

तच्चक्षुर्देवहितं पुरस्ताच्छुक्रमुच्चरत् ।

पश्येम शरदः शतं जीवेम शरदः शतं शृणुयाम शरदः शतं प्र ब्रवाम शरदः

शतमदीनाः स्याम शरदः शतं भूयश्च शरदः शतात्

२४

॥१६२॥ (वा० य० ३७।१६-१८)

धर्ता दिवो वि भाति तपसस्पृथिव्यां धर्ता देवो देवानाममर्त्यस्तपोजाः ।

वाचमस्मे नि यच्छ देवायुर्वम्

१६

अपश्यं गोपामनिपद्यमानमा च परा च पृथिभिश्चरन्तम् ।

स सध्रीचीः स विष्चीर्वसान आ वरीवर्ति भुवनेष्वन्तः

१७

विश्वासां भुवां पते विश्वस्य मनसस्पते विश्वस्य वचसस्पते सर्वस्य वचसस्पते ।

देवश्रुचं देव घर्म देवो देवान् पाह्यन् प्रावीरन्तु वां देववीतये ।

मधु माध्वीभ्यां मधु माध्वीभ्याम्

१८

॥१६३॥ (अथर्व० १।३।५)

(६१०-६२२) अथर्वा । पथ्यापङ्क्तिः ।

विद्या शरस्य पितरं सूर्यं शतवृण्यम् ।

तेना ते तन्वेडु शं करं पृथिव्यां ते निषेचनं बहिष्ठे अस्तु बालिति

५ ६१०

॥१६४॥ (अथर्व० २।२१।१-५)

[एकावसानम्] १-४ निवृद्धिषमा गायत्री, ५ भुरिग्विषमा ।

सूर्यं यत् ते तपस्तेन तं प्रति तप योडुऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मः

१

सूर्यं यत् ते हरस्तेन तं प्रति हर योडुऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मः

२

सूर्यं यत् तेऽचिस्तेन तं प्रत्यर्च योडुऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मः

३

सूर्यं यत् ते शोचिस्तेन तं प्रति शोच योडुऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मः

४

सूर्यं यत् ते तेजस्तेन तमतेजसं कृणु योडुऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मः

५

६१५

॥१६५॥ (अथर्व० ५।१४।९) चतुष्टुप् । ऽतिशक्नी ।

सूर्यश्चक्षुषामधिपतिः स मावतु ।

अस्मिन् ब्रह्मण्यस्मिन् कर्मण्यस्यां पुरोधायांमस्यां प्रतिष्ठायांमस्यां चित्यामस्यामा-
कृत्यामस्यामाशिष्यस्यां देवहूत्वां स्वाहा ९

॥१६६॥ (अथर्व० ७।१३।१-२) अनुष्टुप् ।

यथा सूर्यो नक्षत्राणामुद्यंस्तेजोऽस्यादुदे एवास्त्रीणां च पुंसां च द्विषतां वर्च आ ददे १
यावन्तो मा सपत्नानामायन्तं प्रतिपश्यथ ।

उद्यन्तसूर्य इव सुप्तानां द्विषतां वर्च आ ददे २

॥१६७॥ (अथर्व० १९।१७।५) अतिजगती ।

सूर्यो मा द्यावापृथिवीभ्यां प्रतीच्या दिशः पातु तस्मिन् क्रमे तस्मिच्छूये तां पुरं प्रैमि ।
स मा रक्षतु स मा गोपायतु तस्मा आत्मानं परि ददे स्वाहा ५

॥१६८॥ (अथर्व० १९।१८।५) सम्राडाचर्यनुष्टुप् ।

सूर्य ते द्यावापृथिवीवन्तमृच्छन्तु । ये माघ्रायव प्रतीच्या दिशोऽभिदासात् ५ ६२०

॥१६९॥ (अथर्व० १९।१९।३) भुरिगृहती ।

सूर्यो दिवोदक्रामत् तां पुरं प्र णयामि वः ।

तामा विंशत तां प्र विंशत सा वः शर्म च वर्म च यच्छतु ३

॥१७०॥ (अथर्व० १९।२३।२४) दैवी पङ्क्तिः ।

सूर्याभ्यां स्वाहा २४

॥१७१॥ (अथर्व० २।३६।५)

(६२३) पतिवेदनः । अनुष्टुप् ।

भगस्य नावमा रोह पूर्णामनुपदस्वतीम् । तयोपप्रतारय यो वरः प्रतिकाम्यः ५

॥१७२॥ (अथर्व० ४।४०।७)

(६२४) शुक्रः । त्रिष्टुप् ।

य उपरिष्टाञ्जुह्वति जातवेद ऊर्ध्वायां दिशोऽभिदासन्त्यस्मान् ।

सूर्यमृत्वा ते पराञ्चो व्यथन्तां प्रत्यगेनान् प्रतिसरेण हन्मि ७

॥१७३॥ (अथर्व० ६।५१।१)

(६२५) भागलिः । अनुष्टुप् ।

उत्सूर्यो दिव एति पुरो रक्षोसि निजूर्ध्वम् ।

आदित्यः पर्वतेभ्यो विश्वदृष्टो अदृष्ट्वा १ ६२५

॥१७४॥ (अथर्व० १६।९।३-४)

(६२६-२७) यमः । ३ साम्नी पङ्क्तिः, ४ परोष्णिक् ।

अगन्म स्वः स्वर्गिगन्म सं सूर्यस्य ज्योतिषागन्म ३

वस्योभूयाय वसुमान् यज्ञो वसु वंशिषीय वसुमान् भूयासं वसु मयि धेहि ४

॥१७५॥ (साम० ४५८)

(६१८) गौराङ्गिरसः । अतिजगती (अष्टिर्वा) ।

अयं सहस्रमानवो दशः कवीनां मतिज्योतिर्विधर्म ।

३ २ ३ १ २ ३ २ ३ १ २ ३ २ ३ १ २ ३ १ २ ३ १ २ ३ २

ब्रध्नः समीचीरुषसः समैरयदरेपसः । सचेतसः स्वसरे मन्युमन्तश्चिता गोः २

॥१७६॥ (साम० १७९०-९१) × सुकक्ष आङ्गिरसः । गायत्री ।

सूर्य-सहचारी देवगणः ।

(१) सूर्यः पर्जन्याग्नयो वा, सरस्वान् सूर्यो वा ।

॥१७७॥ (ऋ० १।१६४।५१-५२)

(६१-३०) दीर्घतमा औचथ्यः । ५१ अनुष्टुप्, ५२ त्रिष्टुप् ।

समानमेतद्दुःख—मुञ्चैत्यव चाहंभिः ।

भूमिं पुर्जन्या जिन्वन्ति दिवं जिन्वन्त्यग्नयः ५१

दिव्यं सु॒प॒र्णं वा॒य॒सं बृ॒हन्तं—म॒पां गर्भं द॒र्श॒तमोष॑धीनाम् ।

अभीषतो वृष्टिभिस्तर्पयन्तं सरस्वन्तमवसे जोहवीमि ५२ ६३०

(२) सूर्यमित्रावरुणाः ।

॥१७८॥ (क्र० ७, ६३।५)

(६३१) मैत्रावरुणैर्वासिष्ठः । त्रिष्टुप् ।

यत्रा चक्रुर्मृता गातुमस्मै इयेनो न दीयन्नन्वेति पार्थः ।

प्रति वां सूर उदिते विधेम नमोभिर्मित्रावरुणोत हृव्यैः ५

(३) सूर्याविवाहः ।

॥१७९॥ (क्र० १०।८५।६-१६)

(६३२-५८) सावित्री सूर्या ऋषिका । अनुष्टुप्, १४ त्रिष्टुप् ।

रैभ्यासीदनुदेयी नाराशंसी न्योचनी ।

सूर्याया भद्रमिदु वासो गार्थयैति परिष्कृतम् ६ ६३२

| | |
|--|--------|
| चित्तिरा उपवर्हणं चक्षुरा अभ्यञ्जनम् । | |
| द्यौर्भूमिः कोश आसीद् यदयात् सूर्या पतिम् | ७ |
| स्तोमा आसन् प्रतिधयः कुरीरं छन्द ओपशः । | |
| सूर्याया अश्विना वरा ऽग्निरासीत् पुरोगवः | ८ |
| सोमो वधूयुरभव—दुश्विनास्तामुभा वरा । | |
| सूर्या यत् पत्ये शंसन्ती मनसा सविताददात् | ९ ६३५ |
| मनो अस्या अन आसीद् द्यौरासीदुत च्छदिः । | |
| शुक्रावन्द्वाहावास्तां यदयात् सूर्या गृहम् | १० |
| ऋक्सामभ्यामभिहितौ गावौ ते सामनावितः । | |
| श्रोत्रं ते चक्रे आस्तां दिवि पन्थाश्चराचरः | ११ |
| शुचीं ते चक्रे यात्या व्यानो अक्ष आहतः । | |
| अनो मनस्सयं सूर्या ऽऽ रोहत् प्रयती पतिम् | १२ |
| सूर्याया वहतुः प्रागात् सविता यमवासृजत् । | |
| अघासु हन्यन्ते गावो ऽर्जुन्योः पर्युक्षते | १३ |
| यदश्विना पृच्छमानावयातं त्रिचक्रेण वहतुं सूर्यायाः । | |
| विश्वे देवा अनु तद् वामजानन् पुत्रः पितराववृणीत पूषा | १४ ६४० |
| यदयातं शुभस्पती वरेयं सूर्यामुप । कैकं चक्रं वामासीत् कदेष्टाय तस्थयुः | १५ |
| द्वे ते चक्रे सूर्ये ब्रह्माणं ऋतुथा विदुः । | |
| अथैकं चक्रं यद् गुहा तदद्वातय इद् विदुः | १६ |

(४) सूर्या-सावित्री ।

॥१८०॥ (ऋ० १०।८।५।३२-४७)

अनुष्टुप्, ३४ उरोग्रहती, ३६-३७, ४४ त्रिष्टुप्, ४३ जगती ।

| | |
|--|--------|
| मा विदन् परिपन्थिनो य आसीदन्ति दंपती । | |
| सुगेभिर्दुर्गमतीता—मप द्रान्त्वरतयः | ३२ |
| सुमङ्गलीरियं वधू—रिमां समेत पश्यत । | |
| सौभाग्यमस्यै दुत्वाया—ऽथास्तं वि परेतन | ३३ |
| तृष्टमेतत् कर्दुकमेत—दपाष्ठवद् विषवन्नैतदत्तवे । | |
| सूर्या यो ब्रह्मा विद्यात् स इद् वार्धूयमर्हति | ३४ ६४५ |

| | |
|--|--------|
| आशसनं विशसनं—मथो अधिविर्कतनम् । | |
| सूर्यायाः पश्य रूपाणि तानि ब्रह्मा तु शुन्धति | ३५ |
| गृष्णामि ते सौभगत्वाय हस्तं मया पत्या जरदष्टिर्यथासः । | |
| भगो अर्यमा संविता पुरंधि—मह्यं त्वादुर्गाहिपत्याय देवाः | ३६ |
| तां पूषञ्छिवत्तमामेरयस्व यस्यां बीजं मनुष्याश्च वर्षन्ति । | |
| या न ऊरू उशती विश्रयाति यस्यामुशन्तः प्रहराम शेपम् | ३७ |
| तुभ्यमग्रे पर्यवह—न्तसूर्या वहतुना सह । | |
| पुनः पतिभ्यो जायां दा अग्रे प्रजया सह | ३८ |
| पुनः पत्नीमग्निरदा—दायुषा सह वर्चसा । | |
| दीर्घायुरस्या यः पति—जीवाति शरदः शतम् | ३९ ६५० |

| | |
|--|--------|
| सोमः प्रथमो विविदे गन्धर्वो विविदु उत्तरः । | |
| तृतीयो अग्निष्टे पति—स्तुरीयस्ते मनुष्यजाः | ४० |
| सोमो ददद् गन्धर्वाय गन्धर्वो दददुग्रये । | |
| रयि च पुत्रांश्चादा—दुग्निर्मह्यमथो इमाम् | ४१ |
| इहैव स्तं मा वि यौष्टं विश्वमायुर्व्यश्रुतम् । | |
| कीळन्तौ पुत्रैर्नमृभि—मोदमानौ स्वे गृहे | ४२ |
| आ नः प्रजां जनयतु प्रजापति—राजरसाय समनक्त्वर्थमा । | |
| अदुर्मङ्गलीः पतिलोकमा विश शं नो भव द्विपदे शं चतुष्पदे | ४३ |
| अघोरभुरपातिह्येधि शिवा पशुभ्यः सुमनाः सुवर्चाः । | |
| वीरस्रदेवकाभा स्योना शं नो भव द्विपदे शं चतुष्पदे | ४४ ६५५ |

| | |
|--|--------|
| इमां त्वमिन्द्र मीद्वः सुपुत्रां सुभगां कृणु । | |
| दशास्यां पुत्राना धेहि पतिमेकादशं कृधि । | ४५ |
| सम्राज्ञी श्वशुरे भव सम्राज्ञी श्वश्र्वां भव । | |
| ननान्दरि सम्राज्ञी भव सम्राज्ञी अधि देवेषु | ४६ |
| समञ्जन्तु विश्वे देवाः समापो हृदयानि नौ । | |
| सं मातरिश्वा सं धाता समु देष्टी दधातु नौ | ४७ ६५८ |

(५) सूर्य-वैश्वानरोऽग्निः ।

॥१८१॥ (ऋ० १०।८।१—१९)

(६५९-७७) आङ्गिरसो मूर्धन्वान्, वामदेव्यो वा । त्रिष्टुप् ।

- हविष्पान्तमजरं स्वर्विदि दिविस्पृश्याहुतं जुष्टमग्नौ ।
 तस्य भर्मेण भुवनाय देवा धर्मेण कं स्वधया पप्रथन्त १
 गीर्णं भुवनं तमसापगूळह—माविः स्वरभवज्जाते अग्नौ ।
 तस्य देवाः पृथिवी द्यौरुतापो ऽरण्यन्नोषधीः सरुये अस्य २ ६६०
 देवेभिर्निवषितो यज्ञिर्येभि—रग्निं स्तोषाण्यजरं बृहन्तम् ।
 यो भानुना पृथिवीं द्यामुतेमा—मातृतान रोदसी अन्तरिक्षम् ३
 यो होताऽऽसीत् प्रथमो देवजुष्टो यं समाज्जन्नाज्येना वृणानाः ।
 स पतन्तीत्वरं स्था जगद्य—च्छ्वात्रमग्निरकृणोऽजातवेदाः ४
 यजातवेदो भुवनस्य मूर्ध—नतिष्ठो अग्ने सह रोचनेन ।
 तं त्वाहेम मतिभिर्गाभिरुक्थैः स यज्ञियो अभवो रोदसिप्राः ५
 मूर्धा भुवो भवति नक्तमग्नि—स्ततः सूर्यो जायते प्रातरुद्यन् ।
 मायामु तु यज्ञियानामेता—मपो यत् तूर्णिश्चरति प्रजानन् ६
 दृशेन्यो यो महिना समिद्धो ऽरोचत दिवियोनिर्विभावा ।
 तस्मिन्नग्नौ सक्तवाकेन देवा हविर्विश्च आजुह्वुस्तनूपाः ७ ६६५
 सूक्तवाकं प्रथममादिदग्नि—मादिद्धविरजनयन्त देवाः ।
 स एषां यज्ञो अभवत् तनूपा—स्तं द्यौर्वेदु तं पृथिवी तमापः ८
 यं देवासोऽर्जनयन्ताग्निं यस्मिन्नाजुह्वुर्भुवनानि विश्वा ।
 सो अर्चिषा पृथिवीं द्यामुतेमा—मृज्यमानो अतपन्महित्वा ९
 स्तोमेन हि दिवि देवासो अग्नि—मर्जाजनञ्छक्तिभी रोदसिप्राम् ।
 तमू अकृण्वन् त्रेधा भुवे कं स ओषधीः पचति विश्वरूपाः १०
 यदेदेनमदधुर्यज्ञियांसो दिवि देवाः सूर्यमादितेयम् ।
 यदा चरिष्णू मिथुनावभूता—मादित् प्रापश्यन् भुवनानि विश्वा ११
 विश्वस्मा अग्निं भुवनाय देवा वैश्वानरं केतुमह्नामकृण्वन् ।
 आ यस्तुतानोषसो विभाती—रपो ऊर्णोति तमो अर्चिषा यन् १२ ६७०

| | |
|---|--------|
| वैश्वानरं कवयो यज्ञियांसो ऽग्निं देवा अजनयन्नुर्धम् । | |
| नक्षत्रं प्रत्नमग्निं चरिणु यक्षस्याध्यक्षं तविषं बृहन्तम् | १३ |
| वैश्वानरं विश्वहा दीदिवांसं मन्त्रैरग्निं कविमच्छां वदामः । | |
| यो महिम्ना परिवभूवोर्वा उतावस्तादुत देवः पुरस्तात् | १४ |
| द्रे सुती अंशुणवं पितृणा—महं देवानामुत मर्त्यानाम् । | |
| ताभ्यामिदं विश्वमेजत् समेति यदन्तरा पितरं मातरं च | १५ |
| द्रे समीची विभृतश्चरन्तं शीर्षतो जातं मनसा विमृष्टम् । | |
| स प्रत्यङ् विश्वा भुवनानि तस्था—वप्रयुच्छन् तरणिभ्राजमानः | १६ |
| यत्रा वदेते अवरः परश्च यज्ञन्योः कतरो नौ वि वेद । | |
| आ शैकुरित् संधमादुं सखायो नक्षन्त यज्ञं क इदं वि वोचत् | १७ ६७५ |
| कत्यग्रयः कति सूर्यासः कत्युषासः कत्युं स्विदापः । | |
| नोपस्पिजं वः पितरो वदामि पुच्छामि वः कवयो विब्रने कम् | १८ |
| यावन्मात्रमुषसो न प्रतीकं सुपण्योऽवसते मातरिश्च । | |
| तावद् दधात्युषं यज्ञमायन् ब्राह्मणो होतुरवरो निषीदन् | १९ |

(६) सूर्यो, हरिमा हृद्रोगश्च ।

॥१८२॥ [द्वै० (आयुर्वेद०) ४८९-९२ मन्त्राः द्रष्टव्याः ।]

(७) सूर्यः प्रजापतिः ।

॥१८३॥ [द्वै० (आयुर्वेद०) १३३२-३३ मन्त्रौ द्रष्टव्यौ ।]

(८) सूर्याचन्द्रमसौ ।

॥१८४॥ (अथर्व० ६।८३।१)+

(६७८) भगः । अनुष्टुप् ।

अपचितः प्र पतत सुपणो वसतेरिव ।

सूर्यः कृणोतु भेषजं चन्द्रमा वोऽप्योच्छतु

१

॥१८५॥ (अथर्व० ७।८१।१-६)ः

(६७९-८४) अथर्वा । त्रिष्टुप्, ३ अनुष्टुप्, ४ आस्तारपाङ्क्तिः, ५ स्वराडास्तारपाङ्क्तिः ।

पूर्वापरं चरतो माययैतौ शिशू क्रीडन्तौ परि यातोऽर्णवम् ।

विश्वान्यो भुवनो विचष्ट ऋतूरन्यो विदधजायसे नवः

१ ६७९

(६) त्वष्टा, धाता, पूषा, भगः, अर्यमा ।

[१] त्वष्टा ।*

॥१८८॥ (क्र० १०।१८।६)

(६९२) संकुसुको यामायनः । त्रिष्टुप् ।

आ रोहतायुर्जरसं वृणाना अनुपूर्वं यतमाना यतिष्ठ ।
इह त्वष्टां सुजनिमा सजोषां दीर्घमायुः करति जीवसे वः

६

॥१८९॥ [६९३-९७] (वा० य० २।२४)×

सं वर्चसा पर्यसा सं तनूभिरगन्महि मनसा सः शिवेन ।
त्वष्टां सुदत्रो विदधातु रायोऽनुमाष्टु तन्वो यद्विलिष्टम्

२४

॥१९०॥ (वा० य० ६।७)

उपावीरस्युषं देवान् दैवीर्विशः प्रागुरुशिजो वह्निमान् ।
देवं त्वष्टर्वसुं रम हव्या ते स्वदन्ताम्

७

॥१९१॥ (वा० य० ८।१७)+

धाता रातिः सवितेदं जुपन्तां प्रजापतिर्निधिषा देवोऽअग्निः ।
त्वष्टा विष्णुः प्रजया सः सराणा यजमानाय द्रविणं दधातु स्वाहा

१७ ६९५

॥१९२॥ (वा० य० २०।४३)

त्वष्टा दधच्छुष्ममिन्द्राय वृष्णेऽपाकोऽर्चिष्टुर्यशसे पुरूणि ।
वृषा यजन् वृषणं भूरिरेता मूर्धन् यज्ञस्य समनक्तु देवान्

४४

॥१९३॥ (वा० य० २९।९)

त्वष्टा वीरं देवकामं जजान त्वष्टुरवीं जायत आशुरश्वः ।
त्वष्टेदं विश्वं भुवनं जजान ब्रह्मोः कर्तारमिह यक्षि होतः

९

॥१९४॥ (अथर्व० ३।३।५)

(६९८-९९) ब्रह्मा । विराट् प्रस्तारपङ्क्तिः ।

त्वष्टा दुहित्रे वहतुं युनक्तीतीदं विश्वं भुवनं वि याति ।
व्यहं सर्वेण पाप्मना वि यक्ष्मेण समायुषा

५ ६९८

*दै० [अग्निः (आग्नी सूक्तानि)] १९१५, १९२७, १९३९, १९५०, १९६१, १९७१, १९८९, २०००, २०११, २०२२,
२०३४, २०४५, २०५७, २०६९, २०८१, २०९२, २१०३, २११४, २१२६, २१३८ ।

× वा० य० ८।१४, १६; अथर्व० ६।५३।३ (पाठभेदेन) । +अथर्व० ७।१७।४ ।

दै० [अदितिः] ०।८

(अथर्व० ५।२६।८) द्विपदा प्राजापत्या बृहती ।

त्वष्टा युनक्तु बहुधा नु रूपा अस्मिन् यज्ञे सुयुजः स्वाहा

८

॥१९५॥ (अथर्व० ६।५३।३)

(७००) बृहच्छुक्रः । त्रिष्टुप् ।

सं वर्चसा पर्यसा सं तनूभिर्गन्महि मर्नसा सं शिवेन ।

त्वष्टा नो अत्र वरीयः कृणोत्वनु नो मार्षु तन्वोरे यद् विरिष्टम्

३ ७००

॥१९६॥ (अथर्व० ६।७८।३)

(७०१-२) अथर्वा । अनुष्टुप् ।

त्वष्टा जायामजनयत् त्वष्टास्यै त्वां पतिम् ।

त्वष्टा सहस्रमार्युषि दीर्घमार्युः कृणोत वाम्

३

॥१९७॥ (अथर्व० ६।८१।३)

यं परिहस्तमर्बिभरदितिः पुत्रकाम्या ।

त्वष्टा तमस्या आ बध्नाद् यथा पुत्रं जनादिति

३

त्वष्टृ-सहचारी देवगणः ।

(१) त्वष्टा शुक्रश्च ।

॥१९८॥ (ऋ० २।३६।३)

(७०३) गृत्समद (आङ्गिरसः शौनहेत्रः पश्चाद् भार्गवः शौनकः । जगती ।

अमेवं नः सुहवा आ हि गन्तं नि बर्हिषि सदतना रणिष्टन ।

अथा मन्दस्व जुजुषाणो अन्धसस्त्वष्टदेवेभिर्जनिभिः सुमर्द्रणः

३

(२) त्वष्टा, पर्जन्यः, ब्रह्मणस्पतिः, अदितिः ।

॥१९९॥ (अथर्व० ६।४।१)

(७०४) अथर्वा । पथ्याबृहती ।

त्वष्टा मे दैव्यं वचः पर्जन्यो ब्रह्मणस्पतिः ।

पुत्रैर्भ्रातृभिरदितिर्नु पातु नो दुष्टं त्रायमाणं सहः

१

[२] धाता ।

॥२००॥ (ऋ० १०।१८।५)

(७०५) संकुसुको यामायनः । त्रिष्टुप् ।

यथाहान्यनुपूर्वं भवन्ति यथ ऋतवं ऋतुभिर्यन्ति साधु ।

यथा न पूर्वमपरो जहात्ये—वा धातरार्युषि कल्पयैषाम्

५ ७०५

॥२०१॥ (अथर्व० १३।४।३)

(७०६) ब्रह्मा । प्राजापत्याऽनुष्टुप् ।

स धाता स विधर्ता स वायुर्नभ उच्छ्रितम् ।

रश्मिभिर्नभ आभृतं महेन्द्र एत्यावृतः

३

॥२०२॥ (अथर्व० १८।३।२६)

(७०७-१०) । अथर्वा । जगती ।

धाता मा निर्ऋत्या दक्षिणाया दिशः पातु बाहुच्युता पृथिवी द्यामिवोपरि ।

लोककृतः पथिकृतो यजामहे ये देवानां हुतभागा इह स्थ

२६

धातु-सहचारी-देवगणः ।

(१) धाता, सविता, इन्द्रः, त्वष्टा, अदितिः ।

॥२०३॥ (अथर्व० ३।८।२)

धाता रातिः सवितेदं जुषन्तामिन्द्रस्त्वष्टा प्रति हर्यन्तु मे वचः ।

हुवे देवीमर्दिति शूरपुत्रां सजातानां मध्यमेष्टा यथासानि

२

(२) धाताविधातारौ, ऋतवः ।

॥२०४॥ (अथर्व० ३।१०।१०)

ऋतुभ्यश्चार्तवेभ्यो माद्भ्यः संवत्सरेभ्यः ।

घात्रे विधात्रे समृधे भूतस्य पतये यजे

१०

(३) धाता, विधाता, सविता, आदित्याः, रुद्राः, अश्विनौ ।

॥२०५॥ (अथर्व० ५।३।९)

धाता विधाता भुवनस्य यस्पतिर्देवः सविताभिमातिषाहः ।

आदित्या रुद्रा अश्विनोभा देवाः पान्तु यजमानं निर्ऋथात्

९ ७१०

(४) धाता, सविता ।

॥२०६॥ (अथर्व० ७।१७।१-३)

(७११-१३) भृगुः । १-२ गायत्री, ३ त्रिष्टुप् ।

धाता दधातु नो रयिमीशानो जगतस्पतिः । स नः पूर्णेन यच्छतु

१

धाता दधातु दाशुषे प्राचीं जीवातुमक्षिताम् ।

वचं देवस्य धीमहि सुमति विश्वराधसः

२ ७१२

धाता विश्वा वार्या दधातु प्रजाकामाय दाशुषे दुरोणे ।

तस्मै देवा अमृतं सं व्ययन्तु विश्वे देवा अदितिः सजोषाः

३

(५) सविता, धाता, पूषा, त्वष्टा ।

॥२०७॥ (अथर्व० ११।६।३)

(७१४) शन्तातिः । अनुष्टुप् ।

ब्रूमो देवं सवितारं धातारमुत पूषणम् । त्वष्टारमग्रियं ब्रूमस्ते नो मुञ्चन्त्वंहसः ३

[३] पूषा ।

॥२०८॥ (ऋ० १।२३।१३-१५)

(७१५-१७) मेधातिथिः काण्वः । गायत्री ।

| | | |
|---|----|-----|
| आ पूषञ्चित्रवर्हिष—माधृणे धरुणं दिवः । आज्ञां नष्टं यथा पशुम् | १३ | ७१५ |
| पूषा राजानमाधृणि—रपंगूळहं गुहां हितम् । अविन्दच्चित्रवर्हिषम् | १४ | |
| उतो स मह्यमिन्दुभिः षड्युक्तां अनुसेषिधत् । गोभिर्यवं न चर्कषत् | १५ | |

॥२०९॥ (ऋ० १।४२।१-१०)

(७१८-२७) कण्वो घौरः । गायत्री ।

| | | |
|--|----|-----|
| सं पूषन्नध्वनस्तिर व्यंहो विमुचो नपात् । सक्ष्वा देव प्र णस्पुरः | १ | |
| यो नः पूषन्नधो वृको दुःशेव आदिदेशति । अप स्म तं पथो जहि | २ | |
| अप त्यं परिपन्थिनं मुषीवाणं हुरश्चितम् । दूरमधि सुतेरज | ३ | ७१० |
| त्वं तस्य द्रयाविनो ऽघशंसस्य कस्य चित् । पदाभि तिष्ठ तर्पुषिम् | ४ | |
| आ तत् ते दस्य मन्तुमः पूषन्नधो वृणीमहे । येन पितृनचोदयः | ५ | |
| अधा नो विश्वसौभग हिरण्यवाशीमत्तम । धनानि सुषणां कृधि | ६ | |
| अति नः सश्वतो नय सुगा नः सुपथां कृणु । पूषन्निह क्रतुं विदः | ७ | |
| अभि सुयवसं नय न नवज्वारो अध्वने । पूषन्निह क्रतुं विदः | ८ | ७१५ |
| शग्धि पूरि प्र यंसि च शिशिहि प्रास्युदरम् । पूषन्निह क्रतुं विदः | ९ | |
| न पूषणं मेथामसि सूक्तैरभि गृणीमसि । वसूनि दस्ममीमहे | १० | |

॥२१०॥ (ऋ० १।१३८।१-४)

(७२८-३१) परुच्छेपो दैवोदासिः । अत्यष्टिः ।

प्रप्रपूष्णस्तुविजातस्य शस्यते महित्वमस्य तवसो न तन्दते स्तोत्रमस्य न तन्दते ।

अर्चामि सुम्रयन्नह—मन्त्युति मयोभुवम् ।

विश्वस्य यो मन आयुयुवे मखो देव आयुयुवे मखः

१ ७२८

प्र हि त्वा पूषन्नजिरं न यामनि स्तोमेभिः कृण्व ऋणवो यथा मृध
उष्ट्रो न पीपरो मृधः ।

हुवे यत् त्वा मयोभुवै देवं सख्याय मर्त्यः ।

अस्माकमाङ्गवान् द्युम्निनस्कृधि वाजेषु द्युम्निनस्कृधि २
यस्य ते पूषन्तसख्ये विपन्यवः कृत्वा चित् सन्तोऽवसा बुभुजिरे
इति कृत्वा बुभुजिरे ।

तामनु त्वा नवीयसीं नियुतं राय ईमहे ।

अहेळमान उरुशंस सरीं भव वाजैवाजे सरीं भव ३ ७३०

अस्या ऊ षु ण उप सातये भुवो ऽहेळमानो ररिवाँ अजाश्च श्रवस्यतामजाश्च ।

ओ षु त्वा ववृतीमहि स्तोमेभिर्दस्म साधुभिः ।

नहि त्वा पूषन्नतिमन्य आघृणे न ते सख्यमपह्नुवे ४

॥२११॥ (ऋ० ३।६२।७-९)

(७३२-३४) गाथिनो विश्वामित्रः । गायत्री ।

इयं ते पूषन्नाघृणे सुष्टुतिर्देव नव्यसी । अस्माभिस्तुभ्यं शस्यते ७

तां जुषस्व गिरं मम वाजयन्तीमवा धियम् । वधूयुरिव योषणाम् ८

यो विश्वाभि विपश्यति भुवना सं च पश्यति । स नः पूषाविता भुवत् ९

॥२१२॥ (ऋ० ६।४८।१६-१९)

(७३५-३८) शंयुर्बाह्वस्पत्यः (तृणपाणिः) १६ ककुप्, १७ सतोबृहती, १८ पुर उष्णिक्, १९ बृहती ।

आ मा पृषन्नुप द्रव शंसिषं नु ते अपिकर्ण आघृणे । अघा अर्यो अरातयः १६ ७३५

मा काकम्बीरमुद् बृहो वनस्पति मशस्तीर्वि हि नीनशः ।

मोत सरो अह एवा चन ग्रीवा आदधते वेः १७

हतैरिव तेऽवृकर्मस्तु सख्यम् । अच्छिद्रस्य दधन्वतः सुपूर्णस्य दधन्वतः १८

परो हि मर्त्यैरसि समो देवैरुत श्रिया ।

अभि ख्यः पूषन् पृतनासु नस्त्वमवा नूनं यथा पुरा १९

॥२१३॥ (ऋ० ६।५३।१-१०)

(७३९-७७४) बार्हस्पत्यो भरद्वाजः । गायत्री, ८ अनुष्टुप् ।

वयमु त्वा पथस्पते रथं न वाजसातये । धिये पूषन्नयुजमहि १

अभि नो नर्य वसु वीरं प्रयतदक्षिणम् । वामं गृहपतिं नय २ ७४०

| | |
|---|-------|
| अदित्सन्तं चिदाघृणे पूषन् दानाय चोदय । पणेश्चिद् वि अद्वा मनः | ३ |
| वि पथो वाजसातये चिनुहि वि मृधोजहि । साधन्तामुग्र नो धियः | ४ |
| परि तृन्धि पणीना—मारया हृदया कवे । अथेमसभ्यं रन्धय | ५ |
| वि पूषमारया तुद पणेरिच्छ हृदि प्रियम् । अथेमसभ्यं रन्धय | ६ |
| आ रिख किकिरा कृणु पणीनां हृदया कवे । अथेमसभ्यं रन्धय | ७ ७४५ |
| यां पूषन् ब्रह्मचोदनी—मारां विभर्ष्याघृणे । | |
| तया समस्य हृदय—मा रिख किकिरा कृणु | ८ |
| या ते अष्टा गोओपशा ऽऽघृणे पशुसाधनी । तस्यास्ते सुम्रमीमहे | ९ |
| उत नो गोषणिं धियं—मश्वसां वाजसामुत । नृवत् कृणुहि वीतये | १० |

॥२१४॥ (ऋ० ६।५४।१-१०)+ गायत्री ।

| | |
|--|-------|
| सं पूषन् विदुषां नय यो अञ्जसानुशासति । य एवेदमिति ब्रवत् | १ |
| समुं पूष्णा गमेमहि यो गृह्णा अभिशासति । इम एवेति च ब्रवत् | २ ७५० |
| पूष्णश्चक्रं न रिष्यति न कोशोऽव पद्यते । नो अस्य व्यथते पविः | ३ |
| यो अस्मै हविषाविध—न्न तं पूषाऽपि मृष्यते । प्रथमो विन्दते वसुं | ४ |
| पूषा गा अन्वेतु नः पूषा रक्षत्वर्धतः । पूषा वाजं सनोतु नः | ५ |
| पूषन्ननु प्र गा इहि यजमानस्य सुन्वतः । अस्माकं स्तुवतामुत | ६ |
| मार्किर्नेशन्मार्की रिष—न्मार्की सं शारि केवटे । अथारिष्टाभिरा गहि | ७ ७५५ |
| शृण्वन्तं पूषणं वय—मिर्यमनष्टवेदसम् । ईशानं राय ईमहे | ८ |
| पूषन् तव व्रते वयं न रिष्येम कदा चन । स्तोतारस्त इह स्मसि | ९ |
| परि पूषा परस्ता—द्धस्तं दधातु दक्षिणम् । पुनर्नो नष्टमाजतु | १० |

॥२१५॥ (ऋ० ६।५५।१-६)

| | |
|--|-------|
| एहि वां विमुचो नपा—दाघृणे सं संचावहै । रथीक्रितस्य नो भव | १ |
| रथीतमं कपर्दिन—मीशानं राधसो महः । रायः सखायमीमहे | २ ७६० |
| रायो धारास्याघृणे वसो राशिरजाश्च । धीवतोधीवतः सखा | ३ |
| पूषणं न्वृजाश्च—मुप स्तोषाम वाजिनम् । स्वसुर्यो जार उच्यते | ४ |
| मातुर्दिधिषुम्रव्रवं स्वसुर्जारः शृणोतु नः । भ्रातेन्द्रस्य सखा मम | ५ |
| आजासः पूषणं रथे निशृम्भास्ते जनश्रियम् । देवं वहन्तु बिभ्रतः | ६ ७६४ |

॥२१६॥ (ऋ० ६।५६।१-६) गायत्री, ६ अनुष्टुप् ।

| | | | |
|---------------------------|---|-----|-----|
| य ए॒नमा॒दिदे॑शति | कर॑म्भादि॒ति पू॒षण॑म् । न ते॒न दे॒व आ॒दिशे॑ | १ | ७६५ |
| उ॒त घा॒ स र॒थीत॑म् : | स॒ख्या स॒त्पति॑र्युजा । इन्द्रो॑ वृ॒त्राणि॑ जिघ्रते | २ | |
| उ॒तादः॑ प॒रुषे॑ ग॒वि | सूर॑श्चक्रं हि॒र॒ण्यय॑म् । न्यै॒रयद् र॒थीत॑मः | ३ | |
| यदु॒द्य त्वा॑ पुरु॒ष्टुत॑ | ब्र॒वाम॑ द॒स्य म॑न्तुमः । तत् सु॒ नो म॑न्म साधय | ४ | |
| इ॒मं च॑ नो ग॒वेष॑णं | सा॒तये॑ सीष॒धो ग॑णम् । आ॒रात् पू॒षन्ना॑सि श्रुतः | ५ | |
| आ ते॑ स्व॒स्तिमी॑मह | आ॒रेअ॑घामुपा॒वसु॑म् । अ॒द्या च॑ स॒र्वता॑तये॒ श्वश्च॑ स॒र्वता॑तये॒ ६ | ७७० | |

॥२१७॥ (ऋ० ६।५८।१-४) × त्रिष्टुप्, २ जगती ।

| | |
|--|---|
| शुक्रं ते॑ अ॒न्यद् य॑ज॒तं ते॑ अ॒न्यद् वि॒षु॒रूपे॑ अ॒ह॒नी द्यौ॑रि॒वासि॑ । | |
| वि॒श्वा हि॒ मा॒या अ॒वसि॑ स्वधा॒वो भ॒द्रा ते॑ पू॒षन्नि॒ह रा॒तिर॑स्तु | १ |
| अ॒जाश्चः॑ प॒शुषा॑ वा॒जप॑स्त्यो धि॒यंजि॒न्वो भु॒वने॑ वि॒श्वे अ॒र्पितः॑ । | |
| अष्टा॑ पू॒षा शि॑थिरामु॒द्वरी॑वृजत् स॒ंच॒क्षाणो॑ भु॒वना॑ दे॒व ई॒यते॑ | २ |
| यास्ते॑ पू॒षन्ना॒वो अ॒न्तः स॑मु॒द्रे हि॒र॒ण्ययी॑र॒न्तरि॑क्षे च॒रन्ति॑ । | |
| ताभि॑र्या॒सि दू॒त्यां सूर्य॑स्य॒ कामे॑न कृत॒ श्रवं॑ इ॒च्छमा॑नः | ३ |
| पू॒षा सु॒वन्धु॑र्दिव आ पृ॒थि॒व्या इ॒ळस्प॑तिर्मि॒धवा॑ दु॒स्सर्व॑र्चाः । | |
| यं दे॒वासो॑ अ॒र्ददुः॑ सूर्या॒यै कामे॑न कृतं त॒वसं॑ स्व॒श्वम् | ४ |

॥२१८॥ (ऋ० १०।१७।३-६) +

(७७५-७८) देवश्रवा यामायनः । त्रिष्टुप् ।

| | |
|---|-------|
| पू॒षा त्वे॒तश्च॑या॒वय॑तु प्र वि॒द्रा—न॑न॒ष्टप॑शुर्भु॒वनस्य॑ गो॒पाः । | |
| स त्वै॒तेभ्यः॑ परि॑ द॒दत् पितृ॑भ्यो ऽग्नि॒दे॒वेभ्यः॑ सु॒वि॒दुत्रि॑येभ्यः | ३ ७७५ |
| आयु॑र्वि॒श्वायुः॑ परि॑ पा॒सति॑ त्वा पू॒षा त्वा॑ पातु प्र॒प॒थे पु॒रस्ता॑त् । | |
| यत्रा॑स॒ते सु॒कृतो॑ यत्र ते य॒यु—स्तत्र॑ त्वा दे॒वः स॒वि॒ता द॑धातु | ४ |
| पू॒षेमा॑ आ॒शा अनु॑ वेद॒ सर्वाः॑ सो अ॒स्माँ अ॒भय॑तमे॒न नेष॑त् । | |
| स्व॒स्ति॒दा आ॒र्घृणिः॑ स॒र्ववी॒रो ऽप्र॑यु॒च्छन् पु॒र ए॒तु प्र॒जान॑न् | ५ |
| प्र॒प॒थे प॒थाम॑जनिष्ट पू॒षा प्र॒प॒थे दि॒वः प्र॒प॒थे पृ॒थि॒व्याः । | |
| उ॒भे अ॒भि प्रि॒यत॑मे॒ सध॑स्थे आ च॒ परा॑ च च॒रति॑ प्र॒जान॑न् | ६ ७७८ |

॥२१९॥ (ऋ० १०।२६।१-९)

(७७९-८७) विमद पेन्द्रः प्राजापत्यो वा, वासुको वसुकुद्रा । अनुष्टुप्; १,४ उष्णिक् ।

प्र ह्यच्छा मनीषाः स्पर्हा यन्ति नियुतः । प्र दुस्त्रा नियुद्रथः पूषा अविष्टु माहिः १
 यस्य त्यन्महित्वं वाताप्यमयं जनः । विप्र आ वैसद्वीतिभिश्चिकेत सुष्टुतीनाम् २ ७८०
 स वेद सुष्टुतीनामिन्दुर्न पूषा वृषा । अभि प्सुरः प्रुषायति व्रजं न आ प्रुषायति ३
 मंसीमहि त्वा वयमस्माकं देव पूषन् । मतीनां च साधनं विप्राणां चाध्वम् ४
 प्रत्यर्धिर्यज्ञानामश्वहयो रथानाम् । ऋषिः स यो मनुर्हितो विप्रस्य यावयत्सखः ५
 आधीषमाणायाः पतिः शुचायाश्च शुचस्य च ।
 वासोवायोऽवीनामा वासांसि मर्मजत् ६
 इनो वाजानां पतिरिनः पुष्टीनां सखा । प्र इमश्रु हर्यतो दूधोद् वि वृथा यो अदाभ्यः ७ ७८५
 आ ते रथस्य पूषन्नजा धुरैर्ववृत्युः । विश्वस्यार्थिनः सखा सनोजा अनपच्युतः ८
 अस्माकमूर्जा रथं पूषा अविष्टु माहिः । भुवद् वाजानां वृध इमं नः शृणवद्ववम् ९

॥२२०॥ [७८८] (वा० य० ३४।४२) ×

पथस्पथः परिपति वचस्या कामेन कृतो अभ्यानङ्कम् ।

स नो रासच्छुरुधश्चन्द्राग्रा धियैधियः सीषधाति प्र पूषा ४२

॥२२१॥ [दै० (आयुर्वेद० १७६५-६७) मन्त्राः द्रष्टव्याः ।]

पूषा-सहचारी देवगणः ।

(१) मरुतः, पूषा, बृहस्पतिः, अग्निः ।

॥२२२॥ (अथर्व० ७।३।१)

(७८९) ब्रह्मा । पथ्यापङ्क्तिः ।

सं मा सिञ्चन्तु मरुतः सं पूषा सं बृहस्पतिः ।

सं मायमग्निः सिञ्चतु प्रजया च धनेन च दीर्घमायुः कृणोतु मे १

(२) अग्निः, सोमः, पूषा ।

॥२२३॥ (अथर्व० १६।१।२)

(७९०) यमः । आचर्युष्णिक् ।

तदुगिराह तदु सोम आह पूषा मा धातु सुकृतस्य लोके

२ ७९०

[४] भगः ।

॥२२४॥ (ऋ० १।२४।५)

(७९१) आजीगर्तिः गुनःशेषः, स कृत्रिमो वैश्वामित्रो देवराजः । गायत्री ।

भगभक्तस्य ते वय—मुदशेम तवावसा । मुर्धनै राय आरभे ५

॥२२५॥ (ऋ० ७।३८।६ उत्तरार्धः)

(७९२-९७) मैत्रावरुणिर्वसिष्ठः । त्रिष्टुप् ।

भगमुग्रोऽवसे जोहवीति भगमुग्रो अध याति रत्नम् ६

॥२२६॥ (ऋ० ७।४१।२-६)×

प्रातर्जितं भगमुग्रं हुवेम वयं पुत्रमर्दितेयो विधर्ता ।

आध्रश्चिद् यं मन्यमानस्तुरश्चिद् राजा चिद् यं भगं भक्षित्याह २

भग प्रणेतर्भग सत्यराधो भगेमां धियमुदवा ददन्नः ।

भग प्र णो जनय गोभिरश्चै—भग प्र नृभिर्नृवन्तः स्याम ३

उतेदानीं भगवन्तः स्यामो—त प्रपित्व उत मध्ये अह्वाम् ।

उतोदिता मघवन्तसूर्यस्य वयं देवानां सुमतौ स्याम ४ ७९५

भग एव भगवां अस्तु देवा—स्तेन वयं भगवन्तः स्याम ।

तं त्वा भग सर्व इजोहवीति स नो भग पुरस्ता भवेह ५

समध्वरायोषसो नमन्त दधिक्रावेव शुचये पदार्य ।

अर्वाचीनं वसुविदं भगं नो रथमिवाश्वा वाजिन आ वहन्तु ६

॥२२७॥ (अथर्व० २।३०।५)

(७९८) प्रजापतिः । अनुष्टुप् ।

एयमग्न पतिकामा जनिकामोऽहमार्गमम् ।

अश्वः कनिकदुद् यथा भगेनाहं सहागमम् ५

॥२२८॥ (अथर्व० २।३६।७)

(७९९) पतिवेदनः । अनुष्टुप् ।

इदं हिरण्यं गुल्गुल्वयमौक्षो अथो भगः । एते पतिभ्यस्त्वामदुःप्रतिक्रामाय वेत्तवे ७

॥२२९॥ (अथर्व० ५।२६।९)

(८००) ब्रह्मा । [एकावसाना] त्रिपदा पिपीलिकमध्या पुरउणिक् ।

भगो युनक्त्वाशिषो न्वस्मा अस्मिन् यज्ञे प्रविद्वान् युनक्तु सुयुजः स्वाहा ९ ८००

॥२३०॥ (अथर्व० ६।१२९।१-३)

(८०१-३) अथर्वीक्षिताः । अनुष्टुप् ।

भगेन मा शांशपेन साकमिन्द्रेण मेदिना । कृणोमि भगिनं माप द्रान्त्वरातयः १
 येन वृक्षो अभ्यर्भवो भगेन वर्चसा सह । तेन मा भगिनं कृण्वप द्रान्त्वरातयः २
 यो अन्धो यः पुनःसरो भगो वृक्षेष्वार्हितः । तेन मा भगिनं कृण्वप द्रान्त्वरातयः ३

॥२३१॥ (अथर्व० १४।१।५०-५१, ५३, ६०)

(८०४-७) सूर्या सावित्री । ५०, ५३ त्रिष्टुप्, ५१ अनुष्टुप्, ६० पराऽनुष्टुप् ।

गृह्णामि ते सौभगत्वाय हस्तं मया पत्या जरदष्टिर्यथासः ।
 भगो अर्यमा सविता पुरंधिर्मह्यं त्वादुर्गाहपत्याय देवाः ५०
 भगस्ते हस्तमग्रहीत् सविता हस्तमग्रहीत् ।
 पत्नी त्वमसि धर्मेणाहं गृहपतिस्तव ५१ ८०५
 त्वष्टा वासो व्यदिधाच्छुभे कं बृहस्पतेः प्रशिषां कवीनाम् ।
 तेनेमां नारीं सविता भगश्च सूर्यामित्र परि धत्तां प्रजया ५३
 भगस्ततश्च चतुरः पादान् भगस्ततश्च चत्वार्युष्णलानि ।
 त्वष्टा पिपेश मध्यतोऽनु वर्धन्तसा नो अस्तु सुमङ्गली ६०

भग-सहचारी-देवगणः ।

(१) अंशः, भगः, वरुणः, मित्रः, अर्यमा, अदितिः, मरुतः ।

॥२३२॥ (अथर्व० ६।४।२)

(८०८) अथर्वी । प्रस्तारपङ्क्तिः ।

अंशो भगो वरुणो मित्रो अर्यमादितिः पान्तु मरुतः ।
 अप तस्य द्वेषो गमेदभिहुतो यावयच्छत्रुमन्तितम् २

(२) धाता, अर्यमा, भगः, अश्विनौ ।

॥२३३॥ (अथर्व० १४।१।१३)

(८०९) सूर्या सावित्री । त्रिष्टुप् ।

शिवा नारीयमस्तमागन्निमं धाता लोकमस्यै दिदेश ।
 तामर्यमा भगो अश्विनोभा प्रजापतिः प्रजया वर्धयन्तु १३ ८०९

[५] अर्यमा ।

॥२३४॥ (अथर्व० ६।६०।१-३)

(८१०-१२) अधर्वा । अनुष्टुप् ।

अर्यमा यात्यर्यमा पुरस्ताद् विषितस्तुपः । अस्या इच्छन्नग्नौ पतिमुत जायामजानये १ ८१०

अश्रमदियमर्यमन्न्यासां समनं यती । अङ्गो न्वर्यमन्नस्या अन्याः समनमार्यति २

धाता दाषार पृथिवीं धाता द्यामुत सूर्यम् ।

धाताऽस्या अग्नौ पतिं दधातु प्रतिकाम्यम् ३

॥२३५॥ (अथर्व० ११।६।४)

(८१३) शन्तातिः । अनुष्टुप् ।

गन्धर्वाप्सरसो ब्रूमो अश्विना ब्रह्मणस्पतिम् ।

अर्यमा नाम यो देवस्ते नो मुञ्चन्त्वंहसः ४

॥२३६॥ (अथर्व० १३।४।४)

(८१४-१६) ब्रह्मा । प्राजापत्याऽनुष्टुप् ।

सोऽर्यमा स वरुणः स रुद्रः स महादेवः ।

रश्मिभिर्नभ आभृतं महेन्द्र एत्यावृतः ४

अर्यमन्-सहचारी-देवगणः ।

(१) अर्यमा, पूषा, बृहस्पतिः, इन्द्रः ।

॥२३७॥ (अथर्व० ३।१४।२) अनुष्टुप् ।

सं वः सृजत्वर्यमा सं पूषा सं बृहस्पतिः ।

समिन्द्रो यो धनंजयो मरिं पुष्यत यदसु २ ८१५

(२) मित्रः, वरुणः, त्वष्टा, अर्यमा, महादेवः ।

॥२३८॥ (अथर्व० ९।७।७) त्रिपदा पिपालिकमध्या निचृद्रायत्री ।

मित्रश्च वरुणश्चासौ त्वष्टा चार्यमा च दोषणीं महादेवो वाहू ७

(३) अर्यमा, भगः, बृहस्पतिः, देवीः ।

॥२३९॥ (अथर्व० ३।२०।३)

(८१७) वसिष्ठः । अनुष्टुप् ।

प्र णो यच्छत्वर्यमा प्र भगः प्र बृहस्पतिः ।

प्र देवीः प्रोत सूनृता रयि देवी दधातु मे ३ ८१७

(७) विष्णुः ।

॥२४०॥ (ऋ० १।२२।१६-२१) +

(८१८-२३) मेधातिथिः काण्वः । गायत्री ।

| | |
|--|--------|
| अतो देवा अवन्तु नो यतो विष्णुर्विचक्रमे । पृथिव्याः सप्त धामभिः | १६ |
| इदं विष्णुर्वि चक्रमे त्रेधा नि दधे पदम् । समूहमस्य पांसुरे | १७ |
| त्रीणि पदा वि चक्रमे विष्णुर्गोपा अदाभ्यः । अतो धर्माणि धारयन् | १८ ८२० |
| विष्णोः कर्माणि पश्यत यतो व्रतानि पस्पशे । इन्द्रस्य युज्यः सखा | १९ |
| तद् विष्णोः परमं पदं सदा पश्यन्ति सूरयः । द्विविधं चक्षुराततम् | २० |
| तद् विप्रासो विपन्ववो जागृवांसः समिन्धते । विष्णोर्यत् परमं पदम् | २१ |

॥२४१॥ (ऋ० १।१५४।१-६) *

(८२४-३७) दीर्घतमा औचध्यः । त्रिष्टुप् ।

| | |
|--|-------|
| विष्णोर्नु कं वीर्याणि प्र वोचं यः पार्थिवानि विममे रजांसि । | |
| यो अस्कभायुदुत्तरं सधस्थं विचक्रममाणस्त्रेधोरुगायः | १ |
| प्र तद् विष्णुः स्तवते वीर्येण मृगो न भीमः कुचरो गिरिष्ठाः । | |
| यस्योरुषु त्रिषु विक्रमणे—प्वधिक्षियन्ति भुवनानि विश्वा | २ ८२५ |
| प्र विष्णवे शूषमेतु मन्म गिरिक्षित उरुगायाय वृष्णे । | |
| य इदं दीर्घं प्रयतं सधस्थ—मेको विममे त्रिभिरित् पदेभिः | ३ |
| यस्य त्री पूर्णा मधुना पदा—न्यक्षीयमाणा स्वधया मदन्ति । | |
| य उ त्रिधातुं पृथिवीमुत द्या—मेको दाधार भुवनानि विश्वा | ४ |
| तदस्य प्रियमभि पार्थो अश्यां नरो यत्र देवयवो मदन्ति । | |
| उरुक्रमस्य स हि बन्धुरित्था विष्णोः पदे परमे मध्व उत्सः | ५ |
| ता वां वास्तून्युश्मसि गर्मध्यै यत्र गावो भूरिशृङ्गा अयासः । | |
| अत्राह तदुरुगायस्य वृष्णः परमं पदमव भाति भूरि | ६ |

॥२४२॥ (ऋ० १।१५५।४-६) जगती ।

तत्तदिदस्य पौंस्यं गृणीमसी—नस्य त्रातुरवृकस्य मीळहुषः ।

यः पार्थिवानि त्रिभिरिद् विगामभि—रुरु कर्मिष्टोरुगायाय जीवसे ४ ८३०

+ ऋ० १।२२।१७-२१ = वा० य० ५, १५; ३४, ४३-४४; ६, ४-५; १३, ३३; अथर्व० ७, १६, ४-७; सा० २२२, १६६९-७४ ।

* ऋ० १।१५४।१-६ = वा० य० ५, १८, २०; ६, ३; अथर्व० ७ २६।१-२, ३ (प्रथमचरणः) ।

द्वे इदस्य क्रमणे स्वर्दशौ ऽभिख्याय मर्त्यौ भुरण्यति ।
 तृतीयमस्य नकिरा दधर्षति वयश्चन पतयन्तः पतत्रिणः ५
 चतुर्भिः साकं नवतिं च नामभि—श्चक्रं न वृत्तं व्यतीरवीविपत् ।
 बृहच्छरीरो विमिमान् ऋक्भि—र्युवाकुमारः प्रत्येत्याहवम् ६

॥२४३॥ (ऋ० १।१५६।१-५)

भवा मित्रो न शेव्यो घृतासुति—विभूतद्युम्न एवया उ सप्रथाः ।
 अधा ते विष्णो विदुषा चिदध्वः स्तोमो यज्ञश्च राध्यो हविष्मता १
 यः पूव्याय वेधसे नवीयसे सुमज्जानये विष्णवे ददाशति ।
 यो जातमस्य महतो महि ब्रवत् सेदु श्रवोभिर्युज्यं चिदभ्यसत् २
 तमु स्तोतारः पूव्यं यथा विद ऋतस्य गर्भं जनुषा पिपर्तन ।
 आस्यं जानन्तो नाम चिद् विवक्तन महस्ते विष्णो सुमतिं भजामहे ३ ८३५
 तमस्य राजा वरुणस्तमश्चिना क्रतुं सचन्त मारुतस्य वेधसः ।
 दाधार दक्षमुत्तममहर्विदं व्रजं च विष्णुः सखिवाँ अपोर्णते ४
 आ यो विवायं सचथाय दैव्य इन्द्राय विष्णुः सुकृते सुकृत्तरः ।
 वेधा अजिन्वत् त्रिषधस्थ आर्ये—मृतस्य भागे यजमानमामेजत् ५

॥२४४॥ (ऋ० ७।९९।१-३, ७)+

(८३८-४७) मैत्रावरुणिवृत्तिष्ठः । त्रिष्टुप् ।

परो माध्रया तन्वा वृधान न ते महित्वमन्वश्रुवन्ति ।
 उभे ते विन्न रजसी पृथिव्या विष्णो देव त्वं परमस्य वित्से १
 न ते विष्णो जार्यमानो न जातो देव महिम्नः परमन्तमाप ।
 उदस्तन्ना नार्कमुष्वं बृहन्तं दाधर्थं प्राचीं कुकुमं पृथिव्याः २
 इरावती धेनुमती हि भूतं सयवसिनी मनुषे दशस्या ।
 व्यस्तन्ना रोदसी विष्णवेते दाधर्थं पृथिवीमभितो मयूखैः ३
 वषट् ते विष्णवांस आ कृणोमि तन्मे जुषस्व शिपिविष्ट हव्यम् ।
 वर्धन्तु त्वा सुष्टुतयो गिरो मे यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ७ ८४१

॥२४५॥ (ऋ० ७।१००।१-६)

नू मर्तो दयते सन्निष्यन् यो विष्णव उरुगायाय दाशत् ।
 प्र यः सत्राचा मनसा यजात एतावन्तं नर्यमाविवासात् १
 त्वं विष्णो सुमतिं विश्वजन्या—मप्रयुतामेवयावो मतिं दाः ।
 पचो यथा नः सुवितस्य भूरे—रश्वावतः पुरुश्चन्द्रस्य रायः २
 त्रिदेवः पृथिवीमेष एतां वि चक्रमे शतर्चसं महित्वा ।
 प्र विष्णुरस्तु तवसस्तवीयान् त्वेषं ह्यस्य स्थविरस्य नाम ३
 वि चक्रमे पृथिवीमेष एतां क्षेत्राय विष्णुर्मनुषे दशस्यन् ।
 ध्रुवासो अस्य कीरयो जनास उरुक्षितिं सुजनिमा चकार ४ ८४५
 प्र तत् ते अद्य शिपिविष्ट नामा—ऽर्यः शंसामि वयुनानि विद्वान् ।
 तं त्वा गृणामि तवसमर्तव्यान् क्षयन्तमस्य रजसः पराके ५
 किमित् ते विष्णो परिचक्ष्ये भूत् प्र यद् ववक्षे शिपिविष्टो अस्मि ।
 मा वर्षो असदप गूह एतद् यदन्यरूपः समिथे बभूथ ६

॥२४६॥ (८४८-६०) (वा० य० १।२७,३०)

गायत्रेण त्वा छन्दसा परिगृह्णामि त्रैष्टुभेन त्वा छन्दसा परिगृह्णामि जागतेन
 त्वा छन्दसा परिगृह्णामि ।
 सुक्ष्मा चासि शिवा चासि स्योना चासि सुषदा चास्यूजस्वती चासि पर्यस्वती च २७
 अदित्यै रास्नासि विष्णोर्विष्णोऽस्यूजे त्वाऽदब्धेन त्वा चक्षुषावपश्यामि ।
 अग्नेर्जिह्वासि सुहृदेवेभ्यो धाम्ने धाम्ने मे भव यजुषे यजुषे ३०

॥२४७॥ (वा० य० २।६,८,२५)

ध्रुवा असदन्नृतस्य योनौ ता विष्णो पाहि पाहि यज्ञं पाहि यज्ञपतिं पाहि मां
 यज्ञन्यम् ६ ८५०
 अङ्घ्रिघ्ना विष्णो मा त्वावक्रमिषं वसुमतीमग्ने ते च्छायामुपस्थेपं विष्णो
 स्थानमसीत इन्द्रो वीर्यमकृणोदूर्ध्वोऽध्वर आस्थात् ८
 दिवि विष्णुर्व्यक्रःस्त जागतेन छन्दसा ततो निर्भक्तो योऽस्मान् द्वेष्टि यं च
 वयं द्विष्मोऽन्तरिक्षे विष्णुर्व्यक्रःस्त त्रैष्टुभेन छन्दसा ततो निर्भक्तो
 योऽस्मान् द्वेष्टि यं च वयं द्विष्मः पृथिव्यां विष्णुर्व्यक्रःस्त गायत्रेण
 छन्दसा ततो निर्भक्तो योऽस्मान् द्वेष्टि यं च वयं द्विष्मः २५ ८५१

॥२४८॥ (वा० य० ५।१, १९, २१, २३-२५, ३८) x

अग्नेस्तनूरांसि विष्णवे त्वा सोमस्य तनूरांसि विष्णवे त्वातिथेरातिथ्यमसि विष्णवे
त्वा इयेनाय त्वा सोमभृते विष्णवे त्वाऽग्नये त्वा रायस्पोषदे विष्णवे त्वा १
दिवो वा विष्ण उत वा पृथिव्या महो वा विष्ण उरोरन्तरिक्षात् ।

उभा हि हस्ता वसुना पृणस्वा प्रयच्छ दक्षिणादोत सव्याद् विष्णवे त्वा १९
विष्णो रराटमसि विष्णोः श्रघ्वे स्थो विष्णोः स्यूरसि विष्णोर्ध्रुवोऽसि ।

वैष्णवमसि विष्णवे त्वा २१ ८५५

रक्षोहणं वलगहनं वैष्णवीमिदमहं तं वलगमुत्किरामि यं मे निष्टयो यममात्यो
निचखानेदमहं तं वलगमुत्किरामि यं मे समानो यमसमानो निचखा-
नेदमहं तं वलगमुत्किरामि यं मे सन्धुर्यमसन्धुर्निचखानेदमहं तं
वलगमुत्किरामि यं मे सजातो यमसजातो निचखानोत्कृत्यां किरामि २३
स्वराडसि सपत्नहा सत्रराडस्यभिमातिहा जनराडसि रक्षोहा सर्वराडस्यमित्रहा २४

रक्षोहणो वो वलगहनः प्रोक्षामि वैष्णवान् रक्षोहणो वो वलगहनोऽवनयामि
वैष्णवान् रक्षोहणो वो वलगहनोऽवस्तृणामि वैष्णवान् रक्षोहणो वां
वलगहना उपदधाभि वैष्णवी रक्षोहणो वां वलगहनौ पर्युहामि वैष्णवी
वैष्णवमसि वैष्णवा स्थ २५

उरु विष्णो विक्रमस्वो क्षयाय नम्रकृधि ।
घृतं घृतयोने पिब प्रप्र यज्ञपतिं तिर स्वाहा ३८

॥२४९॥ (वा० य० ८।१)

उपयामग्रहीतोऽस्यादित्येभ्यस्त्वा ।

विष्ण उरुगायैष ते सोमस्त२ रक्षस्व मा त्वा दभन् १ ८६०

॥२५०॥ (अथर्व० ७।२६।१-३, ८)

विष्णोर्नु कं प्रा वोचं वीर्याणि यः पार्थिवानि विममे रजांसि ।

यो अस्कभायुदुत्तरं सधस्थं विचक्रमाणस्त्रेधोरुगायः १

प्र तद् विष्णु स्तवते वीर्याणि मृगो न भीमः कुचरो गिरिष्ठाः ।

परावत आ जगम्यात् परस्याः २ ८६२

यस्योरुषु त्रिषु विक्रमणेष्वधिक्षियन्ति भुवनानि विश्वा ।

उरु विष्णो वि क्रमस्वोरु क्षयाय नस्कृधि ।

घृतं घृतयोने पिव प्रप्र यज्ञपतिं तिर

३

दिवो विष्ण उत वा पृथिव्या महो विष्ण उरोरन्तरिक्षात् ।

हस्तौ पृणस्व बहुभिर्वसव्यैराप्रयच्छ दक्षिणादोत सव्यात्

८

॥२५१॥ (अथर्व० १०।५।२५-३५)

(८६५-७५) कौशिकः । व्यवसाना पटपदा यथाक्षरं शक्यतिशकरी ।

विष्णोः क्रमोऽसि सपत्नहा पृथिवीसंशितोऽग्नितेजाः ।

पृथिवीमनु वि क्रमेऽहं पृथिव्यास्तं निर्भजामो योरेऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मः ।

स मा जीवीत् तं प्राणो जहातु

२५ ८६५

विष्णोः क्रमोऽसि सपत्नहाऽन्तरिक्षसंशितो वायुतेजाः ।

अन्तरिक्षमनु वि क्रमेऽहमन्तरिक्षात् तं निर्भजामो० । स मा जीवीत् तं प्राणो० २६

विष्णोः क्रमोऽसि सपत्नहा द्यौसंशितः सूर्यतेजाः ।

दिवमनु वि क्रमेऽहं दिवस्तं निर्भजामो० । स मा जीवीत् तं प्राणो जहातु २७

विष्णोः क्रमोऽसि सपत्नहा दिक्संशितो मनस्तेजाः ।

दिशोऽनु वि क्रमेऽहं दिग्भ्यस्तं निर्भजामो० । स मा जीवीत् तं प्राणो० २८

विष्णोः क्रमोऽसि सपत्नहाऽऽशासंशितो वाततेजाः ।

आशा अनु वि क्रमेऽहमाशाभ्यस्तं निर्भजामो० । स मा जीवीत् तं प्राणो० २९

विष्णोः क्रमोऽसि सपत्नहा ऋक्संशितः सामतेजाः ।

ऋचोऽनु वि क्रमेऽहमृग्भ्यस्तं निर्भजामो० । स मा जीवीत् तं प्राणो जहातु ३० ८७०

विष्णोः क्रमोऽसि सपत्नहा यज्ञसंशितो ब्रह्मतेजाः ।

यज्ञमनु वि क्रमेऽहं यज्ञात् तं निर्भजामो० । स मा जीवीत् तं प्राणो जहातु ३१

विष्णोः क्रमोऽसि सपत्नहौषधीसंशितः सोमतेजाः ।

ओषधीरनु वि क्रमेऽहमोषधीभ्यस्तं निर्भजामो० । स मा जीवीत् तं प्राणो० ३२

विष्णोः क्रमोऽसि सपत्नहाप्सुसंशितो वरुणतेजाः ।

अपोऽनु वि क्रमेऽहमप्यस्तं निर्भजामो० । स मा जीवीत् तं प्राणो जहातु ३३

विष्णोः क्रमोऽसि सपत्नहा कृषिसंशितोऽन्नतेजाः ।

कृषिमनु वि क्रमेऽहं कृष्यास्तं निर्भजामो० । स मा जीवीत् तं प्राणो जहातु ३४ ८७४

विष्णोः क्रमोऽसि सपत्नहा प्राणसंशितः पुरुषतेजाः ।

प्राणमनु वि क्रमेऽहं प्राणात् तं निर्भजामो० । स मा जीवीत् तं प्राणो जहातु ३५ ८७५
विष्णु-सहचारी-देवगणः ।

(१) विष्णु-त्वष्ट-प्रजापति-धातारः ।

॥२५२॥ (ऋ० १०।१८४।१)+

(८७६) त्वष्टा गर्भकर्ता, विष्णुर्वा प्राजापत्यः । अनुष्टुप् ।

विष्णुर्योनिं कल्पयतु त्वष्टा रूपाणि पिशतु ।

आ सिञ्चतु प्रजापति-धाता गर्भं दधातु ते

१

(२) विष्णुर्वरुणश्च ।

॥२५३॥ (८७७) (वा० य० ८।५९)×

ययोरोजसा स्कभिता रजांसि वीर्येभिर्वीरतमा शर्विष्ठा ।

या पत्येते अप्रतीता सहोभिर्विष्णुं अगन्वरुणा पूर्वहूतौ

५९

॥२५४॥ (अथर्व० ७।२५।२)

(८७८) मेधातिथिः । त्रिष्टुप् ।

यस्येदं प्रदिशि यद् विरोचते प्र चानति वि च चष्टे शचीभिः ।

पुरा देवस्य धर्मणा सहोभिर्विष्णुं अगन्वरुणं पूर्वहूतिः

२

(८) विवस्वान् ।

॥२५५॥ (८७९) (वा० य० २२।३०)

विवस्वते स्वाहा

३०

॥२५६॥ (अथर्व० ६।११६।१-३)*

(८८०-८२) जाटिकायनः । जगती, २ त्रिष्टुप् ।

यद् ग्रामं चक्रुर्निखनन्तो अग्रे कार्षीवणा अन्नविदो न विद्यया ।

वैवस्वते राजन्ति तज्जुहोम्यथ यज्ञियं मधुमदस्तु नोऽन्नम्

१ ८८०

वैवस्वतः कृणवद् भागधेयं मधुभागो मधुना सं सृजाति ।

मातुर्यदेन इषितं न आगन् यद् वा पितापराद्धो जिहीडे

२

यदीदं मातुर्यदि वा पितुर्नः परि भ्रातुः पुत्राच्चेतस एन आगन् ।

यावन्तो अस्मान् पितरः सचन्ते तेषां सर्वेषां शिवो अस्तु मन्युः

३ ८८२



(९) संवत्सरः कालः ।

॥२५७॥ (ऋ० १।१६४।४८)

(८८३) दीर्घतमा औचथ्यः । त्रिष्टुप् ।

द्वादश प्रधयश्चक्रमेकं त्रीणि नभ्यानि क उ तर्चिकेत ।
तस्मिन्त्साकं त्रिशता न शङ्कवो ऽर्पिताः षष्टिर्न चलाचलासः

४८

॥२५८॥ [८८४-८६] (वा० य० २१।२८)

संवत्सराय स्वाहा

२८

॥२५९॥ (वा० य० २७।४५)

संवत्सरोऽसि परिवत्सरोऽसीदावत्सरोऽसीद्वत्सरोऽसि वत्सरोऽसि ।
उषसस्ते कल्पन्तामहोरात्रास्ते कल्पन्तामर्धमासास्ते कल्पन्तां मासास्ते
कल्पन्तामृतवस्ते कल्पन्तां संवत्सरस्ते कल्पताम् ।

प्रेत्या एत्यै सं चाञ्च प्र च सारय ।

सुपर्णचिदसि तथा देवतयाङ्गिरस्वद् ध्रुवः सीद

४५

८८५

॥२६०॥ (वा० य० ३०।१५)

संवत्सराय पर्यायिणी परिवत्सरायाविजातामिदावत्सरायातीत्वरीमिद्वत्सराया-
तिष्कद्वरी वत्सराय विजर्जरां संवत्सराय पलिकनीम्

१५

॥२६१॥ (अथर्व० ३।१०।८)

(८८६-८९) अथर्व । अनुष्टुप् ।

आयमगन्तसंवत्सरः पतिरेकाष्टके तव ।

सा न आयुष्मतीं प्रजां रायस्पोषेण सं सृज

८

॥२६२॥ (अथर्व० ४।१५।१३) x

संवत्सरं शशयाना ब्राह्मणा व्रतचारिणः ।

वाचं पर्जन्यजिन्वितां प्र मण्डूका अवादिषुः

१३

॥२६३॥ (अथर्व० ११।७।१८)

समृद्धिरोज आकूतिः क्षत्रं राष्ट्रं षडुर्व्यः ।

संवत्सरोऽध्युच्छिष्ट इडा प्रैषा ग्रहा हविः

१८

॥२६४॥ (अथर्व० १५।३।१) पिपीलिकमध्या गायत्री ।

स संवत्सरमूर्ध्वोऽतिष्ठत् तं देवा अब्रुवन् व्रात्य किं नु तिष्ठसीति

१

८९०

॥२६५॥ (अथर्व० ११।५।२०)

(८९१) ब्रह्मा । अनुष्टुप् ।

ओषधयो भूतभव्यमहोरात्रे वनस्पतिः ।

संवत्सरः सहर्तुभिस्ते जाता ब्रह्मचारिणः

२०

॥२६६॥ (अथर्व० १९।५३।१-१०)

(८९२-९०६) भृगुः । अनुष्टुप्; १-४ त्रिष्टुप्; ५ निचृत् पुरस्ताद्गृहती ।

कालो अश्वो वहति सप्तारिभिः सहस्राश्वो अजरो भूरिरेताः ।

तमा रोहन्ति कवयो विपश्चितस्तस्य चक्रा भुवनानि विश्वा

१

सप्त चक्रान् वहति काल एष सप्तास्य नाभीरमृतं न्वक्षः ।

स इमा विश्वा भुवनान्यञ्जत् कालः स ईयते प्रथमो नु देवः

२

पूर्णः कुम्भोऽधि काल आहितस्तं वै पश्यामो बहुधा नु सन्तः ।

स इमा विश्वा भुवनानि प्रत्यङ्कालं तमाहुः परमे व्योमिन्

३

स एव सं भुवनान्याभरत् स एव सं भुवनानि पर्यैत् ।

पिता सन्नभवत् पुत्र एषां तस्माद् वै नान्यत् परमास्ति तेजः

४

८९५

कालोऽमृं दिवमजनयत् काल इमाः पृथिवीरुत् ।

काले ह भूतं भव्यं चेष्टितं ह वि तिष्ठते

५

कालो भूतिमसृजत् काले तपति सूर्यः ।

काले ह विश्वा भूतानि काले चक्षुर्वि पश्यति

६

काले मनः काले प्राणः काले नाम समाहितम् ।

कालेन सर्वा नन्दन्त्यागतेन प्रजा इमाः

७

काले तपः काले ज्येष्ठं काले ब्रह्म समाहितम् ।

कालो ह सर्वस्येश्वरो यः पिताऽऽसीत् प्रजापतेः

८

तेनेष्टितं तेन जातं तदु तस्मिन् प्रतिष्ठितम् ।

कालो ह ब्रह्म भूत्वा बिभर्ति परमेष्ठिनम्

९

कालः प्रजा असृजत् कालो अग्रे प्रजापतिम् ।

स्वयंभूः कश्यपः कालात् तपः कालादजायत

१०

९०१

॥२६७॥ (अथर्व० १९।५४।१-५)

अनुष्टुप्, २ त्रिपदाऽऽर्षी गायत्री; ५ ज्यवसाना षट्पदा विराडिति ।

| | |
|--|-------|
| कालादापः समभवन् कालाद् ब्रह्म तपो दिशः । | |
| कालेनोदेति सूर्यः काले नि विशते पुनः | १ |
| कालेन वारतः पवते कालेन पृथिवी मही । द्यौर्मही काल आहिता | २ |
| कालो ह भूतं भव्यं च पुत्रो अजनयत् पुरा । | |
| कालादृचः समभवन् यजुः कालादजायत | ३ |
| कालो यज्ञं समैरयद् देवेभ्यो भागमक्षितम् । | |
| काले गन्धर्वाप्सरसः काले लोकाः प्रतिष्ठिताः | ४ ९०५ |
| कालेऽयमङ्गिरा देवोऽथर्वा चार्धि तिष्ठतः । | |
| इमं च लोकं परमं च लोकं पुण्यांश्च लोकान् विधृतीश्च पुण्याः । | |
| सर्वलोकानभिजित्य ब्रह्मणा कालः स ईयते परमो नु देवः | ५ |

(१०) ऋतवः ।

॥२६८॥ (ऋ० १।१५।१-१२)+

(९०७-१८) मेधातिथिः काण्वः । [ऋतुदेवताः= १ इन्द्रः, २ मरुतः, ३ त्वष्टा, ४ अग्निः, ५ इन्द्रः,
६ मित्रावरुणौ, ७-१० द्रविणोदाः, ११ अश्विनौ, १२ अग्निः] । गायत्री ।

| | |
|---|--------|
| इन्द्र सोमं पिबं ऋतुना ऽऽ त्वां विशन्तिवन्देवः । मत्सरासस्तदौकसः | १ |
| मरुतः पिबन्त ऋतुना पोत्राद् यज्ञं पुनीतन । यूयं हि ष्ठा सुदानवः | २ |
| अभि यज्ञं गृणीहि नो ग्रावो नेष्टः पिबं ऋतुना । त्वं हि रत्नधा असि | ३ |
| अग्ने देवा इहा वह सादया योनिषु त्रिषु । परिं भूष पिबं ऋतुना | ४ ९१० |
| ब्राह्मणादिन्द्र राधसः पिवा सोममृतैरनु । तवेद्वि सख्यमस्तृतम् | ५ |
| युवं दक्षं धृतव्रत मित्रावरुण दूळभम् । ऋतुना यज्ञमाशाये | ६ |
| द्रविणोदा द्रविणसो ग्रावहस्तासो अध्वरे । यज्ञेषु देवमीळते | ७ |
| द्रविणोदा ददातु नो वसूनि यानि शृण्विरे । देवेषु ता वनामहे | ८ |
| द्रविणोदाः पिपीषति जुहोत प्र च तिष्ठत । नेष्टादृतुभिरिष्यत | ९ |
| यत् त्वां तुरीयमृतुभिर्द्रविणोदो यजामहे । अर्धं स्मा नो दृदिर्भव | १० ९१६ |

| | |
|---|----|
| अभिना पिवतं मधु दीर्घग्री शुचित्रता । ऋतुना यज्ञवाहसा | ११ |
| गार्हपत्येन सन्त्य ऋतुना यज्ञनीरसि । देवान् देवयते यज | १२ |

॥२६९॥ (ऋ० २।३६।१-६) :

(९१९-३०) गृत्समद (आङ्गिरसः शौनहोत्रः पश्चाद्) भार्गवः शौनकः । [ऋतुदेवताः-१ इन्द्रो मधुश्च, २ मरुतो माधवश्च, ३ त्वष्टा शुक्रश्च, ४ अग्निः शुचिश्च, ५ इन्द्रो नभश्च, ६ मित्रावरुणौ नभस्यश्च । जगती ।

| | |
|---|-------|
| तुभ्यं हिन्वानो वसिष्ठ गा अपो ऽधुक्षन्त्सीमविभिरद्रिभिर्नरः । | |
| पिवेन्द्र स्वाहा प्रहुतं वषट्कृतं होत्रादा सोमं प्रथमो य ईशिषे | १ |
| यज्ञैः संमिश्राः पृषतीभिर्ऋष्टिभिर्—र्यामच्छुभ्रासो अञ्जिषु प्रिया उत । | |
| आसद्या बर्हिर्भरतस्य सूनवः पोत्रादा सोमं पिवता दिवो नरः | २ ९१० |
| अमेव नः सुहवा आ हि गन्तं नि बर्हिषि सदतना रणिष्ठन । | |
| अथा मन्दस्व जुजुषाणो अन्धसु—स्त्वष्टदेवेभिर्जनिभिः सुमद्रणः | ३ |
| आ वक्षि देवा इह विप्र यक्षि चो—शन् होतर्निषदा योनिषु त्रिषु । | |
| प्रति वीहि प्रस्थितं सोम्यं मधु पिवाग्नीध्रात् तव भागस्य तृष्णुहि | ४ |
| एष स्य ते तन्वो नृम्णवर्धनः सह ओजः प्रदिवि बाह्वोर्हितः । | |
| तुभ्यं सुतो मधवन् तुभ्यमामृत—स्त्वमस्य ब्राह्मणादा तुपत् पिब | ५ |
| जुषेथा यज्ञं बोधतं हवस्य मे सत्तो होता निविदः पूर्या अनु । | |
| अच्छा राजाना नम एत्यावृतं प्रशास्त्रादा पिवतं सोम्यं मधु | ६ |

॥२७०॥ (अथर्व० २।३७।१-६) ×

[ऋतुदेवताः-१-४ द्रविणोदा ऋतवश्च, ५ अश्विनौ, ६ अग्निः ऋतुश्च]

| | |
|--|-------|
| मन्दस्व होत्रादनु जोषमन्धसो ऽध्वर्यवः स पूर्णा वष्ट्यासिचम् । | |
| तस्मा एतं भरत तद्वशो ददि—होत्रात् सोमं द्रविणोदुः पिब ऋतुभिः | १ ९१५ |
| यमु पूर्वमहुवे तमिदं हुवे सेदु हव्यो ददियो नाम पत्यते । | |
| अध्वर्युभिः प्रस्थितं सोम्यं मधु पोत्रात् सोमं द्रविणोदुः पिब ऋतुभिः | २ |
| मेघन्तु ते वह्नयो येभिरियसे ऽरिषण्यन् वीळयस्वा वनस्पते । | |
| आयूया धृष्णो अभिगूर्या त्वं नेष्ट्रात् सोमं द्रविणोदुः पिब ऋतुभिः | ३ |
| अपाद्दोत्रादुत पोत्रादमत्तो—त नेष्ट्रादजुषत प्रयो हितम् । | |
| तुरीयं पात्रममृक्तममर्त्य द्रविणोदाः पिवतु द्रविणोदुसः | ४ ९१८ |

अर्वाश्चमद्य यरथं नृवाहणं रथं युञ्जाथामिह वां विमोचनम् ।
 पृङ्क्त हवींषि मधुना हि कं गतमथा सोमं पिबतं वाजिनीवस्र ५
 जोष्यमे समिधं जोष्याहुतिं जोषि ब्रह्म जन्यं जोषि सुष्टुतिम् ।
 विश्वेभिर्विश्वाँ ऋतुना वसो मह उशन् देवाँ उशतः पायया हविः ६ ९३०

॥२७१॥ [९३१-४८] (वा० य० ७।३०)

उपयामगृहीतोऽसि मधवे त्वोपयामगृहीतोऽसि माधवाय त्वोपयामगृहीतोऽसि
 शुक्राय त्वोपयामगृहीतोऽसि शुचये त्वोपयामगृहीतोऽसि नभसे त्वोपयाम-
 गृहीतोऽसि नभस्याय त्वोपयामगृहीतोऽसीषे त्वोपयामगृहीतोऽस्यूर्जे त्वोप-
 यामगृहीतोऽसि सहसे त्वोपयामगृहीतोऽसि सहस्याय त्वोपयामगृहीतोऽसि
 तपसे त्वोपयामगृहीतोऽसि तपस्याय त्वोपयामगृहीतोऽस्यः सहसस्पतये त्वा ३०

॥२७२॥ (वा० य० १३।२५)

मधुश्च माधवश्च वासन्तिकावृतू अग्रेरन्तःश्रेष्ठोऽसि कल्पेतां द्यावापृथिवी
 कल्पन्तामाप ओषधयः कल्पन्तामग्नयः पृथङ् मम ज्यैष्ठ्याय सव्रताः ।
 ये अग्नयः समनसोऽन्तरा द्यावापृथिवी इमे ।
 वासन्तिकावृतू अभिकल्पमाना इन्द्रमिव देवा अभिसंविशन्तु तया
 देवतयाङ्गिरस्वद् भुवे सीदतम् २५

॥२७३॥ (वा० य० १४।६, १५-१६, २७, २९)

शुक्रश्च शुचिश्च ग्रैष्मावृतू अग्रेरन्तः० ।०। ग्रैष्मावृतू अभिकल्पमाना० ६
 नभश्च नभस्यश्च वार्षिकावृतू अग्रेरन्तः० ।०। वार्षिकावृतू अभिकल्पमाना० १५
 इषश्चोर्जश्च शारदावृतू अग्रेरन्तः० ।०। शारदावृतू अभिकल्पमाना० १६ ९३५
 सहश्च सहस्यश्च हैमन्तिकावृतू अग्रेरन्तः० ।०। हैमन्तिकावृतू अभिकल्पमाना० २७
 एकादशभिस्तुवत ऋतवोऽसृज्यन्तार्तवा अधिपतय आसन् २९

॥२७४॥ (वा० य० १५।५७)

तपश्च तपस्यश्च शैशिरावृतू अग्रेरन्तः० ।०। शैशिरावृतू अभिकल्पमाना० ५७

॥२७५॥ (वा० य० १७।३)

ऋतव स्थ ऋतावृधे ऋतुष्ठा स्थ ऋतावृधः ।
 घृतश्रुतो मधुश्रुतो विराजो नाम कामदुघा अक्षीयमाणाः ३ ९३९

॥२७६॥ (वा० य० २१।२३-२८)

वसन्तेन ऋतुना देवा वसवस्त्रिष्टुताः स्तुताः ।

रथन्तरेण तेजसा हविरिन्द्रे वयो दधुः

२३ ९४०

ग्रीष्मेण ऋतुना देवा रुद्राः पञ्चदशे स्तुताः ।

बृहता यशसा बलं हविरिन्द्रे वयो दधुः

२४

वर्षाभिर्ऋतुनादित्या स्तोमे सप्तदशे स्तुताः ।

वैरूपेण विशौजसा हविरिन्द्रे वयो दधुः

२५

शारदेन ऋतुना देवा एकविंश ऋभवं स्तुताः ।

वैराजेन श्रिया श्रियं हविरिन्द्रे वयो दधुः

२६

हेमन्तेन ऋतुना देवास्त्रिणवे मरुतं स्तुताः ।

बलेन शक्वरीः सहो हविरिन्द्रे वयो दधुः

२७

शैशिरिण ऋतुना देवास्त्रयस्त्रिंशेऽमृताः स्तुताः ।

सत्येन रेवतीः क्षत्रं हविरिन्द्रे वयो दधुः

२८ ९४५

॥२७७॥ (वा० य० २२।२८)

ऋतुभ्यः स्वाहाऽऽर्तवेभ्यः स्वाहा

२८

॥२७८॥ (वा० य० २३।४०)

ऋतवस्त ऋतुथा पर्वं शमितारो वि शंसतु ।

संवत्सरस्य तेजसा शमीभिः शम्यन्तु त्वा

४०

॥२७९॥ (वा० य० २६।१४)

ऋतवस्ते यज्ञं वि तन्वन्तु मासां रक्षन्तु ते हविः ।

संवत्सरस्ते यज्ञं दधातु नः प्रजां च परि पातु नः

१४

॥२८०॥ (अथर्व० ३।१०।९)

(९४९-६४) अथर्वा । अनुष्टुप् ।

ऋतून् यज ऋतुपतीनार्तवानुत हायनान् ।

समाः संवत्सरान् मासान् भूतस्य पतये यजे

९

॥२८१॥ (अथर्व० ५।२८।१३) पुरजणिक् ।

ऋतुभिर्ध्वार्तवैरायुषे वर्चसे त्वा ।

संवत्सरस्य तेजसा तेन संहनु कृण्वसि

१३ ९५०

॥२८२॥ (अथर्व० ११।३।१७) आसुर्यनुष्टुप् ।

ऋतवः प॒क्तारं आ॒र्तवाः स॒मिन्धते १७

॥२८३॥ (अथर्व० १५।३।४) द्विपदाऽऽच्युष्णिक् ।

तस्या॑ ग्री॒ष्मश्च॑ व॒सन्तश्च॑ द्वौ पा॒दावास्तां॑ श॒रच्च॑ व॒र्षाश्च॑ द्वौ ४

॥२८४॥ (अथर्व० १५।४।२-३, ५-६, ८-९, ११-१२, १४-१५, १७-१८)

वा॒सन्तौ मा॒सौ गो॒प्तारा॒वकुर्वन्॑ बृ॒हच्च॑ रथं॒तरं चा॒नुष्ठा॒तारौ॑ २

वा॒सन्तावे॒नं मा॒सौ प्रा॒च्या दि॒शो गो॒पायतो॑ बृ॒हच्च॑ रथं॒तरं चानु॑ तिष्ठतो

य ए॒वं वेद॑ ३

ग्री॒ष्मौ मा॒सौ गो॒प्तारा॒वकुर्वन्॑ य॒ज्ञाय॒ज्ञियं॑ च॒ वाम॑दे॒व्यं चा॒नुष्ठा॒तारौ॑ ५ ९५५

ग्री॒ष्मावे॒नं मा॒सौ दक्षि॑णाया दि॒शो गो॒पायतो॑ य॒ज्ञाय॒ज्ञियं॑ च॒ वाम॑दे॒व्यं

चानु॑ तिष्ठतो य ए॒वं वेद॑ ६

वा॒र्षिकौ मा॒सौ गो॒प्तारा॒वकुर्वन्॑ वै॒रूपं॑ च॒ वैरा॒जं चा॒नुष्ठा॒तारौ॑ ८

वा॒र्षिका॒वेनं॑ मा॒सौ प्र॒तीच्या॑ दि॒शो गो॒पायतो॑ वै॒रूपं॑ च॒ वैरा॒जं चानु॑ तिष्ठतो

य ए॒वं वेद॑ ९

शा॒रदौ मा॒सौ गो॒प्तारा॒वकुर्वन्॑ छ॒यैतं॑ च॒ नौध॒सं चा॒नुष्ठा॒तारौ॑ ११

शा॒रदा॒वेनं॑ मा॒सावुदी॑क्षा दि॒शो गो॒पायतो॑ इ॒यैतं॑ च॒ नौध॒सं चानु॑ तिष्ठतो

य ए॒वं वेद॑ १२ ९६०

है॒मनौ मा॒सौ गो॒प्तारा॒वकुर्वन्॑ भू॒मिं चा॒ग्निं चा॒नुष्ठा॒तारौ॑ १४

है॒मना॒वेनं॑ मा॒सौ ध्रु॒वाया॑ दि॒शो गो॒पायतो॑ भू॒मिश्चा॒ग्निश्चानु॑ तिष्ठतो य ए॒वं वेद॑ १५

शै॒शिरौ मा॒सौ गो॒प्तारा॒वकुर्वन्॑ दि॒वं चा॒दित्यं॑ चा॒नुष्ठा॒तारौ॑ १७

शै॒शिरा॒वेनं॑ मा॒सावधू॒र्वाया॑ दि॒शो गो॒पायतो॑ द्यौश्चा॒दित्यश्चानु॑ तिष्ठतो य ए॒वं वेद॑ १८

॥२८५॥ (अथर्व० १०।६।१८)

(९६५) बृहस्पतिः । अनुष्टुप् ।

ऋत॒वस्त॒मव॒धत्ता॒र्तवास्त॒मव॒धत । सं॒वत्स॒रस्तं॑ ब॒द्ध्वा स॒र्वं भूतं॑ वि र॒क्षति १८

॥२८६॥ (अथर्व० ११।४।४)

(९६६) भार्गवो वैदर्भिः । अनुष्टुप् ।

यत् प्रा॒ण ऋ॒तावा॒गतेऽभि॒क्रन्द॒त्योष॑धीः ।

स॒र्वं त॒दा प्र मो॑दते॒ यत् किं॑ च॒ भूम्या॒मधि॑

॥२८७॥ (अथर्व० ११।६।१७, २२)

(९६७-६८) शन्तातिः । अनुष्टुप् ।

ऋतून् ब्रूम ऋतुपतीनार्तवानुत हायनान् ।

समाः संवत्सरान् मासांस्ते नो मुञ्चन्त्वंहसः

१७

या देवीः पञ्च प्रदिशो ये देवा द्वादशर्तवः ।

संवत्सरस्य ये दंष्ट्रास्ते नः सन्तु सदा शिवाः ।

२२

॥२८८॥ (अथर्व० ११।१।३६)

(९६९) अथर्वा । विपरीत पादलक्ष्मा पङ्क्तिः ।

ग्रीष्मस्ते भूमे वर्षाणि शरद्धेमन्तः शिशिरो वसन्तः ।

ऋतवस्ते विहिता हायनीरहोरात्रे पृथिवि नो दुहाताम्

३६

॥२८९॥ (अथर्व० १६।८।२१)

(९७०) यमः । आसुरी पङ्क्तिः ।

स आर्तवानां पाशान्मा मौचि

२१ ९७०

॥२९०॥ (अथर्व० १७।१।२९)

(९७१) ब्रह्मा । त्रिष्टुप् ।

ऋतेन गुप्त ऋतुभिश्च सर्वैर्भूतेन गुप्तो भव्येन चाहम् ।

मा मा प्रापत् पाप्मा मोत मृत्युरन्तर्दधेऽहं संलिलेन वाचः

२९

(११) चन्द्रमाः ।×

॥२९१॥ (ऋ० १०।८५।१९)✱

(९७२) सावित्री सूर्या ऋषिका । त्रिष्टुप् ।

नवोनवो भवति जायमानो ऽह्नां केतुरुपसाभित्यग्रम् ।

भागं देवेभ्यो वि दधात्यायन् प्र चन्द्रमास्तिरते दीर्घमायुः

१९

॥२९२॥ (ऋ० १०।९०।१३)+

(९७३) नारायणः । अनुष्टुप् ।

चन्द्रमा मनसो जातश्चक्षोः सूर्यो अजायत ।

मुखादिन्द्रश्चाग्निश्च प्राणाद् वायुरजायत

१३

॥२९३॥ [९७४-७९] (वा० य० १।२८)

पुरा क्रूरस्य विसृपो विरणिन्नुदादार्य पृथिवीं जीवदानुम् ।

यामैर्यश्चन्द्रमसि स्वधाभिस्तामु धीरासो अनुदिश्य यजन्ते

२८ ९७४

✱ दै० [आयुर्वेद०] ६-७, ३९, ६८, ७१, ८८, ९१, ११६, १२३, १५४, २३२, २४५, २६८, २७४, ३१२ सूक्तानि द्रष्टव्यानि ।

✱ अथर्व० ७, ८१, २; १४, १, २४; + अथर्व० १९, ६, ७ ।

दै० [अदितिः०] ११

॥२९४॥

चन्द्राय स्वाहा (वा० य० २१।२८) चन्द्रमसे किलासम् । (वा० य० ३०।२१) २८ ९७५

॥२९५॥ (वा० य० २३।४, १०)

एष ते योनिश्चन्द्रमास्ते महिमा ।

यस्ते नक्षत्रेषु चन्द्रमसि महिमा संवभूव तस्मै ते महिम्ने प्रजापतये देवेभ्यः स्वाहा ४

सूर्य एकाकी चरति चन्द्रमा जायते पुनः ।

अग्निर्हिमस्य भेषजं भूमिरावर्पणं महत् १०

॥२९६॥ (वा० य० ३१।१२)

चन्द्रमा मनसो जातश्चक्षोः सूर्यो अजायत ।

श्रोत्राद् वायुश्च प्राणश्च मुखाद्ग्निरजायत १२

॥२९७॥ (वा० य० ३३।९०)

चन्द्रमा अप्सवृन्तरा सुपर्णो धावते दिवि ।

रथि पिशङ्गं बहुलं पुरुस्पृहं हरिरेति कनिकदत् ९०

॥२९८॥ (अथर्व० १।३।४)

(९८०-९०) अथर्वा । पथ्यापङ्क्तिः ।

विद्वा शरस्य पितरं चन्द्रं शतवृण्यम् ।

तेना ते तन्वेरे शं करं पृथिव्यां ते निपेचनं बहिष्ठे अस्तु बालिति ४ ९८०

॥२९९॥ (अथर्व० २।२१।१-५)

(एकावसानम्) १-४ निचृद्विपमा गायत्री, ५ भुरिग्विपमा ।

चन्द्र यत् ते तपस्तेन तं प्रति तप योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मः १

चन्द्र यत् ते हरस्तेन तं प्रति हर योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मः २

चन्द्र यत् तेऽर्चिस्तेन तं प्रत्यर्च योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मः ३

चन्द्र यत् ते शोचिस्तेन तं प्रति शोच योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मः ४

चन्द्र यत् ते तेजस्तेन तमतेजसं कृणु योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मः ५

॥३००॥ (अथर्व० ५।२४।१०) चतुष्पदातिशकरी ।

चन्द्रमा नक्षत्राणामधिपतिः स मावतु ।

अस्मिन् ब्रह्मण्यस्मिन् कर्मण्यस्यां पुरोधायामस्यां प्रतिष्ठायामस्यां

चिन्त्यामस्यामाकृत्यामस्यामाशिष्यस्यां देवहृत्यां स्वाहा

१० ९८४

॥३०१॥ (अथर्व० ६।७।१-२) अनुष्टुप् ।

तेन भूतेन हविषायमा प्यायतां पुनः ।

ज्यायां यामस्मा आवाक्षुस्तां रसेनाभि वर्धताम् १

अभि वर्धतां पर्यसाभि राष्ट्रेण वर्धताम् । रय्या महसर्वचसेमौ स्तामनुपक्षितौ २

॥३०२॥ (अथर्व० १८।४।८९) पञ्चपदा पथ्यापङ्क्तिः । X

चन्द्रमा अप्व१न्तरा सुपर्णो धावते दिवि ।

न वो हिरण्यनेमयः पदं विन्दन्ति विद्युतो वित्तं मे अस्य रोदसी ८९

॥३०३॥ (अथर्व० १९।१९।४) अनुष्टुप् ।

चन्द्रमा नक्षत्रैरुदक्रामत् तां पुरं प्र णयामि वः ।

तामा विशत तां प्र विशत सा वुः शर्म च वर्म च यच्छत ४ ९९०

॥३०४॥ (अथर्व० ११।६।७)

(९९१) शन्तातिः । अनुष्टुप् ।

मुञ्चन्तु मा शपथ्यादिहोरात्रे अथो उषाः ।

सोमो मा देवो मुञ्चतु यमाहुश्चन्द्रमा इति ७

॥३०५॥ (अथर्व० १९।२७।२, ५)

(९९२-९३) भृग्वङ्गिराः । अनुष्टुप् ।

सोमस्त्वा पात्वोषधीभिर्नक्षत्रैः पातु सूर्यः ।

माद्भ्यस्त्वा चन्द्रो वृत्रहा वातः प्राणेन रक्षतु २

घृतेन त्वा समुक्षाम्यन् आज्येन वर्धयन् ।

अग्नेश्चन्द्रस्य सूर्यस्य मा प्राणं मायिनो दभन् ५

॥३०६॥ (अथर्व० १९।४३।४)

(९९४) ब्रह्मा । इयवसाना शङ्कुमती पथ्यापङ्क्तिः ।

यत्र ब्रह्मविदो यान्ति दीक्षया तर्पसा सह । चन्द्रो मा तत्र नयतु मनश्चन्द्रो दधातु मे ४

चन्द्रमा-सहचारी-देवगणः ।

(१) सूर्यः चन्द्रश्च ।

॥३०७॥ (अथर्व० १।१५।३)

(९९५-९६) ब्रह्मा । त्रिपाद् गायत्री ।

यथा सूर्यश्च चन्द्रश्च न विभीतो न रिष्यतः । एवा मे प्राण मा विभेः ३ ९९५

॥३१३॥ (ऋ० १०।१०।९)

(१००९) वैवस्वतो यमः ऋषिः । त्रिष्टुप् ।

रात्रीभिरस्मा अहभिर्दशस्येत् सूर्यस्य चक्षुर्महुरुन्मिमीयात् ।

दिवा पृथिव्या मिथुना सबन्धू यमीर्यमस्य विभृयादजामि

९

॥३१४॥ (ऋ० १०।१२।१-८)

(१००३-१०१०) कुशिकः सौभरः, रात्रिर्वा भारद्वाजी । गायत्री ।

रात्री व्यख्यदायती पुरुत्रा देव्युक्षभिः । विश्वा अधि त्रियोऽधित १

ओर्वेप्रा अमर्त्या निवतो देव्युद्धतः । ज्योतिषा बाधते तमः २

निरु स्वसारमस्कृतो—पसं देव्यायती । अपेदु हासते तमः ३ १००५

सा नो अद्य यस्या वयं नि ते यामन्नविक्षमहि । वृक्षे न वसति वयः ४

नि ग्रामासो अविक्षत नि पद्वन्तो नि पक्षिणः । नि श्येनासश्चिदर्थिनः ५

यावया वृक्यं वृकं यवय स्तेनमूर्म्ये । अथा नः सुतरा भव ६

उप मा पेपिशत् तमः कृष्णं व्यक्तमास्थित । उप ऋणेव यातय ७

उप ते गा ह्वाकं वृणीष्व दुहितर्दिवः । रात्रि स्तोमं न जिगृपे ८ १०१०

॥३१५॥ [१०११-१६] (वा० य० ३।१८)

चित्रावसो स्वस्ति ते पारमशीय १८

॥३१६॥ (वा० य० २३।१२)*

घौरासीत् पूर्वचित्तिरश्च आसीद् बृहद्वयः ।

अविरासीत् पिलिप्पिला रात्रिरासीत् पिशङ्गिला १२

॥३१७॥ (वा० य० २४।२५)

अह्ने पारावतानालभते रात्र्यै सीचापूरहोरात्रयोः सन्धिभ्यो

जतूर्मासेभ्यो दात्यौहान्तसंवत्सराय महतः सुपर्णान् २५

॥३१८॥ (वा० य० ३०।२१)

रात्र्यै कृष्णं पिङ्गाक्षम् २१

॥३१९॥ (वा० य० ३४।३२)*

आ रात्रि पार्थिव रजः पितुरप्रायि धामभिः ।

दिवः सदाऽसि बृहती वि तिष्ठस आ त्वेपं वर्तते तमः ३२ १०१५

॥३२०॥ (वा० य० ३७।२१ [उत्तरार्धः]) +

रात्रिः केतुना जुषता ५ सुज्योतिर्ज्योतिषा स्वाहा २१

॥३२१॥ (अथर्व० १।१६।१)

(१०१७) चातनः । अनुष्टुप् ।

येमावास्यां३ रात्रिमुदस्थुर्ब्राजमत्त्रिणः ।

अमिस्तुरीयो यातुहा सो अस्मभ्यमधि ब्रवत् १

॥३२२॥ (अथर्व० २।१५।२)

(१०१८-१९) ब्रह्मा । त्रिपाद् गायत्री ।

यथाहश्च रात्री च न बिभीतो न रिष्यतः । एवा मे प्राण मा बिभेः २

॥३२३॥ (अथर्व० १३।४।३०) प्राजापत्याऽनुष्टुप् ।

स वै रात्र्या अजायत तस्माद् रात्रिरजायत ३०

॥३२४॥ (अथर्व० ५।५।१)

(१०२०-२९) अथर्व । अनुष्टुप् ।

रात्री माता नभः पितार्यमा ते पितामहः ।

सिलाची नाम वा असि सा देवानामसि स्वसा १ १०२०

॥३२५॥ अथर्व० १५।२।५, १३, २१, २९) द्विपदाऽऽर्ची गायत्री ।

श्रद्धा पुंश्चली मित्रो मागधो विज्ञानं वासोऽहरुष्णीपं रात्री केशा हरितौ प्रवर्तौ
कल्मलिर्माणिः ५

उषाः पुंश्चली मन्त्रो मागधो विज्ञानं वासोऽहरुष्णीपं रात्री केशा हरितौ १३

इरा पुंश्चली हसो मागधो विज्ञानं वासोऽहरुष्णीपं रात्री केशा हरितौ २१

विद्युत् पुंश्चली स्तनयित्नुर्मागधो विज्ञानं वासोऽहरुष्णीपं रात्री केशा हरितौ २९

॥३२६॥ (अथर्व० १५।१३।१, ३, ५, ७, ९)

१ सामान्युष्णिक्, ३, ५, ७ आसुरी गायत्री, ९ द्विपदानिचृद्रायत्री ।

तद् यस्यैवं विद्वान् ब्राह्म्य एकां रात्रिमतिथिर्गृहे वसति १ १०२५

तद् यस्यैवं विद्वान् ब्राह्म्यो द्वितीयां रात्रिमतिथिर्गृहे वसति ३

तद् यस्यैवं विद्वान् ब्राह्म्यस्तृतीयां रात्रिमतिथिर्गृहे वसति ५

तद् यस्यैवं विद्वान् ब्राह्म्यश्चतुर्थीं रात्रिमतिथिर्गृहे वसति ७

तद् यस्यैवं विद्वान् ब्राह्म्योऽपरिमिता रात्रिरतिथिर्गृहे वसति ९ १०२९

॥३९७॥ (अथर्व० ६।१२८।२)

(१३०) अङ्गिराः । अनुष्टुप् ।

भद्राहं नो मध्यंदिने भद्राहं सायमस्तु नः ।

भद्राहं नो अह्नां प्राता रात्री भद्राहमस्तु नः

२ १०३०

॥३२८॥ (अथर्व० १९।४७।२-९) :

(१०३१-५१) गोपथः । अनुष्टुप्; २ पञ्चपदाऽनुष्टुप्गर्भा पराऽतिजगती;

६ पुरस्ताद्वृद्धती; ७ ज्येष्ठसाना षट्पदा जगती ।

न यस्याः पारं ददृशे न योयुवद् विश्वमस्यां नि विशते यदेजति ।

अरिष्टासस्त उर्वि तमस्वति रात्रिं पारमशीमहि भद्रे पारमशीमहि २

ये ते रात्रि नृचक्षसो द्रष्टारो नवतिर्नव । अशीतिः सन्त्यष्टा उतो ते सप्त सप्ततिः ३

पृष्टिश्च षट् च रेवति पञ्चाशत् पञ्च सुमयि । चत्वारिंशत्वारिंशच्च त्रयस्त्रिंशच्च वाजिनि ४

द्वौ च ते विशतिश्च ते रात्र्येकादशावमाः । तेभिर्नो अद्य पायुभिर्नु पाहि दुहितर्दिवः ५

रक्षा मार्किनो अघशंस ईशत मा नो दुःशंस ईशत ।

मा नो अद्य गवां स्तेनो मावीनां वृक ईशत

६ १०३५

माश्वानां भद्रे तस्करो मा नृणां यातुधान्यः ।

परमेभिः पृथिभि स्तेनो धावतु तस्करः । परेण दुत्वती रज्जुः परेणाघायुरर्पतु ७

अघ रात्रि तृष्टधूममशीर्षाणमहि कृणु । हनू वृकस्य जम्भयास्तेन तं द्रुपदे जहि ८

त्वयि रात्रि वसामसि स्वपिष्यामसि जागृहि ।

गोभ्यो नः शर्म यच्छाश्वेभ्यः पुरुषेभ्यः

९

॥३२९॥ (अथर्व० १९।४८।१-६)

अनुष्टुप्; १ त्रिपदाऽऽर्षी गायत्री; २ त्रिपदा विराडनुष्टुप्; ३ बृद्धतीगर्भाऽनुष्टुप्;

५ पथ्यापङ्क्तिः ।

अथो यानि च यस्मा ह यानि चान्तः परीणहि । तानि ते परि दद्वसि १

रात्रि मातरूपसे नः परि देहि । उषा नो अह्ने परि ददात्वहस्तुभ्यं विभावरि २ १०४०

यत् किं चेदं पतयति यत् किं चेदं सरीसृपम् ।

यत् किं च पर्वतायासत्वं तस्मात् त्वं रात्रि पाहि नः

३

सा पश्चात् पाहि सा पुरः सोत्तरादधरादुत ।

गोपाय नो विभावरि स्तोतारस्त इह स्मसि

४ १०४२

ये रात्रिमनुतिष्ठन्ति ये च भूतेषु जाग्रति ।

पशून् ये सर्वान् रक्षन्ति ते न आत्मसु जाग्रति ते नः पशुपुं जाग्रति ५

वेदु वै रात्रि ते नाम घृताची नाम वा असि ।

तां त्वां भरद्वाजो वेदु सा नो वित्तेऽधि जाग्रति ६

॥३३०॥ (अथर्व० १९।५०।१-७) अनुष्टुप् ।

अध रात्रि तृष्टधूममशीर्षाणमहिं कृणु । अक्षौ वृकस्म निर्जेह्यास्तेन तं द्रुपदे जहि १ १०४५

ये ते रात्र्यनुड्वाहस्तीक्ष्णशृङ्गाः स्वाश्वः । तेभिर्नो अद्य पारयाति दुर्गाणि विश्वहा २

रात्रिरात्रिमरिष्यन्तस्तेरेम तन्वा वयम् । गम्भीरमप्लवा इव न तरेयुरातयः ३

यथा शाम्याकः प्रपतन्नपवान् नानुविद्यते । एवा रात्रि प्र पातय यो अस्माँ अभ्यघायति ४

अप स्तेनं वासो गोअजमुत तस्करम् । अथो यो अर्वतः शिरोऽभिधाय निनीपति ५

यदुद्या रात्रि सुभगे विभजन्त्ययो वसु । यदेतदस्मान् भोजय यथेदुन्यानुपायसि ६ १०५०

उषसे नः परि देहि सर्वान् रात्र्यनागसः । उषा नो अहे आ भजादहस्तुभ्यं विभावरि ७

॥३३१॥ (अथर्व० १९।४९।१-१०)

(१०५०-६०) गोपथः, भरद्वाजश्च । अनुष्टुप्; १-५, ८ त्रिष्टुप्, ६ आस्तारपङ्क्तिः; ७ पथ्यापङ्क्तिः;

१० त्र्यवसाना पट्पदा जगती ।

इपिरा योषा युवतिर्दमूना रात्री देवस्य सवितुर्भगस्य ।

अश्वक्षभा सुहवा संभृतश्रीरा पप्रौ द्यावापृथिवी महित्वा १

अति विश्वान्यरुहद् गम्भीरो वर्षिष्ठमरुहन्त श्रविष्ठाः ।

उशती रात्र्यनु सा भद्राभि तिष्ठते मित्र इव स्वधार्भिः २

वर्ये वन्दे सुभगे सुजात आजगन् रात्रिं सुमना इह स्याम् ।

अस्माँस्त्रायस्व नर्याणि जाता अथो यानि गव्यानि पुष्ट्या ३

सिंहस्य रात्र्युशती पीषस्य व्याघ्रस्य द्वीपिनो वर्च आ ददे ।

अश्वस्य ब्रध्नं पुरुषस्य मायुं पुरु रूपाणि कृणुषे विभाती ४ १०५५

शिवां रात्रिमनुसूर्यं च द्विमस्य माता सुहवा नो अस्तु ।

अस्य स्तोमस्य सुभगे नि बोध येन त्वा वन्दे विश्वांसु दिक्षु ५

स्तोमस्य नो विभावरि रात्रि राजैव जोषसे ।

आसाम् सर्ववीरा भवाम् सर्ववेदसो व्युच्छन्तीरनूपसः ६ १०५७

शम्यां ह नामं दधिषे मम दिप्सन्ति ये धना ।

रात्रीहि तानसुतपा य स्तेनो न विद्यते यत् पुनर्न विद्यते
भद्रासिं रात्रि चमसो न विष्टो विष्टं गोरूप युवतिर्विभर्षि ।

७

चक्षुष्मती मे उशती वर्षषि प्रति त्वं दिव्या न क्षाममुक्थाः
यो अद्य स्तेन आर्यत्यद्यायुर्मर्त्यो रिपुः ।

८

रात्री तस्य प्रतीत्य प्र ग्रीवाः प्र शिरो हनत्
प्र पादौ न यथार्यति प्र हस्तौ न यथाशिषत् ।

९ १०६०

यो मलिम्लरुपायति स संपिष्टो अपायति ।

अपायति स्वपायति शुष्के स्थाणावपायति

१०

॥३३२॥ [१०६२-६७] (वा० य० ६।२१)

अहोरात्रे गच्छ स्वाहा

२१

॥३३३॥ (वा० य० १४।३०)

नवदुशभिरस्तुवत शूद्रार्यावसृज्येतामहोरात्रे अधिपत्नी आस्ताम्

३०

॥३३४॥ (वा० य० १८।२३)

अहोरात्रे ऊर्वष्टीवे बृहद्रथन्तरे च मे यज्ञेन कल्पन्ताम्

२३

३३५॥ (वा० य० २२।२८)

अहोरात्रेभ्यः स्वाहा

२८ १०६५

॥३३६॥ (वा० य० २३।४१)

अर्धमासाः परूँषि ते मासा आ च्छयन्तु शम्यन्तः ।

अहोरात्राणि मरुतो विलिष्टं सृदयन्तु ते

४१

॥३३७॥ (वा० य० ३१।२२)

श्रीश्च ते लक्ष्मीश्च पत्न्यावहोरात्रे पार्श्वे नक्षत्राणि रूपमश्विनौ व्यात्तम् ।
इष्णाग्निषाणामुं म इषाण सर्वलोकं म इषाण

२

॥३३८॥ (अथर्व० ६।१२८।३)

(१०६८) अङ्गिराः । अनुष्टुप् ।

अहोरात्राभ्यां नक्षत्रेभ्यः सूर्याचन्द्रमसाभ्याम् ।

भद्राहमस्म्यै राजन्च्छकधूम त्वं कृधि

३ १०६८

॥३३९॥ (अथर्व० १५।१।२२)

(१०६९-७३) अथर्वा । आसुरी गायत्री ।

अहश्च रात्रीं च परिष्कन्दौ मनो विपथम् २२

॥३४०॥ (अथर्व० १५।६।१७-१८) १७ आर्ची पङ्क्तिः, १८ विराड् जगती ।

तमृतवश्चातिवाश्च लोकाश्च लौक्याश्च मासाश्चार्धमासाश्चाहोरात्रे चानुव्यचलन् १७ १०७०

ऋतूनां च वै स अतिवानो च लोकानां च लौक्यानां च मासानां चार्धमासानां
चाहोरात्रयोश्च प्रियं धाम भवति य एवं वेद १८

॥३४१॥ (अथर्व० १५।१८।४-५) आर्च्यनुष्टुप् ।

अहोरात्रे नासिके दितिश्चादितिश्च शीर्षकपाले संवत्सरः शिरः ४

अह्ना प्रत्यङ् व्रात्यो रात्र्या प्राङ् नमो व्रात्याय ५

॥३४२॥ (अथर्व० १६।८।२३)+

(१०७४) यमः । आसुरी जगती ।

सोऽहोरात्रयोः पाशान्मा मोचि २४

रात्रि-सहचारी-देवगणः ।

रात्रिः, धेनुः ।

॥३४३॥ (अथर्व० ३।१०।२-४)

(१०७५-७७) २-३ अनुष्टुप्, ४ त्रिष्टुप् ।

यां देवाः प्रतिनन्दन्ति रात्रिं धेनुमुपायतीम् ।

संवत्सरस्य या पत्नी सा नो अस्तु सुमङ्गली २ १०७५

संवत्सरस्य प्रतिमां यां त्वा रात्र्युपास्महे ।

सा न आयुष्मतीं प्रजां रायस्पोषेण सं सृज ३

इयमेव सा या प्रथमा व्यौच्छदास्वितरासु चरति प्रविष्टा ।

महान्तो अस्यां महिमानो अन्तर्धूर्जिगाय नवगज्जनित्री ४ १०७७



॥३४४॥ (अथर्व० १०।२।६)

(१०७८) नारायणः । यामः । जगती ।

कः सप्त खानि त्रि तंतर्द शीर्षणि कर्णाविमौ नासिके चक्षणी मुखम्
येषां पुरुत्रा विजयस्य मन्त्रानि चतुष्पादो द्विपदो यन्ति यामम्

६

(१३) पूर्णिमा ।

॥३४५॥ (अथर्व० ७।८०।१-२,४)

(१०७९-८२) अथर्व। त्रिष्टुप्, २ अनुष्टुप् ।

पूर्णा पश्चादुत पूर्णा पुरस्तादुन्मध्यतः पौर्णमासी जिगाय ।
तस्यां देवैः संवसन्तो महित्वा नाकस्य पृष्ठे समिषा मदेम
वृषभं वाजिनं वयं पौर्णमासं यजामहे ।

१

स नो ददात्वर्क्षितां रयिमनुपदस्वतीम्

२ १०८०

पौर्णमासी प्रथमा यज्ञियासीदह्नां रात्रीणामतिशर्वरेषु ।

ये त्वां यज्ञैर्यज्ञिये अर्धयन्त्यमी ते नाकं सुकृतः प्रविष्टाः

४

॥३४६॥ (अथर्व० १५।१६।१) साम्युष्णिक् ।

तस्य व्रात्यस्य । योऽस्य प्रथमोऽपानः सा पौर्णमासी

१

(१४) राका ।

॥३४७॥ (ऋ० २।३२।४-५)॥

(१०८३-८४) गृत्समद (आङ्गिरसः शौनहोत्रः पश्चाद्) भागवः शौनकः । जगती ।

राकामहं सुहवां सुष्टुती हुवे शृणोतु नः सुभगा बोधतु त्मना ।

सीव्यत्वर्षः सूच्याच्छिद्यमानया ददातु वीरं शतदायमुक्थ्यम्

४

यास्तै राके सुमतयः सुपेशसो याभिर्ददासि दाशुषे वस्त्रानि ।

ताभिर्नो अद्य सुमता उपागहि सहस्रपोषं सुभगे रराणा

५

(१५) अमावास्या ।

॥३४८॥ (अथर्व० ७।७९।१-४)

(१०८५-९१) अथर्व। त्रिष्टुप्, १ जगती ।

यत् ते देवा अकृण्वन् भागधेयममावास्ये संवसन्तो महित्वा ।

तेना नो यज्ञं पिपृहि विश्ववारे रयिं नो धेहि सुभगे सुवीरम्

१

अहमेवास्म्यमावास्याऽहं मामा वसन्ति सुकृतो मयीमे ।

मयि देवा उभये साध्याश्चेन्द्रज्येष्ठाः समगच्छन्त सर्वे

२ १०८६

आगन् रात्रीं संगमनी वसूनामूर्जं पुष्टं वस्वाविश्यन्ती ।
 अमावास्या चै हविषा विधेमोर्जं दुहाना पर्यसा न आगन् ३
 अमावास्ये न त्वदेतान्यन्यो विश्वा रूपाणि परिभूर्जजान ।
 यत् कामास्ते जुहुमस्तन्नो अस्तु वयं स्याम पतयो रयीणाम् ४

॥३४९॥ (अथर्व० १५।२।१४) सास्त्री पञ्क्तिः ।

अमावास्या च पौर्णमासी च परिष्कन्दौ मनो विपथम् १४

॥३५०॥ (अथर्व० १५।१६।३) साम्युष्णिक् ।

तस्य व्रात्यस्य । योऽस्य तृतीयोऽपानः सामावास्या ३ १०९०

॥३५१॥ (अथर्व० १५।१७।९) द्विपदा सास्त्री त्रिष्टुप् ।

तस्य व्रात्यस्य । यदादित्यमभिसंविशन्त्यमावास्या चैव तत् पौर्णमासी च ९

(१६) सिनीवाली ।

॥३५२॥ (ऋ० २।३२।६-७)+

(१०९२-९३) गृत्समदः (आङ्गगिरसः शौनहोत्रः पश्चाद्) भार्गवः शौनकः । अनुष्टुप् ।

सिनीवाल्लि पृथुष्टुके या देवानामसि स्वसा ।

जुषस्व हव्यमाहुतं प्रजां देवि दिदिडिह नः ६

या सुवाहुः स्वङ्गुरिः सुषूमा बहुस्रवरी ।

तस्यै विश्वत्स्यै हविः सिनीवाल्यै जुहोतन ७

॥३५३॥ (अथर्व० ७।४६।३)

(१०९४) अथर्वा । त्रिष्टुप् ।

या विश्वत्तीन्द्रमसि प्रतीचीं सहस्रस्तुकाभियन्तीं देवी ।

विष्णोः पत्नि तुभ्यं राता हवींषि पतिं देवि राधसे चोदयस्व ३

॥३५४॥ [१०९५] (वा० य० ११।५५) ×

सः सृष्टां वसुंभी रुद्रैर्धरैः कर्मण्यां मृदम् ।

हस्ताभ्यां मृद्धीं कृत्वा सिनीवाली कृणोतु ताम् ५५

॥३५५॥ (अथर्व० ९।४।१४)

(१०९६) ब्रह्मा । अनुष्टुप् ।

गुदा आसन्तिसिनीवाल्याः सूर्यायास्त्वचमब्रुवन् ।

उत्थातुरब्रुवन् पद ऋषभं यदकल्पयन् १४ १०९६

सिनीवाली-सहचारी-देवगणः ।

(१) गुंगू-सिनीवाली-राका-सरस्वतीन्द्राणीवरुणानीः ।

॥३५६॥ (ऋ० २।३।३)

(१०९७) गृत्समद (आङ्गिरसः शौनहोत्रः पश्चाद्) भार्गवः शौनकः । अनुष्टुप् ।

या गुङ्गूया सिनीवाली या राका या सरस्वती । इन्द्राणीमह ऊतये वरुणानीं स्वस्तये ३

(२) बृहस्पतिः, सिनीवाली, अनुमतिः ।

॥३५७॥ (अथर्व० २।२६।२)

(१०९८) सविता । त्रिष्टुप् ।

इमं गोष्ठं पशवः सं स्रवन्तु बृहस्पतिरा नयतु प्रजानन् ।

सिनीवाली नयत्वाग्रमेषामाजग्मुषो अनुमते नि यच्छ २

(३) सिनीवाली-सरस्वत्यश्विनः ।

॥३५८॥ (अथर्व० ५।२५।३)

(१०९९) ब्रह्मा । अनुष्टुप् ।

गर्भं धेहि सिनीवालि गर्भं धेहि सरस्वति । गर्भं ते अश्विनोभा धत्तां पुष्करस्रजा ३

(४) प्रजापतिः, अनुमतिः, सिनीवाली ।

॥३५९॥ (अथर्व० ६।११।३)

(११००) प्रजापतिः । अनुष्टुप् ।

प्रजापतिरनुमतिः सिनीवालयचीकल्पत् । स्रैषूयमन्यत्र दधत् पुमांसमु दधादिह ३ ११००

(५) विष्णुः, सरस्वती, सिनीवाली, भगः ।

॥३६०॥ (अथर्व० १४।२।१५, २१)

(११०१-११०२) सूर्या सावित्री । १५ भुरिक्, २१ अनुष्टुप् ।

प्रति तिष्ठ विराडसि विष्णुरिवेह सरस्वति ।

सिनीवालि प्र जायतां भगस्य सुमतावसत् १५

शर्म वमैतदा हंरास्यै नार्या उपस्तरै । सिनीवालि प्र जायतां भगस्य सुमतावसत् २१

(६) सरस्वती, सिनीवाली ।

॥३६१॥ (अथर्व० १९।३।१०)

(११०३) सविता । अनुष्टुप् ।

आ मे धनं सरस्वती पयस्फातिं च धान्यम् । सिनीवालयुपां वहादुयं चौदुम्बरो मणिः १० ११०३

(१७) कुहूः ।

॥३६२॥ (अथर्व० ७।४७।१-२)

(११०४-११०५) अथर्वा । १ जगती, २ त्रिष्टुप् ।

कुहूं देवीं सुकृतं विब्रनापसमस्मिन् यज्ञे सुहवां जोहवीमि ।

सा नो रयिं विश्ववारं नि यच्छाद् ददातु धीरं शतदायमुक्थ्यम् १

कुहूर्देवानाममृतस्य पत्नी हव्या नो अस्य हविषो जुषेत ।

शृणोतु यज्ञमुशती नो अद्य रायस्पोषं चिकितुषी दधातु २ ११०५

(१८) नक्षत्राणि ।

॥३६३॥ [११०६-१३] (वा० य० १४।१९)

नक्षत्राणि छन्दः

१९

॥३६४॥ (वा० य० १८।१८, ४०)

नक्षत्राणि च मे यज्ञेन कल्पन्ताम्

१८

तस्य नक्षत्राण्यप्सरसो भेकुर्यो नाम । ताभ्यः स्वाहा ४०

॥३६५॥ (वा० य० २२।२८)×

नक्षत्रेभ्यः स्वाहा नक्षत्रियेभ्यः स्वाहा

२८

॥३६६॥ (वा० य० २३।४३)

द्यौस्ते पृथिव्यन्तरिक्षं वायुश्छिद्रं पृणातु ते ।

सूर्यस्ते नक्षत्रैः सह लोकं कृणोतु साधुया

४३ १११०

॥३६७॥ (वा० य० २५।९) ×

नक्षत्राणि रूपेण

९

॥३६८॥ (वा० य० ३०।१०, २१)

प्रज्ञानाय नक्षत्रदुर्गम् ॥१०॥ नक्षत्रेभ्यः किर्मिरम्

२१

॥३६९॥ (अथर्व० २।२।४)

(१११४) मातृनामा । त्रिपाद्विराणनाम गायत्री ।

अग्निं दिद्युन्नक्षत्रिये या विश्वावसुं गन्धर्वं सचध्वे ।

ताभ्यो वो देवीर्नम इत् कृणोमि

४

॥३७०॥ (अथर्व० ३।७।७)

(१११५) भृग्वक्त्रिराः । अनुष्टुप् ।

अपवासे नक्षत्राणामपवास उषसामुत । अप सत् सर्वं दुर्भुतमप क्षेत्रियमुच्छतु ७ १११५

॥३७१॥ (अथर्व० ६।१२८।१,४)

(१११६-१७) अङ्गिराः । अनुष्टुप् ।

शक्रधूमं नक्षत्राणि यद् राजानमकुर्वत । भद्राहमस्मै प्रायच्छन्निदं राष्ट्रमसादिति १
यो नो भद्राहमकरः सायं नक्तमथो दिवा । तस्मै ते नक्षत्रराज शक्रधूम सदा नमः ४

॥३७२॥ (अथर्व० ९।७।१५)

(१११८-१९) ब्रह्मा । साम्नी बृहती ।

विश्वव्यचाश्चर्मौषधयो लोमानि नक्षत्राणि रूपम् १५

॥३७३॥ अथर्व० १३।६।२८) प्राजापत्याऽनुष्टुप् ।

तस्याम् सर्वा नक्षत्रा वशे चन्द्रमसा सह २८

॥३७४॥ (अथर्व० १०।२।२२-२३)

(११२०-२१) नारायणः । अनुष्टुप् ।

केन देवाँ अनु क्षियति केन दैवजनीर्विशः । केनेदमन्यन्नक्षत्रं केन सत् क्षत्रमुच्यते २२ ११२०
ब्रह्म देवाँ अनु क्षियति ब्रह्म दैवजनीर्विशः ।

ब्रह्मेदमन्यन्नक्षत्रं ब्रह्म सत् क्षत्रमुच्यते २४

॥३७५॥ (अथर्व० ११।६।१०)

(११२२) शन्तातिः । अनुष्टुप् ।

दिवं ब्रूमो नक्षत्राणि भूमिं यक्षाणि पर्वतान् ।

समुद्रा नद्यो विशन्तास्ते नो मुञ्चन्त्वंहसः १०

॥३७६॥ (अथर्व० १५।१७।४)

(११२३) अथर्वी । साम्न्युष्णिक् ।

तस्य ब्रात्यस्य । योऽस्य चतुर्थो व्यानस्तानि नक्षत्राणि ४

॥३७७॥ (अथर्व० १९।७।१-५)

(११२४-३४) गार्ग्यः । त्रिष्टुप्, ४ भुरिक् ।

चित्राणि साकं दिवि रोचनानि सरीसृपाणि भुवने जवानि ।

तुर्मिशं सुमतिमिच्छमानो अहानि गीर्भिः सपर्याभि नाकम् १

सुहवमग्रे कृत्तिका रोहिणी चास्तु मद्रं मृगशिरः शमार्द्रा ।

पुनर्वसू सूनृता चारु पुष्यो भानुराश्लेषा अयनं मघा मे २

पुण्यं पूर्वा फल्गुन्यौ चात्र हस्तश्चित्रा शिवा स्वाति सुखो मे अस्तु ।

राधे विशाखे सुहवानुराधा ज्येष्ठा सुनक्षत्रमरिष्ट मूलम् ३ ११२६

अञ्चं पूर्वा रासतां मे अषाढा ऊर्जं देव्युत्तरा आ वहन्तु ।
 अभिजिन्मे रासतां पुण्यमेव श्रवणः श्रविष्ठाः कुर्वतां सुपुष्टिम् ४
 आ मे महच्छतभिषग् वरीय आ मे द्रुया प्रोष्ठपदा सुशर्म ।
 आ रेवती चाश्वयुजौ भगं म आ मे रयि भरण्य आ वहन्तु ५

॥३७८॥ (अथर्व० १९।८।१-५,७) त्रिष्टुप्, १ विराङ् जगती ।

यानि नक्षत्राणि दिव्यन्तरिक्षे अप्सु भूमौ यानि नगेषु दिक्षु ।
 प्रकल्पयन्श्चन्द्रमा यान्येति सर्वाणि ममैतानि शिवानि सन्तु १
 अष्टाविंशानि शिवानि शग्मानि सह योगं भजन्तु मे ।
 योगं प्र पद्ये क्षेमं च क्षेमं प्र पद्ये योगं च नमोऽहोरात्राभ्यामस्तु २ ११३०
 स्वस्तितं मे सुप्रातः सुसायं सुदिवं सुमृगं सुशकुनं मे अस्तु ।
 सुहवमग्रे स्वस्त्यर्ग्यमर्त्यं गत्वा पुनरायाभिनन्दन् ३
 अनुहवं परिहवं परिवादं परिश्ववम् । सर्वैर्मे रिक्तकुम्भान् परा तान् संवितः सुव ४
 अपपापं परिश्ववं पुण्यं भक्षीमहि क्षवम् । शिवा ते पापनासिकां पुण्यगश्चाभि मेहताम् ५
 स्वस्ति नो अस्त्वभयं नो अस्तु नमोऽहोरात्राभ्यामस्तु ७

नक्षत्राणि-सहचारी-देवगणः ।

(१) द्यौः, चक्षुः, नक्षत्राणि, सूर्यः ।

॥३७९॥ (अथर्व० ६।१०।३)

(११३५) शन्तातिः । साम्नी बृहती ।

दिवे चक्षुषे नक्षत्रेभ्यः सूर्यायाधिपतये स्वाहा २ ११३५

(२) सूर्यः, चन्द्रः, नक्षत्राणि ।

॥३८०॥ (अथर्व० १५।६।५-६)

(११३६-३७) अथर्वा । ५ साम्नी त्रिष्टुप्, ६ निचृद्बृहती ।

तमृतं च सत्यं च सूर्यश्च चन्द्रश्च नक्षत्राणि चानुव्यचलन् ५
 ऋतस्य च वै स सत्यस्य च सूर्यस्य च चन्द्रस्य च नक्षत्राणां च
 प्रियं धाम भवति य एवं वेद ६ ११३७



अदितेः, आदित्यानां च गुणबोधक-पदानि ।

(१) अदितिः ।

अजरन्ती वा. य. २१, ५; १२
अदितिः (सर्वत्र)
अनायाः वा. य. २१, ७; १४
अनेहाः वा. य. २१, ६; १३
अन्तरिक्षम् १, ८९, १०; १
अरिष्टभमेन् ८, १८, ४; २
अस्रजन्ती वा. य. २१, ६-७; १३-१४
उपस्थे यस्याः उरु अन्तरिक्षम् अ. ७, ६, ४; १६
उरुव्रजः ८, ६७, १२; ८
उरुची वा. य. २१, ५; १२
ऋतस्य पत्नी वा. य. २१, ५; १२
ऋतावरी ८, २५, ३; ३४९
कृष्णाना स्योनम् वा. य. २९, ४; १५
जनाः पञ्च १, ८९, १०; १
जनित्वम् ”
जातम् ”
जुषाणा आ वा. य. २९, ४; १५
तुविक्षत्रा वा. य. २१, ५; १२
देवी ८, १८, ४; २ । ६७, १०; ६
देवी नोः वा. य. २१, ६; १३
द्यौः १, ८९, १०; १ । वा. य. २१, ६; १३
नोः देवी वा. य. २१, ६; १३
पञ्चजनाः १, ८९, १०; १
पत्नी ऋतस्य वा. य. २१, ५; १२

पिता १, ८९, १०; १
पुत्रः ”
पुरुप्रिया ८, १८, ४; २
पृथिवी वा. य. २१, ६; १३
मतिः ८, १८, ७; ५
मही वा. य. २१, ५६; ९ । २१, ५; १२ । अ. ७, ६, ४; १६ । ऋ. ८, २५, ३; ३४९
माता १, ८९, १०; १ । अ. ७, ६, ४; १६ । ऋ. ८, २५, ३; ३४९
माता मित्रस्य अर्यम्णः वरुणस्य च ८, ४७, ९; ८०
माता सुव्रतानाम् वा. य. २१, ५; १२
राजपुत्रा २, २७, ७; २७
विश्वे देवाः १, ८९, १०; १
(विश्वात्मत्वं आदित्याः) १, ८९, १०; १
शतारित्रा वा. य. २१, ७; १४
सजोषाः वा. य. २९, ४; १५
सुत्रामा वा. य. २१, ६; १३
सुनौः वा. य. २१, ७; १४
सु-प्रणीतिः वा. य. २१, ५-६; १२-१३
सुमृलीका ८, ६७, १०; ६
सुव्रतानां माता वा. य. २१, ५; १२
सुशर्मा वा. य. २१, ५-६; १२-१३
स्योनं कृष्णाना वा. य. २९, ४; १५
स्वरित्रा वा. य. २१, ६; १३

(२) आदित्याः ।

अमिजिह्वाः ७, ६६, १०; ५०
अदब्धासः-ब्धाः २, २७, ९; २९ । ८, ६७, १३; ९४ ।
८, १०१, ६; १०३
अदितेः पुत्रासः ८, १८, ५; ३ । १०, १८५, ३; १०६
दै०[अदितिः०] १३

अङ्गुत्तेनसः ८, ६७, ७; ९१
अद्गुहः ८, १९, ३४; ७० । ६७, १३; ९४
अनवद्याः २, २७, २; २२
अनिमिषाः २, २७, ९; २९

अनृतद्विषः ७,६६,१३; ५३
 अनेहसः ८,१८,५; ३
 अमृताः ८,१०१,६; १०३
 अरिष्टः २,२७,२; २२
 अश्वजिनाः २,२७,२; २२
 अस्वप्रजः २,२७,९; २९
 आदित्याः-त्यासः वा बहुशः सर्वत्र ।
 आशवः × ८,४७,६; ७७
 उरवः २,२७,३; २३
 उरुचक्रयः ८,१८,५; ३
 उरुशंसः २,२७,९; २९
 ऊतयः अनेहसः (येषाम्) ८,४७,१-१३; ७२ ८४
 ऊतयः सुऊतयः (येषाम्) ८,४७,१-१३; ७२ ८४
 ऋणानि चयमानाः २,२७,४; २४
 ऋतजाताः ७,६६,१३; ५३
 ऋतनिभ्यः २,२७,१२; ३२
 ऋत(ता)वानः २,२७,४; २४ । ७,६६,१३; ५३
 ऋत(ता)वृधः ७,६६,१०,१३; ५०,५३
 ऋतस्य रथ्यः ७,६६,१२; ५२
 क्षत्रिणाः ८,६७,१; ८५
 क्षितीनां मूर्धानः ८,६७,१३; ९४
 गम्भीराः २,२७,३; २३
 गोपाः विश्वस्य भुवनस्य ७,५१,२; ३९ । २,२७,४; २४
 चयमानाः ऋणानि २,२७,४; २४
 चर्षणीसहः ८,१९,३५; ७१
 जगत् स्थाः धारयन्तः २,२७,४; २४
 तुष्टुवानाः ७,५१,३; ४०
 तिस्रः भूमीः धारयन् २,२७,८; २८
 त्रीणि व्रतानि एषाम् २,२७,८; २८
 त्री रोचना दिव्या धारयन्त २,२७,९; २९
 त्रान् षून् धारयन् २,२७,८; २८
 त्रीणि विदधानि ये येसुः ७,६६,१०; ५०
 दक्षकृतवः (देवाः विशेष्यम्) वा. य. ४,११; १६६
 दिगन्तः २,२७,३; २३
 दीर्घ(र्घा)धियः २,२७,४; २४

देवाः (बहुषु स्थलेषु वर्तते ।)
 देवत्राः वसवः ७,५१,१; ४१
 धारपूताः २,२७,९,९; २२,२९
 धारयन् तिस्रः भूमीः त्रीन् षून् २,२७,८; २८
 धारयन्त त्री रोचना दिव्या २,२७,९; २९
 धारयन्तः जगत् स्थाः (च) २,२७,४; २४
 नित्याः २,२७,११; ३१
 पन्थाः एषां अदब्धाः, अनर्वाणः, पायवः, सुगेवृधः ८,१८,
 २; ५५
 पाकत्राः ८,१८,१५; ६२
 पुत्रासः अदितेः ८,१८,५; २
 पुष्टयः २,२७,११; ३१
 प्रचेतसः ८,४७,४; ७५ । ६७,१७; ९८
 बहवः ७,६६,१०; ५०
 भुवनस्य गोपाः २,२७,४; २४ । ७,५१,२; ३९
 भूमाः तिस्रः धारयन् २,२७,८, २८
 भूर्यक्षाः २,२७,३; २३
 मनोजाताः (देवाः विशेष्यम्) वा. य. ४,११; १६६
 मनोयुजः (देवाः विशेष्यम्) वा. य. ४,११; १६६
 महान्तः ८,४७,१; ७२
 मूर्धानः क्षितीनाम् ८,६७,१३; ९४
 यजत्राः २,२७,१६; ३६
 रक्षमाणाः २,२७,४; २४
 रथ्यः ऋतस्य ७,६६,१२; ५२
 राजानः २,२७,१,३,११; २१,२३,३१ । ७,६६,११; ५१ ।
 ८,१९,३५; ७१
 राजानः व्रतस्य ७,६६,६; ४६
 रिशादसः (अर्यमा) ७,६६,७; ४७
 रोचना त्रीणि धारयन्त २,२७,९; २९
 वरूथं, तेषां चित्रं, उक्थ्यम् ८,६७,३; ८७
 वसवः ७,५१,१; ४१ । ८,१८,१५,१७; ६२,६४
 विदधानि त्रीणि ये येसुः ७,६६,१०; ५०
 विश्ववेदसः ८,१८,११; ५८ । ४७,३; ७४
 व्रतानि त्रीणि विदधे एषाम् २,२७,८; २८
 शुचयः २,२७,२,९; २२,२९

सुदानवः ७, ६६, ५; ४५ । ८, ५८, १२; ५९ । १९, ३४;
७० । ६७, १६; ९७
सुमहसः ८, १८, १८; ६५
सुमृलीकाः ८, ६७, १; ८५
सुशर्माणः ८, १८, ४; २
सूरचक्षसः ७, ६६, १०; ५०
सूरयः ८, १८, ४; २
स्थाः जगत् धारयन्तः २, २७, ४; २४
स्वयशसः ८, ६७, १३; ९४
स्वराजः ७, ६६, ६; ४६
हवनश्रुतः ८, ६७, ५; ८९
हिरण्ययाः २, २७, ९; २९

आदित्यः ।

अग्ने समवर्तत विश्वकर्मणः रसात् वा. य. ३१, १७; ११७
अदब्धः अ. १७, १, १२; १४५
अदब्धेन ब्रह्मणा वावृधानः अ. १७, १, १२; १४५
अद्भ्यः सम्भृतः वा. य. ३१, १७; ११७
अनभीष्टुः १, १५२, ५; २२६
अनधुः " " "
अरुणः वा. य. १७, ६०; ११५
अरुषः वा. य. २३, ५; ११६
अर्वा १, १५२, ५; २२६
अश्मा वा. य. १७, ६०; ११५
अस्तं इतः अ. १७, १, २३; १५६
" एण्यन् " "
" यन् " "
आदित्यः अ. १७, १, २४-२५; १५७-१५८ । अ. ४, ३९,
५-६; १७८-१७९ । अ. ५, २१, १०; १८०
आरोहन् त्रिविधम् अ. १७, १, १०; १४३
इन्द्रः + अ. १७, १, १-५, ९-१४, १८; १३४-३८, १४२-
४७, १५१
ईज्यः अ. १७, १, १-५; १३४-१३८
उक्षा समुद्रः वा. य. १७, ६०; ११५
उद् आयन् अ. १७, १, २२; १५५

उद् इतः अ. १७, १, २२; १५५
" यन् " "
उपनिष्यमानः न १, १५२, ४; २२५
ऊर्ध्वसानुः १, १५२, ५; २२६
ऋषिभिः सहस्कृतः वा. य. ३३, ८३; १२०
कनिकदन् १, १५२, ५; २२६
कनीनां जारः १, १५२, ४; २२५
गर्मः (मित्रावरुणयोः) १, १५२, ३; २२४
गृणानः दिवः अ. १७, १, १०; १४३
गोजितः अ. १७, १, १-५; १३४-१३८
चरन् वा. य. २३, ५; ११६
जातः १, १५२, ५; २२६
जारः कनीनाम् १, १५२, ४; २२५
तनूः ते, अप्सु, पृथिव्यां, अन्तः अग्नी,
पवमाने स्वर्वादि अ. १७, १, १३; १४६
तन्वा अन्तरिक्षं व्यापिथ " "
त्रिविधं आरोहन् अ. १७, १, १०; १४३
दिवः गृणानः " "
दिवः मध्ये निहितः वा. य. १७, ६०; ११५
द्रासः वा. य. १३, ५; ११३
यौः धेनुः तस्याः वत्सः अ. ४, ३९, ६; १७९
नभसी विभासि शोचिषा अ. १७, १, १८; १४२
निहितः दिवः मध्ये वा. य. १७, ६०; ११५
पुष्करुः वा. य. ३३, ८१; ११८
पुरुहूतः अ. १७, १, ११; १४४
पृथिव्यै संभृतः वा. य. ३१, १७; ११७
पृथ्विः वा. य. १७, ६०; ११५
प्रजापतिः अ. १७, १, १८; १५१
प्रयन् १, १५२, ४; २२५
प्रियं धाम मित्रस्य वरुणस्य १, १५२, ४; २२५
प्रियधामा अ. १७, १, १०; १४३
बाधमानः सुदिने अ. १७, १, १७; १५०
ब्रह्मः वा. य. २३, ५; ११६
ब्रह्म वा. य. १३, ३; १२२

+ अत्र अथर्व० १७, १, १-५, ९-१४, १८; १३४-३८, १४२-४७, १५१ मन्त्रान्तर्गतानि विद्यमानानि पदानि इन्द्ररूपेण वर्तमानस्य
आदित्यस्य ।

ब्रह्मणा वावृधानः अदब्धेन अ. १७, १, १२; १४५
 भ्राजः अ. १७, १, २०; १५३
 महेन्द्रः अ. १७, १, १८; १५१
 रसात् सम्मृतः वा. य. ३१, १७; ११७
 रुचिः अ. १७, १, २२; १५४
 रोचः " " "
 रोचन्ते रोचना दिवि वा. य. २३, ५; ११६
 वसानः अनवपृग्णा वितता १, १५२, ४; २२५
 वावृधानः ब्रह्मणा अदब्धेन १७, १, १२; १४५
 विद्वान् अ. १७, १, १६; १४९
 विभासि नभसी शोचिषा अ. १७, १, १६; १४९
 विमानः वा. य. १७, ५९; ११४
 विराट् अ. १७, १, २२-२३; १५५-१५६
 विवस्वान् वा. य. ८, ५; १११
 विश्वजित् अ. १७, १, ११; १४४
 विषासहिः अ. १७, १, १-५; १३४-१३८

विष्णुः + अ. १७, १, ६-१९; १३९-१५२
 शुक्रः अ. १७, १, २०; १५३
 शोचिषा नभसी विभासि अ. १७, १, १६; १४९
 सन्धनाजितः अ. १७, १, १-५; १३४-१३८
 समुद्रः वा. य. १७, ६०; ११५
 समुद्र इव पप्रथे वा. य. ३३, ८३; १२०
 सम्राट् अ. १७, १, २२-२३; १५५-१५६
 सर्ववित् अ. १७, १, ११; १४४
 सहमानः अ. १७, १, १-५; १३४-१३८
 सहस्कृतः ऋषिभिः वा. य. ३३, ८३; १२०
 सहीयान् अ. १७, १, १-५; १३४-१३८
 सहोजितः " " "
 सासहानः " " "
 सुपर्णः वा. य. १७, ६०; ११५
 स्वराट् अ. १७, १, २२-२३; १५५-१५६
 स्वर्जित् अ. १७, १, १-५; १३४-१३८

अदितेः, आदित्यानां च उपमासूची ।

सुतीर्थं अर्चतः यथा ८, ४७, ११; ८२ तयानः सुगमं अनु नेषथ ।
 अथी इव २, २७, १६; ३६ तान् रथेन अति येषम् ।
 यथा दिवि आदित्याय अ. ४, ३९, ५; १७८ एवा मर्त्यं सं नमः ।
 कूलात् इव स्पशः अधि ८, ४७, ११, ८२ अव हि ख्यत ।
 म ता पुत्रं यथा उपस्थे वा. य. ११, ५७; १० उखा अग्निं ।
 बन्धात् बद्ध इव ८, ६७, १८; ९९ यत् बन्धात् नः मुमोचति ।
 स्तेनं बद्ध इव ८, ६७, १४; ९५ वृक्षाणा आस्नात् नः मुमोचत ।
 यथा त्वं भ्राजता भ्राजः अ. १७ १, २०; १५३ एवाहं... भ्राज्याम

युध्यन्त इव वर्मम् ८, ४७, ८; ७९ युष्मे देवाः अपि स्मसि ।
 यथा रथ्यः ८, ४७, ५; ७६ तथा नः दुर्गाणि अघा परि वृणजन् ।
 यथा त्वं रुच्या रोचः अ. १७, १, २१; १५४ एवाहं पशुभिः रुचिषीया
 वयो यथा पक्षा उपरि ८, ४७, २; ७३ अस्मे शर्म विमोचत ।
 वयः न पक्षाः ८, ४७, ३; ७४ तत् शर्म अस्मे अधि वि यन्तन् ।
 श्वश्चा इव २, २७, ५; २५ युष्माकं प्रणीतौ दुरितानि परि वृज्याम् ।
 समुद्र इव वा. य. ३३, ८३; १२० पप्रथे ।

आदित्य-मन्त्रान्तर्गता अन्यदेवताः ।

अंशः २, २७, १, २१
 आग्निः ७, ५१, ३; ४० । अ. १६, ४, ४, ७; १३०, १३३ ।
 १७, १, ३०; १६३ । वा. य. ४, ११; १६६
 अदितिः २, २७, ७, १४; १७, ३४ । ७, ५१, २; ३९ ।
 ६६, ६; ४६ । ८, ६७, १४; ९५
 अर्यमा २, २७, १-२, ५-८; २१-२२, २५-२८ । ७, ५१, २;
 ३९ । ६६, ४, ७, ११-१२; ४४, ४७, ५१-५२ । ८, १८,
 ३, २१; ५६, ६८ । १९, ३५, ७१ । ४७, ९, ८० । ६७,
 २, ४; ८६, ८८ । १०, १८५, १; १०४

अश्विना ७, ५१, ३; ४० । ८, १८, १०; ६०
 आपः अथ. १६ ४, ६; १३२
 आदित्यः वा. य. ८, ३, ५; १०९, १११ । १३, ३, ५; ११२-११३ ।
 १७, ५२-६०; ११४-११५ । २३, ५; ११६ । ३१, १७;
 ११७ । ३३, ८१, ८३; ११८, १२० । अथ. १७, १, १७, १५०
 इन्द्रः २, २७, १४; ३४ । ७, ५१, ३; ४० । ८, १२, २०;
 ६७ । ४७, ५; ७६ । ६७, ८; ९२ । वा. य. ८, २; १०८ ।
 ३३, ८२; ११२ । अथ. १७, १, १-३०, १३४-१६३
 उषसः अथ. १६, ४, ६; १३२ । १७, १, ३०; १६३

+ अस्यां सूच्यां अथर्वं १७, १, ६-१२, १३९-५२ मन्त्रान्तर्गतानि पदानि विष्ण्वामकस्य आदित्यस्य सन्ति ।

अभवः ७, ५१, ३; ४०

दक्षः २, २७, १; २१ । (वरुणविशेषणं वा ।)

द्यावापृथिवी २, २७, १५; ३५ । ७, ५२, १; ४१ । ८, १८, १६; ६३

धीः देवी वा. य. ४, ११; १६६

पर्वताः अथ. १७, १, ३०; १६३

पिता ७, ५३, ३; ४३ । [यरुणः प्रजापतिर्वा]

पितरः अथ. २, १२, ४; १६७

बृहस्पतिः अथ. १६, ३, ५; १२५

भगः २, २७, १; २१ । ७, ६६, ४; ४४

मरुतः ७, ५१, ३; ४० । ८, १८, २१; ६८

मातरिश्वा अथ. १६, ३, ४; १२४

मित्रः २, २७, १-२, ६-८, १४; २१-२२, २६-२८, ३४ । ७, ५१, १; ३९ । ५२, २; ४२ । ६६, ४, ७, ९, ११-१२; ४४, ४७, ४९, ५१-५२ । ८, १८, ३, २०, २९; ५६, ६७-६८ । १९, ३५; ७१ । ४७, १, ९; ७२, ८० । ६७, २, ४; ८६, ८८ । १०, १८१, १; १०४

मित्रावरुणौ २, २७, ५; २५ । ७, ५२, १; ४१ । अथ. १६, ४, ७; १३३

यमः अथ. १६, ४, ४; १३०

रुद्राः अथ. २०, १३५, ९; १८३

वरुणः २, २७, १ २, ६-८, १०, १४, १७; २१-२२, २६-२८, ३०, ३४, ३७ । ७, ५१, २; ३९ । ५२, २; ४२ । ७, ६६, ४, ९, ११-१२; ४७, ४९, ५१-५२ । ८, १८, ३, २०-२१; ५६, ६७-६८ । १९, ३५; ७१ । ४७, १, ९; ७२, ८० । ६७, २, ४; ८६, ८८ । १०, १८५, १; १४४ । अथ. १९, १८, ४; १६४

वसवः ७, ५२, १; ४१ । ८, १८, १५, १७; ६२, ६४ ।

[देवतान्तरं विशेषणं वा]

वायुः अथ. १६, ४, ४; १३०

विश्वे देवाः ७, ५१, २; ४० । ५२, ३; ४३

विष्णुः वा. य. ८, १; १०७ । अथ. १७, १, ७-१९, २४; १४०-१५२, १५७

सरस्वती अथ. १६, ४, ४; १३०

सविता ७, ६६, ४; ४४ । ८, १८, ३; ५६

सूर्यः अथ. १६, ४, ४; १३० । १७, १, ६-८, ३०; १३९-१४१, १६३

(३) मित्रः ।

अनागाः ७, ६६, ४; ४४

अभिष्टिशनाः ३, ५९, ८; १९२

आदित्यः ३, ५९, २, ५; १८६, १८९

उपसयः नमसा ३, ५९, ५; १८९

ऋतावान् ७, ६२, ३; ५६०

गृणते सुशेवः ३, ५९, ५; १८९

चर्षणीधृत् ३, ५९, ६; १९०

चन्द्रः ७, ६२, ३; ५६०

देवः ३, ५९, ६; १९०

नमसा उपसयः ३, ५९, ५; १८९

नमस्यः ३, ५९, ४; १८८

पन्यतमः ३, ५९, ५; १८९

प्रियः १, १५१, १; १८४

शुवाणः ३, ५९, १; १८५

महान् ३, ५९, ५; १८९

वाङ्मयः १, १५१, १; १८४ । ३, ५९, ४; १८८

यातयज्जनः ३, ५९, ५; १८९

राजा ३, ५९, ४; १८८

विश्वपतिः ८, २५, १६; ३५९

वेधा ३, ५९, ४; १८८

सप्रथाः ३, ५९, ७; १९१

सुक्षत्रः ३, ५९, ४; १८८

सुशेवः ३, ५९, ४-५; १८८-८९

मित्रावरुणौ ।

अकविहस्ता ५, ६२, ६; २४४

अक्ष्णश्चित् गातुवित्तरा ८, २५, ९; ३५५

अदब्धा ७, ६०, ५; ३१३

अदाभ्या ७, ६६, १७; ३४४

अदितिः युवोः माता १०, १३२, ६; ३७६

अदितेः पुत्रा ७, ६०, ५; ३१३

अङ्गुतकत् ५, ७०, २; २८९ ।

अङ्गुता ५, ६६, ४; २७१

अद्रुहा ५, ६८, ४; २८२ । ७, ६६, १८; ३४५
 अद्रुहाणा ५, ७०, २; २८९ । सा. ९८६, ३९७
 अनभिद्रुहा २, ४१, ५; २३४
 अन्तस्य सेतू ७, ६५, ३; ३३८
 अपसं दधाते १, २, ९; १९८
 अपराजौ १०, १३२, ७; ३७७
 अमूले ७, ६१, ५; ३२५
 अर्चनानसं बिभ्रतौ ५, ६४, ७; २६१
 अर्या ७, ६५, २; ३३७
 अर्वाश्वा १, १३७, ३; २१२
 अवोः (अवतोः) ६, ६७, ११; ३०८
 असमा ६, ६७, १; २९८
 असुरा १, १५१, ४; २१६ । ८, २५, ४; ३५०
 असुरा देवानाम् ७, ६५, २; ३३७
 अस्तुतः वां कः ? ५, ६७, ५; २७८
 अस्मत्ता १, १३७, १, ३; २१०, २१२
 अस्मयू १, १५१, ७; २१९
 अहणीयमाना ५, ६२, ६; २४४
 आतुजी ७, ६६, १८; ३४५
 आदित्या १, १३६, ३; २०५ । २, ४१, ६; २३५ । ५, ६७, १;
 २७४ । ६९, ४; २८७ । ७, ६०, ४; ३१२
 आशाथे ऋतुं बृहन्तम् १, २, ८; १९७
 इन्द्रा वा. य. १०, १६; ३७९
 इषस्पती ५, ६८, ५; २८३
 ईयचक्षमा ५, ६६, ६; २७३
 ईशाना ५, ७१, २; २९३
 उग्रा-ग्रः ५, ६३, ३; २५० । १, १५२, २; २२३
 उपस्तुता यज्ञेयज्ञे १, १३६, १; २०३.
 उरक्षया १, २, ९; १९८
 उरुचक्रयः ५, ६७, ४; २७७
 उरुचक्षसा ८, १०१, २; ३६९
 उरुशंसा ३, ६२, १७; २३७
 ऋता ६, ६७, ४; ३०१
 ऋतस्य गोपा ५, ६३, १; २४८ । ७, ६४, २; ३३२
 ऋतस्य ज्योतिषस्पती १, २३, ५; २००
 ऋतपेशस् (वरुणः) ५, ६६, १; २६८

ऋत(ता)वाना १, १३६, ४; २०६ । १५१, ४, ८; २१६, २२० ।
 ५, ६५, २; २६३ । ६७, ४; २७७ । ८, २५, १, ४, ७-८;
 ३४७, ३५०, ३५३-५४
 ऋत(ता)वृधा १, २, ८; १९७ । २३, ५; २०० । २, ४१, ४,
 २३३ । ३, ६२, १८; २३८ । ५, ६५, २; २६३ । ७, ६६, १९,
 ३४६
 ऋतस्पृशः ५, ६७, ४; २७७
 ऋतस्पृशा १, २, ८; १९७
 कवी १, २, ९; १९८
 काव्या ५, ६६, ४; २७१
 ऋतुं बृहन्तं आशाथे १, २, ८; १९७
 क्षत्रिया ७, ६४, २; ३३२ । ८, २५, ८; ३५४
 क्षयन्ता दिवि पृथिव्यां रजसः ७, ६४, १; ३३१
 गातुविसरा अक्ष्णश्चित् ८, २५, ९; ३५५
 गृणाना जमदग्निना ३, ६२, १८; २३८
 गोपा ऋतस्य ५, ६३, १; २४८ । ७, ६४, २; ३३२
 गोपा विश्वस्य ८, २५, १; ३४७
 घृतयोनी ५, ६८, २; २८०
 घृतस्त्रू १, १५३, १; २२९
 घृताचीं धियं साधन्ता १, २, ७; १९६
 घृताक्षौ ६, ६७, ८; ३०५
 घृतासुती १, १३६, १; २०३ । २, ४१, ५; २३५
 घोरा ६, ६७, ४; ३०१
 चर्यणिनां धर्तारा ५, ६७, २; २७५
 चिकित्वांताः ७, ६०, ७; ३१५
 चिकेतति नः १, ४३, ३; २०२
 चेतारः अन्तस्य भूरेः ७, ६०, ५; ३१३
 जगन्वांसा परि बहोः ५, ६४, १; २५५
 जज्ञ ना १, २३, ४; १९९
 जनेजने ऋतवाना ५, ६५, २; २६३
 जागृवांमः दिवेदिवे १, १३६, ३; २०५
 जायमाना ६, ६७, ४; ३०१
 जीरदानू ५, ६२, ३; २४१ । ७, ६४, २; ३३२
 जुषाणा ७, ६६, १९; ३४६
 ज्येष्ठतमा विश्वेषां सताम् ६, ६७, १; २९८
 ज्योतिषस्पती ऋतस्य १, २३, ५; २००
 अयसानौ ५, ६६, ५; २७२

तनया ८, २५, २; ३४८
तना ८, २५, २; ३४८
तनूपा ७, ६६, ३; ३४३
तुरासः ७, ६०, ८; ३६६
तुविजाता १, २, ९; १९८ । ७, ६६, १; ३४१
दक्षं दधाते १, २, ९; १९८
दक्षपितरा ७, ६६, २; ३४२
दक्षस्य सन् ८, २५, ५; ३५२
दधाते दक्षं अपसम् १, २, ९; १९८
दर्शतः ५, ६५, १; २६२
दातुनस्पती १, १३६, ३; २०५ । २, ४१, ६; २३५
दिवस्पती ५, ६३, ३; २५०
दिविस्पृशा १, १३७, १; २२०
दिव्या ५, ६९, ४; २८७
दीर्घश्रुत् (वरुणः) ८, २५, १७; २६०
दीर्घश्रुत्तमा ५, ६५, २; २६३ । ८, १०१, २; ३६९
दुरत्येत् ७, ६५, ३; ३३८
दूलभासः ७, ६०, ६; ३१४
देवः ७, ६४, ३; ३३३
देवा-वौ १, १५२, ७; २२८ । ५, ६६, १; २६८ । ६७, १;
२७४ । ६८, २४; २८०, २८२ । ७, ६०, १२; ३२० ।
६१, १, ७; ३२१, ३२७ । ६६, २; ३४२ । ८, २५, १, ४;
३४७, ३५०
द्युमत् ७, ६६, १७; ३४४
द्वा ६, ६७, १; २९८
धर्तारा चर्षणीनाम् ५, ६७, २; २७५
धारयक्षिती १०, १३२, २; ३७२
धरयथः त्री रोचना त्रीन् धून् त्रीणि रजांसि ५, ६९, १; २८४
धर्तारा रजसः रोचनस्य पार्थिवस्य ५, ६९, ४; २८७
धृतदक्षा ५, ६२, ५; २४३
धृतव्रता ८, २५, २, ८; ३४८, ३५४ । १, १५, ६; ९१२
ध्रुवक्षेमा ५, ७२, २; २९६
नपाता महः शवसः ८, २५, ५; ३५१
नमसा हूयमाना ६, ६७, ३; ३००
नमसे हिता ८, २५, ७; ३५३
नमस्वन्ता ५, ६२, ५; २४३

नमोवृधा ३, ६२, १७; २३७
नरा १, १५१, ९; २२१ । ५, ६४, ७; २६१ । ८, १०१, २;
३६९
निचिरा १, १३६, १; २०३; ८, २५, ९; ३५५
निमिषन्ता ८, २५, ९; ३५५
पती दिवः पृथिव्याः ५, ६३, ३; २५०
परस्पा सुकृते ५, ६२, ६; २४४
पीवसा १, १५२, १; २२२
पूतदक्षा १, २, ७; १९६ । ७, ६५, १; ३३६
पूतदक्षसा १, २३, ४; १९९ । ५, ६६, ४; २७१ । ८, २५, १;
३४७
पूतबन्धू ६, ६७, ४; ३०१
पूर्वा ५, ६५, ३; २६४
पृथिव्याः पती ५, ६३, ३; २५०
प्रचेतसा ५, ७१, २; २९३
प्रथमा १, १५१, ८; २२०
प्रमहसा ७, ६६, २, ३४२ । ८, २५, ३; ३४९
प्रयाः (वरुणः) ५, ६६, १; २६८
प्रशस्ता देवेषु ५, ६८, २; २८०
प्रशस्ता रौ वा. य. १६, २१; ३८०
प्राविता १, २३, ६; २०१
प्रियतमः [मित्रः] ७, ६२, ४; ३२८
प्रिया ६, ६७, २-३; २९९-३००
वर्हणा ५, ७१, १; २९२
विभ्रतौ अर्चनानसम् ५, ६४, ७; २६१
भूरिपाशौ ७, ६५, ३; ३३८
महान्ता ६, ६७, ४; ३०१ । ८, २५, ४; ३५०
मघवानः ८, ६०, ११; ३१९
महिक्षत्रौ ५, ६८, १; २७२
महिवा ६, ६७, ३; ३००
महे [वरुणाय] ५, ६६, १; २६८
माता युवोः अदितिः १०, १३२, ६; ३७६
मित्रराजाना ५, ६२, ३; २४१
मित्रावरुणा मित्रः वरुणः च वा (प्रायशः सर्वत्र)
मीढवान्-द्वांसः १, १३६, ६; २०८ । ८, २५, १४; ३५७
मृळ्यन्तौ स्वादिष्टम् १, १३६, १; २०३
यज्ञिया ८, २५, १; ३४७

यमिष्टा ६, ६७, १ २९८
यातयजनः-ना १, १३६, ३; २०५ । ५, ७२, २; २९६
युवाना ७, ६२, ५; ३२९
रक्षमाणा ७, ६१, ३; ३२३
रक्षमाणा उर्वीम् ५, ६२, ५; २४३
रक्षमाणा व्रतं अजुयम् ५, ६९, १; २८४
रथ्या ८, २५, २; ३४८
राजा (अर्थमा) ७, ६४, १; ३३१
राजानः ८, १०१, ५; ४०१
राजाना १, १३६, ४; २०६ । १, १३७, १; २१० । २, ४१, ६; २३५ । ५, ६२, ६; २४४ । ६५, ३; २६३ । ७, ६४, २, ४; ३३२, ३३४ । ८, १०१, २; ३६९ । २, ३६, ६; ४००, ९२४
रिशादसा १, २, ७; १९६ । ५, ६४, १; ५५ । ६६, १; २६८ । ५, ६७, २; २७५ । ७१, १; २९२ । वा. य. ३३, ७२; ३८२
रिशादा अथ. २, २८, २; ३८३
रीति आपा (रीत्यापा) ५, ६८, ५; २८३
रुद्रा ५, ७०, २-३; २८९-२९०
वरुणा ५ ६२, ३; २४१ । ७, ६१, १; ३२१ प्रतियोग्ये-
क्षया द्विवचनम् ।
वार्षिष्ठक्षत्रा ८, १०१, २; ३६९
वाजिना ६, ६७, ४; ३०१
वा(व) वृधाना अमर्ति क्षत्रियस्य ५, ६९, १; २८४
विचर्षणी ५, ६३, ३; २५०
विचेतसा १०, १३२, ६; ३७६
विपश्चिता ५, ६३, ७; २५४ । अथ. ६, ९७, २; ३९४
विश्वा ७, ६१, ५; ३२५
विश्वस्य गोपा ८, २५, १; ३४७
विश्वजिन्वा ६, ६७, ७; ३०४
विश्ववेदसः-सा ५, ६७, ३; २७६ । ८, २५, ३; ३४९
वृषणा १, १५१, २-३; २१४-२१५ । ७, ६०, ९-१०; ३१७-३१८ । ७, ६१, ५; ३२५
वृषभा ५, ६३, ३; २५०
वृष्टियावा ५, ६८, ५; २८३
वृष्ट्याधिपती ५, २४, ५; ३९१
शग्मासः ७, ६०, ५; ३१३

शुचित्रता ३, ६२, १७; २३७
श्रेष्ठवर्चसा ५, ६५, २; २६३
संविदानौ अथ. २, २८, २; ३८३
सजोषाः-षसः ७, ६०, ४; ३१२ । ८, २५, १४; ३५७
सत्पती ५, ६५, २; २६३
सत्याः ५, ६७, ४; २७७
सत्यधर्माणा ५, ६३, १; २४८
सम्राजा १, १३६, १; २०३ । २, ४१, ६; २३५ । ५, ६३, २-३, ५; २४९-५०, २५२ । ६८, २; २८७ । ८, २५, ४, ७; ३५०, ३५३
सर्वताता ५, ६९, ३; २८६
सहसः महः नपाता ८, २५, ५; ३५१
साधन्ता घृताचीं धियम् १, २, ७; १९६
सात्राज्यः (वरुणः) ८, २५, ७; ३५३
सिन्धुपती ७, ६४, २; ३३२
सुकतुः (वरुणः) ८, २५, २; ३४८
सुकत् ३, ६२, १६; २३६ । ६६, १; २६८ । ७, ६१, २; ३२२ । ८, २५, ५, ८; ३५१, ३५४
सुक्षत्रः (वरुणः) ७, ६४, १; ३३१
सुचेतुना ५, ६४, २; २५६ । ६५, ३; २६४
सुजातः-ता ७, ६४, १; ३३१ । ८, २५, २; ३४८
सुदक्षा ७, ६६, २; ३४२
सुदानू-नवः ५, ६२, ९; २४७ । ६, ६७, २; २९९ । ७, ६१, ३; ३२३ । ५, ६७, ४; २७७
सुनीथासः ५, ६७, ४; २७७
सुमृळीकः १, १३६, ६; २०८
सुपुत्रा १०, १३२, २; ३७२
सूनु दक्षस्य ८, २५, ५; ३५१
सुप्रदानू ८, २५, ५; ३५१
सेतू अत्रुतस्य ७, ६५, ३; ३३८
स्तिपा ७, ६६, ३; ३४३
स्वर्णरः ५, ६४, १; २५५
स्वर्हशा ५, ६३, २; २४९
हिता नमसे ८, २५, ७; ३५३
हिरण्यरूपा वा. य. १०, १६, ३७९
ह्यमाना नमसा ६, ६७, ३; ३००

अर्यमादेवताया गुणबोधकपदानि । [मित्रावरुण-सहकारित्वेन]

अदितेः पुत्रः ७,६०,५; ३१३
अनृतस्य चेता (तृ) " "
अरिः ७,६४,३; ३३३
अर्यः x " "
ऋतस्पृश्-क् ५,६७,४; २७७
ऋतावान् " "
चेता अनृतस्य ७,६०,५; ३१३
जनेजने सुनीथः ५,६७,४; २७७
दूढभाः ७,६०,६; ३१४

द्युक्षः १,१३६,६; २०८
यातयज्जनः १,१३६,३; २०५
रिशादाः ७,६६,७; ४७
विश्ववेदाः ५,६७,३; २७६
शमः ७,६०,५; ३१३
सजोषाः ७,६०,४; ३१२
सत्यः ५,६७,४; २७७
सुजातः ७,६४,१; ३३१
सुवानुः ५,६७,४; २७७
सुनीथः जनेजने " "

निपातभागवरुणदेवताया गुणबोधकपदानि ।

अंशुं आप्याययन् अ. ७,८१,६; ६८४
अक्षितः " "
अक्षितं भक्षयन् " "
आदित्यवान् अ. १९,८,४; १६४
आप्याययन् अंशुम् अ. ७,८१,६; ६८४
ऋतावान् ७,६२,३; ५६०
गोपाः भुवनस्य अ. ७,८१,६; ६८४
चन्द्रः ७,६२,३; ५६०

तुविजातः २,२७,१; २१
दक्षः " "
पिता ७,५२,३; ४३
भक्षयन् अक्षितम् अ. ७,८१,६; ६८४
भुवनस्य गोपाः " "
महान् ७,५२,३; ४३ । ८,६७,४; ८८
यजत्रः ७,५२,३; ४३
राजा अ. ५,२१,११; १८१
रेवान् ८,४७,९; ८०

मित्रस्य, मित्रावरुणयोश्च उपमासूची ।

अग्निः न शुक्रः ८,२५,१९; ३६२ सूर्यः समिधानः आहुतः ।
अत्रिवत् ५,७२,१; २९५ वयं गीर्भिः आ जुहुमः ।
अपः न नावा ७,६५,३; ३३८ ऋतस्य पथा दुरिता तरेम ।
अपसा इव जनान् ६,६७,३; ३०० श्रुधीयतः जनान् सं यतथः ।
अश्वान् न ६,६७,४; ३०१ वाजिना पूतबन्धू ऋता ।
अश्वजनी इव ५,६२,७; २४५ स्थूणा अयः वि भ्राजते ।
उपमात् इव ६,६७,६; ३०३ दंढेये योः सानुम् ।
गां न धुरि १,१५१,४; २१६ आमुषं अपः उप युजाथे ।
तक्षवीः इव १,१५१,५; २१७ सूर्यं निम्नचः उषसः स्वरन्ति ।
तिग्मं न क्षोदः ८,२५,१५; ३५८ प्रतिघ्नन्ति भूर्णयः ।
योः न १०,१३२,६; ३७६ भूमिः पयसा पुपूतनि ।

धेनुं न वासरीम् १,१३७,३; २१२ (अध्वर्यवः) अंशुं दुहन्ति ।
पदा इव ५,६७,३; २७६ व्रता सश्विरे ।
बर्हिः इव यजुषा ५,६२,५; २४३ उर्वी रक्षमाणा वर्धन् ।
बाहुता न ८,१०१,२; ३६९ दंसना ता रथर्यतः ।
मनसः न प्रयुक्तिम् १,१५१,८; २२० युवां प्रथमा यज्ञेः अज्जते ।
मित्रं न १,१५१,१; १८४ (मित्रः) अग्निं शिष्या आसु जीजनन् ।
मित्रासः न १,१५१,२; २१४ ऋत्विजः प्र दधिरे ।
यूथा इव ७,६०,३; ३११ जनिमानि सं चष्टे ।
यूथा इव ८,२५,७; ३५३ बृहतः अग्निं पश्यतः ।
रश्मा इव ६,६७,१; २९८ यमिष्ठा जनान् सं यमनुः ।
बाह्वोः वजा इव पारि जगन्वासा ५,६४,१; २५५ वः ऋचा हवामहे ।

x 'अरिः अर्यः च' इति द्वे पदे वर्जयित्वा एतानि सर्वाणि पदानि मित्रावरुणाभ्यां सहिताया अर्यमादेवताया गुणबोधकानि सन्ति ।

मनुषं व्रता इव ५, ६६, २; २६९ दर्शतं धायि ।
 शूरः न ५, ६३, ५; २५२ मरुतः रथं युजते ।
 शुक्रः सोमः न ७, ६४, ५; ३३५ एष स्तोमः अयामि ।

शुक्रः सोमः न ७, ६५, ५; ३४० एष स्तोमः अयामि ।
 स्वर न ५, ६६, २; २६९ दर्शतं धायि ।
 मानुषः होता न १, १५३, ३; २३१ सः रातहव्यः विदधे वा ।

मित्रावरुणदेवतामन्त्रेषु निपातदेवताः ।

अग्निः १, १३६, ६-७; २०८-२०९
 अदितिः ५, ६९, ३; २८६ । ७, ६०, ८; ३१६ । ८, २५, ३;
 ३४९ । ७, ६२, ४; ३२८ ×
 अपां सिन्धुः ८, २५, १४-१५; ३५७-३५८
 अर्थमा १, १३६, २-३, ५-६; २०४-५, २०७-८ । ५, ६७, १,
 ३-४; २७४, २७३-२७७ । ७, ६०, ४-६; ३१२-३१४ ।
 ६२, ६; ३३० । ६४, १, ३; ३३१, ३३३
 अश्विना ८, २५, १४-१५; ३५७-३५८
 अदित्यः १, १५२, ३-५; २२४-२२६
 इन्द्रः १, १३६, ६; २०८ । ८, २५, १४-१५; ३५७-३५८
 द्यौः १, १३६, ६; २०८
 द्यावाभूमी ७, ६२, ४; ३२८

पर्जन्यः ५, ६३, ४, ६; २५१, २५३
 पृथिवी ५, ६६, ५; २७२
 भगः १, १३६, २, ६; २०४, २०८
 मरुतः १, १३६, ७; २०९ । ५, ६३, ५-६; २५१-२५२ ।
 ८, २५, १४ १५; ३५७-३५८
 रोदसी १, १३६, ६; २०८
 व. युः ७, ६२, ४; ३२९ । ६४, ५; ३३५ । ६५, ५; ३४०
 विश्वे देवाः १, १३६, ४, ७; २०६, २०९ । ६, ६७, ५; ३०२
 विष्णुः ८, २५, १४-१५; ३५७-३५८
 सूर्यः ७, ६०, २; ३१०
 सोमः १, १३६, ६; २०८

(४) सविता ।

अक्षभ्यः ४, ५३, ४; ४३७
 अद्रोघवक् अ. ६, १, २; ५२०
 अधिपतिः प्रसवानाम् अ. ५, २४, १; ५१८
 अन्तरिक्षप्राः ७, ४५, १; ४७३
 अपसेधन् रक्षमः यातुधानान् १, ३५, १०; ४१८
 अपां नपान् १, २२, ६; ४०४
 अप्रयुच्छन् अहनी एति ५, ८२, ८; ४५९
 अमतिं उर्वीं पृथ्वीं सृजानः ७, ३८, २; ४६८
 अमतिं उर्वीं विश्रयमाणः ७, ४५, ३; ४७५
 अयोहनुः ६, ७१, ४; ४६४
 अरमतिः २, ३८, ४; ४२३
 अर्वाङ् १, ३५, १०; ४१८
 अवन् सदा १, २४, ३; ४०७
 अश्वैः बह्मनः ७, ४५, १; ४७३
 असुरः १, ३५, १०; ४१८ । ४, ५३, १; ४३४
 आवर्तमानः कृष्णेन रजसा १, ३५, २; ४१०

आसवः वा. य. २२, १३; ५०६
 इयानः ७, ३८, ६; ४७२
 ईशानः वार्याणाम् १, २४, ३; ४०७
 उपवाच्यः ४, ५४, १; ४४१
 ऊर्ध्वः विश्वस्य श्रुष्टये २, ३८, २; ४२१
 ऋभुमान् वा. य. ३८, ८; ५१६
 ओण्योः (वर्तमानः) वा. य. ४, २५; ४८८
 कल्पः वा. य. ४, २५; ४८८
 कविः ४, ५३, २; ४३५ । ५, ८१, २; ४४८ । वा. य. ४,
 २५; ४८८
 कविकतुः वा. य. ४, २५; ४८८
 केतपुः वा. य. ९, १; ४९१
 गन्धर्वः वा. य. ९, १; ४९१
 गर्भः देवानाम् वा. य. ३७, १४; ५१४
 गृणानः प्रतिदोषम् १, ३५, १०; ४१८
 मास्पतिः २, ३८, १०; ४२९

चित्रमानुः १,३५,४; ४१२
 चित्रराधाः अ. १,२६,२; ५३१
 चेतन् वा. य. २२,११, ५०४
 चेत्ता पदम् १,२२,५; ४०३
 जगत् निवेशयन् प्रसुवन् अक्तुभिः ४,५३,३; ४३६
 जगतः वशी ४,५३,६; ४३९
 जनः दैव्यः ४,५४,३; ४४३
 जास्पतिः ७,३८,६; ४७२
 तदपाः २,३८,१; ४२०
 (तेजः) आवृणन् ४,५३,२; ४३५
 (तेजः) प्रथयन् ४,५३,२; ४३५
 दधत् रत्नं दक्षं आयुषि पितृभ्यः अ. ७,१४,४; ५२३
 दधत् रत्ना दाशुषे वार्याणि १,३५,८; ४१६
 दधानः कृष्णा रजांसि तविषीम् १,३५,४; ४१२
 दधानः हस्ते नर्या पुरुणि ७,४५,१; ४७३
 दमूनाः अ. ७,१४,४; ५२३
 दाता राधांसि १,२२,८; ४०६
 दिवः धर्ता ४,५३,२; ४३५ । १०,१४९,४; ४८३
 दिवः रातिः ७,३८,५; ४७१
 दिव्यः वा. य. ९,१; ४९१
 देवः [बहुषु स्थलेषु]
 देवानां गर्भः वा. य. ३७,१४; ५१४
 देवता १,२२,५; ४०३
 दैव्यः १,३५,५; ४१३ । २,३८,६; ४२५ । ४,५४,४;
 ४४४
 दैव्यः जनः ४,५४,३; ४४३
 द्रापि पिशङ्गं प्रति मुञ्चते ४,५३,२; ४३५
 धर्ता दिवः ४,५३,२; ४३५ । १०,१४९,४; ४८३
 धर्ता भुवनस्य ४,५३,२; ४३५
 धियः १,३८,१०; ४२९
 धृतव्रतः ४,५३,४; ४३७
 नमस्यः ७,३८,३; ४६८
 नराशांसः २,३८,१०; ४२९
 निवेशनः ४,५३,६; ४३९
 निवेशयन् अमृतं मर्त्यं च १,३५,२; ४१०
 निवेशयन् जगत् अक्तुभिः ४,५३,३; ४३६
 निवेशयन् भूम ७,४५,१; ४७३

नृचक्षा १,२२,७; ४०५ । १०,१३९,२; ४७८ ।
 वा. य. ३०,४; ५०८
 पतिः प्रजानाम् वा. य. ३७,१४; ५१४
 पदं चेत्ता १,२२,५; ४०३
 परिज्मा अ. ७,१४,४; ५२३
 परिभूः त्रिः अन्तरिक्षं महित्वना ४,५३,५; ४३८
 पिता मतीनाम् वा. य. ३७,१४; ५१४
 पुरन्धिः २,३८,१०; ४२९
 पुर(रु)वसुः ७,३८,१; ४६७
 पूर्णगभस्तिः ७,४५,४; ४७६
 पूषा ५,८१,५; ४५१
 पृणन् आ (तेजः) ४,५३,२; ४३५
 पृथिव्याः रातिः ७,३८,५; ४७१
 पृथुपाणिः २,३८,२; ४२१
 प्रचेताः ४,५३,१; ४३४
 प्रजानां पतिः वा. य. ३७,१४; ५१४
 प्रजापतिः ४,५३,२; ४३५
 प्रतिदोषं गृणानः १,३५,१०; ४१८
 प्रथयन् (तेजः) ४,५३,२; ४३५
 प्रसवानां अधिपतिः अ. ५,२४,१; ५१८
 प्रसवि(वी)ता ४,५३,६; ४३९ । वा. य. १०,३०; ५२९
 प्रसुवन् जगत् अक्तुभिः ४,५३,३; ४३६
 प्रसुवन् भूम ७,४५,१; ४७३
 प्रियः वा. य. ४,२५; ४८८
 बाधमान. अप विद्वा दुरिता १,३५,३; ४११
 बहू शिथिरा ७,४५,२; ४७४
 बुध्नः रायः १०,१३९,३; ४७९
 बृहन् ५,८१,१; ४४७
 बृहस्पतिः अ. ७,१६,१; ५२०
 बृहत्सुप्तः ४,५३,६; ४३९
 भगः २,३८,१०; ४२९ । ३,६२,११; ४३२ । ५,८२,१,३;
 ४५२,४५४ । ७,३८,१,६; ४६७,४७२ । वा. य. ८,७;
 ४९०
 भगवक्तः १,२४,५; ४०९
 भुवनस्य धर्ता ४,५३,२; ४३५
 भूम निवेशयन् प्रसुवन् च ७,४५,१; ४७३
 मखः ६,७१,१; ४६१

मतिः वा. य. ४, २५, ४८८
 मति(ती)विद् वा. य. २२, १२, ५०५
 मतीनां पिता वा. य. ३७, १४, ५१४
 मन्द्रजिह्वः ६, ७१, ४, ४६४
 मित्रः ५, ८१, ४, ४५०
 यजतः १, ३५, ३-४; ४११-४१२ । ६, ७१, ४; ४६४
 यातुधानान् अपसेधन् १, ३५, १०, ४१८
 युवा ६, ७१, १; ४६१ । अ. ६, १, २; ५२०
 रक्षसः अपसेधन् १, ३५, १०, ४१८
 रजसः विधर्मणि (स्थितः) ६, ७१, १; ४६१
 रत्नधाः वा. य. ४, २५, ४८८
 रातिः वा. य. २२, १३; ५०६
 रातिः दिवः पृथिव्याः ७, ३८, ५; ४७१
 राधांसि दाता १, २२, ८, ४०६
 राधसः विभक्ता १, २२, ७; ४०५ । वा. य. ३०, ४; ५०८
 रायः बुधः १०, १३९, ३; ४७९
 वन्यः ४, ५४, १; ४४१
 वरेण्यः ५, ८१, २; ४४८ । अ. ७, १४, ४; ५२३
 वशी जगतः स्थातुः उभयस्य ४, ५३, ६; ४३९
 वसूनां संगमनः १०, १३९, ३; ४७९
 वसुपतिः ७, ४५, ३; ४७५
 वहमानः अश्वैः ७, ४५, १; ४७३
 वाजवान् वा. य. ३८, ८; ५१६
 वायोणां ईशानः १, २४, ३; ४०७
 विचक्षणः ४, ५३, २; ४३५
 विचर्षणिः १, ३५, ९; ११०
 विपश्चित् ५, ८१, १; ४४७
 विप्रः ५, ८१, १; ४४७
 विभक्ता वसोः चित्रस्य राधसः १, २२, ७; ४०५ । वा. य. ३०, ४; ५०८
 विशुमान् वा. य. ३८, ८; ५१६
 विश्रयमाणः उरुर्ची अमतिम् ७, ४५, ३; ४७५
 विश्वदेवः ५, ८२, ७; ४५८
 विश्ववारः १०, १४९, ४; ४८३
 शचीपतिः अ. १९, १६, १, ५२४
 संगमनः वसूनाम् १०, १३९, ३; ४७९
 सत्पतिः ५, ८२, ७; ४५८ । वा. य. २२, १३; ५०६

सत्यधर्मा १०, १३९, ३; ४७९
 सत्यप्रसवः वा. य. १०, २८; ४९३
 सत्यसवः ५, ८२, ७; ४५८ । वा. य. ४, २५, ४८८
 सत्यस्य सूनुः अ. ६, १, २; ५२०
 सदा(अ)वन् १, २४, ३; ४०७
 सविता [प्रायशः सर्वत्र ।]
 सह(हा)वा ७, ४५, ३; ४७५
 सिन्धौ अन्तः अ. ६, १, २; ५२०
 सुकतुः ६, ७१, १; ४६१ । वा. य. ४, २५; ४८८
 सुजिह्वः ७, ४५, ४; ४७६
 सुत्रामा वा. य. २०, ७०; ५०२
 सुदक्षः ६, ७१, १; ४६१
 सुनीयः १, ३५, १०, ४१८
 सुपाणिः ७, ४५, ४; ४७६ । वा. य. ११, ६३; ४९९
 सुबाहुः वा. य. ११, ६३; ४९९
 सुमति(ती)वृध् वा. य. २२, १२; ४०५
 सुमृळीकः १, ३५, १०, ४१८
 सुरत्नः ७, ४५, १; ४७३
 सुवानः आ मर्तभोजनं नृभ्यः ७, ३८, २; ४६८
 सुशेवः अ. ६, १, २; ५२०
 सूर्यरश्मिः १०, १३९, १; ४७७
 सृजानः उर्वी पृथ्वीं अमतिम् ७, ३८, २; ४६८
 स्तोम्यः १, २२, ८; ४०६
 स्थातुः वशी ४, ५३, ६; ४३९
 स्वहृगुरिः वा. य. ११, ६३; ४९९
 स्वः वा. य. ४, २५, ४८८
 स्ववान् १, ३५, १०, ४१८
 स्वाधीः ५, ८२, ८; ४५९
 हरिकेशः १०, १३९, १; ४७७
 हविष्पतिः वा. य. २०, ७०, ५०२
 हव्यः ७, ३८, १; ४६७
 हिरण्य-अक्षः १, ३५, ८; ४१६
 हिरण्य-जिह्वः ६, ७१, ३; ४६३ ।
 हिरण्य-पाणिः १, २२, ५; ४०३ । ३५, ९; ४१७ । ६, ७१,
 ४; ४६४ । ७, ३८, २; ४६८ । वा. य. ४, २५; ४८८
 हिरण्य-हस्तः १, ३५, १०, ४१८

सवितुः अश्वाः ।

शितिपादः १, ३५, ५; ४१३
शुभ्रौ (हरी) १, ३५, ३; ४११
श्यावाः १, ३५, ५; ४१३
हरी १, ३५, ३; ४११

सवितुः बाह्व ।

दिवः अन्तान् अनष्टाम् ७, ४५, २; ४७४
बृहन्ता ७, ४५, २; ४७४
शिथिरा ७, ४५, २; ४७४
सुप्रतीका ६, ७१, ५; ४६५
हिरण्यया ६, ७१, १, ५; ४६१, ४६५ । ७, ४५, २; ४७४ ।
पृथु-पाणिः २, ३८, २; ४२१
सु-पाणिः ७, ४५, ४; ४७६
हिरण्य-पाणिः १, २२, ५; ४०३
सु-बाहुः वा. य. ११, ६३; ४९९

हिरण्य-हस्तः १, ३५, १०; ४१८

सवितुः रथः ।

अभीवृत् १, ३५, ४; ४१२
कशनैः विश्वरूपः ,,
बृहन् ,,
हिरण्ययः १०, ३५, २; ४१०
हिरण्यशम्यः १, ३५, ४; ४१२
हिरण्यप्रउगः १, ३५, ५; ४१३

सवितुः रश्मिः ।

असुरः १, ३५, ७; ४१५
गभीरवेपाः ,,
सुनीथः ,,
सुपर्णः ,,
सूर्य-रश्मिः १०, १३९, १; ४७७
पूर्ण-गभस्तिः ७, ४५, ४; ४७६

सवितादेवताया उपमासूची ।

अश्वं इव १०, १४९, १; ४८० धुनिं अधुक्षत् अन्तरिक्षम् ।
यथा आक्षिरसः हिरण्यस्तूपः १०, १४९, ५; ४८४ एवा त्वा अवसे ।
आणि न रथ्यम् १, ३५, ६; ४१४ अमृत अधि तस्थुः तिस्रः यावः ।
इन्द्रः न १०, १३९, ३; ४७९ सत्यधर्मा समरे तस्थौ ।
उपवक्ता इव बाहू ६, ७१, ५; ४६५ उद् अयान् सविता ।
गवः इव ग्रामम् १०, १४९, ४; ४८३ सविता नः एतु ।

देवः इव १०, १३९, ३; ४७९ सविता सत्यधर्मा ।
पतिः इव जायाम् १०, १४९, ४; ४८३ सविता नः एतु ।
यूयुधिः इव अश्वान् १०, १४९, ४; ४८३ सविता नः एतु ।
वाश्रा इव वत्सं सुमना १०, १४९, ४; ४८३ धर्ता दिवः नः न्येतु ।
सोमस्य इव अंशुम् १०, १४९, ५; ४८४ प्रति जागराहम् ।

(५) सूर्यः ।

अंशः सोमस्य अ. ७, ८१, ३; ६८१
अंशुः अ. ७, ८१, ६; ६८४
अक्षितः अ. ७, ८१, ६; ६८४
अमेः चक्षुः १, ११५, १; ५४७
अतिथिः ४, ४०, ५; ५५५
आदितिः ७, ६०, १; ५५७
अदृष्टहा अ. ६, ५२, १; ६२५
अद्रिजाः ४, ४०, ५; ५५५
अधिपतिः इष्टकायाः ते वा. य. १५, ५८; ५२८
अधिपतिः चक्षुषाम् अ. ५, २४, ९; ६१६
अध्वपतिः वा. य. ५, ३३; ५९६
अनिपद्यमानः वा. य. ३७, १७; ६०८

अनीकं चित्रं देवानाम् १, १५५, १; ५४७
अनुमद्यमानः रेभैः ७, ६३, ३; ५६३
अनूनः अ. ७, ८१, ३; ६८१
अन्तरिक्षसत् ४, ४०, ५; ५५५
अपां गर्भः १, १६४, ५२; ६३०
अप्रयुच्छन् १०, ८८, १६; ६७४
अञ्जाः ४, ४०, ५; ५५५
अमर्त्यः [घर्मः] वा. य. ३७, १६; ६०७
अमित्रहा [ज्योतिः] १०, १७०, २; ५८८
अर्णवः ७, ६३, २; ५६२
अर्णवं परि यातः [चन्द्रमाश्च] अ. ७, ८१, १; ६७९
अर्यमा ७, ६०, १; ५५७

असुरह्य [ज्योतिः] १०, १७०, २; ५८८
 असुर्यः ८, १०१, १२; ५६९
 अहः अक्षुभिः मिमानः १, ५०, ७; ५४०
 अहो केतुः अ. ७, ८१, २; ६८०
 अहेळयन् रक्षसि व्रतम् १०, ३७, ५; ५७४
 आ च परा च पथिभिः चरन् वा. य. ३७, १७; ६०८
 आत्मा जगतः तस्थुषः च १, ११५, १; ५४७
 आदित्यः १, ५०, १३; ५४६ । ८, १०१, ११; ५६८ ।
 अ. ६, ५२, १; ६२५
 आदितेयः १०, ८८, ११; ६६९
 आयुः दधत् यज्ञपतौ अविहृतम् १०, १७०, १; ५८७
 आयुः दीर्घं अतिरन् अ. ७, ८१, २; ६८०
 आरोहन् उत्तरां दिवम् १, ५०, ११; ५४४
 आरोहन् बृहतः पाजसः परि १०, ३७, ८; ५७७
 इन्द्रः वा. य. ३३, ३५; ६०३
 उत्तमम् [ज्योतिः] १, ५०, १०; ५४३ । १०, १७०, ३; ५८९
 उत्तरम् [ज्योतिः] १, ५०, १०; ५४३
 उत्तरां दिवं आरोहन् १, ५०, ११; ५४४
 उद्यन् १, ५०, ११; ५४४ । अ. ७, १३, १-२; ६१७-६१८ ।
 अ. १७, १, ३०; १६३
 उद्यन् दिवेदिवे १०, ३७, ७; ५७६
 उरुचक्षाः ७, ६३, ४; ५६४
 ऋतम् ४, ४०, ५; ५५५
 ऋतजाः " " "
 ऋतसत् " " "
 ऋतून् विदधत् नवः जायसे [चन्द्रः] अ. ७, ८१, १; ६७९
 ओजः उरु सह अच्युतं यस्य १०, १७०, ३; ५८९
 ओषधीनां गर्भः दर्शतः १, १६४, ५२; ६३०
 ओषधीनां दर्शतः १, १६४, ५२; ६३०
 कर्तुभिः सुकृतः ७, ६२, १; ५५८
 कर्वाणां मतिः साम. ४५८; ६२८
 कृतः ७, ६२, १; ५५८
 केतुः ७, ६३, २; ५६२ । १०, ३७, १; ५७०
 केतुः अहाम् अ. ७, ८१, २; ६८०
 केतवः [रश्मयः] वा. य. ८, ४०; ५९७
 कृत्वा ७, ६२, १; ५५८

क्रीडन्तौ शिशू [सूर्यः चन्द्रमाः च] ७, ८१, १; ६७९
 गर्भः अपाम् १, १६४, ५२; ६३०
 गोजाः ४, ४०, ५; ५५५
 गोपाः वा. य. ३७, १७; ६०८
 गोपाः विश्वस्य स्थातुः जगतश्च ७, ६०, २; ३१०
 गौः अ. २०, ४८, ४; ६८९
 घर्मः वा. य. ३७, १८; ६०९
 चक्षाः मित्रस्य वरुणस्य १०, ३७, १; ५७०
 चक्षुः तत् ७, ६३, १६; ५६७ । वा. य. ३३, २४; ६०६
 चक्षुः मित्रस्य वरुणस्य अमेः १, ११५, १; ५४७
 चक्षुः मित्रस्य वरुणस्य ७, ६३, १; ५६१
 चक्षुषां अधिपतिः अ. ५, २४, ९; ६१६
 चक्षुषेचक्षुषे मयः १०, ३७, ८; ५७७
 चरन् पथिभिः आ च परा च वा. य. ३७, १७; ६०८
 चरतः पूर्वापरं मायया (सूर्यः चन्द्रमाः च) अ. ७, ८१, १; ६७९
 चरिष्णू [अमिसूर्यौ] १०, ८८, ११; ६६९
 जगतः गोपाः ७, ६०, २; ३१०
 जगतः तस्थुषश्च आत्मा १, ११५, १; ५४७
 जगतः तस्थुषः पतिः ७, ६६, १५; ५६६
 जनानां प्रसवि(वी)ना ७, ६३, २; ५६२
 जन्मानि पश्यन् १, ५०, ७; ५४०
 जातवेदाः १, ५०, १; ५३४
 जायमानः नवःनवः अ. ७, ८१, २; ६८०
 जुषाणः वा. य. ३, १०; ५९५
 ज्योतिः १०, १७०, २; ५८८ । वा. य. ३, ९; ५९४ ।
 अ. १६, ९, ३; ६२६ । साम. ४५८; ६२८
 ज्योतिः उत्तमम् १, ५०, १०; ५४३
 ज्योतिः उत्तरम् १, ५०, १०; ५४३
 ज्योतिषां ज्योतिः १०, १७०, ३; ५८९
 ज्योतिः महि बिभ्रत् १०, ३७, ८; ५७७
 ज्योतिः ते विभु अदाभ्यम् ८, १०१, १२; ५६९
 ज्योतिष्कृत् १, ५०, ४; ५३७
 तपोजाः [घर्मः] वा. य. ३७, १६; ६०७
 तमसः धर्ता [घर्मः] वा. य. ३७, १६; ६०७
 तमसः परि १, ५०, १०; ५४३
 तरणिः ७, ६३, ४; ५६४ । १०, ८८, १६; ६७४

तर्पयन् ऋषिभिः १,१६४,५२; ६३०
तस्थुषः जगतः आत्मा १,११५,१; ५४७
तस्थुषः जगतः पतिः ७,६६,१५; ५६६
बधत् आयुः यज्ञपतौ १०,१७०,१; ५८७
दर्शः अ. ७,८१,४; ६८२
दर्शतः अ. ७,८१,४; ६८२
दर्शतं वपुः त्यत् ७,६६,१४; ५६५
दर्शतः ओषधीनाम् १,१६४,५२; ६३०
दर्शतः गर्भं ओषधीनाम् १,१६४,५२; ६३०
दस्युहन्तमम् [ज्योतिः] १०,१७०,२; ५८८
दिवः धरुणः १०,१७०,२; ५८८
दिवः धर्ता [धर्मः] वा. य. ३७,१६; ६०७
दिवस्पुत्रः १०,३७,१; ५७०
दिवा रोचमानः ७,६०,१; ५५८
दिव्यः १,१६४,५२; ६३०
दुरोणसत् ४,४०,५; ५५५
दूरे अर्थः ७,६३,४; ५६४
दूरे दृश् १०,३७,१; ५७०
दृशः साम. ४५८; ६२८
देवः १,५०,१,८; ५३४,५४१। ७,६३,१,३; ५६१,५६३।
८,१०१,११-१२, ५६८-६९। १०,३७,१; ५७०
देवः [धर्मः] वा. य. ३०,१६,१८; ६०७,६०९
देवजातः १०,३७,१; ५७०
देवः देवत्रा १,५०,१०; ५४३
देवयजनी [पृथिवी] वा. य. ३,५; ५९३
देवश्रुत [धर्मः] वा. य. ३७,१८; ६०९
देवहितम् ७,६६,१६; ५६७। वा. य. ३६,२४; ६०६
देवानां चित्रं अनीकम् १,११५,१; ५४७
देवानां धर्ता [धर्मः] वा. य. ३७,१६; ६०७
देवानां पुरोहितः ८,१०१,१२; ५६९
देवेभ्यः भागं विदधत् अ. ७,८१,२; ६८०
द्यौः (दिवे-चतुर्थी) १,१३६,६; २०८
द्यावापृथिवीवान् अ. १९,१८,५; ६२०
द्विषन्तं मह्यं रन्धयन् १,५०,१३; ५४६
धनजित् [ज्योतिः] १०,१७०,३; ५८९
धरुणः दिवः १०,१७०,२; ५८८

धर्ता तपसः [धर्मः] ३७,१६; ६०७
धर्ता दिवः [धर्मः] ३७,१६; ६०७
धर्ता देवानाम् [धर्मः] ३७,१६; ६०७
धर्मन् १०,१७०,२; ५८८
नवःनवः जायमानः अ. ७,८१,२; ६८०
निजूर्वन् रक्षांसि अ. ६,५२,१; ६२५
नृचक्षाः ७,६०,२; ३१०
नृषत् (सद्) ४,४०,५; ५५५
पतंगः अ. २०,४८,६; ६९१
पतिः जगतः तस्थुषः च ७,६६,१५; ५६६
" युधाम् अ. ७,८१,३; ६८२
" भुवां विश्वासाम् [धर्मः] वा. य. ३७,१८; ६०९
" मनसः विश्वस्य [धर्मः] वा. य. ३७,१८; ६०९
" वचसः विश्वस्य [धर्मः] वा. य. ३७,१८; ६०९
पतिः वचसः सर्वस्य [धर्मः] वा. य. ३७,१८; ६०९
परि यातः अर्णवम् [सूर्याचन्द्रमसौ] अ. ७,८१,१; ६७९
पश्यन् जन्मानि १,५०,७; ५४०
पाजसः बृहतः पारे आरोहन् १०,३७,८; ५७७
पावकः १,५०,६; ५३९
पिता शरस्य अ. १,३,५; ६१०
पुरोहितः देवानाम् ८,१०१,१२; ५६९
पूर्वापरं चरतः मायया [सूर्याचन्द्रमसौ] अ. ७,८१,१; ६७९
पृथिः अ. २०,४८,४; ६८९
प्रजानन् १०,८८,६; ६६४
प्रसवि(वी)ता जनानाम् ७,६३,२; ५६२
प्रेषितः १०,३७,५; ५७४
विश्रत् महि ज्योतिः १०,३७,८; ५७७
बृहत् [ज्योतिः] १०,१७०,२-३; ५८८-५८९
बृहन् १,१६४,५२; ६३०। १,१३६,६; २०८
ब्रध्नः साम. ४५८; ६२८
भगः अ. २,३६,५; ६२३
भास्वन् १०,३७,८; ५७७
भुवना विश्वा विचष्टे अ. ७,८१,१; ६७९
भुवां विश्वासां पतिः [धर्मः] वा. य. ३७,१८; ६०९
भ्राजः १०,१७०,३; ५८९। वा. य. ८,४०; ५९७
भ्राजमानः ७,६३,४; ५६४। १०,८८,१६; ६७४
भ्राजिष्ठः वा. य. ८,४०; ५९७

भ्राजिष्ठः देवेषु वा. य. ८, ४०; ५९७
 मतिः कवीनाम् साम. ४५८; ६२८
 मनसस्पतिः विश्वस्य वा. य. ३७, १८; ६०९
 मयः चक्षुषेचक्षुषे १०, ३७, ८; ५७७
 महः १०, ३७, १; ५७०
 महान् ७, ६३, २; ५६२ । ८, १०१, ११-१२; ५६८-६९
 महान् मला ८, १०१, १२; ५६९
 महान् श्रवसा ८, १०१, १२; ५६९
 महि १०, १७०, ३; ५८९
 महिषः अ. २०, ४८, ५; ६९०
 मला महान् ८, १०१, १२; ५६९
 मानुषाणां साधारणः ७, ६३, १; ५६१
 मित्रस्य वरुणस्य चक्षाः १०, ३७, १; ५७०
 मित्रस्य वरुणस्य अग्नेः चक्षुः १, ११५, १; ५४७
 मित्रस्य वरुणस्य चक्षुः ७, ६३, १; ५६१
 मित्रमहः १, ५०, ११; ५४४ । १०, ३७, ७; ५७६
 मिथुनौ [अमिसूर्यौ] १०, ८८, ११; ६६९
 मिमानः अहः अकतुभिः १, ५०, ७; ५४०
 युधां पतिः अ. ७, ८१, ३; ६८१
 रक्षांसि निजूर्वेन् अ. ६, ५२, १; ६२५
 रन्धयन् द्विषन्तं मह्यम् १, ५०, १३; ५४६
 रुक्मः ७, ६३, ४; ५६४
 रेभैः अनुमद्यमानः ७, ६३, ३; ५६३
 रोचनः १०, ८८, ५; ६६३
 रोचमानः दिवा ७, ६२, १; ५५८
 वचस्य विश्वस्य पतिः वा. य. ३७, १८; ६०९
 वचस्य सर्वस्य पतिः वा. य. ३७, १८; ६०९
 वपुः दर्शतं त्यत् ७, ६६, १४; ५६५
 वरसत् ४, ४०, ५; ५५५
 वरुणः १, ५०, ६; ५३९
 वरुणस्य चक्षाः १०, ३७, १; ५७०
 वरुणस्य चक्षुः १, ११५, १; ५४७ । ७, ६३, १; ५६१
 वर्चः वा. य. ३, ९; ५९४
 वर्चोदाः [रश्मिः] वा. य. २, २६; ५९२
 वसानः सध्रीचीः विषूचीः वा. य. ३७, १७; ६०८
 वसुः ४, ४०, ५; ५५५

वाजसातमम् [ज्योतिः] १०, १७०, २; ५८८
 वातजुतः १०, १७०, १; ५८७
 वायसः [सरस्वान्] १, १६४, ५२; ६३०
 विचक्षणः १, ५०, ८; ५४१ । १०, ३७, ८; ५७७
 विचष्टे विश्वा भुवना अ. ७, ८१, १; ६७९
 विभ्राट् १०, १७०, १-२; ५८७-५८८
 विभ्राजन् ज्योतिषा १०, १७०, ४; ५९०
 विभ्राजमानः ७, ६३, ३; ५६३
 विश्वकर्मन् [ज्योतिः] १०, १७०, ४; ५९०
 विश्वचक्षाः १, ५०, २; ५३५ । ७, ६३, १; ५६१
 विश्वजित् (ज्योतिः) १०, १७०, ३; ५८९
 विश्वदर्शतः १, ५०, ४; ५३७
 विश्वदृष्टः अ. ६, ५२, १; ६२५
 विश्वदेव्यावत् ज्योतिः १०, १७०, ४; ५९०
 विश्वभ्राट् १०, १७०, ३; ५८९
 विश्वस्य गोपाः ७, ६०, २; ३१०
 विश्वानरः वा. य. ३३, ३४; ६०२
 विश्वा भुवनानि आ विभ्रत् १०, १७०, ४; ५९०
 विषूचीः सध्रीचीः वसानः वा. य. ३७, १७; ६०८
 वृत्रहा १०, १७०, २; ५८८ । वा. य. २३, ३५; ६०३
 वृष्टिभिः तर्पयन् १, १६४, ५२; ६३०
 वेदिषत् ४, ४०, ५; ५५५
 व्योमसत् ४, ४०, ५; ५५५
 शतवृष्ण्यः अ. १, ३, ५; ६१०
 शं अहा घृणेन चक्षसा भानुना हिमा १०, ३७, १०; ५७२
 शरस्य पिता अ. १, ३, ५; ६१०
 शिशूः क्रीडन्तौ (सूर्याचन्द्रमसौ) अ. ७, ८१, १; ६७९
 शुक्रम् ७, ६६, १६; ५६७ । वा. य. ३३, २४; ६०६
 शुचिषद् ४, ४०, ५; ५५५
 शोचिष्केशः १, ५०, ८; ५४१
 श्रवसा महान् ८, १०१, १२; ५६९
 श्रेष्ठः (रश्मिः) वा. य. २, २६; ५९२
 श्रेष्ठम् (ज्योतिः) १०, १७०, ३; ५८९
 सजूः देवेन सवित्रा वा. य. ३, १०; ५९५
 सजूः उषसा इन्द्रवत्या वा. य. ३, १०; ५९५
 सत्यम् (ज्योतिः) १०, १७०, २; ५८८
 सध्रीचीः वसानः (घर्मः) वा. य. ३७, १७; ६०८

सपत्नहा (ज्योतिः) १०, १७०, २, ५८८

समः ७, ६२, १, ५५८

समन्तः समप्रः अ. ७, ८१, ४, ६८२

सरस्वान् १, १६४, ५२, ६३०

सविता ७, ६३, ३, ५६३; १०, १५८, २-३; ५८३-८४ ।

वा. य. ३, १०, ५९५ । ऋ. १०, ८५, ९, १३; ६३५, ६३९

सहस्रमानवः साम. ४५८, ६२८

साधारणः मानुषाणाम् ७, ६३, १, ५६१

सुकृतः कर्तृभिः ७, ६२, १, ५५८

सुपर्णः १, १६४, ५२, ६३०

सुभगः ७, ६३, १, ५६१

सुभृतम् [ज्योतिः] १०, १७०, २, ५८८

सुसंहशः १०, १५८, ५, ५८६

सूरः १, ५०, २, ९; ५३५, ५४२ । ७, ६३, ५, ६३१

सूर्यः (प्रायः सर्वत्र) ७, ६०, २, ३१०

सोमस्य अंशः अ. ७, ८१, ३, ६८१

स्वः वा. य. १, ११; ५९१ । अ. १६, ९, ३, ६२६ ।

अ. २०, ४८, ४, ६८९

स्वयम्भूः वा. य. २, २६; ५९२

हंसः ४, ४०, ५, ५५५

हरिकेशः १०, ३७, ९; ५७८

होता ४, ४०, ५, ५५५

सूर्यस्य रश्मयः ।

अपः वसानाः १, १६४, ४७, ५५४

ऋतस्य सद्दनात् आवृत्तन् (ये) १, १६४, ४७; ५५४

केतवः १, ५०, ३, ५३६

केतवः ये देवं वहन्ति १, ५०, १, ५३४

कृष्णं नियानं हरयः १, १६४, ४७; ५५४

देवाः उदिताः १, १६५, ६, ५५२

द्यावः (ऋभिः-तृतीया) अ. २०, ४८, ६, ६९१

आजन्तः यथा अमयः १, ५०, ३, ५३६

रश्मयः सप्त १, ५०, ३; ५३६ । वा. य. ८, ३, ५९७ ।

अ. ७, १०७, १, ६८५

सुपर्णाः १, १६४, ४७; ५५४

हरितः १, ११५, ५, ५५१

है०अवितिः०१ १५

सूर्यस्य द्विषन्नाशनी शक्तिः ।

अर्विः अ. २, २१, ३, ६१३ ।

तपः ,, १, ६११

तेजः ,, ५, ६१५

शोचिः ,, ४, ६१४

हरः ,, २, ६१२

सूर्यस्य अश्वानां गुणबोधकपदानि ।

अनुमायासः १, ११५, ३, ५४२

अश्वः १, ११५, ३; ५४२

आशुः ७, ६६, १४; ५६५

एतग्वाः १, ११५, ३; ५४२

एतगाः ७, ६३, २, ५६२ । ७, ६६, १४; ५६५

एतशाः १०, ३७, ३; ५७२

केतवः १, ५०, १, ५३४

चित्राः १, ११५, ३; ५४२

देवः ७, ६६, १४; ५६५

धूर्ध्रु युक्तः ७, ६६, १४; ५६५

नप्तयः रथस्य १, ५०, ९; ५४२

चन्द्रमसः सहचारित्वे सूर्यस्य गुणबोधकपदानि ।

अधिपतिः अ. ६, १०, ३, ११३५

अहो केतुः १०, ८५, १९; ९७२

उषसां अग्रं एति ,, ,,

चक्षोः (अस्य पुरुषस्य) अजायत ऋ. १०, ९०, १३, ९७३ ।

वा. य. २१, २२; ९७८

चरते एकाकी वा. य. २३, १०, ९७७

नमस्यन्तः १, ११५, ३; ५४२

पतराः १०, ३७, ३; ५७२

भद्राः १, ११५, ३; ५४२

युक्तः धूर्ध्रु ७, ६६, १४; ५६५

रथस्य नप्तयः १, ५०, ९; ५४२

शुन्ध्युवः १, ५०, ९; ५४२

सप्त १, ५०, ८-९; ५४१-४२

स्वयुक्तयः १, ५०, ९; ५४२ । ७, ६६, १५, ५६६

स्वसारः ७, ६६, १५, ५६६

हरितः १, ११५, ३-४, ५४९-५० । ७, ६६, १५, ५६६

सूर्यसहचारी-वैश्वानराग्नेः गुणबोधकपदानि ।

(ऋ० १०,८८,१-१९; ६५९-७७)

अजरः ३; ६६१
 अजुर्यः १३; ६७१
 अध्यक्षः यक्षस्य १३; ६७१
 अर्चिषा यन् १२; ६७०
 आजुहवुः यस्मिन् विश्वा भुवनानि ९; ६६७
 ऋजूयमानः अर्चिषा पृथिवीं यां च ९; ६६७
 कः १; ६५९
 कविः १४; ६७२
 जातवेदाः ४-५; ६६२-६३
 तनूपाः ८; ६६६
 तविष् (षम्-द्वितीया) १३; ६७१
 दिवियोनिः ७; ६६५
 दिविस्पृक् १; ६५९
 दादिवन् १४; ६७२
 दृशेन्यः महिना ७; ६६५

देवजुष्टः ४; ६६२
 पचति यः विश्वरूपा ओषधीः १०; ६६८
 प्रथमः होता ४; ६६२
 बृहन् ३, १३; ६६१, ६७१
 भुवनस्य मूर्धनि अतिष्ठः ५; ६६३
 मूर्धा भुवा भवति नक्तम् ६; ६६४
 यज्ञः ८; ६६६
 यज्ञियः ५; ६६३
 रोदसिप्राः ५, १०; ६६३, ६६८
 विभावा ७; ६६५
 वेदयं पृथिवी द्यौः आपः ८; ६६६
 समिद्धः ७; ६६५
 सूक्तवाक् ८; ६६६
 स्वर्वित् १; ६५९
 होता प्रथमः ४; ६६२

सूर्यदेवताया उपमासूची ।

यथा अक्षेत्रविद् मुग्धः ५, ४०, ५, ५५६ भुवनानि अदीधयुः ।
 यथा अमयः भ्राजन्तः १, ५०, ३; ५३६ वा. य. ८, ४०, ५९७
 केतवः रश्मयः वि अदृश्रम् ।
 चर्म इव ७, ६३, १; ५६१ देवः तर्मासि समविद्यक् ।
 जातं जात्रीः यथा हृदा अ. २०, ४८, २; ६८७ ता अर्षन्ति शुभ्रयः ।
 त्ये तायवः यथा १, ५०, २; ५३५ नक्षत्राः अक्तुभिः अप यन्ति ।
 द्यौः इव भूम्ना वा. य. ३, ५; ५९३ अहं भूयासम् ।
 पृथिवी इव वरिष्णा वा. य. ३, ५; ५९३ अहं भूयासम् ।
 भागं न वा. य. ३३, ४१, ६०४ जाते अनिमाने वसूनि प्रति ।

मर्यः न योषाम् १, ११५, २, ५४८ सूर्यः उषसं पश्चात् अभ्येति ।
 यथा युवानः मत्स्यः वा. य. ३३, ३४, ६०२ तथानः विश्वं मनीषा ।
 अभि वत्सं न धेनवः अ. २०, ४८, १, ६८६ त्वा अभि गिरः ।
 श्येनः न दीयन् ७, ६३, ५; ६३१ पाथः अनु एति ।
 श्रायन्तः इव सूर्यम् वा. य. ३३, ४१, ६०४ वयं विश्वा इन्द्रस्य ।
 यथा सूर्यः... नक्षत्राणां अ. ७, १३, १; ६१७ एवा स्त्रीणां वर्चः ।
 उद्यन् सूर्यः इव अ. ७, १३, २; ६१८ द्विषतां वर्चः आ वदे ।
 सुपर्णः वसतेः इव अ. ६, ८३, १; ६७८ अपचितः प्र पतत ।

सूर्यदेवतामन्त्रेषु निपातदेवतानां गुणबोधकपदानि ।

अग्निः १, १६४, ४६; ५५३ । ७, ६२, २-३; ५५९-५६०
 [चन्द्रः ऋतावान् । (५६०)]
 अग्निः (पार्थिवः) १०, १५८, १, ५८२
 अदितिः १, ११५, ६; ५५२
 अर्यमा ७, ६२, २; ५५९
 आपः १०, ३७, ६; ५७५

इन्द्रः १, १६४, ४६; ५५३ । १०, ३७, ८; ५७५ । अ. ७,
 ८१, ६; ६८४ । भुवनस्य गोपाः अक्षितः अक्षितं मक्षयन्,
 अंशुं आप्याययन् ।
 चन्द्राः ७, ६२, ३; ५६० (अयं शब्दः मित्रावरुणामिनां विशेष-
 णं वा ।)
 देवाः १, ११५, ६; ५५२ । १०, ३७, ५, ११-१२, ५७४, ५८०-८१

* दूष्णो भक्षः- भजासः, निरुम्भाः ६, ५५, ६, ७६४ ।

अश्वहयः रथानाम् १०, २६, ५, ७८३
 अहेलमानः १, १३८, ३, ४, ७३०-३१
 आघृणिः १, २३, १३-१४; ७१५-१६ । १३८, ४; ७३१ ।
 ३, ६२, ७; ७३२ । ६, ४८, १६; ७३५ । ५३, ३, ८-९;
 ७४१, ७४६-४७ । ५५, १, ३; ७५९, ७६१ । १०, १७, ५;
 ७७७
 आधवः विप्राणाम् १०, २६, ४; ७८२
 आधीषमाणायाः पतिः १०, २६, ६, ७८४
 इच्छमानः श्रवः ६, ५८, ३; ७७३
 इनः १०, २६, ७; ७८५
 इनः पुष्टीनाम् १०, २६, ७; ७८५
 इन्दुर्न वृषा १०, २६, ३; ७८०
 इन्द्रस्य भ्राता ६, ५५, ५; ७६३
 इर्यः ६, ५४, ८; ७५६
 इलस्पतिः ६, ५८, ४; ७७४
 ईशानः ६, ५४, ८; ७५६
 ईशानः राधसः महः ६, ५५, २; ७६०
 उग्रः ६, ५३, ४; ७४२
 उदशंसः १, १३८, ३; ७३०
 ऋतस्य रथी ६, ५५, १; ७५९
 ऋषिः १०, २६, ५; ७८३
 कपर्दी ६, ५५, २; ७६०
 कविः ६, ५३, ७; ७४५
 कामेन कृतः ६, ५८, ४; ७७४ । वा. य. ३४, ४२; ७८८
 कृतः कामेन ६, ५८, ४; ७७४ । वा. य. ३४, ४२; ७८८
 गोपाः भुवनस्य १०, १७, ३; ७७५
 जनश्रीः ६, ५५, ६; ७६४
 जारः स्वसुः ६, ५५, ४-५; ७६२-६३
 तवस् ६, ५८, ४; ७७४
 तुविजातः १, १३८, १; ७२८
 दस्मः १, ४२, १०; ७२७
 दस्मवर्चाः ६, ५८, ४; ७७४
 दस्रः १, ४२, ५; ७२२ । ६, ५६, ४; ७६८
 दिवः सुबन्धुः ६, ५८, ४; ७७४
 दिधिषुः मातुः ६, ५५, ५; ७६३
 देवः १, ४२, १; ७२८ । १३८, २; ७२९ । ६, ५५, ६; ७६४ ।
 ५८, २; ७७२ । १०, २६, ४; ७८२

देवासः यं सूर्यायै अहुः ६, ५८, ४; ७७४
 देवैः समः प्रिया ६, ४८, १९; ७३८
 धारा रायः ६, ५५, ३; ७६१
 धियं जिन्वः ६, ५८, २; ७७२
 धीवतोधीवतः सखा ६, ५५, ३; ७६१
 नपात् विमुचः १, ४२, १; ७२८ । ६, ५५, १; ७५९
 नियुद्धः १०, २६, १; ७७९
 नावः यस्य हिरण्ययीः अन्तः समुद्रे चरन्ति अन्तरिक्षे चरन्ति
 ६, ५८, ३; ७७३
 नौभिः यः सूर्यस्य दूत्यां याति ६, ५८, ३; ७७३
 पतिः शुचस्य १०, २६, ६; ७८४
 पतिः शुचायाः १०, २६, ६; ७८४
 पतिः आधीषमाणायाः १०, २६, ६; ७८४
 पथस्पतिः ६, ५३, १; ७३९
 परः मर्त्यैः ६, ४८, १९; ७३८
 पशुपाः ६, ५८, २; ७७२
 पुरुषुतः ६, ५६, ४; ७६८
 पुष्टीनां इनः १०, २६, ७; ७८५
 पूषा [प्रायः सर्वत्र ।]
 पृथिव्याः सुबन्धुः ६, ५८, ४; ७७४
 प्रजानन् १०, १७, ५-६; ७७७-७८
 प्रत्यर्धिः यज्ञियानाम् १०, २६, ५; ७८३
 भुवना संचक्षाणः ६, ५८, २; ७७२
 भुवना संपश्यति ३, ६२, ९; ७३४
 भुवनस्य गोपाः १०, १७, ३; ७७५
 भुवने विश्वे अर्पितः ६, ५८, २; ७७२
 भ्राता इन्द्रस्य ६, ५५, ५; ७६३
 मखः १, १३८, १; ७२८
 मघवा ६, ५८, ४; ७७४
 मतीनां साधनः १०, २६, ४; ७८२
 मनुहितः १०, २६, ५; ७८३
 मन्तुमत् (मः-संज्ञो) १, ४२, ५; ७२२ । ६, ५६, ४; ७६८
 मयोभूः १, १३८, १-२; ७२८-२९
 मर्त्यैः परः ६, ४८, १९; ७३८
 महः राधसः ईशानः ६, ५५, २; ७६०
 मातुः दिधिषुः ६, ५५, ५; ७६३
 यज्ञानां प्रत्यर्धिः १०, २६, ५; ७८३

यावयत्सखः विप्रस्य १०, २६, ५; ७८३
 रथानां अश्वहयः १०, २६, ५; ७८३
 रथी ऋतस्य ६, ५५, १; ७५९
 रथीतमः ६, ५५, २; ७६० । ५६, २-३; ७६६-६७
 ररिवान् १, १३८, ४; ७३१
 राधसः महः ईशानः ६, ५५, २; ७६०
 रायः धारा ६, ५५, ३; ७६१
 राशिः वसोः ६, ५५, ३; ७६१
 वचस्या कृतः वा. य. ३४, ४२; ७८८
 वसोः राशिः ६, ५५, ३; ७६१
 वाजपत्यः ६, ५८, २; ७७२
 वाजानां पतिः १०, २६, ७; ७८५
 वाजी ६, ५५, ४; ७६२
 वासोवायः अवीनाम् १०, २६, ६; ७८४
 विद्वान् १०, १७, ३; ७५५
 विपः १०, २६, २; ७८०
 विप्राणां आधवः १०, २६, ४; ७८२
 विसुचः नपात् १, ४२, १; ७१० । ६, ५५, १; ७५९
 विश्वा अभि विपश्यति ३, ६२, २; ७३४
 विश्वस्य अर्थिनः सखा १०, २६, ८; ७८६

विश्वे भुवने अर्थितः ६, ५८, २; ७७२
 विश्वसौभगः १, ४२, ६; ७२३
 वृषा १०, २६, ३; ७८०
 शृण्वन् ६, ५४, ८; ७५६
 शुचस्य पतिः १०, २६, ६; ७८४
 शुचायाः पतिः १०, २६, ६; ७८४
 श्रवः इच्छमानः ६, ५८, ३; ७७३
 श्रुतः आरात् ६, ५६, ५; ७६९
 सखा ६, ५५, २, ५; ७६०, ७६३ । १०, २६, ७; ७८५
 सखा विश्वस्य अर्थिनः १०, २६, ८; ७८६
 समः देवैः प्रिया ६, ४८, १; ७३०
 सर्ववीरः १०, १७, ५; ७७७
 साधनः मतीनाम् १०, २६, ४; ७८२
 सुबन्धुः दिवः पृथिव्याः च ६, ५८, ४; ७७४
 सूरः ७, ५६, ३; ७६७
 स्वन्नः ६, ५८, ४; ७७४
 स्वधानान् ६, ५८, १; ७७१
 स्वयुः जारः ६, ५५, ४-५; ७६२-६३
 स्वस्तिदाः १०, १७, ५; ७७७
 हिरण्यवाशीमतमः १, ४२, ६; ७२३

पूषादेवताया उपमासूची ।

अजिरं न १, १३८, २; ७२९ त्वा यामनि स्तोमैः प्र कृण्वे ।
 इन्दुः न १०, २६, ५; ७८१ सः सुष्ठुतीनां वेद ।
 उष्ट्रः न १, १३८, २; ७२९ त्वं मृधः पीपरः ।
 (यथा) वेः ग्रीवाः ६, ४८, १७; ७३६ एवा सूरः मा अहः ।
 हतेः इव अच्छिद्रस्य ६, ४८, १८; ७३७ दधन्वतः ते सख्यं—।
 शौः इव ६, ५८, १; ७७१ त्वं असि ।

यथा नष्टं पशुम् १, २३, १३; ७१५ हे पूषन्... धरणं दिवः ।
 यथा पुरा ६, ४८, १२; ७३८ तथा नः त्वं नूनं अव ।
 यथा मृधः ऋणवः १, १३८, २; ७२९ त्वा स्तोमैः प्र कृण्वे ।
 गोभिः यवै न चर्कषत् १, २३, १५; ७१७ स मर्त्यं इन्दुभिः ।
 वधूयुः योषणां इव ३, ६२, ८; ७३३ वाजयन्तीं धियं अव ।
 रथं न वाजसातये ६, ५३, १; ७३९ वयं त्वा धिये अयुज्महि ।

[४] भगः ।

अदितेः पुत्रः ७, ४१, २; ७९३ । अ. ३, १६, २; १६८
 अन्धः अ. ६, १२९, ३; ८०३
 आहितः वृक्षेषु " "
 उग्रः ७, ४१, २; ७९३ । अ. ३, १६, २; १६८
 जितः " " " "
 देवः x अ. ३, १६, ५; १७०

पुत्रः अदितेः ३, १६, ५; १७०
 पुनःसरः अ. ६, १२९, ३; ८०३
 पुर एता ७, ४१, ५; ७९६ । अ. ३, १६, ५; १७०
 प्रणेता ७, ४१, ३; ७९४ । अ. ३, १६, ३; १६९
 प्रविद्वान् अ. ५, २६, ९; ८००
 भगः [प्रायः सर्वत्र ।]

x अत्र 'देवाः' इति ऋग्वेदपाठः । अथर्व. ३, १६, २-३, ५; १६८-७० = ऋग्वेद. ७, ४१, २-३, ५; ७९३-९४, ७९६ .
 समाना एव ।

भगवान् ७,४१,५; ७९६। अ. ३,१६,५; १७०
 मघवा ७,४१,४; ७९५
 वसुविद् ७,४१,६; ७९७
 विधर्ता ७,४१,२; ७९३। अ. ३,१६,२; १६८

वृक्षेषु आहितः अ. ६,१२९,३; ८०३
 शांशपः अ. ६,१२९,१; ८०१
 सत्यराधः ७,४१,३; ७९४। अ. ३,१६,३; १६९
 सुयुजः अ. ५,२६,९; ८००

भगदेवतायां उपमासूची ।

अश्वः कनिकद् अ. २,३०,५; ७९८ भगेन अहं सहागमम् ।
 दक्षिकावा इव शुचये पदाय ७,४१,६; ७९७ उवसः अत्रराय ।

रथं इव अश्वः वाजिनः ७,४१,६; ७९७ उवसः अर्वाचीनं भगं ।
 सविता भगः सूर्या इव अ. १४,१,५३; ८०६ प्रजया परि धताम् ।

(७) विष्णुः ।

अकुमारः १,१५५,६; ८३२
 अदब्धः अ. १७,१,१२; १४५
 अदान्यः १,२२,१८; ८२०
 अदब्धेन ब्रह्मणा वावृधानः अ. १७,१,१२; १४५
 अन्यरूपः सामिधे ७,१००,६; ८४७
 अपोर्णुते ब्रजम् (यः) १,१५६,४; ८३६
 अप्रतीता [वरुणश्च] वा. य. ८,५९; ८७७
 अवृकः १,१५५,४; ८३०
 आरोहन् त्रिदिवम् अ. १७,१,१०; १४३
 इनः १,१५५,४; ८३०
 इन्द्रस्य युज्यः सखा १,२२,१९; ८२१
 उत्तरं सधस्थं अस्कभायत् १,१५४,१; ८२४। अ. ७,२६,
 १; ८६१
 उरुकमः १,१५४,५; ८२८
 उदगायः १,१५४,१,३,६; ८२४, ८२६, ८२९। ७,१००,१;
 ८४२। वा. य. ८,१; १०७, ८६०
 ऋक्भिः विमिमानः १,१५५,६; ८३२
 ऋतस्य गर्भः १,१५६,३; ८३५
 एवयाः १,१५६,१; ८३३
 एवयावन् (घा) ७,१००,२; ८४३
 कुचरः १,१५४,२; ८२५। अ. ७,२६,२; ८६२
 गर्भः ऋतस्य १,१५६,३; ८३५
 गिरिक्षित् १,१५४,३; ८२६
 गिरिष्ठाः १,१५४,२; ८२५। अ. ७,२६,२; ८६२
 गोपाः १,२२,१८; ८२०
 घृतासुतिः १,१५६,१; ८३३
 तन्वा मात्रया परः वृधनः ७,९९,१; ८३८

तवसः ७,१००,५; ८४६
 तवीयान् तवसः ७,१००,३; ८४४
 त्राता १,१५५,४; ८३०
 त्रिदिवं आरोहन् अ. १७,१,१०; १४३
 त्रिधातु दाधार १,१५४,४; ८२७
 त्रिस (ष) धस्थः १,१५६,५; ८३७
 दक्षं उत्तमं अहर्षिदं दाधार १,१५६,४; ८३६
 देवः ७,९९,१-२; ८३८-३९
 दैव्यः १,१५६,५; ८३७
 धर्माणि धारयन् १,२२,१८; ८२०
 नवीयाः १,१५६,२; ८३४
 ना ८,२५,१५; ३५८
 नाकं ऋष्वं उदस्तभ्राः ७,९९,२; ८३९
 पार्थिवानि रजांसि विममे १,१५४,१; ८२४
 पूर्वहृतौ [वरुणश्च] वा. य. ८,५९; ८७७
 पूर्यः १,१५६,२-३; ८३४-८३५
 पृथिव्याः प्राचीं ककुभं दाधर्थ ७,९९,२; ८३९
 बृहच्छरीरः १,१५५,६; ८३२
 ब्रह्मणा वावृधानः अ. १७,१,१२; १४५
 भूमिः मृगः न १,१५४,२; ८२५
 भूर्गिः ८,२५,१५; ३५८
 मीढ्वान् १,१५५,४; ८३०। ८,२५,१४; ३५७
 युवा १,१५५,६; ८३२
 वनीयन् ८,२५,१५; ३५८
 वावृधानः ब्रह्मणा अ. १७,१,१२; १४५
 विचक्रमाणः त्रेधा १,१५४,१; ८२४। अ. ७,२६,१; ८६४
 विभूतपुत्रः १,१५६,१; ८३३

विमिमानः ऋकभिः १,१५५,६; ८३२
 विष्णुः× [प्रायः सर्वत्र ।] अ. १७,१,६-१९, १३९-५२
 वीरतमा वीर्येभिः [वरुणश्च] वा. य. ८,५९; ८७७
 वृधानः तन्वा मात्रया परः ७,९९,१; ८३८
 वृषा १,१५४,३,६; ८२६, ८९९
 वेधाः १,१५६,२,५; ८३४, ८३७
 व्रजं अपोर्णते १,१५६,४; ८३६
 शविष्ठा [वरुणश्च] वा. य. ८,५९; ८७०
 शिपिविष्टः ७,९९,७; ८४१ । १००,५-६; ८४६-८४७
 शेष्यः १,१५६,१; ८३३
 सखा युज्यः इन्द्रस्य १,२२,१९, ८२१

सखिवान् १,१५६,४; ८३६
 सजोषाः ८,२५,१४; ३५७
 सप्रथाः १,१५६,१, ८३३
 समिधे अन्यरूपः ७,१००,६; ८४७
 सहोभिः पत्येते [वरुणश्च] ८,५९; ८७७
 सुकृत्तरः १,१५६,५; ८३७
 सुजनिमा ७,१००,४, ८४५
 सुमज्जानिः १,१५६,२; ८३४
 स्थविरः ७,१००,३; ८४४
 स्वर्दश १,१५५,५, ८३१

विष्णुदेवताया उपमासूची ।

चक्रं न १,१५५,६; ८३२ विष्णु वृत्तं व्यतीतम्...अर्वाविपत् । मित्रः न १,१५६,१; ८३३ शेष्यः सुप्रथाः भव ।
 दिविः इव चक्षुः १,२२,२०, ८२२ सूरयः विष्णो तत्पदं । मृगः न १,१५४,२; ८२५ भीमः कुचरः गिरिष्ठा प्र स्तवते ।

विष्णोः विक्रमणम् ।

| | | |
|----------------|--|--|
| १,२२,१६; ८१८ | विष्णुः विचक्रमे । पृथिव्याः सप्त धामभिः । | त्रिभिरित्येभ्यः । |
| ,, १७; ८१९ | इदं विष्णुर्वि चक्रमे त्रेधा नि दधे पदम् । | १,१५५,४; ८३० यः पार्थिवानि त्रिभिरिद्विगामभिरुक्कमिष्ट । |
| ,, १८, ८२० | त्रीणि पदा वि चक्रमे विष्णुः । | ७,१००,३; ८४४ त्रिदैवः पृथिवीमेष एतां वि चक्रमे शतर्चसं महित्वा । |
| १,१५४,१; ८२४ | विचक्रमाणस्त्रेधोरुगायः । | |
| अ. ७,२६,१; ८६१ | " | ,, ४; ८४५ वि चक्रमे पृथिवीमेष एताम् । |
| १,१५४,२, ८२५ | यस्योरुषु त्रिषु विक्रमणेष्वधि क्षियन्ति | १,१५५,५; ८३१ द्वे इदस्य क्रमणे स्वर्दशोऽभिख्याय मर्त्यो भुरण्यति । तृतीयमस्य नकिरा दधर्षति वयश्चन पतयन्तः पतत्रिणः ॥ |
| अ. ७,२६,३, ८६३ | भुवनानि विश्वा । | |
| १,१५४,३; ८२६ | य इदं दीर्घं प्रथतं सधस्थमेको विममे | |

विष्णोः पदम् ।

| | | |
|--------------|--|---|
| १,२२,१७; ८१९ | ...विष्णुः...त्रेधा नि दधे पदम् । | १,१५४,४; ८२७ यस्य त्री पूर्णा मधुना पदान्यक्षीयमाणा स्वधया मदन्ति । |
| ,, २०; ८२२ | समूळहमस्य पांसुरे ॥ | ,, ५; ८२८ विष्णोः पदे परमे मध्व उत्सः । |
| ,, २१; ८२३ | तद्विष्णोः परमं पदं सदा पश्यन्ति सूरयः । | ,, ६; ८२९ अत्राह तदुरुगायस्य वृष्णः परमं पदमव भाति भूरि । |
| | तद्विप्रासो ... समिन्धते । विष्णोर्यत् परमं पदम् ॥ | |

(८) विवस्वान् ।

राजा अ. ६,११६,१; ८८०

वैवस्वतः अ. ६,११६,१-२; ८८०-८८१

×अत्र अथर्व १७,१,६-१९, १३९-१५२ मंत्रेषु वर्तमानानि पदानि विष्णुस्वरूपेण वर्तमानस्य आदित्यस्य सन्ति ।

(९) संवत्सरः कालः ।

| संवत्सरपञ्चकम् । | |
|------------------|-------------------|
| संवत्सरः | वा. य. २७,४५; ८८५ |
| परिवत्सरः | " " |
| इदावत्सरः | वा. य. ३०,१५; ८८६ |
| इद्वत्सरः | " " |
| वत्सरः | " " |
| संवत्सरावयवाः । | |
| उषसः | वा. य. २७,४५; ८८५ |
| अहोरात्राः | " " |
| अर्धमासाः | " " |
| मासाः | " " |
| ऋतवः | " " |
| संवत्सरः | " " |

संवत्सरकालयो गुणबोधकपदानि ।

संवत्सरः ।

| | |
|------------------|-------------------|
| पतिः एकाष्टकायाः | अ. ३,१०,८; ८८७ |
| सुपर्णचित् | वा. य. २७,४५; ८८५ |

कालः ।

| | |
|----------------|-----------------|
| ईश्वरः सर्वस्य | अ. १९,५३,८; ८९९ |
| देवः परमो नु | अ. १९,५४,५; ९०६ |
| देवः प्रथमो नु | अ. १९,५३,२; ८८३ |
| पिता प्रजापतेः | अ. १९,५३,९; ९०० |
| ब्रह्मा | अ. १०,५३,९; ९०० |

(१०) ऋतवः ।

द्वादशदेवाः, संवत्सरस्य दंष्ट्राः । अ. ११,६,२२, ९६८

ऋतूनां नामानि ।

| | |
|-----------------|---------------------------------------|
| वसन्तः | वा. य. २१,२३, ९४० । अ. १५,३,४; ९५२ । |
| अ. १२,१,३६; ९६ | |
| ग्रीष्मः | वा. य. २१,२४; ९४१ । अ. १५,३,४; ९५२ । |
| अ. १२,१,३६; ९६९ | |
| वर्षाः, वर्षाणि | वा. य. २१,२५; ९४२ । अ. १५,३,४; ९५२ । |
| अ. १२,१,३६; ९६९ | |
| शरदः, शारदः | वा. य. २१,२६; ९४३ । अ. १५,३,४; ९५२ । |
| अ. १२,१,३६; ९६९ | |
| हेमन्तः | वा. य. २१,२७; ९४४ । अ. १२,१,३६; ९६९ । |
| शैशिरः | वा. य. २१,२८; ९४५ । अ. १२,१,३६; ९६९ |

ऋत्ववयवानां मासानां नामानि ।

| | |
|---------------|-------------------------------|
| मधुः, माधवः | वा. य. ७,३०, ९३१ । १३,२५; ९३२ |
| शुक्रः, शुचिः | वा. य. ७,३०; ९३१ । १४,६; ९३३ |
| नभः, नभस्यः | वा. य. ७,३०; ९३१ । १४,१५; ९३४ |
| इषः, ऊर्जः | वा. य. ७,३०, ९३१ । १४,१६; ९३५ |
| सहः, सहस्यः | वा. य. ७,३०; ९३१ । १४,२७; ९३६ |
| तपः, तपस्यः | वा. य. ७,३०; ९३१ । १५,५७; ९३८ |
| अंहसस्पतिः | वा. य. ७,३०; ९३१ |

| | | | |
|---|----------|---------------|---------------------|
| 'हविरिन्द्रे वयो दधुः' इति । वा. य. २१,२३-२८, ९४०-४५ | | | |
| मन्त्रेषु इन्द्रे हविरायाधाने वसन्तादीनामितरैः सह सहकारित्वम् । | | | |
| ऋतुनाम । देवाः । स्तोमनाम । पृष्ठ(साम)नाम । मंत्रांकः | | | |
| वसन्तः | वसवः | त्रिवृत् | रथन्तरम् २१,२३; ९४० |
| ग्रीष्मः | रुद्राः | पञ्चदशः | बृहत् " २४, ९४१ |
| वर्षाः | आदित्याः | सप्तदशः | वैरूपम् " २५, ९४२ |
| शारदः | ऋभवः | एकविंशः | वैराजम् " २६; ९४३ |
| हेमन्तः | मरुतः | त्रिणवः | शाक्रम् " २७; ९४४ |
| शैशिरः | अमृताः | त्रयस्त्रिंशः | रैवतम् " २८; ९४५ |

व्रात्यस्य (ब्रह्मचारिणः) मासानां गोप्रादयः ।

[अथर्व १५-४ सूक्तं । ९५३-६४]

| | | | |
|---------------------|------------------------------|---------------|-------------|
| दिक्नाम । | गोसारौ । | अनुष्ठातारौ । | मंत्रांकः । |
| प्राची वासन्तौ मासौ | बृहत् रथन्तरं च । | २-३; ९५३-५४ | |
| दक्षिणा प्रैष्मौ | " यज्ञायज्ञियं वामदेव्यं च । | ५-६; ९५५-५६ | |
| प्रतीची ऋषिकौ | " वैरूपं वैराजं च । | ८-९; ९५७-५८ | |
| उदीची शारदौ | " इयेतं नौधसं च । | ११-१२; ९५९-६० | |
| ध्रुवा हेमनौ | " भूमिः अग्निः च । | १४-१५; ९६१-६२ | |
| ऊर्वा शैशिरौ | " शौः आदित्यः च । | १७-१८; ९६३-६४ | |

(१०) ऋतवः । (ऋग्वेद-संहिता)

| सूक्तमंत्र- क्रमांकः | मंत्रोक्त- ऋतुवाचक पदम् | सोमपान- पात्रम् | मन्त्रोक्त- देवतापदम् (१,१५।२,३६-३७) | मंत्रोक्त- ऋतुवाचक पदम् | कात्यायन- सर्वानुक्रमण्युक्ता देवताः | सोमपान- पात्रम् | सूक्तमंत्र- क्रमांकः । |
|-------------------------|-------------------------------|--------------------|--|-------------------------------|--|---------------------------|---------------------------|
| १,१५, | | | उभयत्र | | | | २,३६, |
| १,१०७ | ऋतुना | ... | इन्द्रः | ... | मधुः | होत्रम् | १,११९ |
| २,१०८ | " | पोत्रम् | मरुतः | ... | माघवः | पोत्रम् | २,१२० |
| ३,१०९ | " | ... | त्वष्टा | ... | शुक्रः | ... | ३,१२१ |
| ४,११० | " | ... | अग्निः | ... | शुचिः | आग्नीध्रम् | ४,१२२ |
| ५,१११ | ऋतून् अनु | ब्राह्मणम् | इन्द्रः | ... | नभः | ब्राह्मणम् | ५,१२३ |
| ६,११२ | ऋतुना | ... | मित्रावरुणौ | ... | नभस्यः | प्रशास्त्रम् | ६,१२४ |
| [सायनभाष्यानुसारेण] | | | | | | | २,३७, |
| ७,११३ | ... | ... | द्विणोदाः | ऋतुभिः | इषः | होत्रम् | १,१२५ |
| ८,११४ | ... | ... | " | " | ऊर्जः | पोत्रम् | २,१२६ |
| ९,११५ | ऋतुभिः | नेष्ट्रम् | " | " | सहः | नेष्ट्रम् | ३,१२७ |
| १०,११६ | " | तुरीयम् | " | ... | ... | होत्रपोत्रनेष्ट्रतुरीयाणि | ४,१२८ |
| ११,११७ | ऋतुना | ... | अश्विनौ | ... | ... | ... | ५,१२९ |
| १२,११८ | " | ... | अग्निः | ऋतुना | तपस्यः | ... | ६,१३० |

१।३६ सूक्ते मंत्रेषु ऋतुवाचकपदस्य अभावः । कात्यायन सर्वानुक्रमण्यां देवतानामानि, मासानां नामानि, न तु ऋतूणाम् ।

(११) चन्द्रमाः ।

अधिपतिः नक्षत्राणाम् अ. ५,२४,१०; ९८६
 अप्सु अन्तः वा. य. ३३,९०; ९७९ । अ. १८,४,८९;
 ९८९
 अहो केतुः ऋ. १०,८५,१९; ९७९
 आबन् देवेभ्यः भागं वि दधाति ,, ,,
 एति कनिक्कदत् वा. य. ३३,९०; ९७९
 केतुः अहाम् ,,
 चन्द्रः वा. य. २२,१८; ९७५
 चन्द्रमाः (सर्वत्र)
 जातः मनसा ऋ. १०,९०,१३; ९७३ । वा. य. ३१,२२;
 ९७८
 जायते पुनः वा. य. २३,१०; ९७७
 जायमानः नवः नवः ऋ. १०,८५,१९; ९७९
 देवः अ. ११,६,७; ९९१
 दे०[अदितिः०] १६

नक्षत्रैः उदकामत् अ. १९,१९,४; ९२०
 नक्षत्राणां अधिपतिः अ. ५,२४,१०; ९८६
 नक्षत्राणां ईशे अ. ६,८६,२; १०००
 पिशङ्गं रयिं बहुलं पुरुस्पृहं एति वा. य. ३३,९०; ९७९
 वत्सः दिशां धेनूनाम् अ. ४,३९,८; ९९९
 वृत्रहा अ. १९,२७,९; ९९२
 शतशृण्वः अ. १,३,४; ९८०
 शरस्य पिता ,, ,,
 सुपर्णः दिवि आ धावते वा. य. ३३,९०; ९७९ । अ. १८,
 ४,८९; ९८९
 सोमः यं आहुः चन्द्रमाः अ. ११,६,७; ९९१
 हरिः वा. य. ३३,९०; ९७९
 आयुर्वेदप्रकरणे ।
 अन्तरिक्षेण पतति अ. ६,८०,१; १५८८

अवचा कशत् विश्वा भूता अ. ६,८०,१; १५८८
जन्म अप्सु अ. ६,८०,३; १५९०
दिव्यः स्वा अ. ६,८०,१,३; १५८८, १५९०
महिमा अनाः पृथिव्याम् ६,८०,३; १५९०
,, अन्तः समुद्रे ,, ,,
स्वा दिव्य. अ. ६,८०,१,३; १५८८, १५९०
सद्यस्थं दिवि अ. ६,८०,३; १५९०

चन्द्ररश्मयः ।

विद्युतः ऋ. १,१०५,१; ९८९

हिरण्यनेमयः ,, ,,

चन्द्रस्य द्विषन्नाशनी शक्तिः ।

अर्चिः अ. २,२२,३; ९८३

तपः ,, १, ९८१

तेजः ,, ५, ९८५

होचिः ,, ४, ९८४

हरः ,, २; ९८२

(१२) रात्रिः ।

अन्तः महान्तः महिमान् अस्याम् अ. ३,१०,४; १०७७
अमर्त्या १०,१२७,२; १००४
अमावारया रात्रिः अ. १,१६,१; १०१७
अश्वत्थगा अ. १९,४९,१; १०५२
आयती १०,१२७,१,३; १००३, १००५
इषिरा अ. १९,४९,१; १०५२
उपायती [धेनुः वा] अ. ३,१०,२; १०७५
उर्वी अ. १९,४९,२; १०३१
उशती अ. १९,४९,२, ८; १०५३, १०५९
केशाः [रात्री भवति] अ. १५, २, ५, १३, २१, २९;
१०२१-१०२४

एताच्चा नाम वे अमि अ. १९,४८,६; १०४४

चक्षुर्मती अ. १९,४९,८; १०५९

चित्रावसुः वा य. ३,१८, १०३१

जनित्रा अ. ३,१०,४; १०७७

ज्योतिषा तमः बाधते १०,१२७,२; १००४

ज्योतिषा सुज्योतिः वा. य. ३७,२१; १०१६

तमः अप हामते १०,१२७,३; १००५

तमः ज्योतिषा बाधते १०,१२७,२; १००४

तमस्वती अ. १९,४९,२; १०३१

त्वेषं ते तमः आ वर्तते वा. य. ३४,३२, १०१५

दमूनाः अ. १९,४९,१; १०५२

दिवः दुहिता १०,१२७,८; १०१०। अ. १९,४९,५, १०३४

दुहिता दिवः ,, ,,

देवी १०,१२७,१-३; १००३-५

धेनुः [धेनुः वा] अ. ३,१०,२; १०७५

नवगत् वधूः [धेनुः वा] अ. ३,१०,४; १०७७

पत्नी संवत्सरस्य ["] अ. ३,१०,२; १०७५

पिशङ्गिला वा. य. २३,१२; १०१२

पुरुत्रा १०,१२७,१; १००३

प्रतिमा संवत्सरस्य ३,१०,३; १०७६

प्रथमा या व्यौच्छत् [धेनुर्वा] अ. ३,१०,४; १०७७

प्रविष्टा आसु इतरासु " " "

वृद्धी वा. य. ३४,३२; १०१५

भद्रा अ. १९,४९,२,७; १०३१, १०३६ । ४९,२; १०५३

भद्राहं अस्तु रात्री अ. ६,१२८,२; १०३०

माता अ. १९,४८,२; १०४०

माता वनस्पतेः सिलाचीनाम्न्याः अ. ५,५,१; १०२०

माता हिमस्य अ. १९,४९,५; १०५६

युवतिः अ. १९,४९,१,८; १०५२, १०५९

योषा अ. १९,४९,१; १०५२

रात्रिः [प्रायशः सर्वत्र]

रात्रिः तस्मात् [ब्रह्मणः] अजायत अ. १३,४,३०; १०१९

रात्र्याः सः [ब्रह्मा] अजायत "

रेवती अ. १९,४९,४; १०३३

वर्या अ. १९,४९,३; १०५४

वाजिनी अ. १९,४९,४; १०३३

विमाती अ. १९,४९,४; १०५५

विभावरी अ. १९,४८,२,४; १०४०, १०४२ । ५०,७,

१०५१ । ४९,६; १०५७

विश्वा श्रियः अधि अधित १०,१२७,१; १००३

संवत्सरस्य पत्नी अ. ३,१०,२; १०७५

संवत्सरस्य प्रतिमा अ. ३, १०, ३; १०७६
सम्भृतश्रीः अ. १९, ४९, १; १०५२
सुभगा अ. १९, ४९, ३, ५; १०५४, १०५६ । अ. १९, ५०, ६; १०५०

सुमङ्गली अ. ३, १०, २; १०७५
सुमयि [संभो०] अ. १९, ४९, ४; १०३३
सुहवा अ. १९, ४९, १, ५; १०५२, १०५६
हिमस्य माता अ. १९, ४९, ५; १०५६

रात्रिदेवताया उपमासूची ।

यथा इत् अन्यान् उपायसि अ. १९, ५०, ६; १०५० अस्मान् भोजय ।
ऋणा इव १०, १२७, ७; १००९ कृष्णं तमः यातय ।
अप्लावाः गम्भीरं इव अ. १९, ५०, ३; १०४७ अरातयः रात्रिं न ।
गाः इव १०, १२७, ८; १०१० हे उषः ते उप आक्रम ।
चमसः न अ. १९, ४९, ८; १०५९ विष्टः ।
दिव्याः न ,, ,, क्षामं उक्थाः ।

मित्रः इव अ. १९, ४९, २; १०५३ स्वधाभिः अभि तिष्ठते ।
राजा इव अ. १९, ४९, ६; १०५७ जोषमे अस्य सोमस्य ।
वृक्षे न वसति वयः १०, १२७, ४; १००६ वयं ते अविदमहि ।
(यथा) श्यामाकः प्रपतन्नपवान् १९, ५०, ४; १०४८ एवा रात्रिं प्र पातय ।
स्तोमं न ऋ. १०, १२७, ८; १०१० हे रात्रि... जिभुये ।

(१३) पूर्णिमा ।

पूर्णा पश्चात् अ. ७, ८०, १; १०७९
पूर्णा पुरस्तत् " "
पूर्णा मध्यतः " "
पौर्णमासी अ. ७, ८०, १; १०७९ । अ. १५, २, १४; १०८९

प्रथमः अपानः व्रात्यस्य अ. १५, १६, १; १०८२
प्रथमा यज्ञिया अक्षां रात्रीणां अतिशर्वरेषु अ. ७, ८०, ४; १०८१
यज्ञिया अ. ७, ८०, ४; १०८१

(१४) राका ।

रराणा सहस्रबोषम् २, ३२, ५; १०८४
राका २, ३२, ४-५; १०८३-८४
सुभगा २, ३२, ४-५; १०८३-८४

सुमनाः २, ३२, ५; १०८४
सुस्तु(ष्टु)ती २, ३२, ४; १०८३
सुहवा २, ३२, ४; १०८३

(१५) अमावास्या ।

अमावास्या अ. ७, ७९, १-४; १०८५-८८ । अ. १५, २, १४; १०८९ । १६, ३; १०९० । १७, ९; १०९१
ऊर्जं दुहाना अ. ७, ७९, ३; १०८७
ऊर्जं पुष्टं वसु आवेशयन्ती अ. ७, ७९, ३; १०८७

विश्ववारा अ. ७, ७९, १; १०८५
व्रात्यस्य तृतीयः अपानः अ. १५, १६, ३; १०८२
संगमनी वसुनाम् अ. ७, ७९, ३; १०८७
सुभगा अ. ७, ७९, १; १०८५

(१६) सिनीवाली ।

अभियन्ती अ. ७, ४६, ३; १०९४
इन्द्रं प्रतीची " "
देवानां स्वसा अ. २, ३२, ६; १०९२

देवी अ. ७, ४६, ३; १०९४
पृथुष्टुका अ. २, ३२, ६; १०९२
बहुसूरी अ. २, ३२, ७; १०९३

विदपत्नी अ. २, ३२, ७; १०९३ । ७, ४६, ३; १०९४
 विष्णोः पत्नी अ. ७, ४६, ३; १०९४
 सहस्रस्तुका " "
 सिनीवाली [प्रायशः सर्वत्र]
 सु+अं (=स्वं) गुरिः अ. २, ३२, ७; १०९३
 सुकपर्दी वा. य. ११, ५६; ९

सुकुरीरा वा. य. ११, ५६; ९
 सुबाहुः अ. २, ३२, ७; १०९३
 सुसू(षू)मा अ. २, ३२, ७; १०९३
 स्वसा देवानाम् अ. २, ३२, ६; १०९२
 स्वौपशा वा. य. ११, ५६; ९

(१७) कुहूः ।

उषाती अ. ७, ४७, २; ११०५
 कुहूः अ. ७, ४७, १-२; ११०४-५
 चिकितुषी अ. ७, ४७, २; ११०५
 देवानां अमृतस्य पत्नी ,, ,,

देवी अ. ७, ४७, १; ११०४
 विद्यनापस अ. ७, ४७, १; ११०४
 सुकृत " "
 सुदवा " "
 हव्या ,, २; ११०५

(१८) नक्षत्राणि ।

अष्टाविंशानि अ. १९, ८, २; ११३०
 चित्राणि अ. १९, ७, १; ११२४
 जवानि भुवने अ. १९, ७, १; ११२४
 रोचनानि " "
 ब्राह्मस्य चतुर्थो व्यानः अ. १५, १७, ४; ११२३
 शरमानि अ. १९, ८, २; ११३०
 शिवानि " "
 नक्षत्राणि अस्य ब्रह्मणः रूपम् अ. ९, ७, १५; १११८
 इदं ब्रह्म अन्यत् नक्षत्रम् अ. १०, २, २३; ११२१
 सरीसृपाणि अ. १९, ७, १; ११२४

नक्षत्राणां राजा ।

नक्षत्रराजा अ. ६, १२८, ४; १११७
 शकधूमः अ. ६, १२८, ४; १११७

क्रमशः नक्षत्राणां नामानि ।

१ कृत्तिका अ. १९, ७, २; ११२५
 २ रोहिणी ,, ,,
 ३ मृगशिरः ,, ,,
 ४ आर्द्रा ,, ,,
 ५ पुनर्वसू ,, ,,
 ६ पुष्यः ,, ,,

७ आश्लेषा अ. १९, ७, २; ११२५
 ८ मघा ,, ,,
 ९ पूर्वा अ. १९, ७, २; ११२६
 १० फल्गुन्यौ ,, ,,
 ११ हस्तः ,, ,,
 १२ चित्रा ,, ,,
 १३ स्वाति ,, ,,
 १४ विशाखे ,, ,,
 १५ अनुराधा ,, ,,
 १६ ज्येष्ठा ,, ,,
 १७ मूलम् ,, ,,
 १८ पूर्वा अषाढा अ. १९, ७, ४; ११२७
 १९ उत्तरा ,, ,,
 २० अभिजित् ,, ,,
 २१ श्रवणः ,, ,,
 २२ शतभिषग् अ. १९, ७, ५; ११२८
 २३ द्रवा ,, ,,
 २४ प्रोष्ठपदा ,, ,,
 २५ रेवती ,, ,,
 २६ अश्वयुजौ ,, ,,
 २७ भरप्यः ,, ,,

निपातभाक्-अग्निदेवताया गुणबोधकपदानि ।

उशान् विश्वान् देवान् २,३७,६; ९३०
 ऋतावान् ७,६२,३; ५६०
 गोप्ता अ. १७,१,३०; १६३
 चन्द्रः ७,६२,३; ५६०
 तुरीयः अ. १,६६,१; १०१७
 शुक्षः १,१३६,६; २०८
 ना ८,२५,१५; ३५८
 पृथिव्याः वशी अ. ६,८६,२; १०००
 प्रज्ञा वा. य. ४,११; १६६
 भूर्णिः ८,२५,१५; ३५८
 भेषजं हिमस्य वा. य. २३,१०; ९९७
 मीढ्वान् ८,२५,१४; ३५७
 यज्ञः वा. य. ४,११; १६६

यज्ञनीः १,१५,१२; ९१८
 यातुहा अ. १,१६,१; १०१७
 वनीयान् ८,२५,१५; ३५८
 वशी पृथिव्याः अ. ६,८६,२; १०००
 वसुः २,३७,६; ९३०
 विप्रः २,३६,४; ९२२
 विश्वान् देवान् उशान् २,३७,६; ९३०
 सजोषाः ८,२५,१४; ३५७
 होता २,३६,४; ९२२

द्रविणोदा अग्निः ।

अरिषण्यन् २,३७,३; ९२७
 धृष्णुः " "
 वनस्पतिः " "

निपातभाक्-इन्द्रदेवताया गुणबोधकपदानि ।

अंशुं आप्याययन् अ. ७,८१,६; ६८४
 अक्षितः " "
 अक्षितं भक्षयन् " "
 अदब्धः अ. १७,१,१२; १४५
 आप्याययन् अंशुम् अ. ७,८१,६; ६८४
 आरोहन् त्रिदिवम् अ. १७,१,१०; १४३
 ईज्यः अ. १७,१,१-५; १३४-१३८
 ईशिषे सर्वस्य जगतः २,३६,१; ९१९
 ऋषिभिः सहस्रकृतः वा. य. ३३,८३; १२०
 गृणानः दिवः अ. १७,१,१-५; १३४-१३८
 गोजितः " " "
 गोपाः भुवनस्य अ. ७,८१,६; ६८४
 त्राता मरुताम् वा. य. १८,२०; ६७
 त्रिदिवम् आरोहन् अ. १७,१,१०; १४३
 दिवः गृणानः अ. १७,१,१-५; १३४-१३८
 देवः वा. य. ८,२; १०८
 शुक्षः १,१३६,६; २०८
 ना ८,२५,१५; ३५८
 पुरुकृतः अ. १७,१,११; १४४
 प्रथमः २,३६,१; ९१९
 प्रबोः २,३६,५; ९२३

प्रियधामा अ. १७,१,१०; १४३
 ब्रह्मणा वातृधानः अ. १७,१,१२; १४५
 भक्षयन् अक्षितम् अ. ७,८१,६; ६८४
 भुवनस्य गोपाः " "
 भूर्णिः ८,२५,१५; ३५८
 मीढ्वान् ८,२५,१४; ३५७
 वनीयान् ८,२५,१५; ३५८
 वशी ८,६७,८; ९२
 वातृधनः ब्रह्मणा अ. १७,१,१२; १४५
 विश्वजित् अ. १७,१,११; १४४
 विवासहिः अ. १७,१,१-५; १३४-१३८
 श्रुतः ८,६७,८; ९२
 सजोषाः ८,२५,१४; ३५७
 सन्धनानजितः अ. १७,१,१-५; १३४-१३८
 सर्वविद् " "
 सदमानः " "
 सहस्रकृतः ऋषिभिः वा. य. ३३,८३; १२०
 सहीयान् अ. १७,१,१-५; १३४-१३८
 सहोजितः " "
 सासहानः " "
 स्वजितः " "

निपातभाक्-सोमदेवताया गुणबोधकपदानि ।

अन्धः २, ३७, ३; ९२७
 अमर्त्यः २, ३७, ४; ९२८
 अमृक्तः " "
 आमृतः इन्द्राय २, ३६, ५; ९२३
 तद्योक्तसः इन्द्रवः १, १५, १; ९०७
 तुरीयं पात्रं (पात्रस्थम्) २, ३७, ४; ९२८
 नृम्णवर्धनः २, ३६, ५; ९२३
 प्रयः २, ३७, ४; ९२८
 प्रस्थितम् २, ३६, ४; ९२२

प्रहुतः २, ३६, १; ९१९
 बाह्वोः सहः ओजः हितः (इन्द्रस्य) २, ३६, ५; ९२३
 मत्सरासः (इन्द्रवः) १, १५, १; ९०७
 मधु २, ३६, ४; ९२२
 राजा अ. ५, २१, ११; १८१
 वषट्कृतः २, ३६, १; ९१९
 सुतः २, ३६, ५; ९२३
 हितः २, ३७, ४; ९२८

निपातभाक्-मरुदेवताया गुणबोधकपदानि ।

अजिषु प्रियाः २, ३६, २; ९२०
 उग्राः अ. ५, २१, ११; १८१
 ऋषिभिः शुभ्रासः २, ३६, २; ९२०
 दिवः नरः २, ३६, १; ९२०
 नरः ८, २५, १५; ३५८
 नरः दिवः २, ३६, २; ९२०
 पृथ्निमातरः अ. ५, २१, ११; १८१
 पृषतीभिः यामन् २, ३६, २; ९२०
 प्रियाः अजिषु " "
 भरतस्य सूनवः " "

भूर्णयः ८, २५, १५; ३५८
 मीढ्वांसः ८, २५, १४; ३५७
 यज्ञैः संमिश्राः २, ३६, २; ९२०
 यामन् पृषतीभिः " "
 वनुषः (वनीयांसः) ८, २५, १५; ३५८
 शुभ्रासः ऋषिभिः २, ३६, २; ९२०
 सजोषसः ८, २५, १४; ३५७
 संमिश्राः यज्ञैः २, ३६, २; ९२०
 सुदानवः १, १५, २; ९०८
 सूनवः भरतस्य २, ३६, २; ९२०

निपातभाक्-अश्विनौदेवताया गुणबोधकपदानि ।

दीद्यमी १, १५, ११; ९१७
 नरौ ८, २५, १५; ३५८
 पुष्करलजा अ. ५, २५, ३; १०९९
 भूर्णी " "
 मीढ्वांसौ " १४; ३५७

यज्ञवाहसा १, १५, ११; ९१७
 वनीयांसौ ८, २५, १५; ३५८
 वाजिनीवसू २, ३७, ५; ९२९
 छुचिन्नता १, १५, ११; ९१७
 सजोषसौ ८, २५, १४; ३५७

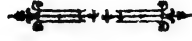
निपातभाक्-बृहस्पतिदेवताया गुणबोधकपदानि ।

अंशुं आप्याययन् अ. ७, ८१, ६; ६८४
 अक्षितः " "
 अक्षितं भक्षयन् " "
 अथर्वा अ. ४, १, ७; १७७
 आप्याययन् अंशुम् अ. ७, ८१, ६; ६८४
 ऋतस्थाः दिवः अ. ४, १, ४; १७४

ऋतस्थाः पृथिव्याः अ. ४, १, ४; १७४
 कविः अ. ४, १, ७; १७७
 गोपाः भुवनस्य अ. ७, ८१, ६; ६८४
 अमिता विश्वेवाम् अ. ४, १, ७; १७७
 दिवः ऋतस्थाः अ. ४, १, ४; १७४
 देवः पूर्यः अ. ४, १, ६; १७६

देवता अ. ४, १, ६, १७६
 देवबन्धुः ,, ७, १७७
 पिता ,, ,,
 पूर्यः देवः ,, ६, १७६
 पृथिव्याः ऋतस्थाः अ. ४, १, ४, १७४
 प्रजानन् अ. २, २६, २, १०३८

भक्षयन् अक्षितम् अ. ७, ८१, ६, ६८४
 भुवनस्य गोपाः अ. ७, ८१, ६, ६८४
 महान् अ. ४, १, ४, १७४
 विश्वेषां जनिता अ. ४, १, ७, १७७
 सम्राट् अ. ४, १, ५, १७५
 स्वभावान् अ. ४, १, ७, १७७



अदितेः, आदित्यानां च पुनरुक्त-मन्त्रभागाः।

ऋग्वेदस्य प्रथमं मण्डलम् ।

[१०] १।४१।६ (कण्वो घौरः । आदित्याः)
 विश्वं लोकमुत् तमना ।

(अग्निः १४५६) ८।८४।३ (उशना काव्यः । अग्निः)
 रक्षा लोकमुत् तमना ।

ऋग्वेदस्य द्वितीयं मण्डलम्।

[२२] २।२७।२ (कूर्मो गार्त्समदो, गृत्समदो वा । आदित्याः)
 मित्रो अर्यमा वरुणो जुषन्त ।

(३३१) ७।६४।१ (मैत्रावरुणिर्वसिष्ठः । मित्रावरुणौ)
 मित्रो अर्यमा ... वरुणो जुषन्त ।

[२४] २।२७।४ (कूर्मो गार्त्समदो, गृत्समदो वा । आदित्याः)
 देवा विश्वस्य भुवनस्य गोपाः ।

(विश्वे देवाः ११९) १।१६४।२१ (दीर्घतमा औचथ्यः ।
 विश्वे देवाः)

इनो विश्वस्य भुवनस्य गोपाः ।

[२७] २।२७।७ (कूर्मो गार्त्समदो, गृत्समदो वा । आदित्याः)
 बृहन्मित्रस्य वरुणस्य शर्म ।

(आयुर्वेदः १९५९) १०।१०।६ (यमी वैवस्वती ऋषिः ।
 यमः)

... ... वरुणस्य धाम ।

[२९] २।२७।९ (कूर्मो गार्त्समदो, गृत्समदो वा । आदित्याः)
 त्री रोचना दिव्या धारयन्त ।

(इन्द्रः १६६७) ५।२९।१ (गौरिवीतिः शाक्यः । इन्द्रः)

[३७] २।२७।१७ (कूर्मो गार्त्समदो, गृत्समदो वा । आदित्याः)
 = २।२८।११ (कूर्मो गार्त्समदो, गृत्समदो वा । वरुणः)

= (विश्वे देवाः १५७) २।२९।७ (कूर्मो गार्त्समदो,
 गृत्समदो वा । विश्वे देवाः)

माहं मघोनो वरुण प्रियस्य भूरिदाज्ञ आ विद्ं ज्ञानमपेः ।
 मा रायो राजन्सुयमादव स्थां बृहद्वदेम विदधे सुवीराः ॥

ऋग्वेदस्य सप्तमं मण्डलम् ।

[४२] ७।५२।२ (मैत्रावरुणिर्वसिष्ठः । आदित्याः)
 मा वो भुजेमान्यजातमेनो मा तत् कर्म वसवो यस्वयध्वे ।
 (विश्वे देवाः ३९९) ६।५१।७ (अजिष्वा भारद्वाजः । आदित्याः)

मा व एनो अन्यकृतं भुजेम ... ।
 [४३] ७।५२।३ तुरण्यवोऽग्निरसौ नक्षन्त ।
 (विश्वे देवाः ४९५) ७।४२।१ (मैत्रावरुणिर्वसिष्ठः । विश्वे देवाः)

प्र ब्रह्माणो अङ्गिरसो नक्षन्त ।

[४३] ७।५२।३ (मैत्रावरुणिर्वसिष्ठः । आदित्याः)

रत्नं देवस्य सवितुरियानाः ।

(४७९) ७।३८।६ (मैत्रावरुणिर्वसिष्ठः । सविता)

..... सवितुरियानः ।

[४४] ७।६६।४ (मैत्रावरुणिर्वसिष्ठः । आदित्याः)

यदद्य सूर उदिते ।

(५२) ७।६६।२२ सूक्तैः सूर उदिते ।

(विश्वे देवाः ५३०) ८।२७।२९ (मनुर्वैवस्वतः । विश्वे देवाः)

यदद्य सूर उद्यति ।

विश्ववेदसो मध्यन्दिने ।

(विश्वे देवाः ५३२) ८।२७।२१ यदद्य सूर उदिते...
मध्यन्दिने । विश्ववेदसो ... ।

[४४] ७।६६।४ (मैत्रावरुणिर्वसिष्ठः । आदित्याः)

सुवाति सविता भगः ।

(४५४) ५।८२।३ (इयावाश्च आत्रेयः । सविता)

[४६] ७।६६।६ (मैत्रावरुणिर्वसिष्ठः । आदित्याः)

उत स्वराजो अदितिः ।

(इन्द्रः ३०१) ८।१२।१४ (पर्वतः काण्वः । इन्द्रः)

उत स्वराजे अदितिः ।

[४७] ७।६६।७ प्रति वां सूर उदिते ।

(६३१) ७।६३।५ (मैत्रावरुणिर्वसिष्ठः । सूर्यमित्रवरुणाः)

[५०] ७।६६।१० अग्निजिह्वा क्रतावृधः ।

(अग्निः ९९) १।४४।१४ (प्रस्कण्वः काण्वः । अग्निः)

[५२] ७।६६।१२ (मैत्रावरुणिर्वसिष्ठः । आदित्याः)

यूयमृतस्य रथ्यः ।

(विश्वे देवाः ५६१) ८।८३।३ (कुसीदी काण्वः । विश्वे देवाः)

ऋग्वेदस्याष्टमं मण्डलम् ।

[५४] ८।१८।१ (इरिम्बिठिः काण्वः । आदित्याः)

एषां सुक्लं भिक्षेत मर्त्यः ।

(मरुतः ६०) ८।७।१५ (पुनर्वत्सः काण्वः । मरुतः)

[५६] ८।१८।३ (इरिम्बिठिः काण्वः । आदित्याः)

तत् सु नः सविता भगो वरुणो मित्रो अर्यमा ।

(विश्वे देवाः २३८) ४।५५।१० (वामदेवो गौतमः ।
विश्वे देवाः)

[,,] ८।१८।३ भगो वरुणो मित्रो अर्यमा ।

(अग्निः ३१) १।२६।४ (शुनःशेष आजीगर्तिः । अग्निः)

रिशदसो वरुणो मित्रो अर्यमा ।

[,,] ८।१८।३ (इरिम्बिठिः काण्वः । आदित्याः)

वरुणो मित्रो अर्यमा । शर्म यच्छन्तु सप्रथो यदीमहे ।

(विश्वे देवाः ७९८) १०।१२६।७ (कुलमलबर्हिषः शैलुषिः

अंहोमुग्वा वामदेव्यः । विश्वे देवाः)

वरुणो ... । शर्म ... सप्रथ आदित्यासो यदीमहे ।

[३] ८।१८।५ (इरिम्बिठिः काण्वः । अदितिः)

अंहोभिदुरुचक्रयः ।

(२७७) ५।६७।४ (यजत आत्रेयः । मित्रावरुणौ)

[५७] ८।१८।१० (इरिम्बिठिः काण्वः । आदित्याः)

अप सेधत दुर्मत्सिम् ।

(आयुर्वेदः २३०८) १०।१७५।२ (ऊर्ध्वप्रावा सर्प
आर्षुदिः । प्रावाणः)

[५९] ८।१८।१२ (इरिम्बिठिः काण्वः । आदित्याः)

तत् सु नः.....आदित्या यन्मुमोक्षति ।

(९९) ८।६७।१८ (मत्स्यः साम्मदः मैत्रावरुणिर्मान्यः
बहवो वा मत्स्या जालनद्याः । आदित्याः)

तत् सु नो...आदित्या ...।

[६१] ८।१८।१४ दुःशंसं मर्त्यं रिपुम् ।

(अश्विनौ २२४) २।४१।८ (युत्समदः शौनकः । अश्विनौ)

दुःशंसो मर्त्यो रिपुम् ।

[६३] ८।१८।१६ (इरिम्बिठिः काण्वः । आदित्याः)

आ शर्म पर्वतानां अपां वृणीमहे ।

८।३१।१० (मनुर्वैवस्वतः । दम्पत्याशिषः)

आ शर्म पर्वतानां वृणीमहे नदीनाम् ।

[६८] ८।१८।२१ नृवद् वरुण शंस्यम् ।

(विश्वे देवाः ५६२) ८।८३।४ (कुसीदी काण्वः ।
विश्वे देवाः)

वामं वरुण शंस्यम् ।

[६९] ८।१८।२२ प्र सू न आयुर्जावसे तिरेतन ।

१०।५९।५ (बन्धुः भ्रुतबन्धुर्विप्रबन्धुर्गौपायनाः । असुनीतिः)

जीवातवे सु प्र तिरा न आयुः ।

- [७१] ८।१९।३५ (सोमरिः काण्वः । आदित्याः)
स्यामेहतस्य रथ्यः ।
(५९) ७।६६।१२ (मैत्रावरुणिर्वसिष्ठः । आदित्याः)
यूयमुत्तस्य रथ्यः ।
- [७२] ८।४७।१ (त्रित आप्यः । अदित्याः)
महि वो महतामवो ।
(८८) ८।६७।४ (मत्स्यः साम्मदः मैत्रावरुणिर्मन्यः
बहवो वा मत्स्या जालनद्धाः । आदित्याः)
- [,,] ८।४७।१ वरुण मित्र दाशुषे ।
(९९४) ५।७१।३ (बाहुवृक्त आत्रेयः । मित्रावरुणौ)
वरुण मित्र दाशुषः ।
- [७२-८४] ८।४७।१-१३ (त्रित आप्यः । आदित्यः)
अनेहसो व ऊतयः सुऊतयो व ऊतयः ।
(उषा १८७-९१) ८।४७।१४-१८ (त्रित आप्यः ।
आदित्योषसः)
- [७३] ८।४७।५ स्यामेदिन्द्रस्य शर्मणि ।
(इन्द्रः ९) १।४।६ (मधुच्छन्दा वैश्वामित्रः । इन्द्रः)
- [८०] ८।४७।९ अदितिः शर्म यच्छतु ।
६।७५।१२ (पायुर्भारद्वाजः । इषवः)
- [,,] ८।४७।९ (त्रित आप्यः । आदित्याः)

- माता मित्रस्य रेवतो अर्यम्णो वरुणस्य ।
(विश्वे देवाः ५९६) १०।३६।३ (लुशो धानाकः । विश्वे देवाः)
माता मित्रस्य वरुणस्य रेवतः ।
- [८०] ८।४७।९ अर्यम्णो वरुणस्य च ।
(९०४) १।१३६।२ (परुच्छेपो दैवोदासि । मित्रावरुणौ)
- [८५] ८।६७।१ (मत्स्यः साम्मदः मैत्रावरुणिर्मन्यः बहवो वा
मत्स्या जालनद्धाः । आदित्याः)
सुमृत्कीकौ अभिष्टये ।
(६) ८।६७।१० सुमृत्कीकामभिष्टये ।
- [८८] ८।६७।४ महि वो महतामवो वरुण मित्रार्यमन् ।
(७९) ८।४७।१ (त्रित आप्यः । आदित्याः)
... वरुण मित्र दाशुषे ।
- [,,] ८।६७।४ वरुण मित्रार्यमन् ।
(९७४) ५।६७।१ (यजत आत्रेयः । मित्र वरुणौ)
- [,,] ८।६७।४ अवांस्या वृणीमहे ।
८।२६।२१ (विश्वमना वैयश्वः, न्यश्वो वाङ्गिरसः । वायुः)
- [९०] ८।६७।६ तेना नो अधि वोचत ।
(महतः १०७) ८।२०।२६ (सोमरिः काण्वः । महतः)
- [९२] ८।६७।१८ आदित्या यन्मुमोचति ।
(५९) ८।१८।१२ (इरिम्बिठिः काण्वः । आदित्याः)

ऋग्वेदस्य तृतीयं मण्डलम् ।

- [१८५] ३।५९।१ (गाथिनो विश्वामित्रः । मित्रः)
मित्रो जनान् यातयति ब्रुवाणः ।
(विश्वे देवाः ४६५) ७।३६।२ (मैत्रावरुणिर्वसिष्ठः ।
विश्वे देवाः)
जनं च मित्रो यतति ब्रुवाणः ।
- ["] ३।५९।१ मित्रो दाधार पृथिवीमुत धाम् ।
(विश्वे देवाः ४००) ६।५१।८ (ऋजिश्वा भारद्वाजः । विश्वे देवाः)
नमो दाधार ... ।
- ["] ३।५९।१ मित्राय हव्यं घृतवज्रमुत ।
(आयुर्वेदः ८७३) ७।४७।३ (मैत्रावरुणिर्वसिष्ठः । आपः)
सिन्धुभ्यो हव्यं ... ।
- [१८७] ३।५९।३ अनमीवास इळया मदन्तः ।
(विश्वे देवाः १८९) ३।५४।२० (प्रजापतिर्वैश्वामित्रः,
प्रजापतिर्वार्यो वा । विश्वे देवाः)
दे०[अदितिः०] १७

- ध्रुवक्षेमास इळया मदन्तः ।
- [१८८] ३।५९।४ तस्य वयं सुमतौ यज्ञियस्यापि भद्रे
सौमनसे स्याम ।
(अग्निः ४६७) ३।१।२१ (विश्वामित्रो गाथिनः । अग्निः)
- [१९३] ३।५९।९ (विश्वामित्रो गाथिनः । मित्रः)
जनाय वृक्तबर्हिषे ।
(अग्निः ९०५) ५।२३।३ (शुभ्रो विश्वचर्षणिरात्रेयः । अग्निः)
जनासो वृक्तबर्हिषः ।
(इन्द्रः १७४१) ५।३५।६ (प्रभूवसुराङ्गिरसः । इन्द्रः)
जनासो वृक्तबर्हिषः ।
(अश्विनौ ४००) ८।५।१७ (ब्रह्मातिथिः काण्वः । अश्विनौ)
जनासो वृक्तबर्हिषः ।
(इन्द्रः २७९) ८।६।३७ (वत्सः काण्वः । इन्द्रः)
जनासो वृक्तबर्हिषः ।

ऋग्वेदस्य प्रथमं मण्डलम् ।

- [१९६] १।२।७ (मधुच्छन्दा वैश्वामित्रः । मित्रावरुणौ)
मित्रं हुवे पूतदक्षं वरुणं च रिशादसम् ।
(३३६) ७।६।५।१ (वसिष्ठो मैत्रावरुणिः । मित्रावरुणौ)
मित्रं हुवे वरुणं पूतदक्षम् ।
(२५५) ५।६।५।१ (अर्चनाना आत्रेयः । मित्रावरुणौ)
वरुणं वो रिशादसमृचा मित्रं हवामहे ।
[१९७] १।२।८ (मधुच्छन्दा वैश्वामित्रः । मित्रावरुणौ)
ऋतेन मित्रावरुणावृतावृधौ ।
(२२२) १।२।५।१ (दीर्घतमा औचथ्यः । मित्रावरुणौ)
ऋतेन मित्रावरुणा सचेये ।
[२०१] १।२३।६ (मेधातिथिः काण्वः । मित्रावरुणौ)
वरतां नः सुराधसः ।
(इन्द्रः १४६५) ३।५३।१३ (विश्वामित्रो गाथिनः । इन्द्रः)
करदिन्नः सुराधसः ।
[२०३] १।२३।१२ (परुच्छेपो दैवोदासिः । मित्रावरुणौ)
ता रात्राजा वृतासुती ।
(२३५) २।४।१।६ (गृत्समदः शौनकः । मित्रावरुणौ)
[२०४] १।२३।१२ (परुच्छेपो दैवोदासिः । मित्रावरुणौ)
मित्रस्य ... अर्यम्णो वरुणस्य च ।
(८०) ८।४७।९ (त्रित आप्त्यः । आदित्याः)
मित्रस्य ... अर्यम्णो वरुणस्य च ।
[२०५] १।२३।१३ (परुच्छेपो दैवोदासिः । मित्रावरुणौ)
सचेते... । ... आदित्या दानुनस्पती ।
(२३५) २।४।१।६ (गृत्समदः शौनकः । मित्रावरुणौ)
आदित्या दानुनस्पती । सचेते... ।
[२०६] १।२३।१४ अयं मित्राय वरुणाय शंतमः ।
(सोमः ९७६) ९।१०४।३ (पर्वतनारदौ काण्वौ,
काश्यपौ शिखण्डिन्यावत्सरसौ वा । पवमानः सोमः)
यथा मित्राय ।
[२१०] १।२३।७।१ अस्मन्ना गन्तमुप नः ।
(२१२) १।२३।७।३ (परुच्छेपो दैवोदासिः । मित्रावरुणौ)
[,,] १।२३।७।१ (परुच्छेपो दैवोदासिः । मित्रावरुणौ)
सोमाः शुक्रा गवाशिरः ।
(सोमः ५०५) ९।६४।१८ (कश्यपो मारीचः । पवमानः
सोमः)

- [२११] १।२३।७।२ सोमासो दध्याशिरः ।
(इन्द्रः १८) १।५।५ (मधुच्छन्दा वैश्वामित्रः । इन्द्रः)
[,,] १।२३।७।२ साकं सूर्यस्य रश्मिभिः ।
(अश्विनौ ४५) (प्रस्कन्नः काण्वः । अश्विनौ)
[,,] १।२३।७।२ (परुच्छेपो दैवोदासिः । मित्रावरुणौ)
चारुर्कताय पीतये ।
(सोमः १४४) ९।१७।८ (असितः काश्यपो देवलो वा ।
पवमानः सोमः)
[२१२] १।२३।७।३ अंशुं बृहन्त्यद्विभिः सोमं बृहन्त्यद्विभिः ।
(सोमः ५२२) ९।६।५।१५ (भृगुवोरुणिर्जमदभिर्भोगो
वा । पवमानः सोमः)
तीव्रं बृहन्त्यद्विभिः ।
[२१६] १।२५।१।४ (दीर्घतमा औचथ्यः । मित्रावरुणौ)
ऋतावानावृतावृधौ वृहत् ।
(३५०) ८।२५।४ (विध्वमना वैयश्वः । मित्रावरुणौ)
... ... घोषतो बृहत् ।
[२१२] १।२५।१।१ ऋतेन मित्रावरुणा सचेये ।
(१९७) १।२।८ (मधुच्छन्दा वैश्वामित्रः । मित्रावरुणौ)
ऋतेन मित्रावरुणौ ।
[२१५] १।२५।१।४ प्रियं मित्रस्य वरुणस्य धाम ।
(३२४) ७।६।१।४ (मैत्रावरुणिर्वसिष्ठः । मित्रावरुणौ)
शंसा मित्रस्य ।
(आयुर्वेदः १९५९) १०।१०।६ (यमो वैवस्वत ऋषिः ।
यमी)
बृहन्मित्रस्य ।
(इन्द्रः २६६९) १०।८९।८ (रेणुवैश्वामित्रः । इन्द्रः)
प्र ये मित्रस्य ।
(२७) २।२७।७ (कूर्मो गार्त्समदो, गृत्समदो वा । आदित्यः)
बृहन्मित्रस्य वरुणस्य ... ।
(अग्निः १७६१) ४।५।४ (वामदेवो गौतमः । वैश्वानरोऽग्निः)
... वरुणस्य धाम ... मित्रस्य ।
[२१६] १।२५।१।५ (दीर्घतमा औचथ्यः । मित्रावरुणौ)
अनश्वो जातो अनभीशुर्वो ।
४।३६।१ (वामदेवो गौतमः । ऋभवः)
- अनभीशुर्वो ।

[२२८] १।१५२।७ आ वां मित्रावरुणा हव्यजुष्टि ।
 (३३९) ७।६५।४ (मैत्रावरुणिर्वसिष्ठः । मित्रावरुणौ)
 आ नो मित्रावरुणा घृतैर्गव्यूतिमुक्षतम् ।
 (२३६) ३।६२।१६ (गाधिनो विश्वामित्रः, जमदग्निर्वा ।
 मित्रावरुणौ)
 [२२९] १।१५३।१ (दीर्घतमा औचध्यः । मित्रावरुणौ)

हव्येभिर्मित्रावरुणा नमोभिः ।
 (इन्द्रः ३१५९) ४।४२।९ (त्रसदरयुः पौकृत्यः ।
 इन्द्रावरुणौ)
 हव्येभिरिन्द्रावरुणा नमोभिः ।
 (इन्द्रः ३१९२) ७।८४।१ (मैत्रावरुणिर्वसिष्ठः ।
 इन्द्रावरुणौ)
 हव्येभिरिन्द्रावरुणा नमोभिः ।

ऋग्वेदस्य द्वितीयं मण्डलम् ।

[२३३] २।४१।४ (गृत्समद [आङ्गिरसः शौनदोत्रः पश्चाद्]
 भार्गवः शौनकः)
 अयं वां मित्रावरुणा सुतः सोम ऋतावृधा ।
 (अश्विनौ ३९) १।४७।१ (प्रस्कण्वः काण्वः । अश्विनौ)
 अयं वां मधुमत्तमः सुतः... ।

[२३५] २।४१।६ ता सभ्राजा घृतासुती ।
 (२०३) १।१३६।१ (परच्छेपो दैवोदासिः । मित्रावरुणौ)
 [,,] २।४१।६ आदित्या दानुनस्पती । सचेते ।
 (२०५) १।१३६।३ (परच्छेपो दैवोदासिः । मित्रावरुणौ)
 सचेते... । आदित्या दानुनस्पती ।

ऋग्वेदस्य तृतीयं मण्डलम् ।

[२३६] ३।६२।१६ (विश्वामित्रो गाधिनः, जमदग्निर्वा ।
 मित्रावरुणौ)
 आ नो मित्रावरुणा घृतैर्गव्यूतिमुक्षतम् ।
 (३३९) ७।६५।४ (मैत्रावरुणिर्वसिष्ठः । मित्रावरुणौ)
 आ नो मित्रावरुणा ... घृतैर्गव्यूतिमुक्षतमिडाभिः ।
 (अश्विनौ ३८९) ८।५।६ (ब्रह्मातिथिः काण्वः । अश्विनौ)
 घृतैर्गव्यूतिमुक्षतम् ।
 [२३८] ३।६२।१८ (विश्वामित्रो गाधिनः, जमदग्निर्वा । मित्रावरुणौ)
 गृणाना जमदग्निना ।
 (आयुर्वेदः १०८०) ७।९६।३ (मैत्रावरुणिर्वसिष्ठः ।
 सरस्वती)
 गृणाना जमदग्निवत् ।

(अश्विनौ ५७९) ८।१०१।८ (जमदग्निर्भार्गवः ।
 आश्विनौ)
 गृणाना जमदग्निना ।
 (सोमः ४४१) २।६२।२४ (जमदग्निर्भार्गवः । पवमानः
 सोमः)
 गृणानो जमदग्निना ।
 (सोमः ५३२) २।६५।२५ (भृगुर्वसिष्ठिर्जमदग्निर्भार्गवो
 वा । पवमानः सोमः)
 गृणानो जमदग्निना ।
 [२३८] ३।६२।१८ (गाधिनो विश्वामित्रः, जमदग्निर्वा ।
 मित्रावरुणौ)
 पातं सोममृतावृधा ।
 (अश्विनौ ४१) १।४७।३ (प्रस्कण्वः काण्वः । अश्विनौ)

ऋग्वेदस्य पञ्चमं मण्डलम् ।

[२५५] ५।६४।१ (अर्धनाना आत्रेयः । मित्रावरुणौ)
 वरुणं वो रिशादसम् ।
 (१९६) मधुच्छन्दा वैश्वामित्रः । मित्रावरुणौ)
 वरुणं च रिशादसम् ।

[२५६] ५।६४।२ विश्वासु क्षासु जोगुवे ।
 (अग्निः २८१) १।१२७।१० (परच्छेपो दैवोदासिः । अग्निः)
 [२६३] ५।६५।२ (रातहव्य आत्रेयः । मित्रावरुणौ)
 राजाना दीर्घश्रुत्तमा । ऋतावृध ऋतावाना अजेजने ।

- (३६९) ८।१०१।२ (जमदग्निर्भागवः । मित्रावरुणौ)
राजाना ।
- (२७७) ५।६७।४ (यजत आत्रेयः । मित्रावरुणौ)
ऋतस्पृश ऋतावानो जनेजने ।
- [२६६] ५।६५।५ स्याम सप्रथस्तमे ।
(अग्निः २६८) १।९४।१३ (कुत्स आश्विनसः । अग्निः)
स्याम...सप्रथस्तमे ।
- ["] ५।६५।५ अनेहसस्त्वोतयः ।
(७२ ८४) ८।४७।१-१३ अनेहसो व उतयः ।
(उषा १८७-९१) ८।४७।१४-१८ (त्रित आपत्यः ।
आदित्यः)
- [२७०] ५।६६।३ (रातहव्य आत्रेयः । मित्रावरुणौ)
ता वामेषे रथानाम् ।
(इन्द्रः ३०४३) ५।८६।४ (अत्रिभौमः । इन्द्राग्नी)
- [२७१] ५।६६।४ नि केतुना जनानाम् ।
(आयुर्वेदः ७७७) १।१९१।४ (अगस्त्यो मैत्रावरुणिः ।
अप्तृणसूर्याः)
नि केतवो जनानाम् ।
- [२७४] ५।६७।१ (यजत आत्रेयः । मित्रावरुणौ)
वरुण मित्रार्यमन् ।
(८८) ८।६७।४ (मत्स्यः साम्मदः मान्यो मैत्रावरुणिः
बहवो वा मत्स्या जालनद्धाः । आदित्याः)
(विश्वे देवाः ७९३) १०।१२६।२ (कुल्मलबर्हिषः
शैलूषिः अंहोमुग्धा वामदेव्यः । विश्वे देवाः)
- [२७५] ५।६७।२ (यजत आत्रेयः । मित्रावरुणौ)
आ यद्योनिं हिरण्ययं.....सदयः ।
(सोमः ४२७) ९।६४।१० (कश्यपो मारीचः । पवमानः सोमः)
आ यद्योनिं हिरण्ययं...सोदति ।
- ["] ५।६७।२ धर्तारा चर्षणीनाम् ।
(इन्द्रः ३१३५) १।१७।२ (मेघ तिथिः काण्वः ।
इन्द्रावरुणौ)
- [२७६] ५।६७।३ वरुणो मित्रो अर्यमा ।
(अग्निः ३१) १।१६।४ (शुनःशेष आजीगर्तिः । अग्निः)
१।४१।१ (कण्वो घौरः । वरुणमित्रार्यमणः)
- ["] ५।६७।३ पान्ति मर्यं रिषः ।
१।४१।२ (शुनःशेष आजीगर्तिः । वरुणमित्रार्यमणः)

- [२७७] ५।६७।४ ऋतावानो जनेजने ।
(२६३) ५।६५।२ (रातहव्य आत्रेयः । मित्रावरुणौ)
ऋतावाना... ।
- ["] ५।६७।४ (यजत आत्रेयः । मित्रावरुणौ)
ते हि.....। अंहोभिवुरुचक्रयः ।
(३) ८।१८।५ (हरिम्बिठिः काण्वः । आदित्याः)
ते हि...। अंहोभिवुरुचक्रयः ।
- [२८६] ५।६९।३ (उरुचकिरात्रेयः । मित्रावरुणौ)
प्रातर...मध्यंदिन उदिता सूर्यस्य ।
(अश्विनौ २८९) ५।७६।३ (अत्रिभौमः । अश्विनौ)
- [२९२] ५।७१।१ (बाहुवृक्त आत्रेयः । मित्रावरुणौ)
आ नो गन्तं रिशादसा ।...इमम् ।
(अश्विनौ ४३७) ८।८।१७ (सध्वंसः काण्वः । अश्विनौ)
...रिशादसेमम् ।
- [२९३] ५।७१।२ (बाहुवृक्त आत्रेयः । मित्रावरुणौ)
ईशाना पिप्यतं धियः ।
(इन्द्रः ३०८०) ७।९४।२ (मैत्रावरुणिर्वसिष्ठः । इन्द्राग्नी)
(सोमः १५३) ९।१९।२ (असितः काश्यपो देवलो वा ।
पवमानः सोमः)
- [२९४] ५।७१।३ उप नः सुतमा गतम् ।
(इन्द्रः ८१) १।१६।४ (मेधातिथिः काण्वः । इन्द्रः)
उप...गहि ।
- ["] ५।७१।३ (बाहुवृक्त आत्रेयः । मित्रावरुणौ)
वरुण मित्र दाशुषे ।
(७२) ८।४७।१ (त्रित आपत्यः । आदित्याः)
वरुण मित्र दाशुषे ।
- ["] ५।७१।३ अस्य सोमस्य पीतये ।
(अश्विनौ ५) १।२२।१ (मेधातिथिः काण्वः । अश्विनौ)
- [२९५-९७] ५।७१।१-३ नि बर्हिषि सदतं (३ सदतां)
सोमपीतये ।
- [२९७] ५।७१।३ (बाहुवृक्त आत्रेयः । मित्रावरुणौ)
जुषेता यज्ञमिष्टये ।
(अश्विनौ २९९) ५।७८।३ (सप्तवधिरात्रेयः । अश्विनौ)
जुषेता यज्ञमिष्टये ।
(इन्द्रः ३०९४) ८।३८।४ (श्यावाश्व आत्रेयः । इन्द्राग्नी)
जुषेता यज्ञमिष्टये ।

ऋग्वेदस्य षष्ठं मण्डलम् ।

[३०७] ६।६७।१० (बार्हस्पत्यो भरद्वाजः । मित्रावरुणौ)
वि यद्वाचं कीस्तासो भरन्ते ।

(अश्विनौ ३७१) ७।७९।४ (मैत्रावरुणर्वसिष्ठः । अश्विनौ)
प्र वां ब्रह्माणि कारवो भरन्ते ।

ऋग्वेदस्य सप्तमं मण्डलम् ।

[३०९] ७।५०।१ (मैत्रावरुणर्वसिष्ठः । मित्रावरुणौ)

मा मां पथेन रपसा विदत् त्सरुः ।

(अग्निः १२११) ७।५०।२ (मैत्रावरुणर्वसिष्ठः । अग्निः)

(विश्वे देवाः ५०८) ७।५०।३ (मैत्रावरुणर्वसिष्ठः ।
विश्वे देवाः)

[३१०] ७।६०।१ (मैत्रावरुणर्वसिष्ठः । मित्रावरुणौ)

विश्वस्य स्थातुर्जगतश्च गोपाः ।

(विश्वे देवः ३८४) ६।५०।७ (ऋजिश्वा भारद्वाजः ।
विश्वे देवाः)

विश्वस्य स्थातुर्जगतो जनित्रीः ।

[,,] ७।६०।२ ऋजु मर्तेषु वृजिना च पश्यन् ।

(अग्निः ६४३) ४।१।१७ (वामदेवो गौतमः । अग्निः)

[३११] ७।६०।३ अयुक्त सप्त हरितः सधस्थान् ।

(५५०) १।११५।४ (कुत्स आत्रिरसः । सूर्यः)

[,,] ७।६०।३ सं यो यूथेव जनिमानि चष्टे ।

(अग्निः ६६४) ४।१।१८ (वामदेवो गौतमः । अग्निः)

आ यूथेव...जनिमान्युम ।

[३१२] ७।६०।४ उद्धां पृक्षासो मधुमन्तो अस्थुः ।

(अश्विनौ २३८) ४।४५।२ (वामदेवो गौतमः । अश्विनौ)

उद्धां पृक्षासो मधुमन्त ईरते ।

["] ७।६०।४ आ सूर्यो अरुह्य्युक्कर्मणः ।

(विश्वे देवाः ३१८) ५।४५।१० (सदापृण आत्रेयाः ।
विश्वे देवाः)

["] ७।६०।४ मित्रो अर्यमा वरुणः सजोषाः ।

(विश्वे देवाः १४१) १।१८६।२ (अगस्त्यो मैत्रा-
वरुणः । विश्वे देवाः)

[३१३] ७।६०।५ शग्मासः पुत्रा अदितेरवृक्षाः ।

१।१८।३ (कूर्मो गार्तसमदो, युत्समदो वा । वरुणः)
यूयं नः पुत्रा... ।

[३१४] ७।६०।६ अपि क्रतुं सुचेतसं वतन्तः ।

(अग्निः ११३३) ७।३।१० = ७।४।१० (मैत्रावरुणि-
र्वसिष्ठः । अग्निः)

अपि क्रतुं सुचेतसं वतेम ।

[३१९] ७।६०।११ वाजस्य सातौ परमस्य रायः ।

(अग्निः ७३६) ४।१२।३ (वामदेवो गौतमः । अग्निः)
अग्निर्वाजस्य परमस्य रायः ।

["] ७।६०।११ उरु क्षयाय चक्रिरे ।

(अग्निः ७५) १।२६।८ (कण्वो घौरः । अग्निः)

[३२०] ७।६०।१२ = (३२७) ७।६१।७ (मैत्रावरुणर्वसिष्ठः ।
मित्रावरुणौ)

इयं देव पुरोहितिर्युवभ्यां यज्ञेषु मित्रावरुणावकारि ।

विश्वानि दुर्गा पिपृतं तिरो नो यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः॥

[३२१] ७।६१।१ अभि यो विश्वा भुवनानि चष्टे ।

(इन्द्रः ३००८) १।१०८।१ (कुत्स आत्रिरसः । इन्द्राग्नी)
वामभि विश्वानि भुवनानि चष्टे ।

[३२४] ७।६१।४ शंसा मित्रस्य वरुणस्य धाम ।

(२२५) १।१५१।४ (दीर्घतमा औचध्यः । मित्रावरुणौ)
प्रियं मित्रस्य वरुणस्य धाम ।

[३२६] ७।६१।६ समु वा यज्ञं मह्यं नमोभिः ।

(विश्वे देवः ४९७) ७।४२।३ (मैत्रावरुणर्वसिष्ठः ।
विश्वे देवाः)

समु वो यज्ञं मह्यं ... ।

[३२७] ७।६१।७ = (३२०) ७।६०।१२

[३२८] ७।६१।४ चावाभूमी अदितेः त्रासीथां नः ।

(विश्वे देवाः २२९) ४।५५।१ (वामदेवो गौतमः ।
विश्वे देवाः)

[३२९] ७।६२।५ श्रुतं मे मित्रावरुणा हवेमा ।

(विश्वे देवाः ८७) १।१२२।६ (कक्षीवान् दीर्घतमस
औशिजः । विश्वे देवाः)

- [३३०] ७।६२।६=७।६३।६ (मैत्रावरुणर्वसिष्ठः । मित्रावरुणौ)
नू मित्रो वरुणो अर्यमा नस्मने तोकाय वरिवो दधन्तु ।
सुगा नो विश्वा सुपथानि सन्तु यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः॥
- [३३१] ७।६४।१ मित्रो अर्यमा वरुणो जुषन्त ।
(२२) २।२७।२ (कूर्मो गार्त्समदो, गृत्समदो वा ।
आदित्यः)
- [३३५] ७।६४।५ = (३४०) ७।६५।५ (मैत्रावरुणर्वसिष्ठः ।
मित्रावरुणौ)
- एष स्तोमो वरुणो मित्रं तुभ्यं सोमः शुक्रो न वायवेऽयामि ।
अविष्टं धियो जिगृतं पुरंधीर्युयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥
- ["] ७।६४।५ = (३४०) ७।६५।५
अविष्टं धियो जिगृतं पुरंधीः ।
(इन्द्रः ३३२४) ४।५०।११ (वामदेवो गौतमः ।
इन्द्रावृहस्पती)
- [३३६] ७।६५।१ प्रति वां सूर उदिते सूक्तैः ।
(६३१) ७।६३।५ (मैत्रावरुणर्वसिष्ठः । सूर्यमित्रावरुणाः)
प्रति वां... विधेम ।
- ["] ७।६५।१ मित्रं द्रुवे वरुणं पूतदक्षम् ।
(१९६) १।२।७ (मधुच्छन्दा वैद्वामित्रः । मित्रावरुणौ)

...पूतदक्षं वरुणम् ।

- [३३८] ७।६५।३ अपो न नावा दुरिता तरेम ।
(इन्द्रः ३१६८) ६।६८।८ (भार्दस्पत्यो भरद्वाजः ।
इन्द्रावरुणौ)
- [३३९] ७।६५।४ आ नो मित्रावरुणा...धृतैर्गन्धूतिमुक्षतम् ।
(२३६) ३।६२।१६ (गाथिनो विश्वामित्रः, जमदग्निर्वा ।
मित्रावरुणौ)
- ["] ७।६५।४ प्रति वामत्र वरमा जनाय ।
(अश्विनौ ३५९) ७।७०।५ (मैत्रावरुणर्वसिष्ठः
अश्विनौ)
- प्रति प्र यातं वरमा जनाय ।
- [३४०] ७।६५।५ = (३३५) ७।६४।५
- ["] ७।६५।५ = (३३५) ७।६४।५
- [३४२] ७।६६।२ (मैत्रावरुणर्वसिष्ठः । मित्रावरुणौ)
असुयार्थं प्रमहसा ।
(३४९) ८।२५।३ (विश्वमना वैयश्वः । मित्रावरुणौ)
- [३४६] ७।६६।१९ (विश्वमना वैयश्वः । मित्रावरुणौ)
पातं सोममृतावृधा ।
(अश्विनौ ४१) १।४७।३ (प्रस्कण्वः काण्वः । अश्विनौ)

ऋग्वेदस्याष्टमं मण्डलम् ।

- [३४७] ८।२५।१ (विश्वमना वैयश्वः । मित्रावरुणौ)
ऋतावाना यजसे पूतदक्षसा ।
(अमिः १२९९) ८।२३।३० (विश्वमना वैयश्वः । अमिः)
ऋतावाना सम्राजा पूतदक्षसा ।
- [३४९] ८।२५।३ = (३४२) ७।६६।२
- [३५०] ८।२५।४ = (२१६) १।१५।१४ (दीर्घतमा औचध्यः ।
मित्रावरुणौ)
- [३५३] ८।२५।७ अमि यूथेव पश्यतः ।
(अमिः ६६४) ४।२।१८ (वामदेवो गौतमः । अग्निः)
आ यूथेव ... पश्यो ।
- [३५४] ८।२५।८ साम्राज्याय सुकृत् ।

- १।२५।१० (शुनःशेष आजीर्गर्तः । वरुणः)
साम्राज्याय सुकृत् ।
- [३६१] ८।२५।१८ उभे आ पभौ रोदसी महित्वा ।
(विश्वे देवाः १८४) ३।५४।१५ (प्रजापतिवैश्वामित्रः,
प्रजापतिर्वाच्यो वा । विश्वे देवाः)
- [३६७] ८।२५।२४ विप्रा नविष्ठया मती ।
(इन्द्रः ९२६) १।८२।२ (गोतमो राट्ठगणः । इन्द्रः)
- [३६९] ८।१०।१२ (जमदग्निर्भार्गवः । मित्रावरुणौ)
राजाना दीर्घश्रुत्तमा ।
(२६३) ५।६५।२ (रातहव्य आत्रेयः । मित्रावरुणौ)
- [,] ८।१०।१२ साकं सूर्यस्य रश्मिभिः ।
(अश्विनौ ४५) १।४७।७ (प्रस्कण्वः काण्वः । अश्विनौ)

ऋग्वेदस्य प्रथमं मण्डलम् ।

- [४०६] १।२२।८ (मेधातिथिः काण्वः । सविता)
- (सोमः ९७४) ९।१०४।१ (पर्वतनारदो काण्वी,

[४०७] १।२४।३ (आजीगर्तिः शुनःशेषः स कृत्रिमो वैश्वामित्रो
देवरातः । सविता)
ईशानं वार्याणाम् ।
(इन्द्रः १५) १।५।२ (मधुच्छन्दा वैश्वामित्रः। इन्द्रः)
[४१०] १।३५।२ (हिरण्यस्तूप आङ्गिरसः । सविता)
हिरण्ययेन सविता रथेन ।
(अश्विनौ २५५) ४।४४।५ (पुरुमीळहाजमीळहौ सौहोत्रौ ।
अश्विनौ)
हिरण्ययेन सुवृता रथेन ।
(अश्विनौ ४१८) ८।५।३५ (ब्रह्मातिथिः काण्वः ।
अश्विनौ)
हिरण्ययेन रथेन ।
[४१६] १।३५।८ हिरण्याक्षः सविता देव आगात् ।

(४२३) २।३८।४ (गृत्समद [आङ्गिरसः शौनहोत्रः
पश्चाद्] भार्गवः शौनकः । सविता)
अरमतिः सविता— ।
[४१६] १।३५।८ दधद् रत्ना दाशुषे वार्याणि ।
(अश्विनौ ३९) १।४७।१ (प्रस्कण्वः काण्वः । अश्विनौ)
धत्तं रत्नानि दाशुषे ।
[४१७] १।३५।९ उभे द्यावापृथिवी अन्तरीयते ।
१।१६०।१ (दीर्घतमा औचथ्यः । द्यावापृथिवी)
द्यावापृथिवी...। धिषणे अन्तरीयते ।
[४१८] १।३५।१० (हिरण्यस्तूप आङ्गिरसः । सविता)
सुमृळीकः स्वर्वां यात्वर्वाङ् ।
(अश्विनौ ११७) १।११८।१ (कक्षीवान् औशिजो
दैर्घतमसः । अश्विनौ)

ऋग्वेदस्य द्वितीयं मण्डलम् ।

[४२०] २।३८।१ (गृत्समद [आङ्गिरसः शौनहोत्रः पश्चाद्]
भार्गवः शौनकः । सविता)
उदु ण्य देवः सविता सवाय ।
(४६१) ६।७१।१ (भरद्वाजो बार्हस्पत्यः । सविता)
...सविता हिरण्यया ।
(४६४) ६।७१।४ (भरद्वाजो बार्हस्पत्यः । सविता)
...सविता दमूना हिरण्यपाणिः ।

(४६७) ७।३८।१ (मैत्रावरुणिर्वसिष्ठः । सविता)
...सविता ययाम हिरण्ययाम् ।
[४२३] २।३८।४=(४१६) १।३५।८ (हिरण्यस्तूप आङ्गिरसः।
सविता)
[४३०] २।३८।११ (गृत्समदः शौनकः । सविता)
शं यत् स्तोतृभ्य आपये भवाति ।
(अग्निः ११५४) ७।८।६ (मैत्रावरुणिर्वसिष्ठः । अग्निः)

ऋग्वेदस्य चतुर्थं मण्डलम् ।

[४४३] ४।५४।३ (वामदेवो गौतमः । सविता)
अचित्ति यत् चकृमा दैव्ये जने ।
७।८९।५ (मैत्रावरुणिर्वसिष्ठः । वरुणः)
यत् दैव्ये जने...।

चरामसि अचित्ति ॥
[४४६] ४।५४।६ आदित्यैर्नो अदितिः शर्म यंसत् ।
(विश्वे देवाः ६५) १।१०७।२ (कुत्स आङ्गिरसः ।
विश्वे देवाः)

ऋग्वेदस्य पञ्चमं मण्डलम् ।

[४५३] ५।८२।२ अस्य हि स्वयशस्तरम् ।
(अग्निः ८७७) ५।१७।२ (पूरुत्रेयः । अग्निः)
['] ५।८२।२ (श्यावाश्व आत्रेयः । सविता)
न मिनन्ति स्वराज्यम् ।

(इन्द्रः २४४०) ८।९३।११ (सुकक्ष आङ्गिरसः। इन्द्रः)
[४५४] ५।८२।३ (श्यावाश्व आत्रेयः । सविता)
सुवाति सविता भगः ।
(४४) ७।६६।४ (मैत्रावरुणिर्वसिष्ठः । आदित्याः)

[४५७] ५।८२।६ (इयावाश्च आत्रेयः । सविता)
विश्वा वामानि धीमहि ।

(अश्विनौ ४८९) ८।२२।१८ (सोमरिः काण्वः। अश्विनौ)
(अग्निः १२६१) ८।१०३।५ (सोमरिः काण्वः। अग्निः)

ऋग्वेदस्य षष्ठं मण्डलम् ।

[४६१] ६।७१।१ उदु ष्य देवः सविता हिरण्यया ।
(४२०) २।३८।१ ... देवः सविता सवाय ।
[४६३] ६।७१।३ (भरद्वाजो बार्हस्पत्यः । सविता)
रक्षा माकिर्नो अघशंस ईशत ।
६।७५।१० (पायुर्भारद्वाजः । ब्राह्मण-पितृ-सोम-यावा-
पृथिवी-पूषाणः)

[४६४] ६।७१।४ उदु ष्य देवः सविता दमूना ।
(४२०) २।३८।१ (गृत्समद [आत्रिरसः शौनहोत्रः
पश्वाद्] भार्गवः शौनकः । सविता)
... ... सविता सवाय ।

ऋग्वेदस्य सप्तमं मण्डलम् ।

[४६७] ७।३८।१ = (४२०) २।३८।१
[,] ७।३८।१ (मैत्रावरुणिर्वसिष्ठः । सविता)
हिरण्ययीममति यामशिश्रेत् ।
(इन्द्रः १३५२) ३।३८।८ (प्रजापतिर्वैश्वामित्रः प्रजापति-
र्वाच्यो वा विश्वामित्रो गाथिनो वा । इन्द्रः)
[४७१] ७।३८।३ (मैत्रावरुणिर्वसिष्ठः । सविता, [उत्तरार्ध-
भगो वा])
रत्नं देवस्य सवितुरित्यानः ।

(४३) ७।५२।३ (मैत्रावरुणिर्वसिष्ठः । आदित्यः)
... ... रियानाः ।
[४७३] ७।४५।१ (मैत्रावरुणिर्वसिष्ठः । सविता)
हस्ते दधानो नर्या पुरुणि ।
(अग्निः १९५) १।७१।१ (पराशरः शक्त्यः । अग्निः)
[४७५] ७।४५।३ मर्तभोजनमध रासते नः ।
(रुद्रः ११) १।११४।६ (कुत्स आत्रिरसः । रुद्रः)
रास्वा च नो अमृत मर्तभोजनम् ।

ऋग्वेदस्य दशमं मण्डलम् ।

[४७८] १०।१३९।२ (देवगन्धर्वो विश्वावसुः । सविता)
आपप्रिवान् रोदसी अन्तरिक्षम् ।
(अग्निः २१२) १।७३।८ (पराशरः शक्त्यः । अग्निः)
[४७९] १०।१३९।३ रावो भुध्नः संगमनो वसूनाम् ।
(अग्निः १८८४) १।९६।६ (कुत्स आत्रिरसः ।
द्रविणोदा अग्निः)

[४७९] १०।१३९।३ देव इव सविता सत्यधर्मा ।
१०।३४।८ (कवष ऐलूषः, अक्षो मौजवान् वा। अक्षनिन्दा)
[४८१] १०।१४९।२ (अर्चन् हिरण्यस्तूपः । सविता)
अतो यावापृथिवी अप्रथेताम् ।
१०।८२।१ (विश्वकर्मा भौवनः । विश्वकर्मा)
आदिद् यावापृथिवी अप्रथेताम् ।

ऋग्वेदस्य प्रथमं मण्डलम् ।

[५४७] १।११५।१ (कुत्स आत्रिरसः । सूर्यः)
आप्रा यावापृथिवी अन्तरिक्षं सूर्य आत्मा जगतस्तस्थुषश्च ।
(अग्निः ७४६) (वामदेवो गौतमः । अग्निः)
आप्रा यावापृथिवी अन्तरिक्षं ।

(आयुर्वेदः ९९०) ७।१०१।६ (मैत्रावरुणिर्वसिष्ठः
(वृष्टिकामः) कुमार आग्नेयो वा । पर्जन्यः)
तस्मिन्नात्मा जगतस्तस्थुषश्च ।

[५४९] १।११५।३ (कुत्स आग्निरसः । सूर्यः)

परि छावापृथिवी यन्ति सद्यः ।

(अश्विनौ २३३) ३।५८।८ (विश्वामित्रो गाथिनः ।
अश्विनौ)

परि छावापृथिवी याति सद्यः ।

[५५०] १।११५।४ यदेदयुक्त हरितः सधस्थान् ।

(३११) ७।६०।३ (मैत्रावरुणर्वसिष्ठः । मित्रावरुणौ)

अयुक्त सध हरितः — ।

[५५६] ५।४०।५ (अत्रिभौमः । सूर्यः)

यत् त्वा सूर्य स्वर्भानुस्तमसाविध्यदासुरः ।

५।४०।९ (अत्रिभौमः । अत्रिः)

यं वै सूर्य स्वर्भानुस्तमसाविध्यदासुरः ।

ऋग्वेदस्य सप्तमं मण्डलम् ।

[५५८] ७।६१।१ (मैत्रावरुणर्वसिष्ठः । सूर्यः)

कृतः सुकृतः कर्तृभिर्भूत् ।

(इन्द्रः १८७१) ६।१९।१ (बार्हस्पत्यो भरद्वाजः । इन्द्रः)

पृथुः सुकृतः कर्तृभिर्भूत् ।

[५६०] ७।६१।३ ऋतावानो वरुणो मित्रो अग्निः ।

(विश्वे देवाः ४८७) ७।३९।७=७।४०।७ (मैत्रावरुण-
र्वसिष्ठः । विश्वे देवाः)

[५६४] ७।६३।४ दूरेअर्थस्तरणिर्भ्राजमानः ।

(६७४) १०।८८।१६ (मूर्धन्वानाग्निरसो, वामदेव्यो वा ।
सूर्य-वैश्वानरौ)

अप्रयुच्छन् तरणिर्भ्राजमानः ।

[६३१] ७।६३।५ (मैत्रावरुणर्वसिष्ठः । सूर्य (पूर्वार्धः) -
मित्रावरुणौ [उत्तरार्धः])

प्रति वां सूर उदिते ... नमोभिर्मित्रावरुणा ।

(३३६) ७।६५।१ (मैत्रावरुणर्वसिष्ठः । मित्रावरुणौ)

— उदिते सूक्तैर्मित्रं ... वरुणम् ।

(४७) ७।६६।७ (मैत्रावरुणर्वसिष्ठः । आदित्याः)

प्रति वां सूर उदिते मित्रं गृणीषे वरुणम् ।

[६३१] ७।६३।५ विधेम नमोभिर्मित्रावरुणोत हव्यैः ।

(अग्निः ९४८) ६।१।१० (बार्हस्पत्यो भरद्वाजः । अग्निः)

विधेम नमोभिरग्ने समिधोत हव्यैः ।

[५६७] ७।६६।१६ (मैत्रावरुणर्वसिष्ठः । सूर्यः)

जीवेम शरदः शतम् ।

(६५०) १०।८५।३९ (सूर्यासावित्री ऋषिका ।
सूर्या- सावित्री)

जीवाति शरदः शतम् ।

ऋग्वेदस्याष्टमं मण्डलम् ।

[५६८] ८।१०१।११ (जमदग्निर्भोगवः । सूर्यः)

महस्ते सतो महिमा पनस्यते ।

(अ.युर्वेदः १०४४) १०।७५।९ (सिन्धुक्षेत्रेयमेधः । नद्यः)

महान् ह्यस्य महिमा पनस्यते ।

ऋग्वेदस्य दशमं मण्डलम् ।

[५७३] १०।३७।४ (सौर्व्योऽभितपाः । सूर्यः)

येन सूर्य उयोतिषा बाधसे तमः ।

(१००४) १०।१९७।२ (कुशिकः सौभरः, रात्रिर्वा
भारद्वाजी । रात्रिः)

उयोतिषा बाधते तमः ।

[५७६] १०।३७।७ जीवाः प्रति पश्येम सूर्य ।

(५८६) १०।१५८।५ (चक्षुः सौर्यः । सूर्यः)

दे०[अदितिः] १८

प्रति पश्येम सूर्य ।

[५७९] १०।३७।१० तत् सूर्य द्रविणं धेहि चित्रम् ।

२।२३।१५ (गृत्समदः शौनकः । बृहस्पतिः)

तदस्मासु द्रविणं धेहि — ।

[५८०] १०।३७।११ यद् वो देवाश्चक्रुः जिह्वया ।

(आयुर्वेदः १९९०) १०।१५।४ (शङ्खो यामायनः । पितरः)

इमा वो हव्या चक्रुः जुषन्वम् ।

[५८६] १०।१५८।५ (चक्षुः सौर्यः । सूर्यः)

सुसंद्दशं त्वा वयं प्रति ।

(इन्द्रः ९२७) १।८२।३ (गौतमो राहूगणः । इन्द्रः)

सुसंद्दशं त्वा वयं गधवन् ।

['] १०।१५८।५ प्रति पश्येम सूर्य ।

(५७६) १०।३७।७ (सौर्योऽभितपाः । सूर्यः)

[५९०] १०।१७०।४ (विश्राज् सौर्यः । सूर्यः)

विश्राजज्योतिषा स्वरगच्छो रोचनं दिवः ।

(इन्द्रः २३६६) ८।९८३ (नृमेध अज्जिरसः । इन्द्रः)

[६५०] १०।८५।३९ = (५६७) ७।६६।१६

[६५३] १०।८५।४२ विश्वमायुर्व्यश्नुतम् ।

(अग्निः २४६७) १।९३।३ (गौतमो राहूगणः ।

अग्नीषोमी)

विश्वमायुर्व्यश्नुतम् ।

[६५४-५५] १०।८५।४३-४४ शं नो भव द्विपदे शं चतुष्पदे ।

(सोमः १२२३) ६।७४।१ (बार्हस्पत्यो भरद्वाजः ।

सोमारुद्रौ)

शं नो भूतं द्विपदे शं चतुष्पदे ।

[६६०] १०।८८।२ (अज्जिरसो मूर्धन्वान्, वाग्देव्यो वा ।

सूर्यनैश्वानरेऽग्निः)

आविः स्वरभवज्जाते अग्नौ ।

(अग्निः ६७६) ४।३।११ (वामदेवो गौतमः । अग्निः)

[६७४] १०।८८।१६ = (५६४) ७।६३।४

ऋग्वेदस्य प्रथमं मण्डलम् ।

[९०९] १।१५।३ (मेधातिथिः कावः । [ऋतवः] त्वष्टा)

त्वं हि रत्नधा असि ।

(अग्निः ११२७) ७।१६।६ (मैत्रावरुणिर्वसिष्ठः । अग्निः)

[६९२] १०।१८।६ (संकुसुको यामाग्नः । त्वष्टा)

दीर्घमायुः करति जीवसे वः ।

(आयुर्वेदः १९७७) १०।१४।१४ (यमो वैश्रवतः । यमः)

दीर्घमायुः प्र जीवसे ।

[७१७] १।२३।१५ (मेधातिथिः वाण्वः । पूषा)

गोभिर्यवं न चर्कषत् ।

(इन्द्रः १०८६) १।१७६।२ (अगस्त्यो मैत्रावरुणिः ।

इन्द्रः)

यवं न चर्कषद् वृषा ।

ऋग्वेदस्य तृतीयं मण्डलम् ।

[७३३] ३।६२।८ (विश्वामित्रो गाथिनः । पूषा)

वधूयुरिव योषणाम् ।

(इन्द्रः १४४८) ३।५२।३ (विश्वामित्रो गाथिनः । इन्द्रः)

[७३४] ३।६२।९ (विश्वामित्रो गाथिनः । पूषा)

यो विश्वाभि विपश्यति भुवना सं च पश्यति ।

(अग्निः १७१४) १०।१८७।४ (वत्स आग्नेयः । अग्निः)

ऋग्वेदस्य षष्ठं मण्डलम् ।

[७३५] ६।७८।१६ (शंयुर्बार्हस्पत्यः । पूषा)

अघा अर्यो अरातयः ।

(इन्द्रः ३०५३) ६।५९।८ (भरद्वाजो बार्हस्पत्यः । इन्द्राग्नी)

अघा अर्यो अरातयः ।

[७४३] ६।५३।५ (बार्हस्पत्यो भरद्वाजः । पूषा)

पणीनामारया हृदया कवे ।

(७४५) ६।५३।७ पणीनां हृदया कवे ।

[७४३-४५] ६।५३।५-७ अथेमस्मभ्यं रन्धय ।

[७४५-४६] ६।५३।७-८ आ रिख किकिरा कृणु ।

[७४८] ६।५३।१० (भरद्वाजो बार्हस्पत्यः । पूषा)

गोषणि...अश्वसां वाजसामुत । नृवत्... ।

(सोमः २०) ९।१।१० (मेधातिथिः काण्वः । पवमानः

सोमः)

गोषा...नृषा...अश्वसा वाजसा उत ।

[७५४] ६।५४।६ (भरद्वाजो बार्हस्पत्यः । पूषा)

यजमानस्य सुन्वतः ।

| | |
|--|--|
| (इन्द्रः ३०७०) ६।५०।१५ (भरद्वाजो बार्हस्पत्यः । इन्द्राग्नी) | [७६६] ६।५६।२ (भरद्वाजो बार्हस्पत्यः । पूषा) इन्द्रो वृत्राणि जिघ्रते । (इन्द्रः ४०१) ८।१७।८ (इरिग्विठिः काण्वः । इन्द्रः) |
| [७५६] ६।५४।८ (भरद्वाजो बार्हस्पत्यः । पूषा) ईशानं राय ईमहे । ८।२६।२२ (विश्वमना वैयश्वः, व्यश्वो वाजिरसः । वायुः) ईशानं राय ईमहे । (इन्द्रः १८२२) ८।४६।६ (वशोऽश्वयः । इन्द्रः) (इन्द्रः ५२५) ८।५३ [या०५] । १।२ (मिथ्यः काण्वः । इन्द्रः) | [७८७] १०।२६।९ (विमद ऐन्द्रः प्राजापत्यो वा, वागुजो वसुकृडा । पूषा) इमं नः दृणवद्वचम् । (अग्निः १३३१) ८।४३।२२ (विरुता आक्षिरसः । अग्निः) |

ऋग्वेदस्य सप्तमं मण्डलम् ।

| | |
|--|---|
| [७९६] ७।४१।५ (मैत्रावरुणिर्वसिष्ठः । भगः) वयं भगवन्तः स्याम । | (विधे देवाः १३८) १।१६४।४० (दीर्घतमा औचभ्यः । विधे देवाः) |
|--|---|

ऋग्वेदस्य प्रथमं मण्डलम् ।

| | |
|---|--|
| [८२०] १।२२।१८ (मेघातिथिः काण्वः । विष्णुः) त्रीणि पदा वि चक्रमे विष्णुः । (इन्द्रः ३१४) ८।१२।२७ (पर्वतः काण्वः । इन्द्रः) यदा ते विष्णुरोजसा त्रीणि पदा विचक्रमे । [८२३] १।२२।२१ (मेघातिथिः काण्वः । विष्णुः) तद्विप्रासो विपन्यवो जागृवांसः समिन्धते । (अग्निः ५१७) ३।१०।९ (विश्व मित्रो माथिगः । अग्निः) तं त्वा विप्रा विपन्यवो — । [८२५] १।१५४।२ (दीर्घतमा औचभ्यः । विष्णुः) मृगो न भीमः कुचरो गिरिष्ठाः । (इन्द्रः २८४०) १०।१८०।२ (जय ऐन्द्रः । इन्द्रः) | [८२८] १।१५४।५ (दीर्घतमा औचभ्यः । विष्णुः) नरो यत्र देवयवो मधन्ति । (इन्द्रः २२७८) ७।२७।१ (मैत्रावरुणिर्वसिष्ठः । इन्द्रः) [८३०] १।१५५।४ (दीर्घतमा औचभ्यः । विष्णुः) ऊरु कमिष्टोऽहमायय जीवमे । (इन्द्रः ५८६) ८।६३।९ (पगथः पाणः । इन्द्रः) ऊरु कमिष्ट जीवसे । [८४१] ७।९९।७ = ७।१००।७ (मैत्रावरुणिर्वसिष्ठः । विष्णुः) यपद् ते पिण्णताम जा कृणोमि तन्मे जुषस्व शिविविष्ट हव्यम् । यपेन्तु त्वा सुष्टुतयो गिरो मे यूयं पात स्वस्मिभिः सदा न ॥ |
|---|--|

ऋग्वेदस्य द्वितीयं मण्डलम् ।

| | |
|---|--|
| [९२३] २।३६।५ (गृत्समदः शौनकः । [ऋतवः] इन्द्रो नमश्च) तुभ्यं सुतो मघवन् तुभ्यमाभृतः—।... पिब । (इन्द्रः २७६१) १०।११६।७ (अग्निपुतः स्थौरोऽग्निपूषो वा स्थौरः । इन्द्रः) तुभ्यं सुतो मघवन् तुभ्यं पको ... पिब... । [९२४] २।३६।६ (गृत्समदः शौनकः । [ऋतवः] मित्रा- वरुणौ नमस्यथ) जुषेथां यज्ञं बोधतं हवस्य मे । (अश्विनौ ५१२) ८।३५।४ (श्यावाश्व आत्रेयः । अश्विनौ) | [९२५] २।३७।१ (गृत्समदः [आक्षिरसः शौनको नः पश्वाद्] भार्गवः शौनकः । द्रविणोदा ऋतवः) अभ्वर्थनः स पूर्णा वष्टयासिचम् । (अग्निः १२०२) ७।१६।११ (मैत्रावरुणिर्वसिष्ठः । अग्निः) द्रविणोदा पूर्णा विवष्टयासिचम् । ["] २।३७।१ तस्मा एतं भरत तदुशो । (इन्द्रः ११५१) २।१४।२ (गृत्समदः शौनकः । इन्द्रः) तस्मा एतं भरत तदुशाय । |
|---|--|

ऋग्वेदस्य दशमं मण्डलम् ।

[१००३] १०।१२७।१ (कुशिकः सौभरः, रात्रिर्वा भारद्वाजी ।
रात्रिः)

विश्वा अधि श्रियोऽधित ।

(आग्निः ४०१) १।८।५ (गृत्समदः शौनकः । आग्निः)

विश्वा अधि श्रियो दधे ।

[१००४] १०।१२७।२ ज्योतिषा बाधते तमः ।

(५७३) १०।३७।४ ज्योतिषा बाधसे तमः ।

[१०१०] १०।१२७।८ उप ते गा इवाकरम् ।

(रुद्रः १४) १।११४।९ (कुत्स आत्रिरसः । रुद्रः)

उप ते स्तोमान् ... इवाकरम् ।

अदितेः, आदित्यानां च वर्णानुक्रम-सूची ।

| | | | | | |
|----------------------------|------|--------------------------|------------|------------------------|----------|
| अंशो भगो वरुणो | ८०८ | अदित्यै रास्नासि विष्णोः | ८४९ | अनेहो मित्रार्यमन् | ६८ |
| अक्रविहस्ता सुकृते | २४४ | अदित्यै रास्नास्यदितिः | ११ | अन्तरा मित्रावरुणा | ३८१ |
| अक्ष्णश्चिद् गातुवित्तरा | ३५५ | अदित्सन्तं चिदावृणे | ७४१ | अन्तश्चरति रोचना | ६९० |
| अगन्म स्वः स्वरगन्म | ६२६ | अदृश्रमस्य केतवो | ५३६, ५९७ | अक्षं पूर्वा रासतां मे | ११२७ |
| अग्निर्मा गोप्ता परि | १६३ | अद्वयः सम्मृतः पृथिव्यै | ११७ | अपचितः प्र पतत | ६७८ |
| अग्ने देवाँ इहा वह | ९१० | अया देवा उदिता | ५५२ | अप त्वं परिपन्थिनं | ७२० |
| अग्नेस्तनूरसि विष्णवे त्वा | ८५३ | अयो नो देव सवितः | ४५५ | अप त्वे तायवो यथा | ५३५ |
| अधोरचक्षुरपतिष्येधि | ६५५ | अध रात्रि तृष्टधूमं | १०३७, १०४५ | अपपापं परिक्ष्वं | ११३३ |
| अद्घ्रिणा विष्णो मा त्वा | ८५१ | अधा चिन्नु यद्विधिषमहे | ३७३ | अपवासे नक्षत्राणाम् | १११५ |
| अचित्ता यच्चक्रमा | ४४३ | अधा नो विश्वसौभग | ७२३ | अपश्यं गोपम् | ६०८ |
| अजाश्वः पशुपा वाजपस्त्यो | ७७२ | अधारयतं पृथिवीमुत | २४१ | अप स्तेनं वासो | १०४९ |
| अति नः सश्वतो नय | ७२४ | अधा हि काव्या युवं | २७१ | अपादेति प्रथमा | २२४, ३९५ |
| अति विश्वान्यरुहद् | १०५३ | अधि या बृहतो दिवो | ३५३ | अपादोत्रादुत पोत्राद् | ९२८ |
| अतो देवा अवन्तु नो | ८१८ | अध्वनामध्वपते प्र मा | ५९६ | अपां नपातमवसे | ४०४ |
| अथो यानि च यस्मा ह | १०३९ | अनर्मावास इळया | १८७ | अपामीवामप सिधम् | ५७ |
| अदब्धेभिः सवितः | ४६३ | अनर्वाणो ह्येषां पन्था | ५५ | अपि ध्रुतः सविता देवो | ४६९ |
| अदब्धो दिवि पृथिव्यां | १४५ | अनश्चो जातो अनभीष्टुः | २२६ | अपो घुण इयं शङः | ९६ |
| अदर्शि गातुरवे | २०४ | अनागसो अदितये | ४५७ | अभयं मित्रावरुणौ | ३९२ |
| अदाभ्यो भुवनानि | ४३७ | अनु तन्नो जास्पतिः | ४७२ | अभि त्वं देव सवितारम् | ४८८ |
| अदितिर्द्यौरदितिः | १ | अनु पूर्वाण्योक्त्या | ३६० | अभि त्वा देव सवितः | ४०७ |
| अदितिर्न उरुष्यतु | ८० | अयं श्रुताममर्ति | २४३ | अभि त्वा वर्चसा गिरः | ६८६ |
| अदितिर्नो दिवा पशुं | ४ | अनुहवं परिह्वं | ११३२ | अभि नो नयं वसु | ७४० |
| अदिते मित्र वरुणोत | ३४ | अनेहो न उरुवजः | - ८ | अभि यज्ञं गृणीहि नो | ९०९ |

| | | | | | |
|-------------------------|----------|-----------------------------|------|-----------------------------|----------|
| अभि यं देव्यदितिः | ४७० | अस्माकं देवा उभयाय | ५८० | आ नो गन्तं रिशादसा | २९२ |
| अभि ये मिथो वनुषः | ४७१ | अस्माकमूर्जा रथं | ७८७ | आ नो मित्र सुदीतिभिः | २५९ |
| अभि यो महिना दिवं | १९१ | अस्मिन्स्वेतच्छकपूत | ३७५ | आ नो मित्रावरुणा घृतैः | २३६ |
| अभि वर्धतां पयसाभि | ९८८ | अस्य हि स्वयशस्त्रं | ४५३ | आ नो मित्रावरुणा हव्यजुष्टि | ३३९ |
| अभि स्यवसं नय | ७२५ | अस्या ऊ पु ण उप | ७३१ | आ पूषश्चित्रबर्हिषम् | ७१५ |
| अभीवृतं कृशनैः | ४१२ | अहमेवास्म्यमावास्या | १०८६ | आप्रा रजांसि दिव्यानि | ४३६ |
| अग्निं दिष्टुमक्षत्रिये | १११४ | अदृश् रात्री च | १०६९ | आ मा पूषन्नुप द्रव | ७३५ |
| अभूद् देवः सविता | ४४१ | अहोरात्राभ्यां नक्षत्रेभ्यः | १०६८ | आ मां मित्रावरुणेह | ३०९ |
| अमावास्या च पौर्णमासी | १०८९ | अहोरात्रे इदं ब्रूमः | ९९७ | आ मित्रे वरुणे वयं | २९५ |
| अमावास्ये न त्वदेतानि | १०८८ | अहोरात्रे ऊर्वष्टीवे | १०६४ | आ मे धनं सरस्वती | ११०३ |
| अमूरा विश्वा वृषणौ | ३२५ | अहोरात्रे गच्छ स्वाहा | १०६२ | आ मे महच्छतभिषग् | ११२८ |
| अमेव नः सुहवा | ७०३, ९२१ | अहोरात्रे नासिके | १०७२ | अयं गौः पृश्निरकमीद् | ६८९ |
| अयं वां मित्रावरुणा | २३३ | अहोरात्रेभ्यः स्वाहा | १०६५ | आ यद् योनं हिरण्यं | २७५ |
| अयं सहस्रभानवो | ६२८ | अहोरात्रेभ्यः स्वाहा | १०७३ | आ यद् वामीचक्षसा | २७३ |
| अयं सहस्रमृषिभिः | १२० | अहोरात्रेभ्यः स्वाहा | १०१३ | आयमगन्तस्वत्सरः | ८८७ |
| अयमा यात्यर्यमा | ८१० | अहोरात्रेभ्यः स्वाहा | ४१० | आयमगन्तस्वित्वा क्षुरेण | ५३२ |
| अयमेक इत्था पुर | ३५९ | आ कृष्णेन रजसा | ४४० | आ यातं मित्रावरुणा | ३००, ३४६ |
| अयं मित्राय वरुणाय | २०६ | आगन् देव ऋतुभिः | ४४० | आयुर्विश्वायुः परि | ७७६ |
| अयं मित्रो नमस्यः | १८८ | आगन् रात्री संगमनी | १०८७ | आ यो विवाय सचथाय | ८३७ |
| अयुक्त सप्त शुन्ध्युवः | ५४२ | आ चिकितान सुकतू | २६८ | आ राजाना मह ऋतस्य | ३३२ |
| अयुक्त सप्त हरितः | ३११ | आजाभि त्वाजन्या परि | ३८८ | आ रात्रि पार्थिवः रजः | १०१५ |
| अर्धमासाः पक्षे तै | १०६६ | आजासः पूषणं रथे | ७६४ | आ रिख किकिरा कृणु | ७४५ |
| अर्वाभ्रमय यथं | ९२९ | आ तत् ते दक्ष मन्तुमः | ७२२ | आ रोदतायुर्जरसं | ६९२ |
| अव दिवस्तारयन्ति | ६८५ | आ ते रथस्य पूषन् | ७८६ | आ वक्षि देवां इह | ९२२ |
| अव वेदिं होत्राभिः | ३१७ | आ ते स्वस्तिमीमहे | ७७० | आ वामश्वासः सुयुजो | २४२ |
| अवोरित्था वां छर्दिषो | ३०८ | आदित्य चक्षुरा दत्स्व | १८० | आ वामृताय केशिनीः | २१८ |
| अशीतिभिस्तिष्ठभिः | १६७ | आदित्य न.वमारुक्षः | १५८ | आ वां भूषन् क्षितयो | २१५ |
| अश्रमद्वियमर्यमन् | ८११ | आदित्या अव हि ख्यत | ८२ | आ वां मित्रावरुणा | २२८ |
| अश्ना न या वाजिना | ३०१ | आदित्यानागवसा | ३८ | आ विश्वदेवं सप्तपतिं | ४५८ |
| अश्विना पिबतं मधु | ९१७ | आदित्या विश्वे मरुतः | ४० | आ शर्म पर्वतानाम् | ६३ |
| अष्टाविंशानि शिवानि | ११३० | आदित्यासो अदितयः | ४१ | आशसनं विशसनम् | ६४६ |
| अष्टौ व्यख्यत् ककुभः | ४१६ | आदित्यासो अदितिः | ३९ | आशुभिश्चिद्यान् वि मुचाति | ४२२ |
| असति सत् प्रतिष्ठितं | १५२ | आदित्या ह जरितः | १६५ | इदं विष्णुर्वि चक्रमे | ८१९ |
| असतापं मे हृदयम् | १२६ | आदित्या रुद्रा वसवः | १८३ | इदं श्रेष्ठं ज्योतिषां | ५८९ |
| असपत्नं पुरस्तात् | ५२४ | आ देवो यातु सविता | ४७३ | इदं ह नूनमेषां | ५४ |
| असावन्वो असुर | ३७४ | आधीपर्णा कामशल्यां | ३८५ | इदं हिरण्यं गुल्गुलु | ७९९ |
| अस्तंयते नमो | १५६ | आधीवमाणायाः पतिः | ७८४ | इनो वाजानां पतिः | ७८५ |
| अस्ति देवा अंहोः | ९१ | आ धेनवो मामतेयम् | २१७ | इन्द्र सोमं पिब ऋतुना | ९०७ |
| अस्मभ्यं तद्विवो अङ्गयः | ४३० | आ न इडाभिर्विदधे | ६०२ | इन्द्रज्येष्ठ. न. बृहद्भ्यः | ४४५ |
| | | आ नः प्रजां जनयतु | ६५४ | | |

| | | | | | |
|----------------------------|----------|-----------------------------|----------|-------------------------|----------|
| इन्द्रं मित्रं वरुणम् | ५५३ | उत्तुदस्त्वोत्तुदतु | ३८४ | ऊती देवानां वयम् | २०९ |
| इम आ यातमिन्दवः | २११ | उत्थाय बृहती भव | ४०२ | ऋक्सामाभ्यामभिहितौ | ६३७ |
| इमं स्तोमं सक्तवो | २२ | उत्सूर्यो दिव एति | ६२५ | ऋजमुक्षण्यायने | ३६५ |
| इमं गोष्ठं पशवः | १०९८ | उत् सूर्यो बृहदर्चोषि | ५५८ | ऋतमृतेन सपन्ता | २८२ |
| इमं च नो गवेषणं | ७६९ | उदगादयमादित्यो | १५७, ५४६ | ऋतवः पक्तार आर्तवाः | ९५१ |
| इमं नो देव सवितः | ४९७ | उदसा बाहू शिथिरा | ४७४ | ऋतवस्त ऋतुथा पर्व | ९४७ |
| इमा उ त्वा पुरुवसो | ११८ | उदिह्युदिहि० । द्विपंथ | १३९ | ऋतवस्तमबध्नतार्तवाः | ९६५ |
| इमा गिर आदित्येभ्यो | २१ | उदिह्युदिहि० । यांश्च | १४० | ऋतवस्ते यज्ञं वि | ९४८ |
| इमा गिरः सवितारं | ४७६ | उदु तिष्ठ रावितः | ४६८ | ऋतव स्थ ऋतावृधः | ९३९ |
| इमां त्वमिन्द्र मीढवः | ६५६ | उदु त्वं जातवेदसं | ५३४ | ऋतस्य च वै स सत्यस्य | ११३७ |
| इमे चेतारो अनृतस्य | ३१३ | उदु त्यद् दर्शतं | ५६५ | ऋतस्य गोपावधि | २४८ |
| इमे दिवो अनिमिषा | ३१५ | उदु ष्य देवः सविता दमूना | ४६४ | ऋतावान ऋतजाता | ५३ |
| इमे मित्रो वरुणो | ३१४ | उदु ष्य देवः सविता ययम | ४६७ | ऋतावाना नि षेदतुः | ३५४ |
| इयं ते पूषन्नाघे | ७३२ | उदु ष्य देवः सविता सवाय | ४२० | ऋतुभिष्ट्वार्तवैरायुषे | ९५० |
| इयं देव पुरोहितिः | ३२०, ३२७ | उदु ष्य देवः सविता हिरण्यया | ४६१ | ऋतुभ्यष्ट्वार्तवैभ्यो | ७०९ |
| इयमेव सा या प्रथमा | १०७७ | उदु ष्य शरणे दिवो | ३६२ | ऋतुभ्यः स्वाहा | ९४६ |
| इयं पित्र्या राष्ट्र्येवमे | १७२ | उदू अयौ उपवक्तेव | ४६५ | ऋतूनां च वै स आर्तवानां | १०७१ |
| इयं मद्रां प्र स्तृणीते | २९९ | उद्यते नम उदायते | १५५ | ऋतून् भूग ऋतुपतीन् | ९६७ |
| इरा पुंश्चली हसो | १०२३ | उद्यज्य मित्रमह | ५४४ | ऋतून् यज ऋतुपतीन् | ९४९ |
| इरावती धेनुमती | ८४० | उद्वयं तमसरपरि ज्योतिः | ५४३ | ऋतेन ऋतमपिहितं | २३९ |
| इरावतीर्वर्धण धेनवो | २८५ | उद्वयं तमसरपरि स्वः | ६०० | ऋतेन गुप्त ऋतुभिश्च | १६२, ९७१ |
| इषश्चोर्जश्च शारदावृत् | ९३५ | उद् वां चक्षुर्वर्धण | ३२१ | ऋतेन मित्रावरुणौ | १९७ |
| इषिरा योषा युवतिः | १०५२ | उद् वां पृक्षामो मधुमन्तो | ३१२ | ऋतेन यावृतावृधौ | २०० |
| इहैव स्तं मा वि यौष्टं | ६५३ | उद्वेति प्रसवीता | ५६२ | ऋधगित्था स मर्त्यः | ३६८ |
| उक्षा समुद्रो अरुणः | ११५ | उद्वेति सुभगो विध्वयक्षाः | ५६१ | एकादशभिरस्तुवत | ९३७ |
| उक्षां कृणोतु शकत्या | १० | उप ते गा इयकरं | १०१० | एतच्चन त्वो वि चिकेतद् | २२३ |
| उच्छन्त्यां मे यजता | २६१ | उप नः सुतमा गतं | २९४ | एता देवसेनाः सूर्य | १८२ |
| उत धा स रथीतमः | ७६६ | उप मा पेपिशत् तमः | १००९ | एयमग्न पतिकामा | ७९८ |
| उत त्वामदिते मही | ६ | उपयामगृहीतोऽसि | १०७, ८६० | एष ते योनिश्चन्द्रमाः | ९७६ |
| उत नः सिन्धुरपां | ३५७ | उपयामगृहीतोऽसि मधवे | ९३१ | एष स्तोमो वरुण | ३३५, ३४० |
| उत नो गोषर्णि धियम् | ७४८ | उपयामगृहीतोऽसि रावित्रो | ४९० | एष स्य ते तन्वो | ९२३ |
| उत यास्मि सवितः | ४५० | उपावीरस्युप देवान् | ६९४ | एष स्य मित्रावरुणा | ३१० |
| उत वां विश्व मयाधु | २३२ | उमाभ्यां देव सवितः | ५०१ | एहि वां विमुचो नपाद् | ७५९ |
| उत स्या नो दिवा मतिः | ५ | उमे अस्मै पीपयतः | ३५ | ओर्वप्रा अमर्त्या | १००४ |
| उत स्वराजो आदितिः | ४६ | उरु विष्णो विक्रमस्त्रो | ८५९ | ओषधयो भूतभव्यम् | ८९१ |
| उतादः पक्षे गवि | ७६७ | उरुशंसा नमोवृधा | २३७ | कः सप्त खानि वि ततर्द | १०७८ |
| उतेदानीं भगवन्तः | ७९५ | उर्वश्च मा चमसश्च | १२३ | कल्यग्रयः कति सूर्यासः | ६७६ |
| उतेशिमे प्रसवस्य | ४५१ | उषसे नः परि देहि | १०५१ | कदा चन प्रयुच्छसि | १०९ |
| उतो स मश्यामिन्दुभिः | ७१७ | उषाः पुंश्चली मन्त्रो | १०२२ | कदा चन स्तरीरसि | १०८ |

| | | | | | |
|-----------------------------|------|---------------------------|----------|----------------------------------|----------|
| कवी नो मित्रावरुणा | १९८ | चन्द्रमा अप्पन्तरा | ९७९, ९८९ | तद् विष्णोः परमं पदं | ८११ |
| कालः प्रजा असृजत | ९०१ | चन्द्रमा नक्षत्राणाम् | ९८६ | तद् वो अय मनामहे | ५१ |
| कालादायः समभवन् | ९०२ | चन्द्रमा नक्षत्रैः | ९९० | तं नो यावापृथिवी | ५७५ |
| काले तपः काले ज्येष्ठं | ८९९ | चन्द्रमा मनसो जातः | ९७३, ९७८ | तन्मित्रस्य वरुणस्य | ५५१ |
| कालेन वातः पवते | ९०३ | चन्द्र यत् ते तपरतेन | ९८१ | तपश्च तपस्यश्च | ९३८ |
| काले मनः काले प्राणः | ८९८ | चन्द्र यत् ते तेजस्तेन | ९८५ | तमस्य राजा वरुणः | ८३६ |
| कालेऽयमङ्गिरा देवो | ९०६ | चन्द्र यत् तेऽचिस्तेन | ९८३ | तमु ष्टुहि यो अन्तः | ५१० |
| कालो अश्वो वहति | ८९२ | चन्द्र यत् ते शोचिस्तेन | ९८४ | तमु स्तोतारः पूर्व्य | ८३५ |
| कालो भूतिमसृजत | ८९७ | चन्द्र यत् ते हररतेन | ९८२ | तमृतं च सत्यं च | ११३६ |
| कालोऽमूं दिवमजनयत् | ८९६ | चन्द्राय स्वाहा चन्द्रमसे | ९७५ | तमृतवश्चार्तवाश्च | १०७० |
| कालो यज्ञं समैरयद् | ९०५ | चित्तिरा उपबर्हणं | ६३३ | तरणिर्विध्वदर्शतो | ५३७ |
| कालो ह भूतं भव्यं च | ९०४ | चित्पतिर्मा पुनानु | ४८७ | तस्य नक्षत्राण्यासरसो | ११०८ |
| काव्ययोरराजानेषु | ३८१ | चित्रं देवानाम् | ५४७ | तरय ब्राह्मस्य । यदादित्यम् | १०९१ |
| काव्येभिरदाभ्या | ३४४ | चित्राणि साकं दिवि | ११२४ | तस्य ब्राह्मस्य । योऽस्य चतुर्थो | ११२३ |
| किमिदं ते विष्णो परि | ८४७ | चित्रावसो स्वस्ति ते | १०११ | तस्य ब्राह्मस्य । योऽस्य तृतीयो | १०९० |
| कुहूं देवीं सुकृतं विद्मना | ११०४ | जीवान् नो अभि धेतन | ८९ | तरय ब्राह्मस्य । योऽस्य प्रथमो | १०८२ |
| कुहूदेवानामधृतस्य | ११०५ | जुषेथां यज्ञं बोधतं | ४००, ९२४ | तस्या ग्रीष्मश्च वसन्तश्च | ९५२ |
| कृष्णं नियानं हरयः | ५५४ | जोषा सवितर्यस्य ते | ५८३ | तस्यामू सर्वा नक्षत्रा | १११९ |
| केन देवां अनु क्षियति | ११२० | जोष्यमे समिधं जोषि | ९३० | तां वां धेनुं न वासरीं | २१२ |
| को नु वां मित्रास्तुनो | २७८ | ज्योतिष्मतीमदिति | २०५ | तां सवितुर्वरेण्यस्य | ५०० |
| गन्धर्वाप्सरसो ब्रूमो | ८१३ | त आदिस्वास उरवो | २३ | ता अर्पन्ति शुश्रियः | ६८७ |
| गर्भं धेहि सिनीवालि | १०९९ | तच्चक्षुर्देवहितं पुर० | ६०६ | ता जिह्वया सदमेदं | ३०५ |
| गर्भो देवानां पिता | ५१४ | तच्चक्षुर्देवहितं शुक्रं | ५६७ | तां जुषस्व गिरं मम | ७३३ |
| गायत्रेण त्वा छन्दसा | ८४८ | तत्तदितस्य पौर्यं | ८३० | ता नः शक्तं पार्थिवस्य | २८१ |
| गार्हपत्येन सन्त्य | ९१८ | तत् सवितुर्वरेण्यं | ४३१ | ता नः स्तिपा तनूपा | ३४३ |
| गाव इव ग्रामं यूयुधिः | ४८३ | तत् सवितुर्वृणीमहे | ४५२ | ता बाहवा सुचेतुना | २५६ |
| गीर्णं भुवनं तमसा | ६६० | तत् सु नः शर्म यच्छत | ५९ | ता भूरिपाशावनृतस्य | ३३८ |
| गुदा आसन्तिस्नोवाल्याः | १०९६ | तत् सु नः सविता भवो | ५६ | ता माता विश्ववेदसा | ३४९ |
| गृणाना जमदग्निना | २३८ | तत् सु नो नव्यं सन्यसे | ९९ | ता मे अश्वयानां | ३६६ |
| गृष्णाभि ते सौभगत्वाय | ६४७ | तत् सु वां मित्रावरुणा | २४० | तां पूषञ्छवतमा० | ६४८ |
| गृह्णामि ते सौभगत्वाय | ८०४ | तत् सूर्यस्य देवत्वं | ५५० | ता व मितानोऽवसे | २६४ |
| ग्रीष्मस्ते भूमे वर्षाणि | ९६९ | तत् सूर्यं रोदसी उभे | ३६४ | ता वामेषेरथानाम् | २७० |
| ग्रीष्मेण ऋतुना देवा | ९४१ | तदभिराह तदु सोम | ७९० | ता वां मित्रावरुणा | ३७२ |
| ग्रीष्मावेनं मासौ दक्षिणाया | ९५६ | तदस्य प्रियमभि | ८२८ | ता वां वास्तुशुभसि | ८२९ |
| ग्रीष्मो मासौ गोसारौ | ९५५ | तदहं पृथिवि बृहत् | २७२ | ता वां विध्वस्य गोपा | ३४७ |
| घृतेन त्वा समुक्षामि | ९९३ | तद् देवस्य सवितुः | ४३४ | ता वां सम्यगद्बुद्धाणा | १८९, ३९७ |
| चक्षुर्नो देवः सविता | ५८४ | तद् यस्यैवं विद्वान् | १०२५-२९ | ता विप्रं धैथे जठरं | ३०४ |
| चक्षुर्नो धेहि चक्षुषे | ५८५ | तद् वार्यं वृणीमहे | ३५६ | ता सम्राजा घृतासुती | २३५ |
| चतुर्भिः साकं नवतिं च | ८३२ | तद् विप्रासो विपन्यवो | ८२३ | ता हि क्षत्रं धारयेथे | ३०३ |

| | | | | | |
|----------------------------|------|--------------------------------|------|---------------------------|----------|
| ता हि क्षत्रमविहृतं | २६९ | त्वष्टा दुहित्रे बहृतं | ६९८ | दैव्यावध्वर्यू आ गतः | ६०१ |
| ता हि देवानामसुरा | ३३७ | त्वष्टा मे दैव्यं वचः | ७०४ | दोषो गाय नृहृद् | ५१९ |
| ता हि श्रेष्ठवर्चसा | २६३ | त्वष्टा युनक्तु बहुधा | ६९९ | यावाभूमी अदिते | ३२८ |
| तिष्ठो यावः सवितुः | ४१४ | त्वष्टा वासो व्यदधात् | ८०६ | यौरासीत् पूर्वचित्तिः | १०१२ |
| तिष्ठो भूमीर्धारयन् | २८ | त्वष्टा वीरं देवकामं | ६९७ | यौधेनुस्तस्या आदित्यो | १७९ |
| तुचे तनाय तत् सु | ६५ | त्वां विष्णुर्वहन् क्षयो | ३९९ | यौस्ते पृथिव्यन्तरिक्षं | १११० |
| तुभ्यं हिन्वानो वसिष्ठ | ९१९ | त्वामिन्द्र ब्रह्मगा वर्धयन्तः | १४७ | द्रप्सश्चस्कन्द पृथिवीमनु | ११३ |
| तुभ्यमग्रे पर्यवहन् | ६४९ | दूमना देवः सविता | ५२३ | द्रविणोदा ददातु नो | ९१४ |
| तुरण्यवोऽन्निरसो | ४३ | दर्शोऽसि दर्शतोऽसि | ६८९ | द्रविणोदा द्रविणसो | ९१३ |
| तृष्टमेतत् कटुकम् | ६४५ | दिक्षु चन्द्राय समनमन् | ९९८ | द्रविणोदाः पिपीषति | ९१५ |
| ते न आस्नो वृकाणाम् | ९५ | दितेः पुत्राणामदितेः | १७ | द्वादश प्रधयश्चक्रमेकं | ८८३ |
| तेन भूतेन हविषा | ९८७ | दिवं ब्रूमो नक्षत्राणि | ११२२ | द्वे इदस्य क्रमणे | ८३१ |
| तेनेषितं तेन जातं | ९०० | दिवि क्षयन्ता रजसः | ३३१ | द्वं ते चक्रे सूर्ये | ६४२ |
| ते नो भद्रेण शर्मणा | ६४ | दिवि विष्णुर्व्यक्रस्त | ८५२ | द्वे समीची बिभृतः | ६७४ |
| तेषां हि चित्रमुक्थ्यं | ८७ | दिवे चक्षुषे नक्षत्रेभ्यः | ११३५ | द्वे स्मृती अश्वणवं | ६७३ |
| ते स्याम देव वरुण | ४९ | दिवो धर्ता भुवनस्य | ४३५ | द्वौ च ते विंशतिश्च ते | १०३४ |
| ते हिन्विरे अरुणं | १०३ | दिवो धामभिर्वरुण | ३४५ | धर्ता दिवो वि भाति | ६०७ |
| ते हि पुत्रासो अदितेः | ३ | दिवो रुक्म ऊरुचक्षा | ५६४ | धर्मणा मित्रावरुणा | २५४ |
| ते हि ध्मा वनुषो नरो | ३५८ | दिवो वा विष्ण उत वा | ८५४ | धाता दधातु दाशुषे | ७१२ |
| ते हि सत्या ऋतस्पृशः | २७७ | दिवो विष्ण उत वा | ८६४ | धाता दधातु नो रथिम् | ७११ |
| त्यान् नु क्षत्रियौ अव | ८५ | दिव्यं सुपर्ण वायसं | ६३० | धाता दाधार पृथिवीं | ८१२ |
| त्रिंशदामा वि राजति | ६९१ | दिव्यादित्याय समनमन् | १७८ | धाता मा निर्ऋत्या | ७०७ |
| त्रिरन्तरिक्षं सविता | ४३८ | दिशो धेनवस्तासां | ९९२ | धाता रातिः सवितेदं | ६२५, ७०८ |
| त्रिदैवः पृथिवीमेषः | ८४४ | दत्तेरिव तेऽश्वकम् | ७३७ | धाता विधाता भुवनस्य | ७१० |
| त्रीणि पदा वि चक्रमे | ८२० | दृशेन्यो यो महिना | ६६५ | धाता विश्वा वार्या दधातु | ७१३ |
| त्री रोचना दिव्या | २९ | देव सवितः प्रसुव | ४९१ | धारयन्त आदित्यासो | २४ |
| त्री रोचना वरुण | २८४ | देव सवितरेष ते | ४८९ | ध्रुवा असदन्तस्य | ८५० |
| त्वं रक्षसे प्रदिशः | १४९ | देवं नरः सवितारं | ४३३ | नक्षत्राणि च मे यज्ञेन | ११०७ |
| त्वं विरवेषां वरुणासि | ३० | देवस्त्वा सविता मध्वा | ५१२ | नक्षत्राणि छन्दः | ११०६ |
| त्वं विष्णो सुमतिं | ८४३ | देवस्त्वा सवितोद्वपतु | ४९९ | नक्षत्राणि रूपेण | ११११ |
| त्वं तस्य द्रयाविनो | ७९१ | देवस्य चेततो महीं | ५०४ | नक्षत्रेभ्यः किर्मिरम् | १११३ |
| त्वं तृतं त्वं पर्येषु | १४८ | देवस्य त्वा सवितुः | ४८५ | नक्षत्रेभ्यः स्वाहा | ११०९ |
| त्वं न इन्द्र महते | १४२ | देवस्य वयं सवितुः | ४६२ | न तं तिग्मं चन त्यजो | ७८ |
| त्वं न इन्द्रोतिभिः | १४३ | देवस्य सवितुर्भागे स्थ | ५२८ | न ते अदेवः प्रदिषो | ५७९ |
| त्वमिन्द्रस्त्वं महेन्द्रः | १५१ | देवस्य सवितुर्मतिं | ५०७ | न ते विष्णो जायमानो | ८३९ |
| त्वमिन्द्रासि विश्वजित् | १४४ | देवस्य सवितुर्वयं | ४३२ | न दक्षिणा वि चिकिते | ३१ |
| त्वया हितमप्यम् | ४२६ | देवेभिर्देव्यदिते | २ | नपाता शवसो महः | ३५१ |
| त्वयि रात्रि वसामसि | १०३८ | देवेभिर्निषितो | ६६१ | न पूषणं मेधामसि | ७२७ |
| त्वष्टा जायामजनयत् | ७०१ | देवेभ्यो हि प्रथमं | ४४२ | न प्रमिये सवितुः | ४४४ |
| त्वष्टा दधच्छुष्ममिन्द्राय | ६९६ | | | | |

| | | | | | |
|---------------------------|------|--------------------------------|---------|--------------------------------|----------|
| नभश्च नभस्यश्च | ९३४ | पुनः पत्नीमभिरदाद् | ६५० | प्र विष्णवे शृषमेतु | ८९६ |
| नमो दिवे बृहते | २०८ | पुनः समव्यद् विततं | ४२३ | प्र वो मित्राय गायत | २७९ |
| नमो मित्रस्य वरुणस्य | ५७० | पुरा क्रूरस्य विसृपो | ९७४ | प्र स मित्र मर्तो अस्तु | १८६ |
| न यः संपृच्छे न पुनः | ३७१ | पुरुहणा चिद्वस्यवो | २८८ | प्र सा क्षितिरसुर | २१६ |
| न यस्याः पारं ददृशे | १०३१ | पूर्णः कुम्भोऽधि कालः | ८९४ | प्र सु ज्येष्ठं निचिराभ्यां | २०३ |
| न यस्येन्द्रो वरुणो | ४२८ | पूर्णा पश्चादुत पूर्णा | १०७९ | प्रस्तुतिर्वा धाम न प्रयुक्तिः | २३० |
| नवदशभिरस्तुवत | १०६३ | पूर्वापरं चरतो मायया | ६७९ | प्र हि त्वा पूषन्नजिरं | ७२९ |
| नवोनवो भवति जायमानो | ९७२ | पूषणं न्वजाश्वम् | ७६२ | प्र ह्यच्छा मनीषाः | ७७९ |
| नवोनवो भवसि जायमानो | ६८० | पूषन् तव व्रते वयं | ७५७ | प्राणापानौ मा हासिष्टं | १३१ |
| नहि तेषाममा चन | १०५ | पूषन्ननु प्र गा इहि | ७५४ | प्रातर्जितं भगमुग्रं हवामहे | १६८ |
| नानौकांसि दुर्यो विश्वम् | ४२४ | पूषा गा अन्वेतु नः | ७५३ | प्रातर्जितं भगमुग्रं हुवेम | ७७३ |
| नाभिरहं रथीणां | १२७ | पूषा त्वेदश्चावयतु | ७७५ | प्रातर्देवीमदिति | २८६ |
| नास्माकमस्ति तत् तर | १०० | पूषा राजानमावृणिः | ७१६ | प्रोरोर्मित्रावरुणा | ३२३ |
| नि ग्रामासो अविक्षत | १००७ | पूषा सुबन्धुर्दिव आ | ७७४ | वट् सूर्य श्रवसा | ५६९ |
| निरु स्वसारमस्कृतो | १००५ | पूषेमा आशा अनु वेद | ७७७ | बळित्था देव निष्कृतम् | २७४ |
| नूनं तदस्य काव्यो | १७६ | पूष्णश्चक्रं न रिष्यति | ७५१ | बष्महो असि सूर्य | ५६८ |
| नू मर्तो दयते सनिष्यन् | ८४२ | पूर्णमासी प्रथमा | १०८१ | बहवः सूरचक्षसो | ५० |
| नू मित्रो वरुणो अर्यमा | ३३० | प्रजापतेरनुमतिः | ११०० | बृहःसुप्तः प्रसवीता | ४३९ |
| नृचक्षा एष दिवो | ४७८ | प्रजापतेरावृत्तो ब्रह्मणा | १६० | बृहद् वरुथं मरुतां | ६७ |
| नेह भद्रं रक्षस्विने | ८३ | प्रज्ञानाय नक्षत्रदर्शम् | १११२ | बृहस्पतिर्म आत्मा | १२५ |
| पञ्चभिः पराङ् तपसि | १५० | प्र णो यच्छत्वर्थमा | ८१७ | बृहस्पते सवितः | ५२७ |
| पथस्पथः परिपतिं | ७८८ | प्रति तिष्ठ विराडसि | ११०१ | ब्रह्म जज्ञानं प्रथमं | ११२, १७१ |
| परमेष्ठा त्वा सादयतु | ५९८ | प्रति वा सूर उदिते | ४७, ३३६ | ब्रह्म देवां अनु क्षियति | ११२१ |
| परि णो वृणजन्नघा | ७६ | प्र तत् ते अद्य शिपिविष्ट | ८४६ | ब्राह्मणादिन्द्र राघसः | ९११ |
| परि तृन्धि पर्णानां | ७४३ | प्र तद्विष्णु स्तवते वीर्याणि | ८६२ | ब्रूमो देवं सवितारं | ७१४ |
| परि पूषा परस्तात् | ७५८ | प्र तद् विष्णुः स्तवते वीर्येण | ८२५ | भग एव भगवाँ अस्तु | १७०, ७९६ |
| परि यो रदिमना दिवो | ३६१ | प्रत्यङ् देवानां विशः | ५३८ | भगं धियं वाजयन्तः | ४२९ |
| परिहृतेदना जने | ७७ | प्रत्यर्धिर्यज्ञानाम् | ७८३ | भग प्रणेतर्भग सत्यराधो | १६९, ७९४ |
| परीवृत्तो ब्रह्मणा वर्मणा | १६१ | प्रपथे पथामजनिष्ट | ७७८ | भगभक्तस्य ते वयम् | ४०९, ७९१ |
| परो मात्रया तन्वा | ८३८ | प्र पादौ न यथायति | १०६१ | भगमुग्रोऽवसे जोहवीति | ७२२ |
| परो हि मर्यैरसि | ७३८ | प्रप्र पूष्णस्तुविजातस्य | ७२८ | भगस्ततक्ष चतुरः | ८०७ |
| परि दीने गभीर आँ | ७ | प्र बाहवा सिष्टतं | ३२९ | भगस्ते हस्तमग्रहीत् | ८०५ |
| पञ्चदमन्यदभवद् | ४८२ | प्र मित्रयोर्वरुणयोः | ३४१ | भगस्य नावमा रोह | ६२३ |
| पाकप्रा स्थन देवा | ६२ | प्र मित्राय प्रार्यम्णे | ४०१ | भगेन मा शांशपेन | ८०१ |
| पातं नो मित्रा पायुभिः | ३९८ | प्र यद् वां मित्रावरुणा | ३०६ | भगो युनक्त्वाशिषो | ८०० |
| पातं नो रुद्रा पायुभिः | २९० | प्रयन्तमित् परि जारं | २२५ | भद्रा अश्वा हरितः | ५४९ |
| विपुर्नो नो अदितिः | २७ | प्र यो जज्ञे विद्वानस्य | १७३ | भद्रासि रात्रि चमसो | १०५९ |
| प्रीणाय धेनुरदितिः | २३१ | प्र वो वां मित्रावरुणा | ३७० | भद्राहं नो मय्यदिने | १०३० |
| पुण्यं पूर्वा फल्गुन्यौ | ११२६ | प्र वां स मित्रावरुणौ | ३२२ | भवा मित्रो न शेष्यो | ८९३ |

| | | | | | |
|----------------------------|--------|---------------------------------|------|-----------------------------|------|
| भूताय त्वा नारातये | ५९१ | मित्रस्य चर्षणीधृतो | १९० | यथा सूर्यश्च चन्द्रश्च | ९९५ |
| भूर्भुवः स्वर्गैरिव भूम्ना | ५९३ | मित्रा तना न रथ्या | ३४८ | यथा सूर्यो नक्षत्राणां | ६१७ |
| मंघीमहि त्वा वयम् | ७८२ | मित्राय पञ्च येमिरे | १९२ | यथाहश्च रात्री च | १०१८ |
| मधुश्च माधवश्च | ९३२ | मित्रावरुणयोर्भाग स्थ | ३९६ | यथाहान्यनुपूर्वं भवन्ति | ७०५ |
| मनो अस्या अन आसीद् | ६३६ | मित्रावरुणयोस्त्वा प्रशास्त्रोः | ३८० | यदद्य कच्च वृत्रहन् | ६०३ |
| मन्दस्व होत्रादनु | ९२५ | मित्रावरुणौ वृष्टयाधिपती | ३९१ | यदद्य त्वा पुरुषदुत | ७६८ |
| मरुतः पिबत ऋतुना | ९०८ | मित्रो अंहोश्चिदादुरु | २६५ | यदद्य सूर उदिते | ४४ |
| महौ आदित्यो नमसा | १८९ | मित्रो जनान् यातयति | १८५ | यदद्य सूर्य ब्रवोऽनागा | ५५७ |
| महान्ता मित्रावरुणा | ३५० | मित्रो देवेष्वायुषु | १९३ | यदद्या रात्रि सुभगे | १०५० |
| महि ज्योतिर्बिभ्रतं | ५७७ | मित्रो नो अल्यंहति | ८६ | यदयातं शुभस्पती | ६४१ |
| महि त्रीणामवोऽस्तु | १०४ | सुखन्तु मा शपथ्याद् | ९९१ | यदक्षिणा पृच्छमानौ | ६४० |
| महि वो महतामवो | ७२, ८८ | मूर्धा भुवो भवति नक्तम् | ६६४ | यदाविष्यदपीत्यं | ८४ |
| मही अत्र महिना | २१७ | मूर्धाहं रयीणां मूर्धा | १२१ | यदि जाग्रद्यदि स्वप्न | ५९९ |
| महीमू पु मातरम् | १२ | मेघन्तु ते वह्नयो येभिः | ९२७ | यदीदं मातुर्यदि वा | ८८२ |
| मह्यं त्वा मित्रावरुणौ | ३९३ | य इन्द्र इन्द्रियं दधुः | ५०२ | यदेदेनमधुर्यज्ञियासो | ६६९ |
| मा कस्याञ्जुतकत् | २९१ | य इमा विश्वा जातानि | ४६० | यद् गोपावददितिः शर्म | ३१६ |
| मा काकम्बीरमुद् वृहो | ७३६ | य इमे उभे अहनी | ४५९ | यद् देवाः शर्म शरणं | ८१ |
| माक्रिर्नेशनमाक्रौ | ७५५ | य उपरिष्ठाज्जुहति | ६२४ | यद् त्वद् वां पुरुमीळहस्य | २१४ |
| मातुर्दिधिषुमब्रवं | ७६३ | य एनमादिदेशति | ७६५ | यद् त्यन्मित्रावरुणा वृताद् | २१३ |
| मा त्वा क्रव्यादभि | ९९६ | यं यज्ञं नयथा नरः | १९ | यद् बंहिष्ठं नातिविधे | २४७ |
| मा त्वा दभन्तसलिले | १४१ | यः पूर्यथा वेधसे | ८३४ | यद् यामं चक्रुर्निखनन्तो | ८८० |
| मा नः सेतुः सिषेदयं | ९२ | यजामहे वां महः | २२९ | यद् वः श्रान्ताय सुन्वते | ९० |
| मा नो मृचा रिपूणां | ९३ | यजातवेदो भुवनस्य | ६६३ | यद् वो देवाश्चक्रम | ५८१ |
| मा नो हेतिर्विवस्वतः | १०१ | यज्ञैः संमिश्राः पृषतीभिः | ९२० | यं देवा अंशुमाप्याययन्ति | ६८४ |
| मा मां प्राणो हासीन्मो | १२९ | यज्ञो देवानां प्रत्येति | ११० | यं देवासोऽजनयन्त | ६६७ |
| माया वां मित्रावरुणा | २५१ | यज्ञो हीळो वो अन्तरः | ६६ | यन्नूनमद्यां गतिं | २५७ |
| मा विदन् परिपन्थिनो | ६४३ | यत् किं चेदं पतयति | १०४१ | यमादित्यासो अग्रहः | ७० |
| माश्वानां भद्रे तस्करो | १०३६ | यत् त आत्मनि तन्वां | ५१७ | यसु पूर्वमहुवे तमिदं | ९२६ |
| माहं मघोनो वरुण | ३७ | यत् ते देवा अकृष्वन् | १०८५ | यं परिहस्तमबिमः | ७०२ |
| मित्र एनं वरुणो वा | ३८३ | यत् प्राण ऋतावागते | ९६६ | ययोरोजसा रुक्मिता | ८७७ |
| मित्रं वयं हवामहे | १९९ | यत्र ब्रह्मविदो यान्ति | ९९४ | यक्षिकेत स सुकतुः | २६२ |
| मित्रं हुवे पूतदक्षं | १९६ | यत्रा चक्रुरमृता | ६३१ | यक्षिद्धि त इत्या भगः | ४०८ |
| मित्रं न यं शिष्या गोषु | १८४ | यत्रा वदेते अवरः | ६७५ | यस्या अरासत क्षयं | ७५ |
| मित्रः पृथिव्योदकामत् | १९५ | यत्रा समुद्रः रुक्मिणो | ४८१ | यस्मै पुत्रासो अदितेः | १०६ |
| मित्रः सःसृज्य पृथिवीं | १९४ | यत् त्वा तुरीयस्रुभिः | ९१६ | यस्य ते पूषन्सख्ये | ७३० |
| मित्रश्च नो वरुणश्च | २९७ | यत् त्वा सूर्य स्वर्मातुः | ५५६ | यस्य ते विश्वा भुवनानि | ५७८ |
| मित्रश्च वरुणांशौ | ८१६ | यथा नो मित्रो वरुणो | २०२ | यस्य त्यन्महित्वं | ७८० |
| मित्रस्तजो वरुणो देवो | ३३३ | यथा प्रसृता सविदुः | १००१ | यस्य त्री पूर्णा मधुना | ८२७ |
| मित्रस्तजो वरुणो मामहन्त | ४२ | यथा शाम्याकः प्रपतन् | १०४८ | यस्य प्रमाणमन्वन्य | ४४९ |

| | | | | | |
|-----------------------------|------|-----------------------------|------|----------------------------|----------|
| यस्यायं विश्व आयो | ११९ | यूयं राजानः कं | ७१ | रात्रि मातरुषसे नः | १०४० |
| यस्येदं प्रदिशि यद् | ८७८ | यूयमुग्रा मरुतः | १८१ | रात्रीभिरस्मा अहभिः | १००१ |
| यस्योरुषु त्रिषु विक्रमणेषु | ८६३ | ये चिद्धि मृत्युबन्धवः | ६९ | रात्री माता नभः पिता | १०२० |
| या गुह्यर्या सिनीवाली | १०९७ | ये ते त्रिरहन्त्सवितः | ४४६ | रात्री व्यख्यदायती | १००३ |
| या त इन्द्र तनूरप्सु | १४६ | ये ते पन्थाः सवितः | ४१९ | रात्र्य कृष्णं पिङ्गाक्षम् | १०१४ |
| याति देवः प्रवता याति | ४११ | ये ते रात्रि नृचक्षसो | १०३२ | राया वयं ससवांसो | ३७८ |
| या ते अष्टा गोओपशा | ७४७ | ये ते रात्र्यनङ्गाहः | १०४६ | राया हिरण्यया मतिः | ४८ |
| या देवीः पञ्च प्रदिशो | ९६८ | येन वृक्षां अभ्यभवो | ८०० | रायो धारास्याघृणे | ७६१ |
| याद्राध्यं वरुणो योनिम् | ४२७ | येन सूर्य ज्योतिषा | ५७३ | रायो बुध्नः संगमनो | ४७९ |
| या धर्तारा रजसो | २८७ | येना पावक चक्षसा | ५३९ | रुचिरसि रोचोऽसि | १५४ |
| या भारयन्त देवाः | ३४२ | येऽमावास्यां रात्रिमुदस्थुः | १०१७ | रुजश्च मा वेनश्च मा | १२२ |
| यानि नक्षत्राणि दिवि | ११२९ | ये मूर्धनः क्षितीनाम् | ९४ | रेवद् वयो दधाथे | २२१ |
| यां देवाः प्रतिनन्दन्ति | १०७५ | ये रात्रिमनुतिष्ठन्ति | १०४३ | रैभ्यासीदनुदेयी | ६३२ |
| या प्लीहानं शोषयति | ३८६ | यो अद्य सेन्यो वधो | ३९० | वचो दीर्घप्रसन्ननि | ३६३ |
| यां पूषन् ब्रह्मचोदनां | ७४६ | यो अद्य स्तेन आयति | १०६० | वज्रापवसाध्यः कीर्तिः | ६८८ |
| यावन्तो मा सपत्नानाम् | ६१८ | यो अन्धो यः पुनःसरो | ८०३ | वयमु त्वा पथस्पते | ७३९ |
| यावन्मात्रमुषसो न | ६७७ | यो अस्मै हविषाविधत् | ७५२ | वयं मित्रस्यावसि | २६६ |
| यावया वृक्षं वृक्षं | १००८ | योऽथर्वाणं पितरं | १७७ | वरुणः प्राविता भुवन् | २०१ |
| या विस्पतीन्द्रमसि | १०९४ | यो नः कश्चिद् रिरिक्षति | ६० | वरुणं वो रिशादसम् | २५५ |
| या वो माया अभिद्रुह | ३६ | यो नः पूषन्नघो वृको | ७१९ | वरुणं तं आदित्यवन्तम् | १६४ |
| या सुषाहुः स्वर्गुरिः | १०९३ | यो नो भद्राहमकरः | १११७ | वर्ये वन्दे सुभगे | १०५४ |
| यास्ते पूषन्नावो अन्तः | ७७३ | यो ब्रह्मणे सुमतिम् | ३१९ | वर्षाभिर्ऋतुनादित्या | ९४२ |
| यास्ते राके सुमतयः | १०८४ | यो मित्राय वरुणाय | २०७ | वर्षिष्ठक्षत्रा उरुचक्षसा | ३६९ |
| युक्तेन मनसा वयं | ४९५ | यो राजभ्य ऋतनिभ्यो | ३२ | वषट् ते विष्णवांस आ | ८४१ |
| युक्त्वाय सविता देवान् | ४९६ | यो वां गर्तं मनसा | ३३४ | वसन्तेन ऋतुना देवा | ९४० |
| युजते मन उत युजते | ४४७ | यो वां यज्ञैः शशमानो | २१९ | वस्योभूयाय वसुमान् | ६२७ |
| युजन्ति ब्रह्मरुषं | ११६ | यो विश्वाभि विपश्यति | ७३४ | वाचं सु मित्रावरुणौ | २५३ |
| युजानः प्रथमं मनः | ४९४ | योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं | ६८३ | वाजस्य नु प्रसवे | १६ |
| युनक्तु देवः सविता | ५२६ | यो होताऽऽसीत् प्रथमो | ६६२ | वाममथ सवितर्वामसु | ४६६ |
| युयोता शरुमस्मदाँ | ५८ | रक्षा माकिर्नो अघशंस | १०३५ | वार्षिकावेनं मासौ | ९५८ |
| युवं वज्राणि पीवसा | २२२ | रक्षोहणं वलगहनं | ८५६ | वार्षिकौ मासौ गोप्तारौ | ९५७ |
| युवं क्षमराजावसीदतं | ३७७ | रक्षोहणो वो वलगहनः | ८५८ | वासन्तावेनं मासौ | ९५४ |
| युवं वक्षं धृतव्रत | ९१२ | रथं युजते मरुतः | २५२ | वासन्तौ मासौ गोप्तारौ | ९५३ |
| युवं नो येषु वरुण | २६० | रथीतमं कपर्दिनम् | ७६० | वि चक्रमे पृथिवीमेष | ८४५ |
| युवं मित्रेनं जनं | २६७ | राकामहं सुहवां | १०८३ | विजनाच्छपावाः शितिपादो | ४१३ |
| युवां यज्ञैः प्रथमा गोभिः | २२० | राजानावनभिद्रुहा | २३४ | विदा देवा अघानाम् | ७३ |
| युवाभ्यां मित्रावरुणा | २५८ | रातिं सत्यति महे | ५०६ | विद्या शरस्य पितरं | ६१०, ९८० |
| युवोर्हि मातादितिः | ३७६ | रात्रिरात्रिमरिष्यन्तः | १०४७ | विद्यामादित्या अवसो | २५ |
| युष्मे देवा अपि प्वासि | ७९ | रात्रिः केतुना जुषतां | १०१६ | विद्यामेषि रजस्पृथ्वहा | ५४० |

| | | | | | |
|--------------------------------|----------|----------------------------------|------|-----------------------------|----------|
| विष्णुत् पुंश्वली स्तनायितुः | १०२४ | विष्णोः क्रमोऽसि० अप्सु | ८७३ | शुचिरपः सूयवसा | ३३ |
| वि नः सहस्रं शुरुधो | ५६० | विष्णोः क्रमोऽसि० यज्ञ | ८७१ | शुची ते चके यात्या | ६३८ |
| वि पयो वाजसातये | ७४२ | विष्णोः क्रमोऽसि० क्षोषधी | ८७२ | शृण्वन्तं पूषणं वयम् | ७५६ |
| वि पूषचारया तुद | ७४४ | विष्णो रराटमसि विष्णोः | ८५५ | शैशिरावेनं मासौ | ९६४ |
| विभक्तारं हवामहे | ४०५, ५०८ | विष्णोर्नु कं प्रा वोचं वीर्याणि | ८६१ | शैशिरेण ऋतुना देवाः | ९४५ |
| विभ्राजज्ज्योतिषा स्वः | ५९० | विष्णोर्नु कं वीर्याणि प्र वोचं | ८२४ | शैशिरौ मासौ गोसारौ | ९६३ |
| विभ्राजमान उषसाम् | ५६३ | वि सुपर्णो अन्तरिक्षाणि | ४१५ | श्रद्धा पुंश्वली मित्रो | १०२१ |
| विभ्राड् बृहत् पिबतु | ५८७ | वृषभं वाजिनं वयं | १०८० | श्रायन्त इव सूर्य | ६०४ |
| विभ्राड् बृहत् सुभृतं | ५८८ | वृष्टिद्यावा रीत्यापा | २८३ | श्रीश्च ते लक्ष्मीश्च पत्यौ | १०६७ |
| विमान एष दिवो मध्य | ११४ | वेद वै रात्रि ते नाम | १०४४ | षष्टिश्च षट् च रेवति | १०३३ |
| विमोक्ष माद्रपविश्च | १२४ | वैवस्वतः कृणवद् भागधेयं | ८८१ | स आर्तवानां पाशान्मा | ९७० |
| वि यद् वाचं कीस्तासो | ३०७ | वैश्वानरं कवयो यज्ञियासो | ६७१ | स एव सं भुवनानि | ८९५ |
| वि ये दधुः शरदं | ५१ | वैश्वानरं विश्वहा दीदिवांसं | ६७२ | सं या दानूनि येमधुः | ३५२ |
| विषस्वते स्वाहा | ८७९ | व्यस्मे अधि शर्म तत् | ७४ | सं वर्चसा पयसा | ६९३, ७०० |
| विवस्वत्तादित्येष ते | १११ | व्यस्यै मित्रावरुणौ | ३८९ | सं वः सृजत्वर्थमा | ८१५ |
| विश्वव्यचाश्चर्मौषधयो | १११८ | व्रतं कृणुताग्निर्ब्रह्मणाभिः | १६६ | संवत्सरं शशयाना | ८८८ |
| विश्वस्मा अग्निं भुवनाय | ६७० | व्रतेन स्थो ध्रुवक्षेमा | २९६ | संवत्सरस्य प्रतिमां | १०७६ |
| विश्वस्य हि प्रचेतसा | २९३ | शंसा मित्रस्य वरुणस्य | ३२४ | संवत्सराय पर्यायिणीं | ८८६ |
| विश्वस्य हि प्रेषितो | ५७४ | शकधूमं नक्षत्राणि यद् | १११६ | संवत्सराय स्वाहा | ८८४ |
| विश्वस्य हि श्रुष्टये | ४२१ | शक्वरो स्थ पशवो मोष | १३३ | संवत्सरोऽसि परिवत्सरोऽसि | ८८५ |
| विश्वानि देव सवितः | ४५६ | शग्धि पूर्धं प्र यंसि च | ७२६ | सः स्रष्टां वसुभी रुद्रैः | १०९५ |
| विश्वा रूपाणि प्रति | ४४८ | शं नो भव चक्षसा | ५७९ | सखाय आ नि पीदत | ४०६ |
| विश्वासां भुवां पते | ६०९ | शं नो मित्रः शं वरुणः | ६०५ | सखासावस्मभ्यमस्तु | ५३१ |
| विश्वाहा त्वा सुमनसः | ५७६ | शमिता नो वनस्पतिः | ५०३ | स घा नो देवः सविता | ४७५, ५२१ |
| विश्वे यद् वां मंहना | ३०२ | शम्या ह नाम दधिषे | १०५८ | सजृद्धेन सवित्रा सजूः | ५९५ |
| विश्वेषां वः सतां | २९८ | शर्म वमैतदा हरास्यै | ११०२ | स धाता स विधर्ता | ७०६ |
| विश्वे हि विश्ववेदसो | २७६ | शश्वद्धि वः सुदानवः | ९७ | संदानं वो बृहस्पतिः | ५३३ |
| विषासहिं सहमानं | १३४-१३८ | शश्वन्तं हि प्रचेतसः | ९८ | सप्त चक्रान् वहति | ८९३ |
| वि शु द्वेषो व्यंहतिम् | १०२ | शारदावेनं मासौ | ९६० | सप्त त्वा हरितो रथे | ५४१ |
| विष्णुर्गोर्नि कल्पयतु | ८७६ | शारदेन ऋतुना देवा | ९४३ | स बुध्न्यादाष्ट्रं जुनुवो | १७५ |
| विष्णोः कर्माणि पश्यत | ८२१ | शारदौ मासौ गोसारौ | ९५९ | समभिरमिना गत | ५१५ |
| विष्णोः क्रमोऽसि सपत्नहा आशा | ८६९ | शिवां रात्रिमनुसूर्यं च | १०५६ | समजन्तु विश्वे देवाः | ६५८ |
| विष्णोः क्रमोऽसि० ऋक् | ८७० | शिवा नारीयमस्तमागन् | ८०९ | समध्वरायोषसो नमन्त | ७९७ |
| विष्णोः क्रमोऽसि० कृषि | ८७४ | शीर्ष्णः शीर्ष्णो जगतः | ५६६ | समावृमेतदुदकम् | ६२२ |
| विष्णोः क्रमोऽसि० दिक् | ८६८ | शुकेशु ते हरिमाणं | ५४५ | समाववर्ति विष्ठितो | ४२५ |
| विष्णोः क्रमोऽसि० यौ | ८६७ | शुकं ते अन्यद् यजतं | ७७१ | समितं तमघमश्रवद् | ६१ |
| विष्णोः क्रमोऽसि० अन्तरिक्षात् | ८६६ | शुकश्च शुचिश्च प्रैष्मावृत् | ९३३ | समुद्र ईशो स्रवतामभिः | १००० |
| विष्णोः क्रमोऽसि० पृथिवी | ८६५ | शुक्रोऽसि भ्राजोऽसि | १५३ | समु पूर्णा गमेमहि | ७५० |
| विष्णोः क्रमोऽसि० प्राण | ८७५ | शुक्रा बिद्धा व्योषया | ३८७ | समु वां यज्ञं महयं | ३२६ |

| | | | | | |
|-----------------------------|------|-------------------------------|------|----------------------------|------|
| समृद्धिरोज आकूतिः | ८८९ | सिंहस्य राश्र्यशती | १०५५ | सूर्यो माहः पात्वग्निः | १३० |
| सं पूषन्नध्वनास्तिर | ७१८ | सिनीवालि पृथुपुके | १०९२ | सोमः प्रथमो विविदे | ६५१ |
| सं पूषन् विदुषा नय | ७४९ | सिनीवाली मुकपदी | ९ | सोमस्त्वा पात्वोषधीभिः | ९९२ |
| सं मा सिञ्चन्तु मरुतः | ७८९ | सुगः पन्था अनुक्षरः | १८ | सोमस्यांशो युधां पते | ६८१ |
| सम्राजा उग्रा वृषभा | २५० | सुगो हि वो अर्थमन् | २६ | सोमो ददद् गन्धर्वाय | ६५२ |
| सम्राजा या घृतयोनी | २८० | सुत्रामाणं पृथिवीं | १३ | सोमो वधूयुरभवद् | ६३५ |
| सम्राजावस्य भुवनस्य | २४९ | सुनावमा रुहेयम् | १४ | सोऽर्थमा स वरुणः | ८१४ |
| सम्राज्ञी श्वशुरे भव | ६५७ | सुप्रावीरस्तु स क्षयः | ४५ | सोऽहोरात्रयोः पाशान्मा | १०७४ |
| स रत्नं मर्त्यो वसु | २० | सुमङ्गलीरियं वधूः | ६४४ | स्तोर्णि बर्हिः सुप्ररीमा | १५ |
| सवितः श्रेष्ठेन रूपेण | ५२५ | सुषदा पश्चाद् देवस्य | ५१३ | स्तोमस्य नो विभावरि | १०५७ |
| सविता ते शरीराणि | ५११ | सुषुमा यातमद्रिभिः | २१० | स्तोमा आसन् प्रतिधयः | ६३४ |
| सविता ते शरीरेभ्यः | ५०९ | सुप्रुतिः सुमतीवृधो | ५०५ | स्तोमेन हि दिवि देवासो | ६६८ |
| सविता पुनातु | ५१० | सुसंहशं त्वा वयं | ५८६ | स्मदभीशू कशावन्ता | ३६७ |
| सविता प्रसवानाम् | ५१८ | सुहवमग्ने कृतिका | ११२५ | स्वधास्तु भित्रावरुणा | ३९४ |
| सविता यन्त्रैः पृथिवीम् | ४८० | सूक्तवाकं प्रथममादिद् | ६६६ | स्वयंभूरसि श्रेष्ठो | ५९२ |
| सवितासि सत्यप्रसवः | ४९३ | सूर्य एकाकी चरति | ९७७ | स्वराडसि सपत्नहा | ८५७ |
| सवितुस्त्वा प्रसव उत्पुनामि | ४८६ | सूर्य नावमारुक्षः | १५९ | स्वस्तितं मे सुप्रातः | ११३१ |
| सवित्रा प्रथमेऽहन् | ५३० | सूर्य ते यावापृथिवी | ६२० | स्वस्ति नो अस्त्यभयं नो | ११३४ |
| सवित्रा प्रसवित्रा | ५२९ | सूर्य यत् ते तपस्तेन | ६११ | स्वस्त्यद्योषसो दोषसश्च | १३२ |
| सवित्रे त्व ऋभुमते | ५१६ | सूर्य यत् ते तेजस्तेन | ६१५ | स्वासदसि सूषा अमृतो | १२८ |
| सवित्रे स्वाहा | ४९२ | सूर्य यत् तेऽर्चस्तेन | ६१३ | हंसः शुचिषद्वसुरन्तरिक्षस० | ५५५ |
| स वेद सुप्रुतीनाम् | ७८१ | सूर्य यत् ते शोचिस्तेन | ६१४ | हविष्पान्तमजरं | ६५९ |
| स वै रात्र्या अजायत | १०१९ | सूर्य यत् ते हरस्तेन | ६१२ | हस्त आधाय सविता | ४९८ |
| स संवत्सरमूर्ध्वो | ८९० | सूर्यरश्मिर्हरिकेशः | ४७७ | हिरण्यनिर्णिगयो अस्य | २४५ |
| स सूर्य प्रति पुरो न | ५५२ | सूर्यश्चक्षुषामधिपतिः | ६१६ | हिरण्यपाणिमृतये | ४०३ |
| सस्वाश्चिद्धि समृतिस्त्वेषी | ३१८ | सूर्याभ्यां स्वाहा | ६२२ | हिरण्यपाणिः सविता | ४१७ |
| सहश्च सहस्यश्च | ९३६ | सूर्याया वहतुः प्रागात् | ६३९ | हिरण्यरूपमुषसो व्युष्टौ | २४६ |
| स हि दिवः स पृथिव्या | १७४ | सूर्यो ज्योतिर्ज्योतिः सूर्यः | ५९४ | हिरण्यरूपा उषसो | ३७९ |
| स हि रत्नानि दाशुषे | ४५४ | सूर्यो दिवोदकामत् | ६२१ | हिरण्यस्तूपः सवितः | ४८४ |
| सा नो अद्य यस्या वयं | १००६ | सूर्यो देवीमुषसं | ५४८ | हिरण्यहस्तो असुरः | ४१८ |
| सा पश्चात् पाहि सा पुरः | १०४२ | सूर्यो नो दिवस्पातु | ५८२ | हेमन्तेन ऋतुना देवाः | ९४४ |
| सा मा सत्योक्तिः परि | ५७१ | सूर्यो मा यावापृथिवीभ्यां | ६१९ | हैमनावेनं मासौ | ९६२ |
| सावीर्हि देव प्रथमाय | ५२२ | | | हैमनौ मासौ गोप्तारौ | ९६१ |

इति अदितिः, आदित्याश्च समाप्ताः ।



दैवत-संहिता

(१०)

विश्वे देवाः

संपादक

भट्टाचार्य श्रीपाद दामोदर सातवळेकर,
स्वाध्याय-मण्डल, औंध (जि० सातारा)

संवत् २००१, शक १८६६, सन १९४४

मुद्रक और प्रकाशक
वसंत श्री. सातवळेकर, B. A.
भारत मुद्रणालय, औंध (जि. सातारा)

विश्वेदेवा देवताका परिचय

यह एक देवता नहीं है

‘ विश्वेदेवाः ’ नामकी कोई एक देवता नहीं है । इसके पर्याय पद ‘ विश्वे देवाः, सर्वे देवाः, नानादेवताः, बहुदैवत्यं ’ इस तरह अनेक हैं । इन पदोंसेही ‘सब देवों’ का बोध होता है । जहां मंत्रमें या सूक्तमें एकसे अधिक देवता होते हैं, और प्रत्येक देवताका पृथक् निर्देश करनेकी संभावना नहीं होती, वहांके अनेक देवताओंका मिलकर निर्देशक नाम ‘ विश्वेदेवाः ’ है । ‘ अनेक देवता ’ ऐसा भी इसको हम कह सकते हैं । अतः जिन मंत्रोंमें या सूक्तों में अनेक देवता होते हैं, उनका देवता ‘ विश्वेदेवाः ’ समझा जाता है, उदाहरणके लिये देखिए—

इन्द्रवायू बृहस्पति मित्राग्नि पूषणं भगम् ।

आदित्यान् मारुतं गणम् ॥ (ऋ. १।१४।३)

इस एक मन्त्रमें नौ देवताएँ हैं, इसलिये नौ देवताओंका निर्देश करनेके स्थानपर ‘ विश्वेदेवाः ’ देवता कहा है । इससे बोध होता है कि, इस मन्त्रमें अनेक देवताएँ हैं ।

सब देवताओंकी इकट्ठी प्रार्थना करनेके समयमें भी ‘ विश्वेदेवा ’ देवता मानी जाती है । वहां सब देव ऐसा अर्थ समझा जाता है, जैसा— (ऋ. २।४१।१३)

विश्वे देवास आ गत शृणुता म इमं हवम् ।

यहां सब देवोंकी इकट्ठी प्रार्थना है । यहां किसी एक देवताका निर्देश नहीं है । जहां गणदेवोंकी प्रार्थना होती है, वहां उन सब गण देवोंको सामूहिकरूपसे ‘ विश्वेदेवा ’ कहा जाता है । वसु, रुद्र, आदित्य, मरुत् ये सब गण देव हैं । ये संघ करके रहते हैं ।

अथर्ववेदमें ‘ नाना दैवत्यं, मन्त्रोक्ताः देवताः, बहु दैवत्यं, नाना देवताः ’ ऐसे अनेक नाम देवताओंमें आते हैं, उन सबका अर्थ ‘ अनेक देवता ’ इतनाही है । अर्थात् अनेक देवताओंका बोधक यह पद है । यह कोई एक देवता नहीं । इस सूक्तमें जो अनेक देवता होंगे, वेही दूसरे सूक्तमें होंगे ऐसी भी बात नहीं । परन्तु सर्वत्र अनेक देवता मन्त्रमें वा सूक्तमें होंगे, यही साम्य यहाँ है ।

विश्वेदेवाके विषयमें ब्राह्मण ग्रंथोंका

निर्वचन

विश्वेदेवा देवताके संबन्धमें ब्राह्मण ग्रंथोंमें अनेक प्रकारके विवेचन मिलते हैं, उन्हें अब देखिये—

एते वै सर्वे देवा यद्विश्वेदेवाः ।

(कौ. ब्रा. ४।१४; ५।२)

एते वै विश्वेदेवा यत्सर्वेदेवाः ।

(गो. ब्रा. उ. १।२०)

रश्मयो ह्यस्य (सूर्यस्य) विश्वेदेवाः ।

(श. ब्रा. ३।१।२।६; १२)

तस्य (सूर्यस्य) ये रश्मयस्ते विश्वेदेवाः ।

(श. ब्रा. ४।३।१।२६)

एते वै विश्वेदेवा रश्मयः । (श. ब्रा. २।३।१।७)

एते वै रश्मयो विश्वेदेवाः । (श. ब्रा. १२।४।४।६)

(प्राणा वै) विश्वेदेवाः । (वा. य. ३।८।१५)

(श. ब्रा. १४।२।२।३७)

ऋतवो विश्वेदेवाः ।

(वा. य. १२।६१)

(श. ब्रा. ७।१।१।४३)

इन्द्राग्नी वै विश्वेदेवाः । (श. ब्रा. २।४।४।१३; ३।१।२।१४)

अथ यदेनं (अग्निं) एकं सन्तं बहुधा विहरन्ति तदस्य वैश्वदेवं रूपम् । (ऐ. ब्रा. ३।४)

श्रोत्रं विश्वेदेवाः । (श. ब्रा. ३।२।२।१३)

ता (दिशः) उ विश्वेदेवाः ।

(जै. उ. ब्रा. २।२।४; २।१।१५)

स (प्रजापतिः) विश्वान्देवानसृजत तान् विक्षूपादधात् ।

(श. वा. ६।१।२।९)

दिशो हैतद्यजुरेतद्वै विश्वेदेवाः वैश्वानराः ।

(श. ब्रा. ६।५।२।६)

तस्य (प्रजापतेः) विश्वे देवाः पुत्राः ।

(श. ब्रा. ६।३।१।१७)

वैश्वदेवो हि वैश्यः (तै. ब्रा. २।७।२।२)

विडु विश्वेदेवाः । (श. ब्रा. १०।४।१९)

विशो विश्वेदेवाः (श. ब्रा. २।४।१।६; ३।९।१।६;
५।५।१।१०)

वैश्वदेव्यो वै प्रजाः । (तै. ब्रा. १।६।२।५;
१।७।१।०।२)

पशवो वै वैश्वदेवम् । (कौ. ब्रा. १।६।३)

वैश्वदेवो वा अश्वः । (श. ब्रा. १३।२।५।४;
तै. ब्रा. ३।९।२।४; ३।९।१।१।१)

वैश्वदेवी वै गोः । (गो. ब्रा. उ. ३।१९)

वैश्वदेवं अन्नम् । (तै. ब्रा. १।६।१।१०)

विश्वेषां वा एतद्देवानां रूपं यत्करम्भाः ।
(तै. ब्रा. ३।८।१।४।४)

सर्वमिदं विश्वेदेवाः । (श. ब्रा. ३।९।१।१४;
४।४।१।९; १८)

सर्वे वै विश्वेदेवाः । (श. ब्रा. १।७।४।२२;
३।९।१।१३; ४।२।२।३; ५।५।२।१०)

विश्वेदेवा एव सर्वम् । (गो. ब्रा. पू. ५।२।५)

अनन्ता विश्वेदेवाः । (श. ब्रा. १।४।६।१।११)

विश्वे वै देवा देवानां यशस्वितमाः ।
(श. ब्रा. १३।१।२।८; तै. ब्रा. ३।८।७।२)

बृहस्पतिर्विश्वैर्वैरुदक्रामत् । (ऐ. ब्रा. १।२४)

वैश्वदेवं तृतीयसवनम् । (ऐ. ब्रा. ६।१५;
श. ब्रा. १।७।३।१६; ४।४।१।११; जै. उ. १।३।७।४)

अथैनं उदीच्यां दिशि विश्वेदेवा ... अभ्यर्षिचन्
वैराज्याय । (ऐ. ब्रा. ८।१४)

विश्वे त्वा देवा उत्तरतोऽभिषिञ्चन्त्वानुष्टुभेन
छन्दसा । (तै. ब्रा. २।७।१।५।५)

विश्वेदेवा देवताके संबंधमें ब्राह्मण ग्रंथोंमें इस तरहके वचन मिलते हैं। यहां प्रथम ही 'सर्वे देवाः' सब देव विश्वेदेव हैं, ऐसा कहा है, अर्थात् जितने भी देव हैं वे सब विश्वेदेव हैं। कोई देव इनमेंसे छूटा नहीं है। आगे सूर्यके किरण विश्वेदेव हैं ऐसा कहा है। किरण अथवा प्रकाशके किरण जितने भी हैं वे सबके सब विश्वेदेव हैं। आगे प्राण और ऋतुको विश्वेदेवा कहा है। क्योंकि प्राण भी अनेक हैं और ऋतु भी बहुत हैं। इन्द्र और अग्नि विश्वेदेव हैं। अग्नि एक होते हुए भी उसको अनेक नामोंसे पुकारते हैं,

इसलिये वे सब रूप विश्वेदेव हैं। ओत्र विश्वेदेव हैं, क्यों-कि सब दिशाएं ही ओत्र हैं और दिशा अनेक होनेके कारण उसे विश्वेदेव कहा है, वह ठीक ही है। प्रजापतिने सब देव उत्पन्न किये, वे विश्वेदेव हैं। प्रजापतिके जो पुत्र देव हैं, वे विश्वेदेव हैं। वैश्य तथा प्रजाजन भी विश्वेदेव हैं। सब पशु भी विश्वेदेव हैं। गौ और घोड़ा भी विश्वेदेव हैं। विश्वेदेव अनन्त है और यह सब जो भी इस विश्वमें है, वह सब विश्वेदेव ही है।

इस तरह सभी विश्व अर्थात् विश्वके अन्तर्गत पदार्थ मात्र हैं वे सब विश्वेदेव हैं। इसमें कोई वस्तु छूटी नहीं है। यही बात 'विश्वेदेवाः' पदसे भी समझमें आ सकती है। इस विश्वमें जो भी पदार्थ हैं, वे सब 'देव' हैं अतः वे 'विश्वेदेव' कहलाते हैं, यह ठीक ही है। अब तैत्तिरीय वेदोंके विषयमें यहां प्रसंगानुसार कुछ कहना चाहिये—

तैत्तिरीय देवताएँ

तैत्तिरीय देवताओंका उल्लेख निम्नलिखित मंत्रोंमें है—

(मनुर्वैवस्वतः । विश्वेदेवाः । पुर उणिक् ।)

इति स्तुतासो असथा रिशादसो ये स्थ त्रयश्च त्रिंशश्च ।
मनोर्देवा यज्ञियासः ॥ (ऋ. ८।३।०।२)

ये त्रिंशति त्रयस्परो देवासो बर्हिःरासदन् ।

विदमह द्वितासनन् ॥ (ऋ. ८।२।८।१)

(गाथिनो विश्वामित्रः । अग्निः । त्रिष्टुप्)

ऐभिरग्ने सरथं याह्यर्वाङ् नानार्थं वा विभवो ह्यश्वाः ।
पत्नीवतः त्रिंशतं त्रींश्च देवाननुष्वधमा वह माद-
यस्व ॥ (ऋ. ३।६।९)

(प्रस्कण्वः काण्वः । अग्निः । अनुष्टुप्)

श्रुष्टीवानो हि दाशुषे देवा अग्ने विचेतसः ।

तान्रोहिदश्च शिर्वणक्षयस्त्रिंशतं भावह । (ऋ. १।४।५।२)

(भृग्वंगिराः । त्रिष्टुप् । अनुष्टुप्)

अयस्त्रिंशद्देवतास्त्राणि च धीर्याणि प्रियायमाना
जुगुपुरप्स्वन्तः । अस्मिन्मन्त्रे अग्नि यद्विरण्यं तेनार्य
कृणवद्वीर्याणि ॥ (अथर्व. १९।२७।१०)

(गोपथः । रात्रिः । अनुष्टुप्)]

द्वौ च ते त्रिंशतिश्च ते राऽयेकादशाधमाः ।

तेभिर्नो अद्य पायुभिः नु पाहि दुहितर्विभः ॥

(अथर्व. १९।४७।५)

अथा देवा एकादश त्रयस्त्रिंशः सुराधसः ।

बृहस्पतिपुरोहिता देवस्य सवितुः सवे । देवा देवैरनन्दु
मा ॥ (वा. य. २०।११)

इन सात मंत्रोंमें ३३ देवताओंका स्पष्ट उल्लेख है। 'त्रयः त्रिंशत् देवाः । त्रिंशति त्रयः परः देवासः । त्रिंशतं त्रीन् च देवान् । गिर्वणः त्रयः त्रिंशतं । त्रयस्त्रिंशत् देवताः । देवाः त्रयस्त्रिंशः । द्वौ+विंशतिः च+एकादश ।' ये सब उल्लेख ३३ देवोंकी गणना कर रहे हैं। 'तीन और तीस,' अथवा 'तीस और तीन' इस तरह गणना ऊपरके मंत्रोंमें दीखती है। एक मंत्रमें २+२०+११=३३ ऐसी गणना है। तीन और तीसमें भी एक देव मुख्य और दस देव उसके साथवाले ऐसी गणना है। वही बात २+२०+११=३३ में है। तीन देव मुख्य और दस उसके तीन देवगण मिलकर तैंतीस देव होते हैं।

तैंतीस देवोंमें 'तीनवार एकादश' 'त्रया एकादश' अर्थात् ११×३=३३ ऐसी देवोंकी गणना ऊपर दिये एक मंत्रमें की है। इससे ये तीन तरहके देवगण, ग्यारहकी संख्यामें प्रत्येक गण होनेसे, तैंतीस बने हैं। इससे खोज करनेवालेको पृथ्वी, अन्तरिक्ष और चुलोकमें ग्यारह ग्यारह देवगणोंका निवास है, ऐसा पता लगता है। इसके सूचक निम्नलिखित मन्त्र हैं—

तीन गुणा ग्यारह देव

(हिरण्यस्तुप आंगिरसः । अश्विनौ । जगती)

आ नासत्या त्रिभिरेकादशैरिह देवेभिर्गतां मधुपेय-
मद्विना । प्रायुस्तारिणं नी रपांसि मृक्षतं सेधतं द्वेपः
भवर्त सचाभुवा ॥ (क्र. १।३४।११; वा. य. ३।४।७)

(परुच्छेपो देवोदासिः । विश्वेदेवाः । त्रिन्दुप्)

ये देवासो दिव्येकादश स्थ पृथिव्यामध्येकादश
स्थ । अप्सुक्षितो महिनैकादश स्थ ते देवासो यज्ञिर्मम
जुषध्वम् । (क्र. १।१३।११)

(भृग्वंगिराः । त्रिवृत् । अनुष्टुप्)

ये देवा दिव्येकादश स्थ० ये देवा अन्तरिक्ष एका-
दश स्थ० । ये देवा पृथिव्यामेकादश स्थ ते देवासो
हविरिदं जुषध्वम् ॥ (अथर्व. १९।२७।११-१३)

(इयावाश्र आग्नेयः । अश्विनौ । त्रिन्दुप्)

विश्वेदेवैस्त्रिभिरेकादशैरिह त्रिभिर्मृक्षिर्भृगुभिः सचा-

भुवा । सजोषसा उषसा सूर्येण च सोमं पिबतमद्विना ।

(क्र. ८।३।५३)

(नाभाकः काण्वः । अग्निः । महापंक्तिः)

अग्निस्त्रीणि त्रिधातून्याश्चेति विदथा कविः ।

स त्रिरेकादशाँ इह यक्षन् प्रियच्च नो विप्रो दूतः
परिष्कृतः । नभन्तामन्यके समे ॥ (क्र. ८।३।१९)

(मेध्यः काण्वः । अश्विनौ । त्रिन्दुप्)

युवां देवास्त्रय एकादशासः सत्याः सत्यस्य दशो
पुगस्तात् । अस्माकं यज्ञं सवनं जुषाणा पातं सोम-
मद्विना दीद्यमी ॥ (क्र. ८।५।१२)

(कश्यपो मारीचः । पवमानः सोमः । त्रिन्दुप्)

तव त्वे सोम पवमान निण्ये विश्वे देवास्त्रय एका-
दशासः । दश स्वभाभिरधि मानो अध्ये मुजन्ति
त्वा नद्यः सप्त यद्वोः ॥ (क्र. ९।९।२।४)

इन सात मंत्रोंमें तैंतीस देवोंकी गणना की है। 'त्रिभिः एकादशैः देवैः । त्रीन् एकादशान् । त्रयः एकादशासः ।' तीन गुणे ग्यारह देव हैं यह बात इन मंत्रोंसे सिद्ध होती है।

ये तैंतीस देव 'दिवि एकादश, अन्तरिक्षे एकादश, पृथिव्यामेकादश' इस तरह आकाशमें, अन्तरिक्षमें और भूमिपर ग्यारह ग्यारह हैं, ऐसा विवरण उक्त मंत्रोंमें ही किया है। इससे तैंतीस देव कहाँ कैसे रहते हैं, इसका पता लगता है। इन ग्यारह देवोंमें भी एक मुख्य और दस गौण अर्थात् उस एकके साथ या अधीन कार्य करते हैं। पृथ्वीपर अग्नि, अन्तरिक्षमें वायु और चुलोकमें सूर्य ये तीन देव संभवतः मुख्य होंगे और इनमेंसे प्रत्येकके अधीन दस दस देव रहते होंगे। पर ऐसा भी दीखता है कि, अग्नि आदि देव इन तैंतीस देवोंको अपने स्थपर बिठ-काकर लाते हैं, इस विषयमें मन्त्रभाग देखिए—

अग्ने ! पत्नीवतः त्रिंशतं त्रींश्च देवान् आवह ॥

(क्र. ३।६।९)

अग्ने ! गिर्वणः त्रयस्त्रिंशतं आवह ॥

(क्र. १।३।५।२)

अग्निः त्रीन् एकादशान् यक्षत् ॥

(क्र. ८।३।१९)

हे अग्ने ! तैंतीस देवोंको और उनकी पत्नियोंको साथ ले आओ । इसीतरह अग्निदेव भी तैंतीस देवोंको लाते हैं—

हे अश्विना ! अग्निः एकादशैर्देवैः आयातं ॥

(ऋ. १।३४।११)

हे अग्निदेवो ! तैंतीस देवोंके साथ यहां आओ । यहां ये अग्नि और अग्निदेव तैंतीस देवोंको अपने साथ लाते और यज्ञमें हविर्भाग लेते हैं । अश्वी अपने रथपर तैंतीस देवोंको रखकर लाते हैं, इसी तरह अग्नि भी अपने रथपर रखकर उन सब देवोंको लाते हैं । इस विषयमें निम्न लिखित मन्त्र भाग देखने योग्य है—

ऐभिः अग्ने सरथं याहि अर्वाङ् नाना-रथं वा ॥

(ऋ. ३।६।९)

हे अग्ने । इन तैंतीस देवोंको अपने रथपर बिठला कर अथवा नाना रथोंपर बिठलाकर यहां ले आओ । यह मन्त्र निःसंदेह विचार करने योग्य है । तैंतीस देवोंकी खोजमें यह सहायक होनेवाला है । तीन हजार तीनसौ तीस और नौ देव हैं, ऐसा भी निम्नलिखित मन्त्र में कहा है—

(गाथिनो विश्वामित्रः । अग्निः त्रिंशदुप)

त्रीणि शता त्री सहस्राण्यग्निं त्रिंशच्च देवा
नव चासपर्यन् । औक्षन् घृतैरस्तृणन् बर्हिस्मा आदि-
द्धोतारं न्यसादयन्त ॥ (ऋ. ३।९।९)

तीन हजार तीनसौ तीस और नौ देव अग्निकी पूजा करते हैं । यहाँ $३३३० + ९ = ३३३९$ देव हैं ऐसा कहा है ।

१ ब्रह्म = महा सूर्य

३ अग्नि-वायु-सूर्य

३३ उक्त तीन देवोंके साथ दस मिलकर तैंतीस देव

३३३ विश्वेदेवाः

३३३९ ,, ,,

बादके ३३३ और ३३३९ ये देव भी उन ३३ देवोंके साथ कार्य करनेवाले उपदेव हैं । इस तरह देवोंकी संख्याकी वृद्धि होकर तैंतीस कोटी अथवा तैंतीस करोड़ देवताएं मानी गयी हैं । कहते हैं कि मानव-शरीरमें तैंतीस करोड़ अणु जीवमात्राएँ हैं । अणुजीवमात्रा (Cells) यही जीवनका अतिसूक्ष्म पिण्ड है । ये अणुपिण्ड करोड़ोंकी संख्यामें शरीरमें रहते हैं, प्रत्येक अणुपिण्डमें विश्वके सब

लोकलोकान्तरके अंश रहते हैं और वे (स्पेक्ट्रम्) वर्ण विभाजक यन्त्रसे देखे और पहचाने भी जाते हैं । इससे जो विश्वमें है वह पिण्डमें है और जो पिण्डमें है वह विश्वमें है, इस वैदिक सिद्धान्तकी पुष्टी होती है । इसलिए विश्वान्तर्गत तैंतीस देवताएं शरीरमें कहां हैं, इसकी खोज करना अनिवार्य है । विश्वान्तर्गत तैंतीस देवताएं शरीरमें हैं, इसमें संदेह नहीं है, परन्तु सबकी सब कहां रहती हैं, इसका पता वैदिक वाक्यायसे नहीं लगता है । कुछ थोड़े देवोंके विषयमें ऐतरेयोपनिषद्में कहा है—

अग्निर्वाग्भूत्वा मुखं प्राविशत्,
वायुः प्राणो भूत्वा नासिके प्राविशत्,
आदित्यश्चक्षुर्भूत्वा आक्षिणी प्राविशत्,
दिशः श्रोत्रं भूत्वा कर्णौ प्राविशन्,
ओषधिवनस्पतयो लोमानि भूत्वा त्वचं
प्राविशन्,

चन्द्रमा मनो भूत्वा हृदयं प्राविशत्,
मृत्युरपानो भूत्वा नाभिं प्राविशत्,
आपः रेतो भूत्वा शिस्नं प्राविशन्,

(ऐ. उ. २।१)

कौनसा देव मानव शरीरमें अथवा प्राणि शरीरमें आकर कहां रहा है, इसका वर्णन यहां किया है, इस वर्णनसे निम्न लिखित तालिका बनती है—

| विश्वान्तर्गत | शरीरान्तर्गत | शरीरमें |
|---------------|--------------|---------|
| देवता | देवतांश | स्थान |
| अग्नि | वाक् | मुख |
| वायु | प्राण | नासिका |
| आदित्य | चक्षुः | नेत्र |
| दिश | श्रोत्र | कर्ण |
| ओषधि | केश | त्वचा |
| चन्द्रमा | मन | हृदय |
| मृत्यु | अपान | नाभि |
| आप् | रेत | शिस्न |

इस तरह यह तालिका बनी है । वेदके मंत्रोंमें भी यह विषय है—

संसिचो नाम ते देवा ये संभारान् समभरन् ।

सर्वं संसिच्य मर्त्यं देवाः पुरुषमाविशन् ॥ ११ ॥

गृहं कृत्वा मर्त्यं देवाः पुरुषमाविशन् ॥ १८ ॥
 रेतः कृत्वाऽऽज्यं देवाः पुरुषमाविशन् ॥ १९ ॥
 या आपो याश्च देवता या विराट् ब्रह्मणा सह ।
 शरीरं ब्रह्म प्राविशत् शरीरेऽधि प्रजापतिः ॥ २० ॥
 सूर्यश्चक्षुर्वातः प्राणं पुरुषस्य वि भेजिरे ।
 अथास्येतरमात्मानं देवाः प्रायच्छन्मये ॥ २१ ॥
 तस्माद्वै विद्वान् पुरुषमिदं ब्रह्मेति मन्यते ।
 सर्वा ह्यस्मिन्देवता गावो गोष्ठ इवासते ॥ २२ ॥

(अथर्व. ११।८)

जो देव शरीर बनानेका संभार इकट्ठा करते हैं, वे संसिच नामक देव मर्त्य देहकी सब सामग्री यथा स्थान इकट्ठी करके मानव देहमें घुस गये हैं । इस मर्त्य गृहको बना कर सब देव पुरुषमें प्रविष्ट हुए हैं । रेतका घी बनाकर ये देव पुरुषमें प्रविष्ट हुए हैं । आप्, विराट्, अन्य देवता ब्रह्मके साथ शरीरमें प्रविष्ट हुए हैं । शरीर पर प्रजापति अधिष्ठाता हुआ है । सूर्य चक्षु हुआ, वायु प्राण हुआ, और ये मनुष्य के शरीरमें विभक्त भावसे रहे हैं । इससे भिन्न अन्य अवयव अन्य देव बने हैं । इसलिये ज्ञानी इस पुरुषको ब्रह्म कहते हैं । सब देवताएं, गौर्वें गोशालामें रहनेके समान, इस शरीरमें रहती हैं ।

यहां स्पष्ट कहा है कि, गौर्वें गोशालामें रहनेके समान सब देवताएं इस शरीरमें रहती हैं, ' सर्वाः देवताः ' का अर्थ ये तैंतीस देवता ही हैं । देखिये—

यस्य त्रयस्त्रिंशद्देवा अंगे सर्वे समाहिताः ॥ १३ ॥

यस्य त्रयस्त्रिंशद्देवा अंगे गात्रा विभेजिरे ॥ १७ ॥

' इसके शरीरमें तैंतीस देव शरीरके सब अवयवोंमें समाहित हुए हैं । इसके शरीरके सब गात्रोंमें ये तैंतीस देव विभक्त होकर रहे हैं । ' इस तरह शरीरमें तैंतीस देव अवयव बनकर रहे ऐसा वर्णन है । इस वर्णनमें तैंतीस देवता शरीरके गात्रोंमें रहनेका वर्णन स्पष्ट है । मन्त्रमें इस विषय का जो अधिक वर्णन मिलता है वह ऐसा है—

यस्मिन् भूमिरन्तरिक्षं द्यौर्वस्मिन् अध्याहिता ।

यत्राग्निश्चन्द्रमाः सूर्यो वातस्तिष्ठन्त्यार्षिताः ॥ १२ ॥

यत्र अमृतं च मृत्युश्च पुरुषेऽधि समाहिते ।

समुद्रो यस्य माख्यः पुरुषेऽधि समाहिताः ॥ १५ ॥

यत्रादित्याश्च रुद्राश्च वसवश्च समाहिताः ॥ २२ ॥

यस्य भूमिः प्रमान्तरिक्षमुतोदरम् ।

दिषं यश्चक्रे मूर्धानम० ॥ ३२ ॥

यस्य सूर्यश्चक्षुश्चन्द्रमाश्च पुनर्णवः ।

अग्निं यश्चक्र आस्यम० ॥ ३३ ॥

यस्य वातः प्राणापानौ चक्षुरंगिरसोऽभवन् ॥

दिशो यश्चक्रे प्रज्ञानीः० ॥ ३४ ॥ (अथर्व १०।७)

' जिसमें भूमि-अन्तरिक्ष-द्यु ये तीन लोक हैं । जिसमें अग्नि, चन्द्रमा, सूर्य, वायु ये देव रहते हैं, जहां अमृत और मृत्यु हैं । नदियां नाडीरूपसे जहां रहती हैं । जहां वसु, रुद्र और आदित्य रहे हैं, द्युलोक सिर है, अन्तरिक्ष पेट है और भूमि जिसके पांव हुए हैं । सूर्य चक्षु, चन्द्रमा मन और अग्नि मुख बना है । वायु प्राण और अपान, चक्षु अंगिरस और दिशायें ज्ञान साधन कर्ण यहां बने हैं । '

यह वर्णन परमात्माके विश्वशरीरका और जीवशरीरका समानतया वर्णन है । परमात्माका शरीर विश्व है और जीव का शरीर यह पिण्ड शरीर है, पर दोनों जगह ये तैंतीस देव हैं । परमात्म शरीरमें पूर्ण रूपसे और जीवशरीरमें अंश रूपसे ये देवताएं रहती हैं । इनका मन्त्रोक्त वर्णन और देखिये—

दश साकं अजायन्त देवा देवेभ्यः पुरा ॥ ३ ॥

प्राणापानौ चक्षुः श्रोत्रं अक्षितिश्च क्षितिश्च या ।

व्यानोदानौ वाक्मनस्ते वा आकूर्तिं आवहन् ॥ ४ ॥

इन्द्रादिन्द्रः सोमात्सोमो अग्रेरग्निरजायत ।

त्वष्टा ह जज्ञे त्वष्टुर्धातुर्धाताऽजायत ॥ ९ ॥

ये त आसन् दश जाता देवा देवेभ्यः पुरा ।

पुत्रेभ्यो लोकं दत्त्वा कस्मिंस्ते लोक आसते ॥ १० ॥

(अथर्व. ११।८)

दस देवोंसे दस देव-पुत्र उत्पन्न हुए । प्राण, अपान, चक्षु, श्रोत्र, अक्षिति, क्षिति, व्यान, उदान, वाणी, मन ऐसे वे दस देवपुत्र दस देवोंसे उत्पन्न हुए हैं । इन्द्रसे इन्द्र, सोमसे सोम, अग्निसे अग्नि, त्वष्टासे त्वष्टा, और धातासे धाता ये पुत्र हुए हैं । ये दस देवपुत्र बड़े देवोंसे उत्पन्न हुए हैं । इन पुत्रोंको स्थान देकर वे देव अपने स्थानमें गये ।

पितृस्थानीय देवोंने पुत्ररूपी देवोंको शरीररूपी क्षेत्र निर्माण करके दिया और वे अपने स्थानमें गये । यही इः सभी मंत्रोंका अतिस्पष्ट कथन है । तैंतीस देव शरीरमें आका

रहे हैं, ऐसा मंत्रमें कहा भी है, परन्तु गणना करनेके समय आठ देवोंके ही नाम दिये हैं। उपनिषद् में भी ६७ देवों के नाम हैं और अन्य वेद मंत्रोंमें भी ८१० देवोंके नाम गिनाये हैं। अन्य देवोंके नाम और स्थान नहीं लिखे, इसलिये अन्य देवोंके अंश शरीरमें नहीं आये, ऐसा नहीं माना जा सकता; क्योंकि तैत्तिरीय देवोंका निवास शरीरमें हुआ है ऐसा स्पष्ट कथन पूर्वोक्त मंत्रोंमें है, इतना ही नहीं, परन्तु त्रिलोकी अंश रूपसे शरीरमें रहती है ऐसा भी ऊपरके मंत्रों में कहा है। जब पूर्ण रूपसे त्रिलोकीका अंश शरीरमें आया है, तब तो उस त्रिलोकीके सभी देव शरीरमें आगये हैं, इसमें संदेह नहीं रह सकता। परन्तु सब तैत्तिरीय देवोंके नाम और स्थान शरीरमें कहाँ और कैसे हैं, यह वैदिक वाक्यायमें किसी स्थानमें लिखा नहीं मिलता। इसकी खोज होना अत्यंत आवश्यक है। अब ऊपरके मंत्रोंके आधारसे शरीरमें जो देवोंके स्थान निश्चित हुए वे ये हैं, उनकी तालिका इस तरह बनती है—

| विश्वमें देवता | शरीरमें देवता |
|----------------|---------------|
| ब्रह्मलोक | सिर |
| सूर्य, अंगिरस | नेत्र |
| आदित्य | नेत्र |
| अग्नि | मुख |
| दिशा | कान |
| अन्तरिक्षलोक | उद्गरे पेट, |
| चन्द्रमा | मन |
| रश्मि, वायु | प्राण अपान |
| विष्णु | जाठर अग्नि |
| नदियां | नाडियां |
| वृक्ष | केश |
| वसु, अग्नि | उष्णता |
| पृथ्वी | पांव |

इस तरह यह तालिका तैत्तिरीय देवताएं विश्वमें और उनके पुत्र रूप देव शरीर में कैसे कहाँ हैं, इस संबंधका ज्ञान देनेके लिये विशुद्ध रूपसे तैयार करनी चाहिये। बड़े प्रयत्नसे यह साध्य हो सकती है, क्योंकि वैदिक साहित्यमें इसका संपूर्ण वर्णन कहीं भी नहीं है। थोड़े देवताओंका

वर्णन वेदमन्त्रों और उपनिषदोंमें है, वैदिक समयमें गुरु अपने शिष्यको यह देवविद्या पढ़ाता होगा, इस लिये उस समय थोड़ेसे संकेत मात्र उल्लेख जो इस समय वेदमन्त्रों और उपनिषदोंमें आये हैं, उतने पर्याप्त होते होंगे। परन्तु अब यह गुरुविद्या बतानेवाला कोई गुरु नहीं रहा है, इसलिये विशेष खोज पूर्वक यह ज्ञान तालिका बद्ध करके रखना चाहिये।

शरीरमें देवताओंका स्थान

मनुष्यके पृष्ठवंशमें हड्डियोंकी माला है। इनमें दो हड्डियोंके टुकड़ोंकी जो संधि है, वहां मज्जाकी ग्रंथी है। सिरसे लेकर गुदातक ये मज्जा केन्द्र ३३ हैं। इनमें गुदाके पासके ६७ अलग अलग नहीं हैं, परन्तु अन्य मज्जाग्रंथियाँ पृथक् पृथक् हैं और मानसिक ध्यान द्वारा प्रत्येक ग्रंथीको उत्तेजित किया जा सकता है।

योग साधनमें इनमेंसे आठ चक्र योगानुष्ठानके लिये लिये हैं। योगी लोग ध्यानसे देवताकी उपासना इन चक्रोंमें करते हैं और ग्रंथियोंको उत्तेजित करते हैं। ये ग्रंथियाँ उत्तेजित होनेसे उनमेंसे विशेष रस निकलता है, यह रस शरीरमें शोषित होनेसे दीर्घ जीवन, आरोग्य, बल, वीर्य, ज्ञानवर्धन आदि लाभ होते हैं। इसी तरह अन्य मज्जा केन्द्रोंमें जो देवताएं रहते हैं, उनके ज्ञानसे और ध्यानसे मनुष्यका लाभ होना संभव है। पाचन शक्तिका प्रदीप्त होना, रुधिराभिसरण ठीक होना, विचार और स्मरणकी शक्तिका विकास, ब्रह्मचर्यका साधन, ऊर्ध्वरेता बनना, जीवन दीर्घ होना, मृत्युको दूर रखना, नीरोग रहना आदि अनेक लाभ इससे होनेकी संभावना है।

पृष्ठवंशके इन केन्द्रोंके विशेष मालिश करनेसे भी लाभ होते हैं। इस विद्याका नाम 'किरोपॉटिक चिकित्सा' है। पर यह विद्या तब साध्य होगी जब प्रत्येक मज्जा केन्द्रकी शक्तिका अर्थात् देवताका यथावत् ज्ञान होगा। इसलिये इन ३३ देवताओंके ३३ केन्द्रोंका शरीरमें स्थान, कार्य और देवतासंबन्ध जानना अत्यंत आवश्यक है।

इस ज्ञानसे व्यक्तिका हित है और वैदिक मंत्रोंसे जो अध्यात्मका अनुभव लेना है, वह इसी अनुष्ठानसे हो सकता है। अर्थात् अध्यात्म ज्ञान केवल गप्पें मारनेसे नहीं हो सकता, परन्तु विश्वध्यापक परम पिता परमात्माके अंशसे

जो यह जीव अमृतपुत्र हुआ है, उसमें पितृतुल्य सब शक्तियाँ हैं, उनको जानना, देखना और उनका उपयोग करके अपनी शक्तिका विकास करना चाहिये। यही अनुष्ठान है। योगी लोग यह करते ही हैं। वही अन्योंको पूर्णरूपसे करना चाहिये। अध्यात्मज्ञानका प्रत्यक्ष फल यही है।

शरीरमें सिरका भाग शुलोक है, छाती और पेट अन्तरिक्ष लोक है, और गुदा मूत्राशयसे नीचेका सब भाग भूलोक है। इन तीन लोकोंमेंसे प्रत्येकमें एक एक देवता मुख्य है और उसके साथ दस देवतायें सहायक हैं। इनका स्थान पृष्ठवंशके मज्जाकेन्द्र हैं। इन केन्द्रोंके अधीन शरीर के सब व्यापार हैं। इसलिये प्रत्येक देवता, उसका अंश शरीरमें कहाँ कहाँ रहता है, कहाँ कहाँ उसका क्या कार्य चल रहा है। उसको स्वाधीन कैसा करना चाहिये, उत्तेजित कैसा करना चाहिये, उत्तेजनासे और स्वाधीनतासे कौनसे लाभ होते हैं, इत्यादि सब ज्ञान इस देवविद्यासे जाना जाता है। योगमें जो गुप्त विद्या है वह यही विद्या है। यह विद्या गुप्त रखते रखते अब लुप्त ही हुई, उसकी खोज करना आजके खोजकर्ताओंका कार्य है।

तैत्तिरीय देवताओंका ज्ञान और स्थान अपने शरीरमें जानना चाहिये। यही अध्यात्मविद्या है और यही योगसाधनका भाग है। योगी लोग आज भी आठ मज्जाकेन्द्रों और वहाँ के आठ देवताओंको जानते और उनका अनुष्ठान ध्यानद्वारा करके लाभ उठाते हैं। पर इसको वे अतिगुप्त रखते हैं। हमें उसकी शास्त्रीयतासे पूर्णरूपसे खोज करनी चाहिये।

तैत्तिरीय देवताओंका ज्ञान वैद्योंको भी होना चाहिये। पर वह बाहरके विश्वव्यापी देवताओंका ज्ञान है। इस ज्ञानसे ही उनकी चिकित्सा होती है। आजकल मृत्तिकाचिकित्सा, जलचिकित्सा, अग्निचिकित्सा, सूर्यकिरण-चिकित्सा, विद्युच्चिकित्सा, औषधिचिकित्सा आदि अनेक चिकित्साएँ प्रचलित हैं। ये सब चिकित्साएँ देवताओंके यथार्थ ज्ञानसे और उपयोगसे होती हैं।

इससे ज्ञात हुआ कि योगी अपने अन्दर ३३ देवताओंका अनुभव करता है और उनको उत्तेजित करके अन्दरही अन्दरसे विशिष्ट ग्रंथिरसोंको प्राप्त करके नीरोग बनकर दीर्घायु होता है। इसी तरह वैद्य इनही देवताओंके गुणधर्म जानकर उनसे नाना प्रकारकी चिकित्साएँ करके अपने रोगि-

योंके रोग दूर करके उनको अपमृत्युसे बचाकर दीर्घायु बनाता है।

याजक लोग अग्नि सिद्ध करके उसमें विशिष्ट औषधियोंके हवन द्वारा इनही तैत्तिरीय देवताकी प्रसन्नता प्राप्त करके भूमि-जल-वायुकी शुद्धिके द्वारा नीरोगताका साधन करके जनताका हित करते हैं। इस तरह ये सब इन तैत्तिरीय देवोंके साथ अपना संबन्ध जोड़ रहे हैं और लाभ भी उठा रहे हैं। तैत्तिरीय देवोंकी यही वेदविद्या है। आज यह पूर्ण रूपसे हमारे हस्तगत नहीं है, पर इस ढंगसे प्रयत्न करनेपर यह कभी न कभी हस्तगत हो सकती है।

इसलिए ये तैत्तिरीय देव विश्वमें कौनसे और कहाँ हैं, वे मानवशरीरमें या प्राणीके शरीरमें कहाँ हैं और यज्ञमें उनका संबन्ध क्या है इसका पता लगाना चाहिये।

विश्वेदेव कितने हैं ?

अब हम इस बातका विचार करते हैं कि विश्वेदेवा देवताके अन्दर जो मन्त्र समाविष्ट हुए हैं उनमें कितने देवोंका अन्तर्भाव हुआ है और जिन यजुर्वेदके अध्यायोंमें नाना देवताओंके उद्देश्यसे हविर्भाग देनेका वर्णन है, उनमें कितनी देवताएँ लिखी हैं। इनका प्रथम प्रकरणशः विचार करेंगे। प्रथम निघण्टुके पञ्चम अध्यायमें पृथ्वी स्थानीय देवताएँ ५२, अन्तरिक्ष स्थानीय देवताएँ ६८ और गुप्तास्थानीय देवताएँ ३१ इसतरह १५१ देवतायें लिखी हैं, उनके स्थानानुकूल भाव ये हैं—

पृथ्वी स्थानीय ५२ देवतायें

(निघण्टु ५।१)

- १ अग्निः जो हवनके लिये तथा पकानेके लिये जलाया जाता है।
- २ जातवेदाः जिससे वेद प्रकट हुए वह यज्ञाग्नि।
- ३ वैश्वानरः सब मानवोंको यज्ञमार्गपर चलानेवाला अग्नि।

(निघण्टु ५।२)

- ४ द्रविणोदाः धन देनेवाला यज्ञाग्नि,
- ५ इध्मः समिधाओंसे प्रदीप्त होनेवाला

६ तनू-न-पात् शरीरको न गिरानेवाला, (तनू-नपात्)
 सूर्यरूपी शरीरका पुत्र विद्युत्, उसका पुत्र अग्नि,
 सूर्यका पोता, गौका पोता घी, (गौ-बूध-घी), घी

७ नराशंसः मनुष्योंद्वारा प्रशंसित यशस्मि ।

८ इळः (इडः) स्तुत्य अग्नि,
 ९ बर्हिः दग्ध, आसन,
 १० द्वारः द्वार, यज्ञशालाके द्वार,
 ११ उषासानक्ता उषःकाल और रात्रीका समय,
 १२ दैव्याहोतारा अग्नि और वायु, दिव्य होता,
 १३ तिस्रो देवीः भारती इला सरस्वती ये तीन
 देवियाँ,

१४ त्वष्टा बढई, विश्वरचनाका कार्य करनेवाला,

१५ वनस्पतिः वनस्पति, यूप, समिधा, लकड़ी,

१६ स्वाहाकृतयः स्वाहाकारपूर्वक आहुति देना
 (निघण्डु ५।३)

१७ अश्वः घोडा
 १८ शकुनिः पक्षी, कर्पिजल
 १९ मण्डूकाः मेंढक, जलजन्तु,
 २० अक्षाः पासे (खेलनेके),

२१ ग्रावाणः सोम कूटनेके पत्थर,

२२ नराशंसः वीरोंकी, नरोंकी जिसमें प्रशंसा की
 जाती है वह यज्ञ

२३ रथः रथ, गाडी, वाहन

२४ दुन्वुभिः ढोल, चर्मवाद्य
 २५ इष्टुधिः तर्कस, बाणोंकी थैली,
 २६ हस्तघ्नः दस्ताना
 २७ अभीशवः लगाम,
 २८ धनुः धनुष्य
 २९ ज्या धनुष्य की डोरी
 ३० इष्टुः बाण
 ३१ अश्वजनी चाबूक
 ३२ उलूखलं उखली
 ३३ वृषभः बैल, (गायका भी उपलक्षण)
 ३४ द्रुघणः काष्ठकी गदा, जन

३५ पितुः जन

३६ नद्यः नदियाँ

३७ आपः जल

३८ ओषधयः औषधियाँ

३९ रात्रिः रात्री

४० अरण्यानी वनश्री, अरण्य

४१ श्रद्धा श्रद्धा

४२ पृथिवी भूमि

४३ अप्वा भय, रोग, दुःख

४४ अग्रायी अग्निकी ज्वाला

४५ उलूखलमुसले उखली और मुसली

४६ हविर्धानो हवि और उसका पात्र, छाज

४७ द्यावापृथिवी द्यु और पृथिवी

४८ विपाद्-शुतुद्री इस नामकी दो नदियाँ,

४९ आर्त्नी धनुष्यकी दोनों कोटियाँ, दो नोकें,

५० शुनासीरौ हल और हलसे खींची जाने-
 वाली नाली, रेखा

५१ देवी जोष्टी सुख देनेवाली देवता

५२ देवी ऊर्जाहुती बल देनेवाली आहुति देवता,

अन्तरिक्षस्थानीय ६८ देवताएं

(निघण्डु ५।४)

१ वायुः वायु

२ वरुणः वरुण, जलदेव

३ रुद्रः गर्जना करनेवाला विद्युदेव

४ इन्द्रः विद्युदेव

५ पर्जन्यः मेघ, बृष्टी

६ बृहस्पतिः बडा पालक मेघ

७ ब्रह्मणस्पतिः ,, ,, ,,

८ क्षेत्रस्य पतिः खेतका पालक, ,,

९ वास्तोष्पतिः घरका पालक, ,,

१० वाचस्पतिः वाणीका रक्षक, ,,

११ अपां न पात् जलोंको न गिरानेवाला

१२ यमः वायु,

१३ मित्रः वायु, प्राणवायु, मेघ

१४ कः सुखदायी, वायु, मेघ, जल

१५ सरस्वान् बहनेवाला वायु, मेघ

१६ विश्वकर्मा सब कर्म करने करानेवाला, वायु,

१७ तार्क्ष्यः पक्षीके समान संचार करनेवाला वायु,

१८ मन्युः क्रोध, उत्साह बढ़ानेवाला वायु, उत्साह,

१९ दधिका वायु, मेघ

२० सविता प्रेरक वायु

२१ त्वष्टा सुखानेवाला, वायु,

२२ वातः वायु, गन्ध लानेवाला वायु,

२३ अग्निः विद्युत्का भूमि

२४ वेनः प्रकाश, किरण समूह,

२५ असुनीतिः प्राणवायु,

२६ ऋतः जल, जलभरा मेघ,

२७ इन्दुः चन्द्रमा, सोम, पर्वतपर उगनेवाला
सोम,

२८ प्रजापतिः पर्जन्य, वायु,

२९ अहिः मेघ, जो बढता रहता है वह मेघ,

३० अहिर्बुध्न्यः मेघ, सूक्ष्म भाँपवाला मेघ.

३१ सुपर्णः किरण जिसपर पड़े ऐसा मेघ

३२ पुरुरवा गर्जनेवाला मेघ

(निघण्टु ५।५)

३३ इ्येनः पक्षी

३४ सोमः सोमवह्नी

३५ चन्द्रमाः चन्द्र

३६ मृत्युः मारनेवाला, काल,

३७ विश्वानरः विश्वका नेता, वायु

३८ धाता धारक वायु

३९ विधाता ,, ,,

४० मरुतः मरनेतक प्राणरूपसे कार्य करनेवाला
वायु,

४१ रुद्राः प्राणवायु

४२ ऋभवः कारीगर, वायु

४३ अक्विरसः अंगोंमें कार्य करनेवाला रस,
संचालक ध्यान वायु

१ विश्वे प्र.

४४ पितरः पितर,

४५ अथर्वाणः स्थिरता रखनेवाला प्राण पितर

४६ भृगवः भृगु, प्राण

४७ आप्त्याः प्राप्त्य, प्राण

४८ अदितिः उषा

४९ सरमा मेघगर्जना, वाणी

५० सरस्वती स्रोत, सरना

५१ वाक् वाणी, मेघगर्जना

५२ अनुमती चतुर्दशी युक्त पूर्णिमा, एक कला
जिसमें कम है ऐसी पूर्णिमा

५३ राका पूर्णिमा, पूर्णचन्द्रमा युक्त

५४ सिनीवाली चतुर्दशी युक्त अमावास्या, इस
दिन थोडासा चन्द्रमा दीखता है।

५५ कुहू जिस अमावास्यामें चन्द्रमा नहीं दीखता।

५६ यमी रात्री

५७ उर्वशी विद्युत, रात्री,

५८ पृथिवी विस्तृत रात्री

५९ इन्द्राणी विद्युत्प्रभा

६० गौरी बिजलीकी श्वेत रोशनी

६१ गौः जल देनेवाली मेघपंक्ति

६२ धेनुः ,, ,, ,,

६३ अक्ष्या ,, ,, ,,

६४ पथ्या अन्तरिक्ष, अवकाश, मार्ग देनेवाला
अवकाश,

६५ स्वस्ति रहनेका उत्तम स्थान, कल्याण,

६६ उषाः उषः काल

६७ इळा जल वृष्टी, अन्न उत्पन्न करनेवाली वृष्टी

६८ रोदसी गर्जना करनेवाली विद्युत्

द्युस्थानीय ३१ देवताएँ

(निघण्टु ५।६)

१ अश्विनौ आधीरात्रीके पश्चात् आकाशमें उदय
होनेवाले दो नक्षत्र

२ उषाः उषःकाल

३ सूर्य सूर्य, प्रभा

४ वृषाकपायी बलवान् जलशोषक सूर्य

५ सरण्यू खट्वत्नी, विद्युत्प्रभा

६ त्वष्टा त्वष्टा, विद्युत्, सूक्ष्म करनेवाला,

७ सविता उदयके पूर्वका सूर्य जिसका सूक्ष्म अंश

क्षितिजपर दीख रहा है,

८ भग अधोदित सूर्य,

९ सूर्य पूर्णादित सूर्य,

१० पूषा किरणोंसे पुष्ट हुआ एक प्रकारका सूर्य,

११ विष्णु सूर्य (पूर्ण प्रकाशित)

१२ विश्वानरः तीसरे प्रहरका सूर्य,

१३ वरुणः चतुर्थ प्रहरका सूर्य,

१४ केशी क्षितिजपर पहुंचा हुआ किरणोंवाला सूर्य,

१५ केशिनः अस्त होनेवाला किरणमात्रावशिष्ट सूर्य,

१६ वृषाकपिः अस्त हुआ सूर्य

१७ यमः अस्तंगत सूर्य,

१८ अजएकपात् जिसका एक ही किरण दीखता हो ऐसा सूर्य

१९ पृथिवी बड़ा व्यापक शुलोक

२० समुद्र नीला आकाश, जो समुद्र जैसा दीखता है,

२१ दध्यङ् मेघाच्छादित आकाश जिससे किंचित् वृष्टि होती हो,

२२ अथवा शान्त आकाश, अचल सूर्य

२३ मनुः सूर्य (जिसकी ग्रहमाला एकरेपामें आगयी हो) जो मन्वंतर करता है

२४ आदित्याः सूर्य किरण

२५ सप्त ऋषयः सूर्यके सात किरण, सात नक्षत्र (सप्तर्षि)

२६ देवाः नक्षत्र, ग्रह, किरण,

२७ विश्वदेवाः सब देव, किरण

२८ साध्याः सूर्यरश्मी, किरण

२९ वसवः " "

३० वाजिनः " "

३१ देवपत्न्यः देवोंकी दीसियाँ, शक्तियाँ

इस तरह पृथ्वी स्थानमें ५२+अन्तरिक्ष स्थानमें ६८+ और युस्थानमें ३१ मिलकर १५१ देवताएं निघण्डुमें गिनी हैं। इनमें कुछ पुनरुक्त हैं, परन्तु उनका अर्थ स्थानभेदसे पृथक् करके बोध लेना उचित है।

द्वादश आदित्य

इस स्थानपर निघण्डु ५।६ में दिये युस्थानीय देवताओंके नाम ३१ दिये हैं। इनमें बारह आदित्योंके नाम हैं।

त्वष्टा, सविता, भग, सूर्य, पूषा, विष्णु, विश्वानर, वरुण, केशी (केशिनः), वृषाकपि, यम, अज-एकपात्।

ये द्वादश आदित्योंके नाम हैं। 'केशी' और 'केशिनः' ये दो नाम किरणोंकी न्यूनता और अधिकतासे हैं, इसलिये ये एककेही मानना योग्य है।

द्वादश आदित्य ये सूर्य उदयसे सूर्य अस्त होने तकके सूर्यके हैं, तथा सूर्यास्तके पश्चात् भी जो प्रकाश रहता है उसका इनमें अन्तर्भाव हुआ है, ऐसा इनके अर्थोंसे प्रतीत होता है।

शतपथ ब्राह्मणमें कहा है कि, द्वादश आदित्य वर्षके १२ महिने हैं। शतपथका यह अर्थ लेनेसे ये पद प्रतिदिनके सूर्यके मानना असंभव होता है। अतः यदि इन पदोंके ये अर्थ रखते हुए इनके साथ १२ महिनोंकी संगति लगानी है, तब तो हमें उत्तरीय ध्रुवके पासही जाकर वहां इन द्वादश आदित्योंका साक्षात्कार करना होगा। क्योंकि वहाँ एक एक महिनेतक एक एक आदित्यकी स्थिति रहती है।

अर्थात् उषा एक महिना रहती है यह पाठक 'उषा देवता' की भूमिकामें देख सकते हैं, उसके पश्चात् सूर्यके कुछ किरण दीखनेकी दशा करीब एक मास तक रह सकती है। इसी तरह बारहों आदित्य प्रत्येक एक एक मास रहकर एक वर्षकी पूर्ति करते हैं। यह स्थिति भूमंडलपर किसी भी अन्य स्थानमें नहीं है। अतः यदि बारह आदित्य बारह महिनोंके दशक हैं, तब तो यह स्थिति उत्तरीय ध्रुवके समीपकी ही है। हमारे यहां ये बारह आदित्य एकही दिनमें अपना साक्षात् दर्शन देते हैं। हमारे एक दिनकी आदित्यकी बारह प्रकारकी अवस्थाएं उत्तरीय ध्रुवके पास ३६५ दिनोंमें दीखती हैं और प्रत्येक स्थितिके लिये करीब एक मास लगता है।

यहां सूर्य उदयसे पुनः सूर्य उदयतक ये १२ आदित्य आते हैं। पर यहां इन आदित्योंका १२ महिनोंके साथ कोई संबंध नहीं है। 'यम' नाम उस आदित्यका है जिसमें आदित्यकी अस्तके बादकी स्थिति है। 'यम' पदका अर्थ 'युगल' है। अर्थात् यह स्थिति दो मास रहनी चाहिये क्योंकि 'यम' का अर्थ ही 'दो' है।

उत्तरीय ध्रुवके पास ही पूरे दो महिनोंकी बड़ी गहरी रात्री होती है जहां बिलकुल सूर्य दर्शन नहीं होता। वस्तुतः वहां छः मास सूर्य दर्शन नहीं होता, परन्तु उन छः महिनोंमें ये दो महिने ऐसे होते हैं कि जिसको गहरी निशा कह सकते हैं, शेष ४ महिनोंमें कुछ न कुछ प्रकाश रहता है अर्थात् यह प्रकाश सूर्यबिंब न दीखते हुए ही आता है।

'यम' पदकी सार्थकता वर्षके उन दो महिनोंके साथ है कि जिनमें सूर्य और प्रकाश बिलकुल नहीं होता। उपाके सूक्तोंमें बड़ी अंधेरी रात्रीका जो वर्णन दीखता है वह भी यहीं सार्थ होना संभव है।

इस विचारसे यह सिद्ध होता है कि जो शतपथने बारह आदित्योंके साथ बारह महिनोंका संबंध जोड़ दिया है वह उत्तरीय ध्रुवके प्रदेशमें प्रतिवर्ष दीखनेवाली स्थिति है। समझ लीजिये कि सूर्य उदय हो रहा है, एक अंश, सूर्यका चौथा भाग क्षितिजपर आगया है तो वह चौथा भाग वैसा का वैसा ही क्षितिजपर एक मास तक दीखता रहेगा। इसका अर्थ बिलकुल उतना ही नहीं अपितु एक मासके बाद एक दो अंश ऊपर चढेगा। यह प्रतिदिन इतना थोड़ा ऊपर चढेगा कि प्रतिदिन उसके चढनेका पता तक नहीं लगेगा। यहां हमारे देशमें एक घण्टेका उषःकाल रहता है। एक घण्टेमें यहां उषःकाल समाप्त होता है और सूर्य ऊपर आने लगता है। उत्तरीय ध्रुवके पास यह उषःकाल एक मास तक रहता है। एक मास उषःकाल होनेके बाद सूर्यका उदय होता है। आगेकी सूर्यकी अवस्थाएं भी इसी तरह एक एक मासमें बढ़ती जाती हैं।

इसीलिये सूर्यकी एक अवस्था एक मास रहनेके कारण एक एक आदित्यका नाम एक एक मासको दिया गया और बारह आदित्योंके बारह महिने माने गये।

यहां एक बात ध्यानमें रखनी चाहिये, वह यह कि जैसा हमारे देशमें मध्याह्नमें सूर्य आकाशके मध्यमें बिलकुल

सिरपर आता है वैसा उत्तरीय ध्रुवके प्रदेशमें कभी नहीं आता। अधिकसे अधिक सूर्यका ऊपर चढाना वहां उतना ही होता है जितना हमारे इस प्रदेशमें सवेरके नौ-दस बजे तक होता है। बस, यही सूर्यकी ऊपर चढनेकी परिसीमा है। यहां तक सूर्य चढ गया तो उसको 'चिष्णु' नाम मिलता है। यह विष्णु एक मास तक रहता है। उसके पश्चात् वह नीचे उतरने लगता है। और एक एक मास तक उसको अन्यान्य नाम प्राप्त होते हैं।

इस तरह बारह महिनेके बारह सूर्य 'ठीक एक मास तक एक एक वही सूर्यकी स्थिति' रहनेसे उत्तरीय ध्रुवप्रदेशमें ही दीखते हैं। किसी अन्य स्थानमें सूर्य एक मास तक एक ही स्थितीमें रहता ही नहीं।

कई पुराणोंमें प्रतिमास सूर्यका न्यूनाधिक उग्यता मान मानकर बारह महिनोंके बारह सूर्य माने हैं। पर रात्रीमें सूर्य बिलकुल ही नहीं रहता, इस बातको वे भूल गये दीखते हैं। उत्तरीय ध्रुवमें रात्री और दिनका कोई भेद ही नहीं है, वहां तो पूरे एक मास तक एक प्रकारका सूर्य अपने इर्दगिर्द प्रदक्षिणा करता हुआ देखनेवालेको दीखता है। दूसरे मासमें उससे न्यून, वा अधिक प्रकाशवाला, इस तरह बारह महिने दीखता रहता है। 'यम' संज्ञक युगल महिने पूर्ण अंधेरेके हैं इसीलिये वे युगल कहलाने और वह सूर्य की ही एक स्थिति मानी गयी है।

दो महिने रात्रीके, उदयपूर्वकी उषाका एक मास और अस्तपूर्वके सायंसमयका एक मास, ऐसे चार महिने सूर्यदर्शन बिलकुल नहीं होता, शेष ८ महिने न्यून वा अधिक सूर्य दर्शन होता है इनमें भी २ मास कम शेष ६ मास सूर्य दर्शन होता है। इसीलिये आदित्यके ८ पुत्र कहे हैं। जिन आठ महिनोंमें न्यूनाधिक सूर्य दर्शन या सूर्य प्रकाश होता है, वे ८ आदित्य हैं। बाकी 'मार्तण्ड' अर्थात् (मृत-अण्ड) जिनमें सूर्य रूप अण्डा भरा पड़ा रहता है अर्थात् दीखता नहीं।

यह सब ठीक ही उत्तरीय ध्रुवकी प्रत्यक्ष स्थिति है। पाठक इसका अधिक विचार करें।

वाजसनेयी संहिताके ३० वे तथा काण्वसंहिताके ३४ वे अध्यायमें नरमेघके १८४ अर्पण १७३ देवताओंके उद्देश्यसे हैं- (अंत्र ५) १ अश्व, २ क्षत्र, ३ मश्व, ४ तपस्, ५ तमस्,

६ नारक, ७ पाप्मा, ८ आक्रया, ९ काम, १० अतिकुष्ट, ११ नृत्त, १२ गीत, १३ धर्म, १४ नरिष्टा, १५ नर्म, १६ हस, १७ आनन्द, १८ प्रमद, १९ मेधा, २० धैर्य, २१ तपस्, २२ माया, २३ रूप, २४ शुभ, २५ शरण्या, २६ हेति, २७ कर्म, २८ दिष्ट, २९ मृत्यु, ३० अन्तक, ३१ नदी, ३२ ऋक्षीका, ३३ पुरुषग्याघ्र, ३४ गंधर्व-अप्सरस्, ३५ प्रयुज्, ३६ सर्प-देव-जन, ३७ अय, ३८ ईर्यता, ३९ पिशाच, ४० यातुधान, ४१ संधि, ४२ गेह, ४३ आर्ती, ४४ निर्रक्ति, ४५ आराधि, ४६ निष्कृति, ४७ संज्ञान, ४८ प्रकामोद्य, ४९ वर्ण, ५० बल, ५१ उत्साद, ५२ प्रमुद, ५३ द्वार, ५४ स्वप्न, ५५ अधर्म, ५६ पवित्र, ५७ प्रज्ञान, ५८ आशिक्षा, ५९ उपशिक्षा, ६० मर्यादा, ६१ अर्म, ६२ जव ६३ पुष्टि, ६४ वीर्य, ६५ तेजस्, ६६ इरा, ६७ कीलाल, ६८ भद्र, ६९ श्रेयस् ७० आध्यक्ष, ७१ भा, ७२ प्रभा, ७३ ब्रह्मस्य विष्टपं, ७४ वर्षिष्ठं नाकं, ७५ देवलोक, ७६ मनुष्यलोक, ७७ सर्वलोक, ७८ अवकृतिवध, ७९ मेघ, ८० प्रकाम, ८१ ऋत्वि, ८२ वैरहस्य, ८३ विविक्ति, ८४ औपद्रष्टव्य, ८५ बल, ८६ भूमन्, ८७ प्रिय, ८८ अरिष्टि, ८९ स्वर्ग, ९० वर्षिष्ठ नाक, ९१ मन्यु, ९२ क्रोध, ९३ योग, ९४ शोक, ९५ क्षेम, ९६ उत्कूल-निकूल, ९७ वपु, ९८ शील, ९९ निर्रक्ति, १०० यम, १०१ यम, १०२ अथर्वा, १०३ संवत्सर, १०४ परिवत्सर, १०५ इदावत्सर, १०६ ह्रद्वत्सर, १०७ घत्सर, १०८ संवत्सर, १०९ ऋभु, ११० साध्य, १११ सरस्, ११२ उपस्थावरा, ११३ वैशान्ता, ११४ नड्वला, ११५ पार, ११६ अवार, ११७ तीर्थ, ११८ विषम, ११९ स्वन, १२० गुहा, १२१ सानु, १२२ पर्वत, १२३ बीभत्सा, १२४ वर्ण, १२५ तुला, १२६ पश्चादोष, १२७ विश्व भूत, १२८ भूति, १२९ अभूति, १३० आर्ति, १३१ वृद्धि, १३२ संशार, १३३ अक्षराज, १३४ कृत, १३५ त्रेता, १३६ द्वापर, १३७ आस्कंद, १३८ मृत्यु, १३९ अन्तक, १४० क्षुध, १४१ दुष्कृत, १४२ पाप्मा, १४३ प्रतिश्रुत्क, १४४ घोष, १४५ अन्त, १४६ अनंत, १४७ शब्द, १४८ महस्, १४९ क्रोश, १५० अवस्वर, १५१ वन, १५२ अन्यतोऽरण्य, १५३ नर्म, १५४ हास्य, १५५ नादस्, १५६ महस्, १५७ महस्, १५८

महस्, १५९-१६१ नृत्त, १६२ आक्रन्द, १६३ अमि, १६४ पृथिवी, १६५ वायु, १६६ अन्तरिक्ष, १६७ ब्रुलोक, १६८ सूर्य, १६९ नक्षत्र, १७० चन्द्रमा, १७१ अहः, १७२ रात्री, १७३ प्रजापति ।

यद्यपि ये १७३ देवताएं यहां हैं, तथापि इनमें कई पुनरुक्त हैं, अतः उनको पृथक् करनेसे १६० के करीब ये देवतायें होती हैं। इनमें अन्तिम कुछ थोड़ी अन्य अन्तरिक्ष आदि स्थानकी हैं, शेष सब पृथ्वीपरकी ही हैं। कुछ काल वाचक हैं, कुछ गुणवाचक हैं, कुछ स्थानवाचक हैं।

वा० यजुर्वेदमें अनेक अध्यायोंमें अनेक देवताओंका उल्लेख है, उनमें अध्याय १८;२२;२४;२५;२९ और ३९ में अनेक देवताएं हैं, पर इनमें बहुतसी देवताएं पूर्वस्थानमें दी हैं। इन सब देवताओंका यहां पुनः पुनः निर्देश करनेकी कोई आवश्यकता नहीं है।

निषण्डुमें कही देवताएं अनेक हैं, उनमें पृथ्वी, अन्तरिक्ष और ब्रुस्थानमें जो ग्यारह ग्यारह देवताएं हैं, वे स्थूल अक्षरोंमें सुद्रित की हैं। तथापि उनमें मतभेदके लिये बड़ा स्थान है, अतः यहां तक यह ३३ देवताओंका प्रश्न अनिर्णितसा ही आजतक रहा है ऐसा हम यहां कह सकते हैं।

जो तो ८ वसु ११ रुद्र व १२ आदित्य मिलकर ३१ और इन्द्र और प्रजापति मिलकर ३३ देव शतपथानुसार मानते हैं, वे पृथ्वीपर ११, अन्तरिक्षमें ११ और ब्रुलोकमें ११ बता नहीं सकते। उन के मत से अन्तरिक्ष में ११ प्राण माने जायेंगे तो और बारहवां इन्द्र वहां आकर बैठता है और ब्रुलोक में उन के मत से १२ आदित्य मानते पड़ते हैं और वसु तो केवल आठ ही पृथ्वी पर रह जाते हैं, पर वे भी पृथ्वीपर नहीं हैं, जो वे ८ गिनते हैं। इस तरह इस गिनतीमें तीन स्थानोंमें ग्यारहकी व्यवस्था नहीं होती। अतः जो मन्त्र तीन स्थानोंमें ग्यारह ग्यारह देवताएं हैं, ऐसा कहते हैं, उनकी गिनती कुछ और ही होगी और शतपथ की कुछ और ही है।

हमारे मतसे पृथ्वीपर ११, अन्तरिक्षमें ११ और ब्रुस्थानमें ११ यह जो गणना वेद मन्त्रोंमें दीखती है वह

गणना अभी तक किसी भी वैदिक ग्रंथमें स्पष्टतया नहीं बतायी है। उसकी खोज करनी चाहिये। हमने इस विषयमें बहुत ही खोज की, पर अभी तक उसकी व्यवस्था ठीक तरह समझमें नहीं आयी। अर्थात् यह खोज अधूरी ही रही है। जो सुविज्ञ पाठक वेदकी खोज करते हैं, वे इन ३३ देवताओंके ग्यारह ग्यारह विभागोंकी खोज करें और उनको तीनों विभागोंमें यथास्थान निश्चित करके बतावें। इसी तरह इन तैंतीस देवताओंमें ये सब तीन चार सौ देवताएं किस तरह अन्तर्भूत होती हैं अर्थात् किस एक मुख्य देवताके साथ कितनी देवताएं माननी चाहिये, इसका भी निश्चय होना चाहिये।

यहां एक कठिनता भी है। पूर्वोक्त निघण्टुकी देवताओंमें पृथ्वी देवता पृथ्वी-अन्तरिक्ष-यु इन तीनों स्थानोंमें लिखी है। अर्थात् पृथ्वीस्थानको छोड़कर अन्य दोनों स्थानोंमें इसका अर्थ 'विस्तृत स्थान' इतना ही है। इस तरह पुनरुक्त देवता नामोंका निश्चय होना संभव है। वा० यजु० अ. ३० में भी कई देवता नाम पुनरुक्त हैं। संभवतः उनका भी ऐसा ही निर्णय होगा।

यजुर्वेदके कुछ देवता

अब हम यहां यजुर्वेदके कुछ देवताओंके नाम देते हैं— (अ. १।२०) आपिः (प्राप्त करनेवाला), स्वापिः (उत्तम रीतिसे प्राप्त करनेवाला), अपिजः (पुनः पुनः उत्पन्न होनेवाला), क्रतुः (यत्न), वसुः (निवास हेतु), अहर्पतिः (दिनका स्वामी), मुग्धः (मोह उत्पन्न करनेवाला), मुग्धः चैनंशिनः (मुग्ध होकर नाशको प्राप्त होनेवाला), विनंशिन आन्त्याय (अन्त्य स्थानमें रहनेवाला विनाशकर्ता), अन्त्यः भौवनः (अन्तिम भुवनमें रहनेवाला), भुवनस्पतिः (भुवनोंका पति), अधिपतिः (मुख्य स्वामी)। ये १२ देवताएं वा. य. अ. ९ में हैं।

(अ. २२) बाईसवें अध्यायमें निम्नलिखित देवताएं हैं— (इसमें अग्न्यादि प्रसिद्ध देवताओंको छोड़ा है इतना

पाठक स्मरण रखें)—अपां मोद, हिंकार, हिंकृत, क्रन्दत्, अवक्रन्द, प्रोथत्, प्रप्रोथ, गन्ध, घ्रात, निविष्ट, उपविष्ट, सन्दिह, वलगत्, आसीन, शयान, स्वपत्, जाग्रत्, कृजत्, प्रबुद्ध, विजृम्भमाण, विचृत, संहान, उपस्थित, आयन, प्रायण। (अ. २२।७)

यहां आसीन (बैठनेवाला) शयान (सोनेवाला) इत्यादि पद प्राणियोंकी अवस्थाओंके वाचक हैं, और ये यहाँ देवता वाचक पद हैं यह ध्यानमें रखना योग्य है।

इसी तरह अगली कण्डिकामें निम्नलिखित देवताओंके नाम हैं— यत्, धावत्, उद्राव, उद्रुत, शूकार, शूकृत, विषण्ण, उत्थित, जव, बल, विवर्तमान, विवृत्त, विधून्वान, विधूत, शुश्रूषमाण, शृण्वत्, ईक्षमाण, ईक्षित, वीक्षित, निमेष, (अस्ति सः) खानेवाला, (पिबति सः) पीनेवाला, (मूत्रं करोति सः) मूत्र करनेवाला, (कुर्वत्) करनेवाला, कृत। (२२।८)

ये नाम प्राणियोंकी अवस्थाओंके हैं। ये इस अध्यायमें छोड़के अवस्थाएं करके वर्णन किया है। परन्तु सब प्राणियोंके लिये ये पद लग सकते हैं। ये सब पृथ्वीस्थानीय देवता हैं।

इस तरहकी अन्य देवतायें पाठक इस विभागमें देख सकते हैं।

निघण्टुमें गिनाये देवताओंका उपयोग मंत्रोंमें देखकर भी उनका निर्णय हो सकता है। वह कार्य जिस समय इन मंत्रोंका अर्थ हम करेंगे, उस समय होना संभव है। इस छोटीसी भूमिकामें वह नहीं हो सकता।

निवेदन कर्ता

औंध जि. सातारा
१।८।१९४४

{ श्रीपाद दामोदर सातवळेकर
अध्यक्ष स्वाध्यायमण्डल



देवतासम्बन्धी विचार

[लेखक- पं० ऋभुदेव शर्मा 'साहित्याऽऽयुर्वेदभूषण' 'शास्त्राचार्य,' भूतपूर्व आचार्य येडशी- श्रीश्यामार्थगुरुकुल, भौध]

देव कितने हैं ? वे जड़ हैं या चेतन ? कहाँ रहते और क्या करते हैं ? इत्यादि प्रश्न वेद-स्थाप्यादी के समक्ष उप-स्थित होने और समाधान न होनेपर उस विचारकको व्यग्र करते हैं ।

वेद के देवता-सम्बन्धी निर्णय के लिये ही निरुक्त के दैवत-काण्ड की सृष्टि हुई है और निरुक्त-निर्माण के अन्य प्रयोजनों के साथ देवता-विनिर्णय भी एक प्रयोजन कहा गया है । यथा—

(१) 'अथाऽपि याज्ञे दैवतेन वहयः प्रदेशा भवन्ति । तदेतेनोपेक्षितव्यम् ॥' (निरु० १।६।१७)

और याज्ञ कर्म में देवता सम्बन्धी बहुत से भाग होते हैं वे इस निरुक्तशास्त्र से ही जानने योग्य हैं ।

यज्ञ-प्रकरण में अनेक देव प्रस्तुत होते हैं उनका सम्प्र-ज्ञान निरुक्त-शास्त्र से ही होता है ।

'ते चेद्व्यूहलिङ्गज्ञा अत्र स्म इति ।' निरु० १।६।१७

यदि देवता-ज्ञान के अभिमानी यह कहें कि लिङ्गसे देवता का बोध होता है और हम उन लिङ्गों (चिह्नों, संकेतों) को जानते हैं, कि निरुक्त की क्या आवश्यकता ? तो वे सुनै—

इन्द्रं न त्वा शयसा देवता वायुं पृणन्तीति वायु-लिङ्गं चेन्द्रलिङ्गं चाग्नेये मन्त्रे ॥ निरु० १।६।१७

'इन्द्रं न त्वा' इस अग्निदेवताक मंत्र में वायु और इन्द्र का भी लिङ्ग पाया जाता है ।

अग्निरिव मन्यो त्विषितः सहस्वेति तथाऽग्निर्मान्यवे मन्त्रे ॥ निरु० (१।६।१७)

'अग्निरिव मन्यो' इस मनु-देवताक मंत्र में अग्नि का लिङ्ग पाया जाता है । अतः केवल लिङ्ग-ज्ञान दैवत-ज्ञान का परम साधन नहीं, निरुक्त-ज्ञान की भी आवश्यकता है ।

(२) नैघण्टुकमिदं देवता-नाम, प्राधान्येनेदमिति ॥

(निरु० १।६।२०)

निघण्टु में देवता-नाम दो प्रकार के हैं, नैघण्टुक और प्राधान्य ।

तद्यदन्यदैवते मन्त्रे निपतति, नैघण्टुकं तत् ॥

(निरु० १।६।२०)

जो नाम अन्यदेवताक मन्त्र में आ पड़ता है वह नैघण्टुक कहलाता है ।

तद्यानि नामानि प्राधान्यस्तुतीनां देवतानां, तद् दैवतमित्याचक्षते । तदुपरिष्ठाद् व्याख्यास्यामो नैघण्टुकानि नैगमानीह । (निरु० १।६।२०)

और जो नाम प्राधान्य-स्तुतिवाक्य देवताओं के हैं उनका नाम दैवत है । उनको हम आगे कहेंगे । यहाँ नैघण्टुक और नैगम नाम कहते हैं, उनकी व्याख्या करते हैं ।

उपर्युक्त समग्र वाक्यों से यह प्रतीत होता है कि निघण्टुशास्त्र में जितने नाम पड़े गये हैं वे मुख्यतः देवता-नाम हैं । तथा निघण्टु और निरुक्त हमें देवता निर्णय सम्बन्ध में कुछ न कुछ बताने सकते हैं ।

देवता-ज्ञान दुरूह है । इस विषय में निरुक्तकार याज्ञ कहते हैं—

शाकपूणिः संकल्पयाञ्चक्रे, सर्वा देवता जानामीति । तस्मै देवतोभयालिङ्गा प्रादुर्षभूव । तां न जज्ञे । तां पप्रच्छ, विविदिषाणि त्वेति ॥

(निरु० २।२।८)

शाकपूणि आचार्य के मन में अहंकार उत्पन्न हुआ और उन्होंने विचार कि मैं सब देवताएँ जानता हूँ । उनके आगे एक उभय-लिङ्ग देवता आ खड़ी हुई । उसको वे नहीं जान सके । उन्होंने उसे पूछा 'मैं तुझे जानना चाहता हूँ ।'

हमें वेद की देवताओं का विचार करना है क्योंकि वे ही संसार में कार्य कर रही हैं परन्तु वे शाकपूणि-जैसे निरुक्ता-चार्य के लिये भी दुर्ज्ञेय हैं।

वास्क महर्षि ने देवता-सम्बन्ध में जो कुछ लिखा है, उस का सार यह है- (निरुक्त। देवत-छाण्ड)

अथातो देवतम् । तद् यानि नामानि प्राधान्यस्तु-
तीनां देवतानां तद् देवतमित्याचक्षते ॥

अब यहाँ से आगे देवत प्रकरण चलेगा। जो नाम प्राधान्य स्तुतिवाली देवताओं के हैं उन्हीं का एक नाम देवत है। ऐसा आचार्य लोग कहते हैं। मंत्रों की देवताएँ प्रधान और अग्रधान दो प्रकार की हैं। और ये प्रधान और अग्रधानरूपसे एक मंत्र में भी स्तुत होती हैं।

सैषा देवतोपपरीक्षा । यत्काम ऋषिर्यस्यां देवता-
यामार्थपत्यमिच्छन् स्तुतिं प्रयुङ्क्षते, तद्देवतः स
मन्त्रो भवति ।

वह यह देवता-सम्बन्धी विचार किया जाता है। जिस देवता की कामना से प्रेरित होकर ऋषि (स्तोता) जिस देवता में अपनी अर्थ-सिद्धि चाहता हुआ स्तुति का प्रयोग करता है उस देवतावाला वह मन्त्र होता है।

तार्पर्य यह कि, स्तोता जिस देवता की स्तुति करता है, स्तुतिवाले मंत्र (वाक्य) की वही देवता होती है। मंत्रों के विषय देवता कहलाते हैं अतः देवता-भेद से-

तास्त्रिविधा ऋचः । परोक्षकृताः, प्रत्यक्षकृताः,
आध्यात्मिक्यश्च ।

वे तीन प्रकार की ऋक् हैं। परोक्षकृता, प्रत्यक्षकृता और आध्यात्मिकी।

तत्र परोक्षकृताः सर्वाभिनिमविभक्तिभिर्युज्यन्ते
प्रथमपुरुषैश्चाख्यातस्य ॥१॥ 'इन्द्रो दिव इन्द्र ईशो
पृथिव्याः' (ऋ० १०।८९।१०), 'इन्द्रमिदं गाथिनो बृहत्'
(ऋ० १।७।१)।

परोक्ष रूप से की हुई स्तुतियों, जिन में आराध्य देव सम्मुख नहीं होता, नाम की समग्र विभक्तियों से युक्त और प्रथम पुरुष की क्रिया में होती हैं। जैसे 'इन्द्र ही दिव और इन्द्र ही पृथिवी का शासक है,' 'हे गायको! इन्द्र को ही बृहत् साम गाओ' इत्यादि।

अथ प्रत्यक्षकृता मध्यमपुरुषयोगास्त्यमिति चैतेन
सर्वनाम्ना । 'स्वमिन्द्र ! यलादधि' (ऋ० १०।१५३।२),
'यि न इन्द्र ! मृधो जिहि' (ऋ० १०।१५२।४)

प्रत्यक्षकृता स्तुतियों मध्यमपुरुष में होती हैं और स्व, यूयम् आदि सर्वनाम से युक्त। जैसे- 'हे इन्द्र! तू बल से उत्पन्न हुआ है,' 'हे इन्द्र! तू हमारे शत्रुओं को मार दे' इत्यादि

अथापि प्रत्यक्षकृताः स्तोतारो भवन्ति, परोक्ष-
कृतानि स्तोतव्यानि ॥ 'मा चिदन्वद् वि शंसते' ।
(ऋ० ८।१।१)

परन्तु कहीं कहीं प्रत्यक्षरूप में स्तोता स्तुत होते हैं और स्तोतव्य परोक्ष में आ जाते हैं। जैसे 'हे सखा लोगो! इन्द्र से भिन्न की प्रशंसा मत करो।'

तार्पर्य यह कि कहीं आप सर्वत्र प्रत्यक्षकृता ऋक् को देवता ही न समझें, वे स्तोताओं के लिये भी प्रयुक्त होती हैं।

आध्यात्मिक्यश्च उत्तमपुरुषयोगाः । अहमिति
चैतेन सर्वनाम्ना । यथैतदिन्द्रो वैकुण्ठी, रुद्रसूक्तं,
वागाम्भृणीयमिति ।

आध्यात्मिकी स्तुतियों उत्तमपुरुष में और अहं (मैं) इस सर्वनाम से युक्त। इन के उदाहरण-इन्द्र वैकुण्ठ, रुद्र और वागाम्भृणीय सूक्त हैं।

निरुक्तकार ने मन्त्रों का वर्गीकरण कर के वेद-वर्णित देवताओं का ज्ञान सरल बना दिया है।

अपि ह्यदेवता देवतावत्स्तूयन्ते, यथाश्वप्रभृती-
न्योपधिपर्यन्तानि ॥ ४ ॥

और अदेवताएं भी देवता-सदृश स्तुति प्राप्त करती हैं। जैसे-घोड़े से लेकर ओपधि-पर्यन्त पदार्थ।

अतः देवताविषयक विचार करने में, स्तुति के कारण, इन्हें देवता नहीं मान लेना चाहिये।

माहाभाग्याद् देवताया एक आत्मा बहुधा स्तूयते।

कहीं कहीं ऐश्वर्याधिक्य के कारण एक ही देवता बहुत नाम और कार्य से स्तुति प्राप्त करती है। अर्थात् एक होने पर भी अनेक नाम और अनेक कार्य उस के बताये जाते हैं वास्तव में उस का आत्मा (शरीर) अनेक नहीं

होता । ऐसे स्थलों पर नाम और कार्य भिन्न होने से उन्हें अनेक देवता नहीं मान लेना चाहिये ।

एकस्याऽऽत्मनोऽन्ये देवाः प्रत्यङ्गानि भवन्ति ।
कहीं-कहीं एक शरीरवाली देवता के अनेक देव प्रत्यङ्ग बन कर आते हैं । अर्थात् भिन्न होने पर भी शरीर के अङ्ग-समान वर्णित होते हैं ।

ऐसे स्थलों पर एकत्ववाद से देवों के अनेकत्व में बाधा नहीं पड़ती ।

तिस्त्र एव देवता इति नैरुक्ताः । अग्निः पृथिवीस्थानो,
वायुर्वेन्द्रो वा अन्तरिक्षस्थानः सूर्यो गुस्थानः ॥

तीन ही देवताएँ हैं ऐसा निरुक्त-मतानुयायी मानते हैं ।
अग्नि पृथिवीस्थान में, वायु वा इन्द्र अन्तरिक्ष स्थान में,
सूर्य गु-स्थान में ।

तासां महाभागाद् एकैकस्या अपि बहूनि नाम-
धेयानि भवन्ति । अपि वा कर्म-पृथक्त्वात् । यथा-
होताऽध्वर्युर्ब्रह्मोद्गाता- इत्यपि एकस्य सतः ।

उन तीनों के ऐश्वर्य के कारण, एक एक देवता के बहुत नाम होते हैं । अथवा कर्मवैभिन्न्य से अनेक नाम पड़ते हैं जैसे एक होने पर भी कार्यभेद से वही मनुष्य कभी होता, कभी अध्वर्यु और कभी ब्रह्मा या उद्गाता भी कहलाता है ।

अथाकारचिन्तनं देवतानाम् ।

अब देवताओं के आकार का विचार करेंगे, ये मनुष्य-सदृश हैं अथवा मनुष्य से भिन्न आकारवाली ?

पुरुष-विधाः स्युरित्येकम् । चेतनावद् हि स्तुतयो
भवन्ति, तथाऽभिधानानि ।

मनुष्य-सदृश शरीर और ज्ञानवाली हैं ऐसा एक मत है । क्योंकि उन की स्तुतियाँ चेतन प्राणियों के समान हैं और नाम भी ।

अर्थात् चेतनके जैसे गुण-कर्म होते हैं वैसे इन देवताओं के भी हैं अतः ये भी मनुष्य-सदृश देहवाली हैं ।

अपुरुष-विधाः स्युरित्यपरम् । अपि तु यद् दृश्यते ।
अपुरुषविधं तत् । तद्यथा-अग्निर्वायुरादित्यः पृथिवी चन्द्रमा इति ।

‘पुरुष-भिन्न आकारवाली हैं’ ऐसा दूसरा मत है ।
क्योंकि यह जो कुछ दीखता है वह पुरुष (मनुष्य) से

भिन्न आकृतिवाला है । जैसे अग्नि, वायु, आदित्य (सूर्य) पृथिवी और चन्द्रमा ।

अपि वा उभय-विधाः स्युः । अपि वा पुरुष-विधानामेव
सतां कर्मात्मान एते स्युः । यथा यज्ञो यजमानस्य ।

अथवा दोनों प्रकार की हैं । अथवा पुरुष-सदृश मानें तो दूसरी अचेतन देवताओं को चेतन देवताओं का कर्म मान लेंगे । जैसे यज्ञ भी देवता और यजमान भी देवता हैं तो यज्ञ यजमान का कर्म माना जाता है । इस प्रकार मानने में कोई दोष उपस्थित नहीं होगा ।

तिस्त्र एव देवता इत्युक्तं पुरस्तात् । तासां भक्तिसाह-
चर्यं व्याख्यास्यामः ।

तीन ही देवता हैं ऐसा पहले कह चुके हैं । उन के भक्ति और साहचर्य कहेंगे ।

अथैतान्यग्निभक्तीनि । अयं लोकः, प्रातःसवनं,
वसन्तो, गायत्री, त्रिवृत्-स्तोमो, रथन्तरं साम । ये च
देवगणाः समाम्नाताः प्रथमे स्थाने । अग्नयी-पृथिवी-
इहा इति स्त्रियः । अथाऽस्य कर्म, वहनं च हविषां, आवा-
हनं च देवतानां, यच्च किञ्चिद् दार्ष्टिं विषयिकं आग्नि-
कर्मैव तत् । अथास्य संस्तविका देवा इन्द्रः, सोमो,
वरुणः, पर्जन्यः, ऋतवः ।

अब अग्नि के भक्तिनाम कहते हैं । पृथिवी ही इसका लोक, प्रातःसवन ही सवन, वसन्त ही ऋतु, गायत्री ही छन्द, त्रिवृत् ही स्तोम, रथन्तर ही इसका साम है । पृथिवी स्थान में पठित देवगण ही इस के साथी हैं । अग्नयी, पृथिवी और इहा ये ही स्त्रियाँ । हविःका वहन, देवताओं का आवाहन और जो कुछ दृष्टि में आता है वह सब अग्नि का कर्म । और इन्द्र, सोम, वरुण, पर्जन्य और ऋतु ये इस के साथ स्तोतव्य (स्तुति-भागी) देव हैं ।

अथैतानीन्द्रभक्तीनि । अन्तरिक्षलोको, माध्य-
न्दिनं सवनं, प्रोषमस्त्रिष्टुप्, पञ्चदश स्तोमो, बृहत् साम ।
ये च देवगणाः समाम्नाता मध्यमे स्थाने । याव
स्त्रियः । अथास्य कर्म, रसाऽनुप्रदानं, वृत्रवधः, या च का
च बलकृतिरिन्द्रकर्मैव तत् । अथाऽस्य संस्तविका देवाः ।
अग्निः, सोमो, वरुणः, पूषा, बृहस्पतिर्ब्रह्मणस्पतिः-
पर्वतः, कुत्सो-विष्णुर्वायुः ।

ये इन्द्रभक्ति नाम हैं जो इन्द्र के साथ पढ़े जाते हैं । अन्तरिक्ष ही लोक, माध्यन्दिन ही सवन, प्रीत्य ऋतु, त्रिष्टुप् छन्दः, पञ्चदश स्तोम, बृहत् ही साम । मध्यम स्थान में पठित देवगण ही साथी । मध्यम स्थान में पठित स्त्रियाँ ही इस की स्त्रियाँ । रस का देना, वृत्र का वध और जो कुछ ब्रह्म का काम है वह इन्द्र का कर्म । और अग्नि, सोम, वरुण, पूषा, बृहस्पति, ब्रह्मणस्पति, धर्मत, क्रुत्स, विष्णु और वायु ये देव इन्द्र के साथ स्तुति प्राप्त करनेवाले हैं ।

अथैतान्यादित्यभक्तीनि । अतौ लोकः, तृतीयसवनं, वर्षा, जगती, सप्तदशः स्तोमो, वैरूपं साम । ये च देव-गणाः समाप्ताता उत्तमे स्थाने । याश्च स्त्रियाः । अधाऽस्य कर्म, रसाऽऽदानं, रश्मिभिश्च रसधारणं, यच्च किञ्चित् प्रवह्निं-आदित्यकर्मैव तत् । चन्द्रमसा, वायुना, संवत्सरेण- इति संस्तवः ।

ये आदित्यसम्बन्धी नाम हैं । चौ लोक, तृतीय-सवन ही सवन, वर्षा ऋतु, जगती छन्दः, सप्तदश स्तोम, वैरूप साम । सु-स्थानी देवगण साथी और वहाँ पढ़ी गई स्त्रियाँ स्त्रियाँ हैं । रसका आकर्षण करना, किरणोंसे रसका धारण तथा जो कुछ गुप्त (अदृश्य) कर्म है वह इसका कर्म है । चन्द्रमा वायु और संवत्सर के साथ इसका स्तवन होता है । एतेष्वेव स्थानव्यूहेषु- ऋतुछन्दःस्तोम-पृष्ठस्य भक्ति-शेषमनुकल्पयित ।

इन तीन स्थानों में ही ऋतु, छन्दः, स्तोम और पृष्ठ (साम) की शेष कल्पनाएँ कर लेनी चाहियें ।

यास्क महर्षिने तीन स्थानोंके तीन व्यूह बनाये हैं और ये समग्र देवता, छन्द, ऋतु आदि को उन्हीं में बाँट देना चाहते हैं । यह क्रम उन का अपना नहीं, वेद से लिया हुआ है । प्रमाण के लिए दो एक मन्त्र उद्धृत करता हूँ ।

(१) वसवस्त्वा कृण्वन्तु गायत्रेण छन्दसाऽङ्गिरस्वद्-
रुद्रास्त्वा कृण्वन्तु त्रैष्टुभेन छन्दसा ... आदित्यास्त्वा
कृण्वन्तु जागतेन छन्दसा ... ॥ यजु० ११।५८ ॥

इस मन्त्रमें वसु रुद्र और आदित्योंके साथ गायत्री, त्रिष्टुप् और जगती का सम्बन्ध स्पष्ट है । ये देवगण क्रम से पृथिवी, अन्तरिक्ष और शौ-लोक के हैं, अतः इन लोकों के साथ भी इन छन्दों का सम्बन्ध है ।

३ विश्वे प्र.

अग्नेर्भागोऽसि, दीक्षाया आधिपत्यं, ब्रह्म स्पृतं, त्रिवृत् स्तोम इन्द्रस्य भागोऽसि, विष्णोराधिपत्यं क्षत्रं स्पृतं पञ्चदशः स्तोमो, नृचक्षसां भागोऽसि, धातुराधिपत्यं, जनित्रं स्पृतं, सप्तदशः स्तोमो०००॥ यजु० १४।२४

यहाँ अग्नि, इन्द्र और नृचक्षस् (आदित्यों) के साथ त्रिवृत्, पञ्चदश और सप्तदश स्तोमों का सम्बन्ध स्पष्ट है । प्रथम मन्त्र में वसु का अर्थ अग्नि, रुद्र का अर्थ इन्द्र और आदित्य का अर्थ सूर्य लें तो दोनों मन्त्र निरुक्त के तीन व्यूहों को बहुत कुछ प्रमाणित कर देते हैं । इसी प्रकार ऋतु और पृष्ठसम्बन्धी मन्त्र भी बहुत हैं जो प्रयोजन न होने से यहाँ नहीं लिखे जाते ।

अन्त में दैवत-काण्ड की भूमिका का उपसंहार करते हुए ऋषि लिखते हैं--

इतीमा देवता अनुकान्ताः ॥ (निरु० ७।३।१३)

इस प्रकार ये देवताएँ कह दी गई ।

निरुक्तकार ने सम्पूर्ण देवताओं की व्याख्या अपने ढंग से की है । उन्हीं ने सारे देवों को तीन स्थानों में बाँट दिया है यथा--

अग्निः पृथिवीस्थानः । तं प्रथमं व्याख्यास्यामः ।
(निरु० ७।४)

अग्नि पृथिवी-स्थानी देव है, उसकी प्रथम व्याख्या करेंगे । परन्तु वेद में अग्नि शब्द केवल पृथिवीस्थ अग्नि का ही वाचक नहीं, अतः उन्हें कहना पड़ा ।

स न मन्येताऽयमेवाऽग्निरिति । अग्नयेते उत्तरे ज्योतिषी अग्नी उच्येते । निरु० ७।४

कोई ऐसा न मान ले कि यह पृथिवीस्थ अग्नि ही अग्नि है मध्यम और उत्तमस्थान वाले देव भी अग्नि कहलाते हैं ।

अन्त में कहा-

यस्तु सूक्तं भजते, यस्मै हविर्निरुह्यतेऽयमेव सोऽग्निः । निपातमेवैते उत्तरे ज्योतिषी अनेन नामधेयेन भजते ॥
(निरु० ७।४)

जो अग्नि सूक्त का सेवन करता, जिसके निमित्त हवि दिया जाता है वह वही पृथिवीस्थ अग्नि है । अन्तरिक्ष और शौलोकस्थ ज्योतिषी गौणरूप से अग्नि नाम धारण करती हैं ।

अग्नि का दूसरा नाम जातवेदाः है। उस के विषय में भी ऐसा ही कहते हैं—

स न मन्येताऽयमेवाऽग्निरिति । अप्येते उत्तरे उयोतिषी जातवेदसी उच्येते ।...यस्तु सूक्तं भजते यस्मै हविर्निरूप्यते ऽयमेव सोऽग्निर्जातवेदाः । निपातमेवैते उत्तरे उयोतिषी एतेन नामधेयेन भजते ॥ (निरु० ७।५)

अर्थात् अन्तरिक्षस्थ और शुलोकस्थ देव भी जातवेदाः हैं, परन्तु मुख्यतया जातवेदाः यह अग्नि ही है।

वैश्वानर, द्रविणोदा आदि नामों पर भी यास्क ऋषि का ऐसा ही मत है। यास्क के मत से जातवेदाः वैश्वानर आदि नामवाले भिन्न देव नहीं हैं, पृथिवी पर इस अग्नि के ही ये नाम हैं, इन को भिन्न-भिन्न देव नहीं मानना चाहिये। अग्नि और पृथिवी से सम्बद्ध नामों की व्याख्या करके मध्यम स्थान की ओर चलते हैं—

अथ मध्यस्थाना देवताः । तासां वायुः प्रथमगामी भवति । (निरु० १०।१)

अब मध्यस्थानी देवों की व्याख्या करते हैं। उन में वायु प्रथम है।

इस पकरण के देखने से पता चलता है कि इन्द्र मित्र वरुणं रुद्रादि नाम वायु के ही हैं। मरुत्, रुद्र, ऋशु, पितर आदि गणनाम वायु-समूह के प्रतीत होते हैं। अदिति, सरमा, सरस्वती, इन्द्राणी आदि स्त्रियों के नाम मध्यस्थान में होनेवाली वाणी है। उषा आदि प्रत्यक्ष स्त्रीवाचक नामों को छोड़ कर शेष नाम उस वाणी (गर्जना) के ही हैं।

मध्यस्थान के पश्चात् महर्षि युस्थान की ओर बढ़ते हैं—

अथातो युस्थाना देवताः । तासामश्विनौ प्रथमाऽऽगामिनौ भवतः ॥ (निरु० १२।१)

अब हम यु-स्थानी देवताओं का वर्णन करेंगे। उनमें अश्विनौ प्रथम श्रेणी में आनेवाले हैं।

ये अश्विनौ कौन हैं? यह प्रश्न जगत् के सम्मुख आज भी जटिल है। यास्क के मत में मध्यम और उत्तम दोनों स्थानों के देव मिलकर जिन में उत्तम स्थान के देव आदित्य की प्रधानता रहती है, अश्विनौ कहलाते हैं।

तयोः काल ऊर्ध्वमर्धरात्रात् प्रकाशीभावस्यानुविष्टम्भम् अनुत्तमो भागो हि मध्यमः । ज्योतिर्भाग आदित्यः ।

(निरु० १२।१)

उन का समय आधी रात के पश्चात् प्रकाश के प्रवेश होनेपर आरम्भ होता है। उसका अन्धकारयुक्त भाग मध्यम देव और प्रकाशमय भाग आदित्य है।

वायु और आदित्य अश्विनौ हैं। वास्तव में आधी रात के पश्चात् सूर्य प्राची दिक् में अपनी आभा दर्शाने लगता है। सूर्य उस अवस्था में अश्विनौ नाम से प्रसिद्ध होता है।

सविता, भग, सूर्य, विष्णु आदि नाम उस आदित्य (सूर्य) के ही हैं। ये नाम काल और कार्य के भेद से पड़े हैं। उषाः, सूर्या, वृषाकपायी, सरण्यू नाम आदित्य के प्रकाश (आभा) के हैं।

इन पदार्थों के ये नाम कैसे पड़े हैं और वेद के किन मंत्रों के आधार पर ऐसा अर्थ करना पड़ा है, यह विस्तृत व्याख्या निरुक्त में ही देखिये।

युस्थान के देवगण—

अथातो युस्थाना देवगणाः । तेषामादित्याः प्रथमा-गामिनौ भवन्ति ।

अब हम यु-स्थानी देवगण का वर्णन करेंगे उनमें आदित्य-गण प्रथम आते हैं।

आदित्य, सप्त-ऋषि, विश्वे देव, साध्य, वसु आदि देव-गण सूर्य की किरणों के नाम हैं।

चाहे देवों की गणना तीन में हो या अधिक में, नैरुक्त लोग तीन से अधिक देव मानने को उद्यत नहीं। वसु और आदित्य सूर्य-रश्मियों या अग्नि-अर्धियों में समाविष्ट हो जाते हैं और रुद्र-गण वायु-दल में। इस प्रकार वसु, रुद्र और आदित्यों की कोई भिन्न सत्ता नहीं रहती। कई लोग विश्वे देव को सर्वे देव मानकर उनकी आदित्य-गण के सदृश कोई संख्या नहीं मानते। परन्तु यु-स्थानी देवगण में विश्वे देव और साध्यों की गणना होने से वे आदित्यादि गण से भिन्न गण हैं। वेद की शैली से भी यही प्रतीत होता है—

वसवस्त्वा भूपयन्तु गायत्रेण छन्दसाऽङ्गिरस्वद्, रुद्रास्त्वा भूपयन्तु त्रैष्टुभेन छन्दसाऽङ्गिरस्वद्, आदित्यास्त्वा भूपयन्तु जागतेन छन्दसाऽङ्गिरस्वद्, विश्वे त्वा देवा वैश्वानरा भूपयन्त्वानुष्टुभेन छन्दसाऽङ्गिरस्वदिन्द्रस्त्वा भूपयन्तु, वरुणस्त्वा भूपयन्तु, विष्णुस्त्वा भूपयन्तु ॥ (यजु० ११।६०)

ये विश्वे देव वसु, रुद्र और आदित्य से भिन्न हैं तथा विश्वानर के पुत्र हैं। क्योंकि उन्हें अनेकत्र वैश्वानर कहा

गया है। ये सूर्य के रहिम हों तो भी वसु रुद्र और आदित्य से पृथक् ही माने जायेंगे।

३३ की संख्या

विश्वे देव तैत्तिरीय-
 (१) नहि वो अस्त्यर्भको देवासो न कुमारकः ।
 विश्वे सतोमहान्त इत् ॥१॥

(२) इति स्तुतासो असथा रिशादसो,
 ये स्थ त्रयश्च त्रिंशश्च ।
 मनोर्देवा यज्ञियासः ॥२॥

(३) ये देवास इह स्थन विश्वे वैश्वानरा उत ।
 अस्मभ्यं शर्म सप्रथो गवेऽश्वाय यच्छत ॥३॥

(ऋ० ८।३०)

(४) ये त्रिंशति त्रयस्पुरो देवासो बर्हिःसदन् ।
 विद्वद् द्वितासनन् ॥४॥ (ऋ० ८।२८)

(५) ये देवासो दिव्येकादश स्थ,
 पृथिव्यामध्येकादश स्थ,
 अप्सुक्षितो महिनैकादश स्थ,
 ते देवासो यज्ञमिमं जुषध्वम् ॥ (ऋ० १।१३९।११,
 यजु० ७।१९)

इन मंत्रों की देवता विश्वे देव हैं। ये तैत्तिरीय हैं और विष्णु अन्तरिक्ष और पृथिवी पर ग्यारह-ग्यारह की संख्या में रहती हैं। अब सिद्ध हो गया कि ये विश्वे देव सम्पूर्ण देव नहीं हैं किन्तु वसु आदि से पृथक् ३३ की संख्या में रहते हैं।

विश्वे देव की संख्या ३३३९ है-

त्रीणि शता त्री सहस्राण्यामि त्रिंशच्च देवा नव चासपर्यन् ।
 औक्षन् घृतेरस्तृणन् बर्हिःस्मा आदिब्रह्मोतारं न्यसादयन्त ।
 (ऋ० ३।९।९, १०।५२।९; यजु० ३३।७)

ऋ० ३।९।९ में इस मंत्र की देवता अग्नि है, अन्यत्र विश्वे देव देवता हैं। विचारणीय प्रश्न है कि ये विश्वे देव ३३ हैं या ३३३९ हैं अथवा विश्वेदेव ३३ हैं और सर्वे देव ३३३९ अथवा विश्वे देव का सर्वत्र सर्वे देव ही अर्थ है और वे ३३ या ३३३९ दोनों में हो सकते हैं। विश्वे देव ३३ हैं और वे ही ३३३९ भी, तो परस्पर विरोध आयेगा। यदि सम्पूर्ण देव ३३ की संख्या में हैं और वे ३३३९ की संख्या में भी, तो विरोध है। हाँ, यदि हम विश्वे देव ३३ और सम्पूर्ण देव ३३३९ मानें तो कुछ संगति लग सकती है। निरुक्तकार ने विश्वे देवाः का अर्थ 'सर्वे देवाः' किया है, परन्तु उन के मत में 'देवाः' यह भी गण है। यह सूर्य रहिम का नाम है तब 'सर्वे देवाः' विश्वे देवाः का पर्याय नाम होगा अर्थ तो आदित्य-रहिम ही लेना पड़ेगा। वे शाकपूणि आचार्य का मत उद्धृत करते हैं-

“यत्तु किंचिद् बहुदैवतं तद् वैश्वदेवानां स्थाने युज्यते। यदेव विश्वलिङ्गमिति शाकपूणि।” (निरुक्त १२।४)
 अर्थात् बहुत देवतावाला मंत्र विश्वे देव के स्थान में पड़ा जाता है जब अन्य विश्वे देवयुक्त गायत्र मंत्र न मिले।

यद्यपि यास्क इस के विरोधी हैं तथापि यह सम्भव है कि सर्वे-देवताक मंत्र विश्वे-देवताक बनाये गये हों। तब ३३३९ संख्याक मंत्र सर्वे-देवताक हैं ऐसा मानना पड़ेगा। पुराणों में विश्वे देव अन्य देवों से पृथक् हैं। ब्राह्मणमें भी, 'रश्मयो ह्यस्य (सूर्यस्य) विश्वे देवाः' (श० ३।९।२।६ इत्यादि स्थलों में विश्वे देव पृथक् हैं और वे सूर्य के रहिम (किरण) हैं।

यह देवता-विषय बहुत गहन तथा और अधिक मननीय है क्योंकि यह अनुसन्धान अन्तिम नहीं है।



‘विश्वे देवाः’ के मंत्रोंके संबंधमें विचार

(ले० श्री० पं० दयानन्द गणेश धारेश्वर बी. ए. स्वाध्यायमंडल, भोंध)

वेदोंमें उपलब्ध देवताओंके वर्णनपरक विभिन्न सूक्त पढ़ने से स्पष्टता प्रतीत होता है कि वे सभी देव असाधारण क्षमता से युक्त होते हैं तथा वे अत्यन्त सफल। तापूर्वक जनताकी लगातार सेवा करते हुए लोगोंकी अटल, अडिग एवं अविचल भक्ति और उपासना प्राप्त करने में बड़ी स्पृहणीय और विराट सफलता प्राप्त कर लेते हैं। वेद मन्त्रों में अतीव लोकप्रिय नेता, कार्यकर्ता, स्वयंसेवक या प्रभुका बड़ाही प्रभावोत्पादक एवं सजीव चित्रण देखने मिलता है। जनता एवं उपासकों, भक्तों और अनुयायियों की रक्षा करने का गुरुतर कार्य भार सुचारुरूपसे प्रचलित रखकर समूची बुराइयों और सारे दुश्मनों, विरोधियों एवं स्वार्थी शत्रुओंको पराभूत कर विनष्ट करने या मार भगाने से वैदिक सुकवि और द्रष्टा ऋषि देवों के निकटतम संपर्क में रहने के लिए बड़े समुत्सुक दीख पड़ते हैं और उन्हें आदर पूर्वक समीप बुलाकर सोम आदि वस्तुओं के प्रदानसे भलीभाँति सुस्वागत कर उनके पर क्रमों तथा गुणों का सुन्दर ढंगसे वर्णन करते हुए उनकी सराहना करते हैं। वेदमन्त्रों के द्रष्टा किसभाँति देवताओं को समीप आनेके लिए निमन्त्रण देते हैं या देवों का आवाहन करते हैं यह निम्न मन्त्रों में देखने योग्य है।

ओमासश्चर्षणीधृतो विश्वे देवास आ गत ।

(ऋ० १।३।८)

‘ हे संरक्षणकर्ता तथा मानवों के भारण करनेहारे सभी देवो ! इधर आओ । ’

विश्वे देवासो...सुतमा गन्त तूर्णयः ।

(ऋ० १।३।८)

‘ हे समूचे देवो ! हमने जो सोमरस निचोड़ रखा है उस के निकट शीघ्रता पूर्वक चले आओ । ’ क्योंकि हम

‘ सभी देवोंको इधर उपस्थित रहनेके लिये बुलाते हैं । ’ तमीशानं जगतस्तस्थुषस्पति...अवसे ह्रमहे वयम् ।

(ऋ० १।८।१५)

‘ इस प्रभुत्व प्रस्थापित करनेवाले एवं स्थावर जंगमके अधिपति तुल्य इन्द्र को हम अपने संरक्षणार्थ बुलाते हैं । ’

...विश्वे नो देवा अवसा गमन्निह ।

(ऋ० १।८।१७)

‘ सारे देव हमारे समीप संरक्षणकी आभोजना लेकर पहुँच जायें । ’

प्रितः...देवान् हवत ऊतये । (ऋ० १।१०।१७)

‘ प्रित ऋषि अपने संरक्षणार्थ देवोंको बुलाता है । ’

त आवित्या आ गता सर्वतातये भूत देवा वृत्र-तूर्येषु शंभुवः ॥ (ऋ० १।१०।६।२)

वे विख्यात अदितिके पुत्रो ! सबके द्वारा विस्तारित कार्य के लिए आपहुँचो और हे द्योतमान एवं देवतारूपी ! हमारे शत्रुवधोंके कार्योंमें हितकारक बनो । ’

इन्द्रं कुत्सो वृत्रहणं...ऋषिरव्हूतये ।

(ऋ० १।१०।६।६)

‘ कुत्स ऋषिने वृत्रके वध करनेहारे इन्द्रको अपने संरक्षण के लिए बुलाया । ’

उप नो देवा अवसा गमन्त्वङ्गिरसां सामभिः स्तूयमानाः । (१।१०।७।२)

‘ अंगिरसों के सामों से प्रशंसित होते हुए देव हमारे पास संरक्षण योजना से युक्त हो पधरें । ’

धृतमता आवित्या...आरे मत् कर्त आगः ।

शृण्वतो वो...देवा भद्रस्य विद्वाँ अवसे हुवे वः ॥

(ऋ० २।२९।१)

हे प्रतभागी आदित्यो ! अपराध, दोष को मुझसे दूर कर दो और मैं तुम्हारी की हुई अच्छी बात को जानता हुआ

कार्य को अच्छीतरह निभाने के लिए इधर बुलाता हूँ ।

विश्वे देवास आगत शृणुता म इमं हवम् ।

एवं बर्हिर्नि षीदत ॥ (२।४।१३, ६।५।१७)

‘ सारे देवो ! इधर आओ, मेरी इस पुकार को सुनलो, और इस कुशासन पर बैठ जाइए । ’

...देवासः पूषरातयः । विश्वे मम श्रुता हवम् ।

(ऋ. २।४।१५)

‘ सभी देव जिनकी देन पुष्टी वारक होती है मेरी इस पुकार को सुनलें । ’

सुक्तेभिर्वो वचोभिर्वेचजुष्टैरिन्द्रा न्वग्नी अवसे
हुवध्वै ॥ (ऋ. ५।४।५४)

‘ हे इन्द्र एवं अग्नि ! तुम्हें मैं देवों से स्वीकृत तथा भलीभाँति कहे वचनोंसे संरक्षण के लिए बुलाता हूँ । ’

इन उपर्युक्त मन्त्रोंसे वैदिक ऋषियोंके अन्तस्त्वलमें देवों के साङ्गिध्वकी कालसा किस भाँति जागृत थी सो अत्यन्त स्पष्ट होगा । तथा और भी देखिए—

सुगा वो देवाः सवना अकर्म य आजग्मेद् ५

सवनं जुषाणाः । भरमाणा वहमाना हवीं ष्यस्मे
धत्त वसवो वसूनि ॥ (वा. यजु. ८।१८)

‘ हे देवतागण ! आपके लिए हम सुखदायक धर बना चुके हैं जो तुम इस सवन का सेवन या स्वीकार करते हुए इधर आनेलगे; सब को बसानेवाले देवो ! हविर्भागोंकी भरपूर देते हुए एवं उन्हें इष्टस्थान में पहुँचाते हुए हमारे लिए धन भाण्डारों को यहाँपर धर दो । ’

आ नो विश्वे सजोषसो देवासो गन्तनोप नः ।

वसवो रुद्रा अवसे न आगमञ्जृष्वन्तु मरुतो
हवम् ॥ (ऋ. ८।५४) [बाल. ६] ३

‘ सभी देव मिलजुलकर हमारेलिए समीप आ जायें; वसु एवं रुद्र हमारे संरक्षण के लिए आवें तथा मरुत वीर भी हमारी पुकार सुन लें । ’

वयमिद्वः सुदानवः क्षियन्तो यान्तो अध्वन्ता ।

देवा नृधाय इमहे ॥ (ऋ. ८।८३।६)

हे अच्छे दान दूर देवो ! हम तो घर में रहते हुए या मार्ग पर से आवागमन करते हुए तुम्हें ही वृद्धि का कार्य करनेके लिए बुलाते हैं । ’

इस प्रकार देवों को बुलाकर वैदिक मन्त्रोंके दर्शन करनेहारे प्रतिभाशाली कवि उनसे कैसी प्रार्थना करते हैं तथा अपनी आकांक्षाओं को किस तरह उनके सम्मुख पेश करते हैं यह निम्न मंत्रों में देखने योग्य है—

दिविस्पृशं यज्ञमस्माकमश्विना जीराध्वं
कृणुतं सुम्नमिष्टये । (ऋ. १०।३६।६)

‘ हे अश्विनौ ! तुम दोनों हमारे यज्ञको शुलोककी छूनेवाला याने अति उच्च कोटिका तथा शीघ्र दिशारहित होनेवाला बना दो और हमारा इच्छित सिद्ध हो जाय इस हेतु सुख का निर्माण कर डालो । ’

उपह्वये सुहवं मारुतं गणं पावकमृष्वं सख्यय
शंभुवम् । रायस्पोषं सौश्रवसाय धीमहि... ।

(ऋ. १०।३६।७)

‘ मैं पवित्रतामय वायुमंडल का सृजन करनेहारे एवं सेजस्वी वीर मरुतोंके दलको अपने निकट बुलाता हूँ ताकि मित्रता के लिए वह सुखदायक प्रतीत होयें और हम उत्कृष्ट कीर्ति पाने के लिए धनसंपदाको बढ़ानेके ढंग को सोचते हैं । ’

यद् वो देवा ईमहे तद् वदातन ।

जैत्रं क्रतुं रयिमद् वीरवद्यशस्तद् देवानामवो
अद्या नृणीमहे । (ऋ. १०।३६।१०)

‘ हे देवो ! हम तुम से जो मांगते हैं उसे देनालो; वीरतायुक्त, धनसंपन्न यश एवं जयिष्णु कार्यक्रम हमें मिल जाय अतः आज हम देवों के उस संरक्षण के ढंग को अपने लिए चुनलेते हैं । ’

ये सवितुः सत्यसवस्य विश्वे मित्रस्य व्रते
वरुणस्य देवाः । ते सौभगं वीरवद् गोमदमो
वधातन द्रविणं चित्रमस्मे ॥ (ऋ. १०।३६।१३)

‘ जो सारे देव सत्य के प्रेरणकर्ता सविता एवं मित्र तथा वरुण के निर्विघ्न, व्रत के अनुकूल कार्य करते हैं वे हमें वीरता पूर्ण, गोधन संकुल अच्छे ऐश्वर्यवाले कार्य और अनूठा धन देनाले ।

यूयं हि ष्ठा सुदानव इन्द्रज्येष्ठा अभिघवः ।

कर्ता नो अध्वन्ता सुगं गोपा अमा ॥ (ऋ. ६।५१।१५)

‘ हे देवो ! तुम तो सचमुच चतुर्विध शीतमान एवं अच्छे दान दूर हो तथा तुममें इन्द्र प्रमुख है; मार्गपरसे

यात्रा करते समय मिलजुलकर रक्षा करनेवाले तुम देव हमारे लिए सुख का प्रबन्ध कर डालो । '

आत्मरक्षा का भाव मानवमें किस तीव्रतासे उमड़ पड़ता है यह निम्न मंत्रमें दीख पड़ता है—

अवन्तु मामुषसो जायमाना अवन्तु मा सिन्धवः
पिन्वमानाः । अवन्तु मा पर्वतासो ध्रुवासोऽवन्तु
मा पितरो देवहृतौ ॥ (ऋ. ६।५२।४)

' प्रतिदिन उत्पन्न होते हुए उपः काल मुझ को बचाएँ
प्रतिपल जल से पूर्ण होती हुई नदियाँ मेरी रक्षा करें,
अटक रूपसे खड़े पहाड़ मेरा संरक्षण करें तथा देवोंको
बुलाने में पितर अपने संरक्षणकी छत्रछायामें मुझे रख दें । '

द्यावा नो अद्य पृथिवी अनागसो मही त्रायेतां
सुविताय मातरा । उपा उच्छन्त्यप वाधतामघं
स्वस्त्याग्निं समिधानमीमहे ॥ (ऋ० १०।३५)

' आज हमें दोष रहित, महान एवं मातृतुल्य द्यावापृ-
थिवी सुरक्षित रखें ताकि हमारी भलाई हो जाए; उदित
होती हुई उपा पापको दूर करदे और हम चाहते हैं कि
भलीभाँति धधकनेवाला अग्नि हितकारक बने । '

नू देवांसो वरिचः कर्तना नो भूत नो विश्वेऽवसे
सजोपाः । समस्मे इपं वसवो ददीरन् यूयं पात
स्वस्तिभिः सदा नः ॥ (ऋ. ७।४८।४)

' हे देवो ! हमारे लिए तुम धनसंपदा का निर्माण करो,
और तुम सभी मिलकर हमारी रक्षा करनेके लिए कटिबद्ध
रहो; हे वसुभो ! हमें तुम अन्न सामग्री भली भाँति देते
रहो और कल्याणकारक साधनोंसे हमेशा हमारे संरक्षण
का गुरुतर कार्य भार संपन्न करो ।

विश्वे देवा मम शृण्वन्तु यक्षियाः ...

मा वो वचांसि परिचक्ष्याणि वोचं सुम्नेषु इत्
वो अन्तमा मदेम ॥ (ऋ. ६।५२।४)

' मेरे कथनको सभी यज्ञमें बैठने योग्य देव सुनलें;
मैं कभी निन्दनीय वचन तुम्हारे लिए न कहूँ और तुम्हारे
किये सुख कारक प्रवर्षों में हम तुम्हारे अत्यन्त निकटवर्ती
होकर आनन्दित बनें । '

स्तीर्णे बर्हिषि समिधाने अग्नी सूक्तेन महा
नमसा विवासे । अस्मिन् नो अद्य विद्यथे
यजत्रा विश्वे देवा हविषि मादयध्वम् ॥

(ऋ. ६।५२।१७)

' दर्भमय आसन के बिछानेपर और अग्नि के भली-
भाँति प्रदीप्त होनेपर बड़े सूक्तसे एवं नमन से मैं उपासन
करता हूँ; आज हमारे इस यज्ञ में उपस्थित होकर सारे
तुम पूजनीय देव हमारे दिये हुए इस हविके परिणाम
स्वरूप हर्षित बनें । '

इदं देवा शृणुत ये यक्षिया स्थ ... पादो स बद्धो
दुरिते नि युज्यताम् यो अस्माकं मन इदं
दिनस्ति ॥ (अथर्व. २।१२।२)

' हे देवो ! जो तुम यजनीय हो तो इस मेरे वचन को
सुन लो; जो कोई हमारे इस मन को हिसित करे अर्थात्
कष्ट दे वह फंदे में बँधा जाकर बुराई में गिरजाय । '

देवों का निम्नलिखित वर्णन देखने योग्य है—

नहि वो अस्त्यर्भको देवासो न कुमारकः ।

विश्वे सन्तो महान्त इत् ॥ (ऋ. ८।३०।१)

' हे देवो ! तुम में कोई न छोटा शिशु है न बालक
अपितु सारे ही निश्चय पूर्वक बड़े हैं । '

यथा वशन्ति देवास्तथेदसत् तदेपां नकिरा
मिनत् । अरावा चन मर्त्यः ॥ (ऋ. ९।२८।४)

' जैसे देव इच्छा करते हैं वैसे ही निश्चय पूर्वक बन
जाता है । उनके इस सामर्थ्य को न कोई विनष्ट करपाता
है, कृपण मानव भी इन के सामने झुक जाते हैं । '

सदा देवा अरेपसः । सामवेद. ४४२.

' देव हमेशा निर्दोष रहते हैं । '

इसी कारण इन देवों की मनःपूर्वक प्रशंसा की जाती
है । देवों के संरक्षण का परिणाम निम्न मंत्र में बताया है—

ऋते स विन्दते युधः सुगेभिर्यात्यध्वनः ।

अर्यमा मित्रो वरुणः सरातयो यं त्रायन्ते स
जोषसः ॥ (ऋ. ८।१७।१७)

" जिसकी रक्षाका भार हाथमें दान लेकर मित्र,
वरुण एवं अर्यमा मिलकर डठाते हैं वह बिना युद्ध ठाने
धन पाता है और सुगम साधनों से मार्ग का अन्त पाकेता

है अर्थात् मार्गपर यातायात करने में उसे तनिक भी कठिनाई नहीं प्रतीत होती है ।' इसी कारण उनकी सराहना की जाती है ।

अस्ति हि वः सजात्यं रिशादसो देवासो अस्त्या-
प्यम् । प्र ण पूर्वस्मै सुविताय वोचत मक्षू सुस्त्राय
नव्यसे ॥ (ऋ. ८।२७।१०)

‘हे शत्रुविध्वंसक देवो ! तुममें सचमुच बंधुता एवं सजातीयताके भाव विद्यमान हैं इसलिए अब हमसे शीघ्र भली भाँति कह दो कि पूर्वकाकीन भलाई एवं नये ढंगके सुख को पाने के लिए हम क्या करें ।’

वि नो देवासो अद्रुहोऽछिद्रं शर्म यच्छत ।

न यद् दुराद्वसवो नू चिदान्तितो वरूथमादर्धरति ॥

(ऋ. ८।२७।९)

‘द्रोह न करनेहारे एवं सबको बसानेवाले हे देवो ! हमें वह छिद्ररहित पाने श्रुतिरहित स्वीकरणीय सुख दे डालो जिसे न कोई दूरसे या समीपसेही आक्रान्त करनेका साहस कर सके ।’

देवंदेवं वोऽवसे देवंदेवमभिष्टये । देवंदेवं हुवेम
वाजसातये गृणन्तो देव्या धिया ॥ (ऋ. ८।२७।१२)

‘अपनी रक्षा के लिए तुममें से प्रत्येक देवको हम बुलाते हैं, अपनी इच्छा पूर्ण हो इसलिए हर एक देवको निमंत्रित करते हैं और श्रोतमान बुद्धिशक्तिसे निष्पादित स्तोत्रों से प्रशंसा करते हुए अन्नर्क्षा प्राप्ति हो इस हेतुसे प्रति देवको हम समीप आनेके लिए विनति करते रहें ।’

देवासो हि ष्मा मनवे समन्यवो विश्वे साकं
सरातयः । ते नो अद्य ते अपरं तुचे तु नो भवन्तु
घरिषो विदः ॥ (ऋ. ८।२७।१४)

‘सारे देव तो अपने साथ देन लेकर और एक विचार बाँके होकर तथा एकत्रित रूपसे मनुको दान देते हैं और हमारी इच्छा है कि वे आज हमारे लिए और हमारी सम्मान के लिए भी धन के दाता बनें ।’

‘विश्वे देवा’ सूक्तोंके स्मरणीय वाक्य

वैदिक कवि विभिन्न देवोंकी स्तुति करते हुए उनसे क्या अपेक्षा रखते हैं तथा उनके सम्मुख किसतरह अपनी आवश्यकताओंका विवरण करते हुए अपनी महत्त्वपूर्ण एवं शाश्वतिक माँग प्रस्तुत करते हैं इस विषयपर निम्न

मन्त्रांशों से पर्याप्त प्रकाश पड़ता है और साथ ही वैदिक सूक्तों एवं मन्त्रों के दर्शनकर्ताओं के जीवन विषयक दृष्टि कोणको भी अत्यधिक प्रस्फुट करने में बड़ी भारी सहायता मिल सकती है ।

शत्रुओं तथा बुराहनों को सुदूर भगाकर सुख एवं भलाई की अक्षुण्ण प्राप्ति मानवमात्रका प्रमुख उद्देश्य है और वैदिक सूक्तों में इसकी एक प्रबलतम शक्ति हमें देखने मिलती है । बुद्धिमूर्ति तथा बुराहनों के मटियामेट होनेपर आर्थिक सुस्थितिका सुप्रबंध समाधानकारक ढंगसे करके सुदीर्घ-जीवनका सुदीर्घ काल तक दृष्ट मित्रों एवं पुत्र पौत्रों समेत उपभोग लेना भी मानवका दूसरा एक अतिप्रबल अदम्य उद्देश्य है और इसकी भी शलक वेदमन्त्रोंमें यथेष्ट उपलब्ध होती हैं । अस्तु, वेदके ही शब्दोंमें वैदिक ऋषियों की अदम्य लालसा से परिचित होनेके लिए निम्न वचनों की ओर ध्यान देना चाहिए ।

ते अस्मभ्यं शर्म यंसन्नमृता मर्त्येभ्यः ।

बाधमाना अप द्विषः ॥ (ऋ. १।९०।३)

‘(ते अमृताः) वे अमरपनका उपभोग लेनेवाले देव (मर्त्येभ्यः अस्मभ्यं) मरणशील हम मानवोंको, (द्विषः अप बाधमानाः) द्वेष करनेवालोंको दूर मार भगाते हुए (शर्म यंसन्) सुख का प्रदान करें ।’

... ऊतये ... हवामहे । रथं न दुर्गात् ... विश्व-
स्मान्नो अंहसो निष्पिपतन ॥ (ऋ. १।१०६।१)

‘हम संरक्षणार्थ देवों तथा दिव्य दल बल को बुलाते हैं और जिस प्रकार बीहड़ स्थानमें से या दुर्गम जगह से रथको खींच बाहर निकालते हैं उसी तरह, हे देवो ! हमें समूचे पाप या कष्ट में से पूर्णतया बाहर निकाल हमारा बेडा पार कर दो ।’

... यूयं द्वेषांसि सनुतयुयोत ... अद्या च नो
मृळयत अपरं च ॥ (ऋ. २।२९।२)

‘तुम द्वेषों को गुप्तस्थानमें भेजकर हमसे दूर करो और आज तथा बाद में भी हमें सुख देते रहो ।’

यूयं नो स्वस्ति दधात । (ऋ. २।२९।३)

... देवा यूयमिदापयः स्थ ते मृळत नाधमानाय
मह्यम् ... मा युष्मावत्स्वापिषु श्रमिष्म ।

(ऋ. २।२९।४)

‘तुम हमारे कल्याण का प्रबंध करो; हे देवो ! तुमही सचमुच हमारे भास हो और ऐसे वे तुम याचना करनेवाले सुख को सुख दे दो, क्योंकि तुम्हारे जैसे भासों के मौजूद होनेपर हमें थकावट न होने पाय ।’

आरे पाशा आरे अधानि देवा । (ऋ. २।२९।५)

‘हे देवो ! फँदे और पाप हमसे दूर रहें ।’ अर्थात् कभी जालों तथा पापों के चँगुलमें हम न फँस जायें ।

यच्छन्तु नो मरुतः शर्म भद्रम् । (ऋ. ३।५४।२०)

‘वीर मरुत हमें कल्याणकारक सुखका प्रदान करें ।’

“अवन्तु नः । भरुतो मृळयन्तु नः ।

(ऋ. १।२३।१२)

‘वीर मरुत हमारी रक्षा करें और हमें सुख दें ।’

देवा नो...सदमिन् वृधे असन्...रक्षितारो दिवे दिवे । (ऋ. १।८९।१)

‘प्रतिदिन रक्षाका कार्य सुचारुरूप से चलाते हुए देव हमेशा हमारे संवर्धनार्थ चेष्टाशील रहें ।’

मनवः सूरचक्षसो विद्वे नो देवा अवसा गमन्निह

(ऋ. १।८९।७)

‘मननशील तथा विद्वानों के दृष्टिकोण को साथ रख-नेवाले सभी देव हमारे लिए संरक्षण की आयोजना बना-कर इधर पधरें ।’

देवानां सख्यमुप सेदिम्या वयं देवा न आयुः प्रतिरन्तु जीवसे । (ऋ. १।८९।२)

‘हम देवों की मित्रताको प्राप्त करें और हमारा जीवन अक्षुण्ण रूप से प्रचलित रहे इस लिए देव हमारी आयुष्य रेखा को बड़ा दें ।’

...विश्वा द्वेषांसि सनुतर्युयोत... (ऋ. १०।१००।९)

‘सभी द्वेषभावों को हमसे दूर करो ।’

आरे देवा द्वेषो अस्मद्युयोतन... (ऋ. १०।६३।१२)

‘हे देवो ! द्वेषभाव को हमसे हटा दो ।’

गोभिः प्याम यशसो जनेष्वा ।

सदा देवास इळया सचेमहि (ऋ. १०।६४।११)

‘हम गोधनसे युक्त होकर जनतामें यशस्वी बन जायँ और हे देवो ! हमेशा हम अन्न से युक्त रहें ।’

“उरुणः शर्म यच्छता स्वस्तये । (ऋ. १०।६३।१२)

हमारे हित के लिए विशाल सुख दे ढाको ।’

ते..अभयं शर्म यच्छत सुगा नः कर्तं सुपथा स्वस्तये । (ऋ. १०।६३।७)

ऐसे वे देवो ! तुम भयरहित सुख का प्रदान करो और भलाई हो जाय इस लिए हमारे लिए सुगम एवं सुन्दर मार्ग बना-दो अर्थात् हमें बीहड़ सड़कोंपर न चलना पड़े ।

मा प्र गाम पथो वयं .:

मान्तः स्थुर्नो अरातयः । (ऋ. १०।५७।१)

‘हम मार्ग छोड़कर दूर भटकते न चलें और हमारे शत्रुओं को अन्दर स्थान न मिले । अर्थात् हम मार्गभ्रष्ट न हों तथा शत्रु हमारे भीतर जगह न पासकें ऐसी व्यवस्था करनी चाहिए ।

विश्वे नो देवा अवसागमन्तु ।

विश्वमस्तु द्रविणं वाजो अस्मे । (ऋ. १०।३५।१३)

सभी देव संरक्षण की आयोजना साथ लेकर हमारे निकट पहुँच जायँ और समूचा द्रव्य एवं बल हमारे लिए रहे मा दुर्विद्वन्ना निर्ऋतिर्न ईशतः । (ऋ. १०।३६।२)

‘बुरे ज्ञानवाली पीडा हमपर शासन न करें ।’ ज्ञान का दुरुपयोग करनेवाली बुरी मनोवृत्तिका शासन या प्रभुत्व प्रस्थापित न होने पाय ।

अवन्तु नो अमृतासस्तुरासः । (ऋ. ५।७२।५)

‘अमर पनको प्राप्त हुए देव त्वरापूर्वक कार्य करनेवाले बनकर हमारी रक्षा करें ।

देवो देवः सुहयो भूतु मयं । मा नो माता पृथिवी दुर्मतौ धात् । (ऋ. ५।४२।१६)

‘मेरे लिए हर एक देव सुगमतापूर्वक बुलानेयोग्य बन जाय और हमें भूमाता दुर्बुद्धि में न रहें ।

सदा सुगाः पितुर्माँ अस्तु पन्था । (ऋ. ३।५४।२१)

‘मार्ग हमेशा सुख पूर्वक तथा अन्न युक्त रहें ।’ यह अभिलाषा तो यात्रियों एवं विदेशों में जानेवाले लोगोंके अन्तर्गतमें ही जागृत हुआ करती है और वैदिक कवि यात्रा करने के अभ्यस्त थे ऐसा स्पष्ट होता है ।

अरिष्टाः स्याम तन्वा सुवीराः । (अथर्व ५।३।५)

वयं सुषखायो भवेम तरन्तो विश्वा दुरिता स्याम । (ऋ. १०।३१।१)

‘हम लोग अच्छे वीर एवं अक्षीण और निर्दोष शरीर-वाले बनें, सभी दुराद्योंको लॉचते चकें ।’



दैवत-संहिता ।

[ऋग्यजुःसामथर्वणां संहितानां सर्वान् मन्त्रान् देवतानुसारेण संगृह्य निर्मिता ।]

१० विश्वे देवाः ।

॥१॥ (ऋ० १।३।७-९)

(१-३) मधुच्छन्दा वैश्वामित्रः । गायत्री ।

| | | | |
|------------------------|--------------------|--------------------------|-----|
| ओमांसश्चर्षणीधृतो | विश्वे देवास आ गत | । दाश्वांसो दाशुपः सुतम् | ७ |
| विश्वे देवासो अन्तरः | सुतमा गन्त तूर्णयः | । उस्ता इव स्वसराणि | ८ |
| विश्वे देवासो अस्त्रिध | एहिमायासो अद्रुहः | । मेधं जुपन्त वह्नयः | ९ ३ |

॥२॥ (ऋ० १।१४।१-१२)

(४-१८) मेघातिथिः काण्वः । गायत्री ।

| | | | |
|--------------------------|-------------------------|--------------------------|-------|
| ऐभिरग्ने दुवो गिरो | विश्वेभिः सोमपीतये | । देवेभिर्याहि यक्षि च | १ |
| आ त्वा कर्णा अहूपत | गृणन्ति विप्र ते धियः | । देवेभिरग्न आ गहि | २ ५ |
| इन्द्रवायू बृहस्पति | मित्राग्निं पूषणं भगम् | । आदिन्यान् मारुतं गृणन् | ३ |
| प्र वो भ्रियन्त इन्द्रवो | मत्सरा मादयिष्णवः | । द्रप्सा मध्वश्चमूपदः | ४ |
| ईळते त्वामवस्यवः | कर्णासो वृक्तबर्हिषः | । हविर्मेन्तो अरंकृतः | ५ |
| घृतपृष्ठा मनोयुजो | ये त्वा वहन्ति वह्नयः | । आ देवान्तसोमपीतये | ६ |
| तान् यजत्राँ ऋतावृधो | ऽग्ने पत्नीवतस्कृधि | । मध्वः सुजिह्व पायय | ७ १० |
| ये यजत्रा य ईड्या | स्ते ते पिबन्तु जिह्वया | । मधोरग्ने वपत्कृति | ८ |
| आर्कीं सूर्यस्य रोचनाद् | विश्वान् देवाँ उपवुधः | । विप्रो होतेह वक्षति | ९ |
| विश्वेभिः सोम्यं मध्व | ग्न इन्द्रेण वायुना | । पिबा मित्रस्य धामभिः | १० |
| त्वं होता मनुर्हितो | ऽग्ने यज्ञेषु सीदसि | । सेमं नो अध्वरं यज | ११ |
| युक्ष्वा ह्यरुषी रथे | हरितो देव रोहितः | । तामिर्देवाँ इहा वह | १२ १५ |

* ऋ० १,३,७=वा० य० ७,३३ ।

+ ऋ० १,१४,३=वा० य० ३३,४५ ।

दै० [विश्वे देवाः] १

॥३॥ (ऋ० १।२३।१०-१२)

विश्वान् देवान् हवामहे मरुतः सोमपीतये । उग्रा हि पृश्निमातरः १०
 जयतामिव तन्यतु—मरुतामेति धृष्णुया । यच्छुभं याथना नरः ११
 हस्काराद् विद्युतस्पर्शतो जाता अवनतु नः । मरुतो मूळयन्तु नः १२

॥४॥ (ऋ० १।८९।१-१०)×

(१९-३७) गोतमो राहूगणः । १-५, ७ जगती; ६ विराट्-स्थाना; ८-१० त्रिष्टुप् ।

आ नो भद्राः क्रतवो यन्तु विश्वतो ऽदब्धासो अपरीतास उद्भिदः ।
 देवा नो यथा सदमिद् वृधे असन्नायुवो रक्षितारो दिवेदिवे १
 देवानो भद्रा सुमतिर्ऋजूयतां देवानो रातिरभि नो नि वर्तताम् ।
 देवानो सुख्यमुप सेदिमा वयं देवा न आयुः प्र तिरन्तु जीवसे २ १०
 तान् पूर्वया निविदा हूमहे वयं भगं मित्रमदिति दक्षमस्त्रिधम् ।
 अर्यमणं वरुणं सोममश्विना सरस्वती नः सुभगा मयस्करत् ३
 तन्नो वातो मयोभु वातु भेषजं तन्माता पृथिवी तत् पिता द्यौः ।
 तद् ग्रावाणः सोमसुतो मयोभुवस्तदश्विना शृणुतं धिष्ण्या युवम् ४
 तमीशानं जगतस्तस्युपस्पतिं धियंजिन्वमवसे हूमहे वयम् ।
 पूषा नो यथा वेदसामसद् वृधे रक्षिता पायुरदब्धः स्वस्तये ५
 स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः ।
 स्वस्ति नः प्रताक्ष्यो अरिष्टनेमिः स्वस्ति नो बृहस्पतिर्दधातु ६
 पृषदश्वा मरुतः पृश्निमातरः शुभंयावानो विदथेषु जग्मयः ।
 अग्निजिह्वा मनवः सूरचक्षसो विश्वे नो देवा अवसा गमन्निह ७ १५
 भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवा भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः ।
 स्थिरैरङ्गैस्तुष्टुवांसस्तनूभिर्व्यशेम देवहितं यदायुः ८
 शतमिन्नु शरदो अन्ति देवा यत्रा नश्चक्रा जरसे तनूनाम् ।
 पुत्राभ्यो यत्र पितरो भवन्ति मा नो मध्या रीरिषतायुर्गन्तोः ९
 अदिनिद्यौरदितिगन्तरिक्षमदितिर्माता स पिता स पुत्रः ।
 विश्वे देवा अदितिः पञ्च जना अदितिर्जातमदितिर्जानित्वम् +१० १८

॥५॥ (वा० १।९०।१-९)* गत्यत्री; ९ अनुष्टुप् ।

| | | |
|--|---|----|
| ऋजुनीती नो वरुणो मित्रो नयतु विद्वान् । अर्यमा देवैः सजोषाः | १ | |
| ते हि वस्वो वसवानास्ते अप्रमूरा महौभिः । व्रता रक्षन्ते विश्वाहा | २ | ३० |
| ते अस्मभ्यं शर्म यंसञ्जमृता मर्त्येभ्यः । बाधमाना अप द्विपः | ३ | |
| वि नः पथः सुविताय चियन्त्विन्द्रो मरुतः । पूषा भगो वन्द्यांसः | ४ | |
| उत नो धियो गोअग्राः पूषन् विष्णवेवैयाः । कर्ता नः स्वस्तिमर्तः | ५ | |
| मधु वाता ऋतायते मधु क्षरन्ति सिन्धवः । माध्वीर्नः सन्त्वोषधीः | ६ | |
| मधु नक्तमुतोषसो मधुमत् पार्थिवं रजः । मधु द्यौरस्तु नः पिता | ७ | ३५ |
| मधुमान्नो वनस्पतिर्मधुमा अस्तु सूर्यः । माध्वीर्गात्रो भवन्तु नः | ८ | |
| शं नो मित्रः शं वरुणः शं नो भवत्वर्यमा । शं न इन्द्रो बृहस्पतिः शं नो विष्णुरुक्रुमः ९ | | |

॥६॥ (ऋ० १।१०।१-१९)

(३८-५६) त्रित आप्त्यः, कुत्स आङ्गिरसो वा । पश्वितः ८ यवमध्या महावृद्धती; १९ त्रिष्टुप् ।

| | | |
|--|----|----|
| चन्द्रमा अप्सवन्तरा सुपर्णो धावते दिवि । | | |
| न वो हिरण्यनेमयः पदं विन्दन्ति विद्युतो वित्तं मे अस्य रोदसी | +१ | |
| अर्थमिद् वा उ अर्थिन आ जाया युवते पतिम् । | | |
| तुज्जाते वृष्णं पर्यः परिदाय रसं दुहे वित्तं मे अस्य रोदसी | २ | |
| मो षु देवा अदः स्वर्गं—स्व पादि दिवस्परि । | | |
| मा सोम्यस्यं शंभुवः शूने भूम कदा चन वित्तं मे अस्य रोदसी | ३ | ४० |
| यज्ञं पृच्छाम्यवमं स तद् दूतो वि वोचति । | | |
| क्व ऋतं पूर्य गतं कस्तद् विभर्ति नूतनो वित्तं मे अस्य रोदसी | ४ | |
| अमी ये देवाः स्यनं त्रिष्वा रोचने दिवः । | | |
| कद् व ऋतं कदनृतं क्व प्रत्ना व आहुतिर्वित्तं मे अस्य रोदसी | ५ | |
| कद् व ऋतस्य धर्णासि कद् वरुणस्य चक्षणम् । | | |
| कर्दर्यम्णो महस्पथाऽति कामेम दुदथो वित्तं मे अस्य रोदसी | ६ | |
| अहं सो अस्मि यः पुरा सुते वदामि कार्त्तं चित् । | | |
| तं मा व्यन्त्याध्वोऽवृको न तृष्णजं मृगं वित्तं मे अस्य रोदसी | ७ | |
| सं मा तपन्त्यभितः सपत्नीरिव पश्येवः । | | |
| मूषो न शिश्रा व्यदन्ति माध्यः स्तोतारं ते शतक्रतो वित्तं मे अस्य रोदसी ८ | ४५ | |

| | |
|---|-------|
| अमी ये सप्त रश्मयस्तत्रा मे नाभिरातता । | |
| त्रितस्तद् वेदाप्त्यः स जामित्वाय रेभति वित्तं मे अस्य रोदसी | ९ |
| अमी ये पञ्चोक्षणो मध्ये तस्थुर्महो दिवः । | |
| देवत्रा नु प्रवाच्यं सध्रीचीना नि वावृतुर्वित्तं मे अस्य रोदसी | १० |
| सुपर्णा एत आसते मध्ये आरोधने दिवः । | |
| ते संधान्ति पथो वृकं तरन्तं यद्वतीरपो वित्तं मे अस्य रोदसी | ११ |
| नव्यं तदुक्थ्यं हितं देवासः सुप्रवाचनम् । | |
| ऋतमर्पन्ति सिन्धवः सत्यं तातान् सूर्यो वित्तं मे अस्य रोदसी | १२ |
| अग्रे तव त्यदुक्थ्यं देवेष्वस्त्याप्यम् । | |
| स नः सत्तो मनुष्वदा देवान् यक्षि विदुष्टरो वित्तं मे अस्य रोदसी | १३ ५० |
| सत्तो होता मनुष्वदा देवाँ अच्छा विदुष्टरः । | |
| अग्निर्हव्या सुषूदति देवो देवेषु मेधिरो वित्तं मे अस्य रोदसी | १४ |
| ब्रह्मा कृणोति वरुणो गातुविदुं तमीमहे । | |
| व्यूर्णोति हृदा मतिं नव्यो जायतामृतं वित्तं मे अस्य रोदसी | १५ |
| असौ यः पन्थां आदित्यो दिवि प्रवाच्यं कृतः । | |
| न स देवा अतिक्रमे तं मर्तासो न पश्यथ वित्तं मे अस्य रोदसी | १६ |
| त्रितः रूपेऽवहितो देवान् हवत ऊतये । | |
| तच्छुश्राव बृहस्पतिः कृष्वन्नहरणादुरु वित्तं मे अस्य रोदसी | १७ |
| अरुणो मा सकृद् वृकः पथा यन्तं ददर्श हि । | |
| उज्जिहीते निचाय्या तष्टैव पृष्ठ्यामयी वित्तं मे अस्य रोदसी | १८ ५५ |
| एनाङ्गपेण वयमिन्द्रवन्तो ऽभि प्याम वृजने सर्ववीराः । | |
| तन्नो मित्रो वरुणो मामहन्तामदितिः सिन्धुः पृथिवी उत द्यौः | १९ |

॥७॥ (ऋ० १।१०६।१-७)

(५७-६६) कुत्स आङ्गिरसः । जगती; ७ त्रिष्टुप् ।

| | |
|--|----|
| इन्द्रं मित्रं वरुणमग्निमतये मारुतं शर्षो अदितिं हवामहे । | |
| रथं न दुर्गाद् वसवः सुदानवो विश्वस्मान्नो अंहमो निष्पिपर्तन | १ |
| त आदित्या आ गता सर्वतातये भूत देवा वृत्रतूर्येषु शंभुवः । रथं न दुर्गाद् ० २ | |
| अवन्तु नः पितरः सुप्रवाचना उत देवी देवपुत्रे ऋतावृधा । रथं न दुर्गाद् ० ३ | ५९ |

नराशंसं वाजिनं वाजयन्निह क्षयद्वीरं पूषणं सुम्नैरीमहे । रथं न दुर्गाद् ० ४ ६०
 बृहस्पते सदमिन्नः सुगं कृधि शं योर्यत् ते मनुद्वितं तदीमहे । रथं न दुर्गाद् ० ५
 इन्द्रं कुत्सो बृत्रहणं शचीपतिं काटे निबाल्ह ऋषिरह्मदुतये । रथं न दुर्गाद् ० ६
 देवैर्नो देव्यदितिर्नि पातु देवस्त्राता त्रायतामप्रयुच्छन् ।
 तन्नो मित्रो वरुणो मामहन्ता—मदितिः सिन्धुः पृथिवी उत द्यौः ७

॥८॥ (ऋ० १।१०७।१-३) त्रिष्टुप् ।

यज्ञो देवानां प्रत्येति सुम्न—मादित्यासो भवता मृळयन्तः ।
 आ वोऽर्वाचीं सुमतिर्वृत्त्या—दुहोश्चिद्या वरिग्रोवित्तरासत् १
 उप नो देवा अवसा गमु—न्त्वङ्गिरसां सामभिः स्तुयमानाः ।
 इन्द्रं इन्द्रियैर्मरुतो मरुद्भि—रादित्यैर्नो अदितिः शर्म यंसत् २ ६५
 तन्न इन्द्रस्तद् वरुणस्तदग्नि—स्तदर्यमा तत् संविता चनो धात् ।
 तन्नो मित्रो वरुणो मामहन्ता—मादितिः सिन्धुः पृथिवी उत द्यौः ३

॥९॥ (ऋ० १।१२१।१-१५)

(६७-९६) कक्षीवाज् देर्घतमस् औशिजः । (इन्द्रो वा) । त्रिष्टुप् ।

कदित्था नूः पात्रं देवयतां श्रवद् गिरो अङ्गिरसां तुरण्यन् ।
 प्र यदानद्विश आ हर्म्यस्यो—रु क्रंसते अध्वरे यजत्रः १
 स्तम्भीद्ध द्यां स धरुणं प्रपाय—दृभुर्वाजाय द्रविणं नरो गोः ।
 अनु स्वजां महिपश्चक्षत त्रां मेनामश्चग्य परि मातरं गोः २
 नक्षद्वर्मरुणीः पूर्य राट् तुरो विशामङ्गिरसामनु द्यून् ।
 तक्षद् वज्रं नियुतं तस्तम्भद् द्यां चतुष्पदे नर्याय द्विपादै ३
 अस्य मदे स्वर्यं दा कृताया—पीवृतमुस्त्रियाणामनीकम् ।
 यद्ध प्रसर्गं त्रिककुम्भिर्बर्त—दप दुहो मानुषस्य दुरो वः ४ ७०
 तुभ्यं पयो यत् पितरावनीतां राधः सुरेतस्तुरणं भुरण्यू ।
 शुचि यत् ते रेक्ण आयजन्त सचर्दुघायाः पर्य उस्त्रियायाः ५
 अध प्र जज्ञे तरणिर्ममत्तु प्र रोच्यस्या उपसो न सूरः ।
 इन्दुर्येभिराष्ट स्वेदुहव्यैः सुवेणं सिञ्चञ्जरणाभि धाम ६
 स्विध्मा यद् वनधितिरपस्यात् सूरौ अध्वरे परि रोधना गोः ।
 यद्ध प्रभासि कृत्व्यां अनु द्यू—ननर्विशे पश्चिषे तुराय ७ ७३

| | |
|---|-------|
| अष्टा महो दिव आदो हरीं इह द्युम्नासाहमाभि यौधान उत्सम् । | |
| हरिं यत् ते मन्दिनं दुक्षन् वृधे गोरभसमद्रिभिर्वाताप्यम् | ८ |
| त्वमायसं प्रति वर्तयो गो—दिवो अश्मानमुपनीतमृभ्वा । | |
| कुत्साय यत्र पुरुहूत वन्व—ञ्जुष्णमनन्तैः परियासि वधैः | ९ ७५ |
| पुरा यत् सूरस्तमसो अपीति—स्तमद्रिवः फलिंगं हेतिमस्य । | |
| शुष्णस्य चित् परिहितं यदोजो दिवस्परि सुग्रथितं तदादः | १० |
| अनु त्वा मही पार्जसी अचक्रे द्यावाक्षामा मदतामिन्द्र कर्मन् । | |
| त्वं वृत्रमाशयानं सिरासु महो वज्रेण सिष्वपो वराहुम् | ११ |
| त्वमिन्द्र नयो याँ अवा नृन् तिष्ठा वातस्थ सुयुजो वहिष्ठान् । | |
| यं ते काव्य उशना मन्दिनं दाद् वृत्रहणं पार्यं ततश्च वज्रम् | १२ |
| त्वं सूर्यो हरितो रामयो नृन् भरच्चक्रमेतशो नायमिन्द्र । | |
| प्रास्यं पारं नवति नाव्यानामपि कर्तमवर्तयोऽयं ज्युन् | १३ |
| त्वं नो अस्या इन्द्र दुर्हणायाः पाहि वज्रिवो दुरितादभीके । | |
| प्र नो वाजान् रथयोऽङ्ग अश्वबुध्या—निषे यन्धि श्रवसे सुनृतायै | १४ ८० |
| मा सा ते अस्सत् सुमतिर्वि देसद् वाजप्रमहः समिषो वरन्त । | |
| आ नो भज मघवन् गोष्वर्यो मंहिष्ठास्ते सधमादः स्याम | १५ |

॥१०॥ (क० १।१२२।१-१५) त्रिष्टुप्; ५-६ विराड् रूपः ।

| | |
|--|------|
| प्र वः पान्तं रघुमन्यवोऽन्धो यज्ञं रुद्राय मीळहुषे भरध्वम् । | |
| दिवो अस्तोष्यसुरस्य वीरै—रिपुध्येवं मरुतो रोदस्योः | १ |
| पत्नीव पूर्वहूतिं वावृधध्या उपासानक्ता पुरुधा विदाने । | |
| स्तरीनात्कं व्युतं वसाना सूर्यस्य श्रिया सुदृशी हिरण्यैः | २ |
| ममत्तु नः परिज्मा वसर्हा ममत्तु वातो अपां वृषण्वान् । | |
| शिशीतामिन्द्रापर्वता युवं न—स्तन्नो विश्वे वरिवस्यन्तु देवाः | ३ |
| उत त्या मे यशसा श्वेतनायै व्यन्ता पान्नांशिजो हुवध्यै । | |
| प्र वो नपातमपां कृणुध्वं प्र मातरा रास्पिनस्यायोः | ४ |
| आ वो रुवण्युमौशिजो हुवध्यै घोषेव शंसमर्जुनस्य नशे । | |
| प्र वः पूष्णे दावन् आँ अच्छा वोचेय वसुतातिमग्नेः | ५ ८६ |

| | |
|---|-------|
| श्रुतं मे मित्रावरुणा हवेमो—त श्रुतं सदेने विश्वतः सीम् । | |
| श्रोतुं नः श्रोतुरातिः सुश्रोतुः सुक्षेत्रा सिन्धुराद्भिः | ६ |
| स्तुषे सा वा वरुण मित्र राति—र्गवा अता पृक्षयामेषु पञ्जे । | |
| श्रुतरथे प्रियरथे दधानाः सद्यः पुष्टिं निरुन्धानासौ अगमन् | ७ |
| अस्य स्तुषे महिमघस्य राधः सचा सनेम नहुषः सुवीराः । | |
| जनो यः पञ्जेभ्यो वाजिनीवा—नश्वावतो रथिनो मह्यं सूरिः | ८ |
| जनो यो मित्रावरुणावभिधु—गपो न वा सुनोत्यक्षण्याधुक् । | |
| स्वयं स यक्ष्मं हृदये नि धत्त आप यदी होत्राभिर्क्रतावा | ९ १० |
| स ब्राधतो नहुषो दंसुजतः शर्धस्तरो नरां गूर्तश्रवाः । | |
| विसृष्टरातिर्याति बाळहसृत्वा विश्वांसु पृतसु सवमिच्छूरः | १० |
| अधु गमन्ता नहुषो हवै सूरः श्रोता राजानो अमृतस्य मन्द्राः । | |
| नभोजुवो यन्निरवस्य राधः प्रशस्तये महिना रथवते | ११ |
| एतं शर्धं धाम यस्य सूरै—रित्यवोचन दशतयस्य नंशै । | |
| द्युम्नानि येषु वसुताती रारन् विश्वे सन्वन्तु प्रभुथेषु वाजम् | १२ |
| मन्दांमहे दशतयस्य धासे—द्विर्यत् पञ्च बिभ्रतो यन्त्यन्ना । | |
| किमिष्टाश्च इष्टरश्मिरेत ईशानासस्तरुप ऋजते नृन् | १३ |
| हिरण्यकर्ण मणिग्रीवमर्ण—स्तन्नो विश्वे वरिवस्यन्तु देवाः । | |
| अर्यो गिरः सद्य आ जग्मुषीरो—स्त्राश्वाकन्तुभयेष्वसे | १४ १५ |
| चत्वारो मा मशर्शारस्य शिश्व—स्त्रयो राज्ञ आयवसस्य जिष्णोः । | |
| रथो वा मित्रावरुणा दीर्घाप्साः स्यूमगभस्तिः सूरौ नाद्यौत् | १५ |

॥११॥ (ऋ० १।१३९।१, ११)

(९७-९८) परुच्छेपो दैवोदासिः । १ अत्यष्टिः, ११ त्रिष्टुप् :*

अस्तु श्रीषट् पुरो अग्निं धिया दध आ नु तच्छर्धो दिव्यं वृणीमहे
इन्द्रवायू वृणीमहे ।

यद्धं क्राणा विवस्वति नामा संदायि नव्यसी ।

अधु प्र स्र न उप यन्तु धीतयो देवाँ अच्छा न धीतयः १

ये देवासो दिव्येकादश स्थ पृथिव्यः मध्येकादश स्थ ।

अप्सुक्षितो महिनैकादश स्थ ते देवासो यज्ञमिमं जुषध्वम् ११ १८

॥१२॥ (क्र० १।१६४।१-४१)

(९९-१३९) दीर्घतमा औचध्यः । त्रिंष्टुप्; १२, १५, २३, २९, ३६, ४१ जगती ।

| | |
|--|--------|
| अस्य वामस्य पलितस्य होतुस्तस्य भ्राता मध्यमो अस्त्यश्वः । | |
| तृतीयो भ्राता घृतपृष्ठो अस्यात्रापश्यं विश्वपतिं सप्तपुत्रम् | १ |
| सप्त युञ्जन्ति रथमेकचक्रमेको अश्वो वहति सप्तनामा । | |
| त्रिनाभिं चक्रमजरमनर्वं यत्रेमा विश्वा भुवनार्धिं तस्थुः | २ १०० |
| इमं रथमधि ये सप्त तस्थुः सप्तचक्रं सप्त वहन्त्यश्वाः । | |
| सप्त स्वसारो अभि सं नवन्ते यत्र गवां निहिता सप्त नाम | ३ |
| को ददर्श प्रथमं जायमानमस्थन्वन्तं यदनस्था विभर्ति । | |
| भूम्या असुरसृगात्मा कं स्वित् को विद्वांसमुप गात् प्रष्टुमेतत् | ४ |
| पाकः पृच्छामि मनसाविजानन् देवानामेना निहिता पदानि । | |
| वत्से वृष्कयेऽधि सप्त तन्तून् तत्तिरे कवय ओतवा उ | ५ |
| अचिकित्वाश्चिकितुषश्चिदत्र कवीन् पृच्छामि विज्ञाने न विद्वान् । | |
| वि वस्तस्तम्भ षळिमा रजांस्यजस्य रूपे किमपि स्विदेकम् | ६ |
| इह ब्रवीतु य ईमङ्ग वेदास्य वामस्य निहितं पदं वेः । | |
| शीर्ष्णः क्षीरं दुहते गावो अस्य ववि वगाना उदकं पदापुः | ७ १०५ |
| माता पितरमृत आ बभाज धीत्यग्रे मनसा सं हि जग्मे । | |
| सा बीभत्सुर्गर्भरसा निविद्धा नमस्वन्त इदुपवाकमीयुः | ८ |
| मुक्ता माताऽऽसीद् धुरि दक्षिणाया अतिष्ठद् गर्भो वृजनीष्वन्तः । | |
| अमीमेद् वत्सो अनु गामपश्यद् विश्वरूप्यं त्रिषु योजनेषु | ९ |
| तिस्रो मातृस्त्रीन् पितृन् बिभ्रदेकं ऊर्ध्वस्तस्थौ नेमव ग्लापयन्ति । | |
| मन्त्रयन्ते दिवो अमुष्यं पृष्ठे विश्वविदं वाचमविश्वमिन्वाम् | १० |
| द्वादशारं नहि तज्जराय वर्वति चक्रं परि द्यामृतस्य । | |
| आ पुत्रा अग्रे मिथुनासो अत्र सप्त शतानि विशतिश्च तस्थुः | ११ |
| पञ्चपादं पितरं द्वादशाकृतिं दिव आहुः परे अर्धे पुरीषिणम् । | |
| अथेमे अन्य उपरे विचक्षणं सप्तचक्रे पळर आहुरपितम् | १२ |
| पञ्चारे चक्रे परिवर्तमाने तस्मिन्ना तस्थुर्बुवनानि विश्वा । | |
| तस्य नाक्षस्तप्यते भूरिभारः सनादेव न शीर्यते सनाभिः | १३ १११ |

| | |
|--|--------|
| सनेमि चक्रमजरं वि वाधृत उत्तानायां दश युक्ता वहन्ति । | |
| सूर्यस्य चक्षु रजसैत्यावृतं तस्मिन्नार्पिता भुवनानि विश्वा | १४ |
| साकंजानां सप्तथमाहुरेकजं षळिद् यमा ऋषयो देवजा इति । | |
| तेषामिष्टानि विहितानि धामशः स्थात्रे रैजन्ते विकृतानि रूपशः | १५ |
| स्त्रियः सतीस्तां उ मे पुंस आहुः पश्यदक्षणात्र वि चैतदुन्धः । | |
| कविर्यः पुत्रः स ईमा चिकेत यस्ता विजानात् स पितुष्पितासत् | १६ |
| अवः परेण पर एनावरेण पदा वत्सं बिभ्रती गौरुदस्थात् । | |
| सा कद्रीची कं स्विदर्थं परागात् क्व स्वि सूते नहि यूथे अन्तः | १७ ११५ |
| अवः परेण पितरं यो अस्या—नुवेद पर एनावरेण । | |
| कवीयमानः क इह प्र वोचद् देवं मनः कुतो अधि प्रजातम् | १८ |
| ये अर्वाश्चस्तां उ पराच आहु—र्ये पराश्चस्तां उ अर्वाच आहुः । | |
| इन्द्रश्च या चक्रथुः सोम तानि धुरा न युक्ता रजसो वहन्ति | १९ |
| द्वा सुपर्णा सयुजा सखाया समानं वृक्षं परिं षस्वजाते । | |
| तयोरन्यः पिप्पलं स्वाद्वत्त्यनश्नन्नन्यौ अभि चाकशीति | २० |
| यत्रा सुपर्णा अमृतस्य भाग—मनिमेषं विदथाभिस्वरन्ति । | |
| इनो विश्वस्य भुवनस्य गोपाः स मा धीरः पाकमत्रा विवेश | २१ |
| यस्मिन् वृक्षे मध्वदः सुपर्णा निविशन्ते सुवते चाधि विश्वे । | |
| तस्येदाहुः पिप्पलं स्वाद्वये तन्नोन्नशद्यः पितरं न वेद | २२ १२० |
| यद् गायत्रे अधि गायत्रमाहितं त्रैष्टुभाद् वा त्रैष्टुभं निरतक्षत । | |
| यद् वा जगज्जगत्याहितं पदं य इत् तद् विदुस्ते अमृतत्वमानशुः | २३ |
| गायत्रेण प्रति मिमीते अर्क—मर्केण साम त्रैष्टुभेन वाकम् । | |
| वाकेन वाकं द्विपदा चतुष्पदा ऽक्षरेण मिमते सप्त वाणीः | २४ |
| जगता सिन्धुं दिव्यस्तभायद् रथंतरे सूर्यं पर्यपश्यत् । | |
| गायत्रस्य समिधास्तिस्त्र आहु—स्ततो मृहा प्र रिरिचे महित्वा | २५ |
| उप ह्वये सुदुर्घा धेनुमेतां सुहस्तां गोधुगुत दोहदेनाम् । | |
| श्रेष्ठं सवं सविता साविषन्नो ऽभीद्धो घर्मस्तदु षु प्र वोचम् | २६ |
| हिङ्कण्वती वसुपत्नी वसूनां वत्समिच्छन्ती मनसाभ्यागात् । | |
| दुहामक्षिभ्यां पयो अघ्नयेयं सा वर्धतां महते सौमगाय | २७ १२५ |

| | |
|---|--------|
| गौरमीमेदनु वत्सं मिषन्तं मूर्धानं हिङ्ङकृणोन्मातवा उ । | |
| सृकाणं घर्ममभि वावशाना मिमाति मायुं पयते पयोभिः | २८ १२६ |
| अयं स शिङ्क्ते येन गौरभीवृता मिमाति मायुं ध्वसनावधि श्रिता । | |
| सा चित्तिभिर्नि हि चकार मर्त्यं विद्युद् भवन्ती प्रति वत्रिमौहत | २९ |
| अनच्छये तुरगात् जीव—मेजद् ध्रुवं मध्य आ पस्त्यानाम् । | |
| जीवो मृतस्य चरति स्वधाभि—र्मर्त्यो मर्त्येना सयौनिः | ३० |
| अपश्यं गोपामनिपद्यमान—मा च परा च पृथिभिश्चरन्तम् । | |
| म सघ्रीचीः स विषूचीर्वसान् आ वरीवर्ति भुवनेष्वन्तः | ३१ |
| य ई चकार न सो अस्य वेदु य ई दुदर्श हिरुगिन्नु तस्मात् । | |
| स मातुर्योना परिवीतो अन्त—बहुप्रजा निर्कृतिमा विवेश | ३२ १३० |
| द्यौर्मै पिता जनिता नाभिरत्र बन्धुर्मै माता पृथिवी महीयम् । | |
| उत्तानयोश्चम्वोऽयोनिरन्त—रत्रा पिता दुहितुर्गर्भमाधात् | ३३ |
| पृच्छामि त्वा परमन्तं पृथिव्याः पृच्छामि यत्र भुवनस्य नाभिः । | |
| पृच्छामि त्वा वृष्णो अश्वस्य रेतः पृच्छामि वाचः परमं व्योम | ३४ |
| इयं वेदिः परो अन्तः पृथिव्या अयं यज्ञो भुवनस्य नाभिः । | |
| अयं सोमो वृष्णो अश्वस्य रेतो ब्रह्मायं वाचः परमं व्योम | ३५ |
| सप्तार्धगर्भा भुवनस्य रेतो विष्णोस्तिष्ठन्ति प्रदिशा विधर्मणि । | |
| ते धीतिभिर्मनसा ते विपश्चितः परिभुवः परि भवन्ति विश्वतः | ३६ |
| न वि जानामि यदिवेदमस्मि निण्यः संनद्धो मनसा चरामि । | |
| यदा मार्गन् प्रथमजा क्रतस्या—दिद् वाचो अश्रुवे भागमस्याः | ३७ १३५ |
| अपाङ् प्राड्तेति स्वधया गृभीतो ऽर्मर्त्यो मर्त्येना सयौनिः । | |
| ता शश्वन्ता विपूचीना वियन्ता न्योन्यं चिक्युर्न नि चिक्युरन्यम् | ३८ |
| क्रुचो अक्षरं परमं व्योमन् यस्मिन् देवा अधि विश्वे निषेदुः । | |
| यस्तन्न वेदु किमुचा करिष्यति य इत् तद् विदुस्त इमे समासते | ३९ |
| सूयवसाद् भगवती हि भूया अथो वयं भगवन्तः स्याम । | |
| अद्धि तृणमघ्न्ये विश्वदानीं पिबे शुद्धमुदकमाचरन्ती | ४० |
| गौरीर्ममाय सलिलानि तक्ष—त्येकपदी द्विपदी सा चतुष्पदी । | |
| अष्टापदी नवपदी बभूवुषी सहस्राक्षरा परमे व्योमन् | ४१ १३९ |

॥१३॥ (ऋ० १।१८दा१-११)

(१४०-१५०) अगस्त्यो मैत्रावरुणिः । त्रिष्टुप् ।

| | |
|--|-------|
| आ न इळाभिर्विदथे सुशस्ति विश्वानरः सविता देव एतु । | |
| अपि यथा युवानो मत्संथा नो विश्वं जगदभिषित्वे मनीषा | १ १४० |
| आ नो विश्व आस्क्रा गमन्तु देवा मित्रो अर्यमा वरुणः सजोषाः । | |
| भुवन् यथा नो विश्वे वृधासः करन्सुषाहा विशुरं न शवः | २ |
| प्रेष्ठे वो अतिथि गृणीषे ऽग्निं शस्तिभिस्तुर्वणिः सजोषाः । | |
| असद् यथा नो वरुणः सुक्रीतिरिषथ पर्षदरिगूर्तः सूरिः | ३ |
| उप व एषे नमसा जिगीषोपासानक्ता सुदुर्ध्व धेनुः । | |
| समाने अहेन् विभिमानो अर्कं विषुरूपे पर्यसि सस्मिन्नधन् | ४ |
| उत नोऽहिर्बुध्न्योऽयं मयस्कः शिशुं न पिप्युषीव वेति सिन्धुः । | |
| येन नपातमपां जुनाम मनोजुवो वृषणो यं वहन्ति | ५ |
| उत न ई त्वष्टा गन्त्वच्छा स्मत् सूरिभिरभिषित्वे सजोषाः । | |
| आ वृत्रहेन्द्रश्चर्षणिप्रास्तुविष्टमो नरां न इह गम्याः | ६ १४५ |
| उत न ई मतयोऽश्वयोगाः शिशुं न गावस्तरुणं रिहन्ति । | |
| तर्मां गिरो जनयो न पत्नीः सुरभिष्टमं नरां नमन्त | ७ |
| उत न ई मरुतो वृद्धसेनाः स्रग् रोदसी समनसः सदन्तु । | |
| पर्षदश्वासोऽवनयो न रथा रिशादसो मित्रयुजो न देवाः | ८ |
| प्र नु यदेषां महिना चिकित्रे प्र युञ्जते प्रयुजस्ते सुवृक्ति । | |
| अध यदेषां मुदिने न शरु विश्वमेरिणं प्रपायन्त सेनाः | ९ |
| प्रो अश्विनाववसे कृणुष्वं प्र पूषणं स्वतवमो हि सन्ति । | |
| अद्रेषो विष्णुर्वीर्यं ऋभुक्षा अच्छा सुम्नाय ववृतीय देवान् | १० |
| इयं सा वो असे दीधितिर्यजत्रा अपिप्राणी च सदेनी च भूयाः । | |
| नि या देवेषु यतते वसूयुर्विद्यामेषं वृजनं जीरदानुम् | ११ |

॥१४॥ (ऋ० २।२९।१-७)

(१५१-५७) कूर्मो गार्त्समदो, गृत्समदो वा । त्रिष्टुप् ।

| | |
|--|-------|
| धृतव्रता आदित्या इषिरा आरे मत् कर्त रहस्रिवागः । | |
| शृण्वतो वो वरुण मित्र देवा भद्रस्य विद्रा अवसे हुवे वः | १ १५१ |

| | |
|---|------------------------------------|
| यूयं देवाः प्रमतिर्युयमोजो यूयं द्वेषांसि सनुतर्धुयोत । अभिक्षत्तारो अभि च क्षमध्व—मद्या च नो मृळयतापरं च किमु नु वः कृणवापरेण किं सनेन वसव आप्येन । यूयं नो मित्रावरुणादिते च स्वस्तिमिन्द्रामरुतो दधात द्वये देवा यूयमिदापर्यः स्थ ते मृळत नाधमानाय मह्यम् । मा वो रथो मध्यमवाळते भू—न्मा युष्मावत्स्वापिषु श्रमिष्म प्र व एको मिमय भूर्यागो यन्मा पितेव कितवं शशास । आरे पाशा आरे अधानि देवा मा मार्धि पुत्रे विमिव ग्रभीष्ट अर्वाञ्चो अद्या भवता यजत्रा आ वो हार्दि भयमानो व्ययेयम् । त्राध्वं नो देवा निजुरो वृकस्य त्राध्वं कर्तादवपदो यजत्राः माहं मघोनो वरुण प्रियस्य भूरिदान आ विदुं शूनमापेः । मा रायो राजन्त्सुयमादव स्थां बृहद् वदेम विदथे सुवीराः | २ १५९ ३ ४ ५ १५५ ६ ७ |
|---|------------------------------------|

॥१५॥ (ऋ० २।३।१-७)

(१५८-६७) गृत्समद (आङ्गिरसः शौनहोत्रः पश्चाद्) भार्गवः शौनकः । जगती, ७ त्रिष्टुप् ।

| | |
|--|---|
| अस्माकं मित्रावरुणावतं रथ—मादित्यै रुद्रैर्वसुभिः सचाभुवा । प्र यद् वयो न पमन्वसन्नस्परि श्रवस्यवो हवीवन्तो वनर्षदः अध स्मा न उदवता सजोषसो रथं देवासो अभि विक्षु वाजयुम् । यदाशवः पद्याभिस्तित्रतो रजः पृथिव्याः सानौ जङ्घनन्त पाणिभिः उत स्य न इन्द्रो विश्वचर्षणि—दिवः शंभेन मारुतेन सुक्रतुः । अनु नु स्थात्यवृकाभिरूतिभी रथं महे सनये वाजसातये उत स्य देवो भुवनस्य सक्षणि—स्त्वष्टा ग्राभिः सजोषा जूजुवद् रथम् । इळा भगो बृहद्विवोत रोदसी पूषा पुरंधिरश्विनावधा पती उत त्ये देवी सुभगे मिथूदृशो—षासानक्ता जगतामपीजुवा । स्तुषे यद् वा पृथिवि नव्यसा वचः स्थातुश्च वयस्त्रिवया उपस्तिरे उत वः शंसमुशिजामिव इम—स्यर्हिर्बुध्न्योऽज एकपादुत । त्रित ऋभुक्षाः सविता चनो दधे ऽपां नपादाशुहेमा धिया शमि एता वो वश्म्युद्यता यजत्रा अतक्षन्नायवो नव्यसे सम् । श्रवस्यवो वाजं चक्रानाः समिर्न रथ्यो अह धीतिमश्याः | १ २ ३ १६० ४ ५ ६ ७ १६४ |
|--|---|

॥१६॥ (ऋ० २।४१।१३-१५) गायत्री ।

| | | | |
|-------------------------|---|----|-----|
| विश्वे देवास् आ गत | शृणुता म इमं हवम् । एदं बर्हिर्नि षीदत | १३ | १६५ |
| तीव्रो वो मधुमाँ अयं | शुनहोत्रेषु मत्सरः । एतं पिबत काम्यम् | १४ | |
| इन्द्रज्येष्ठा मरुद्गणा | देवासः पूषरातयः । विश्वे मम श्रुता हवम् | १५ | |

॥१७॥ (ऋ० ३।२०।१,५)

(१६८-६९) गायत्री कौशिकः । त्रिष्टुप् ।

| | | | |
|-------------------------------|--------------------------------|---|--|
| अग्निमुषसमश्विना दधिकां | व्युष्टिषु हवते वह्निरुक्थैः । | | |
| सुज्योतिषो नः शृण्वन्तु देवाः | सजोषसो अध्वरं वावशानाः | १ | |
| दधिक्रामग्निमुषसं च देवीं | बृहस्पतिं सवितारं च देवम् । | | |
| अश्विना मित्रावरुणा भगं च | वसन् रुद्राँ आदित्याँ इह हुवे | ५ | |

॥१८॥ (ऋ० ३।५४।१-२२)

(१७०-२२१) प्रजापतिर्वैश्वामित्रः, प्रजापतिर्वाच्यो वा । त्रिष्टुप् ।

| | | | |
|------------------------------|--------------------------------|---|-----|
| इमं महे विदुध्याय शूषं | शश्वत् कृत्व ईड्याय प्र जभुः । | | |
| शृणोतु नो दम्येभिरनीकैः | शृणोत्वग्निर्दिव्यैरजसः | १ | १७० |
| महि महे दिवे अर्चा पृथिव्यै | कामो म इच्छश्चरति प्रजानन् । | | |
| ययोर्हं स्तोमे विदथेषु देवाः | सपर्यवो मादयन्ते सचायोः | २ | |
| युवोर्कृतं रोदसी सत्यमस्तु | महे पु णः सुविताय प्र भूतम् । | | |
| इदं दिवे नमो अग्रे पृथिव्यै | सपर्यामि प्रयसा यामि रत्नम् | ३ | |
| उतो हि वाँ पूर्या आविविद्र | ऋतावरी रोदसी सत्यवाचः । | | |
| नरश्चिद् वां समिथे शूरसातौ | ववन्दिरे पृथिवि वेविदानाः | ४ | |
| को अद्धा वेदु क इह प्र वोचद् | देवाँ अच्छा पथ्याडु का समेति । | | |
| ददृश्र एषामवमा सदांसि | परेषु या गुह्येषु व्रतेषु | ५ | |
| कविर्नृचक्षा अभि षीमचष्ट | ऋतस्य योना विष्टृते मदन्ती । | | |
| नाना चक्राते सदनं यथा वेः | समानेन क्रतुना संविदाने | ६ | १७५ |
| समान्या वियुते दूरेअन्ते | ध्रुवे पदे तस्थतुर्जागरूकैः । | | |
| उत स्वसारा युवती भवन्ती | आदु ब्रुवाते मिथुनानि नाम | ७ | |
| विश्वेदेते जनिमा सं विविक्तो | महो देवान् बिभ्रती न व्यथेते । | | |
| एजद् ध्रुवं पत्यते विश्वमेकं | चरत् पतत्रि विषुणं वि जातम् | ८ | १७७ |

| | |
|---|--------|
| सना पुराणमध्येम्यारा—न्महः पितुर्जनितुर्जामि तन्नः । | |
| देवासो यत्र पनितार एवै—रुरौ पथि व्युते तस्थुरन्तः | ९ १७८ |
| इमं स्तोमं रोदसी प्र ब्रवी—म्यदूदराः शृणवन्नाग्निजिह्वाः । | |
| मित्रः सम्राजो वरुणो युवान आदित्यासः कवयः पप्रथानाः | १० |
| हिरण्यपाणिः सविता सुजिह्व—स्त्रिरा दिवो विदथे पत्यमानः । | |
| देवेषु च सवितुः श्लोकमश्रे—रादस्मभ्यमा सुव सर्वतातिम् | ११ १८० |
| सुकृत् सुपाणिः स्ववाँ ऋतावा देवस्त्वष्टावसे तानि नो धात् । | |
| पूषण्वन्तं ऋभवो मादयध्व—मूर्ध्वग्रावाणो अध्वरमतष्ट | १२ |
| विद्युद्रथा मरुतं ऋष्टिमन्तो दिवो मर्यां ऋतजाता अयासः । | |
| सरस्वती शृणवन् यज्ञियासो धाता रयिं सहवीरं तुरासः | १३ |
| विष्णुं स्तोमासः पुरुदस्ममर्का भगस्येव कारिणो यामनि ग्मन् । | |
| उरुक्रमः कंकुहो यस्य पूर्वा—र्न मर्धन्ति युवतयो जनित्रीः | १४ |
| इन्द्रो विश्वैर्वीर्यैः पत्यमान उभे आ पप्रौ रोदसी महित्वा । | |
| पुरंदरो वृत्रहा धृष्णुर्वेणः संगृभ्या न आ भरा भूरिं पश्वः | १५ |
| नासत्या मे पितरा बन्धुपृच्छा सजात्यमश्विनोश्चारु नाम । | |
| युवं हि स्थो रयिदौ नो रयीणां दात्रं रक्षेथे अकवैरदब्धा | १६ १८५ |
| महत् तद् वः कवयश्चारु नाम यद्व देवा भवथ विश्व इन्द्रे । | |
| सखं ऋभुभिः पुरुहूत प्रियेभि—रिमां धियं सातये तक्षता नः | १७ |
| अर्यमा णो अदितिर्यज्ञियासो ऽदब्धानि वरुणस्य व्रतानि । | |
| युयोत नो अनपत्यानि गन्तोः प्रजावान् नः पशुमाँ अस्तु गातुः | १८ |
| देवानां दूतः पुरुष प्रसूतो ऽनागान् वोचतु सर्वताता । | |
| शृणोतु नः पृथिवी द्यौरुतापः सूर्यो नक्षत्रैरुर्वीन्तरिक्षम् | १९ |
| शृण्वन्तु नो वृषणः पर्वतासो ध्रुवक्षेमास इळया मदन्तः । | |
| आदित्यैर्नो अदितिः शृणोतु यच्छन्तु नो मरुतः शर्म भद्रम् | २० |
| सदा सुगः पितुमाँ अस्तु पन्था मध्वा देवा ओषधीः सं पिपृक्त । | |
| भगो मे अग्ने सख्ये न मृध्या उद् रायो अश्यां सदनं पुरुक्षोः | २१ |
| स्वदस्व हुव्या समिषो दिदी—ह्यस्मद्यक् सं मिमीहि श्रवांसि । | |
| विश्वो अग्ने पृत्सु ताञ्जेषि शत्रू—नहा विश्वा सुमना दीदिही नः | २२ १९१ |

॥१९॥ (ऋ० ३।५।१-२२)

उषसः पूर्वा अध यद् व्यूषु—महद् वि जज्ञे अक्षरं पदे गोः ।

व्रता देवानामुप नु प्रभूषन् महद् देवानामसुरत्वमेकम्

१

मो षू णो अत्र जुहुरन्त देवा मा पूर्वे अग्ने पितरः पदज्ञाः ।

पुराण्योः सन्ननोः केतुरन्त—महद् देवानामसुरत्वमेकम्

२

वि मे पुरुत्रा पतयन्ति कामाः शम्यच्छा दीये पूर्व्याणि ।

समिद्धे अग्रावृतमिद् वदेम महद् देवानामसुरत्वमेकम्

३

समानो राजा विभृतः पुरुत्रा शयै शयासु प्रयुतो वनानु ।

अन्या वत्सं भरति क्षेति माता महद् देवानामसुरत्वमेकम्

४

१९५

आक्षित् पूर्वास्वपरा अनूरुत् सद्यो जातासु तरुणीष्वन्तः ।

अन्तर्बतीः सुवते अप्रवीता महद् देवानामसुरत्वमेकम्

५

शयुः परस्तादथ नु द्विमाता ऽबन्धनश्चरति वत्स एकः ।

मित्रस्य ता वरुणस्य व्रतानि महद् देवानामसुरत्वमेकम्

६

द्विमाता होता विदथेषु सम्रा—लन्वग्रं चरति क्षेति बुध्नः ।

प्र रण्यानि रण्यवाचो भरन्ते महद् देवानामसुरत्वमेकम्

७

शरस्येव युध्यतो अन्तमस्यं प्रतीचीनं ददृशे विश्वमायत् ।

अन्तर्मतिश्चरति निष्विधं गो—महद् देवानामसुरत्वमेकम्

८

नि वैवेति पलितो दूत आ—स्वन्तर्महांश्चरति रोचनेन ।

वपूषि विश्रदभि नो वि चष्टे महद् देवानामसुरत्वमेकम्

९

२००

विष्णुर्गोपाः परमं पोति पार्थः प्रिया धामान्यमृता दधानः ।

अग्निष्ठा विश्वा भुवनानि वेद महद् देवानामसुरत्वमेकम्

१०

नाना चक्राते यम्याऽऽ वपूषि तयोरन्यद् रोचते कृष्णमन्यत् ।

श्यावीं च यदरुषी च स्वसारी महद् देवानामसुरत्वमेकम्

११

माता च यत्र दुहिता च धेनू संबर्दुधे धापयते समीची ।

ऋतस्य ते सदसीळे अन्त—महद् देवानामसुरत्वमेकम्

१२

अन्यस्या वत्सं रिहती मिमाय कया भुवा नि दधे धेनुरूधः ।

ऋतस्य सा पयसापिन्वतेळा महद् देवानामसुरत्वमेकम्

१३

२०४

| | |
|---|--------|
| पद्यां वस्ते पुरुषा वपू—ष्वध्वा तस्थौ ज्यवि रेरिहाणा । | |
| ऋतस्य सद्य वि चरामि विद्वान् महद् देवानामसुरत्वमेकम् | १४ २०५ |
| पदे इव निहिते दुस्मे अन्त—स्तयोरन्यद् गुह्यमाविरन्यत् । | |
| सध्रीचीना पथ्याइ सा विषूची महद् देवानामसुरत्वमेकम् | १५ |
| आ धेनवो धुनयन्तामशिश्वीः सवर्दुधाः शशया अप्रदुग्धाः । | |
| नव्यान्व्या युवतयो भवन्ती—महद् देवानामसुरत्वमेकम् | १६ |
| यदन्यासु वृषभो रोरवीति सो अन्यस्मिन् यूथे नि दधाति रेतः । | |
| स हि क्षपावान्त्स भगः स राजा महद् देवानामसुरत्वमेकम् | १७ |
| वरिस्य नु स्वश्व्यं जनासः प्र नु वोचाम विदुरस्य देवाः । | |
| षोळहा युक्ताः पञ्चपञ्चा वहन्ति महद् देवानामसुरत्वमेकम् | १८ |
| देवस्त्वष्टा सविता विश्वरूपः पुपोष प्रजाः पुरुधा जजान । | |
| इमा च विश्वा भुवनान्यस्य महद् देवानामसुरत्वमेकम् | १९ २१० |
| मही समैरञ्ज्वा समीची उभे ते अस्य वसुना न्यृष्टे । | |
| शृण्वे वीरो विन्दमानो वसूनि महद् देवानामसुरत्वमेकम् | २० |
| इमां च नः पृथिवीं विश्वधाया उप क्षेति हितमित्रो न राजा । | |
| पुरःमदः शर्मसदो न वीरा महद् देवानामसुरत्वमेकम् | २१ |
| निष्विध्वरीस्त ओषधीरुतापो रयिं त इन्द्र पृथिवी विभर्ति । | |
| सखायस्ते वामभार्जः स्याम महद् देवानामसुरत्वमेकम् | २२ |

॥२०॥ (क्र० ३।५६।१-८)

| | |
|--|-------|
| न ता मिनन्ति मायिनो न धीरा व्रता देवानां प्रथमा ध्रुवाणि । | |
| न रोदसी अद्रुहा वेद्याभि—र्न पर्वता निनमै तस्थिवांसः | १ |
| षड् भाराँ एको अचरन् विभ—र्त्युतं वर्षिष्ठमुप गाव आगुः । | |
| तिस्रो महीरुपरास्तस्थुरत्या गुहा द्वे निहिते दश्येका | २ २१५ |
| त्रिपाजस्यो वृषभो विश्वरूप उत त्र्युधा पुरुष प्रजावान् । | |
| त्र्यनीकः पत्यते माहिनावा—न्त्स रेतोधा वृषभः शश्वतीनाम् | ३ |
| अभीक आसां पदवीरवो—ध्यादित्यानामङ्गे चारु नाम । | |
| आपश्चिदस्मा अरमन्त देवीः पृथग् व्रजन्तीः परि षीमवृञ्जन् | ४ २१७ |

त्री षधस्था सिन्धवस्त्रिः कवीना—मुत त्रिमाता विदथेषु सम्राट् ।
 ऋतावरीर्योषणास्तिस्त्रो अप्या—स्त्रिरा दिवो विदथे पत्यमानाः ५
 त्रिरा दिवः सवितर्यार्याणि दिवेदिव आ सुव त्रिर्नो अहः ।
 त्रिधातु राय आ सुवा वस्त्रि भगं त्रातर्धिषणे सातये धाः ६
 त्रिरा दिवः सविता सौषवीति राजाना मित्रावरुणा सुपाणी ।
 आपश्चिदस्य रोदसी चिदुर्वी रत्नं भिक्षन्त सवितुः सवार्य ७ २२०
 त्रिरुत्तमा दूणशा रोचनानि त्रयो राजन्त्यसुरस्य वीराः ।
 ऋतावान इषिरा दूळभास—स्त्रिरा दिवो विदथे सन्त देवाः ८

॥२१॥ (ऋ० ३।८।८)

(२२२-२८) गाथिनो विश्वामित्रः । त्रिष्टुप् ।

आदित्या रुद्रा वसवः सुनीथा द्यावाक्षामा पृथिवी अन्तरिक्षम् ।
 सजोषसो यज्ञमवन्तु देवा ऊर्ध्वं कृण्वन्त्वध्वरस्य केतुम् ८

॥२२॥ (ऋ० ३।५७।१-६)

प्र मे विविक्काँ अविदन्मनीषां धेनुं चरन्तीं प्रयुतामगोपाम् ।
 सद्यश्चिद् या दुंदुहे भूरिं धासे—रिन्द्रस्तदग्निः पनितारो अस्याः १
 इन्द्रः सु पूषा वृषणा सुहस्ता दिवो न प्रीताः शशयं दुंदुहे ।
 विश्वे यदस्यां रणयन्त देवाः प्र वोऽत्र वसवः सुम्रमश्याम् २
 या जामयो वृष्ण इच्छन्ति शक्तिं नमस्यन्तीर्जानते गर्भमस्मिन् ।
 अच्छा पुत्रं धेनवो वावशाना महश्चरन्ति विभ्रतं वपूषि ३ २२५
 अच्छा विवक्मि रोदसी सुमेके ग्राव्णो युजानो अध्वरे मनीषा ।
 इमा उ ते मनवे भूरिवारा ऊर्ध्वा भवन्ति दर्शता यजत्राः ४
 या ते जिह्वा मधुमती सुमेधा अग्ने देवेषूच्यते उरुची ।
 तयेह विश्वाँ अवसे यजत्रा—ना सादय पायया चा मधूनि ५
 या ते अग्ने पर्वतस्येव धारा—सश्चन्ती पीपयद् देव चित्रा ।
 तामस्मभ्यं प्रमतिं जातवेदो वसो रास्व सुमतिं विश्वजन्याम् ६

॥२३॥ (ऋ० ४।५५।१-१०)

(२२९-३८) वामदेवो गौतमः । त्रिष्टुप्, ८-१० गायत्री ।

को वस्त्राता वसवः को वरूता द्यावाभूमी अदिते त्रासीथां नः
 सहीयसो वरुण मित्र मर्तात् को वोऽध्वरे वरिवो धाति देवाः १ २२९

६० [विश्वे देवाः] ३

| | |
|---|-------|
| प्र ये धामानि पूर्याण्यर्चान् वि यदुच्छान् विद्योतारो अमूराः । | |
| विधातारो वि ते दधुरजसा ऋतधीतयो रुरुचन्त दुस्माः | २ २३० |
| प्र पस्त्यादेमदिति सिन्धुमर्कैः स्वस्तिमीळे सख्याय देवीम् । | |
| उभे यथा नो अहनी निपात उषासानक्ता करतामदब्धे | ३ |
| व्यर्यमा वरुणश्चेति पन्था—मिषस्पतिः सुवितं गातुमग्निः । | |
| इन्द्राविष्णू नृवदु षु स्तवाना शर्म नो यन्तममवद् वरूथम् | ४ |
| आ पर्वतस्य मरुतामवांसि देवस्य त्रातुराग्नि भगस्य । | |
| पात् पतिर्जन्यादंहसो नो मित्रो मित्रियादुत न उरुष्येत् | ५ |
| नू रोदसी अहिना बुध्न्येन स्तुवीत देवी अप्येभिरिष्टैः । | |
| समुद्रं न संचरणे सनिष्यवो घर्मस्वरसो नद्योऽपं व्रन् | ६ |
| देवैर्नो देव्यदितिर्नि पातु देवस्त्राता त्रायतामप्रयुच्छन् । | |
| नहि मित्रस्य वरुणस्य धासि—महीमसि प्रमियं सान्वयेः | ७ २३५ |
| अग्निरीशे वसव्यस्या—ऽग्निर्महः सौभगस्य । तान्यस्मभ्यं रासते | ८ |
| उपो मघोन्या वह्न सूनृते वार्या पुरु । अस्मभ्यं वाजिनीवति | ९ |
| तत् सु नः सविता भगो वरुणो मित्रो अर्यमा । इन्द्रो नो राधसा गमत् | १० |

॥२४॥ (ऋ० ५।२६।९)

(२३९) वसूयव आत्रेयः । गायत्री ।

| | |
|---|---|
| एदं मरुतो अश्विना मित्रः सीदन्तु वरुणः । देवामः सर्वया विशा | ९ |
|---|---|

॥२५॥ (ऋ० ५।४१।१-२०)

(२४०-९३) भौमोऽग्निः । त्रिष्टुप्. १६-१७ अतिजगती, २० एकपदा विराट् ।

| | |
|---|-------|
| को नु वा मित्रावरुणावृतायन् दिवो वा महः पार्थिवस्य वा दे । | |
| ऋतस्य वा सदमि त्रासीथां नो यज्ञायते वा पशुपो न वाजान् | १ २४० |
| ते नो मित्रो वरुणो अर्यमायु—रिन्द्रं ऋभुक्षा मरुतो जुपन्त । | |
| नमोभिर्वा ये दध्ने सुवृक्तिं स्तोमं रुद्राय मीळहुषे सजोषाः | २ |
| आ वां येष्ठाऽश्विना हुवध्यै वातस्य पत्मन् रथ्यस्य पुष्टौ । | |
| उत वा दिवो असुराय मन्म ग्रान्धासीव यज्यवे भरध्वम् | ३ |
| प्र सक्ष्णो दिव्यः कण्वहोता त्रितो दिवः सजोषा वातो अग्निः । | |
| पूषा भगः प्रभृथे विश्वभोजा आजि न जग्मुराश्वतमाः | ४ २४३ |

| | |
|--|--------|
| प्र वो रयि युक्ताश्च भरध्वं राय एषेऽवसे दधीत धीः । | |
| सुशेव एवैरौशिजस्य होता ये व एवा मरुतस्तुराणाम् | ५ |
| प्र वो वायुं रथयुजं कृणुध्वं प्र देवं विप्रं पनितारमकैः । | |
| इषुध्यव क्रतुसापः पुरंधीर्वस्वीर्नो अत्र पत्नीरा धिये धुः | ६ २४५ |
| उप व एषे वन्द्येभिः शूषैः प्र यद्ही दिवश्चितयद्भिरकैः | |
| उषासानक्ता विदुषीव विश्वमा हा वहतो मर्त्याय यज्ञम् | ७ |
| अभि वो अर्चे पोष्यावतो नृन् वास्तोष्पतिं त्वष्टारं रराणः । | |
| धन्या सजोषा धिषणा नमोभिर्वनस्पतीरोषधी राय एषे | ८ |
| तुजे नस्तने पर्वताः सन्तु स्वैतवो ये वसवो न वीराः । | |
| पनित आप्त्यो यजतः सदा नो वर्धन्तः शंस नर्यो अभिष्टौ | ९ |
| वृष्णो अस्तोपि भूम्यस्य गर्भं त्रितो नपातमपां सुवृक्ति । | |
| गृणीते अग्निरेतरी न शूषैः शोचिष्केशो नि रिणाति वना | १० |
| कथा महे रुद्रियाय ब्रवाम कद् राये चिकितुपे भगाय । | |
| आप ओषधीरुत नोऽवन्तु द्यौर्वना गिरयो वृक्षकेशाः | ११ २५० |
| शृणोतु न ऊर्जा पतिर्गिरः स नभस्तरीयाँ इषिरः परिज्मा । | |
| शृण्वन्त्वापः पुरो न शुभ्राः परि सुचो ववृहाणस्याद्रेः | १२ |
| विदा चिन्तु महान्तो ये व एवा ब्रवाम दस्मा वार्य दधानाः । | |
| वर्यश्चन सुभ्व आ व यन्ति क्षुभा मर्तमनुयतं वधस्त्रैः | १३ |
| आ दैव्यानि पार्थिवानि जन्माऽपश्वाच्छा सुमखाय वोचम् । | |
| वर्धन्तां द्यावो गिरश्चन्द्राग्रा उदा वर्धन्तामभिपाता अर्णाः | १४ |
| पदेपदे मे जरिमा नि धायि वरूत्री वा शक्रा या पायुभिश्च । | |
| सिषक्तु माता मही रसा नः स्मत् सूरिभिर्कजुहस्तं क्रजुवनिः | १५ |
| कथा दाशेम् नमसा सुदानुनेवया मरुतो अच्छोक्तौ प्रश्रवसो मरुतो अच्छोक्तौ । | |
| मा नोऽहिर्बुध्न्यो रिषे धादुस्माकं भूदुपमातिवनिः | १६ २५५ |
| इति चिन्तु प्रजायै पशुमत्यै देवासो वनन्ते मर्त्यो व आ देवामो वनन्ते मर्त्यो वः । | |
| अत्रा शिवां तन्वो धासिमस्या जरां चिन्मे निर्ऋतिर्जगसीत | १७ |
| तां वो देवाः सुमत्तिमूर्जयन्तीमिषमश्याम वसवः शसा गोः । | |
| सा नः सुदानुर्मृळयन्ती देवी प्रति द्रवन्ती सुविताय गम्याः | १८ २५७ |

अभि न इळा युथस्य माता स्मन्नदीभिर्बुधशी वा गृणातु ।
 उर्वशी वा बृहद्दिवा गृणाना ऽभ्यूर्ण्वाना प्रभुथस्यायोः
 सिषक्तु न ऊर्ज्वर्यस्य पुष्टेः

१९ २५८
 २०

॥२६॥ (ऋ० ५।४२।१-१०, १२-१८) त्रिष्टुप्, १७ एकपदा विराट् ।

प्र शंतमा वरुणं दीधितिं गी—मित्रं भगमदिति नूनमश्याः ।
 पृषद्योनिः पञ्चहोता शृणोत्व—तूर्तपन्था असुरो मयोभुः
 प्रति मे स्तोममदितिर्जगृभ्यात् सूनुं न माता हृद्यं सुशेवम् ।
 ब्रह्म प्रियं देवहितं यदस्त्य—हं मित्रे वरुणे यन्मयोभु
 उदीरय कवितमं कवीना—मुनत्तैनमभि मध्वा घृतेन ।
 स नो वसूनि प्रयता हितानि चन्द्राणि देवः सविता सुवाति
 समिन्द्र णो मनसा नेपि गाभिः सं सूरिभिर्हरिवः सं स्वास्ति ।
 सं ब्रह्मणा देवहितं यदास्ति सं देवानां सुमत्या यज्ञियानाम्
 देवो भगः सविता रायो अंश इन्द्रो वृत्रस्य संजितो धनानाम् ।
 ऋभुक्षा वाज उत वा पुरंधि—रवंतु नो अमृतासस्तुरासः
 मरुत्वतो अप्रतीतस्य जिष्णो—रर्ज्यतः प्र ब्रवामा कृतानि ।
 न ते पूर्वं मघवन् नापरामो न वीर्यं नूतनः कश्चनाप
 उषं स्तुहि प्रथमं रत्नधेयं बृहस्पतिं सनितारं धनानाम् ।
 यः शंसते स्तुवते शंभविष्ठः पुरुवसुरागमजोहुवानम्
 तवोतिभिः सचमाना अरिष्टा बृहस्पते मघवानः सुवीराः ।
 ये अश्वदा उत वा सन्ति गोदा ये वत्सदाः सुभगास्तेषु रायः
 विसर्माणं कृणुहि वित्तमेपां ये भुञ्जते अपृणन्तो न उक्थैः ।
 अपव्रतान् प्रसवे वावृधानान् ब्रह्माद्विपः सूर्याद् यावयस्व
 य ओहते रक्षसो देववीता—वचक्रेभिस्तं मरुतो नि यात ।
 यो वः शमी शशमानस्य निन्दात् तुच्छयान् कामान् करते सिष्विदानः
 दर्मूनसो अपसो ये सुहस्ता वृष्णः पत्नीर्नद्यो विभवतृष्टाः ।
 सरस्वती बृहद्दिवोत राका दशस्यन्तीर्वरिवस्यन्तु शुभ्राः
 प्र स्र महे सुशरणाय मेधां गिरं भरे नव्यसीं जायमानाम् ।
 य आहना दुहितुर्वक्षणासु रूपा मिनानो अकृणोद्विदं नः

१ २६०
 २
 ३
 ४
 ५
 ६ २६५
 ७
 ८
 ९
 १०
 १२
 १३ २७१

| | |
|--|--------|
| प्र सुष्टुतिः स्तनयन्तं रुवन्तं—मिळस्पतिं जरितर्नूनमश्याः । | |
| यो अन्दिमाँ उदनिमाँ इयति प्र विद्युता रोदसी उक्षमाणः | १४ |
| एषः स्तोमो मारुतं शर्धो अच्छा रुद्रस्य सून्युवन्तूरुदश्याः । | |
| कामो राये हवते मा स्वस्त्यु—प स्तुहि पृषदश्वाँ अयासः | १५ |
| प्रैषः स्तोमः पृथिवीमन्तरिक्षं वनस्पतीरोषधी राये अश्याः । | |
| देवोदेवः सुहवो भूतु मह्यं मा नो माता पृथिवी दुर्मतौ धातु | १६ |
| उरौ देवा अनिवाधे स्याम | १७ २७५ |
| समश्विनोरवसा नूतनेन मयोभुवा सुप्रणीती गमेम । | |
| आ नो रयि बृहत्मोत वीरा—ना विश्वान्यमृता सौभंगानि | १८ |
| ॥२७॥ (क्र० ५।४३।१-१७) त्रिष्टुप्, १६ एकपदा विराट् । | |
| आ धेनवः पर्यसा तूर्यथा अमर्धन्तीरुप नो यन्तु मध्वा । | |
| महो राये बृहतीः सप्त विप्रो मयोभुवो जरिता जौहवीति | १ |
| आ सुष्टुती नमसा वर्तयध्वै द्यावा वाजाय पृथिवी अमृध्रे । | |
| पिता माता मधुवचाः सुहस्ता भरेभरे नो यशसावविष्टाम् | २ |
| अध्वर्यवश्चकृवांसो मधूनि प्र वायवे भरत चारु शुक्रम् । | |
| होतेव नः प्रथमः पाह्यस्य देव मध्वो ररिमा ते मदाय | ३ |
| दश क्षिपो युज्जते बाहू अद्रिं सोमस्य या शमितारा सुहस्ता । | |
| मध्वो रसं सुगभस्तिर्गिरिष्ठां चनिश्चदद् दुदुहे शुक्रमंशुः | ४ २८० |
| अस्तावि ते जुजुषाणाय सोमः कृत्वे दक्षाय बृहते मदाय । | |
| हरी रथे सुधुरा योगे अर्वा—गिन्द्र प्रिया कृणुहि हूयमानः | ५ |
| आ नो महीमरमति सजोषा ग्रां देवीं नमसा रातहव्याम् । | |
| मधोर्मदाय बृहतीमृतज्ञा—माग्ने वह पृथिभिर्देवयानैः | ६ |
| अज्जन्ति यं प्रथयन्तो न विप्रा वपावन्तं नाभिना तपन्तः । | |
| पितुर्न पुत्र उपसि प्रेष्ट आ घर्मो अमिमृतयन्नसादि | ७ |
| अच्छा मही बृहती शतमा गी—दूतो न गन्त्वश्विना हुवध्वै । | |
| मयोभुवा सरथा यातमर्वा—गन्तं निधि धुरमाणिर्न नाभिम् | ८ |
| प्र तव्यसो नमउक्तिं तुरस्या—ऽहं पूष्ण उत वायोरेदिक्षि । | |
| या राधसा चोदितारा मतीनां या वाजस्य द्रविणोदा उत त्मन् | ९ २८५ |

| | |
|---|--------|
| आ नामभिर्मरुतो वक्षि विश्वा—ना रूपेभिर्जातवेदो हुवानः । | |
| यज्ञं गिरो जरितुः सुष्टुतिं च विश्वे गन्त मरुतो विश्व उती | १० २८६ |
| आ नो दिवो बृहतः पर्वतादा सरस्वती यजता गन्तु यज्ञम् । | |
| हव देवी जुजुषाणा घृताचीं शग्मां नो वाचमुशती शृणोतु | ११ |
| आ वेधसं नीलपृष्ठं बृहन्तं बृहस्पतिं सदर्ने सादयध्वम् । | |
| सादद्योनिं दम् आ दीद्विवांसं हिरण्यवर्णमरुणं सपेम | १२ |
| आ धर्णसिर्बृहाद्विरो रराणो विश्वेभिर्गन्त्वोमभिर्हुवानः । | |
| ग्रा वसान ओषधीरमृध—स्त्रिधातुशृङ्गो वृषभो वयोधाः | १३ |
| मातुष्पदे परमे शुक्र आयो—विपन्यवो रास्पिरासो अगमन् । | |
| सुशेव्यं नमसा रातहव्याः शिशुं मृजन्त्यायवो न वासे | १४ २९० |
| बृहद् वयो बृहते तुभ्यमग्रे धियाजुरो मिथुनासः सचन्त । | |
| देवोदेवः सुहवो भूतु मह्यं मा नो माता पृथिवी दुर्मतौ धात् | १५ |
| उरौ देवा अनिवाधे स्याम | १६ |
| समश्विनोरवसा नूतनेन मयोभुवा सुप्रणीती गमेम । | |
| आ नो रयिं बहतमोत वीरा—ना विश्वान्यमृता सौभगानि | १७ |

॥२८॥ (क्र० ५।४४।१-१५)

(२९४-३०८) काश्यपोऽवत्साराः (१० क्षत्र-मनस-एवाचद-यजत-सध्रि-अवत्साराः, ११ विश्ववार-यजत-मायी-अवत्साराः, १२ अवत्सारेण सह सदापृण-यजत-बाहुवृक्त-श्रुतवित्-तर्थाः, १३ सुतंभरश्च) । जगती, १४-१५ त्रिष्टुप् ।

| | |
|--|------|
| तं प्रत्नथा पूर्वथा विश्वथेमथा ज्येष्ठताति बर्हिषदं स्वर्विदम् । | |
| प्रतीचीनं वृजनं दोहसे गिरा ऽऽशुं जयन्तमनु यासु वर्धसे | १ |
| श्रिये सुदृशीरुपरस्य याः स्व—विरोचमानः ककुभांमचोदते । | |
| सुगोषा असि न दभाय सुक्रतो परो मायाभिर्कृत आस नाम ते | २ २९ |
| अत्यं हविः संचते सच्च धातु चा—ऽरिष्टगातुः स होता सहोभरिः । | |
| प्रसस्तीणो अनु बर्हिषा शिशु—र्मध्ये युवाजरो विस्रहा हितः | ३ |
| प्र व एते सुयुजो यामन्निष्टये नीचीरमुष्मै यम्यं क्रतावृधः । | |
| सुयन्तुभिः सर्वशासैरभीशुभिः क्रिविर्नामानि प्रवणे मृषायति | ४ |
| संजर्धुराणस्तर्हभिः सुतेगृभं वयाकिर्न चित्तर्गर्भासु सुस्वरुः । | |
| भारवाकेष्वजगाथ शोभसे वर्धस्व पत्नीरभि-जीवो अह्वरे | ५ १ |

| | |
|--|--------|
| यादृगेव ददृशे तादृगुच्यते सं ह्यायया दधिरे सिध्रयाप्स्वा । | |
| महीमस्मभ्यमुरुषामुरु ज्रयो बृहत् सुवीरमनपच्युतं सहः | ६ |
| वेत्यग्रुर्जनिवान् वा अति स्पृधः समर्यता मनसा सूर्यः कविः । | |
| ग्रंसं रक्षन्तं परिं विश्वतो गर्यमस्माकं शर्म वनवत् स्वावसुः | ७ ३०० |
| ज्यायोसमस्य यतुनस्य केतुनं कपिस्वरं चरति यासु नाम ते । | |
| यादृशिमन् धायि तमपस्यया विदुद् य उ स्वयं वहते सो अरं करत् | ८ |
| समुद्रमासामव तस्थे अग्रिमा न रिण्यति सर्वनं यस्मिन्नायता । | |
| अत्रा न हार्दिं क्रवणस्य रेजते यत्रा मतिर्विद्यते पूतवन्धनी | ९ |
| स हि क्षत्रस्य मनसस्य चित्तिभिरेवावदस्य यजतस्य सभ्रैः । | |
| अवत्सारस्य स्पृणवाम रण्वभिः शविष्ठं वाजं विदुषां चिदधर्मम् | १० |
| श्येन आसामदितिः कक्षयोऽे मदो विश्ववारस्य यजतस्य मायिनः । | |
| समन्यमन्यमर्थयन्त्येतवे विदुर्विषाणं परिपानमन्ति ते | ११ |
| सदापृणो यजतो वि द्विषो वधीद् बाहुवृक्तः श्रुतवित् तयो वः सचा । | |
| उभा स वरा प्रत्येति भाति च यदीं गुणं भजते सुप्रयावभिः | १२ ३०५ |
| सुतंभरो यजमानस्य सत्पतिर्विश्वासांमूधः स धियामुदश्चनः । | |
| भरद् धेनू रसवाच्छिभ्रिये पयोऽनुब्रुवाणो अध्येति न स्वपन् | १३ |
| यो जागार तमृचः कामयन्ते यो जागार तमु सामानि यन्ति । | |
| यो जागार तमयं सोमं आह तवाहमस्मि सख्ये न्योकाः | १४ |
| अग्निर्जागार तमृचः कामयन्ते अग्निर्जागार तमु सामानि यन्ति । | |
| अग्निर्जागार तमयं सोमं आह तवाहमस्मि सख्ये न्योकाः | १५ |

॥२९॥ (ऋ० ५।४५।१-११)

(३०९-१९) सदापृण आत्रेयः । त्रिष्टुप् ।

| | |
|--|-------|
| विदा दिवो विष्यन्नद्रिमुक्थैरायत्या उषसो अर्चिनो गुः । | |
| अपावृत व्रजिनीरुत् स्वर्गाद् वि दुरो मानुषीर्देव आवः | १ |
| वि सूर्यो अमतिं न श्रियं सादोवाद् गवां माता जानती गात् । | |
| धन्वर्णसो नद्यः खादोअर्णाः स्थूणैव सुमिता दंहत द्यौः | २ |
| अस्मा उक्थाय पर्वतस्य गर्भो महीनां जनुषं पूर्व्याय । | |
| वि पर्वतो जिहीति साधत द्यौराविवांसन्तो दसयन्त भूमं | ३ ३११ |

| | |
|--|-------|
| सूक्तेभिर्वो वचोभिर्देवजुष्टैरिन्द्रा न्वग्नी अवसे हुवध्वै । | |
| उक्थेभिर्हिष्मा क्वयः सुयज्ञा आविवांसन्तो मरुतो यजन्ति | ४ ३१२ |
| एतो न्वद्य सुध्यादु भवाम प्र दुच्छनां मिनवामा वरीयः । | |
| अरे द्वेषांसि सनुतर्धामाऽयाम प्राञ्चो यजमानमच्छे | ५ |
| एता धियं कृणवामा सखायो ऽप या मातां ऋणुत व्रजं गोः । | |
| यया मनुर्विशिशिप्रं जिगाय यया वणिग्वक्त्रापा पुरीषम् | ६ |
| अनूनादत्र हस्तयतो अद्रि-रार्चन् येन दश मासो नवग्वाः । | |
| ऋतं यती सरमा गा अविन्दुद् विश्वानि सत्याङ्गिराश्चकार | ७ ३१५ |
| विश्वे अस्या व्युषि माहिनायाः सं यद् गोभिरङ्गिरसो नवन्त । | |
| उत्स आसां परमे सधस्थं ऋतस्य पथा सरमा विदुद् गाः | ८ |
| आ सूर्यो यातु सप्ताश्वः क्षेत्रं यदस्योर्विया दीर्घयाथे । | |
| रघुः श्येनः पतयदन्धो अच्छा युवा क्विर्दीदयद् गोषु गच्छन् | ९ |
| आ सूर्यो अरुहच्छुक्रमणो ऽयुक्त यद्दुरितो वीतपृष्ठाः । | |
| उद्रा न नार्वमनयन्त धीरा आश्रृण्वतीरापो अर्वागतिष्ठन् | १० |
| धियं वो अप्सु दधिषे स्वर्षा ययातरन् दश मासो नवग्वाः । | |
| अया धिया स्याम देवगोपा अया धिया तुतुर्यामात्यंहः | ११ |

॥३०॥ (ऋ० ५।४६।१-८)

(३२०-२७) प्रतिक्षत्र आत्रेयः । (७-८ देवपत्न्यः) । जगती; २, ८ त्रिष्टुप् ।

| | |
|---|-------|
| हयो न विद्राँ अयुजि स्वयं धुरि तां वहामि प्रतरणीमवस्युर्वम् । | |
| नास्या वश्मि विमुचं नावृतं पुनर्विद्वान् पथः पुरएत ऋजु नैषति | १ ३२० |
| अग्र इन्द्र वरुण मित्र देवाः शर्धः प्र यन्त मारुतो विष्णो । | |
| उभा नासत्या रुद्रो अध ग्राः पूषा भगः सरस्वती जुषन्त | २ |
| इन्द्राग्नी मित्रावरुणादिति स्वः पृथिवीं द्यां मरुतः पर्वता अपः । | |
| हुवे विष्णुं पूषणं ब्रह्मणस्पतिं भगं नु शंसं सवितारमूतये | ३ |
| उत नो विष्णुरुत वातो अस्मिधो द्रविणोदा उत सोमो मयस्करत् । | |
| उत ऋभवं उत राये नो अश्विनो त त्वष्टोत विश्वानु मंसते | ४ |
| उत त्यन्नो मारुतं शर्ध आ गमद् दिविक्षयं यजतं बहिरासदे । | |
| वृहस्पतिः शर्म पूषोत नो यमद् वरूथ्यं वरुणो मित्रो अर्यमा | ५ ३२४ |

उत त्वे नः पर्वतासः सुशस्तयः सुदीतयो नद्यस्त्रामणे भुवन् ।
 भगो विभक्ता शवसावसा गम—दुरुव्यचा अदितिः श्रोतु मे हवम्
 देवानां पत्नीरुशतीरवन्तु नः प्रावन्तु नस्तुजये वाजसातये ।
 याः पार्थिवासो या अपामपि त्रते ता नो देवीः सुहवाः शर्म यच्छत
 उत मा व्यन्तु देवपत्नी—रिन्द्राण्यग्राय्यश्विनी राट् ।
 आ रोदसी वरुणानी शृणोतु व्यन्तु देवीर्य ऋतुर्जनीनाम्

६ ३२५

७

८

॥३१॥ (ऋ० ५।४७।१-७)

(३२८-३४) प्रतिरथ आत्रेयः । त्रिष्टुप् ।

प्रयुञ्जती दिव एति ब्रुवाणा मही माता दुहितुर्बोधयन्ती ।
 आविवासन्ती युवतिर्मनीषा पितृभ्य आ सदेने जोहुवाना
 अजिरासस्तदप ईयमाना आतस्थिवांसो अमृतस्य नाभिम् ।
 अनन्तास उरवो विश्वतः सी परि द्यावापृथिवी यन्ति पन्थाः
 उक्षा समुद्रो अरुषः सुपर्णः पूर्वस्य योनिं पितुरा विवेश ।
 मध्ये दिवो निर्हितः पृश्निरदमा वि चक्रमे रजसस्पात्यन्तौ
 चत्वार ई विभ्रति क्षेमयन्तो दश गर्भं चरसे धापयन्ते ।
 त्रिधातवः परमा अस्य गावो दिवश्चरन्ति परि सद्यो अन्तान्
 इदं वपुर्निवचनं जनास—श्चरन्ति यन्नद्यस्तस्थुरापः ।
 द्वे यदी विभृतो मातुरन्ये इहेह जाते यम्यादु सवन्धू
 वि तन्वते धियो अस्मा अपांसि वस्त्रा पुत्राय मातरौ वयान्ति ।
 उपप्रक्षे वृषणो मोदमाना दिवस्पथा वध्वो यन्त्यच्छ
 तदस्तु मित्रावरुणा तदग्रे शं योरसभ्यमिदमस्तु शस्तम्
 अशीमहि गाधमुत प्रतिष्ठां नमो दिवे बृहते सादनाय

१

२

३ ३३०

४

५

६

७

॥३२॥ (ऋ० ५।४८।१-५)

(३३५-३९) प्रतिभानुरात्रेयः । जगती ।

कदु प्रियाय धाम्ने मनामहे स्वक्षत्राय स्वयंशसे महे वयम् ।
 आमेन्यस्य रजसो यदुभ्र आ अपो वृणाना वितनोति मायिनी
 ता अन्नत वयुन वीरवक्षणं समान्या वृतया विश्वमा रजः ।
 अपो अपाचीरपरा अपेजते प्र पूर्वाभिस्तिरते देवयुर्जनः

१

२ ३३६

आ ग्रावभिरहन्त्येभिरक्तुभिर्वरिष्ठं वज्रमा जिघर्ति मायिनि ।
 शतं वा यस्य ग्रचरन्त्स्वे दमे संवर्तयन्तो वि च वर्तयन्नहा ३ ३३७
 तामस्य रीतिं परशोरिव प्रत्यनीकमख्यं भुजे अस्य वर्षसः ।
 सचा यदि पितुमन्तमिव क्षयं रत्नं दधाति भरहूतये विशे ४
 स जिह्वया चतुरनीक ऋज्जते चारु वसानो वरुणो यतन्नारिम् ।
 न तस्य विन्न पुरुषत्वता वयं यतो भगः सविता दाति वार्यम् ५

॥३३॥ (ऋ० ५।४९।१-५)

(३४०-४४) प्रतिप्रभ आत्रेयः, (५ तृणपाणिः) । त्रिष्टुप् ।

देवं वो अद्य सवितारमेषे भगं च रत्नं विभजन्तमायोः ।
 आ वां नरा पुरुभुजा ववृत्यां दिवेदिवे चिदश्विना सखीयन् १ ३४०
 प्रति प्रयाणमसुरस्य विद्रा—न्त्सुक्तैर्देवं सवितारं दुवस्य ।
 उपं ब्रुवीत नमसा विजान—ञ्ज्येष्ठं च रत्नं विभजन्तमायोः २
 अदुत्रया दयते वार्याणि पूषा भगो अदितिर्वस्त उस्तः ।
 इन्द्रो विष्णुर्वरुणो मित्रो अग्नि—रहानि भद्रा जनयन्त दुस्माः ३
 तन्नो अनर्वा सविता वरुथं तत् सिन्धव इषयन्तो अनु गमन् ।
 उप यद् वोचं अध्वरस्य होता रायः स्याम पतयो वाजरत्नाः ४
 प्र ये वसुभ्य ईवदा नमो दु—र्ये मित्रे वरुणे सुक्तवाचः ।
 अवैत्वभ्यं कृणुता वरीयो दिवस्पृथिव्योरवसा मदेम ५

॥३४॥ (ऋ० ५।५०।१-५)

(३४५-६०) स्वस्त्यात्रेयः । अनुष्टुप्, ५ पङ्क्तिः ।

विश्वो देवस्य नेतु—र्मतो वुरीत सख्यम् । विश्वो राय इषुध्यति द्युम्नं वृणीत पुष्यसे १ ३४५
 ते ते देव नेत—र्ये चेमां अनुशसे । ते राया ते ह्याऽपृचे सचैमहि सचध्वैः २
 अतो न आ नृनर्तिथी—नतः पत्नीर्दशस्यत ।
 आरे विश्वं पथंष्टां द्विषो युंयोतु यूयुविः ३
 यत्र वह्निरभिहितो दुद्रवद् द्रोण्यः पशुः । नृमणा वीरपस्त्यो ऽर्णा धीरेव सनिता ४
 एष ते देव नेता रथस्पतिः शं रयिः ।
 शं राये शं स्वस्तय इषास्तुतो मनामहे देवस्तुतो मनामहे ५ ३४९

॥३५॥ (ऋ० ५।५।१-३, ८-१५)

१-३ गायत्री; ८-१० उष्णिक्; ११-१३ जगती त्रिष्टुप्; १४-१५ अनुष्टुप् ।

| | | |
|---|----|-----|
| अग्ने सुतस्य पीतये विश्वैरुमोभिरा गहि । देवेभिर्हव्यदातये | १ | ३५० |
| ऋतधीतय आ गत सत्यधर्माणो अध्वरम् । अग्नेः पिबत जिह्वया | २ | |
| विप्रैर्भिर्विप्र सन्त्य प्रातर्यावाभिरा गहि । देवेभिः सोमपीतये | ३ | |
| सजूर्विश्वेभिर्देवेभि रश्विभ्यामुषसा सजूः । आ याह्यग्ने अत्रिवत् सुते रण | ८ | |
| सजूर्मित्रावरुणाभ्यां सजूः सोमेन विष्णुना । आ याह्यग्ने अत्रिवत् सुते रण | ९ | |
| सजूरादित्यैर्वसुभिः सजूरिन्द्रेण वायुना । आ याह्यग्ने अत्रिवत् सुते रण | १० | ३५५ |
| स्वस्ति नो मिमीतामश्विना भगः स्वस्ति देव्यदितिरनर्वणः । | | |
| स्वस्ति पूषा असुरो दधातु नः स्वस्ति द्यावापृथिवी सुचेतुना | ११ | |
| स्वस्तये वायुमुप ब्रवामहै सोमै स्वस्ति भुवनस्य यस्पतिः । | | |
| बृहस्पतिं सर्वगणं स्वस्तये स्वस्तये आदित्यासो भवन्तु नः | १२ | |
| विश्वे देवा नो अद्या स्वस्तये वैश्वानरो वसुरग्निः स्वस्तये । | | |
| देवा अवन्त्वुभवंः स्वस्तये स्वस्ति नो रुद्रः पात्वंहसः | १३ | |
| स्वस्ति मित्रावरुणा स्वस्ति पथ्ये रेवति । | | |
| स्वस्ति न इन्द्रश्चाग्निश्च स्वस्ति नो अदिते कृधि | १४ | |
| स्वस्ति पन्थामनु चरेम सूर्याचन्द्रमसाधिव । पुनर्ददताम्रता जानता सं गमेमहि | १५ | ३६० |

॥३६॥ (ऋ० ६।२।९, ११)

(३६१-६२) बार्हस्पत्यो भरद्वाजः । त्रिष्टुप् ।

| | | |
|---|----|--|
| प्रोतये वरुणं मित्रमिन्द्रं मरुतः कृष्वावसे नो अद्य । | | |
| प्र पूषणं विष्णुमग्निं पुरंधिं सवितारमोषधीः पर्वतांश्च | ९ | |
| नू म आ वाचमुप याहि विद्वान् विश्वेभिः सूनो सहसो यजत्रैः । | | |
| ये अग्निजिह्वा ऋतसाप आसुर्ये मनुं चक्रुरुपरं दसाय | ११ | |

॥३७॥ (ऋ० ६।४९।१-५)

(३६३-४२५) ऋजिश्वा भारद्वाजः । त्रिष्टुप्, १५ शकरी ।

| | | |
|---|---|-----|
| स्तुषे जनं सुम्रतं नव्यसीभिर्गीर्भिर्मित्रावरुणा सुम्रयन्ता । | | |
| त आ गमन्तु त इह श्रुवन्तु सुक्षत्रासो वरुणो मित्रो अग्निः | १ | |
| विशोर्विश इज्यमध्वरे ष्वदत्तक्रतुमरतिं युवत्योः । | | |
| दिवः शिशुं सहसः सूनुमग्निं यज्ञस्य क्रतुमरुपं यजध्वे | २ | ३६४ |

अरुषस्य दुहितरा विरूपे स्तुभिरन्या पिपिशे सूरौ अन्या ।
 मिथस्तुरा विचरन्ती पावके मन्मं श्रुतं नक्षत ऋच्यमाने
 प्र वायुमच्छा बृहती मनीषा बृहद्रथि विश्ववारं रथग्राम् ।
 द्युतद्यामा नियुतः पत्यमानः कविः कविमैयक्षसि प्रयज्यो
 स मे वपुच्छदयदुश्चिनोर्यो रथो विरुक्मान् मनसा युजानः ।
 येन नरा नासत्येषयध्वै वर्तिर्यथस्तनयाय त्मने च
 पर्जन्यवाता वृषभा पृथिव्याः पुरीषाणि जिन्वतमप्यानि ।
 सत्यश्रुतः कवयो यस्य गीर्भिर्जगतः स्थातर्जगदा ऋणुध्वम्
 पावीरवी कन्या चित्रायुः सरस्वती वीरपत्नी धियै धात् ।
 माभिरच्छिद्रं शरणं सजोषा दुराधर्षं गृणते शर्म यंसत्

३ ३६५

४

५

६

७

पथस्पथः परिपति वचस्या कामेन कृतो अभ्यानल्लर्कम् ।
 स नो रासच्छुरुधश्चन्द्राग्रा धियैधियं सीषधाति प्र पूषा
 प्रथमभाजं यशसं वयोधां सुपाणिं देवं सुगभस्तिमृभ्वम् ।
 होता यक्षद् यजतं पस्त्याना मग्निस्त्वष्टारं सुहवं विभावा
 भुवनस्य पितरं गीभिराभी रुद्रं दिवा वर्धया रुद्रमक्तौ ।
 बृहन्तमृष्वमजरं सुषुम्न मृधग्धुवेम कविनेषितासः
 आ युवानः कवयो यज्ञियासो मरुतो गन्त गृणतो वरस्याम् ।
 अचित्रं चिद्धि जिन्वन्था वृधन्त इत्था नक्षन्तो नरो अङ्गिरस्वत्
 प्र वीराय प्र तवसे तुराया ऽजा यूथेवं पशुरक्षिरस्तम् ।
 स पिस्पृशति तन्वि श्रुतस्य स्तुभिर्न नाकं वचनस्य विपः

८ ३७०

९

१०

११

१२

यो रजांसि विममे पार्थिवानि त्रिश्चिद् विष्णुर्मनवे बाधिताय ।
 तस्य ते शर्मन्नुपदुद्यमाने राया मदेम तन्वाङ् तनां च
 तन्नोऽहिर्बुध्न्यो अङ्गिरकैस्तत् पर्वतस्तत् सविता चनो धात् ।
 तदोषधीभिरभि रातिषाचो भगः पुरंधिर्जिन्वतु प्र राये
 नू नो रथि रथ्यै चर्षणिप्रां पुरुवीरं मह ऋतस्य गोपाम् ।
 क्षयं दाताजरं येन जना न्तस्पृधा अदेवीरभि च क्रमाम
 विश्व आदेवीरभ्यश्रवाम

१३ ३७५

१४

१५ ३७७

॥३८॥ (ऋ० ६।५०।१-१५) त्रिष्टुप् ।

| | |
|--|---|
| हुवे वो देवीमर्दिति नमोभिर्मृलीकाय वरुणं मित्रमग्निम् । अभिक्षदामर्थमणं सुशेवं त्रातृन् देवान्त्सवितारं भगं च सुज्योतिषः सूर्यं दक्षपितृन् ननागास्त्वे सुमहो वीहि देवान् । द्विजन्मानो य ऋतुसार्पः सत्याः स्वर्वन्तो यजता अग्निजिह्वाः उत द्यावापृथिवी क्षत्रमुरु बृहद् रोदसी शरणं सुपुम्ने । महस्करथो वरिवो यथा नो ऽस्मे क्षयाय धिषणे अनेहः आ नो रुद्रस्य सुनवो नमन्ता मद्या हुतासो वसवोऽष्टृष्टाः । यदीमर्भे महति वा हितासो बाधे मरुतो अह्वाम देवान् मिम्यक्ष येषु रोदसी नु देवी सिषक्ति पूषा अभ्यर्धयज्वा । श्रुत्वा हवै मरुतो यद्ध याथ भूमा रेजन्ते अध्वनि प्रविक्ते अभि त्यं वीरं गिर्वेणसमर्चेन्द्रं ब्रह्मणा जरितर्नवेन । श्रवदिद्धवमुप च स्तवानो रासद् वाजं उप महो गृणानः ओमानमापो मानुषीरमृक्तं धातं तोकाय तर्नयाय शं योः । युयं हि ष्ठा भिषजो मातृतेमा विश्वस्य स्थातुर्जगतो जनित्रीः आ नो देवः सविता त्रायमाणो हिरण्यपाणिर्यजतो जगम्यात् । यो दत्रवाँ उपसो न प्रतीकं व्यूर्णुते द्राक्षुषे वार्याणि उत त्वं सूनो सहसो नो अद्या देवाँ अस्मिन्नध्वरे ववृत्याः । स्यामहं ते सदुमिद् रातौ तव स्यामग्नेऽवसा सुवीरः उत त्या मे हवमा जग्म्यातं नासत्या धीभिर्युवमङ्ग विप्रा । अत्रिं न महस्तमसोऽमुमुक्तं तूर्वतं नरा दुरितादुभीकं ते नो रायो द्युमतो वाजवतो दातारो भूत नृवतः पुरुक्षोः । दुशस्यन्तो दिव्याः पार्थिवासो गोजाता अप्या मळता च देवाः ते नो रुद्रः सरस्वती सजोषा मीळहुष्मन्तो विष्णुर्मळन्तु वायुः । ऋभुक्षा वाजो दैव्यो विधाता पर्जन्यावाता पिप्यतामिषं नः उत स्य देवः सावता भगो नो ऽपां नपादवतु दानु पप्रिः । त्वष्टा देवेभिर्जनिभिः सजोषा द्यौर्देवेभिः पृथिवी समुद्रैः | १ २ ३ ३८० ४ ५ ६ ७ ८ ३८५ ९ १० ११ १२ १३ ३९० |
|--|---|

उत नोऽर्हिर्बुध्न्यः शृणो—त्वज एकपात् पृथिवी समुद्रः ।

विश्वे देवा ऋतावृधो हुवानाः स्तुता मन्त्राः कविशस्ता अवन्तु

१४ ३९१

एवा नपातो मम तस्य धीभि—भरद्वाजा अभ्यर्चन्त्यकैः ।

मा हुतासो वसवोऽर्धृष्टा विश्वे स्तुतासो भूता यजत्राः

१५

॥३९॥ (ऋ० ६।५।१-१६) त्रिष्टुप्, १३-१५ उष्णिक्, १६ अनुष्टुप् ।

उदु त्यच्चक्षुर्महि मित्रयोराँ एति प्रियं वरुणयोरदब्धम् ।

ऋतस्य शुचिं दर्शतमनीकं रुक्मो न दिव उदिता व्यद्यौत्

१

वेदु यस्त्रीणि विदथान्येषां देवानां जन्म सनुतरा च विप्रः ।

ऋजु मर्तेषु वृजिना च पश्य—अभि चष्टे सूरौ अर्य एवान्

२

स्तुष उ वो मह ऋतस्य गोपा—नदिति मित्रं वरुणं सुजातान् ।

अर्यमणं भगमदब्धधीती—नच्छा वोचे सध्न्यः पावकान्

३ ३९५

रिशदसः सत्पतीरदब्धान् महो राज्ञः सुवसनस्य दातृन् ।

यूनः सुक्षत्रान् क्षयतो दिवो नृ—नादित्यान् याम्यदिति दुवोयु

४

द्यौःष्वितः पृथिवि मातरध्रु—गग्रे भ्रातर्वसवो मूळता नः ।

विश्व आदित्या अदिते सजोषा अस्मभ्यं शर्म बहुलं वि यन्त

५

मा नो वृकाय वृक्ये समस्मा अघायते रीरधता यजत्राः ।

यूयं हि ष्ठा रथ्यो नस्तनूनां यूयं दक्षस्य वचसो बभूव

६

मा व एनो अन्यकृतं भुजेम मा तत् कर्म वसवो यच्चयध्वे ।

विश्वस्य हि क्षयथ विश्वदेवाः स्वयं रिपुस्तन्वै रीरिषीष्ट

७

नम इदुग्रं नम आ विवासे नमो दाधार पृथिवीमुत द्याम् ।

नमो देवेभ्यो नम ईश एषां कृतं चिदेनो नमसा विवासे

८ ४००

ऋतस्य वो रथ्यः पूतदक्षा—नृतस्य पस्त्यसदो अदब्धान् ।

ताँ आ नमोभिरुरुचक्षसो नृन् विश्वान्व आ नमे महो यजत्राः

९

ते हि श्रेष्ठवर्चसस्त उ न—स्तिरो विश्वानि दुरिता नयन्ति ।

सुक्षत्रासो वरुणो मित्रो अमि—र्ऋतधीतयो वक्मराजसत्याः

१०

ते न इन्द्रः पृथिवी क्षामं वर्धन् पूषा भगो अदितिः पञ्च जनाः ।

सुशर्माणः स्ववसः सुनीथा भवन्तु नः सुत्रात्रासः सुगोपाः

११ ४०३

नू सञ्चानं दिव्यं नंशि देवा भारद्वाजः सुमतिं याति होता ।
 आसानेभिर्यजमानो मियेधै—देवानां जन्म वसुयुर्ववन्द १२
 अप त्यं वृजिनं रिपुं स्तेनमग्रे दुराध्यम् । दविष्ठमस्य सत्पते कृधी सुगम् १३ ४०५
 ग्रावाणः सोम नो हि कं सखित्वनाय वावशुः । जही न्यत्रिणं पणि वृको हि षः १४
 यूयं हि ष्ठा सुदानव इन्द्रज्येष्ठा अभिद्यवः । कर्ता नो अध्वन्ना सुगं गोपा अमा १५
 अपि पन्थामगन्महि स्वस्तिगामनेहसम् । येन विश्वाः परि द्विषो वृणाकिते विन्दते वसु १६

॥४०॥ (क्र० ६।५२।१-१७) त्रिष्टुप्, ७-१२ गायत्री, १४ जगती ।

न तद् दिवा न पृथिव्यानु मन्ये न यज्ञेन नोत शमीभिराभिः ।
 उज्जन्तु तं सुभ्वः पर्वतासो नि हीयतामतियाजस्य यष्टा १
 अतिं वा यो मरुतो मन्यते नो ब्रह्म वा यः क्रियमाणं निनिंत्सात् ।
 तपूषि तस्मै वृजिनानि सन्तु ब्रह्मद्विषमभि तं शोचतु द्यौः २ ४१०
 किमङ्ग त्वा ब्रह्मणः सोम गोपां किमङ्ग त्वाहुरभिश्चिपां नः ।
 किमङ्ग नः पश्यसि निद्यमानान् ब्रह्मद्विषे तपूषि हेतिमस्य ३
 अवन्तु मामुषसो जायमाना अवन्तु मा सिन्धवः पिन्वमानाः ।
 अवन्तु मा पर्वतासो ध्रुवासो ऽवन्तु मा पितरो देवहूतौ ४
 विश्वदानीं सुमनसः स्याम पश्येम नु सूर्यमुच्चरन्तम् ।
 तथा करद् वसुपतिर्वसूनां देवा ओहानोऽवसागमिष्ठः ५
 इन्द्रो नेर्दिष्ठमवसागमिष्ठः सरस्वती सिन्धुभिः पिन्वमाना ।
 पर्जन्यो न ओषधीभिर्मयोभु—रग्निः सुशंसः सुहवः पितेव ६
 विश्वे देवास आ गत शृणुता म इमं हवम् । एदं बर्हिर्नि षीदत ७ ४१५
 यो वो देवा घृतस्नुना हव्येन प्रतिभूषति । तं विश्व उप गच्छथ ८
 उप नः सूनवो गिरः शृण्वन्त्वमृतस्य ये । सुमुळीका भवन्तु नः ९
 विश्वे देवा ऋतावृध ऋतुभिर्हवनश्रुतः । जुषन्तां युज्यं पर्यः १०
 स्तोत्रमिन्द्रो मरुद्रेण—स्त्वष्टमान् मित्रो अर्यमा । इमा हव्या जुषन्त नः ११
 इमं नो अग्रे अध्वरं होतर्वयुनशो यज । चिकित्वान् दैव्यं जनम् १२
 विश्वे देवाः शृणुतेमं हव मे ये अन्तरिक्षे य उप दधि ष्ठ ।
 ये अग्निजिह्वा उत वा यजत्रा आसद्यास्मिन् बर्हिषि मादयध्वम् १३ ४२१

| | |
|---|--------|
| विश्वे देवा मम शृण्वन्तु यज्ञिया उभे रोदसी अपां नपाञ्च मन्म । | |
| मा वो वचांसि परिचक्ष्याणि वोचं सुम्नेष्विद् वो अन्तमा मदेम | १४ ४२२ |
| ये के च जमा महिनो अहिमाया दिवो जज्ञिरे अपां सधस्ये । | |
| ते अस्मभ्यमिषये विश्वमायुः क्षप उस्मा वरिवस्यन्तु देवाः | १५ |
| अग्नीपर्जन्याववतं धियं मे ऽस्मिन् हवे सुहवा सुष्टुतिं नः । | |
| इळामन्यो जनयद् गर्भमन्यः प्रजावतीरिष आ धत्तमस्मे | १६ |
| स्तीर्णे बर्हिषि समिधाने अग्नौ सूक्तेन महा नमसा विवासे । | |
| अस्मिन् नो अद्य विदथे यजत्रा विश्वे देवा हविषि मादयध्वम् | १७ ४२५ |

॥४१॥ (ऋ० ७।३४।१-१५, १८-२५)

(४२६-५१०) मैत्रावरुणिर्वासिष्ठः । द्विपदा विराट्, २२-२५ त्रिष्टुप् ।

| | |
|---|--------|
| प्र शुक्रैतु देवी मनीषा अस्मत् सुतष्टो रथो न वाजी | १ |
| विदुः पृथिव्या दिवो जनित्रं शृण्वन्त्यापो अध क्षरन्तीः | २ |
| आपश्चिदस्मै पिन्वन्त पृथ्वी-वृत्रेषु शूरा मंसन्त उग्राः | ३ |
| आ धूर्षस्मै दधाताश्वा-निन्द्रो न वज्री हिरण्यवाहुः | ४ |
| अभि प्र स्थाताहैव यज्ञं यातेव पत्सन् तमनां हिनोत | ५ ४३० |
| त्मनां समत्सु हिनोत यज्ञं दधात केतुं जनाय वीरम् | ६ |
| उदस्य शुष्माद् भानुर्नार्ति बिभर्ति भारं पृथिवी न भूम | ७ |
| ह्वयामि देवां अयातुरग्रे सार्धन्नृतेन धियं दधामि | ८ |
| अभि वो देवीं धियं दधिध्वं प्र वो देवत्रा वाचं कृणुध्वम् | ९ |
| आ चष्ट आसां पार्थो नदीनां वरुण उग्रः सहस्रचक्षाः | १० ४३५ |
| राजा राष्टानां पेशो नदीना-मनुत्तमस्मै क्षत्रं विश्वायु | ११ |
| अविष्टो अस्मान् विश्वासु विक्ष्व-द्युं कृणोत शंसं निनित्सोः | १२ |
| व्येतु दिद्युद् द्विषामशैवा युयोत विष्वग्रपस्तनूनाम् | १३ |
| अवीन्नो अग्निर्हव्यान्नमोभिः प्रेष्ठो अस्मा अधायि स्तोमः | १४ |
| सज्जूदेवेभिरपां नपातं सखायं कृध्वं शिवो नो अस्तु | १५ ४४० |
| उत न एषु नृषु श्रवो धुः प्र राये यन्तु शर्धन्तो अर्यः | १८ |
| तपन्ति शत्रुं स्वर्णं भूमा महासेनासो अमोभिरेषाम् | १९ |
| आ यज्ञः पत्नीर्गमन्त्यच्छा त्वष्टा सुपाणिर्दधातु वीरान् | २० ४४३ |

| | |
|--|--------|
| प्रति नः स्तोमं त्वष्टा जुषेत स्यादुस्मे अरमतिर्वसयुः | २१ |
| ता नो रासन् रातिषाचो वसू—न्या रोदसी वरुणानी शृणोतु । | |
| वरुत्रीभिः सुशरणो नो अस्तु त्वष्टा सुदत्रो वि दधातु रायः | २२ ४४५ |
| तन्नो रायः पर्वतास्तन्न आप—स्तद् रातिषाच ओषधीरुत द्यौः । | |
| वनस्पतिभिः पृथिवी सजोषा उभे रोदसी परि पासतो नः | २३ |
| अनु तदुर्वी रोदसी जिहाता—मनु द्युक्षो वरुण इन्द्रसखा । | |
| अनु विश्वे मरुतो ये सहासो रायः स्याम धरुणं धियध्वै | २४ |
| तन्न इन्द्रो वरुणो मित्रो अग्नि—राप ओषधीर्वनिनो जुषन्त । | |
| शर्मन्त्स्याम मरुतामुपस्थे यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः | २५ |

॥४२॥ (ऋ० ७।३५।१-१५) अष्टुप् ।

| | |
|--|-------|
| शं न इन्द्राग्नी भवतामवोभिः शं न इन्द्रावरुणा रातहव्या । | |
| शमिन्द्रासोमा सुविताय शं योः शं न इन्द्रापूषणा वाजसातौ | १ |
| शं नो भगः शम् नः शंसो अस्तु शं नः पुरंधिः शम् सन्तु रायः । | |
| शं नः सत्यस्य सुयमस्य शंसः शं नो अर्यमा पुरुजातो अस्तु | २ ४५० |
| शं नो धाता शम् धर्ता नो अस्तु शं न उरुची भवतु स्वधाभिः । | |
| शं रोदसी बृहती शं नो अद्रिः शं नो देवानां सुहवानि सन्तु | ३ |
| शं नो अग्निज्योतिरनीको अस्तु शं नो मित्रावरुणावश्विना शम् । | |
| शं नः सुकृतां सुकृतानि सन्तु शं न इषिरो अभि वातु वातः | ४ |
| शं नो द्यावापृथिवी पूर्वहूतौ शमन्तरिक्षं दृश्ये नो अस्तु । | |
| शं न ओषधीर्वनिनो भवन्तु शं नो रजसस्पतिरस्तु जिष्णुः | ५ |
| शं न इन्द्रो वसुभिर्देवो अस्तु शमादित्येभिर्वरुणः सुशंसः । | |
| शं नो रुद्रो रुद्रेभिर्जलापः शं नस्त्वष्टा गार्भिरिह शृणोतु | ६ |
| शं नः सोमो भवतु ब्रह्म शं नः शं नो ग्रावाणः शम् सन्तु यज्ञाः । | |
| शं नः स्वरूपां मितर्यो भवन्तु शं नः प्रस्वः शम्बस्तु वेदिः | ७ ४५५ |
| शं नः सूर्य उरुचक्षा उदेतु शं नश्चतस्रः प्रदिशो भवन्तु । | |
| शं नः पर्वता ध्रुवयो भवन्तु शं नः सिन्धवः शम् सन्त्वापः | ८ |
| शं नो अदितिर्भवतु व्रतेभिः शं नो भवन्तु मरुतः स्वर्काः । | |
| शं नो विष्णुः शम् पूषा नो अस्तु शं नो भवित्रं शम्बस्तु वायुः | ९ ४५७ |

| | | |
|---------------------------------|--------------------------------------|--------|
| शं नो देवः सविता त्रायमाणः | शं नो भवन्तूषसो विभातीः । | |
| शं नः पर्जन्यो भवतु प्रजाभ्यः | शं नः क्षेत्रस्य पतिरस्तु शंभुः | १० ४५८ |
| शं नो देवा विश्वदेवा भवन्तु | शं सरस्वती सह धीभिरस्तु । | |
| शमभिषाचः शम्भु रातिषाचः | शं नो दिव्याः पार्थिवाः शं नो अप्याः | ११ |
| शं नः सत्यस्य पतयो भवन्तु | शं नो अर्वन्तः शम्भु सन्तु गावः । | |
| शं न क्रभवंः सुकृतः सुहस्ताः | शं नो भवन्तु पितरो हवेषु | १२ ४६० |
| शं नो अज एकापाद् देवो अस्तु | शं नोऽहिर्बुध्न्यः शं समुद्रः । | |
| शं नो अपां नपात् पेरुरस्तु | शं नः पृश्निर्भवतु देवगोपा | १३ |
| आदित्या रुद्रा वसवो जुषन्ते | दं ब्रह्म क्रियमाणं नवीयः । | |
| शृण्वन्तु नो दिव्याः पार्थिवासो | गोजाता उत ये यज्ञियासः | १४ |
| ये देवानां यज्ञियां यज्ञियानां | मनोर्यजत्रा अमृतां क्रतुज्ञाः । | |
| ते नो रासन्तामुरुगायमद्य | यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः | १५ |

॥४३॥ (ऋ० ७।३६।१-९)

| | | |
|--------------------------------|---------------------------------|-------|
| प्र ब्रह्मैतु सदर्नादृतस्य | वि राश्मिभिः ससृजे सूर्यो गाः । | |
| वि सानुना पृथिवी संस्र उर्वी | पृथु प्रतीक्रमध्येधे अग्निः | १ |
| इमां वा मित्रावरुणा सुवृक्ति | मिषं न कृण्वे असुरा नवीयः । | |
| इनो वामन्यः पदवीरदब्धो | जनं च मित्रो यतति ब्रुवाणः | २ ४६५ |
| आ वार्तस्य भ्रजतो रन्त इत्या | अपीपयन्त धेनवो न सूदाः । | |
| महो दिवः सदर्ने जायमानो | ऽर्चिकदद् वृषभः सस्मिन्नूधन् | ३ |
| गिरा य एता युनजद्धरीं त | इन्द्रं प्रिया सुरथा शूर धायू । | |
| प्र यो मन्युं रिरिक्षतो मिना | त्या सुक्रतुर्मर्यमणं ववृत्याम् | ४ |
| यजन्ते अस्य सख्यं वयश्च | नमस्विनः स्व क्रतस्य धामन् । | |
| वि पृक्षो वात्रधे नृभिः स्तवान | इदं नमो रुद्राय प्रेष्ठम् | ५ |
| आ यत् साकं यशसो वावशानाः | सरस्वती सप्तथी सिन्धुमाता । | |
| याः सुण्वयन्त सुदुधाः सुधारा | अभि स्वेन पर्यसा पीप्यानाः | ६ |
| उत त्ये नो मरुतो मन्दसाना | धियं तोकं च वाजिनोऽवन्तु । | |
| मा नः परि ख्यदक्षरा चर | न्त्यवीवृधन् युज्यं ते रयि नः | ७ ४७० |

प्र वो महीमरमतिं कृणुध्वं प्र पूषणं विदुध्यं न वीरम् ।
 भगं धियोऽवितारं नो अस्याः सातौ वाजं रातिषाचं पुरंधिम् ८
 अच्छायं वो मरुतः श्लोक एत्वच्छा विष्णुं निषिक्तपामवोभिः ।
 उत प्रजायै गृणते वयो धु—र्युयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ९

॥४४॥ (ऋ० ७।३७।१-८)

आ वो बार्हिष्ठो बहतु स्तवध्वै रथो वाजा ऋभुक्षणो अमृक्तः ।
 अभि त्रिपृष्ठैः सर्वनेषु सोमै—र्मदै सुशिप्रा महर्भिः पृणध्वम् १
 यूयं ह रत्नं मघवत्सु धत्थ स्वर्दशं ऋभुक्षणो अमृक्तम् ।
 सं यज्ञेषु स्वधावन्तः पिबध्वं वि नो राधांसि मतिभिर्दयध्वम् २
 उवोचिथ हि मघवन् दुष्णं महो अर्भस्म वसुनो विभागे ।
 उभा ते पूर्णा वसुना गभस्ती न सूनृता नि यमते वसुव्या ३ ४७५
 त्वमिन्द्र स्वयंशा ऋभुक्षा वाजो न साधुरस्तमेष्यका ।
 वयं नु ते दाश्वांसः स्याम ब्रह्म कृण्वन्तो हरियो वसिष्ठाः ४
 सनितासि प्रवतो दाशुषे चिद् याभिर्विवेषो हर्यश्च धीभिः ।
 ववन्मा नु ते युज्याभिरूती कदा न इन्द्र राय आ दशस्येः ५
 वासयसीव वेधसस्त्वं नः कदा न इन्द्र वचसो वुबोधः ।
 अस्तं तात्या धिया रयिं सुवीरं पृक्षो नो अर्वा न्युहीत वाजी ६
 अभि यं देवी निर्रतिश्चिदीशे नक्षन्त इन्द्रं शरदः सुपृक्षः ।
 उप त्रिवन्धुर्जरदष्टिमे—त्यस्ववेशं यं कृणवन्त मतीः ७
 आ नो राधांसि सवितः स्तवध्या आ रायो यन्तु पर्वतस्य रातौ ।
 सदा नो दिव्यः पायुः सिषक्तु यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ८ ४८०

॥४५॥ (ऋ० ७।३९।१-७)

ऊर्ध्वो अभिः सुमतिं वस्वो अश्रेत् प्रतीची जूर्णिर्देवतातिमेति ।
 भेजाते अद्रीं रथ्यैव पन्था—मृतं होता न इषितो यजाति १
 प्र वावृजे सुप्रया बर्हिरेषा—मा विश्वतीव वीरिट इयाते ।
 विशामक्तोरुषसः पूर्वहूतौ वायुः पूषा स्वस्तये नियुत्वान् २
 जमया अत्र वसवो रन्त देवा उरावन्तरिक्षे मर्जयन्त शुभ्राः ।
 अर्वाक् पथ उरुजयः कृणुध्वं श्रोता दूतस्य जग्मुषो नो अस्व ३ ४८३

ते हि यज्ञेषु यज्ञियांस ऊमाः सधस्थं विश्वे अभि सन्ति देवाः ।

ताँ अध्वर उंशतो यक्ष्यमे श्रुष्टी भगं नासत्या पुरंधिम्
आग्ने गिरो दिव आ पृथिव्या मित्रं वह वरुणमिन्द्रमग्निम् ।

४ ४८४

आर्यमणमदिति विष्णुमेषां सरस्वती मरुतो मादयन्ताम्
ररे हव्यं मतिभिर्यज्ञियानां नक्षत् कामं मर्त्यानामसिन्वन् ।

५

धाता रयिमविदस्यं सदासां संक्षीमहि युज्येभिर्नु देवैः
नू रोदसी अभिष्टुते वसिष्ठैः कृतावानो वरुणो मित्रो अग्निः ।

६

यच्छन्तु चन्द्रा उपमं नो अर्कं यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः

७

॥४६॥ (ऋ० ७।४०।१-६)+

ओ श्रुष्टिर्विदुध्याडु समेतु प्रति स्तोमं दधीमहि तुराणाम् ।

यदद्य देवः सविता सुवाति स्यामांस्य रत्तिनो विभागे

१

मित्रस्तन्नो वरुणो रोदसी च द्युभक्तमिन्द्रो अर्यमा ददातु ।

दिदैष्टु देव्यदिति रेकणो वायुश्च यन्नियुवैते भगश्च

२

सेदुग्रो अस्तु मरुतः स शुष्मी यं मर्त्यं पृषदश्चा अवाथ ।

उतेमग्निः सरस्वती जुनन्ति न तस्य रायः पर्येतास्ति

३ ४९०

अयं हि नेता वरुण क्रतस्य मित्रो राजानो अर्यमापो धुः ।

सुहवा देव्यदितिरनर्वा ते नो अंहो अतिं पर्षन्नरिष्टान्

४

अस्य देवस्य मीळुषो वया विष्णोरेषस्य प्रभुथे हविभिः

विदे हि रुद्रो रुद्रियं महित्वं यासिष्टं वतिरश्विनाविरावत्

५

मात्रं पूषन्नाघृण हरस्यो वरुत्रो यद् रातिषाचश्च रासन् ।

मयोभुवो नो अर्वन्तो नि पान्तु वृष्टिं परिजमा वातो ददातु

६

॥४७॥ (ऋ० ७।४१।१) जगती । ×

प्रातरग्निं प्रातरिन्द्रं हवामहे प्रातर्मित्रावरुणा प्रातरश्विना ।

प्रातर्भगं पूषणं ब्रह्मणस्पतिं प्रातः सोममुत रुद्रं हुवेम

१

॥४८॥ (ऋ० ७।४२।१-६) त्रिष्टुप् ।

प्र ब्रह्माणो अङ्गिरसो नक्षन्त प्र क्रन्दनुर्नभन्यस्य वेतु ।

प्र धेनव उदप्रुतो नवन्त युज्यातामद्रीं अध्वरस्य पेशः

१ ४९५

| | | |
|---|-----------------------|-----|
| सुगस्ते अग्ने सनवित्तो अध्वा युक्ष्वा सुते हरितो रोहितश्च । ये वा सन्नरुषा वीरवाहो हुवे देवानां जनिमानि सत्तः समृ वो यज्ञं महयन् नमोभिः प्र होता मन्द्रो रिरिच उपाके । यजस्व सु पूर्वणीक देवा—ना यज्ञियांमरमतिं ववृत्याः यदा वीरस्य रेवतो दुरोणे स्योनशीरतिथिराचिकेतत् । सुप्रीतो अग्निः सुधितो दम आ स विशे दाति वार्यमियत्यै इमं नो अग्ने अध्वरं जुषस्व मरुत्स्विन्द्रै यशसं कृधी नः । आ नक्ता बर्हिः सदतामुषासो—शन्ता मित्रावरुणा यजेह एवाग्निं सहस्यं वसिष्ठो रायस्कामो विश्वप्स्यस्य स्तौत् । इषं रयिं पप्रथद् वाजमस्मे यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः | २ ३ ४ ५ ६ | ५०० |
|---|-----------------------|-----|

॥४९॥ (ऋ० ७।४३।१-५)

| | | |
|---|-----------------------|-----|
| प्र वो यज्ञेषु देवयन्तो अर्चन् द्यावा नमोभिः पृथिवी इषध्वै । येषां ब्रह्माण्यसमानि विप्रा विष्वाग्नियन्ति वनिनो न शाखाः प्र यज्ञ एतु हेत्वो न सप्ति—रुघच्छध्वं समनसो घृताचीः । स्तृणीत बर्हिरध्वराय साधू—ध्वा शोचीषि देवयून्यस्थुः आ पुत्रासो न मातरं विभृत्राः सानौ देवासो बर्हिषः सदन्तु । आ विश्वाचीं विदुध्यामनक्त्व—ग्ने मा नो देवताता मृधस्कः ते सीषपन्त जोषमा यजत्रा ऋतस्य धाराः सुदुधा दुहानाः । ज्येष्ठो वो अद्य मह आ वसूना—मा गन्तन समनसो यति छ एवा नो अग्ने विक्ष्वा दशस्य त्वया वयं सहसावन्नास्क्राः । राया युजा सधमादो अरिष्टा यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः | १ २ ३ ४ ५ | ५०५ |
|---|-----------------------|-----|

॥५०॥ (ऋ० ७।४४।१) जगती ।

| | |
|---|---|
| दाघिक्रां वः प्रथममश्विनोषस—मग्निं समिद्धं भगमूतये हुवे । इन्द्रं विष्णुं पूषणं ब्रह्मणस्पतिं—मादित्यान् द्यावापृथिवी अपः स्वः | १ |
|---|---|

॥५१॥ (ऋ० ७।४८।४) त्रिष्टुप् ।

| | | |
|---|---|-----|
| नू देवासो वरिवः कर्तना नो भूत नो विश्वेऽवसे सजोषाः । समस्ते इषं वसवो ददीरन् यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः | ४ | ५०७ |
|---|---|-----|

॥५२॥ (क्र० ७/५०/३) जगती ।

यच्छल्मलौ भवन्ति यन्नदीषु यदोषधीभ्यः परि जायते विषम् ।

विश्वे देवा निरितस्तत् सुवन्तु मा मां पथेन रपसा विदुत् त्सरुः

3 406

॥५३॥ (ऋ० ८१५।१०-११)

(५०९-५११) विश्वमना वैयश्वः । उष्णिक् ।

उत नो देव्यदिति—रुष्यतां नासत्या । उरुष्यन्तु मरुतो वृद्धशंसः १०

ते नौ नावमुंरुष्यत् दिवा नक्तं सुदानवः । अरिष्यन्तो नि पायुभिः सचेमहि ११ ५१०

अघ्नते विष्णवे वयमरिष्यन्तः सुदानवे । श्रुधि स्वयावन्तिसन्धो पूर्वचित्तये १२

॥५४॥ (क्र० ८।२७।१-२२)

(५१२-५२) मनुर्वैवस्वतः । प्रगाथः=(विषमा बृहती+समा सतोबृहती) ।

अग्निरुक्थे पुरोहितो ग्रावाणो बर्हिरध्वरे ।

ऋचा या॒मि म॒रुतो॑ ब्रह्म॒णस्पति॑ दे॒वाँ अ॒वो वरे॑ण्यम् १

आ पशुं गांसि पृथिवीं वनस्पतीं—नुषासा नक्तमोषधीः ।

विश्वे च नो वसवो विश्ववेदसो धीनां भूत प्रावितारः २

प्र सू न एत्वध्वरोऽ३ ऽग्रा देवेषु पूर्यः ।

आदित्येषु प्र वरुणे धृतव्रते मरुत्सु विश्वमानुषु ३

विश्वे हि ष्मा मनवे विश्ववेदसो भुवन् वृधे रिशादसः ।

अरिष्टेभिः पायुभिर्विश्ववेदसो यन्ता नोऽवृकं छुर्दिः ४ ५१५

आ नो अद्य समनसो गन्ता विश्वे सजोषसः ।

अ० च० गिरा मरुतो देव्यदिते सदनं पस्त्ये महि ५

अभि प्रिया मरुतो या वो अश्वया हव्या मित्र प्रयाथन ।

आ बहिर्निद्रो वरुणस्तुरा नर आदित्यासः सदन्तु नः ६

वयं वो वृक्तबर्हिषो हितप्रयस आनुषक् ।

सुतसोमासो वरुण हवामहे मनुष्वदिद्वाग्रयः ७

आ प्र यात मरुतो विष्णो अश्विना पृषन् माकीनया धिया ।

इन्द्र आ यातु प्रथमः सनिष्युभिर्वृषा यो वृत्रहा गृणे ८

त्रि नो देवासो अद्रुहो ऽच्छिद्रं शर्म यच्छत ।

य मत्र मत्रा नमो न निहन्ति नो वक्ष्यामि ॥ ५१०

| | |
|--|--------|
| अस्ति हि वः सजात्यं रिशादसो देवासो अस्त्याप्यम् । | |
| प्र णः पूर्वस्मै सुविताय वोचत मधू सुम्राय नव्यसे | १० |
| इदा हि व उपस्तुति—मिदा वामस्य भक्तये । | |
| उप वो विश्ववेदसो नमस्यु—रा असृक्ष्यन्यामिव | ११ |
| उदु प्य वः सविता सुप्रणीतयो ऽस्थादूर्ध्वो वरेण्यः । | |
| नि द्विपादश्चतुष्पादो अर्थिनो ऽविश्रन् पतयिष्णवः | १२ |
| देवंदेवं वोऽवसे देवंदेवमभिष्टये । | |
| देवंदेवं हुवेम वाजसातये गृणन्तो देव्या धिया | १३ |
| देवासो हि ष्मा मनवे समन्यवो विश्वे साकं सरातयः । | |
| ते नो अद्य ते अपरं तुचे तु नो भवन्तु वरिवोविदः | १४ ५२५ |
| प्र वः शंसाम्यद्रुहः संस्थ उपस्तुतीनाम् । | |
| न तं धूर्तिर्वरुण मित्र मर्त्यं यो वो धामभ्योऽविधत् | १५ |
| प्र स क्षयं तिरते वि महीरिषो यो वो वराय दाशति । | |
| प्र प्रजाभिर्जायते धर्मेणस्पर्ष—रिष्टः सर्व एधते | १६ |
| ऋते स विन्दते युधः सुगेभिर्यात्यध्वनः । | |
| अर्यमा मित्रो वरुणः सरातयो यं त्रायन्ते सजोषसः | १७ |
| अज्रे चिदस्मै कृणुथा न्यञ्चनं दुर्गे चिदा सुसरणम् । | |
| एषा चिदस्मादुशनिः परो नु सास्तेधन्ती वि नश्यतु | १८ |
| यदद्य सूर्य उद्यति प्रियक्षत्रा ऋतं दुध । | |
| यन्निम्रुचिं प्रबुधिं विश्ववेदसो यद् वा मध्यंदिने दिवः | १९ ५३० |
| यद् वाभिपित्वे असुरा ऋतं यते छुर्दियेभ वि दाशुषे । | |
| वयं तद् वो वसवो विश्ववेदस उप स्थेयाम मध्य आ | २० |
| यदद्य सूर उदिते यन्मध्यंदिन आतुचि । | |
| वामं धत्थ मनवे विश्ववेदसो जुह्वानाय प्रचेतसे | २१ |
| वयं तद् वः सम्राज आ वृणीमहे पुत्रो न बहुपाय्यम् । | |
| अश्याम तदादित्या जुह्वतो हवि—र्येन वस्योऽनशामहे | २२ |

॥५५॥ (ऋ० ८।२८।१-५) गायत्री, ४ पुरउष्णिक् ।

ये त्रिंशति त्रयस्पुरो देवासो बर्हिंसासदन् । विदन्नहं द्वितासन् । १ ५३४

| | | | |
|--------------------------|---|---|-----|
| वरुणो मित्रो अर्यमा | स्मद्रातिषाचो अग्रयः । पत्नीवन्तो वषट्कृताः | २ | ५३५ |
| ते नो गोपा अपाच्या | स्त उदक्त इत्था न्यक् । पुरस्तात् सर्वया विशा | ३ | |
| यथा वशन्ति देवास्तथेदसत् | तदेषां नकिरा मिनत् । अरावा चन मर्त्यः | ४ | |
| सप्तानां सप्त ऋष्टयः | सप्त द्युम्नान्येषाम् । सप्तो अधि श्रियो धिरे | ५ | |

॥५६॥ (ऋ० ८।२९।१-१०)

(कश्यपो वा मारीचः) । द्विपदा विराद् ।

| | | | |
|-----------------------------|------------------------------|----|-------|
| बभ्रुरेको विषुणः सुनरो | युवाङ्ग्यङ्क्ते हिरण्ययम् । | १ | |
| योनिमेक आ संसाद् द्योतनो | ऽन्तर्देवेषु मेधिरः | १। | २ ५४० |
| वाशीमेको विभर्ति हस्त | आयसीमन्तर्देवेषु निधुविः । | ३ | |
| वज्रमेको विभर्ति हस्त | आहितं तेन वृत्राणि जिघ्रते | २। | ४ |
| तिग्ममेको विभर्ति हस्त | आयुधं शुचिरुग्रो जलाषभेषजः । | ५ | |
| पथ एकः पीपाय तस्करो यथा | एष वेद निधीनाम् | ३। | ६ |
| त्रीण्येक उरुगायो वि चक्रमे | यत्र देवासो मदन्ति । | | ७ ५४५ |
| विभिर्द्वा चरत एकया सह | प्र प्रवासेव वसतः | ४। | ८ |
| सदो द्वा चक्राते उपमा दिवि | सम्राजा सर्पिरासुती । | | ९ |
| अर्चन्त एके महि सामं मन्वत | तेन सूर्यमरोचयन् | ५। | १० |

॥५७॥ (ऋ० ८।३०।१-४)

१ गायत्री, २ पुरजघ्निक्, ३ बृहती, ४ अनुष्टुप् ।

| | | | |
|-----------------------------|---|---|-----|
| नहि वो अस्त्यर्भको | देवासो न कुमारकः । विश्वे सतोमहान्त इत् | १ | |
| इति स्तुतासो असथा रिशादसो | ये स्थ त्रयश्च त्रिशच्च । मनोर्देवा यज्ञियासः | २ | ५५० |
| ते नस्त्राध्वं तेऽवत | त उ नो अधि वोचत । | | |
| मा नः पथः पित्र्यान्मानवाधे | दूरं नैष्ट परावतः | ३ | |
| ये देवास इह स्थन | विश्वे वैश्वानरा उत । | | |
| असभ्यं शर्म सप्रथो | गवेऽश्वाय यच्छत | ४ | |

॥५८॥ (ऋ० ८।५४ [बाल० ६] ३-४)

(५५३-५४) मातरिश्वा काण्वः । प्रगाथः = (विषमा बृहती+समा सतोबृहती)

| | | | |
|-------------------------|------------------------|---|-----|
| आ नो विश्वे सजोषसो | देवासो गन्तनोष नः । | | |
| वसवो रुद्रा अवसे न आ गम | ञ्छृण्वन्तु मरुतो हवम् | ३ | ५५३ |

पूषा विष्णुर्हवन् मे सरस्वत्यवन्तु सप्त सिन्धवः ।

आपो वातः पर्वतासो वनस्पतिः शृणोतु पृथिवी हवम्

४

॥५९॥ (ऋ० ८।५८ [बाल० १०] । १-३)

(५५५-५७) मेध्यः काण्वः । (१ ऋत्विजो वा) । त्रिष्टुप् ।

यमुत्विजो बहुधा कल्पयन्तः सचेतसो यज्ञमिमं वहन्ति ।

यो अनूचानो ब्राह्मणो युक्त आसीत् का स्वित् तत्र यजमानस्य संवित्

१ ५५५

एकं एवाग्निर्वहुधा समिद्ध एकः सूर्यो विश्वमनु प्रभूतः ।

एकैवोषाः सर्वमिदं वि भ्रात्येकं वा इदं वि बभूवु सर्वम्

२

ज्योतिष्मन्तं केतुमन्तं त्रिचक्रं सुखं रथं सुषदं भूरिवारम् ।

चित्रामघा यस्य योगेऽधिजज्ञे तं वां हुवे अतिं रिक्तं पिबध्वै

३

॥६०॥ (ऋ० ८।६९।११[पूर्वार्धः])

(५५८) प्रियमेध आङ्गिरसः । पंक्तिः ।

अपादिन्द्रो अपादग्निर्विश्वे देवा अमत्सत ।

११

॥६१॥ (ऋ० ८।८३।१-२)

(५५९-६७) कुसीदी काण्वः । गायत्री ।

देवानामिदवो महत् तदा वृणीमहे वयम् । वृष्णामस्मभ्यमृतये

१

ते नः सन्तु युजः सदा वरुणो मित्रो अर्यमा । वृधासंश्च प्रचेतसः

२

५६०

अतिं नो विष्पिता पुरु नौभिर्पो न पर्वथ । यूयमृतस्य रध्यः

३

वामं नो अस्त्वर्थमन् वामं वरुण शंस्यम् । वामं ह्यावृणीमहे

४

वामस्य हि प्रचेतस ईशानासो रिशादसः । नेमादित्या अघस्य यत्

५

वयमिद् वः सुदानवः क्षियन्तो यान्तो अध्वन्ना । देवा वृधाय हूमहे

६

अधि न इन्द्रैषां विष्णो सजात्यानाम् । इता मरुतो अश्विना

७

५६५

प्र भ्रातृत्वं सुदानवो ऽधं द्विता समान्या । मातुर्गर्भे भरामहे

८

यूयं हि ष्ठा सुदानव इन्द्रज्येष्ठा अभिद्यवः । अधो चिद् व उत ब्रुवे

९

॥६२॥ (ऋ० १०।३१।१-११)

(५६८-७९) कवष पेल्लवः । त्रिष्टुप् ।

आ नो देवानामुष वेतु शंसो विश्वेभिस्तुरैरवसे यजत्रः ।

तेभिर्वयं सुषलायो भवेम तरन्तो विश्वा दुरिता स्याम

१

५६८

६० [विश्वे देवाः] ६

| | |
|---|-------|
| परि चिन्मतो द्राविणं ममन्या—हतस्य पथा नमसा विवासेत् । | |
| उत स्वेन कर्तुना सं वदेत् श्रेयांसं दक्षं मनसा जगृभ्यात् | २ ५६९ |
| अधाधि धीतिरससृग्रमंशा—स्तीर्थे न दस्समुप यन्त्यूमाः । | |
| अभ्यानिश्म सुवितस्य शूपं नवेदसो अमृतानामभूम | ३ |
| नित्यश्चाकन्यात् स्वपतिर्दमूना यस्मा उ देवः सविता जजान । | |
| भगो वा गोभिर्यमेमनज्यात् सो अस्मै चारुश्छदयदुत स्यात् | ४ |
| इयं सा भूया उपसामिव क्षा यद्ध क्षुमन्तः शवसा समार्यन् । | |
| अस्य स्तुतिं जरितुर्भिक्षमाणा आ नः शग्मास उप यन्तु वाजाः | ५ |
| अस्येदेपा सुमतिः पप्रथाना ऽभवत् पूव्या भूमना गौः । | |
| अस्य सनीला असुरस्य योनौ समान आ भरणे विभ्रमाणाः | ६ |
| किं स्विद्वनं क उ स वृक्ष आस यतो द्यावापृथिवी निष्टतक्षुः । | |
| संतस्थाने अजरे इतर्जती अहानि पूर्वोरुपसो जरन्त | ७ |
| नैतावदेना परो अन्यदे—स्त्युक्षा स द्यावापृथिवी विभर्ति । | |
| त्वचं पवित्रं कृणुत स्वधावान् यदीं सूर्यं न हरितो वहन्ति | ८ ५७५ |
| स्तेगो न क्षामत्येति पृथ्वीं मिहं न वातो वि ह वाति भूम । | |
| मित्रो यत्र वरुणो अज्यमानो ऽग्निर्वने न व्यसृष्ट शोकम् | ९ |
| स्तरिर्यत् सूत सद्यो अज्यमाना व्यथिरव्यथीः कृणुत स्वगोपा । | |
| पुत्रो यत् पूर्वः पित्रोर्जनिष्ट शम्प्यं गौर्जगार यद्ध पृच्छान् | १० |
| उत कण्वं नृपदः पुत्रमाहु—रुत श्यावो धनमादत्त वाजी । | |
| प्र कृष्णाय रुशदपिन्वतोध—र्कृतमत्र नकिरस्मा अपीपेत् | ११ |

॥६३॥ (ऋ० १०।३३।१)

| | |
|---|---|
| प्र मा युयुजे प्रयुजो जनानां वहामि स्म पूषणमन्तरेण । | |
| विश्वे देवासो अध मारमरक्षन् दुःशासृगगादिति घोषं आसीत् | १ |

॥६४॥ (ऋ० १०।३५।१-१४)

(५८०-६०७) लुशो धानाकः । जगती, १३-१४ त्रिष्टुप् ।

| | |
|--|-------|
| अवुंभ्रमु त्य इन्द्रवन्तो अग्रयो ज्योतिर्भरन्त उपसो व्युष्टिषु । | |
| मही द्यावापृथिवी चैततामपो ऽद्या देवानामव आ वृणीमहे | १ ५८० |

| | |
|--|--------|
| दिवस्पृथिव्योरव आ वृणीमहे मातृन्तिसन्धून् पर्वताञ्छर्यणावतः । | |
| अनागास्त्वं सूर्यमुषासमीमहे भद्रं सोमः सुवानो अद्या कृणोतु नः | २ |
| द्यावा नो अद्य पृथिवी अनागसो मही त्रायेतां सुविताय मातरा । | |
| उषा उच्छन्त्यप वाधतामघं स्वस्त्यग्निं समिधानमीमहे | ३ |
| इयं न उस्मा प्रथमा सुदेव्य रेवत् सनिभ्यो रेवती व्युच्छतु । | |
| आरे मन्युं दुर्विदत्रस्य धीमहि स्वस्त्यग्निं समिधानमीमहे | ४ |
| प्र याः सिस्रते सूर्यस्य रश्मिभिर्ज्योतिर्भरन्तीरुषसो व्युष्टिषु । | |
| भद्रा नो अद्य श्रवसे व्युच्छत स्वस्त्यग्निं समिधानमीमहे | ५ |
| अनमीवा उषस आ चरन्तु न उदग्रयो जिहतां ज्योतिषा बृहत् । | |
| आयुक्षातामश्विना तूतुजिं रथं स्वस्त्यग्निं समिधानमीमहे | ६ ५८५ |
| श्रेष्ठं नो अद्य संवितर्वरेण्यं भागमा सुव स हि रत्नधा असि । | |
| रायो जनित्रीं धिषणामुप ब्रुवे स्वस्त्यग्निं समिधानमीमहे | ७ |
| पिपर्तु मा तदृतस्य प्रवाचनं देवानां यन्मनुष्याः अमन्महि । | |
| विश्वा हदुस्माः स्पृच्छदेति सूर्यः स्वस्त्यग्निं समिधानमीमहे | ८ |
| अद्वेषो अद्य बर्हिषः स्तरीमणि ग्राव्णां योगे मन्मनः साध ईमहे । | |
| आदित्यानां शर्मेणि स्था भुरण्यसि स्वस्त्यग्निं समिधानमीमहे | ९ |
| आ नो बर्हिः सधमादे बृहद्विवि देवा ईके मादया सप्त होतृन् । | |
| इन्द्रं मित्रं वरुणं सातये भगं स्वस्त्यग्निं समिधानमीमहे | १० |
| त आदित्या आ गता सर्वतातये बृधे नो यज्ञमवता सजोपसः । | |
| बृहस्पतिं पूषणमश्विना भगं स्वस्त्यग्निं समिधानमीमहे | ११ ५९० |
| तन्नो देवा यच्छत सुप्रवाचनं छर्दिरादित्याः सुभरं नृपाय्यम् । | |
| पश्चं तोकाय तनयाय जीवसे स्वस्त्यग्निं समिधानमीमहे | १२ |
| विश्वे अद्य मरुतो विश्व ऊती विश्वे भवन्त्वग्रयः समिद्धाः । | |
| विश्वे नो देवा अवसा गमन्तु विश्वमस्तु द्रविणं वाजो अस्मे | १३ |
| यं देवासोऽवथ वाजसातौ यं त्रायध्वे यं पिपृथात्थंहः । | |
| यो वो गोपीथे न भयस्य वेद ते स्याम देववीतये तुरासः | १४ ५९३ |

॥६५॥ (ऋ० १०।३६।१-१४)

| | | |
|----------------------------------|--------------------------------------|--------|
| उषासानक्ता बृहती सुपेशसा | द्यावाक्षामा वरुणो मित्रो अर्यमा । | |
| इन्द्रं हुवे मरुतः पर्वता अप | आदित्यान् द्यावापृथिवी अपः स्वः | १ ५९४ |
| द्यौश्च नः पृथिवी च प्रचेतस | ऋतावरी रक्षतामंहसो रिषः । | |
| मा दुर्विदत्रा निर्ऋतिर्न ईशत | तद् देवानामवो अद्या वृणीमहे | २ |
| विश्वस्मान्नो अदितिः पात्वंहसो | माता मित्रस्य वरुणस्य रेवतः । | |
| स्वर्वज्ज्योतिरवृकं नशीमहि | तद् देवानामवो अद्या वृणीमहे | ३ |
| ग्रावा वदन्नप रक्षांसि सेधतु | दुष्वङ्ग्यं निर्ऋतिं विश्वमत्रिणम् । | |
| आदित्यं शर्म मरुतामशीमहि | तद् देवानामवो अद्या वृणीमहे | ४ |
| एन्द्रो बर्हिः सीदतु पिन्वतामिळा | बृहस्पतिः सामभिर्ऋको अर्चतु । | |
| सुप्रकेतं जीवसे मन्म धीमहि | तद् देवानामवो अद्या वृणीमहे | ५ |
| दिविस्पृशं यज्ञमस्माकमश्विना | जीराध्वरं कृणुतं सुममिष्टये । | |
| प्राचीनरश्मिमाहुतं घृतेन | तद् देवानामवो अद्या वृणीमहे | ६ |
| उप ह्वये सुहवं मारुतं गणं | पावकमृष्वं सख्यायं शंभुवम् । | |
| रायस्पोषं सौश्रवसाय धीमहि | तद् देवानामवो अद्या वृणीमहे | ७ ६०० |
| अपां पेहं जीवधन्यं भरामहे | देवाव्यं सुहवमध्वरश्रियम् । | |
| सुरश्मि सोममिन्द्रियं यमीमहि | तद् देवानामवो अद्या वृणीमहे | ८ |
| सनेम तत् सुसनिता सनित्वभि | र्वयं जीवा जीवपुत्रा अनागसः । | |
| ब्रह्मद्विषो विश्वगेनो भरेरत | तद् देवानामवो अद्या वृणीमहे | ९ |
| ये स्था मनोर्यज्ञियास्ते शृणोतन | यद् वो देवा ईमहे तद् ददातन । | |
| जैत्रं क्रतुं रयिमद् वीरवद्यश | स्तद् देवानामवो अद्या वृणीमहे | १० |
| महदुद्य महतामा वृणीमहे | ऽवो देवानां बृहतामनर्वणाम् । | |
| यथा वसु वीरजातं नशीमहे | तद् देवानामवो अद्या वृणीमहे | ११ |
| महो अग्नेः समिधानस्य शर्म | ण्यनागा मित्रे वरुणे स्वस्तये । | |
| श्रेष्ठे स्याम सवितुः सवीमनि | तद् देवानामवो अद्या वृणीमहे | १२ |
| ये सवितुः सत्यसंवस्य विश्वे | मित्रस्य त्रते वरुणस्य देवाः । | |
| ते सौभगं वीरवद गोमदमो | दधातन द्रविणं चित्रमस्मे | १३ ६०६ |

सुविता पश्चात्तात् सविता पुरस्तात् सवितोत्तरात्तात् सविताधरात्तात् ।
सविता नः सुवतु सर्वतांति सविता नो रासतां दीर्घमायुः

१४

॥६६॥ (ऋ० १०।५२।१-६)

(६०८-१३) सौचीकोऽग्निः । त्रिष्टुप् ।

विश्वे देवाः शास्तन मा यथेह होता वृतो मनवै यन्निषद्य ।

प्र मे ब्रूत भागधेयं यथा वो येन पथा हव्यमा वो वहानि

१

अहं होता न्यसीदुं यजीयान् विश्वे देवा मरुतो मा जुनन्ति ।

अहरहरश्चिनाध्वर्यवं वां ब्रह्मा समिद् भवति साहुतिर्वाग्

२

अयं यो होता किरु स यमस्य कमप्यूहे यत् समञ्जान्ति देवाः ।

अहरहर्जायते मासिमस्य—था देवा दधिरे हव्यवाहम्

३

६१०

मां देवा दधिरे हव्यवाह—मपम्लुक्तं बहु कृच्छ्रा चरन्तम् ।

अग्निर्विद्वान् यज्ञं नः कल्पयाति पञ्चयामं त्रिवृतं सप्ततन्तुम्

४

आ वो यक्ष्यमृतत्वं सुधीरं यथा वो देवा वरिवः कराणि ।

आ बाह्वोर्वज्रमिन्द्रस्य धेया—मथेमा विश्वाः पृतेना जयाति

५

प्रीणि शता त्री सहस्राण्यग्निं त्रिंशच्च देवा नवं चासपर्यन् ।

औक्षन् घृतैरस्त्वृणन् बर्हिर्हस्मा आदिद्वोतारं न्यसादयन्त

६

॥६७॥ (ऋ० १०।५६।१-७)

(६१४-२०) बृहदुक्थो वामदेव्यः । त्रिष्टुप्, ४-६ जगती ।

इदं त एकं पर ऊं त एकं तृतीयैन ज्योतिषा सं विशस्व ।

संवैशने तन्वश्चाकरोधि प्रियो देवानां परमे जनित्रे

१

तनूष्टे वाजिन् तन्वं नयन्ती वाममस्मभ्यं धातु शर्म तुभ्यम् ।

अहुतो महो धरुणाय देवान् दिवीव ज्योतिः स्वमा मिमीयाः

२

६१५

वाज्यसि वाजिनेना सुवेनीः सुवितः स्तोमं सुवितो दिवँ गाः ।

सुवितो धर्मं प्रथमानु सत्या सुवितो देवान्सुवितोऽनु पत्म

३

महिम्न एषां पितरश्चनेशिरे देवा देवेष्वदधुरपि क्रतुम् ।

समविष्यचरुत यान्यत्विषु—रैषां तनूषु नि विविशुः पुनः

४

सहोभिर्विश्वं परि चक्रमू रजः पूर्वा धामान्यमिता मिमानाः ।

तनूषु विश्वा भुवना नि यैमिरे प्रासारयन्त पुरुध प्रजा अनु

५

६१८

द्विधा सूनवोऽसुरं स्वर्विदु—मास्थापयन्त नृतीयेन कर्मणा ।
 स्वां प्रजां पितरः पित्र्यं सह आवरेष्वदधुस्तन्तुमाततम्
 नावा न क्षोदः प्रदिशः पृथिव्याः स्वस्तिभिरति दुर्गाणि विश्वा ।
 स्वां प्रजां बृहदुक्थो महित्वा ऽऽ वरेष्वदधादा परेषु

६ ६१९

७

॥६८॥ (ऋ० १०।५७।१-६)

(६११-२६) वन्धुः श्रुतवन्धुर्गोपायनाः । गायत्री ।

मा प्र गाम पथो वयं मा यज्ञादिन्द्र सोमिनेः । मान्तः स्थुर्नो अरातयः १
 यो यज्ञस्य प्रसाधन—स्तन्तुर्देवेष्वारतः । तमाहुतं नशीमहि २
 मनो न्वा हुवामहे नाराशंसेन सोमेन । पितॄणां च मन्मभिः ३
 आ त एतु मनः पुनः कृत्वे दक्षाय जीवसे । ज्याक् च सूर्यं दृशे ४
 पुनर्नः पितरो मनो ददातु दैव्यो जनः । जीवं व्रातं सचेमहि ५ ६२५
 वयं सोम व्रते तव मनस्तनूषु विभ्रतः । प्रजावन्तः सचेमहि ६

॥६९॥ (ऋ० १०।६१।१-२७)

(६२७-६०) नाभानेदिष्टो मानवः । त्रिष्टुप् ।

इदमित्था रौद्रं गूर्तवंचा ब्रह्म कृत्वा शच्यामन्तराजौ ।
 क्राणा यदस्य पितरा मंहनेष्टाः पर्षत् पक्थे अहन्ना सप्त होतृन् १
 स इद् दानाय दभ्याय वन्व—श्चयवानः सदैरमिमीत वेदिम् ।
 तूर्वयाणो गूर्तवंचस्तमः क्षोदो न रेत इत ऊति सिञ्चत् २
 मनो न येषु हवनेषु तिग्मं विपः शच्या वनुथो द्रवन्ता ।
 आ यः शर्याभिस्तुविनुम्णो अस्या—ऽश्रीणीतादिशं गभस्तौ ३
 कृष्णा यद् गोष्वरुणीषु सीदद् दिवो नपाताश्विना हुवे वाम् ।
 व्रीतं मे यज्ञमा गतं मे अन्नं ववन्वांसा नेषमस्मृतधू ४ ६३०
 प्रथिष्ट यस्य वीरकर्ममिष्ण—दनुष्ठितं नु नयो अपौहत् ।
 पुनस्तदा बृहति यत् कनाया दुहितुरा अनुभृतमनुर्वा ५
 मध्या यत् कर्त्त्वमभवदभीके कामं कृष्णाने पितरि युवत्याम् ।
 मनानग्रेतो जहतुर्वियन्ता सानौ निषिक्तं सुकृतस्य योनौ ६
 पिता यत् स्वां दुहितरमधिष्कन् क्षमया रेतः संजग्मानो नि विञ्चत् ।
 स्वाध्योऽजनयन् ब्रह्म देवा वास्तोष्पतिं व्रतपां निरतक्षन् ७ ६३३

| | |
|--|--------|
| स ईं वृषा न फेनमस्यदाजौ स्मदा परैदपं दुभ्रचैताः । | |
| सरत् पदा न दक्षिणा परावृङ् न ता नु मे पृश्न्यो जगृभ्रे | ८ |
| मक्षू न वह्निः प्रजाया उपब्धि—रग्निं न नग्र उप सीददूर्धः । | |
| सर्नितेध्मं सर्नितोत वाजं स धर्ता जज्ञे सहसा यवीयुत् | ९ ६३५ |
| मक्षू कनायाः सख्यं नवीगवा क्रतं वदन्त क्रतयुक्तिमग्मन् । | |
| द्विबर्हसो य उप गोपमागु—रदक्षिणासो अच्युता दुदुक्षन् | १० |
| मक्षू कनायाः सख्यं नवीयो राधो न रेत क्रतामिन्तुं रण्यन् । | |
| शुचि यत् ते रेक्ण आर्यजन्त सबर्द्धायाः पर्य उस्त्रियायाः | ११ |
| पश्वा यत् पश्वा वियुता बुधन्ते—ति ब्रवीति वक्तरी रराणः । | |
| वसोर्वसुत्वा कारवोऽनेहा विश्वं विवेष्टि द्रविणमुप क्षु | १२ |
| तदिन्वस्य परिषद्धानो अग्मन् पुरु सदेन्तो नार्षदं विभित्सन् । | |
| वि शुष्णस्य संग्रथितमनर्वा विदत् पुरुप्रजातस्य गुहा यत् | १३ |
| भर्गो ह नामोत यस्य देवाः स्वर्ण ये त्रिषधस्थे निषेदुः । | |
| अग्निर्ह नामोत जातवेदाः शुधी नो होतर्कृतस्य होताध्रुक | १४ ६४० |
| उत त्या मे रौद्रावर्चिमन्ता नासत्याविन्द्र गूर्तयं यजध्वै । | |
| मनुष्वद् वृक्तवर्हिषे रराणा मन्दू हितपयसा विश्वु यज्यू | १५ |
| अयं स्तुतो राजा वान्दि वेधा अपश्च विप्रस्तरति स्वसेतुः । | |
| स कक्षीर्वन्तं रेजयत् सो अग्निं नेमिं न चक्रमर्वतो रघुद्रु | १६ |
| स द्विबन्धुर्वैतरणो यष्टा सवर्धु धेनुमस्व दुहध्वै । | |
| सं यन्मित्रावरुणा वृञ्ज उक्थै—ज्येष्ठैर्मिर्यमणं वरुथैः | १७ |
| तद्वन्धुः सूरिर्दिवि तै धियंधा नाभानेर्दिष्टो रपति प्र वेनन् । | |
| सा नो नार्भिः परमास्य वा घा—ऽहं तत् पश्चा कतिथश्चिदास | १८ |
| इयं मे नार्भिरिह मे सधस्थ—मिमे मे देवा अयमस्मि सर्वैः । | |
| द्विजा अहं प्रथमजा क्रतस्ये—दं धेनुर्दुहजायमाना | १९ ६४५ |
| अघासु मन्द्रो अरतिर्विभावा ऽव स्यति द्विवर्तनिर्वनेषाद् । | |
| ऊर्ध्वा यच्छ्रेणिर्न शिशुर्दन् मक्षू स्थिरं शेवृधं सूत माता | २० |
| अघा गाव उपमार्ति कनाया अनु श्रान्तस्य कस्य चित् परैयुः । | |
| श्रुधि त्वं सुद्रविणो नुस्त्वं या—काश्चन्नस्य वावृधे सुनृताभिः | २१ ६४७ |

| | |
|---|--------|
| अध त्वमिन्द्र विद्वथस्मान् महो राये नृपते वज्रबाहुः । | |
| रक्षा च नो मधोनः पाहि सूरि—ननेहसस्ते हरिवो अभिष्टौ | २२ ६४८ |
| अध यद् राजाना गविष्टौ सरत् सरण्युः कारवे जरण्युः । | |
| विप्रः प्रेष्ठः स ह्येषां बभूव परा च वक्षदुत पर्षदेनान् | २३ |
| अधा न्वस्य जेन्यस्य पुष्टौ वृथा रेभन्त ईमहे तदू नु । | |
| सरण्युरस्य सूनुरश्चो विप्रश्चासि श्रवसश्च सातो | २४ ६५० |
| युवोर्यदि सख्यायास्मे शर्षीय स्तोमं जुजुषे नमस्वान् । | |
| विश्वत्र यस्मिन्ना गिरः समीचीः पूर्वीव गातुर्दाशत् सूनृतायै | २५ |
| स गृणानो अद्भिर्देवानिति सुबन्धुर्नमसा सुकतैः । | |
| वर्धदुक्थैर्वचोभिरा हि नूनं व्यध्वैति पयस उस्त्रियायाः | २६ |
| त ऊ पु णो महो यजत्रा भूत देवास ऊतये सजोषाः । | |
| ये वाजाँ अनयता वियन्तो ये स्था निचेतारो अमूराः | २७ |

॥७०॥ (ऋ० १०।६२।१-७)

(१-६ अङ्गिरसो वा) । ५ अनुष्टुप्; प्रगाथः = (६ बृहती, ७ सतोबृहती) ।

| | |
|---|-------|
| ये यज्ञेन दक्षिण्या समक्ता इन्द्रस्य सख्यममृतत्वमान्श । | |
| तेभ्यो भद्रमङ्गिरसो वो अस्तु प्रति गृभ्णीत मानवं सुमेधसः | १ |
| य उदाजन् पितरो गोमयं वस्वृ—तेनाभिन्दन् परिवत्सरे वलम् । | |
| दीर्घायुत्वमङ्गिरसो वो अस्तु प्रति गृभ्णीत मानवं सुमेधसः | २ ६५५ |
| य ऋतेन सूर्यमारोहयन् दिव्य—प्रथयन् पृथिवी मातरं वि । | |
| सुप्रजास्त्वमङ्गिरसो वो अस्तु प्रति गृभ्णीत मानवं सुमेधसः | ३ |
| अयं नामा वदति वल्गु वो गृहे देवपुत्रा ऋषयस्तच्छृणोतन । | |
| सुब्रह्मण्यमङ्गिरसो वो अस्तु प्रति गृभ्णीत मानवं सुमेधसः | ४ |
| विरूपास इदृषय—स्त इद् गम्भीरवैपसः । | |
| ते अङ्गिरसः सुनव—स्ते अग्नेः परि जज्ञिरे | ५ |
| ये अग्नेः परि जज्ञिरे विरूपासो दिवस्परि । | |
| नवग्वो नु दशग्वो अङ्गिरस्तमः सचा देवेषु मंहते | ६ |
| इन्द्रेण युजा निः संजन्त वाघतो ब्रजं गोमन्तमश्विनम् । | |
| सहस्रं मे ददतो अष्टकर्ण्यः श्रवो देवेष्वक्रत | ७ ६६० |

॥७१॥ (ऋ० १०।६३।१-१४, १७)

(६६१-९१) गयः प्लातः । जगती, १७ त्रिष्टुप् ।

| | |
|---|--------|
| परावतो ये दिधिषन्त आप्यं मनुप्रीतासो जनिमा विवस्वतः । | |
| ययातेर्ये नहुष्यस्य बर्हिषि देवा आसते ते अधि ब्रुवन्तु नः | १ |
| विश्वा हि वो नमस्यानि वन्द्या नामानि देवा उत यज्ञियानि वः । | |
| ये स्थ जाता अदितेरञ्चस्परि ये पृथिव्यास्ते म इह श्रुता हवम् | २ |
| येभ्यो माता मधुमत् पिबन्ते पर्यः पीयूषं द्यौरदितिरद्विर्बर्हाः । | |
| उक्थशुष्मान् वृषभरान्तस्वप्नस्तौ आदित्याँ अनु मदा स्वस्तये | ३ |
| नुचक्षसो अनिमिषन्तो अर्हणा बृहद् देवासो अमृतत्वमानशुः । | |
| ज्योतीरथा अहिमाया अनागसो दिवो वर्ष्माणं वसते स्वस्तये | ४ |
| सम्राजो ये सुवृधो यज्ञमाययु रपरिहृता दधिरे दिवि क्षयम् । | |
| ताँ आ विवास नमसा सुवृक्तिभिर्महो आदित्याँ अदितिं स्वस्तये | ५ ६६१ |
| को वः स्तोमं राधति यं जुजोषथ विश्वे देवासो मनुषो यति घ्नन् । | |
| को वोऽध्वरं तुविजाता अरं करद् यो नः पर्षदत्यंहः स्वस्तये | ६ |
| येभ्यो होत्रां प्रथमामायेजे मनुः समिद्धाग्निर्मनसा सप्त होतृभिः । | |
| त आदित्या अभयं शर्म यच्छत सुगा नः कर्त सुपथा स्वस्तये | ७ |
| य ईशिरे भुवनस्य प्रचेतसो विश्वस्य स्थातुर्जगतश्च मन्तवः । | |
| ते नः कुतादकुतादेनसस्पर्ध्या देवासः पिपृता स्वस्तये | ८ |
| भरोष्विन्द्रं सुहवं हवामहेऽहोमुचै सुकृतं दैव्यं जनम् । | |
| अग्निं मित्रं वरुणं सातये भगं द्यावापृथिवी मरुतः स्वस्तये | ९ |
| सुत्रामाणं पृथिवीं द्यामनेहसं सुशर्माणमदितिं सुप्रणीतिम् । | |
| दैवीं नावं स्वरित्रामनागसमस्रवन्तीमा रुहेमा स्वस्तये | १० ६७० |
| विश्वे यजत्रा अधि वोचतोतये त्रायध्वं नो दुरेवाया अभिहृतः । | |
| सत्यया वो देवहूत्या हुवेम शृण्वतो देवा अवसे स्वस्तये | ११ |
| अपामीधामप विश्वामनाहुतिमपारातिं दुर्विदत्रामघायतः । | |
| आरे देवा द्वेषो अस्मद् युयोतनो रुणः शर्म यच्छता स्वस्तये | १२ |
| अरिष्टः स मतो विश्व एधते प्र प्रजाभिर्जायते धर्मणस्परि । | |
| यमादित्यासो नयथा सुनीतिभिरति विश्वानि दुरिता स्वस्तये | १३ ६७३ |

यं देवासोऽवथ वाजसातौ यं शूरसाता मरुतो हिते धने ।

प्रातर्यावाणं रथमिन्द्र सानसि—मरिष्यन्तमा रुहेमा स्वस्तये

१४ ६७४

एवा प्लुतेः सुनुरंवीवृधद् वो विश्व आदित्या अदिते मनीषी ।

ईशानासो नरो अमर्त्येना—ऽस्तावि जनो दिव्यो गयेन

×१७

॥७२॥ (ऋ० १०।६४।१-१६) जगती; १२, १६ त्रिष्टुप् ।

कथा देवानां कतमस्य यामनि सुमन्तु नाम शृण्वतां मनामहे ।

को मृळाति कतमो नो मयस्करत् कतम ऊती अभ्या वर्तति

१

ऋतूयन्ति ऋतवो हृत्सु धीतयो वेनन्ति वेनाः पतयन्त्या दिशः ।

न मेडिता विद्यते अन्य एभ्यो देवेषु मे अधि कामा अयंसत

२

नरा वा शंसं पूषणमगोह्य—मग्निं देवेद्धमभ्यर्चसे गिरा ।

सूर्यामासा चन्द्रमसा यमं दिवि त्रितं वातमुषसमक्तुमश्विना

३

कथा कविस्तुवीरवान् कया गिरा बृहस्पतिर्वावृधते सुवृक्तिभिः ।

अज एकपात् सुहवेभिर्ऋक्भि—रहिः शृणोतु बुभ्योऽु हवीमनि

४

दक्षस्य वादिते जन्मनि व्रते राजाना मित्रावरुणा विवाससि ।

अतूर्तपन्थाः पुरुरथो अर्यमा सप्तहोता विषुरुपेषु जन्मसु

५ ६८०

ते नो अर्वन्तो हवनश्रुतो हवं विश्वे शृण्वन्तु वाजिनो मितद्रवः ।

सहस्रसा मेघसाताविव त्मना महो ये धने समिथेषु जग्निरे

६

प्र वो वायुं रथयुजं पुरंधिं स्तोमैः कृणुध्वं सख्याय पूषणम् ।

ते हि देवस्य सवितुः सर्वामनि ऋतुं सचन्ते सचितः सचेतसः

७

त्रिः सप्त सस्त्रा नद्यो महीरपो वनस्पतीन् पर्वतां अग्निमतये ।

कृशानुमस्तृन् तिष्यं सधस्थ आ रुद्रं रुद्रेषु रुद्रियं हवामहे

८

सरस्वती सरयुः सिन्धूरुमिभि—महो महीरवसा यन्तु वक्षणीः ।

देवीरापो मातरः सुदयित्वो घृतवत् पयो मधुमन्नो अर्चत

९

उत माता बृहद् दिवा शृणोतु न—स्त्वष्टा देवेभिर्जनिभिः पिता वचः ।

ऋभुक्षा वाजो रथस्पतिर्भगो रण्वः शंसः शशमानस्य पातु नः

१०

रण्वः संदृष्टौ पितुमां इव क्षयो भद्रा रुद्राणां मरुतामुपस्तुतिः ।

गोभिः प्याम यशमो जनेष्वा सदा देवास इळ्या सचेमहि

११ ६८६

| | |
|--|--------|
| यां मे धियं मरुत इन्द्र देवा अददात वरुण मित्र यूयम् । | |
| तां पीपयत पर्यसेव धेनुं कुविद् गिरो अधि रथे वहाथ | १२ |
| कुविदङ्ग प्रति यथा चिदस्य नः सजान्त्यस्य मरुतो बुबोधथ । | |
| नाभा यत्र प्रथमं संनसामहे तत्र जामित्वमदितिर्दधातु नः | १३ |
| ते हि द्यावापृथिवी मातरा मही देवी देवाञ्जन्मना यज्ञिये इतः । | |
| उभे बिभृत उभयं भरीमभिः पुरू रेतांसि पितृभिश्च सिञ्चतः | १४ |
| वि पा होत्रा विश्वमश्नोति वार्यं बृहस्पतिररमतिः पनीयसी । | |
| ग्रावा यत्र मधुषुदुच्यते बृहदवीवशन्त मतिभिर्मनीषिणः | १५ ६९० |
| एवा कविस्तुवीरवाँ ऋतज्ञा द्रविणस्युर्द्रविणसश्चक्रानः । | |
| उक्थेभिरत्र मतिभिश्च विप्रो ऽपीपयद् गयो दिव्यानि जन्म | १६ |

॥७३॥ (ऋ० १०।६।१-१५)

(६९२-७२०) वसुकर्णो वासुकः । जगती, १५ त्रिष्टुप ।

| | |
|--|-------|
| अग्निरिन्द्रो वरुणो मित्रो अर्यमा वायुः पूषा सरस्वती सजोषसः । | |
| आदित्या विष्णुर्मरुतः स्वर्वृहत् सोमो रुद्रो अदितिर्ब्रह्मणस्पतिः | १ |
| इन्द्राग्नी बृत्रहत्येषु सत्पती मिथो हिन्वाना तन्वाङ्गे समौकसा । | |
| अन्तरिक्षं मह्या पप्रुरोजसा सोमो घृतश्रीर्महिमानमरियन् | २ |
| तेषां हि मङ्गा महतामनवणां स्तोमाँ इयम्यृतज्ञा ऋतावृधाम् । | |
| ये अप्सवमर्णवं चित्रराधसस्ते नो रासन्तां महये सुमित्र्याः | ३ |
| स्वर्णरमन्तरिक्षाणि रोचना द्यावाभूमी पृथिवी स्कम्भुरोजसा । | |
| पृक्षा इव महयन्तः सुरातयो देवाः स्तयन्ते मनुषाय सूरयः | ४ ६९५ |
| मित्राय शिक्ष वरुणाय दाशुषे या सम्राजा मनसा न प्रयुच्छतः । | |
| ययोर्धाम धर्मणा रोचते बृहद् ययोरुभे रोदसी नाधसी वृतौ | ५ |
| या गौर्वेतिं पर्येति निष्कृतं पयो दुहाना व्रतनीरवारतः । | |
| सा प्रब्रुवाणा वरुणाय दाशुषे देवेभ्यो दाशद्रविषा विवस्वते | ६ |
| दिवक्षसो अग्निजिह्वा ऋतावृधं ऋतस्य योनिं विमुशन्त आसते । | |
| द्यां स्कभित्व्यप आ चक्रुरोजसा यज्ञं जनिन्वी तन्वीङ्गे नि मांमृजुः | ७ |
| परिक्षिता पितरा पूर्वजावरी ऋतस्य योना क्षयतः समौकसा । | |
| द्यावापृथिवी वरुणाय सव्रते घृतवत् पयो महिषाय पिन्वतः | ८ ६९९ |

| | |
|---|--------|
| प॒र्जन्यावातां वृष॒मा पु॒रीषिणे—न्द्रवायू वरु॑णो मि॒त्रो अ॒र्य॒मा । | |
| दे॒वाँ आ॒दित्याँ अ॒दिति॑ हवामहे ये पा॒र्थि॒वासो दि॒व्यासो अ॒प्सु ये | ९ ७०० |
| त्वष्टा॑रं वा॒युमृ॑भवो य ओह॑ते दै॒व्या हो॒तारा उ॒षसं स्व॒स्तये॑ । | |
| बृह॒स्पतिं वृ॒त्रखा॑दं सु॒मेध॑सं—मिन्द्रि॒यं सोमं॑ धन॒सा उ॑ ईमहे | १० |
| ब्रह्म॑ गाम॒श्च ज॒नय॑न्त ओष॒धी—र्वन॑स्पतीन् पृथि॒वीं पर्व॑ताँ अ॒पः । | |
| सूर्य॑ दि॒वि रो॒हय॑न्तः सु॒दान॑व आ॒र्या व्र॒ता वि॑सृजन्तो अ॒धि क्षमि॑ | ११ |
| भुज्य॑मंहसः पि॒पृथो॑ नि॒रंश्चि॒ना श्या॑वं पु॒त्रं व॑धिम॒त्या अ॑जिन्वतम् । | |
| क॒मद्यु॑वं वि॒मदा॑र्योहथु॒र्युवं वि॑ष्णा॒प्वं वि॑श्व॒काया॑वं सृजथः | १२ |
| पा॒वीर॑वी तन्य॒तुरेक॑पाद॒जो दि॒वो ध॒र्ता सि॑न्धुरा॒पः स॒मुद्रि॑यः । | |
| विश्वे॑ दे॒वासः शृ॒णव॑न् वचांसि मे सर॑स्वती स॒ह धी॑भिः पु॒रंघ्या | १३ |
| विश्वे॑ दे॒वाः स॒ह धी॑भिः पु॒रंघ्या म॒नोर्य॑जत्रा अ॒मृता॑ ऋत॒ज्ञाः । | |
| रा॒तिषा॑चो अ॒भिषा॑चः स्व॒र्विदुः स्व॒र्गिरो ब्र॑ह्म सू॒क्तं जु॑षेरत | १४ ७०५ |
| दे॒वान् वसि॑ष्ठो अ॒मृता॑न् ववन्दे ये वि॒श्वा भु॑र्वना॒भि प्र॑त॒स्थुः । | |
| ते नो॑ रासन्ता॒मु॒रुगा॑यम॒द्य यूयं॑ पा॒त स्व॒स्तिभिः॑ सदा॑ नः | *१५ |

॥७४॥ (ऋ० १०, ६६, १-१४)

| | |
|---|-------|
| दे॒वान् हु॒वे बृ॒हच्छ्र॑वसः स्व॒स्तये॑ ज्योति॒ष्कृतो॑ अ॒ध्वर॑स्य प्र॒चेत॑सः । | |
| ये वा॒वृधुः॑ प्र॒तरं॑ वि॒श्ववे॑दस इन्द्र॒ज्येष्ठा॑सो अ॒मृता॑ ऋता॒वृधः॑ | १ |
| इन्द्र॑प्रसूता वरु॑णप्रशिष्टा ये सूर्य॑स्य ज्योति॒षो भा॒गमा॑न॒शुः । | |
| मु॒रुद्रे॑णे वृ॒जने॑ मन्म॒ धीम॑हि मा॒घोने॑ य॒ज्ञं ज॑नयन्त सूर॒यः | २ |
| इन्द्रो॑ वसु॒भिः परि॑ पातु नो ग॒र्य—मा॒दित्यै॒र्नो अ॒दितिः॑ श॒र्मे य॑च्छतु । | |
| रु॒द्रो रु॒द्रेभि॑र्दे॒वो मृ॑ळयाति न—स्त्वष्टा॑ नो ग्रा॒भिः सु॒विता॑य॒ जिन्व॑तु | ३ |
| अ॒दि॒तिर्द्या॒वापृ॒थि॒वी ऋ॒तं म॒ह—दि॒न्द्रावि॑ष्णू म॒रुतः॑ स्व॒र्षह॑त् । | |
| दे॒वाँ आ॒दित्याँ अ॒वसे॑ हवामहे वसू॑न् रु॒द्रान्त॑स॒वितारं॑ सु॒दंस॑सम् | ४ ७१० |
| सर॑स्वान् धी॒भिर्वरु॑णो धृत॒व्रतः॑ पू॒षा वि॑ष्णुर्महि॒मा वा॒युरा॑श्चि॒ना । | |
| ब्रह्म॑कृतो अ॒मृता॑ वि॒श्ववे॑दसः श॒र्मे नो॑ यंसन् त्रि॒वरू॑थमंहसः | ५ |
| वृषा॑ य॒ज्ञो वृ॑षणः सन्तु य॒ज्ञिया॑ वृष॒णो दे॒वा वृ॑ष॒णो ह॒विष्क॑रतः । | |
| वृष॑णा द्या॒वापृ॒थि॒वी ऋ॒ताव॑री वृषा॑ प॒र्जन्यो॑ वृष॒णो वृ॑षस्तुभः | ६ ७१२ |

| | |
|---|--------|
| अग्नीषोमा वृषणा वाजसातये पुरुप्रशस्ता वृषणा उप ब्रुवे । | |
| यावीजिरे वृषणो देवयज्यया ता नः शर्म त्रिवरुथं वि यंसतः | ७ |
| धृतव्रताः क्षत्रिया यज्ञनिष्कृतो बृहद्दिवा अध्वराणामभिश्चियः । | |
| अग्निहोतार ऋतसापो अद्रुहो ऽपो असृजन्ननु वृत्रतूर्ये | ८ |
| द्यावापृथिवी जनयन्नभि व्रता ऽऽप ओषधीर्विनानि यज्ञिया । | |
| अन्तरिक्षं स्वरा पप्रुतये वशं देवासस्तन्वीडु नि मामृजुः | ९ ७१५ |
| धर्तारो दिव ऋभवंः सुहस्ता वातापर्जन्या महिषस्य तन्यतोः । | |
| आप ओषधीः प्र तिरन्तु नो गिरो भगो रातिर्वाजिनो यन्तु मे हवम् | १० |
| समुद्रः सिन्धू रजो अन्तरिक्षमज एकपात् तनयितुरर्णवः । | |
| अहिर्बुध्न्यः शृणवद् वचांसि मे विश्वं देवास उत मूरयो मम | ११ |
| स्याम वो मनवो देववीतये प्राश्नं नो यज्ञं प्र णयत साधुया । | |
| आदित्या रुद्रा वसवः सुदानव इमा ब्रह्म शस्यमानानि जिन्वत | १२ |
| दैव्या होतारा प्रथमा पुरोहित ऋतस्य पन्थामन्वोमि साधुया । | |
| क्षेत्रस्य पतिं प्रतिवेशमीमहे विश्वान् देवाँ अमृताँ अप्रयुच्छतः | १३ |
| वसिष्ठासः पितृवद् वाचमक्रत देवाँ ईळाना ऋषिवत् स्वस्तये । | |
| प्रीता इव ज्ञातयः काममेन्या ऽस्मे देवासोऽव धूनुता वसु | १४ ७२० |

॥७५॥ (ऋ० १०।९२।१-१५)

(७२१-३५) शार्यातो मानवः । जगती ।

| | |
|--|-------|
| यज्ञस्य वो रथ्यं विश्वपतिं विशां होतारमक्तोरतिथिं विभावंसुम् । | |
| शोचच्छुष्कांसु हरिणीषु जर्भुरद् वृषां केतुर्यजतो द्यामशायत | १ |
| इममञ्जस्पामुभये अकृण्वत धर्माणमग्निं विदथस्य साधनम् । | |
| अक्तुं न यहुमुषसः पुरोहितं तनूनपातमरुषस्य निसते | २ |
| बळस्य नीथा वि पणेश्च मन्महे वया अस्य प्रहुता आसुरत्तवे । | |
| यदा घोरासो अमृतत्वमाशता दिजनस्य दैव्यस्य चर्किरन् | ३ |
| ऋतस्य हि प्रसितिर्द्यौरुरु व्यचो नमो मद्यारमतिः पनीयसी । | |
| इन्द्रो मित्रो वरुणः सं चिकित्रिरे ऽथो भगः सविता पूतदक्षसः | ४ |
| प्र रुद्रेण ययिना यन्ति सिन्धवस्तिरो महीमरमतिं दधन्विरे । | |
| येभिः परिज्मा परियन्तुरु जयो वि रोहवज्जठरे विश्वमुक्षते | ५ ७२५ |

| | | |
|---|----|-----|
| क्राणा रुद्रा मरुतो विश्वकृष्टयो दिवः इयेनासो असुरस्य नीळयः । तेभिश्चष्टे वरुणो मित्रो अर्यमेन्द्रो देवेभिर्वशेभिरर्वशः | ६ | ७२६ |
| इन्द्रे भुजं शशमानास आशत सरो दृशीके वृषणश्च पौंस्ये । प्र ये न्वस्यार्हणा ततक्षिरे युजं वज्रं नृपदनेषु कारवः | ७ | |
| सुरेश्विदा हरितो अस्य रीरमदिन्द्रादा कश्चिद् भयते तवीयसः । भीमस्य वृष्णो जठरादभिश्चसो दिवेदिवे सहुरिः स्तन्नवाधितः | ८ | |
| स्तोमं वो अद्य रुद्राय शिर्क्षसे क्षयद्वीराय नमसा दिदिष्टन । येभिः शिवः स्ववा एवयावभिर्दिवः सिषक्ति स्वयंशा निकामभिः | ९ | |
| ते हि प्रजाया अभरन्त वि श्रवो बृहस्पतिर्वृषभः सोमंजामयः । यज्ञैरथर्वा प्रथमो वि धारयद् देवा दक्षैर्मृगवः सं चिकित्रिरे | १० | ७३० |
| ते हि द्यावापृथिवी भूरिरेतसा नराशंसश्चतुरङ्गो यमोऽदितिः । देवस्त्वष्टा द्रविणोदा क्रमुक्षणः प्र रोदसी मरुतो विष्णुरहिरे | ११ | |
| उत स्य न उशिजासुर्विया कविर्हरिः शृणोतु बुध्योऽहवीमनि । सूर्यामासा विचरन्ता दिविक्षिता धिया शमीनहुषी अस्य बौधतम् | १२ | |
| प्र नः पूषा चरथं विश्वदेव्यो ऽपां नपादवतु वायुरिष्ट्ये । आत्मानं वस्यो अभि वार्तमर्चत तदश्विना सुहवा यामनि श्रुतम् | १३ | |
| विशामासामभयानामधिक्षितं गीर्भिरु स्वयंशसं गृणीमसि । ग्राभिर्विश्वाभिरदितिमनर्वणमक्तोर्युवानं नृमणा अधा पतिम् | १४ | |
| रेभदत्र जनुषा पूर्वो अङ्गिरा ग्रावाण ऊर्ध्वा अभि चक्षुरध्वरम् । येभिर्विहाया अभवद् विचक्षणः पार्थः सुमेकं स्वधितिर्वनन्वति | १५ | ७३५ |

॥७६॥ (ऋ० १०।९३।१-१५)

(७३६-५०) तान्वः पार्थः । प्रस्तारपङ्क्तिः, २-३, १३ अनुष्टुप्; ९ अक्षरैः पङ्क्तिः,

११ न्यङ्कुसारिणी, १५ पुरस्ताद्बृहती ।

| | | |
|---|---|-----|
| महिं द्यावापृथिवी भूतमूर्वा नारीं यद्ही न रोदसी सदै नः । तेभिर्नः पातं सद्यस एभिर्नः पातं शूषणि | १ | |
| यज्ञैर्यज्ञे स मर्त्यो देवान्तसंपर्यति । यः सुमैर्दीर्घश्रुतम आविवासात्येनान् | २ | |
| विश्वेषामिरज्यवो देवानां वामहः । विश्वे हि विश्वमहसो विश्वे यज्ञेषु यज्ञियाः | ३ | |
| ते घा राजानो अमृतस्य मन्द्रा अर्यमा मित्रो वरुणः परिज्मा । कद् रुद्रो नृणां स्तुतो मरुतः पूषणो भगः | ४ | ७३९ |

| | |
|---|--------|
| उ॒त नो न॒क्तम॒पां वृष॑ण्वसू सूर्या॒मासा॒ सद॑नाय स॒ध॒न्या । | |
| स॒चा यत् साद्ये॑षा—महि॒र्बुधे॑षु बु॒धयः॑ | ५ ७४० |
| उ॒त नो दे॒वाव॒श्विना॑ शु॒भस्प॑ती धाम॑भिर्मि॒त्रावरु॑णा उरु॒ण्यता॑म् । | |
| म॒हः स रा॒य एष॑ते ऽति॒ धन्वे॑व दुरि॒ता | ६ |
| उ॒त नो रु॒द्रा चि॒न्मृ॒ळता॑म॒श्विना॑ विश्वे॑ दे॒वासो॑ रथ॒स्पति॑र्भगः । | |
| ऋ॒भुर्वाज॑ ऋ॒भुक्ष॑णः परि॒ज्मा विश्व॑वेदसः | ७ |
| ऋ॒भुर्ऋ॒भुक्षा॑ ऋ॒भुर्वि॒धतो॑ मद॒ आ ते॒ हरी॑ जू॒जुवा॑नस्य॒ वाजि॑ना । | |
| दु॒ष्टरं॑ यस्य॒ सामं॑ चिद् ऋ॒धग् य॒ज्ञो न॑ मानु॒षः | ८ |
| कु॒धी नो अ॒ह्यो दे॒व स॒वितः॑ स च॑ स्तु॒षे म॒घोना॑म् । | |
| स॒हो न॒ इन्द्रो॑ वह्नि॒भिर्न्ये॑षां च॒र्षणी॑नां च॒क्रं रा॒श्मि न॑ यो॒युवे॑ | ९ |
| ऐषु॑ धा॒वापृ॑थि॒वी धा॒तं म॒ह—दु॒स्मे वी॑रेषु॒ विश्व॑च॒र्षणि॑ श्रवः । | |
| पृ॒क्षं वाज॑स्य सा॒तये॑ पृ॒क्षं रा॒योत॑ तुर्व॒णे | १० ७४५ |
| ए॒तं शंस॑मिन्द्रा॒स्मयु॑ष्टं कू॒चित् सन्त॑ सहसा॒वन्न॑भिष्टये॒ सदा॑ पा॒ह्यभि॑ष्टये । | |
| मे॒दता॑ वे॒दता॑ वसो | ११ |
| ए॒तं मे॒ स्तोमं॑ त॒ना न॒ स्र्ये॑ द्युत॒द्यामा॑नं वावृ॒धन्त॑ नृ॒णाम् । | |
| सं॒वने॑न॒ नाश्र॑यं त॒ष्टेवा॑नप॒च्युत॑म् | १२ |
| वा॒वर्त॑ येषां रा॒या यु॒क्तैषां॑ हि॒र॒ण्ययी॑ । | |
| ने॒मधि॑ता न पौ॒स्या वृ॒थेव॑ वि॒ष्टान्ता॑ | १३ |
| प्र तद् दुःशी॑मे पृथ॒वाने वे॑ने प्र रा॒मे वो॑च॒मसु॑रे म॒घव॑त्सु । | |
| ये यु॒क्त्वाय॑ प॒ञ्च श॒ता—स्म॒यु प॒था वि॒श्राव्ये॑षाम् | १४ |
| अ॒धीन्व॑त्र स॒प्ततिं॑ च॒ सप्त॑ च । स॒द्यो दि॑दिष्ट॒ तान्वः॑ स॒द्यो दि॑दिष्ट पा॒थ्यः | |
| स॒द्यो दि॑दिष्ट मा॒यवः॑ | १५ ७५० |

॥७७॥ (ऋ० १०।१००।१-१२)

(७५१-६२) दुवस्युर्वान्दनः । जगती, १२ त्रिष्टुप् ।

| | |
|---|-------|
| इन्द्र॑ दृ॒ष्टं म॒घव॑न् त्वा॒वदि॑द् भुज॒ इह॑ स्तुतः सु॒तपा॑ बो॒धि नो॑ वृ॒धे । | |
| दे॒वेभि॑र्नः स॒विता॑ प्राव॑तु श्रुत—मा स॒र्वता॑ति॒मदि॑तिं वृ॒णीम॑हे | १ |
| भरा॑य सु भ॒रत॑ भा॒गमृ॑त्वियं प्र वा॒यवे॑ शुचि॒पे क्र॑न्ददिष्टये । | |
| गौर॑स्य॒ यः पर्य॑सः पी॒तिमा॑न॒श आ स॒र्वता॑ति॒मदि॑तिं वृ॒णीम॑हे | २ ७५१ |

| | |
|---|--------|
| आ नो देवः सविता साविषद् वयं ऋजूयते यजमानाय सुन्वते । | |
| यथा देवान् प्रतिभूषेम पाक्वदा सर्वतातिमदिति वृणीमहे | ३ ७५३ |
| इन्द्रो अस्मे सुमना अस्तु विश्वहा राजा सोमः सुवितस्याध्वेतु नः । | |
| यथायथा मित्रार्धितानि संदधु—रा सर्वतातिमदिति वृणीमहे | ४ |
| इन्द्र उक्थेन शर्वसा परुर्दधे बृहस्पते प्रतरीतास्यायुषः । | |
| यज्ञो मनुः प्रमतिर्नः पिता हि क—मा सर्वतातिमदिति वृणीमहे | ५ ७५५ |
| इन्द्रस्य नु सुकृतं दैव्यं सहो ऽग्निर्गृहे जरिता मेधिरः कविः । | |
| यज्ञश्च भूद् विदथे चारुरन्तम आ सर्वतातिमदिति वृणीमहे | ६ |
| न वो गुहा चकम भूरि दुष्कृतं नाविष्य वसवो देवहेळनम् । | |
| माकिर्नो देवा अनृतस्य वर्षस आ सर्वतातिमदिति वृणीमहे | ७ |
| अपामीवां सविता साविषक्यग् वरीय इदं सेधन्त्वद्रयः । | |
| ग्रावा यत्र मधुषुदुच्यते बृह—दा सर्वतातिमदिति वृणीमहे | ८ |
| ऊर्ध्वो ग्रावा वसवोऽस्तु सोतरि विश्वा द्वेषांसि सनुतर्युथोत । | |
| स नो देवः सविता पायुरीडथ आ सर्वतातिमदिति वृणीमहे | ९ |
| ऊर्जी गात्रो यर्वसे पीवो अत्तन ऋतस्य याः सदने कोशे अङ्घ्वे । | |
| तनूरेव तन्वो अस्तु भेषज—मा सर्वतातिमदिति वृणीमहे | १० ७६० |
| ऋतुप्रावो जरिता शर्चतामव इन्द्र इद् भद्रा प्रमतिः सुतावताम् । | |
| पूर्णमूर्धद्विभ्यं यस्य सिकतय आ सर्वतातिमदिति वृणीमहे | ११ |
| चित्रस्ते भानुः ऋतुप्रा अभिष्टिः सन्ति स्पृधो जरणिप्रा अधृष्टाः । | |
| रजिष्ठया रज्या पश्च आ गो—स्तूर्तर्षति पर्यग्रं दुवस्युः | १२ |

॥७८॥ (ऋ० १०।१०१।१-१२)

(७६३-७४) बुधः सौम्यः । (ऋत्विजो वा) । त्रिष्टुप्; ४,६ गायत्री; ५ बृहती; ९-१२ जगती ।

उङ्क्ष्वं समनसः सखायः समग्निर्मिन्ध्वं बृहवः सनीळाः ।

दधिक्रामग्निमुषसं च देवी—मिन्द्रावतोऽर्वसे नि ह्वये वः

१.

मन्द्रा कृणुध्वं धिय आ तनुध्वं नावमरित्रपरणीं कृणुध्वम् ।

२

इष्कृणुध्वमायुधारं कृणुध्वं प्राञ्चं यज्ञं प्र णयता सखायः

युनक्त सीरा वि युगा तनुध्वं कृते योनौ वपतेह बीजम् ।

गिरा च श्रुष्टिः सभरा असन्नो नदीय इत् सृण्यः पक्कमेयात्

३ ७६५

| | |
|--|-------|
| सीरा युञ्जन्ति कवयो युगा वि तन्वते पृथक् । धीरा देवेषु सुमया | ४ |
| निराहावान् कृणोतन् सं वरत्रा दधातन । | |
| सिञ्चामहा अवतमुद्रिणं वयं सुषेकमनुपक्षितम् | ५ |
| इष्कृताहावमवतं सुवरत्रं सुषेचनम् । उद्रिणं सिञ्चे अक्षितम् | ६ |
| प्रीणीताश्चान् हितं जयाथ स्वास्तिवाहं रथमित् कृणुध्वम् । | |
| द्रोणाहावमवतमश्मचक्र—मंसत्रकोशं सिञ्चता नृपाणम् | ७ |
| व्रजं कृणुध्वं स हि वो नृपाणो वर्म सीव्यध्वं बहुला पृथूनि । | |
| पुरः कृणुध्वमार्यसीरधृष्टा मा वः सुस्रोच्चमसो दंहता तम् | ८ ७७० |
| आ वो धियं यज्ञियां वर्त ऊतये देवा देवीं यजतां यज्ञियामिह । | |
| सा नो दुहीयद् यवसेव गत्वी सहस्रधारा पयसा मही गौः | ९ |
| आ तू पिञ्च हरिमीं द्रोरुपस्थे वाशीभिस्तक्षताश्मन्मयीभिः । | |
| परि ष्वजध्वं दश कक्ष्याभि—रुभे धुरी प्रति वह्निं युनक्त | १० |
| उभे धुरी वह्निरापिबंदमानो ऽन्तर्योनैव चरति द्विजानिः । | |
| वनस्पतिं वन आस्थापयध्वं नि षू दधिध्वमखनन्त उत्सम् | ११ |
| कपृन्नरः कपृथमुद् दधातन चोदयत खुदत वार्जमानये । | |
| निष्टिग्न्यः पुत्रमा च्यावयोतय इन्द्रं सबाध इह सोमपीतये | १२ |

॥७९॥ (ऋ० १०।१०९।१-७)

(७७५-८१) जुह्वर्ब्रह्मजाया, ब्राह्मः ऊर्ध्वनाभा वा । त्रिष्टुप्, ६-७ अनुष्टुप् ।

| | |
|---|-------|
| तैऽवदन् प्रथमा ब्रह्मकिल्बिषे ऽकूपारः सलिलो मातरिधा । | |
| वील्लहारास्तप उग्रो मयोभू—रापो देवीः प्रथमजा ऋतेन | १ ७७५ |
| सोमो राजा प्रथमो ब्रह्मजायां पुनः प्राञ्जलदहणीयमानः । | |
| अन्वर्तिता वरुणो मित्र आभी—दग्निर्होता हस्तगृह्या निनाय | २ |
| हस्तेनैव ग्राह्य आधिरस्या ब्रह्मजायेयमिति चेदवोचन् । | |
| न दूतार्यं प्रह्यं तस्थ एषा तथा राष्ट्रं गुपितं क्षत्रियस्य | ३ |
| देवा एतस्यामवदन्त पूर्वं सप्तऋषयस्तपसे ये निषेदुः । | |
| भीमा जाया ब्राह्मणस्योपनीता दुर्धा दधाति परमे व्योमन् | ४ |
| ब्रह्मचारी चरति वेविषद् विषः स देवानां भवत्येकमङ्गम् । | |
| तेन जायामन्वाविन्दद् बृहस्पतिः सोमेन नीतां जुह्वी न देवाः | ५ ७७९ |

६० [विश्वे देवाः] ८

पुनर्वै देवा अददुः पुनर्मनुष्या उत । राजानः सत्यं कृण्वाना ब्रह्मजायां पुनर्ददुः ६ ७८०
पुनर्दायं ब्रह्मजायां कृत्वी देवैर्निकिल्बिषम् । ऊर्जं पृथिव्या भक्त्वायो—रुगायमुपासते ७

॥८०॥ (ऋ० १०।११।१-१०)

(७८१-९१) सध्रिर्वैरूपो, घर्मो वा तापसः । त्रिष्टुप्, ४ जगती ।

घर्मा समन्ता त्रिष्टुतं व्यापतु—स्तयोर्युष्टिं मातरिश्वा जगाम ।
दिवस्पयो दिधिषाणा अवेषन् विदुर्देवाः सहसामानमर्कम् १
तिस्रो देष्ट्राय निर्र्कतीरुपासते दीर्घश्रुतो वि हि जानन्ति वह्नयः ।
तासां नि चिक्युः कवयो निदानं परेषु या गुह्येषु त्रतेषु २
चतुष्कपर्दा युवतिः सुपेशा घृतप्रतीका वयुनानि वस्ते ।
तस्यां सुपर्णा वर्षणा नि षेदतु—र्यत्र देवा दधिरे भागधेयम् ३
एकः सुपर्णः स समुद्रमा विवेश स इदं विश्वं भुवनं वि चष्टे ।
तं पाकेन मनसापश्यमन्तित—स्तं माता रेळ्हि स उ रेळ्हि मातरम् ४ ७८५
सुपर्णं विप्राः कवयो वचोभि—रेकं सन्तं बहुधा कल्पयन्ति ।
छन्दांसि च दधतो अध्वरेषु ग्रहान्सोमस्य मिमते द्वादश ५
षट्त्रिंशंश्च चतुरः कल्पयन्त—श्छन्दांसि च दधत आद्रादुशम् ।
यज्ञं विमायं कवयो मनीष क्रकसामाभ्यां प्र रथं वर्तयन्ति ६
चतुर्दशान्ये महिमानो अस्य तं धीरा वाचा प्र णयन्ति सप्त ।
आप्मानं तीर्थं क इह प्र वोच—धेनं पथा प्रपिबन्ते सुतस्य ७
सहस्रधा पञ्चदशान्युक्था यावद् द्यावापृथिवी तावदित् तत् ।
सहस्रधा महिमानः सहस्रं यावद् ब्रह्म विष्टितं तावती वाक् ८
कश्छन्दसां योगमा वेदु धीरः को धिषण्यां प्रति वाचं पपाद ।
कमृत्विजामष्टमं शूरमाहु—र्हरी इन्द्रस्य नि चिकाय कः खित् ९ ७९०
भूम्या अन्तं पर्येकं चरन्ति रथस्य धूपं युक्तासौ अस्थुः ।
श्रमस्य दायं वि भजन्त्येभ्यो यदा यमो भवति हर्म्ये हितः १०

॥८१॥ (ऋ० १०।१२।१-८)

(७९१-९९) शैलूषिः कुलमलवर्हिपो, वामदेव्योऽहोमुग्वा । उपरिष्ठाद्बृहती, ८ त्रिष्टुप् ।

न तमहो न दुरितं देवासो अष्ट मर्त्यम् ।
सजोषसो यमर्था मा मित्रो नयन्ति वरुणो अति द्विषः १ ७९१

| | |
|---|-------|
| तद्वि वयं वृणीमहे वरुण मित्रार्थमन् । | |
| येना निरंहसो यूयं पाथ नेथा च मर्त्यमति द्विषः | २ |
| ते नूनं नोऽयमूतये वरुणो मित्रो अर्यमा । | |
| नर्यिष्ठा उ नो नेषणि पर्षिष्ठा उ नः पर्षण्यति द्विषः | ३ |
| यूयं विश्वं परि पाथ वरुणो मित्रो अर्यमा । | |
| युष्माकं शर्मेणि प्रिये स्याम सुप्रणीतयोऽति द्विषः | ४ ७९५ |
| आदित्यासो अति स्निधो वरुणो मित्रो अर्यमा । | |
| उग्रं मरुद्ग्री रुद्रं हुवेमेन्द्रमग्निं स्वस्तयेऽति द्विषः | ५ |
| नेतार ऊ षु णस्तिरो वरुणो मित्रो अर्यमा । | |
| अति विश्वानि दुरिता राजानश्चर्षणीनामति द्विषः | ६ |
| शुनमस्मभ्यमूतये वरुणो मित्रो अर्यमा । | |
| शर्म यच्छन्तु सप्रथं आदित्यासो यदीमहे अति द्विषः | ७ |
| यथा ह त्यद् वसवो गौर्यं चित् पदि पिताममुञ्चता यजत्राः । | |
| एवो ष्वसन्मुञ्चता व्यंहः प्र तार्यन्ते प्रतरं न आयुः | ८ |

॥८२॥ (क्र० १०।१२८।१-९.)

(८००-८०८) विहव्य आङ्गिरसः । त्रिष्टुप्, ९ जगती ।

| | |
|---|-------|
| ममग्निं वचो विहवेष्वस्तु वयं त्वेन्धानास्तन्वं पुषेम । * | |
| मह्यं नमन्तां प्रदिशश्चतस्त्रस्त्वयाध्यक्षेण पृतना जयेम | १ ८०० |
| मम देवा विहवे सन्तु सर्वे इन्द्रवन्तो मरुतो विष्णुरग्निः । | |
| ममान्तरिक्षमुरुलोकमस्तु मह्यं वातः पवतां कामे अस्मिन् | २ |
| मयि देवा द्रविणमा यजन्तां मरुयाशीरस्तु मयि देवहूतिः । | |
| दैव्या होतारो वनुषन्त पूर्वे ऽरिष्ठाः स्याम तन्वा सुवीराः | ३ |
| मह्यं यजन्तु मम यानि हव्या ऽऽकूतिः सत्या मनसो मे अस्तु । | |
| एनो मा नि गां कतमच्चनाहं विश्वे देवासो अधि वोचता नः | ४ |
| देवीः षष्ठ्वीरु नः कृणोत विश्वे देवास इह वीरयध्वम् । | |
| मा हास्महि प्रजया मा तनूभिर्मा रंधाम द्विषते सोम राजन् | ५ |
| अग्ने मन्थुं प्रातिनुदन् परेषा—मर्दन्धो गोपाः परि पाहि नस्त्वम् । | |
| प्रत्यञ्चो यन्तु निगुतः पुनस्ते—इमैषां चित्तं प्रबुधां वि नेशत् | ६ ८०५ |

धाता धातॄणां भुवनस्य यस्पति—देवं ज्ञातारमभिमातिषाहम् ।

इमं यज्ञमश्विनोभा बृहस्पति—देवाः पान्नु यजमानं न्यर्थात्

७ ८०६

उरुव्यचा नो महिषः शर्म यंस—दुस्मिन् हव्ये पुरुहूतः पुरुक्षुः

स नः प्रजायै हव्यश्च मृल्ये—न्द्र मा नो रीरिपो मा परा दाः

८

ये नः सपत्ना अप ते भवन्तिव—न्द्राग्निभ्यामव वाधामहे तान् ।

वसवो रुद्रा आदित्या उपरिस्पृशं मोग्रं चेत्तारमधिराजमक्रन्

९

॥८३॥ (ऋ० १०।१३७।१-७)

(८०९-१५) [सप्तर्षयः]— १ भरद्वाजः, २ कश्यपः, ३ गोतमः, ४ अत्रिः, ५ विश्वामित्रः, ६ जमदग्निः,
७ वसिष्ठः । अनुष्टुप् ।

उत देवा अवहितं देवा उन्नयथा पुनः । उतागंश्चक्रुषं देवा देवा जीवयथा पुनः १

द्वाविमौ वातौ वात आ सिन्धोरा परावतः । दक्षं ते अन्य आ वातु परान्यो वातु यद् रपः २

८१०

आ वात वाहि भेषजं वि वात वाहि यद् रपः । त्वं हि विश्वभेषजो देवानां दूत ईर्यसे ३

आ त्वागमं शन्तातिभि—रथो अरिष्टतातिभिः । दक्षं ते भद्रमाभार्षं परा यक्ष्मं सुवामि ते ४

त्रायन्तामिह देवा—स्त्रायतां मरुतां गणः । त्रायन्तां विश्वा भूतानि यथायमरपा असत् ५

आप इद् वा उ भेषजी—रापो अमीवचातनीः । आपः सर्वस्य भेषजी—स्तास्ते कृण्वन्तु भेषजम् ६

हस्ताभ्यां दशशाखाभ्यां जिह्वा वाचः पुरोगवी ।

अनामयित्नुभ्यां त्वा ताभ्यां त्वोप स्पृशामसि

७ ८१५

॥८४॥ (ऋ० १०।१४१।१-६)

(८१६-२१) अग्निस्तापसः । अनुष्टुप् ।

अग्ने अच्छा वदेह नः प्रत्यङ् नः सुमना भव ।

प्र नो यच्छ विशस्पते धनदा असि नस्त्वम्

१

प्र नो यच्छत्वर्थमा प्र भगः प्र बृहस्पतिः । प्र देवाः प्रात सुनृता रायो देवी ददातु नः २

सोमं राजानमवसे ऽग्निं गीर्भिर्हवामहे । आदित्यान् विष्णुं सूर्यं ब्रह्माणं च बृहस्पतिम् ३

इन्द्रवायू बृहस्पतिं सुहवेह हवामहे । यथा नः सर्व इज्जन्तः संगत्यां सुमना असत् ४

अर्यमणं बृहस्पति—मिन्द्रं दानाय चोदय । वातं विष्णुं सरस्वतीं सवितारं च वाजिनम् ५

८२०

त्वं नो अग्ने अग्निभि—र्ब्रह्मं यज्ञं च वर्धय । त्वं नो देवतातये रायो दानाय चोदय ६

॥८५॥ (ऋ० १०।१५।५)

(८२१) क्षिरिम्बिठो भारद्वाजः । अनुष्टुप् ।

परीमे गार्मनेषत पर्यभिमहृषत । देवेष्वक्रत अयः क इमाँ आ दधर्षति ५

८२१

॥८६॥ (ऋ० १०।१५७।१-५)X

(८२३-२७) भुवन आप्तयः, साधनो वा भौवनः । द्विपदा त्रिष्टुप् ।

| | | |
|--|----|-------|
| इमा नु कं भुवना सीषधामेन्द्रश्च विश्वे च देवाः | १ | |
| यज्ञं च नस्तन्वं च प्रजां चाऽऽदित्यैरिन्द्रः सह चीकलपाति | १। | २ |
| आदित्यैरिन्द्रः सगणो मरुद्भि रस्माकं भूत्वविता तनूनाम् | | ३ ८१५ |
| हत्वार्य देवा असुरान् यदार्यन् देवा देवत्वमभिरक्षमाणाः | २। | ४ |
| प्रत्यञ्जमर्कमनयच्छचीभि रादित् स्वधामिषिरां पर्यपश्यन् | ३। | ५ |

॥८७॥ (ऋ० १०।१६५।१-५)

(८२८-३२) नैर्ऋतः कपोतः । त्रिष्टुप् ।

| | | |
|--|--|-------|
| देवाः कपोत इषितो यदिच्छन् दूतो निर्ऋत्या इदमाजगाम । | | |
| तस्मा अर्चाम कृणवांम निष्कृतिं शं नो अस्तु द्विपदे शं चतुष्पदे | | १ |
| शिवः कपोत इषितो नो अस्त्वनागा देवाः शकुनो गृहेषु । | | |
| अग्निर्हि विप्रो जुषतां हविर्नः परि हेतिः पक्षिणी नो वृणक्तु | | २ |
| हेतिः पक्षिणी न दभात्यस्मानाष्ट्यां पदं कृणुते अग्निधाने । | | |
| शं नो गोभ्यश्च पुरुषेभ्यश्चास्तु मा नो हिंसीद्विह देवाः कपोतः | | ३ ८२० |
| यदुल्लको वदति मोघमेतद् यत् कपोतः पदमग्नौ कृणोति । | | |
| यस्य दूतः प्रहित एष एतत् तस्मै यमाय नमो अस्तु मृत्यवे | | ४ |
| ऋचा कपोतं नुदत प्रणोदुमिषं मदन्तः परि गां नयन्त्वम् । | | |
| संयोपर्यन्तो दुरितानि विश्वा हित्वा न ऊर्जं प्र पतात् पतिष्ठः | | ५ |

॥८८॥ (ऋ० १०।१६७।३)

(८३३) विश्वामित्र-जमदग्नी । जगती ।

| | | |
|--|--|---|
| सोमस्य राज्ञो वरुणस्य धर्मेणि बृहस्पतेरनुमत्या उ शर्मेणि । | | |
| तवाहमद्य मघवन्नुपस्तुतौ धातर्विधातः कलशौ अभक्षयम् | | ३ |

॥८९॥ (ऋ० १०।१८१।१-३)

(८३४-३६) १ प्रथो वासिष्ठः, २ सप्रथो भारद्वाजः, ३ घर्मः सौर्यः । त्रिष्टुप् ।

| | | |
|---|---|-----|
| प्रथश्च यस्य सप्रथश्च नामाऽऽनुष्टुभस्य हविषो हविर्यत् । | | |
| धातुर्युतानात् सवितुश्च विष्णो रथन्तरमा जभारा वसिष्ठः | १ | ८३४ |

अविन्दन्ते अतिहितं यदासीद् यज्ञस्य धाम परमं गुहा यत् ।

धातुर्धुतानात् सवितुश्च विष्णो—भरद्वाजो बृहदा चक्रे अग्नेः २ ८३५

तैऽविन्दन् मनसा दीर्घाना यजुः ऋचं प्रथमं देवयानम् ।

धातुर्धुतानात् सवितुश्च विष्णो—रा सूर्यादभरन् धर्ममेते ३

॥९०॥ (ऋ० १०।१८४।१-२)

(८३७-३८) त्वष्टा गर्भकर्ता, विष्णुर्वा प्राजापत्यः । अनुष्टुप् ।

विष्णुर्योनिं कल्पयतु त्वष्टा रूपाणि पिशतु । आसिंश्चतु प्रजापति—र्धाता गर्भं दधातु ते ।
गर्भं धेहि सिनीवालि गर्भं धेहि सरस्वति । गर्भं ते अश्विनौ देवा—वा धत्तां पुष्करसजा २

॥९१॥ [८३३-७६] (वा० य० २।१२-१३, १८)

एतं ते देव सवितर्यज्ञं ग्राह्वृहस्पतये ब्रह्मणे । तेन यज्ञमव तेन यज्ञपतिं तेन मामव १२

मनो जुतिर्जुषतामाज्यस्य बृहस्पतिर्यज्ञमिमं तनोत्वरिष्टं यज्ञं समिमं दधातु ।

विश्वे देवास इह मादयन्तामोऽम्प्रतिष्ठ १३ ८४०

संस्तवभागा स्थेषा बृहन्तः प्रस्तरेष्ठाः परिधेयाश्च देवाः ।

इमां वाचमभि विश्वे गूणन्त आसद्यास्मिन् बर्हिषि मादध्वम् १८

॥९२॥ (वा० य० ४।११)

दैवीं धियं मनामहे सुमृडीकामभिष्टये वर्चोधां यज्ञवाहसं सुतीर्था नो असद्वशे ।

ये देवा मनोजाता मनोयुजो दक्षकृतवस्ते नोऽवन्तु ते नः पान्तु तेभ्यः स्वाहा ११

॥९३॥ (वा० य० ५।३०, ३५)

इन्द्रस्य स्यूरसीन्द्रस्य ध्रुवोऽसि । ऐन्द्रमसि वैश्वदेवमसि ३०

ज्योतिरसि विश्वरूपं विश्वेषां देवानां समित् ३५

॥९४॥ (वा० य० ६।१९, २४)

घृतं घृतपावानः पिबत वसां वसापावानः पिबतान्तरिक्षस्य हविरसि स्वाहा ।

दिशः प्रदिश आदिशो विदिश उदिशो दिग्भ्यः स्वाहा १९ ८४५

विश्वेषां देवानां भागधेयीं स्थ २४

॥९५॥ (वा० य० ७।११) x

विश्वेभ्यस्त्वा देवेभ्य एष ते योनिर्विश्वेभ्यस्त्वा देवेभ्यः २१ ८४७

॥९६॥ (वा० य० ८।१५, १९, ४७, ५७-५८)

समिन्द्र णो मनसा नेषि गोभिः सः सूरिभिर्मघवन्तसः स्वस्त्या ।
 सं ब्रह्मणा देवकृतं यदस्ति सं देवानां सुमतौ यज्ञियानां स्वाहा १५
 याँ२ आवह उशतो देव देवाँस्तान् प्रेरय स्वे अग्रे सधस्थे ।
 जक्षिवांसः पपिवांसश्च विश्वेऽसुं धर्मः स्वरातिष्ठतानु स्वाहा १९
 विश्वेभ्यस्त्वा देवेभ्यो जगच्छन्दसं गृह्णामि ४७ ८५०
 विश्वे देवा अश्शुषु न्युप्तः ५७। विश्वे देवाश्चमसेषून्नीतः ५८

॥९७॥ (वा० य० ९।३३)

विश्वे देवा द्वादशाक्षरेण जगतीमुदजयँस्तामुज्जैपम् ३३

॥९८॥ (वा० य० ११।५८, ६०, ६५)

विश्वे त्वा देवा वैश्वनराः कृण्वन्त्वानुष्टुभेन छन्दसाङ्गिरस्वद् ५८
 विश्वे त्वा देवा वैश्वनरा धूपयन्त्वानुष्टुभेन छन्दसाङ्गिरस्वद् ६० ८५५
 विश्वे त्वा देवा वैश्वानरा आच्छन्दन्त्वानुष्टुभेन छन्दसाङ्गिरस्वत् ६५

॥९९॥ (वा० य० १२।७०)

धुतेन सीता मधुना समज्यतां विश्वैर्देवैरनुमता मरुद्भिः ।
 ऊर्जस्वती पर्यसा पिन्वमानास्मान्त्सीति पर्यसाभ्याववृत्स्व ७०

॥१००॥ (वा० य० १४।७, २०, २६)

सजूर्ऋतुभिः सजूर्विधाभिः सजूर्विश्वैर्देवैः सजूर्देवैर्वयोनाधैरग्रये त्वा वैश्वानराया-
 श्विनाध्वर्यु सादयतामिह त्वा ७

अग्निर्देवता वातो देवता सूर्यो देवता चन्द्रमा देवता वसवो देवता रुद्रा
 देवतादित्या देवता मरुतो देवता विश्वे देवा देवता बृहस्पतिर्देवतेन्द्रो देवता
 वरुणो देवता २०

ऋभूणां भागोऽसि विश्वेषां देवानामाधिपत्यं भूतः स्पृतं त्रयस्त्रिंशः स्तोमः २६

॥१०१॥ (वा० य० १५।२४, ५४)

अधिपत्यसि बृहती दिग्विश्वे ते देवा अधिपतयो बृहस्पतिर्हतीनां प्रतिधर्ता
 त्रिणवत्रयस्त्रिंशौ त्वा स्तोमौ पृथिव्याः श्रयतां वैश्वदेवाग्निमारुते उक्थे
 अव्यथायै स्तभीताः शाक्वररैवते सामनी प्रतिष्ठित्या अन्तरिक्षं ऋषयस्त्वा
 प्रथमजा देवेषु दिवो मात्रया वरिष्णा प्रथन्तु विधर्ता चायमधिपतिश्च
 ते त्वा सर्वे संविदाना नाकस्य पृष्ठे स्वर्गे लोके यजमानं च सादयन्तु १४ ८६१

उदुबुध्यस्वामे प्रतिजागृहि त्वमिष्टापुते सःसृजेथामयं च ।
अस्मिन्सधस्थे अद्युत्तरस्मिन् विश्वे देवा यजमानश्च सीदत

*५४ ८६२

॥१०२॥ (वा० य० १७।७३)

आजुह्वानः सुप्रतीकः पुरस्तादग्ने स्वं योनिमासीदि साधुया ।
अस्मिन्सधस्थे अद्युत्तरस्मिन् विश्वे देवा यजमानश्च सीदत

७३

॥१०३॥ (वा० य० १८।७६)+

धामच्छदुभिरिन्द्रो ब्रह्मा देवो बृहस्पतिः । सचेतसो विश्वे देवा यज्ञं प्रावन्तु नः शुभे

७६

॥१०४॥ (वा० य० २०।११)

त्रया देवा एकादश त्रयस्त्रिंशः सुरार्धसः ।
बृहस्पतिपुरोहिता देवस्य सवितुः सवे । देवा देवैरवन्तु मा

११ ८६५

॥१०५॥ (वा० य० २१।१७)

उषे यज्ञी सुपेशसा विश्वे देवा अमर्त्याः । त्रिष्टुप् छन्द इहेन्द्रियं पष्ठ्वाड् गौरव्यो दधुः १७

॥१०६॥ (वा० य० २२।५, २८)

विश्वेभ्यस्त्वा देवेभ्यो जुष्टं प्रोक्षामि सर्वेभ्यस्त्वा देवेभ्यो जुष्टं प्रोक्षामि
विश्वेभ्यो देवेभ्यः स्वाहा

५

×२८

॥१०७॥ (वा० य० २४।२७, ४०)

विश्वेभ्यो देवेभ्यः पृथतान् २७। खड्गो वैश्वदेवः विश्वेषां देवानां पृथतः ४० ८७०

॥१०८॥ (वा० य० २५।५-६)*

पार्श्वं विश्वेषां देवानामुत्तरम् ५। विश्वेषां देवानां प्रथमा कीर्कसा ६

॥१०९॥ (वा० य० २७।५२)

अग्ने स्वाहा कृणुहि जातवेद इन्द्राय हव्यम् । विश्वे देवा हविरिदं जुषन्ताम् २२

॥११०॥ (वा० य० २९।६०)

विश्वेभ्यो देवेभ्यो जागतेभ्यः सप्तदशेभ्यो वैरूपेभ्यो द्वादशकपालः ६० ८७४

* वा० य० १८, ६१ ।

+ वा० य० १८, ३१; ३३, ४४, ५२-५३, ७७, ९१, ९४; ३४, ५३=दै० [विश्वे देवाः] ४८२, ५९४, ४२१, ४१७, ५२६-२७, ३९१ ।

× वा० य० ३९, १३ । * वा० य० २५।१४-२३, ४३=दै० [विश्वे देवाः] १९-२८, ८२७ ।

॥१११॥ (वा० य० ३६।१७)+

धौः शान्तिरन्तरिक्षं शान्तिः पृथिवी शान्तिरापः शान्तिरोषधयः शान्तिः ।
 वनस्पतयः शान्तिर्विश्वे देवाः शान्तिर्ब्रह्म शान्तिः सर्वं शान्तिः शान्तिरेव
 शान्तिः सा मा शान्तिरोधि

१७ ८७५

॥११२॥ (वा० य० ३९।६)

विश्वे देवा द्वादशे

६

॥११३॥ (अथर्व० १।९।१-२)॥

(८७७-१०४३) अथर्वा । १ वसत्रः, इन्द्रः, पूषा, वरुणः, मित्रः, अग्निः, आदित्याः, विश्वे देवाः;
 २ देवाः, सूर्यः, अग्निः हिरण्यं । त्रिष्टुप् ।

अस्मिन् वसु वसवो धारयन्तिवन्द्रः पूषा वरुणो मित्रो अग्निः ।
 इममादित्या उत विश्वे च देवा उत्तरस्मिन् ज्योतिषि धारयन्तु
 अस्य देवाः प्रदिशि ज्योतिरस्तु सूर्यो अग्निरुत वा हिरण्यम् ।
 सपत्ना अस्मदधरे भवन्तूत्तमं नाकमधि रोहयेमम्

१

२

॥११४॥ (अथर्व० १।१५।१-४)

सिन्धवः, (वाताः, पतत्रिणः) । अनुष्टुप्, २ भुरिकपथ्या पङ्क्तिः ।

सं सं स्रवन्तु सिन्धवः सं वाताः सं पतत्रिणः ।
 इमं यज्ञं प्रदिवो मे जुषन्तां संस्राव्येण हविषा जुहोमि
 इहैव हवमा यात म इह संस्रावणा उतेमं वर्धयता गिरः ।
 इहेतु सर्वो यः पशुरस्मिन् तिष्ठतु या रयिः
 ये नदीनां संस्रवन्त्युत्सासः सदुमर्क्षिताः । तेभिर्मे सर्वैः संस्रावैर्धनं सं स्रावयामसि ३
 ये सर्पिषः संस्रवन्ति क्षीरस्य चोदकस्य च । तेभिर्मे सर्वैः संस्रावैर्धनं सं स्रावयामसि ४

१

२

८८०

॥११५॥ (अथर्व० १।२७।१-४)

(स्वस्त्ययनकामः) । चन्द्रमाः, इन्द्राणी च । अनुष्टुप्, १ पथ्यापङ्क्तिः ।

अमूः पारे पृदाक्स्त्रिषप्ता निर्जरायवः ।
 तासां जरार्थुभिर्वयमक्षयाद्देवर्षि व्ययामस्यघायोः परिपन्थिनः
 विषूच्येतु कन्तती पिनाकमिव बिभ्रती ।
 विष्वक् पुनर्धुवा मनोऽसमृद्धा अघायवः

१

२

८८४

न बहवः समशकन् नार्भका अभि दाधृषुः । वेणोरद्रा इवाभितोऽसमृद्धा अधायवः ३ ८८५
प्रेतं पादौ प्र स्फुरतं वहतं पृणतो गृहान् । इन्द्राण्येति प्रथमाजीतामुषिता पुरः ४

॥११६॥ (अथर्व० २।३४।१-५)

१ पशुपतिः, २ देवाः, ३ अग्निः विश्वकर्मा, ४ वायुः प्रजापतिः, ५ आशीः । त्रिष्टुप् ।

य ईशे पशुपतिः पशूनां चतुष्पदामुत यो द्विपदाम् ।

निष्क्रीतः स यज्ञियं भागमेतु रायस्पोषा यजमानं सचन्ताम् १

प्रमुञ्चन्तो भुवनस्य रेतो गातुं धत्त यजमानाय देवाः ।

उपाकृतं शशमानं यदस्थात् प्रियं देवानामप्येतु पार्थः २

ये बृध्यमानमनु दीर्घाना अन्वैक्षन्त मनसा चक्षुषा च ।

अग्निष्ठानग्रे प्र मुमोक्तु देवो विश्वकर्मा प्रजया संरराणः ३

ये ग्राम्याः पशवो विश्वरूपा विरूपाः सन्तो बहुधैकरूपाः ।

वायुष्ठानग्रे प्र मुमोक्तु देवः प्रजापतिः प्रजया संरराणः ४ ८९०

प्रजानन्तः प्रति गृहन्तु पूर्वे प्राणमङ्गेभ्यः पर्याचरन्तम् ।

दिवं गच्छ प्रति तिष्ठा शरीरैः स्वर्गं याहि पृथिभिर्देवयानैः ५

॥११७॥ (अथर्व० ३।३।२-३, ५-६)+

२ इन्द्रः, ३ वरुणः सोमः इन्द्रः, ५ इन्द्राग्नी, विश्वे देवाः, ६ इन्द्रः । त्रिष्टुप्, ३ चतुष्पदा
भुरिक्पङ्क्तिः, ५-६ अनुष्टुप् ।

दूरं चित् सन्तमरुपास इन्द्रमा च्यावयन्तु सख्याय विप्रम् ।

यद् गायत्रीं बृहतीमर्कमसौ सौत्रामण्या दधृषन्त देवाः २

अञ्चस्त्वा राजा वरुणो ह्वयतु सोमस्त्वा ह्वयतु पथितेभ्यः ।

इन्द्रस्त्वा ह्वयतु विड्भ्य आभ्यः इयेनो भूत्वा विश आ पतेमाः ३

ह्वयन्तु त्वा प्रतिजनाः प्रति मित्रा अवृषत । इन्द्राग्नी विश्वे देवास्ते विशि क्षेममदीधरन् ५

यस्ते हव्यं विवदत् सजातो यश्च निष्ठयः । अपाञ्चमिन्द्र तं कृत्वाथेममिहाव गमय ६

॥६१८॥ (अथर्व० ३।४।१-२, ४-७)*

इन्द्रः, २ पञ्च प्रदिशः, ४ अश्विनौ, मित्रावरुणौ, विश्वे देवाः, मरुतः, ५ द्यावापृथिवी ।

त्रिष्टुप्, १ जगती, ४-५ भुरिक् ।

आ त्वा गन् राष्ट्रं सह वर्चसोदिहि प्राङ् विशां पतिरेकराट् त्वं वि राज ।

सर्वास्त्वा राजन् प्रदिशो ह्वयन्तूपसद्यो नमस्यो भवेह १ ८९६

| | |
|--|-------|
| त्वां विशो वृणतां राज्यायि त्वामिमाः प्रदिशः पञ्च देवीः । | |
| वर्षमन् राष्ट्रस्य ककुदिं श्रयस्व ततो न उग्रो वि भञ्जा वसूनि | २ |
| अश्विना त्वाग्ने मित्रावरुणोभा विश्वे देवा मरुतस्त्वा ह्वयन्तु । | |
| अधा मनो वसुदेयाय कृणुष्व ततो न उग्रो वि भञ्जा वसूनि | ४ |
| आ प्र द्रव परमस्याः परावतः शिवे ते द्यावापृथिवी उभे स्ताम् । | |
| तदयं राजा वरुणस्तथाह स त्वायमहत् स उपेदमेहि | ५ |
| इन्द्रेन्द्र मनुष्याइः परेहि सं ह्यज्ञास्था वरुणैः संविदानः । | |
| स त्वायमहत् स्वे सधस्ये स देवान् यक्षत् स उ कल्पयाद् विशः | ६ ९०० |
| पथ्या रेवतीर्बहुधा विरूपाः सर्वाः संगत्य वरीयस्ते अक्रन् । | |
| तास्त्वा सर्वाः संविदाना ह्वयन्तु दशमीमुग्रः सुमना वशेह | ७ |

॥११९॥ (अथर्व० ३।८।१-६)

१ मित्रः, पृथिवी, वरुणः, वायुः, अग्निः; २ धाता, साविता, इन्द्रः, त्वष्टा, अदितिः; ३ सोमः, साविता, आदित्यः, अग्निः; ४ विश्वे देवाः, ५-६ सांमनस्यम् । त्रिष्टुप्; २, ६ जगती;

४ चतुष्पदा विराड् बृहतीगर्भा, ५ अनुष्टुप् ।

| | |
|---|-------|
| आ यातु मित्र क्रतुभिः कल्पमानः संवेशयन् पृथिवीमुस्त्रियाभिः । | |
| अथास्मभ्यं वरुणो वायुरग्निर्वृहद् राष्ट्रं संवेश्यं दधातु | १ |
| धाता रातिः संवितेदं जुषन्तामिन्द्रस्त्वष्टा प्रति हर्यन्तु मे वचः । | |
| हुवे देवीमदितिं शूरपुत्रां सजातानां मध्यमेष्टा यथासानि | ×२ |
| हुवे सोमं सवितारं नमोभिर्विश्वानादित्याँ अहमुत्तरत्वे । | |
| अयमग्निर्दीदायद् दीर्घमेव सज्जतैरिन्द्रोऽप्रतिब्रुवद्भिः | ३ |
| इहेदसाथ न परो गमाथेयो गोपाः पुष्टपतिर्व आजत् । | |
| अस्मै कामायोषं कामिनीविश्वे वो देवा उपसंयन्तु | ४ ९०५ |
| सं वो मनांसि सं व्रता समाकूतीर्नमामसि । अमी ये विव्रेता स्थन् तान् वः संनमयामसि | ५ |
| अहं गृष्णामि मनसा मनांसि मम चित्तमनु चित्तेभिरेत । | |
| मम वशेषु हृदयानि वः कृणोमि मम यातमनुवर्तमान एतं | ६ |

॥१२०॥ (अथर्व० ३।१०।१, ५-७, ११-१३)*

अष्टका, १ धेनुः, ५ एकाष्टका, ६ जातवेदाः, पशवः, ७ रात्रिः, यज्ञाः, ११ देवाः, १२ इन्द्रः, देवाः,

१३ प्रजापतिः । अनुष्टुप्; ५-६, १२ त्रिष्टुप्; ७ व्यवसाना षट्पदा विराड्गर्भातिजगती ।

| | |
|---|-------|
| प्रथमा ह व्युत्तिस्त सा धेनुरभवद् यमे । सा नः पर्यस्वती दुहामुत्तरामुत्तरां समाप् | १ ९०८ |
|---|-------|

×अथर्व० ३, ८, २ = दै० [अदितिः०] ७०८। *अथर्व० ३, १०, २-४, ८-१० = दै० [अदितिः०] ७०९, ८८७, ९४९, १०७५-७७।

| | |
|---|-------|
| वानस्पत्या ग्रावाणो घोषमक्रत हविष्कृण्वन्तः परिवत्सरीणम् । | |
| एकाष्टके सुप्रजमः सुवीरा वयं स्याम पतयो रयीणाम् | ५ ९०९ |
| इडायास्पदं घृतवत् सरीसृपं जातवेदः प्रति हव्या गृभाय । | |
| ये ग्राम्याः पशो विश्वरूपास्तेषां सप्तानां मयि रन्तिरस्तु | ६ |
| आ मां पुष्टे च पोषे च रात्रिं देवानां सुमतौ स्याम । | |
| पूर्णा देवे परां पत सुपूर्णा पुनरा पत । सर्वान् यज्ञान्तसंभृज्जतीषमूर्जं न आ भर | ७ |
| इडया जुह्वतो वयं देवान् घृतवता यजे । गृहानलुभ्यतो वयं सं विशेमोप गोमतः | ११ |
| एकाष्टका तपसा तप्यमाना जजान गर्भं महिमानुमिन्द्रम् । | |
| तेन देवा व्यसिहन्त शत्रून् हन्ता दस्यूनामभवच्छचीपतिः | १२ |
| इन्द्रपुत्रे सोमपुत्रे दुहितासि प्रजापतेः । कामानस्माकं पूरय प्रति गृह्णाहि नो हविः | १३ |

॥१२१॥ (अथर्व० ३।१५।१-८)

(पण्यकामः) । विश्वे देवाः, इन्द्राग्नी । त्रिष्टुप्, १ भुरिक, ४ इयवसाना षट्पदा
बृहतीगर्भा विराडत्याष्टिः, ५ विराड्जगती, ७ अनुष्टुप्, ८ निष्टुप् ।

| | |
|--|-------|
| इन्द्रमहं वणिजं चोदयामि स न ऐतं पुरता नो अस्तु । | |
| नुदन्नरांति परिपन्थिनं मृगं स ईशानो धनदा अस्तु मह्यम् | १ ९१५ |
| ये पन्थानो बहवो देवयाना अन्तरा द्यावापृथिवी संचरन्ति । | |
| ते मां जुषन्तां पयसा घृतेन यथा क्रीत्वा धनमाहराणि | २ |
| इध्मेनाग्न इच्छमानो घृतेन जुहोमि हव्यं तस्मै बलाय । | |
| यावदीशे ब्रह्मणा वन्दमान इमां धियं शतसेयाय देवीम् | ३ |
| इमामग्ने शरणि मीमृषो नो यमध्वानमगाम दूरम् । | |
| शुनं नो अस्तु प्रपणो विक्रयश्च प्रतिपणः फलिनं मा कृणोतु । | |
| इदं हव्यं संविदानौ जुषेथां शुनं नो अस्तु चरितमुत्थितं च | ४ |
| येन धनेन प्रपणं चरामि धनेन देवा धनमिच्छमानः । | |
| तन्मे भूयो भवतु मा कनीयोऽग्रे सातमो देवान् हविषा नि षेध | ५ |
| येन धनेन प्रपणं चरामि धनेन देवा धनमिच्छमानः । | |
| तस्मिन् म इन्द्रो रुचिमा दधातु प्रजापतिः सविता सोमो अग्निः | ६ ९२० |
| उप त्वा नमसा वयं होतवैश्वानर स्तुमः । स नः प्रजास्वात्मसु गोषु प्राणेषु जागृहि | |
| विश्वाहां ते सदा मिदु भरेमाश्वायेव तिष्ठते जातवेदः । | |
| रायस्पोषेण समिषा मर्दन्तो मा ते अग्ने प्रतिवेशा रिषाम | ८ ९२३ |

॥१२१॥ (अथर्व० ५।८।१-९)×

नानादैवत्यः, १-२ अग्निः, ३ विश्वे देवाः, ४-९ इन्द्रः । अनुष्टुप्, २ त्र्यवसाना षट्पदा
जगती, ३-४ भुरिक्पथ्यापाङ्क्तिः, ६ आस्तारपङ्क्तिः, ७ द्रथुष्णिग्गर्भा पथ्यापङ्क्तिः,
९ त्र्यवसाना षट्पदा द्रथुष्णिग्गर्भा जगती ।

- वैकङ्कतेनेध्मेन देवेभ्य आज्यं वह । अग्ने ताँ इह मादय सर्व आ यन्तु मे हवम् १
इन्द्रा याहि मे हवमिदं करिष्यामि तच्छृणु ।
इम एन्द्रा अतिसरा आकूतिं सं नमन्तु मे । तेभिः शकेम वीर्यं जातवेदस्तनूवशिन् २
यदुसावमुतो देवा अदेवः संश्रिकीर्षति ।
मा तस्याग्निर्हव्यं वांक्षीद्वयं देवा अस्य मोषं गुर्ममैव हवमेतन ३ ९२५
अति धावतातिसरा इन्द्रस्य वचसा हत ।
अविं वृक इव मधीत स वो जीवन्मा मौचि प्राणमस्यापि नह्यत ४
यममी पुरोदधिरे ब्रह्माणमर्पभूतये । इन्द्र स ते अधस्पदं तं प्रत्यस्यामि मृत्यवे ५
यदि प्रेयुर्देवपुरा ब्रह्म वर्माणि चक्रिरे ।
तनुपानं परिपाणं कृष्णाना यदुपोचिरे सर्वं तदरसं कृधि ६
यानसावतिसरांश्चकारं कृणवच्च यान् ।
त्वं तानिन्द्र वृत्रहन् प्रतीचः पुनरा कृधि यथामुं तृणहां जनेम् ७
यथेन्द्र उद्गाचनं लब्ध्वा चक्रे अधस्पदम् । कृण्वेऽहमधरांस्तथामूर्च्छतीभ्यः समाभ्यः ८ ९३०
अत्रैनानिन्द्र वृत्रहन्मुगो मर्मेणि विध्य । अत्रैवैनानिभि तिष्ठेन्द्र मेघं हं तव ।
अनु त्वेन्द्रा रभामहे स्याम सुमतौ तव ९

॥१२३॥ (अथर्व० ६।३।१-३)

१ इन्द्रापूषणौ, अदितिः, मरुतः, अपां नपात्, सिन्धवः, विष्णुः, द्यौः; २ द्यावापृथिवी,
ग्रावा, सोमः, सरस्वती, अग्निः; ३ अश्विनौ, उषासानक्ता, अपां नपात्,
त्वष्टा । जगती, १ पथ्याबृहती ।

- पातं न इन्द्रापूषणादितिः पान्तु मरुतः ।
अपां नपात् सिन्धवः सप्त पातन् पातु नो विष्णुरुत द्यौः १
पातां नो द्यावापृथिवी अभिष्टये पातु ग्रावा पातु सोमो नो अंहसः ।
पातु नो देवी सुभगा सरस्वती पात्वग्निः शिवा ये अस्य पायवः २
पातां नो देवाश्विना शुभस्पती उषासानक्ता न उरुष्यताम् ।
अपां नपादभिहुती गयस्य चिद् देव त्वष्टर्वर्धय सर्वतातये ३ ९३४

॥१२४॥ (अथर्व० ६।४।१-३)+

१ त्वष्टा, पर्जन्यः, ब्रह्मणस्पतिः, अदितिः २ अंशः, भगः, वरुणः, मित्रः, अर्यमा, अदितिः, मरुतः; ३ अश्विनौ, द्यौष्पिता । पथ्याबृहती, २ संस्तारपङ्क्तिः, ३ त्रिपदा विराङ्गायत्री ।

त्वष्टा मे दैव्यं वचः पर्जन्यो ब्रह्मणस्पतिः । पुत्रैर्भ्रातृभिरदितिर्नु पातु नो दुष्टं त्रायमाणं सहः १ ९३५
अंशो भगो वरुणो मित्रो अर्यमादितिः पान्तु मरुतः ।

अप तस्य द्वेषो गमेदभिहुतो यावयच्छत्रुमन्तितम् २
धिये समश्चिना प्रावतं न उरुष्या ण उरुज्मन्नप्रयुच्छन् । द्यौश्चिपितर्यव्यं दुच्छुना या ३

॥१२५॥ (अथर्व० ६।५।३)

अग्निः, सोमः, ब्रह्मणस्पतिः । अनुष्टुप् ।

यस्य कृण्मो हविर्गृहे तमग्ने वर्धया त्वम् । तस्मै सोमो अधि ब्रवदुयं च ब्रह्मणस्पतिः ३

॥१२६॥ (अथर्व० ६।४०।१-३)

१ द्यावापृथिवी, सोमः, सविता, अन्तरिक्षं, सप्तक्रपयः; २ सविता, इन्द्रः; ३ इन्द्रः ।
१-२ जगती, ३ अनुष्टुप् ।

अभयं द्यावापृथिवी इहास्तु नोऽभयं सोमः सविता नः कृणोतु ।
अभयं नोऽस्तूर्वैर्ऽन्तरिक्षं सप्तक्रषीणां च हविषाऽभयं नो अस्तु १
अस्मै ग्रामाय प्रदिशश्चतस्र ऊर्जे सुभूतं स्वस्ति सविता नः कृणोतु ।
अश्विन्द्रो अभयं नः कृणोत्वन्यत्र राज्ञामभि यातु मन्युः २ ९४०
अनमित्रं नो अधरादनमित्रं न उत्तरात् । इन्द्रानमित्रं नः पश्चादनमित्रं पुरस्कृषि ३

॥१२७॥ (अथर्व० ६।६१।१-३)

रुद्रः, वैश्वानरः, वातः, द्यावापृथिवी । त्रिष्टुप् ।

वैश्वानरो रश्मिभिर्नः पुनातु वातः प्राणेनैषिरो नमोभिः ।
द्यावापृथिवी पर्यसा पर्यस्वती ऋतावरी यज्ञिये नः पुनीताम् १
वैश्वानरीं सुनृतामा रभध्वं यस्या आशास्तन्वो वीतपृष्ठाः ।
तया गुणन्तः सधमादिषु वयं स्याम पतयो रयीणाम् २
वैश्वानरीं वर्चस आ रभध्वं शुद्धा भवन्तः शुचयः पावकाः ।
इहेडया सधमादं मदन्तो ज्योक् पश्येम सूर्यमुच्चरन्तम् ३

॥१२८॥ (अथर्व० ६।६४।१-३)

सांमनस्यम्, १ विश्वे देवाः । अनुष्टुप्, (२ त्रिष्टुप्) ।

सं जानीध्वं सं पृच्यध्वं सं वो मनांसि जानताम् । देवा भागं यथा पूर्वं संजानाना उपासते १ ९४५

समानो मन्त्रः समितिः समानी समानं व्रतं सह चित्तमेषाम् ।

समानेन वो हविषा जुहोमि समानं चेतो अभिसंविशध्वम् २

समानी व आकूतिः समाना हृदयानि वः । समानमस्तु वो मनो यथा वः सुसहासति ३

॥१२९॥ (अथर्व० ६।६८।१-३)

१ सविता, आदित्याः, रुद्राः, वसवः; २ अदितिः, आपः, प्रजापतिः; ३ सविता, सोमः, धरुणः ।

१ पुरोविराडतिशाकरगर्भा चतुष्पदा जगती; २ अनुष्टुप्; ३ अतिजगतीगर्भा त्रिष्टुप् ।

आयमगन्तसविता क्षुरेणोष्णेन वाय उदकेनेहि ।

आदित्या रुद्रा वसव उन्दन्तु सचेतसः सोमस्य राज्ञो वपत् प्रचेतसः १

अदितिः इमश्रु वपत्वाप उन्दन्तु वर्चसा । चिकित्सतु प्रजापतिर्दीर्घायुत्वाय चक्षसे २

येनावपत् सविता क्षुरेण सोमस्य राज्ञो वरुणस्य विद्वान् ।

तेन ब्रह्माणो वपतेदमस्य गोमानश्ववानयमस्तु प्रजावान् ३ ९५०

॥१३०॥ (अथर्व० ६।७३।१-३)

सामनस्यम्, वरुणसोमाग्निवृहस्पतिवसवः, ३ वास्तोष्पतिः । १, ३ भुरिक्; २ त्रिष्टुप् ।

एह यातु वरुणः सोमो अग्निवृहस्पतिर्वसुभिरेह यातु ।

अस्य श्रियमुपसंयातु सर्वं उग्रस्य चेतुः समनसः सजाताः १

यो वः शुष्मो हृदयेष्वन्तराकूतिर्या वो मनसि प्रविष्टा ।

तान्त्सीवयामि हविषा घृतेन मयि सजाता रमतिर्वो अस्तु २

इहैव स्त माप याताध्यस्सत् पूषा परस्तादपथं वः कृणोतु ।

वास्तोष्पतिरनु वो जोहवीतु मयि सजाता रमतिर्वो अस्तु ३

॥१३१॥ (अथर्व० ६।७४।१-३)

सामनस्यम्, नाना देवताः, त्रिणामा । अनुष्टुप्, ३ त्रिष्टुप् ।

सं वः पृच्यन्तां तन्वः सं मनांसि समु व्रता । सं वोऽयं ब्रह्मणस्पतिर्भगः सं वो अजीगमत १

संज्ञपनं वो मनसोऽथो संज्ञपनं हृदः । अथो भगस्य यच्छ्रान्तं तेन संज्ञपयामि वः २ ९५५

यथादित्या वसुभिः संवभूनुर्मरुद्भिरुग्रा अहणीयमानाः ।

एवा त्रिणामहणीयमान इमान् जनान्तसमनसस्कृधीह ३

॥१३२॥ (अथर्व० ६।७७।१, ३)

देवाः । १ त्रिष्टुप्; ३ भुरिक् ।

अभिभूर्यज्ञो अभिभूरगिराभिभूः सोमो अभिभूरिन्द्रः ।

अभ्यः विश्वाः पृतना यथासान्येवा विधेमामिहोत्रा इदं हविः १ ९५७

इमं वीरमनु हर्षध्वमुग्रमिन्द्रं सखायो अनु सं रभध्वम् ।
ग्रामजितं गोजितं वज्रबाहुं जयन्तमज्मं प्रमृणन्तमोजसा

×३ ९५८

॥१३३॥ (अथर्व० ६।९९।१-३)

इन्द्रः, सोमः सविता च । अनुष्टुप्, ३ अरिगृहती (सौम्या सावित्री) ।

अभि त्वेन्द्र वरिमतः पुरा त्वाँहूरणाहुवे । ह्याम्युग्रं चेत्तारं पुरुणामानमेकजम् १
यो अद्य सेन्यो वधो जिघांसन् न उदीरते । इन्द्रस्य तत्र बाहू समन्तं परि दद्यः २ ९६०
परि दद्य इन्द्रस्य बाहू समन्तं त्रातुस्त्रार्थतां नः । देवं सवितुः सोमं राजन्त्सुमनसं मा कृणु स्वस्तये ३

॥१३४॥ (अथर्व० ७।७०।१-५)

इयेनः, देवाः । १ त्रिष्टुप्, २ अतिजगतीगर्भा जगती, ३-५ अनुष्टुप्
(३ पुरःककुम्भती) ।

यत् किं चासौ मनसा यच्च वाचा यज्ञैर्जुहोति हविषा यजुषा ।
तन्मृत्युना निर्ऋतिः संविदाना पुरा सत्यादाहुतिं हन्त्वस्य १
यातुधाना निर्ऋतिरादु रक्षस्ते अस्य मन्त्वन्तेन सत्यम् ।
इन्द्रैषिता देवा आज्यमस्य मथन्तु मा तत् सं पादि यदसौ जुहोति २
अजिराधिराजौ इयेनौ संपातिनाविव । आज्यं पृतन्यतो हतां यो नः कश्चाभ्यघायति ३
अपाञ्चौ त उभौ बाहू अपि नह्याम्यास्यम् । अग्नेर्देवस्य मन्युना तेन तेऽवधिषं हविः ४ ९६५
अपि नह्यामि ते बाहू अपि नह्याम्यास्यम् । अग्नेर्घोरस्य मन्युना तेन तेऽवधिषं हविः ५

॥१३५॥ (अथर्व० ७।९८।१)

इन्द्रः, विश्वे देवाः । विराट् ।

सं बर्हिर्क्तं हविषां घृतेन समिन्द्रेण वसुना सं मरुद्भिः ।
सं देवैर्विश्वदेवेभिरुक्तमिन्द्रं गच्छतु हविः स्वाहा १

॥१३६॥ (अथर्व० १९।१५।५-६)+

मन्त्रोक्ताः । ५ जगती; ६ त्रिष्टुप् ।

अभयं नः कर्त्यन्तरिक्षमभयं द्यावापृथिवी उभे इमे ।
अभयं पश्चादभयं पुरस्तादुत्तरादधरादभयं नो अस्तु ५
अभयं मित्रादभयममित्रादभयं ज्ञातादभयं पुरो यः ।
अभयं नक्तमभयं दिवा नः सर्वा आशा मम मित्रं भवन्तु ६ ९६९

॥१३७॥ (अथर्व० १९।१६।१-२)

मन्त्रोक्ताः । १ अनुष्टुप्; २ ज्यवसाना सप्तपदा बृहतीगर्भानिशकरी ।

असपत्नं पुरस्तात् पश्चाच्चो अभयं कृतम् । सविता मा दक्षिणत उत्तरान्माशचीपतिः १ ९७०
दिवो मादित्या रक्षन्तु भूम्या रक्षन्त्वग्रयः ।

इन्द्राग्नी रक्षतां मा पुरस्तादश्विनवभितः शर्म यच्छताम् ।

तिरश्चीनध्या रक्षतु जातवेदा भूतकृता मे सर्वतः सन्तु वर्म २

॥१३८॥ (अथर्व० १९।१७।१-१०)

मन्त्रोक्ताः । १-४ जगती; ५,७,१० अतिजगती; ६ भुरक्; ९ पञ्चपदाऽतिशकरी ।

अग्निमी पातु वसुभिः पुरस्तात् तस्मिन् क्रमे तस्मिच्छये तां पुरं प्रैमि ।

स मा रक्षतु स मा गोपायतु तस्मा आत्मानं परि ददे स्वाहा १

वायुर्मान्तरिक्षेणैतस्या दिशः पातु तस्मिन् क्रमे० । स मा रक्षतु० २

सोमो मा रुद्रैर्दक्षिणाया दिशः पातु तस्मिन् क्रमे० । स मा रक्षतु० ३

वरुणो मादित्यैरेतस्या दिशः पातु तस्मिन् क्रमे० । स मा रक्षतु० ४ ९७५

सूर्यो मा द्यावापृथिवीभ्यां प्रतीच्या दिशः पातु० । स मा रक्षतु० ५

आपो मौषधीमतीरेतस्या दिशः पातु तासु क्रमे तासु श्रये तां पुरं प्रैमि ।

ता मा रक्षन्तु ता मा गोपायन्तु ताभ्यं आत्मानं परि ददे स्वाहा ६

विश्वकर्मा मा सप्तक्रुषिभिरुदीच्या दिशः पातु तस्मिन् क्रमे० । स मा रक्षतु० ७

इन्द्रो मा मरुत्वानेतस्या दिशः पातु तस्मिन् क्रमे० । स मा रक्षतु० ८

प्रजापतिर्मा प्रजननवान्त्सह प्रतिष्ठाया ध्रुवाया दिशः पातु० । स मा रक्षतु० ९ ९८०

बृहस्पतिर्मा विश्वेदेवैरुर्ध्वाया दिशः पातु तस्मिन् क्रमे० । स मा रक्षतु० १०

॥१३९॥ (अथर्व० १९।१८।१-१०)

मन्त्रोक्ताः । १,८ साम्ना त्रिष्टुप्; २-६ आर्च्यनुष्टुप्; (५ सम्राडाच्यनुष्टुप्);

७,९-१० (द्विपदा) प्राजापत्या त्रिष्टुप् ।

अग्निं ते वसुवन्तमृच्छन्तु । ये माघायवः प्राच्या दिशोऽभिदासात् १

वायुं तेऽन्तरिक्षवन्तमृच्छन्तु । ये माघायव एतस्या दिशोऽभिदासात् २

सोमं ते रुद्रवन्तमृच्छन्तु । ये माघायवो दक्षिणाया दिशोऽभिदासात् ३

वरुणं त आदित्यवन्तमृच्छन्तु । ये माघायव एतस्या दिशोऽभिदासात् ४

सूर्यं ते द्यावापृथिवीवन्तमृच्छन्तु । ये माघायवः प्रतीच्या दिशोऽभिदासात् ५

अपस्त ओषधीमतीर्ऋच्छन्तु । ये माघायव एतस्या दिशोऽभिदासात् ६ ९८७

६० [विश्वे देवाः] १०

विश्वकर्माणं ते सप्तऋषिवन्तमृच्छन्तु । ये माघायव उदीच्या दिशोऽभिदासात् ७ ९८८
 इन्द्रं ते मरुत्वन्तमृच्छन्तु । ये माघायव एतस्या दिशोऽभिदासात् ८
 प्रजापतिं ते प्रजननवन्तमृच्छन्तु । ये माघायवो ध्रुवाया दिशोऽभिदासात् ९
 बृहस्पतिं ते विश्वदेववन्तमृच्छन्तु । ये माघायव ऊर्ध्वाया दिशोऽभिदासात् १०

॥१४०॥ (अथर्व० १९।१९।१-११)

चन्द्रमाः, मन्त्रोक्ताश्च । पङ्क्तिः १, ३, ९ भुरिग्वृहतीः १० स्वराट् २, ४-८, ११ अनुष्टुप्गर्भा ।

मित्रः पृथिव्योदक्रामत् तां पुरं प्र णयामि वः ।
 तामा विशत तां प्र विशत सा वः शर्म च वर्म च यच्छतु १
 वायुरन्तरिक्षेणोदक्रामत् तां पुरं प्र णयामि वः । तामा विशत० २
 सूर्यो दिवोदक्रामत् तां पुरं प्र णयामि वः । तामा विशत० ३
 चन्द्रमा नक्षत्रैरुदक्रामत् तां पुरं प्र णयामि वः । तामा विशत० ४ ९९५
 सोम ओषधीभिरुदक्रामत् तां पुरं प्र णयामि वः । तामा विशत० ५
 यज्ञो दक्षिणाभिरुदक्रामत् तां पुरं प्र णयामि वः । तामा विशत० ६
 समुद्रो नदीभिरुदक्रामत् तां पुरं प्र णयामि वः । तामा विशत० ७
 ब्रह्म ब्रह्मचारिभिरुदक्रामत् तां पुरं प्र णयामि वः । तामा विशत० ८
 इन्द्रो वीर्यैरेणोदक्रामत् तां पुरं प्र णयामि वः । तामा विशत० ९ १०००
 देवा अमृतेनोदक्रामन्तां पुरं प्र णयामि वः । तामा विशत० १०
 प्रजापतिः प्रजाभिरुदक्रामत् तां पुरं प्र णयामि वः । तामा विशत० ११

॥१४१॥ (अथर्व० १९।२०।१ ४)

बहुदैवत्यम् । १ त्रिष्टुप् २ जगती ३ पुरस्ताद्वृहती ४ अनुष्टुप्गर्भा ।

अप न्यधुः पोरुपेयं वधं यमिन्द्राग्नी धाता सविता बृहस्पतिः ।
 सोमो राजा वरुणो अश्विना यमः पूषाऽस्मान् परि पातु मृत्योः १
 यानि चकार भुवनस्य यस्पतिः प्रजापतिर्मतरिश्वा प्रजाभ्यः ।
 प्रदिशो यानि वसते दिशश्च तानि मे वर्माणि बहुलानि सन्तु २
 यत् ते तनृष्वनहन्त देवा द्युराजयो देहिनः । इन्द्रो यच्चक्रे वर्म तदस्मान् पातु विश्वतः ३
 वर्म मे द्यावापृथिवी वर्माहर्वर्म सूर्यः । वर्म मे विश्वे देवाः क्रन् मा मा प्रापत् प्रतीचिका ४ १००६

॥१४२॥ (अथर्व० १९।२३।१-२९)

मन्त्रोक्ताः चन्द्रमाश्च । १ आसुरी गायत्रीः २-७; २०, २३, २७ दैवी त्रिष्टुप्: ८, १०-१२, १४-१६ प्राजापत्या
गायत्री, १७, १९, २४-२५, २९ दैवी पंक्तिः; ९, १३, १८, २२, २६, २८ दैवी जगती; (१-२९ एकावसानाः)।

आथर्वणानां चतुर्ऋचेभ्यः स्वाहा १। पञ्चर्चेभ्यः स्वाहा २। प्लुचेभ्यः स्वाहा ३
सप्तर्चेभ्यः स्वाहा ४। अष्टर्चेभ्यः स्वाहा ५। नवर्चेभ्यः स्वाहा ६
दशर्चेभ्यः स्वाहा ७। एकादशर्चेभ्यः स्वाहा ८
द्वादशर्चेभ्यः स्वाहा ९। त्रयोदशर्चेभ्यः स्वाहा १०। चतुर्दशर्चेभ्यः स्वाहा ११
पञ्चदशर्चेभ्यः स्वाहा १२। षोडशर्चेभ्यः स्वाहा १३। सप्तदशर्चेभ्यः स्वाहा १४
अष्टादशर्चेभ्यः स्वाहा १५। एकोनविंशतिः स्वाहा १६। विंशतिः स्वाहा १७
महत्काण्डाय स्वाहा १८। तुचेभ्यः स्वाहा १९। एकर्चेभ्यः स्वाहा २०
क्षुद्रेभ्यः स्वाहा २१। एकानृचेभ्यः स्वाहा २२। रोहितेभ्यः स्वाहा २३
सूर्याभ्यां स्वाहा २४। व्रात्याभ्यां स्वाहा २५। प्राजापत्याभ्यां स्वाहा २६
विषासह्यै स्वाहा २७। मङ्गलिकेभ्यः स्वाहा २८। ब्रह्मणे स्वाहा २९ १०३५

॥१४३॥ (अथर्व० १९।२४।१-८)

ब्रह्मणस्पतिः, बहुदैवत्यम् । अनुष्टुप्: ४-६, ८ त्रिष्टुप्, ७ त्रिपदाऽऽर्षी गायत्री ।

येन देवं सवितां परि देवा अधारयन् । तेनेमं ब्रह्मणस्पते परि राष्ट्राय धत्तन १
परीममिन्द्रमायुषे महे क्षत्राय धत्तन । यथैनं जरसे नयां ज्योक् क्षत्रेऽधि जागरत् २
परीमं सोममायुषे महे श्रोत्राय धत्तन । यथैनं जरसे नयां ज्योक् श्रोत्रेऽधि जागरत् ३
परि धत्त धत्त नो वर्चसेमं जरामृत्युं कृणुत दीर्घमायुः ।

बृहस्पतिः प्रायच्छद् वाम एतत् सोमाय राज्ञे परिधातवा उ ४
जरां सु गच्छ परि धत्स्व वासो भवा गृष्टीनामभिशस्तिपा उ ।

शतं च जीवं शरदः पुरुची रायश्च पोषमुपसंव्ययस्व ५ १०४०

परीदं वासो अधिथाः स्वस्तयेऽभूर्वापीनामभिशस्तिपा उ ।

शतं च जीवं शरदः पुरुचीर्वसूनि चारुर्वि भजासि जीवन् ६

योगैयोगे तवस्तरं वाजैवाजे हवामहे । सखाय इन्द्रमूतये ७

हिरण्यवर्णो अजरः सुवीरो जरामृत्युः प्रजया सं विशस्व ।

तदुगिराह तद् सोम आह बृहस्पतिः सविता तदिन्द्रः ८ १०४३

॥१४४॥ (अथर्व० ५।३।३-६)×

(१०४४-४७) बृहद्देवोऽथर्वा । ३-४ देवाः; ५ द्रविणोदाः; ६ देवीः । त्रिष्टुप् ।

मम देवा विह्वे संन्तु सर्वे इन्द्रवन्तो मरुतो विष्णुरग्निः ।
 ममान्तरिक्षमुरुलोकमस्तु मह्यं वातः पवतां कामायास्मै ३ १०४४
 मह्यं यजन्तां मम यानीष्टाकृतिः सत्या मनसो मे अस्तु ।
 एनो मा नि गां कतमच्चनाहं विश्वे देवा अभि रक्षन्तु मेह ४
 मयि देवा द्रविणमा यजन्तां मय्याशीरस्तु मयि देवहूतिः ।
 देवा होतारः सनिषन्न एतदरिष्टाः स्याम तन्वा सुवीराः ५
 दैवीः षड्वीरुरु नः कृणोत विश्वे देवास इह मादयध्वम् ।
 मा नो विददभिभा मो अशस्तिर्मा नो विदद् वृजिना द्वेष्ट्या या ६

॥१४५॥ (अथर्व० १।१६।१-४)

(१०४८-५१) चातनः । अग्निः, इन्द्रः, वरुणः, (२-४ दधन्यं सीसम्) । अनुष्टुप्, ४ ककुम्मती अनुष्टुप् ।

येमात्रास्यांते रात्रिमुदस्थुर्वाजमत्त्रिणः । अग्निस्तुरीयो यातुहा सो अस्मभ्यमधि ब्रवत् १
 सीसायाध्याह वरुणः सीसायागिरुपावति । सीसे म इन्द्रः प्रायच्छत् तदुङ्ग यातुचातनम् २
 इदं विष्कन्धं सहत इदं बाधते अत्त्रिणः । अनेन विश्वा ससहे या जातानि पिशाच्याः ३ १०५०
 यदि नो गां हंसि यद्यश्चं यदि पूरुषम् । तं त्वा सीसेन विध्यामो यथा नोऽसो अवीरहा ४

॥१४६॥ (अथर्व० १।१९।१-५)

१०५२-९०) ब्रह्मा । ईश्वरः, (१ इन्द्रः, २ दैवीः मनुष्येषवः, ३ रुद्रः, ४ देवाः) । अनुष्टुप्,
 २ पुरस्ताद्बृहती, ३ पथ्यापङ्क्तिः ।

मा नो विदन् विव्याधिनो मो अभिव्याधिनो विदन् ।
 आराच्छरव्या अस्मद् विषूचीरिन्द्र पातय १
 विश्वश्चो अस्मच्छरवः पतन्तु ये अस्ता ये चास्याः ।
 दैवीर्मनुष्येषवो ममामित्रान् वि विध्यत २
 यो नः स्वो यो अरणः सजात उत निष्ट्यो यो अस्मां अभिदासति ।
 रुद्रः शरव्यैतान् ममामित्रान् वि विध्यत +३
 यः सपत्नो योऽसपत्नो यश्च द्विषन्छपाति नः ।
 देवाप्तं सर्वे धूर्वन्तु ब्रह्म वर्म ममान्तरम् ४ १०५५

×अथर्व० ५, ३ ७, ९-१०=दै० [सोमः] ११८७; दै० [अदितिः] ७१०; दै० [रुद्रः] १५५ ।

+अथर्व० १, १९, ३ = दै० [रुद्रः] ११२ ।

॥१४७॥ (अथर्व० १।२६।१-२)*

१ देवाः; २ इन्द्रः, भगः, सविता गायत्रीः २ त्रिपदा एकावसाना सास्त्री त्रिष्टुप्,
४ एकावसाना पादनिचृत् ।

आरे३सावस्मदस्तु हेतिर्देवासो असत् । आरे अश्मा यमस्यथ १
सखासावस्मभ्यमस्तु रातिः सखेन्द्रो भगः सविता चित्रराधाः २

॥१४८॥ (अथर्व० ३।२३।१-६)

चन्द्रमाः, योनिः, द्यावापृथिवी । अनुष्टुप्, ५ उपरिष्ठाद् मुग्गिबृहती, ६ स्कंधोग्रीवी बृहती ।

येन वेहद् बभूविथ नाश्यामसि तत् त्वत् । इदं तदन्यत्र त्वदप दूरे नि दध्मसि १
आ ते योनिं गर्भं एतु पुमान् बाणं इवेषुधिम् ।

आ वीरोऽत्र जायतां पुत्रस्ते दशमास्यः २

पुमांसं पुत्रं जनय तं पुमाननु जायताम् ।

भवासि पुत्राणां माता जातानां जनयाश्च यान् ३ १०६०

यानि भद्राणि बीजान्यृषभा जनयन्ति च । तैस्त्वं पुत्रं विन्दस्व सा प्रसूधेनुका भव ४
कृणोमि ते प्राजापत्यमा योनिं गर्भं एतु ते ।

विन्दस्व त्वं पुत्रं नारि यस्तुभ्यं शमसच्छमु तस्मै त्वं भव ५

यासां द्यौः पिता पृथिवी माता समुद्रो मूलं वीरुधां बभूव ।

तास्त्वा पुत्रविद्याय दैवीः प्रावन्त्वोपधयः ६

॥१४९॥ (अथर्व० ६।५५।१) जगती ।

ये पन्थानो बहवो देवयानां अन्तरा द्यावापृथिवी संचरन्ति ।

तेषामज्यानि यतमो वहति तस्मै मा देवाः परि धत्तेह सर्वे १

॥१५०॥ (अथर्व० ६।११४।१-३) अनुष्टुप् ।

यद् देवा देवहेडनं देवासश्चकृमा वयम् । आदित्यास्तस्मान्नो यूयमतस्यर्तेन मुञ्चत १ १०६५

ऋतस्यर्तेनादित्या यजत्रा मुञ्चतेह नः । यज्ञं यद् यज्ञवाहसः शिक्षन्तो नोपशेकिम २

भेदस्वता यजमानाः सुचाज्यानि जुह्वतः । अक्रामा विश्वे वो देवाः शिक्षन्तो नोप शेकिम ३

॥१५१॥ (अथर्व० ७।२४।१)

इन्द्रः, अग्निः, विश्वे देवाः, मरुता, सविता, प्रजापतिः, अनुमतिः । त्रिष्टुप् ।

यज्ञ इन्द्रो अखनद् यदग्निर्विश्वे देवा मरुतो यत् स्वर्काः ।

तदुस्मभ्यं सविता सत्यधर्मा प्रजापतिरनुमतिर्नि यच्छात् १ १०६८

॥१५२॥ (अथर्व०.१९।१-१४)

(शान्तातिः?) । शान्तिः, बहुदैवत्यम् । अनुष्टुप्; १ विराडुरोवृहती; ५ पञ्चपदा पथ्यापांक्तिः;

९ पञ्चपदा ककुम्भती; १२ त्र्यवसाना सप्तपदाष्टिः; १४ चतुष्पदा संकृतिः ।

शान्ता द्यौः शान्ता पृथिवी शान्तमिदमुर्वे^१न्तरिक्षम् ।

शान्ता उदन्वतीरार्षः शान्ता नः सन्त्वोषधीः

१ १०६९

शान्तानि पूर्वरूपाणि शान्तं नो अस्तु कृताकृतम् ।

शान्तं भुतं च भव्यं च सर्वमेव शमस्तु नः

२

इयं या परमेष्ठिनी वाग्देवी ब्रह्मसंशिता । ययैव संसृजे घोरं तयैव शान्तिरस्तु नः ३

इदं यत् परमेष्ठिनं मनो वां ब्रह्मसंशितम् । येनैव संसृजे घोरं तेनैव शान्तिरस्तु नः ४

इमानि यानि पञ्चैन्द्रियाणि मनःषष्ठानि मे हृदि ब्रह्मणा संशितानि ।

यैरेव संसृजे घोरं तैरेव शान्तिरस्तु नः

५

शं नो मित्रः शं वरुणः शं विष्णुः शं प्रजापतिः ।

शं न इन्द्रो बृहस्पतिः शं नो भवत्वर्थमा

६

शं नो मित्रः शं वरुणः शं विवस्वाञ्छमन्तकः ।

उत्पाताः पार्थिवान्तरिक्षाः शं नो दिविचरा ग्रहाः

७ १०७५

शं नो भूमिर्वेप्यमाना शमुल्का निर्हतं च यत् । शं गावो लोहितक्षीराः शं भूमिरव तीर्थतीः

८

नक्षत्रमुल्काभिहतं शमस्तु नः शं नोऽभिचाराः शमु सन्तु कृत्याः ।

शं नो निखाता वल्गाः शमुल्का देशोपसगाः शमु नो भवन्तु

९

शं नो ग्रहाश्चान्द्रमसाः शमादित्यश्च राहुणा । शं नो मृत्युधूमकेतुः शं रुद्रास्तिग्मतैजसः १०

शं रुद्राः शं वसवः शमादित्याः शमग्नयः । शं नो महर्षयो देवाः शं देवाः शं बृहस्पतिः ११

ब्रह्म प्रजापतिर्धाता लोका वेदाः सप्तऋषयोऽग्नयः ।

तैर्मै कृतं स्वस्त्ययनामिन्द्रो मे शर्म यच्छतु ब्रह्मा मे शर्म यच्छतु ।

विश्वे मे देवाः शर्म यच्छन्तु सर्वे मे देवाः शर्म यच्छन्तु

१२ १०८०

यानि कानि चिच्छान्तानि लोके सप्तऋषयो विदुः ।

सर्वाणि शं भवन्तु मे शं मे अस्त्वभयं मे अस्तु

१३

पृथिवी शान्तिरन्तरिक्षं शान्तिर्द्यौः शान्तिरापः शान्तिरोषधयः शान्तिर्वनस्पतयः

शान्तिर्विश्वे मे देवाः शान्तिः सर्वे मे देवाः शान्तिः शान्तिः शान्तिः शान्तिभिः ।

ताभिः शान्तिभिः सर्वशान्तिभिः शमयामोऽहं यदिह घोरं यदिह क्रूरं

यदिह पापं तच्छान्तं तच्छिवं सर्वमेव शमस्तु नः

१४ १०८९

॥१५३॥ (अथर्व० १९।४३।१-८)

ब्रह्म, बहुदैवत्यम् । अथर्वसाना शंकुमती पथ्यापङ्कतिः ।

यत्र ब्रह्मविदो यान्ति दीक्षया तर्पसा सह ।

अग्निर्मा तत्र नयत्वग्निर्मेधा दधातु मे । अग्नये स्वाहा १

यत्र ब्रह्मविदो० वायुर्मा तत्र नयतु वायुः प्राणान् दधातु मे । वायवे स्वाहा २

यत्र ब्रह्मविदो० सूर्यो मा तत्र नयतु चक्षुः सूर्यो दधातु मे । सूर्याय स्वाहा ३ १०८५

यत्र ब्रह्मविदो० चन्द्रो मा तत्र नयतु मनश्चन्द्रो दधातु मे । चन्द्राय स्वाहा ४

यत्र ब्रह्मविदो० सोमो मा तत्र नयतु पयः सोमो दधातु मे । सोमाय स्वाहा ५

यत्र ब्रह्मविदो० इन्द्रो मा तत्र नयतु बलमिन्द्रो दधातु मे । इन्द्राय स्वाहा ६

यत्र ब्रह्मविदो० आपो मा तत्र नयन्त्वमृतं मोषं तिष्ठतु । अद्भ्यः स्वाहा ७

यत्र ब्रह्मविदो० ब्रह्मा मा तत्र नयतु ब्रह्मा ब्रह्म दधातु मे । ब्रह्मणे स्वाहा ८ १०९०

॥१५४॥ (अथर्व० २।१२।१-८)

(१०९१-९८) भरद्वाजः । १ द्यावापृथिवी, अन्तरिक्षम्; २ देवाः, ३ इन्द्रः, आदित्या-
वसवोऽङ्गिरसः पितरः; ५ सोम्यासः पितरः; ६ मरुतः, ७ यमसादनम्,
ब्रह्म, ८ अग्निः । त्रिष्टुप्, २ जगती, ७-८ अनुष्टुप् ।

द्यावापृथिवी उर्व०न्तरिक्षं क्षेत्रस्य पत्न्युरुगायोऽद्भुतः ।

उतान्तरिक्षमुरु वातगोपं त इह तप्यन्तां मयि तप्यमाने १

इदं देवाः शृणुत ये यज्ञिया स्थ भरद्वाजो मह्यमुक्तानि शंसति ।

पाशे स वद्धो दुरिते नि युज्यतां यो अस्माकं मन इदं हिनस्ति २

इदमिन्द्र शृणुहि सोमप यत् त्वा हृदा शोचता जोहवीमि ।

वृश्चामि तं कुलिशेनेव वृक्षं यो अस्माकं मन इदं हिनस्ति ३

अशीतिभिस्तिष्ठमभिः सामगेभिरादित्येभिर्वसुभिर्गङ्गिरोभिः ।

इष्टापूर्तमवतु नः पितृणामामुं ददे हरसा दैव्येन x४

द्यावापृथिवी अनु मा दीधीथां विश्वे देवासो अनु मा रभध्वम् ।

अङ्गिरसः पितरः सोम्यासः पापमार्छित्वपक्रामस्य कर्ता ५

अतीव यो मरुतो मन्यन्ते नो ब्रह्म वा यो निन्दिषत् क्रियमाणम् ।

तपूषि तस्मै वृजिनानि सन्तु ब्रह्मद्विषं द्यौरभिसंतपाति ६ १०९६

सप्त प्राणानष्टौ मन्यस्तांस्ते वृश्चामि ब्रह्मणा । अया यमस्य सादनमग्निदूतो अरंकृतः ७ १०९७
आ दधामि ते पदं समिद्धे जातवेदसि । अग्निः शरीरं वेवेष्टुमुं वागपि गच्छतु ८

॥१५५॥ (अथर्व० २।२८।३-५)

(१०९९-११०१) शम्भुः । द्यावापृथिव्यादयो देवाः । त्रिष्टुप्, ५ भुरिक् ।
त्वमीशिषे पशूनां पार्थिवानां ये जाता उत वा ये जनित्राः ।
मेमं प्राणो हासीन्मो अपानो मेमं मित्रा वधिषुर्मो अमित्राः ३
द्यौष्ट्वा पिता पृथिवी माता जुरामृत्युं कृणुतां संविदाने ।
यथा जीवा अदितेरुपस्थे प्राणापानाभ्यां गुपितः शतं हिमाः ४ ११००
इममग्र आयुषे वर्चसे नय प्रियं रेतो वरुण मित्रराजन् ।
मातेवास्मा अदिते शर्म यच्छ विश्वे देवा जुरदष्टिर्यथासत् ५

॥१५६॥ (अथर्व० २।३६।४, ६, ८)+

(११०२-४) पतिवेदनः । ४ इन्द्रः, ६ धनपतिः, ८ औषधिः । ४ त्रिष्टुप्, ६ अनुष्टुप्, ८ निचृत्पुरउष्णिक् ।
यथाखरो मघवंश्चारुरेष प्रियो मुगाणां सुषदा बभूव ।
एवा भगस्य जुष्टेयमस्तु नारी संप्रिया पत्याविराधयन्ती ४
आ क्रन्दय धनपते वरमामनसं कृणु । सर्वं प्रदक्षिणं कृणु यो वरः प्रतिक्राम्यः ६
आ ते नयतु सविता नयतु पतिर्यः प्रतिक्राम्यः । त्वमस्यै ब्रह्मोषधे ८

॥१५७॥ (अथर्व० ३।१९।१-८)

(११०५-२०) वसिष्ठः । विश्वे देवाः, चन्द्रमाः, इन्द्रः । अनुष्टुप्, १ पथ्याबृहती, ३ भुरिगृहती,
५ त्रिष्टुप्, ६ त्र्यवसाना पदपदा त्रिष्टुप्कुम्भतीगर्भातिजगती,
७ विराडास्तारपङ्क्तिः, ८ पथ्यापङ्क्तिः ।

संशितं म इदं ब्रह्म संशितं वीर्यं बलम् ।
संशितं क्षत्रमजरमस्तु जिष्णुर्येषामस्मि पुरोहितः १ ११०५
समहमेषां राष्ट्रं स्यामि समोजो वीर्यं बलम् ।
वृश्चामि शत्रूणां बाहूननेन हविषाहम् २
नीचैः पद्यन्तामधरे भवन्तु ये नः सूरि मघवानं पृतन्यान् ।
सिणामि ब्रह्मणामित्रानुन्नयामि स्वानहम् ३
तीक्ष्णीयांसः परशोरग्रेस्तीक्ष्णतरा उत ।
इन्द्रस्य वज्रात् तीक्ष्णीयांसो येषामस्मि पुरोहितः ४ ११०८

+अथर्व० २, ३६, १; ३=६० [अग्निः] २३३९-४० । अथर्व० २, ३६, २ = ६० [सोमः] १२४३ । अथर्व० २, ३६, ५; ७
= ६० [अदितिः] ६२३, ७९९ ।

एषामहमायुधा सं स्योम्येषां राष्ट्रं सुवीरं वर्धयामि ।

एषां क्षत्रमजरमस्तु जिष्ण्वेऽेषां चित्तं विश्वेऽवन्तु देवाः

५

उद्धर्षन्तां मघवन् वाजिनान्युद् वीराणां जयतामेतु घोषः ।

पृथग् घोषा उलुलर्यः केतुमन्त उदीरताम् । देवा इन्द्रज्येष्ठा मरुतो यन्तु सेनया ६ १११०

प्रेता जयता नर उग्रा वः सन्तु ब्राह्मवः ।

तीक्ष्णेष्वोऽबलधन्वनो हतोऽग्रायुधा अचलानुग्रवाहवः

७

अवसृष्टा परा पत शरव्ये ब्रह्मसंशिते ।

जयामित्रान् प्र पद्यस्व जह्येषां वरवरं मामीषां मोचि कश्चन

८

॥१५८॥ (अथर्व० ३।२२।१-६)

वर्चः, बृहस्पतिः, विश्वे देवाः । अनुष्टुप्, १ विराट् त्रिष्टुप्, पञ्चपदा परानुष्टुप् विराडतिजगती,
४ त्र्यवसाना पदपदा जगती ।

हस्तिवर्चसं प्रथतां बृहद् यशो अदित्या यत् तन्वः संवभूव ।

तत् सर्वे समदुर्महमेतद् विश्वे देवा अदितिः सजोषाः

१

मित्रश्च वरुणश्चेन्द्रो रुद्रश्च चेततु । देवासो विश्वधायसस्ते माञ्जन्तु वर्चसा

२

येन हस्ती वर्चसा संवभूव येन राजा मनुष्येष्वस्ववृन्तः ।

येन देवा देवतामग्र आयन् तेन मामद्य वर्चसाग्रे वर्चस्विनं कृणु

३ १११५

यत् ते वर्चो जातवेदो बृहद् भवत्याहुतेः ।

यावत् सूर्यस्य वर्च आसुरस्य च हस्तिनः ।

तावन्मे अश्विना वर्च आ धत्तां पुष्करस्रजा

४

यावच्चतस्रः प्रदिशश्चक्षुर्यावत् समश्रुते ।

तावत् समैत्विन्द्रियं मयि तद्धस्तिवर्चसम्

५

हस्ती मृगाणां सुषदांमतिष्ठावान् बभूव हि ।

तस्य भगौ वर्चसाभि पिञ्चामि मामहम्

६

॥१५९॥ (अथर्व० १९।११।५-६)+

बहुदैवत्यम् । त्रिष्टुप् ।

ये देवानामृत्विजो यज्ञियासो मनोर्यजत्रा अमृता ऋतज्ञाः ।

ते नो रासन्तामुरुगायमद्य यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः

५ १११९

+ अथर्व० १९, ११, १-४ = दै० [विश्वे देवाः] ४।१९-६२ ।

दै० [विश्वे देवाः] ११

तदस्तु मित्रावरुणा तदग्ने शं योरस्मभ्यमिदमस्तु शस्तम् ।

अशीमहि गाधमुत प्रतिष्ठां नमो दिवे बृहते सादनाय

६ ११२०

॥१६०॥ (अथर्व० १९।२२।१-२१)

(११२१-४१) अङ्गिराः । मन्त्रोक्ताः । १ साम्युष्णिक्, ३, १९ प्राजापत्या गायत्री; ४, ७, ११, १७ देवी जगती; ५, १२-१३ देवी त्रिष्टुप्; २, ६, १४-१६, २० देवी पञ्चक्तिः; ८-१० आसुरी जगती; १८ आसुर्यनुष्टुप्; २१ चतुष्पदा त्रिष्टुप् (१-२० एकावसानाः) ।

| | | |
|--|--|----|
| आङ्गिरसानामाद्यैः पञ्चानुवाकैः स्वाहा १ | पष्ठाय स्वाहा | २ |
| सप्तमाष्टमाभ्यां स्वाहा ३ | नीलनखेभ्यः स्वाहा | ४ |
| हरितेभ्यः स्वाहा ५ | क्षुद्रेभ्यः स्वाहा | ६ |
| पर्यायिकेभ्यः स्वाहा ७ | प्रथमेभ्यः स्वाहा | ८ |
| द्वितीयेभ्यः शङ्खेभ्यः स्वाहा ९ | तृतीयेभ्यः शङ्खेभ्यः स्वाहा | १० |
| उपोत्तमेभ्यः स्वाहा ११ | उत्तमेभ्यः स्वाहा | १२ |
| उत्तरेभ्यः स्वाहा १३ | ऋषिभ्यः स्वाहा | १४ |
| शिखिभ्यः स्वाहा १५ | गणेभ्यः स्वाहा | १६ |
| महागणेभ्यः स्वाहा १७ | सर्वेभ्योऽङ्गिरोभ्यो विदगणेभ्यः स्वाहा | १८ |
| पृथक्सहस्राभ्यां स्वाहा १९ | ब्रह्मणे स्वाहा | २० |
| ब्रह्मज्येष्ठा संभृता वीर्याणि ब्रह्माग्रे ज्येष्ठं दिवमा ततान । | | |
| भूतानां ब्रह्मा प्रथमोत्तं जज्ञे तेनाहति ब्रह्मणा स्पर्धितुं कः | | |

+२१ ११४१

॥१६१॥ (अथर्व० ४।८।१-७)

(११४२-४९) अथर्वाङ्गिराः । चन्द्रमाः, आपः, राज्याभिषेकः; १ राजा, २ देवाः, ३ विश्वरूपः, ४-५ आपः । अनुष्टुप्; १, ७ भुरिक् त्रिष्टुप्, ३ त्रिष्टुप्, ५ विराट् प्रस्तारपञ्चक्तिः ।

भूतो भूतेषु पय आ दधाति स भूतानामधिपतिर्बभूव ।

तस्य मृत्युश्चरति राजसूयं स राजा राज्यमनु मन्यतामिदम् १

अभि प्रेहि मार्ष वेन उग्रश्चेत्ता संपलहा ।

आ तिष्ठ मित्रवर्धन तुभ्यं देवा अर्धि ब्रवन् २

आतिष्ठन्तं परि विश्वे अभूषंस्त्रियं वसानश्चरति स्वरोचिः ।

महत् तद् वृष्णो असुरस्य नामा विश्वरूपो अमृतानि तस्थौ ३ ११४४

व्याघ्रो अधि वैयाघ्रे वि क्रमस्व दिशो महीः ।

विशस्त्वा सर्वा वाञ्छन्त्वापो दिव्याः पर्यस्वतीः

४ ११४५

या आपो दिव्याः पर्यसा मदन्त्यन्तरिक्ष उत वा पृथिव्याम् ।

तासां त्वा सर्वासामपामभि विश्वामि वर्चसा

५

अभि त्वा वर्चसासिचन्नापो दिव्याः पर्यस्वतीः ।

यथासौ मित्रवर्धनस्तथा त्वा सविता करत्

६

एना व्याघ्रं परिष्वजानाः सिंहं हिंन्वन्ति महते सौभगाय ।

समुद्रं न सुभ्रुवंस्तस्थिवासं मर्मज्यन्ते द्वीपिनमप्स्वन्तः

७

॥१६२॥ (अथर्व० ७।११८।१)

चन्द्रमाः, वरुणः, देवः । त्रिष्टुप् ।

मर्माणि ते वर्मेणा छादयामि सोमस्त्वा राजामृतेनानु वस्ताम् ।

उरोर्वरीयो वरुणस्ते कृणोतु जयन्तं त्वानु देवा मदन्तु

१

॥१६३॥ (अथर्व० ६।१२३।१-५)

(११।५० ५४) भृगुः । त्रिष्टुप्, ३ द्विपदा साम्यनुष्टुप्, ४ एकावसाना

द्विपदा प्राजापत्या भुरिगनुष्टुप् ।

एतं सधस्थाः परि वो ददामि यं शैवधिमावहांजातवेदाः ।

अन्वागन्ता यजमानः स्वस्ति तं स्म जानीत परमे व्योमिन्

१ ११५०

जानीत स्मैनं परमे व्योमिन् देवाः सधस्था विद लोकमत्र ।

अन्वागन्ता यजमानः स्वस्तीष्टापुर्तं स्म कृणुताविरस्मै

२

देवाः पितरः पितरो देवाः । यो अस्मि सो अस्मि

३

स पचाभि स ददामि स यजे स दुत्तान्मा यूषम्

४

नाकै राजन् प्रति तिष्ठ तत्रैतत् प्रति तिष्ठतु । विद्धि पूतस्य नो राजन्तस देव सुमना भव

॥१६४॥ (अथर्व० १९।२७।१-१५)

(११।५५-६९) भृग्वङ्गिराः । त्रिवृत्, चन्द्रमाश्च । अनुष्टुप्; ३, ९ त्रिष्टुप्; १० जगती(?); ११ आर्च्य-

णिकः; १२ आर्च्यनुष्टुप्; १३ साक्षी त्रिष्टुप् (११-१३ एकावसानाः)

गोभिष्टा पात्वृषभो वृषा त्वा पातु वाजिभिः । वायुष्टा ब्रह्मणा पात्विन्द्रस्त्वा पात्विन्द्रियैः १

सोमस्त्वा पात्वोषधीभिर्नक्षत्रैः पातु सूर्यः । माज्यस्त्वा चन्द्रो वृत्रहा वातः प्राणेन रक्षतु २

तिस्रो दिवस्तिस्त्रः पृथिवीस्त्रीण्यन्तरिक्षाणि चतुरः समुद्रान् ।

त्रिवृतं स्तोमं त्रिवृत आप आहुस्तास्त्वा रक्षन्तु त्रिवृता त्रिवृद्धिः

३ ११५७

त्रीक्षाकांस्त्रीन्त्समुद्रांस्त्रीन् ब्रध्नांस्त्रीन् वैष्टपान् । त्रीन् मातरिश्चन्स्त्रीन्त्सूर्यान् गोमृन् कल्पयामि ते ४ ११५८
घृतेन त्वा समुक्षाम्यगन् आज्येन वर्धयन् । अग्नेश्चन्द्रस्य सूर्यस्य मा प्राणं मायिनो दभन् ५
मा वः प्राणं मा वोऽपानं मा हरो मायिनो दभन् । आजन्तो विश्ववेदसो देवा दैव्येन धावत ६
प्राणेनाग्निं सं सृजति वातः प्राणेन संहितः । प्राणेन विश्वतोमुखं सूर्यं देवा अजनयन् ७
आयुषाऽऽयुःकृतो जीवायुमान् जीव मा मृथाः । प्राणेनात्मन्वतो जीव मा मृत्योरुदगा वशम् ८
देवानां निहितं निधिं यमिन्द्रोऽन्वविन्दत् पथिभिर्देवयानैः ।

आपो हिरण्यं जुगुप्सुस्त्रिवृद्धिस्तास्त्वा रक्षन्तु त्रिवृता त्रिवृद्धिः ९

त्रयस्त्रिंशद् देवतास्त्रीणि च वीर्याणि प्रियायमाणा जुगुप्स्वन्तः ।

अस्मिन्न्द्रे अधिः पृथ्विरण्यं तेनायं कृणवद् वीर्याणि १०

ये देवा दिव्येकादश स्थ ते देवासो हविरिदं जुषध्वम् ११ ११६५

ये देवा अन्तरिक्ष एकादश स्थ ते देवासो हविरिदं जुषध्वम् १२

ये देवा पृथिव्यामेकादश स्थ ते देवासो हविरिदं जुषध्वम् १३

असपत्नं पुरस्तात् पश्चान्नो अभयं कृतम् । सविता मा दक्षिणत उत्तरान्मा शचीपतिः १४

दिवो मादित्या रक्षन्तु भूम्या रक्षन्त्वग्रयः ।

इन्द्राग्नी रक्षतां मा पुरस्तादश्विनावभितः शर्म यच्छताम् ।

तिरश्चीनध्या रक्षतु जातवेदा भूतकृतो मे सर्वतः सन्तु वर्म १५

॥१६५॥ (अथर्व० ६।१०।१-३)

(११७०-७८) शन्तातिः । १ पृथिवी, श्रोत्रं, वनस्पतिः, अग्निः, २ प्राणः, अन्तरिक्षं, वयः, वायुः, ३ द्यौः, चक्षुः, नक्षत्राणि, सूर्यः । ऋषदम्, १ साक्षी त्रिष्टुप्, २ प्राजापत्या बृहती, ३ साक्षी बृहती ।

पृथिव्यै श्रोत्राय वनस्पतिभ्योऽग्नयेऽधिपतये स्वाहा १ ११७०

प्राणायान्तरिक्षाय वयोभ्यो वायवेऽधिपतये स्वाहा २

दिवे चक्षुषे नक्षत्रेभ्यः सूर्यायाधिपतये स्वाहा ३

॥१६६॥ (अथर्व० ६।१९।१-३)

चन्द्रमाः, १ देवजनाः, मनवः, विश्वा भूतानि, पवमानः, २ पवमानः, ३ सविता ।

गायत्री, १ अनुष्टुप् ।

पुनन्तु मा देवजनाः पुनन्तु मनवो धिया । पुनन्तु विश्वा भूतानि पवमानः पुनातु मा १

पवमानः पुनातु मा ऋत्वे दक्षाय जीवसे । अथो अरिष्टतातये २

उभाभ्यां देव सवितः पवित्रेण सवेन च । अस्मान् पुनीहि चक्षुमे ३ ११७५

॥१६७॥ (अथर्व० ६।१३।१-३)

रुद्रः, १ यमो मृत्युः शर्वः, २ भवः शर्वः, ३ विश्वे देवाः मरुतः अग्नीषोमौ वरुणः वातपर्जन्यौ । त्रिष्टुप् ।

यमो मृत्युरंघमारो निर्ऋतो बभ्रुः शर्वोऽस्ता नीलशिखण्डः ।

देवजनाः सेनयोत्तस्थिवांसस्ते अस्माकं परि वृज्जन्तु वीरान् १

मनसा होमैर्हरसा घृतेन शर्वायास्त्र उत राज्ञे भवार्य ।

नमस्येभ्यो नम एभ्यः कृणोम्यन्यत्रास्मदुघविषा नयन्तु २

त्रार्यध्वं नो अघविषाभ्यो वधाद् विश्वे देवा मरुतो विश्ववेदसः ।

अग्नीषोमा वरुणः पूतदक्षा वातापर्जन्ययोः सुमतौ स्याम ३

॥१६८॥ (अथर्व० ६।५३।१-२)+

(११७९-८०) बृहच्छुक्रः । १ द्यौः, पृथिवी, शुक्रः, सोमः, अग्निः, वायुः, सविता, भगः, २ वैश्वानरः,

१ जगती, २ त्रिष्टुप् ।

द्यौश्च म इदं पृथिवी च प्रचेतसौ शुक्रो बृहन् दक्षिणया पिपर्तु ।

अनु स्वधा चिकित्तां सोमो अग्निर्वायुर्नः पातु सविता भगश्च १

पुनः प्राणः पुनरात्मा न ऐतु पुनश्चक्षुः पुनरसुर्न ऐतु ।

वैश्वानरो नो अदब्धस्तनूपा अन्तस्तिष्ठाति दुरितानि विश्वा २ ११८०

॥१६९॥ (अथर्व० ६।६३।१-३)*

(११८१-८३) ब्रह्मणः । १ निर्ऋतिः, २ यमः, ३ मृत्युः । जगती, २ अनिजगतीगर्भा ।

यत् ते देवी निर्ऋतिरावन्ध दाम ग्रीवास्वविमोक्षं यत् ।

तत् ते वि प्याम्यायुषे वर्चसे बलायादोमदमन्नमद्वि प्रसृतः १

नमोऽस्तु ते निर्ऋते तिग्मतेजोऽयस्प्रयान् वि चृता बन्धपाशान् ।

यमो मह्यं पुनरित् त्वां ददाति तस्मै यमाय नमो अस्तु मृत्यवे २

अयस्मये द्रुपदे वैधिष इहाभिहितो मृत्युभिर्ये सहस्रम् ।

यमेन त्वं पितृभिः संविदान उत्तमं नाकमधि रोहयेमम् ३

॥१७०॥ (अथर्व० ६।१०३।१-३)

(११८४-८६) उच्छोचनः । इन्द्राग्नीः १ बृहस्पतिः सविता मित्रो अर्यमा भगो अश्विनौः २-३ इन्द्रोऽग्निः;

अनुष्टुप् ।

संदानं वो बृहस्पतिः संदानं सविता करत् । संदानं मित्रो अर्यमा संदानं भगो अश्विनौ १

सं परमान्तसमवमानथो सं द्यामि मध्यमान् । इन्द्रस्तान् पर्यहार्दाम्ना तानग्ने सं द्या त्वम् २

अग्नी ये युधमायान्ति केतून् कृत्वानीकशः । इन्द्रस्तान् पर्यहार्दाम्ना तानग्ने सं द्या त्वम् ३ ११८६

॥१७१॥ (अथर्व० ६।१२०।१-३)

(११८७-८९) कौशिकः । अन्तरिक्षं, पृथिवी, द्यौः, अग्निः । १ जगती, २ पङ्क्तिः, ३ त्रिष्टुप् ।

यदन्तरिक्षं पृथिवीमुत द्यां यन्मातरं पितरं वा जिहिंसिम ।

अयं तस्माद् गार्हपत्यो नो अग्निरुदिन्नयाति सुकृतस्य लोकम्

१ ११८७

भूमिर्मातादिति नो जनित्रं भ्रातान्तरिक्षमभिशस्त्या नः ।

द्यौर्नः पिता पित्र्याच्छं भवाति जामिमृत्वा मावं पत्सि लोकात्

२

यत्रां सुहार्दः सुकृतो मदन्ति विहाय रोगं तन्वः स्वायाः ।

अश्लोणा अश्रैरहुताः स्वर्गे तत्र पश्येम पितरौ च पुत्रान्

३

॥१७२॥ (अथर्व० १४।२।५३-५८)

(११९०-१५) सूर्या स्तावित्री । अनुष्टुप् ।

बृहस्पतिनावसृष्टां विश्वे देवा अधारयन् । वचो गोषु प्रविष्टं यत् तेनेमां सं सृजामसि ५३ ११९०

बृहस्पतिनावसृष्टां विश्वे देवा अधारयन् । तेजो गोषु प्रविष्टं यत् तेनेमां सं सृजामसि ५४

बृहस्पतिनावसृष्टां विश्वे देवा अधारयन् । भगो गोषु प्रविष्टो यस्तेनेमां सं सृजामसि ५५

बृहस्पतिनावसृष्टां विश्वे देवा अधारयन् । यशो गोषु प्रविष्टं यत् तेनेमां सं सृजामसि ५६

बृहस्पतिनावसृष्टां विश्वे देवा अधारयन् । पयो गोषु प्रविष्टं यत् तेनेमां सं सृजामसि ५७

बृहस्पतिनावसृष्टां विश्वे देवा अधारयन् । रसो गोषु प्रविष्टो यस्तेनेमां सं सृजामसि ५८ ११९५

॥१७३॥ [११९६-९८] (अथर्व० २०।१२८।५)

ये च देवा अयजन्ताथो ये च परादृदिः । सूर्यो दिवमिव गत्वायं मधवा नो वि रंशते ५

॥१७४॥ (अथर्व० २०।१३५।४, १०)

वी मे देवा अक्रंसताध्वर्यो क्षिप्रं प्रचर । सुसत्यमिद् गवामस्यसि प्रसुदसि ४

देवा ददत्वासुरं तद् वो अस्तु सुचेतनम् । युष्मा अस्तु दिवैदिवे प्रत्येवं गृभायत १०

देवाः ।

॥१७५॥ (आ० १।२७।१३)

(११९९) आजीगर्तिः शुनःशेषः स कुमित्रो वैश्वामित्रो देवरातः । त्रिष्टुप् ।

नमो महद्भ्यो नमो अर्भकेभ्यो नमो युवभ्यो नम आशिनेभ्यः ।

पजाम देवान् यदि शक्नवाम मा ज्यायसः शंसमा वृक्षि देवाः

१३ ११९९

॥१७६॥ (ऋ० १।४।१० [उत्तरार्धः])

(१२००) प्रस्कण्वः काण्वः । (सुदानवः देवाः) । अनुष्टुप् ।

अयं सोमः सुदानवस्तं पात तिरोअह्वयम्

१० १२००

॥१७७॥ (ऋ० १।९।८ [त्रयः पादाः])

(१२०१) कुत्स आङ्गिरसः । जगती ।

पूर्वो देवा भवतु सुन्वतो रथो ऽस्माकं शंसो अभ्यस्तु दूह्यः ।

तदा जानीतोत पुण्यता वचः

८

॥१७८॥ (ऋ० १।१६।५०)

(१२०२) दीर्घतमा औचथ्यः । त्रिष्टुप् ।

यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवास्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन् ।

ते ह नाकं महिमानः सचन्त यत्र पूर्वं साध्याः सन्ति देवाः

५०

॥१७९॥ (ऋ० ७।१०।११)

(१२०३) मैत्रावरुणिर्वसिष्ठः । त्रिष्टुप् ।

पुरः सो अस्तु तन्वाङ् तना च तिस्रः पृथिवीरधो अस्तु विश्वाः ।

प्रति शुष्यतु यशो अस्य देवा यो नो दिवा दिप्सति यश्च नक्तम्

११

॥१८०॥ (ऋ० ८।६३।१२)

(१२०४) प्रगाथः काण्वः । त्रिष्टुप् ।

अस्मे रुद्रा मेहना पर्वतासो वृत्रहत्ये भरहूतौ सजोषाः ।

यः शंसते स्तुवते धारि पञ्च इन्द्रज्येष्ठा अस्माँ अवन्तु देवाः

१२

॥१८१॥ (ऋ० ८।८०।१०)

(१२०५) एकघ्नौधसः । त्रिष्टुप् ।

अवीबुधद् वो अमृता अमन्दी देकघ्नूदेवा उत याश्च देवीः ।

तस्मा उ राधः कृणुत प्रशस्तं प्रातर्मक्षू धियावसुर्जगम्यात्

१० १२०५

॥१८२॥ (ऋ० १०।५१।२,४,६,८)

(१२०६-११) सौचीकोऽग्निः । त्रिष्टुप् ।

को मा ददर्श कतमः स देवो यो मे तन्वो बहुधा पर्यपश्यत् ।

क्वाह मित्रावरुणा क्षियन्त्यग्नेर्विश्वाः समिधो देवयानीः

२

होत्राबुहं वरुण बिभ्यदायं नेदेव मा युनजन्नत्र देवाः ।

तस्य मे तन्वो बहुधा निर्विष्टा एतमर्थं न चिकेताहमग्निः

४ १२०७

अग्नेः पूर्वे आतरो अर्थमेतं रथीवाध्वानमन्वावरीवुः ।
 तस्माद्भिया वरुण दूरमायं गौरो न क्षेमोरोविजे ज्यायाः
 प्रयाजान् मे अनुयाजौश्च केवला—नूर्जस्वन्तं हविषो दत्त भागम् ।
 घृतं चापां पुरुषं चौषधीना—मयेश्व दीर्घमायुरस्तु देवाः

६ १२०८

८

॥१८३॥ (क्र० १०।५३।४-५)

तदद्य वाचः प्रथमं मंसीय येनासुरां अभि देवा असांम ।
 ऊर्जाद उत यज्ञियासः पञ्च जना मम होत्रं जुषध्वम्
 पञ्च जना मम होत्रं जुषन्तां गोजाता उत ये यज्ञियासः ।
 पृथिवी नः पार्थिवात् पात्वंहसो ऽन्तरिक्षं दिव्यात् पात्वस्मान्

४ १२१०

५

॥१८४॥ (क्र० १०।७२।१-९)

(१२१२-२०) बृहस्पतिलौक्यः, बृहस्पतिराङ्गिरसो वा, अदितिर्दाक्षायणी वा । अनुष्टुप् ।

देवानां नु वयं जाना प्र वोचाम विपन्यया । उक्थेष्टु शस्यमानेषु यः पश्यादुत्तरे युगे १
 ब्रह्मणस्पतिरेता सं कर्मार इवाधमत् । देवानां पूव्ये युगे ऽसंतः सदजायत २
 देवानां युगे प्रथमे ऽसंतः सदजायत । तदाशा अन्वजायन्त तदुत्तानपदस्परि ३
 भूर्जेज्ञ उत्तानपदो भुव आशा अजायन्त । अदितेर्दक्षो अजायत दक्षाद्वदितिः परि ४ १२१५
 अदितिर्ह्यजनिष्ट दक्ष या दुहिता तव । तां देवा अन्वजायन्त भद्रा अमृतबन्धवः ५
 यद्देवा अदः सलिले सुसंरब्धा अतिष्ठत । अत्रा वो नृत्यन्तामिव तीव्रो रेणुरपायत ६
 यद्देवा यतयो यथा भुवन्नान्यपिन्वत । अत्रा समुद्र आ गूळह—मा सूर्यमजभर्तन ७
 अष्टौ पुत्रासो अदिते—ये जातास्तन्वस्परि । देवा उप प्रैत् सप्तभिः परां मार्ताण्डमास्यत् ८
 सप्तभिः पुत्रैरदिति—रुप प्रैत् पूव्य युगम् । प्रजायै मृत्यवे त्वत् पुनर्मार्ताण्डमाभरत् ९ १२२०

॥१८५॥ (क्र० १०।८५।१७)

(१२२१) सूर्या सावित्री ऋषिका । अनुष्टुप् ।

सूर्यायै देवेभ्यो मित्राय वरुणाय च । ये भूतस्य प्रचेतस इदं तेभ्योऽकरं नमः १७

॥१८६॥ (क्र० १०।९८।१-१२)

(१२२२-३३) देवापिराष्टिषेणः (वृष्टिकामः) । त्रिष्टुप् ।

बृहस्पते प्रति मे देवतामिहि मित्रो वा यद्वरुणो वासि पूषा ।
 आदित्यैर्वा यद्वसुभिर्मरुत्वा—न्तस् पर्जन्यं शतंनवे वृषाय

१ १२२२

| | |
|---|--------|
| आ देवो दूतो अजिरश्चिक्त्वान् त्वद्देवापे अभि मामंगच्छत् । | |
| प्रतीचीनः प्रति मामा ववृत्स्व दधामि ते द्युमतीं वाचमासन् | २ |
| अस्मे धेहि द्युमतीं वाचमासन् बृहस्पते अनमीवामिषिराम् । | |
| यया वृष्टिं शंतनवे वनाव दिवो द्रप्सो मधुमाँ आ विवेश | ३ |
| आ नो द्रप्सा मधुमन्तो विशन्तिव—न्द्र देह्यधिरथं सहस्रम् । | |
| नि षीद होत्रमृतुथा यजस्व देवान् देवापे हविषा सपर्य | ४ १२२५ |
| आष्टिषेणो होत्रमृषिर्निषीदन् देवार्पिदेवसुमतिं चिक्त्वान् । | |
| स उत्तरस्मादधरं समुद्र—मपो दिव्या असृजद्वर्ष्या अभि | ५ |
| अस्मिन्त्समुद्रे अध्युत्तरस्मि—न्नापो देवेभिर्निवृता अतिष्ठन् । | |
| ता अद्रवन्नाष्टिषेणेन सृष्टा देवार्पिना प्रेषिता मृक्षिणीषु | ६ |
| यद्देवापिः शंतनवे पुरोहितो होत्राय वृतः कृपयन्नदीधेत् । | |
| देवश्रुतं वृष्टिवनिं रराणो बृहस्पतिर्वाचमस्मा अयच्छत् | ७ |
| यं त्वा देवार्पिः शुशुचानो अग्न आष्टिषेणो मनुष्यः समीधे । | |
| विश्वेभिर्देवैरनुमद्यमानः प्र पर्जन्यमीरया वृष्टिमन्तम् | ८ |
| त्वां पूर्वं ऋषयो गीर्भिरायन् त्वामध्वरेषु पुरुहूत विश्वे । | |
| सहस्राण्यधिरथान्यस्मे आ नो यज्ञं रोहिदश्चोर्ष याहि | ९ १२३० |
| एतान्यग्ने नवतिर्नव त्वे आहुतान्यधिरथा सहस्रा । | |
| तेभिर्वधस्व तन्वंः शूर पूर्वी—दिवो नो वृष्टिमिषितो रिरिहि | १० |
| एतान्यग्ने नवतिं सहस्रा सं प्र यच्छ वृष्ण इन्द्राय भागम् । | |
| विद्वान् पथ ऋतुशो देवयाना—नप्यौलानं दिवि देवेषु धेहि | ११ |
| अग्ने बाधस्व वि मृधो वि दुर्गहा ऽपामीवामप रक्षांसि सेध । | |
| अस्मात् समुद्राद् बृहतो दिवो नो ऽपां भूमानमुप नः सृजेह | १२ |
| ॥१८७॥ [१२३४-६३] (वा० य० १।८) | |
| देवानामसि वह्नितम् × सस्मितम् पप्रितम् जुष्टतमं देवहूतमम् | ८ |
| ॥१८८॥ (वा० य० २।७, २१) | |
| नमो देवेभ्यः | ७ |

देवा गातुविदो गातुं विच्चा गातुमित । मनसस्पत इमं देव यज्ञं स्वाहा वार्ते धाः × २१ १२३६

॥१८९॥ (वा० य० ६।११)

स्वाहा देवेभ्यो देवेभ्यः स्वाहा

११ १२३७

॥१९०॥ (वा० य० ७।३, १२, १७, २२, २६)

देवेभ्यस्त्वा मरीचिपेभ्यः

+३।

देवास्त्वा शुक्रपाः प्रणयन्तु

१२

देवास्त्वा मन्थिपाः प्रणयन्तु

१७

देवेभ्यस्त्वा देवाव्यं यज्ञस्याऽऽयुषे गृह्णामि २२। देवानामुत्क्रमणमसि

२६

॥१९१॥ (वा० य० ८।१८, २७, ४३, ६०)

सुगा वो देवाः सदेना अकर्म य आजग्मेदः सर्वनं जुषाणाः ।

भरमाणा वहमाना हवीः ष्यसे धत्त वसवो वसूनि स्वाहा

*१८

देवानां समिदसि

२७

इडे रन्ते हव्ये काम्ये चन्द्रे ज्योतेऽदिते सरस्वति महि विश्रुति ।

एता ते अघ्न्ये नामानि देवेभ्यो मा सुकृते ब्रूतात्

४३ १२४५

देवान् दिवमगन् यज्ञस्ततो मा द्रविणमष्टु मनुष्यान्तरिक्षमगन् यज्ञस्ततो

मा द्रविणमष्टु पितृन् पृथिवीमगन् यज्ञस्ततो मा द्रविणमष्टु यं कं च

लोकमगन् यज्ञस्ततो मे भद्रमभूत्

६०

॥१९२॥ (वा० य० ९।३५-३६)

विश्वदैवनेत्रेभ्यो देवेभ्यः पश्चात् सद्भ्यः स्वाहा

३५

ये देवा विश्वदैवनेत्राः पश्चात् सदस्तेभ्यः स्वाहा

३६

॥१९३॥ (वा० य० १५।५०)

तं पत्नीभिरनुगच्छेम देवाः पुत्रैर्भ्रातृभिरुत वा हिरण्यैः ।

नाकं गृह्णानाः सुकृतस्य लोके तृतीयं पृष्ठे अधि रोचने दिवः

५०

॥१९४॥ (वा० य० १७।५६)

दैव्याय धर्त्रे जोष्टे देवश्रीः श्रीमनाः शतर्पयाः ।

परिगृह्य देवा यज्ञमायन् देवा देवेभ्यो अध्वर्यन्तो अस्थुः

५६

॥१९५॥ (वा० य० १८।६०)

एतं जानाथ परमे व्योमन् देवाः सधस्था विद रूपमस्य ।

यदागच्छात् पथिभिर्देवानैरिष्टापुत्तैः कृणवाथाविरस्मै

६० १२५१

॥१९६॥ (वा० य० १९।१२)

देवा यज्ञम॑तन्वत भेष॒जं भिष॒जा॒श्विना । वा॒चा सर॑स्वती भिष॒गिन्द्रा॑येन्द्रि॒याणि दध॑तः १२

॥१९७॥ (वा० य० २०।१४)

यद् दे॒वा दे॒वहे॒डनं॑ दे॒वांस॒श्चक्र॑मा व॒यम् ।

अ॒ग्निर्मा॑ तस्मा॒देन॑सो विश्वा॒न्मुञ्च॑त्व॒हंसः॑

१४

॥१९८॥ (वा० य० २१।५३)

दे॒वा दे॒वानां॑ भिष॒जा हो॒ता॒रा॒विन्द्र॑म॒श्विना ।

व॒षट्क॑रैः सर॑स्वती त्वि॒षिं न हृ॑दये म॒तिः॑ होत॑रभ्यां दधुरिन्द्रि॒यं वसु॑वने

वसु॒धेय॑स्य व्यन्तु यज्ञं

५३

॥१९९॥ (वा० य० २६।१९)

अनु॑ वी॒रैरनु॑ पु॒ण्यास्म गो॒भिरन्व॑श्चै॒रनु॑ सर्वेण पु॒ष्टैः ।

अनु॑ द्वि॒पदानु॑ चतु॒ष्पदा॑ व॒यं दे॒वा नो॑ यज्ञ॒मृतु॑था न॒यन्तु॑

१९ १२५५

॥२००॥ (वा० य० २८।११)

दे॒वा आज्य॑पा जु॒षाणा॑ इन्द्र॒ आज्य॑स्य व्यन्तु

११

॥२०१॥ (वा० य० २९।२०)

दे॒वा इद॑स्य ह॒विरघ॑मायन् यो अ॒र्वन्तं॑ प्रथ॒मो अ॒ध्यति॑ष्ठत्

२०

॥२०२॥ (वा० य० ३१।१४-१५, २१)

यत् पुरु॑षेण ह॒विषा॑ दे॒वा य॒ज्ञम॑तन्वत । वसु॒न्तोऽस्या॑सी॒दाज्यं॑ ग्री॒ष्म इ॒ष्मः शर॑द्ध॒विः१४

स॒प्तास्या॑सन् परि॒धया॑स्त्रिः स॒प्त स॒मिधः॑ कृ॒ताः ।

दे॒वा यद्य॑ज्ञं त॒न्वा॒ना अब॑धन् पुरु॑षं प॒शुम्

१५

रुचं॑ ब्रा॒ह्मं ज॒नय॑न्तो दे॒वा अग्रे॑ तद॒ब्रुवन् ।

यस्त्वै॒वं ब्रा॑ह्म॒णो वि॒द्यात् तस्य॑ दे॒वा अस॑न् व॒शे

२१ १२६०

॥२०३॥ (वा० य० ३३।७, ४८, ८९)

ग्री॒णि श॒ता त्री॑ स॒हस्रा॑ण्यग्निं त्रि॒ंशच्च॑ दे॒वा नव॑ चास॒पर्यन् ।

औ॒क्षन् घृ॒तैरस्तृ॑णन् ब॒र्हिर्ऋ॒मा आदि॑द्धो॒तारं॑ न्यसादयन्त

७

अ॒ग्न इन्द्र॑ वरु॒ण मि॒त्र दे॒वाः श॒र्धः प्र॑ यन्त॒ मारु॑तो॒त वि॑ष्णो ।

उ॒भा नास॑त्या रु॒द्रो अ॒ध गाः पू॒षा भ॒गः सर॑स्वती जुषन्त

४८

प्रै॒तु ब्र॑ह्म॒णस्प॑तिः प्र दे॒व्येतु॑ स॒नृता ।

अच्छा॑ वी॒रं न॑र्यं प॒ङ्क्तिरा॑धसं दे॒वा य॒ज्ञं न॑यन्तु नः

८९ १२६३

लिङ्गोक्ताः ।

॥२०४॥ (ऋ० १।१३६।६-७)

(१२६४-६५) परुच्छेपो दैवोदासिः । ६ अत्यष्टिः, ७ त्रिष्टुप् ।

इन्द्रमग्निमुप स्तुहि द्युक्षमर्यमणं भगम् ।

ज्योग्जीवन्तः प्रजया सचेमहि सोमस्योती सचेमहि

६ १२६४

ऊती देवानां वयमिन्द्रवन्तो मंसीमहि स्वयंशसो मरुद्भिः ।

अग्निमित्रो वरुणः शर्म यंसन् तदश्याम मघवानो वयं च

७

॥२०५॥ (ऋ० १।३२।८)

(१२६६) गृन्समदः (आङ्गिरसः शौनहोत्रः पश्चाद्) भार्गवः शौनकः । अनुष्टुप् ।

या गुङ्गूर्या सिनीवाली या राका या सरस्वती ।

इन्द्राणीमह्व ऊतये वरुणानीं स्वस्तये

८

॥२०६॥ (ऋ० १०।१४।७-९)

(१२६७-६९) वैवस्वतो यमः । (पितरो वा) । त्रिष्टुप् ।

प्रेहि प्रेहि पथिभिः पूर्येभि र्यत्रा नः पूर्वे पितरः परेषुः ।

उभा राजाना स्वधया मदन्ता यमं पश्यासि वरुणं च देवम्

७

सं गच्छस्व पितृभिः सं यमेनेष्टापूर्तेन परमे व्योमन् ।

हित्वायावद्यं पुनरस्तमेहि सं गच्छस्व तन्वा सुवर्चाः

८

अपेत वीत वि च सर्पतातो ऽस्मा एतं पितरो लोकमक्रन् ।

अहोभिराङ्गिरक्तुभिर्व्यक्तं यमो ददात्यवसानमस्मै

९

॥२०७॥ [१२७०-१३९३] (वा० य० १।१२, १४)

पवित्रे स्थो वैष्णव्यौ सवितुर्वः प्रसव उत्पुनाम्यच्छिद्रेण पवित्रेण सूर्यस्य रश्मिभिः ।

देवीरापो अग्नेगुवो अग्नेपुवोऽग्रं इममद्य यज्ञं नयताग्रे यज्ञपति सुधातुं यज्ञपतिं

देवयुवम्

१२ १२७०

शर्मास्यवधूत रक्षोऽवधूता अरातयोऽदित्यास्त्वगांसि प्रति त्वादितिर्वेत्तु ।

अद्विरसि वानस्पत्यो ग्रावांसि पृथुबुध्नः प्रति त्वादित्यास्त्वग्वेत्तु

१४

॥२०८॥ (वा० य० २।१, ५, १५, २०, २२, ३२)

कृष्णोऽस्याखरेष्ठोऽग्रये त्वा जुष्टं प्रोक्षामि वेदिरसि बर्हिषे त्वा जुष्टं प्रोक्षामि

बर्हिरसि सुग्भ्यस्त्वा जुष्टं प्रोक्षामि

१ १२७२

समिदसि सूर्यस्त्वा पुरस्तात् पातु कस्याश्चिदुभिशस्त्यै ।

सवितुर्बाहू स्थ ऊर्णप्रदसं त्वा स्तृणामि स्वासस्थं देवेभ्य आ त्वा वसवो रुद्रा
आदित्याः सदन्तु

५

अग्नीषोमयोरुज्जितिमनूजेषं वाजस्य मा प्रसवेन प्रोहामि ।

अग्नीषोमौ तमपनुदतां योऽस्मान् द्वेष्टि यं च वयं द्विष्मो वाजस्यैनं प्रसवेना-
प्रोहामि ।

इन्द्राभ्योरुज्जितिमनूजेषं वाजस्य मा प्रसवेन प्रोहामि । इन्द्राग्नी तमपनुदतां० १५

अग्नेऽदब्धायोऽशीतम पाहि मा दिव्योः पाहि प्रसित्यै पाहि दुरिष्ट्यै पाहि

दुरन्न्या अविषं नः पितुं कृणु ।

सुषदा योनौ स्वाहा वाङ्मये संवेशपतये स्वाहा सरस्वत्यै यशोभगिन्यै स्वाहा २० १२७५
सं बर्हिर्इक्तां हविषा घृतेन समादित्यैर्वसुभिः सं मरुद्भिः ।

समिन्द्रो विश्वदेवेभिरङ्क्तां दिव्यं नभो गच्छतु यत् स्वाहा

२२

नमो वः पितरो रसाय नमो वः पितरः शोषाय नमो वः पितरो जीवाय

नमो वः पितरः स्वधायै नमो वः पितरो घोराय नमो वः पितरो मन्यवे

नमो वः पितरः पितरो नमो वो गृहान्नः पितरो दत्त सतो वः पितरो

देष्मैतद्वः पितरो वास आधत्त

३२

॥२०९॥ (वा० य० ३।५, ९-१०)

भूर्भुवः स्वर्धौरिव भूमा पृथिवीव वरिष्णा ।

तस्यास्ते पृथिवि देवयजनि पृष्ठेऽग्निर्मन्त्रादमन्त्राद्यादधे

५

अग्निर्ज्योतिर्ज्योतिरग्निः स्वाहा सूर्यो ज्योतिर्ज्योतिः सूर्यः स्वाहा ।

अग्निर्वर्चो ज्योतिर्वर्चः स्वाहा सूर्यो वर्चो ज्योतिर्वर्चः स्वाहा ।

ज्योतिः सूर्यः सूर्यो ज्योतिः स्वाहा

९

सज्जूदेवेन सवित्रा सजू रात्र्येन्द्रवत्या । जुषाणो अग्निर्वेतु स्वाहा ॥

सज्जूदेवेन सवित्रा सजूरुषसेन्द्रवत्या । जुषाणः सूर्यो वेतु स्वाहा

१०

॥२१०॥ (वा० य० ४।७, २६)

आकृत्यै प्रयुजेऽग्नये स्वाहा मेधायै मनसेऽग्नये स्वाहा दीक्षायै तपसेऽग्नये स्वाहा

सरस्वत्यै पूष्णेऽग्नये स्वाहा ।

आपो देवीर्बृहतीर्विश्वशम्भ्वो द्यावापृथिवी उरो अन्तरिक्ष ।

बृहस्पतये हविषा विधेम स्वाहा

७ १२८१

शुक्रं त्वां शुक्रेण क्रीणामि चन्द्रं चन्द्रेणामृतममृतेन ।
सग्मे ते गोरस्मे ते चन्द्राणि तपसस्तनूरांसि प्रजापतेर्वर्णः परमेण पशुना क्रीयसे
सहस्रपोषं पुषेयम्

२६ १२८२

॥२११॥ (वा० य० ५।२, ७, ९)

अग्नेर्जनित्रमसि वृषणौ स्थ उर्वश्यस्यायुरसि पुरुरवा असि ।
गायत्रेण त्वा छन्दसा मन्थामि त्रैष्टुभेन त्वा छन्दसा मन्थामि जागतेन त्वा
छन्दसा मन्थामि

२

अश्शुरश्शुष्टे देव सोमाप्यायतामिन्द्रायैकधनविदे ।
आ तुभ्यमिन्द्रः प्यायतामा त्वमिन्द्राय प्यायस्व ।
आप्याययासान्तसखीन्तसुन्या मेधया स्वास्ति ते देव सोम सुत्यामशीय ।

एष्टा रायः प्रेषे भगाय ऋतमृतवादिभ्यो नमो द्यावापृथिवीभ्याम्
तप्तायनी मेऽसि विचार्यनी मेऽस्यवतान्मा नाथितादवतान्मा व्यथितात् ।

७

विदेदुग्निर्नभो नामाग्ने अङ्गिर आयुना नाम्नेहि योऽस्यां पृथिव्यामसि
यत् तेऽनाधृष्टं नाम यज्ञियं तेन त्वा दधे विदेदुग्निर्नभो नामाग्ने अङ्गिर आयुना
नाम्नेहि यो द्वितीयस्यां पृथिव्यामसि यत् तेऽनाधृष्टं नाम यज्ञियं तेन त्वा
दधे विदेदुग्निर्नभो नामाग्ने अङ्गिर आयुना नाम्नेहि यस्तृतीयस्यां
पृथिव्यामसि यत् तेऽनाधृष्टं नाम यज्ञियं तेन त्वा दधे ।

अनु त्वा देववीतये

९ १२८५

॥२१२॥ (वा० य० ६।७, ९, १५-१६, १८, २०-२१, २३, २६)

उपावीरस्युषं देवान् दैवीर्विशः प्रागुरुशिजो वह्नितमान् ।

देवं त्वष्टृर्वसुं रम हव्या ते स्वदन्ताम्

७

देवस्य त्वा सवितुः प्रसवेऽश्विनोर्बाहुभ्यां पूष्णो हस्ताभ्याम् ।

अग्नीषोमाभ्यां जुष्टं नियुनाज्मि ।

अद्भ्यस्त्वौषधीभ्योऽनु त्वा माता मन्यतामनु पितानु भ्राता सगर्भ्योऽनु सखा सयूध्यः ।

अग्नीषोमाभ्यां त्वा जुष्टं प्रोक्षामि

९

मनस्त आप्यायतां वाक्त आप्यायतां प्राणस्त आप्यायतां चक्षुस्त आप्यायतां

श्रोत्रं त आप्यायताम् ।

यत् ते क्रूरं यदास्थितं तत् त आप्यायतां निष्टायतां तत् ते शुध्यतु शमहोभ्यः ।

ओषधे त्रायस्व स्वधिते मेनश् हिंसीः

१५ १२८८

रक्षसां भागोऽसि निरस्तं रक्ष इदमहं रक्षोऽभितिष्ठामीदमहं रक्षोऽवबाध
इदमहं रक्षोऽधमं तमो नयामि ।

घृतेन द्यावापृथिवी प्रोर्णुवाथां वायो वे स्तोकानामग्निराज्यस्य वेतु स्वाहा
स्वाहाकृते ऊर्ध्वनभसं मारुतं गच्छतम्

१६

सं ते मनो मनसा सं प्राणः प्राणेन गच्छताम् ।

रेडस्यग्निष्ठा श्रीणात्वापस्त्वा समरिणन् वातस्य त्वा भ्राज्यै पूष्णो रक्षा
ऊष्मणो व्यथिषत् प्रयुतं द्वेषः

१८ १२९०

ऐन्द्रः प्राणो अङ्गे अङ्गे निदीध्यदैन्द्र उदुनो अङ्गे अङ्गे निधीतः ।

देव त्वष्टर्भूरि ते सथं समेतु सलक्ष्मा यद्विषुरुपं भवति ।

देवत्रा यन्तमवसे सखायोऽनु त्वा माता पितरो मदन्तु

२०

समुद्रं गच्छ स्वाहाऽन्तरिक्षं गच्छ स्वाहा देवथं संवितारं गच्छ स्वाहा

मित्रावरुणौ गच्छ स्वाहाऽहोरात्रे गच्छ स्वाहा छन्दाथंसि गच्छ स्वाहा

द्यावापृथिवी गच्छ स्वाहा यज्ञं गच्छ स्वाहा सोमं गच्छ स्वाहा दिव्यं

नभो गच्छ स्वाहाऽग्निं वैश्वानरं गच्छ स्वाहा मनो मे हार्दिं यच्छ दिवं

ते धूमो गच्छतु स्वर्ज्योतिः पृथिवीं भस्मनापृण स्वाहा

२१

हविष्मतीरिमा आपो हविष्माँर आर्विवासति ।

हविष्मान् देवो अध्वरो हविष्माँर अस्तु सूर्यः

२३

सोमं राजन् विश्वास्त्वं प्रजा उपावरोह विश्वास्त्वां प्रजा उपावरोहन्तु ।

शृणोत्वग्निः समिधा हव मे शृण्वन्त्वापो धिषणाश्च देवीः ।

श्रोता ग्रावाणो विदुषो न यज्ञं शृणोतु देवः संविता हव मे स्वाहा

२६

॥२१३॥ (वा० य० ७।२-३, १५, १८, २०, २२, २३, २७-२८, ४५-४७)+

मधुमतीर्न इषस्कृधि यत् ते सोमादाभ्यं नाम जागृवि तस्मै ते सोम

सोमाय स्वाहा स्वाहोर्वृन्तरिक्षमन्वमि

२

स्वाङ्कृतोऽसि विश्वेभ्य इन्द्रियेभ्यो दिव्येभ्यः पार्थिवेभ्यो मनस्त्वाष्टु स्वाहा

त्वा सुभव सूर्याय देवेभ्यस्त्वा मरीचिपेभ्यो देवाथंशो यस्मै त्वेडे तत्

सत्यमुपरिप्रता भङ्गेन हतोऽसौ फट् प्राणाय त्वा व्यानाय त्वा

३ १२९६

स प्रथमो बृहस्पतिश्चिकित्वाँस्तस्मा इन्द्राय सुतमाजुहोत स्वाहा ।

तृम्पन्तु होत्रा मध्वो याः स्विष्टा याः सुप्रीताः सुहुता यत् स्वाहायाडुग्रीत् १५ १२९७

सुप्रजाः प्रजाः प्रजनयन् परीह्यभि रायस्पोषेण यजमानम् ।

सञ्जग्मानो दिवा पृथिव्या मन्थी मन्थिशोचिषा निरस्तो मर्को मन्थिनोऽधिष्ठानमसि १८

उपयामगृहीतोऽस्याग्रयणोऽसि स्वाग्रयणः ।

पाहि यज्ञं पाहि यज्ञपतिं विष्णुस्त्वामिन्द्रियेण पातु विष्णुं त्वं पाह्यभि सर्वनानि पाहि २०

उपयामगृहीतोऽसीन्द्राय त्वा बृहद्वते वयस्वत उक्थाव्यं गृह्णामि ।

यत् त इन्द्र बृहद्वयस्तस्मै त्वा विष्णवे त्वैष ते योनिरुक्थेभ्यस्त्वा देवेभ्यस्त्वा

देवाव्यं यज्ञस्याऽऽयुषे गृह्णामि

२२ १३००

मित्रावरुणाभ्यां त्वा देवाव्यं यज्ञस्याऽऽयुषे गृह्णामीन्द्राय त्वा देवाव्यं यज्ञस्याऽऽयुषे

गृह्णामीन्द्राग्निभ्यां त्वा देवाव्यं यज्ञस्याऽऽयुषे गृह्णामीन्द्रावरुणाभ्यां त्वा देवाव्यं

यज्ञस्याऽऽयुषे गृह्णामीन्द्राबृहस्पतिभ्यां त्वा देवाव्यं यज्ञस्याऽऽयुषे गृह्णामीन्द्रा-

विष्णुभ्यां त्वा देवाव्यं यज्ञस्याऽऽयुषे गृह्णामि

२३

प्राणाय मे वर्चोदा वर्चसे पवस्व व्यानार्य मे वर्चोदा वर्चसे पवस्वोदानार्य मे

वर्चोदा वर्चसे पवस्व वाचे मे वर्चोदा वर्चसे पवस्व क्रतुदक्षाभ्यां मे वर्चोदा

वर्चसे पवस्व श्रोत्राय मे वर्चोदा वर्चसे पवस्व चक्षुभ्यां मे वर्चोदसौ

वर्चसे पवेथाम्

२७

आत्मने मे वर्चोदा वर्चसे पवस्वौजसे मे वर्चोदा वर्चसे पवस्वाऽऽयुषे मे वर्चोदा

वर्चसे पवस्व विश्वाभ्यो मे प्रजाभ्यो वर्चोदसौ वर्चसे पवेथाम्

२८

रूपेण वो रूपमभ्यागां तुथो वो विश्ववेदा विभजतु ।

ऋतस्य पथा प्रेत चन्द्रदक्षिणा वि स्वः पश्य व्युन्तरिक्षं यतस्व सदस्यैः

४५

ब्राह्मणमद्य विदेयं पितृमन्तं पैतृमत्यमृषिमार्षेयं सुधातुदक्षिणम् ।

अस्राता देवत्रा गच्छत प्रदातारमाविशत

४६

अग्रये त्वा मह्यं वरुणो ददातु सोऽमृतत्वमशीयाऽऽयुर्दात्र एधि मयो मह्यं प्रतिग्र-

हीत्रे रुद्राय त्वा मह्यं वरुणो ददातु सोऽमृतत्वमशीय प्राणो दात्र एधि

वयो मह्यं प्रतिग्रहीत्रे बृहस्पतये त्वा मह्यं वरुणो ददातु सोऽमृतत्वमशीय

त्वग्दात्र एधि मयो मह्यं प्रतिग्रहीत्रे यमाय त्वा मह्यं वरुणो ददातु

सोऽमृतत्वमशीय हयो दात्र एधि वयो मह्यं प्रतिग्रहीत्रे

४७ १३०६

॥२१४॥ (वा० य० ८१९, ५४-५९)

उपयामगृहीतोऽसि बृहस्पतिसुतस्य देव सोम त इन्द्रोरिन्द्रियावतः पत्नीवतो
ग्रहो२ ऋध्यासम् ।

अहं परस्तादुहमवस्ताद्यदन्तरिक्षं तर्द मे पिताभूत् ।

अहं५ सूर्यमुभयतो ददर्शाहं देवानां परमं गुहा यत् ९

परमेष्ठ्यभिधीतः प्रजापतिर्वाचि व्याहृतायामन्धो अच्छेतः ।

सविता सन्यां विश्वकर्मा दीक्षायां पूषा सोमक्रयण्याम् ५४

इन्द्रश्च मरुतश्च क्रयायोपोत्थितोऽसुरः पण्यमानो मित्रः क्रीतो विष्णुः शिपिविष्ट

उरावासन्नो विष्णुर्नरन्धिषः ५५

प्रोक्षमाणः सोम आगतो वरुण आसन्ध्यामासन्नोऽग्निराग्नीध्र इन्द्रो हविर्धानेऽथ-

वोपावद्वियमाणः ५६ १३१०

विश्वे देवा अंशुषु न्युमो विष्णुराग्रीतपा आप्यायमानो यमः सूर्यमानो

विष्णुः सम्भ्रियमाणो वायुः पूयमानः शुक्रः पूतः शुक्रः क्षीरश्रीर्मन्थी

सक्तुश्रीः ५७

विश्वे देवाश्चमसेषूक्रीतोऽसुहोमायोद्यतो रुद्रो हूयमानो वातोऽभ्यावृत्तो नृचक्षाः

प्रतिख्यातो भक्षो भक्ष्यमाणः पितरो नाराशंसाः ५८

सन्नः सिन्धुरवभृथायोद्यतः समुद्रोऽभ्यवद्वियमाणः सलिलः प्रप्लुतो ययोरोजसा

स्कभिता रजांसि वीर्येभिर्वीरितमा शर्विष्ठा । या पत्यैते अप्रतीता सहोभि-

विष्णू अगन् वरुणा पूर्वहूतो +५९

॥२१५॥ (वा० य० ९१९-१२, २४, ३१-३६)

जवो यस्ते वाजिभिर्हितो गुहा यः श्येने परीत्तो अचरच्च वार्ते ।

तेन नो वाजिन् बलवान् बलेन वाजजिच्च भव समने च पारयिष्णुः ।

वाजिनो वाजजितो वाजंश्च सरिष्यन्तो बृहस्पतेर्भागमवजिघ्रत १९

देवस्याहं सवितुः सवे सत्यसंवसो बृहस्पतेरुत्तमं नाकं रुहेयम् ।

देवस्याहं सवितुः सवे सत्यसंवस इन्द्रस्योत्तमं नाकं रुहेयम् ।

देवस्याहं सवितुः सवे सत्यप्रसंवसो बृहस्पतेरुत्तमं नाकमरुहम् ।

देवस्याहं सवितुः सवे सत्यप्रसंवस इन्द्रस्योत्तमं नाकमरुहम् १० १३१५

बृहस्पते वाजं जय बृहस्पतये वाचं वदत बृहस्पतिं वाजं जापयत ।

इन्द्र वाजं जयेन्द्राय वाचं वदतेन्द्रं वाजं जापयत

११ १३१६

एषा वः सा सत्या संवार्गभूयया बृहस्पतिं वाजमजीजपताजीजपत बृहस्पतिं वाजं
वनस्पतयो विमुच्यध्वम् ।

एषा वः सा सत्या संवार्गभूययेन्द्रं वाजमजीजपताजीजपतेन्द्रं वाजं०

१२

वार्जस्येमां प्रसवः शिश्रिये दिवमिमा च विश्वा भुवनानि सम्राट् ।

अदित्सन्तं दापयति प्रजानन्त्स नो रयिं सर्ववीरं नियच्छतु स्वाहा

२४

अग्निरेकाक्षरेण प्राणमुदजयत् तमुजैषमश्विनौ द्व्यक्षरेण द्विपदौ मनुष्यानुदजयतां

तानुज्जैषं विष्णुस्त्र्यक्षरेण त्रीँल्लोकानुदजयत् तानुजैषं सोमश्चतुरक्षरेण

चतुष्पदः पशुनुदजयत् तानुज्जैषम्

३१

पुषा पञ्चाक्षरेण पञ्च दिश उदजयत् ता उज्जैषं सविता षडक्षरेण षडतनुद-

जयत् तानुजैषं मरुतः सप्ताक्षरेण सप्त ग्राम्यान् पशुनुदजयँस्तानुजैषं

बृहस्पतिरष्टाक्षरेण गायत्रीमुदजयत् तामुजैषम्

३२ १३९०

मित्रो नवाक्षरेण त्रिवृतं स्तोममुदजयत् तमुजैषं वरुणो दशाक्षरेण विराजमुद-

जयत् तामुजैषमिन्द्र एकादशाक्षरेण त्रिष्टुभमुदजयत् तामुजैषं विश्वे देवा

द्वादशाक्षरेण जगतीमुदजयँस्तामुजैषम्

३३

वसवस्त्रयोदशाक्षरेण त्रयोदशं स्तोममुदजयँस्तमुजैषं रुद्राश्चतुर्दशाक्षरेण

चतुर्दशं स्तोममुदजयँस्तमुजैषमादित्याः पञ्चदशाक्षरेण पञ्चदशं

स्तोममुदजयँस्तमुजैषमदितिः षोडशाक्षरेण षोडशं स्तोममुदजयत्

तमुजैषं प्रजापतिः सप्तदशाक्षरेण सप्तदशं स्तोममुदजयत् तमुजैषम्

३४

एष ते निर्ऋते भागस्तं जुषस्व स्वाहाऽग्निनेत्रेभ्यो देवेभ्यः पुरःसद्भ्यः स्वाहा

यमनेत्रेभ्यो देवेभ्यो दक्षिणासद्भ्यः स्वाहा विश्वदेवनेत्रेभ्यो देवेभ्यः पश्चा-

त्सद्भ्यः स्वाहा मित्रावरुणनेत्रेभ्यो वा मरुत्नेत्रेभ्यो वा देवेभ्य उत्तरासद्भ्यः

स्वाहा सोमनेत्रेभ्यो देवेभ्य उपरिसद्भ्यो दुर्वस्वद्भ्यः स्वाहा

३५

ये देवा अग्निनेत्राः पुरःसदस्तेभ्यः स्वाहा ये देवा यमनेत्रा दक्षिणासदस्तेभ्यः

स्वाहा ये देवा विश्वदेवनेत्राः पश्चात्सदस्तेभ्यः स्वाहा ये देवा मित्रा-

वरुणनेत्रा वा मरुत्नेत्रा वोत्तरासदस्तेभ्यः स्वाहा ये देवाः सोमनेत्रा

उपरिसदो दुर्वस्वन्तस्तेभ्यः स्वाहा

३६ १३९४

॥२१६॥ (वा० य० १०।१,९,२१,२३,२८,३१)

सोमस्य त्विषिरसि तवेव मे त्विषिर्भूयात् ।

अग्रये स्वाहा सोमाय स्वाहा सवित्रे स्वाहा सरस्वत्यै स्वाहा पूष्णे स्वाहा
 बृहस्पतये स्वाहेन्द्राय स्वाहा घोषाय स्वाहा श्लोकाय स्वाहाऽऽशाय स्वाहा
 भगाय स्वाहाऽर्यम्णे स्वाहा

५ १३२५

आविर्मर्या आवित्तो अग्निर्गृहपतिरावित्त इन्द्रो वृद्धश्रवा आवित्तौ मित्रावरुणौ
 धृतव्रतावावित्तः पूषा विश्ववेदा आवित्ते द्यावापृथिवी विश्वशम्भवावा-
 वित्तादितिरुरुशर्मा

९

इन्द्रस्य वज्रोऽसि मित्रावरुणयोस्त्वा प्रशास्त्रोः प्रशिषा युनाज्मि ।

अव्यथायै त्वा स्वधायै त्वाऽरिष्टो अर्जुनो मरुतां प्रसवेन जयापाम मनसा
 समिन्द्रियेण

२१

अग्रये गृहपतये स्वाहा सोमाय वनस्पतये स्वाहा मरुतामोजसे स्वाहेन्द्रस्ये-
 न्द्रियाय स्वाहा ।

पृथिवि मातर्मा मां हिंसीमो अहं त्वाप्

१३

अभिभूरस्येतास्ते पञ्च दिशः कल्पन्तां ब्रह्मस्त्वं ब्रह्माऽसि सविताऽसि सत्यप्रसवो
 वरुणोऽसि सत्यौजा इन्द्रोऽसि विशौजा रुद्रोऽसि सुशेवः ।

बहुकार श्रेयस्कर भूयस्करेन्द्रस्य वज्रोऽसि तेन मे रध्य

२८

अश्विभ्यां पच्यस्व सरस्वत्यै पच्यस्वेन्द्राय सुत्राम्णे पच्यस्व ।

वायुः पूतः पवित्रेण प्रत्यङ्क्सोमो अतिसुतः । इन्द्रस्य युज्यः सखा

३१ १३३०

॥२१७॥ (वा० य० ११।१८,६६)

वसवस्त्वा कृण्वन्तु गायत्रेण छन्दसाङ्गिरस्वद् ध्रुवासि पृथिव्यसि धारया मयि

प्रजां रायस्पोषं गौपत्यं सुवीर्यं सजातान् यजमानाय रुद्रास्त्वा

कृण्वन्तु त्रैष्टुभेन छन्दसाङ्गिरस्वद् ध्रुवास्यन्तरिक्षमसि धारया मयि प्रजां

रायस्पोषं गौपत्यं सुवीर्यं सजातान् यजमानायादित्यास्त्वा कृण्वन्तु

जागतेन छन्दसाङ्गिरस्वद् ध्रुवासि द्यौरसि धारया मयि प्रजां रायस्पोषं

गौपत्यं सुवीर्यं सजातान् यजमानाय विश्वे त्वा देवा वैश्वानराः

कृण्वन्त्वानुष्टुभेन छन्दसाङ्गिरस्वद् ध्रुवासि दिशोऽसि धारया मयि प्रजां

रायस्पोषं गौपत्यं सुवीर्यं सजातान् यजमानाय

५८ १३३१

आकूतिमग्निं प्रयुज॑त् स्वाहा मनो मेधामग्निं प्रयुज॑त् स्वाहा चित्तं विज्ञातमग्निं
प्रयुज॑त् स्वाहा वाचो विधृतिमग्निं प्रयुज॑त् स्वाहा प्रजापतये मनवे
स्वाहाऽग्नये वैश्वानराय स्वाहा

६६ १३३२

॥२१८॥ (वा० य० १२।४५, ५४, ७४)

अपेत॑ व्रीत॑ वि च॑ सर्प॑तातो॑ येऽत्र॑ स्य पु॒राणा॑ ये च॑ नू॒तनाः॑ ।

अदा॑द्यमोऽव॒सानं॑ पृथि॒व्या अ॒क्रन्मि॑मं पि॒तरो॑ लो॒कम॑स्मै

४५

लो॒कं पृ॑ण छि॒द्रं पु॒णार्थो॑ सीद॑ ध्रु॒वा त्वम् ।

इन्द्रा॑ग्नी त्वा बृह॑स्पति॒रसि॑न् योना॑वसीषदन्

५४

स॒जूर॑न्दो अ॒यवो॑भिः स॒जूर॑षा अ॒रुणी॑भिः ।

स॒जोष॑साव॒श्विना॑ द॒शसो॑भिः स॒जूः सूर॑ एत॑शेन स॒जूर्वै॒श्वान॑र इड॒या घृ॒तेन॑ स्वाहा॑ ७४ १३३५

॥२१९॥ (वा० य० १३।२, ३८)

अ॒पां पृ॑ष्ठम॒सि योनि॑र॒ग्नेः संमु॑द्रम॒भितः॑ पि॒न्व॒मानम् ।

व॒र्ध॒मानो॑ म॒हो॒र आ च॑ पु॒ष्करे॑ दि॒वो मा॒त्रया॑ वरि॒म्णा प्र॑थस्व

२

स॒म्यक् स॑वन्ति स॒रितो॑ न धेना॑ अ॒न्तर्हृ॑दा मन॑सा प॒यमा॑नाः ।

घृ॒तस्य॑ धा॒रा अ॒भिचा॑कशीमि हि॒र॒ण्ययो॑ वे॒तसो॑ म॒ध्ये अ॒ग्नेः

३८

॥२२०॥ (वा० य० १४।९-१०, १७-१९, २३-२६)

मूर्धा॑ व॒यः प्र॒जाप॑तिश्छन्दः॑ क्ष॒त्रं व॒यो म॒र्यश्छ॑न्दं छन्दो॑ विष्ट॒म्भो व॒योऽधि॑-

प॒तिश्छ॑न्दो विश्व॑कर्मा॒ वयः॑ प॒रमे॑ष्ठी छन्दो॑ ब॒स्तो व॒यो वि॒वलं॑ छन्दो॑

वृ॒ष्णिर्व॒यो विशा॑लं छन्दः॑ पु॒रुषो॑ व॒यस्त॑न्द्रं छन्दो॑ व्या॒घ्रो व॒योऽना॑धृष्टं

छन्दः॑ सि॒न्धो व॒यश्छ॑दिश्छन्दः॑ प॒ष्ठवा॑ड् व॒यो बृ॒हती॑ छन्द॑ उ॒क्षा व॒यः

क॒कुप् छ॑न्द॑ ऋष॒भो व॒यः स॒तोबृ॑हती छन्दः॑

९

अ॒न॒ड्वान् व॒यः प॒ङ्क्तिश्छ॑न्दो॑ धे॒नुर्व॒यो ज॑गती छन्द॑स्त॒यवि॒र्वय॑स्त्रिष्टुप् छन्दो॑

दि॒त्यवा॑ड् व॒यो वि॒राट् छ॑न्दः॑ प॒ञ्चावि॒र्वयो॑ गाय॒त्री छ॑न्दस्त्रि॒वत्सो॑ व॒य उ॒ष्णिक्

छ॑न्दस्तु॒र्धवा॑ड् व॒योऽनु॑ष्टुप् छन्दो॑ लो॒कं ता इ॒न्द्रम्

१०

आयु॑र्मे पाहि प्रा॒णं मे॑ पा॒ह्यपा॑नं मे॑ पाहि ध्या॒नं मे॑ पाहि चक्षु॑र्मे पाहि श्रो॒त्रं मे॑

पाहि वाचं॑ मे पि॒न्व॒ मनो॑ मे जि॒न्वाऽऽत्मानं॑ मे पाहि ज्योति॑र्मे यच्छ

१७

मा छ॑न्दः॑ प्र॒मा छ॑न्दः॑ प्र॒तिमा॑ छन्दो॑ अ॒स्त्रीव॒यश्छ॑न्दः॑ प॒ङ्क्तिश्छ॑न्द॑ उ॒ष्णिक्

छ॑न्दो॑ बृ॒हती॑ छन्दो॑ऽनु॑ष्टुप् छन्दो॑ वि॒राट् छ॑न्दो॑ गाय॒त्री छ॑न्दस्त्रिष्टुप्

छ॑न्दो॑ ज॑गती छन्दः॑

१८ १३४१

पृथिवी छन्दोऽन्तरिक्षं छन्दो द्यौश्छन्दः समाश्छन्दो नक्षत्राणि छन्दो वाक्
 छन्दो मनश्छन्दः कृषिश्छन्दो हिरण्यं छन्दो गौश्छन्दोऽजाश्छन्दोऽश्वश्छन्दः १९
 आशुस्त्रिवृद्भान्तः पञ्चदशो व्योमा सप्तदशो धरुण एकविंशः प्रतूर्तिरष्टादश-
 स्तपो नवदशोऽभीवर्त्तः सविंशो वचो द्वाविंशः सम्भरणस्त्रयोविंशो
 योनिश्चतुर्विंशो गर्भाः पञ्चविंश ओजस्त्रिणवः क्रतुरेकत्रिंशः प्रतिष्ठा
 त्रयस्त्रिंशो ब्रह्मस्य विष्टपं चतुस्त्रिंशो नाकः षट्त्रिंशो धिंवर्त्तोऽष्टाच-
 त्वारिंशो धर्त्रं चतुष्टोमः २३

अग्नेर्भागोऽसि दीक्षाया आधिपत्यं ब्रह्म स्पृतं त्रिवृत्स्तोम इन्द्रस्य भागोऽसि
 विष्णोराधिपत्यं क्षत्रं स्पृतं पञ्चदश स्तोमो नृचक्षसां भागोऽसि धातुराधि-
 पत्यं जनित्रं स्पृतं सप्तदश स्तोमो मित्रस्य भागोऽसि वरुणस्याधिपत्यं
 दिवो वृष्टिर्वर्तं स्पृत एकविंश स्तोमः २४

वसूनां भागोऽसि रुद्राणामाधिपत्यं चतुष्पात् स्पृतं चतुर्विंश स्तोम आदित्यानां
 भागोऽसि मरुतामाधिपत्यं गर्भा स्पृताः पञ्चविंश स्तोमोऽदित्यै भागोऽसि
 पूष्ण आधिपत्यमोजं स्पृतं त्रिणव स्तोमो देवस्य सवितुर्भागोऽसि
 बृहस्पतेराधिपत्यं समीचीर्दिशं स्पृताश्चतुष्टोम स्तोमः २५ १३४५

यवानां भागोऽस्ययवानामाधिपत्यं प्रजा स्पृताश्चतुश्चत्वारिंश स्तोमं क्रभूणां
 भागोऽसि विश्वेषां देवानामाधिपत्यं भूतं स्पृतं त्रयस्त्रिंश स्तोमः २६

॥२२१॥ (वा० य० १५३-१९)

षोडशी स्तोम ओजो द्रविणं चतुश्चत्वारिंश स्तोमो वचो द्रविणम् ।

अग्नेः पुरीषमस्यप्सो नाम तां त्वा विश्वे अभिगृणन्तु देवाः ।

स्तोमपृष्ठा घृतवतीह सीद प्रजावदस्मे द्रविणायजस्व ३

एवश्छन्दो वरिवश्छन्दः शम्भूश्छन्दः परिभूश्छन्द आच्छच्छन्दो मनश्छन्दो
 व्यश्छन्दः सिन्धुश्छन्दः समुद्रश्छन्दः सरिरं छन्दः ककुच्छन्दस्त्रिकुच्छन्दः
 काव्यं छन्दो अङ्कुपं छन्दोऽक्षरपङ्क्तिश्छन्दः पदपङ्क्तिश्छन्दो विष्टारप-
 ङ्क्तिश्छन्दः क्षुरोभ्रजश्छन्दः ४

आच्छच्छन्दः प्रच्छच्छन्दः संयच्छन्दो वियच्छन्दो बृहच्छन्दो रथन्तरश्छन्दो
 निकायश्छन्दो विवधश्छन्दो गिरश्छन्दो भ्रजश्छन्दः सस्त्वच्छन्दोऽनुष्टु-
 प्छन्द एवश्छन्दो वरिवश्छन्दो वयश्छन्दो वयस्कृच्छन्दो विष्पर्धाश्छन्दो
 विशालं छन्दश्छदिश्छन्दो दूरोहणं छन्दस्तन्द्रं छन्दो अङ्काङ्गं छन्दः ५ १३४९

रश्मिना सत्याय सत्यं जिन्व प्रेतिना धर्मेणा धर्मं जिन्वान्वित्या दिवा दिवं
जिन्व सन्धिनान्तरिक्षेणान्तरिक्षं जिन्व प्रतिधिना पृथिव्या पृथिवीं जिन्व
विष्टम्भेन वृष्ट्या वृष्टिं जिन्व प्रवयाह्वाहर्जिन्वानुया रात्र्या रात्रीं जिन्वोशिजा
वसुभ्यो वस्राजिन्व प्रकेतेनादित्येभ्य आदित्याजिन्व

६ १३५०

तन्तुना रायस्पोषेण रायस्पोषं जिन्व सश्रुपेण श्रुताय श्रुतं जिन्वैडेनौषधी-
भिरोषधीर्जिन्वोत्तमेन तनूभिस्तनूजिन्व वयोधसाधीतेनाधीतं जिन्वाभिजिता
तेजसा तेजो जिन्व

७

प्रतिपदसि प्रतिपदे त्वानुपदस्यनुपदे त्वा सम्पदसि सम्पदे त्वा तेजोऽसि
तेजसे त्वा

८

त्रिवृदसि त्रिवृते त्वा प्रवृदसि प्रवृते त्वा विवृदसि विवृते त्वा सवृदसि सवृते
त्वाक्रमोऽस्याक्रमाय त्वा संक्रमोऽसि संक्रमाय त्वोत्क्रमोऽस्युत्क्रमाय
त्वोत्क्रान्तिरस्युत्क्रान्त्यै त्वाधिपतिनोर्जोर्जि जिन्व

९

राश्यसि प्राची दिग् वसवस्ते देवा अधिपतयोऽग्निर्हेतीनां प्रतिधर्ता त्रिवृत्
त्वा स्तोमः पृथिव्याः श्रयत्वाज्यमुक्थमव्यथायै स्तभ्नातु रथन्तरः
साम् प्रतिष्ठित्या अन्तरिक्षं ऋषयस्त्वा प्रथमजा देवेषु दिवो मात्रया
वरिष्णा प्रथन्तु विधर्ता चायमधिपतिश्च ते त्वा सर्वे संविद्वाना नाकस्य
पृष्ठे स्वर्गे लोके यजमानं च सादयन्तु

१०

विराडसि दक्षिणा दिग् रुद्रास्ते देवा अधिपतय इन्द्रो हेतीनां प्रतिधर्ता
पञ्चदशस्त्वा स्तोमः पृथिव्याः श्रयतु प्र उगमुक्थमव्यथायै स्तभ्नातु
बृहत्साम् प्रतिष्ठित्या०

११ १३५५

सम्राडसि प्रतीची दिगादित्यास्ते देवा अधिपतयो वरुणो हेतीनां प्रतिधर्ता
सप्तदशस्त्वा स्तोमः पृथिव्याः श्रयतु मरुत्वतीयमुक्थमव्यथायै स्तभ्नातु
वैरूपः साम् प्रतिष्ठित्या०

१२

स्वराडस्युदीची दिङ्मरुतस्ते देवा अधिपतयः सोमो हेतीनां प्रतिधर्तैकवि-
ंशस्त्वा स्तोमः पृथिव्याः श्रयतु निष्केवल्यमुक्थमव्यथायै स्तभ्नातु
वैराजः साम् प्रतिष्ठित्या०

१३ १३५७

अधिपत्यसि बृहती दिग् विश्वे ते देवा अधिपतयो बृहस्पतिर्हतीनां प्रतिधर्ता
त्रिणवत्रयास्त्रिंशौ त्वा स्तोमौ पृथिव्याः श्रयतां वैश्वदेवाग्निमारुते उक्थे
अव्यथायै स्तम्नीताः शाकवरैर्वृते सामनी प्रतिष्ठित्या० १४

अयं पुरो हरिकेशः सूर्यैरग्निस्तस्य रथगृत्सश्च रथौजाश्च सेनानीग्रामण्यौ ।
पुञ्जिकस्थला च क्रतुस्थला चाप्सरसौ दुङ्क्षणवः पशवो हेतिः पौरुषेयो वधः
प्रहेतिस्तेभ्यो नमो अस्तु ते नोऽवन्तु ते नो मृडयन्तु ते यं दिष्मो यश्च
नो द्वेष्टि तमेषां जम्भे दध्मः १५

अयं दक्षिणा विश्वकर्मा तस्य रथस्वनश्च रथेचित्रश्च सेनानीग्रामण्यौ ।
मेनुका च सहजुन्या चाप्सरसौ यातुधाना हेती रक्षाः सिसि प्रहेतिस्तेभ्यो० १६ १३६०

अयं पश्चाद्विश्वव्यास्तस्य रथप्रोतश्चासमरथश्च सेनानीग्रामण्यौ ।
प्रम्लोचन्ती चानुम्लोचन्ती चाप्सरसौ व्याघ्रा हेतिः सर्पाः प्रहेतिस्तेभ्यो० १७

अयमुत्तरात् संयद्वसुस्तस्य तार्क्ष्यश्चारिष्टनेमिश्च सेनानीग्रामण्यौ ।
विश्वाची च घृताची चाप्सरसावापो हेतिर्वातः प्रहेतिस्तेभ्यो नमो अस्तु० १८

अयमुपर्यर्वाग्वसुस्तस्य सेनजिच्च सुषेणश्च सेनानीग्रामण्यौ ।
उर्वशी च पूर्वचित्तिश्चाप्सरसावस्फूर्जन् हेतिर्विद्युत् प्रहेतिस्तेभ्यो नमो अस्तु० १९

॥२२२॥ (वा० य० १७।४८, ५९)+

यत्र बाणाः सम्पतन्ति कुमारा विशिखा इव ।

तन्न इन्द्रो बृहस्पतिरदितिः शर्म यच्छतु विश्वाहा शर्म यच्छतु ४८
यस्य कुर्मो गृहे हविस्तममे वर्धया त्वम् । तस्मै देवा अधिभुवन्नयं च ब्रह्मणस्पतिः ५२ १३६५

॥२२३॥ (वा० य० १८।३७)

देवस्य त्वा सवितुः प्रसवेऽश्विनोर्बाहुभ्यां पूष्णो हस्ताभ्याम् ।
सरस्वत्यै वाचो यन्तुर्यन्त्रेणाग्नेः साम्राज्येनाभिर्विश्वामि ३७

॥२२४॥ (वा० य० २०।३, १३, १७-१८)

देवस्य त्वा सवितुः प्रसवेऽश्विनोर्बाहुभ्यां पूष्णो हस्ताभ्याम् ।
अश्विनोर्भैषज्येन तेजसे ब्रह्मवर्चसायामि विश्वामि सरस्वत्यै भैषज्येन वीर्याया-
माद्यायामि विश्वामिन्द्रस्येन्द्रियेण बलाय श्रियै यशसेऽभि विश्वामि ३ १३६७

लोमानि प्रयतिर्मम त्वङ् म आनतिरागतिः ।

मा५सं म उपनतिर्वस्वस्थि मज्जा म आनतिः

१३

यद् ग्रामे यदरण्ये यत् सभायां यदिन्द्रिये ।

यच्छुद्रे यदर्ये यदेनश्चकृमा वयं यदेकस्याधि धर्मेणि तस्यावयजनमसि

१७

यदापो अघ्न्या इति वरुणेति शपामहे ततो वरुण नो मुञ्च ।

अवभृथ निचुम्पुण निचेरुरसि निचुम्पुणः ।

अव देवैर्देवकृतमेनोऽयक्षयव मर्त्यैर्मर्त्यकृतं पुराव्णो देव रिषस्पाहि

१८ १३७०

॥२२५॥ (वा० य० २१।४१-४३, ६०-६१)×

होता यक्षदुश्चिनौ छागस्य वपाया मेदसो जुषताः हविर्होतयज ।

होता यक्षत् सरस्वतीं मेघस्य वपाया मेदसो जुषताः हविर्होतयज ।

होता यक्षदिन्द्रमृषभस्य वपाया मेदसो जुषताः हविर्होतयज

४१

होता यक्षदुश्चिनौ सरस्वतीमिन्द्रः सुत्रामाणमिमे सोमाः सुरामाणश्छागैर्न

मेघैर्ऋषभैः सुताः शष्पैर्न तोक्मभिर्लजैर्महस्वन्तो मदा मासरेण परिष्कृताः

शुक्राः पर्यस्वन्तोऽमृताः प्रस्थिता वो मधुश्चुतस्तानश्चिना सरस्वतीन्द्रः

सुत्रामा वृत्रहा जुषन्ताः सोम्यं मधु पिबन्तु मदन्तु व्यन्तु होतयज

४२

होता यक्षदुश्चिनौ छागस्य हविष आत्तामद्य मध्यतो मेद उद्धृतं पुरा द्वेषोभ्यः

पुरा पौरुषेय्या गृभो घस्तां नूनं वासे अज्जाणां यवसप्रथमानाः सुमत्क्षराणाः

शतरुद्रियाणामग्निवात्तानां पीवोपवसनानां पार्श्वतः श्रोणितः शितामत

उत्सादतोऽङ्गादङ्गादवत्तानां करत एवाश्चिना जुषताः हविर्होतयज

४३

सुपस्था अद्य देवो वनस्पतिरभवदुश्चिभ्यां छागेन सरस्वत्यै मेघेणेन्द्राय

ऋषभेणाक्षस्तान् मेदस्तः प्रति पचतामृभीषतावीवृधन्त पुरोडाशैरपुंरश्चिना

सरस्वतीन्द्रः सुत्रामा सुरासोमान्

६०

त्वामद्य ऋष आर्षेय ऋषीणां नपादवृणीतायं यजमानो बहुभ्य आ सङ्गतेभ्य

एष मे देवेषु वसु वार्यायक्षयत इति ता या देवा देव दानान्यदुस्तान्यस्मा

आ च शास्वा च गुरस्वेषितश्च होतरसि भद्रवाच्याय प्रेषितो मानुषः

सूक्तवाकाय सूक्ता ब्रूहि

६१ १३७५

॥२२६॥ (वा० य० २३।८, १३, १८-२०, २६-२७, ६३)

वसवस्त्वाञ्जन्तु गायत्रेण छन्दसा रुद्रास्त्वाञ्जन्तु त्रैष्टुभेन छन्दसाऽऽदित्यास्त्वाञ्जन्तु
जागतेन छन्दसा ।

भूर्भुवःस्वर्लाजी३ञ्छाची३न्यव्ये गव्ये एतदन्नमत्त देवा एतदन्नमद्वि प्रजापते ८

वायुष्ट्वा पचतैरवत्वसितग्रीवश्छागैर्न्यग्रोधश्चमसैः शल्मलिर्वृद्ध्या ।

एष स्य राधयो वृषा पद्भिश्चतुर्भिरेदगन् ब्रह्मा कृष्णश्च नोऽवतु नमोऽग्नये १३

प्राणाय स्वाहाऽपानाय स्वाहा व्यानाय स्वाहा ।

अम्बे अम्बिकेऽम्बालिके न मा नयति कश्चन ।

ससस्त्यश्चक्रः सुभद्रिकां काम्पिलवासिनीम् १८

गणानां त्वा गणपतिः हवामहे प्रियाणां त्वा प्रियपतिः हवामहे निधीनां

त्वा निधिपतिः हवामहे वसो मम ।

आहमजानि गर्भधमा त्वमजासि गर्भधम् १९

ता उभौ चतुरः पदः संप्रसारयाव स्वर्गे लोके प्रोर्णुवाथां वृषा वाजी रेतोधा

रेतो दधातु

२० १३८०

ऊर्ध्वमेनामुच्छ्रापय गिरौ भारः हरन्निव । अथास्यै मध्यमेधताः शीते वार्ते पुनन्निव २६

ऊर्ध्वमेनामुच्छ्रयताद्गिरौ भारः हरन्निव । अथास्य मध्यमेजतु शीते वार्ते पुनन्निव २७

सुभूः स्वयम्भूः प्रथमोऽन्तर्महत्पुर्णवे ।

दधे ह गर्भमृत्वियं यतो जातः प्रजापतिः

६३

॥२२७॥ (वा० य० २६।१-२)

अग्निश्च पृथिवी च सन्नते ते मे सं नमतामदो वायुश्चाऽन्तरिक्षं च सन्नते ते

मे सं नमतामद आदित्यश्च द्यौश्च सन्नते ते मे सं नमतामद आपश्च वरुणश्च

सन्नते ते मे सं नमतामदः ।

सप्त सःसदो अष्टमी भूतसाधनी सकामाँ २ अध्वनस्कुरु संज्ञानमस्तु मेऽमुना १

यथेमां वाचं कल्याणीमावदानि जनेभ्यः ।

ब्रह्मराजन्याभ्याः शुद्राय चार्याय च स्वाय चारणाय च ।

प्रियो देवानां दक्षिणायै दातुरिह भूयासमयं मे कामः समृध्यतामुप मादो नमतु २ १३८५

दे० [विश्वे देवाः] १४

॥२२८॥ (वा० य० २८।२३, ४३)

अग्निमद्य होता॑रमवृणीता॒यं यज॑मानः पचन् पक्तीः पचन् पुरोडाशं व॒ध्नन्निन्द्रा॑य
छाग॑म् ।

सूप॒स्था अ॒द्य दे॒वो वन॑स्पति॑रभव॒दिन्द्रा॑य छागे॑न ।

अद्य॑त्तं मे॒दुस्तः प्र॒ति प॒चताग्र॑भी॒दवी॑वृधत् पुरोडाशे॑न । त्वाम॒द्य ऋ॒षे २३ १३८६

दे॒वो वन॑स्पति॑र्दे॒वमिन्द्रं॑ वयो॒धसं॑ दे॒वो दे॒वम॑वर्धयत् ।

द्वि॒षदा॑ छन्द॑सेन्द्रि॒यं भग॑मिन्द्रे वयो॒ दध॑द् वसु॒वने॑ वसु॒धेय॑स्य वेतु यज॑ ४३

॥२२९॥ (वा० य० २९।४७)

ब्राह्म॑णामः पि॒तरः॑ सोम्या॑सः शि॒वे नो॒ द्यावा॑पृथि॒वी अ॒नेह॑सा ।

पू॒षा नः॑ पातु दुरि॑ताह॒तावृ॒धो रक्षा॑ मा॒र्कि॒नो अ॒घश॑स्स ई॒शत ४७

॥२३०॥ (वा० य० ३१।१५)×

मे॒धां मे॒ वरु॑णो ददातु मे॒धाम॑ग्निः प्र॒जाप॑तिः ।

मे॒धामिन्द्र॑श्च वा॒युश्च॑ मे॒धां धा॒ता द॑दातु मे॒ स्वाहा॑ १५

॥२३१॥ (वा० य० ३५।३, ११)*

वा॒युः पु॑नातु सवि॒ता पु॑नात्व॒ग्नेर्भ्रा॑ज॒सा सूर्य॑स्य वर्च॒सा ।

वि मु॑च्यन्तामु॒सियाः॑

३ १३९०

अपा॒घम॑प॒ किल्बि॑षम॑प॒ कृत्या॑म॒पो रपः॑ । अपा॑मार्ग॒ त्वम॑स॒दप॑ दुः॒ष्वण्य॑ सुव ११

॥२३२॥ (वा० य० ३६।१)

ऋ॒चं वा॒चं प्र॒ पद्ये॑ मनो॒ यजुः॑ प्र॒ पद्ये॑ साम॑ प्रा॒णं प्र॒ पद्ये॑ चक्षुः॒ श्रोत्रं॑ प्र॒ पद्ये॑ ।

वा॒गो॒जः स॒हो॒जो मा॒यि प्रा॑णापा॒नौ

१

॥२३३॥ (वा० य० ३८।४, १५)

अ॒श्विभ्या॑ पि॒न्वस्व॒ सर॑स्वत्यै पि॒न्वस्वेन्द्रा॑य पि॒न्वस्व॒ ।

स्वाहेन्द्र॑वत् स्वाहेन्द्र॑वत् स्वाहेन्द्र॑वत्

४

स्वाहा॑ पू॒ष्णे शर॑से स्वाहा॒ ग्राव॑भ्यः स्वाहा॑ प्र॒तिर॑वेभ्यः ।

स्वाहा॑ पि॒तृभ्य॑ ऊ॒र्ध्वर्वा॑हिभ्यो॒ घर्म॑पाव॑भ्यः स्वाहा॒ द्यावा॑पृथि॒वीभ्या॑

स्वाहा॒ विश्व॑भ्यो दे॒वेभ्यः॑

१५ १३९४

× वा० य० ३३, ५७-५८=दे० [अदितिः०] १३६; सा० ८४७; दे० [अश्विनौ] ३ । वा० य० ३४, ४६=दे० [विश्वे देवाः] ८०८ ।

वा० य० ३५ ४=दे० [आयुर्वेद०] ३०५ ।

॥२३४॥ (सा० २९९)

(१३९५-९७) वामदेवो गौतमः । बहुः । बृहती ।

१ २ ३ १ ३ १ २ ३ २ ३ १ २ ३ १ २
त्वष्टा नो दैव्यं वचः पर्जन्यो ब्रह्मणस्पतिः ।

२ १ २ ३ १ २ ३ १ २ ३ २ ३ १ २ ३ १ २
पुत्रैर्भ्रातृभिरदितिर्नु पातु नो दुष्टरं त्रामणं वचः

२९९ १३९५

॥२३५॥ (सा० ५९१) एकपाज्जगती ।

३ १ २ २ ३ २ ३ २ ३ २
इमं वृषणं कृणुतेकमिन्माम्

५९१

॥२३६॥ (सा० ६११) महापङ्क्तिः ।

१ २ ३ १ २ ३ १ २ २ ३ २
यशो मा द्यावापृथिवी यशो मेन्द्रवृहस्पती ।

२ ३ १ २ ३ १ २ ३ १ २ ३ १ २
यशो भगस्य विन्दतु यशो मा प्रतिमुच्यताम् ।

३ २ २ ३ २ ३ १ २ ३ १ २
यशसाऽस्याः संसदाऽहं प्रवदिता स्याम्

६११

॥२३७॥ (सा० ३६८)

(१३९८) त्रित आपः । अनुष्टुप् ।

३ १ २ ३ २ ३ २ ३ १ २ ३ २ ३ २
अमी ये देवा स्थन मध्य आ रोचने दिवः ।

१ २ ३ २ ३ २ ३ २ ३ २ ३ १ २
कद्र क्रतं कदमृतं का प्रतना व आहुतिः

३६८

॥२३८॥ (सा० ४४२)

(१३९९) त्रसदस्युः । द्विपदा विराट् ।

२ ३ २ ३ १ २ ३ १ २ ३ १ २ ३ १ २ ३ १ २
सदा गावः शुचयो विश्वधायसः सदा देवा अरेपसः

४४२

॥२३९॥ (सा० ४५३)

(१४००) कवप ऐतृपः । द्विपदा विराट् ।

२ ३ २ ३ १ २ ३ २ ३ ३ १ २ ३ १ २
वि स्तुतयो यथा पथा इन्द्र त्वद्यन्तु रातयः

४५३ १४००

॥२४०॥ (सा० ४५५)

(१४०१) आज्ञेयः । द्विपदा विराट् ।

३ २ ३ १ २ २ ३ २ ३ १ २ ३ १ २ ३ १ २
ऊर्जा मित्रो वरुणः पिन्वतेडाः पीवरीमिषं कृणुही न इन्द्र

४५५

॥२४१॥ (सा० १५०३-४) X

(१४०२-३) अग्निस्तापसः । अनुष्टुप् ।

२ ३ १ २ ३ २ ३ २ ३ १ २
अग्ने विश्वेभिरग्निभिर्जोषि ब्रह्म सहस्कृत ।

१ २ ३ २ ३ २ ३ १ २ ३ १ २
ये देवत्रा य आयुषु तेभिर्नो महया गिरः

१५०३ १४०२

^१प्र स ^२विश्वे^३भिर^४ग्नि^५भिर^६ग्निः स यस्य ^१वाजिनः ।

^१तनये ^२तोके ^३अस्मदा ^४सम्यङ्वाजैः ^५परीवृतः

१५०४ १४०३

॥१४२॥ (सा० १८७२)

(१४०४) पायुर्भारद्वाजः । अनुष्टुप् ।

^२यो नः ^३स्वोऽरणो ^४यश्च ^५निष्ठयो ^६जिघांसति ।

^१देवास्तं ^२सर्वे ^३धूर्वन्तु ^४ब्रह्म ^५वर्म ^६ममान्तरं ^७शर्म ^८वर्म ^९ममान्तरम्

१८७२

नानादेवताः ।

॥१४३॥ (वा० य० ९।२०)

आपये स्वाहा स्वापये स्वाहा ऽपिजाय स्वाहा क्रतवे स्वाहा वसवे स्वाहा
ऽहर्षतये स्वाहा ऽह्वे मुग्धाय स्वाहा मुग्धाय वैनश्शिनाय स्वाहा
विनश्शिने आन्त्यायनाय स्वाहा ऽन्त्याय भौवनाय स्वाहा भुवनस्य पतये स्वाहा
ऽधिपतये स्वाहा ॥२०॥

१४०५-१६

॥१४४॥ (वा० य० १०।५)

अग्नये स्वाहा सोमाय स्वाहा सवित्रे स्वाहा सरस्वत्यै स्वाहा पूष्णे स्वाहा
बृहस्पतये स्वाहेन्द्राय स्वाहा घोषाय स्वाहा श्लोकाय स्वाहा ऽशाय स्वाहा
भगाय स्वाहा ऽर्यम्णे स्वाहा ॥५॥

१४१७-२८

॥१४५॥ (वा० य० ११।६०, ६५)

वसवस्त्वा धूपयन्तु गायत्रेण छन्दसाङ्गिरस्वद् रुद्रास्त्वा धूपयन्तु त्रैष्टुभेन छन्दसाङ्गिरस्व—
दादित्यास्त्वा धूपयन्तु जागतेन छन्दसाङ्गिरस्वद् विश्वे त्वा देवा वैश्वानरा धूपयन्त्वानुष्टुभेन
छन्दसाङ्गिरस्व—दिन्द्रस्त्वा धूपयतु वरुणस्त्वा धूपयतु विष्णुस्त्वा धूपयतु ॥६०॥

१४२९-३५

वसवस्त्वाऽऽच्छन्दतु गायत्रेण छन्दसाङ्गिरस्वद् रुद्रास्त्वाऽऽच्छन्दन्तु त्रैष्टुभेन छन्दसाङ्गिरस्व—
दादित्यास्त्वाऽऽच्छन्दन्तु जागतेन छन्दसाङ्गिरस्वद् विश्वे त्वा देवा वैश्वानरा
आच्छन्दन्त्वानुष्टुभेन छन्दसाङ्गिरस्वत् ॥६५॥

१४३६-३९

॥२४६॥ (वा० य० १४।२८-३१)

एकयास्तुवत प्रजा अधीयन्त प्रजापतिरधिपतिरासीत् तिसृभिरस्तुवत ब्रह्मासृज्यत् ब्रह्मणस्पति-
रधिपतिरासीत् पञ्चभिरस्तुवत भूतान्यसृज्यन्त भूतानां पतिरधिपतिरासीत् सप्तभिरस्तुवत सप्त
ऋषयोऽसृज्यन्त धाताऽधिपतिरासीत् ॥२८॥ १४४०-४३

नवभिरस्तुवत पितरोऽसृज्यन्तादितिरधिपत्न्यासी—देकादशभिरस्तुवत ऋतवोऽसृज्यन्तार्त्वा अधि-
पतय आसँ—स्त्रयोदशभिरस्तुवत मासा असृज्यन्त संवत्सरोऽधिपतिरासीत् पञ्चदशभिरस्तुवत
क्षत्रमसृज्यतेन्द्रोऽधिपतिरासीत् सप्तदशभिरस्तुवत ग्राम्याः पशवोऽसृज्यन्त बृहस्पतिरधिपति-
रासीत् ॥२९॥ १४४४-४८

नवदशभिरस्तुवत शूद्रार्यावसृज्येतामहोरात्रे अधिपत्नी आस्ता—मेकविंशत्यास्तुवतैकशफाः पशवो
ऽसृज्यन्त वरुणोऽधिपतिरासीत् त्रयोविंशत्यास्तुवत क्षुद्राः पशवोऽसृज्यन्त पूषाऽधिपतिरासीत्
पञ्चविंशत्यास्तुवतारण्याः पशवोऽसृज्यन्त वायुरधिपतिरासीत् सप्तविंशत्यास्तुवत द्यावापृथिवी
व्यैतां वसवो रुद्रा आदित्या अनुव्यायँस्त एवाधिपतय आसन् ॥३०॥ १४४९-५३

नवविंशत्यास्तुवत वनस्पतयोऽसृज्यन्त सोमोऽधिपतिरासी—देकत्रिंशतास्तुवत प्रजा असृज्यन्त
यवाश्चायवाश्चाधिपतय आसँ—स्त्रयस्त्रिंशतास्तुवत भूतान्यशाम्यन् प्रजापतिः परमेष्ठ्यधिपतिरा-
सीत् ॥३१॥ १४५४-५६

॥२४७॥ (वा० य० १८।१६-१८, २२)

अग्निश्च म इन्द्रश्च मे सोमश्च म इन्द्रश्च मे सविता च म इन्द्रश्च मे सरस्वती च म इन्द्रश्च मे
पूषा च म इन्द्रश्च मे बृहस्पतिश्च म इन्द्रश्च मे यज्ञेन कल्पन्ताम् ॥१६॥

मित्रश्च म इन्द्रश्च मे वरुणश्च म इन्द्रश्च मे धाता च म इन्द्रश्च मे त्वष्टा च म इन्द्रश्च मे
मरुतश्च म इन्द्रश्च मे विश्वे च मे देवा इन्द्रश्च मे यज्ञेन कल्पन्ताम् ॥१७॥

पृथिवी च म इन्द्रश्च मे अन्तरिक्षं च म इन्द्रश्च मे द्यौश्च म इन्द्रश्च मे समाश्च म इन्द्रश्च मे
नक्षत्राणि च म इन्द्रश्च मे दिशश्च म इन्द्रश्च मे यज्ञेन कल्पन्ताम् ॥१८॥

अग्निश्च मे घर्मश्च मे अर्कश्च मे सूर्यश्च मे प्राणश्च मे अश्वमेधश्च मे पृथिवी च मे
ऽदितिश्च मे दितिश्च मे द्यौश्च मे अङ्गुलयः शकवरयो दिशश्च मे यज्ञेन कल्पन्ताम् ॥२२॥

॥२४८॥ (वा० य० २२।५-८, २०, २२-३४)

प्रजापतये त्वा जुष्टं प्रोक्षामीन्द्राग्निभ्यां त्वा जुष्टं प्रोक्षामि वायवे त्वा जुष्टं प्रोक्षामि
विश्वेभ्यस्त्वा देवेभ्यो जुष्टं प्रोक्षामि सर्वेभ्यस्त्वा देवेभ्यो जुष्टं प्रोक्षामि ।

यो अर्वन्तं जिघांसति तमभ्यमीति वरुणः ॥५॥

१४८६-९१

अग्नये स्वाहा सोमाय स्वाहा ऽपां मोदाय स्वाहा सवित्रे स्वाहा वायवे स्वाहा
विष्णवे स्वाहेन्द्राय स्वाहा बृहस्पतये स्वाहा मित्राय स्वाहा वरुणाय स्वाहा

॥६॥ १४९२-१५०१

हिङ्काराय स्वाहा हिङ्कृताय स्वाहा क्रन्दते स्वाहा ऽवक्रन्दाय स्वाहा प्रोथते स्वाहा
प्रप्रोथाय स्वाहा गन्धाय स्वाहा घ्राताय स्वाहा निर्विष्टाय स्वाहो पविष्टाय स्वाहा
सन्दिताय स्वाहा वर्गते स्वाहा ऽऽसीनाय स्वाहा शयानाय स्वाहा स्वपते स्वाहा
जाग्रते स्वाहा कूर्जते स्वाहा प्रबुद्धाय स्वाहा विजृम्भमाणाय स्वाहा विचृताय स्वाहा
संशानाय स्वाहो पस्थिताय स्वाहा ऽऽयनाय स्वाहा प्रायणाय स्वाहा ॥७॥ १५०२-२५
यते स्वाहा धावते स्वाहो द्वावाय स्वाहो हुताय स्वाहा शूकाराय स्वाहा शूकृताय स्वाहा
निषण्णाय स्वाहो तिथिताय स्वाहा जवाय स्वाहा बलाय स्वाहा विवर्तमानाय स्वाहा
विष्टताय स्वाहा विधून्वानाय स्वाहा विधूताय स्वाहा शुश्रूषमाणाय स्वाहा
शृण्वते स्वाहेक्षमाणाय स्वाहेक्षिताय स्वाहा वीक्षिताय स्वाहा निमेषाय स्वाहा
यदत्ति तस्मै स्वाहा यत् पिबति तस्मै स्वाहा यन्मूत्रं करोति तस्मै स्वाहा कुर्वते स्वाहा
कृताय स्वाहा ॥८॥

१५२६-५०

काय स्वाहा कस्मै स्वाहा कतमस्मै स्वाहा स्वाहा ऽऽधिमाधीताय स्वाहा मनः
प्रजापतये स्वाहा चित्तं विज्ञाताया ऽदित्यै स्वाहा ऽदित्यै महौ स्वाहा ऽदित्यै
सुमृडीकायै स्वाहा सरस्वत्यै स्वाहा सरस्वत्यै पावकायै स्वाहा सरस्वत्यै बृहत्यै स्वाहा
पूष्णे स्वाहा पूष्णे प्रपथ्याय स्वाहा पूष्णे नरन्धिषाय स्वाहा त्वष्ट्रे स्वाहा
त्वष्ट्रे तुरीपाय स्वाहा त्वष्ट्रे पुरुरूपाय स्वाहा विष्णवे स्वाहा विष्णवे निभूयषाय स्वाहा
विष्णवे शिपिविष्टाय स्वाहा ॥२०॥

१५५१-७१

आ ब्रह्मन् ब्राह्मणो ब्रह्मवर्चसी जायतामा राष्ट्रे राजन्युः शूर इषव्योऽतिव्याधी महारथो
जायतां दोग्ध्रीं धेनुर्वोढानङ्गानाशुः सप्तिः पुरन्धिर्योषा जिष्णू रथेष्ठाः सभेयो युवांस
यजमानस्य वीरो जायतां निकामेनिकामे नः पर्जन्यो वर्षतु फलवत्यो न ओषधयः पच्यन्तां
भोगक्षेमो नः कल्पताम् ॥२२॥

१५७२

प्राणाय स्वाहा ऽपानाय स्वाहा व्यानाय स्वाहा चक्षुषे स्वाहा श्रोत्राय स्वाहा
वाचे स्वाहा मनसे स्वाहा ॥२३॥

१५७३-७९

प्राच्यै दिशे स्वाहा ऽर्वाच्यै दिशे स्वाहा दक्षिणायै दिशे स्वाहा ऽर्वाच्यै दिशे स्वाहा
प्रतीच्यै दिशे स्वाहा ऽर्वाच्यै दिशे स्वाहो—दीच्यै दिशे स्वाहा ऽर्वाच्यै दिशे स्वाहो—
ध्वयै दिशे स्वाहा ऽर्वाच्यै दिशे स्वाहा ऽर्वाच्यै दिशे स्वाहा ऽर्वाच्यै दिशे स्वाहा
॥२४॥

१५८०-२१

अद्भ्यः स्वाहा वार्ष्यः स्वाहो—दुकाय स्वाहा तिष्ठन्तीभ्यः स्वाहा स्रवन्तीभ्यः स्वाहा
स्यन्दमानाभ्यः स्वाहा कूप्याभ्यः स्वाहा स्रद्याभ्यः स्वाहा धार्याभ्यः स्वाहा
ऽर्णवाय स्वाहा समुद्राय स्वाहा सरिराय स्वाहा ॥२५॥

१५९२-६६०३

वाताय स्वाहा धूमाय स्वाहा ऽभ्राय स्वाहा मेघाय स्वाहा विद्योतमानाय स्वाहा
स्तनयते स्वाहा ऽवस्फूर्जते स्वाहा वर्षते स्वाहा ऽववर्षते स्वाहो—ग्रं वर्षते स्वाहा
शीघ्रं वर्षते स्वाहो—दृहते स्वाहो—दृहीताय स्वाहा पुष्णते स्वाहा शीकायते स्वाहा
पुष्वाभ्यः स्वाहा ञ्हादुनीभ्यः स्वाहा नीहाराय स्वाहा ॥२६॥

१६०४-२१

अग्नये स्वाहा सोमाय स्वाहे—न्द्राय स्वाहा पृथिव्यै स्वाहा ऽन्तरिक्षाय स्वाहा
दिवे स्वाहा दिग्भ्यः स्वाहा ऽऽशाभ्यः स्वाहो—र्व्यै दिशे स्वाहा ऽर्वाच्यै दिशे स्वाहा
॥२७॥

१६२९-३१

नक्षत्रेभ्यः स्वाहा नक्षत्रियैभ्यः स्वाहा ऽहोरात्रेभ्यः स्वाहा ऽर्धमासेभ्यः स्वाहा
मासेभ्यः स्वाहा ऋतुभ्यः स्वाहा ऽऽर्तवेभ्यः स्वाहा संवत्सराय स्वाहा
द्यावापृथिवीभ्यां स्वाहा चन्द्राय स्वाहा सूर्याय स्वाहा रश्मिभ्यः स्वाहा
वसुभ्यः स्वाहा रुद्रेभ्यः स्वाहा ऽऽदित्येभ्यः स्वाहा मरुद्भ्यः स्वाहा
विश्वेभ्यो देवेभ्यः स्वाहा मूर्लेभ्यः स्वाहा शाखाभ्यः स्वाहा वनस्पतिभ्यः स्वाहा
गुप्तेभ्यः स्वाहा फलेभ्यः स्वाहौ—षधीभ्यः स्वाहा ॥२८॥

१६३९-५४

पृथिव्यै स्वाहा ऽन्तरिक्षाय स्वाहा दिवे स्वाहा सूर्याय स्वाहा चन्द्राय स्वाहा
नक्षत्रेभ्यः स्वाहा ऽद्भ्यः स्वाहौ—षधीभ्यः स्वाहा वनस्पतिभ्यः स्वाहा
रिपुभ्यः स्वाहा चराचरेभ्यः स्वाहा सरीसृपेभ्यः स्वाहा ॥२९॥

१६५५-६६

असवे स्वाहा वसवे स्वाहा विभुवे स्वाहा विवस्वते स्वाहा गणश्रिये स्वाहा
गणपतये स्वाहा ऽभिभुवे स्वाहा ऽधिपतये स्वाहा शूषाय स्वाहा
स॒स॒र्पाय स्वाहा चन्द्राय स्वाहा ज्योतिषे स्वाहा मलिम्लुचाय स्वाहा
दिवा प॒तय॑ते स्वाहा ॥३०॥

१६६७-८०

मधवे स्वाहा माधवाय स्वाहा शुक्राय स्वाहा शुचये स्वाहा नभसे स्वाहा
नभस्याय स्वाहे—षाय स्वाहो—र्जाय स्वाहा सहसे स्वाहा सहस्याय स्वाहा
तपसे स्वाहा तपस्याय स्वाहा ऽहसस्पतये स्वाहा ॥३१॥

१६८१-९३

वाजाय स्वाहा प्रसाय स्वाहा ऽपिजाय स्वाहा कर्तवे स्वाहा स्तुः स्वाहा
मूर्धने स्वाहा व्यश्रुतिने स्वाहा ऽन्त्याय स्वाहा ऽन्त्याय भौवनाय स्वाहा
भुवनस्य पतये स्वाहा ऽधिपतये स्वाहा प्रजापतये स्वाहा ॥३२॥

१६९४-१७०५

आयुर्यज्ञेन कल्पता॑ स्वाहा प्राणो यज्ञेन कल्पता॑ स्वाहा ऽपानो यज्ञेन कल्पता॑ स्वाहा
व्यानो यज्ञेन कल्पता॑ स्वाहो—दानो यज्ञेन कल्पता॑ स्वाहा समानो यज्ञेन कल्पता॑ स्वाहा
चक्षुर्यज्ञेन कल्पता॑ स्वाहा श्रोत्रं यज्ञेन कल्पता॑ स्वाहा वाग्यज्ञेन कल्पता॑ स्वाहा
मनो यज्ञेन कल्पता॑ स्वाहा ऽऽत्मा यज्ञेन कल्पता॑ स्वाहा ब्रह्मा यज्ञेन कल्पता॑ स्वाहा
ज्योतिर्यज्ञेन कल्पता॑ स्वाहा स्वर्यज्ञेन कल्पता॑ स्वाहा पृष्ठं यज्ञेन कल्पता॑ स्वाहा
यज्ञो यज्ञेन कल्पता॑ स्वाहा ॥३३॥

१७०६-२१

एकस्मै स्वाहा द्वाभ्या॑ स्वाहा शताय स्वाहै—कशताय स्वाहा व्युष्ट्यै स्वाहा
स्वर्गाय स्वाहा ॥३४॥

१७२२-२७

॥२४९॥ (वा० य० २४।१-४०)

अश्वस्तूपरो गोमृगस्ते प्राजापत्याः कृष्णग्रीव आग्नेयो रराटे पुरस्तात्
सारस्वती मेघ्युधस्ताद्वन्वो—राश्विनावधोरा॒मौ बा॒ह्वोः सौ॒मा॒पौ॒ष्णः श्या॒मो नाभ्या॑
सौर्य्यामौ श्वेतश्च कृष्णश्च पार्श्वयो—स्त्वाष्ट्रौ लो॒म॒श॒स॒कथौ स॒कथ्यो—वी॒य॒व्यः श्वेतः पु॒च्छ
इन्द्राय स्वपस्याय वेह—द्वैष्णवो वामनः ॥१॥

१७२८-३७

रोहितो धूम्ररोहितः कर्कन्धुरोहितस्ते सौम्या बभ्रुररुणबभ्रुः शुक्बभ्रुस्ते वारुणाः
शितिरन्ध्रोऽन्यतः शितिरन्ध्रः समन्तशितिरन्ध्रस्ते सावित्राः शितिवाहुरन्यतः शितिवाहुः
समन्तशितिवाहुस्ते बार्हस्पत्याः पृषती क्षुद्रपृषती स्थूलपृषती ता मैत्रावरुण्यः ॥२॥ १७३८-४२
शुद्धवालः सर्वशुद्धवालो मणिवालस्त आश्विनाः श्येतः श्येताक्षोऽरुणस्ते रुद्राय पशुपतये
कर्णा यामा अवलिप्ता रौद्रा नभोरूपाः पार्जन्याः ॥३॥ १७४३-४७

पृश्निस्तिरश्चीनपृश्निरूर्ध्वपृश्निस्ते मारुताः फल्गूलोहितोर्णी पलक्षी ताः सारस्वत्यः
प्लीहाकर्णः शुण्ठाकर्णोऽध्यालोहकर्णस्ते त्वाष्ट्राः कृष्णग्रीवः शितिकक्षोऽजिसक्थस्त ऐन्द्राग्राः
कृष्णाञ्जिरल्पाञ्जिर्महाञ्जिस्त उषम्याः ॥४॥ १७४८-५२

शिल्पा वैश्वदेव्यो रोहिण्यस्त्र्यव्यो वाचे ऽविज्ञाता अदित्यै सरूपा धात्रे
वत्सतय्यो देवानां पत्नीभ्यः ॥५॥ १७५३-५७

कृष्णग्रीवा आग्नेयाः शितिभ्रवो वसूनाः५ रोहिता रुद्राणां५
श्वेता अवरोकिण आदित्यानां नभोरूपाः पार्जन्याः ॥६॥ १७५८-६२

उन्नत ऋषभो वामनस्त ऐन्द्रावैष्णवा उन्नतः शितिबाहुः शितिपृष्ठस्त ऐन्द्राबार्हस्पत्याः
शुक्ररूपा वाजिनाः कल्मषा आग्निमारुताः श्यामाः पौष्णाः ॥७॥ १७६३-६७

एता ऐन्द्राग्रा द्विरूपा अग्नीषोमीया वामना अनङ्गाह आग्नावैष्णवा वशा मैत्रावरुण्यो
ऽन्यत एन्यो मैत्र्यः ॥८॥ १७६८-७२

कृष्णग्रीवा आग्नेया बभ्रवः सौम्याः श्वेता वायव्याः अविज्ञाता अदित्यै
सरूपा धात्रे वत्सतय्यो देवानां पत्नीभ्यः ॥९॥ १७७३-७८

कृष्णा भौमा धूम्रा अन्तरिक्षा बृहन्तो दिव्याः शबला वैद्युताः सिध्मास्तारकाः ॥१०॥
१७७९-८३

धूम्रान् वसन्तायालभते श्वेतान् ग्रीष्माय कृष्णान् वर्षाम्यो ऽरुणाञ्छरदे
पृषतो हेमन्ताय पिशङ्गाञ्छिशिराय ॥११॥ १७८४-८९

त्र्यव्यो गायत्र्यै पश्चावयस्त्रिष्टुभे दित्यवाहो जगत्यै त्रिवत्सा अनुष्टुभे
तुर्यवाह उष्णिहे ॥१२॥ १७९०-९४

पृष्ठवाहो विराज उक्षाणो बृहत्या ऋषभाः क्रकुभे ऽनङ्गाहः पङ्क्त्यै
धेनवोऽतिञ्छन्दसे ॥१३॥ १७८५-८९

कृष्णग्रीवा आग्नेया बभ्रवः सौम्या उपध्वस्ताः सावित्रा वत्सतय्यः सारस्वत्यः
श्यामाः पौष्णाः पृश्नयो मारुता बहुरूपा वैश्वदेवा वशा द्यावापृथिवीयाः ॥१४॥
१८००-१८०७

उक्ताः सञ्चरा एता ऐन्द्राग्राः कृष्णा वारुणाः पृथ्व्यो मारुताः कायास्तूपराः ॥१५॥
१८०८-१८१९

अग्नयेऽनीकवते प्रथमजानालभते मरुद्भ्यः सान्तपनेभ्यः सवात्यान् मरुद्भ्यो
गृहमेधिभ्यो बार्किहान् मरुद्भ्यः क्रीडिभ्यः ससृष्टान् मरुद्भ्यः स्वतवद्भ्यो
ऽनुसृष्टान् ॥१६॥ १८१३-१७

उक्ताः सञ्चरा एता ऐन्द्राग्राः प्राशुक्ता माहेन्द्रा
बहुरूपा वैश्वकर्मणाः ॥१७॥ १८१८-२१

धूम्रा बभ्रुनीकाशाः पितृणां सोमवतां बभ्रवो धूम्रनीकाशाः पितृणां बर्हिषदां
कृष्णा बभ्रुनीकाशाः पितृणामभिष्वात्तानां
कृष्णाः पृषन्तस्त्रैयम्बकाः ॥१८॥ १८२२-२५

उक्ताः सञ्चरा एताः शुनासीरीयाः श्वेता वायव्याः
श्वेताः सौर्याः ॥१९॥ १८२६-२९

वसन्ताय कपिञ्जलानालभते ग्रीष्माय कलविङ्कान्
वर्षाभ्यस्तित्तिरीञ्छुरदे वर्तिका हेमन्ताय कर्करा-
ञ्छिशिराय विर्ककरान् ॥२०॥ १८३०-३५

समुद्राय शिशुमारानालभते पर्जन्याय मण्डूका नद्भ्यो मत्स्यान् मित्राय कुलीपयान्
वरुणाय नाक्रान् ॥२१॥ १८३६-४०

सोमाय हंसानालभते वायवे बलाका इन्द्राभिभ्यां कुश्वान् मित्राय मद्रून्
वरुणाय चक्रवाकान् ॥२२॥ १८४१-४५

अग्नये कुटरुनालभते वनस्पतिभ्य उलूका नग्नीषोमाभ्यां चाषा नग्निभ्यो मयूरां
मित्रावरुणाभ्यां कपोतान् ॥२३॥ १८४६-५०

सोमाय लवानालभते त्वष्ट्रे कौलीकान् गोषादीर्देवानां पत्नीभ्यः कुलीका देवजामिभ्यो
ऽग्नये गृहपतये पारुष्णान् ॥२४॥ १८५१-५५

अह्ने पारावतानालभते रात्र्यै सीचापू रहोरात्रयोः सन्धिभ्यो जत् मार्सभ्यो दास्योहा-
न्तसैवत्सराय महतः सुपर्णान् ॥२५॥ १८५६-६१

भूम्या आसूनालभते ऽन्तरिक्षाय पाङ्कत्रान् दिवे कशान् दिग्भ्यो नकुलान्
बभ्रुकानवान्तरदिशाम्यः ॥२६॥

१८६२-६६

वसुभ्य ऋष्यानालभते रुद्रेभ्यो रुरू—नादित्येभ्यो न्यङ्कून् विश्वेभ्यो देवेभ्यः पृषता—
—न्त्साध्येभ्यः कुलुङ्गान् ॥२७॥

१८६७-७१

ईशानाय परस्वत आलभते मित्राय गौरान् वरुणाय महिषान्
वृहस्पतये गव्याँ—स्त्वष्ट्र उष्ट्रान् ॥२८॥

१८७२-७६

प्रजापतये पुरुषान् हस्तिन् आलभते वाचे प्लुषीँ—क्षक्षुषे मशका—
—च्छ्रोत्राय भृङ्गाः ॥२९॥

१८७७ ८०

प्रजापतये च वायवे च गोमृगो वरुणायारण्यो मेघो
यमाय कृष्णो मनुष्यराजाय मर्कटः शार्दूलाय रोहि—देषभाय गवयी
क्षिप्रश्येनाय वर्तिका नीलङ्गोः कृमिः समुद्राय शिशुमारो
हिमवते हस्ती ॥३०॥

१८८१-९०

मयुः प्राजापत्य उलो हलिर्क्षो वृषदुः शस्ते धात्रे दिशां कङ्को
धुङ्क्षाऽऽग्नेयी कलविङ्को लोहिताहिः पुष्करसादस्ते त्वाष्ट्रा वाचे क्रुश्चः ॥३१॥

१८९१-९८

सोमाय कुलुङ्ग आरण्योऽजो नकुलः शका ते पौष्णाः क्रोष्टा मायो—रिन्द्रस्य गौरमृगः
पिद्रो न्यङ्कुः कक्कटस्तेऽनुमत्यै प्रतिश्रुत्कायै चक्रवाकः ॥३२॥

१८९९-१९०४

सौरी बलाका शार्गः सृजयः श्याण्डकुस्ते मैत्राः सरस्वत्यै शारिः पुरुषवाक्
श्राविद् भौमी शार्दूलो वृकः पृदाकुस्ते मन्यवे
सरस्वते शुक्रः पुरुषवाक् ॥३३॥

१९०५-१९१०

सूपर्णः पार्जन्य आतिर्वाहसो दर्विद्रा ते वायवे वृहस्पतये वाचस्पतये पैङ्गराजो
ऽलज आन्तरिक्षः प्लवो मद्गुर्मत्स्यस्ते नदीपतये
द्यावापृथिवीयः कूर्मः ॥३४॥

१९११-१९१६

पुरुषमुगधन्द्रमसो गोधा कालका दार्वाघाटस्ते वनस्पतीनां
कृकवाङ्कः सावित्रो ह२सो वातस्य नाक्रो मर्करः कुलीपयस्तेऽङ्कपारस्य
श्रियै शल्यकः ॥३५॥

१९१७-२२

एण्यहो मण्डूको मूर्षिका तित्तिरिस्ते सर्पाणां लोपाश आश्विनः कृष्णो रात्र्या
ऋक्षो जतूः सुषिलीका त इतरजनानां जहका वैष्णवी ॥३६॥ १९२३-२८

अन्यवापोऽर्धमासानां—मृशयो मयूरः सुपर्णस्ते गन्धर्वाणां—मपामुद्रो मासां कश्यपो
रोहित कुण्डुणाचीं गोलत्तिका तेऽप्सरसां मृत्यवेऽसितः ॥३७॥ १९२९-३४

वर्षाहूस्त्रेतुना—माखुः कशो मान्थालस्ते पितृणां बलायाजगरो वधनां कपिञ्जलः
कपोत उल्लूकः शशस्ते निर्ऋत्यै वरुणायारण्यो मेषः ॥३८॥ १९३५-४०

श्वित्र आदित्यानां—मुष्टो घृणीवान् वार्ध्नीनस्ते मत्या अरण्याय सुमरो रुरु रौद्रः
कवार्यः कुटरुर्दात्यौहस्ते वाजिनां कामाय पिकः ॥३९॥ १९४१-४६

खङ्गो वैश्वदेवः श्वा कृष्णः कर्णो गर्दभस्तुरक्षुस्ते रक्षसा—मिन्द्राय सूकरः
सिंहो मारुतः कृकलासः पिप्पका शकुनिस्ते शरव्यायै विश्वेषां देवानां पृषतः ॥४०॥

१९४७-५२

॥२५०॥ (वा० य० २५।१-९)

शादं दुद्धि—रवकां दन्तमूलै—मृदुं बर्से—स्तेगान् दक्ष्णाम्याः सरस्वत्या अग्रजिह्वं
जिह्वाया उत्साद—मवक्रन्देन तालु वाजः हनुभ्या—मप आस्येन वृषणमाण्डाभ्या—
—मादित्यां इमश्रुभिः पन्थानं भ्रूभ्यां द्यावापृथिवी वर्तोभ्यां विद्युतं कनीनकाभ्याः
शुक्राय स्वाहा कृष्णाय स्वाहा पार्याणि पक्ष्माण्य—वार्या इक्ष्वोः उवार्याणि पक्ष्माणि
पार्या इक्ष्वः ॥१॥ १९५३-७२

वातं प्राणेना—ऽपानेन नासिके उपयाममधरेणौष्ठेन सदुत्तरेण प्रकाशेनान्तर—
—मनूकाशेन बाहौ निवेष्ट्य मूर्ध्ना स्तनयितुं निर्वाधेना—ऽश्वनिं मस्तिष्केण
विद्युतं कनीनकाभ्यां कर्णाभ्याः श्रोत्रः श्रोत्राभ्यां कर्णौ तेदुनीमधरकण्ठेना—
ऽपः शुष्ककण्ठेन चित्तं मन्याभि—रतिदिः शीर्ष्णा निर्ऋतिं निर्जैर्जल्येन शीर्ष्णा
सैक्रोशैः प्राणान् रेष्माणः स्तुपेन ॥२॥ १९७३-९०

मशकान् केशै—रिन्द्रः स्वर्षसा वह्नेन बृहस्पतिः शकुनिसादेन कूर्माच्छुफै—
—राक्रमणः स्थूराभ्या—मृक्षलाभिः कपिञ्जला—ज्जवं जङ्घाभ्या—मध्वानं बाहुभ्यां
जाम्बालिनारण्य—मभिर्मतिरुग्भ्यां पूषणं दोभ्या—मश्विनावः साभ्याः रुद्रः रोराभ्याम् ॥३॥

१९९१-२००३

अग्नेः पक्षति—र्वायोनिपक्षति—रिन्द्रस्य तृतीया सोमस्य चतुर्थ्य—दित्यै पञ्चमी—
—न्द्राण्यै षष्ठी मरुतां सप्तमी बृहस्पतेरष्टम्य—र्यम्णो नवमी धातुर्दशमी—
—न्द्रस्यैकादशी वरुणस्य द्वादशी यमस्य त्रयोदशी ॥४॥

२००४-२०१६

इन्द्राग्न्योः पक्षतिः सरस्वत्यै निपक्षति—मित्रस्य तृतीया
ऽपां चतुर्थी निश्रैत्यै पञ्चम्यु—ग्रीषोमयोः षष्ठी सर्पाणां सप्तमी
विष्णोरष्टमी पूष्णो नवमी त्वष्टुर्दशमी—न्द्रस्यैकादशी
वरुणस्य द्वादशी यम्यै त्रयोदशी द्यावापृथिव्योर्दक्षिणं पार्श्वं
विश्वेषां देवानामुत्तरम् ॥५॥

२०१७-३१

मरुतां स्कन्धा विश्वेषां देवानां प्रथमा कीकसा रुद्राणां द्वितीया
ऽऽदित्यानां तृतीया वायोः पुच्छ—मग्रीषोमयोर्भासदौ
ऋञ्चौ श्रोणिभ्या—मिन्द्राबृहस्पती ऊरुभ्यां
मित्रावरुणावल्गाम्या—माक्रमणं स्थुराभ्यां बलं कुष्ठाभ्याम् ॥६॥

२०३२-४२

पूषणं वनिष्ठुना ऽन्धाहीन्स्थूलगुदया सर्पान् गुदाभि—विहृतं आन्त्रै—रपो वस्तिना
वृषणमाण्डाभ्यां वार्जिनं शेपेन प्रजां रेतसा चाषान् पित्तेन प्रदुरान् पायुनां
कूश्माञ्छकपिण्डैः ॥७॥

२०४३-५३

इन्द्रस्य क्रोडो ऽदित्यै पाजस्यं दिशां जत्रवो ऽदित्यै भस—
—जीमूतान् हृदयौपशेना—ऽन्तरिक्षं पुरीतता नभ उदर्येण चक्रवाकौ मतस्नाभ्यां
दिवं वृक्काभ्यां गिरीन् प्लाशिभि—रुपलान् प्लीहा
वल्मीकान् क्लोमभि—ग्लौंभिर्गुल्मान् हिराभिः स्रवन्ती—हृदान् कुक्षिभ्यां
समुद्रमुदरेण वैश्वानरं भस्मना ॥८॥

२०५४-७०

विधृतिं नाभ्यां धृतं रसेना—ऽपो यूष्णा मरीचिर्विप्रुड्भि—र्नाहारमूष्मणां
शीनं वसंया प्रुष्वा अश्रुभि—र्हृदुर्नादुधीकाभि—रस्ना रक्षांसि चित्राण्यङ्गै—
—र्नक्षत्राणि रूपेण पृथिवीं त्वचा जुम्बकाय स्वाहा ॥९॥

२०७१-८३

॥२५६॥ (घा० य० २९।५८-६०)

आग्नेयः कृष्णग्रीवः सारस्वती मेषी बभ्रुः सौम्यः पौष्णः इयामः शितिपृष्ठो बार्हस्पत्यः
शिल्पो वैश्वदेव ऐन्द्रोऽरुणो मारुतः कल्माष ऐन्द्राग्रः संश्रितो
ऽधोरागः सावित्रो वारुणः कृष्ण एकशितिपात् पेतवः ॥५८॥

२०८४-९४

अग्नयेऽनीकवते रोहिताञ्जिरनुद्धा—नधोरांमौ सावित्रौ पौष्णौ रजतनाभी
वैश्वदेवौ पिशङ्गौ तूपरौ मारुतः कल्माष आग्नेयः कृष्णोऽजः सारस्वती मेधी
वारुणः पेतवः ॥५९॥

२०९५-२१०२

अग्नये गायत्राय त्रिष्टुते राथन्तरायाष्टाकपाल इन्द्राय त्रैष्टुभाय पञ्चदशाय
बार्हितायैकादशकपालो विश्वेभ्यो देवेभ्यो जागतेभ्यः सप्तदशेभ्यो वैरूपेभ्यो द्वादशकपालो
मित्रावरुणाभ्यामानुष्टुभाभ्यामेकविंशाभ्यां वैराजाभ्यां पयस्या बृहस्पतये पाङ्क्त्याय
त्रिणवाय शकवराय चरुः सवित्र औष्णिहाय त्रयस्त्रिंशाय रैवताय द्वादशकपालः
प्राजापत्यश्चरु—रदित्यै विष्णुपत्न्यै चरु—रम्ये वैश्वानराय द्वादशकपालोऽनुमत्या
अष्टाकपालः ॥६०॥

२१०३-२११२

॥२५२॥ (चा० य० ३०।५-२२)

ब्रह्मणे ब्राह्मणं क्षत्राय राजन्यं मरुद्भ्यो वैश्यं तपसे शूद्रं तमसे तस्करं
नारकाय वीरहणं पाप्मने क्लीब—माक्रियाया अयोगं कामाय पुँश्चल—
—मर्तिकृष्टाय मागधम् ॥५॥

२११३-२२

नृत्ताय सुतं गीताय शैलुषं धर्माय सभाचरं नरिष्ठायै भीमलं नर्माय रेभः
हसाय कारि—मानन्दाय स्त्रीष्वं प्रमदे कुमारीपुत्रं मेधायै रथकारं
धैर्याय तक्षणम् ॥६॥

२११३-३२

तपसे कौलालं मायायै कर्मारः रूपाय मणिकारः शुभे वपः शरव्याया इषुकारः
हेत्यै धनुष्कारं कर्मणे ज्याकारं दिष्टाय रज्जुसर्जं मृत्यवे मृगयु—
—मन्तकाय शनिनेम् ॥७॥

२१३३-४२

नदीभ्यः पौञ्जिष्ठ—मृक्षीकाभ्यो नैषादं पुरुषव्याघ्राय दुर्मदं
गन्धर्वाप्सरोभ्यो व्रात्यं प्रयुग्भ्य उन्मत्तः सर्पदेवजनेभ्योऽप्रतिपदु—
मयेभ्यः कितव—मीर्यताया अर्कितवं पिशाचेभ्यो विदलकारीं
यातुधानेभ्यः कण्टकीकारीम् ॥८॥

२१४३-५२

सन्धये जारं गेहायोपपति—मात्यै परिवित्तं निर्ऋत्यै परिविविद्वान—मराभ्या एदिधिपुःपतिं
निष्कृत्यै पेशस्कारीः संज्ञानाय सरकारीं प्रक्रमोद्यायोपसद्वं
वर्णायानुरुधं बलायोपदाम् ॥९॥

२१५३-६२

उत्सादेभ्यः कुब्जं प्रमुदे वामनं द्वाभ्यः स्नामः स्वप्नायान्ध—मधर्माय बधिरं
पवित्राय मिषजं प्रज्ञानाय नक्षत्रदुर्ष—माशिक्षायै प्रभिन—मुपशिक्षाया अभिप्रभिनं
मर्यादायै प्रभविवाकम् ॥१०॥

२१६३-७२

अर्मेभ्यो हस्तिपं जवायाश्चपं पुष्ट्यै गोपालं वीर्यायाविपालं तेजसेऽजपाल—
—मिरायै कीनाशं कीलालाय सुराकारं मद्राय गृहपः श्रेयसे वित्तध—
—माध्यक्ष्यायानुक्षत्तारम् ॥११॥

२१७३-८२

भायै दार्वाहारं प्रभाया अग्न्येधं ब्रह्मस्य विष्टपायाभिषेक्तारं वर्षिष्ठाय नाकाय परिवेष्टारं
देवलोक्याय पेशितारं मनुष्यलोकाय प्रकरितारः सर्वेभ्यो लोकेभ्य उपसेक्तार—
—मर्वक्त्यै वृधायोपमन्थितारं मेधाया वासःपलपूलीं प्रकामाय रजयित्रीम् ॥१२॥

२१८३-९२

ऋतये स्तेनहृदयं वैरहत्याय पिशुनं विविक्त्यै क्षत्तार—मौपद्रष्ट्यायानुक्षत्तारं
बलायानुचरं भुम्भे परिष्कन्दं प्रियाय प्रियवादिन—मरिष्या अश्वसादः
स्वर्गाय लोकाय भागदुधं वर्षिष्ठाय नाकाय परिवेष्टारम् ॥१३॥

२१९३-२२०२

मन्यवेऽयस्तापं क्रोधाया निसरं योगाय योक्तारः शोकायाभिसर्तारं क्षेमाय विमोक्तार—
—मुत्कूलनिकुलेभ्यस्त्रिष्ठिनं वपुषे मानस्कृतः शीलायाञ्जनीकारीं निर्ऋत्यै कोशकारीं
यमायाद्यम् ॥१४॥

२२०३-१२

यमाय यमस्य—मथर्वभ्योऽवतोकाः संवत्सराय पर्यायिणीं परिवत्सरायाविजाता—
—मिदावत्सरायातीत्वरी—मिद्वत्सरायातिष्कर्वरीं वत्सराय विजर्जराः संवत्सराय पलिकनी—
—मृधुभ्योऽजिनसन्धः साध्येभ्यश्चर्मस्रम् ॥१५॥

२२१३-२२२२

सरोभ्यो धैवर—मुपस्यावराभ्यो दाशं वैशन्ताभ्यो वैन्दं नड्वलाभ्यः शौष्कलं
पाराय मार्गर—मवाराय केवर्तं तीर्थेभ्य आन्दं विषमेभ्यो मैनालः स्वनेभ्यः पर्णकं
गुहाभ्यः किरातः सानुभ्यो जम्भकं पर्वतेभ्यः किम्पूरुषम् ॥१६॥

२२२३-३४

बीभत्सायै पौलकसं वर्णीय हिरण्यकारं तुलायै वाणिजं पञ्चादोषाय ग्लाविनं
विश्वेभ्यो भूतेभ्यः सिध्मलं भूतयै जागरण—मभूतयै स्वपन—मातयै जनवादिनं
व्यूढ्या अपगृहमः संश्वराय प्रच्छिदम् ॥१७॥

२२३५-४४

अक्षराजाय कितवं कृतायाऽऽदिनवदुर्गं त्रेतायै कल्पिनं द्वापरायाधिकल्पिनं—
 —मास्कन्दाय सभास्थाणुं मृत्यवे गोव्यञ्ज—मन्तकाय गोघातं क्षुधे यो गां
 विक्रन्तन्तं भिक्षमाण उपतिष्ठति दुष्कृताय चरकाचार्य पाप्मने सैलगम् ॥१८॥ २२४५-५४
 प्रतिश्रुत्काया अर्तनं घोषाय भूष—मन्ताय बहुवादिनं—मन्ताय मूकः शब्दायाडम्बराघातं
 महसे वीणावादं क्रोशाय तूणवध्म—मवरस्तराय शङ्खध्मं वनाय वनप—
 —मन्यतोरण्याय दावपम् ॥१९॥ २२५५-६४

नर्माय पुँश्चलः हसाय कारिं यादसे शाबल्यां प्राप्पण्यं गणकमभिक्रोशकं तान् महसे
 वीणावादं पाणिघ्नं तूणवध्मं तान् नृत्तायाऽऽनन्दाय तलवम् ॥२०॥ २२६५-७०
 अग्नये पीवानं पृथिव्यै पीठसर्पिणं वायवे चाण्डाल—मन्तरिक्षाय वःशनर्तिनं
 दिवे खलतिः सूर्याय हर्यक्षं नक्षत्रेभ्यः किमिरं चन्द्रमसे किलास—महं शुक्रं पिङ्गाक्षः
 रात्र्यै कृष्णं पिङ्गाक्षम् ॥२१॥ २२७१-८०

अथैतानष्टौ विरूपाना लभतेऽतिदीर्घं चार्तिहस्वं चार्तिस्थूलं चार्तिकुशं चार्तिशुक्रं
 चार्तिकृष्णं चार्तिकुलवं चार्तिलोमशं च । अशूद्रा अब्राह्मणास्ते प्राजापत्याः ।
 मागधः पुँश्चली कितवः क्लीबोऽशूद्रा अब्राह्मणास्ते प्राजापत्याः ॥२२॥ २२८१-८२
 ॥२५३॥ (वा० य० ३९।१-२, ११-१३)

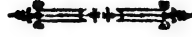
स्वाहा प्राणेभ्यः सार्धिपतिकेभ्यः । पृथिव्यै स्वाहा अग्नये स्वाहा अन्तरिक्षाय स्वाहा
 वायवे स्वाहा । दिवे स्वाहा सूर्याय स्वाहा ॥१॥ २२८३-८९
 दिग्भ्यः स्वाहा चन्द्राय स्वाहा नक्षत्रेभ्यः स्वाहा अद्भ्यः स्वाहा वरुणाय स्वाहा ।
 नाभ्यै स्वाहा पूताय स्वाहा ॥२॥ २२९०-९६

आयासाय स्वाहा प्रायासाय स्वाहा संयासाय स्वाहा वियासाय स्वाहो—द्यासाय स्वाहा ।
 शुचे स्वाहा शोचते स्वाहा शोचमानाय स्वाहा शोकाय स्वाहा ॥१॥ २२९७-२३०५
 तपसे स्वाहा तप्यते स्वाहा तप्यमानाय स्वाहा तप्ताय स्वाहा धर्माय स्वाहा ।
 निष्कृत्यै स्वाहा प्रायश्चित्यै स्वाहा भेषजाय स्वाहा ॥१२॥ २३०६-१३

यमाय स्वाहा अन्तकाय स्वाहा मृत्यवे स्वाहा । ब्रह्मणे स्वाहा ब्रह्महत्यायै स्वाहा
 विश्वेभ्यो देवेभ्यः स्वाहा द्यावापृथिवीभ्यां स्वाहा ॥१३॥ २३१४-२०

विश्वे देवाः-पुनरुक्त-मन्त्रभागाः ।

ऋग्वेदस्य प्रथमं मण्डलम् ।



- [१] १।३।७ (मधुच्छन्दा वैश्वामित्रः । विश्वे देवाः)
विश्वे देवास आ गत ।
(१६५) २।४।१।२३ (गृत्समदः शौनकः । विश्वे देवाः)
(४१५) ६।५।१।७ (ऋजिश्वा भारद्वाजः । विश्वे देवाः)
- [४] १।१४।१ (मेधातिथिः काण्वः । विश्वे देवाः)
विश्वेभिः सोमपीतये ।
(इन्द्रः ४१२) ८।२।१४ (सोमरिः काण्वः । इन्द्रः)
- [६] १।१४।३ (मेधातिथिः काण्वः । विश्वे देवाः)
इन्द्रवायू बृहस्पतिं । आदित्यान् मरुतं गणम् ।
(८१९) १०।१४।१४ (अग्निस्त्वापसः । विश्वे देवाः)
इन्द्र यू बृहस्पतिं ।
(अग्निः १ ३।१६।२४ (भरद्वाजो बार्हस्पत्यः ।
अग्निः)
आदित्यान् मरुतं गणम् ।
- [८] १।१४।५ (मेधातिथिः काण्वः । विश्वे देवाः)
वृक्तवर्हिषः ।
हविष्मन्तो अरंकृतः ।
(अश्विनौ ४००) ८।५।१७ (ऋग्नातिथिः काण्वः । अश्विनौ)
वृक्तवर्हिषो हविष्मन्तो — ।
- [९] १।१४।६ (मेधातिथिः काण्वः । विश्वे देवाः)
बहन्ति प्रयांसि वीतये ।
आ देवान्सोमपीतये ।
(अग्निः १०८५) ६।१६।४४ (भरद्वाजो बार्हस्पत्यः ।
अग्निः)
बहामि प्रयांसि वीतये ।
आ देवान्सोमपीतये ।
- [१४] १।१४।११ (मेधातिथिः काण्वः । विश्वे देवाः)
त्वं होता मनुहिता ।
सेमं नो अश्वरं यज ।
देवा विश्वे देवाः । १६

- (अग्निः १०५०) ६।१६।९ (भरद्वाजो बार्हस्पत्यः ।
अग्निः)
त्वं ।
(अग्निः २८) १।२६।१ (शुनःशेष आजीगर्तिः । अग्निः)
सेमं ।
- [१५] १।१४।१२ (मेधातिथिः काण्वः । विश्वे देवाः)
युक्त्वा हारुपी रथे हरितो देव रोहितः ।
(मरुतः २८०) ५।५।६ (श्यावाश्व आत्रेयः । मरुतः)
युक्त्वा हारुपी रथे युक्त्वा रथेषु रोहितः ।
- [१६] १।२३।१० (मेधातिथिः काण्वः । विश्वे देवाः)
मरुतः सोमपीतये ।
(मरुतः ३९७) ८।९४।३ = (मरुतः ४०३) ८।९४।९
(बिन्दुः पूतदक्षो वा आत्रिरसः । मरुतः)
- [२५] १।८९।७ (गोतमो राहूगणः । विश्वे देवाः)
विश्वे नो देवा अवसा गमजिह ।
(५९२) १०।३५।१३ (लुशो धानाकः । विश्वे देवाः)
विश्वे नो देवा अवसा गमन्तु ।
- [३८-५५] १।१०५।१-१८ विश्वं मे अस्य रोदसी ।
[४२] १।१०५।५ (त्रित आप्त्यः, कुत्स आत्रिरसो वा । विश्वे देवाः)
त्रिषुवा रोचने दिवः ।
(इन्द्रः २३०६) ८।६९।३ (प्रियमेध आत्रिरसः । इन्द्रः)
- [४५] १।१०५।८ (त्रित आप्त्यः, कुत्स आत्रिरसो वा । विश्वे देवाः)
सं मा तपन्त्यमितः सपत्नीरिव पत्नीवः ।
मृषो न शिभा ज्यदन्ति माभ्यः नो रं ते शतक्रतो ॥
(इन्द्रः २५३९) १०।३३।२ (कवष ऐलूषः । इन्द्रः)
सं मा ।
(इन्द्रः २५४०) १०।३३।३ (कवष ऐलूषः । इन्द्रः)
मृषो न ।

[५०] १।१०५।१३ (त्रित आप्त्यः, कुत्स आत्रिरसो वा । विश्वे देवाः)
देवेष्वस्त्याप्यम् ।

(अश्विनौ ४६७) ८।१०।३ (प्रगाथो घोरः काण्वः । अश्विनौ)
देवेष्वध्याप्यम् ।

[५१] १।१०५।१४ (त्रित आप्त्यः, कुत्स आत्रिरसो वा ।
विश्वे देवाः)

देवाँ ।

अग्निर्हव्या सुषूदति देवो देवेषु मेधिरः ।

(अग्निः १९२८) १।१४२।११ (दीर्घतमा औचथ्यः ।

[आग्नीसूक्तं] = वनस्पतिः)

अवसृजन्नुप त्मना देवान् यक्षे वनस्पते ।

अग्निर्हव्या सुषूदति देवो देवेषु मेधिरः ।

(अग्निः १९४०) १।१८८।१० (अगस्त्यो मैत्रावरुणिः ।

[आग्नीसूक्तं] = वनस्पतिः)

उप त्मन्या वनस्पते । अग्निर्हव्यानि सिष्वदत् ।

[५३] १।१०५।१६ (त्रित आप्त्यः, कुत्स आत्रिरसो वा ।
विश्वे देवाः)

दिवि प्रवाच्यं कृतः ।

(इन्द्रः १२२६) २।२१।४ (गृत्समदः शौनकः । इन्द्रः)

दिवि प्रवाच्यं कृतम् ।

[५७-६२] १।१०६।१-६ (कुत्स आत्रिरसः । विश्वे देवाः)

रथं न दुर्गाद्रसवः सुदानवो विश्वस्माज्जो अंहसो निष्पिपर्तन ।

[५८] १।१०६।२ (कुत्स आत्रिरसः । विश्वे देवाः)

त आदित्या आ गता सर्वतातये ।

(५९०) १।०।३५।११ (लुशो धानाकः । विश्वे देवाः)

[६३] १।१०६।७ (कुत्स आत्रिरसः । विश्वे देवाः)

देवैर्नो देव्यदितिर्नि पातु देवस्माता त्रायतामप्रयुञ्छन् ।

(२३५) ४।५५।७ (वामदेवो गौतमः । विश्वे देवाः)

[६५] १।१०७।२ उप नो देवा अवसा गमन्तु ।

(५९२) १।०।३५।१३ विश्वे नो देवा अवसा गमन्तु ।

['] १।१०७।२ (कुत्स आत्रिरसः । विश्वे देवाः)

आदित्यैर्नो अदितिः शर्म यंसत् ।

(अदितिः ०४४६) ४।५४।६ (वामदेवो गौतमः । सविता)

(७०९) १।०।६६।३ (वसुकर्णो वासुकः । विश्वे देवाः)

... .. शर्म यच्छतु ।

[६६] १।१०७।३ (कुत्स आत्रिरसः । विश्वे देवाः)

तन्न तदर्यमा तत् सविता चनो भात् ।

(३७६) ६।४९।१४ (ऋजिश्वा भारद्वाजः । विश्वे देवाः)

तन्नो तत् पर्वतस्तत् सविता चनो भात् ।

[७१] १।१२१।५ (कक्षीवान् दीर्घतमस औशिजः । विश्वे देवाः
इन्द्रो वा)

राधः सुरेतस्तुरणे ।

शुचि यत्ते रेकण आयजन्त सवर्दुधायाः पय उस्त्रियायाः ।

(६३७) १।०।६१।११ (नाभानेदिष्ठो मानवः । विश्वे देवाः)

राधो न रेत ऋतमित् तुरण्यन् ।

शुचि यत्ते रेकण आयजन्त ... ।

[७९] १।१२१।१३ (कक्षीवान् दीर्घतमस औशिजः । विश्वे देवाः
इन्द्रो वा)

भरश्चक्रमेतशो नायमिन्द्र ।

(इन्द्रः १७०२) ५।३१।११ (अवस्युरात्रेयः । इन्द्रः)

भरश्चक्रमेतशः सं रिणाति ।

[८४, ९५] १।१२२।३, १४ तन्नो विश्वे वरिवस्यन्तु देवाः ।

[८७] १।१२२।६ (कक्षीवान् दीर्घतमस औशिजः ।

विश्वे देवाः)

अर्त मे मित्रावरुणा हवेमा ।

(अदितिः ० ३२९) ७।६२।५ (मैत्रावरुणर्वसिष्ठः ।

मित्रावरुणौ)

[९९] १।१२२।११ श्रोता राजानो अमृतस्य मन्द्राः ।

(७३९) १।०।९३।४ (तान्वः पार्थ्यः । विश्वे देवाः)

ते वा राजानो ... ।

[९७] १।१२९।१ धीतयो देवाँ अश्छा न भीतयः ।

(इन्द्रः १०३२) १।१३२।५ (परुच्छेपो दैवोदासिः । इन्द्रः)

[१०१] १।१६४।३ (दीर्घतमा औचथ्यः । विश्वे देवाः)

सह स्वसारो अग्नि सं नवन्ते ।

१।०।७।३ (वृहस्पतिरात्रिरसः । ज्ञानम्)

ता सह रेभा अग्नि सं नवन्ते ।

[११९] १।१६४।२१ इनो विश्वस्य भुवनस्य गोपाः ।

(अदितिः ० २४) २।१७।४ (कूर्मो गार्त्समदो, गृत्समदो

वा । अदित्यः)

देवा विश्वस्य ... ।

[१२८, १३६] १।१६४।३०, ३८ अमर्त्यो अर्त्येवा सयोनिः ।

[१२९] १।१६४।३१ (दीर्घतमा औचध्यः । विश्वे देवाः)
 = १०।१७७।३ (पतञ्जः प्राजापत्यः । मायाभेदः)
 अपश्यं गोपामनिपद्यमानमा च परा च पथिभिश्चरन्तम् ।
 स सप्तरीषीः स विषूचीर्वसान आ वरीवर्ति भुवनेऽन्तः ॥
 [१३८] १।१६४।४० अथो वयं भगवन्तः स्याम ।
 (अदितिः ० ७९६) ७।४१।५ (मैत्रावरुणिर्वसिष्ठः । भगः)
 तेन वयं ।
 [१४१] १।१८६।२ (अगस्त्यो मैत्रावरुणिः । विश्वे देवाः)
 मित्रो अर्यमा वरुणः सजोषाः ।

(अदितिः ० ३१९) ७।६०।४ (मैत्रावरुणिर्वसिष्ठः ।
 मित्रावरुणौ)
 [१४२] १।१८६।३ (अगस्त्यो मैत्रावरुणिः । विश्वे देवाः)
 प्रेष्टं वो अतिथिं गृणीषेऽग्निं ।
 (अग्निः १४५४) ८।८४।१ (उशना काव्यः । अग्निः)
 अतिथिं स्तुषे । अग्निं ... ।
 [१४३] १।१८६।४ (अगस्त्यो मैत्रावरुणिः । विश्वे देवाः)
 उषासानक्ता सुदुधेव धेनुः ।
 (अग्निः १२७९) ७।२।६ (मैत्रावरुणिर्वसिष्ठः ।
 [आप्रीसूक्तं] = उषासानक्ता)

ऋग्वेदस्य द्वितीयं मण्डलम् ।

[१५२] २।२९।२ (कूर्मो गार्त्समदो गृत्समदो वा । विश्वे देवाः)
 यूयं द्वेषांसि सनुतयुयोत ।
 (७५९) १०।१००।९ (दुवस्युर्वानन्दनः । विश्वे देवाः)
 विश्वा द्वेषांसि सनुतयुयोत ।
 [१५७] २।२९।७ = (अदितिः ० ३७) २।२७।१७ (कूर्मो
 गार्त्समदो गृत्समदो वा । आदित्यः)
 माहं मघोनो वरुण प्रियस्य भूरिदात्र आ विदं शूनमापेः ।
 मा रायो राजन्सुवमादव स्यां बृहद्वदेम विदधे सुवीराः ॥
 [१५८] २।३१।१ (गृत्समदः शौनकः । विश्वे देवाः)
 आदित्यै रुद्रैर्वसुभिः सन्धामुवा ।
 (अश्विनौ ५०९) ८।३५।१ (श्यावाश्व आत्रेयः । अश्विनौ)
 [१६५] २।४१।१३ (गृत्समदः [आत्रिः शौनकोः । विश्वे देवाः]
 आर्गवः शौनकः । विश्वे देवाः)
 विश्वे देवास आ गत ।

(१) १।३।७ (मधुच्छन्दा वैश्वामित्रः । विश्वे देवाः)
 (४१५) ६।५२।७ (ऋजिश्वा भारद्वाजः । विश्वे देवाः)
 [१६५] २।४१।१३ (गृत्समदः शौनकः । विश्वे देवाः)
 (४५२) ६।५२।७ (ऋजिश्वा भारद्वाजः । विश्वे देवाः)
 विश्वे देवास आ गत शृणुता म इमं हवम् ।
 एवं बर्हिर्नि षीदत ॥
 (अश्विनौ ५४२) ८।७३।१० (गोपवन आत्रेयः सप्तव-
 ध्रिर्वा । अश्विनौ)
 शृणुतं म इमं हवम् ।
 [१६७] २।४१।१५ इन्द्रज्येष्ठा मरुद्गणा देवासः पूषरातयः ।
 विश्वे मम श्रुता हवम् ॥
 (इन्द्रः ३२४८) १।२३।८ (मेधातिथिः काण्वः ।
 मरुत्वानिन्द्रः)

ऋग्वेदस्य तृतीयं मण्डलम् ।

[१६९] ३।२०।५ (गाथी कौशिकः । विश्वे देवाः)
 दधिक्लामभिमुखसं च देवीं ...।... हुवे ॥
 (७६३) १०।१०१।१ (बुधः सौम्यः । विश्वे देवाः)
 ऋत्विग् वा)
 दधिक्लामभिमुखसं च देवीं... हुये ।
 [१७०] ३।५४।१ (प्रजापतिर्वैश्वामित्रः, प्रजापतिर्वाच्यो वा ।
 विश्वे देवाः)
 क्षुणोतु नो दम्येभिरनीकैः ।

(अग्निः ४६१) ३।१।१५ (विश्वामित्रो गाथिनः । अग्निः)
 रक्षा च नो दम्येभिरनीकैः ।
 [१७१] ३।५४।३ सपर्यामि प्रयसा यामि रत्नम् ।
 (अग्निः ११६) १।५८।७ (नोधा गौतमः । अग्निः)
 [१७४] ३।५४।५ (प्रजापतिर्वैश्वामित्रः, प्रजापतिर्वाच्यो वा ।
 विश्वे देवाः)
 को अवा वेद क इह प्र वोचद् ।
 परेषु वा गुह्येषु ब्रूतेषु ॥

- १०।१२९।६ (प्रजापतिः परमेष्ठी । भाववृत्तम्)
को अत्रा ... ।
(७८३) १०।११४।२ (सध्रिर्वैरूपो धर्मो वा तापसः ।
विश्वे देवाः)
परेषु वा — ।
[१८०] ३।५४।११ (प्रजापतिर्वैश्वामित्रः प्रजापतिर्वाच्यो
वा । विश्वे देवाः)
त्रिरा दिवो विदधे पत्यमानः ।
(११८) ३।५६।५ त्रिरा दिवो विदधे पत्यमानाः ।
[१८४] ३।५४।१५ (प्रजापतिर्वैश्वामित्रः प्रजापतिर्वाच्यो वा ।
विश्वे देवाः)
उभे आ पमौ रोदसी महित्वा ।
(इन्द्रः १४७१) ४।१६।५ (वामदेवो गौतमः । इन्द्रः)
(अदितिः ० ३६१) ८।१५।१८ (विश्वमना वैयधुः ।
मित्रावरुणौ)
[१८७] ३।५४।१८ अदब्धानि वरुणस्य व्रतानि ।
१।२४।१० (शुनःशेष आजीगर्तिः कृत्रिमो देवरातो
वैश्वामित्रो वा । वरुणः)
[१८९] ३।५४।२० ध्रुवक्षेमास इळ्या मदन्तः ।
(अदितिः ० १८७) ३।५९।३ (गाथिनो विश्वामित्रः ।
मित्रः)
अनमीवास इळ्या ... ।
[१९१] ३।५४।२२ (प्रजापतिर्वैश्वामित्रः प्रजापतिर्वाच्यो वा ।
विश्वे देवाः)
समिषो दिहीह्यस्मश्च १क् सं मिमीहि अवांसि ।
(अग्निः ७९१) ५।४।२ (वसुधुत आत्रेयः । अग्निः)
(इन्द्रः १८७३) ६।१९।३ (भरद्वाजो बार्हस्पत्यः । इन्द्रः)
अस्मश्च १क् सं मिमीहि अवांसि ।
[१९२-२१३] ३।५५।१-२२ महद्देवानामसुरत्वमेकम् ।
(इन्द्रः २६१७) १०।५५।४ (बृहदुक्थो वामदेव्यः । इन्द्रः)
महन्महत्या असुरत्वमेकम् ।
[२००] ३।५५।९ (प्रजापतिर्वैश्वामित्रः प्रजापतिर्वाच्यो वा ।
विश्वे देवाः)

- अन्तर्महोश्वरति रोचनेन ।
(अग्निः १५०७) १०।४।२ (त्रित आप्यः । अग्निः)
अन्तर्महोश्वरति रोचनेन ।
[२०४] ३।५५।१३ (प्रजापतिर्वैश्वामित्रः प्रजापतिर्वाच्यो वा ।
विश्वे देवाः)
अन्यस्या वत्सं रिहती मिमाय कया भुवा नि दधे धेनुरूधः ।
(इन्द्रः २५०४) १०।२७।१४ (ऐन्द्रो वसुक्रः । इन्द्रः)
[२१०] ३।५५।१९ (प्रजापतिर्वैश्वामित्रः प्रजापतिर्वाच्यो वा ।
विश्वे देवाः)
देवस्त्वष्टा सविता विश्वरूपः ।
(आयुर्वेदः १९५८) १०।१०।५ (यमी वैवस्वती ऋषिका ।
यमः)
[२१२] ३।५५।२१ इमां च न पृ विश्वधाया उप
ति हितमित्रो ।
न राजा । पुरःसदः शर्मसदो । तेषां ... ।
(अग्निः २०७) १।७३।३ (पराशरः शाक्यः । अग्निः)
देवो न यः पृथिवीं... राजा । पुरःसदः... वीरा... ।
[२१६] ३।५६।३ (प्रजापतिर्वैश्वामित्रः प्रजापतिर्वाच्यो वा ।
विश्वे देवाः)
स रेतोधा वृषभः शश्वतीनाम् ।
(आयुर्वेदः ९९०) ७।१०।१६ (मैत्रावरुणिर्वसिष्ठः
(वृष्टिकामः), कुमार आग्नेयो वा । पर्जन्यः)
[२१८] ३।५६।५ = (१८०) ३।५४।११ त्रिरा दिवो विदधे
पत्यमानाः (११ पत्यमानः) ।
[२२०] ३।५६।७ राजाना मित्रावरुणा सुपाणी ।
(अग्निः १९३) १।७१।९ (पराशरः शाक्यः । अग्निः)
[२२२] ३।८।८ (गाथिनो विश्वामित्रः । विश्वे देवाः)
आदित्या रुद्रा वसवः सुनीथा ।
(४६२) ७।३५।१४ (मैत्रावरुणिर्वसिष्ठः । विश्वे देवाः)
आदित्या रुद्रा वसवो जुषन्त (इदं ब्रह्म) ।
(७१८) १०।६६।१२ (वसुकर्णो वासुकः । विश्वे देवाः)
— रुद्रा वसवः सुदानवः (इमा ब्रह्म) ।

ऋग्वेदस्य चतुर्थं मण्डलम् ।

- [१२९] ४।५५।१ (वामदेवो गौतमः । विश्वे देवाः)
आवाभूमी अदिवे त्रासीथा नः ।

- (अदितिः ० ३२८) ७।६१।४ (मैत्रावरुणिर्वसिष्ठः ।
मित्रावरुणौ)

- [२३१] ४।५५।३ (वामदेवो गौतमः । विश्वे देवाः)
 उभे यथा नो अहनी निपाते ।
 (आयुर्वेदः २२८५) १०।७६।१ (जरत्कर्णः सर्प ऐरा-
 वतः । प्रावाणः)
 — अहनी सचाभुवा ।
 [२३४] ४।५५।६ समुद्रं न संचरणे सनिष्यवः ।
 (इन्द्रः ८०६) १।५६।२ (सव्य आक्षिरसः । इन्द्रः)
 [२३५] ४।५५।७ = (६३) १।१०६।७
 [, ,] ४।५५।७ नहि मित्रस्य वरुणस्य भ्रासिम् ।
 (आयुर्वेदः ९०१) १०।३०।१ (कवष ऐल्लषः । आपः,
 अपां नपात् वा)
 महीं मित्रस्य ... ।

- [२३७] ४।५५।९ (वामदेवो गौतमः । विश्वे देवाः)
 उषो मघोन्या वह ।
 (उषाः ११६) ५।७९।७ (सत्यध्रवा आत्रेयः । उषाः)
 ["] ४।५५।९ अस्मभ्यं वाजिनीवति ।
 (उषा ३६) १।९२।१३ (गोतमो राहूगणः । उषा)
 [२३८] ४।५५।१० (वामदेवो गौतमः । विश्वे देवाः)
 तत् सु नः सविता भगो वरुणो मित्रो अर्यमा ।
 (अदितिः ० ५६) ८।१८।३ (हरिम्बिठिः काण्वः ।
 आदिश्याः)
 (अग्निः ३१) १।२६।४ (शुनःशेष आजीगर्तिः । अग्निः)
 वरुणो मित्रो अर्यमा ।

ऋग्वेदस्य पञ्चमं मण्डलम् ।

- [२३९] (वसूयव आत्रेयः । विश्वे देवाः)
 देवातः सर्वथा विज्ञा ।
 (मरुतः ४०) १।३९।५ (कण्वो घौरः । मरुतः)
 [२४१] ५।४१।२ (भौमोऽग्निः । विश्वे देवाः)
 ते नो मित्रो वरुणो अर्यमायुरिन्द्र ऋभुक्षा मरुतो जुषन्त ।
 १।१६२।१ (दीर्घतमा औचध्यः । अश्वः)
 मा नो मित्रो वरुणो अर्यमायुरिन्द्र ऋभुक्षा मरुतः परि ख्यन्त ।
 [२४५] ५।४१।६ (अत्रिभौमः । विश्वे देवाः)
 प्र वो वायुं रथयुजं ऋणुध्वं ... अर्कैः ।
 ... पुरंधीः ॥
 (६८२) १०।६४।७ (गयः प्लातः । विश्वे देवाः)
 प्र वो वायुं रथयुजं पुरंधिं स्तोमैः ऋणुध्वम् ।
 [२४७] ५।४१।८ (अत्रिभौमः । विश्वे देवाः)
 वनस्पतीरोषधी राय एषे ।
 (२७४) ५।४२।१६ वनस्पतीरोषधी राये अश्याः ।
 [२४९] ५।४१।१० गृणीते अग्निरेतरी न शूचैः ।
 (अग्निः १००९) ६।१२।४ (बार्हस्पत्यो भरद्वाजः ।
 अग्निः)
 सास्माकेभिरेतरी न शूचैरग्निः ।
 [२५५] ५।४१।१६ (अत्रिभौमः । विश्वे देवाः)
 मा नोऽहिर्बुध्न्यो रिषे धाद् ।
 ७।३४।१७ (वसिष्ठो मैत्रावरुणिः । अहिर्बुध्न्यः)

- [२६१] ५।४२।३ चन्द्राणि देवः सविता सुवाति ।
 (४८८) ७।४०।१ (मैत्रावरुणिर्वसिष्ठः । विश्वे देवाः)
 यदय देवः सविता सुवाति ।
 [२७४] ५।४२।१६ = (२४७) ५।४१।८ (भौमोऽग्निः ।
 विश्वे देवाः)
 ["] ५।४२।१६ (अत्रिभौमः । विश्वे देवाः)
 देवोदेवः सुहवो भूत मघं मा नो माता पृथिवी दुर्मतौ धात् ।
 (२९१) ५।४३।१५ (भौमोऽग्निः । विश्वे देवाः)
 [२७५] ५।४२।१७ = (२९२) ५।४३।१६ (भौमोऽग्निः ।
 विश्वे देवाः)
 उरौ देवा अनिवाधे स्याम ।
 [२७६] ५।४२।१८ (अत्रिभौमः । विश्वे देवाः)
 = (२९३) ५।४३।१७ (भौमोऽग्निः । विश्वे देवाः)
 = (अश्विनौ २९१) ५।७६।५ (अत्रिभौमः । अश्विनौ)
 = (" २९६) ५।७७।५ (अत्रिभौमः । अश्विनौ)
 समाश्विनोर्वसा नूतनेन मयोभवा सुप्रणीती गमेम ।
 आ नो रथि बहूतमोत वीराना विश्वान्यमृता सौभगानि ॥
 [२८६] ५।४३।१० (अत्रिभौमः । विश्वे देवाः)
 विश्वे गन्त मरुतो विश्व ऊती ।
 (५९२) १०।३५।१३ (लुषो धानाकः । विश्वे देवाः)
 विश्वे अय मरुतो विश्व ऊती ।

[२८७] ५।४३।११ (अत्रिभौमः । विश्वे देवाः)

आ नो दिवो बृहतः पर्वतादा ।

(अश्विनौ २९०) ५।७६।४ (अत्रिभौमः । अश्विनौ)

[२९१] ५।४३।१५ = (२७४) ५।४२।१६

[२९२] ५।४३।१६ = (२७५) ५।४२।१७

[२९३] ५।४३।१७ = (२७६) ५।४२।१८ =

(अश्विनौ २९१) ५।७६।५ = (अश्विनौ २९६) ५।७७।५

[३०७] ५।४४।१४ यो जागार तमृचः कामयन्ते यो

जागार तमु सामानि यन्ति । यो जागार तमयं सोम

आह ॥ (३०८) अग्निर्जागार तमृचः ...

अग्निर्जागार... । अग्निर्जागार तमयं ... ॥

[३०७-८] ५।४४।१४-१५ (काश्यपोऽवत्सारः । विश्वे देवाः)

तवाहमस्मि सख्ये न्योकाः ।

[३१२] ५।४५।४ (सदापृण आत्रेयः । विश्वे देवाः)

इन्द्रा न्वमी अवसे हुवथ्यै ।

(इन्द्रः ३०४८) ६।५९।३ (भरद्वाजो बार्हस्पत्यः । इन्द्राग्नी)

... .. अवसेह वज्रिणा ।

[३१८] ५।४५।१० (सदापृण आत्रेयः । विश्वे देवाः)

आ सूर्यो अरुहन्नुक्रमर्णः ।

(अदितिः ३१२) ७।६०।४ (वसिष्ठो मैत्रावरुणिः ।

मित्रावरुणौ)

[३२२] ५।४६।३ (प्रतिक्षत्र आत्रेयः । विश्वे देवाः)

स्वः पृथिवीं घां अपः ।

हुवे विष्णुं पूषणं ब्रह्मणस्पतिं भगं ।

(५०६) ७।४४।१ (वसिष्ठो मैत्रावरुणिः । दधिका-
श्व्युषोऽग्निभगेन्द्रविष्णुपूषब्रह्मणस्पत्यादित्ययावापृथिव्याप्स्वः)

भगमृतये हुवे । इन्द्रं विष्णुं पूषणं

ब्रह्मणस्पतिं ... यावापृथिवी अपः स्वः ।

[३२७] ५।४६।८ (प्रतिक्षत्र आत्रेयः । देवपत्न्यः)

आ रोदसी वरुणानी शृणोतु ।

(४४५) ७।३४।२२ (वसिष्ठो मैत्रावरुणिः । विश्वे देवाः)

[३५०] ५।५१।१ (स्वत्यात्रेयः । विश्वे देवाः)

देवेभिर्हव्यदातये ।

(अग्निः ९२३) ५।२६।४ (वसूय आत्रेयः । अग्निः)

[३५१] ५।५१।२ सत्यधर्माणो अध्वरम् ।

(अग्निः १६) १।१२।७ (मेधातिथिः काण्वः । अग्निः)

सत्यधर्माणमध्वरे ।

[३५२] ५।५१।३ (स्वस्यात्रेयः । विश्वे देवाः)

प्रातर्यावभिरा गहि । देवेभिः सोमपीतये ।

(इन्द्रः ३०९७) ८।३८।७ (श्यावाश्व आत्रेयः । इन्द्राग्नी)

प्रातर्यावभिरा गतं देवेभिः... .. सोमपीतये ।

[३५३] ५।५१।८ अग्निभ्यामुषसा सजः ।

(अग्निः ९२) १।४४।१४ (प्रस्कण्वः काण्वः । अग्निः)

[३५३-५५] ५।५१।८-१० आ यादामे अत्रिबत् सुते रण ।

ऋग्वेदस्य षष्ठं मण्डलम् ।

[३६३] ६।४९।१ (ऋजिश्वा भारद्वाजः । विश्वे देवाः)

त आ गमन्तु त इह श्रुवन्तु सुक्षत्रालो वरुणो मित्रो अग्निः ।

(आयुर्वेदः ६९९१) १०।१५।५ (शङ्खो यामायनः । पितरः)

त आ गमन्तु त इह श्रुवन्तु ।

(४०९) ६।५१।१० (ऋजिश्वा भारद्वाजः । विश्वे देवाः)

सुक्षत्रालो वरुणो मित्रो अग्निः ।

[३६६] ६।४९।४ प्र वायुमच्छा बृहती मनीषा ।

(आयुर्वेदः १०२६) ३।३३।५ (विश्वामित्रो गाथिनः । नभः)

प्र सिन्धुमच्छा बृहती मनीषा ।

[३६७] ६।४९।५ येन नरा नासत्येषयध्वै वर्तियथस्तनयाय-

रमने च ।

(अश्विनौ २०४) १।१८३।३ (अगस्त्यो मैत्रावरुणिः ।

अश्विनौ)

[३७२] ६।४९।१० बृहन्तमृष्वमजरं सुषुम्नम् ।

(इन्द्रः १२८८) ३।३२।७ (विश्वामित्रो गाथिनः । इन्द्रः)

बृहन्तमृष्वमजरं युवानम् ।

[३७४] ६।४९।१२ प्र वीराय प्र तवसे तुराय ।

(इन्द्रः २०११) ६।३१।१ (सुहोत्रो भारद्वाजः । इन्द्रः)

महे वीराय ।

[३७५] ६।४९।१३ यो रजांसि बिममे पार्थिवानि ।

१।१६०।४ (दीर्घतमा औत्थयः । यावापृथिवी)

बि यो ममे रजसी सुकतु ।

[३७६] ६।४९।१४ तत् पर्वतस्तत् सविता जनो धातु ।

(६६) १।१०७।३ तद्वर्मा तत् सविता ... ।

[३८१] ६।५०।४ अथा हुतासो वसवोऽष्टाहाः ।

(३९२) ६।५०।१५ मा हुतासो वसवोऽष्टाहाः ।

- [१८४] ६।५०।७ (ऋजिश्वा भारद्वाजः । विश्वे देवाः)
विश्वस्य स्थातुर्जगतो जनित्रीः ।
(अदितिः ० ११०) ७।६०।२ (वसिष्ठो मैत्रावरुणिः ।
मित्रावरुणौ)
विश्वस्य स्थातुर्जगतश्च गोपाः ।
(६६८) १०।६३।८ (गयः स्नातः । विश्वे देवाः)
... .. जगतश्च मन्तवः ।
- [१८५] ६।५०।८ आ नो देवः सविता त्रायमाणः ।
(४५८) ७।३५।१० (मैत्रावरुणिर्वसिष्ठः । विश्वे देवाः)
शं नो देवः ।
- ["] ६।५०।८ व्यूर्णुते दाशुषे वार्याणि ।
(उषा ११५) ५।८०।६ (सत्यश्रवा आत्रेयः । उषाः)
व्यूर्ण्वती दाशुषे ।
- [१८६] ६।५०।९ उत त्वं सूनो सहस्रो नो अद्य ।
(अग्निः ११७) १।५८।८ (नोधा गौतमः । अग्निः)
अच्छिन्ना सूनो ।
- [१९०] ६।५०।१३ (ऋजिश्वा भारद्वाजः । विश्वे देवाः)
भगो ... । त्वष्टा देवेभिर्जनिभिः सजोषाः ।
(६८५) १०।६४।१० (गयः स्नातः । विश्वे देवाः)
त्वष्टा देवेभिर्जनिभिः पिता वचः । ... भगो ।
- [१९१] ६।५०।१५ (ऋजिश्वा भारद्वाजः । विश्वे देवाः)
एवा भरद्वाजा अभ्यर्चन्त्यकैः ।
(इन्द्रः २१८५) ७।२३।६ (वसिष्ठो मैत्रावरुणिः । इन्द्रः)
एवा ... वसिष्ठोऽसौ अभ्यर्चन्त्यकैः ।
- [१९४] ६।५१।२ ऋजु मर्तेषु वृजिना च पश्यन् ।
(अग्निः ६४३) ४।११।७ (वामदेवो गौतमः । अग्निः)
- [१९७] ६।५१।५ (ऋजिश्वा भारद्वाजः । विश्वे देवाः)
विश्व आदित्या अदिते सजोषाः ।
(६७५) १०।६३।१७ = १०।६४।१७ (गयः स्नातः ।
विश्वे देवाः)
... .. अदिते मनीषी ।
- ["] ६।५१।५ अस्मभ्यं शर्म बहुलं वि यन्त ।
(मरुतः २७३) ५।५५।२ (श्यावाश्व आत्रेयः । मरुतः)
... वि यन्तन् ।
- [१९९] ६।५१।७ (ऋजिश्वा भारद्वाजः । विश्वे देवाः)
मा व एनो अभ्यर्कृतं भुजेम मा तत्कर्म वसवो यच्चयध्वे ।
(अदितिः ४२) ७।५१।२ (वसिष्ठो मैत्रावरुणिः । आदित्याः)
मा वो भुजेमाम्यजातमेनो मा तत्कर्म वसवो यच्चयध्वे ।

- [४००] ६।५१।८ नमो दाधार पृथिवीमुत धाम् ।
(अदितिः ० १८५) ३।५९।१ (विश्वामित्रो गाथिनः । मित्रः)
मित्रो दाधार ... ।
- [४०२] ६।५१।१० = (३६३) ६।४९।१ सुक्षत्रासो वरुणो
मित्रो अग्निः ।
- [४०७] ६।५१।१५ यूयं हि ष्ठा सुदानवः ।
(अदितिः ० ९०८) १।१५।२ (मेधातिथिः काण्वः ।
[ऋतवः] = मरुतः)
(५६७) ८।८३।९ (कुसीदी काण्वः । विश्वे देवाः)
- ["] ६।५१।१५ (ऋजिश्वा भारद्वाजः । विश्वे देवाः)
इन्द्रज्येष्ठा अभिघवः ।
(५६७) ८।८३।९ (कुसीदी काण्वः । विश्वे देवाः)
- [४०८] ६।५१।१६ (ऋजिश्वा भारद्वाजः । विश्वे देवाः)
स्वस्तिगामनेहसम् ।
(इन्द्रः २३१८) ८।६२।१६ (प्रियमेध आत्रिरसः । इन्द्रः)
- [४११] ६।५२।३ ब्रह्मद्विषे तपुषि हेतिमस्य ।
(इन्द्रः १२५४) ३।३०।१७ (विश्वामित्रो गाथिनः इन्द्रः)
- [४१३] ५।५२।५ पश्येम नु सूर्यमुच्चरन्तम् ।
(इन्द्रः १५९१) ४।२५।४ (वामदेवो गौतमः । इन्द्रः)
पश्यात् सूर्य ... ।
- [४१५] ६।५२।७ = (१६५) २।४१।१३
- [४२०] ६।५२।१२ इमं नो अग्ने अध्वरम् ।
(अग्निः ७९७) ५।४।८ (वसुश्रुत आत्रेयः । अग्निः)
अस्माकमग्ने अध्वरम् ।
- [४२०] ६।५२।१२ (ऋजिश्वा भारद्वाजः । विश्वे देवाः)
चिकित्वा न् दैव्यं जनम् ।
(अग्निः १३५१) ८।४४।९ (विरूप आत्रिरसः । अग्निः)
- [४२१] ६।५२।१३ (ऋजिश्वा भारद्वाजः । विश्वे देवाः)
आसद्यास्मिन् बर्हिषि मादयध्वम् ।
(इन्द्रः ३१७१) ६।६८।११ (भरद्वाजो बार्हस्पत्यः ।
इन्द्रावरुणौ)
... .. मादयेधाम् ।
(अयुर्वेदः १०८४) १०।१७।८ (देवश्रवा यामायनः । सरस्वती)
... .. मादयस्व ।
- [४२४] ६।५२।१६ अग्नीपर्जन्याववतं धियं मे ।
(सोमः १२२१) २।४०।५ (गृत्समदः शौनकः । सोमापूषणौ)
सोमापूषणाववतं धियं मे ।
- [४२५] ६।५२।१७ स्तीर्णे बर्हिषि समिधाने अग्नौ ।
(अग्निः ६८५) ४।६।४ (वामदेवो गौतमः । अग्निः)

ऋग्वेदस्य सप्तमं मण्डलम् ।

[४४५] ७।३४।२२ = (३२७) ५।४६।८

आ रोदसी वरुणानी शृणोतु ।

[४४८] ७।३४।२५ (मैत्रावरुणिर्वसिष्ठः । विश्वे देवाः) =

(मरुतः ३६९) ७।५६।२५ (मैत्रावरुणिर्वसिष्ठः । मरुतः)

तन्न इन्द्रो वरुणो मित्रो अग्निरापो ओषधीर्वनितो जुषन्त ।

शर्मन्त्स्याम मरुतामुपस्थे यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥

(७१५) १०।६६।९ (वसुकर्णो वासुकः । विश्वे देवाः)

आपो ओषधीर्वनितानि यज्ञिया ।

[४५८] ७।३५।१० = (३८५) ६।५०।८

देवः सविता त्रायमाणः ।

[४६२] ७।३५।१४ (वसिष्ठो मैत्रावरुणिः । विश्वे देवाः)

आदित्या रुद्रा वसवो जुषन्त ।

(आयुर्वेदः २२६६) ३।८।८ (गाथिनो विश्वामित्रः ।

यूपाः, विश्वे देवा वा)

... रुद्रा वसवः सुनीथा ।

(७१८) १०।६६।१२ (वसुकर्णो वासुकः । विश्वे देवाः)

—वसवः सुदानवः ।

दिव्याः पार्थिवासो गोजाता उत ये यज्ञियासः ।

(१२११) १०।५३।५ (अग्निः सौचीकः । देवाः)

गोजाता ।

पार्थिवात् पार्थिवात् दिव्यात् ... ।

[४६३] ७।३५।१५ (मैत्रावरुणिर्वसिष्ठः । विश्वे देवाः)

देवानां ... मनोर्यजत्रा अमृता क्रतज्ञाः ।

ते नो रासन्तामुरुगायमथ ।

(७०५) १०।६५।१४ (वसुकर्णो वासुकः । विश्वे देवाः)

देवाः ... मनोर्यजत्रा अमृता क्रतज्ञाः ।

(७०६) १०।६५।१५ = १०।६६।१५

(वसुकर्णो वासुकः । विश्वे देवाः)

देवान् ... । ते नो रासन्तामुरुगायमथ ।

[४६५] ७।३६।२ जनं च मित्रो यतति भुवाणः ।

(अदितिः ० १८५) ३।५९।१ (गाथिनो विश्वामित्रः । मित्रः)

मित्रो जनान् यातयति भुवाणः ।

[४७७] ७।३७।५ (वसिष्ठो मैत्रावरुणिः । विश्वे देवाः)

कदा न इन्द्र राय आ दशस्थेः ।

(इन्द्रः ९९०) ८।९७।१५ (रेभः काश्यपः । इन्द्रः)

[४८४] ७।३९।४ (वसिष्ठो मैत्रावरुणिः । विश्वे देवाः)

ते हि यज्ञेषु यज्ञियास ऊमाः ।

(मरुतः ४१४) १०।७७।८ (स्यूमराश्मिर्भार्गवः । मरुतः)

[४८७] ७।३९।७ = ७ ४०।७ (मैत्रावरुणिर्वसिष्ठः । विश्वे देवाः)

नू रोदसी अभिष्टुते वसिष्ठैर्क्रतावानो वरुणो मित्रो अग्निः ।

यच्छन्तु चन्द्रा उपमं नो अकं यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ।

(अदितिः ५६०) ७।६२।३ (वसिष्ठो मैत्रावरुणिः । सूर्यः)

क्रतावानो वरुणो मित्रो अग्निः ।

यच्छन्तु चन्द्रा उपमं नो अकं ॥

[४८८] ७।४०।१ यदय देवः सविता सुवाति ।

(२६२) ५।४२।३ चन्द्राणि देवः सविता सुवाति ॥

[४९१] ७।४०।४ सुहवा देव्यदितिरनर्वा ।

(सोमः १२२२) २।४०।६ (गृत्समदः शौनकः । अदितिः)

अवतु देव्य ... ।

[४९२] ७।४०।५ विष्णोरेषस्य प्रभृथे हविर्भिः ।

(मरुतः २०९) २।३४।११ विष्णोरेषस्य प्रभृथो हवामहे

[४९५] ७।४२।१ प्र ब्रह्माणो अङ्गिरसो नक्षन्त ।

(अदितिः ० ४३) ७।५२।३ तुरप्यवोऽङ्गिरसो नक्षन्त

[४९७] ७।४२।३ (वसिष्ठो मैत्रावरुणिः । विश्वे देवाः)

समु वो यज्ञं महयन् नमोभिः ।

(अदितिः ० ३२६) ७।६१।६ (मैत्रावरुणिर्वसिष्ठः । मित्रावरुणं)

समु वा यज्ञं महयं ... ।

[४९९] ७।४२।५ इमं नो अग्ने अश्वरं जुषस्व ।

(अग्निः ७९७) ५।४।८ (वसुभृत आत्रेयः । अग्निः)

अस्माकमग्ने अश्वरं जुषस्व ।

ऋग्वेदस्याष्टमं मण्डलम् ।

[५१०] ८।२५।११ (विश्वमना वैश्वः । विश्वे देवाः)

अरिण्यन्तो नि पायुभिः सचेमहि ।

(अग्निः ४०२) २।८।६ (गृत्समदः शौनकः । अग्निः)

अरिण्यन्तः सचेममहि प्याम ।

- [५१४] ८।१७।३ (मनुर्वैवस्वतः । विश्वे देवाः)
मरुसु विश्वभानुषु ।
(अग्निः २४५०) ४।१।३ (वामदेवो गोतमः । अग्नि-
र्वरुणश्च)
- [५१५] ८।१७।४ यन्ता नोऽवृकं छर्दिः ।
(उषाः १८) १।४८।१५ (प्रस्कण्वः काण्वः । उषाः)
प्र नो यच्छतादवृकं पृथु छर्दिः ।
- [५१६] ८।१७।१० देवासो अस्याप्यम् ।
(५०) १।१०५।१३ देवेष्वस्याप्यम् ।
- [५१७] ८।१७।१३ देवंदेवं वोऽवसे देवंदेवं... देवंदेवं हुवेम ।
(इन्द्रः ३०६) ८।११।१९ (पर्वतः काण्वः । इन्द्रः)
देवंदेवं वोऽवसे इन्द्रम् ।
- [„] ८।१७।१३ देवंदेवं हुवेम वाजसातये ।
(इन्द्रः १७४१) ५।३५।६ (प्रभूवसुराग्निरसः । इन्द्रः)
पूर्यं हवन्ते वाजसातये ।
- [५१८] ८।१७।१६ प्र स क्षयं तिरते वि महीरिषो यो वो
वराय दासति ।
(मरुतः ३८४) ७।५९।२ (मैत्रावरुणिर्वसिष्ठः । मरुतः)
- [„] ८।१७।१६ प्र प्रजाभिर्जायते धर्मेणस्पति ।
६।७०।३ (बार्हस्पत्यो भरद्वाजः । यात्रापृथिवी)
- [„] ८।१७।१६ अरिष्टः सर्वं पृथते ।
१।४१।२ (कण्वो घौरः । वरुणमित्रार्यमणः)
- [५१९] ८।१७।१७ अर्यमा मित्रो वरुणः सरातयो ।
(अग्निः २४६) १।७९।३ (गोतमो राहुगणः । अग्निः)
अर्यमा ... परिज्मा ।
- [५२०] ८।१७।१९ यद्वय सूर्य उयति ।
(अदितिः ० ४४) ७।६६।४ यद्वय सूर उदिते ।
- [५२१] ८।१७।२१ यद्वय सूर उदिते ।
(अदितिः ० ४४) ७।६६।४ (मैत्रावरुणिर्वसिष्ठः । आदित्याः)
- [५२२] ८।२८।१ वरुणो मित्रो अर्यमा ।
(अग्निः ३१) १।२६।४ (शुनःशेष आजीगर्तिः । अग्निः)
- [५२३] ८।२८।५ सप्तो अग्नि श्रियो धिरे ।
(अग्निः ४०१) २।८।५ (गृत्समदः शौनकः । अग्निः)
विश्वा अग्नि श्रियो वधे ।
- [५२४] ८।२९।२ अन्तर्देवेषु मेधिरः ।

- (५१) १।१०५।१४ देवो देवेषु मेधिरः ।
- [५२५] ८।२९।९ सप्तारा सप्तिरासुती ।
(अदितिः ० २०३) १।१३६।१ (परच्छेपो देवोदासिः ।
मित्रावरुणौ)
- घृतासुती ।
- [५२६] ८।३०।१ अर्भको देवासो न कुमारकः ।
(इन्द्रः २३१७) ८।६९।१५ (प्रियमेध आग्निरसः ।
इन्द्रः)
- अर्भको न कुमारकः ।
- [५२७] ८।३०।३ त उ नो अग्नि वोचत ।
(मरुतः १०७) ८।२०।२६ (सोमरिः काण्वः । मरुतः)
तेन नो अग्नि वोचत ।
- [५२८] ८।६९।११ (प्रियमेध आग्निरसः । (अर्धर्च) विश्वे देवाः,
(उत्तरार्धः) वरुणः)
- विश्वे देवा अमस्यत । वस्सं संशिश्वरीरिव ।
(सोमः ११५) ९।१४।३ (असितः काश्यपो देवलो वा ।
पवमानः सोमः)
- विश्वे ।
- (सोमः ४०१) ९।६१।१४ (अमहीयुराग्निरसः । पवमानः
सोमः)
- वस्सं ।
- [५२९] ८।८३।२ (कुसीदी काण्वः । विश्वे देवाः)
वरुणो मित्रो अर्यमा ।
(अग्निः ३१) १।२६।४ (शुनःशेष आजीगर्तिः । अग्निः)
- [५३०] ८।८३।३ यूयमृतस्य रथ्यः ।
(अदितिः ० ५२) ७।६६।१२ (मैत्रावरुणिर्वसिष्ठः । आदित्यः)
- [५३१] ८।८३।४ वामं नो अस्त्वर्थमन् वामं वरुण शंस्यम् ।
(अदितिः ० ६८) ८।१८।२१ (इरिम्बिठिः काण्वः ।
आदित्याः)
- अनेदो मित्रार्यमन् नृवद् वरुण शंस्यम् ।
- [५३२] ८।८३।९ यूयं हि षा सुदानवः ।
(अदितिः ० ९०८) १।१५।२ (मेधातिथिः काण्वः ।
[ऋतवः] मरुतः)
- (४०७) ६।५१।१५ (ऋजिष्वा भारद्वाजः । विश्वे देवाः)

ऋग्वेदस्य दशमं मण्डलम् ।

[५६६] १०।३।१२ (कवष ऐलूषः । विश्वे देवाः)

ऋतस्य पथा नमसा विवासेत् ।

(अग्निः २८४) १।१२८।२ (परच्छेपो देवोदासिः ।
अग्निः)

... नमसा हविष्मता ।

[५७४] १०।३।१७ (कवष ऐलूषः । विश्वे देवाः)

किं स्विद्वनं क उ स वृक्ष आस यतो द्यावापृथिवी निष्टतक्षुः ।

१०।८।१४ (विश्वकर्मा भौवनः । विश्वकर्मा)

[५७५] १०।३।१८ नैतावदेना परो अन्यदस्ति ।

(इन्द्रः २५११) १०।२७।२१ (ऐन्द्रो वयुक् । इन्द्रः)
श्रव इदेना परो — ।

[५८१] १०।३।२ (लुशो धानाकः । विश्वे देवाः)

दिवस्पृथिव्योरव आ वृणीमहे ।

... भद्रं सोमः ... ।

२।२६।२ (गुत्समदः शौनकः । ब्रह्मणस्पतिः)

... भद्रं मनः ... । ब्रह्मणस्पतेरव आ वृणीमहे ।

[५८२-९१] १०।३।३-१२ स्वस्त्यग्निं समिधानमीमहे ।

[५८५] १०।३।६ आयुक्षातामश्विना तूतुजि रथम् ।

(अश्विनौ १६३) १।१५७।१ (दीर्घतमा औचथ्यः ।
अश्विनौ)

... यातवे रथम् ।

[५८९] १०।३।१० इन्द्रं मित्रं वरुणं सातये भगम् ।

(६६९) १०।६३।९ (गयः प्लातः । विश्वे देवाः)

अग्निं मित्रं ... ।

[५९०] १०।३।११ त आदित्या आ गता सर्वतातये ।

(५८) १।१०६।२ (कुत्स आङ्गिरसः । विश्वे देवाः)

[५९१] १०।३।१२ पथे तोकाय तनयाय जीवसे ।

३।५३।१८ (गाथिनो विश्वामित्रः । रथाङ्गानि)
वलं तोकाय ... ।

[५९२] १०।३।१३ विश्वे अय मरुतो विश्व ऊती ।

(२८६) ५।४३।१० (भौमोऽग्निः । विश्वे देवाः)

विश्वे गन्त मरुतो ... ।

["] १०।३।१३ विश्वे नो देवा अवसा गमन्तु ।

(२५) १।८९।५ (गोतमो राहुगणः । विश्वे देवाः)

... अवसा गमन्तिह ।

[५९३] १०।३।१४ (लुशो धानाकः । विश्वे देवाः)

यं देवासोऽवथ वाजस्तातो यं ।

(६७४) १०।६३।१४ (गयः प्लातः । विश्वे देवाः)

[५९४] १०।३।११ द्यावाक्षामा वरुणो मित्रो अर्यमा ।

(अग्निः ७१) १।३६।४ (कण्वो घोरः । अग्निः)

देवासस्त्वा वरुणो .. ।

["] १०।३।१=(५०६) ७।४४।१

इन्द्रं... आदित्यान् द्यावापृथिवी अपः स्वः ।

[५९५-६०५] १०।३।२-१२ तदेवानामवो अद्या वृणीमहे ।

अहं होता न्यसीदं यजीयान् ।

[६०९] १०।५।२ (सौर्वाकोऽग्निः । विश्वे देवाः)

(अग्निः ७६०) ५।१।६ (बुधगविष्टिरावात्रेयौ । अग्निः)

[६१०-११] १०।५।३-४ अथा (४मां) देवा दधिरे

हव्यवाहम् ।

(अग्निः ११६९) ७।११।४ (मैत्रावरुणिर्वसिष्ठः । अग्निः)

[६१२] १०।५।५ अथेमा विश्वाः पृतना जयाति ।

(इन्द्रः २३५१) ८।९६।७ (तिरश्चीराङ्गिरसः, धुताने
वा मारुतः । इन्द्रः)

... जयाति ।

[६१३] १०।५।६ (सौर्वाकोऽग्निः । विश्वे देवाः)

त्रीणि शता त्री सहस्राण्यग्निं त्रिंशच्च देवा नव चासपर्यन् ।

औक्षन् घृतैरस्तृणन् बर्हिरेस्मा आदिद्धोतारं न्यसादयन्त ॥

(अग्निः ५०८) ३।९।९ (गाथिनो विश्वामित्रः । अग्निः)

[६१८] १०।५।५ (बृहदुक्थो वामदेव्यः । विश्वे देवाः)

तनूषु विश्वा भुवना नि येमिरे ।

(इन्द्रः १६१) ८।३।६ (मेधातिथिः काण्वः । इन्द्रः)

इन्द्रे ह विश्वा— ।

[६२०] १०।५।९ स्वस्तिमिरिति दुर्गाणि विश्वा ।

(अग्निः ३६२) १।१८९।२ (अगस्त्यो मैत्रावरुणः
अग्निः)

[६२३] १०।५।३ पितॄणां च मम्मभिः ।

- ८।४१।२ (नामाकः काण्वः । वरुणः)

- [६२४] १०।५७।४ उयोक् च सूर्यं रथो ।
 (आयुर्वेदः ८६८) १।२३।२१ (मेधातिथिः काण्वः ।
 आपः)
 (आयुर्वेदः ८८५) १०।९।७ (त्रिशिरास्त्वाष्ट्रः, सिन्धुद्वीप
 आम्बरीषो वा । आपः)
 [६३७-३८] १०।६१।१०-११ (नाभानेदिहो मानवः । विश्वे देवाः)
 मक्षू कनायाः सख्यं नवरवाः (११ नवीयः) ।
 [६३८] १०।६१।११ शुचि यत् ते रेकण आयजन्त सबर्हु-
 चायाः पय उन्नियायाः ।
 (७१) १।१२।१५ (कक्षीवान् दैर्घतमस औशजिः ।
 विश्वे देवा इन्द्रो वा)
 [६४८] १०।६१।२२ रक्षा च नो मधोनः पाहि सूरिन् ।
 (इन्द्रः ७९६) १।५४।११ (सव्य आत्रिरसः । इन्द्रः)
 [६६०] १०।६१।७ व्रजं गोमन्तमश्विनम् ।
 (सोमः ११६४) १०।२५।५ (ऐन्द्रो विमदः, प्राजा-
 पत्यो वा, वासुको वसुकृद्वा । सोमः)
 ["] १०।६१।७ अथो देवेष्वकृत ।
 (इन्द्रः ६१२) ८।६५।१२ (प्रगाथः काण्वः । इन्द्रः)
 [६६४] १०।६३।४ (गयः स्नातः । विश्वे देवाः)
 देवासो अमृतत्वमानशुः ।
 (अग्निः १६२३) १०।५३।१० (देवाः । अग्निः)
 येन देवासो — ।
 [६६८] १०।६३।८ विश्वस्य स्थातुर्जगतश्च मन्तवः ।
 (३८४) ६।५०।७ विश्वस्य स्थातुर्जगतो जनित्रीः ।
 [६६९] १०।६३।९ = (५८९) १०।३५।१०
 अग्नि (१० इन्द्रं) मित्रं वरुणं सातये भगं ।
 [६७३] १०।६३।१३ अरिष्टः स मतो विश्व एषते ।
 १।४।१२ (कण्वो घौरः । वरुणमित्रार्यमणः)
 अरिष्टः सर्व एषते ।
 ["] १०।६३।१३ प्र प्रजाभिर्जायते धर्मणस्परि ।
 ६।७०।३ (बार्हस्पत्यो भरद्वाजः । यावापृथिवी)
 [६७४] १०।६३।१४ = (५९३) १०।३५।१४ यं देवासोऽवथ
 वाजसातौ यं ।
 [६७५] १०।६३।१७ = १०।६४।१७ (गयः स्नातः । विश्वे
 देवाः)
 एवा स्नातेः सुसुखीवृधो विश्व आदित्या अदिते मनीषी ।

- ईशानासो नरो अमर्त्येनास्तावि जनो दिव्यो गयेन ।
 [६७५] १०।६३।१७ विश्व आदित्या अदिते मनीषी ।
 (३९७) ६।५१।५ विश्व आदित्या अदिते सत्रोषाः ।
 [६७९] १०।६४।४ (गयः स्नातः । विश्वे देवाः)
 कविः ... । अहिः शृणोतु बुध्न्यो हवीमनि ।
 (७३२) १०।९२।१२ (शार्यातो मानवः । विश्वे देवाः)
 कविरहिः ... ।
 [६८२] १०।६४।७ प्र वो वायुं रथयुजं पुरंधि ।
 (२४५) ५।४१।६ (भौमोऽग्निः । विश्वे देवाः)
 ... रथयुजं कृणुध्वं । .. पुरंधीः ।
 [६८५] १०।६४।१० त्वष्टा देवेभिर्जनिभिः पिता वचः ।
 (३९०) ६।५०।१३ त्वष्टा देवेभिर्जनिभिः सजोषाः ।
 [६८६] १०।६४।११ रणवः संदष्टो पितुर्मौ हव क्षयः ।
 (अग्निः ३३२) १।१४४।७ (दीर्घतमा औचथ्यः । अग्निः)
 [६९०] १०।६४।१५ (गयः स्नातः । विश्वे देवाः)
 प्रावा यत्र मधुपुदुच्यते बृहद् ।
 (७५८) १०।१००।८ (दुवरयुर्वान्दनः । विश्वे देवाः)
 [६९२] १०।६५।१ (वसुकर्णो वासुकः । विश्वे देवाः)
 अग्निरिन्द्रो वरुणो मित्रो अर्यमा ।
 (अग्निः ७१) १।३६।४ (कण्वो घौरः । अग्निः)
 देवागस्ता वरुणो ... ।
 ["] १०।६५।१ आदित्या विष्णुर्मरुतः स्वर्बृहत् ।
 (७१०) १०।६६।४ इन्द्राविष्णू मरुतः ... ।
 [६९८] १०।६५।७ दिवक्षमो अग्निजिह्वा कृतावृधः ।
 (अग्निः २९) १।४४।१४ (प्रस्कण्वः वाण्वः । अग्निः)
 सुदानवोऽग्निजिह्वा कृतवृधः ।
 [७००] १०।६५।९ (वसुकर्णो वासुकः । विश्वे देवाः)
 देवा आदित्या अदिनि हवामहे ।
 (७१०) १०।६६।४ देवा आदित्या अवसे हवामहे ।
 [७०५] १०।६५।१४ = (४६३) ७।३५।१५
 मनोर्यजत्रा अमृता कृतज्ञाः ।
 [७०६] १०।६५।१५ = १०।६६।१५ (वसुकर्णो वसुकः ।
 विश्वे देवाः)
 देवान् वसिष्ठो अमृतान् ववन्धे ये विश्वा भुवनाभिः प्रतस्थुः ।
 ते नो रासन्तामुरुगायमथ यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥
 ["] १०।६५।१५ = (४६३) ७।३५।१५
 ते नो रासन्ता० ... सदा नः ।

- [७०९] १०।६६।३ = (६५) १।१०।७।२
आदित्यैर्नो अदितिः सर्म यच्छतु (२ यंसत) ।
- [७१०] १०।६६।४ = (६९२) १०।६५।१ (वसुकर्णो वासुकः।
विदे देवाः)
- ["] १०।६६।४ = (७००) १०।६५।९
- [७१५] १०।६६।९ आप ओषधीर्वनितानि यज्ञिया ।
(४४८) ७।३४।२५ आप ओषधीर्वनितो जुषन्त ।
(मरुतः ३६९) ७।५६।२५ (मैत्रावरुणिवर्षसिष्ठः। मरुतः)
- [७१८] १०।६६।१२ आदित्या रुद्रा वसवः सुदानवः ।
(२२२) ३।८।८ आदित्या रुद्रा वसवः सुनीधा ।
- [७१९] १०।६६।१३ दैव्या होतारा प्रथमा पुरोहित ।
(अग्निः १९४८) २।३।७ (गृत्समदः शौनकः । [आग्नी-
सूक्तं] देव्यो होतारौ प्रचेतसौ)
... प्रथमा विदुष्टः ।
- ["] १०।६६।१३ ऋतस्य पन्थामन्वेमि साधुया ।
(उषा ७४) १।१२४।३ (कक्षीवान् दैर्घतमस औशिजः।
उषाः)
- [७२६] १०।९२।६ (शार्यातो मानवः । विश्वे देवाः)
तेभिश्चष्टे वरुणो मित्रो अर्यमा ।
(अग्निः ७१) १।३६।४ (कण्वो घौरः । अग्निः)
देवासस्त्वा वरुणो ... ।
- [७२७] १०।९२।७ सरो ह्यसिक्ते वृषणश्च पौंस्ये ।
(इन्द्रः ३१५१) ४।४१।६ (वामदेवो गौतमः । इन्द्रा-
वरुणौ)
- [७३१] १०।९२।१२ = (६७९) १०।६४।४
- [७३६] १०।९३।१ (तान्वः पार्थ्यः । विश्वे देवाः)
महि द्यावापृथिवी भूतमुर्वी ।
(इन्द्रः ३१६४) ६।६८।४ (बाह्वस्पत्यो भरद्वाजः ।
इन्द्रावरुणौ)
महित्वा यौश्च पृथिवि भूतमुर्वी ।
- [७३९] १०।९३।४ ते वा राजानो अमृतस्य मन्त्राः ।
(९२) १।१२२।११ श्रोता राजानो अमृतस्य ... ।
- ["] १०।९३।४ अर्यमा मित्रो वरुणः परिउमा ।
(अग्निः २४६) १।७९।३ (गौतमो रादूगणः । अग्निः)
- [७४१] १०।९३।६ महः स राव एषते ।
(अग्निः ३५३) १।१४९।१ (दीर्घतमा औचध्यः। अग्निः)

- [७४६] १०।९३।११ सदा पाद्याभिष्टये ।
(इन्द्रः १००८) १।११९।९ (परुच्छेपो देवोदासिः। इन्द्रः)
सदा पाद्याभिष्टिभिः ।
- [७५०-६१] १०।१००।१-११ (सुवस्युर्वान्दनः । विश्वे देवाः।)
आ सर्वतातिमदिति वृणीमहे ।
- [७५८] १०।१००।८ = (६९०) १०।६४।१५
म्रावा यत्र मधुबुदुष्यते बृहद् ।
- [७५९] १०।१००।९ विश्वा द्वेषांसि सजुतर्जुयोत ।
(१५२) २।२९।२ यूयं द्वेषांसि ... ।
- [७६३] १०।१०१।१ (बुधः सौम्यः । विश्वे देवाः, ऋत्विजो वा)
दधिक्राममिमुपसं च देवीम् ।
(१६९) ३।२०।५ (गाथी कौशिकः । विश्वे देवाः)
- [७७१] १०।१०१।९ सा नो वृहीयध्वसेव गन्वी सहस्रधारा
पयसा मही गौः ।
(इन्द्रः ३१५०) ४।४१।५ (वामदेवो गौतमः। इन्द्रावरुणौ)
- [७८३] १०।११४।२ = (१७४) ३।५४।५
परेषु या गुह्येषु व्रतेषु ।
- [७९२] १०।१२६।१ (शैल्यविः कुलमलबर्हिषो, वामदेव्योऽ-
होमुग्वा । विश्वे देवाः)
न तमहो न वुरितं ।
२।१३।५ (गृत्समदः शौनकः । ब्रह्मणस्पतिः)
- [७९३] १०।१२६।२ वरुणमित्रार्यमन् ।
(अदितिः ० २७४) ५।६७।१ (यजत आत्रेयः। मित्रावरुणौ)
- [७९४-९८] १०।१२६।३-७ वरुणो मित्रो अर्यमा ।
(अग्निः ३१) १।२६।४ (द्युनःशेष आजीमर्तिः । अग्निः)
(अदितिः ० ५६) ८।१८।३ (हरिम्बिष्ठिः काण्वः। आदित्यः)
- [७९८] १०।१२६।७ सर्म यच्छस्तु सप्रथ आदित्यासो वदीमहे ।
(अदितिः ० ५६) ८।१८।३ (हरिम्बिष्ठिः काण्वः। आदित्यः)
... ... यदीमहे ।
- [७९९] १०।१२६।८ यथा ह स्पद्रसवो गौर्यं चित्पदि
चिताममुज्जता यजत्राः ।
एवो ज्वस्मग्मुज्जता व्यंहः प्र तार्यसे प्रतरं न आयुः ॥
(अग्निः ७३९) ४।११।६ (वामदेवो गौतमः। अग्निः)
- [८०७] १०।१२८।८ इन्द्र मा नो रीदिके आ परा दाः ।
(इन्द्रः ८५४) १।१०४।८ (कुत्स आत्रिरसः। इन्द्रः)
मा नो वधीरिन्द्र मा परा दाः ।

- [८१८] १०।१४१।३ (अग्निस्तापसः । विश्वे देवाः)
अग्निं गीर्भिर्हवामहे ।
(अग्निः १२१९) ८।११।६ (वत्सः काण्वः । अग्निः)
- [८१९] १०।१४१।४ इन्द्रवायू वृहस्पतिं सुहवेह ।
(६) १।१४।३ (मेघातिथिः काण्वः । विश्वे देवाः)
... मित्राग्निं ।
- [८२१] १०।१४१।६ ब्रह्म यज्ञं च वर्धय ।
(इन्द्रः ६१) १।१०।४ (मधुच्छन्दा वैश्वामित्रः । इन्द्रः)
ब्रह्म ... यज्ञं च वर्धय ।
- [८२७] १०।१५७।५ (भुवन आप्त्यः, साधनो वा भौमः ।
विश्वे देवाः)
आदित् स्वधामिषिरां पर्यपश्यन् ।
(मरुतः १९१) १।१६८।९ अगस्त्यो मैत्रावरुणिः ।
मरुतः)
- [८२८] १०।१६५।१ (नैर्ऋतः कपोतः । विश्वे देवाः)
शं नो अस्तु द्विपदे शं चतुष्पदे ।
(सोमः १२२३) ६।७४।१ (बार्हस्पत्यो भरद्वाजः ।
सोमारुद्रौ)
शं नो भूतं द्विपदे— ।
- [८३४-३६] १०।१८१।१-३ (१ प्रथो वासिष्ठः, २ सप्रथो
भारद्वाजः, ३ चर्यः सौर्यः । विश्वे देवाः)
धातुर्धृतानात् सवितुश्च विष्णोः ।

- [१२०९] १।१६४।५० (दीर्घतमा औचध्यः । साध्याः) =
१०।९०।१६ (नारायणः । पुरुषः)
चक्षेन यज्ञमवजन्त देवास्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन् ।
ते ह नाकं महिमानः सचन्त यत्र पूर्वे साध्याः सन्ति देवाः॥
- [१२११] १०।५३।५ (सौचीकोऽग्निः । देवाः)
गोजाता उत ये यज्ञियासः ।
(४६२) ७।३५।१४ (मैत्रावरुणिर्वसिष्ठः । विश्वे देवाः)
- ["] १०।५३।५ (सौचीकोऽग्निः । देवाः)
पृथिवी नः पार्थिवात् पात्वंहसोऽन्तरिक्षं दिव्यात् पात्वंस्मान् ।
(इन्द्रः ३३००) ७।१०४।२३ (मैत्रावरुणिर्वसिष्ठः ।
पृथिव्यन्तरिक्षे [उत्तरार्धः])
- [१२१३-१४] १०।७२।२-३ असतः सदजायत ।
- [१२२१] १०।८५।१७ (सूर्यासावित्री ऋषिका । देवाः)
मित्राय वरुणाय च ।
(सोमः ९३९) ९।१००।५ (रेभसन् काश्यपौ ।
पवमानः सोमः)
- [१२६४] १।१३६।६ (परच्छेपो देवोदासिः । लिङ्गोक्ताः)
मित्राय वोचं वरुणाय मीहुषे सुमृळीकाय मीहुषे ।
(इन्द्रः १००२) १।१२९।३ (परच्छेपो देवोदासिः ।
इन्द्रः)
मित्राय वोचं वरुणाय सप्रथः सुमृळीकाय सप्रथः ।

दैवतसंहितायां विश्वे-देवाऽन्तर्गता देवताः (१) ऋग्वेदमन्त्राणाम् ।

अंशः
 अकतुः
 अक्षरम्
 अमिः
 अग्नि-जिह्वा
 अग्नि-दीप्तयः
 अग्नी-पर्जन्यौ
 अग्निवायुआदित्यपदाधानवेत्तारः
 अग्निवायुसूर्याः
 अग्नी-षोमौ
 अग्न्यादित्ययोः अनुवेत्ता व्यतिहारेण वा
 उपासकः
 अग्निराः- रसः
 अज एकपात
 अतिथिः
 अत्रयः
 अथर्वा
 अदितिः
 अग्निः
 अग्नी (पत्नी-यजमानौ)
 अध्वरः
 अनात्मज्ञः (तत्परिवेदनम्)
 अनुमतिः
 अन्तरिक्षम्
 अपा नपात्
 अप्याः
 अभिधाचः
 अणवः
 अर्थमा
 अर्धन्तः
 अश्वः-श्वाः

अश्विना
 असुरः
 अ (स्तृ)-स्तारः
 अहः
 अहिर्बुध्न्यः
 अहोरात्रे
 आत्मज्ञान- अज्ञाने
 आत्रेयः प्रतिकृत्रः
 आदित्यः
 आदित्य सत्यं दुर्ज्ञेयम्
 आदित्याः
 आपः
 इन्द्रवः
 इन्द्रः
 इन्द्राग्नी
 इन्द्रापूर्वतौ
 इन्द्रापूर्वणौ
 इन्द्रामरुतौ
 इन्द्रावरुणौ
 इन्द्रवायू
 इन्द्राविष्णू
 इन्द्रा-सोमौ
 इन्द्राणी
 इळा
 इळा. (भूमिस्थाना देवताः)
 उक्षणः पशु
 उर्वशी
 उल्लका
 उषाः
 उषासानपे
 ऋतवः
 ऋत्विजः

ऋभवः
 ऋभुक्षाः- क्षणः
 ऋषयः (पशु)
 ऋषयः (सप्त)
 ओषधयः- धीः
 ककुदः
 कण्वः
 कपोतः
 कृशानुः
 क्षत्रस्य पतिः
 गयः
 गायत्रम् (साम)
 गिरयः
 गुह्यः
 गौः
 गोजाताः
 गोयामा (तान्त्रादिशिक्षा)
 गोरूपेण आदित्यरश्मिसमूहः गोरूपिणी
 आहुतिः वा
 गो- सवितारौ (मेघवायू वा)
 माः (देवपत्न्यः, पत्नीः)
 मावाणः
 धर्मः
 धर्मा
 ऋक्
 चन्द्रमाः
 जगत (साम)
 जनाः पशु
 ज (नि)-नयः
 जिह्वा
 जीवात्म-परमात्मानौ

तत्त्वविद्
 तनयितुः
 तन्यतुः
 ताक्ष्यः
 तिष्यः
 त्वष्टा
 दक्षः
 दक्षिणः
 दिव्याः
 दिशः (मेघाः वा)
 दीधितिः
 देवः
 देवगणः-संघः वा
 देवाः
 देवानां देवाः
 देवो देवः
 देवपत्नीः [पत्नीः, माः]
 देवी
 देवीः तिस्र
 देवीः षट्
 देहात्मानौ (देहात्मजीवात्मानौ-सायनाः)
 द्यौः
 द्यावापृथिवी [रोदसी]
 द्युपृथिवी-अन्तरिक्षम् [तिस्रः निर्ऋतीः]
 धर्ता
 धर्मः
 धाता
 धिषणा
 धीः
 धियः
 धेनुः
 धेनवः
 जप्फम्
 जहन्नाणि
 जहः
 जमः
 जरः
 जराक्षयः
 जामनेषिष्ठः

निर्ऋतिः
 निशाः
 नौः (देवी)
 षतयः, सत्यस्य
 पत्नीः [माः, देवपत्नीः]
 पन्थाः
 परमात्मा (आदित्यः वा)
 परमेश्वरस्य अविषयत्वम्
 पर्जन्यवाता
 पर्वतः-तासः
 पशुः
 पार्थिवाः
 पितरः
 पुरन्धिः
 पूषा
 पृथिवी
 पृथ्विः
 प्रजापतिः
 प्रदिशः
 प्रमतिः (अग्नेः)
 प्रवाचनम् (देवानाम्)
 प्रश्नाः
 प्रश्नप्रतिवचनानि
 बर्हिः
 बृहत्
 बृहदुक्थः
 बृहस्पतिः
 ब्रह्मा
 ब्रह्मा
 ब्रह्मजाया
 ब्रह्मणस्पतिः
 भृगुः
 भवित्रम्
 भूतानि
 भूमिः
 मृगवः
 मृदः
 मनः (मन आवर्तनम्)
 मनीषा
 मनीषिणः

मनुष्याः
 मन्म
 मरुतः
 मही
 माता
 मित्रः
 मित्रावरुणा
 मेघः
 यजमानब्रह्माणौ
 यजुः
 यज्ञः
 यमः
 रुचः
 रुचन्तरं साम
 रुमयः (सूर्यस्य, आदित्यस्य वा)
 राक्ष
 राजानः
 रातिवाचः
 रायः
 रुद्रः-द्राः
 रुद्रियः
 रोदसी (एकवचनम्) (रुद्रस्य पत्नी)
 रोदसी (द्विवचनम्) (द्यावापृथिवी)
 स्रसः
 वनस्पतिः
 वना
 वनिनः
 वरुणः
 वसवः
 वाक्
 वाजः-जाः
 वाजी [बृहदुक्थपुत्रः]
 वाजिनः [अग्नि-वायु-सूर्याः]
 वातः
 वातापर्जन्या
 वायुः
 वास्तोष्पतिः
 विद्युत्
 विद्वान् पथः
 विधाता

| | | |
|--------------------------|--|------------------------------|
| विद् (श्) सर्वा | सत्यस्य पतयः (पतयः सत्यस्य) | सूर्यः |
| विश्वे देवाः | समुद्रः | सूर्यामासा |
| विष्णुः | सरमा | सोमः |
| वृकः (अरुणः) | सरयुः | सोमजामयः |
| वृषस्तुभः | सरस्वती (नदी) | सोमसूर्यचक्रभ्रमणानि |
| वृष्टिः | सरस्वती (वाक्) | स्तोता |
| वेदिः | सविता | स्तोमः (देवस्तुतिः) |
| व्रजिनीः | साम | स्वः |
| व्रतानि | सिनीवाली | स्वधावान् (प्रश्नोत्तराणि) |
| शंसः | सिन्धुः-न्धवः | स्वरूपां मितयः |
| शमी (गोत्वेन निरूपिता) | सुकृतानि, सुकृतम् (सुकृतां सुकृतानि) | स्वस्तिः |
| शम्भुः | सुतम्भरः (ऋषिः) | हविष्कृतः |
| शरीरम् | सुपर्णः | हस्तौ |
| शर्यणावन्तः | सुमतिः, आदित्यानाम् | होता |
| स्वन्तसरः | सुहवानि देवानाम् | होतारा वैभ्या |
| संसारः | सूत्रता | |

विश्वे-देवाऽन्तर्गतानां देवतानां गुणबोधकपदानि ।

अंशः ५, ४२, ५; २६४
 अक्षतः १०, ६४, ३; ६७८ । १०, १४, ९; १२६९
 अक्षरम् १, १६४, २४; १२२ । ३, ५५, १; १९२
 अर्कम् १२२
 गायत्रम् "

अग्निः १, १४, १-१२; ४-१५ । १०५, ४, १३-१४; ४१, ५०-
 ५१ । १०६, १; ५७ । १०७, ३; ६६ । १२२, ३, ५;
 ८४, ८६ । १३२, १; ९७ । १६४, १, ११; ९९, १०९ ।
 १८६, ३; १४२ । ३, २०, १, ५; १६८-६९ । ५४, १;
 ३, १९, २१-२२; १७०, १७२, १८८, १९०-९१ । ५५,
 २-१०; १९३-२०१ । ८, ८; २२२ । ५७, १, ४-६, २२३,
 २२६-२८ । ४, ५५, ४, ७-८; २३२, २३५-३६ । ५, ४१,
 ४, १०; २४३, २४९ । ४३, ३; २६२ । ५, ४३, ६, १०,
 १३-१५, २८२, २८६, २८९-९१ । ४४, ३-५, ८, १४-१५;
 २२३-२८, ३०१, ३०७-८ । ४५, ४; ३१२ । ४६, २, ४;
 ३२१, ३२३ । ४७, ७; ३३४ । ४८, १, ४-५; ३३५, ३३८-
 ३९ । ४९, ३; ३४२ । ५०, ४; ३४८ । ५१, १-३, ८-१०,

१३-१४; ३५०, ३५३-५५, ३५८-५९ । ६, २१, ९; ३६१ ।
 ६, ४९, १-२, ९; ३६३-६४, ३७१ । ५०, १, ९; ३७८, ३८६ ।
 ५१, ५, १०, १३; ३९५, ४०२, ४०५ । ५२, ५-६, १२, १७;
 ४१३-१४, ४२०, ४२५ । ७, ३४, ८, १४, २५, ४३३, ४३९,
 ४४८ । ३५, ४; ४५२ । ३६, १; ४६४ । ३९, १, ४-७;
 ४८१, ४८४-८५ ४०, ३; ४९० । ४१, १; ४९४ । ४२, २-३;
 ४९६-५०० । ४३, २-३, ५; ५०२-३, ५०५ । ४४, १; ५०६ ।
 ८, २७, १-३; ५१२-१४ । २८, २-३; ५३५-३६ । २९, २;
 ५४० । ८, ५८, २; ५५६ । ६९, ११; ५५८ । १०,
 ३१, १०; ५७७ । ३५, १, ३-१३; ५८०, ५८२-९२ ।
 ३६, ६, १२; ५९९, ६०५ । ५२, ३४, ६; ६१०-११,
 ६१३ । ५६, १; ६१४ । ५७, २; ६२२ । ६१, ९, १४,
 १७, २०-२१; ६३५, ६४०, ६४३, ६४६-४७ । ६३, ९;
 ६६९ । ६४, ३-४, ८; ६७८-७९, ६८३ । ६५, १; ६९४ ।
 ६६, ४, १३; ७१०, ७१९ । १०, ९२, १-४, ११, १४;
 ७२१-२४, ७३१, ७३४ । १००, ६; ७५६ । १०१, १; ७६३ ।
 १०२, १-२; ७७५-७६ । ११४, ४; ७८५ । १२६, ५, ८;
 ७९६, ७९९ । १२८, १-२, ६; ८००-१, ८०५ । १४१, १;
 ३, ६; ८१६, ८१८, ८२१ । १६५, २; ८२९ । १६६, २;
 ८३५ । १०, ९८, ८-१२; १२२९-१२३३ । १, १६६, ६-७;
 १२६४-६५

अभिदेवताया गुणबोधकपदानि ।

| | | | | | |
|------------------------------------|----------|------------------------|----------|-----------------------------|---------------|
| अंक्तोः अतिथिः | ७२१ | अरिष्टगातुः | २९६ | कृच्छ्रा चरन् | ६११ |
| अंगोष्ठः | ६७८ | अरुषः | ३६४ | केतुः | १९३ |
| अजरः | २९६ | अवमः | ४१ | केतुः अध्वरस्य | २२२ |
| अज्ररूपाः | ७२२ | अश्वाः अग्नेः— | | केतुः यजतः | ७२१ |
| अजस्रः | १७० | अरुषाः | ४९६ | केतुः यज्ञस्य | ३६४ |
| अतिथिः | ४९८ | रोहितः | " | क्रिविः | २९७ |
| अतिथिः अंक्तोः | ७२१ | वीरवाहाः | " | गोः निषिधं अन्तः चरन् | १९९ |
| अतिथिः प्रेष्ठः | १४१ | हरितः | " | गोपाः | २०१, ५३६, ८०५ |
| अदब्धः | ८०५ | असिन्वन् | ४८६ | माः वसानः | २८९ |
| अहतकतुः | ३६४ | आक्षित् पूर्वाषु | १९६ | घृतपृष्ठः | ९९ |
| अधासु मन्दः | ६४६ | आततः तन्तुः देवेषु | ६२२ | घृतेन आहुतः | ५९९ |
| अधिक्षित्, अभयानां विशाम् | ७३४ | आश्वत्थतमाः | २४३ | चतुरर्नाकः | ३३९ |
| अध्वक्षः | ८०० | आहुतः | ६२२ | चरन् अन्वमम् | १९८ |
| अध्वक् | ६४० | आहुतः घृतेन | ५९९ | चरन् बहुकृच्छ्रा | ६११ |
| अध्वरस्य केतुः | २२२ | इष्टं सनिता | ६३५ | चारुः | ७५६ |
| अर्नाकैः (युक्तः) दिव्यैः दम्भेभिः | १७० | इन्द्रवान् | ५८० | चारु वसानः | ३३९ |
| अनूरुत्, अपरा | १९६ | इन्द्रस्य सुकृतम् | ७५६ | चिकित्वान् दैन्यं जनम् | ४२० |
| अन्तः चरन्, गोः निषिधम् | १९९ | इष्टरूपतिः | २३२ | जरिता | ७५६ |
| अन्तः चरन्, महान् रोचनेन | २०० | ईज्यः | १७०, ३६४ | जर्भुरत् हरिणीषु | ७२१ |
| अन्तमः | १९९, ७५६ | ईशे महः सौभगस्य | २३६ | जातः शम्यां पित्रोः | ५७७ |
| अन्तर्मतिः | १९९ | ईशे वसव्यस्य | " | जातवेदाः | २२८, २८६, ६४० |
| अन्वमं चरन् | १९८ | उग्रः | ७७५ | जीवः | २९८ |
| अप-म्लुक्तः | ६११ | उदक्तः | ५३६ | ज्योतिरनीकः | ४९२ |
| अपरा अनूरुत् | १९६ | उपब्दिः | ६३५ | तनूनपात् | ७२२ |
| अपाच्याः | ५३६ | उषसः पुरोहितः | ७२२ | तन्तुः देवेषु आततः | ६२२ |
| अपा नपात् | ८५ | ऋजुगाथः | २९८ | तपः | ७७५ |
| अबन्धनः | १९७ | ऋतं महत् | ७१० | तुर्वणिः शस्तिभिः | १४२ |
| अभीशवः अग्नेः— | २९७ | ऋतधीतिः | ४०२ | तृतीयः भ्राता (आदित्यस्य) | ९९ |
| ऋतावृधः | " | ऋतस्य होता | ६४० | त्रितः | २४३ |
| यम्यः | " | ऋतावान् | ४८७ | त्रिधातुश्रृंगः | २८९ |
| सर्वशासाः | " | एकः | १९७ | त्रिवृत् | ६११ |
| सुयन्तवः | " | एकः एव | ५५६ | दधानः प्रिया अमृता धामानि | २०१ |
| सुयुजः | " | ओमभिः विश्वेभिः हुवानः | २८९ | दस्मः | ३४२ |
| असृष्टः | २८९ | ओषधीः वसानः | " | दिवः शिशुः | ३६४ |
| अरतिः | ६४६ | कण्वहोता | २४३ | दिवः सजोषाः | २४३ |
| अरतिः सुवत्योः | ३६४ | कविः | ६७९, ७५६ | दिव्यः | " |
| अरि यत्न | ३३९ | कवीनां कवितमः | २६२ | दूतः | ४१, २०० |
| | | | | दूतः देवानाम् | १८८ |

| | | | | | |
|---------------------------|----------|-----------------------------|--------------|-------------------------------|------------|
| देवः | १५, ५१ | प्रेष्ठः | ४३९ | वपुंषि विभ्रत् नः अभिविचष्टे | २०० |
| देवानां दूतः | १८८ | प्रेष्ठः अतिथिः | १४१ | वयाकिनं (सोमं) सञ्जर्मुराणः | २९८ |
| देवेन्द्रः | ६७८ | बर्हिः अनु प्रसर्माणः | २९६ | वयोषाः | २८९ |
| दैव्यं सहः | ७५६ | बहुधा समिद्धः | ५५६ | वराः (व० व०) | ६२० |
| द्योतनः | ५४० | बुधः | १९८ | वरुणः | ३३९ |
| द्रविणोदाः | ३२३, ७३१ | बृहद्विवः | २८९ | वर्षसः (षष्ठी) | ३३८ |
| द्विवन्धुः | ६४३ | भगः | ३३९ | वषट्कृताः (व० व०) | ५३५ |
| द्विमाता | १९७, १९८ | भद्रः | ३४२ | वसर्हा | ८४ |
| द्विचर्तुनिः | ६४६ | भर्गः इनाम यस्य | ६४० | वसव्यस्य ईशे | २३६ |
| धनदाः | ८१६ | भ्राता | ३९७ | वसानः ओषधीः | २८९ |
| धर्णसिः | २८२ | भ्राता तृतीयः (आदित्यस्य) | ९९ | वसानः माः | " |
| धर्ता प्रजायाः | ६३५ | मतिः | १९९ | वसानः चारु | ३३९ |
| धर्मन् | ७२२ | मध्यमः | ७८५ | वसुः | २२८, ३५८ |
| धामन् | ३३५ | मध्ये हितः | २९६ | वसुपतिः वसूनाम् | ४१३ |
| नराशंसः | ६० | मनुर्हितः | १४ | वसूनां वसुपतिः | " |
| पञ्चयामः | ६११ | मन्द्रः अधासु | ६४६ | वह्निः | १६८, ३४८ |
| पत्नीवान् | ५३५ | मन्युं परेषां प्रतिनुदन् | ८०५ | वाजं सनिता | ६३५ |
| परस्तात् शयुः | १९७ | महः सौभगस्य ईशे | २३६ | वाजी | ६० |
| पलितः | २०० | महत् ऋतम् | ७१० | विदथस्य साधनम् | ७२२ |
| पुत्रः पूर्वः | ५७७ | महान् रोचनेन अन्तः चरन् | २०० | विदथेषु सप्ताद् | १९८ |
| पुरन्धिः | ३६१ | महे (चतु०) | ३३५ | विदथ्यः | १७० |
| पुरस्तात् | ५३६ | मेधिरः | ५१, ५४०, ७५६ | विदुष्टरः | ५०, ५१ |
| पुरुत्रा | १९५ | यजतः केतुः | ७२१ | विप्रः | ५, १२, ३५२ |
| पुरुध प्रसूतः | १८८ | यज्ञः | ४१, ७५६ | विभावसुः | ७२१ |
| पुरोहितः | ५१२, ७१९ | यज्ञस्य केतुः | ३६४ | विभावा | ३७१, ६४६ |
| पुरोहितः उषसः | ७२२ | यज्ञस्य प्रसाधनः | ६२२ | विमृतः | १९५ |
| पूर्वणीकः | ४९७ | यज्ञस्य रथ्यः | ७२१ | विशस्पतिः | ८१६ |
| पूर्वः पुत्रः | ५७७ | यतन् अरिम् | ३३९ | विशां अभयानां अधिक्षित् | ७३४ |
| पूर्वासु आक्षित् | १९६ | यवीयुत् | ६३५ | विशां विशपतिः | ७२१ |
| प्रजायाः धर्ता | ६३५ | यष्टा | ६४३ | विशां होता | " |
| प्रतिनुदन् परेषां मन्युम् | ८०५ | यहः | ७२२ | विशपतिः विशाम् | " |
| प्रथमः | ७१९ | युवत्योः अरतिः | ३६४ | विश्वभोजः | २४३ |
| प्रथमा पुरोहितः | " | युवा | २९६ | विश्वानरः | १०८ |
| प्रयुतः | १९५ | रथ्यः यज्ञस्य | ७२१ | विश्व भुवनानि वेद | २०१ |
| प्रसर्माणः बर्हिः अनु | २९६ | रराणः | २८९ | विश्वे (व० व०) | ५९१ |
| प्रसाधनः यज्ञस्य | ६२२ | राजा | १९५ | विष्णुः | २०१ |
| प्रसूतः | १८८ | रोचनेन महान् अन्तः चरन् | २०० | विष्णुहा मध्ये हितः | २९१ |
| प्रसूतः पुरुध | १८८ | वक्त्रराजस्यः | ४०२ | वीळुहरः | ७७ |
| प्राचीनरश्मिः | ५९९ | वत्सः | १९७ | वृषभः | २८ |
| प्रियः | ३३५ | वनेषाट् | ६४६ | | |

| | | | | | |
|-------------------------------|----------|------------------|-------------------|---------------------------------|----------|
| वृषा | २९६, ७२१ | सत्यतिः | ४०५ | सुधितः | ४९८ |
| वैतरणः | ६४३ | सनिता इध्मम् | ६३५ | सुपर्णः | ७८५ |
| वैद्युतं तेजः | ३३५ | सनिता वाजम् | " | सुप्रीतः | ४९८ |
| वैद्युताग्निः | " | सन्त्यः | ३५२ | सुमनाः | १९१, ८१६ |
| वैश्वानरः | ३५८ | सप्ततन्तुः | ६११ | सुशंसः | ४१४ |
| शक्तिः अग्नेः- | | समानः | १९५ | सुशेव्यः | २९० |
| मायिनी | ३३५ | समिधानः | ४२५, ५८२-५९१, ६०५ | सुस्वरः | २९८ |
| वृणाना | " | समिद्धः | १९४, ५०६, ५९२ | सुहवः | ४१४ |
| शम्यो पित्रोः जातः | ५७७ | समिद्धः बहुधा | ५५६ | सनुः सहसः | ३६४, ३८६ |
| शयुः परस्तात् | १९७ | सम्राट् विदयेषु | १९८ | सौभगस्य ईशे | २३६ |
| शस्तिभिः तुर्वणिः | १४२ | सर्वताता | १८८ | स्थिरः | ६४३ |
| शिशुः | २९६ | सविता | ३३९ | स्वक्षत्रः | ३३५ |
| शिष्टः दिवः | ३६४ | सहः दैव्यम् | ७५६ | स्वयशः | " |
| शुष्कासु शोचन् | ७२१ | सहसः सनुः | ३६४, ३८६ | हरिणीषु जर्भुरत् | ७२१ |
| शेवधः | ६४६ | सहसावन् | ५०५ | हव्यवाट् | ६१०, ६११ |
| शोचन् शुष्कासु | ७२१ | सहस्यः | ५०० | हव्याद् | ४३९ |
| शोचिष्केषः | २४९ | सहोभरिः | २९६ | हितः विष्णुहा मध्ये | २९६ |
| श्रेष्ठवर्चाः | ४०२ | साधनं विदयस्य | ७२२ | हुवानः | २८६ |
| सक्षणः | २४३ | सीदन् योनिं आ | ५४० | हुवानः विश्वेभिः ओमभिः | २८९ |
| सचा | ३३८ | सुकृतं इन्द्रस्य | ७५६ | होता १२, १४, ५१, १९८, २९६, ३७१, | |
| सजोषाः | १४२, २४३ | सुक्षत्रः | ३६३, ४०२ | ६१३, ६४०, ७७६ | |
| सज्जुंराणः सुतेष्टुं वयाकिनम् | २९८ | सुजिह्वः | १० | होता विश्वाम् | ७२१ |
| सतः | ५०, ५१ | सुद्राविणः | ६४७ | | |

अमिजिह्वा ३, ५७, ५; २२७

उरुची "

मधुमती "

सुमेधा "

अग्निदीप्तयः ३, ५७, ४; २२६

ऊर्वाः "

दर्शता "

भूरिवाराः "

यजत्राः "

अग्नीपर्जन्यौ ६, ५२, १६; ४२४

अन्यः इळां जनयत् [अग्निः] "

अन्यः गर्भं जनयत् [पर्जन्यः] "

सुहवा "

अग्नि-वायु-आदित्यपदाधानवेतारः १, १६४, २३; १२१

(सवनत्रय-छन्दस्त्रय-विधानं वा ।)

गायत्रे अधि गायत्रम्-अग्निपदम् ।

त्रैष्टुभात् त्रैष्टुभं पदम्-वायुपदम् ।

जगति आदितं जगत्-आदित्यपदम् ।

अग्निवायुसूर्याः ३, ५६, ८; २२१ । १०, ६६, १०; ७१६ ।

१०, ११४, २; ७८३

इषिराः २२१

ऋतावानः "

वृळभासः "

निर्ऋतीः तिस्रः ७८३

वाजिनः ७१६

अग्नीषोमौ १०, ६६, ७; ७१३

पुरुषप्रशस्ता वृषणा ७१३
 अग्न्यादित्ययोः अनुवेत्ता व्यतिहारेण वा उपासकः । १, १६४,
 १८; ११६
 कवीयमानः ११६
 अज्जिराः-रसः ५, ४५, ५-८; ३१३-१६। ७, ४२, १; ४९५ ।
 १०, ६१, १०; ६३६ । १०, ६२, १-६, ६५४-६५९ ।
 १०, ९२, १५; ७३५
 अग्नेः सूनवः ६५८
 अग्नेः परि जज्ञिरे ६५९
 अच्युताः ६३६
 अदक्षिणासः ६३६
 ऋतं वदन्तः ६३६
 ऋषयः ६५८
 गम्भीरवेपसः ६५८
 जनुषा पूर्वः ७३५
 जज्ञिरे अग्नेः परि ६५९
 द्विबर्हसः ६३६
 नवग्वाः ३१५, ६३६
 पितरः ६५४-६५७
 पूर्वः जनुषा ७३५

यज्ञेन दक्षिणया समक्ताः ६५४
 विरूपासः ६५८, ६५९
 विश्वे ३१६
 सखायः ३१४
 सुध्यः ३१३
 सुमेधसः ६५४-६५७
 सूनवः अग्नेः ६५८
 अज एकपात् २, ३१, ६, १६३ । ६, ५०, १४, ३९१ ।
 ७, ३५, १३; ४६१ । १०, ६४, ४; ६७९ । १०, ६५, १३;
 ७०४ । ६६, ११; ७१७
 दिवः धर्ता ७०४
 धर्ता दिवः "

अतिथिः ५, ५०, ३; ३४७
 अत्रयः ८, १९, १०; ५४८
 अर्चन्तः "
 महि साम मन्वत "
 सूर्य रोचयन् "

अथर्वा १०, ९९, १०, ७३०
 प्रथमः "

अग्निदेवताया उपमासूची ।

| | |
|--------------------|--------|
| अवतुं न यद्दम् | ७२२ |
| अत्रिवत् | ३५३-५५ |
| आर्जि न | २४३ |
| पितुमन्तं क्षयं इव | ३३८ |
| पर्वतस्य धारा इव | २२८ |
| पिता इव | ४१४ |
| प्रति परशोः इव | ३३८ |
| आयवः शिशुं न | २९० |
| युध्यतः शूरस्य इव | १२९ |
| ऊर्त्वा श्रेणिः न | ६४६ |

पुरोहितं अरुषस्य निसते ।
अमे आ याहि, सुते रण ।
प्रभृथे प्र जग्मुः ।
भरहूतये बिशे रतनं दधाति ।
असश्चन्ती प्रमतिः ।
अग्निः सुशंसः सुहवः ।
अस्य तां रीतिम् (पश्यामि) ।
सुषोव्यं वासे नमसा मृजन्ति ।
अन्तमस्य प्रतीचीनं ददृशे विश्वमायत् ।
शिशुः मक्षू दन् ।

अदितिः १,८९,३,१०; २१,२८ । १०५,१९; ५६ । १०६,
१,७, ५७, ६३ । १०७, २-३; ६५-६६ । २, २९, ३, १५३,
३, ५४, १८, २०; १८७, १८९ । ४, ५५, १, ३, ७, २२९ ।
२३१, २३५ । ५, ४२, १-२; २६०-२६१ । ४६, ३, ६;
३२२, ३२५ । ४९, ३, ३४२ । ५१, ११, १४; ३५६, ३५९ ।
६, ५०, १; ३७८ । ५१, ३-५, ११; ३९५-९७, ४०३ । ७,
३५, ९, ४५७ । ३२, ५, ४८५ । ४०, २, ४, ४८९, ४९१ ।
८, २५, १०; ५०९ । २७, ५, ५१६ । १०, ३६, ३, ५९६ ।
६३, ५, १०, १७; ६६५, ६७०, ६७५ । ६४, ५, १३; ६८०,
६८८ । ६५, १, ९; ६९२, ७०० । ६६, ३-४; ७०९-१० ।
९२, ११, १४; ७३१, ७३४ । १००, १-११; ७५१-६१

अदितिर्देवताया गुणबोधकपदानि ।

अनर्वा ४९१
उरुव्यचाः ३२५
दुवोयु ३९६
देवी २३५, ३५६, ३७८, ४८९, ४९१, ५०९, ५१६
पस्त्या २३१
मही ५१६
माता मित्रस्य ५२६
माता वरुणस्य ”
यज्ञिया १८७
सर्वतातिः ७५१-७६१
सुप्रणीतिः ६७०
सुशर्मा ”
सुहवा ४९१
अदितेः विभूतिमत्त्वं सकलजगदात्मत्वं वा २८

अदितिर्देवताया उपमासूची ।

सूनुं न माता २६१ प्रति मे स्तोमं जगृभ्यात् ।
अग्निः ७, ३५, ३; ४५१
अग्नी (पत्नीयजमानौ) ७, ३९, १, ४८१ । ४२, १; ४९५

अग्नी देवताया उपमासूची ।

रथ्या इव पन्थाम् ४८१ भेजाते अग्नी ऋतम् ।
अश्वरः ८, १७, ३; ५१४
अनात्मज्ञः (तत्परिदेवनम्) १, १६४, ३७; १३५
निग्यः १३५

मनसा (युक्तः) १३५

संनद्धः ”

अनुमतिः १०, १६७, ३; ८३३

अन्तरिक्षम् ३, ५४, १९; १८८ । ३, ८, ८; २२२ । ५, ४२,
१६; २७४ । ७, ३५, ५, ४५३ । १०, ६६, ११, ७१७ ।
१२८, २; ८०१ । ५३, ५; १२११

उरु १८८

उरुलोकः ८०१

रजः ७१७

अपां नपात् १, १२२, ४; ८५ । १८६, ५; १४४ । २, ३१,
६; १६३ । ५, ४१, १०; २४९ । ६, ५०, १३, ३९० ।
५२, १४, ४२२ । ७, ३४, १५; ४४० । ३५, १३, ४६१ ।
१०, ९२, १३; ७३३

आशुहेमा १६३

गर्भः वृष्णः भूम्यस्य २४९

दातु ३९०

पतिः ”

पेरुः ४६१

विश्वदेव्यः ७३३

वृष्णः भूम्यस्य गर्भः २४९

शिवः ४४०

सखा ”

अप्याः ७, ३५, ११; ४५९

अभिषाचः ७, ३५, ११; ४५९

अर्णवः १०, ६६, ११; ७१७

अर्यमा १, ८९, ३; २१ । ९०, १-३, ९; २९-३१, ३७ ।
१०५, ६, ४३ । १०७, ३; ६६ । १८६, २; १४१ । ३, ५४,
१८; १८७ । ४, ५५, ४, ६; २३२, २३८ । ५, ४१, २;
२४१ । ४६, ५; ३२४ । ६, ५०, १; ३७८ । ५१, ३,
३२५ । ५२, ११; ४१९ । ७, ३५, २; ४५० । ३६, ४;
४६७ । ३९, ५; ४८५ । ४०, २, ४; ४८९, ४९१ । ८, २७,
१७; ५२८ । २८, २-३; ५३५-३६ । ८३, २, ४; ५६०,
५६२ । १०, ३१, ४; ५७१ । ३६, १; ५९४ । ६१, १७;
६४३ । ६४, ५; ६८० । ६५, १, ९; ६९२, ७०० ।
९२, ६; ७२६ । ९३, ४; ७३९ । १२६, १-७; ७९२-९८ ।
१४१, २; ८१७ । १, १३६, ६; १२६४

अर्थमा देवताया गुणबोधकपदानि ।

(मित्रावरुणाभ्यां सहितत्वेन बहुवचम् ।)

| | |
|-------------------|---------------------------------|
| अतूर्तपन्थाः | ६८० |
| अपबाधमानाः द्विषः | ३० |
| अपाच्याः | ५३६ |
| अप्रमूराः | ३० |
| अमृताः | ” |
| अमृतस्य मन्दाः | ७३९ |
| गोपाः | ५३६ |
| चर्षणीनां राजा | ७९७ |
| सुक्षः | १२६४ |
| द्विषः अपबाधमानाः | ३० |
| मेता | ७९७ |
| पुरुजातः | ४५० |
| पुरुषः | ६८० |
| प्रचेतसः | ५६० |
| मन्दाः | ७३९ |
| महः (षष्ठी) | ४३ |
| यज्ञियः | १८७ |
| युजः | ५६० |
| राजानः अमृतस्य | ७३९ |
| राजा चर्षणीनाम् | ७९७ |
| वसवानाः | ३० |
| वस्वः | ” |
| वृधासः | ५६० |
| शाम् | ३७ |
| सजोषसः | १४१, ५२८ |
| सप्तहोता | ६८० |
| सरातयः | ५२८ |
| सुकृतुः | ४६७ |
| सुशेवः | ३७८ |
| स्मद्रातिषाचः | ५३५ |
| अर्बन्तः | ७, ३२, १२; ४६० । १०, ६४, ६; ६८१ |

मितद्रवः ६८१

वाजिनः ”

विश्वे ”

हवनश्रुतः ”

उपमासूची ।

मेधसातौ इव ६८१ त्मना सहस्रसाः ।

अधः-धाः १, १६४, २-३, १००-१०१ । १०, ११४, १०; ७९१

एकः १००

सप्त १०१

सप्तनामा १००

रथस्य धृष्टु युकासः ७९१

अश्विनौ १, ८९, ३-४, २१-२२ । १२२, ४-५, ८५-८६ ।
 १८६, १०, १४२ । २, ३१, ४, १६१ । ३, २०, १, ५;
 १६८-६९ । ५४, १६; १८५ । ५७, २; २२४ । ५, २६,
 ९, २३९ । ४१, ३; २४२ । ४२, १८; २७६ । ४३, ८,
 १७; २८४, २९३ । ४६, २, ४; ३२१, ३२३ । ४९, १,
 ३४० । ५१, ८, ११; ३५३, ३५६ । ६, ४९, ५; ३६७ ।
 ५०, १०; ३८७ । ७, ३५, ४, ४५२ । ३९, ४; ४८४ ।
 ४०, ५; ४९२ । ४१, १; ४९४ । ४६, १; ५०६ । ८, २५,
 १०; ५०९ । २७, ८; ५१९ । २९, ८; ५४६ । ८३, ७,
 ५६५ । १०, ३५, ६; ५८५ । ३६, ६; ५९२ । ५२, २,
 ६०९ । ६१, ३-४, १५; ६२९-३०, ६४१ । ६४, ३; ६७८ ।
 ६५, १२; ७०३ । ६६, ५; ७११ । ९२, १३; ७३३ ।
 ९३, ५-७, ७४०-४२ । १२८, ७, ८०६ । १८४, २, ८३८

अश्विनौ देवताया गुणबोधकपदानि ।

| | |
|-------------------------|---------------|
| अदग्धा | १८५ |
| अपां वृषण्वसू | ७४० |
| अमृता | २७६ |
| अर्विमन्ता | ६४१ |
| उभा | ८०६ |
| चार ययोः नाम | १८५ |
| दिवः नपाता | ६३० |
| देवौ | ७४१, ८३८ |
| द्रवन्ता हवनेषु तिग्मम् | ६२९ |
| द्रा | ५४६ |
| विण्णयः | २२ |
| नपाता दिवः | ६३० |
| नरा | ३४०, ३६७, ३८७ |
| नाम ययोः चार | १८५ |

| | |
|--------------------|------------------------------|
| नासत्या | ३२१, ३६७, ३८७, ४८४, ५०९, ६४१ |
| पती | १६१ |
| पान्ता | ८५ |
| पितरा | १८५ |
| पुरुभुजा | ३४० |
| पुष्करस्तजा | ८३८ |
| बन्धुपृच्छ | १८५ |
| मन्दू | ६४१ |
| मयोभुवा | २८४ |
| येष्ठा | २४२ |
| रयः अभिनोः- | |
| तृगुजिः | ५८५ |
| मनसा युजानः | ३६७ |
| विषकमान् | ,, |
| रयिदौ रयीणाम् | १८५ |
| रयीणां रयिदौ | ,, |
| रराणा वृक्तबर्हिषे | ६४१ |
| रुद्रा | ७४१ |
| रौद्री | ६४१ |
| विप्रा | ३८७ |
| वृक्तबर्हिषे रराणा | ६४१ |
| वृषणा | २२४ |
| वृषणवसू अपाम् | ७४० |
| व्यन्ता | ८५ |
| शुभस्पती | ७४१ |
| सरथा | २८४ |
| सुहवा | ७३३ |
| सुहस्ता | २२४ |
| हवनेषु व्रवन्ता | ६२९ |
| हितप्रयसा | ६४१ |

अभिन्नौ देवताया उपमासूची ।

| | |
|--------------------------|---------------------------------|
| धुरं आग्निः न नाभिम् २८४ | यातं अर्वाग् गन्तं निधिम् । |
| वृत्तः न | २८४ शान्तमा गीः गन्तु हुवन्धे । |
| प्रवासा इव | ५४६ प्र वसतः । |
| मनः न | ६२९ येषु हवनेषु तिग्मम् । |
| ववन्वासा न | ६३० इषं अस्मृतम् । |

असुरः ५, ४१, ३, २४२ । १०, ५६, ६, ६१९

दिवः २४२

स्वर्विद् ६१९

उपमासूची ।

अन्धांसि इव २४२ असुराय मन्म प्र भरष्मम् ।

अस्तारः (अस्तृ) १०, ६४, ८, ६८३

अहः १०, १४, ९, १२६९

अहिर्बुध्न्यः १, १८६, ५, १४४ । २, ६१, ६, १६३ । ४, ५५, ६, २३४ । ५, ४१, १६, २५५ । ६, ४९, १४, ३७६ । ५०, १४, ३९१ । ७, ३५, १३, ४६१ । १०, ६४, ४, ६७९ । ६९, ११, ७१७ । ९२, १२, ७३२ । ९३, ५, ७४०

उपमातिवनिः २५५

कविः ७३२

अहोरात्रे १, १२२, ४, ८५ । ३, ५५, ११, १५, २०२, २०६ । ४, ५५, ३, २३१ । ६, ४९, ३, ३६५

अदन्धे २३१

अन्यत् गुह्यं अन्यत् आविः २०६

अन्यत् रोचते अन्यत् कृष्णम् २०२

अन्या स्तुभिः पिपिशे सूरः अन्या ३६५

अरुषस्य दुहितरा ३६५

अरुषी २०२

अहनी २३१

ऋच्यमाने ३६५

नाना वर्ष्षि चक्राते २०२

पथ्या २०६

पदे दस्मे अन्तः निहिते इव २०६

पावके ३६५

मातरा ८५

मिथस्तुरा ३६५

विचरन्ती ३६५

विरूपे ३६५

विषूची २०६

श्यावी २०२

सध्रीबीना २०६

स्वसारो २०२

उपमासूची ।

पदे इव निहिते २०६ दस्मे अन्तः ।

| | |
|--|-----------------|
| आत्मज्ञानाज्ञाने | १, १६४, ३९; १३७ |
| जीवात्मनः पारमार्थिकं रूपम् (सायनाचार्याः) | |
| आग्नेयः (ऋषिः) प्रतिक्षत्रः | ५, ४६, १; ३२० |
| विद्वान् | ३२० |

उपमासूची ।

हयः न ३२० विद्वान् अयुजि स्वयं धुरि ।

आदित्यः १, १०५, १६; ५३ । १२२, ३; ८४ । १६४,
१, ७-८, १०, ३१, ३३; ९९, १०५-६, १०८, १२९, १३१ ।
३, ५५, १४; ३०५ । ५, ४१, ९, २४८ । ६, ५१, १; ३९३ ।
१०, ६१, १८, ६४४ । ६६, १३; ७१९ । १०९, १; ७७५

आदित्यदेवताया गुणबोधकपदानि ।

| | |
|-------------------------|----------|
| अकूपारः | ७७५ |
| अदब्धः | ३९३ |
| अनिपद्यमानः | १२९ |
| अनीकम् | ७० |
| आचरन् पथिभिः | १२९ |
| आप्त्यः | २४८ |
| ऋतः | २०५, ३९३ |
| गोपाः | १२९ |
| चक्षुः त्यत् | ३९३ |
| चम्बोः उत्तानयोः योनिः | १३१ |
| त्यत् चक्षुः | ३९३ |
| दर्शतः | " |
| नर्यः | २४८ |
| पथिभिः आचरन् | १२९ |
| पनितः | २४८ |
| परिज्मा | ८४ |
| पलितः | ९९ |
| पिता | १०६, १३१ |
| पुरोहितः प्रथमः | ७१९ |
| प्रथमः पुरोहितः | " |
| प्रियः मित्रयोः वरुणयोः | |
| यज्ञत्रः | २४८, ३९३ |
| योनिः उत्तानयोः चम्बोः | १३१ |
| वसानः विषूचीः | १२९ |
| वसानः सध्रीचीः | " |
| वामः | ९९, १०५ |

| | |
|----------------|-----|
| विः | १०५ |
| विश्वपतिः | ९९ |
| विषूचीः वसानः | १२९ |
| शुचिः | ३९३ |
| सध्रीचीः वसानः | १२९ |
| सप्तपुत्रः | ९९ |
| होता | " |

आदित्यसत्यम् (दुर्ज्ञेयम्) [परमेश्वरस्य अविषयत्वम्,
सायनाचार्याः ।] १, १६४, ४-६; १०२-१०४
आदित्याः १, १४, ३-४; ६-७ । १०६, २; ५८ । १०७, १-२;
६४-६५ । २, २९, १; १५१ । ३१, १; १५८ । ३, २०, ५;
१६९ । ५४, १०, २०; १७३, १८९ । ८, ८; २२२ । ५,
५१, १०, १२; ३५५, ३५७ । ६, ५०, ११; ३८८ । ५१,
४-५, ३९६-९७ । ७, ३५, ६, १४; ४५४, ४६२ । ४४, १;
५०६ । ८, २७, ३, ६, २२; ५१४, ५१७, ५३३ । ८३, ५, ८;
५६३, ५६६ । १०, ३५, ९, ११-१२; ५८८, ५९०-९१ । १०,
३६, १; ५९३ । ६३, ३, ५, ७, १३, १७; ६६३, ६६५, ६६७,
६७३, ६७५ । ६५, १, ९; ६९२, ७०० । ६६, ३-४, १२;
७०९-१०, ७१८ । १२६, ५, ७; ७९६, ७९८ । १२८, ९;
८०८ । १४१, ३; ८१८ । १५७, २-३; ८२४-२५ । ९८, १;
१२२२

आदित्यानां गुणबोधकपदानि ।

| | |
|-----------------|----------|
| अग्निजिह्वाः | १७९ |
| अदब्धाः | ३९६ |
| अद्विबर्हाः | ६६३ |
| अपरिहृता | ६६५ |
| इषिराः | १५१ |
| ईशानासः वामस्य | ५६३ |
| उक्थशुष्माः | ६६३ |
| ऋद्धराः | १७९ |
| कवयः | " |
| क्षयन्तः | ३९६ |
| तुराः | ५१७ |
| दातारः सुवसनस्य | ३९६ |
| दिव्याः देवाः | ३८८, ७०० |
| देवाः दिव्याः | ३८८, ७०० |
| धृतवताः | १५१ |

| | |
|--------------------------------|---------------|
| नरः | ३९६, ५१७ |
| पप्रधानाः | १७९ |
| प्रचेतसः | ५६३ |
| मधुमत् पयः येभ्यः माता पिन्वते | ६६३ |
| महः | ३९६ |
| युवानः | १७९, ३९६ |
| राजानः | ३९६ |
| रिशादसः | २९६, ५६३ |
| वनर्षदः | १५८ |
| वामस्य ईशानासः | ५६३ |
| विश्वे | ३९७, ६७५ |
| वृषभराः | ६६३ |
| श्रवस्यवः | १५८ |
| सजोषसः | ५९० |
| सत्पतयः | ३९६ |
| सम्राजः | १७९, ५३३, ६६५ |
| सुक्षत्राः | ३९६ |
| सुदानवः | ५६६, ७१८ |
| सुवसनस्य दातारः | ३९६ |
| सुवृधः | ६६५ |
| स्वप्रसः | ६६३ |
| हृषीवन्तः | १५८ |

आदित्यानां उपमासूची ।

पुत्रः न ५३३ बहुपाय्यं आ वृणीमहे ।
 आपः ३, ५४, १९; १८८ । ५५, २२;
 २१३ । ५६, ४, ७; २१७, २२० ।
 ५, ४१, ११-१२; २५०-५१ । ४६, ३;
 ३२२ । ६, ५०, ७; ३८४ । ७, ३४,
 २-३, २३, २५; ४२७-२८, ४४६,
 ४४८ । ३५, ८; ४५६ । ४४, १; ५०६ ।
 ८, ५४, ४; ५५४ । १०, ३६, १; ५९४ ।
 ६४, ८-९, ६८३-६८४ । ६५, १३,
 ७०४ । ६६, १०, ७१६ । १०९, १;
 ७७५ । १३७, ६; ८१४ । १४, ९;
 १२६९

आपो देवताया गुणबोधक- पदानि ।

| | |
|-------------------------------|-----|
| अग्नेः बभ्रुहाणस्य परि स्तुचः | २५१ |
| अमीवचातनीः | ८१४ |

दे० [विश्वे देवाः] १९

| | |
|--------------------------------|---------------|
| क्षरन्तीः | ४२७ |
| जगतः विश्वस्य जनित्रीः | ३८४ |
| जनित्रीः विश्वस्य स्थातुः जगतः | " |
| देवीः | २१७, ६८४, ७७५ |
| परि स्तुचः बभ्रुहाणस्य अग्नेः | २५१ |
| पृथक् व्रजन्तीः | २१७ |
| पृथ्वीः | ४२८ |
| प्रथमजाः | ७७५ |
| बभ्रुहाणस्य अग्नेः परि स्तुचः | २५१ |
| भिषजः | ३८४ |
| भेषजीः | ८१४ |
| भेषजीः सर्वस्य | " |
| महीः | ६८३ |
| मातरः | ६८४ |
| मातृतमाः | ३८४ |
| मानुषीः | " |
| विश्वस्य जगतः जनित्रीः | " |
| विश्वस्य स्थातुः जनित्रीः | " |
| व्रजन्तीः पृथक् | २१७ |
| शुभ्राः | २५१ |
| समुद्रियः | ७०४ |
| सर्वस्य भेषजीः | ८१४ |
| सूदयित्वः | ६८४ |
| स्थातुः विश्वस्य जनित्रीः | ३८४ |

उपमासूची ।

पुरो न २५१ शुभ्राः आपः शृण्वन्तु ।
 इन्द्रवः १, १४, ४; ७
 चमूषदः "
 द्रप्साः "
 मत्सराः "
 मध्वः "
 मादयिष्णवः "
 इन्द्रः १, १४, ३-४, १०; ६-७, १३ ।
 ८९, ५-६, २३-२४ । ९०, ४, ९; ३२,
 ३७ । १०५, ८, ४५ । १०६, १, ६;
 ५७, ६२ । १०७, २-३; ६५-६६ ।
 १२१, १-१५, ६७-८१ । १६४, ३३;
 १३१ । १८६, ६-८, १४५-४७ ।
 २, ३१, ३; १६० । ३, ५५, १७; २०८

[पर्जन्यात्मा] । १८ [कालात्मा],
 २०-२२, २०९, २११-१३ । ५७, १-
 ३; २२३-२२५ । ४, ५५, ७, १०;
 २३५, २३८ । ५, ४१, २, २४१ ।
 ४२, ४-६, १३; २६३-६५, २७१ ।
 ४३, ५; २८१ । ४४, १-२; २९४-२५ ।
 ४५, १, ४; ३०९, ३१२ । ४६, २; ३२१ ।
 ४८, ३; ३३७ [सूर्यरूपः] उत्तरार्धस्य
 वा । ४९, ३; ३४२ । ५१, १०, १४;
 ३५५, ३५९ । ६, २१, ९, ११; ३६१-
 ३६२ । ५०, ६; ३८३ । ५१, ११;
 ४०३ । ५२, ६, ११; ४१४, ४१९ ।
 ७, ३४, ३-४; ४२८-२९ । ३५, ५-६;
 ४५३-५४ । ३६, ४; ४६७ । ३७,
 ३-८; ४७५-८० । ३९, ४-५; ४८४-
 ८५ । ४०, २; ४८९ । ४१, १; ४९४ ।
 ४२, ५; ४९९ । ४४, १; ५०६ । ८,
 २७, ६, ८; ५१७, ५१९ । २९, ४;
 ५४२ । ६२, ११; ५५८ । ८३, ७;
 ५६५ । १०, ३१, १; ५६८ । ३५,
 १०; ५८९ । ३६, १, ५; ५२४, ५२८ ।
 ५२, ५; ६१२ । ५७, १; ६२१ । ६१,
 ११-१३, १५, २१-२२; ६३७-६३९,
 ६४१, ६४७-४८ । ६३, ९, १४; ६६९,
 ६७४ । ६४, ७, १०, १२; ६८२, ६८५,
 ६८७ । ६५, १, १०; ६९२, ७०१ ।
 ६६, ३, ६; ७०९, ७१२ । ९२, ५-८, १४;
 ७२५-७२८, ७३३ । ९३, ८-९, ११;
 ७३३-४४, ७४६ । १००, १-२, ५-६,
 ११-१२, ७५१-५२, ७५५-५६, ७६१-
 ६२ । १०१, १, १२; ७६३, ७७४ ।
 १२६, ५; ७९६ । १२८, २, ७-८;
 ८०१, ८०६-८०७ । १४१, ५; ८२० ।
 १५७, १-३; ८२३-२५ । १६७, ३;
 ८३३ । ९८, १; १२२२ । १, १३६,
 ६-७; १२६४-१२६५

इन्द्रदेवताया गुणबोधकपदानि ।

| | |
|---------|-----|
| अहोमुक् | ६६६ |
| अज्यर्च | २६५ |

| | | | | | |
|------------------------------|----------|-------------------------------|----------|-------------------------------|---------------|
| अद्विवस् | ७६ | जुजुषाणः | २८१ | पर्जन्यः | ७१२ |
| अद्वि विष्णुः | ३०९ | जूजुवानः | ७४३ | पर्जन्यात्मा इन्द्रः | २०८ |
| अनर्वा | ६३९ | ज्येष्ठतातिः | २९४ | पात्रं नृन् | ६७ |
| अन्यासु रोरवीति | २०८ | तरणिः | ७२ | पायुः | ४८० |
| अप्रतीतः | २६५ | तक्ष्णः | १४६ | पिता १३१ (उत्तरार्धः), | ७५५ |
| अप्रयुच्छन् | २३५ | तवीयान् | ७२८ | पुरन्दरः | १८४ |
| अभिमातिषाहः | ८०६ | तस्थुषःपतिः | २३ | पुरन्धिः | २६४, ४८४, ६८९ |
| अभिष्टिः | ७६२ | तुरः-रासः | २६४, ५१७ | पुरुषः | ८०७ |
| अमृतः | २६४ | तुरणः | ७१ | पुरुहूतः | ७५, १८६, ८०७ |
| अरुणीः राट् | ६९ | तुरः विशाम् | ६९ | प्रतीचीनः | २९४ |
| अर्यः | ८१ | तुविष्टमः | १४५ | प्रथमः | ५१९ |
| अवः शश्वताम् | ७६१ | त्राता | २३५, ८०६ | प्रमतिः | ७५५ |
| अहा वि वर्तयन् | ३३७ | त्रिकुम्भ | ७० | प्रमतिः सुतावताम् | ७६१ |
| अहा सं वर्तयन् | " | त्रितः | १६३ | बर्हिषद् | २९४ |
| आशुः | २९४ | त्रिबन्धुः | ४७९ | भगः | २०८ |
| आहनाः | २७१ | दस्मः | ३४२ | भद्रः | ३४२ |
| ईशानः | २३ | दिव्यः | ४८० | भरः | ७५२ |
| उरुव्यचाः | ८०७ | देवः | ४५३ | भीमः | ७२८ |
| ऋते ते नाम | २९५ | देवानां शंसः | ५६८ | भुवनस्य पतिः | ८०६ |
| ऋभुः | ६८ | दैव्यः जनः | ६६९ | मघवा ८१, २८५, ४७५, ७५१, ८३३ | |
| ऋभुक्षाः १६३, २४१, २६४, ४७६, | | धनानां सजितः | २६४ | मनुः | ७५५ |
| ६८५, ७४३ | | धाता धातृणाम् | ८०६ | मरुत्वान् | २९५, १२२२ |
| ऋभुभिः सखा | १८६ | धातृणां धाता | " | महः-हे (चतु०) | २७१ |
| कारुः | ६३८ | धियंजिन्वः | २३ | महिषः | ६८ |
| कालात्मा इन्द्रः | २१९ | धृष्णुषेणः | १८४ | मायाभिः परः | २९५ |
| क्रतुप्रः | ७६२ | नरः गोः | ६८ | मिनानः रूपा वक्षणासु | २७१ |
| क्रतुप्रावा | ७६१ | नगां सुरभिष्टमः | १४६ | यजत्रः | ६७, ५६८ |
| क्षमावान् | २०८ | नर्यः | ७८ | यज्ञः | ७५५ |
| गिर्वेणः | २८३ | नाम ऋते ते | २४५ | योनिः उत्तानयोः चम्बोः | १३१ |
| गृणानः | " | नार्षदः | ६३९ | रजसस्पतिः | ४५३ |
| गोः नरः | ६८ | नि दधाति रेतः अन्यस्मिन् यूथे | २०८ | रथः इन्द्रस्य- | |
| घ्नन् वृत्राणि | ५४२ | नृपतिः | ६४८ | अरिष्यन् | ६७४ |
| चम्बोः उत्तानयोः योनिः | १३१ | नृन् पात्रम् | ६७ | प्रातर्यावा | " |
| चर्षणिप्राः | १४५ | पतिः | ७३४ | रथयुक् | ६८२ |
| चित्रभानुः | ७६२ | पतिः जगतः तस्थुषः च | २३ | रराणः | ६३८ |
| जगतः पतिः | २३ | पतिः भुवनस्य | ८०६ | राट् अरुणीः | ६९ |
| जनः दैव्यः | ६६९ | पत्यमानः विश्वेः वीर्यैः | १८४ | राजा | २०८, २२२ |
| जयन् | २९४ | परः मायाभिः | २९५ | रूपा मिनानः वक्षणासु | २७१ |
| जरिता | ७६१ | परिजमा | ७२५ | रेतः नि दधाति अन्यस्मिन् यूथे | २०८ |
| जिष्णुः | २६५, ४५३ | | | रोरवीति अन्यासु | " |

| | | | | |
|--------------------------|-------------------|----------------------------------|---------------|---|
| वक्षणासु रूपा मिनानः | २७१ | सखा ऋभुभिः | १८६ | रजिष्ठया रज्या पञ्च आ गोः ७६२ सुतूर्षति |
| वज्रः इन्द्रस्य- | | सचित् | ६८२ | पर्यग्रं दुवस्युः । |
| पार्थः | ७८ | सचेताः | ,, | मूषः न शिश्रा ४५ व्यदन्ति मा आध्यः । |
| मन्दी | ,, | सजितः धनानाम् | २६४ | राधः न ६३७ रेतः ऋतमित् तुरण्यन् । |
| वृत्रहा | ,, | सहसः सूनुः | ३६२ | शर्मसदः न वीराः २१२ पुरःसदः |
| वज्रं हस्ते बिभर्ति | ५४२ | सहसावान् | ७४४ | (मरुतः) । |
| वज्रबाहुः | ६४८ | साधुः | ४७६ | सपत्नीः इव ४५ पशवः अभितः तपन्ति । |
| वज्री | ४२९ | सुकृतः | ६६२ | स्वर् न ६३९ त्रिपथस्थे देवाः निषेदुः । |
| वाज्रिवान् | ८० | सुकतुः | १६०, २९५ | हितमित्रः न राजा २१२ उप क्षेति |
| वन्धः | ३२ | सुगोपाः | २९५, ४०३ | पृथिवीम् । |
| वसुः | ७४४ | सुतपाः | ७५१ | इन्द्र-अमी । ५, ४६, ३, ३२२ । ७, ३५, |
| वसोः वसुत्वा | ६३८ | सुतावतां प्रमतिः | ७६१ | १; ४४९ । १०, ६५, २; ६९३ । |
| वसुत्वा वसोः | ,, | सुत्रात्राः | ४०३ | १२८, ९; ८०८ |
| वसूनि विन्दमानः | २११ | सुनीथः | ,, | तन्वा समोकसा मिथः हिन्वाना |
| वाजः | २६४ | सुमेधाः | ७०१ | वृत्रहृत्थेषु सत्पती ६९३ |
| वाजप्रमहः (संबो०) | ८१ | सुरभिष्टमः नराम् | १४६ | सत्पती वृत्रहृत्थेषु समोकसा तन्वा |
| विद्वान् | ३६२ | सुशरणः | २७१ | हिन्वाना मिथः ६९३ |
| विन्दमानः वसूनि | २११ | सुशर्मा | ४०३ | इन्द्रा-पर्वता १, १२२, ३; ८४ |
| विवर्तयन् अहा | ३३७ | सुहवः | ६६९ | इन्द्रा-पूषणा ७, ३५, १; ४४९ |
| विशां तुरः | ६९ | सुनुः सहसः | ३६२ | इन्द्रा-मरुतः २, २९, ३, १५३ |
| विश्वचर्षणिः | १६० | सूरः | ७३, ७९ | इन्द्रा-वरुणा ७, ३५, १; ४४९ |
| विश्वधायाः | २१२ | स्तवानः | ३८३ | रातहृत्थ ४४९ |
| विश्वैः वीर्यैः पत्यमानः | १८४ | स्तुतः | ७५१ | इन्द्र-वायू १, १३९, १; ९७ । १०, ६५, |
| विष्यन् आद्रिम् | ३०९ | स्वयशाः | ४७६ | ९; ७०० । १४१, ४; ८१९ |
| वीरः | २०९, २११, ३८३ | स्वविद् | २९४ | पुरीषिणा ७०० |
| वीर्यैः विश्वैः पत्यमानः | १८४ | स्वर्विरोचमानः | २९५ | वृषभा ,, |
| वृजनः | २९४ | स्ववान् | ४०३ | सुहवा ८१९ |
| वृत्रस्त्रादः | ७०१ | हरिवान् | २६३, ४७६, ६४८ | इन्द्रा-विष्णु ४, ५५, ४; २३२ । १०, ६६, |
| वृत्रहा | ६२, १४५, १८४, ५६९ | हरी इन्द्रस्य- | | ४; ७१० |
| वृत्राणि घ्नन् | ५४२ | धायू | ४६७ | इन्द्रा-सोमा ७, ३५, १; ४४९ |
| वृद्धभवाः | २७ | प्रिया | ,, | इन्द्राणी २, ३२, ८; १२६६ |
| वृषभः | २०८ | वाजिना | ७०३ | इन्द्रा ३, ५५, १४; २०५ । ५, ४१, १९- |
| वृषा | २२५, ५१९, ७२८ | सुरथा | ४६७ | २०; २५८-२५९ । १०, ३६, ५; |
| शंसः देवानाम् | ५६८ | हर्यश्वः | ४७७, ८०७ | ५९८ |
| शचीपतिः | ६२ | हस्ते वज्रं बिभर्ति | ५४२ | अभ्यूर्णाना २५८ |
| शतक्रतुः | ४५ | हिरण्यबाहुः | ४२९ | उर्वशी ,, |
| शश्वतां अवाः | ७६१ | हूयमानः | २८१ | ऊर्वा तस्थौ २०५ |
| शरः | ४६७ | इन्द्रदेवताया उपमासूची । | | गृणाना २५८ |
| संवर्तयन् अहा | ३३७ | उषसः न सूरः ७२ प्र रोचि अस्याः । | | अग्निं रेरिहाणा २०५ |

| | | | | | |
|--|----------|-------------------------------|-----|------------------------------------|--------|
| पथा | २०५ | पितृभ्यः आ जोहुवाना | ३२८ | सुभगे | १६२ |
| पुरुषा वपूषि वस्ते | ,, | पूर्वाः | १९२ | उपमासूची । | |
| बृहद्दिवा | २५८ | प्रतीची | ४८१ | पत्नी इव ८३ पूर्वहृति वाधुध्वै । | |
| रेरिहाणा त्र्यविम् | २०५ | प्रथमा | ५८३ | ऋतवः १,१६४,१५; ११३। ५,४६, | |
| इळाः (भूमिस्थानाः देवताः सायनाचार्याः) | | प्रयुज्जती | ३२८ | ८; ३२७ | |
| १,१८६,१; १४० | | बोधयन्ती दुहितुः | ,, | गुणबोधकपदानि । | |
| उक्षाणः पञ्च १,१०५,१०; ४७ | | भद्राः | ५८४ | ऋतुः जनीनाम् | ३२७ |
| मद्गे दिवः मध्ये तस्थुः ४७ | | मघोनी | २३७ | ऋषयः | ११३ |
| उर्वशी ५,४१,१९-२०; २५८-२५९ । | | मनीषा | ३२८ | जनीनां ऋतुः | ३२७ |
| [देवसंघः मरुद्गणः वा] | | मही | ,, | देवजाः | ११३ |
| अभ्यूर्णाना आयोः प्रभृथस्य | | माता | ,, | यमाः षट् | ,, |
| गृणाना बृहद्दिवा २५८ | | युवतिः | ,, | षट् यमाः | ,, |
| उल्लूकः १०,१६५,४; ८३१ | | रेवती | ५८३ | साकंजानां सप्तथं एकजम् | ,, |
| उषाः १,९०,७; ३५। ३, २०, १,५, | | वसाना व्युतं अत्कम् | ८३ | ऋत्विजः ७,४३,२; ५०२। ८, ५८, १; | |
| १६८-१६९। ५५,१; १९२। ४, | | वाजिनीवती | २३७ | ५५५। १०, १०१, १-११; ७६३-७३। | |
| ५५,९; २३७। ५,४५, १-२; ३०९- | | विभाति एका एव इदं सर्वम् | ५५६ | गुणबोधकपदानि । | |
| ३१०। ४७,१, ३२८। ४८,२; ३३६। | | विभातीः | ४५८ | अनूचानः | ५५५ |
| ५१,८; ३५३। ६,५२,४; ४१२। | | व्युतं अत्कं वसाना | ८३ | कल्पयन्तः यज्ञं बहुधा | ,, |
| ७,३५,१०; ४५८। ३९,१; ४८१। | | त्रिया सूर्यस्य सुदृशी | ,, | कवयः | ७६६ |
| ४२,५; ४९९। ८, २७, २; ५१३। | | सिखते सूर्यस्य रश्मिभिः | ५८४ | धीराः | ,, |
| ५८,२; ५५६। १०, ३५, २-६; ५८१- | | सुदृशी सूर्यस्य त्रिया | ८३ | बहवः | ७६३ |
| ५८५। १०, ६४, ३; ६७८। १०१, | | सूत्रता | २३७ | बहुधा यज्ञं कल्पयन्तः | ५५५ |
| १, ७६३ | | सूर्यस्य रश्मिभिः सिखते | ५८४ | ब्राह्मणः | ,, |
| उपादेवताया गुणबोधकपदानि । | | उषासानक्ते १,१२२,२; ८३। १८६, | | यज्ञं बहुधा कल्पयन्तः | ,, |
| अत्कं व्युतं वसाना | ८३ | ४; १४३। २, ३१, ५; १६२। ४, ५५, | | युक्तः | ,, |
| अनमीवाः | ५८५ | ३; २३१। ५, ४१, ७; २४६। १०, | | सखायः | ७६३-७३ |
| अपरा | ३३६ | ३६, १; ५९४ | | सचेतसः | ५५५ |
| अपाची | ,, | गुणबोधकपदानि । | | सनीळाः | ७६३ |
| आ विद्यासन्ती | ३२८ | अदब्धे | २३१ | समनसः | ,, |
| उच्छन्ती | ५८३ | अपीजुवा जगताम् | १६२ | उपमासूची । | |
| उष्मा | ,, | जगतां अपीजुवा | ,, | अन्तः योना इव ७७३ चरति द्विजानिः । | |
| एका एव इदं सर्वं विभाति | ५५६ | पुरुधा विदाने | ८३ | यषसा इव गत्वी ७७१ सा नः दुहीयत् । | |
| गवां माता | ३१० | बृहती | ५९४ | हेत्वः न सतिः ५०२ यज्ञः प्र एतु । | |
| जानती | ,, | मिथुदृशा | १६२ | ऋतवः ३, ५४, १२, १८; १८१, १८७ । | |
| जायमाना | ४१२ | यङ्गी | २४६ | ५, ४२, १२, २७० । ४६, ४, ३२३ । | |
| जूर्णिः | ४८१ | विदाने पुरुधा | ८३ | ५१, १३; ३५८। ७, ३५, १२; ४६०। | |
| जोहुवाना पितृभ्यः आ | ३२८ | विदुषी विश्वम् | २४६ | ३६, ८; ४७१। ३७, १-२, ४७३- | |
| दुहितुः बोधयन्ती | ,, | विश्वं विदुषी | ,, | ४७४। १०, ९३, ७; ७४२। ६५, १०, | |
| देवी | १६९, ७६३ | सुपेशसा | ५९४ | ७०१। ६६, १०; ७१६ | |

गुणबोधकपदानि ।

| | |
|----------------|---|
| अपसः | २७० |
| ऊर्ध्वप्रावणः | १८१ |
| ऋभुक्षणः | ४७३-४७४ |
| दमूनसः | २७० |
| दिवः धर्तारः | ७१६ |
| देवाः | ३५८ |
| धर्तारः दिवः | ७१६ |
| पुरन्धिः | ४७१ |
| पूषण्वन्तः | १८१ |
| यक्षियासः | १८७ |
| रातिषाचः | ४७१ |
| वाजः | " |
| वाजाः | ४७३ |
| विभ्वा | ३२३ |
| सुकृतः | ४६० |
| सुक्षिप्राः | ४७३ |
| सुहस्ताः | २७०, ७०१, ७१६ |
| स्वधावन्तः | ४७४ |
| स्वर्दशः | " |
| ऋभुक्षाः-क्षणः | १, १८६, १०; १४९ । ५, ४१, २; २४१ । ४२, ५, २६४ । ६, ५०, १२; ३८९ । १०, ६४, १०; ६८५ । १०, ९२, ११; ७३१ । ९३, ७८; ७४२-७४३ |

गुणबोधकपदानि ।

| | |
|------------|----------|
| अमृतासः | २६४ |
| तुरासः | " |
| दैव्यः | ३८९ |
| पुरन्धिः | २६४ |
| वाजः | २६४, ३८९ |
| विभ्वा | ३८९ |
| विश्ववेदसः | ७४२ |

ऋषयः (पञ्च) ५, ४४, १२; ३०५

नामानि- १ तर्कः "

२ बाहुवृक्तः "

३ यजतः "

४ ध्रुतवित् "

५ सदापृगः "

पञ्च नामानि ५, ४४, १०; ३०५

१ एवावदः, २ क्षत्रः, ३ मनसः, ४ यजतः, ५ सग्निः च ।

त्रयाणां नामानि- ५, ४४, ११; ३०४

१ मायी, २ यजतः, ३ विश्ववारः च ।

ऋषयः (सप्त) १०, १०२, ४; ७७८

तपसे ये निषेदुः

"

पूर्वे

"

सप्त

"

ओषधीः-धयः १, ९०, ६; ३४ । ३, ५४, २१; १९० । ५५,

२२; २१३ । ५७, ३; २२५ । ५, ४१, ८, ११; २४७,

२५० । ४२, १६; २७४ । ६, २१, ९; ३६१ । ४२,

१४; ३७६ । ५२, ६; ४१४ । ७, ३४, २३, २५; ४४६,

४४८ । ३५, ५, ७; ४५३, ४५५ । ८, २७, २; ५१३ ।

१०, ६६, १०; ७१६

गुणबोधकपदानि ।

| | |
|------------------|----------------------|
| जामयः | २२५ |
| धेनवः | " |
| नमस्यन्तीः | " |
| पुत्रं वावशानाः | " |
| प्रस्वः | ४५५ |
| माध्वीः | ३४ |
| वावशानाः पुत्रम् | २२५ |
| ककुदः ३, ५४, १४; | १८३ |
| जनित्रीः | " |
| युवतयः | " |
| ऋषः (ऋषिः) | १०, ३१, ११; ५७८ |
| कृष्णः | " |
| नृषदः पुत्रः | " |
| पुत्रः नृषदः | " |
| वाजी | " |
| इयावा | " |
| कपोतः | १०, १६५, १-५; ८२८-३२ |
| इषितः | ८२८-८२९ |
| दूतः निर्ऋत्याः | ८२८ |
| निर्ऋत्याः दूतः | " |
| सकुनः | ८२९ |
| शिवः | " |

| | |
|--|-----|
| कृष्णानुः १०, ६४, ८; ६८३ | |
| क्षेत्रस्य पतिः १०, ६६, १३; ७१९ | |
| गयः १०, ६४, १६; ६९१ | |
| ऋतज्ञाः | ६९१ |
| कविः | " |
| चकानः द्रविणसः | " |
| द्रविणसः चकानः | " |
| द्रविणस्युः | " |
| विप्रः | " |
| तुवीरवान् | " |
| गायत्रम् (साम) १, १६४, २५; १२३ | |
| गिरयः ५, ४१, ११; २५० | |
| वृक्षकेशाः | " |
| गुह्यः २, ३२, ८; १२६६ | |
| गौः (गवः) १, १६४, १७, २६-२९, ४०; ११५, १२४-२७, १३८ । ७, ३५, १२; ४६० । १०, ६५, ६; ६९७ । १००, १०; ७६० | |

गुणबोधकपदानि ।

| | |
|------------------------|----------|
| अध्या | १२५, १३८ |
| अधिभ्रिता ध्वसनौ | १२७ |
| अभीवृता येन (वत्सेन) | " |
| अभिभ्यां पयः दुहा | १२५ |
| आचरन्ती | १३८ |
| इच्छन्ती वत्सम् | १२५ |
| दुहा पयः अभिभ्याम् | " |
| दुहाना पयः | ६९७ |
| धेनुः | १२४ |
| ध्वसनौ अधिभ्रिता | १२७ |
| धर्मं सृक्काणं वावशाना | १२६ |
| पयः दुहा अभिभ्याम् | १२५ |
| पयः दुहना | ६९७ |
| प्रज्जुवाणा | " |
| मगवती | १३८ |
| वत्सं इच्छन्ती | १२५ |
| (वत्सेन) येन अभीवृता | १२७ |
| वसुपत्नी | १२५ |

| | |
|---|-----|
| वावशाना सृक्काणं धर्मम् | १२६ |
| विष्णुत् भवन्ती | १२७ |
| वतनीः | ६९७ |
| सुदुघा | १२४ |
| सूयवसाद् | १३८ |
| सृक्काणं धर्मं अभि वावशाना | १२६ |
| द्विकृण्वती | १२५ |
| गोजाताः ७, ३५, १४; ४६२ | |
| गोयाम्बा (तान्व-दिदिक्षा) १०, ९३, १५; ७५० | |
| गोरूपेण आदित्यरश्मिसमूहः गोरूपिणी आहुतिः वा । १, १६४, १७; ११५ | |
| कद्रीची | ११५ |
| वत्सं अवः परेण पदा भिभ्रती | " |
| गो सवितारौ वा मेघवायू १, १६४, २६; १२४ | |
| 'गो' पदानि- | |
| धेनुः | १२४ |
| सुदुघा | " |
| 'सवितृ' पदानि- | |
| अभीष्टः | १२४ |
| गोधुक् | " |
| धर्मः | " |
| सुहस्तः | " |

मा, माः (देवपत्न्यः) पत्नीः च ५, ४१, ६; २४५ । ४२, १२; २७० । ४३, ६; २८१ । ४६, २, ७-८; ३२१, ३२६-३२७ । ५०, ३; ३४७ । ६, ४९, ७; ३६९ । ५०, १३, १५; ३९०, ३९२ । ७, ३४, २०, २२-२३; ४४३, ४४५-४४६ । ३५, ६; ४५४ । १०, ६४, १०; ६८५ । ६६, ३; ७०९ । ९२, १४; ७१४ । ८, ८०, १०; १२०५

गुणबोधकपदानि ।

| | |
|--------------------------|-----|
| अधृष्टाः | ३९२ |
| अपां व्रते (वर्तमानाः) | ३२६ |
| अरमतिः | २८२ |
| इष्टुध्यवः | २४५ |
| उशतीः | ३२६ |
| ऋतज्ञा | २८२ |
| ऋतसापः | २४५ |
| मा | २८२ |

| | |
|--|------------------------------|
| माः | ३२१, ३६९, ३९२, ४५४, ७०९, ७३४ |
| जनयः | ३२७, ३९०, ६८५ |
| दशस्यन्तीः | २७० |
| देवपत्नीः | ३२७ |
| पत्नीनामानि- | ३२७ |
| अग्नायी | " |
| अश्विनी | " |
| इन्द्राणी | " १२६६ |
| रोदसी | " ४४५ |
| वरुणानी | " " |
| देवी | २८२ |
| देवीः | ३२६, १२०५ |
| पत्नीः | २४५, ४४३ |
| पार्थिवासः | ३२६ |
| पुरन्धीः | २४५ |
| पत्नीः वृष्णः | २७० |
| बृहती | २८२ |
| मही | " |
| राट् | ३२७ |
| रातह्व्या | २८२ |
| रातिषाचः | ४४५ |
| वरुत्रीः | " |
| वसवः | ३९२ |
| वस्वीः | ३४७ |
| विभ्वतष्टाः | २७० |
| विश्वः | ७३४ |
| वृष्णः पत्नीः | २७० |
| शुभ्राः | " |
| सुहवाः | ३२६ |
| स्तुतासः | ३९२ |
| हुतासः | " |
| प्रावाणः १, ८९, ४, २२ । ७, ३५, ७, ४५५ । १०, ३६, ४, ५९७ । ६४, १५, ६९० । ९२, १५, ७३५ । १००, ८-९, ७५८-७५९ | |
| अग्रयः | ७५८ |
| ऊर्ध्वः-र्धाः | ७३५, ७५९ |

| | |
|--------------------------------------|----------|
| मधुषुद् | ६९०, ७५८ |
| मयोभुवः | २२ |
| सोमसुनः | " |
| धर्मः ५, ४३, ७; २८३ = धर्म पात्रम् । | |
| १०, १८१, ३, ८३६ । = हविः । | |

उपमासूची ।

| | |
|---|-----------------|
| पितुः न पुत्रः उपसि प्रेष्ठः २८३ धर्मः अग्निं आ असादि । | |
| वपावन्तं न २८३ अग्निना तपन्तः अजन्ति । | |
| धर्मा १०, ११४, १; ७८२ = अग्निः आदित्यश्च । | |
| चक्रम् १०, १६४, २, ११; १००, १०९ | |
| अग्निः | १०९ |
| अजरम् | १०० |
| अनर्वम् | " |
| जराय न | १०९ |
| त्रिनाभि | १०० |
| द्वादशारम् | १०९ |
| विश्वः भुवना यत्र अग्नि तस्थुः | १०० |
| सप्त शतानि विंशतिश्च पुत्राः मिथुनासः अत्र तस्थुः १०९ | |
| चन्द्रमाः १, १०५, १; ३८ । १०, ६४, ३; ६७८ । ९२, १४; ७३४ | |
| अक्तोः युवा | ७३४ |
| युवा अक्तोः | " |
| सुपर्णः | ३८ |
| जगत् (साम) | १, १६४, २५; १२३ |
| जनाः पञ्च ६, ५१, ११; ४०३ । १०, ५३, ४-५; १२१०-११ | |
| ऊर्जादः | १२१० |
| गोजाताः | १२११ |
| यज्ञियासः | १२१०-१२११ |
| सुगोपाः | ४०३ |
| सुनीथाः | " |
| सुशर्माणः | " |
| स्ववसः | " |
| जनयः (जनिः) | १०, ६४, १०; ६८५ |
| जिह्वा | १०, १३७, ७; ८१५ |
| वाचः पुरोगवी | " |
| जीवात्म-परमात्मानौ | १, १६४, २०; ११८ |

| | |
|--|-----------------|
| द्वा सखाया समानं वृक्षं परि षस्वजाते | ११८ |
| सयुजा | " |
| सुपर्णा | " |
| जीवात्मा-सादु विष्पलं अति । | ११८ |
| परमात्मा-अनश्नन् अभि चाकशीति । | " |
| तत्त्वविद् | ११४ |
| कविः | " |
| तनयितुः | १०, ६६, ११; ७१७ |
| तन्यतुः | १०, ६५, १३; ७०४ |
| पार्वीरवी | " |
| ताक्ष्यः | १, ८९, ६; २४ |
| अरिष्टनेमिः | " |
| तिष्यः | १०, ६४, ८; ६८३ |
| त्वष्टाः १, १८६, ६; १४५ । २, ३१, ४; १६१ । ३, ५४, १२; | |
| १८१ । ५५, १९; २१० । ५, ४१, ८; २४७ । ४६, ४; | |
| ३२३ । ६, ४९, ९; ३७१ । ५०, १३; ३९० । ५२, ११; | |
| ४१९ । ७, ३४, २०-२२; ४४३-४४५ । ३५, ६; ४५४ । | |
| ८, २८, ३; ५४१ । १०, ६४, १०; ६८५ । ६६, ३; ७०९ । | |
| ९२, ११; ७३१ । १८४, १; ८३७ | |

त्वष्टादेवताया गुणबोधकपदानि ।

| | |
|---------------------------|--------------------|
| अरमतिः | ४४४ |
| ऋतावान् | १८१ |
| ऋभ्वा | ३७१ |
| देवः | १८१, २१०, ३७१, ७३१ |
| देवेषु अन्तः निर्धृविः | ५४१ |
| निर्धृविः देवेषु अन्तः | " |
| पस्त्यानां यजतः | ३७१ |
| पिता | ६८५ |
| पोष्यावान् | २४७ |
| प्रजाः विविधाः जजान | ५१० |
| " " पुपोष | " |
| प्रथमभाक् | ३७१ |
| विभ्रत् आयसीं वाशीं हस्ते | ५४३ |
| भुवनस्य सक्षणिः | १६१ |
| यजतः पस्त्यानाम् | ३७१ |
| यशः | " |

| | |
|---|-----------------|
| वयोधाः | ३७१ |
| वसूयुः | ४४४ |
| वाशीं हस्ते विभ्रत् | ५४३ |
| विश्वरूपः | २१० |
| सक्षणिः भुवनस्य | १६१ |
| सविता | २१० |
| सुकृत् | १८१ |
| सुगभरितः | ३७१ |
| सुदत्रः | ४४५ |
| सुपाणिः | १८१, ३७१, ४४३ |
| सुशरणाः | ४४५ |
| सुहवः | ३७१ |
| स्ववान् | १८१ |
| वक्षः | १, ८९, ३; २१ |
| अस्त्रिधः | " |
| दधिक्राः ३, २०, १, ५; १६८-१६९ । ७, ४४, १; ५०६ । | |
| १०, १०१, १; ७६३ | |
| दिव्याः ७, ३५, ११, १४; ४५९, ४६२ | |
| दिशः (वा मेघाः) | ३, ५५, १६; २०७ |
| अप्रदुग्धाः | " |
| अशिन्धीः | " |
| धेनवः | " |
| नव्यानव्याः | " |
| भवन्तीः | " |
| युवतयः | " |
| शशयाः | " |
| सर्वर्षाः | " |
| दीधितिः | १, १८६, ११; १५० |
| अपिप्राणी | " |
| यजत्रा | " |
| वसूयुः | " |
| सदनी | " |
| देवः | १, १०६, ७; ६३ |
| अप्रयुच्छन् | " |

देवगण-संख्या वा १, १२२, ८; ८९ । ५, ४१, २०; २५९ । ६, ५१, १२; ४०४ । ७, ४४, २; ४९६ । १०, ५७, ५; ६२५

गुणबोधकपदानि ।

| | |
|--|-----------------|
| जनः | ८९ |
| जनः दैव्यः | ६२५ |
| जनिमा देवानाम् | ४९६ |
| जन्म देवानाम् | ४०४ |
| देवानां जनिमा | ४९६ |
| देवानां जन्म | ४०४ |
| दैव्यः जनः | ६२५ |
| पञ्चभ्यः वाजिनीवान् | ८९ |
| महिमवः | " |
| महां सूरिः | " |
| वाजिनीवान् पञ्चभ्यः | " |
| सूरिः अश्वः वतः रथिनः मह्यम् | " |
| देवाः [' विश्वे देवाः ' द्रष्टव्यम्] | |
| देवानां देवाः | ७, ३५, १५; ४६३ |
| अमृताः | " |
| ऋतज्ञाः | " |
| मनोः यजत्राः | " |
| यज्ञियानां देवानां यज्ञियाः | " |
| देवो देवः ५, ४२, १६; २७४। ४३, १५; | |
| २९१। ८, २७, १३; ५२४ | |
| सुहवः | २७४, २९१ |
| देवपत्नीः [' माः ' द्रष्टव्यम्] | |
| देवी ५, ४१, १८; २५७। १०, १४१, २; | |
| ८१७ | |
| द्रवन्ती | २५७ |
| मृलयन्ती | " |
| सुदन्तः | " |
| देवीः (तिलः) | ३, ५६, ५; २१८ |
| अप्याः | " |
| ऋतावरीः | " |
| योषणाः | " |
| विश्वे दिवः त्रिः आ पर्यमानाः | " |
| देवीः (षट्) | १०, १२८, ५; ८०४ |
| देहात्मानो (देहात्म-जीवात्मानो- सायनाचार्याः ।) | १, १६४, ३८; १३६ |
| देहः- | आत्मा- |
| अन्यं नि चिक्युः अन्यं न नि चिक्युः | |
| मर्त्यः अमर्त्यः, मर्त्येन सयोनिः | |
| दे० [विश्वे देवाः] २० | |

| | |
|---|---------------|
| स्वधा | स्वधया गृभीतः |
| देहात्मानो-वियग्ता, विषुचीना, शश्वन्ता, | |
| १३६ | |
| योः १, ८९, ४; २२। ९०, ७; ३५। | |
| १०५, १९; ५६। १०६, ७; ६३। | |
| १०७, ३; ६६। १६४, ९, ३३; १०७, | |
| १३१। ३, ५४, २-३, ९, १९; १७१- | |
| १७२, १७८, १८८। ५५, १२-१३; | |
| २०३-२०४। ५, ४१, ११; २५०। | |
| ४३, २; २७८। ४५, २-३; ३१०-११। | |
| ४६, ३; ३२२। ६, ५०, १३; ३९०। | |
| ५१, ५; ३९७। ५२, २; ४१०। ७, | |
| ३४, २३; ४४६। ४३, १; ५०१। | |
| १०, ३६, २; ५९५। ५६, ३; ६१६। | |
| ६३, १०; ६७० | |

द्यौर्देवताया गुणबोधकपदानि ।

| | |
|---------------------------------|----------|
| अनेहाः | ६७० |
| अन्यस्यः वत्सं रिहती | २०४ |
| उरु | १७८ |
| ऋतावरी | ५९५ |
| जनिता | १३१, १७८ |
| दक्षिणायाः धुरि युक्ता | १०७ |
| दुहिता | १८८ |
| धेनुः | २०४ |
| पन्थाः व्युतः | १७८ |
| पिता २२, ३५, १३१, १७८, १७८, ३९७ | |
| प्रचेतसः | ५९५ |
| बन्धुः | १३१ |
| महः | १७१, १७८ |
| माता | १०७ |
| युक्ता दक्षिणायाः धुरि | " |
| रिहती अन्यस्याः वत्सम् | २०४ |
| व्युतः पन्थाः | १७८ |
| सुमिता | ३१० |

उपमासूची ।

| | |
|--------------------------------------|--|
| स्थूणा हव ३१० योः सुमिता हंहत । | |
| द्यावापृथिवी (रोदसी) १, १०५, १-१८; | |
| ३८-५५। १०६, ३; ५९। २, ३१, ४; | |
| १६१। ३, ५४, ३-४, ६-१०; १७२- | |

| | |
|--------------------------------|--|
| ७३, १७५-७६। ५५, १२, २०; २०३, | |
| २११। ५६, १, ७; २१४, २२०। | |
| ३, ८, ८; २२२। ५७, ४; २२६। ४, | |
| ५५, १, ३, ६; २२९, २३१, २३४। ५, | |
| ४३, २; २७८। ४२, ५; ३४४। ५१, | |
| ११; ३५६। ६, ५०, ३; ३८०। ५२, | |
| १४; ४२२। ७, ३४, २३-२४; ४४६- | |
| ४४७। ७, ३५, ३, ५; ४५१, ४५३। | |
| ३९, ७; ४८७। ४०, २; ४८९। | |
| ४४, १; ५०६। १०, ३५, १-३; ५८०- | |
| ५८२। ३६, १; ५९४। ६३, ९; ६६९। | |
| ६४, १४; ६८९। ६५, ८; ६९९। | |
| ६६, ४, ६; ७१०, ७१२। ९२, | |
| ११-१२; ७३१-७३२। ९३, १, १०; | |
| ७३६, ७४५। १, १३६, ६; १२६४ | |

द्यावापृथिवी (रोदसी)

देवताया गुणबोधकपदानि ।

| | |
|-----------------------------|----------|
| अदितिः | २२९ |
| अद्रुहा | २१४ |
| अमृधे | २७८ |
| उभे १११, २३१, ४२२, ४४६, ६८९ | |
| उर्वी २२०, ४४७, ७३६ | |
| ऋतस्य योना | १७५, ६९९ |
| ऋतावरी | १७३, ७१२ |
| ऋतामृधा | ५२ |
| क्षयतः समोकसा | ६९९ |
| चम्वा | २११ |
| जागरुके | १७६ |
| कूरेअन्ते | " |
| देवपुत्रे | ५९ |
| देवान् विश्वती | १७७ |
| देवी | ५९ |
| द्यावाक्षामा | २२२, ५९४ |
| द्यावाभूमी | २२९ |
| विषणे | ३८० |
| धेनू | २०३ |
| परिक्षिता | ६९९ |
| पितरा | " |
| पिता माता | २७८ |

| | |
|-----------------|--|
| पूर्वजावरी | ६९९ |
| विभ्रती देवान् | १७७ |
| बृहती | ४५१ |
| भवन्ती | १७६ |
| भूरिरेतसा | ७३१ |
| मदन्ती | १७५ |
| मधुवचा | २७८ |
| मही | २११, ५८०, ५८२, ६८९, ७३६ |
| मातरा | ५८२, ६८९ |
| मिथुनानि नाम | १७६ |
| यशसो | २७८ |
| युवती | १७६ |
| योना ऋतस्य | १७५, ६९९ |
| रोदसी | ३८-५५, २१४, २२०, २२६, २८४, ३८०, ४४६, ७३६, १२६४ |
| वदणाय सव्रते | ६९९ |
| विद्वते | १७५ |
| वियुते | १७६ |
| वृषणा | ७१२ |
| शमीनहुषी | ७३२ |
| संविदने | १७५ |
| सबर्दुधे | २०३ |
| समान्या | १७६ |
| समीची | २०३, २११ |
| समोक्तसा क्षयतः | ६९९ |
| सव्रते वरुणाय | " |
| सुमेके | २२६ |
| सुधुम्ने | ३८० |
| सुहस्ता | २७८ |
| स्वसारा | १७६ |

द्यावापृथिवी (रोदसी)

देवताया उपमासूची ।

| | |
|---------------------------------------|-----|
| नारी यङ्गी न ७३६ रोदसी सदनं नः । | |
| यथा वेः १७५ नाना चक्रानि सदनम् । | |
| समुद्रं न सखरणे सनिष्यवः २३४ स्तुवीत | |
| देवी अप्येभिः इष्टैः । | |
| यु-पृथिवी-अन्तरिक्षम् १०, ११४, २, ७८३ | |
| तिस्रः निर्ऋतीः | ७८३ |

| | |
|---|---------------|
| धर्ता ७, ३५, ३; ४५१ | |
| धर्मः १०, ५६, ३; ६१६ | |
| धाता ३, ५४, १३; १८२ । ७, ३५, ३; ४५१ । १०, १६७, ३; ८३३ । १८१, १-३, ८३४-३६ । १८४, १, ८३७ | |
| धिषणा ३, ५६, ६; २१९ । ५, ४१, ८; २४७ । १०, ३५, ७; ७८६ | |
| जनित्री रायः | ५८६ |
| धन्या | २४७ |
| रायः जनित्री | ५८६ |
| धीः | ७, ३४, ९; ४३४ |
| देवी | " |
| धियः ७, ३५, ११; ४५९ । १०, ६५, १३-१४; ७०४ ७०५ | |
| धेनुः | ३, ५७, १; २२३ |
| अगोपाः | " |
| चरन्ती | " |
| पनितारः अस्याः इन्द्रः अग्निश्च | " |
| प्रयुता | " |
| मनीषा | " |
| धेनवः ५, ४३, १; २७७ । ७, ३६, ३; ४६६ । ४२, १; ४९५ | |
| अमर्धन्तीः | २७७ |
| उदप्रुतः | ४९५ |
| तूर्ण्यथाः | २७७ |
| पयसा मध्वा (युक्ताः) | " |
| बृहतीः | " |
| मध्वा पयसा (युक्ताः) | " |
| मयोमुवः | " |
| सप्त | " |
| सूराः | ४६६ |
| नक्षत्रम् १, ९०, ७; ३५ । ७, ४२, ५; ४९९ । ८, २७, २; ५१३ | |
| नक्षत्राणि ३, ५४, १९; १८८ | |
| नवाः ५, ४१, १४; २५३ । ४२, १२; २६३ । ४३, १; २७७ । ४५, २; ३१० । ४६, ६; ३२५ । ७, ३६, ६; ४६९ । १०, ६४, ८; ६८३ | |

| | |
|--|---------------------|
| अभिषाताः | २५३ |
| अर्णाः | " |
| आदोअर्णाः | ३१० |
| गिरः | २५३ |
| चन्द्राग्राः | " |
| त्रिःसप्त | ६८३ |
| द्यावः | २५३ |
| धन्वर्णसः | ३१० |
| पत्नीः वृष्णः | २७० |
| पयसा स्वेन पीप्यनाः | ४६९ |
| पीप्य नाः स्वेन पयसा | " |
| यशसः | " |
| वावसानाः | " |
| विभ्रतष्टाः | २६३ |
| वृष्णः पत्नीः | २७० |
| सप्ताः | ६८३ |
| सुदीतयः | ३२५ |
| सुदुधाः | ४६९ |
| सुधाराः | " |
| नमः | ६, ५१, ८-९; ४००-४०१ |
| नरः ('नृ' बहुवचनम्) ५, ५०, ३; ३४७ | |
| नरांसः ७, ३५, २; ४५० । १०, ६४, ३; ६७८ । ९२, ११; ७३१ | |
| चतुरङ्गः | ७३१ |
| शंसः | ४५० |
| नामानेदिष्टः (मन्त्रद्रष्टा) १०, ६१, १९; ६४५ | |
| निशाः = व्रजिनीः ५, ४५, १; ३०९ | |
| निर्ऋतिः ५, ४१, १६; २५५ । १०, ३६, २; ५९५ । ११४, २; ७८३ | |
| तिस्रः | ७८३ |
| दुर्विदत्रा | ५९५ |
| नोः (देवी) १०, ६३, १०; ६७० | |
| अनागाः | ६७० |
| अस्त्रवन्ती | " |
| देवी | " |
| स्वरित्रा | " |
| पतवः सत्यस्य | ७, ३५, १२; ४६० |
| पत्नीः ['देवपत्नीः (माः)' द्रष्टव्यम्] | |

| | |
|---|-----|
| पन्थाः ३,५४,२१, १९० । ५,५१, १४-१५, ३५९-३६० । ६,५१,१६; ४०८ | |
| अनेहाः | ४०८ |
| पथ्या | ३५९ |
| पितृमान् | १९० |
| रेवती | ३५९ |
| सुगः | १९० |
| स्वस्तिका | ४०८ |

उपमासूची ।

सूर्याचन्द्रमसौ इव ३६० पन्थाः स्वस्तित
अनु चरेम ।

परमात्मा (आदित्यः वा) १,१६४,२१-
२२,३१; ११९-१२०,१२९

अनिपथमानः १२९

आचरन् पथिभिः "

इनः ११९

गोपाः १२९

गोपाः विश्वस्य भुवनस्य ११९

धीरः "

पतिभिः आचरन् १२९

पिता १२०

भुवनस्य विश्वस्य गोपाः ११९

मध्वदः १२०

वसानः विषूचीः १२९

वसानः सध्रीचीः "

विषूचीः वसानः "

सध्रीचीः वसानः "

सुपर्णाः ११९-१२०

परमेश्वरस्य आविषयत्वम् १, १६४,
४७, १०२-१०५

पञ्चन्यः १,१६४,३३, १३१ । ५,४२,
१३-१४; २७१-२७२ । ६,५२,६;
४१४ । ७,३५,१०; ४५८ । ३६,३;
४६६ । ४२,१,४९५ । १०,६६,६;
७१२ । ९५,५; ७२५

अग्निमान् २७२

आहनाः २७१

इक्ष्वाती २७२

| | |
|-------------------------|--------------------|
| उक्षमाणः रोदसी विद्युता | २७२ |
| उदनिमान् | " |
| कन्दनुः | ४९५ |
| गर्भः दुहितुः | १३१ |
| जठरे रोक्ष्वत् | ७२५ |
| जायमानः दिवः सवने | ४६६ |
| दिवः सवने जायमानः | " |
| दुहितुः गर्भः | १३१ |
| पिता | १३१ (उत्तरार्धः) |
| महे (चतु०) | २७१ |
| मिनानः रूपा वक्षणासु | " |
| रुक्म | २७२ |
| रूपा मिनानः वक्षणासु | २७१ |
| रोदसी उक्षमाणः विद्युता | २७२ |
| रोक्ष्वत् जठरे | ७२५ |
| वक्षणासु रूपा मिनानः | २७१ |
| विद्युता रोदसी उक्षमाणः | २७२ |
| वृषभः | ४६६ |
| सुशरणः | २७१ |
| स्तनयन् | २७२ |

पञ्चन्यवाता ६,४२,६; ३६८ । ५०,१२;
३८९ । १०,६५,९; ७०० । ६६,१०;
७१६

पुरीषिणा ७००

वृषभा ३६८, ७००

पर्वतः-तासः ३, ५४, २०; १८९ ।

५६,१; २१४ । ४,५५,५; २३३ ।

५,४१,९; २४८ । ४५,३; ३११ ।

४६,३,६; ३२२, ३२५ । ६,२१,९;
३६१ । ४९,१४; ३७६ । ५२,१,४;
४०९,४१२ । ७,३४,२३; ४४६ । ३५,
८; ४५६ । ३७,८; ४८० (पर्वतः) ।

८,५४,४; ५५४ । १०,३५,२; ५८१ ।

३६,१; ५९४ । ६४,८; ६८३

गुणबोधकपदानि ।

इक्ष्वा मदनतः २०

तस्थिवांसः २१४

भ्रुवक्षेमासः २०

भ्रुवयः ४५६

| | |
|---------------|-----|
| भ्रुवासः | ४१२ |
| मदनतः इक्ष्वा | २० |
| वसवो न वीराः | २४८ |
| सुभ्रवः | ४०९ |
| सुशस्तयः | ३२५ |

उपमासूची ।

वसवः न वीराः २४८ पर्वताः स्वै-
तवः सन्तु ।

पशुः ८,२७,२; ५१३

पार्थिवाः ७,३५,११,१४; ४५९,४६२

पितरः १,१०९,३; ५९ । ३,५२,२;

१९३ । ६,५२,४; ४१२ । ७,३५,१२;

४६० । १०,५६,४,६; ६१७,६१९ ।

५७,३,५; ६२३,६२५ । १०, १४,

७-९; १२६७-१२६९

पदज्ञाः १९३

पूर्वे "

सुप्रवचनाः ५९

पुरन्धिः ७,३५,२; ४५० । ३९,४; ४८४ ।

१०,६५,१३; ७०४

पूषा १, १४, ३-४; ६-७ । ८९, ५-६;

२३-२४ । ९०, ४-५; ३२-३३ ।

१०६, ४; ६० । १२२, ५; ८६ ।

१८६, १०; १४९ । २, ३१, ४; १६१ ।

३, ५७, २; २२४ । ५, ४१, ४;

२४३ । ४३, ९; २८५ । ४६, २-३, ५;

३२१-३२२, ३२४ । ४९, ३; ३४२ ।

५१, ११; ३५६ । ६, २१, ९; ३६१ ।

४९, ८; ३७० । ५०, ५; ३८२ । ५१,

११, ४०३ । ७, ३५, ९; ४५७ । ३६,

८; ४७१ । ३९, २; ४८२ । ४०, ६;

४९३ । ४१, १; ४९४ । ४४, १;

५०६ । ८, २७, ८; ५१९ । २९, ६;

५४४ । ५४, ४; ५५४ । १०, ६४,

३, ७; ६७८, ६८२ । ६५, १; ६९२ ।

६६, ५; ७११ । ९२, १३; ७३३ ।

९८, १, १२२२

पूषादेवताया गुणबोधकपदानि ।

अदन्धः २३

अध्यर्धयज्ञः ३८२

| | |
|---------------------|-----|
| अनर्घणः | ३५६ |
| अर्कः | ३७० |
| असुरः | ३५६ |
| आधुनिः | ४२३ |
| कण्वहेता | २४३ |
| क्षयद्वीरः | ६० |
| चोदिता मतीनाम् | २८५ |
| चोदिता वाजरय | " |
| तव्यसः (षष्ठी) | " |
| तुरः | " |
| त्रितः | २४३ |
| दिवः | " |
| दिव्यः | " |
| ब्रविणोदाः | २८५ |
| निधीनां वेदः | ५४४ |
| नियुत्व न् | ४८९ |
| पथः पोषाय | ५४४ |
| पथस्पथः परिपतिः | ३७० |
| परिपतिः पथस्पथः | " |
| पायुः | २३ |
| पोष.य पथः | ५४४ |
| पुरन्धिः | १६१ |
| मतीनां चोदिता | २८५ |
| रक्षिता वेदसां वृधे | २३ |
| वन्यः | ३२ |
| वाजस्य चोदिता | २८५ |
| विदध्यः | ४७१ |
| विश्वदेव्यः | ७३३ |
| विश्वभोजः | २४३ |
| विश्ववेदाः | २४ |
| वीरः | ४७१ |
| वृधे वेदसां रक्षिता | २३ |
| वेदसां वृधे रक्षिता | " |
| सक्षणः | २४३ |
| सचित् | ६८२ |
| सचेताः | " |
| सजोषाः | २४३ |

पूषादेवताया उपमासूची ।

यथा वेदसां असत् वृधे रक्षिता २३ पूषा

| |
|--|
| स्वस्तये पायुः । |
| पृथिवी १,८९,४; २२ । ९०,७; ३५ । |
| १०५,१९; ५६ । १०६,७; ६३ । |
| १०७,३; ६६ । १६४,८-९, ३३; १०६-१०७, १३१ । ३,५४,२-४, १९; १७१-१७३, १८८ । ५५, १२-१३, २२; २०३-२०४, २१३ । ३,८,८, २२२ । ५,४२, १६; २७४ । ४३, २, ६५, २७८, २९१ । ४६, ३; ३२२ । ६, ५०, १३-१४; ३९०-३९१ । ५१,५, ११; ३९७, ४०३ । ७, ३४, २३; ४४६ । ३५, ३; ४५१ । ३६, १, ४६४ । ४३, १; ५०१ । ८, २७, २, ५१३ । ५४, ४; ५५४ । १०, ३६, २, ५२५ । ५६, २; ६१५ । ६३, १०, ६७० । १०, ५३, ५, १२११ |

गुणबोधकपदानि ।

| | |
|--|-----|
| अधुक् | ३९७ |
| अपिन्वत ऋतस्य पयसा | २०४ |
| इळा | " |
| उरूची | ४५१ |
| उर्वा | ४६४ |
| ऋतस्य पयसा अपिन्वत | २०४ |
| ऋतावरी | ५२५ |
| गर्भरसा निविद्धा | १०६ |
| गोः | १०७ |
| तनूः तन्वं नयन्ती | ६१५ |
| दक्षिणा | १०७ |
| दुहिता | १३१ |
| नयन्ती तन्वं तनूः | ६१५ |
| निविद्धा गर्भरसा | १०६ |
| पार्थिवं रजः | ३५ |
| प्रचेतसः | ५९५ |
| बन्धुः | १३१ |
| बीभत्सुः | १०६ |
| मधुमत् | ३५ |
| मही | १३१ |
| माता २२, १०६-१०७, १३१, २०३, २७४, २९१ ३९७ | |

| | |
|------------------|-----------------|
| रजः पार्थिवम् | ३५ |
| विश्वरूप्यम् | १०७ |
| सुगोपाः | ४०३ |
| सुत्रात्राः | " |
| सुत्रामा | ६७० |
| सुशर्मा | ४०३ |
| स्व (सु+अ) वस् | " |
| पृथ्विः | ७, ३५, १३; ४६१ |
| देवगोपाः | " |
| प्रजापतिः | १०, १८४, १, ८३७ |
| प्रदिशः | ७, ३५, ८, ४५६ |
| चतस्रः | " |
| प्रमतिः (अमेः) | ३, ५७, ६; २२८ |
| असञ्चन्ती | " |
| चित्रा | " |
| विश्वजन्या | " |
| सुमतिः | " |

उपमासूची ।

| | |
|--|-----------------|
| पर्वतस्य इव धारा २२८ असञ्चन्ती । | |
| प्रवाचनम् (देवानाम्) १०, ३५, ८, ५८७ | |
| ऋतस्य प्रवाचनम् | " |
| प्रश्नाः १०, ११४, ९, ७९० | |
| प्रश्न-प्रतिवचनानि १, १६४, ३४-३५; १३२-१३३ | |
| बर्हिः | ७, ३९, २; ४८२ |
| बृहत् | १०, १८१, २; ८३५ |
| बृहदुक्थः | १०, ५६, ७; ६२० |

उपमासूची ।

| |
|---|
| नावा न क्षोदः ६२० प्रदिशः पृथिव्याः |
| स्वस्तिभिः अति दुर्गाणि विश्वा । |
| बृहस्पतिः १, १४, ३-४, ६-७ । ८९, ६; २४ । ९०, ९; ३७ । १०५, १७; ५४ । १०६, ५; ६१ । ३, २०, ५; १६९ । ५, ४२, ७-९; २६६-२६८ । ४३, १२; २८८ । ४६, ५; ३२४ । ५१, १२ ३५७ । १०, ३५, ११; ५९० । ३६, ५, ५२८ । ६४, ४, १५; ६७९, ६९० |

१२, १०; ७३० । १००, ५; ७५५ ।
१०९, ५; ७७९ । १२८, ७; ८०६ ।
१४१, २-५; ८१७-८२० । १६७, ३;
८३३ । ९८, १-३, ७; १२२२-
१२२४, १२२८

गुणबोधकपदानि ।

| | |
|---------------|-----|
| अरमतिः | ६९० |
| अरुषः | २८८ |
| दीदिबान् | " |
| धनानां सनिता | २६६ |
| नीलपृष्ठः | २८८ |
| पुरुवसुः | २६६ |
| प्रथमः | " |
| बृहन् | २८८ |
| रत्नधेयः | २६६ |
| वेधाः | २८८ |
| शामू | ३७ |
| शाम्भविष्ठः | २६६ |
| सनिता धनानाम् | " |
| सर्वगणः | ३५७ |
| सादद्योनिः | २८८ |
| हिरण्यवर्णः | " |

उपमास्त्वही ।

जुष्टं न देवा ७७२ जाया अन्वविन्दन्
बृहस्पतिः ।
दूतः आ १२२३ देवः अजरः ।
ब्रह्मा ७, ३५, ७; ४५५ । ३६, १; ४६४ ।
८, ५८, २; ५५६ । १०, ६१, ७; ६३३ ।
१०, ११४, ८; ७८९
एकं वा इदं सर्वं विभूय ५५६
ब्रह्मा ८, ५८, ३; ५५७ । १०, ५२, २;
६०९ । १४७, ३; ८१८

| | |
|---------------|-----|
| अतिरिक्तः | ५५७ |
| केतुमान् | " |
| कबोस्तिम्बान् | " |
| त्रिचक्रः | " |
| भूरिवारः | " |
| रथः | " |

| | |
|---|-----|
| समिद्ध | ६०९ |
| सुखः | ५५७ |
| सुषुप् | " |
| ब्रह्माजाया १०, १०९, ३-४; ७७७-७८ | |
| उपनीता ब्राह्मणस्य | " |
| जाया | " |
| भीमा | " |
| ब्रह्मणस्पतिः ५, ४२, ९; २६८ । ४६, ३; ३२२ । ७, ४१, १; ४७४ । ४६, १; ५०६ । ८, २७, १; ५१२ । १०, ६५, १; ६९२ | |

भगः १, १४, ३-४; ६-७ । ८९, ३;
२१ । ९०, ४; ३२ । २, ३१, ४;
१६१ । ३, २०, ५; १६९ । ५४, २१;
१९० । ५६, ६; २१९ । ४, ५५, ५,
१०; २३३, २३८ । ५, ४१, ४, ११;
२४३, २५० । ४२, १, ५; २६०,
२६४ । ४६, २-३, ६; ३२१-३२२,
३२५ । ४८, ५; ३३९ । ४२, १, ३;
३४०, ३४२ । ५१, ११; ३५६ ।
६, ४९, १४; ३७६ । ५०, १, १३;
३७८, ३९० । ५१, ३, ११; ३९५,
४०३ । ७, ३५, २; ४५० । ३६, ८;
४७१ । ३२, ४; ४८४ । ४०, २;
४८९ । ४१, १; ४९४ । ४४, १;
५०६ । १०, ३१, ४; ५७१ । ३५,
१०-११; ५८२-५९० । ६३, ९;
६६९ । ६४, १०; ६८५ । ६६, १०;
७१६ । ९३, ४, ७; ७३९, ७४२ ।
१४१, २; ८१७ । १, १३६, ६;
१२६४

भगो देवताया गुणबोधक-
पदानि ।

| | |
|------------|----------|
| अविता धियः | ४७१ |
| आश्वत्थतमः | २४३ |
| कम्बहोता | " |
| चिकित्सान् | २५० |
| प्राता | २१९, २३८ |
| त्रितः | २४३ |

| | |
|---|--------------------------|
| दिवः | २४३ |
| दिव्यः | " |
| देवः | २३३, ३४० |
| धियः अविता | ४७१ |
| पुरन्धिः | ३७६ |
| बृहद्दिवा | १६१ |
| राजः | ६८५ |
| रत्नं विभजन् आयोः | ३४० |
| रथस्पतिः | ६८५, ७४२ |
| रातिः | ७१६ |
| वन्धः | ३२ |
| विभक्ता | ३२५ |
| विभजन् रत्नं आयोः | ३४० |
| विश्वभोज्ञाः | २४३ |
| शंसः | ६८५ |
| सक्षणः | २४३ |
| सजोषाः | " |
| भवित्रम् | ७, ३५, ९; ४५७ |
| भूतानि | १०, १३७, ५; ८१३ |
| विधा | " |
| भूमिः | ७, ३६, ८; ४७१ |
| अरमतिः | " |
| मही | " |
| भृगवः | १०, ९२, १०; ७३० |
| मदः | ५, ४४, ११; ३०४ |
| अदितिः | " |
| कक्षयः | " |
| श्येनः | " |
| मनः (मन आवर्तनम् ।) | १०, ५७, ३- ५; ६२३-६२५ |
| मनीषा | ७, ३४, १; ४२६ |
| देवी | " |
| शुक्रा | " |
| मनीषिणः | १०, ६४, १५; ६९० |
| मनुष्याः | १०, १०९, ६; ७८० |
| मन्म | १०, ३६, ५; ५९८ |
| सुप्रकेतम् | " |
| मदतः १, १४, ३-४; ६-७ । २३, १०-१२, १६-१८ । ८९, ३, ७; २१, २५ । | |

१०, ४-५; ३२-३३ । १०६, १, ५७ ।
 १०७, २, ६५ । १२२, १, ८२ । १८६,
 ८-९; १४७-१४८ । २, ३१, ३; १६० ।
 ४१, १५; १६७ । ३, ५४, १३, २०;
 १८२, १८९ । ५५, २१; २१२ । ४,
 ५५, ५; २३३ । ५, २६, ९; २३९ ।
 ४१, २, ५, ११, १३-१४, १६, २०;
 २४१, २४४, २५०, २५२-५३, २५५,
 २५९ । ४२, १०, १५; २६९, २७३ ।
 ४३, १०; २८६ । ४५, ४; ३१२ ।
 ४६, २-३, ५; ३२१-३२२, ३२४ ।
 ६, २१, ९; ३६१ । ४९, ६, ११-१२,
 ३६८, ३७३-३७४ । ५०, ४-५, ११;
 ३८१-३८२, ३८८ । ५२, २, ११;
 ४१०, ४१९ । ७, ३४, १८-१९,
 २४-२५; ४४१-४४२, ४४७-४४८ ।
 ३५, ९; ४५७ । ३६, ७, ९, ४७०, ४७२ ।
 ३९, ३, ५; ४८३, ४८५ । ४०, ३, ४९० ।
 ४२, ५; ४९९ । ८, २५, १०-११;
 ५०९-५१० । २७, १, ३, ५, ८, १२,
 १५-१६, ५१२, ५१४, ५१६, ५१९,
 ५२३, ५२६-५२७ । २८, ५; ५३८ ।
 ५४, १; ५५३ । ८३, ७; ५६५ ।
 १०, ३५, १३; ५९२ । ३६, ४, ७;
 ५९७, ६०० । ५२, २; ६०९ । ६३,
 ९, १४; ६६९, ६७४ । ६४, ११-१३;
 ६८६-८८ । ६५, १; ६९२ । ६६,
 २-४; ७०८-७१० । ६२, ५-६, ९, ११;
 ७२५-७२६, ७२९, ७३१ । ९३, ४, ९;
 ७३९, ७४४ । १२६, ५; ७९६ ।
 १२८, २; ८०१ । १३७, ५; ८१३ ।
 १५७, ३; ८२५ । १, १३६, ७;
 १२६५

‘मरुतः’ देवताया

गुणबोधकपदानि ।

| | |
|------------|----------|
| अभिजिह्वाः | २५ |
| अद्भुतः | ५२६ |
| अधृष्टाः | ३८१ |
| अयासः | १८२, २७३ |

| | |
|------------------------|-------------------|
| अरिध्यन्तः | ५१० |
| असुरस्य नील्यः | ७२६ |
| अस्त्रिधः | २१ |
| इत्था वृधन्तः | ३७३ |
| उप्राः | १६ |
| कृतजाताः | १८२ |
| ऋष्टयः सप्त तेषाम् | ५३८ |
| ऋष्टिमन्तः | १८२ |
| ऋष्वः | ६०० |
| एवयावः | ३३, ७२९ |
| एवाः | २५२ |
| कवयः | ३६८, ३७३ |
| काणाः | ७२६ |
| गणः मरुताम् | ८१३ |
| गणः मारुतः | ६०० |
| गोजाताः | ३८८ |
| जगतः रथाता | ३६८ |
| जाताः विष्टुतः अतः परि | १८ |
| तवसः | ३७४ |
| तुरासः | १८२, ३७४ |
| तुराणां एवाः | २४४ |
| दधानाः वार्यम् | २५२ |
| दस्माः | ” |
| दिवः मर्याः | १८२ |
| दिवः श्वेनासः | ७२६ |
| दिविक्षयः | ३२४ |
| द्युम्नाणि सप्त तेषाम् | ५३८ |
| नक्षन्तः | ३७३ |
| नरः | १७, ३७३ |
| नील्यः असुरस्य | ७२६ |
| परि जाताः विष्टुतः अतः | १८ |
| पावकः | ६०० |
| पुरःसदः | २१२ |
| पूषणः | ७३९ |
| पृथ्निमातरः | १६, २७ |
| पृषदध्वाः-ध्वासः | २५, १४७, २७३, ४९० |
| मनषः | २५ |
| मन्दसानाः | ४७० |
| मरुतां गणः | ८१३ |

| | |
|----------------|---------------|
| मरुङ्गणः | १६७, ७०८ |
| मर्याः दिवः | १८२ |
| महान्तः | २५०, २५२ |
| महासिनासः | ४४२ |
| माघोनः | ७०८ |
| मारुतः गणः | ६०० |
| मारुतं शर्धः | ५७, २७३, ३२१ |
| मित्रयुजः | ८, १४७ |
| यजतम् | ३२४ |
| यज्ञियासः | १८२, ३७३ |
| ययिन्-यी | ७२५ |
| युवानः | ३७३ |
| युवन्यवः | २७३ |
| रथाः (रथवन्तः) | ८, १४७ |
| रायस्पोषः | ६०० |
| रिशादसः | ८, १४७ |
| रुद्रः | ७२५ |
| रुद्राः | ६८६, ७०९, ७२६ |
| रुद्रस्य सूनवः | २७३, ३८१ |
| रुद्रियः | २५० |
| वन्द्यासः | ३२ |
| वयश्चन | २५२ |
| वसवः | ३८१ |
| वहयः | ७४४ |
| वाजिनः | ४७० |
| वार्यं दधानाः | २५२ |
| विदधेषु जगमयः | २५ |
| विष्टुत्थाः | १८२ |
| विश्वे | ४४७ |
| विश्वकृष्टयः | ७२६ |
| विश्वभानवः | ५१४ |
| वीरः | ३७४ |
| वृजनः | ७०८ |
| वृद्धशवसः | ५०९ |
| वृद्धसेनः | १४७ |
| शम्भू | ६०० |
| शर्धः मारुतम् | ५७, २७३, ३२१ |
| शर्मसदः | २१२ |
| शुभंयावानः | २५ |
| द्युम्नाः | ४८३ |

| | |
|-----------------------------------|----------|
| श्वेतासः दिवः | ७३६ |
| श्रियः सप्त तेषाम् | ५३८ |
| सत्यश्रुतः | ३६८ |
| सप्त | ५३८ |
| सप्तः ऋष्टयः शुभानि श्रियः तेषाम् | " |
| समनसः | १४७ |
| सहासः | ४४७ |
| सुदानवः | २५५, ५१० |
| सुप्रणीतयः | ५५३ |
| सुभ्यः | २५२ |
| सुमन्त्रः | २५३ |
| सुहवः | ६०० |
| सुनवः रुद्रस्य | २७३, ३८१ |
| सूरक्षसः | २५ |
| स्थाता जगतः | ३६८ |
| स्पर्काः | ४५७ |
| हितासः | ३८१ |
| हुतासः | " |

उपमासूची ।

इषुध्या इव ८१ दिवः अस्तोषि असुरस्य वीरेः ।

जयतां इव १७ तन्यतुः मरुतां एति ।

पितृमान् इव क्षयः ६८६ रण्वः संदृष्टौ ।

यूया इव पशुरक्षिः अस्तम् ३७४ प्र तबसे मुराय अज ।

स्तुमिः न नाकम् ३७४ स पिष्टृष्टाति तन्नि श्रुतस्य ।

मही ५, ४१, १५; २५४

ऋजुवनिः "

ऋजुहस्ता "

माता "

रसा "

माता १०, ६४, १०; ६८५

दिवा "

वृहत् "

मित्रः १, १४, ३-४; ६७ । ८९, ३; २१ ।

९०, १-३, ९; २९-३१, ३७ । १०५,

१९; ५६ । १०६, १, ७; ५७, ६३ ।

१०७, ३; ६६ । १२२, ७; ८८ । १३९,

१, ९७ । १८६, २; १४१ । २, २९, १;
१५१ । ३, ५४, १०; १७९ । ५५, ६;
१९७ । ४, ५५, १, ५, ७, १०; २२९,
२३३, २३५, २३८ । ५, २६, ९; २४१ ।
४१, २; २४१ । ४२, १-२; २६०-२६१ ।
४६, २, ५; ३२१, ३२४ । ४९, ३, ५;
३४२, ३४४ । ६, २१, ९; ३६१ । ४२, १;
३६३ । ५०, १; ३७८ । ५१, ३, १०;
३९५, ४०२ । ५२, ११; ४१९ । ७,
३६, २; ४६५ । ३९, ५, ७, ४८५, ४८७ ।
४०, २, ४; ४८९, ४९१ । ८, २७, ६,
१५, १७; ५१७, ५२६, ५२८ । २८, २-
३; ५३५-५३६ । ८३, २; ५६० ।
१०, ३१, २; ५७६ । ३५, १०, ५८२ ।
३६, १, १२-१३; ५९४, ६०५-६०६ ।
६३, ९; ६६९ । ६४, १२; ६८७ ।
६५, १, ५, ९; ६९२, ६९६, ७०० । ९२,
६; ७२६ । ९३, ४; ७३९ । १०२, २;
७७६ । १२६, १-७; ७९२-७९८ ।
८५, १७; १२२१ । ९८, १; १२२२ ।
१, १३६, ६-७; १२६४-१२६५

मित्रस्य धामानि १, ८९, ३; २१

अन्वर्तिता ७७६

अपवाधमानाः द्विषः ३०

अप्रमूराः "

अमृताः "

अमृतस्य राजानः ७३९

ऋतधीतिः ४०२

ऋतावान् ४८७

गोपाः ५३६

चर्षणीनां राजा ७९७

जनं यतति ४६५

दस्यः ३४२

दिव्यं शर्धः ९७

द्विषः अपवाधमानाः ३०

नेता ७९७

प्रचेतसः ५६०

ब्रुवाणः ४६५

भद्रः ३४२

| | |
|-----------------|----------|
| मन्त्राः | ७३९ |
| यतति जनम् | ४६५ |
| युजः | ५६० |
| राजानः अमृतस्य | ७३९ |
| राजा चर्षणीनाम् | ७९७ |
| वक्त्रराजस्यः | ४०२ |
| वसवानाः | ३० |
| वस्वः | " |
| विद्वान् | २९ |
| वृषासः | ५६० |
| शाम् | ३७ |
| शार्धः दिव्यम् | ९७ |
| श्रेष्ठवर्चाः | ४०२ |
| सजोषसः | ५२८ |
| सत्यसवः | ६०६ |
| समाद् | ६९६ |
| सरातयः | ५२८ |
| सुक्षत्रः | ३६३, ४०२ |
| स्मद्रातिषावः | ५३५ |

मित्रावरुणौ १, १२२, ६, ९-१०, १५;
८७, ९०-९१, ९६ । २, २९, ३; १५३ ।
३१, १; १५८ । ३, २०, ५; १६९ ।
५६, ७; २२० । ५, ४१, १; २४० ।
४६, ३; ३२२ । ४७, ७; ३३४ । ५१,
९, १४; ३५४, ३५९ । ६, ४९, १;
३६३ । ७, ३५, ४; ४५२ । ३६, २;
४६५ । ४१, १; ४९४ । ४२, ५;
४९९ । ८, २९, ९; ५४७ । १०, ६१,
१७, २३, २५; ६४३, ६४९, ६५१ ।
९३, ६; ७४१ । ५१, २; १२०६

मित्रावरुणौ देवताया

गुणबोधकपदानि ।

| | |
|-----------------------|----------|
| असुरा | ४६५ |
| उपमा | ५४७ |
| उशन्ता | ४९९ |
| दिवि द्वा सदः चक्राते | ५४७ |
| राजाना | ३३०, ६४९ |
| शुभस्पती | ७४१ |
| सम्राजा दिवि | ५४७ |

| | |
|-------------|-----|
| सर्पिरासुती | ५४७ |
| सुपाणी | २२० |
| सुम्रयन्ता | ३६३ |

उपमासूची ।

| | |
|--|-----|
| इषं न धृष्य सुवृत्तिं कृण्वे । | |
| धन्वा इव ७४१ दुरिता अति एति । | |
| गातुः पूर्वा इव ६५१ सूनृताये दाशत् । | |
| वयः न १५८ वस्मनस्परे प्र पतन् । | |
| पशुषः वाजान् न २४० त्रासीषां नः । | |
| सूरः न ९६ स्थूम गभस्तिः रथः अयैत् । | |
| मेघः १, १६४, २६; १२४ । (मेघलक्षणा- धेनुः) १६४, ३२, १३० । मध्यस्थानः वायुर्वा । | |
| धेनुः | १२४ |
| परिवातः मातुः येनौ | |
| बहुप्रजा | १३० |
| मातुर्येनौ परिवातः | " |
| सुदुघा | १२४ |
| यजमान-ब्रह्माणो १०, ११४, ३; ७८४ | |
| वृषणा | " |
| सुपर्णा | " |
| वजुः १०, १८१, ३; ८३६ | |
| यज्ञः ७, ३४, ५७, ४३०-४३२ । ३५, ७; ४५५ । ४३, २; ५०२ । १०, ६६, ६; ७१२ । ११४, ६-७, ७८७-७८८ | |
| आप्नः | ७८८ |
| केतुः | ४३१ |
| तीर्थः | ७८८ |
| वीरः | ४३१ |

देवतारहितमन्त्रे
गुणबोधकपदानि ।

| | |
|------------|-----|
| जीराखरः | ५९९ |
| दिविस्पृक् | " |

उपमासूची ।

| | |
|---------------------------------|--|
| वृषिबी न भूम ४३२ भारं विभर्ति । | |
| वमः १०, ६४, ३; ६७८ । ९२, ११; | |

| | |
|--|------|
| ७३१ । १६५, ४; ८३१ । १४, ७-९; | |
| १२६७-१२६९ | |
| कपोतः यस्य दूतः | ८३१ |
| दिवि (-रुचः) | ६७८ |
| दूतः यस्य कपोतः | ८३१ |
| मदन् स्वधया | १२६७ |
| मृत्युः | ८३१ |
| राजा | १२६७ |
| स्वधया मदन् | " |
| रथः १, १६४, २-३; १००-१०१ | |
| एकचक्रः | १०० |
| एकः सप्तनामा अश्वः यं वहति | " |
| सप्त अश्वः यं वहन्ति | १०१ |
| सप्तचक्रः | " |
| सप्तनामा एकः अश्वः यं वहति | १०० |
| सप्त युजन्ति | " |
| रथन्तरं साम १, १६४, २५, १२३ । १०, १८१, १; ८३४ | |
| रश्मयः (सूर्यस्य, आदित्यस्य वा) १, ९०, ८; ३६ । १०५, ९, ११; ४६, ४८ । १६४, ३, ७, १६; १०१, १०५, ११४ । १६४, २१-२२, ३६; ११९-१२०, १३४ । ५, ४४, ४; २९७ । ४७, २, ३२९ (सूर्यो देवता) | |

गुणबोधकपदानि ।

| | |
|-----------------------------|-----|
| अजिरासः | ३२९ |
| अनन्तासः | " |
| अप ईयमानाः | " |
| अमीशवः | २९७ |
| अमृतस्य नामिं आ तस्थिवांसः | ३२९ |
| अर्जुनर्माः | १३४ |
| आ तस्थिवांसः अमृतस्य नामिम् | ३२९ |
| ईयमानाः अपः | " |
| उरुः | " |
| ऋतावृधः | २९७ |
| गावः | ३६ |
| पन्थाः | ३२९ |
| परिभुवः | १३४ |

| | |
|--|-------------|
| भुवनस्य रेतः | १३४ |
| मध्वदः | १२० |
| माध्याः | ३६ |
| यम्यः | २९७ |
| रेतः भुवनस्य | १३४ |
| विपश्चितः | " |
| सप्त | ४६, १३४ |
| सर्वशासाः | २९७ |
| सुपर्णाः | ४८, ११९-१२० |
| सुयन्तवः | २९७ |
| सुयुजः | " |
| क्षियाः सतीः पुंसः आहुः | ११४ |
| राका ५, ४२, १२; २७० । २, ३२, ८; १२६६ | |
| दशस्यन्ती | २७० |
| बृहद्विवा | " |
| शुभ्राः | " |
| राजानः १०, १०९, ६; ७८० | |
| सत्यं कृण्वानाः | " |
| रातिषाचः ७, ३५, ११; ४५९ । ४०, ६; ४९३ [देवपरन्त्यः] | |
| रायः ७, ३५, २; ४५० | |
| रुद्रा-प्राः १, १२२, १; ८२ । २, ३१, १; १५८ । ३, २०, ५; १६९ । ८, ८; २२२ । ५, ४१, २; २४१ । ४६, २; ३२१ । ५१, १३; ३५८ । ६, ४९, १०; ३७२ । ५०, १२; ३८९ । ७, ४०, ५; ४९२ । ४१, १; ४९४ । ८, २९, ५; ५४३ । ५४, ३; ५५३ । १०, ६१, १-२; ६२७-६२८ । ६४, ८; ६८३ । ६५, १; ६९२ । ६६, ३-४, १२; ७०९-७१०, ७१८ । २२, ९; ७२९ । २३, ४, ७; ७३९, ७४२ x । १२६, ५; ७९६ । १२८, ९; ८०८ | |

' रुद्रः ' देवताया
गुणबोधकपदानि ।

| | |
|-------------------------|-----|
| अजरः | ३७२ |
| अप्याः | ३८८ |
| आयुधं सिमं हस्ते विभ्रा | ५४३ |

| | |
|---|----------|
| वसः | ५४३, ७९६ |
| ऋषवः | ३७९ |
| क्षयद्वीरः | ७९९ |
| गूर्तवचस्तमः | ६९८ |
| च्यवानः | " |
| जलाषः | ४५४ |
| जलाषभेषजः | ५४३ |
| तिग्मं आयुधं हस्ते बिभ्रत् | " |
| तूर्वयाणः | ६९८ |
| दभ्याय वन्वन् | " |
| दानाय वन्वन् | " |
| नृणां स्तुतः | ७३९ |
| नृभिः स्तवानः | ४६८ |
| पिता भुवनस्य | ३७९ |
| बिभ्रत् हस्ते तिग्मं आयुधम् | ५४३ |
| बृहन् | ३७९ |
| भुवनस्य पिता | " |
| मीढवान् | ८९, २४१ |
| रुद्रा [द्विवचनत्वेन अश्विनोः विशेषणं अत्र वर्तते] | ७५९ |
| वन्वन् दभ्याय | ६९८ |
| वन्वन् दानाय | " |
| शिकसे (चतु०) | ७९९ |
| शिवः | " |
| शुचिः | ५४३ |
| सुदानवः | ७१८ |
| सुषुम्नः | ३७९ |
| स्तवानः नृभिः | ४६८ |
| स्तुतः नृणाम् | ७३९ |
| स्ववन् | ७९९ |
| हस्ते तिग्मं आयुधं बिभ्रत् | ५४३ |

उपमासूची ।

| | |
|---|--|
| क्षोदः न ६९८ रेत इत कति सिञ्चत् । | |
| रुद्रियः १०, ६४, ८; ६८३ | |
| रोदसी (एकवचनम्-रुद्रस्य पत्नी) । ६, ५०, ५, ३८९ । १०, ९२, ११, ७३१ । | |
| देवी ३८२ | |
| रोदसी (द्विवचनम् 'यावापृथिवी' इत्यर्थः) । ['यावापृथिवी' द्विवचनम्] | |
| दे० [विश्वे देवाः] २१ | |

| | |
|--|--|
| वसः (गोः) १, १६४, २९, १२७ | |
| वनस्पतिः १, ९०, ८, ३६ । ५, ४१, ८; २४७ । ४२, १६; २७४ । ७, ३४, २३; ४४६ । ८, २७, २; ५१३ । ५४, ४, ५५४ । १०, ६४, ८, ६८३ | |
| मधुमान् ३६ | |
| वना ५, ४१, ११, २५० | |
| वनिनः ७, ३४, २५; ४४८ । ३५, ५; ४५३ | |
| वरुणः १, ८९, ३; २१ । ९०, १-३, ९; २९-३१, ३७ । १०५, ६, १५, १९; ४३, ५२, ५६ । १०६, १, ७, ५७, ६३ । १०७, ३; ६६ । १२२, ७, ८८ । १८६, २-३; १४१-१४२ । २, २९, १, ७; १५१, १५७ । ३, ५४, १०, १८; १७९, १८७ । ५५, ६, १९७ । ४, ५५, १, ५, ७, १०; २२९, २३२- २३३, २३५, २३८ । ५, २६, ९; २३९ । ४१, २; २४१ । ४२, १-२; २६०- २६१ । ४३, २, ५; ३२१, ३२४ । ४९, ३, ५; ३४२, ३४४ । ६, २१, ९; ३६१ । ४९, १; ३६३ । ५०, १; ३७८ । ५१, ३, १०; ३९५, ४०२ । ७, ३४, १०-११, २४-२५; ४३५-४३६, ४४७- ४४८ । ३५, ६; ४५४ । ३६, २; ४६५ । ३९, ५, ७; ४८५, ४८७ । ४०, २, ४; ४८९, ४९१ । ८, २७, ३, ६-७, १५, १७; ५१४, ५१७-५१८, ५२६, ५२८ । २८, २-३; ५३५-५३६ । ८३, २, ४, ५६०, ५६२ । १०, ३१, ९; ५७६ । ३५, १०; ५८९ । ३६, १, १२-१३, ५९४, ६०५-६०६ । ६१, २४, २६, ६५०, ६५२ । ६३, ९, ६६२ । ६४, १२; ६८७ । ६५, १, ५, ९; ६९२, ६९६, ७०० । ६६, ५, ७११ । ९२, ६; ७२६ । ९३, ४, ७३९ । १०९, १-२; ७७५-७७६ । १२६, १-७, ७२२- ९८ । १६७, ३; ८३३ । ५१, ४, ६; १२०७-१२०८ । ८५, १७; १२२१ । | |

| | |
|---|--|
| ९८, १; १२२२ । १, १३६, ६-७; १२६४-६५ । १०, १४, ७, १२६७ | |
| वरुणदेवताया गुणबोधकपदानि । | |
| अदब्धः ४६५ | |
| अदब्धानि व्रतानि यस्य १८७ | |
| अनुत्तं क्षत्रं अस्य ४३६ | |
| अन्वर्तिता ७७६ | |
| अपबाधमानः द्विषः ३१ | |
| अपाच्यः ५३६ | |
| अप्रमूराः महोभिः ३० | |
| अमृतः ३१ | |
| अरिगूर्तः १४२ | |
| इनः ४६५ | |
| इन्द्रसखा ४४७ | |
| इषः पर्वत् १४२ | |
| उग्रः ४३५ | |
| ऋजुनीतिः २९ | |
| ऋतधीतिः ४०२ | |
| ऋतस्य नेता ४९१ | |
| ऋतावान् ४८७ | |
| क्षत्रं अनुत्तं (विश्वायु) अस्य ४३६ | |
| गातुवित् ५२ | |
| गुणानः ६५२ | |
| गोपाः ५३६ | |
| चर्षणीनां राजा ७९७ | |
| दस्मः ३४२ | |
| दाश्वान् ६९६ | |
| देवः १२६७ | |
| देववान् ६५२ | |
| घुहः ४४७ | |
| द्विषः अपबाधमानः ३१ | |
| घृतव्रतः ५१४, ७११ | |
| नदीनां पिशः ४३६ | |
| नव्यः ५२ | |
| नेता ७९७ | |
| नेता ऋतस्य ४९१ | |
| पतिः २३३ | |
| पदवीः ४६५ | |
| पर्वत् इषः १४२ | |

| | |
|--------------------------|----------|
| पेशः नदीनाम् | ४३६ |
| प्रचेताः | ५६० |
| भद्रः | ३४२ |
| मदन् स्वधया | १२६७ |
| मन्त्रः | ७३९ |
| महोभिः अपमूराः | ३० |
| मीढ्वान् | १२६४ |
| युजः | ५६० |
| राजा ४९१, ७३९, ८३३, १२६७ | |
| राजा चर्षणीनाम् | ७९७ |
| राजा राष्ट्राणाम् | ४३६ |
| राष्ट्रानां राजा | " |
| वक्मराजसत्यः | ४०२ |
| वसव नः | ३० |
| वसुः | " |
| विषः | ६५० |
| विधायु क्षत्रं अस्य | ४३६ |
| वृधः | ५६० |
| व्रतानि अदधानि अस्य | १८७ |
| शम् | ३७ |
| श्रेष्ठवर्चाः | ४०२ |
| सजोषाः | ५२८ |
| सत्यसवः | ६०६ |
| सम्राट् | ६९६ |
| सरण्युः अस्य मूनुः अश्वः | ६५० |
| सरस्वान् | ७११ |
| सलिलः | ७७५ |
| सहस्रचक्षाः | ४३५ |
| सुकीर्तिः | १४२ |
| सुक्षत्रः | ३६३, ४०२ |
| सुवन्धुः | ६५२ |
| सुरातिः | ५२८ |
| सुशंसः | ४५४ |
| सूरिः | १४२ |
| स्मद्रातिष चः | ५३६ |
| स्वधया मदन् | १२६७ |

उपमासूची ।

अभिः वने न ५७६ शोकं व्यसृष्ट ।
वसवः १, १०६, १-६, ५७-६२ । २, ३१, १;

१५८ । ३, २०, ५, १६९ । ८८;
२२२ । ५७, ४, २२४ । ४, ५५, १;
२२९ । ५, ४१, १८; २५७ । ४९, ५;
३४४ । ५१, १०; ३५५ । ६, ५०, ११;
३८८ । ५१, ५; ३९७ । ७, ३५, ६,
१४, ४५४, ४६२ । ३९, ३, ४८३ ।
४८, ४; ५०७ । ८, ५४, ३, ५५३ ।
१०, ६६, ३-४, १२; ७०९-७१०,
७१८ । १००, ७, ९, ७५७, ७५९ ।
१२६, ८; ७२९ । १२८, ९, ८०८ ।
१०, ९८, १, १२२२

गुणबोधकपदानि ।

| | |
|------------|------------|
| उमयाः | ४८३ |
| देवाः | ३८८, ४८३ |
| पार्थिवासः | ३८८ |
| सुदानवः | ५७-६२, ७१८ |
| सुनीथाः | २२२ |

उपमासूची ।

| | |
|----------------------------------|----------------------|
| रथं न दुर्गात् ५७-६२ अंहसः नः | निष्पिपर्तन । |
| वाक् १, १६४, ४१, १३९ । ७, ३६, ७, | ७४० |
| अक्षरा | ४७० |
| अष्टापदी | १३९ |
| एकपदी | " |
| गौरीः | " |
| चतुष्पदी | " |
| चरन्ती | ४७० |
| तक्षती सलिलानि | १३९ |
| द्विपदी | " |
| नवपदी | " |
| बभ्रुवुषी | " |
| सलिलानि तक्षती | " |
| सहस्राक्षरा | " |
| वाजः-जाः १०, ३१, ५; ५७२ । ६४, | १०, ६८५ । ९३, ७; ७४२ |

उपमासूची ।

उषसां हवक्षा ५७२ इयं (स्तुतिः) भूयाः ।
वाजी (वृहदुक्कपुत्रः) । १०, ५६, १-३;

६१४-६१६
वाजिनः (अभि-वायु-सूर्याः) । १०, ६६,
१०; ७१६
वातः १, ८२, ४, २२ । ९०, ६, ३४ ।
१२२, ३; ८४ । १८६, १०; १४९ ।
५, ४१, ४; २४३ । ४६, ४; ३२३ ।
६, ५०, १२; ३८९ । ७, ३५, ४, ९;
४५२, ४५७ । ३६, ३; ४६६ । ४०,
६; ४९३ । ८, ५४, ४; ५५४ । १०,
३१, २, ५७६ । ६४, ३, ६७८ ।
१२८, २; ८०१ । १३७, २-३, ८१०-
८११ । १४१, ५, ८२०

गुणबोधकपदानि ।

| | |
|-------------------------------------|----------|
| अपां वृषण्वान् | ८४ |
| अग्निधः | ३२३ |
| आश्वत्तमः | २४३ |
| हिरः | ४५२ |
| कण्वहोता | २४३ |
| त्रितः | २४३, ६७८ |
| दिवः | २४३ |
| दिग्यः | " |
| दूतः देवानाम् | ८११ |
| देवानां दूतः | " |
| ध्रजत् | ४६६ |
| परिजमा | ४९३ |
| मीढ्वान् | ३८२ |
| वातो द्वौ | ८१० |
| विश्वमेघजः | ८११ |
| विश्वमोजः | २४३ |
| सक्षणिः | " |
| सजोषाः | " |
| वाता-पर्जन्या १०, ६६, १०; ७१६ | |
| महिषस्य तम्यतोः | " |
| वायुः १, १४, ३-४, १०; ६-७, १३ । | |
| १६४, १, २६, ३२; ९९, १२४, १३० | |
| (मन्त्रस्थानः वायुः) । ५, ४१, २, ६, | |
| १२, २४१, २४५, २५१ । ४९, १; | |
| २६० । ४३, ३, ३ । २७९, २८५ । | |
| ५१, १०, १२; ३५५, ३५७ । ६, ४२, ४; | |

३६६ । ७, ३९, २, ४८२ । ४०, २;
४८९ । १०, ५६, १; ६१४ । ६४, ७,
६८२ । ६५, १, ६९२ । ६६, ५, ७११ ।
९२, १३; ७३३ । ९३, ४, ७; ७३९,
७४२ । १००, २, ७५२ । १०२, १;
७७५ । ११४, १, ७८२

वायुः-गुणबोधकपदानि ।

| | |
|-----------------------------|---------------|
| अतूर्तपन्थाः | २६० |
| अभीष्टः | १२४ |
| अन्नः | ९९ |
| असुरः | २६० |
| (आवित्यस्य) मध्यमः भ्राता | ९९ |
| आयुः | २४५ |
| इविरः | २५१ |
| ऊर्जा पतिः | " |
| कविः | ३६६ |
| कन्दशिष्टिः | ७५२ |
| गोधुक् | १२४ |
| घर्मः | " |
| चोदिता मतीनाम् | २८५ |
| चोदिता वाजस्य | " |
| तर्षायान् | " |
| पुरः | " |
| देवः | २४५-२७५ |
| क्षुतयामा | ३६६ |
| द्रविणोदाः | २८५ |
| नभस्तरीयान् | २५१ |
| निष्ठुता | ३६६ |
| नियुत्त्वान् | ४८२ |
| पञ्चोता | २६० |
| पत्यमानः | ३६६ |
| पनिता | २४५ |
| परिउमा | २५१, ७३९, ७४२ |
| परिवीतः मातुर्योनौ | १३० |
| पृषयोनिः | २६० |
| प्रयज्युः | ३६६ |
| बहुप्रजाः | १३० |
| बृहद्विः | ३६६ |
| भ्राता मध्यमः आवित्यस्य | ९९ |

| | |
|--|----------|
| मतीनां चोदिता | २८५ |
| मध्यमः भ्राता अस्य (आदित्यस्य) | ९९ |
| मयोभूः | २६० |
| मातरिश्वा | ७७५, ७८२ |
| मातुर्योनौ परिवीतः | १३० |
| रथप्राः | ३६६ |
| रथयुक् | २४५ |
| वाजस्य चोदिता | २८५ |
| विप्रः | २४५ |
| विश्ववारः | ३६६ |
| विश्ववेदाः | ७४२ |
| शुचिपाः | ७५२ |
| सचित् | ६८२ |
| सचेताः | " |
| सुहस्तः | १२४ |
| वास्तोष्पतिः ५, ४१, ८, २४७ । १०, ६१, ७-९, ६३३-६३५ | |
| दध्रचेताः | ६३४ |
| व्रतपाः | ६३३ |

उपमासूची ।

| | |
|---|--|
| वृषा न फेनं अस्यत् आजौ द३४ स्मत् | |
| आ परैदप । | |
| विष्णुत् १, १६४, २९; १२७ | |
| विद्वान् पथः ५, ४६, १; ३२० | |
| पुर एता " | |
| विधाता ६, ५०, १२, ३८९ । १०, १६७, ३; ८३३ | |
| विट् (श्) सर्वा- ५, २६, ९; २३९ । ८, १८, ३ । ५३६ | |
| देवाः ['विश्वे' इति उपपदरहितनिर्देशः ।] १, ८९, १-२, ८-९; १९ २०, २६-२७ । ९०, १-३; २९-३१ । १०५, ३, ७, १२-१४, १७, ४०, ४२-४४, ४९- ५१, ५४ । १०६, २, ७; ५८, ६३ । १०७, २, ६५ । १२२, ५, ७; ८६, ८८ । १३९, १, ११; ९७-९८ । १६४, १०; १०८ । १८६, १०-११, १४९- १५० । २, २९, १-६, १५१-१५६ । ३१, २, ७; १५९, १६४ । ३, २०, १; | |

१६८ । ५४, २, ५, २१; १७१, १७४,
१९० । ५५, १-२२; १९२-२१३ ।
५६, १; २१४ । ४, ५५, १-२; २२९-
२३० । ५, २६, ९; २३९ । ४१, १७;
२५६ । ४२, १७, २७५ । ४३, १६;
२९२ । ४६, २; ३२१ । ४९, ५;
३४४ । ५०, ३; ३४७ । ५१, १३;
३५८ । ६, ४९, १४; ३७३ । ५०,
१-२, ९, ११, १३; ३७८-७९, ३८६,
३८८, ३९० । ५१, ६, ८-९, १२, १५
३९८, ४००-४०१, ४०४, ४०७ । ५२,
५, १५; ४१३, ४२३ । ७, ३४, १, ८-९,
१२-१३, १५, १८-१९; ४२६, ४३३-
४४, ४३७-३८, ४४०-४२ । ३५, ११;
४५९ । ३९, ६; ४८६ । ४०, १; ४८८ ।
४२, २-३, ६; ४९६-४९७, ५०० ।
४३, १-५; ५०१-५०५ । ८, २, २७, १,
९-११, १८; ५२१, ५२०-२२, ५२९ ।
२८, १, ४; ५३४, ५२७ । ८३, १,
३, ६, ९; ५५९, ५६१, ५६४, ५६७ ।
१०, ३५, १, १०, १२, १४; ५८०,
५८९, ५९१, ५९३ । ३६, २-२२;
५९५-६०५ । ५२, ३-६; ६१०-६१३ ।
५६, २-४; ६१५-६१७ । ६१, ७,
२७, ६३३, ६५३ । १०, ६२, ७;
६६० । ६३, १-२, ४, ८, १२, १४;
६६१-६२, ६६४, ६६८, ६७२, ६७४ ।
६४, १-२, १०-१२, १४; ६७६-७७,
६८५-८७, ६८९ । ६५, ३-४, ७, ९, ११,
१५; ५९४-९५, ६९८, ७००, ७०२,
७०६ । ६६, १-२, ४, ६, ८-९, १४; ७०७-
८, ७१०, ७१२, ७१४-१५, ७२० ।
७२, ६, १०; ७२६, ७३० । ९३, २;
७३७ । १०३, १, ३, ७; ७५१, ७५३,
७५७ । १०२, ३-७; ७७५-८१ ।
११४, १-३; ७८२-८४ । १२६, १, ८;
७९२, ७९९ । १२८, २-३, ७; ८०१-
२, ८०६ । १३७, १, ५; ८०९, ८१३ ।
१४१, २; ८१७ । १५५, ५; ८२२ ।

१५७, ४-५; ८२६-८२७। १६५, १-३; ८२८-३०। १, २७, १३; ११९९। ४५, १०; १२००। ९४, ८। १२०१। १६४, ५०; १२०२। ७, १०४, ११; १२०३। ८, ६३, १२; १२०४। ८०, १०; १२०५। १०, ५१, २, ४, ६, ८। १२०६-९। ५३, ४-५; १२१०-११। ७२, १-९; १२१२-२०। ८५, १७; १२२१। ९८, ४, ६; १२२५, १२२७। १, १३६, ७, १२६५

विश्वेदेवाः।

['विश्वे' इति उपपदसहितनिर्देशः।]

१, ३, ७-९; १-३। १४, १-१२; ४-१५। २३, १०; १६। ८९, ७; २५। १२१, १-१५; ६७ ८१ [इन्द्रः वा]। १२२, ३, ११-१४; ८४, ९२-९५। १८६, २-४; १४१-१४३। २, ४१, १३-१५; १६५-६७। ३, ५४, १७; १८६। ५७, २, ५; २२४, २२७। ४, ४४, ६; २९९। ४५, ११; ३१९। ४६, ६; ३३३। ५१, १-३, ८, १३, ६५०-५३, ३५८। ६, २१, ११; ३६२। ४९, १५; ३७७। ५०, १४-१५; ३९१-३९२। ५१, ७; ३९९। ५२, ७-८, १०, १३-१४, १७; ४१४-१५, ४१७, ४२१-२२, ४२५। ७, ३५, ११; ४५९। ३९, ४; ४८४। ४८, ४; ५०७। ५०, ३; ५०८। ८, २७, २; ४-५, ११, १४, १२-२१; ५१३, ५१५-१६, ५२२, ५२५, ५३०-३२। ३०, १-४; ५४९-५२। ५४, ३; ५५३। ६९, ११; ५५८। १०, ३१, १-३, ६; ५६८-७०, ५७३। ३३, १; ५७९। ३५, १३, ५९२। ३६, १३; ६०६। ४२, १-२; ६०८-९। ६३, ६, ११; ६६२, ६७१। ६५, १३-१४; ७०४-७०५। ६६, ५, ११, १३; ७११, ७१७, ७१९। ९३, ३, ७; ७३८, ७४२। १२८, २, ४-५; ८०१, ८०३-४। १५७,

१, ८२३। ९८, ८। १२२९

'देवाः' 'विश्वे देवाः' च

उभयोः मिलित्वा

गुणबोधकपदानि।

अग्निजिह्वाः २५, ३६२, ३७९, ४२१, ६९८

अग्निहोतारः ७१४

अजस्राः २३०

अदब्धाः-सः ४०१, १९

अदब्धधीतयः ३९५

अदितेः अद्भ्यः परि पृथिव्या जाताः ६६२

अदितेः अष्टौ पुत्रासः १२१९

अद्रुहः ३, ५२०, ७१४

अष्टृष्टाः ३९२

अध्वन् यान्तः ५६४

अध्वरं वावशानाः १६८

अध्वरस्य प्रचेतसः ७०७

अध्वराणां अभिध्रियः ७१४

अनर्वाणः ६०४, ६७४

अनागसः ६६४

अनिमिषन्तः "

अन्तरिक्षे स्थ ४२१

अपः जनयन्तः ७०२

अपवाधमानाः द्विषः ३२

अपरीतासः १९

अभिप्राणी सदनी वस्युः च १५०

अप्तुरः २

अप्याः ३८८

अप्रमृताः महोभिः ३०

अप्रयुच्छन्तः ७१९

अप्रायुवः १९

अप्सु एकादश ९८

अप्सु देवाः ७००

अभिक्षतारः १५२

अभियवः ४०७, ५६७

अभिध्रियः अवराणाम् ७१४

अभिषाचः ७०५

गमूराः २३०

अमृताः ३१, ६५३, ७०५-७, ७११,

७१९, १२०७

अमृतबन्धवः १२१६

अमृतस्य राजानः २२

अमृतस्य सूनवः ४१७

अर्मकः न अस्ति ५४९

अर्मकाः ११९९

अर्यः १२५

अर्वन्तः ४२३

अर्वाद्यः १५६

अर्हणाः ६६४

अभं जनयन्तः ७०२

अष्टौ अदितेः पुत्रासः १२१९

असुराः ५३१

अग्निधः ३

अहिमायाः ६६४

आपयः १५४

आर्या व्रता विस्जन्तः ७०२

आशिनाः ११९९

इन्द्रज्येष्ठाः १६७, ४०७, ५६७, ७०७,

१२०४

इन्द्रप्रसूताः ७०८

ईड्याः ११

ईशानासः ९४

ईशिरे भुवनस्य ६६८

ईळाः १४०

उद्भिदः १९

उपस्थ ४२१

उरुचक्षसः ४०१

उशन्तः ४८४

उषर्बुधः १२

ऊमाः ४८४

ऊतज्ञाः ७०५

ऊतर्धतयः २३०, ३५१

ऊतसापः ३६२, ३७९, ७१४

ऊतुभिः हवनश्रुतः ४१८

ऊतस्य गोपाः ३९५

ऊतस्य धाराः दुदानाः ५०४

ऊतस्य पस्यसदः ४०१

ऊतस्य रथ्यः ४७१, ५६१

| | | |
|-------------------------------------|--|------------------------------------|
| ऋतावृधः १०, ३९१, ४१८, ६९४, ६९८, ७०७ | पृथिव्याः अदितेः ६६२ | निचेतारः ६५६ |
| ऋतुदराः १७९ | ज्योतिष्कृताः ७०७ | निरुधानासः ८८ |
| एकादश अप्सु ९८ | ज्योतीरथाः ६६४ | नृचक्षसः ६६४ |
| एकादश दिवि ९८ | तनुनां रथ्यः ३९८ | एनीवन्तः १० |
| एकादश पृथिव्याम् ९८ | तुराः-रासः ४०८, ५६८, ५९३ | पर्वतासः १२०४ |
| एहिमायासः ३ | तुविजाताः ६६६ | पर्वतान् जनयन्तः ७०२ |
| ओमासः १ | तूर्णयः ३ | पार्थिवासः ३८८, ७०० |
| ओषधीः जनयन्तः ७०२ | त्रयः च त्रिंशत् च ५५० | पावकाः ३९५ |
| कवयः १७९, १८६ | त्रातारः ३७८ | पुत्रासः अदितेः अष्टौ १२१९ |
| कविशस्ताः ३९१ | त्रिंशति परः त्रयः ५३४ | पुष्टिं दध नाः प्रियरथे ८८ |
| कुमारकः न ५४९ | त्रिषु स्थन ४२ | पूतदक्षाः ४०१ |
| कृतवः १९ | त्रीणि शता त्री सहस्राणि त्रिंशत् च ६१३ | पृषरातयः १६७ |
| क्षत्रियाः ७१४ | दक्षपितरः ३७९ | पृथिवीं जनयन्तः ७०२ |
| क्षियन्तः ५६४ | दक्षस्य रथ्यः ३९८ | पृथिव्या एकादश ९८ |
| गणः ३०५ | दधानाः पुष्टिं प्रियरथे ८८ | पृथिमातरः २५ |
| गो जनयन्तः ७०२ | दशस्यन्तः ३८८ | पृषदक्षाः " |
| गिरः ४८५ | दस्माः २३० | प्रचेतसः ६६८, १२२१ |
| गोजाताः ३८८ | दाक्षांसः २ | प्रचेतसः अप्वरस्य ७०७ |
| गोपाः ४०७ | दिवक्षसः ६९८ | प्रयुजः जनानाम् ५७९ |
| गोपाः ऋतस्य ३९५ | दिवः मध्ये तस्थुः ४७ | प्रातर्वावीणः ३५२ |
| घर्मस्वरसः २३४ | दिवि एकादश ९८ | प्रावितारः ५१३ |
| चन्द्राः ४८७ | दिनि सूर्य रोहयन्तः ७०२ | प्रियक्षत्राः ५२० |
| चर्षणीधृतः २ | दिवेदिवे रक्षितारः १९ | बृहन्तः ६०४ |
| चित्रराक्षसः ६९४ | दिव्याः ३८८, ७०० | बृहच्छ्वसः ७०७ |
| जगतः मन्तवः विश्वस्य ६६८ | दीधितिः विश्वेषां देवानाम् १५० | बृहद्विवा ७१४ |
| जगमयः विदधेभु २५ | दीर्घधृतः ७८३ | ब्रह्म ७०२ |
| जनः ३६३ | बुहान्मः ऋतस्य धाराः ५०४ | ब्रह्मकृताः ७११ |
| जनः दैव्यः ६२५, ६६९ | दैव्यः जनः ६२५, ६६९ | भद्राः १९, १२१६ |
| जनयन्तः अपः ७०२ | द्यविस्थ ४२१ | भुवना ईशिरे १२२१ |
| " अश्वम् " | द्विजन्मानः ३७९ | मध्ये तस्थुः महो दिवः ४७ |
| " ओषधीन् " | द्विषः अपबाधमानाः ३१ | मनवः २५ |
| " नाम् " | धृतव्रताः १५१, ७१४ | मनुप्रीतासः ६६१ |
| " पर्वतान् " | न अर्भकः ५४९ | मनोः यजत्राः ७०५ |
| " पृथिवीम् " | न कुमारकः " | मनोः यज्ञियाः ६०३ |
| " ब्रह्म " | नभोजुवः ९२ | मन्तवः विश्वस्य स्थातुः जगतश्च ६६८ |
| " वनस्पतीन् " | नरः ४०१ | मन्त्राः ३९१ |
| जगानां प्रयुजः ५७९ | नाम येषां चारु महत् १८६ | मन्त्राः ९२ |
| जाताः अद्भ्यः परि | नामानि विश्वा येषां नमस्यानि, यज्ञियानि, वन्यानि ६६२ | मथोभुवः ४९३ |
| | | महयन्तः ६९५ |

| | | | | | |
|--|----------------|--|----------|--|----------|
| महान्तः | ६०४, ६७४, ११९९ | विधातारः | २३० | सुमुळीकाः | ४१७ |
| सहिमषः | ८९ | वियोतारः | " | सुरातयः | ६९५ |
| महोभिः अमूराः | ३० | विश्वाः | ४०१ | सुव्रताः | ३६३ |
| मेहनाः | १२०४ | विश्वमहसः | ७३८ | सुसंरन्धाः | १२१७ |
| यजताः | ३७९ | विश्वदेवाः | ३९९, ४५९ | सुनवः अमृतस्य | ४१७ |
| यजत्राः १०-११, २६, १५६, १६४, ३९२, ३९८, ४०१, ४२१, ४२५, ५०४, ६५३, ६७१, ७९९ | | विश्वदेवसः ५१३, ५१५, ५२२, ५३०, ५३१-५३२, ७०७, ७११, ७४२ | | सूरयः | ६९५, ७१७ |
| यजत्राः मनोः | ७०५ | विश्वेषां देवानां दीधितिः | १५० | सुरक्षसः | २५ |
| यज्ञानिष्कृतः | ७१४ | विसृजन्तः आर्या व्रता | ७०२ | सूर्यं दिवि रोहयन्तः | ७०२ |
| यज्ञियाः १८७, २६३, ४८४, ५५०, ७१२ | | वृत्रहत्ये भरहृतौ सजोषाः | १२०४ | स्तुताः | ३९१, ३९२ |
| यज्ञियाः मनोः | ६०३ | वृधासः | १४१ | स्त्यमानाः सामभिः | ६५ |
| यज्ञियाः यज्ञेषु | ७३८ | वृषणः | ७१२ | स्थातुः मन्तवः विश्वस्य | ६६८ |
| यज्ञेषु यज्ञियाः | " | वृषासः | ५५९ | स्वतवसः | १४९ |
| यान्तः अध्वन् | ५६४ | वैश्वानराः | ५५२ | स्वर्गिरः | ७०५ |
| युज्याः | ४८६ | व्रता विसृजन्तः आर्या | ७०२ | स्वर्वन्तः | ३७९ |
| युषानः | १४०, १६९९ | शम्भुवः | ४०, ५८ | स्वर्विदः | ७०५ |
| रक्षितारः दिवेदिवे | १९ | शुभंयावानः | २५ | स्वाध्यः | ६३३ |
| रथ्यः ऋतस्य | ४०१, ५६१ | श्रयाः | २४६ | हवनश्रुतः ऋतुभिः | ४१७ |
| " तनूनाम् | ३९८ | श्रुतरथे पुष्टिं दधानाः | ८८ | हुवानः | ३९१ |
| " दक्षस्य | " | सजोषसः १६८, ५१६, ५५३, ६५३ | | 'देवाः, विश्वे देवाः' च देवतानां उपमासूची । | |
| " वचसः | " | सजोषसः वृत्रहत्ये भरहृतौ | १२०४ | | |
| राजानः | ९२ | सतो महान्तः | ५४९ | उसा इव स्वसराणि २ सुतं आ गन्त तूर्णयः । | |
| रातिषाचः | ३७६, ७०५ | सत्याः | ३७९ | ऋषिवत् ७२० देवान् स्वस्तये ईद्वानाः । | |
| रिशादसः | ५१५, ५२१, ५५० | सत्यधर्माणः | ३५१ | कर्मारः इवः १२१३ ब्रह्मणस्पतिः समधमत् । | |
| रुद्राः | १२०४ | सधन्यः | ३९५ | गौरः न क्षेप्रोः १२०८ अविजे ज्यायाः । | |
| रोहयन्तः दिवि सूर्यम् | ७०२ | सानिष्यवः | २३४ | यथा ह त्यत् गौर्यं चित् पदि विताममुश्चत् | |
| सूचसः रथ्यः | ३९८ | सपर्यवः | १७१ | ७९९ एवमु वसवः अस्मत् अहं विमुश्चत् । | |
| वनस्पतीन् जनयन्तः | ७०२ | समनसः | ५०४, ५१६ | ७९९ एवमु वसवः अस्मत् अहं विमुश्चत् । | |
| वन्धाः | २४६ | समन्यवः | ५२५ | तीर्थे न ५७० ऊमाः दस्मं उपयन्ति । | |
| वरिबोविदः | ५२५ | सरातयः | " | दिवि इव ज्योतिः ६१५ स्वं आ मिमीया । | |
| वरुणप्रशिष्टाः | ७०८ | सर्वे | ८०१ | नौभिः अपः न ५६१ विधिपता पुर अति पर्वथ । | |
| वशाः | ७३६ | सामभिः स्तूयमानाः | ६५ | पयसा इव धेनुम् ६८७ मे धियं पीपयत् । | |
| वसवः ५७-६२, २२९, ३९२, ३९७, ३९९, ५१३, ५२०, ५३१, ७५७ | | सुकृतः | ६६९ | पिता इव कितवम् १५५ यूयं मा स्रष्टास । | |
| वसवानाः | ३० | सुजाताः | ३९५ | पितृवत् ७२० वसिष्ठासः वाचं अकृत । | |
| वस्यः | " | सुज्योतिषः | १६८, ३७९ | पुत्रासः न मातरं विश्वत्राः ५०३ देवासः आ सवन्तु । | |
| वदयः | ३, ७८३ | सुदानवः ५७-६२, ४०४, ५६४, ५६७, ७०२, १२०० | | पृक्षाः इव ६९५ महयन्तः देवाः मनुष्या स्तवन्ते । | |
| ववसानाः अध्वरम् | १६८ | सुनुषाः | ५०४ | | |
| विदयेषु अरमयः | २५ | सुमित्र्याः | ६९४ | | |

प्रीताः इव ज्ञातयः ७२० अस्मे वसु कामं
अव धूनुत ।
यथा भुवनमग्नि यतयः १२१८ समुद्रे अत्र
आ गूळहं सूर्यं अजभर्तन ।
मनुष्वत् ५१ सप्तः होता विदुष्वरः ।
रथः न वाजी ४२६ शुक्रा देवी प्र एतु ।
रथीः इव अध्वानम् १२०८ भ्रातरः अर्थ-
मतं अन्वावरीषुः ।
राष्ट्रं गुपितं क्षत्रियस्य ७७७ न दूताय
प्रष्टो तस्य एषा ।
वनिनः न शास्त्राः ५०१ ब्रह्माणि विप्राः
विष्वक् वि द्यन्ति ।
विं इव १५५ मा माधि पुत्रे प्रभीष्ट ।
वृकः व तृणजं मृगम् ४०० आध्वः यन्तिः
सप्तिः न रथ्यः १६४ यजत्रा धीति अद्याः ।
स्वर् न ४४२ तपन्ति शत्रुं भूमा ।
विष्णुः १,२०,५,२; ३३,३७ । १६४,
२६; १३४ । १८६, १०; १४९ ।
३,५४,१४; १८३ । ५५, १०; २०१ ।
५,४६,२-४; ३२१-३२३ । ४९,३;
३४२ । ५१,९; ३५४ । ६,२१,९;
३६१ । ४९,१३; ३७५ । ५०,१२;
३८९ । ७,३५,९; ४५७ । ३६,९;
४७२ । ३९,५; ४८५ । ४०,५; ४२२ ।
४४,१; ५०६ । ८,२५,१२; ५११ ।
२७,८; ५१९ । २९,७; ५४५ । ५४,४;
५५४ । ८३,७; ५६५ । १०,६५,१;
६९२ । ६६,५; ७११ । ९३,११;
७३१ । १२८,२; ८०१ । १४१,३;
५; ८१८,८२० । १८१,१-३; ८३४-
८३६ । १८४,१; ८३७ ।

'विष्णुः' - गुणबोधकपदानि ।

| | |
|-----------------|----------|
| अघ्न | ५११ |
| अद्वेषः | १४९ |
| उरुकमः | १४९, १८३ |
| उरुगायः | ५४५ |
| एषः हविर्भिः | ४९२ |
| गोपाः | २०१ |
| त्रीणि विचक्रमे | ५४५ |

| | |
|---------------------------|----------------|
| दधानः प्रिया अमृता धामानि | २०१ |
| दस्मः | ३४२ |
| देवः | ४९२ |
| धामानि प्रिया अमृता दधानः | २०१ |
| पाति परमं पाथः | " |
| पुरुदस्मः | १८३ |
| भद्रः | ३४२ |
| भुवनानि विश्वा वेद | २०१ |
| महिमा | ७११ |
| महिवान् | ३८२, ४९२ |
| विचक्रमे त्रीणि | ५४५ |
| वेद विश्वा भुवनानि | २०१ |
| शम् | ३७ |
| सिन्धुः | ५११ |
| सुदानुः | " |
| स्वयावा | " |
| हविर्भिः एषः | ४९२ |
| वृकः (अरुणः) | १,१०५,१८, ५५ । |
| अरुणः | " |

उपमासूची ।

| | |
|----------------------------------|-------------|
| तष्टा इव पृष्ठयामयी ५५ उज्जिहीते | निचाट्य । |
| वृषस्तुभः १०,६६,६; ७१२ | |
| वृष्टिः १,१६४,९,३३; १०७,१३१ | |
| गर्भः १०७, १३१ | |
| माभिः | " |
| पुत्रः १०७ | |
| वत्सः | " |
| वेदिः ७,३५,७; ४५५ । १०,११४,३; | |
| ७८४ | |
| घृतप्रतीका | ७८४ |
| चतुष्कपर्दा | " |
| युवतिः | " |
| वयुनानि वस्ते | " |
| वस्ते वयुनानि | " |
| सुपेशा | " |
| मजिनीः (निशाः) ५,४५,१; ३०९ | |
| प्रतानि | ७,३५,९; ४५७ |

| | |
|------------------------------------|-----|
| शंसः ७,३५,९; (प्र. पा.) ४५० । २; | |
| (वृ. पा.) ४५० । १०,३१,१; ५६८ | |
| शंसः = नराशंसः । (४५०) | |
| सत्यस्य सुयमस्य शंसः (४५०) | |
| देवानां शंसः | |
| शमी (गोत्वेन निरूपिता) १०,३१, | |
| १०, ५७७ | |
| शम्भुः । ७,३५,१०; ४५८ | |
| शरीरम् १,१६४,३०; १२८ | |
| अनत् | १२८ |
| जीवम् | " |
| तुरगानु | " |
| पस्त्यानां मध्ये आ ध्वं (शेते) " | |
| शये | " |
| शर्यणावन्तः १०,३५,२; ५८१ | |
| संवत्सरः १, १६४, ३, १०, १२-१४; | |
| १०१, १०८, ११०-११२ । ३, ५६, | |
| २५; २१५-२१८ | |

गुणबोधकपदानि ।

| | |
|------------------------|---------|
| अक्षः भूरिभारः | १११ |
| अजरम् | ११२ |
| अर्पितं सप्तचक्रे षळरे | ११० |
| आशृतं रजसा | ११२ |
| चक्षुः सूर्यस्य | " |
| चक्रम् | १११-११२ |
| त्रिपाजस्यः | २१६ |
| त्रिमाता | २१८ |
| त्र्यनीकः | २१६ |
| श्रुधा प्रजावान् | " |
| द्वादशाकृतिः | ११० |
| पञ्चपादः | " |
| पञ्चारः | १११ |
| पिता | ११० |
| पुरीषी | " |
| पुरुधा | २१६ |
| प्रजावान् श्रुधा | " |
| माहिनावान् | " |
| रजसा आशृतम् | ११२ |
| रेतोधाः सप्ततीनाम् | २१६ |

| | |
|-------------------|-----|
| विचक्षणम् | ११० |
| विद्येषु सम्राट् | २१८ |
| विश्वरूपः | २१६ |
| वृषभः | " |
| शश्वतीनां रेतोधाः | " |
| षठरम् | ११० |
| सनाभिः | १११ |
| सनेमि | ११२ |
| सप्तचक्रम् | ११० |
| सम्राट् विद्येषु | २१८ |
| सूर्यस्य चक्षुः | ११२ |

संसारः १,१६४,३२, १३०
परिवीतः मातुर्योनौ १३०
बहुप्रजा "
मातुर्योनौ परिवीतः "
सत्यस्य पतयः (पतयः सत्यस्य) ७,
३५,१२, ४६०
समुद्रः ६,५०,१३-१४; ३९०-३९१ ।
७,३५,१३; ४६१ । १०,६६,११;
७६७

सरमा ५,४५,७-८; ३१५-३१६
सरयुः १०,६४,९; ६८४
मही ६८४
वक्षणी "

सरस्वती (नदी) १,८९,३; २१ । ३,
५४,१३; १८२ । ५,४२,१२; २७० ।
४३,११; २८७ । ४६,२; ३२१ ।
६,५०,१२; ३८९ । ५२,६; ४१४ ।
७,३५,११; ४५९ । ३६,६; ४६९ ।
४०,३,६; ४९०,४९३ । ८,५४,४;
५५४ । १०,६४,९; ६८४ । ६५,१,
१३; ६९२,७०४ । १४१,५; ८२० ।
१८४,२; ८३८ । २,३२,८; १२६६

गुणबोधकपदानि ।

| | |
|-------------------|-----|
| उशती शग्मां वाचम् | २८७ |
| घृताची | " |
| जुजुषाणा हवम् | " |
| दशस्यन्ती | २७० |
| पिन्वमाना | ४१४ |

| | |
|--------------------------------|-----|
| बृहद्विवा | २७० |
| मयस्करत् | २१ |
| मही | ६८४ |
| मीळहुषी | ३८९ |
| यजता | २८७ |
| वक्षणी | ६८४ |
| वरूत्री | ४९३ |
| वाचं शग्मां उशती | २८७ |
| शग्मां वाचं उशती | " |
| शुभ्रा | २७० |
| सप्तथी | ४६२ |
| सिन्धुमाता | " |
| सुभगा | २१ |
| हवं जुजुषाणा | २८७ |
| सरस्वती (वाक्) ६,४९,७, ३६९ । | |
| ७,३९,५; ४८५ । | |
| कन्या | ३६९ |
| चित्रायुः | " |
| पावीरवी | " |
| वीरपत्नी | " |

सविता १,१०६,७, ६३ । १०७,३;
६६ । १६४,२६; १२४ । १८६,१;
१४० । २,३१,६; १६३ । ३,२०,५;
१६९ । ५४,११; १८० । ५५,१९;
२१० । ५६,६-७; २१९,२२० । ४,
५५,१०; २३८ । ५,४२,३,५; २६२,
२६४ । ४६,३; ३२२ । ४८,५;
३३९ । ४९,१-२,४; ३४०-३४१,
३४३ । ५०,१-२,४-५; ३४५,
३४६, ३४८-३४९ । ६,२१,९; ३६१ ।
४९,१४; ३७६ । ५०,१,८,१३;
३७८, ३८५, ३९० । ७, ३५, १०;
४५८ । ३७,८; ४८० । ४०, १;
४८८ । ८,२७,१२, ५२३ । १०,३१,
४, ५७१ । ३५,७; ५८६ । ३६,
१२-१४; ६०५-६०७ । ६४,७;
६८२ । ६६,४; ७१० । ६३,२;
७४४ । १००, १, ३, ८-९; ७५१,
७५३, ७५८-७५९ । ११८,७; ८०६ ।

१४१,५; ८२० । १८१,१-३, ८१४-८३६

सविता-गुणबोधकपदानि ।

| | |
|---|---------|
| अनर्वा | ३४३ |
| अप्रयुच्छन् | ६३ |
| अभिमातिषाहः | ८०६ |
| अभीद्धः | १२४ |
| असुरः | ३४१ |
| आयोः ज्येष्ठं रत्नं विभजन् | " |
| आयोः रत्नं विभजन् | ३४० |
| ईक्ष्यः | ७५९ |
| उषसो न प्रतीकम् | ३८५ |
| ऊर्ध्वः | ५२३ |
| कवीनां कवितमः | २६२ |
| गोषुक् | १२४ |
| घर्मः | " |
| जजान पुरुषा प्रजाः | २१० |
| ज्येष्ठं रत्नं आयोः विभजन् | ३४१ |
| प्राता | ६३,८०६ |
| प्रायमाणः | ३८५ |
| त्रिः आ पत्यमानः विदधे | १८० |
| स्वष्टा | २१० |
| दश्रवाण् | ३८५ |
| देवः ६३,१४०,१६९,२१०,२६२, ३४०-३४१,३४५,३४६,३८५,३९०, ४५८,४८८,६८२,७४४,७५३,७५९ | |
| द्युतानः | ८३६ |
| घातृणां घाता | ८०६ |
| नृमणाः | ३४८ |
| मेता | ३४५,३४९ |
| पतिः भुवनस्य | ८०६ |
| पायुः | ७५९ |
| पुषोष पुरुषा प्रजाः | २१० |
| प्रजाः पुरुषा जजान | " |
| प्रजाः पुरुषा पुषोष | " |
| भुवनस्य पतिः | ८०६ |
| यजतः | ३८५ |
| रत्नधा | ५८६ |
| रत्नं विभजन् आयोः | ३४०-३४१ |

| | | | | | |
|---------------------------------------|-----|-------------------------------------|-----|---------------------------|---------------|
| रत्नी | ४८८ | सप्त | ५५४ | अवन्धनः | १९७ |
| रथस्पतिः | ३४९ | सुध्रोतुः | ८७ | अरुषः | ३३० |
| वरुणः | ५२३ | सुकृतानि सुकृतां ७, ३५, ४, ४५२ | | अर्कः | ७८२ |
| वाजी | ८२० | सुतम्बरः (ऋषिः) ५, ४४, १३, ३०६ | | अर्यः | ३९४ |
| विदथे त्रिः आ पत्यमानः | १८० | उदञ्चनः | ३०६ | अश्मा | ३३० |
| विभजन् आयोः रत्नम् | ३४० | ऊधः विश्वासां धियाम् | ,, | अहा विवर्तयन् | ३३७ |
| विभजन् आयोः रत्नं ज्येष्ठम् | ३४१ | विश्वासां धियां ऊधः | ,, | अहा संवर्तयन् | ,, |
| विश्वानरः | १४० | सत्पतिः | ,, | उक्षा | ३३० |
| विश्वरूपः | २१० | सुमतिः आदित्यानाम् १, १०७, १, ६४ | | उच्चरन् | ४१३ |
| सत्यसवः | ६०६ | अर्वाची | ६४ | उरुचक्षाः | ४५६ |
| सुजिह्वः | १८० | वरिवोवित्तरा | ,, | उत्तः | ३४२ |
| सुदंसस् | ७१० | सुपर्णः १०, ११४, ४-५; ७८५-८६ | | एकः | ५५६ |
| सुहस्तः | १२४ | सुहवानि देवानाम् ७, ३५, ३, ४५१ | | एकपात् | १६३ |
| द्विःष्यपाणिः | १८० | सूनुता १०, १४१, २; ८१७ | | एकः वत्सः | १९७ |
| उपमासूची । | | सूर्यः १, ९०, ८, ३६ । १०५, १२, ४९ । | | कविः | १७५, ३००, ३१७ |
| उषसः न प्रतीकम् ३८५ सविता देवः । | | १०६, ७, ६३ (सविता वा) । १६४, २५; | | चरति अन्वग्रम् | १९८ |
| रश्मि न ७४४ चर्षणीनां चक्रं नि योयुवे | | १२३ । २, ३१, ६; १६३ [सूर्यः | | जनित्रं परमं संवेशनम् | ६१४ |
| साम १, १६४, २५; १२३ | | सायनाचार्याः] । ३, ५४, ६; १७५ । | | जनिवान् | ३०० |
| सिनीवाली १०, १८४, २, ८३८ । २, | | ५५, ६-७; १९७-१९८ । ५, ४४, ४, | | ज्योतिः तृतीयम् | ६१४ |
| ३२, ८, १२६६ | | ७-१०; २९७, ३००-३०३ । ४५, | | ज्योतिः दिवि | ६१५ |
| सिन्धुः-न्धवः १, ९०, ६; ३४ । १०५, | | १-२, ९-१०; ३०२-३१०, ३१७- | | तृतीयं ज्योतिः | ६१४ |
| १२, १९; ४९, ५६ । १०६, ७, ६३ । | | ३१८ । ४७, ३-७; ३३०-३३४ । | | त्राता | ६३ |
| १०७, ३, ६६ । १२२, ६, ८७ । | | ४८, ३; ३३७ [इन्द्रात्मा सूर्यः] । | | दिवि ज्योतिः | ६१५ |
| ३, ५६, ५; २१८ । ४, ५५, ३; २३१ । | | ४९, ३; ३४२ । ६, ५०, २; ३७२ । | | दिवो मध्ये निहितः | ३३० |
| ५, ४९, ४; ३४३ । ६, ५२, ४, ६; | | ५१, १-२; ३९३-३९४ । ५२, ५; | | देवः | ६३, ३०९ |
| ४१२, ४१४ । ७, ३५, ८; ४५६ । | | ४१३ । ७, ३५, ८; ४५६ । ३६, १; | | देवानां जन्म सनुतः वेद | ३९४ |
| ८, ५४, ४; ५५४ । १०, ३५, २, | | ४६४ । ४४, १; ५०६ । १०, ३१, ९; | | यौः | ३३४, १२६४ |
| ५८१ । ६४, ९; ६८४ । ६५, १३; | | ५७६ । ३५, २, ८; ५८१, ५८७ । | | द्विमाता | १९७-१९८ |
| ७०४ । ६६, ११; ७१० । २२, ५, | | ५६, १-२, ७; ६१४-६१५, ६२० । | | निहितः मध्ये दिवः | ३३० |
| ७२५ | | ६४, ३; ६७८ । १०, ९२, ७, १४, ७२७, | | नृचक्षाः | १७५ |
| गुणबोधकपदानि । | | ७३४ । ११४, १; ७८२ । १४१, | | परमं जनित्रं संवेशनम् | ६१४ |
| इषयन्तः ३४३ | | ३; ८१८ । १८१, ३; ८३६ । १, १३६, | | पश्यन् मर्तेषु ऋजु वृजिना | ३९४ |
| त्री षधस्थाः २१८ | | ६; १२६४ | | पुरुस्तात् शयुः | १९७ |
| देवी २३१ | | सूर्यः- गुणबोधकपदानि । | | पृथिः | ३३० |
| पिन्वमानाः ४१२ | | अमृः ३०० | | बुधः | १९८ |
| मही ६८४ | | अजः १६३ | | वृहन् | ३३४, १२६४ |
| मातरः ५८१ | | अन्वग्रं चरति १९८ | | मधुमान् | ३६ |
| वक्षणीः ६८४ | | अप्रयुच्छन् ६३ | | युवा | ३१७ |
| श्रोतुरातिः ८७ | | | | रघुः | ,, |

| | |
|---------------------------|----------|
| वत्सः एकः | १९७ |
| विदथानि त्रीणि वेद | ३९४ |
| विदथेषु सम्राट् | १९८ |
| विप्रः | ३९४ |
| विवर्तयन् अहा | ३३७ |
| विश्वं अनु प्रभूतः | ५५६ |
| विश्वः उसाः स्पल्लत् एति | ५८७ |
| वृजिना पश्यन् मर्तेषु ऋजु | ३९४ |
| वृषा | ३३३ |
| वेद देवानां सनुतः जन्म | ३९४ |
| शयुः परस्तात् | १९७ |
| श्येनः | ३१७ |
| संवर्तयन् अहा | ३३७ |
| संवेशनं परमं जनित्रत् | ६१४ |
| सप्ताश्वः | ३१७ |
| समुद्रः | ३३० |
| समुद्रः आसां स्तुतीनाम् | ३०९ |
| सम्राट् विदथेषु | १९८ |
| सहसामानः | ७८२ |
| सुपर्णः | ३३० |
| सुमहः | ३७९ |
| सूरः | ३९४, ७२७ |
| स्तुतीनां आसां समुद्रः | ३०९ |
| स्तेगः | ५७६ |
| स्वः | ३०९ |
| स्व.वसुः | ३०० |
| होता | १९८ |

उपमासूची ।

| |
|---|
| अमर्ति न ३१० श्रियं वि सात् । |
| उद्रा न नावम् ३१८ धीराः तं अनयन्त । |
| रुक्मः न दिवः ३९३ उदिता व्ययौत् । |
| सूर्यामासा १०, ६४, ३, ६७८ । ९२, १२, ७३२ । ९३, ५, ७४० |
| दिविक्षिता ७३२ |
| विचरन्ता ,, |
| सदनाय सधन्या ,, |
| सोमः १, १४, ४ (इन्द्रवः), ७, १०, १३ । ८९, ३, २१ । २, ४१, १४; १६६ । ५, ४३, ४; २८० । ४६, ४; ३२३ । |

| |
|---|
| ५१, ९, १२; ३५४, ३५७ । ६, ५१, १४; ४०६ । ५२, ३; ४११ । ७, ३५, ७; ४५५ । ४१, १; ४९४ । ८, २९, १; ५३९ । १०, ३५, २; ५८१ । ३६, ८; ६०१, १ । ५२, २; ६०९ । ५७, ६; ६२६ । ६१, १६; ६४२ । ६५, १-२, १०; ६९२, ६९३, ७०१ । १००, ४; ७५४ । १०९, १-२; ७७५-७७६ । १२८, ५; ८०४ । १४१, ३; ८१८ । १६७, ३; ८३३ । १, ४५, १०; १२०० । १३६, ६; १२२४ |
|---|

सोमदेवताया

गुणबोधकपदानि ।

| | |
|-----------------|--------|
| अंशुः | २८० |
| अजि हिरण्यम् | ५३९ |
| अध्वरथोः | ६०१ |
| अपां पेरुः | ,, |
| अभिषस्तिपाः | ४११ |
| अद्वणीयमानः | ७७६ |
| आहुतिः देवानाम् | ६०९ |
| इन्द्रवः | ७ |
| इन्द्रियः | ६०१ |
| गिरिष्ठाः | २८० |
| गोपाः ब्रह्मणः | ४११ |
| घृतश्रीः | ६९३ |
| चमूषदः | ७ |
| जीवधन्यः | ६०१ |
| तिरो अहयः | १२०० |
| तीव्रः | १६६ |
| देवानां आहुतिः | ६०९ |
| देवान्यः | ६०१ |
| द्रप्सः | ७ |
| श्रीः भुवनस्य | ३५७ |
| बभ्रुः | ५३९ |
| ब्रह्मा | ६०९ |
| ब्रह्मणः गोपाः | ४११ |
| भुवनस्य पतिः | ३५७ |
| मत्सरः-राः | ३६६, ७ |

| | |
|------------------------------|-----|
| मधुमान् | १६६ |
| मधु सोम्यम् | १३ |
| मध्वः | ७ |
| मध्वः रसः | २८० |
| मयोभू | ७७५ |
| मादयिष्णवः | ७ |
| युवा | ५३९ |
| राजा ६४२, ७५४, ७७६, ८०४, ८३३ | |
| विप्रः | ६४२ |
| विषुणः | ५३९ |
| वि सेतुः | ६४२ |
| वेधाः | ,, |
| शुकः | २८० |
| समिद् | ६०९ |
| सुररिमः | ६०१ |
| सुवानः | ५८१ |
| सुहवः | ६०१ |
| सूनरः | ५३९ |
| सोम्यं मधु | १३ |
| स्तुतः | ६४२ |
| हिरण्यं अजि | ५३९ |

उपमासूची ।

| |
|--------------------------------------|
| नेमि न चक्रं अर्वाते |
| रघुद्रु ६४२ कक्षीवन्तं रेजयत् । |
| सोमजामयः १०, ९२, १०१, ७३० |
| सोमसूर्यचक्रप्रमणानि १, १६४, १९, ११७ |

उपमासूची ।

| |
|--|
| धुरा न युक्ताः ११७ तानि रजसः वहन्ति । |
| स्तोता १०, १३७, ४; ८१२ |
| स्तोमः (देवस्तुतिः) १०, ९३, १२-१४; ७४७ ७४९ |

उपमासूची ।

| |
|--|
| तना न सूर्ये ७४७ मे स्तोमं वाहन्त । |
| तष्टा इव अनपच्युतम् ७४७ मे स्तोमं वाहन्त । |
| नेमभिता न पौस्या ७४८ रावा युक्ता हिरण्यवी वावर्त । |
| दृषा इव विष्टान्ता ७४८ हिरण्यवी वावर्त । |

| | | | |
|--|---------------|-----------------|----------------------------------|
| संवत्सरं न अक्षय्यम् ७४७ मे स्तोमं वावृधन्त । | स्वरूपा मितयः | ७, ३५, ७, ४५५ | होता ७, ३९, १; ४८१ । १०, ३५, १०; |
| स्वः १०, ३६, १; ५९४ । ६५, १; ६९२ । | स्वस्तिः | ४, ५५, ३; २३१ | ५८९ । ६४, १५; ६९० |
| ६६, ४, ७१० | हविष्कृतः | १०, ६६, ६; ७१२ | इषितः ४८१ |
| वृहत् ६९२, ७१० | वृषणः | १०, १३७, ७, ८१५ | सप्त ५८९ |
| स्वधावान् (प्रश्नोत्तराणि) १०, ३१, ७-९; | हस्तौ | १०, १३७, ७, ८१५ | होतारा दैव्या १०, ६६, १३; ७१९ |
| ५७४-५७३ | अनामयित्नु | १०, १३७, ७, ८१५ | पुरोहिता १०, ६६, १३; ७१९ |
| | दशग्राह्यौ | १०, १३७, ७, ८१५ | प्रथमा १०, ६६, १३; ७१९ |

विश्वे-देवाऽन्तर्गता देवताः

(२) यजुर्वेद-मन्त्राणाम् ।

| | | | | |
|-------------------------------|-------------|-----------------|-----------------|--------------------------------|
| अंवाः १०, ५; | १३२५ | आकृति प्रयुक् | १२८१ | प्रयुक्त मनः मेधाम् १३३२, १२८१ |
| अक्षरपंक्तिः छन्दः | १५, ४; १३४८ | ॥ | १३३२ | ॥ वाचो विधृतिम् १३३२ |
| अक्षाः १०, २८; १३२९ | | आयुः | १२८५ | ॥ विज्ञानम् ॥ |
| अमिः ८, १९; ८४९ । १४, ७, २०; | | ऋषिः | १३७५ | मनः मेधां प्रयुक् १२८१, १३३२ |
| ८५८-८५९ । १५, ५४; ८६२ । १७, | | ऋषीणां नपात् | ॥ | मेधां मनः प्रयुक् ॥ ॥ |
| ७३, ८६३ । १८, ७६, ८६४ । २७, | | गृहपतिः | १३२६, १३२८ | वर्चः १२७९ |
| ५२, ८७३ । ८, २७; १२४४ । १५, | | चित्तं प्रयुक् | १३३२ | वाचो विधृति प्रयुक् १३३२ |
| ५०, १२४९ । १७, ५६; १२५० । | | जातवेदाः | ८७३ | विज्ञानं प्रयुक् ॥ |
| २०, १४; १२५३ । ३३, ७, १२६१ । | | जोष्टा | १२५० | वैश्वानरः ८५८, १२९२, १३३२ |
| ३३, ४८; १२६२ । ३, ९-१०, १२७९- | | ज्योतिः | १२७९ | सज्जः रात्र्या १२८० |
| १२८० । ४, ७; १२८१ । ५, २, २, | | तपस् दीक्षा | १२८१ | ॥ सवित्रा ॥ |
| १२८३, १२८५ । ६, १६, २१, २६; | | दीक्षा तपः | ॥ | सरस्वती पूषा १२८१ |
| १२८९, १२९२, १२९४ । ९, ३१; | | देवः | ८६४, १२८५, १३७५ | सूर्यराशिः १३५९ |
| १३१९ । १०, ५, ९, २३; १३२५, | | देवता | ८५९ | हरिकेशः ॥ |
| १३२६, १३२८ । ११, ६६; १३३२ । | | देवानां समिद् | १२४४ | होता १३७५ |
| १५, १५, ५२; १३५९, १३६५ । १८, | | दैव्यः | १२५० | अमिः (भूः) ३, ५; १२७८ |
| ३७, १३६६ । २१, ६१; १३७५ । | | धर्ता | ॥ | अमिः (सोमः) ८, ५६; १३१० |
| २३, १३; १३७७ । २६, १; १३८४ । | | धामच्छद् | ८६४ | अमीषोमी २, १५; १२७४ । ६, ९; |
| २८, २३; १३८६ । ३२, १५; १३८९ । | | नभः नाम | १२८५ | १२८७ |
| ३५, ३; १३९० | | पुरः (स्थः) | १३५९ | अमेः पुरीषम् १५, ३; १३४७ |
| अगिराः | १२८५ | पूषा सरस्वती | १२८३ | अमेः भागः १४, २४; १३४४ |
| अनाधृष्टं ते नाम | ॥ | प्रयुक् आकृतिम् | १२८१, १३३२ | अप्यथा नामानि ८, ४३; १२४५ |
| असितग्रीवः | १३७७ | ॥ चित्तम् | १३३२ | |

| | | | |
|------------------------------------|--------------|---|---|
| अदितिः | १२४५ | अनुष्टुप् छन्दः १४, १०, १८; १३३९. | १३३५ । ११, ४१-४३, ६०; १३७१- |
| इडा | " | १३४१ । १५, ५; १३४९ | १३७४ । २८, ४; १३९३ |
| काम्या | " | अन्तरिक्षम् ३६, १७; ८७५ । ४, ७, | गुणबोधकपदानि । |
| चन्द्रा | " | १२८१ । ६, २१; १२९२ । ७, २, | अध्वर्यू ८५८ |
| ज्योता | " | १२९५ । २६, १; १३८४ | उभा १२६२ |
| मही | " | अन्तरिक्षं छन्दः १४, १९; १३४२ । | दंसोमिः सजः १३३५ |
| रन्ता | " | १५, ६; १३५० | नासत्या १२६२ |
| विश्रुतिः | " | अन्तर्यामः ग्रहः ७, २७; १३०२ | भिषजा १२५२, १२५४ |
| सरस्वती | " | अन्धः (सोमः) ८, ५४; १३०८ | अष्टाचत्वारिंशः विवर्तः १४, २३; १३४३ |
| द्वया | " | अपानः २३, १८; १३७८ | अष्टादशः प्रतृतिः १४, २३; १३४३ |
| अङ्गाङ्गं छन्दः | १५, ५; १३४९ | अपामार्गः ३५, ११; १३९१ | असुः (सोमः) ८, ५८; १३१२ |
| अङ्कुरं छन्दः | १५, ४; १३४८ | अच्छः १२, ७४; १३३५ | अमुरः (सोमः) ८, ५५; १३०९ |
| अजा | ४, २६; १२८२ | अथवोभिः सजः " | अस्थि [वसु] २०, १३; १३६८ |
| अजाः छन्दः | १४, १९; १३४२ | अर्गमा १०, ५; १३२५ | अस्त्रविद्यः छन्दः १४, १८; १३४१ |
| अथर्वा (सोमः) | ८, ५६; १३१० | अर्वा २३, २०; १२५७ | अहः १५, ६; १३५० |
| अदितिः ९, ३४; १३२२ । १०, ९; १३२६ । | १४, ४८; १३६४ | अवभृथः २०, १८; १३७० | अहोरात्रे ६, २१; १२९२ |
| | १४, ४८; १३६४ | निचुम्पुणः १३७० | आक्रमः १५, ९; १३५३ |
| अदित्यै भागः | १४, २३; १३४९ | निचरः " | आमीध्रम् ५, ३०; ८४३ |
| अधरारणिः | ५, ४; १२८३ | अश्वः २३, १३, १८-२०; १३७७, १३७८-८० X | वैश्वदेवम् " |
| अधिपतिः | १५, १०; ८६१ | अश्वः (दक्षिणा) ७, ४७; १३०६ | आप्रयणः ७, २४; १२९२ । २८; १३०३ |
| अधिपतिः छन्दः | १४, ९; १३३८ | अश्वः छन्दः १४, १९; १३४२ | आच्छच्छन्दः १५, ४-५; १३४८-४९ |
| अधीतम् | १५, ७; १३५१ | अश्वकः १३७८ | आज्यम् ५, ३५; ८४४ । ५, २; १२८३ |
| अश्वरः | ६, २३; १२९३ | गणपतिः गणानाम् १३७९ | ज्योतिः ८४४ |
| तपसः तनूः | १२८२ | गणानां गणपतिः " | विश्वरूपम् " |
| प्रजापतेः वर्णः | " | गर्भधः " | विश्वेषां देवानां समिद् " |
| उरुशर्वा | १३२६ | निर्धनां निधिपतिः " | आयुः १२८३ |
| उर्वशी | १२८३ | प्रियाणां प्रियपतिः " | आत्मा प्रजापतिरूपेण ८, ९; १३०७ |
| देवः | १२९३ | राज्यः १३७७ | आदित्यः ३१, २१; १२६० । १५, १७; १३६१ । २६, १; १३८४ |
| हविष्मान् | १२९३ | रेतोधाः १३८० | पश्चात् (स्थः) १२६० |
| अनः (शवटम्) | १, ८; १२३४ | वाजी " | विश्वव्यचाः १३६१ |
| देवानां वह्नितमम् | " | वृषा १३७७, १३८० | आदित्याः १४, २०; ८५९ । २, ५; १२७३ । २२; १२७६ । ९, ६४; १३२२ । ११, ५८; १३३१ । २३, ८; १३७६ । १५, ६; १३५० |
| " जुष्टतमम् | " | हयः १३०६ | देवता ८५९ |
| " देवहृततमम् | " | अश्वस्तुतिः ९, ९; १३१४ | आदित्यानां भागः १४, २५; १३४५ |
| " पथिततमम् | " | अश्विनौ १४, ७; ८५८ । १९, १२; १२५२ । २१, ५३; १२५४ । ३३, ४८; १२६२ । ६, ९; १२८७ । ९, ३१; १३१९ । १०, ३१; १३३० । १२, ७४; | |
| वह्नितमं देवानाम् | " | | |
| " सन्निततमम् | " | | |
| अनःपृष्टः छन्दः | १४, ९; १३३८ | | |
| अनुपद | १५, ८; १३५२ | | |

| | | | | |
|-----------------------------------|-------------|------------------------------------|------------------------------------|--------------|
| आदिशः | ६, १९; ८४५ | १३६४ । २०, ३, ४१-४२, ६०; | निधिपतिः निधीनाम् | १३७९ |
| अ.पः ६, २४; ८४६ । ३६, १७; ८७५ । | | १३६७, १३७१-७२, १३७४ । २८, | निधीनां निधिपतिः | " |
| १, १२; १२७० । ४, ७; १२८१ । | | २३; १३८६ । ४३; १३८७ । ३२, | प्रियपतिः प्रियाणाम् | " |
| ६, २३, २६; १२९३, १२९४ । २०, | | १५; १३८९ । ३८, ४; १३९३ | प्रियाणां प्रियपतिः | " |
| १८; १३७० २६, १; १३८४ | | देवः | रेतोधाः | " |
| अग्नेगुवः | १२७० | ८६४, १३८७ | वाजी | " |
| अग्नेपुवः | " | देवता | वृषा | " |
| देवीः | १२७०, १२८१ | धामच्छद् | | |
| बृहतीः | १२८१ | बृहद्वाक् | उक्थम् | १५, १०; ८६१ |
| भागधेयीः | ८४६ | मघवान् | वैश्वदेवामिमांस्ते उक्थे | " |
| विश्वेषां देवानाम् | १२९३ | वयस्वान् | उक्थ्यम् | ७, २८, १३०३ |
| विश्वशम्भुवः | १२८१ | वयोधाः | उक्थ्यग्रहः | ७, २२, १३०० |
| विश्वेषां देवानां भागधेयीः | ८४६ | विश्वौजाः | उखा ११, ५८, ६०, ६५; ८५४-५६ । | |
| ज्ञान्तिः | ८७५ | वृद्धधवाः | ११, ५८, १३३१ | |
| हविष्मतीः | १२९३ | सुत्रामा | ध्रुवा अन्तरिक्षम् | १३३१ |
| आभिचारिकम् | ७, १८; १२९८ | इन्द्रः मरुतश्च ८, ५५; १३०२ [सोमः] | ध्रुवा दिशः | " |
| आयुः | ५, २; १२८३ | इन्द्रः ८, ५६; १३१० [सोमः] | ध्रुवा यौः | " |
| आज्यम् | " | इन्द्राग्नी २, १५; १२७४ । ७, २३; | ध्रुवा पृथिवी | " |
| आशीः | ८, ६०; १२४६ | १३०१; १२, ५४; १३३४ | उत्क्रमः | १५, ५; १३५३ |
| आश्विनं ग्रहः | ७, २७; १३०२ | उपमासूची । | उत्क्रान्तिः | १५, ५, " |
| आहवनीयः | २, ५; १२७३ | कुमाराः विशिखाः इव १७, ४८; १३६४ | उत्तरारणिः | ५, २; १२८३ |
| ह्रस्वः | २, १; १२७२ | यत्र बाणाः संपतन्ति । | पुरुवाः | " |
| अमये जुष्टः | १२७२ | इन्द्राबृहस्पती ७, २३; १३०१ | उदीची दिक् सम्राट् | १५, १३; १३५७ |
| आखरेष्ठः | " | इन्द्रावरुणौ ७, २३; " | उद्दिशः | ६, १९; ८४५ |
| कृष्णः | " | इन्द्राविष्णू ७, २३; " | उद्गाताः | २३, २७; १३८२ |
| जुष्टः अमये | " | इन्द्रस्य भगः १४, २४; १३४४ | उपमासूची । | |
| इन्द्रः ५, ३०; ८४३ । ८, १५; ८४८ । | | इष्टका १४, ७; ८५८ । २०; ८५९ । | गिरौ भारं हरन् इव २३, २७; १३८२ । | |
| १४, २०; ८५९ । १८, ७६; ८६४ । | | २६; ८६० । १५, १४; ८६१ । ५४; | ऊर्ध्वं एवं उच्छ्रयतात् । | |
| २७, ५२; ८७३ । १९, १२; १२५२ । | | ८६२ । + १४, ९-१०, १७-१९, २३- | शीते वाते पुनन् इव २३, २७; १३८२ । | |
| २१, ५३; १२५४ । २८, ११; १२५६ । | | २६; १३३८-४६ । १५, ३-१९; | मध्वं एजतु । | |
| २, २२; १२७६ । ५, ७; १२८४ । ७, | | १३४७-६३ | उपभृत् २, १५; १२७४ | |
| १५, २२-२३; १२९७, १३००-१३०१ । | | अधिपत्नी ८६१ | उपांशुः ग्रहः ७, ३ १२९६ । २७; १३०२ | |
| ९, १०-१२; १३१५-१३१७ । ९, ३३; | | बृहती दिक् " | उपांशुसवनम् (ग्रहः) ७, ३; १२९६ । | |
| १३२१ । १०, ५; १३२५ । ९; | | ईश्वरः २३, १९-२०, १३७९-८० × | २७; १३०२ | |
| १३२६ । २३; १३२८ । २८; | | गणपतिः गणानाम् | उपावीः | ६, ७; १२८६ |
| १३२९ । ३१; १३३० । १७, ४८; | | गणानां गणपतिः | तृणविशेषः | " |
| | | गर्भधः | | |

+ अतोऽनन्तरं 'इष्टका' आरोपित देवतानां नामानि स्वतंत्रतया संगृहीतानि वर्तन्ते ।

× 'उबट-महीधर-भाष्यकारमते एतयोः मन्त्रयोः 'अश्वः' देवता । शतपथब्राह्मणतः 'ईश्वरः' देवता ।

॥ शतपथब्राह्मणमते अत्र देवता 'राष्ट्रप्रीः' ।

| | |
|---------------------------------------|--------------------------------|
| उर्वशी | ५, २; १२८३ |
| अधरारणिः | " |
| उल्लसलम् | १, १४; १२७१ |
| अग्निः | १२७१ |
| ग्रावा | " |
| पृथुध्वनः | " |
| वानस्पत्यः | " |
| उषा | १२, ७४; १३३५ |
| सञ्जः अरुणीभिः | १३३५ |
| उषासानक्ते | २१, १७; ८६६ |
| यक्षी | ८६६ |
| सुपेशसा | " |
| उष्णिक् छन्दः | १४, १०; १३३९ । १४, १८; १३४१ |
| ऋक् (वाक्) | ३६, १; १३९२ |
| ऋतवः १४, ७; ८५८ । २, ३२; १२७७ | |
| षट् | १२७७ |
| घोरः (हेमन्तः) | " |
| जीवः (वर्षाः) | " |
| मन्युः (शिशिरः) | " |
| रसः (वसन्तः) | " |
| शोषः (ग्रीष्मः) | " |
| स्वधा (शरद्) | " |
| पितृणां स्वरूपभूताः | " |
| ऋभवः | १४, २६; ८६० |
| ऋभूणां भागः | १४, २६; १३४६ |
| ऋषयः | १५, १०; ८६१ |
| एकत्रिंशः कतुः | १४, २३; १३४३ |
| एकविंशः धरणः | १४, २३; १३४३ |
| एवः छन्दः १५, ४-५; १३४८-१३४९ | |
| येन्द्रवायवः प्रहः | ७, २७; १३०२ |
| ओषधयः | ३६, १७; ८७५ |
| " | १५, ७; १३५१ |
| ओषधिः | ६, १५; १२८८ |
| ककुप् छन्दः १४, ९; १३३८ । १५, ४; १३४८ | |
| काव्यं छन्दः | १५, ४; १३४८ |
| कुम्भं प्रति षचनम् | २०, १७; १३६९ |
| कृषिः छन्दः | १४, १९; १३४२ |

| | |
|--|--------------|
| कृष्णाजिनम् | १, १४; १२७१ |
| अदित्याः त्वक् | " |
| शर्म | " |
| धुरो भ्रजः छन्दः | १५, ४; १३४८ |
| शर्माः पञ्चविंशः | १४, २३; १३४३ |
| गायत्री छन्दः १४, १०; १३३९ । १८; १३४१ | |
| गिरः छन्दः | १५, ५; १३४९ |
| गार्हपत्यः अग्निः | २, २०; १२७५ |
| अदब्धायुः | " |
| अशीतमः | " |
| गौः छन्दः | १४, १९; १३४२ |
| गौः (दक्षिणा) | ७, ४७; १३०६ |
| माः (देवपत्न्यः) | ३२, ४; १२६२ |
| ग्रन्थिः | ५, ३०; ८४३ |
| इन्द्रस्य ध्रुवः | " |
| प्रहः (सोमपात्रम्) ७, २१; ८४७ । ८, ४७; ८५० । ७, १२; १२३९ । १७, १२४० । २२, १२४१ । ३; १२९६ | |
| ग्रन्थिप्रहः | १२४० |
| प्रावाणः ६, २६; १२९४ । ३८, १५; १३९४ | |
| उपमासूची । | |
| विदुषः न यज्ञम् ६, २६; १२९४ शृणोतु मे हवम् । | |
| घोषः | १०, ५; १३२५ |
| चक्षुः | ३६, १; १३९२ |
| चतुर्विंशः योनिः | १४, २३; १३४३ |
| चतुष्टोमः धर्मम् | १४, २३; १३४३ |
| चतुर्विंशः ब्रह्मस्य विष्टपम् १४, २३; १३४३ | |
| चत्वारिंशः स्तोमः १५, ३; | |
| चन्द्रमाः १४, २०; ८५९ । २, २१; १२३६ । २३, १३; १३७७ | |
| अटुष्णः | १३७७ |
| देवः | १२३६ |
| देवता | ८५९ |
| ब्रह्मा | १३७७ |
| मनसस्पतिः | १२३६ |

| | |
|---|------------------|
| चर्म | १०, ५; १३२५ |
| सोमस्य त्विषिः | " |
| उपमासूची । | |
| तव हव १०, ५; १३२५ मे त्विषिः स्यात् । | |
| चात्वालः (अग्निः) | ७, २६; १२४२ |
| ५, ९; १२८५ | |
| देवानां उत्क्रमणम् | " |
| छादिः छन्दः १४, ९; १३३८ १५, ५; १३४९ | |
| छन्दासि | ६, २१; १२१२ |
| जगती छन्दः १४, १०; १८; १३३९, १३४१ | |
| जनित्रं अग्नेः | ५, २; १२८३ |
| शकलम् | " |
| जुहः | २, १५; १२७४ |
| तनवः | १५, ७; १३५१ |
| तन्त्रं छन्दः १४, ९; १३३८ । १५, ५; १३४९ | |
| तृणम् | ६, ७; १२८६ |
| उपावीः | " |
| तेजः | १५, ७-८; १३५१-५२ |
| त्रयस्त्रिंशः प्रतिष्ठा | १४, २३; १३४३ |
| त्रयोविंशः सम्भरणः | १४, २३; १३४३ |
| त्रिकुक् छन्दः | १५, ४; १३४८ |
| त्रिणव ओजः | १४, २३; १३४३ |
| त्रिवृत् | १५, ९; १३५३ |
| त्रिवृत् आशुः | १४, २३; १३४३ |
| त्रिष्टुप् छन्दः १४, १०-१८; १३३९, १३४१ | |
| त्वक् | २०, १३; १३६८ |
| आगतिः | " |
| आनतिः | " |
| त्वष्टा | ६, ७; १२८६ |
| देवः | " |
| दक्षिणाः ७, ४५, ४७; १३०४, १३०६ | |
| दक्षिणाभिः | २, २०; १२७५ |
| संवेद्यपतिः | " |
| दक्षिणा दिक् (विराट्) | १५, ११; १३५५ |
| दमौ (वृषणौ) | ५, २; १२८३ |

| | |
|---------------|--|
| दिशः | ६, १९; ८४५ |
| दुन्दुभिः | ९, ११-१२; १३१६-१३१७ |
| दूरोहणं छन्दः | १५, ५; १३४९ |
| देवाः | ४, ११; ८४२ । १४, ७; ८५८ । २०, ११; ८६५ । २, ७-११; १२३५- ३६ । ५, ११; १२३७ । ७, ३, १२, १७; १२३८-१२४० । ८, १८; १२४३ । ९, ३५-३६; १२४७-४८ । १५, ५०; १२४९ । १७, ५६; १२५० । १८, ६०; १२५१ । १९, १२; १२५२ । २०, १४; १२५३ । २६, १९; १२५५ । २८, ११; १२५६ । २९, २०; १२५७ । ३१, १४-१५, २१; १२५८- १२६० । ३३, ७, ४८, ८९; १२६१- १२६३ । ७, २२; १३०० । ९, ३५- ३६; १३२३-१३२४ । १७, ५२; १३६५ । २१, ६१; १३७५ । २३, ८; १३७६ । २६, २; १३८५ । २९, ४७; १३८८ |

गुणबोधकपदानि ।

| | |
|-----------------------------------|------|
| अग्निनेत्राः | १३२३ |
| आज्यपाः | १२५६ |
| उत्तरासदः | १३२३ |
| उपरिसदः | " |
| ऋतावृधः | १३८८ |
| गात्रविदः | १२३६ |
| जुषाणाः | १२५६ |
| त्रयाः एकादश | ८६५ |
| त्रयस्त्रिंशः | " |
| त्रीणि शता त्री सहस्राणि त्रिंशत् | |
| नव च | १२६१ |
| दक्षंक्रतवः | ८४२ |
| दक्षिणासदः | १३२३ |
| दुवस्वन्तः | १३२३ |
| परमे व्योमन् | १२५१ |
| पश्चात्सदः | १३२३ |
| पुरःसदः | " |
| बृहस्पतिपुरोहिताः | ८६५ |
| मनोजाताः | ८४२ |

| | |
|------------------|---|
| मनोयुजः | ८४२ |
| मन्थिपाः | १२४० |
| मरीचिपाः | १२३८ |
| मरुत्तेत्राः | १३२३ |
| यमनेत्राः | " |
| वयोनाधाः | ८५८ |
| विश्वदेवनेत्राः | १२४७, १२४८, १३२३ |
| शुक्रपाः | १२३९ |
| सधःस्थाः | १२५१ |
| सुराश्वसः | ८६५ |
| सोमनेत्राः | १३२३ |
| अनेहसा | १३८८ |
| विश्वशंभुवी | १३२६ |
| शिवे | १३८८ |
| यावापृथिवी | ४, ७; १२८१ । ९, ७; १२८४ । ६, १६, २१; १२८९, १२९२ । १०, ९; १३२६ । २९, ४७ १३८८ । ३८, १५; १३९४ |
| द्यौः | ३६, १७; ८७५ । २६, १; १३८४। १५, ६; १३५० |
| द्यौः छन्दः | १४, १९; १३४२ |
| द्राविशः वचैः | १४, २३; १३४३ |
| द्वेषः | ६, १८; १२९० |
| धर्मः | १५, ६; १३५० |
| धाता | ३२, १५; १३८९ |
| धिषणाः | ६, २६; १२९४ |
| देवीः | " |
| धीः | ४, ११; ८४२ |
| दैवी | " |
| यज्ञवाहस् | " |
| वचोधाः | " |
| सुतीर्था | " |
| सुमृङ्गीका | " |
| ध्रुवम् | ७, २८; १३०३ |
| नक्षत्राणि छन्दः | १४, १९; १३४२ |
| नभः | ६, २१; १२९२ |
| दिव्यम् | " |
| नवदशः तपः | १४, २३; १३४३ |
| निकायः छन्दः | १५, ५; १३४९ |

| | |
|--------------------------|--|
| निर्गतिः | ९, ३५; १३२३ |
| नृचक्षाः सोमः | ८, ५८; १३१२ |
| नृचक्षा भागः | १४, २४; १३४४ |
| न्यग्रोधः | २३, १३; १३७७ |
| पङ्क्तिः छन्दः | १४, १०, १८; १३३९, १३४१ |
| पञ्चदश भान्तः | १४, २३; १३४३ |
| पदपङ्क्तिः छन्दः | १५, ४; १३४८ |
| पयः | ३८, ५; १३९३ |
| परमात्मा | २३, ६३; १३८३ |
| प्रथमः | " |
| सुभूः | " |
| स्वयम्भूः | " |
| परमेष्ठी (सोमः) | ८, ५४; १३०८ |
| परमेष्ठी छन्दः | १४, ९; १३३८ |
| परिभूः छन्दः | १५, ४; १३४८ |
| पर्जन्यः | १५, १९; १३६३ |
| अर्वाग्वसुः | " |
| उपरि | " |
| वैष्णव्यौ | १२७० |
| पवित्रे (दमौ) | १, १२; १२७० |
| पशुः | ६, ९, १५; १२८७, १२८८ |
| पितरः | २, ३२; १२७७ । १२, ४५, १३३३ । २९, ४७; १३८८ । ३५, १५; १३९४ । |
| ऊर्ध्वबर्हिषः | १३९४ |
| घर्मपावानः | " |
| सोम्यासः | १३८८ |
| पितरः नाराशांसः (सोमः) | ८, ५; १३१२ |
| पुरुषः (जगद्धीजम्) | ३१, १४-१५; १२५८-१२५९ । १३, ३८; १३३७ |
| मध्ये अमेः | १३२७ |
| वेतसः | " |
| हिरण्यः | " |

उपमासूची ।

| | |
|------------------------|-------------------|
| सारितः न | १३, ३८; १३३७ |
| धेनाः | सम्यक् स्रवन्ति । |
| पुरुषाः (उत्तरारतिः) | ५, २; १२८३ |

| | | | | | |
|--------------------------------|-------------|-----------------------------------|----------------|------------------------------------|-------------|
| पुष्करपत्रम् | १३,२; १३३६ | प्रमा | १४,१८; १३४१ | भक्षः (सोमः) | ८,५८; १३१२ |
| अग्नेः योनिः | " | प्रवृत् | १५,९; १३५३ | भगः ३३,४८; १२६२। १०,५; १३२५ | |
| अपां पृष्ठम् | " | प्रस्तरः | २,५; १२७३ | भुवः (वायुः) | ३,५; १२७८ |
| पुष्करे वर्धमानः | " | ऊर्णघ्नदाः | " | भूः (अग्निः) | ३,५; १२७८ |
| पूतभृदाहवनीयौ | ७,२८; १३०३ | स्वासस्थः | " | भ्रजः छन्दः | १५,५; १३४९ |
| पूषा ३३,४८; १२६२। ६,९; १२८७। | | प्राची दिक् राश्री | १५,१०; १३५४ | मज्जा | २०,१३; १३५८ |
| २,३२; १३२०। १०,५,९; १३२५- | | प्राणः २३,१८; १३७८। ३६,१; | | आनतिः | " |
| १३२६। १८,३७; १३६६। २०,३; | | १३९२ | | मनः | ३६,१; १३९२ |
| १३६७। १९,४७; १३८८। ३५,१५; | | बार्हिः २,१; १२७२। २,२२; १२७६ | | मनः छन्दः १४,१९; १३४२। १५,४; | |
| १३९४ | | जुष्टं क्षुब्धयः | १२७२ | १३४८ | |
| विश्ववेदाः | १३२६ | विवलं छन्दः | १४,९; १३३८ | मन्थी | ७,१८; १२९८ |
| पूषा (सोमः) | ८,५४; १३०८ | वृहत् छन्दः | १५,५; १३४९ | मन्थी (सोमः) | ८,५७; १३११ |
| पृथिवी ३६,१७; ८७५। ३,५; १२७८। | | वृहती छन्दः | १४,९,१८; १३३८, | मयन्दं छन्दः | १४,९; १३३८ |
| ५,९; १२८५। १०,२३; १३२८। | | १३४१ | | मरुतः १२,७०; ८५७। १४,२०; ८५९। | |
| १५,६; १३५०। २६,१; १३८४ | | वृहती दिक् अधिपत्नी | १५,१४; १३५८ | ३३,४८; १२६२। २,२२; १२७६। | |
| अष्टमी | १३८४ | वृहस्पतिः २,१२-१३; ८३९-८४०। | | २,३२; १३२०। १०,२१, २३; | |
| तप्तायनी | १२८५ | १४,२०; ८५८। १५,१०; ८६१। | | १३२७-१३२८ | |
| देवयजनी | १२७८ | १८,७६; ८६४। ४,७; १२८१। | | देवता | ८५९ |
| भूः | " | ९, १०-१२, ३२; १३१५-१३१७, | | मारुतं शर्धः | १२६२ |
| भूतसाधनी | १३८४ | १३२०। १०,५; १३२५। १२, | | मा छन्दः | १४,१८; १३४१ |
| माता | १३२८ | ५४; १३३४। १७,४८; १३६४ | | मांसम् | २०,१३; १३७८ |
| वितायनी | १२८५ | देवः | ८६४ | उपनतिः | " |
| पृथिवी छन्दः | १४,१९; १३४२ | देवता | ८५८ | मित्रः ३३,४८; १२६२। ९,३३; १३२१ | |
| प्रच्छन्न छन्दः | १५,५; १३४९ | धामच्छद् | ८६४ | मित्रः (सोमः) | ८,५५; १३०९ |
| प्रजापतिः ९,२४,३४; १३१८, १३२२। | | प्रतिधर्ता हेतानाम् | ८६१ | मित्रस्य भागः | १४,२४; १३४१ |
| १३,९; १३२६। ११,६६; १३३२। | | हेतानां प्रतिधर्ता | " | मित्रावरुणौ ६,२१; १२९२। ७,२३; | |
| २३,८,६३; १३७६, १३८३। ३२, | | ब्रह्मणस्पतिः ३३,८९; १२६३। १७,५२; | | १३०१। १०,९,२१; १३२६-१३२७ | |
| १५; १३८९ | | १३६५ | | धृतवती | १३२६ |
| प्रजानम् | १३१८ | ब्रह्मा २,१२; ८३९। १८,७६; ८६४। | | मैत्रावरुणं प्रदः | ७,२७; १३०२ |
| मनुः | १३३२ | ३६,१७; ८७५। १०,२८; १३२९ | | यजमानः (रूप्यः) | १०,२८; १३२९ |
| वाजस्य प्रसवः | १३१८ | देवः | ८६४ | अभिभूः | " |
| सम्राट् | " | धामच्छद् | " | बहुकारः | " |
| प्रजापतिः (सोमः) | ८,५४; १३०८ | ब्राह्मणः | ७,४६; १३०५ | भूयस्करः | " |
| प्रजार्पितः छन्दः | १४,९; १३३८ | आर्षेयः | " | श्रेयस्करः | " |
| प्रतिपद् | १५,८; १३५२ | ऋषिः | " | यजमान-आशीः | ३,५; १२७८ |
| प्रतिमा | १४,१८; १३४१ | पितृमान् | " | उपमासूची। | |
| प्रतिरवाः | ३८,१५; १३९४ | पैतृमल्यः | " | यौः इव भूमा ३,५; १२७८ अहं भूयासम्। | |
| प्रतीची दिक् सम्राट् | १५,१२; १३५६ | सधातुदक्षिणः | " | पृथिवी इव वरिष्णा ३,५; १२७८ अहं | |
| प्रदिशः | ६,१९; ८४५ | ब्राह्मणासः | २९,४७; १३८८ | भूयासम्। | |

| | |
|---|--------------|
| यजुः (मनः) | ३६, १; १३९२ |
| यज्ञः ८, ६०; १२४६ । ६, २१; १२९२ । १५, १८; १३६२ | |
| उत्तरात् | १३६२ |
| संयद्धसुः | " |
| यन्ता | १८, ३७; १३६६ |
| यमः | १२, ४५; १३३३ |
| यमः (सोमः) | ८, ५७; १३११ |
| यमस्यः भृत्याः | १२, ४५; १३३३ |
| नूतनाः | " |
| पुराणाः | " |
| यवानां भागः | १४, २६; १३४६ |
| यामः (प्राणः) | ३६, १; १३९२ |
| रक्षः १, १४; १२७१ । ६, १६; १२८९ | |
| रज्जुः | ५, ३०; ८४३ |
| इन्द्रस्य स्यूः | " |
| रथः | १०, २१; १३२७ |
| इन्द्रस्य वज्रः | " |
| रथन्तरं छन्दः | १५, ५; १३४९ |
| रात्रिः | १५, ६; १३५० |
| रायस्पोषः | १५, ७; १३५१ |
| रुद्रः ३३, ४; १२६२ । १०, २८; १३२९ | |
| सुशेवाः | " |
| रुद्रः (सोमः) | ८, ५८; १३१२ |
| रुद्राः १४, २०; ८५९ । २, ५; १२७३ । ९, ३४; १३२२ । ११, ५८; १३३१ । २३, ८; १३७६ | |
| देवता | ८५९ |
| लेपः | ७, ३; १२३८ |
| लोकं पृणा | १२, ५४; १३३४ |
| ध्रुवाः | " |
| लोमानि | २०, १३; १३६८ |
| प्रयतिः | " |
| घनस्पतिः | २१, ६०; १३७४ |
| सूपस्थाः | " |
| देवः | " |
| घनस्पतयः ३६, १७; ८७५ । ९, १२; १३१७ । २८, ४३; १३८७ | |

| | |
|--|--------------|
| वपाश्रपण्यौ | ६, १६; १२८९ |
| वयः छन्दः | १५, ५; १३४९ |
| वयस्कृत् छन्दः | १५, ५; " |
| वरिवः छन्दः | १५, ४; १३४८ |
| १५, ५; १३४९ | |
| वरुणः १४, २०; ८५९ । ३३, ४८; १२६२ । ९, ३३; १३२१ । १०, २८; १३२२ । २०, १८; १३७० । २६, १; १३८४ । ३२, १५; १३८९ | |
| देवता | ८५९ |
| सर्वाजाः | १३२९ |
| वरुणः (सोमः) | ८, ५६; १३१० |
| वसा ६, १९; ८४५ । ६, १८; १२९० | |
| अन्तरिक्षस्य हविः | ८४५ |
| रेट् | १२९० |
| वसवः १४, २०; ८५९ । ८, १८; १२४३ । २, ५, २२; १२७३, १२७६ । ९, ३४; १३२२ । ११, ५८; १३३१ । २३, ८; १३७६ । १५, ६; १३५० | |
| देवता | ८५९ |
| भरमाणाः | १२४३ |
| वहमानाः | " |
| वसूनां भागः | १४, २५; १३४५ |
| वाक् | ३६, १; १३९२ |
| वाक् कल्याणी | २६, २; १३८५ |
| वाक् छन्दः | १४, १९; १३४२ |
| वातः | १४, २०; ८५९ |
| देवता | " |
| वातः (सोमः) | ८, ५८; १३१२ |
| वायुः २३, १३; १३७७ । २६, १; १३८४ । ३२, १५; १३८९ । ३५, ३; १३९० | |
| ऊर्ध्वनभाः | १२८९ |
| दक्षिणा | १३६० |
| मासुतः | १२८९ |
| विश्वकर्मा | १३६० |
| वायुः (भुवः) २, ५; १२७८ । ६, १६; | |

| | |
|--|--------------|
| १२८९ । १५, १६; १३६० | |
| वायुः (सोमः) | ८, ५७; १३११ |
| वावाता× | २३, २६; १३८१ |
| उपमासूची । | |
| गिरौ भारं हरन् हव १३८१ ऊर्वा एनां उल्लापय । शीते वाते पुनन् हव १३८१ अस्यै मध्यं एधताम् । वासस् (दक्षिणा) ७, ९७; १३०६ विदिशः ६, १९; ८४५ विधर्ता १५, १०; ८६१ विधाः १४, ७; ८५८ विधृता (तृणद्वयम्) २, ५; १२७३ विद्यत् छन्दः १५, ५; १३४९ विराट् छन्दः १४, १०, १८; १३३९, १३४१ विवधः छन्दः १५, ५; १३४९ विवृत् १५, ९; १३५३ विशालं छन्दः १४, ९; १३३८ । १५, ५; १३४९ विश्वकर्मा (सोमः) ८, ५४; १३०८ विश्वे देवाः २, १३, १८; ८४०-८४१ । ५, ३०, ३५; ८४३-८४४ । ६, १९, २४; ८४५-८४६ । ७, २१; ८४७ । ८, १२, ४७, ५७; ८४९-८५१ । ८, ५८; ८५२ । ९, ३३; ८५३ । १०, ५८, ६०, ६५; ८५४-८५६ । १२, ७०; ८५७ । १४, ७, २०, २६; ८५८-८६० । १५, १४, ५४; ८६१-८६२ । १७, ७३; ८६३ । १८, ७६; ८६४ । २१, १७; ८६६ । २२, ५, २८; ८६७-८६८ । २४, २७; ८७० । २५, ५, ६; ८७१-८७२ । २७, ५२; ८७३ । २९, ६०; ८७४ । ३६, १७; ८७५ । ३९, ६; ८७६ । २, २२; १२७६ । ९, ३३; १३२१ । ११, ५८; १३३१ । ३६, १; १३२२ । ३८, १५; १३२४ | |

| गुणबोधकपदानि । | | विष्णुर्धाः छन्दः | | समिद्ध | |
|------------------------------|-----------------|-------------------------|--------------|--------------------------------|--------------------|
| अधिपतयः | ८६१ | वृषणौ (दभौ) | ५, ९; १२८३ | समुद्रः | ६, २१; १२९२ |
| अनुमताः | ८५७ | शृष्टिः | १५, ६; १३५० | समुद्रः (सोमः) | ८, ५९; १३१३ |
| अमर्त्याः | ८६६ | वेदिः | २, १; १२७२ | समुद्रः छन्दः | १५, ४; १३४८ |
| उशन्तः | ८४२ | बर्हिषे जुष्टा | " | सम्पत् | १५, ८; १३५२ |
| गृणन्तः | ८४१ | वैश्वानरः | १२, ७४; १३३५ | सरस्वती १९, २२; १२५२ । २१, ५३; | |
| घृतपावानः | ८४५ | सजूः इडया | " | १२५४ । ३३, ४८; १२६२ । २, २०; | |
| जक्षिर्वांमः | ८४९ | सजूः घृतेन | " | १२७५ । १०, ५, ३१; १३२५, १३३० । | |
| जागताः | ८७४ | व्यचः छन्दः | १५, ४; १३४८ | १८, ३७; १३६६ । २०, ३; १३६७ । | |
| पपिर्वांमः | ८४९ | व्यानः | २३, १८; १३७८ | २१, ४१-४३, ६०; १३७१-७४ । ३८, | |
| परिधेयाः | ८४१ | शकलम् (अग्नेः जनित्रम्) | ५, ९; १२८३ | ४; १३९३ | |
| प्रस्नरेष्टाः | " | " | ७, १८; १२९८ | मिषक् | १२५२ |
| वृद्धन्तः | " | शम् | ६, १५; १२४८ | यशोभगिनी | १२७५ |
| वरापावानः | ८४५ | शम्भूः छन्दः | १५, ४; १३४८ | वाचा | १२५२ |
| वैरूपाः | ८७४ | शाल्मलिः | २३, १३; १३७० | सरिरं छन्दः | १५, ४; १३४८ |
| वैश्वानराः | ८५४-८५६, १३३१ | शान्तिः | ३६, १७; ८७५ | सर्वम् | ३६, १७; ८७५ |
| शान्तिः | ८७५ | शान्तिमन्त्राः | ३६, १; १३९२ | शान्तिः | " |
| संस्त्रवभगाः | ८४१ | शुकः (सोमः) | ८, ५७; १३११ | सलिलः (सोमः) | ८, ५९; १३१३ |
| सन्नेतसः | ८६४ | शुकामन्थिनौ | ७, १७; १२४० | सविता | २, १२-१३; ८३९-४० । |
| सप्तदश | ८७४ | " " (ग्रहः) | ७, २७; १३०२ | ६, ९, २१, २६; १२८७, १२९२, | |
| सर्वे | ८६७ | श्रुः (राष्ट्रीः) | २३, २६-२७; | १२९४ । ९, १०, ३९; १३१५, | |
| सांताः | ८५७ | १३८१-८९ | | १३२० । १०, ५, २८; १३२५, | |
| स्थपाः | ८४१ | श्रुतम् | १५, ७; १३५१ | १३२९ । १८, ३७; १३६६ । २०, ३; | |
| निवे देवाः (सोमः) | ८, ५७-५८; १३११- | श्रौत्रम् | ३६, १; १३९२ | १३६७ । ३५, ३; १३९० | |
| १३१२ | | इलोकः | १०, ५; १३२५ | देवः ८३९, १२८७, १२९२, १२९४, | |
| विष्टारपंक्तिः छन्दः | १५, ४; १३४८ | षट्त्रिंशः नाकः | १४, २३; १३४३ | १३१५, १३६६-६७ | |
| विष्णुः ३३, ४; १२६२ । ७, २२; | | षोडशी स्तोमः | १५, ३; १३४७ | सत्यप्रसवं | १३१५, १३२९ |
| १३०० । ९, ३१; १३१९ | | संयत् छन्दः | १५, ५; १३४९ | सत्यसवः | १३१५ |
| विष्णुः (सोमः) | ८, ५७; १३११ | संस्तुप् छन्दः | १५, ५; " | सविता (सोमः) | ८, ५४; १३०८ |
| विष्णुः आर्पितपाः (सोमः) | ८, ५७; १३११ | संक्रामः | १५, ९; १३५३ | सवितुः भागः | १४, २५; १३४५ |
| " नरन्धियः (,,) | ८, ५५; १३०९ | सतोवृहती छन्दः | १४, ९; १३३८ | सर्विंशः अभीवर्तः | १४, २३; १३४३ |
| " शिपिचिष्टः ,, | ८, ५५; १३०९ | सत्यम् | १५, ६; १३५० | सञ्जत् | १५, ९; १३५३ |
| विष्णुवृणौ (सोमः) | ८, ५९; १३१३ | सदः | ५, ३०; ८४३ | सामनी | १५, १०; ८६१ |
| अप्रतीतो | १३१३ | ऐन्द्रम् | " | शाकररैवते | " |
| पूर्ववृती | " | सप्तदशः व्योमा | १४, २३; १३४३ | सिन्धुः (सोमः) | ८, ५९; १३१३ |
| वीरतमौ | " | समाः छन्दः | १४, १९; १३४२ | सिन्धुः छन्दः | १५, ४; १३४८ |
| चविष्टौ | " | | | सीता | १२, ७०; ८५७ |

| | | | | |
|--------------------------------|--------------|----------------------------|------------------------|--------------|
| अनुमता विश्वेः देवैः | ८५७ | २३, ३१, १३२५, १३२८, १३३० । | शुकम् | १२८२ |
| ऊर्जस्वती | " | गुणबोधकपदानि । | सखा इन्द्रस्य | १३३० |
| पयसा पिबमाना | " | अंशुः | सोमविकी | ४, २६; ११८२ |
| सूनृता | ३३, ८९; १२६३ | अंशुषु न्युप्तः | सोमांशुः | ७, ३; १२९६ |
| देवी | " | अतिष्ठतः | स्तोमः | १४, २३; ८६० |
| सूरः | १२, ७४; १३३५ | अमृतम् | त्रयस्त्रिंशः | " |
| सज्जः एतेशेन | " | इन्दुः | स्तोमौ | १५, १०; ८६१ |
| सूर्यः १४, २०; ८५९ । ३, ९-१०; | | इन्द्रस्य युज्यः सखा | त्रिगण त्रयस्त्रिंशौ | " |
| १२७९-८० । ६, २३; १२९३ । ३५, | | इन्द्रियावान् | रभ्यः | १०, २; १३२९ |
| ३; १३९० | | उज्जीतः चमसेषु | इन्द्रस्य वज्रम् | " |
| जुषाणः | १२८० | चन्द्रः | स्वर (सूर्यः) | ३, ५; १२७८ |
| ज्योतिः | १२७९ | चमसेषु उज्जीतः | रविविधिः | ६, १५; १२८८ |
| देवता | ८५९ | देवः | स्वरुः | ६, २१; १२९२ |
| सज्जः रात्र्या | १२८० | देवाव्यः | द्विरण्यम् (दक्षिणा) | ७, ४७; १३०६ |
| सज्जः सवित्रा | " | न्युप्तः अंशुषु | द्विरण्यं छन्दः | १४, १३; १३४२ |
| सूर्यः (स्वः) | ३, ५; १२७८ | पनीवान् | हृदयम् (पशु) | ६, १८; १२९० |
| हविष्मान् | " | पवित्रेण पूतः | होतारा देव्या | २१, ५३; १२५४ |
| सोमः ८, ५७-५८; ८५१-५२ । ७, २२; | | प्रत्यद् | होत्राः | ७, १५; १२९७ |
| १२४१ । ४, २६; १२८२ । ५ ७; | | बृहस्पतिसुतः | मध्वः | " |
| १२८४ । ६, २१, २६; १२९२, | | राजा | सुप्रीताः | " |
| १२९४ । ७, २; १२९५ । ८, ९, ५४; | | वनस्पतिः | सुहुताः | " |
| १३०७-८ । ९, ३१; १३१९ । १०, ५, | | वायुः | स्विष्टाः | " |

विश्वे-देवाऽन्तर्गता देवताः

(३) अथर्ववेद-मन्त्राणाम् ।

| | | | | |
|-----------------------------------|--------------|------------------------------------|---------------------------|------|
| अंशः | ६, ४, २; ९३६ | ९८२ । २४, ८; १०४३ । ५, ३, ३; | ३; ११८५-८६ । १२०, १; ११८७ | |
| अग्निः १, ९, १-२; ८७७ ८७८ । २, | | १०४४ । १, १६, १-२; १०४८-४९ । | गुणबोधकपदानि । | |
| ३४, ३; ८८९ । ३, ८, १, ३; ९०२, | | ७, २४, १; १०६८ । १९, ९, ११-१२; | अभिपतिः | ११७० |
| ९०४ । ३, १५, ३-६, ८; ९१७-२०, | | १०७९-८० (बहुवचनं) । ४३, १; | अभिभूः | ९५७ |
| ९२२ । ५, ८, १, ३; ९२३, ९२५ । ६, | | १०८३ । २, १२, ८; १०९८ । २८, ५; | अज्येन वार्यन् | ११५९ |
| ३, २; ९३३ । ५, ३; ९३८ । ७३, १-२; | | ११०१ । ३, २२, ३; १११५ । १९, ११, | इद्धः सजातैः | ९०४ |
| ९५१-५२ । ९७, १; ९५७ । ७०, ४-५; | | ६, ११२० । २७, ५, ७, १५; ११५९, | गार्हपत्यः | ११८७ |
| ९६५-९६६ । ९, १६, २; ९७१ (बहु- | | ११६१, ११६९ (बहुवचनं) । ६, १०, १; | घोरः | ९६६ |
| वचनम्) । १९, १७, १; ९७२ । १८, १, | | ११७० । ५३, १; ११७९ । १०३, २- | जातवेदाः | १०९८ |

| | |
|----------------|----------|
| सुरीयः | १०४८ |
| देवः | ८८९, ९६५ |
| प्रजया संरराणः | ८८९ |
| यातुहा | १०४८ |
| वर्धयन् आज्येन | ११५९ |
| वसुवान् | ९८२ |
| विश्वकर्मा | ८८९ |
| संरराणः प्रजया | ,, |
| सजातैः इन्द्रः | ९०४ |

उपमासूची ।

तिष्ठते अश्वाय इव ९२२ विश्वाहा ते इत्
सदं भरेम ।
अर्गनापोमा ६, ९३, ३; ११७८
अंगिरसः २, १२, ४-५; १०९४-९५
आङ्गिरसानां आयाः पञ्चानुवाकाः १९,
२२, १; ११२१
अदितिः ३, ८, २; ९०३ । ६, ३१, १;
९३२ । ६, ४, १-२; ९३५-९३६ ।
६८, २; ९४९ । २, २८, ५; ११०१ ।
३, २२, १; १११३ । ६, १२, २;
११८८

गुणबोधकपदानि ।

| | |
|-----------------------|------|
| जनित्रम् | ११८८ |
| देवी | ९०३ |
| मध्यमेष्टाः सजातानाम् | ,, |
| शरपुत्रा | ,, |
| सजातानां मध्यमेष्टाः | ,, |

उपमासूची ।

माता इव ११०१ अस्मै शर्म यच्छ ।
अनुमतिः ७, २४, १; १०६८
अन्तकः १९, ९, ७; १०७५
अन्तरिक्षम् ६, ४०, १; ९३९ । १९, १५,
५; ९६८ । १७, २; ९७३ । १९, २;
९९३ । ५, ३, ३; १०४४ । १९, ९,
१, १४, १०६९, १०८२ । २, १२, १,
१०९१ । १९, २७, ३; ११५७
[बहुवचनम्] । ६, १०, २; ११७१ ।
१२०, १-२; ११८७-८८

गुणबोधकपदानि ।

| | |
|--|----------------------|
| उरु | १०६९, १०९१ |
| उरुलोकः | १०४४ |
| त्रीणि | ११५७ |
| भ्राता | ११८८ |
| अपां नपात् | ६, ३, १, ३; ९३२, ९३४ |
| अभिचाराः | १९, ९, ९; १०७७ |
| अमृतम् | १९, १९, १०, १००१ |
| अर्यमा ६, ४, २; ९३६ । १९, ९, ६; १०७४ । ६, १०३, १; ११८४ | |
| अश्विना ३, ४, ४; ८९८ । ६, ३, ३; ९३४ । ४, ३; ९३६ । १९, १६, २; ९७१ । २०, १; १००३ । ३, २२, ४; १११६ । १९, २७, १५; ११६९ । ६, १०३, १; ११८४ | |

| | |
|--|------------------|
| देवाः | ९३४ |
| पुष्करस्त्रजा | १११६ |
| शुभस्पती | ९३४ |
| अष्टर्चाः | १९, २३, ५, १०११ |
| अष्टादशर्चाः | १९, २३, १५; १०२१ |
| अहः | १०, २०, ४; १००६ |
| आदित्यः | १९, ९, १०; १०७८ |
| आदित्याः १, ९, १; ८७७ । ३, ८, ३; ९०४ । ६, ४८, १; ९४८ । ७४, ३; ९५६ । १९, १६, २; ९७१ । १७, ४; ९७५ । ६, ११४, १-२; १०६५-६६ । १९, ९, ११; १०७९ । २, १२, ४; १०९४ । २, २७, १५; ११६९ | |

गुणबोधकपदानि ।

| | |
|-------------|------|
| अहृणीयमानाः | ९५६ |
| उप्राः | ,, |
| यजत्राः | १०६६ |
| यज्ञवाहसः | ,, |

उपमासूची ।

यथा आदित्याः अहृणीयमानाः वसुभिः
मरुद्भिः संभूतुः ९५६ एवा इह इमान्
जनान् संमनसः कृधि ।
आपः ६, ६२, १, ९४२ । ६८, २, ९४९ ।
१९, १७, ६; ९७७ । १८, ६; ९८७ ।

९, १; १०६९ । ४३, ७; १०८९ ।
४, ८, १-७; ११४२-४८ । १९, २७,
३; ११५७ । २७, ९; ११६३

गुणबोधकपदानि ।

| | |
|----------------------------------|------------|
| इषिरः | ९४२ |
| उदन्वतीः | १०६९ |
| ओषधीमतीः | ९७७, ९८७ |
| त्रिवृतः | ११५७ |
| दिव्याः | ११४५-४७ |
| पयस्वतीः | ११४५, ११४७ |
| परिष [स] स्वजानः व्याघ्रं सिंहम् | ११४८ |

उपमासूची ।

सुभुवः समुद्रं न ११४८ अप्सु अन्तः
तस्थिवांसं द्विपिणं मर्भुज्यन्ते ।
आशाः १९, १५, ६; ९६९
सर्वाः ,,
आशीः २, ३४, ५; ८९१ । १९, २४, ५-
६; १०४०-४१ । २७, ८; ११६२
इन्द्रः १, ९, १; ८७७ । ३, ३, २-३, ६;
८९२-९३, ८९५ । ४, १; ८९६ । ८, २;
९०३ । १०, १२, ९१३ । १५, १, ६;
९१५, ९२० । ५, ८, २, ४-९; ९२४,
९२६-३१ । ६ ४०, २-३; ९४०-४१ ।
९७, १, ३; ९५७-९५८ । ९९, १-३;
९५९-९६१ । ७, ९८, १; ९६७ ।
१२, १६, १; ९७० । १७, ८; ९७९ ।
१८, ८; ९८९ । १९, ९; १००० ।
२०, ३; १००५ । २४, २, ७-८; १०३७,
१०४२-४३ । १, १६, २; १०४९ ।
१९, १; १०५२ । २६, २; १०५७ ।
७, २४, १; १०६८ । १९, ९, ६, १२;
१०७४, १०८० । ४३, ६; १०८८ ।
२, १२, ३; १०९३ । २, ३६, ४; ११०२ ।
३, १९, १-८; ११०५-१२ । १९, २७,
१, ९; ११५५, ११६३ । ६, १०३, २-३;
११८५ ८६ । २०, १२८, ५; ११९६

गुणबोधकपदानि ।

| | |
|-----------------|------------------|
| अभिभूः | ९५७ |
| अरातिं नुदन् | ९१५ |
| ईशानः | " |
| उग्रः | ९३१, ९५८-९५९ |
| उपसद्यः | ८९६ |
| एकजः | ९५९ |
| एकराट् | ८९६ |
| ओजसा प्रमृणन् | ९५८ |
| गोजितः | " |
| ग्रामजितः | " |
| चेत्ता | ९५९ |
| जयन् | ९५८ |
| तवस्तरः | १०४२ |
| दस्यूनां हन्ता | ९१३ |
| दूरे चित् सन् | ८९२ |
| धनदाः | ९१५ |
| नमस्यः | ८९६ |
| नुदन् अरातिम् | ९१५ |
| पुरएता | " |
| पुरुनामा | ९५९ |
| प्रमृणन् ओजसा | ९५८ |
| मघवान् | ११०२, १११०, ११९६ |
| मरुत्वान् | ९७९, ९८९ |
| महिमा | ९१३ |
| राजा | ८९६ |
| वज्रबाहुः | ९५८ |
| वणिक् | ९१५ |
| विप्रः | ८९२ |
| विशाम्पतिः | ८९६ |
| वीरः | ९५८ |
| वृत्रहा | ९१९, ९३१ |
| शचीपतिः | ९१३, ९७० |
| सखा | १०५७ |
| हन्ता दस्यूनाम् | ९१३ |

उपमासूची ।

अविं वृकः इव ९१६ (शत्रुं) मथ्नीत ।
यथा आखरः मृगाणां सुषदा बभूव ११०२
एवा नारी संश्रिया अविराधयन्ती अस्तु ।

यथा इन्द्रः अधस्पदं चक्रे ९३० तथा अहं
अमून् अधरान् कण्वे ।
कुलिशेन इव वृक्षम् १०९३ तं वृक्षामि ।
इन्द्राग्नी ३, ३, ५; ८९४ । १९, १६, २;
९७१ । २०, १; १००३ । २७, १५;
११६९ । ६, १०३, १-३; ११८४-८६
इन्द्राग्नी १, २७, १-४; ८८३-८८६

उपमासूची ।

वेणोः अन्ना इव ८८५ अभितः अथायवः
असमृद्धाः ।
इन्द्रापूर्वणा ६, ३, १; ९३२
इन्द्रियाणि १९, ९, ५; १०७३
पञ्च " "
ब्रह्मणा संशितानि " "
मनः षष्ठानि " "
संशितानि ब्रह्मणा " "
ईश्वरः १, १९, १-४; १०५२-१०५५
उत्तमाः १९, २२, २२; ११३२
उत्तराः १९, २२, १३; ११३३
उत्पाताः १९, ९, ७; १०७५
पार्थिवान्तरिक्षाः १०७५
उद्योत्तमाः १९, २२, ११; ११३१
उदगायः २, १२, १; १०९१
अञ्जुतः " "
उल्का १९, ९, ८-९; १०७६-७७
उषासानक्ता ६, ३, ३; ९३४
ऋषभः १९, २७, १; ११५५
ऋषयः १९, २२, १४; ११३४
एकर्चाः १९, २३, २०; १०२६
एकादशर्चाः १९, २३, ८; १०१४
एकानृचाः १९, २३, २२; १०२८
एकाष्टका ३, १०, ५; ९०९ । १०, १२-
१३; ९१३-९१४

गुणबोधकपदानि ।

| | |
|------------------|-----|
| इन्द्रपुत्रा | ९१४ |
| दुहिता प्रजापतेः | " |
| प्रजापतेर्दुहिता | " |
| सोमपुत्रा | " |

एकोनविंशतिः १९, २३, १६; १०२२
ओषधयः १९, १९, ५; ९९६ । ३, २३,
६; १०६३ । १९, ९, १, १४; १०६९,
१०८२ । २, ३६, ८; ११०४ [एकव.]

गुणबोधकपदानि ।

दैवीः १०६३
यासां यौः पिता " "
" पृथिवी माता " "
" समुद्रः मूलम् " "
वीर्यधः " "
कृताकृतम् १९, ९, २; १०७०
कृत्याः १९, ९, ९; १०७७
क्षुद्राः १९, २३, २१; १०२७ । २२, ६;
११२६
क्षेत्रस्य पत्नी २, १२, १; १०९१
गणाः १९, २२, १६; ११३६
गावः १९, ९, ८; १०७६ । १४, २, ५३-
५८; ११९०-११९५
लोहित क्षीराः १०७६
महाः १९, ९, ७, १०, १०७५, १०७८
चान्द्रमसाः १०७८
दिविचराः १०७५
प्रावा ६, ३, २; ९३३
चक्षुः ६, १०, ३; १०७२
चन्द्रमाः चन्द्रः वा १, २७, १-४, ८८३-८८६।
१९, १९, ४। ९९५ । ३, २३, १-६;
१०५८-६३ । १९, ४३, ४; १०८६
(चन्द्रः) । ३, १९, १-८; ११०५-
१२ । ४, ८, १-७; ११४२-४८ । ७,
११८, १; ११४९। १९, २७, २; ११५६
(चन्द्रः)। ५, २७, १-१५; ११५५-६९।
६, १९, १-३; ११७३-७५

गुणबोधकपदानि ।

| | |
|-------------|------------------|
| राजा | ११४९ |
| वृत्रहा | ११५६ |
| सोमः | ११४९ |
| चतुर्ऋचः | १२, २३, १; १००७ |
| चतुर्वर्चाः | १९, २३, ११; १०१७ |

जरिमा २,२८,३; १०९९
जातवेदाः ३,१०,६; ९१० । १५,८;
९२२ । ५,८,२; ९२४ । १९,१६,१;
९७१ । ३,२२,४; २११६ । १९,२७,
१५; ११६९

तृचाः १९,२३,१९; १०२५
तृतीयाः शंखाः १९,२२,१०; ११३०
त्रयोदशर्चाः १९,२३,१०; १०१६
त्रिवृत् १२,२७,१-१५; ११५९-११६९
त्वष्टा ३,८,२; ९०३ । ६,३,३; ९३४।
६,४,१; ९३५

देवः ९३४
दक्षिणाः (दानानि) १९,१९,६; ९९७
दधत्यं सीसम् १,१६,२-४; १०४९-५१
दर्वी ३,१०,७; ९११

गुणबोधकपदानि ।

पूर्णा ९११
यज्ञान् सम्भुज्जती ॥
सम्भुज्जती यज्ञान् ॥
सुपूर्णा ॥
दशर्चाः १९,२३,७; १०१३
दिवा १२,१५,६; ९६९ । १९,१९,३;
९९४
दिशः १९,२०,२; १००४
देवाः [पश्य 'विश्वे देवाः' ।]
देवजनाः ६,१९,१; ११७३।
९३,१; ११७६
देवताः १९,२७,१०; ११६४
त्रयस्त्रिंशत् ॥
देवयानाः पन्थानः ३,१५,२; ९१६
देशोपसर्गाः १२,९,९; १०७७
द्यौः ६,३,१; ९३२ । १९,९,१-१४,
१०६९,१०८२ । २,२८,४; ११००।
१९,११,६; ११२०। २७,३; ११५७।
६,१०,३; ११७२। ५३,१; ११७९ ।
१२०,१-२; ११८७-११८८

गुणबोधकपदानि ।

निष्ठाः ११५७
पिता ११८७,११८८

प्रचेताः ११७९
बृहत् सादनम् ११२०
शान्ता १०६९
सादनं बृहत् ११२०
द्यावापृथिवी ३,४,५; ८९९ । ६,३,२;
९३३ । ४०,१; ९३९ । ६२,१;
९४२ । १९,१५,५; ९६८ । १७,
५; ९७६ । २०,४; १००६ । ३,२३,
१-६; १०५८-६३ । २,१२,१,५,
१०९१,१०९५ । २,२८,४; ११००

गुणबोधकपदानि ।

उभे ८९९,९६८
ऋतावरी ९४२
पयसा पयस्वती ॥
यज्ञिये ॥
शिवे ८९९
संविदाने ११००
द्यौष्पिता ६,४,३; ९३७
द्वादशर्चाः १९,२३,९; १०१५
द्वितीयाः शङ्खाः १९,२२,९; ११२९
धनपतिः २,३६,६; ११०३
धाता ३,८,२; ९०३ । १९,२०,१;
१००३ । १९,९,१२; १०८०
धूमकेतुः १९,२,१०; १०७८
धेनुः ३,१०,१; ९०८
नकम् १९,१५,६; ९६९
नक्षत्राणि १९,१९,४; ९९५। १९,९,९;
१०७७ (एकवचनम्) । ६,१०,३;
११७२
उल्काभिहतम् १०७७
नद्यः १२,१९,७; ९२८
नवर्चाः १९,२३,६; १०१२
नाकाः १२,२७,४; ११५८
त्रयः ॥
निखाताः १९,९,९; १०७७
वल्गाः ॥
निर्गतिः ७,७०,१-२; ९६२-९६३ ।
६,६३,१-२; ११८१-११८२
देवी ११८१

निर्हतम् १९,९,८; १०७
नीलनखाः १९,२२,४; ११२
पञ्चदशर्चाः १९,२३,१२; १०१
पञ्चर्चाः १९,२३,२; १००
पतत्रिणः १,१५,१-४; ८७९-८८
पत्नी क्षेत्रस्य २,१२,१; १०९
पर्यायिकाः १९,२२,७; ११२
पर्जन्यः ६,४,१; ९३
पवमानः ६,१९,१-२; ११७३-११७
पशवः ३,१०,६; ९१

गुणबोधकपदानि ।

ग्राम्याः ९१
विश्वरूपाः ॥
सप्त ॥
पशुपतिः २,३४,१; ८८
पितरः २,१२,४-५; १०९४-९
सोम्यासः १०९
पूर्वा रूपाणि १९,९,२; १०७
पूषा १,९,१; ८७७ । १९,२०,१
१००३
पृथक् सदस्यौ १९,२२,१९; ११३९
पृथिवी ३,८,१; ९०२ । १२,१२,१
९९२। १९,२,१,१४; १०६९,१०८२
२,२८,४; ११०० । १९,२७,३
११५७ [बहुवचनम्] । ६,१,१
११७० । ५३,१; ११७९ । १२०,१
११८७

गुणबोधकपदानि ।

तिष्ठः ११५५
प्रचेताः ११७९
माता ११८५
शान्ता १०६६
प्रजाः १९,१९,११; १००
प्रजापतिः ३,१०,१३; ९१४ । १५,६
२२० । ६,६८,२; ९४९ । १९,१७
९; ९८० । १८,९; ९९० । १९
११; १००२ । १२,२०,२; १००४
७,२४,१; १०६८ । १९,९,६,१२
१०७४,१०८०

गुणबोधकपदानि ।

| | |
|--|--|
| पतिः भुवनस्य | १००४ |
| प्रजननवान् | ९८०, ९९० |
| भुवनस्य पतिः | १००४ |
| सत्यधर्मा | १०६८ |
| प्रजापतेः दुहिता | ३, १०, १३; ९१४ |
| इन्द्रपुत्रा | ,, |
| सोमपुत्रा | ,, |
| प्रथमः (शंखाः) | १९, २२, ८; ११२८ |
| प्रदिशः ३, ४, २; ८९७ । १९, २०, २ | १००४ |
| देवीः | ८९७ |
| पञ्च | ,, |
| प्राजापत्यौ | १९, २३, २६; १०३२ |
| प्राणः १९, २७, ७; ११६१ । ६, १०, २; | ११७१ |
| बृहस्पतिः ६, ७३, १-२; ९५१-९५२ । | १९, १७, १०, ९८१ । १८, १०; ९९१ । |
| २०, १; १००३ । २४, ४, ८; १०३९, | १०४३ । १९, ९, ६, ११; १०७४, |
| १०७९ । ३, २२, १-६; १११३-१८ । | ६, १०३, १; ११८४ । १४, २, ५३- |
| ५८; ११९०-९५ | विश्वदेववान् |
| ब्रह्माः | १९, २७, ४; ११५८ |
| त्रयः | ,, |
| ब्रह्म+ह्मा १९, १९, ८; ९९२ । २३, | १९; १०३५ । ९, १२; १०८० |
| (ब्रह्मा)। ४३, ८; १०९० (ब्रह्मा)। २, | १२, ६-७; १०९६-९७ । १९, २२, |
| २०-२१; ११४०-११४१ (ब्रह्मा) | ब्रह्मचारिणः |
| १९, १९, ८; ९९२ | ब्रह्मणस्पतिः ६, ४, १; ९३५ । ५, ३; ९३८ । |
| ७४, १; ९५४ । १९, २४, १; १०३६ | भगः ६, ४, २; ९३६ । ७४, १-२; |
| ९५४-९५५ । १, २६, २; १०५७ । | ६, ५३, १; ११७९ । १०३, १, ११८४ |
| भवः | ६, ९३, २; ११७७ |
| मध्यम् | १९, ९, २; १०७० |

| | |
|-------------------------------------|---------------------------------|
| भूतम् | १९, ९, २; १०७० |
| भूतानि विश्वा | ६, १९, १; ११७३ |
| भूतकृतः १९, १६, २; ९७१ । २७, १५, | ११६९ |
| भूमिः १९, २, ८; १०७६ । ६, १२०, | २; ११८० |
| तीर्थतः | १०७६ |
| माता | ११८० |
| वेद्यमान्त | १०७६ |
| मङ्गलिकाः | १९, २३, २८; १०३४ |
| मनः | १९, २, ४; १०७२ |
| परमेष्ठिन् | ,, |
| ब्रह्मसंशितम् | ,, |
| मनवः | ६, १९, १; ११७३ |
| मनुष्येष्ववः | १, १९, २; १०५३ |
| अस्ताः | ,, |
| अस्याः | ,, |
| दैवीः | ,, |
| विष्वक् | ,, |
| शरवः | ,, |
| मरुतः ३, ४, ४; ८९८ । ६, ३, १; ९३२ । | ६, ४, २; ९३६ । ६, ७४, ३; ९५६ । |
| ७, ९८, १; ९६७ । ५, ३, ३; १०४४ । | ७, २४, १; १०६८ । २, १२, ६; |
| १०९६ । ३, १९, ६; १११० । ६, २३, | ३; ११७८ |
| इन्द्रवन्तः | १०४४ |
| विश्ववेदसः | ११७८ |
| स्वर्काः | १०६८ |
| महर्षयः | १९, २, ११; १०७९ |
| देवाः | ,, |
| महाकाण्डः | १९, २३, १८; १०२४ |
| महागणाः | १९, २२, १७; ११३७ |
| मातरिश्वा १९, २०, २; १००४ । १९, | २७, ४; ११५८ [बहुवचनम्]। |
| त्रयः | ११५८ |
| मित्रः १, ९, १; ८७७ । ३, ८, १; ९०२; | ६, ४, २; ९३६ । १९, १९, १; ९९२ । |
| १९, ९, ६-७; १०७४-७५ । २, २८, ५; | |

| | |
|-------------------------------------|-------------------------------------|
| ११०१ । ३, २२, २; १११४ । ६, | २०३, १; ११८४ |
| मित्रराजा | ११०१ |
| मित्रावरुणा ३, ४, ४; ८९८ । १९, ११, | ६; ११२० |
| उभा | ८९८ |
| मृत्युः १९, ९, १०; १०७८ । ६, ९३, १; | ११७६ । ६, ६३, २-३; ११८२-८३ |
| अघमारः | ११७६ |
| निर्ऋतः | ,, |
| बभ्रुः | ,, |
| यज्ञः ३, १०, ७; ९११ (बहुवचनम्)। | ६, ९७, १; ९५७ । १९, १२, ६; ९९७ |
| अभिभूः | ९५७ |
| यमः १९, २०, १; १००३ । ६, ९३, १; | ११७६ । ६, ६३, २-३; ११८२-८३ |
| मृत्युः | ११८२ |
| यमस्य सादनम् | २, १२, ७; १०९७ |
| योनिः | ३, २३, १-६; १०५८-६३ |
| उपमासूची । | |
| बाणः इव इषुधिम् १०५२ पुमान् गर्भः | ते योनिं आ एतु । |
| राजा ३, ४, ६-७; ९००-९०१ । ४, ८, | १; ११४२ । ६, ९३, २; ११७७ |
| राज्याभिषेकः ४, ८, १-७; ११४२-४८ | |
| उपमासूची । | |
| सुभुवः समुद्रं न ११४८ आसु अन्तः | तस्थिवासं द्वीपिनं मर्मृज्यन्ते । |
| रात्रिः | ३, १०, ७; ९११ |
| राहुः | १९, ९, १०; १०७८ |
| रुद्रः ६, ६८, १; ९४८ । १९, १७, ३; | ९७४ । १९, १२, ३; १०५४ (रुद्रः)। |
| १९, ९, १०, ११; १०७८-७९ । ३, | २२, २, १११४ (रुद्रः)। ६, ९३, १-३; |
| ११७६-७८ | तिग्मतेजसः |
| रोहिताः | १९, २३, २३; १०२९ |
| लोकाः | १९, ९, १२; १०८० |

वनस्पतयः १९, ९, १४; १०८२ । ६,
१०, १; ११७०
वयांसि ६, १०, २, ११७१
वरुणः १, ९, १, ८७७ । ३, ३, ३; ८९३।
४, ५; ८९९ । ८, १; ९०२ । ६, ४, २;
९३६ । ६८, ३; ९५० । ७३, १-२;
९५१-९५२ । १९, १७, ४; ९७५ ।
१८, ४; ९८५ । २०, १, १००३ ।
१, १६, २; १०४९ । १९, ९, ६-७;
१०७४-७५ । २, २८, ५; ११०१ ।
३, २२, २; ११२४ । ७, ११८, १;
११४२ । ६, ९३, ३; ११७८

गुणबोधकपदानि ।

आदित्यवान् २८५
पूतदक्षः ११७८
मित्रराजा ११०१
राजा ८९३, ८९९, १००३
वर्चः ३, २२, १-६; १११३-१८
वसवः १, ९, १; ८७७। ६, ६८, १; ९४८।
७३, १-२; ९५१-९५२ । ७४, ३;
९५६ । ७, ९८, १; ९६७ (वसुः) ।
१९, १७, १; ९७२ । ९, ११; १०७९।
२, १२, ४; १०९४
वाक् १९, ९, ३; १०७१
देवी ”
परमेष्ठिनी ”
ब्रह्मसंशिता ”
वातः १, १५, १-४; ८७९-८८२ (वाताः)।
६, ६२, १; ९४२ । ५, ३, ३; १०४४।
१९, २७, २; ११५६। २७, २; ११६१
वृत्रहा ११५६
वातगोपम् २, १२, १; १०९१
वातापर्जन्यां ६, ९३, ३; ११७८
वायुः २, ३४, ४; ८९०। ३, ८, १; ९०२।
६, ६८, १; ९४८ । १९, १७, २, ९७३।
१८, २; ९८३ । १२, २; ९९३ । ४३,
२; १०८४ । २७, १; ११५५ । ६,
१०, २; ११७१ । ५३, १; ११७९
अधिपतिः ११७१

अन्तरिक्षवान् ९८३
देवः ८९०
प्रजया संरारणः ”
प्रजापतिः ”
संरारणः प्रजया ”
वास्तोष्पतिः ६, ७२, ३; ९५३
विश्वसतिः १९, २३, १७; १०२३
विदगणाः १९, २२, १८, ११३८
सर्वे अङ्गिरसः ”
विवस्वान् १९, ९, ७; १०७५
विश्वकर्मा १९, १७, ७; ९७८। १८, ७; ९८८
सप्तऋषिवान् ”
विश्वे देवाः १, ९, १; ८७७ । ३, ३, ५;
८९४ । ३, ४, ४; ८९८ । ३, ८, ४;
९०५ । ७, ८, १; ९६७। १९, १०, १०;
९८१ । १२, २०, ४; १००६ । ५, ३,
४, ६; १०४५, १०४७ । ६, ११४, ३;
१०६७ । ७, २४, १; १०६८ । १९,
९, १२, १४; १०८०, १०८२ । २,
१२, ५; १०९५ । २८, ५; ११०१ ।
३, १९, १-८; ११०५-१२ । ३, २२,
१-५; १११३-१८ । ६, १२३, १-५;
११५०-५४ । ६, ९३, ३; ११७८ ।
१४, २, ५३-५८; ११९०-९५
[विश्वे देवाः केवलेन 'देवाः इति' पदेन
निर्देशः] । १, ९, २; ८७८ । २, ३४,
२, ८८८ । ३, ३, २; ८९२ । ३, १०,
७, ११-१२; ९११-९१३ । ३, १५,
५-६; ९१९-९२० । ५, ८, ३; ९२५।
६, ६४, १-३; ९४५-९४७। ६, ९७, १;
९५७ । ७, ७०, २; ९६३ । १९,
१९, १०; १००१ । २०, ३; १००५ ।
२४, १; १०३६ । ५, ३, ३, ५;
१०४४, १०४६ । १, १९, ४; १०५५।
१, २६, १; १०५६ । ६, ५५, १;
१०६४ । ६, ११४, १; १०६५। १२,
९, ११-१२, १४; १०७९, १०८०,
१०८२ । २, १२, २; १०९२ । ३,
२२, २; १११४ । ११, ११, ५;

१११९ । ४, ८, २; ११४३ । ७,
११८, १; ११४९ । १२, २७, ६-७;
११६०-६१ । १९, २७, ११-१३;
११६५-६७ । २०, १२८, ५; ११९६ ।
२०, १३५, ४, १०; ११९७-९८

गुणबोधकपदानि ।

अन्तरिक्षे एकादश ११६६
अमृताः १११९
इन्द्रज्येष्ठाः १११०
इन्द्रेयिताः ९६३
ऋतज्ञाः १११९
ऋत्विजः देवानाम् ”
एकादश अन्तरिक्षे ११६६
एकादश दिवि ११६५
एकादश पृथिव्याम् ११६७
दिवि एकादश ११६५
देवानां ऋत्विजः १११९
देहिनाः १००५
द्युराजयः ”
पृथिव्यां एकादश ११६७
भ्राजन्तः ११६०
मनोः यजत्राः १११९
महर्षयः १०७२
यजत्राः मनोः १११९
यज्ञियासः ”
विश्वदेवाः ९६७
विश्वधायसः १११४
विश्ववेदसः ११६०, ११७८

उपमासूची ।

यथा पूर्वे संजानानाः देवाः भागं उपासते
९४५ तथा मनांसि सं जानताम् ।
यथा अहं विश्वाः पृतनाः अभि असाणि
९५७ एवा विधेम अभिहोत्रा इदं हविः ।
विश्वरूपः ४, ८, ३; ११४४
विश्वा भूतानि ६, १९, १; ११७३
विषासहिः १२, २३, २७; १०३३
विष्णुः ६, ३, १; ९३२ । ५, ३, ३; १०४४।
१९, ९, ६; १०७४

| | |
|-------------------|---|
| वीर्यम् | १९, १९, ९; १००० |
| वृषा | १९, २७, १; ११५५ |
| वेवाः | १९, ९, १२; १०८० |
| वैश्वानरः | ३, १५, ७; ९२१ । ६, ६२, १; ९४२ । ६, ५३, २; ११८० |
| अदब्धः | ११८० |
| तनुपाः | " |
| वैश्वानरी | ६, ६२, २-३; ९४३-९४४ |
| इडा | " |
| वैष्टपाः | १९, २७, ४; ११५८ |
| त्रयः | " |
| त्रात्यौ | १९, २३, २५; १०३१ |
| शंखाः तृतीयाः | १९, २२, १०; ११३० |
| शंखाः द्वितीयाः | १९, २२, ९; ११२९ |
| (शंखाः) प्रथमाः | १९, २२, ८; ११२८ |
| शचीपतिः | १९, २७, १४; ११६८ |
| शर्वः | ६, ९३, २-२; ११७६-११७७ |
| अस्ता | ११७६ |
| नीलशिखण्डः | " |
| शान्तयः | १९, ९, १४; १०८२ |
| शान्तानि | १९, ९, १३; १०८१ |
| शिखिनः | १९, २२, १५; ११३५ |
| शुकः | ६, ५३, १; ११७९ |
| शृङ्ग | " |
| श्येनः | ७, ७०, ३; ९६४ |
| अजिराधिराजौ | " |
| संपातिनौ | " |

उपमासूची ।

| | |
|-------------------------------------|---|
| अजिराधिराजौ सम्पातिनौ श्येनौ इव ९६४ | |
| यः कश्च नः अभि अघायति । | |
| श्रोत्रम् | ६, १०, १; ११७० |
| षट्पचाः | १९, २३, ३; १००९ |
| षष्ठः | १९, २२, २; ११२२ |
| षोडशर्चाः | १९, २३, १३; १०१९ |
| सप्तश्लेषयः | ६, ४०, १; ९३९ । १९, १७, ७; ९७८ । १९, ९, १२; १०८० |
| सप्तदशर्चाः | १९, २३, १४; १०२० |
| सप्तर्चाः | १९, २३, ४; १०१० |
| सप्तमाष्टमौ | १९, २२, ३; ११२३ |

दे०[विश्वे देवाः] २४

| | |
|----------------|--|
| समुद्रः | १९, १९, ७; ९९८ । १९, २७, ३- ४; ११५७-११५८ |
| चत्वारः | ११५७ |
| त्रयः | ११५८ |
| सरस्वती | ६, ८, २; ९३३ |
| देवी | " |
| सुभगा | " |
| सविता | ३, ८, २-३; ९०३-९०४ । ३, १५, ६; ९२० । ६, ४०, १-२; ९३९-९४० । ६, ८, १, ३; ९४८, ९५० । ९९, ३; ९६१ । १९, १६, १; ९७० । २०, १; १००३ । २४, १, ८; १०३६, १०४३ । १, २६, २; १०५७ । ७, २४, १; १०६८ । १२, २७, ४; ११६८ । ६, १९, ३; ११७५ । ६, ५३, १; ११७९ । ६, १०३, १; ११८४ |
| चित्रराधा | १०५७ |
| देवः | १०३६ |
| सत्यधर्मा | १०६८ |
| सादनं यमस्य | २, १२, ७; १०९७ |
| सामगाः | २, १२, ४; १०९४ |
| तिस्रः अशीत्यः | " |
| सामनस्यम् | ३, ८, ५-६; ९०६-९०७ । ६, ६४, १-३; ९४५-९४७ । ६, ७४, १-३; ९५४-९५६ |

उपमासूची ।

| | |
|--|---------------------------------------|
| यथा अद्वणीयमानाः उग्राः आदित्या | |
| वसुभिः महाङ्गिः संभभूतः ९५६ एवा इमान् | |
| जनान् इह संमनसः कृधि । | |
| यथा पूर्वे संजानानाः देवाः भागं उपासते | |
| ९४५ तथा सं वः मनांसि जानताम् । | |
| सिन्धवः | १, १५, १-४; ८७९-८८२ । ६, ३, १; ९३९ |
| सप्त | ९३२ |
| सांसं दधत्यम् | १, १६, २-४; १०४९-५१ |

उपमासूची ।

| | |
|------------------------------|--|
| यथा नः अवीरहा असः १०५१ (तथा) | |
| त्वा सीसेन विध्यामः । | |

| | |
|--------|--|
| सूर्यः | १, ९, २; ८७८ । ६, ६२, ३; ९४४ । १९, १७, ५; ९७६ । १८, ५; ९८६ । १९, ३; ९९४ । २०, ४; १००६ । ४३, ३; १०८५ । २७, २, ४, ७; ११५६, ११५८ [बहुवचनम्], ११६१ । ६, १०, ३; ११७२ |
|--------|--|

गुणबोधकपदानि ।

| | |
|------------------|--|
| अधिपतिः | ११७२ |
| गोप्तारः त्रयः | ११५८ |
| त्रयः गोप्तारः | " |
| द्यावापृथिवीवान् | ९८६ |
| विश्वतोमुखः | ११६१ |
| सूर्यौ | १९, २३, २४; १०३० |
| सोमः | ३, ३, ३; ८९३ । ८, ३; ९०४ । १५, ६; ९२० । ६, ३, २; ९३३ । ५, ३; ९३८ । ४०, १; ९३९ । ६८, १, ३; ९४८, ९५० । ७३, १-२; ९५१- ९५२ । ९७, १; ९५७ । ९९, ३; ९६१ । १९, १७, ३; ९७४ । १८, ३; ९८४ । १९, ५; ९९६ । २०, १; १००३ । २४, ३-४, ८; १०३८-३९, १०४३ । ४३, ५; १०८७ । ७, ११८, १; ११४९ । १९, २७, २; ११५६ । ६, ५३, १; ११७९ |

गुणबोधकपदानि ।

| | |
|-----------|-------------------------------|
| अभिभूः | ९५७ |
| राजा | ९४८, ९५०, १००३, १०३९, ११४९ |
| रुद्रवान् | ९८४ |
| स्तोमः | १९, २७, ३; ११५७ |
| त्रिवृत् | " |
| स्वर्गः | ६, १२०, ३; ११८९ |
| हरिताः | १९, २२, ५; ११२५ |
| हिरण्यम् | १, ९, २; ८७८ |
| होतारः | ५, ३, ५; १०४६ |
| देवाः | " |

विश्वे-देवाऽन्तर्गता देवताः

(४) सामवेद-मन्त्राणाम् ।

| | | | | | |
|----------------|---------------------|------------------|-------------------------------|---------------|-----------|
| अग्निः | १५०३-४; १४०२-३ | गावः | ४४२, १३९९ | द्यावापृथिवी | ६११, १३९७ |
| सहस्रकृत | १४०२ | विश्वधातसः शुचयः | " | पर्जन्यः | २९९, १३९५ |
| अमथः विश्वे | १५०३-४; १४०२-३ | त्वष्टा | २९९, १३९५ | ब्रह्मणस्पतिः | " " |
| अदितिः | २९९, १३९५ | देवाः | ३६८, ४४२, १८७२, १३९८-९९, १४०४ | मित्रः | ४५५; १४०१ |
| इन्द्रः | ४५३, ४५५; १४००-१४०१ | अरेपसः | १३९९ | वरुणः | " " |
| इन्द्रमुदस्पती | ६११; १३९७ | | | विश्वे देवाः | ५९१; १३९६ |

(५) विश्वे-देवाऽन्तर्गता यजुर्वेदीय

नाना-देवताः ।

| | | | | | |
|-----------------|--|-------------|---|---------------|--|
| अंशः | १०, ५; १४२६ | अग्नीषोमौ | २४, ८, २३; १७६९, १८४८। | अनन्तः | ३०, १९; २२५८ |
| अहोरास्पतिः | २२, ३१; १६९३ | २५, ५; २०२२ | | अनुमतिः | २४, ३२; १९०३। २९, ६०; २११२ |
| अकूपारः | २४, ३५; १९२१ | अङ्गलयः | १८, २२; १४८५ | अनुष्टुम् | २४, १२; १७९३ |
| अक्षराजः | ३०, १८; २२४५ | अतिक्लृष्टः | ३०, ५; २१२२ | अन्तः | ३०, १९; २२५७ |
| अग्निः | १०, ५; १४१७ । १८, १६; १४५७ । १८, २२; १४७५ । २२, ६, २७; १४९२, १६९२ । २४, २, ६, ९, १४, २३, ३१; १७२९, १७५८, १७७३, १८००, १८४६, १८९४। २५, ३-४; २०००, २००४। २९, ५८-६०; २०८४, २१००, २१०३ । ३०, २१; २२७१ । ३९, १; २२८५ | अतिच्छन्दः | २४, १३; १७९९ | अन्तकः | ३०, ७, १८; २१४२, २२५१ । ३९, १३; २३१५ |
| | | अति यत् | २२, ८; १५४६ | अन्तरम् | २५, २; १९७७ |
| | | अथर्वाणः | ३०, १५; २२१४ | अन्तरिक्षम् | १८, १८; १४७० । २२, २७, २९; १६२५, १६५६ । २४, १०। २६, ३४; १७८०, १८६३, १९१४ । २५, ८; २०५९ । ३०, २१; २२७४। ३९, १; २२८६ |
| अग्निः अनीकवान् | २४, १६; १८१३ । २९, ५९; २०९५ | अदितिः | १४, २९; १४४४ । १८, २२; १४८३ । २२, २०; १५५७ । २४, ५, २; १७५५, १७७६ । २५, २, ४, ८; १९८८, २००८, २०५५, २०५७। २९, ६०, २११० | अन्त्यः | २२, ३२; १७०१ |
| " गृहपतिः | २४, २४; १८५५ | अदितिः मही | २२, २०; १५५८ | अन्त्यः भौवनः | ९, २०; १४१४ । २२, ३२; १७०२ |
| " वैधानरः | २९, ६०; २१११ | " सुमृषीका | २२, २०; १५५९ | अन्धाह्वयः | २५, ७; २०४४ |
| अग्रामरुतः | २४, ७; १७६६ | अधर्मः | ३०, १०; २१६५ | अन्यतोरण्यम् | ३०, १९; २२६४ |
| अग्नाविष्णू | २४, ८; १७७० | अधिपतिः | ९, २०; १४१६ । २२, ३०, ३२; १६७४, १७०४ | | |
| | | अध्वा | २५, ३; १९९८ | | |

अपानः २२, २३, ३३; १५७४, १७०८
 अपां मोदः २२, ६; १४९४
 अपिजः ९, २०, १४०७ । २२, ३२;
 १६९६
 अपसरसः २४, ३७, १९३३
 अभिभूः २२, ३०; १६७३
 अभूतिः ३०, १७; २२४१
 अभ्रः २२, २६; १६०६
 अयवाः १४, ३१; १४५५
 अयाः ३०, ८, २१४९
 अरण्यम् २२, ३९, १९४३ । २५, ३;
 १९९९
 अराधि ३०, ९; २१५७
 अरिष्टिः ३०, १३; २२००
 अर्कः १८, २२; १४७७
 अर्णवः २२, २५; १६०१
 अर्धमासाः २२, २८; १६३४ । २४,
 ३७; १९२९
 अर्माः ३०, ११; २१७३
 अर्थमा १०, ५; १४२८ । २५, ४; २०१२
 अर्वाची दिक् २२, २४, २७; १५८१,
 १५८३, १५८५, १५८७, १५८९,
 १५९१, १६३१
 अवक्रतिः ३०, १२; २१९०
 अवका २५, १; १९५४
 अवक्रन्दः २२, ७; १५०५ । २५, १;
 १९५९
 अवस्परः ३०, १९; २२६२
 अववर्षत् २२, २६; १६१२
 अवस्फूर्जत् २२, २६; १६१०
 अवाची दिक् २२, २४; १५९०
 अषान्तरदिशः २४, २६; १७६६
 अवारः ३०, १६; २२२८
 अवार्थाः २५, १; १९७०-७१
 अशनिः २५, २; १९८१
 अश्विनौ २४, १, ३, २३, ३६; १७३१,
 १७४३, १८४९, १९२५ । २५, ३;
 २००२
 अश्वमेधः १८, २२; १४८०

असुः २२, ३०; १६६७
 अहः (२) २४, २५, ३६ । १८५६,
 १९२३ । ३०, २१; २२७९
 अहर्षतिः ९, २०; १४१०
 अहर मुग्धः ९, २०; १४११
 अहोरात्रे १४, ३०; १४४९
 अहोरात्राणि २२, २८; १६३३
 अहोरात्रयोः सन्धयः २४, २५; १८५८
 आक्रमणम् २५, ३, ६; १९९५, २०४१
 आक्रया ३०, ५; २१२०
 आत्मा २२, ३३; १७१६
 आदित्याः ११, ६०, ६५; १४३१, १४३८ ।
 १४, ३०; १४५३ । २२, २८; १६४६ ।
 २४, ६, २७, ३९; १७६१, १८६९,
 १९४१ । २५, १, ६; १९६२, २०३५
 आर्धं आधीतः २२, २०; १५५४
 आध्यक्ष्यः ३०, ११; २१८२
 आनन्दः ३०, ६, २०; २१२९, २२७०
 आन्त्यायनः विनंशी ९, २०; १४१३
 आपः २२, २५, २९; १५९२, १६६१ ।
 २४, २१, ३७; १८३८, १९३१ । २५,
 १-२, ५, ७, ९; १९६१, १९८३, २०२०,
 २०४७, २०७३ । ३९, २; २२९३
 आपिः ९, २०; १४०५
 आयनः २२, ७; १५२४
 आयासः ३९, ११; २२९७
 आयुः २२, ३३; १७०६
 आर्तवाः १४, २६; १४४५ । २२, २८;
 १६३८
 आर्तिः ३०, ९, १७; २१५४, २२४२
 आशाः २२, २७; १६२९
 आशिक्षा ३०, १०; २१७०
 आसीनः २२, ७; १५१४
 आस्कन्दः ३०, १८; २२४९
 इतरजनाः २४, ३६; १९२७
 इदावत्सरः ३०, १५; २२१७
 इद्वत्सरः ३०, १५; २२१८
 इन्द्रः १०, ५; १४२३ । ११, ६०;
 १४३३ । १४, २९; १४४७ । १८,

१६-१८; १४५७-७४ । २२, ६, २७;
 १४९८, १६२४ । २४, १, ३२, ४०;
 १७३६, १९०२, १९४९ । २५, ३-५,
 ८; १९९२, २००६, २०१४, २०२७,
 २०५४ । २९, ५८, ६०; २०२०,
 २१०४
 इन्द्राणी २५, ४; २००९
 इन्द्रामी २२, ५; १४८७ । २४, ४, ८,
 १५, १७, २२; १७५१, १७६८, १८०९,
 १८१९, १८४३ । २५, ५; २०१७ ।
 २९, ५८; २०२२
 इन्द्रावृहस्पती २४, ७; १७६४ । २५,
 ६; २०३९
 इन्द्राविष्णू २४, ७; १७६३
 इरा ३०, ११; २१७८
 इषः २१, ३१; १६८७
 ईक्षमाणः २२, ८; १५४२
 ईक्षितः ,, १५४३
 ईर्यता ३०, ८; २१५०
 ईशानः २४, २८; १८७२
 उग्रं वर्षत् २२, २६; १६१३
 उत्कूलनिकूट्याः ३०, १४; २२०८
 उत्थितः २२, ८; १५३३
 उत्सादः २५, १; १९५८
 उत्सादाः ३०, १०; २१६२
 उदकम् २२, २५; १५९४
 उदानः २२, ३३; १७१०
 उदीची २२, २४; १५८६
 उद्गृहीतः २२, २६; १६१६
 उद्गृह्णन् २२, २६; १६१५
 उद्भावः २२, ८; १५२८
 उद्भुतः २२, ८; १५२९
 उद्यासः ३९, ११; २३०१
 उपयामः २५, २; १९७५
 उपलाः २५, ८; २०६४
 उपविष्टः २२, ७; १५११
 उपाशिक्षा ३०, १०; २१७१
 उपस्थावराः ३०, १६; २२२४
 उपास्थितः २२, ७; १५२३

| | | | | | |
|--|--------------|--|--------------|---|--------------|
| उर्वी | २२, २७; १६३० | क्षुध् | ३०, १८; २२५२ | तपस्यः | २२, ३०; १६९२ |
| उषाः | २४, ४; १७५२ | क्षेमः | ३०, १४; २२१७ | तप्तः | ३९, १२; २३०९ |
| उष्णिह् | २४, १२; १७२४ | गणपतिः | २२, ३०; १६७२ | तप्यत् | ३९, १२; २३०७ |
| ऊर्जः | २२, ३१; १६८८ | गणश्रीः | २२, ३०; १६७१ | तप्यमानः | ३९, १२; २३०८ |
| ऊर्ध्वा दिक् | २२, २४; १५८८ | गन्धः | २२, ७; १५०८ | तमस् | ३०, ५; २११७ |
| ऋक्षीकाः | ३०, ८; २१४४ | गन्धर्वाः | २४, ३७; १९३० | तारकाः | २४, १०; १७८३ |
| ऋतवः २२, २८; १६३७ । २४, ३८; १९३५ | | गन्धर्वाप्सरसः | ३०, ८; २१४६ | तिष्ठन्त्यः | २२, २५; १५९५ |
| ऋतिः | ३०, १३; २१९३ | गायत्री | २४, १२; १७९० | तीर्थानि | ३०, १६; २२२९ |
| ऋभवः | ३०, १५; २२२१ | गिरयः | २५, ८; २०६३ | तुरीपः त्वष्टा | २२, २०; १५६७ |
| ऋषभः | २४, ३०; १८८६ | गीतम् | ३०, ६; २१२४ | तुला | ३०, १७; २२३७ |
| एकः | २२, ३४; १७२२ | गुल्माः | २५, ८; २०६६ | तेजस् | ३०, ११; २१७७ |
| एकशतम् | २२, ३४; १७२५ | गुहाः | ३०, १६; २२३२ | तेदनी | २५, २; १९८५ |
| ओषधयः २२, २८-२९; १६५४, १६६२ | | गेहम् | ३०, ९; २१५४ | त्वष्टा १८, १७; १४६६ । २२, २०; १५६६ । २४, १, ४, २४, २८, ३१; १७३४, १७५०, १८५२, १८७६, १८९५ । २५, ५; २०२६ | |
| औषद्रथम् | ३०, १३; २१९६ | ग्रामः २४, ११, २०; १७८५, १८३१ | | त्वष्टा तुरीपः | २२, २०; १५६७ |
| कः २२, २०; १५५१ । २४, १५; १८१२ । २२, २०; १५५२ | | घृतम् | २५, ९; २०७२ | „ पुरुरूपः | २२, २०; १५६८ |
| ककुब् | २४, १३; १७९७ | घोषः १०, ५; १४२४ । ३०, १९; २२५६ | | त्रिष्टुभ् | २४, १२; १७९१ |
| कतमः | २२, २०; १५५३ | घ्रातः | २२, ७; १५०९ | त्रेता | ३०, १८; २२४७ |
| कपिञ्जलाः | २५, ३; १९९६ | चक्रवाकौ | २५, ८; २०६१ | त्र्यम्बकः | २४, १८; १८२५ |
| कर्णौ | २५, २; १९८४ | चक्षुः २२, २३, ३३; १५७६, १७१२ । २४, २९; १८७२ | | वृक्षिणा दिक् | २२, २४; १५८२ |
| कर्म | ३०, ७; २१३९ | चन्द्रः २२, २८-३०, १६११, १६५२, १६७७ । ३९, २; २२९१ | | दितिः | १८, २२; १४८३ |
| कामः २४, ३९; १९४६ । ३०, ५; २१२१ | | चन्द्रमाः २४, ३५; १९१७ । ३०, २१; २२७८ | | दिवा पतयत् | २२, ३०; १६८० |
| कीलालः | ३०, ११; २१७९ | चराचराणि | २२, २९; १६६५ | दिशः १८, १८, २२; १४७४, १४८५ । २२, २७; १६२८ । २४, २६, ३१; १८६५, १८९३ । २५, ८; २०५६ । ३९, २; २२९० | |
| कुर्वत् | २२, ८; १५४९ | चाषाः | २५, ७; २०५१ | दिष्टम् | ३०, ७; २१४० |
| कूजत् | २२, ७; १५१७ | चित्तम् | २५, २; १९८७ | दुष्कृतम् | ३०, १८; २२५३ |
| कूप्याः | २२, २५; १५९८ | चित्तं विज्ञाता | २२, २०; १५५६ | देवाः सर्वे | २२, ५; १४९० |
| कूर्माः | २५, ३; १९९४ | चित्राणि | २५, ९; २०८० | देवजामयः | २४, २४; १८५४ |
| कूडमाः | २५, ७; २०५३ | जगती | २४, १२; १७९२ | देवानां पत्न्यः २४, ५, ९, २४; १७५७, १७७८, १८५३ | |
| कृतः २२, ८; १५५० । ३०, १८; २२४६ | | जम्बुकः | २५, ९; २०८३ | देवलोकः | ३०, १२; २१८७ |
| कृष्णः | २५, १; १९६८ | जवः २२, ८; १५३४ । २५, ३; १९९७ । ३०, ११; २१७४ | | यौः १८, १८, २२; १४७१, १४८४ । २२, २७, २९; १६२७, १६५७ । २४, १०, २६; १७८१, १८६४ । २५, ८; २०६२ । ३०, २१, २२७५ । ३९, १; २२८८ | |
| कलुः ९, २०; १४०८ । २२, ३२; १६९७ | | जाग्रत् | २२, ७; १५१६ | | |
| कन्दत् | २२, ७; १५०४ | जीमूताः | २५, ८; २०५८ | | |
| कुञ्जी | २५, ६; २०३८ | ज्योतिः २२, ३०, ३३; १६७८, १७१८ | | | |
| क्रोधः | ३०, १४; २२०४ | तपस् २२, ३०; १६९१ । ३०, ५, ७; २११६, २१३३ । ३९, १२; २३०६ | | | |
| क्रोशः | ३०, १८; २२६१ | | | | |
| क्षत्रम् | ३०, ५; २११४ | | | | |
| क्षिप्रयेनः | २४, ३०; १८८७ | | | | |

धावापृथिवी २२, २८; १६४० । २४,
१४, ३४; १८०७, १९१६ । २५, १, ५;
१९६५, २०३० । ३९, १३; २३२०
द्रा २२, ३४; १७२३
द्रापरः ३०, १८; २२४८
द्रारः ३०, १०; २१६५
धर्मः ३०, ६; २१२५
धाता १४, २८; १४४३ । १८, १७;
१४६४ । २४, ५, ९, ३१, १७५६,
१७७६, १८९२ । २५, ४; २०१३
धार्याः २२, १५; १६००
धावत् २२, ८; १५२७
धूमः २२, २६; १६०५
धैर्यम् ३०, ६; २१३२
नक्षत्राणि १८, १८; १४७३ । २२, २८-
२९; १६३२, १६६० । २५, ९;
२०८१ । ३०, २१; २२७७ । ३९, २,
२२९२
नक्षत्रियः २२, २८; १६३३
नङ्गलाः ३०, १६; २२२६
नद्यः ३०, ८; २१४३
नदीपतिः २२, ३४; १९१५
नभः २२, ३१; १६८५ । २५, ८; २०६०
नभस्यः २२, ३१; १६८६
नरंधिषः पूषा २२, ८; १५६५
नरिष्ठा ३०, ६; २१२६
नर्मः ३०, ६, २०; २१२७, २२६५
नाकः वर्षिष्ठः ३०, १२; २१८६
नाभिः ३९, २; २२९५
नारकम् ३०, ५; २११८
नासिके २५, २; १९७४
निभूयपः विष्णुः २२, ८; १५६५
निमेषः २२, ८; १५४५
निर्ऋतिः २२, ३८; १९३९ । २५, २, ५;
१९८९, २०२१ । ३०, ९, १४; २१५६,
२२११
निविष्टः २२, ७; १५१०
निवेद्यः २५, २; १९७९
निषण्णः २२, ८; १५३२

निष्कृतिः ३०, ९; २१५८ । ३९, १२;
२३११
नीलङ्गुः २४, ३०; १८८८
नीहारः २२, २६; १६२१ । २५, ९,
२०७५
नृत्तम् ३०, ६, २०; २१२३, २२६९
पञ्क्तिः २४, १३; १७९८
पतिः भुवनस्य ९, २०; १४१५
पतिः भूतानाम् १४, २८; १४४२
पन्थाः २५, १; १९६४
पप्रोथः २२, ७; १५०७
परमेष्ठी १४, ३१; १४५६
परिल्लाः २२, २९; १६६४
परिवत्सरः ३०, १५; २२१६
पर्जन्यः २४, ३, ६, २१, ३४; १७४७,
१७६२, १८३७, १९११
पर्वताः ३०, १६; २२१४
पवित्रम् ३०, १०; २१६८
पशुपतिः रुद्रः २४, ३; १७४४
पश्चादोषः ३०, १७; २२३८
पाप्मा ३०, ५, १८; २११९, २२५४
पारम् ३९, १६; २२२७
पार्याः २५, १; १९६९, १९७२
पावका सरस्वती २२, २०; १५६१
पितरः २४, ३८; १९३६
,, अग्निष्वात्ताः २४, १८; १८२४
,, बर्हिषदः ,, १८२३
,, सोमवन्तः ,, १८२२
पिबति यत् २२, ८; १५४७
पिशाचाः ३०, ८; २१५१
पुरुषः त्वष्टा २२, २०; १५६८
पुरुष व्याघ्रः ३०, ८; २१४४
पुष्टिः ३०, ११; २१७५
पुष्पाणि २२, २८; १६५२
पूतः ३९, २; २२९६
पूषा १०, ५; १४२१ । १४, ३०; १४५१ ।
१८, १६; १४६१ । २२, २०; १५६३ ।
२४, ७, १४, ३२; १७६७, १८०४,
१९०० । २५, ३, ५, ७; २००१, २०२५,

२०४३ । २९, ५८-५९; २०८७, २०९७
पूषा नरन्धिषः २२, २०; १५६५
,, प्रपथ्यः ,, १५६४
पृथिवी १८, १८, २२; १४६९, १४८१ ।
२२, २७, २९; १६२४, १६५५ । २५,
९; २०८२ । ३०, २१; २२७२ । ३९,
१; २२८४
प्रकामः ३०, १२; २१९२
प्रकामोघ ३०, ९; २१६०
प्रजा २५, ७; २०५०
प्रजापतिः १४, २८, ३१; १४४०, १४५६ ।
२२, ५, ३२; १४८६, १७०५ । २४, १,
२९-३१; १७२८, १८७७, १८८१,
१८९१ । २९, ६०; २१०९ । ३०,
२२; २२८१-८२
प्रज्ञानम् ३०, १०; २१६९
प्रतिभ्रुत्का २४, ३२; १९०४ । ३०, १२,
२२५५
प्रतीची दिक् २२, २४; १५८४
प्रदराः २५, ७; २०५२
प्रपथ्यः पूषा २२, २०; १५६४
प्रबुद्धः २२, ७; १५१९
प्रभा ३०, १२; २१८४
प्रमद् ३०, ६; २१३०
प्रमुक् ३०, १०; २१६४
प्रयुजः ३०, ८; २१४७
प्रसवः २२, ३२; १६९५
प्राची दिक् २२, २४; १५८०
प्राणः १८, २२; १४७९ । २२, २३, ३३;
१५७३, १७०७
प्राणाः २५, २; १९९०
प्राणाः साधिपतिकाः ३९, १; २२८३
प्रायणः २२, ७; १५२५
प्रायश्चित्तिः ३९, ११; २३१२
प्रायासः ३९, ११; २२९८
प्रियः ३०, १३; २१९९
पुष्पत् २२, २६; १६१७
पुष्वाः २२, २६; १६१९ । २५, ९; २०७७
प्रोथत् २२, ७; १५०६

| | | | | | |
|-------------------------------------|--------------|---------------------------------|--------------|-----------------------------------|--------------|
| फलानि | २२, २८; १६५३ | मनुष्यराजः | २४, ३०; १८८४ | मृद् | २५, १; १९५५ |
| बलम् २२, ८; १५३५। २४, ३८; १९३७। | | मनुष्यलोकः | ३०, १२; २१८८ | मेघः | २२, २६; १६०७ |
| २५, ६; २०४२। ३०, ९, १३; २१६२; | | मन्युः २४, ३३; १९०९ । ३०, १४; | | मेघः | ३०, १२; २१९१ |
| २१९७ | | २२०३ | | मेघा | ३०, ६; २१३१ |
| बाह्यः | २५, २; १९७८ | मरीचिः | २५, ९; २०७४ | मोदः अपाम् | २२, ६; १४९४ |
| बीभत्सा | ३०, १७; २२३५ | मरुतः १८, १७; १४६७ । २२, २८; | | यज्ञः | २२, ३३; १७२१ |
| बृहती | २४, १३; १७९६ | १६४७ । २४, ४, १४-१५, ४०; | | यन् | २२, ८; १५२६ |
| बृहती सरस्वती | २२, २०; १५६२ | १७४८, १८०५, १८११, १९५० । २५, | | यमः २४, ३, ३०; १७४५, १८८३ । | |
| बृहस्पतिः १०, ५; १४२२ । १४, २९; | | ४, ६; २०१०, २०३९ । २९, ५८- | | २५, ४; २०१६ । ३०, १४-१५; | |
| १४४८ । १८, १६; १४६२ । २२, ६; | | ५९; २०२१, २०९९ । ३०, ५; | | २२१२-१३ । ३९, १३; २३१४ | |
| १४९९ । २४, २, २८; १७४१, १८७५ | | २११५ | | यमी | २५, ५; २०२९ |
| बृहस्पतिः (वाचस्पतिः) २४, ३४; १९१३। | | मरुतः क्राडिनः २४, १६; १८१६ | | यवाः | १४, ३१; १४५५ |
| २५, ३-४; १९९३, २०११ । २९, ५८, | | „ गृहमेधिनः „ १८१५ | | यातुधानाः | ३०, ८; २१५२ |
| ६०; २०८८, २१०७ | | „ सान्तपनाः „ १८१४ | | यादस् (दः) | ३०, २०; २२६७ |
| ब्रध्नस्थ विष्टपम् ३०, १२; २१९७ | | „ स्वतवसः „ १८१७ | | योगः | ३०, १४; २२०५ |
| ब्रह्म २२, २२; १५७२ । ३०, ५; २११३। | | मर्यादा ३०, १०; २१७२ | | रक्षांसि २४, ४०; १९४८ । २५, ९; | |
| ३९, १३; २३१७ | | मलिम्लुचः २२, ३०; १६७९ | | २०७९ | |
| ब्रह्महत्या ३९, १३; २३१८ | | मन्त्रकाः २५, ३; १९९१ | | रश्मयः २२, २८; १६४३ | |
| ब्रह्मणस्पतिः १४, २८; १४४१ | | मही अदितिः २२, २०; १५५८ | | रात्रिः २४, २५, ३६; १८५७, १९२६ । | |
| ब्रह्मा २२, ३३; १७१७ | | महेन्द्रः २४, १७; १८२० | | ३०, २१; २२८० | |
| भगः १०, ५; १४२७ | | माधवः २२, ३१; १६८२ | | रुद्रः २४, ३२; १९४४ । २५, ३; २००३ | |
| भद्रा ३०, ११; २१८० | | माया ३०, ७; २१३४ | | रुद्रः पशुपतिः २४, ३; १७४४ | |
| भा ३०, १२; २१८३ | | मायुः २४, ३२; १९०१ | | रुद्राः ११, ६०, ६५; १४३०, १४३७ । | |
| शुवनस्य पतिः ९, २०; १४१५। २२, ३२; | | मासाः २२, २८; १६३६ । २४, २५, | | १४, ३०; १४५३ । २२, २८; १६४५। | |
| १७०४ | | ३७; १८५९, १९३२ | | २४, ३, ६, २७; १७४६, १७६०, | |
| भूतानि विश्वा ३०, १७; २२३९ | | मित्रः १८, १७; १४६३ । २२, ६; | | १८६८ । २५, ६; २०३४ | |
| भूतानां पतिः १४, २८; १४४२ | | १५०० । २४, ८, २१-२२, २८, ३३; | | रूपम् ३०, ७; २१३५ | |
| भूतिः ३०, १७; २२४० | | १७७२, १८३९, १८४४, १८७३, | | रेष्मन् (घ्मा) २५, २; १९९० | |
| भूमन् ३०, १३; २१९८ | | १९०६ । २५, ५, २०१९ | | लोकाः स्वर्गः ३०, १३; २२०१ | |
| भूमिः २४, १०, २६, ३३; १७७९, | | मित्रावरुणा २४, २, ८, २३; १७४२, | | लोकाः सवै ३०, १२; २१८९ | |
| १८६२, १९०८ | | १७७२, १८५० । २५, ६; २०४० । | | घत्तरः ३०, १५; २२१९ | |
| भेषजम् ३९, १२; २३१३ | | २९, ६०; २१०६ | | वनम् ३०, १९; २२६३ | |
| भौवनः आन्त्यः ९, २०; १४१४ । २२, | | सुगंधं अहः ९, २०; १४११ | | वनस्पतयः २२, २८-२९; १६५१, १६६३। | |
| ३२; १७०३ | | सुगंधः वैनंशिनः ९, २०; १४१२ | | २४, २३, ३५; १८४७, १९१८ | |
| भंहस् ३०, १९-२०; २२६०, २२६८ | | मूर्त्रं करोति यत् २२, ८; १५४८ | | वपुस् (पुः) ३०, १४; २२०९ | |
| मतिः २४, ३९; १९४२ | | मूर्धन् २२, ३२; १६९९ | | वह्मणः ११, ६०; १४३४ । १४, ३०; | |
| मधुः २२, ३१; १६८१ | | मूलानि २२, २८; १६४९ | | १४५०। १८, १७; १४६४। २२, ५, ९; | |
| मनः २२, २३, ३३; १५७९, १७१५ | | मृत्युः २४, ३७; १९३४ । ३०, ७, | | १४९१, १५०१ । २४, २, १५, २१-२२, | |
| मनः प्रजापतिः २२, २०; १५५५ | | १८; २१४१, २२५० । ३९, १३; | | | |
| | | २३१६ | | | |

२८, ३०, ३८, १७३९, १८१०, १८४०,
१८४५, १८७४, १८८२, १९४० ।
२५, ४.५; २०१५, २०२८ । २९,
५८-५९; २०९४, २१०२ । ३९, २;
२२९४
वर्णम् ३०, ९, १७; २१६१, २२३६
वर्षत् (न्) २२, २६; १६११
वर्षाः २४, ११, २०; १७८६, १८३२
वर्षिष्ठः नाकः ३०, १२-१३; २१८६,
२२०२
वल्गत् २२, ७; १५१३
वल्मीकाः २५, ८; २०६५
वसन्तः २४, ११, २०; १७८४, १८३०
वसुः ९, २०; १४०२ । २२, ३०; १६६८
वसवः ११, ६०, ६५; १४२९, १४३६ ।
१४, ३०; १४५३ । २२, २८; १६६४ ।
२४, ६, २७, ३८; १७५९, १८६७,
१९३८
वाक् २२, २३, ३३; १५७८, १७१४ ।
२४, ५, २९, ३१; १७५४, १८७८,
१८९६
वाजम् २२, ३२; १६९४ । २५, १; १९६०
वाजी २५, ७; २०४९
वाजिनः २४, ७, ३९; १७६५, १९४५
वातः २२, २६; १६०४ । २४, ३५;
१९२० । २५, २; १९७३
वायुः १४, ३०; १४५२ । २२, ५-६;
१४८८, १४९६ । २४, १, ९, २२,
३०, ३४; १७३५, १७७५, १८४२,
१८८१, १९१२ । २५, ४, ६, २००५,
२०३६ । ३०, २१; २२७३
वारः (र्) २२, २५, १५९३
विचृतः २२, ७; १५२१
विजृम्भमाणः ,, १५२०
विष्णुत् २४, १०, १७८२ । २५, १,
१९६६
विद्योतमानः २२, २६; १६०८
विधूतः २२, ८; १५३९
विधून्वानः २२, ८; १५३८

विद्युतिः २५, ९; २०७१
विनंशी आन्त्यायनः ९, २०; १४१३
विभूः २२, ३०; १६६९
वियासः ३९, ११; २३००
विराट् २४, १३; १७९५
विवर्तमानः २२, ८; १५३६
विवस्वान् २२, ३०; १६७०
विविक्तिः ३०१३; २१९५
विवृतः २२, ८; १५३७
विश्वकर्मा २४, १७; १८२१
विश्वे देवाः ११, ६०, १५; १४३२,
१४३९ । १८, १७; १४६८ । २२, ५;
१४८९ । २२, २८; १६४८ । २४,
५, १४, २७, ४०; १७५३, १८०६,
१८७०, १९४७, १९५२ । २५, ५-६;
२०३१, २०३३ । २९, ५८-६०;
२०८९, २०९८, २१०५ । ३९, १३;
२३१९
विश्वानि भूतानि ३०, १७; २२३९
विषमाः ३०, १६; २२३०
विष्णुः ११, ६०, १४३५ । २२, ६;
१४९७ । २४, १, ३६; १७३७,
१९२८ । २५, ५; २०९४ । २२, २०;
१५६९
विष्णुः निभूयपः २२, २०; १५७०
,, शिपिविष्टः ,, १५७१
विहृतः २५, ७; २०४६
वीक्षितः २२, ८; १५४४
वीर्यम् ३०, ९; २१७६
वृषणः २५, १, ७; १९६२, २०४८
वैनंशिनः सुग्धः ९, २०; १४१२
वैरहृत्यः ३०, १३; २१९४
वैशन्ताः ३०, १६; २२२५
वैश्वानरः २५, ८; २०७०
वैश्वानरः अग्निः २९, ६०; २१११
वैश्वानराः विश्वे देवाः ११, ६०, ६५;
१४३२, १४३९
व्यशुविन् २२, ३२; १७००
व्यानः २२, २३, ३३; १५७५, १७०९

व्युद्धिः ३०, १७, २२४३
व्युष्टिः २२, ३४; १७२६
शक्वरयः १८, २२; १४८५
शतम् २२, ३४; १७२४
शब्दः ३०, १९; २२५९
शयानः २२, ७; १५१५
शरद् २४, ११, २०; १७८७, १८३३
शरव्या २४, ४०; १९५१ । ३०, ७;
२१३७
शाखाः २२, २८; १६५०
शादः २५, १; १९५३
शार्दूलः २४, ३०; १८८५
शिपिविष्टः विष्णुः २२, २०; १५७१
शिशिरः २४, ११, २०; १७८९, १८३५
शीकायत् २२, २६; १६१८
शीघ्रं वर्षत् ,, ,, १६१४
शीनः २५, २; २०७६
शीलम् ३०, १९; २२१०
शुक (च) ३९, ११; २३०२
शुकः २२, ३१; १६८३
शुकः २५, १; १९६७
शुचिः २२, ३१; १६८४
शुनासीरः २३, १९; १८२७
शुभम् ३०, ७; २१३६
शुश्रूषमाणः २२, ८; १५४०
शूकारः ,, १५३०
शूकृतः ,, १५३१
शूषः २२, ३०; १६७५
शृण्वत् २२, ८; १५४१
शोकः ३०, १४, २२०६ । ३९, ११; २३०५
शोचत् ,, २३०३
शोचमानः ,, २३०४
श्रेयस् ३०, ११; २१८१
श्रोत्रम् २२, २३, ३३; १५७७, १७१३ ।
२४, २९; १८८० । २५, २; १९८३
श्लोकः १०, ५, १४२५
संयासः ३९, ११; २२९९
संवत्सरः १४, २९; १४४६ । २२, २८;
१६३९ । २४, २५; १८६० । ३०, १५;
२२१५, २२२०

| | | | |
|------------------------------------|----------------------------------|----------------------------------|--------------------------------------|
| संशरः | ३०, १७; २२४४ | सर्पाः २४, ३६; १९२४ । २५, ५, ७; | २००७ । २९, ५८; २०८६ |
| संसर्पः | २२, ३०; १६७६ | २०२३, २०४५ | सोमपूषणौ २४, १; १७३२ |
| संहानः | २२, ७; १५२२ | सर्पदेवजनाः ३०, ८; २१४८ | स्तनयत् २२, २६; १६०९ |
| सञ्चराः उक्ताः [पूर्व मंत्रोक्ताः] | २४, १५, १७, १९; १८०८, १८१८, १८२६ | सर्वे लोकाः ३०, १२; २१८९ | स्तनयितुः २५, १; १९८० |
| संज्ञानम् | ३०, ९; २१५९ | सविता १०, ५; १४२९ । १८, १६; | स्तेगाः २५, १; १९५६ |
| सत् | २५, २; १९७६ | १४५९ । २२, ६; १४९५ । २४, २, | स्यन्दमानाः २२, २५; १५९७ |
| सन्दिताः | २२, ७; १५१२ | १४, ३५; १७४०, १८०२, १९१९ । | स्वर्गः २२, २५; १५९७ । २५, ८; |
| सन्धयः अहोरात्रयोः | २४, २५; १८५८ | २९, ५८, ६०; २०९३, २१०८ | २०६७ |
| सन्धिः | ३०, ९; २१५३ | सहस् (हाः) २२, ३१; १६८९ | स्वनाः ३०, १६; २२३१ |
| समाः | १८, १८; १४७२ | सहस्यः ,, १६९० | स्वपत् २२, ७; १५१६ |
| समानः | २२, ३३; १७११ | साध्याः २४, २७; १८७१ । ३०, १५; | स्वप्नः ३०, १०; २१६६ |
| समुद्रः २२, २५; १६०२ । २४, २१, ३०; | | २२२२ | स्वर २२, ३२-३३; १६९८, १७१९ |
| १८३६, १८८९ । २५, ८; २०६९ | | सानूनि ३०, १६; २२३३ | स्वर्गः २२, ३४; १७३७ |
| सरांसि ३०, १६; २२२३ | | सुमृङ्गीका अदितिः २२, २०; १५५९ | स्वर्गः लोकः ३०, १३; २२०१ |
| सरस्वान् २४, ३३; १९१० | | सूयाः २२, २५; १५९९ | स्वापिः ९, २०; १४०६ |
| सरस्वती १०, ५; १४२० । १८, १६; | | सूर्यः १८, २२; १४७८ । २२, २८-२९; | ह्रसः ३०, ६, २०; २१२८, २२६६ |
| १४६० । २२, २०; १५६० । २४, १, | | १६४२, १६५८ । २४, १९, ३३; १८२९, | हिङ्गारः २२, ७; १५०२ |
| ४, १४, ३३; १७३०, १७४९, १८०३, | | १९०५ । ३०, २१; २२७६ । ३९, १; | हिङ्कृतः ,, १५०३ |
| १९०७ । २५, १, ५; १९५७, २०१८ । | | २२८९ | हिमवान् २४, ३०; १८९० |
| २९, ५८-५९; २०८५, २१०१ | | सूर्य-यमौ २४, १; १७३३ | हेतिः ३०, ७; २१३८ |
| सरस्वती पावका २२, २०; १५६१ | | सोमः १०, ५; १४१८ । १४, ३१; | हेमन्तः २४, ११, २०; १७८८, १८३४ |
| ,, वृद्धती ,, १५६२ | | १४५४ । १८, १६; १४५८ । २२, ६, | हृदाः २५, ८; २०६८ |
| सरिरः २२, २५; १६०३ | | २७; १४९३, १६२३ । २४, २, ९, १४, | द्वादुनीः २२, २६; १६२० । २५, ९; २०७८ |
| सरीसृपाः २२, २९; १६६६ | | २२, २४, ३२; १७३८, १७७४, १८०१, | हीः २४, ३५; १९२२ |
| | | १८४१, १८५१, १८९९ । २५, ४; | |



विश्वे-देवादेवता-मन्त्राणां वर्णानुक्रमसूची ।

| | | | | | |
|--------------------------------------|------|----------------------------------|------|---------------------------------|------|
| अंशाय स्वाहा। | १४२६ | अग्नीषोमयोरुज्जितिमनूजेषं | १२७४ | अत्यं हविः राचते सञ्च धातु च | २९६ |
| अंशुरंशुष्टे देव सोम | १२८४ | अग्नीषोमयोर्भासदौ | २०३७ | अत्रैनानिन्द्र वृत्रहन् | ९३१ |
| अंशो भगो वरुणो मित्रो | ९३६ | अग्नीषोमयोः षष्ठी | २०२२ | अथर्वभ्योऽवतोक्ता | २२१४ |
| अंशसस्पतये स्वाहा | १६२३ | अग्नीषोमाभ्यां चाषान् | १८४८ | अथैतानष्टौ विरूपानालभते | २२८१ |
| अक्षराजाय कितवम् | २२४५ | अग्नीषोमा वृषणा वाजसातये | ७१३ | अदत्रया दयते वार्याणि | ३४२ |
| अम इन्द्र वरुण मित्र देवाः ३२१, १२६२ | | अग्ने अच्छा वदेह नः | ८१६ | अदितिः ऋषीर्णा | १९८७ |
| अमये कूटरुन् | १८४६ | अग्ने तव त्यदुक्त्यं | ५० | अदितिर्यावापृथिवी ऋतं महद् | ७१० |
| अमये गायत्राय त्रिवृते | २१०३ | अग्नेऽदब्धायोऽशीतम पाहि | १२७५ | अदितिर्यौरदितिरन्तरिक्षम् | २८ |
| अमये गृहपतये पारुष्णान् | १८५५ | अग्नेः पक्षतिः | २००४ | अदितिर्यजनिष्ट दक्ष या | १२१६ |
| अमये गृहपतये स्वाहा | १३२८ | अग्नेः पूर्वं भ्रातरो अर्थमेतं | १२०८ | अदितिश्च मे | १४८२ |
| अमये त्वा मह्यं वरुणो ददातु | १३०६ | अग्ने बाधस्व वि मृधो वि दुर्गहा | १२३३ | अदितिः शमश्रु वपतु | ९४९ |
| अमयेऽनीकवते प्रथमजान् | १८१३ | अग्ने मन्युं प्रतिनुदन् परेषाम् | ८०५ | अदित्यै पञ्चमी | २००८ |
| अमयेऽनीकवते रोहितान् | २०९५ | अग्नेर्जनित्रमसि वृषणौ स्थ | १२८३ | अदित्यै पाजस्यम् | २०५५ |
| अमये पीवानम् | २२७१ | अग्नेर्भागोऽसि दीक्षाया आधिपत्यं | १३४४ | अदित्यै भसत् | २०५७ |
| अमये वैश्वानराय द्वादशकपालः | २१११ | अग्ने विश्वेभिरग्निभिः | १४०२ | अदित्यै मह्यै स्वाहा | १५५८ |
| अमये स्वाहा १४१७, १४९२, १६२२, २२८५ | | अग्ने सुतस्य पीतये | ३५० | अदित्यै विष्णुपत्न्यै चरुः | २११० |
| अग्निं ते वसुवन्तमृच्छन्तु | ९८२ | अग्ने स्वाहा कृणुहि जातवेदः | ८७३ | अदित्यै सुमृडीकायै स्वाहा | १५५९ |
| अग्निमतिरुभ्याम् | २००० | अग्नये विष्णवे वयम् | ५११ | अदित्यै रवाहा | १५५७ |
| अग्निमद्य होतारमवृणीत | १३८६ | अङ्गुलयः शक्वरयो दिशश्च मे | १४८५ | अद्भ्यस्त्वा राजा वरुणो ह्वयतु | ८९३ |
| अग्निमुषसमश्विना दधिकां | १६८ | अचिकित्वाश्विकितुषश्चिदत्र | १०४ | अद्भ्यः स्वाहा १५९२, १६६१, २२९३ | |
| अग्निरिन्द्रो वरुणो मित्रो अर्यमा | ६९२ | अच्छा मही बृहती शंतमा गीः | २८४ | अद्भ्यो मत्स्यान् | १८३८ |
| अग्निरीशो वसव्यस्य | २३६ | अच्छायं वो मरुतः श्लोक एतु | ४७२ | अद्वेषो अद्य बर्हिषः स्तरीमणि | ५८८ |
| अग्निरुक्थे पुरोहितो | ५१२ | अच्छा विवस्मि रोदसी सुमेके | २२६ | अध गमन्ता नहुषो हवं सूरैः | ९२ |
| अग्निरेकाक्षरेण प्राणमुदजयत् | १३१९ | अजिराधिराजौ श्येनौ | ९६४ | अध त्वमिन्द्र विद्वत्समान् | ६४८ |
| अग्निर्जागार तमृचः कामयन्ते | ३०८ | अजिरासस्तदप ईयमानाः | ३२९ | अध प्रजशे तरणिर्ममतु | ७२ |
| अग्निर्ज्योतिर्ज्योतिरग्निः स्वाहा | १२७९ | अज्रे चिदस्मै कृणुथा न्यश्चनं | ५२९ | अध यद् राजाना गविष्टौ | ६४९ |
| अग्निर्देवता वातो देवता | ८५९ | अञ्जन्ति यं प्रथयन्तो न विप्राः | २८३ | अध स्मा न उदवता सजोषसो | १५९ |
| अग्निर्मां पातु वसुभिः पुरस्तात् | २७२ | अतिकुष्टाय मागधम् | २१२२ | अधा गाव उपमार्ति कनायाः | ६४७ |
| अग्निश्च पृथिवी च सजते | १३८४ | अति धावतातिसरा | ९२६ | अधा न्वस्य जेन्यस्य पुष्टौ | ६५० |
| अग्निश्च म इन्द्रश्च मे | १४५७ | अति नो विष्पिता पुरु | ५६१ | अधायि धीतिरससृप्रमंशाः | ५७० |
| अग्निश्च मे | १४७५ | अति वा यो मरुतो मन्यते नो | ४१० | अधासु मन्द्रो अरतिर्विभावा | ६४६ |
| अग्नीपर्जन्यावधत्तं धियं मे | ४२४ | अतीव यो मरुतो मन्यते नो | १०२६ | अधि न इन्द्रैषां | ५६५ |

| | | |
|--|-------------------------------------|----------------------------------|
| अधिपतये स्वाहा १४१६, १६७४, १७०४ | अप न्यधुः पौरुषेयं वधं १००३ | आभि वो अर्चं पोष्यावतो नून २४७ |
| अधिपत्यसि बृहती दिग् ८६१, १३५८ | अपः क्षुत्कण्ठेन १९८५ | आभि वो देवीं धियं दधिध्वम् ४३४ |
| अधीन्वन्न सप्तति च ७५० | अपयं गोपामनिपद्यमानम् १२९ | अभीक आसां पदवीरबोधि २१७ |
| अधोरामः सावित्रो २०९३ | अपस्त ओषधीमतीऋच्छन्तु ९८७ | अभृत्यै स्वपनम् २२४१ |
| अधोरामौ सावित्रौ २०९६ | अपाघमप किल्बिषमप १३९१ | अत्राय स्वाहा १६०६ |
| अध्वर्यवश्चक्रवांसो मधूनि २७९ | अपाङ् प्राङ्गति स्वधया गृभीतो १३६ | अमी ये देवा स्थन ४२, १३९८ |
| अध्वानं बाहुभ्याम् १९९८ | अपां चतुर्थी २०२० | अमी ये पञ्चोक्षणो ४७ |
| अनच्छये तुरगातु जीवम् १२८ | अपाञ्चौ त उभौ बाहू ९६५ | अमी ये सप्त रश्मयः ४६ |
| अनङ्वान् वयः पङ्क्तिश्छन्दो १३३९ | अप दिन्द्रो अपादमिः ५५८ | अमी ये युधमायन्ति ११८६ |
| अनङ्वाहः पङ्क्त्यै १७९८ | अपानाय स्वाहा १५७४ | अमूः पारे पृदाक्वः ८८३ |
| अनन्ताय मूकः २२५८ | अपानेन नासिके १९७४ | अयं यो होता किं स यमस्य ६१० |
| अनामित्रं नो अधराद् ९४१ | अपानो यज्ञेन कल्पताः स्वाहा १७०८ | अयं स शिङ्क्ते येन गौरभीवृता १२७ |
| अनमीवा उपस आ चरन्तु नः ५८५ | अपामीवां सविता साविषन्यग् ७५८ | अयं सोमः सुदानवः १२०० |
| अनु तदुर्वी रोदसी जिहाताम् ४४७ | अपामीवामप विश्वामनाहुतिम् ६७२ | अयं स्तुतो राजा वन्दि वेधाः ६४२ |
| अनु त्वा मही पाजसी अचक्रे ७७ | अपामुद्रो १९३१ | अयं हि नेता वरुण ऋतस्य ४२१ |
| अनुमत्या अष्टाकपलः २११२ | अपां पृष्ठमसि योनिरग्नेः १३३६ | अयं दक्षिणा विश्वकर्मा तस्य १३६० |
| अनु वीरैरनु पुष्यास्म १२५५ | अपां पेरुं जीवधन्यं भरामहे ६०१ | अयं नाभा वदति वल्गु वो गृहे ६५७ |
| अनुवाशेन बाह्यं १९७८ | अपां मोदाय स्वाहा १४९४ | अयमुत्तरात् संयद्गुस्तस्य १३६२ |
| अनूनादत्र हस्तयतो अद्रिः ३१५ | अपिजाय स्वाहा १४०७, १६९६ | अयमुपर्यर्वाग्वसुस्तस्य १३६३ |
| अन्तकाय गोघातम् २२५१ | अपि नद्यामि ते बाहू ९६६ | अयं पञ्चद्विष्यचारस्तस्य १३६१ |
| अन्तकाय श्वनिनम् २१४२ | अपि पन्थामगन्महि ४०८ | अयं पुरो हरिकेशः सूर्यारिमः १३५९ |
| अन्तकाय स्वाहा २३१५ | अपेत वीत वि च सर्पतातो १२६९, १३३३ | अयस्मये द्रुपदे बेधिष इह ११८३ |
| अन्तरिक्षं च म इन्द्रश्च मे १४७० | अपो यूष्णा २०७३ | अयेभ्यः कितवम् २१४२ |
| अन्तरिक्षं पुरीतता २०५९ | अपो वस्तिना २०४७ | अरण्याय सृमरो १९४३ |
| अन्तरिक्षाय पाङ्कत्रान् १८६३ | अबुध्रमु ल्य इन्द्रवन्तो अग्नयो ५८० | अराध्या एदिधिषुः पतिम् २१५७ |
| अन्तरिक्षाय वः शनर्तिनम् २२७४ | अभयं द्यावापृथिवी इहास्तु नो ९३९ | अरिष्टः स मर्तो विश्व एधते ६७३ |
| अन्तरिक्षाय स्वाहा १६२६, १६५६, २२८६ | अभयं नः करत्यन्तरिक्षम् ९६८ | अरिष्टया अश्वसादः २२०० |
| अन्ताय बहुवादिनम् २२५७ | अभयं मित्रादभयममित्राद् ९६९ | अरुणान्छरदे १७८७ |
| अन्त्याय भौवनाय स्वाहा १४१४, १७०२ | अभि त्यं वीरं गर्विणसमर्च ३८३ | अरुणो मा सकृद् वृकः ५५ |
| अन्त्याय स्वाहा १७०१ | अभि त्वा वर्चसासिचन् ११४७ | अरुणस्य दुहितरा विरूपे ३६५ |
| अन्धाहीन्स्थूलगुदया २०४४ | आभि त्वेन्द्र वरिमतः ९५९ | अर्कश्च मे १४७७ |
| अन्यत एन्यो मैत्र्यः १७७२ | अभि न इळा यूथस्य माता २५८ | अर्चन्त एके महि साम ५४८ |
| अन्यतोरण्याय दावपम् २२६४ | अभि प्र स्थाताहेव यज्ञं ४३० | अर्णवाय स्वाहा १६०१ |
| अन्यवपोऽर्धमासानाम् १९९९ | अभि प्रिया महतो या वो ५१७ | अर्थमिद् वा उ अर्थिनः ३९ |
| अन्यस्या वत्सं रिहती मिमाय २०४ | अभि प्रेहि माप वेनः ११४३ | अर्थमाय बधिरम् २१६७ |
| अप आस्येन १९६१ | अभिभुवे स्वाहा १६७३ | अर्थमासेभ्यः स्वाहा १६३५ |
| अप त्यं वृजिनं रिपुम् ४०५ | अभिभूरस्येतास्ते पञ्च दिशः १३२९ | अर्थेभ्यो हस्तिपम् २१७३ |
| | अभिभूर्यशो अभिभूरग्निः ९५७ | अर्थमणं बृहस्पतिम् ८२० |
| | अभि यं देवीं निर्ऋतिश्चिदीशो ४७९ | अर्थमा णो अदितिर्यज्ञियासो १८७ |

| | | | | | |
|---------------------------------|--|--------------------------------|------------|---------------------------------|------|
| अर्यम्णे स्वाहा | १४२८ | अष्टा महो दिव आदो हरी इह | ७४ | आग्ने गिरो दिव आ पृथिव्याः | ४८५ |
| अर्यम्णो नवमी | २०१२ | अष्टौ पुत्रासो अदितेः | १२१९ | आग्नेयः कृष्णग्रीवः | २०८४ |
| अर्वाच्यै दिशे स्वाहा | १५८१, १५८३, १५८५, १५८७, १५८९, १५९१, १६३१ | असपत्नं पुरस्तात् पश्चाच्चो | ९७०, ११६८ | आग्नेयः कृष्णोऽजः | २१०० |
| अर्वाच्चो अद्या भवता यजत्रा | १५६ | असवे स्वाहा | १६६७ | आ प्रावभिरदन्त्येभिरक्तुभिः | ३३७ |
| अलज आन्तरिक्षः | १९१४ | असावि ते जुजुषाणाय सोमः | २८१ | आङ्गिरसानामाद्यैः | ११२१ |
| अवश्रुत्यै वधायोपमन्धितारं | २१९० | असौ यः पन्था आदित्यो | ५३ | आ चष्ट आसां पाथो नदीनां | ४३५ |
| अवकां दन्तमूलेः | १९५४ | अस्ति हि वः सजात्यं रिशादसो | ५२१ | आच्छच्छन्दः प्रच्छच्छन्दः | १३४९ |
| अवकन्दाय स्वाहा | १५०५ | अस्तु श्रौषट् पुरो अग्निं | ९७ | आजुह्वानः सुप्रतीकः पुररताद् | ८६३ |
| अवकन्देन तालु | १९५९ | अस्ना रक्षाक्षि | २०७९ | आ त एतु मनः पुनः | ६२४ |
| अवन्तु नः पितरः सुप्रवाचना | ५९ | अस्मा उक्थाय पर्वतस्य गर्भः | ३११ | आतिर्वाहसो दर्विदा ते वायवे | १९११ |
| अवन्तु मामुषसो जायमाना | ४१२ | अस्माकं मित्रावरुणावतं रथम् | १५८ | आतिष्ठन्तं पारं विश्वे अभूषन् | ११४४ |
| अवः परेण पर एनावरेण | ११५ | अस्मिन्समुद्रे अध्युत्तरस्मिन् | १२२७ | आ तू पिबिष हरिमीं द्रोणस्थे | ७७२ |
| अवः परेण पितरं यो अस्य | ११६ | अस्मिन् वसु वसवो धारयन्तु | ८७७ | आ ते नयतु सविता नयतु | ११०४ |
| अवरस्पराय शङ्खधम्म | २२६२ | अस्मे धेदि शुमतीं वाचमासन् | १२२४ | आ ते योनिं गर्भं एतु | १०५९ |
| अवलिता रौद्राः | १७४६ | अस्मे रुद्रा मेहना पर्वतासो | १२०४ | आत्मने मे वर्चोदा वर्चसे | १३०३ |
| अववर्षते स्वाहा | १६१२ | अस्मे ग्रामाय प्रदिशश्चतस्रः | ९४० | आत्मा यज्ञेन कल्पताः स्व हा | १७१६ |
| अवसृष्टा परा पत शरव्ये | १११२ | अस्य देवस्य मीळुधुषो वयाः | ४९२ | आ त्वा कण्वा अहूषत | ५ |
| अवस्कूर्जते स्वाहा | १६१० | अस्य देवाः प्रदिशि ज्योतिः | ८७८ | आ त्वा गन् राष्ट्रं सह वर्चसा | ८९६ |
| अवाच्यै दिशे स्वाहा | १५९० | अस्येदेपा सुमतिः पप्रधाना | ५७३ | आ त्वागमं शन्तातिभिः | ८१२ |
| अवाराय केवर्त | २२२८ | अस्य मदे स्वयं दा क्रताय | ७० | आथर्वगानां चतुर्ऋचेभ्यः स्वाहा | १००७ |
| अवार्या इक्षवो | १९७० | अस्य वामस्य पलितस्य | ९९ | आ दधामि ते पदं | १०९८ |
| अवार्याणि पक्षमाणि | १९७१ | अस्य स्तुषे महिमघस्य राधः | ८९ | आदित्यौ इमश्रुभिः | १९६३ |
| अविज्ञाता अदित्यै | १७५५, १७७६ | अहं सो अस्मि यः पुरा | ४४ | आदित्यानां तृतीया | २०३५ |
| अविन्दन्ते अतिहितं यदासीद् | ८३५ | अहं होता न्यसीदं यजीयान् | ६०९ | आदित्या रुद्रा वसवः रुनीथाः | २२२ |
| अविष्टो अस्मान् विश्वासु विश्वु | ४३७ | अहं गृभ्णमि मनसा मनांसि | ९०७ | आदित्या रुद्रा वसवो जुषन्त | ४६२ |
| अर्वाच्चो अग्निर्हव्यान्नमोभिः | ४३९ | अहर्पतये स्वहा | १४१० | आदित्यासो अति सिधो | ७९६ |
| अवीवृधद् वो अमृता अमन्दीद् | १२०५ | अहोरात्रयोः सन्धिभ्यो | १८५८ | आदि यास्त्वाऽऽच्छन्दन्तु जागतेन | १४३८ |
| अशनिं मस्तिष्केण | १९८१ | अहोरात्रेभ्यः स्वाहा | १६३४ | आदित्यास्त्वा धूपयन्तु जागतेन | १४३१ |
| अशीतिभिस्तिसृभिः सामगेभिः | १०९४ | अहं परावतानालभते | १८५६ | आदित्येभ्यः स्वाहा | १६४६ |
| अश्वमेधश्च मे | १४८० | अहं सुगधाय स्वाहा | १४११ | आदित्येभ्यो न्यङ्कन् | १८६९ |
| अश्वस्तूपरो गोमृगस्ते | १७२८ | अहं शुक्रं पित्राक्षम् | २२७९ | आदित्यैरिन्द्रः सगणो मरुद्भिः | ८२५ |
| अश्विना त्वाप्रे मित्रावरुणोभा | ८९८ | आर्की सूर्यस्य रोचनाद् | १२ | आ देवो दूतो अजिरश्चित्त्वान् | १२२३ |
| अश्विनावसाभ्याम् | २००२ | आकृतिमग्निं प्रयुजस् स्वाहा | १३३२ | आ दैव्यानि पार्थिव नि जन्म | २५३ |
| अश्विभ्यां पच्यस्व सरस्वत्यै | १३३० | आकृत्यै प्रयुजेऽग्नये स्वाहा | १२८१ | आ धर्णसिर्वृहद्वो रराणो | २८९ |
| अश्विभ्यां पिबस्व सरस्वत्यै | १३९३ | आ क्रन्दय धनपते | ११०३ | आ धूर्चस्मै दधाताश्चान् | ४२९ |
| अश्विभ्यां मयूरान् | १८४९ | आक्रमणस्त्थूराभ्याम् | १९९५, २०४१ | आ धेनवः पयसा तूर्पर्या | २७७ |
| अष्टर्चैभ्यः स्वाहा | १०११ | आक्रयाया अयोगूं | २१२० | आ धेनवो धुनयन्तामशिश्वीः | २०७ |
| अष्टादशर्चैभ्यः स्वाहा | १०२१ | आक्षित् पूर्वाखपरा अनुक्त | १९६ | आध्याक्षायानुक्षतारम् | २१८२ |
| | | आखुः कशो मान्थालस्ते | १९३६ | आ न इळाभिर्विदथे सुशस्ति | १४० |

| | | | | | |
|-----------------------------------|------|-----------------------------------|------|---|------------|
| आनन्दाय तलवम् | २२७० | आर्तवेभ्यः स्वाहा | १६३८ | इन्द्र उक्थेन शवसा परुर्द्धधे | ७५५ |
| आनन्दाय त्रीषखं | २१२९ | आर्त्यं जनवादिनं | २२४२ | इन्द्रं कुत्सो वृत्रहणं शचीपतिं | ६२ |
| आ नामभिर्मरुतो बक्षि विश्वान् | २८६ | आर्त्यं परिवित्तं | २१५५ | इन्द्रज्येष्ठा मरुद्गणाः | १६७ |
| आ नो अद्य समनसो | ५१६ | आर्षिषेणो होत्रमृषिर्निषीदन् | १२२६ | इन्द्र हव्य मघवन् त्वावदिद् भुजे | ७५१ |
| आ नो दिवो बृहतः पर्वतादा | २८७ | आ वात वाहि मेषजं | ८११ | इन्द्रं ते मरुत्वन्तमृच्छन्तु | ९८९ |
| आ नो देवः सविता त्रायमाणो | ३८५ | आ वातस्य ध्रजतो रन्त इत्या | ४६६ | इन्द्रपुत्रे सोमपुत्रे दुहितासि | ९१४ |
| आ नो देवः सविता साविषद् वयः ७५३ | | आ वां येष्ठाश्विना हुवध्यै | २४२ | इन्द्रप्रसूता वरुणप्रशिष्टा | ७०८ |
| आ नो देवानामुप वेतु शंसो | ५६८ | आविर्मर्या आवितो अग्निः | १३२६ | इन्द्रमहं वणिजं चोदयामि | ९१५ |
| आ नो द्रप्सा मधुमन्तो विशन्तु | १२२५ | आ वेधसं नीलपृष्ठं बृहन्तं | २८८ | इन्द्रं मित्रं वरुणमग्निमृतये | ५७ |
| आ नो बर्हिः सधमदे बृहद्वि | ५८९ | आ वो धियं यज्ञियां वर्त ऊतये | ७७१ | इन्द्रवायू बृहस्पतिं | ६, ८१९ |
| आ नो भद्राः क्रतवो यन्तु विश्वतो | १९ | आ वो यक्ष्यमृतत्वं सुवीरं | ६१२ | इन्द्रश्च मरुतश्च कयाय | १३०९ |
| आ नो महीमरमतिं सजोषाः | २८२ | आ वो रुवण्युमौशिजो हुवध्यै | ८६ | इन्द्रः सु पूषा वृषणा सुहस्ता | २२४ |
| आ नो राधांसि सवितः स्तवथ्यै | ४८० | आ वो वाहिष्ठो बहवु स्तवथ्यै | ४७३ | इन्द्रस्त्वा धूपयतु | १४३३ |
| आ नो रुद्रस्य सूनवो नमन्ताम् | ३८१ | आशाभ्यः स्वाहा | १६२९ | इन्द्रस्य क्रोडो | २०५४ |
| आ नो विश्व आस्मा गमन्तु देवाः | १४१ | आशिक्षायै प्रश्निनम् | २१७० | इन्द्रस्य गौरमृगः | १९०२ |
| आ नो विश्वे सजोषसो | ५५३ | आशुक्षिष्टद्धान्तः पञ्चदशो व्योमा | १३४३ | इन्द्रस्य तृतीया | २००६ |
| आप इद् वा उ मेषजीः | ८१४ | आश्विनावधोरामौ बाह्वोः | १७३१ | इन्द्रस्य नु सुकृतं दैव्यं सहः | ७५६ |
| आपये स्वाहा | १४०५ | आसोनाय स्वाहा | १५१४ | इन्द्रस्य वज्रोऽसि मित्रावरुणयोः | १३२७ |
| आ पर्वतस्य मरुतामवांसि | २३३ | आ सुष्टी नमसा वर्तयथ्यै | २७८ | इन्द्रस्य स्यूरसीन्द्रस्य | ८४३ |
| आ पञ्च गांसि पृथिवीं वनस्पतीन् | ५६३ | आ सूर्यो अरुहच्छुकमर्णो | ३१८ | इन्द्रस्यैकादशी | २०१४, २०२७ |
| आपश्चिद्रस्मै पिन्वन्त पृथ्वीः | ४२८ | आ सूर्यो यातु सप्ताश्वः | ३१७ | इन्द्राग्निभ्यां कुम्भान् | १८४३ |
| आ पुत्रासो न मातरं विश्वत्राः | ५०३ | आस्कन्दाय सभास्थानुं | २२४९ | इन्द्राग्निभ्यां त्वा जुष्टं प्रोक्षामि | १४८७ |
| आपो मौषधीमर्तरेतस्या दिशः | ९७७ | इडया जुह्वतो वयं देवान् | ९१२ | इन्द्राग्नी मित्रावरुणादिति स्वः | ३२२ |
| आ प्र द्रव परमस्याः परावतः | ८९९ | इडायास्पदं घृतवत् सरीसृपं | ९१० | इन्द्राग्नी वृत्रहत्येषु सश्वती | ६९३ |
| आ प्र यात मरुतो विष्णो | ५१९ | इडे रन्ते हव्ये काम्ये चन्द्रे | १२४५ | इन्द्राग्न्योः पक्षतिः | २०१७ |
| आ द्रक्षन् ब्राह्मणो द्रक्षवर्चसी | १५७२ | इति चिन्नु प्रजायै पशुमत्यै | २५६ | इन्द्राग्न्यै षष्ठी | २००९ |
| आ मा पुष्टे च पोषे च | ९११ | इति स्तुतासो असथा रिशादसो | ५५० | इन्द्राबृहस्पती ऊरुभ्यां | २०३९ |
| आ यत् साकं यशसो वावशानाः | ४६९ | इदं यत् परमेष्ठिनं मनः | १०७२ | इन्द्राय त्रैष्टुभाय पञ्चदशाय | २१०४ |
| आयनाय स्वाहा | १५२४ | इदं वपुर्निवचनं जनासः | ३३२ | इन्द्राय सूकरः | १९४९ |
| आ यज्ञः पत्नीर्गमन्त्यच्छा | ४४३ | इदं विष्कन्धं सहते | १०५० | इन्द्राय खपस्याय वेहद् | १७३६ |
| अ.यमगन्तसविता क्षुरेण | ९४८ | इदं त एकं पर ऊ त एकं | ६१४ | इन्द्राय स्वाहा १४२३, १४९८, १६२४ | |
| आ यातु मित्र ऋतुभिः कल्पमानः | ९०२ | इदं देवाः शृणुत ये यज्ञिया | १०९२ | इन्द्रा याहि मे हवमिदं | ९२४ |
| आयासाय स्वाहा | २२९७ | इदमिस्था रौषं गूर्तवचा | ६२७ | इन्द्रेण युजा निः सृजन्त वाघतो | ६६० |
| आयुर्मै पाहि प्राणं मे पाहि | १३४० | इदमिन्द्र शृणुहि सोमप | १०९३ | इन्द्रेन्द्र मनुष्याः परेहि | ९०० |
| आयुर्यज्ञेन कल्पता स्वाहा | १७०६ | इदावत्सरायातीत्वरीम् | २२१७ | इन्द्रे भुजं शशमानास आशत | ७२७ |
| आ युवानः कवयो यज्ञियासो | ३७३ | इदा हि व उपस्तुतिं | ५२२ | इन्द्रो अस्मे सुमना अस्तु विश्वहा | ७५४ |
| आयुषाऽऽयुःकृता जीवायुष्मान् | ११६२ | इद्वत्सरायातिष्कद्वरीं | २२१८ | इन्द्रो नेदिष्ठमवसागमिष्ठः | ४१४ |
| आरुण्योऽजो नकुलः शक्रा | १९०० | इध्मेनाग्न इच्छमानो घृतेन | ९१७ | इन्द्रो मा मरुत्वानेतस्या दिशः | ९७९ |
| आरेऽसावस्मदस्तु हेतिः | १०५६ | इन्द्र स्वपसा बहेन | १९९२ | इन्द्रो वसुभिः परि पातु नो गयम् | ७०९ |

| | | | | | |
|----------------------------------|------|-------------------------------|------|---------------------------------|------|
| इन्द्रो विश्वैर्वीर्यैः पत्यमानः | १८४ | उत ग्ना व्यन्तु देवपत्नीः | ३२७ | उदीरय कवितमं कवीनाम् | २६२ |
| इन्द्रो वीर्येणोदक्रामत् | १००० | उत त्यजो मारुतं शर्ध आ गमद् | ३२४ | उदु त्यच्चक्षुर्महि मित्रयोराँ | ३९३ |
| इमं रथमाधि ये सप्त तस्थुः | १०१ | उत त्या मे यशसा श्वेतनायै | ८५ | उदु ष्य वः सविता सुप्रणीतयो | ५२३ |
| इमं वीरमनु हर्षध्वम् | ९५८ | उत त्या मे रौद्रावर्चिमन्ता | ६४१ | उद्गृहीताय स्वाहा | १६१६ |
| इमं वृषणं कृणुतैकमिन्नाम् | १३९६ | उत त्या मे हवमा जग्म्यातं | ३८७ | उद्गृह्णते स्वाहा | १६१५ |
| इमं स्तोमं रोदसी प्र ब्रवीमि | १७९ | उत त्ये देवी सुभगे मिथूदृशा | १६२ | उद्धर्षन्तां मघवन् वाजिनानि | १११० |
| इमं नो अग्ने अध्वरं जुषस्व | ४९९ | उत त्ये नः पर्वतासः सुशस्तयः | ३२५ | उद्बुध्यध्वं समनसः सखायः | ७६३ |
| इमं नो अग्ने अध्वरं होतः | ४२० | उत त्ये नो मरुतो मन्दसाना | ४७० | उद्बुध्यस्वाग्ने प्रतिजागृहि | ८६२ |
| इममग्न आयुषे वर्चसे नय | ११०१ | उत त्वं सूनो सहसो नो अया | ३८६ | उद्यासाय स्वाहा | २३०१ |
| इममजस्पासुभये अकृण्वत | ७२२ | उत देवा अवहितं | ८०९ | उद्गृहाताय स्वाहा | १५२९ |
| इमं महे विदध्याय शृषं | १७० | उत यावापृथिवी क्षत्रमुक | ३८० | उद्गृहाताय स्वाहा | १५२८ |
| इमां वा मित्रावरुणा सुवृक्ति | ४६५ | उत न ई त्वष्टा गन्त्वच्छा | १४५ | उन्नत ऋषभो वामनस्त | १७६३ |
| इमां च नः पृथिवीं विश्वधायाः | २१२ | उत न ई मतयोऽश्वयोगाः | १४६ | उन्नतः शितिबाहुः शितिपृष्ठः | १७६४ |
| इमानि यानि पञ्चेन्द्रियाणि | १०७३ | उत न ई मरुतो वृद्धसेनाः | १४७ | उप त्वा नमसा वयं होतः | ९२१ |
| इमा नु कं भुवना सीषधाम | ८२३ | उत न एषु नृषु श्रवो धुः | ४४१ | उपध्वस्ताः सावित्राः | १८०२ |
| इमामग्ने शरणि मीमृषो नो | ९१८ | उत नो देवावधिना शुभरूपती | ७४१ | उप नः सूनवो गिरः | ४१७ |
| इयं या परमेष्ठिनी वाग्देवी | १०७१ | उत नो देव्यदितिः | ५०९ | उप नो देवा अवसा गमन्तु | ६५ |
| इयं वेदिः परो अन्तः पृथिव्याः | १३३ | उत नो धियो गोअग्राः | ३३ | उपयामगृहीतोऽसि वृद्धरूपति० | १३०७ |
| इयं सा भूया उषसामिव क्षा | ५७२ | उत नो नक्तमपां वृषण्वसू | ७४० | उपयामगृहीतोऽसीन्द्राय त्वा | १३०० |
| इयं सा वो अस्मे दीधितिर्यजत्राः | १५० | उत नो रुद्रा चिन्मृलतामश्विना | ७४२ | उपयामगृहीतोऽस्याप्रयणो | १२९९ |
| इयं न उसा प्रथमा सुदेव्यं | ५८३ | उत नो विष्णुरुत वातो अश्विधो | ३२३ | उपयाममधेरणोष्ठेन | १९७५ |
| इयं मे नाभिरिह मे सधस्थम् | ६४५ | उत नोऽहिर्बुध्न्यो मयस्कः | १४४ | उपलान् प्लीहा | २०६४ |
| इरायै कीनाशं | २१७८ | उत नोऽहिर्बुध्न्यः शृणोतु | ३९१ | उप व एषे नमसा जिगीषा | १४३ |
| इर्यताया अकितवं | २१५० | उत माता वृद्ध दिवा शृणोतु नः | ६८५ | उप व एषे बन्धेभिः शूषैः | २४६ |
| इषाय स्वाहा | १६८७ | उत वः शंसमुशिशामिव इमसि | १६३ | उपविष्टाय स्वाहा | १५११ |
| इष्टृताहावमवतं | ७६८ | उत स्य देवः सविता भगो नः | ३९० | उपशिक्षाया अभिप्रत्रिनं | २१७१ |
| इह ब्रवीतु य ईमङ्ग वेद | १०५ | उत स्य देवो भुवनस्य सक्षणिः | १६१ | उप स्तुहि प्रथमं रत्नधेयं | २६६ |
| इहेदसाथ न परो गमाथेयो | ९०५ | उत स्य न इन्द्रो विश्वचर्षणिः | १६० | उपस्थावराभ्यो दाशं | २२२४ |
| इहैव स्त माप याताध्यस्मत् | ९५३ | उत स्य न उशिजामुर्विया कविः | ७३२ | उपास्थिताय स्वाहा | १५२३ |
| इहैव हवमा यात म इह | ८८० | उतो हि वां पूर्व्या आविविद्रे | १७३ | उप ह्वये सुदुषां धेनुमेतां | १२४ |
| ईक्षमाणाय स्वाहा | १५४२ | उत्कूलनिकूलभ्यस्त्रिष्टिनं | २२०८ | उप ह्वये सुदवं मारुतं गणं | ६०० |
| ईक्षिताय स्वाहा | १५४३ | उत्तमेभ्यः स्वाहा | ११३२ | उपावीरस्युप देवान् दैवीः | १२८६ |
| ईळते त्वामवस्यवः | ८ | उत्तरेभ्यः स्वाहा | ११३३ | उपोत्तमेभ्यः स्वाहा | ११३१ |
| ईशानाय परस्वत आलभते | १८७२ | उत्थिताय स्वाहा | १५३३ | उभाभ्यां देव सवितः | ११७५ |
| उक्ताः सञ्चराः १८०८, १८१८, १८१६ | | उत्सादेभ्यः कुब्जं | २१६३ | उभे धुरौ वह्निरापिन्दमानो | ७७३ |
| उक्षाणो बृहत्या | १७९६ | उदकाय स्वाहा | १५२४ | उरुव्यचा नो महिषः शर्म यंसद् | ८०७ |
| उक्षा समुद्रो अरुषः सुपर्णः | ३३० | उदस्य शुष्माद् भानुर्नार्ति | ४३२ | उरौ देवा अनिषाधे स्याम २७५, २२२ | |
| उग्रं वर्धते स्वाहा | १६१३ | उदानो यज्ञेन कल्पता स्वाहा | १७१० | उर्व्यै दिशे स्वाहा | १६३० |
| उत कर्षं नृषदः पुत्रमाहुः | ५७८ | उदीच्यै दिशे स्वाहा | १५८६ | उलो हलिक्ष्णो | १८९२ |

| | | | | | |
|-------------------------------------|------|-----------------------------------|------|--------------------------------------|------------|
| उवोचिथ हि मघवन् देष्णं | ४७५ | एकचैभ्यः स्वाहा | १०२६ | एह यातु वरुणः सोमो | ९५१ |
| उषसः पूर्वा अध यद् व्यूषुः | १९२ | एकविंशत्यास्तुवतैकशफाः | १४५० | ऐन्द्रः प्राणो अग्ने अग्ने निदीध्यद् | १२९१ |
| उषासानका बृहती सुपेशसा | ५९४ | एकशताय स्वाहा | १७२५ | ऐन्द्राग्नः संहितो | २०९२ |
| उषे यद्ही सुपेशसा | ८६६ | एकः सुपर्णः स समुद्रमा विवेश | ७८५ | ऐन्द्रोऽरुणो | २०९० |
| उषो मघोन्या वह | २३७ | एकस्मै स्वाहा | १७२२ | ऐभिरग्ने दुवो गिरो | ४ |
| उष्ट्रो घृणीवान् वाघ्रानसस्ते | १९४२ | एकादशभिरस्तुवत ऋतवो | १४४५ | ऐषु ष्वापृथिवी धातं महद् | ७४५ |
| ऊती देवानां वयमिन्द्रवन्तो | १२६५ | एकादशचैभ्यः स्वाहा | १०१४ | ओमानमापो मानुषीरमृक्तं | ३८४ |
| ऊर्जं गावो यवसे पीवो अत्तन | ७६० | एकानृचैभ्यः स्वाहा | १०२८ | ओमासश्चर्षणीधृतो | १ |
| ऊर्जा मित्रो वरुणः पिन्वत | १४०१ | एकाष्टका तपसा तप्यमाना | ९१३ | ओ श्रुष्टिर्विदध्या समेतु | ४८८ |
| ऊर्जाय स्वाहा | १६८८ | एकोनविंशतिः स्वाहा | १०२२ | ओषधीभ्यः स्वाहा | १६५४, १६६२ |
| ऊर्ध्वमेनमुच्छ्रयताग्निरौ | १३८२ | एष्यद्भो | १९२३ | औपद्रुष्यायानुक्षतारं | २१९६ |
| ऊर्ध्वामेनामुच्छ्रापय गिरौ | १३८१ | एतं शर्ध धाम यस्य सुरैः | ९३ | कतमस्मै स्वाहा | १५५३ |
| ऊर्ध्वयै दिशे स्वाहा | १५८८ | एतं शंसमिन्द्रास्मयुध्वं कूचित | ७४६ | कथा कविस्तुवीरवान् कया गिरा | ६७९ |
| ऊर्ध्वो अग्निः सुमतिं वस्वो अश्रेत् | ४८१ | एतं सधस्थाः परि वो ददामि | ११५० | कथा दाशेम नमसा सुदानून् | २५५ |
| ऊर्ध्वो प्रावा वसवोऽस्तु सोतरि | ७५२ | एतं जानाथ परमे व्योमन् | १२५१ | कथा देवानां कतमस्य यामनि | ६७६ |
| ऋक्षाल भिः कपिञ्जलान् | १९९६ | एतं ते देव सवितर्यज्ञं | ८३९ | कथा महे रुद्रियाय ब्रवाम | २५० |
| ऋक्षीकाभ्यो नैषादं | २१४४ | एतं मे स्तोमं तना न सूर्ये | ७४७ | कदिस्था नूः पात्रं देवयतां | ६७ |
| ऋक्षो जतुः सुषिलीका | १९२७ | एता ऐन्द्राग्नाः १७६८, १८०९, १८१९ | | कदु प्रियाय धात्रे मनामहे | ३३५ |
| ऋचं वाचं प्र पयो मनो यजुः | १३२२ | एता धियं कृणवामा सखायो | ३१४ | कद् व ऋतस्य धर्णसि | ४३ |
| ऋचा कपोतं नुदत प्रणोदम् | ८३२ | एतान्यग्ने नवतिं सहस्रा | १२३२ | कष्टृक्षरः कपृथमुद् दधातन | ७७४ |
| ऋचो अक्षरे परमे व्योमन् | १३७ | एतान्यग्ने नवतिर्नव त्वे | १२३१ | कपोत उल्लूः शशस्ते | १२३९ |
| ऋजुनीती नो वरुणो | २९ | एता वो वरम्युयता यजत्राः | १६४ | कर्णाभ्यां श्रोत्रं | १९८३ |
| ऋतधीतय आ गत | ३५१ | एताः शुनासीरीयाः | १८२७ | कर्णा यामा | १७४५ |
| ऋतये स्तेनहृदयं | २१९३ | एतो न्वय सुध्यो भवाम | ३१३ | कर्मणे ज्याकारं | २१३९ |
| ऋतस्यतेनादित्या यजत्रा | १०६६ | एदं मरुतो अरिवना | २३९ | कलविक्षो लोहिताहिः | १८९६ |
| ऋतस्य वो रथ्यः पूतदक्षान् | ४०१ | एनाङ्गूषेण वयमिन्द्रवन्तो | ५६ | कल्माषा आग्निसारुताः | १७६६ |
| ऋतस्य हि प्रसितयैरु व्यचो | ७२४ | एना व्याघ्रं परिष्वजानाः | ११४८ | कविर्चक्षा अभि भीमचष्ट | १७५ |
| ऋतुभ्यः स्वाहा | १६३७ | ऐन्द्रो बर्हिः सीदतु पिन्वतामिळा | ५९८ | कश्छन्दसां योगमा वेद धीरः | ७९० |
| ऋते स विन्दते युधः | ५२८ | एवश्छन्दो वरिवश्छन्दः | १३४८ | कस्मै स्वाहा | १५५२ |
| ऋतुभ्योऽजिनसन्धं | २२२१ | एवा कविस्तुवीरवाँ ऋतज्ञा | ६२१ | कामाय पिकः | १२४६ |
| ऋतुर्भुक्षुक्ता ऋतुर्विधतो मदः | ७४३ | एवाग्निं सहस्यं वसिष्ठो | ५०० | कामाय पूँश्चलम् | २१२१ |
| ऋभूणां भागोऽसि विश्वेषां देवानाम् | ८६० | एवा नपातो मम तस्य धीभिः | ३९२ | काय स्वाहा | १५५१ |
| ऋश्यो मयूरः सुपर्णस्ते | १९३० | एवा नो अग्ने विश्वा दशस्य | ५०५ | कायास्तुपराः | १८१२ |
| ऋषभाः ककुभे | १७९७ | एवा प्लतेः सनुरवाँधुधद् वो | ६७५ | किं स्विद्वनं क उ स वृक्ष आस | ५७४ |
| ऋषमाय गवथी | १८८६ | एष ते देव नेता | ३४९ | किमज्ञ त्वा ब्रह्मणः सोम गोपां | ४११ |
| ऋषिभ्यः स्वाहा | ११३४ | एष ते निर्ऋते भागस्तं जुषस्व | १३२३ | किम् जु वः कृणवामापरेण | १५३ |
| एक एवाग्निर्बहुधा समिद्धः | ५५६ | एषः स्तोमो मारुतं शर्धो अच्छा | २७३ | कीलालय सुराकारं | २१७९ |
| एकत्रिंशतास्तुवत प्रजाः | १४५५ | एषा वः सा सत्या संवागभूद् | १३१७ | कुर्वते स्वाहा | १५४९ |
| एकयास्तुवत प्रजा अधीयन्त | १४४० | एषामहमायुधा सं स्यामि | ११०९ | कुलीका देवजामिभ्यो | १८५४ |

| | | | | | |
|----------------------------------|------------------|-----------------------------------|------------|------------------------------------|------------------------|
| कुविदज्ञ प्रति यथा चिदस्य नः | ६८८ | क्रोष्टा मायोः | १९०१ | घृतेन सीता मधुना समज्यतां | ८५७ |
| कूजते स्वाहा | १५१८ | क्वयिः कुटर्हर्दात्यौहस्ते | १९४५ | घोषाय भषम् | २२५६ |
| कूप्याभ्यः स्वाहा | १५९८ | क्षत्राय राजन्यं | २११४ | घोषाय स्वाहा | १४२४ |
| कूर्माञ्छकैः | १९९४ | क्षिप्रदेयनाय वर्तिका | १८८७ | घ्राताय स्वाहा | १५०९ |
| कुशमाञ्छकपिण्डैः | २०५३ | क्षुदेभ्यः स्वाहा | १०२७, ११२६ | चक्रवाकौ मतरनाभ्यां | २०६१ |
| कृकवाकुः सावित्रो | १९१९ | क्षुधे यो गां विकृन्तन्तं | २२५२ | चक्षुर्यज्ञेन कल्पतां स्वाहा | १७१२ |
| कृकलासः पिप्पका शकुनिस्ते | १९५१ | क्षेमाय विमोक्तारम् | २२०७ | चक्षुषे मशकान् | १८७९ |
| कृणोमि ते प्राजापत्यम् | १०६२ | खड्गो वैश्वदेवः | १९४७ | चक्षुषे स्वाहा | १५७६ |
| कृताय स्वाहा | १५५० | खड्गो वैश्वदेवः विश्वेषां देवानां | ८७० | चतुर्दशर्चभ्यः स्वाहा | १०१७ |
| कृतायाऽऽदिनवदर्शं | २२४६ | गणपतये स्वाहा | १६७२ | चतुर्दशान्ये महिमानो अस्य | ७८८ |
| कृधी नो अहूयो देव सवितः | ७४४ | गणध्रिये स्वाहा | १६७१ | चतुष्कर्पा युवतिः सुपेशा | ७८४ |
| कृष्णप्रीव आग्नेयो रराटे | १७२९ | गणानां त्वा गणपतिं हवामहे | १३७९ | चत्वार ई बिभ्रति क्षेमयन्तो | ३३१ |
| कृष्णप्रीवः शितिकक्षो | १७५१ | गणेभ्यः स्वाहा | ११३६ | चत्वारो मा मशशोरस्य शिश्वः | ९६ |
| कृष्णप्रीवा आग्नेयाः | १७५८, १७७३, १८०० | गन्धर्वाप्सरोभ्यो ब्रातयं | २१४६ | चन्द्रमसे किलासम् | २२७८ |
| कृष्णाजिरत्पाञ्जिः | १७५२ | गन्धाय स्वाहा | १५०८ | चन्द्रमा अप्सवन्तरा | ३८ |
| कृष्णान् वर्षाभ्यो | १७८६ | गर्भं धेहि सिनीवालि | ८३८ | चन्द्रमा नक्षत्रैरुदकामत् | ९२५ |
| कृष्णाः पृषन्तज्जैयम्बकाः | १८२५ | गायत्रेण प्रति मिमीते अर्कम् | १२२ | चन्द्राय स्वाहा | १६४१, १६५९, १६७७, २२९१ |
| कृष्णा बभ्रुनीकाशाः | १८२४ | गिरा य एता युनजद्वरी त | ४६७ | चराचरेभ्यः स्वाहा | १६६५ |
| कृष्णा भौमा | १७७९ | गिरीन् ग्लाशिभिः | २०६३ | चाषान् पितेन | २०५१ |
| कृष्णा यद् गोव्वरुणीषु सीदद् | ६३० | गीताय शैलूषं | २१२४ | चित्तं मन्याभिः | १९८६ |
| कृष्णा वारुणाः | १८१० | गुहाभ्यः किरातं | २२३२ | चित्रस्ते भानुः क्रतुप्रा अभिष्टिः | ७६२ |
| कृष्णाय स्वाहा | १९६८ | गेहायोपपतिम् | २१५४ | चित्राण्यज्ञैः | २०८० |
| कृष्णो रात्र्याः | १९२६ | गोधा कालका दार्वाघाटस्ते | १९१८ | जगता सिन्धुं दिव्यस्तभायद् | १२३ |
| कृष्णोऽस्याखरेष्टाऽन्ये त्वा | १२७२ | गोभिष्ट्वा पातृषभो वृषा त्वा | ११५५ | जनो यो मित्रावरुणावभिधुग् | ९० |
| को अद्धा वेद क इह प्र वोचद् | १७४ | गोषादीर्देवानां पत्नीभ्यः | १८५३ | जयतामिव तन्यतुः | १७ |
| को ददर्श प्रथमं जायमानम् | १०२ | गौरमीमेदनु वत्सं मिषन्तं | १२६ | जरां सु गच्छ परि धत्स्व | १०४० |
| को नु वां मित्रावरुणावृतायन् | २४० | गौरीर्मिमाय सलिलानि तक्षति | १३९ | जवं जङ्घाभ्याम् | १९९७ |
| को मा ददर्श कतमः स देवो | १२०६ | ग्लौभिर्गुन्मान् | २०६६ | जवाय स्वाहा | १५३४ |
| को वः स्तोमं राधति यं जुजोषथ | ६६६ | ग्रामण्यं गणकमभिकोशकं | २२६८ | जवायाध्वपं | २१७४ |
| को वक्त्राता वसवः को वरुता | २२९ | प्रावाणः सोम नो हि कं | ४०६ | जवो यस्ते वाजिजिहितो | १३१४ |
| क्रतवे स्वाहा | १४०८, १६९७ | प्रावा वदन्नप रक्षांसि सेधतु | ५९७ | जहका वैष्णवी | १९२८ |
| क्रतुप्रावा जरिता शश्वतामवः | ७६१ | प्रीप्माय कलविह्वान् | १८३१ | जाप्रते स्वाहा | १५१७ |
| क्रतूयन्ति क्रतवो ह्रस्वु धीतयो | ६७७ | घर्मश्च मे | १४७६ | जानीत स्मैर्न परमे व्योमन् | ११५१ |
| क्रन्दते स्वाहा | १५०४ | घर्माय स्वाहा | २३१० | जाम्बलिनारण्यम् | १९९९ |
| क्राणा रुद्रा मरुतो विश्वकृष्टयो | ७९६ | घर्मा समन्ता त्रिवृतं व्यापतुः | ७८२ | जिह्वाया उत्साहम् | १९५८ |
| क्रुञ्चौ श्रोणिभ्याम् | २०३८ | घृतं रसेन | २०७२ | जीमूतान् हृदयौपशेन | २०५८ |
| क्रोषाय निसरं | २२०४ | घृतं घृतपावानः पिबत | ८४५ | जुम्बकाय स्वाहा | २०८३ |
| क्रोषाय तूणवधम् | २२६१ | घृतपृष्ठा मनोयुजो | ९ | उमया अत्र वसवो रन्त देवाः | ४८३ |

| | | | | | |
|-------------------------------------|------------|--------------------------------------|------|--|------|
| ज्यायांसमस्य यतुनस्य केतुना | ३०१ | ता नो रासन् रातिषाचो वसूनि | ४४५ | ते हि द्यावापृथिवी भूरिरेतसा | ७३१ |
| ज्योतिरसि विश्वरूपं | ८४४ | तान् पूर्वया निविदा हूमहे वयं | २१ | ते हि द्यावापृथिवी मातरा मही | ६८९ |
| ज्योतिर्यज्ञेन कल्पता स्वाहा | १७१८ | तान् यजत्रां ऋतावृधः | १० | ते हि प्रजाया अभरन्त विश्वः | ७३० |
| ज्योतिषे स्वाहा | १६७८ | तामस्य रीतिं परशोरिव प्रति | ३३८ | ते हि यज्ञेषु यज्ञियास ऊमाः | ४८४ |
| ज्योतिष्मन्तं केतुमन्तं त्रिचक्रं | ५५७ | तिग्ममेको बिभर्ति हस्त आयुधं | ५४३ | ते हि श्रेष्ठवर्चसस्त उ नः | ४०२ |
| त आदित्या आ गता सर्वतातये | ५८, ५९० | तिस्रभिरस्तुवत ब्रह्मासृज्यत | १४४१ | ते हि वसो वसवानाः | ३० |
| त ऊ षु णो महो यजत्राः | ६५३ | तिस्रो दिवतिस्रः पृथिवीः | ११५७ | तमना समस्तु हिनोत यज्ञं | ४३१ |
| तत् सु नः सविता भगः | २३८ | तिस्रो देष्ट्राय निष्कर्तारुपासते | ७८३ | त्रयस्त्रिंशतास्तुवत भूतानि | १४५६ |
| तदद्य वाचः प्रथमं मसीय | १२१० | तिस्रो मातृस्त्रीन् पितृन् बिभ्रदेकः | १०८ | त्रयस्त्रिंशद् देवतास्त्रीणि च | ११६४ |
| तदस्तु मित्रावरुणा तदग्ने ३३४, ११२० | | तिष्ठन्तीभ्यः स्वाहा | १५९५ | त्रया देवा एकादश | ८६५ |
| तदिन्वस्य परिषद्धानो अगमन् | ६३९ | तीक्ष्णीयांसः परशोरभेः | ११०८ | त्रयोदशभिरस्तुवत मासाः | १४४६ |
| तद्धि वयं वृणीमहे | ७९३ | तीर्थेभ्य आन्दं | २२२९ | त्रयोदशर्च्येभ्यः स्वाहा | १०१६ |
| तद्वन्धुः सूरिर्दिवि ते धियंधा | ६४४ | तीव्रो वो मधुमां अयं | १६६ | त्रयोविंशत्यास्तुवत क्षुद्राः | १४५१ |
| तनूध्रे वाजिन् तन्वं नयन्ती | ६१५ | तुजे नस्तने पर्वताः सन्तु | २४८ | त्रायध्वं नो अधविषाभ्यो वधात् | ११७८ |
| तन्तुना रायस्पोषेण रायस्पोषं | १३५१ | तुभ्यं पयो यत् पितरावनीतां | ७१ | त्रायन्तामिह देवाः | ८१३ |
| तन्न इन्द्रस्तद् वरुणस्तदग्निः | ६६ | तुर्यवाह उष्णिहे | १७९४ | त्रितः कूपेऽवहितो | ५४ |
| तन्न इन्द्रो वरुणो मित्रो अग्निः | ४४८ | तुलायै वाणिजं | २२३७ | त्रिपाजस्यो वृषभो विश्वरूपः | २१६ |
| तन्नो अनर्वा सविता वरुधं | ३४३ | तृचेभ्यः स्वाहा | १०२५ | त्रिरा दिवः सवितर्वायाणि | २१९ |
| तन्नो देवा यच्छत सुप्रवाचनं | ५९१ | तृतीयेभ्यः शङ्खेभ्यः स्वाहा | ११३० | त्रिरा दिवः सविता सोषवीति | २२० |
| तन्नो रायः पर्वतास्तन्न आपः | ४४६ | ते अस्मभ्यं शर्म यंसन् | ३१ | त्रिरुत्तमा दूणशा रोचनानि | २२१ |
| तन्नो धातो मयोधु वातु मेघजं | २२ | तेगान् दष्ट्राभ्यां | १९५६ | त्रिवत्सा अनुष्टुभे | १७९३ |
| तन्नोऽहिर्बुध्न्यो अद्भिरर्केः | ३७६ | ते घा राजानो अमृतस्य मन्द्राः | ७३९ | त्रिवृदसि त्रिवृते त्वा | १३५३ |
| तपन्ति शत्रुं स्वर्णं भूमा | ४४२ | तेजसेऽजपालम् | २१७७ | त्रिः सप्त सप्ता नयो महीरपो | ६८३ |
| तपसे कौलालं | २१३३ | ते ते देव नेतर्ये | ३४६ | त्रीणि शता त्री सहस्रप्यग्निर्द १३, १२६१ | |
| तपसे शूद्रं | २११६ | तेदनीमधरकण्ठेन | १९८४ | त्रीण्येक उरुगयो वि चक्रमे | ५४५ |
| तपसे स्वाहा | १६९१, २३०६ | ते न इन्द्रः पृथिवी क्षाम वर्धन् | ४०३ | त्रीक्षाकास्त्रीन्समुद्रास्त्रीन् | ११५८ |
| तपस्याय स्वाहा | १६९२ | ते नः सन्तु युजः सदा | ५६० | त्री षधस्था सिन्धवस्त्रिः कवीनाम् | २१८ |
| तप्तायनी मेऽसि वित्तायनी मे | १२८५ | ते नन्नाध्वं तेऽवत | ५५१ | त्रेतायै कल्पिनं | २२४७ |
| तप्ताय स्वाहा | २३०९ | ते नूनं नोऽयमूतये | ७९४ | त्र्यवयो गायत्र्यै | १७९० |
| तप्यते स्वाहा | २३०७ | ते नो अर्वन्तो हवनश्रुतो हवं | ६८१ | त्वं सूरौ हरितो रामयो नृन् | ७९ |
| तप्यमानाय स्वाहा | २३०८ | ते नो गोपा अपाच्याः | ५३६ | त्वं होता मनुर्हितो | १४ |
| तमसे तस्करं | २११७ | ते नो नावमुख्यत | ५१० | त्वं नो अग्ने अग्निभिः | ८२१ |
| तमीशं नं जगतस्तस्थुषस्पतिं | २३ | ते नो मित्रो वरुणो अर्यमायुः | २४१ | त्वं नो अस्या इन्द्र दुर्हणायाः | ८० |
| तं पत्नीभिरनुगच्छेम देवाः | १२४९ | ते नो रायो द्युमतो वाजवतो | ३८८ | त्वमायसं प्रति वर्तये गोः | ७५ |
| तं प्रनथा पूर्वथा विश्वयेमथा | २९४ | ते नो रुद्रः सरस्वती सजोषाः | ३८९ | त्वमिन्द्र नर्यो यौ अवो नृन् | ७८ |
| तवोतिभिः सचमाना अरिष्टा | २६७ | तेऽवदन् प्रथमा ब्रह्मकिल्बिषे | ७७५ | त्वमिन्द्र स्वयशा ऋमुक्षाः | ४७६ |
| तां वो देवाः सुमतिमूर्जयन्तीम् | २५७ | तेऽविन्दन् मनसा दीध्याना | ८३६ | त्वमीशिषे पशूनां पार्थिवानां | १०९९ |
| ता अन्तत वयुनं वीरवक्षणं | ३३६ | तेषां हि महा महतामनवर्णां | ६९४ | त्वष्टा च म इन्द्रश्च मे | १४६६ |
| ता उभौ चतुरः पदः संप्रसारय | १३८० | ते सीषपन्त जोषमा यजत्राः | ५०४ | त्वष्टा नो देव्यं वचः | १३९५ |

| | | | | | |
|----------------------------------|------------|-------------------------------------|------|-----------------------------------|------|
| त्वष्टा मे दैव्यं वचः | ९३५ | देवं वो अय सवितारमेधे | ३४० | देवो वनस्पतिर्देवमिन्द्रं | १३८७ |
| त्वष्टारं वायुमृभवो य ओहते | ७०१ | देवंदेवं वोऽवसे | ५२४ | दैवीः षड्वीरुरु नः कृणोत | १०४७ |
| त्वष्टुर्दशमी | २०२६ | देवलोक्याय पेशितारं | २१८७ | दैवी धियं मनामहे | ८४२ |
| त्वष्ट्र उष्ट्रान् | १८७६ | देवस्त्वष्टा सविता विश्वरूपः | २१० | दैव्याय धत्रे जोष्ट्रे देवश्रीः | १२५० |
| त्वष्ट्रे कौलीकान् | १८५२ | देवस्य त्वा सवितुः । अश्विनोः | १३६७ | दैव्या होतारा प्रथमा पुरोहित | ७१९ |
| त्वष्ट्रे तुरीपाय स्वाहा | १५६७ | देवस्य त्वा सवितुः प्रसवे | १२८७ | यावा नो अय पृथिवी अनागसो | ५८२ |
| त्वष्ट्रे पुरुपाय स्वाहा | १५६८ | देवस्य त्वा सवितुः । सरस्वत्यै | १३६६ | यावापृथिवी अनु मा दीर्घायां | १०९५ |
| त्वष्ट्रे स्वाहा | १५६६ | देवस्याहं सवितुः सवे | १३१५ | यावापृथिवी उर्वन्तरिक्षं | १०९१ |
| त्वां विशो वृणतां राज्याय | ८९७ | देवा अमृतोदकामस्तां | १००१ | यावापृथिवी जनयन्नभि व्रता | ७१५ |
| त्वामय ऋष आर्षेय ऋषीणां | १३७५ | देवा आज्यपा जुषाणाः | १२५६ | यावापृथिवीभ्यां स्वाहा १६४०, २३२० | |
| त्वां पूर्वं ऋषयो गीर्भिरायन् | १२३० | देवा इदस्य हविरयमायन् | १२५७ | यावापृथिवीयः कूर्मः | १९१६ |
| त्वाष्ट्री लोमशसकथौ सकथ्यो | १७३४ | देवा एतस्यामवदन्त पूर्वं | ७७८ | यावापृथिवी वर्तोभ्यां | १९६५ |
| सृक्षस्य वादिते जन्मनि व्रते | ६८० | देवाः कपोत इषितो यदिच्छन् | ८२८ | यावापृथिव्योर्दक्षिणं पार्श्वं | २०३० |
| दक्षिणायै दिशे स्वाहा | १५८२ | देवा गातुविदो ग तुं | १२३६ | यौमे पिता जनिता नाभिरत्र | ६३१ |
| दधिकां वः प्रथममश्विनोषसम् | ५०६ | देवा ददत्वासुरं तद् वो अस्तु | ११९८ | यौः शान्तिरन्तरिक्षं शान्तिः | ८७५ |
| दधिकमग्निमुषसं च देवीं | १६२ | देवा देवानां भिषजा | १२५४ | यौश्च नः पृथिवी च प्रचेतसः | ५९५ |
| दमूनसो अपसो ये सुहस्ताः | २७० | देवानां युगे प्रथमे | १२१४ | यौश्च म इदं पृथिवी च प्रचेतसौ | ११७९ |
| दश क्षिपो युजते बाहू अग्नि | २८० | देवानां समिदसि | १२४४ | यौश्च म इन्द्रश्च मे | १४७१ |
| दशर्चभ्यः स्वाहा | १०१३ | देवानां दूतः पुरुष प्रसूतो | १८८ | यौश्च मे | १४८४ |
| दिग्भ्यः स्वाहा | १६२८, २२९० | देवानां निहितं निर्धि यमिन्द्रो | ११६३ | यौष्ट्वा पिता पृथिवी माता | ११०० |
| दिग्भ्यो नकुलान् | १८६५ | देवानां नु वयं जाना | १२१२ | यौष्पितः पृथिवि मातरध्रुग् | ३९७ |
| दितिश्च मे | १४८३ | देवान् दिवमगन् यज्ञस्ततो मा | १२४६ | द्वादशर्चभ्यः स्वाहा | १०१५ |
| दित्यवाहो जगत्यै | १७२२ | देवान् वसिष्ठो अमृतान् ववन्दे | ७०६ | द्वादशारं नहि तज्जराय | १०९ |
| दिवं वृक्षाभ्यां | २०६२ | देवान् हुवे बृहच्छ्रवसः स्वस्तये | ७०७ | द्वापरायाधिकल्पिनम् | २२४८ |
| दिवक्षसो अग्निजिह्वा ऋतावृधः | ६९८ | देवानामसि वक्षितम् | १२३४ | द्वाभ्यां स्वाहा | १७२३ |
| दिवस्पृथिव्योरव आ वृणीमहे | ५८१ | देवानामिदवो महत् | ५५२ | द्वाभ्यः स्नामं | २१६५ |
| दिवा पतयते स्वाहा | १६८० | देवानामुत्क्रमणमसि | १२४२ | द्वाविमौ वातो वातः | ८१० |
| दिविस्पृशं यज्ञमस्माकमश्विना | ५२९ | देवानां पत्नीरुशतीरवन्तु नः | ३२६ | द्वा सुपर्णा सयुजा सखाया | ११८ |
| दिवे कशान् | १८६४ | देवानां भद्रा सुमतिर्ऋजूयतां | २० | द्वितीयेभ्यः शङ्खेभ्यः स्वाहा | ११२९ |
| दिवे खलति | ३२७५ | देवाः पितरः पितरो देवाः | ११५२ | द्विधा सूनवोऽसुरं स्वर्विदम् | ६१९ |
| दिवे चक्षुषे नक्षत्रेभ्यः | ११७२ | देवा यज्ञमतन्वत भेषजं | १२५२ | द्विमाता होता विदेषु सप्राड् | १९८ |
| दिवे स्वाहा १६२७, १६५७, २२८८ | | देवासो हि ष्मा मनवे समन्यवो | ५२५ | द्विरूपा अग्नीषोमीया | १७६९ |
| दिवो मादित्या रक्षन्तु ९७१, ११६९ | | देवास्त्वा मन्थिपाः प्रणयन्तु | १२४० | धर्तारो दिव ऋभवः सुहस्ता | ७१६ |
| दिशश्च म इन्द्रश्च मे | १४७४ | देवास्त्वा शुक्रपाः प्रणयन्तु | १२३९ | धर्माय सभाचरं | २१२५ |
| दिशां कङ्को | १८९४ | देवीः षड्वीरुरु नः कृणोत | ८०४ | धाता च म इन्द्रश्च मे | १४६५ |
| दिशा जत्रवो | २०५६ | देवेभ्यस्त्वा देवाभ्यं यज्ञस्य | १२४१ | धाता धातूणां भुवनस्य यस्पतिः | ८०६ |
| दिष्टाय रज्जुसजं | २१४० | देवेभ्यस्त्वा मरीचिपेभ्यः | १२३८ | धाता रातिः सवितेदं जुषन्ताम् | ९०३ |
| दुष्कृताय चरकाचार्य | २२५३ | देवैर्नो देव्यदितिर्नि पातु ६३, २३५ | | धातुर्दशमी | २०१३ |
| दूरे चित् सन्तमरुषास इन्द्रम् | ८२२ | देवो भगः सविता रायो अंशः | २६४ | धामच्छदग्निरिन्द्रो ब्रह्मा | ८६४ |

| | | | | | |
|--------------------------------------|------|---------------------------------|------|-------------------------------|------|
| धायभ्यः स्वाहा | १६०० | नर्माय पुँश्चलू५ | २२६५ | नू रोदसी अभिष्टुते वसिष्ठैः | ४८७ |
| धावते स्वाहा | १५२७ | नर्माय रेभ५ | २१२७ | नू रोदसी अहिना बुध्येन | २३४ |
| धियं वो अप्सु दधिषे स्वर्षा | ३१९ | नवदशभिरस्तुवत शूद्रायौ | १४४९ | नू सप्रानं दिव्यं नंशि देवाः | ४०४ |
| धिये समक्षिना प्रावतं न | ९३७ | नवभिरस्तुवत पितरोऽसृज्यन्त | १४४४ | नृचक्षसो अनिमिषन्तो अर्हणा | ६६४ |
| धुक्त्वा आग्नेयी | १८९५ | नवर्चैभ्यः स्वाहा | १०१२ | नृताय सूतं | २१२३ |
| धूमाय स्वाहा | १६०५ | नवविंशत्यास्तुवत वनस्पतयो | १४५४ | नेतार ऊ षु णस्तिरो | ७९७ |
| धूम्रा आन्तरिक्षा | १७८० | न वि जानामि यदिवेदमस्मि | १३५ | नैतावदेना परो अन्यदास्ति | ५७५ |
| धूम्रान् वसन्तायालभते | १७८४ | न वो गुहा चक्रेम भूरि दुष्कृतं | ७५७ | पञ्च जना मम होत्रं जुषन्तां | १२११ |
| धूम्रा बभूवोऽकाशाः | १८२२ | नव्यं तदुक्थ्यं हितं | ४९ | पञ्चदशभिरस्तुवत क्षत्रम् | १४४७ |
| धृतव्रता आदित्या इषिरा | १५१ | न हि वो अस्त्यर्भको | ५४९ | पञ्चदशर्चैभ्यः स्वाहा | १०१८ |
| धृतव्रताः क्षत्रिया यज्ञनिष्कृतो | ७१४ | नाके राजन् प्रति तिष्ठ तत्र | ११५४ | पञ्चपादं पितरं द्वादशाकृतिं | ११० |
| धेनवोऽतिच्छन्दसे | १७९९ | नाक्रो मकरः कुलीपयः | १९२१ | पञ्चभिरस्तुवत भूतान्यसृज्यन्त | १४४२ |
| धैर्याय तक्षणम् | २१३२ | नाना चक्राते यम्या वपुंषि | २०२ | पञ्चर्चैभ्यः स्वाहा | १००८ |
| नक्षत्रमुल्काभिहतं शमस्तु नः | १०७७ | नाभ्यै स्वाहा | २२९५ | पञ्चारे चक्रे परिवर्तमाने | १११ |
| नक्षत्राणि च म इन्द्रश्च मे | १४७३ | नारकाय वीरहृणं | २११८ | पञ्चावयस्त्रिष्टुभे | १७९१ |
| नक्षत्राणि रूपेण | २०८१ | न वा न क्षोदः प्रदिशः पृथिव्याः | ६२० | पञ्चविंशत्यास्तुवतारण्याः | १४५२ |
| नक्षत्रिभ्यः स्वाहा | १६३३ | नासत्या मे पितरा बन्धुपृच्छा | १८५ | पत्नीव पूर्वहृतिं वावृधया | ८३ |
| नक्षत्रेभ्यः किमिरं | २२७७ | नित्यश्चाकन्यात् स्वपतिर्दमूना | ५७१ | पथ एकः पीपाय तस्करो | ५४४ |
| नक्षत्रेभ्यः स्वाहा १६३२, १६६०, २२९२ | | निमेषाय स्वाहा | १५४५ | पथस्पथः परिपतिं वचस्या | ३७० |
| नक्षत्रवमरुणीः पूर्व्यं राट् | ६९ | निराहावान् कृणोतन | ७६७ | पथ्या रेवतीर्बहुधा विरूपाः | ९०१ |
| नङ्गलाभ्यः शौक्लं | २२२६ | निर्ऋतिं निर्जेर्जल्येन | १९८८ | पदे इव निहिते दस्मे अन्तः | २०६ |
| न तमंहो न दुरितं | ७९२ | निर्ऋत्यै कोशकारी | २२११ | पदेपदे मे जरिमा नि धायि | २५४ |
| न तद् दिवा न पृथिव्यान् मन्ये | ४०९ | निर्ऋत्यै पञ्चमी | २०२१ | पथा वस्ते पुरुषा वपुंषि | २०५ |
| न ता मिनन्ति मायिनो न धीराः | २१४ | निर्ऋत्यै परिविविदानम् | २१५६ | पन्थानं ब्रूभ्यां | १९६४ |
| नदीभ्यः पौञ्जिष्ठम् | २१४३ | निविष्टाय स्वाहा | १५१० | परः सो अस्तु तन्वा तना च | १२०३ |
| न बहवः समशकन् | ८८५ | नि वेवेति पालितो दूत आसु | २०० | परमेष्ठयभिधीतः प्रजापतिः | १३०८ |
| नम उदर्येण | २०६० | विवेधं मूर्ध्ना | १९७९ | परावतो ये दिधिषन्त आयं | ६६१ |
| नभसे स्वाहा | १६८५ | निषण्णाय स्वाहा | १५३२ | परिक्षिता पितरा पूर्वजावरी | ६२९ |
| नमस्याय स्वाहा | १६८६ | निष्कृत्यै पेशस्कारी५ | २१५८ | परि चिन्मतो ब्रविणं ममन्याद् | ५६९ |
| नभोरूपाः पार्जन्याः १७४७, १७६२ | | निष्कृत्यै स्वाहा | २३११ | परि दध इन्द्रस्य बाहू | ९६१ |
| नम इदुग्रं नम आ विवासे | ४०० | निष्विध्वरीस्त ओषधीरुतापो | २१३ | परि धत्त धत्त नो वर्चसेमं | १०३२ |
| नमो दिवे बृहते रोदसीभ्यां | १२६४ | नीचैः पयन्तामधरे भवन्तु | ११०७ | परिप्लवेभ्यः स्वाहा | १६६४ |
| नमो देवेभ्यः | १२३५ | नीलहोः कृमिः | १८८८ | परिवत्सरायाविजाताम् | २२१६ |
| नमो महद्भ्यो अर्भकेभ्यो नमो | ११९९ | नीलनखेभ्यः स्वाहा | ११२४ | परीदं वासो अधिधाः स्वस्तये | १०४१ |
| नमो वः पितरो रसाय | १२७७ | नीहारमूष्मणा | २०७५ | परीमं सोममायुषे महे | १०३८ |
| नमोऽस्तु ते निर्ऋते तिमतेजो | ११८२ | नीहाराय स्वाहा | १६२१ | परीममिन्द्रमायुषे महे | १०३७ |
| नरा वा शंसं पूषणमगोष्ठम् | ६७८ | नू देवासो वरिवः कर्तना नो | ५०७ | परीमे गामनेषत | ८२२ |
| नराशंसं वाजिनं वाजयन्निह | ६० | नू नो रथिं रथ्यं चर्षणिप्रां | ३७७ | पर्जन्यवाता वृषभा पृथिव्याः | ३६८ |
| नरिष्ठाय भीमलं | २१२६ | नू म आ वाचमुप याहि विद्वान् | ३६२ | पर्जन्याय मण्डकान् | १८३७ |

| | | | | | |
|-----------------------------------|------|----------------------------------|------------------|-------------------------------------|------|
| पर्जन्यावाता वृषभा पुरीषिणा | ७०० | पूर्वा देवा भवतु सुन्वतो रथो | १२०१ | प्रजापतिर्मा प्रजननवान्सह | ९८० |
| पर्यायिकेभ्यः स्वाहा | ११२७ | पूषणं वनिष्ठुना | २०४३ | प्रज्ञानाय नक्षत्रदर्शम् | २१६२ |
| पर्वतेभ्यः किम्पूरुषम् | २२३४ | पूषणं दोभ्याम् | २००१ | प्र तद् दुःशीमे पृथवानं वेने | ७४९ |
| पवमानः पुनातु मा कृत्वे | ११७४ | पूषा च म इन्द्रश्च मे | १४६१ | प्र तव्यसो नमउर्कित तुरस्य | २८५ |
| पवित्राय भिषजं | २१६८ | पूषा पश्चाक्षरेण पद्म दिशः | १३२० | प्रति नः स्तोमं त्वष्टा जुषत | ४४४ |
| पवित्रे स्थो वैष्णव्यौ सवितुर्वः | १२७० | पूषा विष्णुर्हवनं मे सरस्वति | ५५४ | प्रतिपदसि प्रतिपदे त्वा | १३५२ |
| पश्चादोषाय ग्लाविनं | २२३८ | पूष्णे नरन्धिषाय स्वाहा | १५६५ | प्रति प्रयाणमसुरस्य विद्वान् | ३४१ |
| पश्चा यत् पश्चा वियुता बुधन्त | ६३८ | पूष्णे प्रपथ्याय स्वाहा | १५६४ | प्रति मे स्तोममदितिर्जगृभ्यान् | २६१ |
| पष्ठवाहो विराजः | १७९५ | पूष्णे स्वाहा | १४२१, १५६३ | प्रतिश्रुत्काया अर्तनं | २२५५ |
| पाकः पृच्छामि मनसाविजानन् | १०३ | पूष्णो नवमी | २०२५ | प्रतिश्रुत्कायै चक्रवाकः | १९०४ |
| पातं न इन्द्रापूर्षणा | ९३२ | पृच्छामि त्वा परमन्तं पृथिव्याः | १३२ | प्रतीच्यै दिशे स्वाहा | १५८४ |
| पातां नो देवाश्विना शुभस्पती | ९३४ | पृथक्सहस्राभ्यां स्वाहा | ११३९ | प्रत्यश्चमर्कमनयञ्छर्चाभिः | ८२७ |
| पातां नो द्यावापृथिवी अभिष्टये | ९३३ | पृथिवी च म इन्द्रश्च मे | १४६९ | प्रथमभाजं यशसं वयोधां | ३७१ |
| पाप्मने क्लीषम् | २११९ | पृथिवी च मे | १४८१ | प्रथमा ह व्युवास सा धेनुः | ९०८ |
| पाप्मने सैलगम् | २२५४ | पृथिवी छन्दोऽन्तरिक्षं छन्दो | १३४२ | प्रथमेभ्यः स्वाहा | ११२८ |
| पाराय मार्गारम् | २२२७ | पृथिवीं त्वचा | २०८२ | प्रथश्च यस्य सप्रथश्च नाम | ८३४ |
| पार्या इक्षवः | १९७२ | पृथिवी शान्तिरन्तरिक्षं शान्तिः | १०८२ | प्रथिष्ठ यस्य वीरकर्ममिष्णद् | ६३१ |
| पार्याणि पक्ष्माणि | १९६९ | पृथिव्यै पीठसर्पिणं | २२७२ | प्रदरान् पायुना | २०५२ |
| पार्श्वं विश्वेषां देवानामुत्तरम् | ८७१ | पृथिव्यै श्रोत्राय वनस्पतिभ्यो | ११७० | प्र नः पूषा चरधं विश्वदेव्यो | ७३३ |
| पावीरवी कन्या चित्रायुः | ३६९ | पृथिव्यै स्वाहा | १६२५, १६५५, २२८४ | प्र नु यदेषां महिना चिकित्रे | १४८ |
| पावीरवी तन्यतुरेकपादजो | ७०४ | पृथ्व्यो मारुताः | १८०५, १८११ | प्र नो यच्छत्वर्थमा | ८१७ |
| पिता यत् स्वां दुहितरमधिष्कन् | ६३३ | पृथ्विस्तिरश्चीनपृथ्विः | १७४८ | प्र पस्त्यामदिति सिन्धुमर्कैः | २३१ |
| पिद्वो न्यङ्कुः ककटस्ते | १९०३ | पृथ्वी क्षुद्रपृथ्वी स्थूलपृथ्वी | १७४२ | प्रप्रोथाय स्वाहा | १५०७ |
| पिपर्तु मा तदृतस्य प्रवाचनं | ५८७ | पृथ्वी हेमन्ताय | १७८८ | प्रवुद्धाय स्वाहा | १५१९ |
| पिशङ्गाञ्छिशिरीय | १७८९ | पृथ्वी मरुतः पृथ्वीमातरः | २५ | प्र ब्रह्माणा अङ्गिरसो नक्षन्त | ४९५ |
| पिशाचेभ्यो बिदलकारी | २१५१ | पृथ्वी यज्ञेन कल्पता स्वाहा | १७२० | प्र ब्रह्मैतु सदनादृतस्य | ४६४ |
| पुनः प्राणः पुनरात्मा न ऐतु | ११८० | पृथ्वी श्यामः | २०८७ | प्रभाया अनर्थेधं | २१८४ |
| पुनन्तु मा देवजनाः | ११७३ | पृथ्वी रजतनाभी | २०९७ | प्र भ्रातृत्व सुदानवो | ५६६ |
| पुनर्दीय ब्रह्मजायां | ७८१ | प्रकामाय रजयित्रीम् | २१९२ | प्रमदे कुमारीपुत्रं | २१३० |
| पुनर्नः पितरो मनो | ६२५ | प्रकामोद्यायोपसदं | २१६० | प्र मा युयुञ्जे प्रयुजो जनानां | ५७९ |
| पुनर्वै देवा अददुः | ७८० | प्रकाशेनान्तरम् | १९७७ | प्रमुञ्चन्तो भुवनस्य रेतो | ८८८ |
| पुमांसं पुत्रं जनय | १०६० | प्रजा रेतसा | २०५० | प्रमुदे वामनं | २१६४ |
| पुरा यत् सूरस्तमसो अर्पतिः | ७६ | प्रजानन्तः प्रति गुरुन्तु पूर्वे | ८९१ | प्र मे विविक्वाँ अविदन्मनाषां | २२३ |
| पुरुषमृगश्चन्द्रमसो | १९१७ | प्रजापतये च वायवे च | १८८१ | प्र यज्ञ एतु हेत्वो न ससिः | ५०२ |
| पुरुषभ्याप्राय दुर्मदं | २१४५ | प्रजापतये त्वा जुष्टं प्रोक्षामि | १४८६ | प्र याः सिस्त्रते सूर्यस्य रश्मिभिः | ५८४ |
| पुष्करसादस्ते त्वाष्ट्रा | १८९७ | प्रजापतये पुरुषान् हस्तिनः | १८७७ | प्रयाजान् मे अनुयाजोश्च केवलान् | १२०९ |
| पुष्टये गोपालं | २१७५ | प्रजापतये स्वाहा | १७०५ | प्रयुग्मभ्य उन्मत्त | २१४७ |
| पुष्टेभ्यः स्वाहा | १६५२ | प्रजापतिं ते प्रजननवन्तमृच्छन्तु | २९० | प्रयुज्यती दिव एति भुवाणा | ३२८ |
| पूताय स्वाहा | २२९६ | प्रजापतिः प्रजाभिदकामात् | १००२ | प्र ये धामानि पूर्वाण्यर्चान् | २३० |

| | | | | | |
|----------------------------------|------|-----------------------------------|------------|------------------------------------|------------------|
| प्र ये वसुभ्य ईवदा नमो दुः | ३४४ | प्रियाय प्रियवादिनम् | २१९९ | बृहस्पतये स्वाहा | १४२२, १४९९ |
| प्र रुद्रेण ययिना यन्ति सिन्धवः | ७२५ | प्रीणीताश्चान् हितं जयाथ | ७६९ | बृहस्पतिꣳ शकुनिसादेन | १९९३ |
| प्र व एको मिमय भूर्यागो | १५५ | पुष्णते स्वाहा | १६१७ | बृहस्पतिनावसृष्टां० । तेजो गोषु | ११९१ |
| प्र व एते सुयुजो यामक्षिष्ठये | २९७ | पुष्वा अश्रुभिः | २०७७ | बृहस्पतिनावसृष्टां० । पयो गोषु | ११९४ |
| प्र वः पान्तं रघुमन्यवोऽन्धो | ८२ | पुष्वाभ्यः स्वाहा | १६१९ | बृहस्पतिनावसृष्टां० । भगो गोषु | ११९२ |
| प्र वः शंसाम्यद्रुहः | ५२६ | प्रेतं पादौ प्र स्फुरतं | ८८६ | बृहस्पतिनावसृष्टां० । यशो गोषु | ११९३ |
| प्र वायुमच्छा बृहती मनीषा | ३६६ | प्रेता जयता नर उग्रा वः | ११११ | बृहस्पतिनावसृष्टां० । रसो गोषु | ११९५ |
| प्र वावृजे सुप्रया बर्हिरेषाम् | ४८२ | प्रेष्ठ वो अतिथिं गृणीषे | १४२ | बृहस्पतिनावसृष्टां० । वर्चो गोषु | ११९० |
| प्र वीराय प्र तवसे तुराय | ३७४ | प्रेहि प्रेहि पथिभिः पूर्व्येभिः | १२६७ | बृहस्पतिं ते विश्वदेववन्तमृच्छन्तु | ९९१ |
| प्र वो भ्रियन्त इन्द्रवो | ७ | प्रेतु ब्रह्मणस्पतिः प्र देव्येतु | १२६३ | बृहस्पतिर्मा विश्वेदैवैरुर्वायाः | ९८१ |
| प्र वो महीमरमतिं कृणुध्वं | ४७१ | प्रेषः स्तोमः पृथिवीमन्तरिक्षं | २७४ | बृहस्पतिश्च म इन्द्रश्च मे | १४६२ |
| प्र वो यज्ञेषु देवयन्तो अर्चन् | ५०१ | प्रो अधिनाववसे कृणुध्वं | १४९ | बृहस्पते प्रति मे देवतामिहि | १२२२ |
| प्र वो रयि युक्ताश्च भरध्वं | २४४ | प्रातये वरुणं मित्रमिन्द्रं | ३६१ | बृहस्पतेरष्टमी | २०११ |
| प्र वो वायुं रथयुजं कृणुध्वं | २४५ | प्रेथते स्वाहा | १५०६ | बृहस्पते वाजं जय बृहस्पतये | १३१६ |
| प्र वो वायुं रथयुजं पुरंधि | ६८२ | प्राणमाणः सोम आगतो | १३१० | बृहस्पते सदमित्रः सुगं कृधि | ६१ |
| प्र शंतमा वरुणं दीधिति गीः | २६० | प्लवो मद्रुर्मस्यस्ते नदीपतये | १९१५ | ब्रह्मस्य विष्टपायामिषेकारं | २१८५ |
| प्र शुक्रैतु देवी मनीषा | ४२६ | प्लाहाकर्णेः शुण्ठाकर्णो | १७५० | ब्रह्म गामध्वं जनयन्त ओषधीः | ७०२ |
| प्र सक्ष्णो दिव्यः कण्वहोता | २४३ | फलेभ्यः स्वाहा | १६५३ | ब्रह्मचारी चरति वेविषद विषः | ७७९ |
| प्र स क्षयं तिरते वि महीरिषो | ५२७ | फलूर्लोहितोर्णां पलक्षी | १७४९ | ब्रह्मज्येष्ठा संभृता वीर्याणि | ११४१ |
| प्रसवाय स्वाहा | १६९५ | खलस्य नीथा वि पणेश्व मन्महे | ७२३ | ब्रह्मणस्पतिरेता सं कर्मारः | १२१३ |
| प्र स विश्वेभिरग्निभिः | १४०३ | बभ्रवः सौम्याः | १७७४, १८०१ | ब्रह्मणे ब्राह्मणं | २११३ |
| प्र सुष्टुतिः स्तनयन्तं रुवन्तम् | २७२ | बभ्रवो धूमनीकाशाः | १८२३ | ब्रह्मणे स्वाहा | १०३५, ११४०, २३१७ |
| प्र सू न एत्वध्वरो | ५१४ | बभ्रुकानवान्तरदिशाभ्यः | १८६६ | ब्रह्म प्रजापतिर्धाता लोका | १०८० |
| प्र सू महे सुशरणाय मेधां | २७१ | बभ्रुररणबभ्रुः शुक्रबभ्रुः | १७३९ | ब्रह्म ब्रह्मचारिभिरुदकामत् | ९९९ |
| प्रान्यै दिशे स्वाहा | १५८० | बभ्रुरेको विषुण सूनरो | ५३९ | ब्रह्महत्यायै स्वाहा | २३१८ |
| प्राजापत्यश्चरुः | २१०९ | बभ्रुः सौम्यः | २०८६ | ब्रह्मा कृणाति वरुणो | ५२ |
| प्राजापत्याभ्यां स्वाहा | १०३२ | बलं कृष्टाभ्याम् | २०४२ | ब्रह्मा यज्ञेन कल्पताꣳ स्वाहा | १७१७ |
| प्राणश्च मे | १४७९ | बलाय स्वाहा | १५३५ | ब्राह्मणमय विदेयं पितृमन्तं | १३०५ |
| प्राणाय मे वर्चोदा वर्चसे | १३०२ | बलायाजगरो | १९३७ | ब्राह्मणासः पितरः सोम्यासः | १३८८ |
| प्राणाय स्वाहा | १५७३ | बलायानुचरं | २१२७ | भगाय स्वाहा | १४२७ |
| प्राणाय स्वाहाऽपानाय स्वाहा | १३७८ | बलायोपदाम् | २१६२ | भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवाः | २६ |
| प्राणायान्तरिक्षाय वयोभ्यो | ११७१ | बहुरूपा वैश्वकर्मणाः | १८२१ | भद्राय गृहपꣳ | २१८० |
| प्राणेनाग्निं सं सृजति वातः | ११६१ | बहुरूपा वैश्वदेवाः | १८०६ | भराय सु भरत भागमृत्विजं | ७५२ |
| प्राणो यज्ञेन कल्पताꣳ स्वाहा | १७०७ | बीभत्सायै पौत्कसं | २२३५ | भरेधिन्द्रं सुहवं हवामहे | ६६९ |
| प्रातरग्निं प्रातरिन्द्रं हवामहे | ४९४ | बृहद् वयो बृहते तुभ्यमग्ने | २९१ | भर्गो ह नामोत यस्य देवाः | ६४० |
| प्रायणाय स्वाहा | १५२५ | बृहन्तो दिव्याः | १७८१ | मायै दार्वाहारम् | २१८३ |
| प्रायश्चित्त्यै स्वाहा | २३१२ | बृहस्पतये गवयान् | १८७५ | भुज्युमंहसः पिपृथो निरक्षिना | ७०३ |
| प्रायासाय स्वाहा | २२९८ | बृहस्पतये पाङ्क्ताय | २१०७ | भुवनस्य पतये स्वाहा | १४१५, १७०३ |
| प्रागृक्षा माहेन्द्रा | १८९० | बृहस्पतये वाचस्पतये | २९१३ | भुवनस्य पितरं गीर्भिरामिः | ३७२ |

| | | | | | |
|-------------------------------------|------|------------------------------------|------------|---------------------------------|------|
| भूतो भूतेषु पय आ दधाति | ११४२ | मरुताः सप्तमी | २०१० | मा वः प्राणं मा वोऽपानं | ११६० |
| भूत्यै जागरणम् | २२४० | मरुताः स्कन्धा | २०३२ | मासां कश्यपो | १९३२ |
| भूमिर्मातावितिनो जनित्रं | ११८८ | मरुत्वतो अप्रतीतस्य जिष्णोः | २६५ | मा सा ते अस्मत् सुमतिर्वि | ८१ |
| भूमे परिष्कन्दं | २१९८ | मरुद्भ्यः क्रीडिभ्यः | १८१६ | मासेभ्यः स्वाहा | १६३६ |
| भूम्या अन्तं पर्येके चरन्ति | ७९१ | मरुद्भ्यः सान्तपनेभ्यः | १८१४ | मासेभ्यो दास्यौहान् | १८५९ |
| भूम्या आख्नालभते | १८६२ | मरुद्भ्यः स्वतवद्भ्यो | १८१७ | माहं मघोनो वरुण प्रियस्य | १५७ |
| भूर्जज्ञ उत्तानपदो | १२१५ | मरुद्भ्यः स्वाहा | १६४७ | मित्रः पृथिव्योदक्रामत् | ९९२ |
| भूर्भुवः स्वयौरिव भूत्रा | १२७८ | मरुद्भ्यो गृहमेधिभ्यो | १८१५ | मित्रश्च म इन्द्रश्च मे | १४६३ |
| भेषजाय स्वाहा | २३१३ | मरुद्भ्यो वैश्यं | २११५ | मित्रश्च वरुणश्चन्द्रो रुद्रश्च | १११४ |
| मक्षू कनायाः सख्यं नवग्वा | ६३६ | मर्माणि ते वर्मणा छादयामि | ११४९ | मित्रस्तन्नो वरुणो रोदसी च | ४८९ |
| मक्षू कनायाः सख्यं नवीयो | ६३७ | मर्यादायै प्रश्नविवाकम् | २१७२ | मित्रस्य तृतीया | २०१९ |
| मक्षू न वह्निः प्रजाया उपाब्दिः | ६३५ | मलिम्लुचाय स्वाहा | १६७९ | मित्राय कुलीपयान् | १८३९ |
| मङ्गलिकेभ्यः स्वाहा | १०३४ | मशकान् कैशैः | १९९१ | मित्राय गौरान् | १८७३ |
| मण्डूको मूषिका तित्तिरस्ते | १९२४ | महत्काण्डाय स्वाहा | १०२४ | मित्राय मङ्गून् | १८४४ |
| मधवे स्वाहा | १६८१ | महत् तद् वः कवयश्चारु नाम | १८६ | मित्राय शिक्ष वरुणाय दाशुषे | ६९६ |
| मधु नक्तमुतोषसो | ३५ | महदथ महतामा ऋणमहे | ६०४ | मित्राय स्वाहा | १५०० |
| मधुमतीर्न इषस्कृधि यत् ते | १२९५ | महसे वाणावादं | २२६० | मित्रावरुणाभ्यां कपोतान् | १८५० |
| मधुमाक्षो वनस्पतिः | ३६ | महागणेभ्यः स्वाहा | ११३७ | मित्रावरुणाभ्यां त्वा देवाव्यं | १३०१ |
| मधु वाता ऋतायते | ३४ | महि द्यावापृथिवी भूतमुर्वी | ७३६ | मित्रावरुणाभ्यामानुष्टुभाभ्यां | २१०६ |
| मथ्या यत् कर्त्तव्यमभवद्भीके | ६३२ | महि महे दिवे अर्चा पृथिव्यै | १७१ | मित्रावरुणावगाभ्याम् | २०४० |
| मनसा होमैर्हरसा धृतेन | ११७७ | महिम्न एषां पितरश्चनेशिरे | ६१७ | मित्रो नवाक्षरेण त्रिवृतः | १३२१ |
| मनसे स्वाहा | १५७९ | मही समैरश्म्या समीची | २११ | मित्र्यक्ष येषु रोदसी नु देवी | ३८२ |
| मनस्त आप्यायतां वाक्त | १२८८ | महो अग्नेः समिधानस्य शर्मणि | ६०५ | मुग्धाय वैनः शिनाय स्वाहा | १४१२ |
| मनुष्यराजाय मर्कटः | १८८४ | मह्यं यजन्तां मम यानीष्टा | १०४५ | मूर्धा वयः प्रजापतिश्छन्दः | १३३८ |
| मनुष्यलोकाय प्रकरितारः | २१८८ | मह्यं यजन्तु मम यानि हव्या | ८०३ | मूर्धे स्वाहा | १६९९ |
| मनो जूतिर्जुषतामाज्यस्य | ८४० | मागधः पुंश्चली कितवः | २२८२ | मूलेभ्यः स्वाहा | १६४९ |
| मनो न येषु हवनेषु तिग्मं | ६२९ | मा छन्दः प्रमा छन्दः प्रतिमा छन्दः | १३४१ | मृत्यवे गोव्यच्छम् | २२५० |
| मनो न्धा हुवामहे | ६२३ | माता च यत्र दुहिता च धेनू | २०३ | मृत्यवे मृगयुम् | २१४१ |
| मनो यज्ञेन कल्पताः स्वाहा | १७१५ | माता पितरमृत आ बभ्राज | १०६ | मृत्यवेऽसितः | १९३४ |
| मन्दामहे दशतयस्य धासेः | ९४ | मातुष्पदे परमे शुक्र आयोः | २९० | मृत्यवे स्वाहा | २३१६ |
| मन्द्रा कृणुष्वं धिय आ तनुष्वं | ७६४ | मात्र पूषन्नाष्टुण इरस्यो | ४९३ | मदं बर्सेः | १९५५ |
| मन्यवेऽयस्तापं | २२०३ | माघवाय स्वाहा | १६८२ | मेघाय स्वाहा | १६०७ |
| ममपु नः परिज्मा वसर्हा | ८४ | मा नो विदन् विव्याधिनो | १०५२ | मेदस्वता यजमानाः | १०६७ |
| मम देवा विहवे सन्तु सर्वे ८०१, १०४४ | | मा नो वृकाय वृक्ये समस्मा | ३९८ | मेधां मे वरुणो ददातु | १३८९ |
| ममामे वचो विहवेष्वास्तु | ८०० | मा देवा दधिरे हव्यवाहम् | ६११ | मेघाय वासः पल्पूली | २१९१ |
| ममि देवा इविणमा यजन्तां ८०२, १०४६ | | मा प्र गाम पथो वयं | ६२१ | मेघायै रथकारं | २१३१ |
| मयुः प्राजापत्यः | १८९१ | मायायै कर्मारः | २१३४ | मो षु देवा अदः स्वः | ४० |
| मरीचिर्बिभ्रुभिः | २०७४ | मास्तः कल्माषः | २०९१, २०९९ | मो षू णो अत्र जुहुरन्त देवाः | १९३ |
| मरुतश्च म इन्द्रश्च मे | १४६७ | मा व एनो अन्यकृतं भुजेम | ३९९ | य ई चकार न सो अस्य वेद | १३० |

| | | | | | |
|------------------------------------|------|--------------------------------|------------|-------------------------------------|----------|
| य ईश्वरे भुवनस्य प्रचेतसो | ६६८ | यथेन्द्र उद्धाचनं लब्ध्वा | ९३० | या आपो दिव्याः पयसा | ११४६ |
| य ईशे पशुपतिः पशूनां | ८८७ | यथेमां वाचं कल्याणीमावदानि | १३८५ | यां आवह उशतो देव | ८४९ |
| य उदाजन् पितरो गोमयं वसु | ६५५ | यदात्ति तस्मै स्वाहा | १५४६ | या गुह्यार्था सिनीवाली | १२६६ |
| य ऋतेन सूर्यमारोहयन् दिवि | ६५६ | यदद्य सूर उदिते | ५३२ | या गौर्यैर्तेनि पर्येति निष्कृतं | ६९७ |
| य ओहते रक्षमो देववीती | २६९ | यदद्य सूर्य उद्यति | ५३० | या जामयो वृष्ण इच्छन्ति शक्तिं | २२५ |
| यः सपत्नो योऽमपत्नो | १०५५ | यदन्तरिक्षं पृथिवीमुत द्यां | ११८७ | यातुधाना निर्ऋतिरादु रक्षस्ते | ९६३ |
| यच्छलमलौ भवति यज्ञदीपु | ५०८ | यदन्यासु वृषभो रोरवीति | २०८ | यातुधानेभ्यः कण्टकीकारीम् | २१५२ |
| यजन्ते अस्य सख्यं वयश्च | ४६८ | यदसावमुतो देवाः | ९२५ | या ते अग्ने पर्वतस्येव धारा | २२८ |
| यज्ञं च नस्तन्वं च प्रजां च | ८१४ | यदापो अघ्न्या इति वरुणेति | १३७० | या ते जिह्वा मधुमती सुमेधा | २२७ |
| यज्ञं पृच्छाम्यवमं | ४१ | यदा वीरस्य रेवतो दुरोणे | ४९८ | यादसे शाबल्यां | २२६७ |
| यज्ञस्य वो रथ्यं विस्पतिं विशां | ७२१ | यदि नो गां हंसि | १०५१ | यादगेव ददशे तादृगुच्यते | २२९ |
| यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवाः | १२०२ | यदि प्रेयुर्देवपुरा ब्रह्म | ९२८ | यानसावतिसरांश्चकार | ९२९ |
| यज्ञेयज्ञे स मर्त्यो | ७३७ | यदुल्लूको वदति मोघमेतद् | ८३१ | यानि कानि चिच्छान्तानि | १०८१ |
| यज्ञो दक्षिणाभिरुक्षामत् | ९९७ | यद् गायत्रे अधि गायत्रमाहितं | १२१ | यानि चकार भुवनस्य यस्पतिः | १००४ |
| यज्ञो देवानां प्रत्येति सुम्नम् | ६४ | यद् ग्रामे यदरण्ये यत् सभायां | १३६९ | यानि भद्राणि बीजानि | १०६१ |
| यज्ञो यज्ञेन कल्पतां स्वाहा | १७२१ | यद्देवा अदः सलिले | १२१७ | यां मे धियं मरुत इन्द्र देवाः | ६८७ |
| यते स्वाहा | १५२६ | यद्देवा देवहेडनं देवासः | १०६५, १२५३ | यावच्चतस्रः प्रदिशश्चक्षुः | १११७ |
| यत् किं चासौ मनसा यच्च | ९६२ | यद्देवापिः शतनवे पुरोहितो | १२२८ | यासां द्यौः पिता पृथिवी माता | १०६३ |
| यत् ते तन्मन्त्रं यन्त देवाः | १००५ | यद्देवा यतयो यथा | १२१८ | युक्ता म.ताऽऽसीद् धुरि दक्षिणायाः | १०७ |
| यत् ते देवीं निर्ऋतिरावन्ध | ११८१ | यद् वाभिपित्वे असुरा ऋतं यते | ५३१ | युक्त्वा ह्यरुषी रथे | १५ |
| यत् ते वर्चो जातवेदो | १११६ | यं त्वा देवापिः शुशुचानो अग्ने | १२२९ | युनक्त सीरा वि युगा तनुभवं | ७६५ |
| यत् पिबति तस्मै स्वाहा | १५४७ | यं देवासोऽवथ वाज्रमाता | ५९३, ६७४ | युवोर्ऋतं रोदसी सत्यमस्तु | १७२ |
| यत् पुरुषेण हविषा देवाः | १२५८ | यज्ञ इन्द्रो अखनद् यदग्निः | १०६८ | युवोर्ऋदि सख्यायास्ते | ६५१ |
| यत्र बाणाः सम्पतन्ति | १३६४ | यन्मूर्त्रं करोति तस्मै स्वाहा | १५४८ | यूयं विश्वं परि पाथ | ७९५ |
| यत्र ब्रह्मविदो० । आपो मा तत्र | १०८९ | यममो पुरोदधिरे | ९२७ | यूयं ह रतनं मघवत्सु धत्थ | ४७४ |
| यत्र ब्रह्मविदो० । इन्द्रो मा तत्र | १०८८ | यमस्य त्रयोदशी | २०१६ | यूयं हि द्या सुदानवः | ४०७, ५६७ |
| यत्र ब्रह्मविदो० । चन्द्रो मा तत्र | १०८६ | यमाय कृष्णो | १८८३ | यूयं देवाः प्रमतिर्यूयमोजो | १५२ |
| यत्र ब्रह्मविदो० । ब्रह्मा मा तत्र | १०९० | यमाय यमसूम् | २२१३ | ये अग्नेः परि जज्ञिरे | ६५९ |
| यत्र ब्रह्मविदो यन्ति | १०८३ | यमाय स्वाहा | २३१४ | ये अर्वाखस्तां उ पराच आहुः | ११७ |
| यत्र ब्रह्मविदो० । वायुर्मा तत्र | १०८४ | यमायासूम् | २२१२ | ये के च उमा महिनो अहिमाया | ४२३ |
| यत्र ब्रह्मविदो० । सूर्यो मा तत्र | १०८५ | यमृत्विजो बहुधा कल्पयन्तः | ५५५ | ये प्राप्स्याः पशवो विश्वरूपाः | ८९० |
| यत्र ब्रह्मविदो० । सोमो मा तत्र | १०८७ | यमो मृत्पुरुषमारो निर्ऋथो | ११७६ | ये च देवा अयजन्ताथो | ११९६ |
| यत्र वसिष्ठमिदितो | ३४८ | यम्यै त्रयोदशी | २०२९ | ये त्रिंशति त्रयस्परौ | ५३४ |
| यत्रा मृपणो अमृतस्य भागम् | ११९ | यवानां भागोऽस्ययवानामाधिपत्यं | १३४६ | ये देवा अग्निनेत्राः पुरःसदस्तेभ्यः | १३२४ |
| यत्रा मुर्दादः सुकृतो मदन्ति | ११८९ | यशो मा द्यावापृथिवी | १३९७ | ये देवा अन्तरिक्ष एकादश स्थ | ११६६ |
| यथाग्नौ मघवन्थाहरेष प्रियो | ११०२ | यस्ते हवं विवदत् | ८९५ | ये देवा दिव्येकादश स्थ | ११६५ |
| यथादित्या वसुभिः शंभूभ्युः | ९५६ | यस्मिन् वृक्षे मध्वदः सुपर्णा | १२० | ये देवाः पृथिव्यामेकादश स्थ | ११६७ |
| यथा वशन्ति देवास्तथेदमन् | ५३७ | यस्य कुर्मो गृध्रे हविस्तमग्ने | १३६५ | ये देवानामृत्विजो यज्ञियासो | १११९ |
| यथा दृष्टं वसवो गौर्यं चित् | ७९९ | यस्य कृष्णो हविर्गृध्रे | ९३८ | ये देवानां यज्ञिया यज्ञियानां | ४६३ |

| | | | | | |
|----------------------------------|-----------|---------------------------------------|------------|----------------------------------|------------|
| ये देवा विश्वदेवनेत्राः | १२४८ | रात्र्यै कृष्णं पिङ्गाक्षम् | २२८० | वरुणाय चक्रवाकान् | १८४५ |
| ये देवास इह स्थन | ५५२ | रात्र्यै सीचापूः | १८५७ | वरुणाय नाकान् | १८४० |
| ये देवासो दिव्येकादश स्थ | ९८ | रिशादसः सत्पतीरदब्धान् | ३९६ | वरुणाय महिषान् | १८७४ |
| ये नदीनां संस्रवन्ति | ८८१ | रुचं ब्राह्मं जनयन्तो देवाः | १२६० | वरुणाय स्वाहा | १५०१, २२९४ |
| येन देवं सवितारं परि | १०३६ | रद्र५ रोराम्याम् | २००३ | वरुणायारण्यो मेषः | १८८२, १९४० |
| येन धनेन प्रपणं चरामि | ९१९, ९२० | रुद्राणां द्वितीया | २०३४ | वरुणो मादित्यैरेतस्या दिशः | ९७५ |
| येन वेहद् बभूविथ | १०५८ | रुद्रास्त्वाऽऽच्छृन्दन्तु त्रैष्टुभेन | १४३७ | वरुणो मित्रो अर्गमा | ५३५ |
| येन हस्ती वर्चसा संबभूव | १११५ | रुद्रास्त्वा धूपयन्तु त्रैष्टुभेन | १४३० | वर्णाय हिरण्यकारं | २२३६ |
| ये नः सपत्ना अप ते भवन्तु | ८०८ | रुद्रेभ्यः स्वाहा | १६४५ | वर्णाय नुरुधं | २१६१ |
| येनावपत् सविता क्षुरेण | ९५० | रुद्रेभ्यो रुहन् | १८६८ | वर्म मे द्याव पृथिवी | १००६ |
| ये पन्थानो बहवो देवयानाः | ९१६, १०६४ | रुरु रौद्रः | १९४४ | वर्षते स्वाहा | १६११ |
| ये बध्यमानमनु दीध्यानाः | ८८९ | रूपाय मणिकार५ | २१३५ | वर्षाभ्यस्तित्तिरीन् | १८३२ |
| येभ्यो माता मधुमत् पिन्वते पयः | ६६३ | रूपेण वो रूपमभ्यागां तुथो | १३०४ | वर्षाहृक्कृतूनाम् | १९३५ |
| येभ्यो होत्रां प्रथमामायेजे मनुः | ६६७ | रेभदत्र जनुषा पूर्वां अङ्गिरा | ७३५ | वर्षिष्ठ्य नाकाय परि | २१८६, २२०२ |
| येऽमावास्यां रात्रिसुदस्थुः | १०४८ | रेष्माण५ स्तुपेन | १९९० | वल्गते स्वाहा | १५१३ |
| ये यजत्रा य ईड्याः | ११ | रोहिण्यस्त्र्यवयो वाचे | १७५४ | वल्मीकान् क्लामभिः | २०६५ |
| ये यज्ञेन दक्षिणया समक्ता | ६५४ | रोहिता रुद्राणा५ | १७६० | वशा द्यावापृथिवीयाः | १८०७ |
| ये सर्पिषः संस्रवन्ति | ८८२ | रोहितेभ्यः स्वाहा | १०२९ | वशा मैत्रावरुण्योः | १७७१ |
| ये सवितुः सत्यसवस्य विश्वे | ६०६ | रोहितो धूम्रोहितः | १७३८ | वसन्ताय कपिञ्जलानालभते | १८३० |
| ये स्था मनोर्यज्ञियास्ते शृणोतन | ६०३ | रोहितं कृष्णवृणाचो गोलत्तिका | १९३३ | वगवस्त्रयोदशाक्षरेण त्रयोदश५ | १३२२ |
| यो अय सेन्यो वधो | ९६० | लोकं पृण छिद्रं पृणाथो | १३३४ | वसवस्त्वा कृण्वन्तु गायत्रेण | १३३१ |
| यो अर्वन्तं जिघांसति | १४९१ | लोपाश अश्विनः | १९२५ | वसवस्त्वाऽऽच्छृन्दन्तु गायत्रेण | १४३६ |
| योगाय योक्तार५ | २२०५ | लोमानि प्रयतिर्मम त्वञ्च | १३६८ | वसवस्त्वाञ्जन्तु गायत्रेण छन्दसा | १३७६ |
| योगेयोगे तवस्तरं | १०४२ | वज्रमेको बिभर्ति हस्त आहितं | ५४२ | वसवस्त्वा धूपयन्तु गायत्रेण | १४२९ |
| यो जागार तमृचः कामयन्ते | ३०७ | वत्सतर्त्यः सारस्वत्यः | १८०३ | वसवे स्वाहा | १४०९, १६६८ |
| यो नः खो यो अरणः सजातः | १०५४ | वत्सतर्त्यो देवानां पत्नीभ्यः | १७५७, १७७८ | वसिष्ठासः पितृवद् वाचमकत | ७२० |
| यो नः खोऽरणो यश्च | १४०४ | वत्सराय विजर्जरा५ | २२१९ | वसुभ्य ऋश्यानालभते | १८६७ |
| योनिमेक आ ससाद द्योतनो | ५४० | वनस्पतिभ्य उल्लूकान् | १८४७ | वसुभ्यः स्वाहा | १६४४ |
| यो यज्ञस्य प्रसाधनः | ६२२ | वनस्पतिभ्यः स्वाहा | १६५१, १६६३ | वसूनां कपिञ्जलः | १९३८ |
| यो रजांसि विममे पार्थिवानि | ३७५ | वनाय वनपम् | २२६३ | वसूनां भागोऽसि रुद्राणामाधिपत्यं | १३४५ |
| यो वः शुष्मो हृदयेषु | ९५२ | वपुषे मानस्कृत५ | २२०९ | वाग्यज्ञेन कल्पता५ स्वाहा | १७१४ |
| यो वो देवा घृतस्तुना | ४१६ | वयं वो वृक्तबर्हिषो | ५१८ | वाचे कुञ्चः | १८९८ |
| रक्षसां भागोऽसि निरस्त५ | १२८९ | वयं सोम व्रणे तव | ६२६ | वाचे प्लुषीन् | १८७८ |
| रणः संदष्टौ पितुर्मां इव क्षयो | ६८६ | वयं तद् वः सम्र ज आ वृर्णमहे | ५३३ | वाचे स्वाहा | १५७८ |
| ररे हृव्यं मतिभिर्यज्ञियानां | ४८६ | वयगिद् वः सुदानवः | ५६४ | वाज५ हनुभ्याम् | १९६० |
| रश्मिना सत्याय सत्यं जिन्व | १३५० | वरुणं त आदित्यवन्तमृच्छन्तु | ९८५ | वाजस्येमां प्रसवः शिश्रिये | १३१८ |
| रश्मिभ्यः स्वाहा | १६४३ | वरुणश्च म इन्द्रश्च मे | १४६४ | वाजाय स्वाहा | १६९४ |
| राजा राष्ट्रानां पेषो नदीनाम् | ४३६ | वरुणस्त्वा धूपयतु | १४३४ | वाजिन५ शेपेन | २०४९ |
| राशयसि प्राची दिग्बसवस्ते | १३५४ | वरुणस्य द्वादशी | २०१५, २०२८ | वाज्यसि वाजिनेना सुवेनीः | ६१६ |

| | | | | | |
|--------------------------------|------------|--|-----------|-------------------------------------|------------|
| वातं प्राणेन | १९७३ | वि नो देवासो अद्भुहो | ५२० | विश्वे देवाः शृणुतेमं हवन् मे | ४२१ |
| वाताय स्वाहा | १६०४ | विभ्रेभिर्विप्र सन्त्य | ३५२ | विश्वे देवाः सह धीभिः पुरंध्या | ७०५ |
| वानस्पत्या प्रावाणो घोषमकृत | ९०९ | विभिर्द्वा चरत एकया सह | ५४६ | विश्वे देवास आ गत | १६५, ४१५ |
| वामना अनड्वाह आमावैष्णवाः | १७७० | विभुवे स्वाहा | १६६९ | विश्वे देवासो अप्तुरः | २ |
| वामं नो अस्त्वयमन् | ५६२ | वि मे पुरुत्रा पतयान्ति कामाः | १९४ | विश्वे देवासो अस्मिधः | ३ |
| वामस्य हि प्रचेतसः | ५६३ | वियासाय स्वाहा | २३०० | विश्वेभिः सोम्यं मधु | १३ |
| वायवे चाण्डालम् | २२७३ | विराडसि दक्षिणा दिग् द्वास्ते | १३५५ | विश्वेभ्यस्त्वा देवेभ्य एष ते | ८४७ |
| वायवे त्वा जुष्टं प्रोक्षामि | १४८८ | विरूपास इदृषयस्ते | ६५८ | विश्वेभ्यस्त्वा देवेभ्यो जगच्छन्दसं | ८५० |
| वायवे बलाकाः | १८४२ | विवर्तमानाय स्वाहा | १५३६ | विश्वेभ्यस्त्वा देवेभ्यो जुष्टं | ८६७, १४८९ |
| वायवे स्वाहा | १४९६, २२८७ | विवस्वते स्वाहा | १६७० | विश्वेभ्यो देवेभ्यः पृषतान् | ८६९, १८७० |
| वायव्यः श्वेतः पुच्छे | १७३५ | विविक्त्यै क्षतारम् | २१९५ | विश्वेभ्यो देवेभ्यः स्वाहा | ८६८, १६४८, |
| वायुं तेऽन्तरिक्षवन्तमृच्छन्तु | ९८३ | विश्रुताय स्वाहा | १५३७ | २३१९ | |
| वायुः पुनातु सविता पुनातु | १३९० | विशामासामभयानामाधिक्षितं | ७३४ | विश्वेभ्यो देवेभ्यो जागतेभ्यः | ८७४, २१०५ |
| वायुरन्तरिक्षेणोदक्रामत् | ९९३ | विशोविश ईड्यमध्वरेषु | ३६४ | विश्वेभ्यो भूतेभ्यः सिधमलं | २२३९ |
| वायुर्मान्तरिक्षेणैतस्या दिशः | ९७३ | विश्वकर्माणं ते सप्तऋषिवन्तमृच्छन्तु | ९८८ | विश्वे यजत्रा अधि वोचतोतये | ६७१ |
| वायुर्वा पचतैरवत्वसितग्रीवः | १३७७ | विश्वकर्मा मा सप्तऋषिभिः | ९७८ | विश्वेषां देवानामुत्तरम् | २०३१ |
| वायोः पुच्छम् | २०३६ | विश्वदानीं सुमनसः स्याम | ४१३ | विश्वेषां देवानां पृषतः | १९५२ |
| वायोर्निपक्षतिः | २००५ | विश्वदेवनेत्रेभ्यो देवेभ्यः | १२४७ | विश्वेषां देवानां प्रथमा | ८७२, २०३३ |
| वारुणः कृष्ण एकशितिपात् पेतवः | २०९४ | विश्वस्मान्नो अदितिः पात्वंहसो | ५९६ | विश्वेषां देवानां भागधेयी स्थ | ८४६ |
| वारुणः पेतवः | २१०२ | विश्वान् देवान् हवामहे | १६ | विश्वेषामिरज्यवो देवानां | ७३८ |
| वारुण्यैः स्वाहा | १५९३ | विश्वाहा ते सदमिद् भरेम | ९२२ | विश्वे हि ध्मा मनवे विश्ववेदसो | ५१५ |
| वार्वर्त येषां राया | ७४८ | विश्वा हि वो नमस्यामि वन्या | ६६२ | विश्वो देवस्य नेतुर्मर्तो | ३४५ |
| वाशीमेकौ विभर्ति हस्ते | ५४१ | विश्वे अय मरुतो विश्व ऊती | ५९२ | विषमेभ्यो मैत्रलः | २२३० |
| वासयसीव वेधसस्त्वं नः | ४७८ | विश्वे अस्या व्युषि माहिनायाः | ३१६ | विषासह्यै स्वाहा | १०३३ |
| विंशतिः स्व हा | १०२३ | विश्वे च मे देवा इन्द्रश्च मे | १४६८ | वि षा होत्रा विश्वमश्नोति वार्यं | ६९० |
| विश्रुताय स्वाहा | १५२१ | विश्वे त्वा देवा वैश्वानरा आच्छन्दन्तु | ८५६, | विषूर्च्यतु कृन्तती | ८८४ |
| विजृम्भमाणाय स्वाहा | १५२० | १४३९ | | विष्णवे निभूयपाय स्वाहा | १५७० |
| वि तन्वते धियो अस्मा अपांसि | ३३३ | विश्वे त्वा देवा वैश्वानराः कृण्वन्तु | ८५४ | विष्णवे शिपिविष्टाय स्वाहा | १५७१ |
| विदा चिन्नु महान्तो येव एवा | २५२ | विश्वे त्वा देवा वैश्वानरा धूपयन्तु | ८५५, | विष्णवे स्वाहा | १४९७, १५६९ |
| विदा दिवो बिष्यन्नाद्रिमुक्थैः | ३०९ | १४३२ | | विष्णुं स्तोमासः पुरुदस्ममर्काः | १८३ |
| विदुः पृथिव्या दिवो जनित्रं | ४२७ | विश्वेदेते जनिमा सं विविक्तो | १७७ | विष्णुर्गोपाः परमं पाति पाथः | २०१ |
| विष्णुं कनीनकाभ्याम् | १९६६, १९८२ | विश्वे देवा अश्नुषु न्युप्तः | ८५१, १३११ | विष्णुर्योनिं कल्पयतु | ८३७ |
| विष्णुश्चा मरुत ऋक्षिमन्तो | १८२ | विश्वे देवा ऋताश्रुधः | ४१८ | विष्णुस्त्वा धूपयतुं | १४३५ |
| विद्योतमानाय स्वाहा | १६०८ | विश्वे देवा द्वादशाक्षरेण | ८५३ | विष्णोरेष्टमी | २०२४ |
| विधूताय स्वाहा | १५३९ | विश्वे देवा द्वादशे | ८७६ | विष्णोश्चो अस्मच्छरवः | १०५३ |
| विधून्वानाय स्वाहा | १५३८ | विश्वे देवा नो अथा स्वस्तये | ३५८ | विसर्माणं कृणुहि वित्तमेषां | २६८ |
| विधृतिं नाभ्या | २०७१ | विश्वे देवा मम शृण्वन्तु यज्ञियाः | ४२२ | वि सूर्यो अमर्ति न श्रियं सादा | ३१० |
| विनःशिन आन्त्यायनाय स्वाहा | १४१३ | विश्वे देवाश्चमसेषुजीतः | ८५२, १३१२ | वि कुतयो यथा पथा | १४०० |
| वि नः पथा सुविताय | ३२ | विश्वे देवाः शास्तन मा यवेह | ६०८ | | |

| | | | | | |
|---------------------------------|------------|------------------------------------|------|--------------------------------|------------|
| विहृत आन्त्रैः | २०४६ | शं नो अग्निर्ज्योतिरनीको अस्तु | ४५२ | शीलायाजनीकारी | २२१० |
| वीक्षिताय स्वाहा | १५४४ | शं नो अज एकपाद् देवो अस्तु | ४६१ | शुकरूपा वाजिनाः | १७६५ |
| वीणावादं पाणिभ्रं तूणवधं | २२६९ | शं नो अदितिर्भवतु व्रतेभिः | ४५७ | शुकं त्वा शुकेण क्रीणामि | १२८२ |
| वीमे देवा अकंसत | ११९७ | शं नो ग्रहाश्चान्द्रमसाः | १०७८ | शुक्राय स्वाहा | १६८३ |
| वीरस्य नु स्वर्ग्यं जनासः | २०९ | शं नो देवः सविता त्रायमाणः | ४५८ | शुक्लाय स्वाहा | १२६७ |
| वीर्याविपालं | २१७६ | शं नो देवा विश्वदेवा भवन्तु | ४५९ | शुचये स्वाहा | १६८४ |
| वृषणमाण्डाभ्याम् | १९६२, २०४८ | शं नो द्यावापृथिवी पूर्वद्वतौ | ४५३ | शुचे स्वाहा | २३०२ |
| वृषदं शस्ते धात्रे | १८९३ | शं नो धाता शमु धर्ता नो अस्तु | ४५१ | शुद्धबालः सर्वशुद्धबालो | १७४३ |
| वृषा यज्ञो वृषणः सन्तु यज्ञियाः | ७११ | शं नो भगः शमु नः शंसो अस्तु | ४५० | शुनमस्मभ्यमृतये | ७९८ |
| वृषो अस्तोषि भूम्यस्य गर्भं | २४९ | शं नो भूमिर्वैष्यमाना | १०७६ | शुभे वपः | २१३६ |
| वेत्यमुर्जनिवान् वा अति स्पृधः | ३०० | शं नो मित्रः शं वरुणः | ३७ | शुभ्रमाणाय स्वाहा | १५४० |
| वेद यज्ञीणि विदधान्येषां | ३९४ | शं नो मित्रः शं वरुणः शं विवस्वान् | १०७५ | शुकराय स्वाहा | १५३० |
| वैकङ्कतेनेध्मेन देवेभ्यः | ९२३ | शं नो मित्रः शं वरुणः शं विष्णुः | १०७४ | शुक्रताय स्वाहा | १५३१ |
| वैरहत्याय पिशुनं | २१९४ | शबला वैद्युताः | १७८२ | शरस्येव युध्यतो अन्तमस्य | १९९ |
| वैशन्ताभ्यो वैन्दं | २२२५ | शब्दायाडम्बराघातं | २२५९ | शषाय स्वाहा | १६७५ |
| वैश्वदेवौ पिशङ्गौ तूपरौ | २०९८ | शयानाय स्वाहा | १५१५ | शृणोतु न ऊर्जा पतिर्गिरः सः | २५१ |
| वैश्वानरं भस्मना | २०७० | शयुः परस्तादध नु द्विमाता | १२७ | शृण्वते स्वाहा | १५४१ |
| वैश्वानरीं वर्चस आ रभध्वं | २४४ | शरदे वर्तिका | १८३३ | शृण्वन्तु नो वृषणः पर्वतासो | १८९ |
| वैश्वानरीं सूनुतामा रभध्वं | ९४३ | शरव्याया इषुकारः | २१३७ | शोकाय स्वाहा | २३०५ |
| वैश्वानरो रदिमभिर्नः पुनातु | ९४२ | शर्मास्यवधूतः रक्षोऽवधूता | १२७१ | शोकायामिसर्तारं | २२०६ |
| वैष्णवो वामनः | १७३७ | शास्त्राभ्यः स्वाहा | १६५० | शोचते स्वाहा | २३०३ |
| व्यर्यमा वरुणश्चेति पन्थाम् | २३२ | शादं दक्षिः | १९५३ | शोचमानाय स्वाहा | २३०४ |
| व्यदशुविने स्वाहा | १७०० | शान्ता द्यौः शान्ता पृथिवी | १०६९ | श्यामाः पौष्णाः | १७६७, १८०४ |
| व्याघ्रो अधि वैयाघ्रे | ११४५ | शान्तानि पूर्वरूपेण शान्तं | १०७० | श्येतः श्येताक्षोऽरुणस्ते | १७४४ |
| व्यानाय स्वाहा | १५७५ | शार्गः सृजयः शयः ण्डकस्ते मैत्राः | १९०६ | श्येन आसामदितिः कश्यो मदो | ३०४ |
| व्यानो यज्ञेन कल्पताः स्वाहा | १७०९ | शार्दूलाय रोहिद् | १८८५ | श्रिये सुदृशीरुपरस्य याः स्वः | २९५ |
| व्युष्टयै स्वाहा | १७२६ | शार्दूलो वृकः पृदाकुस्ते मन्यवे | १९०९ | श्रुतं मे मित्रावरुणा हवेमा | ८७ |
| व्यूह्या अपगल्भः | २२४३ | शिखिभ्यः स्वाहा | ११३५ | श्रेयसे वित्तधम् | २१८१ |
| व्येतु दिष्टुद् द्विषामशेवा | ४३८ | शितिपृष्ठो बार्हस्पत्यः | २०८८ | श्रेष्ठं नो अय सवितर्वरेण्यं | ५८६ |
| व्रजं कृण्वं स हि वो नृपाणो | ७७० | शितिबाहुरन्यतः शितिबाहुः | १७४१ | श्रोत्रं यज्ञेन कल्पताः स्वाहा | १७१३ |
| व्रात्याभ्यां स्वाहा | १०३१ | शितिभ्रवो वसूनाः | १७५९ | श्रोत्राय शृङ्गाः | १८८० |
| शं रुद्राः शं वसवः | १०७९ | शितिरन्ध्रोऽन्यतः शितिरन्ध्रः | १७४० | श्रोत्राय स्वाहा | १५७७ |
| शतमिन्तु शरदो अन्ति देवाः | २७ | शिल्पा वैश्वदेवो | १७५३ | श्लोकाय स्वाहा | १४२५ |
| शताय स्वाहा | १७२४ | शिल्पो वैश्वदेवः | २०८९ | श्वा कृष्णः कर्णो गर्दभः | १९४८ |
| शं न इन्द्राग्नी भवतामवोभिः | ४४९ | शिवः कपोत इषितो नो अस्तु | ८२९ | श्वविद् भौमी | १९०८ |
| शं न इन्द्रो वसुभिर्देवो अस्तु | ४५४ | शिशिराय विककरान् | १८३५ | श्वित्र आदित्यानाम् | १९४१ |
| शं नः सत्यस्य पतयो भवन्तु | ४६० | शीकायते स्वाहा | १६१८ | श्वेता अवरोकिण आदित्यानां | १७६१ |
| शं नः सूर्य उरुचक्षा उदेतु | ४५६ | शीघ्रं वर्षते स्वाहा | १६१४ | श्वेता वायव्याः | १७७५, १८२८ |
| शं नः सोमो भवतु ब्रह्म शं नः | ४५५ | शीनं वसया | २०७६ | श्वेताः सौर्याः | १८२९ |

| | | | | | |
|------------------------------|------|---------------------------------|----------|---|------------|
| स्वेतान् प्रीण्माय | १७८५ | सदा गावः शुचयो विश्वधायराः | १३९९ | समुद्रं गच्छ स्वाहाऽन्तरिक्षं | १२९२ |
| षट्त्रिंशच्च चतुरः कल्पयन्तः | ७८७ | सदापृणो यजतो वि द्विषो वधीद् | ३०५ | समुद्रः सिन्धू रजो अन्तरिक्षम् | ७१७ |
| षट्त्रिंशच्चः स्वाहा | १००९ | सदा सुगः पितुर्मौ अस्तु पन्था | १९० | समुद्रमासामव तस्थे अग्रिमा | ३०२ |
| षड् भारौ एको अचरन् बिभर्ति | २१५ | सदुत्तरेण | १९७६ | समुद्रमुदरेण | २०६९ |
| षष्टाय स्वाहा | ११२२ | सदो द्वा चक्राते उपमा | ५४७ | समुद्राय शिशुमारानालभते | १८३६ |
| षोडशर्चैभ्यः स्वाहा | १०१९ | स द्विबन्धुर्वैतरणो यष्टा | ६४३ | समुद्राय शिशुमारो | १८८९ |
| षोडशी स्तोम ओजो द्रविणं | १३४७ | सना पुराणमध्येम्यारात् | १७८ | समुद्राय स्वाहा | १६०१ |
| स इद् दानाय दभ्याय वन्वन् | ६२८ | सनितासि प्रवतो दाशुषे चिद् | ४७७ | समुद्रो नदीभिरुदकामत् | ९९८ |
| स ई वृषा न फेनमस्यदाजौ | ६३४ | सनेम तत् सुसनिता सनित्वभिः | ६०२ | समु वो यज्ञं महुयन् नमोभिः | ४९७ |
| संयासाय स्वाहा | २२९९ | सनेमि चक्रमजरं वि वावृत | ११२ | स मे वपुच्छदयदक्षिनोर्यो | ३६७ |
| संवत्सराय पर्यायिणी | २२१५ | सं ते मनो मनसा सं प्राणः | १२९० | सं परमान्समवमानथो | ११८५ |
| संवत्सराय पलिक्नीम् | २२२० | संदानं वो बृहस्पतिः | ११८४ | सं बर्हिर्ऋक्ता हविषा घृतेन | ९६७ |
| संवत्सराय महतः सुपर्णान् | १८६१ | सन्दिताय स्वाहा | १५१२ | सं बर्हिर्ऋक्ता हविषा घृतेन | १२७६ |
| संवत्सराय स्वाहा | १६३९ | सन्धये जारं | २१५३ | सं मा तपन्त्यभितः | ४५ |
| सं वः पुच्यन्तां तन्वः | ९५४ | सन्नः सिन्धुरवभृथाय | १३१३ | सम्यक् स्रवन्ति सरितो न धेनाः | १३३७ |
| सं वो मनांसि सं व्रता | ९०६ | स पचामि स ददामि स यजे | ११५३ | सम्राजो ये सुवृधो यज्ञमाययुः | ६६५ |
| संशराय प्रच्छिदम् | २२४४ | सप्तदशभिरस्तुवत प्राभ्याः पशवः | १४४८ | सम्राडसि प्रतीची दिगादित्यास्ते | १३५६ |
| संशितं म इदं ब्रह्म | ११०५ | सप्तदशर्चैभ्यः स्वाहा | १०२० | सरस्वती च म इन्द्रश्च मे | १४६० |
| संस्पर्षाय स्वाहा | १६७६ | सप्त प्राणानष्टौ मन्यस्तांस्ते | १०९७ | सरस्वती सरयुः सिन्धुर्मभिः | ६८४ |
| सं सं स्रवन्तु सिन्धवः | ८७९ | सप्तभिः पुत्रैरदितिः | १२२० | सरस्वते शुक्रः पुरुषवाक् | १९१० |
| संस्त्रवभागा स्थेषा बृहन्तः | ८४१ | सप्ताभिरस्तुवत सप्त ऋषयः | १४४३ | सरस्वत्या अग्रजिह्वं | १९५७ |
| संस्त्रानाय स्वाहा | १५२२ | सप्तमाष्टमाभ्यां स्वाहा | ११२३ | सरस्वत्यै निपक्षतिः | २०१८ |
| सस्त्रासावस्मभ्यमस्तु रातिः | १०५७ | सप्त युजन्ति रथमेकचक्रम् | १०० | सरस्वत्यै पावकायै स्वाहा | १५६१ |
| स गृणानो अद्भिर्देवानिति | ६५२ | सप्तर्चैभ्यः स्वाहा | १०१० | सरस्वत्यै बृहत्यै स्वाहा | १५६२ |
| संक्रोशैः प्राणान् | १२८९ | सप्तविंशत्यास्तुवत द्यावापृथिवी | १४५३ | सरस्वत्यै शारिः पुरुषवाक् | १९०७ |
| सं गच्छस्व पितुभिः सं यमेन | १२६८ | सप्तानां सप्त ऋषयः | ५३८ | सरस्वत्यै स्वाहा | १४२०, १५६० |
| स जिह्वया चतुरनीक ऋजते | ३३९ | सप्तार्धगर्भा भुवनस्य रेतो | १३४ | सरस्वान् धीभिर्वह्णो धृतव्रतः | ७११ |
| सज्जुग्दो अयवोभिः | १३३५ | सप्तास्यासन् परिधयान्निः | १२५९ | सरिराय स्वाहा | १६०३ |
| सज्जुरादित्यैवसुभिः | ३५५ | स प्रथमो बृहस्पतिश्चिकित्वाञ् | १२९७ | सरीक्ष्येभ्यः स्वाहा | १६६६ |
| सज्जुर्ऋतुभिः सज्जुर्विधाभिः | ८५८ | समदिवनोरवसा नूतनेन | २७६, २९३ | सरुपा धात्रे | १७५६, १७७७ |
| सज्जुर्देवेन सवित्रा सज्जुः | १२८० | समहमेषां राष्ट्रं स्यामि | ११०६ | सरोभ्यो धैवरम् | २२२३ |
| सज्जुर्देवेभिरपां नपातं | ४४० | समानी व आकूतिः समाना | ९४७ | सर्पदेवजनेभ्योऽप्रतिपदम् | २१४८ |
| सज्जुर्मित्रावरुणाभ्यां | ३५४ | समानो मन्त्रः समितिः समानी | ९४६ | सर्पाणां सप्तमी | २०२३ |
| सज्जुर्विश्वेभिर्देवेभिः | ३५३ | समानो यज्ञेन कल्पता स्वाहा | १७११ | सर्पान् गुदाभिः | २०४५ |
| संजम्बुराणस्तृभिः सुतेगृभं | २९८ | समानो राजा विश्रुतः पुरुषा | १९५ | सर्वेभ्यस्त्वा देवेभ्यो जुष्टं प्रोक्षामि | १४९० |
| सं जानीध्वं सं पुच्यध्वं | ९४५ | समान्या वियुते दूरेअगते | १७६ | सर्वेभ्योऽग्निरोभ्यो विदगणेभ्यः | ११३८ |
| संज्ञपनं वो मनसोऽथो | ९५५ | समाश्च म इन्द्रश्च मे | १४७२ | सर्वेभ्यो लोकेभ्य उपसेकारं | २१८९ |
| संज्ञानाय स्मरकारि | २१५९ | समिदसि सूर्यस्त्वा पुरस्तात् | १२७३ | सविता च म इन्द्रश्च मे | १४५२ |
| सतो होता मनुष्यदा | ५१ | समिन्द्र णो मनसा नेषि | २६३, ८४८ | सविता पश्चातात् सविता पुरस्तात् | ६०७ |

| | | | | | |
|----------------------------------|------------|----------------------------------|------|---------------------------------------|------------|
| सवित्र औष्णिहाय त्रयस्त्रिंशाय | २१०८ | सूर्याय हर्यक्षं | २१७६ | स्वदेस्व हव्या समिषो दिदीहि | १९१ |
| सवित्रे स्वाहा | १४१९, १४९५ | सूर्यायै देवेभ्यो मित्राय | १२२१ | स्वनेभ्यः पर्णकं | २२३१ |
| स ब्राधतो नहुषो दंसुजतः | ९१ | सूर्यो दिवोदकामत् | ९९४ | स्वपते स्वाहा | १५१६ |
| सहसे स्वाहा | १६८९ | सूर्यो मा यावापृथिवीभ्यां | ९७६ | स्वप्रायान्धम् | २१६६ |
| सहस्याय स्वाहा | १६९० | सेदुग्रो अस्तु मरुतः स शुष्मी | ४९० | स्वराडस्युदीची दिङ्मरुतस्ते देवाः | १३५७ |
| सहस्रधा पञ्चदशान्युक्ता | ७८९ | सोम ओषधीभिरुदकामत् | ९९६ | स्वर्गाय लोकाय भागदुघं | २२०१ |
| स हि क्षत्रस्य मनसस्य चितिभिः | ३०३ | सोम राजन् विश्वास्त्वं प्रजाः | १२९४ | स्वर्गाय स्वाहा | १७२७ |
| सहोभिर्विश्वं परि चक्रमू रजः | ६१८ | सोमं राजानमवसे | ८१८ | स्वर्णरमन्तरिक्षाणि रोचना | ६९५ |
| साकंजानां सप्तथमाहुरेकजं | ११३ | सोमं ते रुद्रवन्तमृच्छन्तु | ९८४ | स्वर्धनेन कल्पतां स्वाहा | १७१९ |
| साध्येभ्यः कुलङ्गान् | १८७१ | सोमश्च म इन्द्रश्च मे | १४५८ | स्वस्तये वायुमुप प्रवामहे | ३५७ |
| साव्येभ्यश्चर्ममम् | २२२२ | सोमस्त्वा पावोषधीभिर्नक्षत्रैः | ११५६ | स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रवाः | २४ |
| सानुभ्यो जम्भकं | २२३३ | सोमस्य चतुर्थी | २००७ | स्वस्ति नो मिमीतामग्निना भगः | ३५६ |
| सारस्वती मेधी | २०८५, २१०१ | सोमस्य त्विषिरसि तवेव | १३२५ | स्वस्ति पन्थामनु चरेम | ३६० |
| सारस्वती मेघधस्ताद्धन्वोः | १७३० | सोमस्य राज्ञो वरुणस्य धर्मणि | ८३३ | स्वस्ति मित्रावरुणा | ३५२ |
| सिंहो मारुतः | १९५० | सोमाय कुलुङ्गः | १८९९ | स्वाङ्कृतोऽसि विश्वेभ्य इन्द्रियेभ्यो | १२९६ |
| सिध्मास्तारकाः | १७८३ | सोमाय लबानालभते | १८५१ | स्वाहा चित्तं विज्ञाताय | १५५६ |
| सिषक्नु न ऊर्जव्यस्य पुष्टेः | २५९ | सोमाय स्वाहा १४१८, १४९३, १६२३ | १६२३ | स्वाहा देवेभ्यो देवेभ्यः | १२३७ |
| सीरा युजन्ति कव्यो | ७६६ | सोमाय हृसानालभते | १८४१ | स्वाहाऽऽधिमाधीताय | १५५४ |
| सीसायाध्याह वरुणः | १०४९ | सोमो मा रुद्रैर्दक्षिणाय दिशः | ९७४ | स्वापये स्वाहा | १४०६ |
| सुकृत् सुपाणिः स्वर्वां क्रतावा | १८१ | सोमो राजा प्रथमो ब्रह्मजायां | ७७६ | स्वाहा पूष्णे शरसे स्वाहा | १३९४ |
| सुगस्ते अग्ने सनवित्तो अध्वा | ४९६ | सौमापौष्णः श्यामो नाभ्यां | १७३२ | स्वाहा प्राणेभ्यः साधिपतिकेभ्यः | २२८३ |
| सुगा वो देवाः सदना अकर्म | १२४३ | सौरी बलाका | १९०५ | स्वाहा मनः प्रजापतये | १५५५ |
| सुज्योतिषः सूर्य दक्षपितृन् | ३७२ | सौर्ययामौ श्वेतश्च कृष्णश्च | १७३३ | स्विध्मा यद् वनधितिरपस्यात् | ७३ |
| सुतंभरो यजमानस्य सत्पतिः | ३०६ | स्तनयते स्वाहा | १६०९ | हंसो वातस्य | १९२० |
| सुत्रामाणं पृथिवीं धामनेहसं | ६७० | स्तनयितुं निर्बाधेन | १९८० | हत्वाय देवा असुरान् यदायन् | ८२६ |
| सुपर्ण विप्राः कव्यो वचोभिः | ७८६ | स्तरिर्भूद्ध यां स धरुणं मुष यद् | ६८ | हये देवा यूयमिदापयः स्थ | १५४ |
| सुपर्णः पार्जन्यः | १९११ | स्तरिर्भूद्ध सत सद्यो अज्यमाना | ५७७ | हयो न विद्रां अयुजि स्वयं धुरि | ३२० |
| सुपर्णा एत आसते | ४८ | स्तीर्णे बर्हिषि समिधाने अग्नौ | ४२५ | हरितेभ्यः स्वाहा | ११२५ |
| सुप्रजाः प्रजाः प्रजनयन् परीहि | १२९८ | स्तुष उ वो मह ऋतस्य गोपान् | ३९५ | हविष्मतीरिमा आपो | १२९३ |
| सुभुः स्वयम्भूः प्रथमो | १३८३ | स्तुषे जनं सुव्रतं नव्यसीभिः | ३६३ | हसाय कारिम् | २१२८, २२६६ |
| सूक्तेभिर्वो वचोभिर्देवजुष्टैः | ३१२ | स्तुषे सा वां वरुण मित्र रातिः | ८८ | हस्काराद् विष्णुतस्परि | १८ |
| सुधाभ्यः स्वाहा | १५९९ | स्तेगो न क्षामत्येति पृथ्वी | ५७६ | हस्ताभ्यां दशशास्त्राभ्यां | ८१५ |
| सूपस्था अथ देवो वनस्पतिः | १३७४ | स्तोत्रमिन्द्रो मरुद्गणः | ४१९ | हस्तिवर्चसं प्रथतां बृहद् यशो | १११३ |
| सूयवसाद् भगवती हि भूयाः | १३८ | स्तोमं वो अथ रुद्राय शिक्वसे | ७२९ | हस्ती मृगाणां सुषदाम् | १११८ |
| सुरक्षिदा हरितो अस्य रीरमद् | ७२८ | स्त्रियः सतीस्तां उ मे पुंस आहुः | ११४ | हस्तेनैव प्राह्य आधिरस्या | ७७७ |
| सूर्य ते यावापृथिवीवन्तमृच्छन्तु | ९८६ | स्यन्दमानाभ्यः स्वाहा | १५९७ | हिङ्गाराय स्वाहा | १५०२ |
| सूर्यश्च मे | १४७८ | स्याम वो मनवो देववीतये | ७१८ | हिङ्कण्वती वसुपत्नी वसूनां | १२५ |
| सूर्याभ्यां स्वाहा | १०३० | स्रवन्तीभ्यः स्वाहा | १५९६ | हिङ्कृताय स्वाहा | १५०३ |
| सूर्याय स्वाहा १६४२, १६५८, २२८९ | | स्वः स्वाहा | १६२८ | | |

| | | | | | |
|----------------------------|------|-----------------------------------|------|-------------------------|------|
| हिमवते हस्ती | १८९० | होतिः पक्षिणी न दभाल्यस्मान् | ८३० | हृदान् कुक्षिभ्याम् | २०६८ |
| हिरण्यकर्णं मणिप्रविमर्णः | ९५ | हेत्यै धनुष्कारं | २१३८ | हृदादुनीभ्यः स्वाहा | १६२० |
| हिरण्यपाणिः सविता सुजिह्वः | १८० | हेमन्ताय ककरान् | १८३४ | हृदुनीर्दूषीक भिः | २०७८ |
| हिरण्यवर्णो अजरः सुवीरो | १०४३ | होता यक्षदक्षिनौ छागस्य वपायाः | १३७२ | न्हियै शल्यकः | १९२२ |
| हिराभिः स्रवन्तीः | २०६७ | होता यक्षदक्षिनौ छागस्य हविषः | १३७३ | हृयन्तु त्वा प्रतिजनाः | ८९४ |
| हुवे वो देवीमदिति नमोभिः | ३७८ | होता यक्षदक्षिनौ सरस्वतीमिन्द्रम् | १३७२ | हृयामि देवाँ अयातुरग्ने | ४३३ |
| हुवे सोमं सवितारं नमोभिः | ९०४ | होत्रादहं वरुण विभ्यदायं | १२०७ | | |

इति विश्वे-देवादेवता समाप्ता ।

